पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य

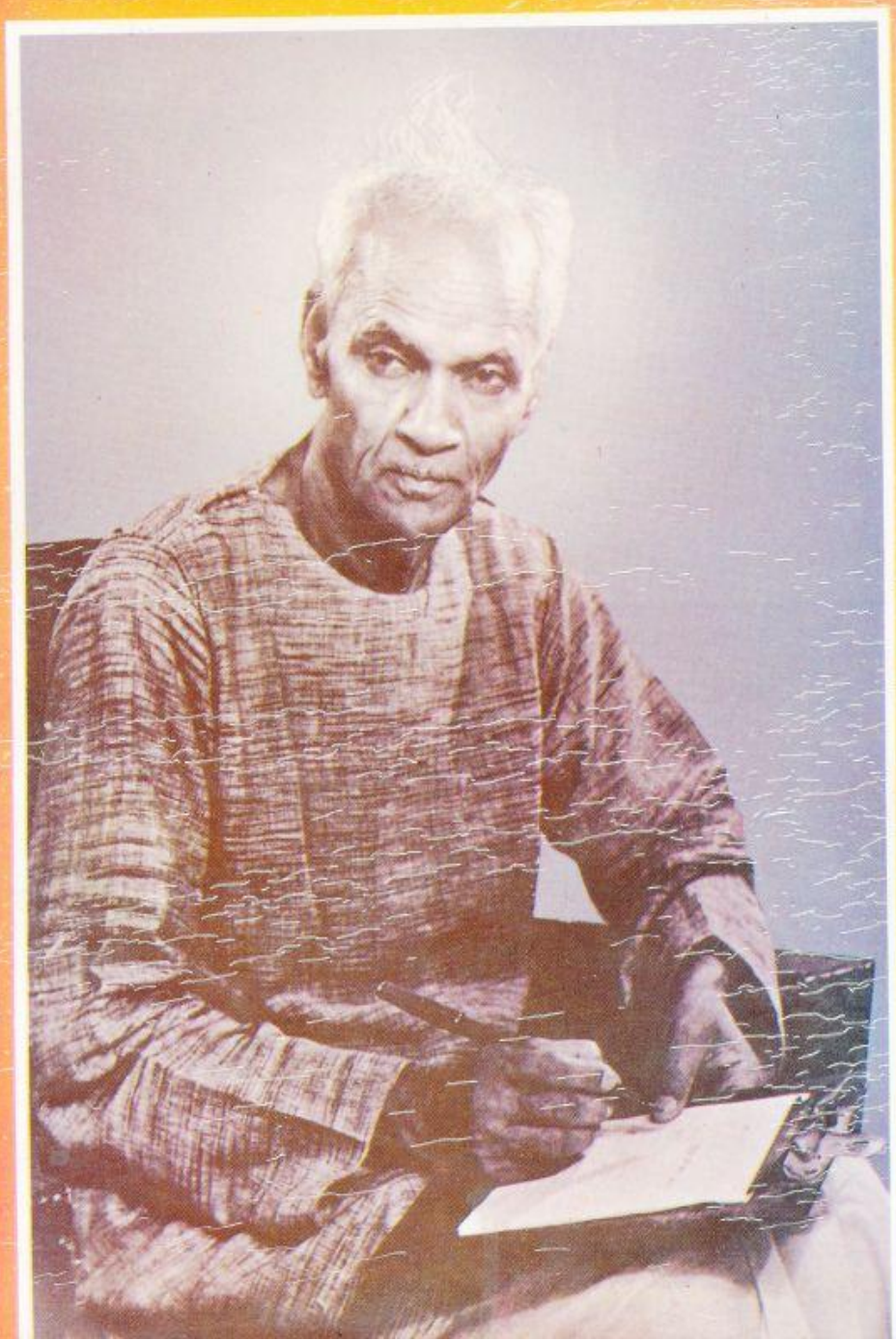

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

❐

प्रकाशक

अखण्ड ज्योति संस्थान

मथुरा - २८१००३

❐

© सर्वाधिकार सुरक्षित

❐

द्वितीय संस्करण १९९८

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

❐

मूल्य १२५)

❐

मुद्रक

जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ मातरं भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ।।

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ।।

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ।।

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ।।

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ।।

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है । परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्ज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है । परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी मां शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही है । उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया । आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं है किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानी गणों के, वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है ।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे मये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देख सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये । इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबा कर लिखा गया हो । हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता मन को, विचारों को बदलता चला जाता है । लाखों करोड़ों के मनों के अंत:स्थल को छू कर उसने उनका कायाकल्प कर दिया । रूसो के प्रजातंत्र की, कार्ल मार्क्स के साम्यवाद की क्रांति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है । उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्‌बोधन से एक विराट गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े रहते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाय, कैसे छन्दबद्ध, लिपिबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवनचरित को ।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पंद्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता । वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता-श्री पं. रूपकिशोर जी शर्मा आसपास के दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्‌भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अंत:करण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था । साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा । जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे । छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे । किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुत: अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी । जाति-पाँति का कोई भेद नहीं । जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवाकर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा ।

उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ। नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था।

किशोरावस्था में हीं समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा स्वल्प ही पायी थी किन्तु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है। हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय, अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय, यह सिखाया।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजा स्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं० मंदन मोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में। उनने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में संपन्न क्रिया कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषि सत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीस लक्ष के चौबीस महा- पुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था। २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रांति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्वाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था, जिसने भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि ''प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। दो बातें गुरु सत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गई, संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी। वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया। सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।''

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने तोड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख सुन कर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद पैदल लम्बा रास्ता पारकर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल

भी गये । छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई । जैल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अंग्रेजी सीखकर लौटे । आसन- सोल जेल में वे श्री जवाहर लाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से-मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना । यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश ।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जन आक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रांतिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था । नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं । बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये । जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा छीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्य चकित रह गये । उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्त जी नाम से ही जानते हैं। लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्य मंत्री श्री गोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधी जी के समक्ष पेश किये गये । बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए । कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुज में सम्मानित किया । उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधान मंत्री राहत फण्ड, हरिजन फण्ड के नाम समर्पित कर दीं । वैरागी जीवन का, सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरु हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम, अहमदाबाद गये । सांस्कृतिक आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्यायरत रह कर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया । प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अत: पुन: सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमश: उनके अध्यवसाय घर-घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदय स्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है ।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ, स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे । पुस्तकों का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंत: स्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही । साथ देने आ गयीं

परमवंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी । उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दुखी था-पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं । यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रांति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी ।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुंण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ । गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परम वंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी । धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी। २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है । १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है । १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५८ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया । कार्त्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देश भर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं । संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था । तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की अपनी रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्राय: पैंतीस संस्करण छप चुके हैं । हिमालय से लौटते ही उनमें महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूल थाती को पुनर्जीवन दिया । परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञान सम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं ।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ । तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तप:पूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था । तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों, यज्ञायोजनों के द्वारा विचार क्रांति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए । स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों में विशेष कार्य भार सौंप, परम वंदनीया माताजी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़ कर स्वयं हिमालय चले गये । एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया पद्धति बतायी । ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्त्तन संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किये ।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे । इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट् परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक । इसके

लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी बूटी, यज्ञविज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञान सम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण का एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युग शिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता, आस्तिकता संवर्धन एवं जन जागृति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञा संस्थान - शक्तिपीठ-प्रज्ञामण्डल-स्वाध्याय मंडल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तप साधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी को दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देव संस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नव निर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरु सत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युगसंधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेघ महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नव निर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रांति के निमित्त सौर ऊर्जा के दोहन द्वारा विशिष्ट प्रयोगों के माध्यम से विशिष्ट मंत्राहुतियों द्वारा सम्पन्न किये गये इन अश्वमेधों ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेध यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस. ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु संपन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९५ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी जा रही है। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो सत्तर खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हो रहा है। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जायेंगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेंगे' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी-उज्ज्वल भविष्य, सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

मानवी स्वास्थ्य एवं आयुष्य का मूलभूत आधार है आध्यात्मिक जीवनक्रम अपनाते हुए अपनी सांस्कृतिक मान्यताओं-चिरपुरातन आयुर्वेद की "स्वस्थवृत्त समुच्चय" जैसी धारणाओं को जीवन में उतारते हुए जीवनचर्या चलाना । आज व्यक्ति अकाल मृत्यु को प्राप्त होता है । आधुनिक विज्ञान की बदौलत जीवित भी है तो दवाओं के आश्रय पर व किसी तरह जीवन की गाड़ी खींच रहा है । समस्त प्रगति के आयामों को पार करने के बावजूद भी ऐसा क्यों है कि बीमार सतत बढ़ते ही चले जाते हैं, रुग्णालय भी बढ़ रहे हैं व चिकित्सक भी किन्तु स्वास्थ्य लौटता कहीं नहीं दिखाई देता । अन्दर से वह स्फूर्ति-तेजस्विता विरलों के ही अन्दर देखी जाती है । बहुसंख्य व्यक्ति निस्तेज रह किसी तरह तमाम असंयमों के साथ-साथ जीवन जीते देखे जाते हैं । परमपूज्य गुरुदेव ने स्वास्थ्य सम्बन्धी इस खण्ड में नीरोग जीवन का, चिरयौवन का मूलभूत आधार बताने का प्रयास किया है ।

हर व्यक्ति अपने लिए चिरस्थायी यौवन का खजाना ढूँढ़ता दिखाई देता है पर यह उसे बहिरंग में उपलब्ध नहीं होगा । कस्तूरी मृग में छिपी नाभि के अन्दर वह "इटरनल फाऊण्टेन ऑफ यूथ" अपने अन्दर ही है । वार्धक्य से हर व्यक्ति दूर रहना चाहता है, अशक्ति नहीं चाहता किन्तु करता वह सब कुछ वही है जो उसे वार्धक्य के और समीप ले जाती है । आज "लाइफ एक्सपेक्टेन्सी"-आयुष्य की अवधि तो बढ़ गयी है किन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से मनुष्य खोखला हो गया है । कैसे वह स्वास्थ्य रूपी संजीवनी पुनः लौटे ताकि नीरोग रह जीवन का आनन्द लिया व धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष रूपी पुरुषार्थों का परिपालन किया जा सके, यह विस्तृत मार्गदर्शन इस खण्ड में है ।

परमपूज्य गुरुदेव एक ऋषि दृष्टा स्तर की ऐसी सत्ता के रूप में ख्याति प्राप्त हैं जो न केवल एक वैज्ञानिक-चिन्तक-मनीषी थे किन्तु जिन्हें मानव की कारण-सूक्ष्म-स्थूल सत्ता का एक समग्र चिकित्सक माना जा सकता है । पूज्यवर लिखते हैं कि आरोग्य का आधार है-शारीरिक श्रम । आज व्यक्ति मशीनों का अवलम्बन लेता दिखाई देता है, हर दैनन्दिन जीवन के कार्य में । शारीरिक श्रम व्यक्ति को अक्षुण्ण स्वास्थ्य देता है चाहे वह बागवानी के रूप में किया गया अपनी रुचि का एक अभ्यास ही क्यों न हो । आहार संयम, विचार संयम, सभी इन्द्रियों पर नियंत्रण को मूलभूत धुरी बताते हुए उनने मानसिक-शारीरिक स्वास्थ्य को बनाए रखने का परिपूर्ण शिक्षण इस खण्ड के विभिन्न अध्यायों में दिया है ।

कामुक चिन्तन-कुदृष्टि मानसिक ब्रह्मवर्चस् को भंग करना भी क्रमशः व्यक्ति को छूँछ बनाता चला जाता है । किसी चलनी में दूध नहीं दुहा जा सकता । इसी प्रकार व्यक्ति को संयम अपनाते हुए अपने चिन्तन को सतत विधेयात्मक, सतोगुणी, ऊर्ध्वगामी बनाए रखना होगा तभी उसका स्वास्थ्य सही रह सकता है । मनःस्थिति स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती है एवं सतत शरीर के हर जीवकोश को प्रभावित करती रहती है यदि मनःस्थिति सही हो तो परिस्थितियाँ व्यक्ति अपनी निश्चित रूपेण सही बना सकता है । आहार भी-व्यक्ति के विचार भी-रहने की जीवन शैली भी स्वास्थ्य पर पूरा प्रभाव डालते हैं । आहार सम्बन्धी-कामेन्द्रियों सम्बन्धी असंयम को अपनाकर व्यक्ति आत्मघात ही करता है । आध्यात्मिक चिन्तन कर कैसे इसे सही रखा जाय, सात्विक आहार द्वारा कैसे नीरोग, सतत स्फूर्ति, मस्ती भरा जीवन जिया जाय-इसकी कुंजी इस खण्ड में है ।

प्रकृति की समरसता के अनुकूल जीवन ही सही जीवन है । इस आवश्यकता और उपयोगिता को-नैसर्गिक जीवन के साहचर्य की फल श्रुतियों को इस खण्ड में विस्तार से बताया गया है । पंचतत्त्वों की इस काया को प्रकृति में विद्यमान पंचतत्त्वों को सुव्यवस्थित कर सही रखा जा सकता है । प्राकृतिक जीवन आज

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कें भौतिकवादी युग में कैसे जिया जाय-इसका मार्गदर्शन पाठकगण पा सकते व लाभान्वित हो सकते हैं । पंचतत्त्व चिकित्सा, सूर्य चिकित्सा, धूप स्नान, वाष्प स्नान, मालिश आदि व निद्रा जागरण की सुव्यवस्थित नीति अपनाकर हर कोई स्वस्थ रह सकता है ।

इस खण्ड में अक्षुण्ण स्वास्थ्य, दीर्घजीवन, चिरयौवन, स्फूर्ति भरे जीवन के हर क्षण के कुछ मूलभूत सिद्धान्त बताये गये हैं । इनमें से यदि कुछ का भी परिपालन किया जा सके तो व्यक्ति को कभी चिकित्सक का मुँह देखने की जरूरत नहीं है । कब्ज से मुक्ति पाकर कोष्ठ शुद्धि कर व्यक्ति कैसे दोष मुक्त एवं स्वस्थ हो सकता है, यह हर कोई जानता है । कब्ज हमारी अपनी ही आहार की आदतों-जीवन शैली की देन है । सड़ा हुआ मल ही व्यक्ति को निस्तेज बनाता-रोगी बनाता एवं क्रमशः खोखला बनाता चला जाता है । इसी प्रकार बहिरंग-अंतरंग की स्वच्छता के कुछ नियम यदि पाले जा सकें तो वे भी शरीर को स्वस्थ बनाए रखने में बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं ।

आध्यात्मिक-मानसिक-शारीरिक हर दृष्टि से सर्वांङ्गपूर्ण स्वस्थ जीवन हर कोई जी सकता है । जरूरत मात्र इस बात की है कि व्यक्ति आत्म नियंत्रण सीख लें । विचार संयम, इन्द्रिय संयम, समय संयम, अर्थ संयम-इन्हें अपनाकर हर कोई चिरयौवन को प्राप्त हो सकता है-यह एक ध्रुव सत्य है, जिसे इस खण्ड में प्रतिपादित किया गया है ।

-ब्रह्मवर्चस

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय-सूची

१. चिरस्थायी यौवन

यौवन क्या है ? १.१
जीवन का पूर्णतः भरा होना ही यौवन है १.२
यौवन इच्छाशक्ति का एक स्वभाव है १.२
यौवन भावनाओं की ताजगी है १.२
कुछ नया कार्य करने की भूख जवानी है १.३
शारीरिक शक्तियों की पूर्णता यौवन है १.४
यौवन तथा आयु का सम्बन्ध नहीं १.४
शरीर का उचित संचालन अतीव आवश्यक है १.५
यौवन किस क्रम से विलुप्त होता है ? १.५
यौवन के शत्रु-चिन्ता, अभाव, उत्तरदायित्व, दुर्बलता १.६
ये घृणित आदतें १.६
इंद्रिय लोलुपता १.७
प्राणशक्ति का अपव्यय रोकिये १.७
हमारी मूर्खतापूर्ण आदतें १.८
प्राणशक्ति ही आपका संसार है १.८
प्राणशक्ति के क्षय के प्रमुख कारण और निवारण १.९
यौवन का गुप्त रहस्य वीर्य ही है १.१०
यौवन निर्माण करने वाली मनःस्थिति १.११
आपकी आशा में जितनी जवानी है १.११
यौवन निर्माण करने वाले तत्व १.१२
(१) विचारों का एक विशेष प्रवाह १.१२
(२) शुभ संकेतों की आवश्यकता १.१२
(३) शारीरिक शक्ति ही यौवन का रहस्य है १.१३
आशा और प्रसन्नता जवानी के मित्र हैं १.१४
जीवन में मौज से काम कीजिये १.१४
यौवन विशेष मानसिक स्थिति का नाम है १.१५
प्रत्येक दिन नया अनुभव करना यौवन है १.१५
क्रियाशीलता यौवन स्थिर रखती है १.१६
आलस्य का दुष्परिणाम १.१६
शारीरिक श्रम किया करें १.१७
सदा प्रसन्न रहिये १.१७
जीवन की मोमबत्ती दोनों ओर से फूँको १.१८
यौवन रक्षा के कुछ अनुभव १.१९

२. आरोग्य का आधार—शारीरिक श्रम

मानसिक और बौद्धिक श्रम करने वाले २.१
प्रकृति के प्रतिकूल सामाजिक पद्धति २.१
जीवन की मूलभूत आवश्यकता २.२
श्रम से बचने की हानिकारक मनोवृत्ति २.३
समयाभाव का गलत बहाना २.४
श्रम स्वयं एक वरदान है २.५
ईश्वरीय नियमों का पालन कीजिये २.७
धन का अनुचित महत्त्व २.८
श्रेष्ठता का झूठा भ्रम २.९
श्रम का कल्याणकारी सिद्धान्त २.१०

३. दीर्घ जीवन के रहस्य

आरोग्य और दीर्घ जीवन इस तरह प्राप्त करें ३.१
लम्बी उम्र के तीन साधन ३.३
दीर्घ जीवन के स्वर्ण सूत्र ३.५
सात अनुभूत महामंत्र ३.७
दीर्घ जीवन के आध्यात्मिक कारण ३.१०
विचारशील लोग दीर्घायु होते हैं ३.११
जीवनी शक्ति बढ़ाए, वही चिकित्सा उचित है ३.१३
आहार शुद्धि भी उतनी ही अनिवार्य ३.१५
सात्विक आहार-विहार का उपहार—दीर्घायु ३.१७
अनुभवों का सार ३.२०
आरोग्य एवं चिरयौवन का रहस्योद्घाटन ३.२२
प्रफुल्लता सुगठित स्वास्थ्य हेतु अनिवार्य आवश्यकता ३.२५
सशक्त दीर्घजीवन का राजमार्ग ३.२७
हमें दीर्घजीवी ही होना चाहिये ३.२७
जीवेम शरदां शतम् ३.२९
हम दीर्घजीवी क्यों नहीं बन पाते ? ३.३१
बुढ़ापे में हीनता न आने दें ३.३३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आप वृद्धावस्था से सदा बचे रह सकते हैं ३.३५
अपने जीवन में प्रकृति का प्रवेश होने दीजिए ३.३७
सौन्दर्य का मूल स्रोत तलाश करें ३.३९
अन्दर और भीतर की पवित्रता ३.४१
थकावट कैसे दूर हो ? ३.४४
श्रम ही नहीं विश्राम भी ३.४६
जीवन-रस को छककर पीते ये चिर-युवा ३.४८
लौकिक सुख के चार प्रमुख आधार ३.५२
स्वस्थ शरीर श्रेष्ठ सुख ३.५५
स्वास्थ्य गँवा बैठने में कोई समझदारी नहीं ३.५७
स्वास्थ्य रक्षा की छोटी किन्तु महत्त्वपूर्ण बातें ३.६०

४. जल्दी मरने की उतावली न करें

तनाव हर स्थिति में हानिकारक ४.१
शारीरिक गतिविधियाँ मनोवेगों द्वारा संचालित ४.४
अक्षुण्ण स्वास्थ्य की धुरी आहार नहीं, चिन्तन ४.८
हल्के-फुल्के रहें, स्वस्थ बनें ४.१२
चिकित्सा हेतु शरीर नहीं मन को टटोलिए ४.१५
न निराश हों, न उत्तेजित ४.२१
शरीर भले ही बूढ़ा हो, मन युवा बना रहे ४.२६
आयु एवं स्वास्थ्य शरीर पर नहीं, मन पर निर्भर ४.३०
मनःस्थिति सँभालिए-आयुष्य का आनन्द लीजिये ४.३३
आत्मोन्नति के लिए परिपुष्ट शरीर की आवश्यकता ४.३५
मन स्वस्थ तो शरीर स्वस्थ ४.३७
मनोविकारों का शरीर पर प्रभाव ४.३९
आत्म-निरीक्षण से मानसोपचार ४.४१
निग्रहीत मन की अपार सामर्थ्य ४.४३
मन को सुधारिये-वह जरूर सुधर जायेगा ४.४५
मानसिक सन्तुलन इस प्रकार सही रहे ४.४७

५. असंयम बनाम आत्मघात

शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम् ५.१
धर्म साधन में शरीर रक्षा का महत्त्व ५.४
स्वाध्याय की उपेक्षा न करें ५.६
आरोग्य का मूल्य-महत्व समझें ५.८
गम्भीर एवं महत्वपूर्ण समस्या ५.१०
हनुमान जी की सच्ची उपासना ५.१२
हम स्वास्थ्य और शक्ति की उपेक्षा न करें ५.१३
स्वास्थ्य सुधार के लिये धैर्य की आवश्यकता ५.१४
उतावली न की जाय ५.१७
रास्ता केवल एक ही है ५.१७
आदत सुधारें ५.१९
आरोग्य रक्षा के प्रति सतर्क रहें ५.२१

६. नैसर्गिक जीवन—आवश्यकता और उपयोगिता

प्राकृतिक जीवन हर दृष्टि से निरापद ६.१
दीर्घायुष्य का रहस्य प्राकृतिक जीवन-क्रम ६.६
सूर्य सेवन से जीवनी शक्ति बढ़ाएँ ६.१०
जड़ी-बूटी प्रयोग-उपचार की एक पूर्णतः नैसर्गिक विधा ६.११
नैसर्गिक जीवन अपनायें—स्वस्थता बढ़ायें ६.१५
स्वास्थ्य की कुंजी अपनी मुट्ठी में ६.१८
काया को रुग्ण और दुर्गतिग्रस्त न बनायें ६.२१
उपवास—एक समर्थ उपचार पद्धति ६.२४
उपवास द्वारा शरीर और मन की स्वस्थता ६.२६
उपवास करने की विधि ६.२६
स्वच्छता को भी महत्व मिले ६.३०

७. स्वास्थ्य रक्षा के कुछ सरल उपाय

अपनी चिकित्सा आप स्वयं करें ७.१
आत्म-निरीक्षण और आत्म-सुधार ७.१
वस्तुस्थिति की जानकारी ७.२
स्वास्थ्य समस्या और हमारा कर्त्तव्य ७.३
आरोग्य की उलझन भरी गुत्थी ७.३
पंच तत्वों की सात चिकित्सा ७.३
पेट की सफाई सर्वोत्तम ७.४
प्राकृतिक चिकित्सा क्या है ? ७.४
कीटाणु नहीं विजातीय द्रव्य ७.७

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विजातीय द्रव्य की उत्पत्ति और वृद्धि ७.६
पंचतत्व—चिकित्सा का अश्चर्यजनक प्रभाव ७.१२
शारीरिक मल का निष्कासन—उपवास ७.१६
पेट के भीतरी कलपुर्जों की सफाई—एनीमा ७.२०
जुलाव की हानियाँ ७.२०
एनीमा कैसे ली जाय ७.२१
एनीमा विधि की प्राचीनता ७.२२
सूर्य चिकित्सा या धूप-स्नान ७.२२
सूर्य सेवन हमारे लिये परम् उपयोगी ७.२३
गर्मी और रोशनी से दूर न भागें ७.२६
धूप के सम्पर्क में रहिये ७.२८
स्वास्थ्य रक्षा में सूर्य किरणों का उपयोग ७.३१
रंगों की प्रभाव क्षमता पर विज्ञान की मुहर ७.३२
वेदों में सूर्य-चिकित्सा ७.३७
ब्राह्म मुहूर्त में ही जागना चाहिये ७.३६
उषः पान कीजिये ७.४२
स्वास्थ्य के लिये स्नान और जल की उपयोगिता ७.४४
रोगनाशक जल तत्व ७.४६
जल के अमृतोपम गुण ७.४७
जलोपचार की प्रमुख विधियाँ ७.४७
दैनिक जीवन में जल का उपयोग ७.४७
रोग निवारण में जल का प्रयोग ७.४७
फादरनीय के जल विषयक विचार ७.४८
जल के विविध स्नान ७.४६
जल की पट्टी का प्रयोग ७.५०
स्नान कैसे किया जाय ? ७.५१
घर्षण स्नान ७.५३
वायु स्नान ७.५४
मालिश—स्वास्थ्य संवर्धन की कला ७.५५
मालिश—एक सशक्त उपचार पद्धति ७.५७
सूखी मालिश स्वास्थ्य वृद्धि का सुलभ साधन ७.६४
वायु प्रदूषण का सरल उपचार—तुलसी आरोपण ७.६५
तुलसी लगायें, स्वस्थता बढ़ायें ७.६८
सुगन्ध और दुर्गन्ध भी स्वास्थ्य को प्रभावित करती है ७.७२

८. स्वच्छता—मनुष्यता का गौरव

स्वच्छता और स्वास्थ्य का अनन्य सम्बन्ध ८.१
मलीनता एक कलंक ८.१
संकटों का आमंत्रण ८.२
मनुष्यता का प्रथम चिन्ह ८.३
सावधानी बरतें, निगाह रक्खें ८.४
गन्दगी हटाने में उत्साह रहे ८.५
अधूरे काम गन्दगी के अम्बार ८.६
सफाई सभ्यता का अंग ८.७
यत्र-तत्र-सर्वत्र ८.७
स्वच्छता, सरल व सापेक्ष ८.८
स्वच्छता सांस्कृतिक सद्गुण ८.८
गन्दगी रोग की जननी ८.८
कीटाणु कैसे पलते हैं ८.६
रोग की अम्मा ८.६
इधर भी ध्यान दें ८.१०
हमारी लापरवाही ८.१०
मल-मूत्र का आर्थिक महत्त्व, उसका सदुपयोग ८.१०
मल एक सुन्दर खाद ८.११
इसे बर्बाद न करें तो ८.११
हमारी कठिनाइयाँ ८.११
गन्दगी और स्वास्थ्य ८.१२
संकीर्ण मनोवृत्ति ८.१२
भंगियों के आश्रित न बनें ८.१३
गन्दगी निवारण के रचनात्मक उपाय ८.१३
देव समाज की रचना ८.१३
सफाई हमारा स्वभाव बने ८.१४
स्त्रियाँ सोचें, समझें और करें ८.१४
पाखाने की व्यवस्था ८.१४
मल के सदुपयोग की जानकारी ८.१५
गन्दगी के सम्बन्ध में हमारी भ्रमपूर्ण धारणा ८.१५
सामाजिक कार्यकत्ताओं के कर्त्तव्य ८.१६
छोटे सॉक पिट्स ८.१७
सरकारी प्रयत्नों की जानकारी ८.१७
श्रेष्ठ सद्गुण एवं शुभ संस्कार ८.१७
व्यवस्थित जीवन-क्रमिक विकास ८.१८
अपना दुर्गुण अपना दोष ८.१६
सामान्य नहीं असामान्य ८.२०
सुकरात की शिक्षा ८.२१
व्यक्तित्व विकसित करने वाली विशेषता ८.२२
स्वच्छता एक महान आध्यात्मिक गुण ८.२२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

९. संयम बनाम सफलता

संयम—हमारी एक महत्वपूर्ण आवश्यकता ९.१
इंद्रिय संयम की आवश्यकता ९.३
सयंमी ही आत्म-जयी होते हैं ९.६
जिह्वा के संयम से स्वास्थ्य की सिद्धि ९.८
काम-वासना में सर्वनाश ९.१०
क्रोध की भयंकरता ९.१४
लोभ से रोगों का जमाव ९.१६
भय का भूत ९.१७
निराशा और चिन्ता ९.१९
इन्द्रियों का सदुपयोग करना सीखें ९.२०

१०. कब्ज से कैसे बचें

पाचन-क्रिया बिगड़ने के कारण १०.१
कब्ज के कारण मलाशय की दुर्दशा १०.२
कब्ज से भयंकर रोगों की उत्पत्ति १०.३
बवासीर और मूत्राशय का कष्ट १०.३
कब्ज को पैदा ही न होने दें १०.५
चूरन-चटनी आदि की हानिकारक प्रवृत्ति १०.६
जुलाब की खराबी १०.६
प्रकृति से सहायता लीजिये १०.६
कब्ज मिटाने का स्वाभाविक उपाय 'एनिमा' १०.७
'एनीमा' की उपयोगिता में किसी प्रकार का सन्देह नहीं १०.७
सन्तुलित आहार की उपयोगिता १०.८
भोजन का परिमाण अधिक न हो १०.९
आहार की उचित मात्रा १०.१०
मैदा, मशीन का चावल, मिठाइयाँ १०.१०
अमिष पदार्थों का कुपरिणाम १०.११
मंदाग्नि का कारण और बचने के उपाय १०.११
कब्ज के अन्य कारण १०.१२

११. हम दुर्बल नहीं—शक्तिशाली बनें

दुर्बलता के पाप से बचिये ११.१
हम शक्तिशाली भी तो बनें ११.३
शक्ति का स्रोत हमारे अन्दर है ११.५
शक्तियों का अपव्यय रोका जाय ११.७
हम संयमी बनें—शक्ति का अपव्यय न करें ११.९
जीवन-संग्राम में पुरुषार्थ की आवश्यकता १..११

१२. श्वांस सही तरीके से लीजिये

प्राण-तत्व की विद्यमानता १२.१
प्राणशक्ति की प्राप्ति १२.२
'प्राणायाम' करने की सबसे सरल विधि १२.३
श्वांस—व्यायाम के अन्य प्रयोग १२.४
प्राणाकर्षण के अभ्यास १२.४
'नाड़ी-शोधन' का अभ्यास १२.५
प्राणायाम से आध्यात्मिक उन्नति १२.५
'प्राण का स्वरूप और शरीर में उसका स्थान' १२.६
श्वांस व्यायाम का आध्यात्मिक प्रभाव १२.८
श्वांस प्रणाली के सुधार से होने वाले विविध लाभ १२.८
श्वांस—व्यायाम के दो अभ्यास १२.९
यौगिक प्राणायाम की विधि १२.११
श्वांस व्यायाम के प्रचार की आवश्यकता १२.११
आरोग्यवर्धक स्वर विज्ञान १२.१२
बिना औषधि रोग निवारण १२.१४

१३. व्यायाम—हमारी एक अनिवार्य आवश्यकता

शारीरिक श्रम का महत्व १३.३
व्यायाम की आवश्यकता १३.४
व्यायाम की विज्ञानुकूल पद्धति १३.५
व्यायाम और स्वास्थ्य का सम्बन्ध १३.६
व्यायाम की परिभाषा १३.७
व्यायाम एक विज्ञान १३.७
सबके लिए आवश्यक १३.७
व्यायाम के विभिन्न पहलू १३.८
व्यायाम और स्वास्थ्य १३.८
डम्बल और मुग्दर १३.९
शस्त्र शिक्षा १३.९
लाठी चलाना १३.१०
फिजीकल ट्रेनिंग और सेन्डो के व्यायाम १३.१०
आसन और प्राणायाम १३.१०
आसन सर्वांगपूर्ण व्यायाम १३.११
योगासनों का वैज्ञानिक पहलू १३.१२
आसनों की पांच श्रेणियां १३.१५
आसनों का प्राकृतिक स्वरूप १३.१४
स्वास्थ्य सुधार की दृष्टि से चार प्रकार के आसन १३.१७

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आसन-व्यायाम के सम्बन्ध में विशेष सूचनाएँ १३.१८
स्वास्थ्य रक्षा के उपयोगी आसन १३.२०
(१) पाद-हस्तासन १३.२१
(२) हस्तपादांगुष्ठासन १३.२२
(३) पश्चिमोत्तानासन १३.२२
(४) भुजंगासन १३.२३
(५) शलभासन १३.२५
(६) धनुषासन १३.२५
(७) सर्वांगासन १३.२६
(८) हलासन १३.२७
(९) अर्ध-मत्स्येन्द्रासन १३.२९
(१०) वज्रासन १३.३०
(११) वकासन १३.३०
(१२) गोमुखासन १३.३०
(१३) चक्रासन १३.३१
(१४) आकर्ण धनुषासन १३.३१
(१५) गरुड़ासन १३.३३
(१६) शवासन या दण्डासन १३.३३
आसन—व्यायाम के सामान्य नियम १३.३४
वृद्धावस्था के व्यायाम १३.३६
सूर्य नमस्कार के व्यायाम १३.४१
लाठी व्यायाम १३.४४
मुगदर व्यायाम १३.४६
स्त्रियों के व्यायाम १३.४६
स्त्रियों के व्यायाम १३.४६
राशि-चक्र के अनुकूल व्यायाम १३.५०
कुछ सर्वोपयोगी सरल व्यायाम की विधि १३.५३
खड़े होकर किये जाने वाले व्यायाम १३.५४
बिस्तर के व्यायाम १३.५६
टहलने का व्यायाम १३.६०
टहलना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है १३.६०
खाली दिमाग टहलना १३.६६
भ्रमण और स्वास्थ्य १३.६५
पैदल भी चलिये १३.६७
खेलकूद १३.६९
तेल मालिश कीजिये १३.६९
गायन, वादन और नृत्य १३.७०
कुछ घरेलू व्यायाम १३.७१
चक्की पीसना १३.७१
गांव-गांव व्यायामशाला १३.७२
साधनों के लिए सामूहिक चन्दा १३.७३
व्यायाम आन्दोलन को व्यापक बनाया जाय १३.७४
प्रगति का प्रथम सोपान-स्वास्थ्य सम्वर्धन १३.७६
प्रज्ञा अभियान का स्वास्थ्य संरक्षण कार्यक्रम १३.८०

१४. शारीरिक स्वच्छता पर पूरा ध्यान रखें

अपने लिए उपयुक्त वातावरण चुनें या विनिर्मित करें १४.४
सर्दी से डरिये नहीं, वह हमारा मित्र है १४.५
जीवन के लिए सर्दी भी उपयोगी है १४.६
गर्मियों में स्वस्थ कैसे रहें ? १४.७
वर्षा की ऋतु-चर्या व बरती जाने वाली सावधानियाँ १४.८
सर्दी और जुकाम की चिकित्सा १४.११
ज्वर आये तो हड़बड़ायें नहीं १४.१२
अपच से इस तरह बचा जाय १४.१४
सुविधा सम्पन्न होने पर भी थकान ग्रस्त क्यों ? १४.१६
थकावट को हावी न होने दें १४.१६
अचानक आ धमकने वाला अन्धापन १४.२०
नेत्र-रक्षा के उपाय १४.२१
चश्मा कब लगाना चाहिये ? १४.२२
नेत्रों का स्वास्थ्य १४.२२
दाँत हमारी सुरुचि और सतर्कता के परिचायक १४.२५
दाँतों की सुरक्षा का समुचित ध्यान रखें १४.२७
मधुमेह—कारण और निवारण १४.२८
हृदय रोगों में बढ़ोत्तरी क्यों ? १४.३१
कैंसर—प्रकृति विरोधी आचरण का दुष्परिणाम १४.३२
कैंसर की जड़ों में आधुनिक सभ्यता की खाद १४.३५
स्वास्थ्य के सम्बन्ध में शरीर विज्ञानियों के मन्तव्य १४.३७
दवा से रोग दबते भर हैं, जाते नहीं १४.३९
दवा खाइये किन्तु सावधानी के साथ १४.४२
एन्टी-बायोटिक्स उपचार की घातक प्रतिक्रया १४.४३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कीटनाशी रसायनों की बढ़ती विभीषका १४.४६
सदुद्देश्य के साथ सतर्कता भी आवश्यक है १४.४८
स्वास्थ्य का आधार, आहार नहीं मस्तिष्क १४.४९
अकाल मृत्यु के मुँह में हमीं घुस पड़ते हैं १४.५०
दुराचरण से जन्मी महामारी महाविनाश लायेगी १४.५३
रोग-शोकों की उत्पत्ति का कारण 'प्रज्ञापराध' १४.५६
आस्थाएँ विकृत होने से रोग-शोक बढ़ते हैं १४.५८
आस्थाएँ परिष्कृत हों १४.६१
विश्वास एवं आशंका पर आधारित चिकित्सा मनोविज्ञान १४.६४
तनाव दूर करने के लिए शिथिलीकरण साधिये १४.६५
सार्थक चिकित्सा हेतु सकारात्मक चिन्तन १४.६७
रोग निवारण के मानसिक प्रयोग १४.६९
अमृतधारा ध्यान १४.६९
सिर दर्द मिटाने के प्रयोग १४.६९
पाचन शक्ति सुधार १४.७०
ठंड से बच सकते हैं १४.७०
घबराहट से मुक्ति १४.७०
जैसे चाहो वैसे बनो १४.७०
सुन्दर कल्पना के चित्र १४.७०
सुख की नींद कैसे सोयें ? १४.७१
अनिद्रा का एक सरल उपचार १४.७५
सफूर्ति लाये, ऐसी निद्रा ही सार्थक १४.७७
निद्रा अनिवार्य भी, उपयोगी भी १४.७९
बुढ़ापे की अनिद्रा : बड़ी जानलेवा १४.८१
हास्य एक सर्वश्रेष्ठ पर सर्वसुलभ टॉनिक १४.८३
हँसना बनाम स्वास्थ्य सुधारना १४.८५
मनोवैज्ञानिक आसन—मुस्कान १४.८६
सौन्दर्य का सच्चा स्वरूप १४.८९
सुन्दरता बढ़ाइये पर साथ ही आन्तरिक पवित्रता भी १४.९१
सौन्दर्य की स्वाभाविकता और उसका आधार १४.९३
सौन्दर्य की परख १४.९५
सौन्दर्य : कृत्रिम तथा वास्तविक १४.९६
स्वच्छता भी जरूरी है १४.९८
मरते-मरते भी इतना कुछ किया जा सकता है १४.१०१

१५. सौन्दर्य बढ़ाने के उपाय

सौन्दर्य की अद्भुत शक्ति १५.१
सौन्दर्य ईश्वर का स्वरूप १५.१
प्रेम तथा सौन्दर्य १५.२
बाह्य सौन्दर्य १५.२
स्त्री-पुरुषों में कौन अधिक सुन्दर है ? १५.२
सुडौल शरीर • सौन्दर्य का केन्द्र है १५.३
सौन्दर्य का साधन व्यायाम १५.३
व्यायाम पद्धतियाँ १५.३
सूर्य नमस्कार—सौन्दर्य का प्राकृतिक साधन १५.४
स्त्रियों के लिए व्यायाम १५.५
शरीर को सुन्दर बनाने वाले अवयव १५.६
चार प्रधान अवयव १५.६
(१) फेफड़े १५.६
(२) त्वचा १५.६
(३) गुर्दे १५.७
(४) आँतें १५.७
आपके नेत्रों का सौन्दर्य १५.८
आन्तरिक स्वच्छता का ध्यान रखें १५.८
कपोल और उनका सौन्दर्य १५.९
सौन्दर्य के शत्रु मुहाँसे १५.९
सुन्दर दाँत १५.१०
नासिक और होठ १५.११
हाथ और अंगुलियों का सौन्दर्य १५.१२
सौन्दर्य में केशों का स्थान १५.१२
कोमलता तथा लावण्यता के उत्पादक कुछ उपाय १५.१३
सौन्दर्य के गुप्त रहस्य १५.१३
गोरे होने के उपाय १५.१४
उबटन का प्रयोग करें १५.१४
त्वचा को स्वस्थ रखिये १५.१५
दूध एक सौन्दर्य प्रसाधन है १५.१६
रंग का कालापन दूर हो सकता है ? १५.१७
आपका यथार्थ सौन्दर्य १५.१८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

चिरस्थायी यौवन

यौवन क्या है ?

यौवन जीवन की एक स्थिति है। एक ऐसा लक्षण है, जिससे यह ज्ञात होता है कि जीवन किस दशा में चल रहा है ? जीवन में प्राणशक्ति का प्रवाह उच्च अथवा निम्न किस ओर प्रवाहित हो रहा है। यौवन जीवन का प्रतीक है यह शक्ति, प्राण अथवा जीवाणु तत्वों का चिन्ह है। जीवन का सरस बसन्त है। मानव जीवन में जो रस, माधुर्य, सौन्दर्य या मादकता है, वह यौवन में प्रस्फुटित होता है।

यौवन जीवन की एक परिभाषा है। यह वह स्थिति है, जिसमें मनुष्य का जीवन-क्रम अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में सम्पूर्ण स्फूर्ति से कार्य क्षेत्र में प्रविष्ट होकर द्रुतगति से सरल, कठिन, शुष्क कार्य सरलता से करता चलता है। स्नायुशैथिल्य या रक्त की विकृतावस्था का शिकार नहीं होता। यौवन जीवन की सरल हरियाली है, रसयुक्त बहुमुख तरंगिणी है, मधुर आनन्ददायिनी, सौन्दर्यशील अमरता का आनन्द स्रोत है।

यौवन स्वास्थ्य और प्राणशक्ति का चिन्ह है। प्रायः लोग आयु पूछकर किसी व्यक्ति के स्वास्थ्य और प्राणशक्ति के विषय में कल्पनायें किया करते हैं। अमुक व्यक्ति की आयु चालीस को पार कर गई है, अतः अब उसमें निर्बलता होनी ही चाहिये। अमुक व्यक्ति कमजोर बीमार सा प्रतीत होता है। वह अधेड़ आयु का होना चाहिये। अमुक व्यक्ति बीमार पड़ता है, उसमें प्राणशक्ति का ह्रास हो गया है। अतः वह वृद्ध होना चाहिये। वह सभी कल्पनायें मूर्खताजन्य हैं।

हम कल्पना करते हैं कि आयु अधिक होने से वृद्धावस्था का आगमन प्रारम्भ हो गया है। अब हमारी कार्यशक्ति का क्षय प्रारम्भ हो जायेगा। वृद्धावथा आ रही है। अब मृत्यु समीप है, अब जीवन में क्या अवशेष है ? ये सब हमारी मूर्खतापूर्ण अनीतिकर थोथी कल्पनायें हैं। इन कुत्सित कल्पनाओं ने मानव समाज का बड़ा अनर्थ किया है। जवानी हृदय की भावनाओं की ताजगी का नाम है।

युवावस्था ही सच्चा जीवन है—

"यौवन" और "जीवन" दोनों पर्यायवाची शब्द हैं, जिसमें जितना जीवन शेष है, वह उसी अनुपात में युवक है। जीवन की रक्षा, प्राणशक्ति की अभिवृद्धि, मानसिक आशावादिता सब हमारी जिन्दगी के अनमोल तत्व हैं। उम्र से यौवन का कोई सम्बन्ध नहीं है। उम्र अधिक होने से यौवन का ह्रास नहीं होता। मनुष्य की आयु तो उसी के द्वारा निर्मित एक विधान है। जो व्यक्ति तीस वर्ष की आयु में मरता है, वह इक्कीस वर्ष की आयु में युवक कहा जायेगा किन्तु बरनार्डशॉ की जो ६४ वर्ष तक जीवन का माधुर्य लुटता रहा, उसकी जवानी तीस वर्ष से प्रारम्भ होकर ८० या ६० वर्ष तक रह सकती है। जिसकी आयु जितनी ही अधिक रहेगी, उसका यौवन भी उसी के अनुसार निश्चित किया जायेगा। संसार में जो दीर्घजीवी व्यक्ति हुये हैं, जिनकी आयु ६० वर्ष से ऊपर होकर रही है, उनकी जवानी दीर्घकाल तक चलती रही। जीवन की उच्चतम शक्तियों का प्रभाव उसी गति से अन्त तक चलता रहा, जिससे वह यौवन के प्रभात में प्रारम्भ हुआ था। आयु और यौवन दो भिन्न-भिन्न मान्यताएँ हैं। आयु एक अनन्त समुद्र है, जिसकी गहनता, अगाधता नापी नहीं जा सकती, यौवन उसकी उठने वाली, उस सतत् सचेतन, सतेज, सक्रिय रखने वाली तरंगें हैं। यौवन, उत्साह का, शक्ति और आशा का द्योतक है। आयु मानव की एक मर्यादा मात्र है।

मनुष्य में जितनी शक्ति है, उतना ही यौवन है। शक्ति-यौवन, जो जितने काल तक अपनी शारीरिक, मानसिक और जिंदादिली को स्थिर रख सकता है, वह उतने ही दिन यौवन का आनन्द लूटता है। जिसके मन में उत्साह है, हृदय में आशा, आनन्द और प्रसन्नता है, जो आने वाले दिन का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत करता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और उज्जवल भविष्य को आशा से निरखता है, वह अधिक आयु पाकर भी युवक है। यौवन कार्य सम्पादन शक्ति का प्रमाण है।

जीवन का पूर्णतः भरा होना ही यौवन है—

यदि आप अपने अन्दर जीवन को पूरी तरह भरा-पूरा अनुभव कहते हैं और जीवन में थकावट, अपूर्णता, स्वाँसों की न्यूनता, उत्तरदायित्व का भार अनुभव नहीं करते हैं, तो आप युवक हैं। जवानी जीवन की पूरी तरह से भरी हुई अवस्था है। आप अनुभव करते हैं कि जीवन मधुर है, उसमें आपको नाना प्रकार की उत्तमतायें, पवित्रतायें, समृद्धि और सुख शान्ति प्राप्त करनी है, आप उसकी ओर क्रमशः अग्रसर होते जा रहे हैं, आपकी कल्पनायें सुन्दर सुखद भावना चित्र विनिर्मित करती हैं। आपको अपने परिवार, इष्ट-मित्रों, पत्नी में आकर्षण प्रतीत होता है। प्रकृति का मधुर और रहस्यमय संगीत आपको शान्ति और उत्साह प्रदान करता है। आप महान् ग्रन्थों में उन नर-रत्नों का वृतान्त पढ़ते हैं, अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति द्वारा संसार को चकित कर दिया। आपकी महत्वाकांक्षा सजग होती है। आप भी उन्हीं मेधावी पुरुषों की योजना बनाकर द्रुतगति से आगे चलते हैं। आपके हृदय में जीवन के प्रति उत्साह है। घर आपका सुन्दर है, उसे ऊँचा उठाने, प्रत्येक सदस्य को उन्नत करने, स्वस्थ और प्रसन्न देखने के लिये प्रयत्नशील हैं। आपका कारवार, नौकरी या कृषि जो कुछ भी आप करते हैं, उसमें मन लगता है। प्रत्येक कार्य में आपको रस, आनन्द और मजा आता है। संकट में, विपत्ति में आप हताश या दुःखी न होकर पुनः दुगने वेग से अपने उद्देश्य की प्राप्ति में संलग्न हो जाते हैं। स्वास्थ्य आपका ऐसा है, जैसे शरीर फौलाद का बना हुआ हो, उभरे हुये गुलाबी कपोल, लाल होंठ, सुघर बाहें, पुट्ठे उन्नत हैं—इस प्रकार की शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक उत्साह प्रदान जीवन की पूर्णता का भरा हुआ पूरा अनुभव करना ही यौवन का चिन्ह है।

यौवन इच्छाशक्ति का एक स्वभाव है—

यौवन इच्छाशक्ति की दृढ़ता का नाम है। वह इच्छा शक्ति पाँच प्रकार से प्रकट होती है—प्रथम युवक के सुस्पष्ट आदर्श द्वारा, द्वितीय दृढ़ अभिलाषा, तृतीय विश्वासप्रद आशायें, चतुर्थ संकल्प, पंचम संतुलित क्षतिपूर्ति। यौवन में इन पाँचों की एकता से एक अद्भुत विशिष्ट मानसिक अवस्था मौजूद रहती है। युवक अपने मानस की बलवती कामना को तन से, मन से, कामना से, पूर्ण रूप से प्राप्त कर लेना चाहता है। इसकी पूर्ति के लिये युवक अपने मन में एक प्रखर प्रकाश का अनुभव करता है। यह यौवन की इच्छा शक्ति का तेजोमय स्वरूप है।

यौवन कल्पना की एक दिशा है। कल्पना शक्ति मनुष्य की सर्जनशक्ति है। यह उन्नत परिपूर्ण सुखी सुमधुर भावना की द्योतक है। यौवन में मनुष्य अपनी कामनाओं के सबसे उर्वरा रूप में देखता है। एक से एक बढ़िया मानस चित्र विनिर्मित करता है। अपूर्णता से पूर्णता, दुःख से प्रसन्नता अभाव से समृद्धि, अप्रिय से प्रियता के रूप पूर्तिमान करता है। उसके विचारों में, मस्तिष्क में, हृदय में, शरीर के सब अवयवों में, अण्ड अणु में इन आशा प्रद कल्पना का चमत्कारी प्रभाव होता है। जिस दशा में कल्पना सुख के उच्चतम शिखर पर आरूढ़ रहता है। जीवन को आनन्दमय बनाने की स्वप्निल दुनियाँ निवास करती है, वह यौवन की दशा है। कल्पना की उन्नत हितकारक तथा निरामय दशा जवानी का चिन्ह है। दुर्बल मनःस्थितियों का न होना ही जवानी है।

यौवन विचारों का एक विशेष महत्त्व है। यह बहाव मानसिक स्वतन्त्रता से, भद्रता, शुद्धता हितैषी भावनाओं से, सम्बन्धित है। यौवन का बहाव, प्रेम माधुर्य प्रसन्नता, उत्साह, निर्भयता, सत्यता आशाप्रद शान्तिदायक सद्विचारों का, प्रवाह है। यौवन के अन्तराल में शान्ति का, हित का, आनन्द का प्रभुत्व है। युवक वह है, जो अपने मस्तिष्क में हितैषी विचारधारा और हृदय में मधुर भावना को पथ प्रदर्शक मानकर जीवन को पवित्र शान्त और आनन्दमय बनाता है। उसके विचारों का केन्द्र ईश्वर होता है। उसकी आदि सत्ता के सत् चित्त आनन्द स्वरूप का प्रसार उसकी विचारधारा में होता है।

यौवन भावनाओं की ताजगी है—

यौवन हृदय की भावनाओं का एक विशेष कार्य व्यापार है। यौवन और बुढ़ापे की भावनाओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में क्या अन्तर है ? अन्तर वही है जो ताजे और बासी फल-फूल, पत्ती में होता है। ताजे फल का रंग देखिये जैसे अणु-अणु में से जीवन फूट रहा है। ताजे पुष्प में से सुगन्धि का खजाना लुटा जा रहा है, पराग का दरवाजा खुला रहता है, रंगीनी मस्त करने वाली होती है। इसके विपरीत बासी फल और बासी पुष्प में न सुगन्ध की ताजगी है, न रंगों की चटखपन। जवानी मानस के हृदय की सुकोमल, सुललित, मधुर भावनाओं की ताजगी का नाम है। हृदय अनेक सूक्ष्म भावनाओं से नृत्य कर उठता है। कभी प्रेम में मत्त हो उठता है, तो कभी उत्साह में नाँचने लगता है, वीरता में उत्तेजित हो उठता है, सहानुभूति में पिघलता है, आश्चर्य में चकित हो उठता है, हास्य में उन्मुक्त रूप से हँस उठता है। उसका मन सदा सर्वदा हरा-भरा, प्रफुल्लित रहता है। उसका हृदय सबके लिये प्रेम, करुणा सहानुभूति से परिपूर्ण रहता है। सभी के दुःख दर्द की प्रतिच्छाया उस पर पड़ती है। हृदय की हरियाली में विश्वप्रेम का पौधा पनपता है। दया और प्रेम से उसका दिल उछलता है। दिन पर दिन ज्यों-ज्यों पूर्ण यौवन मनुष्य के देह में कौने-कौने से भर उद्वेलित होने लगता है। त्यों-त्यों उसकी पवित्र भावनायें धर्म-कर्म भी उन सबका अतिक्रम करके बढ़ने लगता है। यौवन अन्तर्जगत् में ताजे भावों और सूक्ष्मतम अनुभूतियों की उद्भावना करता है, जो मनुष्य के मानसिक उपचार के लिये रसायन है। बाह्य जगत में हम जो कुछ देखते हैं, उसका केवल वस्तु रूप ही हमारे मन के भीतर स्थान नहीं बनाता, प्रत्युत उसे उद्भूत एक-एक मनोभाव हमारे हृदय में गुदगुदी पैदा करता है। प्रकृति, संसार और नारी—इनके कण-कण में सौन्दर्य प्रतीत होता है। यौवन सहृदयता का नाम है। भावुकता का पर्याय है। यौवन, सहृदयता के द्वारा जो कुछ उन्मुक्त करता है, उसी के द्वारा प्राणियों को एक-दूसरे के साथ अपने तारतम्य का बोध होता है।

यौवन में सुखद भावनाओं का यह प्राचुर्य थोड़ी अवधि के लिये हमें कवि बना देता है। संसार और प्रकृति में, सर्वत्र हमें एक अजीव सौन्दर्य दीखता है। प्रकृति रानी की शोभा नवीनता से परिपूर्ण दीखती है। नवीन सुषमा, नवीन मधुरिमा, नवीन मृदुलिमा हमारे गीतों को एक मादकता से भर देती है। संगीत यौवन का प्राण है। विश्व के विस्तृत उपवन में दुःख के काँटों से छिपकर भी यौवन-संगीत हृदय से हँस उठता है। पत्ती-पुष्प गा उठते हैं। निर्झर, सरिता, कल-कल निनाद करते हैं। यौवन में संगीत द्वारा हमारे भाव उसी प्रकार खिल उठते हैं, जैसे अपने कोमल-कोमल पत्तों के मध्य में गुलाब। हमारी प्रत्येक रचना में कवि-हृदय का स्पन्दन स्वभाव रूप से विद्यमान रहता है, युवक वह है जिसके पास एक भावुक हृदय है, सौन्दर्यान्वेषक नेत्र हैं। संगीत-प्रिय कर्ण हैं, मधुर कोमल वाणी, और तूलिका के अभ्यस्त कोमल हाथ हैं।

कुछ नया कार्य करने की भूख जवानी है—

यौवन एक मादक अमृत है, जो संसार की सब वस्तुओं—स्त्री-पुरुषों, प्रकृति के फल-फूल पत्तियों, सरिताओं की लहरों, उद्यान के वृक्षों, तूलिकाओं में एक अभिनय, सौन्दर्य फूँक देता है। कोयल कूक उठती है। मोर मद-विह्वल हो नृत्य कर उठता है। चिड़ियाँ फुदकने लगती हैं। उनका उत्साह जिन्दादिली, आनन्द रोके नहीं रुकता। चौपाये उछलने-कूदने लगते हैं। गाय, बकरी, भैंस, घोड़ा, हाथी—सब मस्त हो उठते हैं। यौवन के राज्य में सर्वत्र मस्ती है। जोश और उत्साह है। यौवन एक विशेष मनःस्थिति का नाम है, जिसमें कार्य शक्ति तीव्रतम रहती है।

यौवन छन्द-बन्ध तोड़-फोड़ कर उन्मुक्त बहने वाली एक सरिता के सदृश्य है। वह मुक्त, अबाध, अमंद, रजत निर्झर सदृश्य निःसृत है। स्वर में मिठास उत्पन्न करने वाला रोम हर्ष से पुलकित करने वाला यौवन प्रकृति का अंग है। वह कल्पना के रंगीन पंख लगाकर व्योम में विहार करना चाहता है। संगीत की ताल जैसी उसकी गति है।

यौवन जीवन का बसन्त हैं, जिसमें मनुष्य की आशायें कलिका बनकर खिल उठती हैं। मादकता का मंजु संगीत होता है। संसार में एक अजीव आकर्षण प्रतीत होता है। उसकी शक्तियाँ उद्वेलित हो जाना चाहती हैं। वह अपने आप में नहीं समा पाता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शारीरिक शक्तियों की पूर्णता यौवन है—

मनुष्य की शारीरिक श्रेष्ठता मानसिक समस्वरता आध्यात्मिक प्रवृत्ति द्वारा उत्पन्न स्वास्थ्य, उत्तम कार्यों की ओर प्रेरणा जिस अवस्था में अपनी चरम सीमा को पहुँचते हैं, तभी यौवन का पूर्ण विकास मानना चाहिये। शक्ति को रोकना, भावी जीवन के लिये एकत्रित किये रखना यौवन की सच्ची कसौटी है।

शक्तियों का संग्रह करना यौवन है। उन्हें नष्ट कर देना, जल्दी व्यय कर देना बुढ़ापा है। अपने जीवन का अध्ययन कीजिये। यदि आप उत्तरोत्तर शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक शक्तियाँ एकत्रित करते चल रहे हैं, तो आप यौवन के नियमों, के अनुसार जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यदि आप संग्रह के स्थान पर शक्तियों को क्षय कर रहे हैं, जितनी शक्ति प्राप्त करते हैं, उतनी ही नष्ट कर देते हैं, भविष्य के लिये एकत्रित करके नहीं रखते, तो आप वृद्धावस्था की ओर जा रहे हैं। शक्ति का क्षय वृद्धावस्था की निशानी है। जो अपनी शक्ति संचय देर तक रख सकेगा, वह देर तक यौवन के सुख तथा आनन्द प्राप्त कर लेगा। जो शक्तियों का व्यय जल्दी करेगा, वह उतना ही कम जीवित रहेगा। बुढ़ापा आयु पर नहीं, शक्तियों के जल्दी या देर में व्यय करने पर निर्भर है। मनुष्य की शक्तियाँ परिमित हैं। यदि उन्हें निम्न स्तर के कार्यों में व्यय कर लिया जाये, तो उच्चस्तर के कार्यों के लिये कुछ भी शक्ति अवशेष न रहेगी। मनुष्य की महात्त्वाकांक्षा विनष्ट हो जायेगी।

यौवन स्थिर रखने के उपायों में सर्वश्रेष्ठ विधि यह है कि मनुष्य सदा सर्वदा अपनी शक्ति के आय-व्यय से सतर्क रहे। उसे दिन भर की व्यय की हुई शक्तियों के विषय में हिसाब लगाना चाहिये। अर्जित शक्ति का भी अनुमान रहे। भावी जीवन में कहाँ-कहाँ उसे शक्तियों का प्रयोग करना है, यह पूर्व निश्चित रहे। जिस प्रकार आकस्मिक व्ययों के निमित्त बैंकों में एक स्थायी कोष की व्यवस्था होती है, उसी प्रकार आपके शरीर में भी वीर्य-शक्ति संचित रहनी अनिवार्य है। काम करने के प्रत्येक हिस्से पर तीखी दृष्टि रखनी चाहिये। कम से कम शक्तियों का व्यय, अधिक से अधिक संचय देर तक संग्रह, स्थायी बचत-ये स्थिर यौवन के मूल तत्व हैं।

यौवन तथा आयु का सम्बन्ध नहीं—

मनुष्य की आयु कितनी है ? मेरी आयु कितनी रहेगी ? अमुक व्यक्ति कितने दिन जीवित रहेगा ? ये प्रश्न अनिश्चित हैं। निश्चय केवल यह है कि आज समाज में विरला ही कोई ऐसा मिलेगा, जो अपनी समूची आयु भोगता है। अपने पराये हाथों से कुछ न कुछ, मूर्खतापूर्ण कार्य कर काल-कलवित हो आता है। यदि संभलकर रहता तो अवश्य उसकी आयु वृद्धि होती और यौवन का सुख प्राप्त होता। मनुष्य की आयु, यौवन, सुख, समृद्धि सब सम्बन्धित प्रश्न हैं।

डॉ. पुन्ना वेंकटरमैया ने इस सम्बन्ध में बड़े सुन्दर तर्क उपस्थित कर यह साबित किया है कि आदमी की आयु का निर्णय नहीं हो सकता है। आप लिखते हैं—

"मैं एक बार मद्रास से दो चटाईयाँ खरीद लाया, जिसमें से एक मेरी बहिन ले गई। मेरी चटाई उसी वर्ष खराब हो गई। उसके बाद दूसरी चटाई भी खरीदी गई, लेकिन मेरी बहिन के यहाँ अब भी वही चटाई मौजूद है। दोनों चटाई एक ही दुकान से एक ही मूल्य देकर खरीदी गई थीं, दोनों ही टिकाऊपन में समान थीं। फिर भी दोनों के जीवनकल में भारी अन्तर साबित हुआ। तब मैं पहले कैसे निर्णय करता कि किसके लिये कितनी उम्र बदी है। एक ही दुकान से एक ही दिन दो ग्रामोफोन खरीदे जाते हैं। उनमें से एक मशीन थोड़े दिनों ही में निकम्मी हो जाती है, दूसरी बहुत वर्षों तक काम देती है। तब हम कैसे मानें कि किसकी उम्र कितनी थी ? दो भाई अपने पिता की जायदाद को बराबर-बराबर विभाजित कर लेते हैं। उसमें से एक अपना हिस्सा खो बैठता है और मारा-मारा फिरता है, दूसरे की सम्पत्ति दिन-दूनी रात चौगुनी बढ़ती है। फिर हम कैसे जानें कि किसके यहाँ कितने दिन तक सम्पत्ति टिक पायेगी ?"

इसी प्रकार के अनेक अनुभव हमें भी हुये हैं। प्रायः देखा जाता है कि वृद्ध माता या पिता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वस्थ रहते हैं, किन्तु उनके कम आयु के पुत्र या पुत्री उनके सामने ही पूरे हो जाते हैं। चौबीस-पच्चीस वर्ष की युवती की मृत्यु, किन्तु उसी की पचास वर्षीया माता का उत्तम स्वास्थ्य रहना, यह स्पष्ट करता है कि एक अपने शरीर की मशीन को सतर्कता से सम्हालकर चलाता रहा है, दूसरे ने उसकी ओर यथेष्ट ध्यान न देकर समय से पूर्व ही उसे नष्ट कर डाला है। हमारे एक युवक मित्र इन्स्पेक्टर जनरल के सुपुत्र थे। कालेज में पढ़ने के लिये मोटर पर आते, सबसे मिलने में अपना अपमान समझते। विवाह बड़े ऊँचे घराने में हुआ। भाग्य ने पलटा खाया, पिता की मृत्यु। पिता के समय से ही मद्यपान और सिगरेट का दुर्व्यसन लगा था। उसी के सिलसिले में नौकरी से हाथ धोना पड़ा। गन्दी आदतें न छूटीं। मद्य के साथ व्यभिचार के कुत्सित पथ पर चले। घृणित रोगों के शिकार हुये। अब शराब की दुकानों के आगे पड़े पाये जाते हैं। फटे कपड़े पहनते हैं। बदन सूख कर ऐसा हो गया है, जैसे कोई ५० वर्ष का वृद्ध हो। कल्पना कीजिये, यदि यही युवक सम्हलकर चलता तो यौवन कितने दिन स्थिर रख सकता था ?

शरीर का उचित संचालन अतीव आवश्यक है—

मान लीजिये, कोई देहाती घड़ी खरीदता है, किन्तु उसे चाबी देने की कला नहीं आती। अत्यधिक चाबी भरकर वह दो दिन में घड़ी के अन्दरूनी पुर्जे तोड़ डालता है। घड़ी निकम्मी हो जाती है। जरा बताइये, यदि यही घड़ी एतिहात से रक्खी जाती और उसके उचित उपयोग सम्बन्धी सब जानकारी प्राप्त कर ली जाती, सम्हालकर व्यवहार में लाया जाता, तो क्यों नष्ट होती ? वह दीर्घकाल तक निज कार्य करती रहती।

शरीर की मशीन का भी यही हाल है। हम सभी को एक-सी मशीनें मिलती हैं, उस मशीन की देखभाल, जानकारी अधिक से अधिक कार्य लेने की तरकीब स्वस्थ कार्य, शक्ति पूर्ण बनाये रखने के उपाय, टूट-फूट को दूर कर सही हालत में रखने की सद्बुद्धि, विरले को ही आती है। आज सौ की सौ मृत्युओं का कारण अज्ञान, मूर्खता, अविवेक या उदासीनता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

आज समाज में ऐसा शायद ही कोई मिलेगा, जो अपनी सम्पूर्ण आयु भोगता हो। अपने या पराये हाथों किसी प्रकार मूर्खता कर अज्ञान में फँसकर शरीर रूपी मशीन को बिगाड़ बैठते हैं। यदि उसी मशीन का महत्त्व, पुर्जों का ज्ञान, उचित संचालन, देख-रेख टूट-फूट तथा उसकी दुरस्ती का ज्ञान हो जाये, तो अकाल मृत्यु सम्भव नहीं है। गाँधी जी का जीवन आकाशदीप की भाँति हमारे समक्ष है। अन्त समय तक वे पर्ण युवक रहे, पूरे जोश और आशा से कार्य पर डटे रहे। वे अवश्य ही १२५ वर्ष जीवित रहते, यदि उन्हें गोली न मार दी जाती। अतः यह स्पष्ट है कि जवानी एक लक्षण है, उम्र से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

यौवन किस क्रम से विलुप्त होता है ?

यौवन और वृद्धावस्था का सम्बन्ध मानसिक एवं शारीरिक दोनों पहलुओं से होता है। यौवन के विलुप्त होने का क्रम इस प्रकार होता है—मनुष्य अपने भविष्य के विषय में न सोचकर भूतकाल की स्मृतियों में ही खोया रहता है। उसकी आशा क्षीण हो जाती है। जिन्दा दिली और रसिकता नष्ट हो जाती है। उसे प्रतीत होता है कि उसकी पत्नी, जो कल तक रसिकता और माधुर्य की केन्द्र थी, वह मातृत्व का बोझ उठाये हुये है। वह बजाय मादक कल्पना उत्पन्न करने के विचार-विमर्श की वस्तु बनती जा रही हैं। उसकी भी शक्तियाँ क्षीण होती जा रही है। बच्चों का बोझ आयु वृद्धि पर है। उसका प्रणय रस समाप्त होने लगता है। वह बच्चों की जिम्मेदारी का अनुभव करती है। पुत्रियों की शिक्षा तथा विवाहों की चिन्ता, समाज में ऊँचा स्थान पाने की इच्छा, बीमारी है, तो सबको स्वस्थ करने की आकांक्षा उसे पस्त किया करती है। उसमें पिता का अंश अधिक विकसित हो जाने से वह बच्चों तथा पत्नी का ध्यान स्वयं अपने से अधिक रखता है। अपनी आवश्यकतायें काटकर वह बच्चों का पेट पालता है। स्वयं नंगा रहकर बच्चों को ढकता है। अपने आप भूखा रहकर बच्चों के लिये जरूरी वस्तुयें एकत्रित करता है। संक्षेप में उसकी इच्छा, दिलचस्पी, सुख-शान्ति अपने अन्दर से हटकर बच्चों में आ जाती है। उसकी मनः भूमि में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बच्चों के मुकाबले अपना कुछ मूल्य नहीं होता। बच्चों के वात्सल्य में डूबकर वह अपने शरीर की अवहेलना करता है। शरीर में जो टूट-फूट होती है, वह भी सुधारना चाहता है। यदि बीमार पड़ जाता है, तो अपना इलाज, शक्ति संचय, मनोरंजन कुछ भी नहीं कर पाता। अपने शौक के लिये कुछ भी व्यय करते हुये उसे बच्चों का ख्याल आता है। अतः वह तुरन्त सकुचाकर मन मसोस लेता है। जब इस प्रकार की शुष्कता, अभावयुक्तता अपने आप ही अवहेलना प्रारम्भ हो जाये, तो समझना चाहिये कि यौवन जा रहा है।

यौवन के शत्रु—चिन्ता, अभाव, उत्तरदायित्व, दुर्बलता—

चिन्ता और उत्तरदायित्व मनुष्य को जवानी का भक्षण कर डालने वाले दो महा-राक्षस हैं। इनसे सावधान ! उत्तरदायित्व चिन्ता उत्पन्न करता है। मनुष्य के एक सन्तान है। उसी का उत्तरदायित्व २५-३० वर्ष तक नहीं निपट पाता। एक बच्चे के साथ छोटी-बड़ी असंख्य चिन्तायें खिंचकर मनुष्य के साथ आ लगती हैं। उस व्यक्ति की चिन्ता की कल्पना कीजिये, जिसके ५-६ बच्चे हैं। वह उन्हीं के उत्तरदायित्व की बात सोचते-सोचते निर्बल होने लगता है। जवानी की उच्छृंखल वृत्तियाँ गम्भीरता में परणित हो जाती हैं। संघर्ष का अपेक्षा समझोते में अधिक विश्वास करने लगता है। उसी की वासना मूलक मनोवृत्तियाँ क्रमशः शान्त होने लगती हैं। शरीर का क्षय प्रारम्भ हो जाता है। उसकी जगह कर्त्तव्य मूलक गम्भीर मनोवृत्तियाँ उत्पन्न होने लगती हैं।

शारीरिक स्थिति में या तो दुबला-पतलापन शुरू होता है अथवा मोटापन प्रारम्भ हो जाता है। ३०-३२ वर्ष के पश्चात् बहुत-से व्यक्तियों की चर्बी बढ़ने लगती है। प्रारम्भ में लोग इसे उत्तम स्वास्थ्य को लक्षण समझते हैं, किन्तु जब क्रमशः शरीर बेडौल, ढीलाढाला, थलथल, बीमारियों से भरा पूरा उपहास की वस्तु बन जाता है, तब उन्हें निज शक्तिहीनता का भान होता है। कुछ मोटे हँसी-हँसी में बातें टालते हैं, तो दूसरे कुढ़-कुढ़ कर चिड़चिड़े बनने लगते हैं। वे लोग भाग्यशाली हैं, जो अधिक आयु होने पर भी मोटेपन या दुबलेपन के शिकार नहीं बनते।

यौवन शक्ति पर निर्भर है। यौवन शक्ति का ही दूसरा नाम है। शक्ति ! शक्ति !! शक्ति !!! यही यौवन का चिन्ह है। यदि शक्ति बनी हुई है, तो यौवन भी टिका हुआ समझना चाहिये। यदि आपके केश श्वेत हो गये हैं, तो निराश न हूजिये। आजकल नजले की बजह से छोटे बच्चों के भी बाल श्वेत हो जाते हैं। दाँतों के गिर जाने को जवानी का जाना कह सकते हैं पर देखा जाता है कि कम उम्र के व्यक्तियों के भी दाँत गिरने लगते हैं। आँखों के कम दीखने से लोगों में भय का संचार हो जाता है। आँखों, दाँत, सफेद बालों से, झुर्रियों से भयभीत मत हूजिये। अपनी शक्ति की रक्षा कीजिये।

इच्छा शक्ति के निर्बल हो जाने से काम शक्ति भी निर्बल हो जाती है। विपरीत सेक्स के व्यक्ति में उसे कोई आकर्षण प्रतीत नहीं होता। यौवन विहीन नारी का स्वरूप यौवन विहीन पुरुष से आधिक वीभत्स होता है। इन दोनों का यह स्वरूप उचित देख-रेख से सम्हल सकता है। किन्तु बजाय उसे सुधारने के वे डर उठते हैं। इसलिये यौवन और भी जल्दी भागता है। जहाँ पाश्चात्य देशों में ५०-५५ वर्ष तक के युवक-युवतियाँ विवाह किया करते हैं। वहाँ भारत में २५-३० वर्ष में ही वृद्धावस्था के स्वप्न देखने लगते हैं।

ये घृणित आदतें—

चढ़ती जवानी में की गई गन्दी हरकतें, भाँति-भाँति के घृणित स्त्री-पुरुष रोगों में प्रस्फुटित होती हैं। व्यभिचार जनित रोग—सुजाग, गर्मी, गोनोटिया, उपदंश, प्रमेह इत्यादि का होना जीवित मृत्यु हो जाना है। ये मूत्रनली की निर्बलता से प्रारम्भ होकर आन्तरिक घावों, उनके विषैले प्रभावों को उत्पन्न करती हैं। व्यभिचारी, दुराचारी युवक शीघ्र बुड्ढा होता है। उस पर मक्खियाँ भिनकती हैं। तिल-तिल कर उसकी मृत्यु होती हैं। मूत्र से शक्कर आने लगती है। किसी को कैंसर, लकवा या पेशाब बन्द हो जाता है। इस प्रलोभन से भरे जीवन के प्रति सावधान रहें। कामवासना को उदीप्त करना अग्नि से मिलना है। इन्द्रियलोलुपता सर्वथा त्याज्य है। अमर्यादित काम-लोलुपता से ही यौवन-प्याला असमय ही खाली होने लगता है। संयम से व्यय की मर्यादा बढ़ जाती है। ज्ञानतन्तु और मज्जातन्तु शीघ्रता से निर्बल होने लगते हैं। अति भोग-लालसा मनुष्य की जवानी सुखा देने में एक प्रमुख कारण बन जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भोग, असंयम, अनियन्त्रित वासना, मानसिक अशुचिता होने से यौवन, परिमलता, अध्यात्म, योग-सबका अभाव हो जाता है। श्रीमद्भागवत में एक कथा लिखी है—अवधूत २४ गुरुओं में चील को भी एक गुरु माना है। चील के मुख में मांस था, इसलिये सहस्रों कौए उसे घेरे-घेरे फिरते थे। जिस ओर वह चील मांस का मुख किये जाती थी, उधर ही कांव-कांव करते हुये कौए भी उसके पीछे-पीछे उड़ते थे। जब चील के मुख से हठात् मांस का टुकड़ा नीचे गिर पड़ा, तब सम्पूर्ण कौए उस मांस की ओर गये, फिर उनमें से कोई भी चील की ओर नहीं गया। इससे तात्पर्य यह है कि मांस भोग पदार्थों का प्रतीक है। अर्थात् वासना के नाना रूप भोग पदार्थ हैं। कौए चिन्तायें, वासनायें और उत्तरदायित्व हैं। भोग त्याग करते ही शान्ति प्राप्त हो जाती है। ऐसी निश्चिन्त अवस्था में ही यौवन का सर्वांगीण विकास हो सकता है।

एडोल्फ जुस्ट लिखते हैं, "लोगों की यह धारणा हो गई है कि विवाहित जीवन अनियन्त्रित संभोग कर सकते हैं। ये घातक विचार हैं और इनका दुष्परिणाम माता-पिता और उनके बच्चों को भी सहन करना पड़ता है। यह पाप है, पर खेद है कि अविवाहितों द्वारा किये गये पाप को आज का समाज दुराचार नहीं कहता है। संयोग जाति रक्षा का महान् उद्देश्य से होना चाहिये।"

इन्द्रिय लोलुपता—

एक अन्य विद्वान् लिखते हैं—"बुढ़ापे को समय से पूर्व लाने वाले कारणों पर जब हम विचार करते हैं, तो उनमें प्रथम कारण मनुष्य की धुआँधार इन्द्रिय-लोलुपता के रूप में ही दिखाई देता है। सुहागरात के दिन से ही प्रारम्भ करके अपने जीवन के १०-१५ वर्ष जीवन का सम्पूर्ण बसन्त काल, अधिकांश मनुष्य इसी काम वासना की तुष्टि के लिये लगा देते हैं। इस दुर्दान्त काल में तरह-तरह के वस्त्रालंकारों से सजी हुई, यौवन के सुघड़ अंगों से संगठित, मदभरे नयनों से कुटिल कटाक्ष करने वाली पत्नी ही उनके धर्म-कर्म का केन्द्र बन जाती है। कोई मर्यादा नहीं, कोई बन्धन नहीं, कोई संयम नहीं, कोई विवेक नहीं—एक मात्र काम लोलुपता ही उनके जीवन का ध्येय बन जाता है। जिस प्रकार शराब का नशा मनुष्य के धर्म, कर्म और मर्यादा के ज्ञान को खो देता है, उसी प्रकार जवानी की शराब उससे भी अधिक प्रभावशाली ढंग से मनुष्य की सुध-बुध विवेक नष्ट कर देती है। न उन्हें समय का भान रहता है, न दिन-रात गिरने वाली शक्तियों का, न आयु मर्यादा का। इस अमर्यादित काम-लोलुपता के कारण जवानी का प्याला समय से पहले रिक्त होने लगता है। संचय से व्यय की मात्रा बढ़ जाती है। मनुष्य के ज्ञानतन्तु और मज्जातन्त्र शीघ्रता से कमजोर होने लगते हैं। अति भोग-लालसा मनुष्य के बुढ़ापे के अनेक कारणों से प्रथम कारण बन जाता है।"

सावधान ! इन्द्रियलोलुपता एक प्रत्यक्ष विष है। यह आकर्षक विष कभी न निगलना ! यह शक्ति क्षीण करने का प्रथम कारण है। इसी के कारण वहाँ मनुष्य को यौवन का आनन्द ५० वर्ष तक प्राप्त होना चाहिये, वहाँ वह ३० वर्ष में ही समाप्त हो जाता है। संयमपूर्वक विवाहित जीवन व्यतीत करने से न केवल यौवनस्थिर रहता है, प्रत्युत व्यभिचारजनित रोग-प्रमेह, शीघ्रपतन, सुजाक, गर्मी, इत्यादि से भी बचत होती है।

प्राणशक्ति का अपव्यय रोकिये—

"आप मृत्यु को टाल नहीं सकते, पर यदि आप बुद्धिमत्तापूर्वक जीवन व्यतीत करते हैं, तो मृत्यु आपसे दूर भागती रहती है, वह वर्षों दूर निकल जाती है"

—हेनरी ग्रौस

यौवन की शक्ति से भरे हुये प्रायः व्यक्ति अपनी अस्थिर शारीरिक ताकत को अन्धे की तरह अन्धाधुन्ध उड़ाते हैं। उनका शरीर एक अदम्य शक्ति का केन्द्र प्रतीत होता है। वे अपने आपको शक्ति का पुञ्ज समझते हैं। बात-बात में झगड़ा करने, वासना के शिकार होकर अनैतिक कार्य करने, समस्त मर्यादायें तोड़ने, क्षण भर में अधिक से अधिक आनन्द उपलब्ध कर लेना चाहते हैं। यौवन एक तूफान से भारी सरिता की तरह है, जिसकी उद्याम तरंग सम्पूर्ण नियन्त्रणों का अतिक्रमण करना चाहती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारी मूर्खतापूर्ण आदतें—

युवक आज का ध्यान रखते हैं, जैसे आज ही विश्व का सम्पूर्ण सुख लूट लेना चाहते हों। भविष्य की उन्हें चिन्ता नहीं। सोने का अण्डा देने वाली मुर्गी की भाँति मुर्गी का पेट फाड़कर सब सोने के अण्डे आज ही निकाल लेना उनका इष्ट है। आगे आने वाला दिन, सप्ताह और जीवन जैसे उनके लिये कोई अर्थ ही नहीं रखता। उन्हें भविष्य के विषय में सोचने का अवकाश नहीं ? शरीर के इस मन्दिर में, जिनमें सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा का निवास दीर्घकाल तक रहेगा, संवारने, स्वच्छ करने, टूट-फूट की, मरम्मत करने और उन्नत दृढ़ करने का ध्यान उन्हें नहीं आता ! एक प्रकार के गहन अन्धकार में हम अनाप-शनाप आगे बढ़ते जाते हैं, जब कि हमें यह तक प्रतीत नहीं होता कि किधर बढ़ रहे हैं ? तीस-पैंतीस वर्ष तक का जीवन एक प्रकार से प्रारम्भिक तैयारी का काल होता है, जिसमें मनुष्य शक्तियों के सन्तुलन में ही संलग्न रहता है। इन शक्तियों की अभिवृद्धि पर उसे यह ज्ञात होता है कि कौन-कौन सी जगह उसके शक्तियों के केन्द्र हैं ? कहाँ-कहाँ से शक्तियों का ह्रास होता है ? जीवन की कमजोरियाँ किधर से आती हैं ? प्रलोभन किधर से छुपकर आक्रमण करता है ? पौरुष और बल का नाश कैसे होता है ? कहाँ से बचना और कहाँ गुप्त शक्तियों का विकास करना है ?

प्राण शक्ति ही आपका संसार है—

जो व्यक्ति यौवन के प्रभात से ही निज शक्तियों के संचय में लगा रहता है, निरन्तर उन शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आत्मिक शक्तियों के विकास एवं परिवर्द्धन में संलग्न रहता है, वह दीर्घकाल तक जीवन में माधुर्य रस का संचार रख पाता है तथा आनन्द लहरी में अवगाहन करता रहता है। शक्ति का एक वृहत् कोष मनुष्य में है। अविवेकी इसे भरा-पूरा देखकर इतराने लगते हैं, शारीरिक एवं मानसिक असंयम में इनकी इतिश्री कर डालते हैं। परमेश्वर की यह दैवी इच्छा है कि शक्ति का यह कोष सौ वर्ष पर्यन्त समाप्त हो। जिस प्रकार एक मितव्ययी व्यापारी अपनी संचित पूँजी को सतर्कता से व्यय करता है, जितना व्यय करता है, उससे दुगुना तिगुना अर्जित करता है, उसी प्रकार जीवन-शक्ति का सच्चा व्यापारी-यह ध्यान रखता है कि उसके पास कितनी शारीरिक एवं मानसिक सम्पदा अवशेष है ? कितनी को उपयोग हो चुका है ? आगे कितने दिन तक इस पूँजी को चलाना है ? जिस शक्ति को वह व्यय कर लेगा, उसे फिर किस प्रकार प्राप्त करेगा ?

जब हमारी जेब में पैसे भरे रहते हैं, तो बाजार में निकलते हुये हम हर रंग-बिरंगी दूकान पर चमकते हैं। कुछ देर ठहरकर ऐसी वस्तुओं की ओर भी निहारते हैं, जिनकी वास्तव में हमें आवश्यकता नहीं है। कभी प्रलोभनवश कुछ न कुछ खरीद बैठते हैं। कभी प्रलोभन इतना तीव्र होता है कि हमारी जेब का सब पैसा समाप्त हो जाता है। जैसे ही पैसे समाप्त होते हैं, वैसे ही बाजार का आकर्षण भी समाप्त हो जाता है। रंग-बिरंगी वस्तुओं के प्रति कोई आकर्षण प्रतीत नहीं होता एक वैराग्य भावना लिये हम इधर से उधर निकल जाते हैं। यही हाल हमारी शारीरिक सम्पदा का भी है। जब तक प्राणशक्ति का संचित कोष आपके पास है, तब तक संसार की प्रत्येक वस्तु-स्त्री, धन, जायदाद, मोटर, उत्तम वस्त्र, आभूषण, सांसारिक यश, कामवासना की दृष्टि में आकर्षण प्रतीत होता है। यदि हम आवेश में आकर शारीरिक सम्पदा को उपरोक्त वस्तुओं के क्रम में व्यय कर डालें, तो आधी आयु में ही वृद्धावस्था आ जायेगी। संसार के प्रति हमारा आकर्षण समाप्त हो जायेगा। प्राणशक्ति को व्यय होते ही संसार का आकर्षण भी समाप्त हो जायेगा। अर्थात् हमारे जीवन में जो भी मिठास है, जो आनन्द का स्रोत है, वह अल्प काल ही में शुष्क हो जायेगा।

आकर्षण का स्रोत आपकी प्राणशक्ति है, संसार नहीं। संसार तो आपकी शक्तियों का प्रतिविम्ब मात्र है। उसका सम्बन्ध आपके शरीर से है। संसार की आयु के विषय में नाना प्रकार की योजनायें और कल्पनायें की जाती हैं। सच्ची बात तो यह है कि दुनियाँ उतनी ही लम्बी है, जितनी कि आपकी आयु है। आपकी मृत्यु के साथ ही प्रलय समझिये। तात्पर्य यह है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आपकी प्राणशक्ति के साथ ही संसार कुछ अर्थ रखता है। प्राणशक्ति का क्षय होते ही आपके दृष्टिकोण में संसार का अन्त हो जाता है। प्राणशक्ति ही संसार है। यही संसार के सुख, आनन्द, रस, यौवन, माधुर्य का मूल स्रोत यौवन है। यदि आप संसार का सुख लूटना चाहते हैं तो इस शक्ति का एक वृहत् संचित कोष आपको अपने साथ रखना होगा। जब तक यह प्राण-सम्पदा आपके पास है, तब तक संसार आपका है। प्राणशक्ति वास्तव में एक महान् शक्ति है, जो विश्वव्यापी शक्ति के केन्द्र से निकलकर समग्र सृष्टि को स्थिर रखती है। यह सर्वात्मा की रचनात्मक बुद्धि का बाह्य रूप है। जीवन शक्ति के उद्‌गम और क्षय को अच्छी तरह समझना चाहिये।

प्राणशक्ति के क्षय के प्रमुख कारण और निवारण—

प्राणशक्ति मनुष्य के वीर्य पर निर्भर है। वीर्य नाश से हमारा, सुख, पौरुष, आरोग्य, बल, विद्या, स्वातन्त्र्य और दीर्घ जीवन नष्ट होता है। ज्यों-ज्यों वीर्य का नाश होता है, निर्बलता, आने लगती है। वीर्य ही शक्ति है। वीर्य ही जीवन है। वीर्यहीनता ही मृत्यु है। वीर्य को नष्ट करने वाला अल्पकाल में ही मृत्यु को ग्रास हो जाता है। इसी से भगवान शंकर ने निर्देश किया है—

"मरणं बिन्दुपातेन जीवनं बिन्दुधारणात्।"

अर्थात् "वीर्य की एक बूँद नष्ट करना, मरण है तथा उसकी एक बूँद भी संचित करना जीवन है।" वास्तव में, जो व्यक्ति कंजूस की तरह यौवन के दिनों में, वीर्य रक्षा करता है, पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण करता है, वह दीर्घकाल तक यौवन तथा जीवन-शक्ति का सुख लूटता है। वीर्य की रक्षा ही प्राणशक्ति की रक्षा है। उसका मूर्खतापूर्ण कार्यों में नाश कर देना उतने ही जीवन को धूल में मिला देना है।

हमारे इर्द-गिर्द का वातावरण आजकल कामुक, अश्लील और उत्तेजक हो उठा है। युग की कुछ ऐसी हवा है, सिनेमा के कुत्सित चित्रों अश्लील कामोत्तेजक कथा-कहानियों, नग्न चित्रों, फिल्मी गन्दे गानों की कुछ ऐसी बाढ़-सी आ गई है कि युवकों की बातें सुनकर लज्जा आती है, और उनके नीतिशीलता पर दया आती है। काम वासना का तांडव आज सर्वत्र उत्तेजना फैला रहा है। उससे समाज, राष्ट्र और गृहस्थ जीवन की जड़ें शिथिल होती जा रही हैं।

कभी आपने देखा है कि पाठशालाओं, हाईस्कूलों या कालेजों के दीवालों पर लिखे हुये कुवाक्यों से लड़कों के पारस्परिक सम्बन्ध पर क्या प्रकाश पड़ता है ? व्यापार, सुधार का केन्द्र माने जाने वाले बड़े-बड़े शहरों में दीवारों पर लिखे हुये अपशब्दों को आपने पढ़ा है ? वैद्यों के यहाँ बिकने वाले नपुंसकत्वारितेल तिलों या घृत के ग्राहकों की सूची तलाश की है ? प्रतिदिन हजारों की संख्या में बिकने वाली (नामर्दी, गर्मी, नपुसंकता, खुजली, सुजाक, मूत्र रोग) दवाओं के विज्ञापनों को पढ़ा है ? वैद्यों के चक्कर में फँसे हुये भोले-भाले युवकों से आप मिले हैं ?

वास्तव में उपरोक्त सभी आक्षेप ठीक हैं। हमारे युवकों के निस्तेज और मलीन चेहरे वीर्य-नाश तथा गन्दी विचारधारा की गवाही स्वयं दे रहे हैं। यदि हम जीवन रस (वीर्य) गन्दी नालियों में बहाते रहें और यौवन से लहलहाते हुये जीवन वृक्ष को स्वयं ही जड़ से काट डालें, तो इसमें दोष हमारा ही है। श्री बैजनाथ महोदय ने एकान्त के पाप के पाँच कारण बताये हैं—(१) घर का गन्दा या बुरा वातावरण (२) बुरे सोहवत, कुसंगति, नौकरों की संगति (३) दुष्चरित्र पाठक और छात्रालयों के संचालक (४) अश्लील फिल्म और नाटक (५) सामाजिक गालियाँ, अश्लील भाषा का प्रायोग इत्यादि (६) कुचेष्टायें। इस प्रलोभन से वशीभूत होकर अधिकांश व्यक्ति प्राणशक्ति क्षय करते हैं तथा निर्बलता, दृष्टि की कमी, तृष्णा, मन्दाग्नि, स्वप्नदोष, बुद्धिनाश, कोष्ठबद्धता, प्रमेह, सुजाक, बहुमूत्र तथा नपुंसकता के शिकार बनते हैं। इन्द्रिय शिथिलता के कारण वीर्य गिरने लगता है। मृगी, उन्माद, क्षय, गर्मी की सम्भावना हो जाती है। निर्दोष पुरुषों के पाप की प्रवृत्ति सिनेमा से लगती है, जो व्यभिचार और वेश्यागमन में अन्त होकर मृत्यु खींचकर लाता है।

सावधान रखिये, कहीं इस गुप्त मार्ग से प्राण शक्ति क्षय न हो जाये। गृह का वातावरण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पवित्र, सात्विक और स्वच्छ जीवन से पूर्ण बनाइये, विकारग्रस्त न हों, इसलिये अनुचित अश्लील मजाकों से दूर रहिये, बच्चों को गन्दे व्यक्तियों के संगति से बचाइये। भूलकर भी सिनेमा न जाइये, विकारोत्तेजक साहित्य, नग्न चित्र, स्त्रियों के सहवास से दूर रहिये।

पौरुष का परिपाक कीजिये। यदि आप विवाहित हैं, तो आपका उत्तरदायित्व और भी बड़ा है क्योंकि प्रलोभन सदा आपके साथ है। पत्नि-व्यभिचार में रत रहने वाले अनेकों व्यक्ति अल्प काल में निज यौवन को तिलांजलि देते हैं। जो व्यक्ति पत्नी को विषय वासना की तृप्ति का साधन मानते हैं, वे भयंकर भूल कर मृत्यु को आमन्त्रण देते हैं। पत्नी व्यभिचार के दुष्परिणाम यह है कि दोनों का स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है, वीर्य नाश होने से दोनों का सत्व, बल, कान्ति, शक्ति, सौन्दर्य, त्वचा की चमक, विनष्ट हो जाते हैं, गाल पिचक जाते हैं। नेत्रों से दिखना कम हो जाता है। अन्दरूनी कमजोरी इतनी आ जाती है कि सिर दर्द के साथ हाथ-पाँव कांपने लगते हैं। शरीर में से जैसे शक्ति निकल गई हो। पत्नी पुनः-पुनः संतान उत्पन्न करने के कारण नर-कंकाल मात्र शेष रह जाती है। संतान वृद्धि के साथ परिवार बढ़ता है, जिम्मेदारियों का बोझ व्यक्ति के मानस का दग्ध करता है और अन्त में अल्पकाल में मृत्यु हो जाती है।

पत्नी को मित्र मानकर पूज्य भाव रखना ही हितकर है। यथा सम्भव पृथक्-पृथक् कमरों में रात्रि में शयन करना, सब परिवार के साथ सम्मिलित रहना, एकान्त में न मिलना और उच्च विषयों पर वार्तालाप करना कल्याणकर है। गृहस्थ को वीर्य की शक्ति का उपयोग कलात्मक कार्यों, शारीरिक विकास, खेलकूद, यात्राओं, अध्ययन करने में करना चाहिये पुरुष की विकारवशता से बेचारी स्त्री को भी मृत्यु के मुँह में कूदना पड़ता है। प्रत्येक प्रसव मृत्यु के मुँह से निकलकर दुबारा जीवन प्रारम्भ करता है।

पाप एक संक्रामक रोग है। एक व्यक्ति पाप करता है, तो दूसरा भी उसमें प्रवृत्त होता है। एक से गन्दगी दूसरे के पास पहुँचती है। बच्चों में आ जाने से एक पीढ़ी ही विनाश के पथ पर जाती है। एक पुरुष के गुप्त रोग पत्नी और बच्चों को भी लगते हैं। विकाराधीन होकर अधिकाधिक संभोग करना अपने घर में नर्क उत्पन्न करना है। इस आकर्षक शत्रु से सावधान।

यौवन का गुप्त रहस्य वीर्य ही है—

आपके वीर्य की प्रत्येक बूँद शक्ति है। उस शक्ति का संग्रह यौवन को स्थिर रख सकता है। शक्ति ही यौवन की आत्मा है। मानसिक और शारीरिक शक्ति दोनों ही इस एक कार्य-वीर्य-संग्रह से हो सकते हैं। स्मरण रखिये, जो विचार जितना ही दबाया जाता है, उतना ही प्रबल होकर शरीर पर प्रतिक्रिया करता है। कुछ व्यक्ति मन में गुपचुप अश्लील काम कल्पनाओं में रमण करते हैं। यह मानसिक व्यभिचार यौवन का शत्रु है। ऐसी गन्दी कल्पनाओं से वीर्य नाश होने का भय रहता है, शरीर के उन कोमल अंगों में, जो क्षण भर के लिये सुख देने के लिये बने हैं—सदैव उत्तेजना बनी रहती है। **डॉ० आर० पी० जैन** का यह कथन अक्षरशः सत्य है कि "मानसिक व्यभिचार एक प्रकार का क्षय रोग है, जो क्रमशः मनुष्य को कमजोर, कान्तिहीन और वीर्य दोषयुक्त बनाता है, यह वह धुन है, जो शरीर को तीव्र गति से खोखला बना देता है, रक्त की गति मन्द और वीर्य पतला कर देता है। बुद्धि लुप्त-सी होने लगती है अर्थात् एक प्रकार का नशा सा वर्तमान रहता है। ऐसा व्यक्ति इतना विषयासक्त हो जाता है कि अप्राकृतिक मैथुन का आश्रय लेता है। परिणाम में मानसिक रोग होते हैं और पागलपन, उन्माद आदि होने की संभावना रहती है। अधिक आयु में वही रोग न्यूनाधिक रूप में प्रकट होकर संतान पर उसका प्रभाव पड़ता है" मानसिक व्यभिचार अधिक वीर्यपात से भी भयानक है।

अक्षय यौवन की इच्छा रखने वाले को शक्ति के इस क्षय के कारण को रोकना चाहिये। मन, वचन और शरीर की सभी अवस्थाओं में सदैव तीर्थ रक्षा से ही यौवन स्थिर रह सकता है। मन में पवित्र विचारधारा रखने से शक्ति संतुलित रहती है और प्राणशक्ति बढ़ती रहती है। अप्रकाशित विचारों की शक्ति में प्रायः हम अनभिज्ञ रहते हैं, पर आध्यात्मिक नियम यह है कि जो विचार जितना ही दबाया जाता है उतना ही अधिक प्रबल होता है। यह सिद्धान्त भले-बुरे दोनों ही प्रकार के विषय में लागू होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यौवन निर्माण करने वाली मनः स्थिति

"जवानी जीवन का एक समय नहीं है, जवानी एक विशेष मानसिक अवस्था का नाम है। जीवन का पूर्णतः भरा हुआ अनुभव करना ही जवानी है। जवानी इच्छा शक्ति का एक स्वभाव है कल्पना की एक दिशा है, विचारों का एक बहाव है।"

—आरोग्य

मानव शरीर तो जड़ मात्र है। उनमें प्राण और शक्ति फूँकने वाले दो तत्व हैं—(१) हमारा मन (२) आत्मा। इन दो की सामूहिक शक्ति से ही शरीर चलता-फिरता बोलता-चालता है। स्वास्थ्य और यौवन का उत्तरदायित्व जड़ शरीर पर नहीं है, मन और आत्मा पर है। मन तथा आत्मा ही यौवन की, शक्ति और उत्साह की, सृष्टि कर सकते हैं। मन से भी ऊँची हमारी आत्मा है। आत्मा सम्पूर्ण है। सर्व शक्तिमान है, इसमें सतत् यौवन और आशा विद्यमान है। किसी प्रकार का भी अभाव इसमें नहीं है। इसी के आधार को लेकर इन्द्रियाँ और उनके विषयों से मन, बुद्धि, चित्त अहंकार ' आत्मदेव की उपासना करते हैं। सीमा में रहते हुये भी अपनी, असीमता का विस्तार करते हैं।

जब मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आत्मदेव को विस्तृत कर स्वयं अपने आप को ही प्रधान मानना प्रारम्भ कर देते हैं, उसी समय से मानसिक गन्दगी का प्रारम्भ होता है। इन्द्रियाँ स्वेच्छाचारिणी हो जाती हैं। यह स्वेच्छाचारिता इतनी बढ़ जाती है कि जिस शरीर को आधार मानकर उन्हें भोग भोगना होता है, फिर उसे भी भुला दिया जाता है। मिथ्या आहार-विहार होने लगता है। मनुष्य इन्द्रिय तृप्ति के लिये ही जीवित रहने लगता है। वह पेट का ख्याल न कर अनाप-शनाप खाता, मादक वस्तुओं का प्रयोग करता और अप्राकृतिक चिन्तन में निमग्न रहने लगता है। जब मन आत्मा के अनुशासन में न रहकर अहंकार के आदेशों पर नाचता है, तब मानसिक अस्वास्थ्य का श्री गणेश होता है।

मानसिक अस्वास्थ्य क्या है ? अपने विषय में अहितकर चिन्तन, भय और ईर्ष्या के विकार, काम वासना की अग्नि, क्रोध का विष, घृणा का घिनौना व्यापार। काम, क्रोध, लोभ, मोह, चिन्ता, उद्वेग, व्यग्रता, अहंकार, भय, अधीरता, अपनी शक्तियों में अश्रद्धा—ये सब मानसिक अस्वास्थ्य के लक्षण हैं। इन भीतरी शत्रुओं से जवानी का जोश समाप्त हो जाता है, पौरुष क्षीण होने लगता है, और बुढ़ापा समीप आता है। इनमें से प्रत्येक कुविचार अच्छे से अच्छे स्वास्थ्य का नष्ट करने में पूर्ण समर्थ हैं। अपवित्र, अशुभ, अशिव आसुरी वृत्तियाँ हमें अपने बन्धन में बाँधकर प्रतिकूल चिन्तन में लगाती हैं। मन को अहितकर दिशा में लगाकर अपने कष्ट और मृत्यु के बारे में सोचना, चिन्तित रहना, मुहरमी सूरत बनाकर अप्रिय मानस-स्वप्न देखना मानसिक असंयम है। इस विषैली आदत को त्याग दीजिये।

आपकी आशा में जितनी जवानी है—

इसके विपरीत आशा, उत्साह, उदारता, प्रेम, सहानुभूति, आत्म विश्वास ऐसे अमृत बीज हैं, जिन्हें मानस भूमि में उगाने से चारों और सत् प्रकाश होता है। जो व्यक्ति सबसे मैत्री भावना का व्यवहार रखता है, आशा और उत्साह से मन में जोश बनाये रहता है, उसके जीवन में प्रफुल्लता और माधुर्य अन्त तक बना रहता है। यौवन बनाये रखने के लिये हमें प्रेम की सीमा में विस्तार करना होगा। हमारे मानस में प्रेम का जो अंकुर है, उसे प्रस्फुटित, पल्लवित और फलित होने का अवसर अवश्य प्राप्त होना चाहिये। प्रेम की बाढ़ को रोकिये नहीं, प्रत्युत विवेक, बुद्धि, धर्म, भावना और मर्यादा को सामने रखकर जैसे बने उसे खिले का मार्ग प्रदान कीजिये।

यौवन की तीव्र मानसिक भावना बनाये रखिये। यौवन का बाह्य उपकरण हैं—आशा, प्रसन्नता, जोश, जिंदादिली। ये चारों जब तक आपके साथ हैं, जब तक आप जीवन की कठोरताओं को एक तीखी हँसी से टाल सकते हैं, तब तक जवानी बनी रहेगी। जिस दिन चिन्ता और अशकता मन में बैठ जायेगी, जवानी का अन्त कर देगी। सावधान !

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यौवन निर्माण करने वाले तत्व—

यौवन का निर्माण करने वाले तत्वों को मुख्य रूप में विभाजित किया जा सकता है। (१) शारीरिक तत्व (२) मानसिक तत्व। कुछ लक्षण ऐसे हैं, जो शरीर में प्रकट होते हैं, शरीर के प्रत्येक अवयव, कष, परिमाणु, रक्त, मज्जा, मांस में जिनका अस्तित्व रहता है। इन तत्वों को विशेष महत्त्व है, क्योंकि स्थूल दृष्टि से ये सबसे पहले ये ही दृष्टिगोचर होते हैं। मानसिक तत्व सूक्ष्म अन्तरादृष्टि से ही अनुभव किये जा सकते हैं। जिन व्यक्तियों की अनुतीक्ष्ण शक्ति अविकसित रहती है, वे प्रायः मानसिक परिर्वतन को देख नहीं पाते। आन्तरिक और मानसिक तत्व ही वे आधारशिला हैं, जिन पर शारीरिक संगठन का निर्माण होता है। यौवन का निर्माण करने वाले आन्तरिक अवयवों की देख-रेख, सम्हाल, उत्तरोत्तर विकास, परिवर्द्धन पर बाह्य शारीरिक भावना का निर्माण होता है। जो व्यक्ति बाह्य रूप से ही यौवन का अभिनय करते हैं, वे हथेली पर सरसों उगाने जैसी मूर्खता करते हैं। जिस प्रकार वृक्ष के पल्लव प्रक्षालन से कुछ स्थायी लाभ नहीं होता, उसकी जड़ का जल द्वारा सिंचन आवश्यक है, उसी भाँति स्थायी यौवन का निर्माण अन्तर्जगत् से प्रारम्भ होता है।

(१) विचारों का एक विशेष प्रवाह—

सर्वप्रथम यौवन की मूल भित्ति को समझ लीजिये। यौवन से अभिप्राय है-आशा, उत्साह और कार्य में प्रसन्नता। यौवन का सन्देश आशा, उत्साह और प्रसन्नता का मोददायी, उत्फुल्लकारी आल्हाद से भर देने वाला सन्देश है। युवक वह है, जिसके अन्तराल में आशा और उत्साह का दिव्य प्रकाश है। जो विघ्न-बाधाओं को रौंदता हुआ, निरन्तर कार्य और उन्नति पथ पर अग्रसर होता है। उसे अतीत पर क्षोभ नहीं, वह पुरानी बातों को नहीं खोदता, पुरानी गल्तियों पर हाथ मल-मल कर नहीं पछताता, वह अपने उज्ज्वल भविष्य को निहारता है। उसके नेत्रों में आशा की ज्योति होती है।

इस कुत्सित कल्पना ने कि अमुक अवस्था के उपरान्त मनुष्य की ढलती अवस्था प्रारम्भ होती है, जीवन के परिमाणु कम हो जाते हैं अथवा निस्तेज होकर बिखर उठते हैं, बुझा हुआ हृदय, गिरा हुआ मन, तेजहीन मुख और शक्तिहीन शरीर के लिये बुढ़ापा आ घेरता है, उसकी इच्छा, अभिलाषा, उत्साह और उद्योग और पुरुषार्थ का ह्रास होने लगता है और जीवन के प्रत्येक भाग में अकर्मण्यता का राज्य छा जाता है—साथ ही रोग, निर्बलता, जड़ता, निरुत्साह आदि मृत्यु के पूर्व चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगते हैं और हम क्रमशः किसी अज्ञात लोक से स्वप्न देखने लगते हैं—इनने मानव समाज का बड़ा नाश किया है।

जिन कायर व्यक्तियों के जीवन में आशा की दिव्य ज्योति नहीं है, जो भूतकाल की स्मृतियों में ही डूबते उतराते रहते हैं, जिनके हृदय कमल पर चिंता रूपी कीड़ा लग चुका है, वह जीवन को व्यर्थ, मूल्यहीन अथवा नगण्य समझेंगे ही। ये निराशावादी दूसरों को भी अशुभ सूचनायें देकर मृत्यु के मुख में ढकेलते हैं। न तो स्वयं ही सुखपूर्वक यौवन का आनन्द लेना चाहते हैं और न दूसरों को ही यौवन के दिव्य सपनों में विचरण करने देना चाहते हैं। जीते हुये भी ये मृतक प्राणी मानवता के भयंकर शत्रु हैं।

(२) शुभ संकेतों की आवश्यकता—

हमारी इच्छा शक्ति और दैनिक जीवन की सूचनाओं या संकेतों का तीव्र प्रभाव शरीर पर पड़ता है। यदि हम इस प्रकार के संकीर्ण, अन्धकारमय, निराशाजनक विचारों का रोना रोते रहेंगे, यौवन रूपी कौमुदी को असमय ही बुढ़ापे के काले बादलों से ढक लेंगे, शिथिलता या कमजोरी के दुर्बल विचार को हृदय-पटल पर स्थान प्रदान करेंगे, कमनसीबी, फूटे भाग्य और रोगों की कल्पनाओं में विहार करते रहेंगे, जईफी को न्योता देकर बुलाया करेंगे तो निश्चय ही आकर्षण और सूचना शक्ति के नियमों के अनुसार वातावरण से वैसे ही तत्व खींच लेंगे। हम यौवन को छोड़ बुढ़ापे की ओर अग्रसर होते जायेंगे। जैसी हमारी हार्दिक इच्छा होगी, जैसे हमारे विचार होंगे, जैसी हमारी हार्दिक अभिलाषायें होंगी, हम वैसे ही होते जायेंगे। यदि हम मन को गिरती हुई शक्तियों पर एकाग्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करेंगे, बुढ़ापे के दुःखदायी विचारों के पंजों में फँसा देंगे, तो फल निश्चय ही कष्टकर होगा।

हमारा प्रत्येक मानसिक भाव जो सतत् उत्थान, उत्तरोत्तर उन्नति, अदम्य उत्साह और चिर यौवन की मधुर कल्पनाओं से बिछुड़कर किसी अनर्थ के साथ जुड़ा हुआ है, बुढ़ापा, आलस्य, प्रमाद, शैथिल्य ही उत्पन्न करेगा, कार्य शक्ति और मानसिक दृढ़ता को पंगु कर देगा, महत्वाकांक्षा को नष्ट-भ्रष्ट कर डालेगा और असमय ही यमराज के गृह का पथिक बना देगा।

आनन्दकन्द परमेश्वर की आनन्द मूलक इस सृष्टि में बुढ़ापा जैसी कोई वस्तु नहीं, आयु और शक्ति की कोई मर्यादा नहीं। अपना शरीर चिरकाल तक अपनी शक्ति रखकर संसार में आनन्द देने वाला है। आपका यौवन चिरस्थायी रहने वाला है। आपके मुख की चैतन्यता, नेत्रों की चमक, कपोलों का सौन्दर्य शरीर की शक्ति, हृदय का उत्साह सब सत्य है। ये सभी दिव्य वस्तुयें आपकी हैं। संसार में जितनी शक्ति है। उस पर आपका अधिकार है। आप इच्छानुसार जितने दिन चाहें, जीवित रह सकते हैं।

(३) शारीरिक शक्ति ही यौवन का रहस्य है—

आयु की मर्यादा का आधार शरीर की बनावट पर निर्भर है। शक्ति बनाये रखने के नियमों का पालन करने से चिरकाल तक शक्ति बनी रह सकती है। बाल श्वेत न होंगे। काले बने रहेंगे। जिस काल में शरीर सुन्दर, सुदृढ़, बलवान निरोग एवं चिन्ता मुक्त रहता है। उस निश्चिन्त मन की अवस्था में मनुष्य की आयु भी लम्बी होती है। शरीर की समुचित देख-रेख हो, टूट-फूट को दुरुस्त कर दिया जाये, आगे के लिये शक्ति संचित रखी जाये, तो आयु दीर्घ हो सकती है। यदि हम शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के नियमों का दृढ़ता से पालन करें, तो पिछले पाँच सौ वर्षों में मनुष्य की दीर्घ आयु की जो मर्यादा रही है, उसे निश्चय ही पा सकते हैं।

यौवन वास्तव में किसी आयु विशेष के ऊपर निर्भर नहीं है। हम यह निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते कि अमुक वर्ष में मनुष्य के यौवन का सूर्यास्त हो जावेगा और बुढ़ापे के बादल आ घेरेंगे। यौवन ही आशा, उत्साह, प्रसन्नता, जोश, विकार मुक्त मानसिक स्थिति का नाम हैं। यौवन अपनी जीवन शक्ति पर निर्भर है। जवानी जिन्दादिली उत्साह और महत्वाकांक्षा को कहते हैं। यदि ऐसा न होता तो आज हम बीस-बीस वर्ष के बूढ़े और साठ-साठ वर्ष के जवान न देखते।

शारीरिक शक्ति दूसरी महत्त्वपूर्ण भित्ति है। अधिक अवस्था वाले होकर भी यदि आप में शारीरिक शक्ति है, खूब भाग-दौड़ करते हैं, बोझीले काम कर सकते हैं और बीमारियों से दूर रह सकते हैं, तो निश्चय मानिये आप जवान ही हैं। फौज में नौकरी करने वाले ५० वर्ष के व्यक्ति को भी जवान कहा जाता है क्योंकि उसमें शारीरिक शक्ति का अदम्य प्रवाह बना रहता है। व्यायाम, नियमित आहार-विहार, कबायद, द्वारा ५० वर्ष तक शक्तियों को रोका जाता है। शक्ति को रोकना, मानो जवानी को रोकना है।

स्मरण रखिये, जब तक आपके शरीर में रस, रुधिर, माँस, वसा, अस्थि, मज्जा और वीर्य-ये सप्त धातुयें पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं, जब तक ये सातों अभिवृद्धि पर हैं या अपनी मूर्खता और वासना की लोलुपता से न्यून नहीं होतीं, जब तक ये सभी तत्व संतुलित भोजन द्वारा पुष्टि पा रहे हैं और आप किसी भी अस्वाभाविक या अप्राकृतिक रीति से इनका अपव्यय नहीं कर रहे हैं—आपकी आयु चाहे जो भी हो, आपको युवक बनाये रखने में पूर्व समर्थ है। आधि-व्याधि आपके समीप आने का साहस नहीं कर सकतीं।

इन सातों धातुओं का बल ४० वर्ष तक अभिवृद्धि पर रहता है। इस अवस्था को प्राप्त होने पर शरीर में उक्त धातु अपनी अधिकतम परिपक्वावस्था को पहुँच जाते हैं। बरनर मेकफैडन साहब का कथन है कि "मानव जीवन ५० वर्ष पश्चात् सही रूप में प्रारम्भ होता है। प्रत्येक प्राणी के शरीर की पूर्ण परिपक्वावस्था में जितना समय लगता है, उससे पाँच गुनी उसकी आयु का विधान प्रकृति ने रखा है। पशु-पक्षियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का यही नियम चला आता है। यही नियम मनुष्य पर भी लागू होता है। अत अतः जो व्यक्ति प्रारम्भिक ३५-४० वर्ष तक व्यायाम और वीर्य संचय द्वारा शरीर और मन को पूर्ण विकसित करेगा, वह १७५ वर्ष तक युवक बना रहेगा।

आशा और प्रसन्नता जवानी के मित्र हैं—

यौवन शक्ति है। जब तक मनुष्य की शक्ति संचित है। वह उत्साह से जीवन संग्राम में प्रविष्ट होता है, भावी-जीवन के मधुर स्वप्न देखता है और उत्साह से आगे बढ़ता है, तब तक उसमें यौवन के चिन्ह हैं। यौवन का संदेश शक्ति उत्साह और आशा का सन्देश है।

क्या आपने आजकल का फीका, निस्तेज, निरुत्साही, निःसत्त्व, पिचके गाल का नवयुवक देखा है, जो अपने जीवन के भार से परेशान है ? रात्रि में सिनेमा घरों के सामने पान वालों के दुकान के सामने पान खाकर शीशे में एक बांकी चितवन डालते हुये, स्कूल और कालिजों की कक्षाओं में, फैशन की वस्तुयें बेचने वालों की दुकानों पर, ऑफिसों में क्लर्की करते हुये सैकड़ों बूढ़े कम उम्र के युवक मिल जायेंगे। आप उन्हें सदा किसी बड़े अपराधी की भाँति शर्मिन्दा पायेंगे। उनका मुख, कान्तिहीन चेहरा, रोनी सूरत, मुहासों से भरा मुख, चिड़चिड़ा क्रोधी स्वभाव, पके हुये बाल, उनके यौवन के आँसू हैं। उनके सूखे हुये शिथिल अंग, कार्य में मन न लगना, काम से जी चुराने की आदत उनके नष्ट उत्साह की सूचना देते हैं। उनके मुर्दा दिल पर गौर कीजिये, तनिक उनके काले-काले धब्बे वाली शक्ल को देखिये, उनकी झुकी हुई कमर तथा अस्थिपिंजरवत् शरीर से उनकी शक्ति का अनुमान लगाइये। आप उनके भविष्य के चित्र स्वयं देख लेंगे। आपके हृदय में जोर से ज्वार-भाटा आ जायेगा। अधःपतन के मुख में समय से पहले ही जाते हुये देश के इन बुड्ढों को कौन युवक कह सकता है ?

ये जीवन के प्रति नैराश्य, शक्तिहीनता और विद्वेष की भावना लेकर चल रहे हैं। जीवन के प्रति इनमें चाव नहीं है। इन्हें यह प्रतीत नहीं कि संसार में उन व्यक्तियों के लिये कोई स्थान नहीं है, जो सदैव खिन्न, उदास, शक्तिहीन और कायर रहता है, जो घर के एक कौने में बैठा मक्खी मारा करता है या जो पतन की कुम्भकर्णी निद्रा में निमग्न होता है, फिर चाहे आप २०-२२ वर्ष के ही क्यों न हों, चाहे अपने जीवन के उषा काल में ही क्यों न प्रवेश कर रहे हों ?

यह उदासी, यह नैराश्य, यह शक्तिहीनता, मुर्दादिली आपके यौवन की रंगीन दुनियाँ को विनष्ट कर देगी। यह निर्बलता आपकी इठलाती नाव को सदा के लिये ले बैठेगी। निराशा की बिजलियाँ कड़क-कड़क कर आपकी दुनियाँ को नष्ट कर देगी, वीर्यहीनता, कामुकता, मानसिक पतन की भट्टी में पड़कर आपका यह सोने जैसा मूल्यवान जीवन कोयलों में परिणत हो जायेगा।

जीवन में मौज से काम कीजिये—

जीवन क्या है ? जिन्दादिली, उत्साह, माधुर्य, जोश, शक्ति ये ही आपका जीवन जीने योग्य बनाते हैं। ये तत्व सामूहिक रूप से मिलकर यौवन का निर्माण कर देती हैं। यौवन से विलुप्त होकर ये ही वृद्धावस्था लाती हैं। मनुष्य जब तक वृद्ध नहीं होता, जब तक उसके रगपुट्ठों में शक्ति है। भविष्य के लिये आशा है, रसिकता और माधुर्य है, हृदय में महत्वाकांक्षा की दिव्य ज्योति टिमटिमा रही है, रक्त में जीवन तत्व प्रचुरता से हैं, मुख मण्डल पर हास्य की रेखा है।

जिम्मेदारियाँ चिन्तायें और अधिक सन्तान का बोझ मनुष्य के यौवन प्रदीप को बुझा डालता है। जिन व्यक्तियों के सन्तानें अधिक होती हैं, उनका बोझ मनुष्यों को मृत्यु के पास लाता है। मनुष्य सोचा करता है—"इन बाल बच्चों का क्या होगा ? इनकी शिक्षा, पेशा, विवाह आदि किस प्रकार होगा ? कौन इन्हें सम्हालेगा ? इनका स्वास्थ्य, सुख मानसिक शान्ति कैसे स्थिर रहेगी ? प्रत्येक बालक चाहे पुत्र हो या पुत्री जिम्मेदारियों का एक बोझ बेचारे के ऊपर ला पटकता है। अधिक संतान एक पाप है, जिससे मनुष्य अन्त समय तक नहीं छूटता। किन्तु इसके साथ यह भी सत्य है कि जिन बांझ स्त्री पुरुषों के बिल्कुल संतान नहीं होती, उनका यौवन भी शीघ्र समाप्त हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है। उनका प्रणय-रस स्निग्ध होने के स्थान पर कटुता की उत्पत्ति करता है। सन्तान की अतृप्त इच्छा में उनकी मनःस्थिति मरुभूमि के समान शुष्क अभावयुक्त एवं संतुष्ट हो जाती है। मनुष्य वात्सल्य का भूखा है। वह बच्चों का प्रेम चाहता है। अतः दोनों ही सीमायें हानिकर हैं। हम विवाहित रहें पर अपने वीर्य की पूँजी की सतर्कता से रक्षा करते रहें। अधिक कामुकता से बचें, तो यौवन स्थिर रह सकता है।

वह व्यक्ति कैसे यौवन के सुख और आनन्द लूट सकता है, जिसके ऊपर अधिक सन्तान का उत्तरदायित्व है। वह सोचता है, "मेरे इतने पुत्र-पुत्रियाँ हैं ? अभी पुत्रों की शिक्षा, नौकरी का प्रबन्ध करना है ? पुत्रियों का विवाह करना है। इसके लिये अमुक वस्तुयें एकत्रित करनी हैं। इनमें से कोई बीमार न हो जाये, पथ भ्रष्ट न निकल जाये, कुकर्मी न हो जाये, इनके लिये मकान चाहिये, रुपया जोड़ जाऊँ" इस प्रकार की असंख्य चिन्तायें उनके यौवन को विनष्ट कर देती हैं। जिम्मेदारी के दुर्वह भार से यौवन पुष्प मुरझा जाता है, महत्त्वाकांक्षायें नष्ट हो जाती है।

यौवन विशेष मानसिक स्थिति का नाम है—

यौवन जीवन का काल नहीं, समय तथा वर्षों में माप दंड से उसका परिमाण नहीं नापा जा सकता। यह तो मन की एक विशिष्ट सतर्क, समुन्नत, स्फुर्तिमय, आशा उत्साहवादी मनः स्थिति का प्रतीक है। तब तक मनुष्य वृद्ध नहीं होता, जब तक उसके मन में मधुरता, जोश, उत्साह और नवीन कार्य करने की उन्मत्तता बनी रहती है। जब तक उसके हृदय में महत्त्वकांक्षायें बनी रहती हैं, जब तक उनके रक्त में नूतन, अभिनव, श्रेष्ठतर कार्य पूर्ण करने, नवीन योजनाओं का क्रियान्वित करने की शक्ति का प्रवाह बना रहता है।

एक विद्वान ने लिखा है—"जीवन का पूर्णता से भरा हुआ अनुभव करना ही जवानी है। उभरे हुये गाल, लाल होंठ सुघर बाँहें जवानी नहीं है। जवानी इच्छा शक्ति का स्वभाव है, कल्पना की एक दशा है, विचारों का एक बहाव है। जवानी हृदयगत भावनाओं की ताजगी का नाम है। जवानी का अर्थ है निर्भयता, कुछ नया करने, नये-नये अनुभव करने की भूख को जवानी कहते हैं। यह भूख अक्सर २० वर्ष के लड़के के बनिस्वत पचास वर्ष के प्रौढ़ में अधिक तीव्र होती है। समय की धारा आप पर से बह जाये और आप बूढ़े हो जाये ! नहीं, आदमी बूढ़ा तब होता है, जबकि वह अपने आदर्श से फिसल जाता है। समय त्वचा पर झुर्रियाँ डाल सकता है, पर जब आदमी अपने दिल से जोश (उत्साह, रसिकता, जिन्दादिली, प्रसन्नता) को निकाल देता है, तब उसकी आत्मा पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं।"

उपरोक्त विद्वान् की व्याख्या अक्षरशः सत्य है। जवानी का तात्पर्य यही है कि मनुष्य अपने आपको हर प्रकार की मानसिक और शारीरिक शक्ति से भरा हुआ अनुभव करे। पीछे से नेत्र मूँदकर आगे की ओर देखे, नई-नई योजनायें बनायें। इन योजनाओं को कार्यान्वित करने के निमित्त निरन्तर तत्पर रहें। नये-नये अनुभव, जीवन की गहराईयों की खोज, कुछ अच्छा, दूसरों से उन्नत आश्चर्य में डालने वाला, स्तम्भित करने वाला कार्य करने की दुर्दमनीय आकांक्षा को ही जवानी कह सकते हैं।

प्रत्येक दिन नया अनुभव करना यौवन है—

जवान वह है, जिसे नूतन कार्य करने की भूख है। हमारे, मानसिक भाव में ही यौवन शक्ति प्रतिष्ठित है। यही सदैव कार्योत्पादक फलों को उत्पन्न करती है। यदि हम अपने मन को यौवन के विचारों से सुसंगठित करें, तो उसका फल उत्तम निकलेगा। यदि हम निज मानसिक शक्तियों तथा दृष्टिकोण को गिरती हुई शक्तियों की बुरी दशा में ला रक्खें, तो इसका फल भी निराशामय पायेंगे। प्रत्येक मानसिक भाव जो कि यौवन के मूल से विपरीत हैं, शक्ति को क्षीण ही करेगा।

स्वेट मार्डेन साहब का तो विचार यह है कि "मनुष्य तब तक बूढ़ा नहीं होता, जब तक उसके जीवन में मधुरता और उत्साह अक्षुण्ण बना रहता है, जब तक उसके हृदय में महत्वाकांक्षा बनी रहती है, जब तक उसके खून में कार्य करने की शक्ति का बहाव रहता है।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"जीवन एक खेल है—खतरनाक जुए की तरह हारजीत का खेल और इस खेल को मौजे से खेलने वाले को जवान कहते हैं। आपके विश्वास में जितना यौवन है, आप उतने ही जवान हैं। आप में जितना तरुण आत्म विश्वास है, आप उतने ही जवान हैं। आपकी आशा में जितनी जवानी है, आप उतने ही जवान हैं।"

मन मन्दिर में जवानी के विचारों को उदारता से आने दीजिये। हृदय को उन्मुक्त कर दीजिये। जवानी जीवन की बहार है। जो अपने आन्तरिक प्रदेश में जवानी के विचार जितनी दृढ़ता से केन्द्रित कर सकता है और लगातार उनकी फुहार से जीवन को मधुर बना सकता है, वही जवान है।

क्रियाशीलता यौवन स्थिर रखती है—

मनुष्य एक जंगली जीव था। सभ्यता के उषा काल में जब अन्य वन्य पशुओं की भाँति वह उन्मुक्त विचरण करता रहा, घूमना, फिरना, तेजी से भागकर अपनी उदरपूर्ति के हेतु आखेट करना, तैरना, फल-फूल कन्द का भोजन करना, पेड़ों पर लटकना, कूदना, फाँदना जब उसके दैनिक क्रम रहे, वह यौवन और जीवन का आनन्द प्राप्त करता रहा।

सभ्यता का विकास हुआ या यों कहिये मनुष्य धीरे-धीरे कृत्रिमता के बन्धन में बन्धने लगा। उसका दूर-दूर तक घूमना, फिरना, तैरना, खेलना-कूदना कम होने लगा, जिह्वा के स्वाद में फँस गया। प्राकृतिक आहार के स्थान पर नाना प्रकार के कृत्रिम भोजनों का आविष्कार किया गया।

मनुष्य का जीवन आलसी बन गया। प्रकृति श्रम की पुजारिनी है। वह उन्हीं पशु-पक्षियों, जलचर नभचर इत्यादि को विकसित करती है, जो लगातार परिश्रम करने की अभ्यस्त हैं। जो जितना ही क्रियाशील है, उतना ही स्वस्थ और सुडौल है। हरिण चौकड़ी भरता है, नीलगाय तेज दौड़ती है, अश्व जीवन पर्यन्त जीवन की दौड़ दौड़ता रहता है। पक्षी निरन्तर व्यायाम करते हैं। बिना पंखों का उपयोग किये, उन्हें भोजन भी प्राप्त नहीं होता। मछलियाँ निरन्तर तैरती रहती हैं। जंगल के जितने भी जानवर हैं, क्रियाशील रहकर ही जीवन के नाना उपादान एकत्रित करते हैं। गाय, भैंसें, बकरी, भेड़ दिन भर घूम घूम कर घास खाते हैं। यह क्रियाशीलता ही उनके स्वास्थ्य का मूल है। न उन्हें कब्ज की शिकायत होती है, न कड़ुवी दवाइयाँ भक्षण करनी पड़ती हैं।

आलस्य का दुष्परिणाम—

आजकल के युवक या युवती का शरीर देखिये—पिचका हुआ मुख, धँसे हुये कपोल, नेत्रों के चारों ओर कालिमा, पतले-दुबले हाथ-पाँव न शरीर में शक्ति न मन में स्फूर्ति। क्या कारण है कि हाथ-पाँव दुबले हैं ? क्या कारण है कि सर कमर और जोड़ों के दर्द रहता है ? या पेट फूलता चला आ रहा है ? कारण है परिश्रम का अभाव। जिन अंगों से मेहनत नहीं ली गई, वे निर्बल ही रहेंगे। शक्ति उन्हीं अंगों में आती है, जिनसे यथेष्ट श्रम लिया जाता है। शरीर से खूब कार्य लीजिये, देखिये कितनी तीव्रता से दृढ़ होता है, बांहें मोटी होने लगती हैं, पिचके हुये कपोल पुनः गुलाबी आभा से परिपूर्ण हो जाते हैं, सिर दर्द जाता रहता है।

ग्रामीण मजदूरों को देखिये, उनके पुट्ठों, आकार, स्वास्थ्य को देखिये और उनके रहस्य-क्रियाशीलता—पर गौर कीजिये। ग्रामीण स्त्रियाँ बड़े तड़के से ही चक्की पीसना प्रारम्भ कर देती हैं, उसी के साथ मधुर संगीत की तान छेड़ देती हैं। कसरत और संगीत—यौवन छल छला उठता है।

आज के युवकों के शरीर में जंग लग गया है। उनकी आदतें आलसी हैं। वे चलना-फिरना या शारीरिक कार्य करना नहीं चाहते। थोड़ी-थोड़ी दूर के निमित्त साईकिल या मोटर बस का आश्रय देखते हैं, खेलने-कूदने में उनकी रुचि नहीं है। पाँवों से काम लेना छोड़ने के कारण शरीर की रही सही स्फूर्ति भी विलीन हो गई है।

मेरा वश चले तो साइकिल नाम के इस आलसी बनाने वाले यन्त्र को तोड़-फोड़ दूँ। संसार से इसका बहिष्कार कर दूँ। इन कृत्रिम पाँवों ने हमारे वास्तविक पाँवों की शक्ति का शोषण कर दिया है। हमें आलसी बना दिया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारे स्वास्थ्य का दिवाला निकालने में इस सवारी का प्रमुख हाथ है। साइकिल सवारी का कुप्रभाव गुप्त अंगों पर भी पड़ता है और घृणित रोगों में प्रकट होता है।

शारीरिक श्रम किया करें—

यौवन के इच्छुक को चाहिये कि यथाशक्ति श्रम करे। चलने-फिरने के कार्य पाँवों से करे। साइकिल तथा इक्कों से दूर रहे। यदि आपका दफ्तर दो मील दूर है तो आने-जाने का कार्य पाँव से लीजिये। बाजार से नाना प्रकार की वस्तुयें पैदल ही खरीदते जाइये। स्कूल पैदल चलें। प्रकृति चाहती है कि दिन भर आप काफी चलें, बैठे न रहें।

जल जब एक ही स्थान पर स्थिर रहता है, तो गन्दा हो जाता है। वही जल जब लहरों के रूप में बहने लगता है, तो मल पदार्थों से स्वच्छ हो जाता है। चलने-फिरने, क्रियाशील रहने से यौवन स्थिर रहता है। प्राकृतिक प्रणाली में शरीर की सफाई, पुनर्निर्माण और विकास के लिये क्रियाशीलता एक आवश्यक तत्व है।

फौज में रहने वालों का नियमित रूप से चार-पांच घंटे ड्रिल कराई जाती है। कदम मिला कर चलना, भागना, दौड़ना, कूदना उनके जीवन के साथ ला दिया जाता है। फलतः वे दीर्घ जीवी और परिपुष्ट होते हैं। सीधे खड़े होने, रीढ़ को सीधा रखने, गहरे सांस लेने से, व्यायाम तथा कसरत से यौवन स्थिर रहता है।

एक स्थान पर टिक कर घंटों बैठे रहना, गद्दी पर मोटे तकियों के सहारे लेटे रहना, स्वयं अपने हाथ-पाँव से कार्य न कर दूसरों की बाट देखना, थोड़ी-थोड़ी दूर के लिये साइकिल, बस, रिक्शा या तांगा का प्रयोग, टहलने न जाना, व्यायाम न करना, शारीरिक श्रम से जी चुराना, बुढ़ापे को आमन्त्रित करने की आदतें हैं। इनसे मनुष्य का विकास अवरुद्ध हो जाता है।

इसके विपरीत नित्य समय पर टहलने जाना, जीवन को बढ़ा लेना है। टहलना अपने आप में हलका व्यायाम है। **श्री भुवनेश्वर नाथ माधव** लिखते हैं—"जो खुली हवा में टहलता है, उसे अस्पतालों की धूल फांकनी नहीं पड़ती, न डाक्टरों के पीछे-पीछे समय का खून करना पड़ता है। टहलने वाले का विश्वास है कि शरीर-मन प्राण और आत्मा को चिर सुन्दर, चिरयुवा, चिर उल्लास मय रखने के लिये टहलना यथेष्ट है—उनके विचार में डाक्टर शत्रु और दवा जहर है। जो इन दोनों से बचेगा, उसे इनकी कभी आवश्यकता न होगी। वह प्रकृति माता का स्तन पान करने वाला भला अपने गले के नीचे टिकिया या मिक्चर की जहर को क्यों उतारेगा? वह जानता है कि उनके शरीर के लिये जितना कुछ आवश्यक है, प्रकृति देती है। प्रायः लोग उपवास के समय मुर्दे के समान पड़ जाते हैं। उपवास से पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिये टहलना नितान्त आवश्यक है। मीठी नींद आती है, टहलने वाले को शिशु की तरह नींद आती है और सिपाही की तरह जागता है—बिल्कुल तरोताजा।"

जो लोग तैर सकते हैं, वे तैरकर व्यायाम करें। जो सूर्य नमस्कार का आनन्द उठा लेते हैं, वे सब प्रकार की निराशा, विषाद पीड़ा दुःख और ग्लानि से मुक्त रहते हैं। यदि आप कोई बड़ा व्यायाम नहीं करते, तो टहलने और मालिश को तो अपना ही लीजिये। ब्राह्ममुहूर्त में टहलना, संगीत, स्नान, पूजा, व्यायाम इत्यादि ऐसे पवित्र कार्य हैं, जिनसे अपने शरीर, मन, प्राण और आत्मा सुखी-समृद्ध हो सकते हैं। आपका शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न, हृदय उदार और आत्मा तेजोमय हो सकती है। इन्द्रियों के विकारों से शान्ति मिल सकती है और यौवन स्थिर रह सकता है। यदि आप हाथ-पाँव हिलाना रईसी आदत समझते हैं, तो प्रकृति आपको ऐसी सजा देगी, जिससे आपके शरीर की क्रियाशीलता पंगु हो जायेगी।

सदा प्रसन्न रहिये—

आपके हृदय में नित्य ही नई-नई इच्छायें पानी के बुलबुलों की तरह उठती हैं इनमें से कुछ को छोड़कर ऐसी भी हैं, जो न तो प्राकृतिक हैं और न अत्यावश्यक। इन व्यर्थ की इच्छाओं से बचना होगा। मनुष्य यदि इन बेकार की इच्छाओं की पूर्ति में लगा रहेगा तो उसे चिन्ता घेरे रहेंगी, इन व्यर्थ की चिन्ताओं से दूर भागो। चिन्तायें मनुष्य को घुला-घुला कर मार डालती हैं और अन्त तक उनकी तृष्णा शान्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नही होती। संतोषी व्यक्ति को संसार सब तरह से मनोहर तथा सुन्दर दिखाई पड़ता है और उसके चित्त को सदैव प्रसन्न रखता है।

कभी-कभी आपत्तियाँ आकर मनुष्य की प्रसन्नता नष्ट कर डालती हैं। बहुत-से व्यक्ति इस प्रकार की आपत्ति आने पर धैर्य छोड़ देते हैं, ऐसा कदापि न कीजिये। दुनियाँ में सब ही के ऊपर आपत्तियाँ आया करती हैं और आकर निकल जाती हैं। आइये उन्हें प्रसन्न होकर सहें, हँस-हँस कर उनका स्वागत करें और उन्हें मार भगायें। हमें चाहिये कि हम निरन्तर अपने आत्म विश्वास पर जमे रहें और उसे किसी तरह ढीला या कमजोर न होने दें। अपने जीवन के दुःखमय अनुभवों को भूल जाओ, कभी उन्हें अपने मस्तिष्क में स्थान न दो क्योंकि ये तुम्हारी प्रसन्नता के मार्ग में बाधक हैं। तुम हमेशा सुख की बात सोचो, सुख के वातावरण में विचरण करो और सुखी व्यक्तियों का ख्याल हृदय में जमाओ।

क्या तुम जानते हो प्रसन्नता धन पर निर्भर नहीं है। यदि ऐसा होता तो धनवान ही प्रसन्न होते। एक धनी का जीवन चिन्ताग्रस्त और सदैव असन्तोषमय रहता है। वास्तव में धनी व्यक्तियों के लिये प्रसन्नता प्राप्त करने के साधन और भी कठिन हैं। किन्तु जहाँ तक हो, उन्हें अपनी इच्छाओं को दबाकर शान्ति लाभ करना चाहिये। हिन्दी मासिक के किसी अंक में बारह साल पहले मैंने एक छोटी कहानी पढ़ी थी, जिसका सारांश कुछ इस प्रकार है—एक बादशाह प्रसन्नता की खोज करते-करते पागल हुआ और ज्योतिषियों को बुलाकर प्रसन्नता प्राप्त करने का उपाय पूछा। ज्योतिषियों ने कहा, "श्रीमान् यदि आप प्रसन्न रहने वाले मनुष्य के कपड़े पहिन लें तो सदा प्रसन्न रहा करेंगे।" राजा ने पदाधिकारियों में और सम्पूर्ण राज्य के धनवानों में उस व्यक्ति की खोज कराई गई, परन्तु कोई न मिला। अन्त में एक गरीब मजदूर जो सदैव प्रसन्न रहता था, इस कार्य के लिये ठीक समझा गया। पर दुर्भाग्यवश या सौभाग्यवश उसके पास कोई वस्त्र न था जो राजा साहब पहिनते। इसलिये कुछ न हो सका।" तात्पर्य यह है कि प्रसन्नता किसी भी बाहरी तत्व पर निर्भर नहीं, हमारे मस्तिष्क में ही निवास करती है। हृदय की गहराई में पैठकर, प्रकृति के सौन्दर्य में, कविता की लहर में, स्वास्थ्य और खेल-कूद में, मनोरंजक दृश्यों के अवलोकन में तथा शुद्ध स्वास्थ्य और आशापूर्ण विचारधारा में प्रसन्नता के साधन प्राप्त कीजिये।

जीवन की मोमबत्ती दोनों ओर से न फूँको—

आज का मानव अपने नित्य प्रति के कार्यों में इतना व्यस्त, इतना संलग्न और इतना भूला हुआ है कि उसे दम मारने का अवकाश नहीं है। प्रातःकाल से लेकर पहर रात तक वह संसार के उलझे हुये झमेलों ने फँसा रखा है, करोड़ों, रुपयों के बारे न्यारे करता है और न जाने कितनों का भाग्य निर्णय करता है। स्कूल, कालिज, कचहरियों, पुतली घरों, पोस्ट, ऑफिसों, रेल के दफ्तरों में और बैंकों ने ढेर के ढेर व्यक्तियों को जी तोड़ कठिन परिश्रम करना पड़ता है, जिससे उनके शरीर और मन इतने थक जाते हैं कि वे रात तक बिल्कुल चकनाचूर हो जाते हैं। जीवन की समस्यायें आज इतनी कोलाहलपूर्ण और जटिल हो गई हैं कि उन्हें रात्रि में चैन नहीं मिलता और थके मांदे शरीर से कार्य लेना पड़ता है। फलस्वरूप स्वास्थ्य शीघ्र ही बिगड़ जाता है और मनुष्य असमय में ही अकाल मृत्यु का ग्रास बन जाता है।

मनुष्य काम करने से नहीं मरता, वह पहुँच से बाहर कार्य करने से मृत्यु के मुँह में जाता है। कहावत भी है कि "शक्ति से अधिक कार्य करने की प्रवृत्ति विषाक्त मितव्ययता है।" निरन्तर शारीरिक या मानसिक परिश्रम करते रहने से मनुष्य का थक जाना स्वाभाविक बात है। थक जाना प्रकृति, माता की ओर से इस बात की सूचक है कि अब विश्राम करना चाहिये। शरीर और मन दोनों को अपनी-अपनी शक्तियों के ह्रास की पूर्ति करने की परम आवश्यकता पड़ती है। जैसे हमें क्षुधा लगती है, प्यास सताती है और कहीं से खाने-पीने की योजना करनी पड़ती है, उसी भांति शरीर को प्राकृतिक रूप से विश्राम की आवश्यकता प्रतीत होती है। जब निरन्तर कार्य करते-करते शरीर या मन थक जाय तो तुरन्त छुट्टी कर देनी चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अमेरिका में आजकल "अपने जीवन की मोमबत्ती दोनों ओर से न जलाओ" वाला आन्दोलन जोरों से चल रहा है। आन्दोलन कारियों का कहना है कि "हमें विश्राम भी चाहिये। हम दत्तचित्त हो काम करने के प्रस्तुत हैं किन्तु हमें पर्याप्त विश्राम अवश्य मिलना चाहिये। हमारा थका हुआ शरीर विश्राम चाहता है और उसे विश्राम न देना उसके ऊपर महान अत्याचार करना है।" यह निर्विवाद सिद्ध है कि मनुष्य का जीवन अत्यन्त मूल्यवान और सर्वतोभावेन उपयोगी है। संयम, तप, नियम एवं सद्वृत्ताचरण के पश्चात् मनुष्य यह शरीर प्राप्त कर उसकी सत्ता रखता है। ऐसे दुर्लभ जीवन की बत्ती को दोनों तरफ से फूँककर नष्ट-भ्रष्ट कर देना बुद्धिमानी का कार्य नहीं है।

यौवन रक्षा के कुछ अनुभव—

यौवन की रक्षा के लिये एक अनुभवी सज्जन ने निम्न उपाय बताये हैं—

(१) युवावस्था में काम-लोलुपता को नियन्त्रण में रखना।

(२) काम शक्ति के आवश्यक वेग को अनैसर्गिक तरीकों से रोकने का प्रयत्न न करना।

(३) अपनी पाचन शक्ति को अनुकूल पड़ने वाला सात्विक, पौष्टिक और नियमित आहार करना। अपने भोजन में दूध, शाक, सब्जी तथा फलों का अधिक उपयोग करना, विशुद्ध जल पीना तथा कुएँ के ताजे शीतल जल में प्रतिदिन विधिवत् स्नान करना।

(४) कब्जियत कभी न होने देना, विपरीत आहार विहार जीभ के चटोरेपन से बचना।

(५) चाय, सिगेरट, सिनेमा, व्यभिचार, पत्नी व्यभिचार, मद्यपान इत्यादि का व्यवहार बिल्कुल छोड़ देना, अमर्यादित काम-लोलुपता साक्षात् विष है।

(६) व्यायाम नियमित रूप से करना। शरीर में बेडौल मोटापा के चिन्ह दृष्टिगोचर होते ही तत्काल उसको रोकने का नैसर्गिक प्रयत्न करना।

(७) प्रतिदिन प्रातःकाल ब्राह्ममुहुर्त में शय्या त्यागकर उषा पान करना और उसी समय अपनी शक्ति के अनुकूल ३-४ मील तक घूमने जाना।

(८) सब प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त रहना, निष्काम और निर्लिप्त हृदय से अपना कर्त्तव्य करते जाना, निष्काम जीवन में होने वाली प्रत्येक अनुकूल और प्रतिकूल घटनाओं को शान्ति के साथ सहन करना।

(९) प्रातःकाल संध्या, प्राणायाम, सामयिक स्वाध्याय, पूजा, शुभ चिन्तन आशावादी कल्पना का अभ्यास करना।

(१०) खूब जी भरकर सोना रात्रि होते ही शय्या ग्रहण कर लेना।

(११) शारीरिक शक्ति से अधिक परिश्रम न करना। जितनी शक्ति हो उसी के हिसाब से श्रम करना।

(१२) अधिक आराम तलबी मनुष्य के शरीर को बेडोल बनाती है और यौवन को समाप्त कर देती है। जो व्यक्ति तरह-तरह के गरिष्ठ भोजन खाकर तकिये के सहारे पड़े रहते हैं, वे बुढ़ापे के शिकार होते हैं। घूमने-फिरने, आनन्दित रहने से आवश्यक परिश्रम करने से, यौवन स्थिर रहता है।

शरीर को अच्छी हालत में रखने के लिये शरीर पर बहुत ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है, उसका हर रोज की आवश्यकताओं पर ध्यान देना पड़ेगा, लेकिन उसके लिये चिंतित रहना और उसी के दृष्टिकोण से सब कुछ करना न सिर्फ व्यर्थ ही है बल्कि हानिकारक भी है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आरोग्य का आधार—शारीरिक श्रम

अब से लगभग डेढ़ सौ वर्ष पहले रूस के एक लेखक ने, जो वास्तव में एक सामान्य किसान था, एक बड़े मार्के के बात लिखी थी कि "मनुष्य को चाहिये कि वह अपना पसीना बहाकर उदर-पोषण करे।"

यों सामान्य दृष्टि से देखने पर तो ये शब्द कोई विशेष महत्व के नहीं जान पड़ते। सैकड़ों लेखकों और सभी धर्म ग्रन्थों ने यह प्रतिपादित किया है कि मनुष्य को अपने श्रम की कमाई से ही निर्वाह करना चाहिये। ईमानदारी का पैसा चाहे वह थोड़ा ही क्यों न हो सच्चीं सुख और शान्ति प्रदान करता है, फलने-फूलने का अवसर देता है। इसके विपरीत हराम की कमाई चाहे ऊपर से बड़ी आकर्षक, शान-शौकत बढ़ाने वाली दिखाई दे, पर वह अन्तःकरण को खोखला कर देती है और एक दिन उसका उपभोक्ता धूल में मिलता दिखाई देता है।

मानसिक और बौद्धिक श्रम करने वाले—

यद्यपि ये विचार सर्वथा सत्य और सराहनीय हैं पर उस किसान का आशय कुछ और भिन्न था। ईमानदारी और परिश्रम की कमाई के सिद्धान्त का पालन करते हुए भी कितने ही व्यक्ति केवल मानसिक या बौद्धिक श्रम करते हैं, पर शारीरिक श्रम से बिल्कुल वंचित रहते हैं। वर्तमान समय में जो जितना विद्वान्, योग्य, कार्यकुशल होगा, वह शारीरिक श्रम से उतना ही दूर रहेगा। समाज के बड़े नेता, शासन-संचालक, उद्योग-धन्धों के अध्यक्ष, प्रसिद्ध शिक्षा संस्थाओं के व्यवस्थापक, कला और साहित्य में नाम कमाने वाले लाखों व्यक्ति ऐसे हैं, जो वास्तव में अपनी ईमानदारी की, परिश्रम की कमाई खाते हैं, तो भी वे 'पसीना बहाकर उदर पोषण' करने की परिभाषा में नहीं आते। परिस्थितियों और वर्तमान परम्पराओं के परिणामस्वरूप उनको हमेशा कुर्सी पर बैठकर मानसिक या बौद्धिक कार्य ही करना पड़ता है और 'पसीना बहाने वाले' किसी भी कठोर या कर्कश कार्य से उनका किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रहता।

यह सच है कि उपर्युक्त "उच्च श्रेणी" के कार्यों में संलग्न व्यक्ति प्रचलित सामाजिक नियमों और आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार ही इस मार्ग का अनुसरण करते हैं और प्रत्यक्ष शारीरिक श्रम से दूर रहकर भी अपने विचारानुसार समाज और जन साधारण की 'बहुमूल्य' सेवा करते रहते हैं। उनका कार्य समाज के लिये उपयोगी और आवश्यक भी माना जाता है। फिर भी यदि वे उपर्युक्त 'पसीना बहाने' वाले वाक्य पर विचार करें और उसके महत्व को समझकर तदनुसार आचरण करें, तो वर्तमान परिस्थिति की अपेक्षा स्वयं अधिक लाभ उठा सकते हैं और समाज की भी अधिक उच्चकोटि की सेवा कर सकते हैं।

प्रकृति के प्रतिकूल सामाजिक पद्धति—

हमारी सामाजिक व्यवस्था और कार्य-विभाजन का क्रमशः विकास और परिवर्तन होते-होते आज हम ऐसे स्थान पर आ पहुँचे हैं, जहाँ बौद्धिक और शारीरिक श्रम करने वालों में स्पष्ट बिलगाव हो गया है और उनको कभी एक-दूसरे के क्षेत्र में आ सकने का अवसर नहीं मिलता। इतना ही नहीं, इस समय तो मानवीय-जीवन की अगणित आवश्यकताओं के एक छोटे-से विभाग के सम्बन्ध में ही विशेष योग्यता प्राप्त करना, उसका विशेषज्ञ बनना और शेष विषयों से दूर रहना एक प्रशंसनीय और सफलता का लक्षण माना जाता है। यह हो सकता है कि इस प्रणाली से कुछ लोगों की कार्य-कुशलता बढ़ जाती हो, वे अपने कार्य को अधिक निपुणता और शीघ्रता से करने में समर्थ हो जाते हों, पर दूरदृष्टि से वह परिस्थिति उन स्वयं के लिए ही हानिकारक या असुविधाजनक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। संसार में नित्य-प्रति जो तरह-तरह की उथल-पुथल हलचलें, क्रान्तिकारी परिवर्तन होते रहते हैं, उनके प्रभाव से ऐसे विशेषज्ञों का कार्य किसी दिन समाप्त हो जाना या बहुत घट जाना असम्भव नहीं है। ऐसी अवस्था पैदा होने पर उनको अवश्य ही कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और ऊँची स्थिति से उतरकर विवश होकर किसी नीची स्थिति का सहारा लेना पड़ेगा।

जीवन की मूलभूत आवश्यकता—

इस समस्या का सन्तोषजनक हल करने का एकमात्र मार्ग यही है कि हम मनुष्य की मूलभूत जीवन-आवश्यकताओं पर विचार करें और उनकी अपनी कार्य-पद्धति में अनिवार्य रूप से स्थान दें। इस दृष्टि से विचार करने पर हमको यही मानना पड़ेगा कि जीवन की सर्व प्रथम आवश्यकता 'रोटी' है और दूसरा नम्बर 'कपड़ा' का हो गया है। अन्य सब आवश्यकतायें ऐसी हैं कि जिनकी पूर्ति दो-चार दिन न भी हो तो किसी तरह काम चलाया जा सकता है। पर रोटी और कपड़ा का दूसरा कोई विकल्प नहीं हो सकता। इस सिद्धान्त का विवेचन करते हुए आधुनिक युग के ऋषि **महात्मा टाल्स्टाय** ने लिखा था—

"हमारी प्रचलित समाज-व्यवस्था अत्यन्त विचित्र है। हममें से एक आदमी मन्दिर में पुजारी का काम करता है, दूसरा सेना के संगठन में लगा है, तीसरा न्यायाधीश का कार्य करता है। चौथा पुस्तकों का अध्ययन और रचना करता है, पाँचवा लोगों की चिकित्सा करता है, छठा बालकों को स्कूल में पढ़ाता है। इन सब लोगों ने उपर्युक्त कामों के करने का बहाना रोटी के लिये शारीरिक श्रम करने का कर्त्तव्य त्याग दिया है और उसे दूसरे लोगों पर लाद दिया है। वे इस बात को भूल जाते हैं कि मन्दिर के पुजारी, सेना के अफसर, अदालत के जज, डॉक्टर, मास्टर आदि सब प्रकार के लोगों को सबसे पहले इस बात की आवश्यकता होती है कि उनको रोटी देकर भूखों मरने से बचाया जाय। हम इस बात का जरा भी ख्याल नहीं करते कि मनुष्यों के असंख्यों प्रकार के कर्त्तव्यों में से कुछ का नम्बर उनके महत्व और उपयोगिता की दृष्टि से सबसे पहले आता है और कुछ का बाद में। हमको चाहिये कि हम प्रारम्भिक कर्त्तव्य को पूरा किये बिना अन्तिम कर्त्तव्य को पालन करने का प्रयत्न न करें और वह कर्त्तव्य यही है कि हम अपनी रोटी को उत्पन्न करने में प्रत्यक्ष रूप से कुछ शारीरिक श्रम करें।"

शायद आप तुरन्त यह आपत्ति पेश करेंगे कि ऐसा होने से तो मानव-समाज के लिये होने वाले अनेक महत्वपूर्ण कार्यों में बाधा पड़ जायेगी और उसके बौद्धिक विकास में कमी होने लगेगी। सभ्यता और संस्कृति, ज्ञान और विज्ञान की वर्तमान आश्चर्यजनक प्रगति श्रेणी-विभाजन और विशेष कार्यों में कुशलता प्राप्त करने से ही सम्भव हुई है। यदि इसमें रुकावट डाली जायेगी तो मानव-समाज पुनः उसी अर्ध-सभ्य दशा की तरफ लौटने लगेगा। यह दलील निस्सार और एक बहाना ही है। आठ घण्टे में एक घण्टे का अथवा बारह महीने में डेढ़ महीने का शारीरिक श्रम अपनी बौद्धिक योग्यता तथा प्रगति को घटाने के बजाय उल्टा बढ़ायेगा ही। शरीर के विकास के साथ मानसिक और बौद्धिक शक्तियों का विकास भी जुड़ा हुआ है। अगर हमारे शरीर को श्रम करने का अभ्यास बना रहेगा और उससे वह सशक्त और सुदृढ़ होगा तो हमारे मन तथा बुद्धि भी अधिक शुद्ध तीव्र और कार्यक्षम अवस्था में रहेंगे।

पर असली कठिनाई यह है कि हम इस अर्थमूलक युग की माया में फँसकर शाश्वत मानव-मूल्यों को अधिकांश में भुला बैठे हैं। हमारे सोचने का तरीका केवल यही रह गया है कि हम किस उपाय से हल्का, 'प्रतिष्ठित' समझा जाने वाला काम करके थोड़े समय में अधिक रुपया प्राप्त कर सकते हैं ? उस कार्य का वास्तविक परिणाम समाज, देश, राष्ट्र और स्वयं हमारे लिये क्या होता है, इस पर बहुत कम विचार करते हैं। हमारी सफलता की एकमात्र कसौटी धन, आमदनी, अधिक वेतन, अधिक मजदूरी ही रह गई है। उससे आगे चलकर हमारा या दूसरों का क्या हानि-लाभ होगा, इस पर विचार करने की आवश्यकता कोई नहीं समझता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्रम से बचने की हानिकारक मनोवृत्ति—

उपयोगी श्रम से बचने की यह मनोवृत्ति बहुत समय से चली आई है और दिन पर दिन बढ़ती जाती है। मध्यकाल में कुछ ब्राह्मण (पुजारी, पुरोहित) आदि क्षत्रिय (राजा, सामन्त, सैनिक) और थोड़े से सरकारी कर्मचारी शारीरिक श्रम द्वारा प्रत्यक्ष उत्पादन कार्य से बचकर उसका भार प्रजा के शेष वर्गों पर डाल देते थे। वे अपने इस स्वार्थपूर्ण आचरण का कारण ईश्वरीय आदेश या भाग्यवाद के सिद्धान्त को बतलाते थे कि पुराकालीन पुण्य-कर्मों के कारण ही इन विशेष अधिकार प्राप्त वर्ग वालों को भगवान ने वह सुविधाजनक स्थिति प्रदान की है।

इसके पश्चात् क्षत्रियों की प्रधानता के युग में भाग्यवाद के साथ उपयोगितावाद का कारण भी जोड़ दिया गया। वे कहते थे कि समाज की रक्षा और व्यवस्था को कायम रखने के लिए हमको इस बात का विशेष अधिकार प्राप्त है कि स्वयं श्रम न करके अन्य लोगों से काम करायें। इस प्रकार अब से सौ-दो सौ वर्ष पहले तक प्रायः सभी देशों के ये विशिष्ट समझे जाने वाले व्यक्ति धर्म या समाज-रक्षा की दलील देकर अपनी स्थिति को आवश्यक और उपयोगी सिद्ध करने की चेष्टा करते थे। हमारे यहाँ के विद्वान कहलाने वाले तो इसके लए तुरन्त ही धर्मशास्त्रों का प्रमाण भी पेश कर देते थे—

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।।

इस वेद-वाक्य के गूढ़ आशय पर ध्यान न देकर वे सामान्य अशिक्षित जनों को यही समझाते थे कि हमको भगवान ने अपने उत्तम अंगों, मस्तक तथा भुजाओं से उत्पन्न किया है, अतएव खेती, किसानी, मजदूरी जैसे का हमारे लिए अनुपयुक्त हैं। यह कर्त्तव्य उन्हीं लोगों को पालन करने चाहिये, जो निम्न अंगों से उत्पन्न हुए हैं।

योरोप के लोग भी इसी के मिलते-जुलते तर्क उपस्थित करके श्रम से बचने के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया करते थे। वे बाइबिल का हवाला देकर कहते थे कि "जिस प्रकार चन्द्रमा और तारों से सूर्य भिन्न है और स्वयं तारों में भी परस्पर भिन्नता है, उसी प्रकार ईश्वर के आदेशानुसार मनुष्य-मनुष्य में भी भिन्नता है। कुछ लोगों को ईश्वर ने सब पर, कुछ को बहुतों पर और कुछ थोड़ों पर शासन करने के लिए नियुक्त किया है और शेष आदेश पालने के लिए बनाये गये हैं।" अन्य लोग जो ऐसे 'धार्मिक' आदेशों को अधिक महत्व नहीं देते थे, दार्शनिकता का आधार लेकर कहते थे "इस समय लोगों ने जिस जीवन क्रम को स्थापित कर लिया है और जिस पर वे चल रहे हैं, उसका निर्माण मानव ने नहीं किया है और न वह उसको स्थिर रख सकता है। वह तो आत्मा या सम्पूर्ण मानव-जीवन से प्रस्फुटित होते-होते स्वयं विकसित हो गया है और उसका पालन करना ही हमारा कर्त्तव्य।"

इन दोनों प्रकार के लोगों को फिर भी जन-समुदाय के प्रति अपने कथित कर्त्तव्यों का कुछ ध्यान रखना पड़ता था और उनमें त्रुटि या असावधानी होने पर लज्जित भी होते थे। पर वर्तमान समय में लोगों ने अपनी निष्क्रियता पर विज्ञान और कला की साधना का जो आवरण डाल रखा है, उसमें इस तरह के कर्त्तव्य-पालन की भी कोई शर्त नहीं रखी है। ये लोग अपने कार्य को स्वयं ही साधारण के लिये अनिवार्य रूप से आवश्यक मान लेते हैं और इसके लिए उन पर बहुत बड़ा अहसान जताते रहते हैं। एक बड़े विद्वान के शब्दों में उनकी स्थिति कुछ इस प्रकार है—

"ये वैज्ञानिक और कलाकार बिना किसी प्रकार का प्रमाण दिये ही पुराने युग के पुरोहितों की तरह कहा करते हैं कि समाज के कल्याण के लिए उनका काम सबसे अधिक महत्वपूर्ण और आवश्यक है और यदि वे काम न करें तो समस्त मानव समाज विनष्ट हो जाय। यद्यपि उनके सिवा कोई दूसरा आदमी उनके काम की महत्ता को समझता या स्वीकार नहीं करता, तथापि वे अपने कार्य का गुण गाते ही रहते हैं। इस बात की चिन्ता किये बिना ही उनके काम से जनता को लाभ होगा या नहीं वे अपने प्रिय व्यसनों में लगे रहते हैं और उन्हें सदा यह विश्वास रहता है कि वे समाज के लिए सबसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक आवश्यक और महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। इस प्रकार जहाँ एक ईमानदार सरकारी कर्मचारी यह मानता है कि उसके काम का मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ है और फिर भी वह जनता के लिए यथासाध्य उपयोगी बनाने का प्रयत्न करता है और इसी तरह जहाँ एक व्यवसायी अपने कार्य की स्वार्थपरायणता को स्वीकार करता हुआ, उसे सार्वजनिक उपयोगिता का रूप देने की चेष्टा करता है, वहाँ वैज्ञानिक अथवा कलाकार ऐसा दिखावा करना भी आवश्यक नहीं समझते। उनको अपने कार्य की उपयोगिता ही नहीं उसकी 'पवित्रता' पर इतना पक्का विश्वास होता है कि वे उपयोगितावाद के सिद्धान्त को भी अस्वीकार कर देते हैं।"

इस प्रकार ये तीसरी नई श्रेणी के लोग सब प्रकार के उपयोगी श्रम से अलग रहकर ऐसे कामों में लगे रहते हैं, जिनको किसान और मजदूर समझ भी नहीं पाते और जिनको वे प्रायः निरर्थक और हानिकारक मानते हैं। इन लोगों को जनता के लिए उपयोगी बनने की जरा भी चिन्ता नहीं रहती, वे सब कुछ 'स्वान्तः सुखाय' करते हैं और फिर भी वह पूर्ण विश्वास रखते हैं कि उनका कार्य जन-जीवन के लिये नितान्त आवश्यक है।

समयाभाव का गलत बहाना—

उपर्युक्त श्रेणी के अधिक शिक्षित तथा विज्ञान और कला की साधना का दावा करने वालों के कथन का मूल तात्पर्य यह होता है कि वे शिक्षा, सभ्यता ज्ञान सम्बन्धी कार्यों में इतने संलग्न रहते हैं कि उनको शारीरिक श्रम वाले कामों के लिए कुछ भी समय नहीं मिलता और यदि वे उनके लिए चेष्टा करें तो उनके उच्च कामों में क्षति पहुँचेगी।

इस विषय का विचार करने से पूर्व यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि हम विज्ञान, कला, शिक्षा आदि के विरोधी नहीं हैं और न मानव-प्रगति के लिये इनके महत्व को कम आँकते हैं। हमारे देश के किसी प्राचीन लेखक ने जैसा कहा है "विद्या कला विहीनो नरः पशुभिः समानः" के सिद्धान्त को हम पूर्णतया नहीं तो अधिकांश में अवश्य मानते हैं। मनुष्य केवल पेट भरने के लिए आवश्यक सामग्री प्राप्त करने में ही सारा जीवन व्यतीत कर दें यह हमको अभिप्रेत नहीं। सभ्यता, संस्कृति, मानसिक सद्गुणों का आविर्भाव प्रत्येक मनुष्य में होना भी अनिवार्य मानते हैं। पर इन सब बातों के होते हुए भी हमको इसमें कोई ऐसी बात नहीं जान पड़ती जो शारीरिक श्रम करने में बाधक हो। यदि ये विज्ञान और कला प्रेमी थोड़े भी शारीरिक श्रम को कला की साधना के लिए हानिकारक मानते हैं अथवा उनका यह दावा है कि वे अपना पूरा समय बौद्धिक कार्य में ही लगाते रहते हैं तो वे या तो भ्रम में हैं या दूसरों को बहकाते हैं। रूस के महान् लेखक टाल्सटाय संसार के विद्वानों में अग्रगण्य माने जाते हैं और उन्होंने बहुत अधिक संख्या में ऐसी पुस्तकें लिखी हैं, जो उनकी मृत्यु के पचास-साठ वर्ष बाद अब भी संसार की विभिन्न भाषाओं में छापी और पढ़ी जाती हैं। बहुत वर्षों तक इस श्रम की समस्या पर विचार करते हुए, वे इस निश्चय पर पहुँचे थे कि कला और साहित्य की साधना में शारीरिक श्रम से कोई हानि नहीं होती, वरन् इससे उसका स्तर उच्च ही होता है। इस सम्बन्ध में वे स्वयं अपना उदाहरण देते हुए लिखते हैं—

"मेरे सामने यह भी प्रश्न था कि यदि मैं शारीरिक श्रम करने लगूँ तो क्या वह मेरा सारा समय नहीं ले लेगा और तब क्या मेरे उस मानसिक (साहित्यिक कार्य) में रुकावट नहीं पड़ेगी जो मुझे पसन्द है और जिसे मैं कुछ उपयोगी मानता हूँ ? पर जब मैंने सचमुच शारीरिक श्रम करना आरम्भ कर दिया तो इस समस्या का पूरी तरह समाधान हो गया। जितना अधिक मैंने शारीरिक श्रम किया उतनी ही अधिक मेरी मानसिक श्रम की शक्ति भी बढ़ गई और मुझे व्यर्थ की बातों से मुक्ति मिल गई।"

"परिणाम यह निकला कि शारीरिक श्रम में आठ-घण्टे लगाने के बाद भी, मेरे पास आठ घण्टे शेष बच जाते हैं, जिनमें से मानसिक कार्य के लिये मुझे केवल पाँच घण्टों की आवश्यकता होती है। जब मैंने इसकी तुलना अपने पिछले जीवन से की तो मुझे मालूम हुआ कि मैंने पिछले चालीस वर्ष तक लिखने के अतिरिक्त कोई कार्य नहीं किया था और लगभग ५ हजार पृष्ठ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिखे थे। यदि इन चालीस वर्षों में मैं एक साधारण किसान का कार्य करता रहा होता तो साल में छः महीने प्रतिदिन दो पृष्ठ ही लिखता रहता तो ५४ वर्ष में ही ५ हजार पृष्ठ लिखे जा सकते थे। पर केवल लेखन-कार्य करते हुए मैंने किसी न किसी दिन १६ पृष्ठ तक लिखे थे, तो भी मेरे कार्य का परिणाम नगण्य ही रहा।"

वास्तविक बात यह है कि लोगों ने पहले से ही अपने मन में यह ख्याल बैठा लिया है कि शारीरिक श्रम, बौद्धिक कार्य के विपरीत है और उसके करने से इस उच्च कार्य में रुकावट पड़ेगी अथवा उन्होंने इस विषय में कभी अच्छी तरह विचार ही नहीं किया होता है। वे शारीरिक श्रम को हीनता की निगाह में देखते हैं और इसलिये बिना सोचे-समझे ही उसे अपने कार्य में बाधक बतला देते हैं।

बहुत-से लोग इस सम्बन्ध में एक नये प्रकार का तर्क उपस्थित करते हैं। वे कहते हैं कि हमको जीवन-निर्वाह के लिये दूसरों के जिस अनेक प्रकार के शारीरिक श्रम का उपयोग करना पड़ता है, उसका परिमाण सब मिलाकर बहुत अधिक होता है। यदि हम घण्टा दो घण्टा रोज शारीरिक श्रम करने भी लगें तो वह तो घड़े में एक बूँद के समान होगा, उससे क्या लाभ होगा ?

जो लोग शारीरिक श्रम से बचने का ऐसे बहाने पेश करते हैं, वे दूसरों का तो थोड़ा ही अनहित करते हैं पर स्वयं बड़े लाभ से वंचित रह जाते हैं। वे इस बात को नहीं समझते कि बौद्धिक कार्य के साथ शारीरिक श्रम का समन्वय करने से उनका जीवन अनेक प्रकार से उन्नत तथा सुखी बन सकेगा। जिस शारीरिक श्रम को वे एक भार अथवा अप्रतिष्ठा का हेतु समझते हैं, वह उनका एक प्रकार से कायाकल्प कर देगा और उनके अनेक दोषों को दूर कर उन्नति का मार्ग खोल देगा। बेकार रहने के कारण उनके अन्दर जो खर्चीली आदतें और निरर्थक आवश्यकताएँ पैदा हो गई होंगी, वे ऐसे शारीरिक श्रम से तुरन्त दूर हो जायेंगी। पोशाक, बिस्तर, सजावट सम्बन्धी अनुचित और दिखावटी भावनायें भी इससे बदल जाती हैं और मनुष्य पहले की अपेक्षा बहुत कम व्यय में सुखी और शान्त जीवन बिताने लग जाता है। वैसे जिन आदतों का छोड़ना अत्यन्त कठिन जान पड़ता है, वे शारीरिक श्रम का अभ्यस्त हो जाने पर ऐसे परोक्ष रूप से बदल जाती है कि हमको स्वयं अपने नये जीवन को देखकर आश्चर्य होने लगता है।

श्रम स्वयं एक वरदान है—

मानव-जीवन का सबसे बड़ा आधार श्रम ही है। हमारी सबसे प्रधान आवश्यकताओं— भोजन, वस्त्र, निवास स्थान की पूर्ति किसी न किसी के श्रम द्वारा ही होती है। अन्न के मिल जाने पर उसको खाने लायक रोटी के रूप में परिवर्तित करने में भी श्रम करना पड़ता है और बिना श्रम के वह ठीक तौर से हजम होकर शरीर में रस-रक्त के रूप में बदल भी नहीं सकती। यह सब देखते हुए भी मनुष्य श्रम से बचने की चेष्टा करते रहते हैं। इसके लिये वे अपना कार्य-भार दूसरों पर लादने की कोशिश ही नहीं करते, वरन् तरह-तरह के आविष्कार करके, यन्त्र बनाकर भी अपने हाथ-पैरों का कार्य उनसे पूरा कराने का प्रयत्न करते हैं। परिणाम यह होता है कि चाहे मनुष्य की दिमागी शक्तियाँ बढ़ रही हों, पर शारीरिक शक्तियाँ क्षीण होती जाती हैं और उसका जीवन कृत्रिम तथा परावलम्बी होता चला जाता है। चाहे नकली बातों को महत्व देने वाले और विचारशून्य इन बातों में भी गौरव और शान समझते हों पर जीवन-संघर्ष में इसके कारण विपत्तियाँ ही सहन करनी पड़ती हैं। इस सम्बन्ध में एक लेखक ने बहुत ठीक कहा है—

"पता नहीं कहाँ से यह गलत ख्याल लोगों में आ गया है कि परिश्रम से बचने में कोई सुख है। परिश्रम करने से कुछ थकावट आती है, पर श्रम न करने से तो शक्ति का स्रोत ही सूख जाता है। मेरी समझ से तो बेकार रहने से अधिक 'श्रमसाध्य' और कोई काम नहीं है। कुछ काम न करना मानो जीते जी मर जाना है।

"परिश्रम जीवन का आधार है। यह वह चीज है, जो हर मानव को विरासत में मिली है। शुरू से वह शरीर से काम लेना सीखता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी काम लेने के कारण उसका शरीर बढ़ता और पुष्ट होता है। शारीरिक श्रम जीवन की प्रथम पूँजी है। इसीलिये अपने शरीर से काम लेना हमारा पहला कर्त्तव्य है। हाथ-पाँव की दृढ़ता हर पग पर आवश्यक है। स्वाभाविक है कि जिन अंगों से हम काम न लेंगे वे कुछ दिनों में मुरझा जायेंगे। अभ्यास और श्रम से ही वे पुष्ट रह सकते हैं और अपना काम तत्परता-पूर्वक करने योग्य बनते हैं।"

कुछ लोग यह आशंका प्रकट किया करते हैं कि कोमल प्रकृति के बुद्धिजीवी लोगों अथवा बड़ी आयु के सज्जनों को शारीरिक श्रम से हानि पहुँचेगी। पर अनुभव ने बतलाया है कि बात ठीक इससे, उल्टी होती है। जो लोग शारीरिक श्रम के इस नियम का पालन नहीं करते उनको अपना समय मनोरंजन के ऐसे साधनों में लगाना पड़ता है, जो आगे चलकर चरित्र तथा स्वास्थ्य के लिये हानिकारक ही सिद्ध होते हैं—जैसे सिनेमा, नाटक, तास, गाना-बजाना, उपन्यास-कहानी, गपशप आदि। जो आदमी इस तरह की बातों में समय व्यतीत किया करते हैं, वे जीवन की वास्तविकता से हट जाते हैं और उनमें तरह-तरह के शारीरिक और मानसिक दोष पैदा होने लगते हैं। इस परिस्थिति के दोषों का वर्णन करते हुए किसी ने ठीक ही कहा है कि "ये सब बिना कोई उपयोगी श्रम किये मानसिक जीवन को कायम रखने के साधन मात्र हैं। इसी प्रकार नये-नये ढंग के वस्त्र, फैशन, दवायें, सोड़ा-लेमन, टॉनिक, विद्युत चिकित्सा आदि ऐसी कृत्रिम और ठगी की युक्तियाँ हैं, जिनसे मनुष्य श्रम का अभ्यास न रहने पर अपने शारीरिक जीवन को वहन करने में समर्थ हो सकता है। पर यह तो कुछ ऐसी ही बात है कि किसी पूरी तरह से बन्द कमरे में पौधों को वायु प्रदान करने के लिये रासायनिक प्रक्रिया द्वारा पानी गैसें बनाई जायें, जब कि वास्तव में यह काम खिड़की खोल देने से ही पूरा हो सकता है। दूसरे शब्दों में इसका आशय यह है कि भोजन करने से जो शक्ति पैदा होती है, उसे शारीरिक श्रम द्वारा उपयोग में लाया जाय।"

इस तरह का शारीरिक श्रम हमको केवल अनेक हानिकारक प्रवृत्तियों से नहीं बचाता, वरन् अनेक प्रकार के प्रत्यक्ष लाभ भी देता है। अगर हम अपने बाग में प्रतिदिन घण्टा-दो घण्टा परिश्रम करें तो उससे जीवनदायक फल-फूलों की प्राप्ति होगी। अगर हम खेती के काम में प्रतिदिन कुछ समय लगाते रहेंगे तो हम अन्न के लिए आत्म-निर्भर हो सकेंगे। अगर दर्जी, बढ़ई, लुहार, मोची आदि के किसी काम को शौक या 'हाबी' की तरह ही करते रहें तो उससे अनेक उपयोगी वस्तुओं का उत्पादन होगा।

हम फिर इस बात को दुहराना चाहते हैं कि उच्च-स्तर के बुद्धि-जीवी या कला-कुशल लोगों के लिये यह आवश्यक नहीं कि वे सामान्य किसान, मजदूरों की तरह पूरे आठ घण्टे यह काम करते रहें। हमारा आशय यही है कि वर्तमान समय में ये उच्च श्रेणी के व्यक्ति अपना नियमित काम करने के बाद जो कई घण्टे का समय मनोरंजन अथवा तफरीह के नाम पर अनुपयोगी और प्रायः हानिकारक कार्यक्रमों में लगाया करते हैं, उसके बजाय वे उसका एक अंश बागवानी, खेती, दस्तकारी जैसे किसी काम में लगाया करें, जिससे एक भिन्न प्रकार के वातावरण में पहुँचकर उनको पूर्ण मानसिक विश्राम भी मिल जाय और समाज के हितकारी उत्पादन में किसी प्रकार का सहयोग भी मिले।

यह सिद्धान्त सामान्य अथवा मध्यम श्रेणी के बुद्धिजीवियों पर ही लागू नहीं होता वरन् बड़े विद्वानों, कलाकारों और शासकों तक के लिए भी यह असंदिग्ध रूप से उपयोगी और कल्याणकारी है। सन्त विनोबा भावे ने तो जवाहरलाल नेहरू जैसे राजनीतिज्ञ को जो सदैव राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय विशाल समस्याओं के भार से दबे रहते थे, यही सलाह दी थी कि वे प्रतिदिन सब काम छोड़कर एक-दो घण्टा खेती का काम किया करें। जिस आदमी का जीवन इतना अधिक व्यस्त हो कि उसे प्रायः पन्द्रह और इससे भी अधिक घण्टे प्रतिदिन शासन कार्य में लगाने पड़े, उसके लिये खेती का कार्य करने की सम्मति देना कुछ आश्चर्यजनक जान पड़ेगा। जो लोग श्रम की महिमा से अनजान हैं, वे तो इसे एक काल्पनिक आदर्श ही बतलायेंगे। पर वास्तव में इसमें कोई अनहोनी बात नहीं है। इस प्रकार थोड़ी देर के लिये वातावरण के पूर्णतः बदल जाने से इतना अधिक मानसिक विश्राम मिल जाता है और एक ऐसी ताजगी तथा उर्वरता प्राप्त होती जाती है कि जिससे पन्द्रह घण्टे का काम बारह घण्टे में पूरा होना सम्भव हो जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो लोग इस कार्य के लिये फुर्सत न होने की बात करते हैं, उन्होंने इस सम्बन्ध में बहुत कम विचार किया है। यदि वे अपनी दिनचर्या का अच्छी तरह निरीक्षण करें तो उन्हें ज्ञात होगा कि अब भी उनका कितना ही समय निरर्थक बातों में बीत जाता है। यदि आन्तरिक इच्छा हो तो प्रत्येक मनुष्य किसी भी नये उद्देश्य की पूर्ति के लिये समय निकाल सकता है। ऐसे उद्योगशील और धैर्यवान् व्यक्ति कठिन परिस्थितियों में होने पर भी इस प्रकार के महान् कार्य कर गये हैं, जिनसे आज भी हम लाभान्वित हो रहे हैं। इस प्रकार के कार्य का महत्व हृदयंगम करने के लिये किसी लेखक के उद्‌गार सर्वथा सत्य हैं—

"काम चाहे कितना ही अच्छा हो, लक्ष्य चाहे कितना ही शुभ हो, निरन्तर श्रम के बिना वह पूरा नहीं किया जा सकता। प्रत्येक महान् कार्य के पीछे वर्षों के निरन्तर श्रम का इतिहास छिपा हुआ है। पहाड़ों को काटकर बनाये रास्तों और हजारों मील रेलवे लाइनों पर चलते हुए क्या कभी सोचते हो कि उसके पीछे कितने मनुष्यों का श्रम और कितने हृदयों का योग है ? संसार की सर्वश्रेष्ठ इमारतों को देखकर चकित होने वाला दर्शक कभी सोचता है कि इन्हें बनाने में कितने श्रम और संलग्नता की आवश्यता हुई होगी ? दुर्गम स्थानों पर ऊँची पर्वत चोटियों पर, सघन वनों के बीच सैकड़ों वर्ष पूर्व बने मन्दिर, सरोवर, भवन आज भी हमें मुग्ध कर देते हैं। इन तक पहुँचने में हम हाँफ उठते हैं, कभी-कभी थककर राह के किनारे बैठ जाते हैं। तब हमारा मन अतीत की ओर चला जाता है और पूछने लगता है—उस युग में जब आज को अगणित यान्त्रिक सुविधायें नहीं थीं कैसे बनी होंगी ये चीजें ? पहाड़ की चोटी पर बड़े-बड़े पत्थर और मसाले कैसे पहुँचाये गये होंगे ? हमको इसका ठीक उत्तर तो नहीं मिल पाता, परन्तु इतना तो स्पष्ट है कि कठोर अध्यवसाय निरन्तर श्रम से ही ये बन पाये होंगे।"

ईश्वरीय नियमों का पालन कीजिये—

ईश्वर ने हमको यह जो अद्‌भुत मानव देह दी है और इसमें ऐसे अद्‌भुत अंग-प्रत्यंग बनाये हैं, जिनसे हम अत्यन्त सूक्ष्म तथा पेचीदा कार्यों को भी करने में समर्थ हो सकते हैं, तो इनके सम्बन्ध में हमारा यह कर्त्तव्य है कि उन सभी अंगों से ठीक-ठीक काम लें और उन्हें कार्यक्षम स्थिति में रखें। प्रकृति ने हमारी आँखों की रचना देखने के लिए, कानों की सुनने के लिए, नाक की सूँघने के लिये, जिह्वा की बोलने के लिए और रसास्वादन के लिये की है। यदि हम इन कार्यों में निरन्तर इन अंगों का उपयोग न करते रहेंगे तो वे अवश्य ही निर्बल पड़ जायेंगे। इसी प्रकार मनुष्य को हाथ-पाँव श्रम करने के लिये दिये गये हैं। अगर इनको इस काम में न लगाया जायेगा तो ये भी बेकार हो जायेंगे पर आज लाखों-करोड़ों व्यक्ति ऐसे हैं, जो हाथों से किसी प्रकार का उपयोगी श्रम नहीं करते और पैरों का काम प्रायः सवारियों से ही निकाला करते हैं। इस प्रकार वे इन अंगों को ऐसा निकम्मा बना डालते हैं कि किसी आकस्मिक आवश्यकता के समय उनको या तो परमुखापेक्षी बनना पड़ता है या कष्टों में पड़कर विवशतापूर्वक कुपरिणामों को सहन करना होता है।

यदि निष्पक्ष भाव से विचार किया जाय तो हम इस बात से कदापि इनकार नहीं कर सकते कि जो लोग शारीरिक श्रम से विमुख रहकर अपना समस्त समय कुर्सी और गद्‌दे-तकियों पर गुजारा करते हैं और केवल विचार करने, आदेश देने या विज्ञान अथवा कला सम्बन्धी बहुत हल्का कार्य करने में ही लगे रहते हैं, वे एक प्रकार से ईश्वर और प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करते हैं। इसका आशय यह नहीं कि हम उनके कार्य के महत्व को स्वीकार नहीं करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि अनेक वैज्ञानिक, कलाकारों, साहित्यिकों के परिश्रम से ही आज हम एक उत्कृष्ट मानव-संस्कृति के दर्शन कर रहे हैं और अपने जीवन को उच्च बनाने में समर्थ होते हैं।

यदि व्यासजी गीता की रचना न करते और तुलसीदास जी ने रामायण न लिखी होती तो आज हमारा जीवन न जाने कितना सूना होता ? गीता से सच्चे आत्म-दर्शन का ज्ञान पाकर हम जिस प्रकार कर्त्तव्य पालन में समर्थ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं और रामायण को पढ़कर जिस तरह अपनी भावनाओं को उच्च बनाते हैं, उसका मूल्यांकन कर सकना साधारण बात नहीं है। इसी प्रकार जिन गैलीलियो, न्यूटन, फैरेडे, ऐडीसन, आइन्सटीन आदि वैज्ञानिकों ने हमको खगोल आकर्षण चुम्बक, विद्युत, शब्द-तरंग, अणुशक्ति का रहस्य बतलाया है और उनकी सहायता से सैकड़ों जीवनोपयोगी उपकरणों का निर्माण किया गया है, वे भी निश्चित रूप से हमारी श्रद्धा के पात्र हैं। इसी प्रकार भूतकाल और वर्तमान समय के विज्ञानविद् और कलाकार जिन्होंने निःस्वार्थ भाव से मानव-सभ्यता को ऊँचा उठाने में अपने अनुपम बौद्धिक शक्तियों को लगाया है, सदैव श्रद्धापूर्वक स्मरण किये जाते रहेंगे।

पर यह सब होने पर भी हमको यह कहना पड़ेगा कि मानव जीवन का प्रथम कार्य शारीरिक श्रम है और बौद्धिक कार्यों का स्थान दूसरा ही है क्योंकि यह एक प्रत्यक्ष तथ्य है कि चाहे कोई बड़ा अध्यात्मवेत्ता हो, चाहे महाकवि हो, चाहे विज्ञान में पारंगत और कला का आचार्य हो, सबके लिये भोजन और वस्त्र की पहले आवश्यकता होती है। इन पदार्थों के बिना उनका अस्तित्व ही नहीं रह सकता और इन्हीं से शक्ति प्राप्त करते हुए वे अपने विशेष कार्यों को पूरा करने में समर्थ होते हैं। इसलिये शारीरिक श्रम को किसी दृष्टि से हीन समझना या उसके करने में अपनी श्रेष्ठता की हानि अनुभव करना एक बड़ी गलती है। ऐसे विचार रखने वालों के लिए हमें यही कहना पड़ेगा कि अभी उन्होंने जीवन-दर्शन को कुछ भी नहीं समझा है और उनके विज्ञान और कला विषयक विचार भी थोथे हैं। बौद्धिक कार्य करना बहुत अच्छा है और अनेक मनुष्य को अपने भीतर परिस्थितियों के अनुसार बौद्धिक क्षमता भी अवश्य उत्पन्न करनी चाहिये, पर उसके लिये शारीरिक श्रम की सर्वथा उपेक्षा करना या उसे अनावश्यक बतलाना भी किसी प्रकार न्यायसंगत या बुद्धिमत्ता का लक्षण नहीं है।

शारीरिक श्रम द्वारा शरीर के अंग-प्रत्यंगों का ठीक-विकास किये बिना हमारा जीवन एकांगी-अपूर्ण रह जायेगा और मानसिक तथा बौद्धिक क्षेत्र में भी हम यथेष्ट प्रगति न कर सकेंगे। विभिन्न मानवीय शक्तियों को पृथक्-पृथक् समझना सही दृष्टिकोण नहीं है। जिस प्रकार शरीर के विभिन्न अंग अपना काम अलग-अलग करते दिखाई देने पर भी समस्त शरीर के पोषण में ही सहयोग देते हैं, उसी प्रकार जब हम अपनी शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक आत्मिक सभी शक्तियों से उचित काम लेंगे और उनका ठीक ढंग से समन्वय करेंगे, तभी जीवनोद्देश्य में सफल हो सकेंगे।

धन को अनुचित महत्व—

बहुत-से लोग ऐसा भी सोचते हैं कि जब हम बौद्धिक कार्य में अधिक धन कमा सकते हैं, तब अपना समय खेती, बागवानी या ऐसे ही किसी अन्य काम में क्यों खर्च करें, जिनमें आय बहुत कम होती है। ये लोग निश्चय ही बड़े अदूरदर्शी और संसार की वास्तविकता से दूर होते हैं। वे केवल इतनी ही बुद्धि रखते हैं कि वर्तमान समय में संसार के सब काम रुपये से पूरे हो जाते हैं, सब प्रकार के सुख-साधन धन के ही अधीन हैं, इसलिये जिस तरह अधिक रुपया मिले वही काम करना चाहिये। उनकी निगाह में आपकी स्वाभाविक, अस्वाभाविक, ईश्वर प्रदत्त होने की बातें सनकी लोगों की चलाई हैं। पर ऐसे लोगों को यह नहीं मालूम कि रुपया और धन एक सामाजिक उपकरण मात्र है। सदा न रुपये का महत्व रहा है और न अनन्त काल तक रहेगा। शारीरिक स्वास्थ्य और शक्ति का स्थान सदैव धन के ऊपर है। एक विद्वान् की इस उक्ति में कुछ भी सन्देह नहीं कि "अगर रुपया चला गया तो कुछ नहीं गया, अगर स्वास्थ्य चला गया तो कुछ गया और यदि चरित्र चला गया तो सब कुछ समाप्त हो गया।"

धन की असारता के उदाहरण पग-पग पर मिलते हैं। हम संसार के ऐसे करोड़पतियों के वर्णन पढ़ते हैं, जिनके पास अगणित सम्पदा होने पर भी जो स्वास्थ्य के खराब हो जाने के कारण एक रोटी खाने के लिये भी तरसा करते थे। हमको योरोप के ऐसे करोड़पति का किस्सा मालूम है, जिसने दुश्चरित्रता के कारण होटल में पिस्तौल मारकर आत्म-हत्या कर ली थी। हमने प्रत्यक्षदर्शियों से सन् १९४२ में बरमा पर जापानी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हमला होने के समय की घटनायें भी सुनी हैं, जब वहाँ से हजारों भारतवासी अपने प्राण बचाकर भागे थे। इनमें से कितनों के ही पास काफी धन-सम्पत्ति थी। पर उस समय युद्ध के कारण चारों तरफ अव्यवस्था फैल जाने के कारण उनको स्थल मार्ग से भागना पड़ा, जो ८० मील की पूर्णतया सुनसान पथरीला और जन-शून्य था। उसमें न कुछ खाने को था न कहीं पानी ही मिलता था। वहाँ होकर आने वाले भुक्तभोगी बतलाते थे कि उन्होंने रास्ते में ऐसे व्यक्तियों को पड़े देखा जिनकी जेबों में दस हजार रुपये के नोट रखे थे, पर वे पानी के बिना तड़पकर मर गये। उस समय वे एक गिलास पानी के लिये एक हजार रुपया तक देने को तैयार थे, पर उनको पानी न मिल सका और उनका रुपया पड़ा ही रह गया।

धन उपयोगी अवश्य है और उसके द्वारा अपनी और दूसरों की भलाई के बहुत-से काम किये जा सकते हैं, पर उसको सर्वोपरि महत्व देना मूर्खता का प्रमाण है। स्वास्थ्य की परवाह न करके धन के पीछे पड़े रहना कभी सुख-सौभाग्य का कारण नहीं हो सकता। जीवन की सफलता का आधार उपयोगी, कार्यक्षम, स्वावलम्बी जिन्दगी व्यतीत करना है, केवल धन के पीछे पड़े रहकर दीन-दुःखियों को भूल जाना किसी प्रकार उचित या समझदारी की बात नहीं कही जा सकती।

श्रेष्ठता का झूठा भ्रम—

बहुत-से लोग बौद्धिक और शारीरिक श्रम का सम्बन्ध प्रतिष्ठा और श्रेष्ठता से जोड़ते हैं। वे अपने मन में ऐसा समझते हैं कि शारीरिक श्रम करना, खेती, दस्तकारी, कारीगरी आदि कार्य अपेक्षाकृत छोटे लोगों के लायक होते हैं और जो दफ्तर में कुर्सी पर बैठकर काम करते हैं और दस-बीस आदमियों पर हुकुम चलाते हैं, वे बड़े आदमी हैं, इस श्रेष्ठता के भूत ने अनेक लोगों के दिमाग में ऐसा घर कर लिया है कि वे सब तरह की कठिनाई सह लेते हैं, पर शारीरिक कार्य करने को तैयार नहीं होते। हमारे देश के शिक्षित नवयुवकों में ऐसे नमूने लाखों की संख्या में मिल सकते हैं। ये लोग सौ-डेढ़ सौ रुपये की सरकारी या दफ्तरों की नौकरी के लिये बरसों तक सड़कों की खाक छानते-फिरते हैं, जगह-जगह प्रार्थना-पत्र देने और 'इण्टरव्यू' में सम्मिलित होने के लिए घर का सैकड़ों रुपया खर्च कर देते हैं, पर उनसे यह नहीं होता कि घर की खेती या व्यवसाय में मेहनत करके अपना निर्वाह कर सकें या कोई मजदूरी या दस्तकारी का काम करके तीन-चार रुपया रोज कमा सकें। उनको यही भ्रान्ति खाये जाती है कि शारीरिक श्रम करने से हमें लोग छोटा समझने लगेंगे और समाज में हमारी प्रतिष्ठा घट जायेगी।

ऐसे लोगों में कुछ तो इस विषय में यहाँ तक आगे बढ़ जाते हैं कि उनकी गिनती सनकियों में होने लगती है और लोग उनकी बातों पर हँसते हैं। महान् मानवतावादी लेखक **टाल्सटाय** ने, जिसे महात्मा गाँधी अपने गुरु की तरह समझते थे, एक ऐसे मामूली किसान का सच्चा दृष्टांत लिखा है कि संयोगवश कुछ समय के लिए सरकारी कार्य करने को पा गया था और उसके बाद उसका दिमाग ऐसे सातवें आसमान पर पहुँच गया कि उसे खेती का काम या कोई साधारण शारीरिक श्रम का काम अपनी शान के विरुद्ध जान पड़ता था। इस प्रकार बेकार रहने से यद्यपि उसके भूखों मरने की नौबत आ गई, पर उसकी यह सनक दूर न हो सकी कि वह एक सरकारी अधिकारी है और शारीरिक श्रम करके रोजी कमाना उसकी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है। इस दृष्टांत का एक मनोरंजक अंश भी है, जिसे मूल लेखक के शब्दों में यहाँ दिया जाता है—

"हमारे जिले में एक फटे हाल किसान है, जो इधर-उधर घूमता रहता है। युद्ध के दिनों में एक सैनिक अधिकारी ने उसे अन्न को खरीदने के काम के लिए भरती कर लिया। अधिकारी के निकट सम्पर्क में रहने के कारण ऐसा मालूम होता है कि उस किसान के दिमाग में यह फितूर बैठ गया कि उच्च वर्ग के लोगों की तरह उसे भी काम करने आवश्यकता नहीं है, उव तो अपने जीवन-निर्वाह के लिए सम्राट् से वेतन मिलता ही रहेगा। अपने सरकारी काम के खत्म हो जाने पर भी अभी तक वह अपने को "सब प्रकार की सामग्री का ठेकेदार महामान्य

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राजकुमार ब्लोखिन' कहता है। वह कहता है कि उसने सैनिक सेवा की समस्त अवस्थाएँ पार कर ली हैं और चूँकि उसकी सैनिक सेवाएँ पूर्ण हो चुकी हैं, इसलिये अब उसे सम्राट से नकदी, वस्त्र, वर्दी, घोड़े, गाड़ी, चाय, नौकर आदि सब वस्तुएँ मिलती ही रहेंगी। उससे जब पूछा जाता है कि क्या तुम कुछ काम करोगे ? तो वह इस प्रश्न के उत्तर में सदा गर्व से साथ कहता है—"बहुत-बहुत धन्यवाद ! यह सब काम किसान कर लेंगे।"

"यदि कोई उससे यह कहे सम्भव है किसान भी काम न करना चाहें तो वह उत्तर देता है—"किसानों के लिये परिश्रम करने में कोई कठिनाई नहीं होती। अब किसानों की सुविधा के लिए मशीनें ईजाद कर दी गई हैं, जिससे उनके लिए मेहनत करना अधिक कष्टदायक नहीं होगा।" जब उससे कोई पूछता है कि 'तुम किसलिये हो ?' तो वह उत्तर देता है—"समय काटने के लिये।'

यद्यपि इस व्यक्ति की गिनती सनकी या सिड़ी आदमियों में होने लगी थी, पर सच पूछा जाय तो हमारे यहाँ के समस्त अमीर, रईस और राजा नामधारी इसी श्रेणी में हैं। बाप-दादों की या किसी सम्बन्धी की सम्पत्ति पा जाने के कारण यद्यपि उनको कष्ट उठाना नहीं पड़ता और उनकी अच्छी-बुरी सभी इच्छायें पूरी हो जाती हैं, पर उनका जीवन और उनके विचार इस अपने मुँह से आप ही 'राजकुमार ब्लोखिन' बनने वाले व्यक्ति से ज्यादा भिन्न नहीं होते। वे अपने हाथ से कुछ भी काम करना अपनी शान के खिलाफ समझते हैं। सामने ही स्टूल पर पानी की सुराही और गिलास रखा रहता है, तो भी प्यास लगने पर किसी नौकर को बुलाकर ही पानी माँगकर पियेंगे। वे अपने कपड़े, जूते आदि भी स्वयं पहिन और उतार नहीं सकते। यह काम भी नौकर ही करता है। इस प्रकार से वे अपने को ऐसा अपाहिज-सा बना लेते हैं कि जिनको देखकर हँसी या तरस ही आता है।

श्रम का कल्याणकारी सिद्धान्त—

जो व्यक्ति श्रम के कल्याणकारी सिद्धान्त को समझ जायेगा। आर्थिक जगत् की हानिकारक कृत्रिमता तथा झूठे सामाजिक दम्भ को त्यागने के लिये निश्चय कर लेगा, उसे इस बात की चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी कि वह कौन-सा काम करे ? यह कहना तो एक प्रकार की मूर्खता या कुतर्क होगा कि इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन निर्वाह के लिये आवश्यक सब प्रकार की सामग्री स्वयं पैदा करनी या बनानी चाहिये अर्थात् किसान, जुलाहा, मोची, राज, बढ़ई, लुहार आदि के सब प्रकार के काम वह स्वयं ही करे। इस प्रकार की कार्यप्रणाली तो हमको उसी हालत में पहुँचा देगी, जिसमें हम कुछ हजार वर्ष पहले रहते थे और जिसको अर्ध-सभ्य अवस्था कहा जाता है।

श्रम का कल्याणकारी रूप यह है कि हम उसका आधार सामाजिक सहयोग को समझें न कि एक वर्ग की दूसरे के ऊपर विशिष्टता और श्रेष्ठता को। इस प्रकार का विभाजन विशेष सुविधा प्राप्त लोगों में यह भावना पैदा कर देता है कि हम अपने ही सुख के लिये खाते और सोते तथा अन्य कार्य करते हैं तथा हमारा स्वार्थ अन्य बहुसंख्यक लोगों से भिन्न है। इसके बजाय हमको परिश्रमी लोगों की यह मनोवृत्ति अपनानी चाहिये कि हमारा शरीर एक यन्त्र की तरह है, जिसे चलाने के लिये भोजन की आवश्यकता होती है और इसलिये काम न करना और केवल खाते जाना एक लज्जाजनक तथा अपने एवं दूसरों, सबके लिये हानिकारक है।" जिस प्रकार एक अग्निकाण्ड उपयोगी वस्तुओं को भस्म तो कर देता पर बनाता कुछ भी नहीं इसी प्रकार जो व्यक्ति केवल खाता है और कोई काम नहीं करता, वह समाज के लिये एक अभिशाप, एक असह्य भार ही समझा जाना चाहिये।

एक विचारक के अनुसार मनुष्य के कार्य को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है—(१) माँसपेशियों का कार्य, अर्थात् हाथ पैर, कन्धों तथा पीठ का कार्य जो गाढ़े पसीने का होता है और जिससे अन्न, पशु, घर, जलाशय आदि की प्राप्ति होती है। (२) उंगलियों और कलाइयों का कार्य अर्थात् शिल्प-कार्य, जिससे कपड़े, जूते, बर्तन आदि दस्तकारी और कारीगरी की चीज तैयार होती हैं। (३) मस्तिष्क और विचार का कार्य, जिससे विज्ञान और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कला-सम्बन्धी प्रगति सम्भव होती है। (४) सामाजिक कार्य, जिससे अन्य लोगों से मिलने-जुलने, परिचय, सेवा, सहयोग का अवसर मिलता है।

सबसे अच्छा तो यही है कि मनुष्य अपना कार्यक्रम तथा दिनचर्या इस प्रकार की बनावें कि इन चारों प्रकार की क्षमताओं को प्रतिदिन काम में लाने का अवसर प्राप्त होता रहे और हम जीविकोपार्जन के साथ ऐसा उपयोगी कार्य करते रहें, जिससे समाज की सुख-शान्ति की वृद्धि हो। पर वर्तमान परिस्थितियों में अधिकांश लोगों के लिये ऐसा कर सकना पूर्ण रूप से सम्भव नहीं जान पड़ता तो भी श्रम की आवश्यकता और श्रेष्ठता के प्रति निष्ठा की भावना को सदैव स्थिर रखना आवश्यक है। उदाहरणार्थ बड़े शहरों में रहने वाले और कारखानों में काम करने वाले मजदूरों तथा सरकारी और निजी कार्यालयों में काम करने वाले छोटे क्लर्क आदि का जीवन ऐसा भारयुक्त तथा साधन ऐसे सीमित रहते हैं कि वे सदैव अपनी दिनचर्या को इच्छानुसार नहीं बना सकते। पर श्रम की उपयोगिता और उसे कर्त्तव्य रूप से पालन करने का ध्यान रखा जाय, तो वर्तमान सामाजिक दोष बहुत हद तक दूर हो सकते हैं।

इस समय तो प्रत्येक आदमी कार्य की उपयोगिता के बजाय अधिक से अधिक धन प्राप्त करने का लक्ष्य रखता है और उसी प्रकार के काम चुनता है, चाहे उससे समाज की कैसी भी हानि या बर्बादी ही क्यों न होती हो ? यदि इसके बजाय हम इस मनोवृत्ति से कार्य करें कि हमारा कार्य समाज के संचालन, सुव्यवस्था, सेवा, सहयोग, उपयोग का एक अंश है और इससे हमको भी एक सामाजिक सदस्य के नाते जीवन-निर्वाह के साधन प्राप्त होंगे तो सब व्यवस्था अपने आप जम सकती है और हम प्रत्येक परिस्थिति में चारों प्रकार की क्षमताओं का सदुपयोग समाज के हितार्थ कर सकते हैं।

पर श्रम के उपयुक्त सिद्धान्त को समझने और पालन करने की अधिक आवश्यकता तो उन साधन सम्पन्न व्यक्तियों के लिये है, जो अपना लक्ष्य समाज-हित के बजाय व्यक्तिगत स्वार्थ को ही बनाये हैं और सदैव एकमात्र ऐसे काम में ही लगे रहते हैं, जिससे उनका धन-भण्डार बढ़ता रहे। ऐसे लोग प्रायः शारीरिक श्रम से दूर रहते हैं और यदि मनोरंजन खेल-कूद व्यायाम के रूप में कुछ करते भी हैं तो उसे उपयोगी श्रम नहीं कहा जा सकता। इसमें एक बड़े दोष की बात यह होती है कि ऐसे ही लोग प्रायः समाज के मुखिया, नेता या प्रसिद्ध व्यक्ति माने जाते हैं और सामान्य जन उन्हीं का अनुकरण करने की चेष्टा करते हैं। यदि वे देखते हैं कि ये 'बड़े' कहलाने वाले सट्टा, जुआ, ब्लैक मार्केट, तस्कर-व्यापार आदि से धन पैदा करके आराम और मौज की जिन्दगी बिता रहे हैं तो उनमें भी छोटे पैमाने पर वैसे ही कार्य करने की प्रवृत्ति पैदा होती है और इस प्रकार पूरा समाज नाश और पतनकारी मार्ग पर अग्रसर होता है। आज यही स्थिति अधिकांश क्षेत्रों में दिखालाई भी दे रही है।

इतना ही नहीं कुछ लोगों के पास अधिक मात्रा में धन के इकट्ठा हो जाने से व्यक्तिगत, सामाजिक और भी अनेक दोष उत्पन्न होते रहते हैं। हमारे देश में आमतौर से यह कहा जाता है कि घी, दूध आदि पौष्टिक पदार्थ खाने वाले व्यक्ति स्वस्थ और अधिक शक्तिशाली होते हैं। पर हम देखते हैं कि जिन अमीर श्रेणी के व्यक्तियों के पास इन पदार्थों की बहुतायत होती है और इनके सिवाय जो वेश कीमती फल और मुरब्बे तथा वैद्यों के पाक आदि खाया करते हैं, वे ही अधिक शक्तिहीन और अस्वस्थ देखने में आते हैं। ऐसे लोग आये दिन किसी न किसी छोटी-बड़ी शारीरिक शिकायतों में ग्रस्त रहते हैं और डॉक्टर तथा वैद्यों के यहाँ हमेशा हाजिरी दिया करते हैं। अधिक अमीर लोगों के यहाँ तो डॉक्टर एक तरह से नौकर ही रहते हैं, जो नित्य उनके स्वास्थ्य की जाँच करके कोई न कोई इन्जेक्शन, गोली या टॉनिक आदि लेने की व्यवस्था करते रहते हैं। उनके मुकाबले में गरीब लोग, जो भरपेट रोटी और मामूली साग दाल पा जाना ही अपना सौभाग्य समझते हैं, कहीं अधिक स्वस्थ और कार्यक्षम बने रहते हैं। वे बीमार भी पड़ते हैं तो पंसारी के यहाँ की दो-चार आने की काष्ठ-औषधि या जंगली जड़ी-बूटियों से ही उनका इलाज हो जाता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और वे पूर्ववत् परिश्रम करके अपनी रोजी रोटी कमाने लगते हैं।

इस अन्तर का कारण यही है कि घी, दूध और फलों का व्यवहार करने वाले "सेठजी" या "हजूर साहब" शारीरिक श्रम से बिल्कुल अलग रहते हैं, और मन में यही सोचा करते हैं कि जब सौभाग्य वश, इतनी सम्पत्ति, वैभव उच्च पद प्राप्त हुआ है तो हमको शारीरिक परिश्रम से क्या मतलब ? यदि हम ऐसा करें तो फिर हम में और गरीब लोगों में फर्क ही क्या रह जायेगा ? और फिर हमारे पास इतने नौकर-चाकर होने का अर्थ ही क्या रहेगा ? भगवान ने यदि हमको बड़े घर में जन्म दिया है तो इसका आशय यही है कि हम बड़े आदमियों की तरह शान के साथ रहें और अपने सभी काम नौकरों से करायें। यदि हम खेती, बागबानी या अन्य प्रकार के उत्पादनों में सक्रिय भाग लेने लगेंगे तो हमारी प्रतिष्ठा घट जायेगी और लोगों पर हमारा वैसा रौब नहीं रहेगा जैसा कि आजकल है।

पर ये सब नासमझी की बातें हैं। मनुष्य का वास्तविक सम्मान उसके उत्तम कार्यों से होता है। धनवानों के मुँह पर कुछ खुशामदी लोग चापलूसी की बातें भले ही करते रहें, पर घर से बाहर प्रायः उनकी बुराई और प्रतिकूल आलोचना ही सुनने में आया करती है। धन के आधार पर उनमें प्रायः अहंकार तथा अन्य दुर्गुण उत्पन्न हो जाते हैं। खुशामदी लोग चाहे अपने स्वार्थ साधन के लिये उनके दोषों को भी गुण बतलाया करें पर सर्वसाधारण को क्या पड़ी जो उनको प्रसन्न करने की कोशिश करे। इसलिये सामान्य जनता में ऐसे अमीरों की प्रायः निन्दा ही हुआ करती है और लोग उनकी उपेक्षा की निगाह से देखते हैं। उधर शारीरिक अकर्मण्यता तथा चरित्र सम्बन्धी दोषों के कारण ऊपर के चिकने-चुपड़े और फैशनेबिल दिखाई पड़ने पर भी भीतर से वे खोखले हो जाते हैं। यही कारण है कि जहाँ सूखी रोटी खाने वाले बहुसंख्यक गरीब मजदूर और किसान सत्तर-अस्सी वर्ष की आयु तक भी अपनी रोटी आप कमाने लायक बने रहते हैं, ये अमीर कहलाने वाले प्रायः साठ वर्ष के आस-पास ही अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देते हैं और अन्तिम दो चार वर्षों में तो मरीज और अपाहिज बनकर पलंग पर ही पड़े रहकर डॉक्टरों के सहारे अपने दिन पूरे करते हैं।

सारांश यही है कि इस समय समाज में जो श्रम-विभाजन का नियम चल रहा है, उसके फलस्वरूप एक ऐसा वर्ग उत्पन्न हो गया है, जो केवल मानसिक या बौद्धिक श्रम को अपनाकर शारीरिक श्रम से बिल्कुल हट गया है। केवल अर्थ-लाभ के लिये ही नहीं, सामाजिक श्रेष्ठता और उच्चता के ख्याल से भी उसने शारीरिक श्रम द्वारा उपार्जन को 'नीचा' मान रखा है। इसका परिणाम उनके और समाज दोनों के लिये हानिकारक हो रहा है। केवल मानसिक और आराम के कामों में लगे रहने से इन लोगों को शारीरिक शक्तियाँ कुण्ठित होती हैं, आलस्य, प्रमाद और अन्त में अनेक प्रकार की शारीरिक निर्बलताओं में ग्रसित होना पड़ता है। इससे आगे चलकर मानसिक और बौद्धिक शक्तियों का विकास भी रुक जाता है, तो वे भी स्वल्प साधनों में प्राप्त अपने सन्तोष और शान्ति से विरक्त होकर 'आराम वाला काम' को ढूँढ़ने लगते हैं, जिससे उनकी शक्तियों का व्यर्थ में ह्रास होता है। इसलिये अपने और समाज के कल्याण की दृष्टि से हमको आज ऐसे श्रम की श्रेष्ठता के सिद्धान्त को समझकर उस पर आचरण करना चाहिये, जिससे हमारा शारीरिक और मानसिक विकास समुचित दिशा में हो सके और समाज को भी हम एक स्वस्थ आदर्श दे सकें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दीर्घ जीवन के रहस्य

आरोग्य और दीर्घ जीवन इस तरह प्राप्त करें

स्वास्थ्य रक्षा के नियमों में सभी सरल और स्वाभाविक हैं। उनमें न कोई कठोर है और न कष्ट साध्य। कठिन तो दुष्कर्म होते हैं। चोरी उठाईगीरी, छल आदि दुष्कर्म करने के लिए असाधारण चतुरता और कुशलता की आवश्यकता पड़ती है किन्तु सच्चाई, ईमानदारी की राह पर चलना किसी अल्प बुद्धि वाले के लिए भी सरल है। इसी प्रकार प्रकृति-प्रेरणा के अनुरूप जीवन-यापन पशु-पक्षी भी कर लेते हैं और आजीवन निरोग बने रहते हैं। सृष्टि के सभी जीवधारी जन्मते, बढ़ते वृद्ध होते और मरते हैं, पर बीमार कोई नहीं पड़ता। अन्य पशु-पक्षियों में कदाचित ही कभी कोई रोगी देखा गया हो। संसार में एक ही मूर्ख प्राणी है, जो आये दिन बीमार पड़ता है, वह है—मनुष्य उसके चंगुल में फँसे हुए पालतू पशु भी बीमार होते पाये जाते हैं। मनुष्य ही है जो स्वयं बीमार पड़ता है और अपने सम्पर्क अधिकार के अन्य प्राणियों को बीमार करता है। यह अभिशाप असंयम का-प्रकृति प्रेरणा के विपरीत आचरण करने का है यदि कुचाल चलने की मूर्खता को छोड़ दिया जाय तो सृष्टि अन्य प्राणियों की तरह मनुष्य के लिए भी सक्षम और निरोग जीवन-यापन नितान्त सरल एवं सम्भव हो सकता है।

प्रकृति प्रेरणा का अनुगमन करके सभी जीवधारियों ने अपने शरीरों को निरोग बनाये रहने का वरदान पाया है। मनुष्य के लिए भी एकमात्र रास्ता यही है। प्रकृति के नियमों को झुठलाया नहीं जा सकता। उसके उल्लंघन की क्षमता मनुष्य में नहीं है। यहाँ बरती गई चतुरता में लाभ नहीं हानि ही हानि है। प्रकृति से लड़कर नहीं हम उसका अनुगमन करके ही चैन से रह सकते हैं। यह तथ्य यदि हृदयंगम किया जा सके तो मनुष्य जाति के सामने खड़ी स्वास्थ्य सङ्कट की विषम विभीषिका से सहज ही छुटकारा पाया जा सकता है। यदि सही राह पर चलने का साहस जुटाया जा सके—विकृत जीवन क्रम अपनाये रहने का दुराग्रह छोड़ा जा सके तो आरोग्य रक्षा, निरोगता एवं दीर्घ जीवन की समस्या का सहज ही समाधान हो सकता है। कुछ थोड़े से नियम अनुशासन ही ऐसे हैं, जिन्हें यदि दृढ़तापूर्वक अपनाया और स्वभाव का अङ्ग बनाया जा सके तो न केवल बिगड़े हुए स्वास्थ्य को ही सुधारा जा सकता है, वरन् संयम साधना के फलस्वरूप मिलने वाली बलिष्ठता एवं दीर्घ जीवन का वरदान भी पाया जा सकता है। इस प्रकार के नियमों में सात प्रमुख माने गये हैं। इन्हें आरोग्य सूर्य के सप्त वर्ण, सप्त किरणें भी कहा जा सकता है।

(१) कड़ी भूख लगने पर ही खाया जाय। जब तक पेट की तीव्र माँग न हो तब तक मुँह में कुछ भी न डाला जाय। जब खाना हो तब आधा पेट आहार से भरा जाय। चौथाई पानी के लिए और चौथाई हवा के लिए खाली रखा जाय। ठूँस-ठूँसकर इतना न खाया जाय कि आलस्य आने लगे और काम करना कठिन हो जाय। मुख के ग्रास को इतना चबाया जाय कि वह पतला होकर सहज ही गले से नीचे उतर जाय। दिन में दो-बार खाना पर्याप्त है। बीच-बीच में बकरी की तरह कुछ-कुछ खाते रहने का स्वभाव न बनाया जाय। प्रातः जलपान में भारी चीजें न ली जायें। दूध, छाछ, फलों का रस, शाक का सूप जैसे पतले पदार्थ ही जलपान के लिए पर्याप्त समझे जाय। तीसरे प्रहर पड़े तो ऐसे ही सरल पदार्थ लिये जा सकते हैं।

(२) खाद्य-पदार्थों को न्यूनतम अग्नि संस्कारित किया जाय। तेल, घी में तलने-भूनने की रीति अपनाकर उनका जीवन तत्व समाप्त न किया जाय। सब्जियों को उबाल लेना पर्याप्त है। जहाँ तक हो सके अन्न फल, शाक, छिलके समेत ही लिया जाय। छिलके वाले भाग में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार का अधिक महत्वपूर्ण तत्व रहता है। दालें साबुत ही पकाई जाँय। तेज आग पर पकाने से खाद्य पदार्थों के जीवन तत्व जल जाते हैं इसलिए उन्हें मन्दी आग पर पकाया जाय। अच्छा तो भाप से पकाना है। इसके लिए स्टीम कुकर का उपयोग किया जा सके तो उत्तम है। मौसमी फल कच्चे शाकों का सलाद, कच्चे अन्न, अंकुरित धान्य, दूध, दही जैसे सात्विक एवं पौष्टिक पदार्थ ही उपयोग में लाये जाँये। मिष्ठान्न, पकवान, गरिष्ठ, अधिक चिकनाई एवं मसाले पड़े भोजन से बचा जाय। आचार, चटनी जैसे उत्तेजक पदार्थों से बचा जाय। थाली में अधिक संख्या में वस्तुएँ न रहें। उनकी संख्या जितनी कम रहे उतनी ही पाचन में सुविधा रहेगी।

(३) शारीरिक श्रम इतना किया जाय, जिससे थककर गहन निद्रा का आनन्द लिया जा सके। शरीर से कम और मस्तिष्क से अधिक काम लेने वाले अक्सर बीमार पड़ते हैं। पशु-पक्षी सारे दिन आहार की तलाश में दिन भर भागते-दौड़ते, उड़ते-उछलते रहते हैं इसलिए उनके शरीर निरोग एवं बलिष्ठ बने रहते हैं। हमारी जीवनचर्या में भी शारीरिक श्रम के लिए समुचित स्थान होना चाहिए। व्यायाम में स्वास्थ्य सम्वर्धन साधना का मनोयोग जुड़ा रहता है इसलिए उससे दुहरा लाभ है। शरीर की स्थिति के अनुरूप हलके-भारी थोड़े-बहुत व्यायाम का क्रम भी दिनचर्या में जोड़कर रखा जाय। उनके काम-काज में हाथ बँटाना, टूट-फूट की मरम्मत, सफाई घरेलू शाक-वाटिका, गृह-उद्योग, चक्की पीसना जैसे कामों में परिवार के सभी लोग भाग लेते रहें तो शारीरिक श्रम के अतिरिक्त सुव्यवस्था, आर्थिक लाभ भी मिलेगा और सुरुचि, सुसज्जा का वातावरण दृष्टिगोचर होगा। रुग्ण दुर्बल व्यक्ति भी चारपाई पर पड़े-पड़े अंग सञ्चालन व्यायाम करते रह सकते हैं। मालिश से भी इस प्रयोजन की पूर्ति होती है। श्रम शारीरिक स्थिति के अनुरूप हो। काम या दबाव से वह इतना अधिक न हो जाय कि अत्यधिक शक्ति नष्ट होने से थकान चढ़ी रहे और जीवन संकट उत्पन्न होने लगे। श्रम और विश्राम का सन्तुलन मिलाकर चला जाय तो ही बात बनती है।

(४) स्वच्छता से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की व्यवस्था बनी रहती है। घर, आँगन, कपड़े, बिस्तर, बर्तन, खाद्य-पदार्थ, पानी आदि में गन्दगी न रहने पाये इसके लिए सतत् सतर्कता बरतने और उन्हें स्वच्छ रखने के उपाय बरतने की आवश्यकता होती है। खुली धूप और हवा का घरों में प्रवेश रहना चाहिए। सीलन, घुटन, के वातावरण में रहने से रुग्णता आ घेरती है। वृक्ष, पौधे, बेलें, फूल, तुलसी आदि की हरियाली घर, आँगन में रहे तो उससे सुन्दरता सुसज्जा के अतिरिक्त स्वच्छ वायु का लाभ भी मिलता है। टट्टी, पेशाब, स्नानघर, नाली, कूड़ेदान, बरतन माँजने का स्थान, रसोईघर आदि की सफाई पर विशेष रूप से ध्यान रखा जाय। प्रायः इन्हीं स्थानों पर गन्दगी जमती और रुग्णता पलती है। मक्खी, मच्छर, खटमल, पिस्सू, मकड़ी, जुए आदि बढ़ने, पलने न पायें, इसकी सतर्कता रखी जाय। फिनायल, चूना, साबुन, डिटोल आदि का समय-समय पर उपयोग करते रहा जाय। बुहारी और झाड़न जल्दी और बार-बार काम में लाये जाँय। गरम पानी और धूप का उपयोग सफाई में सहायक सिद्ध होता है। स्नान तौलिये से रगड़कर इस प्रकार किया जाय कि किसी भी अवयव पर मैल की परत जमा न रहने पाये दाँत, मुख एवं अन्य छिद्रों की सफाई पर विशेष ध्यान रखा जाय।

(५) नियमितता का सदा ध्यान रखा जाय। यथा सम्भव दिनचर्या नियत निर्धारित रखी जाय, जिनकी नौकरी में डयूटी बदलती रहती है या दिन-रात भाग-दौड़ करनी पड़ती है, उन्हें भी स्थिति के अनुरूप अपनी दैनिक समय व्यवस्था बनाते और बदलते रहना चाहिए। जिनकी कार्य-पद्धति नियत निर्धारित है, उन्हें तो समय का विभाजन करने और दृढ़तापूर्वक पालन करने की बात ध्यान में रखनी ही चाहिए। जल्दी सोना और जल्दी उठना बहुत अच्छी आदत है। प्रातः काल का समय जिन कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है, उनमें अधिक सफलता मिलती है। सबेरे जल्दी उठना उन्हीं के लिए सम्भव है, जो रात को जल्दी सोते हैं। अन्यथा निद्रा पूरी न हो सकेगी। इन्द्रियों से सीमित काम लिया जाय। रात्रि को तेज प्रकाश में आँखों पर दबाव डालने वाले काम न किये जाँय। ब्रह्मचर्य का अधिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पालन किया जाय। समय विभाजन में नित्यकर्म, आजीविका, विश्राम, मनोरञ्जन, परिवार व्यवस्था, स्वाध्याय, उपासना, लोक सेवा के सभी पक्षों का समावेश रखा जाय। उपार्जन में हर पूरा समय न खपा दिया जाय।

(६) चित्त को हर घड़ी प्रसन्न रखा जाय। जिन्दगी को खेल की तरह जिया जाय। हर काम उत्साह और मनोयोग के साथ किया जाय, पर सफलता असफलता से अत्यधिक उद्विग्न न बना जाय। तैयारी बड़ी से बड़ी करें किन्तु असफलता हाथ लगने पर सन्तुलन बनाये रखने की मनः स्थिति भी रखे रहें। मन पर छाये रहने वाले निराशा, भय, आशंका, भीरुता, आत्म-हीनता, संकोच जैसे अवसाद और क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, प्रतिशोध, चिन्ता, उद्विग्नता, कामुकता जैसे आवेश केवल हानि ही हानि करते हैं। ज्वार-भाटों की तरह मन को उछलने, गिरने न देना चाहिए। इसमें बहुमूल्य मनः शक्ति का दुरुपयोग होता है और प्रगति के लिए रचनात्मक चिन्तन करने की क्षमता ही नष्ट हो जाती है। मनोविकारों से उत्तेजित मस्तिष्क से अगणित शारीरिक और मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं। वासना, तृष्णा और अहंता की मात्रा जितनी बढ़ी-चढ़ी होगी, मस्तिष्क में उतनी ही आग जलेगी और उतनी ही अशान्ति रहेगी। जो है उस पर प्रसन्न रहा जाय, अधिक पाने के लिए उत्साहपूर्वक प्रयत्न किया जाय किन्तु अभीष्ट लाभ न मिलने पर खिन्न होने की आदत न डाली जाय। सादगी सच्चाई, ईमानदारी, सज्जनता, सहृदयता, प्रसन्नता भरा स्वभाव बना लेना और मानसिक सन्तुलन बनाये रहना बहुत बड़ा गुण है, जिसके आधार पर जीवन को सफलतापूर्वक जिया जा सकता है और आनन्दित रहा जा सकता है। ऐसी स्थिति रहने पर शारीरिक और मानसिक दोनों ही स्वास्थ्य की दृष्टि से अक्षुण्ण बना रहता है। महत्वाकांक्षा, जिम्मेदारी एवं आवश्यकताएँ उतनी ही बढ़ाई जाँय जितनी वर्तमान स्थिति के अनुरूप हों। अधिक बच्चे पैदा करने और इतनी अधिक लम्बी-चौड़ी योजना बनाना, जिनका ताल-मेल वर्तमान स्थिति के साथ न बैठता हो, जीवन-क्रम में नरक घोलने एवं स्वास्थ्य को नष्ट करने का मार्ग ही कहा जा सकता है। हल्की-फुल्की, हँसती-हँसाती, प्रसन्न, सन्तुष्ट, उत्साहित, आनन्दित और आशान्वित जिन्दगी जीने की रीति-नीति अपनाई जाय तो गरीबी और कठिनाइयों के रहते हुए भी आनन्द, उल्लास भरा निरोग जीवन जिया जा सकता है।

(७) स्वास्थ्य संरक्षण के लिए नैतिक और सामाजिक मर्यादाओं का पालन आवश्यक है। दुष्टता, अनीति और उच्छृङ्खलता अपनाने वाले व्यक्ति भरपूर सुख-सुविधाओं के रहते हुए भी आत्म-प्रताड़ना सहते रहते हैं और शोक सन्ताप भरा जीवन जीते हैं। आहार-विहार से स्थूल शरीर—सन्तुलन और सत् चिन्तन से सूक्ष्म शरीर का—एवं सौजन्य सद्भाव के कारण शरीर का स्वास्थ्य संरक्षण होता है। मात्र हाड़-मांस का शरीर ही सम्पूर्ण आरोग्य का केन्द्र नहीं है। जीवात्मा के तीनों ही शरीर मिलकर समग्र स्वास्थ्य की संरचना करते हैं। अस्तु नैतिक एवं उदार जीवन-क्रम अन्तरात्मा को सबल रखता है और उसके आधार पर मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य की रक्षा होती है। चरित्रनिष्ठ और समाजनिष्ठ रहने वाले सदाचारी एवं उदार लोक-सेवी प्रकृति के मनुष्य ही सम्मान पाते हैं, प्रसन्न, सन्तुष्ट और प्रफुल्लित रहते हैं, लोक-परलोक सुधारते हैं और जीवन-लक्ष्य पूरा करने में सफल होते हैं। शारीरिक आरोग्य तो अन्तःकरण की उत्कृष्टता का सामान्य से सहज प्रतिफल मात्र है।

लम्बी उम्र के तीन साधन—

आरोग्य मनुष्य की साधारण समस्या है। थोड़े से नियमों का पालन, साधारण-सी देख-रेख से वह पूरी हो जाती है किन्तु उतना ही जब मनुष्य भार समझकर पूरा नहीं करता तो उसे कडुआ प्रतिफल भुगतना पड़ता है। थोड़ी-सी असावधानी से बीमारी तथा दुर्बलता को निमन्त्रण दे बैठता है। रहन-सहन में यदि पर्याप्त संयम रखा जाय तो कुछ थोड़े से नियम हैं, जिनका पालन करने से मनुष्य लम्बी आयु स्वास्थ्य का सुखोपभोग प्राप्त कर सकता है। उनमें से तीन प्रमुख हैं—(१) प्रातः जागरण (२) ऊषा पान (३) वायु सेवन। यह तीनों ही नियम सर्वसुलभ और रुचिकर हैं, इनमें किसी तरह की कोई कठिनाई नहीं जिनका पालन न हो सके या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिसके लिये विशेष साधन जुटाने की आवश्यकता पड़े।

प्रातः जागरण को संसार में सभी लोगों ने स्वास्थ्य के लिए अतिशय हितकर माना है। अंग्रेजी कहावत है "जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्य को स्वस्थ धनवान और बुद्धिमान बनाता है।" शास्त्रकार का कथन है—

"ब्राम्हे मुहुर्ते उत्तिष्ठेत्स्वस्थेऽरक्षार्थमायुषः।"

प्रातः काल ब्रह्मा मुहूर्त में जाग उठने से तन्दुरुस्ती और उम्र बढ़ती है।

वेद का प्रवचन है—

यदद्य सूर उदितोऽनागा मित्रो अर्यमा। सुवाति सविता भगः।। —साम १३/५१

अर्थात्—प्रातःकालीन प्राण वायु सूर्योदय के पूर्व तक निर्दोष रहती है अतः प्रातःकाल जल्दी उठना चाहिए, इससे स्वास्थ्य और आरोग्य स्थिर रहता है तथा धन की प्राप्ति होती है।"

सन्त **विनोबा** का कहना है—"रात में नींद लेने के बाद शरीर की वृद्धि हो जाती है। उसे कायम रखने के लिये सुबह जल्दी उठ जाना चाहिए। उस समय दिमाग ताजा रहता है, कोई आवाज नहीं होती, सृष्टि की अनुकूलता होती है इसलिये उस वक्त बुद्धि-ज्ञान-ग्रहण के लिये जाग्रत रहती है।"

स्वामी विवेकानन्द का कथन है—सूर्योदय से पूर्व उठने से शरीर स्वस्थ रहता है तथा बुद्धि का विकास होता है।"

सिक्खों के धर्म ग्रन्थों में आया है—"अमृत बेला सचनाऊ' अर्थात् प्रातःकाल जल्दी न उठने से बुद्धि मन्द पड़ जाती है, मेधा नहीं बढ़ती और स्वास्थ्य गिर जाता है।

स्वेटमार्डन ने लिखा है "यदि आप चाहते हैं कि आपकी आयु अधिक हो, बुढ़ापा आप से दूर रहे, आपका शरीर पूर्ण स्वस्थ बना रहे तो आप प्रातः काल जल्दी उठा कीजिये।"

आरोग्य रक्षा के नियमों में प्रातःकाल जागने में विश्व एक मत है। यह जानी हुई बात है कि दन भर के कार्यों दौड़-धूप आदि से जो धरती में हलचल उत्पन्न होती है, उससे प्राकृतिक वातावरण अशान्त हो जाता है। धूल के कण, कार्बन-तत्व और अन्य विषैले पदार्थ हवा के साथ आकाश में भर जाते हैं, इनका स्वास्थ्य पर दूषित प्रभाव पड़ता है। उस वायु में स्थूल तत्व अधिक होते हैं और प्राण की मात्रा कम होती है, जिससे मनुष्यों के शरीरों में भी स्थूलता तो बढ़ती है और प्राण-संचय अवरुद्ध होता है। दिन भर का कोलाहल रात में शान्त होने लगता है और तीसरे पहर अर्थात् प्रातःकाल तक वह सारा ही गर्द गुवार जमीन में बैठ जाता है, जिससे प्राण-वायु निर्दोष हो जाती है। इस वातावरण में स्वाभाविक साँसें लेने पर भी प्राण की इतनी मात्रा शरीर में एकत्रित हो जाती है, जिससे सारे दिन तबियत प्रसन्न रहती है और ताजगी बनी रहती है। इससे प्राण का संचित कोष रीतता नहीं और आरोग्य स्थिर बना रहता है। इससे प्राण में इतनी जीवट होती है, जो दिन भर के विषैले पदार्थों से लड़कर उसे समाप्त कर देने में सफल हो जाती है और शरीर पर कोई दूषित आघात पड़ने नहीं पाता। इस प्राण-विद्युत के संचय के लिये प्रातःकाल जल्दी जाग उठना सब प्रकार मंगलकारी होता है।

इन लाभों को जानते हुए भी लोगों को शिकायत रहती है कि प्रातःकाल उनकी नींद ही नहीं टूटती, यदि प्रयत्न करें और जागकर बैठ जायें तो आलस्य दूर नहीं होता। शरीर को जितने विश्राम की आवश्यकता होती है, वह पूरी न हो तो आलस्य आना, जम्हाइयाँ आना स्वाभाविक है। यह शिकायत उन्हीं को हो सकती है, जिनकी नींद पूरी न होती हो। ऐसा तभी सम्भव है, जब वह देर से सोता हो। इसलिये प्रातःकाल जल्दी उठने के लिये यह आवश्यक है कि शाम को यथा सम्भव जल्दी ही आवश्यक कार्यों से निबटकर सो जाय। सोकर जाग जाने का अर्थ केवल चारपाई पर बैठ जाना नहीं होता वरन् उस समय का उपयोग भी होना चाहिए।

सूर्योदय से पूर्व शैय्या त्यागते ही बिना शौचादि गये शाम के रख हुए जल का पान करना 'ऊषापान" कहलाता है। जल की मात्रा एक पाव से लेकर तीन पाव तक हो सकती है। जिस बर्तन में जल रखा हो वह ताँबे का हो तो अधिक अच्छा है यदि वह सम्भव न हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तो किसी भी स्वच्छ बर्तन में ढककर रखा जा सकता है।

वैद्यक ग्रन्थों में ऊषापान को 'अमृत-पान' कहा गया है, स्वास्थ्य के लिए उसकी बड़ी प्रशंसा की गई है और यह बताया गया है कि जो प्रातःकाल नियमित रूप से जल पीते हैं, उन्हें बवासीर, ज्वर, पेट के रोग, संग्रहणी, मूत्र रोग, कोष्ठबद्धता, रक्त-पित्त विकार, नासिका आदि से रक्त-स्राव, कान, सिर तथा कमर के दर्द, नेत्रों की जलन आदि व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। वैद्यक ग्रन्थों में लिखा है—

सवितुरुदयकाले प्रसृतीः सालिकस्य पिवेदष्टौ।
रोग जरा परियुक्तो, जीवेद्वत्सर शतं-साग्रमा।।

अर्थात्—सूर्योदय से पूर्व आठ अञ्जुलि जल पीने से मनुष्य कभी बीमार नहीं पड़ता, बुढ़ापा नहीं आता और सौ वर्ष से पूर्व मृत्यु नहीं होती।

प्रातःकाल जल पीने से आँतों में लगा हुआ मल साफ होता है और उनमें पुष्टता आती है। गुर्दे शक्तिशाली बनते हैं। आँख की ज्योति बढ़ती है बाल सफेद नहीं होते, बुद्धि तथा शरीर निर्मल रहता है, जिससे वह सब प्रकार के रोगों से बचा रहता है। प्रातःकाल जल पीना आरोग्य रक्षा की दूसरी महत्वपूर्ण कुँजी है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से प्रातः जागरण का वास्तविक लाभ वायु सेवन से है। यदि कोई प्रातःकाल उठकर कुछ दूर शुद्ध वायु में घूमने जाया करे तो निश्चय ही उसकी आयु लम्बी होगी। जिस स्थान पर मनुष्य तथा अन्य प्राणी बहुतायत से निवास करते हैं, उनके द्वारा निरन्तर साँस छोड़ने तथा चीजों को मैला करते रहने से उस स्थान का वातावरण शुद्ध नहीं रहता। वायु में दोष आ जाने से वह लोगों के स्वास्थ्य को भी प्रभावित करता है। किन्तु आबादी के बाहर के स्थान वृक्षों द्वारा निरन्तर शुद्ध किये जाते रहते हैं इसलिये गाँव या नगर से बाहर के शान्तमय वातावरण में कुछ देर रहकर आरोग्य लाभ का अवसर प्राप्त किया जा सकता है। भ्रमण से जहाँ व्यायाम की आवश्यकता पूरी होती है, वहाँ बाहर की शुद्ध वायु का लाभ मिलता है। भ्रमण ऐसे ही शुद्ध-बगीचों वाले स्थानों की ओर करना चाहिए। खुले आसमान की ओस-भरी दूब में नंगे पाँव घूमने से शरीर को अपार शक्ति मिलती है।

स्वास्थ्य व आरोग्य रक्षा के लिए यह तीन अचूक नियम हैं। स्वास्थ्य जैसी साधारण समस्या के लिए किसी कठोर व्रत की आवश्यकता नहीं है कोई व्यक्ति इन नियमों का पालन करते हुए अरोग्य लाभ प्राप्त कर सकता है। यह तीन प्रहरी ऐसे हैं, जो सब तरफ से हमारे स्वास्थ्य की रक्षा और शरीर को पोषण प्रदान करते हैं, इन्हें सजग रखें तो कोई रोग तथा शारीरिक व्याधि हमें कष्ट व पीड़ा न दे सकेगी।

दीर्घ जीवन के स्वर्ण सूत्र—

जब हम कुछ व्यक्तियों को दीर्घजीवी रहते हुए सुनते हैं तो यह विचार सहज ही उत्पन्न हो जाता है कि क्या हम उतनी लम्बी आयु प्राप्त नहीं कर सकते ? हम जानते हैं कि दीर्घ जीवन के लिए किन-किन उपायों का पालन करना चाहिए फिर भी हम उन उपायों की उपेक्षा करते हैं और दीर्घ जीवन के नियमों का पालन नहीं करते। हमारे पूर्वजों का तो यहाँ तक विश्वास था कि हम जब तक चाहें तब तक जीवित रह सकते हैं। इसके लिए भीष्म पितामह का उदाहरण प्रत्यक्ष है, जिन्हें इच्छा मत्यु की सिद्धि प्राप्त थी।

दीर्घजीवन के लिए हमारे मन में वह विश्वास होना आवश्यक है कि हम कम आयु में मृत्यु को प्राप्त नहीं होंगे। यदि आप यह आस्था बना लें कि हम सौ वर्ष से कम आयु में मृत्यु को प्राप्त नहीं होंगे तो विश्वास मानिये कि आपकी आयु सौ वर्ष तक अवश्य पहुँचेगी। आपका यह विश्वास जितना ही दृढ़ होता जायेगा, उतनी ही आयु बढ़ती जायेगी। परन्तु, यदि आप यही मान बैठें कि कल का भी पता नहीं, शायद मृत्यु कल ही आ घेरे तो आपका ऐसा विश्वास आपको जीवितावस्था में ही मृत्यु के गड्ढे में धकेल देगा। दूसरे शब्दों में आप जीते जी ही मृतक के समान हो जायेंगे। आपका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आन्तरिक संशय ही आपको मृत्यु के मुख तक पहुँचाने में सहायक होगा।

दूसरा विश्वास शरीर के निरोग होने का है। जो लोग यह मानते हैं कि हमें कोई रोग नहीं है, उनके रोग-ग्रस्त होने पर भी, रोग के कीटाणु शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। परन्तु, इसके विपरीत जो लोग निरोग होते हुए भी अपने रोग-ग्रस्त होने की शंका से त्रस्त रहते हैं, वे धीरे-धीरे रोगी होते जाते हैं। उनका वहम ही उन्हें रोगी बना देता है। जो लोग क्षय-ग्रस्त नहीं हैं, उन्हें आधुनिक चिकित्सक टी. वी. का रोग बता दें तो उन्हें टी. वी. हो ही जाती है। ऐसा कई रोगियों के सम्बन्ध में हो चुका है। कहते भी हैं कि वहम की दवा तो लुकमान के पास भी नहीं थी।

जहाँ आशंका नहीं वहाँ रोग का क्या काम ? जहाँ विश्वास नहीं वहाँ जीवन कैसा ? साधारण-सा रोग होने पर आप उसके लिए बढ़ने की शंका मत कीजिए, परन्तु रोगशामक उपाय अवश्य करते रहिये। इससे आपका रोग निर्मूल हुए बिना न रहेगा।

दीर्घजीवी होने पर तीसरा उपाय है चिन्ता से निवृत्ति। मन में किसी प्रकार की चिन्ता है तो सम्पूर्ण प्रसन्नता नष्ट हो जाती है और धीरे-धीरे स्वास्थ्य भी चौपट हो जाता है। जो व्यक्ति लम्बे समय तक जीवित रहना चाहते हैं, उन्हें ऐसे प्रयत्न करने चाहिए कि वे चिन्ता से मुक्त रह सकें और यह तभी संभव है, जब हम अपने कार्यों को परिश्रमपूर्वक और दत्तचित्त होकर करें। जो व्यक्ति न्यून प्राप्ति में अधिक सन्तोष अनुभव करता है, उसे चिन्ता का घुन नहीं लगता।

दीर्घजीवी होने के लिए खान-पान को भी नियमित रखना चाहिए। यह माना कि संसार में सभी वस्तुएँ उपभोग के योग्य हैं, परन्तु किसी भी की अति हानिप्रद है। अधिक भोजन से बदहजमी होना सम्भव ही है। अधिक मीठा भी हानिप्रद है, बार-बार खाने की प्रवृत्ति भी मनुष्य को रोगी बनाती है। इसीलिए आचार्यों ने भोजन के समय निश्चित किये हैं। इसके अनुसार अधिक से अधिक प्रतिदिन तीन बार भोजन करना चाहिए।

शौच, स्नान, निद्रा, आहार, विहार सभी की सीमाएँ बाँधकर हमारे जीवन को सुव्यवस्थित कर दिया गया है, फिर भी हम नियमों का उल्लंघन कर रोगों को आमन्त्रित करें तो इसमें हमारा अपना ही दोष समझा जायेगा।

हमारे ऋषियों ने योगदानों द्वारा दीर्घजीवी होने के उपाय ढूँढ़ निकाले थे और आज भी आसन पद्धति से स्वास्थ्य लाभ किया जाता है। जो लोग आसन पद्धति को नहीं अपना सकते, उनके लिए विभिन्न व्यायामों को सृष्टि की गई है। प्राचीन भारतीय पद्धति के अनुसार दण्ड-कसरत का ऐसे ही व्यायामों में समावेश है। परन्तु आधुनिक प्रणाली के अनुसार विभिन्न खेलों को, भाग-दौड़, तैरना, कूदना आदि के रूप में व्यायामों को प्रश्रय दिया गया। यह सभी हमारे स्वस्थ रहने में सहायक सिद्ध होते हैं।

आज के युग में व्यायाम का एक सरल रूप टहलना है। अधिकांश शहरी व्यक्ति टहलने जाते और स्वस्थ रहते हैं। इससे मन भी प्रफुल्लित रहता और ताजी वायु भी प्राप्त हो सकती है। प्रातःकाल सूर्योदय से पहले ही भ्रमण कर लौट आया जाय तो मनुष्य को बहुत कुछ लाभ हो सकता है। जो लोग रोगी हैं, वे भी प्रायः भ्रमण द्वारा अपने शरीर को स्वस्थ बना सकते हैं।

पानी का भी हमारे शारीरिक स्वास्थ्य पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। हल्का पानी शरीर को भारी नहीं होने देता, इसके विपरीत भारी पानी, मीठा होते हुए भी शरीर में भारीपन ला देता है और उससे मन की प्रसन्नता नष्ट हो जाती है। यदि अच्छा और हल्का कूप-जल पीने की आदत डाली जाय तो शरीर में रोग भी प्रायः उत्पन्न न हो। यह ध्यान रहे कि जल में कृमियाँ न पड़ें, इसके लिए दो-तीन महीने में एक बार कोई कीटाणुनाशक दवा कुएँ में डाल देनी चाहिए।

इस प्रकार कुछ सावधान रहने, नियम पालन करने और मन को प्रसन्न रखने से दीर्घजीवन प्राप्त किया जाना सम्भव है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हमारे स्वास्थ्य के निर्देश हम स्वयं हैं। वह इस बात पर निर्भर करता है कि हम कहाँ तक प्रकृति के साथ सहयोग करते हैं और कहाँ तक उसके मार्ग में बाधा डालते हैं। विश्व के काम के इस अंश को ईश्वर ने प्रकृति के सुपुर्द कर दिया है और वह उसके काम में दखल देना नहीं चाहता। एक समय था, जब मनुष्य रोग के स्वरूप, उसके कारण और उपचार के बारे में एकदम अनजान था। वह यह समझता था कि रोग देव-देवियों द्वारा मनुष्यों से किये गये पापों और अपराधों का दण्ड है। पर आज समय बदल गया है। आज शीतला देवी (चेचक) पूजा से नहीं, इलाज से शान्त हो जाते हैं। हैजा, प्लेग, इन्फ्लुएन्जा तथा इसी प्रकार की अन्य भयानक एवं संक्रामक बीमारियाँ संसार के कई उन्नत देशों से समाप्त हो चुकी हैं। अतः स्वास्थ्य के कुछ ऐसे सरल नियम हैं, जिनका पालन करने से मनुष्य की औसतन आयु १०० या इससे अधिक वर्ष तक भी जा सकती है। खास-खास नियम ये हैं—

(१) जीवन को निरन्तर पोषक तत्त्व मिलने चाहिए, हमारा भोजन पुष्टिकारक व शुद्ध हो। केवल स्वाद के लिए मिर्च मसाले, तली हुई चीजें, चाय, कॉफी, तम्बाकू और विशेषतः शराब से बचना चाहिए। सादी रोटी, शाक-सब्जी, दाल, दूध ये पदार्थ हैं, जिनकी आवश्यकता मनुष्य को शरीर स्वास्थ्य के लिए है। हमें इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि हम उतना ही खावें, जितना हम आसानी से हजम कर सकते हैं।

(२) दूसरी चीज आवश्यक है नियमित व्यायाम। शहर से बाहर विशेषतः खुली हवा में प्रतिदिन २-३ मील टहलना चाहिए। यह सम्भव न हो तो घर के भीतर व्यायाम किया जाये। व्यायाम न तो बहुत हलका ही हो और न बहुत भारी। कमजोर व्यक्तियों और दिल की धड़कन के रोगियों के लिए टहलने का व्यायाम लाभदायक है।

(३) खाने, पीने, सोने और काम करने की हमारी आदतें नियमित होनी चाहिए। अधिक बोलने से भी बचना चाहिए। हँसी-मजाक व आमोद-प्रमोद जीवन के लिए उपयोगी है पर परिमित मात्रा में ही। हमें सदा सक्रिय रहना चाहिए। सुस्ती और काहिली का शिकार नहीं होना चाहिए। किसी अच्छे काम में जुटे रहना चाहिए। इसमें शरीर-श्रम सभी शामिल हों। बिना कुछ न कुछ शरीर-श्रम किये हमें भोजन भी न करना चाहिए।

(४) बीमारी की हालत में आराम करना चाहिए तथा चिन्ताओं और बहुत अधिक सोच-विचार से बचना चाहिए। हमें केवल रोगनाशक ही नहीं बल्कि कुछ ऐसी औषधियों का सेवन करना चाहिए, जो शमन करने वाली हों और केवल प्रकृति के स्वाभाविक कार्य में सहायता करती हों। इस दृष्टि से प्राकृतिक या होम्योपैथी चिकित्सा सर्वाधिक लाभप्रद हो सकती है।

(५) सबसे अधिक महत्वपूर्ण और जरूरी बात मन को सब परिस्थितियों में स्थिर और शान्त रखना है। ऐसे कार्यों और साधनों की खोज करते रहिये, जिससे मन शान्त और प्रसन्न रह सके। प्रसन्नता और शान्ति का वातावरण दीर्घायु का परम-साधन है।

सात अनुभूत महामन्त्र—

सैंतीस वर्ष की आयु का एक तरुण रोगी शैय्या पर पड़े-पड़े एकटक निराशा और बेवसी से अस्पताल की छत की ओर देख रहा था। पन्द्रह दिन से वह अस्पताल के इसी कमरे में डाक्टर और नर्सों की देख-रेख में दवाइयाँ और इन्जेक्शन ले रहा है।

पर अभी हालत में कोई सुधार नजर नहीं आ रहा है।

वह इस दशा में है जिसमें जीवित अवस्था में ही क्षण-क्षण मृत्यु के दर्शन होते रहते हैं। उसके मित्र, हितैषी और सम्बन्धी उसकी मिजाजपूर्ति के लिए अस्पताल में उस कमरे में आते हैं। पूछते हैं—"आपकी तबियत कैसी है ?"

उत्तर में वह मायूसी से आँखें डबडबाये रहता है।

आह ! यह मनुष्य का जीवन भी कितना मधुर है ? इसमें कितने प्रियजन हैं ! मनुष्य ममता और मोह की कोमल रज्जु से बँधा है। जब मौत उस पर मँड़राने लगती है, तब ये कमनीय स्नेह सूत्र उसे अपनी ओर खींचते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब सारे मित्र, सारे प्रियजन और समस्त परिजन बिछुड़ते दीखते हैं तो हृदय के सैकड़ों टुकड़े ही हो जाते हैं। तभी वह समझ पाता है कि जिन्दगी कितनी बहुमूल्य हैं ?

एक बार स्वास्थ्य गिरने पर फिर विश्व की समस्त सम्पदा भी उसे वापिस नहीं ला सकती। आदमी के शरीर का हर अवयव बहुमूल्य है, जो जीवन में एक बार, केवल एक ही बार मिला है। खराब होने पर बदला नहीं जा सकता। अनन्त धन व्यय करने और उपचार की हद करने पर भी कार्नेरी को कोई लाभ नहीं हुआ था।

कार्नेरी बीमार चलता रहा। डॉक्टर इलाज करते-करते थक गये सब तरह की दवाइयाँ देकर हार गये। सारे परिवार वाले निराश हो गये। अनन्त धन व्यय करने और उपचार की हद करने पर भी कोई लाभ नहीं हुआ।

परिचितों से उस दुनिया से कूच करने की तैयारी में पड़े कार्नेरी के पास आना-जाना बन्द कर दिया। जाये भी कोई कब तक ! किसी के पास आते ही आँखों में आँसू और मौत की कटु चर्चा ! कौन दुःखी होने के लिए बार-बार मरीज के पास आता-जाता ?

हाय ! मृत्यु के घोर अन्धकार से घिरा हुआ कार्नेरी केवल सैंतीस वर्ष की तरुण आयु में रोग, व्याधि और कमजोरी से असहाय निरुपाय होकर संसार से विदा होने की तैयारी करने लगा।

यकायक कार्नेरी के मन में एक विचार आया—"यदि मरना ही निश्चित है, देर-सबेर दुनियाँ से कूच ही करना है, तो उसके लिए व्यर्थ ही फिक्र करने से क्या लाभ ? चिन्ता फिजूल ही मुझे परेशान कर रही है। जितने दिन, जितने क्षण जीना है, उतनी देर तो निश्चिन्त जी लेना चाहिए।"

अपनी मृत्यु निश्चित समझकर कार्नेरी ने जीवन की आशा में तड़पना छोड़ दिया।

वह धीरे-धीरे अपने मन को, "जितना जीवन बचा है, उसी को ठीक तरह व्यतीत करना चाहिए", विचार कर एकाग्र करने लगा। उसने अपना मन शान्त कर लिया और धीरे-धीरे ईश्वर का ध्यान करने लगा।

ज्यों-ज्यों उसका चित्त शान्त होता जाता था, त्यों-त्यों उसका मन जिन्दगी की अच्छी बातों की ओर लगता जाता था। उसके विचार उज्जवल होते गए। चिन्ता दूर हुई, तो वह अपने मन ही मन एक प्रकार के आराम का अनुभव करने लगा। उसे लगा कि स्वयं उसकी बीमारी, मौत, अस्वास्थ्य के दुःखदायी विचार भी बहुत कुछ परेशानी के कारण थे। अब वह कोई चिन्ताजनक विचार अपने मन में न आने देगा। "जितने क्षण जीना है, मौज-मजे में जीऊँगा। जब संसार के सब जीव, पक्षी, कीट, पतङ्ग अन्तिम पल तक आनन्द से जीते हैं, तो भला मैं मरने से बहुत पहले अपने अन्दर क्यों निराशा के घातक विचार लाऊँ ? ठीक है, मरना होगा तो मर जायेंगे। अभी से क्यों फिक्र में मरूँ ?"

चिन्ता हटी, तो पुरानी स्मृति साफ हुई ! उसने अपने बीते हुए जीवन पर विचार करना शुरू किया। उसकी स्मृति-पटल पर अपने शुभ चिन्तकों की दी हुई सलाहें याद आने लगीं—

"कार्नेरी ! अभी तुम समझते नहीं कि तुम्हारे इस अत्यन्त अनियमित जीवन क्रम का फल क्या होगा ? तुम समय पर खाने, समय पर विश्राम करने, सोन-जागने—किसी बात में भी ध्यान नहीं रखते। एक दिन तुम्हें अपने अस्त-व्यस्त अनियमित जीवन के लिये रो-रोकर पछताना होगा !"

उसे यह भी याद आया कि इस तरह के जवाब में उसने सलाह देने वाले हितैषी का कैसा मजाक उड़ाया था ? उसने उत्तर में कहा था—

"बूढ़ों का स्वभाव होता है कि वे तरुणों को मौज उड़ाते देखकर चिढ़ते हैं और अपनी वह तरह-तरह के उपदेश देकर और व्यर्थ की आलोचना करके निकाला करते हैं। वे चाहते हैं कि तरुण भी अपनी मौज-मस्ती को छोड़कर उनकी तरह ही बुढ़ापे का जीवन अपना लें। नाप-तोल कर खायें, घड़ी देखकर सोयें और मौज करने की चीजों से परहेज करें। यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बँधी-बँधी-सी कैदियों जैसी कोई जिन्दगी है ? व्यर्थ ही अपने को क्यों कैदी बना लिया जाये ? जिन्दगी तो मौज करने के लिए है। मनमाना खाओ-पीओ और आनन्द करो।" उसे अपने इन शब्दों पर आज आत्मग्लानि हो रही थी।

सिनेमा के फिल्म की तरह उसके स्मृति-पटल पर अपनी पुरानी अनियमित जिन्दगी के अनेक पहलू दृष्टिगोचर होने लगे।

उसे साफ दिखाई दिया कि वह किस बेदर्दी से बेतहाशा जिन्दगी काट रहा है। भक्ष्य-अभक्ष्य, उपयोगी-अनुपयोगी, उचित-अनुचित का कोई परहेज नहीं कर रहा है ! आज उसे सभी गलत और अविवेकपूर्ण दिखाई दिया। वह पछता रहा था ?

उसे यह भी प्रतीत हुआ कि कब कौन-सी गलती करने से कब कौन-सा अतिचार, अनुचित आचार, व्यवहार करने से उसके स्वास्थ्य की क्या हानि हुई है और कैसे वह बीमार होते-होते आज मृत्यु-शैय्या पर आ पड़ा।

"अब यदि मुझे फिर भविष्य मिल जाय, तो मैं बहुत कुछ कर सकता हूँ। एक बार मुझे जिन्दगी जीने का पुण्य अवसर मिलना चाहिए। हे ईश्वर ! एक बार मेरी पुरानी गलतियों को बख्श दे और फिर नये सिरे से मुझे जीने दे।

उसे अन्दर अपनी अन्तरात्मा से ऐसी ध्वनि आती प्रतीत हुई। "कार्नेरी इस बार तो अपनी अनियमित जिन्दगी के लिए तुझे माफ किया जाता है पर केवल इस शर्त पर कि तुम आगे के जीवन में परिष्कृत विचार, पवित्र आचार, युक्त आहार, निसर्ग सामंजस्य, समय की पाबन्दी पुरुषार्थ और परोपकार का ध्यान रखोगे।"

उसने मन ही मन कहा—"हे परमपिता, मुझे तुम्हारी ये सब शर्तें मंजूर हैं। नई जिन्दगी चाहिये, चाहे वह किसी शर्त पर क्यों न हो ?"

"तो यह लो, अभी से तू जीवन के बार में सोच, यौवन के उल्लास में तन्मय हो, उज्जवल भविष्य का सद्संकल्प कर अपने समाज के लिए उपयोगी जिन्दगी जीना शुरू कर। यह जिन्दगी तुझे कुछ ऊँचे आदर्श के उद्देश्य से फिर दी जा रही है।"

वह ज्यों-ज्यों सृजनात्मक ढंग से सोचता, त्यों-त्यों उसके विचार उज्जवल होते जाते। सुप्त मन से बीमारी के विचार हट गये। यौवन और जिन्दगी सरिता लहलहा उठी।

वह ज्यों-ज्यों भविष्य में नियम-निर्वाह और उपयोगी जीवन व्यतीत करने की बात सोचता, त्यों-त्यों उसके मन में एक उत्साह जागता, जिससे वह अपने आपको निरोग अनुभव करने लगता। डॉक्टरों की चिकित्सा से पहले लाभ नहीं हो रहा था, पर अब वे ही दवाइयाँ अमृत की बूटी बन गयीं। उसके मन में अपने स्वस्थ हो जाने में विश्वास हो गया था ! यह आत्म-विश्वास भी अब डॉक्टरों के साथ था।

फिर क्या था एक ही सप्ताह में कार्नेरी स्वस्थ हो गया, पर दुर्बलता अब भी शेष थी। यह प्राकृतिक, आहार, थोड़ा-बहुत प्रातःकाल भ्रमण, भगवत पूजन, स्वास्थ्य के विचारों में भ्रमण करने लगा। धीरे-धीरे दवायें कम करता गया। दूध, फल, शहद, खजूर मेवे, अन्जीर, किशमिश, टमाटर आदि उसके प्रिय भोजन बन गये। निराशापूर्ण चिन्तन का त्याग कर उसने हितकर सुन्दर साहित्य पढ़ना और स्वास्थ्य की दिशा में विचार करना आरम्भ कर दिया।

इस नये ढंग से परिवर्तन करने का उसके स्वास्थ्य पर इतना अनुकूल प्रभाव पड़ा कि उसे अखण्ड यौवन में विश्वास जम गया। उसने इस नये जीवन को ईश्वर का उपहार समझा। परमात्मा का कार्य करने के लिये वह अब जी रहा है। यह समझकर उसने परोपकार को प्रधानता दी।

अब उसने प्राकृतिक जीवन को प्रधानता दी। समय पर सायंकाल नौ बजे सोता, प्रातःकाल ५ बजे शौचादि से निवृत्त हो, स्नान करता, सद्साहित्य पड़ता, किसी परोपकार के कार्य का श्रीगणेश करता और उसी में दिलचस्पी लेता है।

दवा खाने के लिए नहीं जीता प्रत्युत जीने के लिए उपयोगी पौष्टिक आहार भी लेता। सिर्फ स्वाद के लिए माँस-मदिरा का सेवन उसने सदैव के लिए त्याग दिया। प्रत्येक कार्य के लिए समय का पालन करता, सदैव प्रसन्नचित्त रहता, चेहरे पर मधुर मुस्कान बनाये रहता और उपयोगी दिशा में ही सोचता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्ण स्वस्थ होने पर उसे लगा कि उसकी तरह स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों को तोड़कर सजा पाने और फलस्वरूप बीमार रहने वाले अनेकों लोग पड़े हैं। परोपकार के रूप में उसने अनुभवों का लाभ दूसरों को देने के लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी उपयोगी साहित्य लिखा, शुभ कार्यों के लिए सभा-समितियों का गठन किया और स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रवचनों एवं भाषण-मालाओं का आयोजन किया। दीर्घ जीवन और स्वस्थ रहने की शिक्षा के लिए उसने व्यायाम एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी संस्थाएँ बनायीं और लोकहितार्थ उनका संचालन किया।

उसने यह अनुभव किया कि व्यक्तित्व को परार्थ विकसित करने से लाभ होता है। दूसरों के लिए जीने से जीवन परिपुष्ट होता है, स्वार्थ ही संकुचित भावनायें रोग व्याधि पैदा करने वाली हैं। अतः जहाँ उसने स्वास्थ्य के लिए बहुत-से कार्य किये, वहाँ जन-रुचि को परिष्कृत करने और मानसिक विकास करने के लिए सांस्कृतिक मनोरंजन के कार्यक्रमों को प्रोत्साहित किया।

"बुढ़ापे की ओर बढ़ने पर यौवन-काल की उच्छृंखलता और अनुत्तरदायित्व की भावना नष्ट हो जाने से अधिक आयु वाला आदमी निश्चित और प्रसन्न रहता है। जवानी के बाद इच्छाओं महत्वाकांक्षाओं और वासनाओं की कमी होने से वह बड़ा सुखी हो जाता है। उसके सारे उद्वेग और क्रोधादिक विकार नष्ट हो जाते हैं।

कार्नेरी के विषय में सबसे आश्चर्यजनक बात अभी कहनी शेष है। आपकी जिज्ञासा है कि आखिर यह क्या बात है ?

रोग-शैय्या पर जो व्यक्ति क्षण-क्षण मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था और जिसकी समस्त उम्मीदें सुप्त हो चुकी थीं, स्वस्थ और निरोग होने से वह जीवन के प्रति उल्लसित हो उठा। जीवन में उसे नया सौन्दर्य और मिठास नजर आता। जीवन की उत्ताल तरंङ्गों में बहकर उसने विवाह कर लिया।

उसके एक पुत्री हुई। वह बड़ी हो गई और २०-२२ वर्ष में उसने उसका भी विवाह किया। वह इस पुत्री के बच्चों से बहुत समय तक घिरा रहता था। सौ वर्ष तक वह इसी प्रकार सुख-शान्ति और स्वास्थ्य का जीवन व्यतीत करता रहा। बच्चों से बहुत समय तक घिरे रहने के बाद हाथ में क्रास लेकर हँसते-हँसते उसने शरीर छोड़ा।

लोगों का कहना है कि कार्नेरी ने पूर्व निश्चित योजना के अनुसार ही जीवन और मरण दोनों को हँसते-हँसते वरण किया है। यदि वे चाहते तो इससे भी अधिक जीवित रह सकते थे, किन्तु एक दृष्टिकोण से सौ वर्ष की शान्त और तृप्त जिन्दगी मनुष्य के लिए पर्याप्त मानते थे।

जब वह मर रहा था, तो उसके ओंठ बुदबुदाये।

"आपका अन्तिम सन्देश क्या है ?"

अटक-अटक कर लड़खड़ाते शब्दों में बोले—"जो मनुष्य मेरे आत्म-अनुभूत जीवन के सात मूल-मन्त्रों के अनुसार अपना जीवन संचालित करेगा, मेरा आशीर्वाद है कि वह कम से कम सौ साल की स्वस्थ जिन्दगी भोगकर सुखपूर्वक संसार से विदा होगा।"

"आपके सात अनुभूत महामन्त्र क्या हैं ?"

वे बोले—गिनलो और इन्हें भूलो मत। १—निसर्ग सामंजस्य, २—समय का संयम, ३—युक्त आहार, ४—परिष्कृत विचार, ५—पवित्र आचार, ६—पुरुषार्थ और ७—परोपकार।

वह ज्योति आज भी बीमारों का मार्गदर्शन कर रही है।

दीर्घ जीवन के आध्यात्मिक कारण

दीर्घ जीवन एवं निरोग्यता का कारण केवल खान-पान, आहार-विहार ही नहीं वरन् मनोदशा भी है। कुविचारों में निरत रहने वाले व्यक्ति कितना ही बढ़िया खायें-पियें अपनी दुश्चिन्ताओं और दुर्भावनाओं के कारण स्वास्थ्य को खो न बैठते हैं और आन्तरिक आग में झुलसते हुए नारकीय जीवन जीते हैं। इसके विपरीत जिनके अन्तःकरण शुद्ध हैं, जिनकी विचार भूमिका उच्चकोटि की है, वे साधारण विहार रखते हुए भी शान्तिपूर्ण जीवन-यापन करते हैं।

कागभुसुण्डि जी अमर और दीर्घजीवी माने जाते हैं। एक दिन महर्षि वशिष्ठ जी ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कागभुसुण्डि जी से उनके दीर्घजीवन का कारण पूछा तो उसने बताया कि—

भावाभावमयीं चिन्तामीहतानी हितान्विताम्
विमृश्यात्मनि तिष्ठामि चिरंजीवाम्यनामय।
प्रशान्तं चापलं वीतशोकं स्वस्थं समाहितम्।
मनो मन मुने शान्तं तेन जीवाभ्यनामयः।
किमश मम सम्पन्नं प्रातर्वा भविता पुनः।
इति चिन्ताज्वरो नास्तितेन जीवाभ्यनामयः।
जराममरण दुःखेषु राज्य लाभ सुखेषु च।
न विभेमि न हृष्यानि तेन जावाभ्यनामयः।
अयं बन्धुः परश्चायं ममायमयमन्यतः।
इति ब्रह्मन्न जानामि तेन जीवभ्यनामयः।
आहारविन्हरन्तिष्ठन्नुत्तिष्ठन्नच्छ्वसन्स्वपन्।
देहोऽहमिति नो विधि तेनास्मि चिरजीवितः।
अपरिचलया शक्त्या सुदृशास्निग्धमुग्धया।
ऋजु पश्यामि सर्वत्र तेन जीवाभ्यनामयः।
करोमीशोऽपि नाकान्तिं परितापे न खेदवान्
दरिद्रोऽपि न वाञ्छामि तेन जीवाभ्यनामयः।
सुखितोऽस्मि सुखापन्ने दुःखितो दुःखितेजने।
सर्वस्व प्रियं मित्रं च तेन जीवाभ्यानामयः।
आपद्यचल धीरोऽस्मि जगन्मित्रं च सम्पदि।
भावाभावेषु नैचास्मि तेन जीवाभ्यनामयः।

—योगवशिष्ठ ६/२६/१०-३५

"मेरे पास यह है यह नहीं है इस प्रकार की चिन्ता मैं नहीं करता इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। मेरा मन शान्त, अचंचल, शोकरहित और समाहित रहता है, इसलिए दीर्घजीवन जीता हूँ। आज मैंने कितना कमा लिया, कल कितना कमाऊँगा, ऐसा तृष्णा ज्वर मुझ पर नहीं चढ़ा रहता, इसलिए मैं निरोग दीर्घजींवी जीवन जीता हूँ। न तो मैं मौत, बुढ़ापे से डरता हूँ और राज्य जैसे बड़े लाभ मिलने पर भी मुझे हर्ष होता है, इसलिए मैं निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। यह मेरा भाई है, यह शत्रु है, यह अपना है यह पराया ऐसा भेद-भाव मेरे मन में नहीं आता इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। आहार में, विहार में, सोने-जागने में, उठने-बैठने में किसी भी समय ब्रह्मभाव छोड़ देहभाव में नहीं भ्रमता इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। अपने स्वरूप में अविचल भाव से स्थिर रहता हूँ और आत्मशक्ति बनाये रखता हूँ, मधुर प्रेमभरी दृष्टि से सबको समान दृष्टि से देखता हूँ। सर्वत्र मंगल ही देखता हूँ, इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। समर्थ दृष्टि होने पर भी किसी को सताता नहीं, दूसरों के द्वारा अनिष्ट किये जाने पर क्षुब्ध नहीं होता, निर्धन होने पर किसी से आकांक्षा नहीं करता, इसलिए दीर्घजीवन जीता हूँ। दूसरों को सुखी देखकर सुखी होता हूँ, दुःखियों को देखकर करुणा करता हूँ। सबको अपना प्रिय मित्र मानता हूँ इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ। आपत्ति आने पर विचलित नहीं होता, धैर्य को कभी भी नहीं छोड़ता, सुख के समय सबसे उदार व्यवहार करता हूँ, भाव और अभाव में एक-सा रहता हूँ। इसलिए निरोग दीर्घजीवन जीता हूँ।"

वस्तुतः चित्त को शान्त, मस्तिष्क को सौम्य-सन्तुलित, मन को शीतल संयत रखने वाले लोग निश्चित ही दीर्घजीवन जीते हैं। सात्विक जीवनचर्या, सन्तुलित श्रेष्ठ आहार-विहार, सतत् शारीरिक-मानसिक श्रम और उत्कृष्ट चिन्तन-मनन से दीर्घायुष्य एवं सफलताएँ निश्चित रूप से मिलती हैं।

विचारशील लोग दीर्घायु होते हैं

डॉ० एफ० ई० विल्स, डॉ० लेलाड काडल, राबर्ट मैक कैरिसन आदि अनेक स्वास्थ्य शास्त्रियों ने दीर्घायु के रहस्य ढूँढ़े। प्राकृतिक जीवन, सन्तुलित और शाकाहार, परिश्रमशील जीवन, संयमित जीवन-शतायुष्य के लिए यही सब नियम माने गये हैं, लेकिन कई बार ऐसे व्यक्ति देखने में आये जो इन नियमों की अवहेलना करके, रोगी और बीमार रहकर भी १०० वर्ष की आयु से अधिक जिये। इससे इन वैज्ञानिकों को भी शङ्का बनी रही कि दीर्घायुष्य का रहस्य कहीं और छिपा हुआ है। इसके लिए उसकी खोज निरन्तर जारी रही।

अमेरिका में दो वैज्ञानिक डॉ. ग्रानिक और डॉ० विरेन बहुत दिनों तक खोज करने के बाद इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचे कि दीर्घजीवन का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्बन्ध मनुष्य के मस्तिष्क एवं ज्ञान से है। उनका कहना है कि अनुसन्धान के समय ६२ और इस आयु के ऊपर के जितने भी लोग मिले, वह सब अधिकतर पढ़ने वाले थे। आयु बढ़ने के साथ-साथ जिनकी ज्ञान वृद्धि भी होती है, वे दीर्घजीवी होते हैं पर पचास की आयु पार करने के बाद जो पढ़ना बन्द कर देते हैं जिनका ज्ञान नष्ट होने लगता है, वे जल्दी ही मृत्यु के ग्रास हो जाते हैं।

दोनों स्वास्थ्य विशेषज्ञों का मत है कि मस्तिष्क जितना पढ़ता है उतना ही उसमें चिन्तन करने की शक्ति आती है। व्यक्ति जितना सोचता, विचारता रहता है उसका नाड़ी मण्डल उतना ही तीव्र रहता है। हम यह सोचते हैं कि देखने का काम हमारी आँखें करती हैं, सुनने का काम कान, साँस लेने का काम फेफड़े, पेट भोजन पचाने और हृदय रक्त परिभ्रमण का काम करता है। विभिन्न अंग अपना-अपना काम करके शरीर की गतिविधि चलाते हैं। पर यह हमारी भूल है। सही बात यह है कि नाड़ी मण्डल की सक्रियता से ही शरीर के सब अवयव क्रियाशील होते हैं इसलिए मस्तिष्क जितना क्रियाशील होगा शरीर उतना ही क्रियाशील होगा। मस्तिष्क के मन्द पड़ने का अर्थ है शरीर के अंग-प्रत्यंगों की शिथिलता और तब मनुष्य की मृत्यु शीघ्र ही हो जावेगी। इससे जीवित रहने के लिए पढ़ना बहुत आवश्यक है। ज्ञान की धारायें जितनी तीव्र होंगी उतनी ही आयु भी लम्बी होगी।

आक्सफोर्ड डिक्शनरी से "हैल्थ" का शाब्दिक अर्थ "शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा से पुष्ट होना" लिखा है। अर्थात् हमारा मस्तिष्क जितना पुष्ट रहता है शरीर उतना ही पुष्ट होगा और मस्तिष्क से पुष्ट होने का एक ही उपाय है ज्ञान वृद्धि। शास्त्रकारों ने भी ज्ञान वृद्धि को ही अमरता का साधन कहा है। भारतीय ऋषि-मुनियों का दीर्घजीवन इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। सभी ऋषि दीर्घजीवी हुए हैं, उनके जीवन-क्रम में ज्ञानार्जन ही सबसे बड़ी विशेषता रही है। इसके लिए तो उन्होंने वैभव-विलास के जीवन तक ठुकरा दिये थे। वे निरन्तर अध्ययन में लगे रहते थे, जिससे उनका नाड़ी संस्थान कभी शिथिल न होने पाता या और वे दो-दो, चार-चार सौ वर्ष तक हँसते-खेलते जीते रहते थे।

पुराणों के अध्ययन से पता चलता है कि वशिष्ठ, विश्वामित्र, दुर्वासा, व्यास आदि की आयु कई-कई सौ वर्ष की थी। जामवन्त की कथा लगती कपोल-कल्पित है पर यदि अमेरिकी वैज्ञानिकों का कथन सत्य है तो उस कल्पना को भी निराधार नहीं कहा जा सकता है। कहते हैं जामवन्त बड़ा विद्वान् था। वेद-उपनिषद् उसे कण्ठस्थ थे, वह निरन्तर पढ़ा ही करता था और इस स्वाध्यायशीलता के कारण ही उसने लम्बा जीवन प्राप्त किया था। वामन अवतार के समय वह युवक था। रामचन्द्र का अवतार हुआ, तब यद्यपि उसका शरीर काफी वृद्ध हो गया था पर उसने रावण के साथ युद्ध में भाग लिया था। उसी जामवन्त के कृष्णावतार में भी उपस्थित होने का वर्णन आता है।

दूर ही क्यों कहें पेंटर मार्फेस ने ही अपने भारत के इतिहास में "नूमिस्देको गुआ" नामक एक ऐसे व्यक्ति का वर्णन किया है, जो सन् ९५६६ ई. में ३७० की आयु में मरा था। इस व्यक्ति के बार में इतिहासकार ने लिखा है कि मृत्यु के समय भी उसे अतीत की घटनाएँ इतनी स्पष्ट याद थीं जैसे अभी वह कल की बातें हों। यह व्यक्ति प्रतिदिन ६ घण्टे से कम नहीं पढ़ता था। डॉ. लेलार्डे कार्डेल लिखते हैं—मैंने शिकागो निवासिनी श्रीमती ल्यूसी जे० से भेंट की तब उनकी आयु १०८ वर्ष की थी। मैं जब उनके पास गया, तब वे पढ़ रही थीं। बात-चीत के दौरान पता चला कि उनकी स्मरण शक्ति बहुत तेज है, वे प्रतिदिन नियमित रूप से पढ़ती हैं।"

प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक डॉ. आत्माराम और अन्य कई वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है कि योग से अपने हृदय और नाड़ी आदि की गति पर नियन्त्रण रखकर उन्हें स्वस्थ रखा जा सकता है। यह क्रिया मस्तिष्क से विचारों की तरंगें उत्पन्न करके की जाती है। अध्ययनशील व्यक्तियों में यह क्रिया स्वाभाविक रूप से चलती रहती है इसलिए यदि शरीर देखने में दुबला है तो भी उसमें आरोग्य और दीर्घ जीवन की सम्भावनाएँ अधिक पाई जायेंगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"मस्तिष्क के क्षतिग्रस्त होने से शरीर बचा नहीं रह सकता। इससे साफ हो जाता है कि मस्तिष्क ही शरीर में जीवन का मुख्य आधार है, उसे जितना स्वस्थ और परिपुष्ट रखा जा सके मनुष्य उतना ही दीर्घजीवी हो सकता है।" उक्त वैज्ञानिकों की यदि यह सम्मति सही है तो ऋषियों के दीर्घ-जीवन का मूल कारण उनकी ज्ञान वृद्धि ही मानी जावेगी और आज के व्यस्त और दूषित वातावरण वाले युग में सबसे महत्वपूर्ण साधन भी यही होगा कि हम अपने दैनिक कार्यक्रमों में स्वाध्याय को निश्चित रूप से जोड़कर रखें और अपने जीवन की अवधि लम्बी करते चलें।

स्वाध्याय एवं श्रेष्ठ विचारों का मनन जब मस्तिष्क इन्हीं प्राणवान गतिविधियों में संलग्न रहा आता है, तो निषेधात्मक, हताशपरक या अवसादमूलक विचारों को मस्तिष्क में जड़ जमाने या पैर फैलाने का समय ही नहीं मिल पाता तथा व्यक्ति की प्रखरता, तेजस्विता बढ़ती रहती है। यही कारण है कि दीर्घजीवन का आनन्द लेने में दो ही तरह के लोग सफल होते रहे हैं—निरन्तर स्वाध्यायनिरत एवं सृजनशील—रहने वाले तथा सतत् श्रम करते रहने वाले। आन्तरिक दृष्टि से दोनों ही प्रकार के लोग मनोयोगपूर्वक निरन्तर क्रियाशील रहने वाले अतः एक ही वर्ग के कहे जा सकते हैं।

वस्तुतः सतत् क्रियाशीलता ही जीवन को सार्थक बनाती है फिर वह जीवन-अवधि लम्बी हो या छोटी। श्रमशीलता, गतिमयता ही जीवन को धन्य बनाती है। अतः ऐसी सुव्यवस्थित श्रमशीलता ही साध्य है। जीवन में यदि उसका अभ्यास हो गया तो किन्हीं कारणोंवश अधिक लम्बा जीवन नहीं जी सके, तो भी, वह छोटा-सा जीवन भी सार्थक ढंग से जी सकेंगे। यों प्रारब्ध-विधान के कारण घटित होने वाली घटनाओं की बात छोड़ दें तो सतत् अध्यवसाय, निरन्तर शारीरिक-मानसिक गतिशीलता सुदीर्घ, अफल एवं आनन्दप्रद जीवन का आधार बनती है, यही प्रामाणिक निष्कर्ष सामने आता है।

जीवनी शक्ति बढ़ाए, वही चिकित्सा उचित है

चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में पिछले तीन दशकों में अभूतपूर्व खोजें हुई हैं। जिस रोग को 'राजयक्ष्मा' कहकर असाध्य करार दिया गया था, उसके सम्बन्ध में भी मान्यताएँ बदलीं तथा निवारण हेतु अनेकानेक मारक औषधियाँ खोज ली गयीं। कहा यह जाने लगा कि अब इस घातक रोग से हर रोगी को बचाया जा सकेगा क्योंकि इस रोग (ट्यूबरकुलोसिस) के जीवाणुओं को मारने वाली औषधियाँ खोज ली गई हैं। विश्व मानवता को इस व्याधि से होने वाले दुष्परिणामों से अब सदा-सदा के लिये मुक्ति मिल गई है। स्ट्रेप्टोमायसिन, आर. एन. एच. एवं रिफेम्पीसिन के रूप में टी. वी. रोग के उपचार क्रम निर्धारित कर दिये गये हैं।

जीवाणुवाद के उस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया गया था, तब यह मान लिया गया था कि चिकित्सा शास्त्र ने एक बहुत बड़ी खोज कर डाली है। प्रारम्भ तो टी. बी. रोग से हुआ, पर धीरे-धीरे वैज्ञानिकों का उत्साह शिथिल होता चला गया। एण्टी बायोटिक औषधियों की संक्रमण नाशक क्षमता की वृद्धि के अनुपात में ही जीवाणुओं की मारक क्षमता भी बढ़ती चली गई। जब अन्य जीवाणु-विषाणु अन्य व्याधियों से रोकथाम की बात आयी तो डॉक्सी सायक्लीन, कार्बेनेसिलिन जैसी प्राणरक्षक परन्तु अनेकानेक घातक दुष्परिणामों (साइड इफेक्ट्स) वाली दवाओं का पिछले दिनों आविष्कार हुआ।

धीरे-धीरे वैज्ञानिकों को यह लगने लगा कि जीवाणुवाद कोई सुनिश्चित निर्धारण नहीं है। वायरस का शोर मचाकर जो ढोल पीटा जा रहा है, वह उचित नहीं है। यदि यही तथ्य सही होता तो प्रत्येक व्यक्ति इस धरती पर आज व्याधि ग्रस्त होता। स्वयं शरीर विज्ञानियों की यह खोज है कि कीटाणुओं का निवास प्रत्येक स्थान पर है। हमारे भोजन, साँस द्वारा अन्दर जाने वाली हवा, पिये जाने वाले पानी में कीटाणुओं का निवास है। 'कमेन्सल्स' के रूप में करोड़ों जीवाणु सहजीवी बनकर हमारे शरीर में निवास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करते हैं। इस सबके बावजूद हममें से अधिकांश स्वस्थ रहते हैं। इसके विपरीत कीटाणु-जीवाणुवाद का प्रतिपादन करने वाले वैज्ञानिकों का कथन था कि उन्हें नष्ट कर देने से मनुष्य रोग मुक्त हो सकता है। जब मान्यता ही ऐसी बनी तो मारक औषधियाँ भी खोज ली गयीं। लेकिन आज स्थिति फिर बदल गयी है।

जीवाणु नाशक औषधियों के दुष्परिणामों, शरीर की समस्त जैव रासायनिक संरचना एवं क्रियाकलापों पर उनके प्रतिकूल प्रभावों की अब प्रबुद्ध जनमानस को पर्याप्त जानकारी है। आवश्यकता इस बात की है कि ऐसे आधार ढूँढ़े जायें जो मानव की जीवनी शक्ति के अभिवर्धन में सहायक हों। जीवनी शक्ति के अधिष्ठाता के रूप में हमारे शरीर में सृष्टा ने एक अनुपम संस्थान 'इम्यूनॉला नीकल सिस्टम' बनाया है। जब भी बाहरी आक्रमण होता है इसी संस्थान में एण्टीबॉडीज का जन्म होता है एवं सुरक्षा सेना के रूप में वे आक्रमणकारी जीवाणुओं से मोर्चा लेकर हमले को निरस्त कर देती है। बालकों के गले में एक ग्रन्थि होती है—थाइमस जो १२-१४ वर्ष में, अपनी भूमिका निभाकर गल जाती है। जन्मोपरान्त प्रारम्भिक अवस्था में शरीर की जीवन शक्ति बनाये रखने के लिये जिन तत्वों की आवश्यकता होती है, उनकी पूर्ति यह ग्रन्थि 'टी सेल्स' उत्पन्न करके करती है। बाद में रक्त सज्जा स्थिति विशिष्ट 'कोशाएँ बीसेल एण्टीबॉडीज' बनाती है, इनका मुख्य उत्तरदायित्व है। 'सेल मिडियेटेड इम्युनिटी' अर्थात् भावी आपदाओं के लिये आवश्यक जीवनी शक्ति का आधार खड़ा करना। इन्हीं प्रतिपादनों के आधार पर सारे महत्वपूर्ण 'वैक्सीन्स' ढूँढ़े गये हैं, जो एण्टीबाडीज के निर्माण की प्रक्रिया की सतत् उत्तेजित करते रहते हैं।

जब यह इम्यून सिस्टम सशक्त होता है तो शरीर स्वस्थ रहता है। इसके कमजोर होते ही बाह्य आक्रमणकारियों को एक अवसर मिल जाता है, जिससे वे निर्द्वन्द प्रवेश पा सकें। रक्त कैंसर में रोगी की मृत्यु रोग से नहीं, वरन् जीवनी शक्ति के कमजोर होने से प्रवेशित जीवाणुओं की आक्रमण सामर्थ्य के कारण होती है। क्षय का रोगी यदि जीवनी शक्ति संचय कर अपने इम्यूसिस्टम को सशक्त बना ले तो बाहर के जीवाणु प्रवेश करके भी शरीर का कुछ बिगाड़ नहीं पायेंगे।

एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में अधिकांश शालाओं में पढ़ने वाले बालक एम. टी. पाजिटिव अर्थात् टी. वी. के प्राथमिक रोगी होते हैं। ऐसे बालकों के प्रारम्भिक जीवनी शक्ति मजबूत होने के कारण ही जीवाणु का आक्रमण नहीं हो पाता। इसमें से बालकों के रोगग्रस्त होने की सम्भावना तब ही है, जब वे इन जीवाणुओं को खेलने, धूम-मचाने का अवसर दें।

इसके विपरीत कुछ जीवाणु ऐसे हैं, जो हमारे शरीर में सतत् बने रहकर सहयोगी की भूमिका निभाते हैं। वैक्टीरियल फ्लोरा के रूप में मुख मार्ग से लेकर छोटी आँत के अन्तिम भाग तक ये अरबों-खरबों की संख्या में अपना निवास बनाये हुए हैं। कुछ बैक्टीरिया तो विटामिन बी १२ का निर्माण करते हैं। यदि ये न हों अथवा आँत के इस भाग को आपरेशन द्वारा निकाल दिया गया हो अथवा टेट्रासायक्लीन जैसी मारक औषधियों के उपयोग से उन्हें नष्ट कर दिया जाये तो इस महत्वपूर्ण विटामिन की कमी से अनेकानेक व्याधियाँ जन्म ले लेती हैं। ये तथ्य जैसे-जैसे चिकित्सकों के समक्ष स्पष्ट होते जा रहे हैं नयी-नयी अवधारणाएँ अब कीटाणुवाद के सन्दर्भ में बनाई जाने लगी हैं। दस में से नौ बच्च्चों को कीटाणु क्यों अपना शिकार नहीं चुनते, जबकि सभी के मुँह कीटाणुओं से भरे पड़े हैं। यह एक ज्वलन्त प्रश्न है। वस्तुतः ये कीटाणु हानिकारक तब हो जाते हैं, जब अस्वस्थ शरीर के लिये इन्हीं को उत्तरदायी मानकर चिकित्सा आरम्भ कर दी जाती है।

एक गन्दा शरीर जिसमें विजातीय द्रव्य भरे पड़े हैं, कीटाणुओं के लिये एक क्यारी की तरह होता है। जीवनी शक्ति खो देने वाला विजातीय द्रव्यों से लदा व्यक्ति स्वयं इन कीटाणुओं का आह्वान करता है, जबकि एक स्वस्थ पुष्ट देह का ये शत्रु कुछ भी अनिष्ट नहीं कर पाते। स्वयं का सैन्य बल सहायक समर्थ हो तो बाहरी आक्रमण निष्फल ही रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस तथ्य को गम्भीरतापूर्वक समझा जाना चाहिए कि स्वस्थ जीवन के लिये औषधियों की निर्भरता उचित नहीं। चिन्तन, भावनाओं, आस्था-विचारणा द्वारा विनिर्मित व्यक्तित्व समुच्य पर ही स्वास्थ्य टिका है। तनावरहित, हँसती-हँसती, हल्की-फुल्की जिन्दगी वरदान के रूप में मनुष्य को सहज ही स्वस्थ बनाये रख सकती है।

उद्देश्य यही रहे कि रोगोत्पत्ति का अवसर ही न आये। सात्विक आहार, नियमित दिनचर्या, विधेयात्मक स्वाध्याय आदि को अपनाकर स्वास्थ्य संवर्धन सम्भव है। पौष्टिक भोजन, लाठी-व्यायाम जैसे सहन सुलभ शरीर को हिलाने-डुलाने वाले क्रम, प्रातःकाल टहलना आदि ऐसे उपक्रम है, जिन्हें शारीरिक बलिष्ठता एवं जीवनी शक्ति संवर्धन का आधार माना जाना चाहिये। यदि मन स्वस्थ है, हमेशा उच्च विचारों में रत है, सृजनात्मक लक्ष्य अपने सामने रखे हों तो उन मानसिक गुणों की अभिवृद्धि होती है, जिन्हें जिजीविषा, जीवट, साहस उमंग के नाम से पुकारा जाता है। इनके अभाव से शारीरिक दृष्टि से समर्थ, बलिष्ठ व्यक्ति भी असहाय हो जाता है।

समग्र स्वास्थ्य संवर्धन हेतु इन मूलभूत आधारों को पहले हृदयंगम करना चाहिए। जीवाणुवाद का हौवा खड़ा करने एवं उस विभीषिका से बचने के लिए मारक औषधियों के सेवन का प्रतिपादन करने वालों को मानव की भलाई हेतु ऐसे ही आधारों को खड़े करना होगा जो 'इम्यून सिस्टम' को सशक्त बनाते हों, उसे जीवाणुओं से लोहा लेने योग्य समर्थ बनाते हों।

आहार शुद्धि भी उतनी ही अनिवार्य

चिकित्सा शास्त्र के अनुसार मनुष्य की रुग्णता और बलिष्ठता का कारण उसके शरीर में होने वाला रासायनिक परिवर्तन है। शरीर विज्ञानी शरीर को मानते भी एक रासायनिक पिण्ड हैं। मल परीक्षा, मूत्र परीक्षा, रक्त परीक्षा आदि के द्वारा यही देखा जाता है कि शरीर के भीतर कौन-से रसायन घट या बढ़ रहे हैं। उनका कारण क्या है ? कारण में निदान क्या है तथा उनका उपचार किस प्रकार किया जा सकता है ? औषधियाँ क्या हैं ? विशुद्ध रूप से औषधियाँ रसायन ही हैं, जो शरीर के भीतर घटने-बढ़ने वाले रसायनों को सन्तुलित करने के लिए दी जाती हैं और उनके माध्यम से विभिन्न प्रकार के खनिज, क्षार, विटामिन आदि पदार्थ पहुँचाये जाते हैं। ईंट-चूने से बने मकान में आई टूट-फूट की मरम्मत के लिए ईंट-चूने का ही प्रयोग किया जाता है। शरीर को जब एक रासायनिक पिण्ड मान लिया गया है तो उसमें होने वाली टूट-फूट और उत्पन्न गड़बड़ियों का निराकरण भी तो रसायनों के माध्यम से ही सम्भव है। चिकित्सा शास्त्र विशुद्ध रूप से इसी आधार पर खड़ा है।

यह कोई गलत भी नहीं है कि शरीर को एक रसायनिक पिण्ड कहा जाता है। मुख की लार से लेकर पाचन संस्थान में स्रवित होने वाले रसों और हारमोनों तक विविध स्राव रासायनिक स्राव ही उत्पन्न करते हैं। स्नायु संस्थान, तंत्रिका जाल और कोशिका समूह में जहाँ विद्युत धाराएँ अपना काम करती है, वहाँ रासायनिक प्रक्रियाएँ भी चलती रहती हैं। अन्न को रक्त के रूप में और रक्त को माँस मज्जा के रूप में बदलने का काम यही रासायनिक पद्धति करती है, जिसके आधार पर जीवन क्रम के अन्यान्य सभी क्रिया कलाप निर्भर करते हैं, श्वांस के माध्यम से ऑक्सीजन का शरीर में प्रवेश, रक्त में उसका घुलना और ऊर्जा उत्पन्न करना रासायनिक प्रक्रिया नहीं तो और क्या है ? इसलिए रसायनों के माध्यम से शरीर स्वास्थ्य की साज, सम्हाल और गड़बड़ियों का सुधार किसी भी दृष्टि से गलत नहीं कहा जा सकता। वह उचित और संगत ही है।

अध्यात्म शास्त्र भी मानवी चेतना को परिष्कृत करने के लिए रसायनों का प्रयोग करता है। उसकी मान्यता है कि वस्तुओं में स्थूल, सूक्ष्म और कारण यह तीन शक्तियाँ होती हैं। अन्न का स्थूल, स्वरूप रक्त माँस बनाता है। उसके सूक्ष्म रूप से मस्तिष्क एवं विचार बनते हैं और अन्न की कारण शक्ति भावनाओं का निर्माण करती हैं। यदि सड़ा-गला, बासी-खुसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और मैला-कुचैला अन्न आहार के रूप में लिया जायेगा तो उससे पोषण मिलना तो दूर रहा उलटे रोग और गड़बड़ियाँ ही उत्पन्न होंगी। अनीतिपूर्वक कमाया हुआ और दुष्ट मनुष्यों के हाथों बना, परोसा अन्न मस्तिष्क में दुर्बुद्धि ही उत्पन्न करेगा। यदि आहार को प्रसाद भावना से पकाया और औषधि भावना से ग्रहण किया गया होगा, बनाने और खिलाने वाले की स्नेहसिल सद्भावनाओं का उसमें समन्वय होगा तो उससे न केवल खाने वाले का अन्तःकरण विकसित होगा वरन् उसकी भावनाओं में भी उच्चस्तरीय विस्तार होगा। आहार केवल स्थूल दृष्टि से पौष्टिक एवं स्वस्थ ही नहीं होना चाहिए वरन् उसमें पीछे न्यायानुकूलन उपार्जन और सद्भावनाओं के समन्वय का तारतम्य भी जुड़ा होना चाहिए। तभी वह अन्न मनुष्य के तीनों आवरणों का समुचित पोषण कर सकेगा और उस आधार पर शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि से सर्वांगीण विकास का अवसर प्राप्त हो सकेगा।

भारतीय मनीषियों ने आहार शुद्धि, पर प्रथम जोर इसीलिए दिया है कि उसके साथ जुड़े हुए तत्व शरीर भूमिका से आगे बढ़कर मनःक्षेत्र को प्रभावित करते हैं। मनुस्मृति में कहा गया है कि नित्य स्नान, अन्न-पान द्वारा सब स्थानों को शुद्ध रखना चाहिए क्योंकि इनके शुद्ध होने पर ही चित्त की शुद्धि होती है और आरोग्यता प्राप्त होकर पुरुषार्थ बढ़ता है। 'वर्जयेन्मधु मांस च' तथा 'बुद्धि लुब्धति यद् द्रव्यं मदकारी तदुच्यते' आदि सूक्तियों द्वारा मद्य मांस का निषेध और बुद्धि का नाश करने वाले पदार्थों को मदकारी बताने के पीछे यही प्रयोजन है कि उनका प्रभाव शरीर पर तो जो पड़ता है सो पड़ता है, उससे भी अधिक अन्तरंग स्थिति प्रभावित होती है।

शरीर से आगे बढ़कर मनःक्षेत्र को आहार किस प्रकार प्रभावित करता है, इसका प्रमाण वे वस्तुएँ देती हैं, जिन्हें नशीली कहा जाता है। नशा पदार्थों का सूक्ष्म गुण है। वह माँस पर प्रभाव डालता ही है साथ ही मस्तिष्क को, मन बुद्धि चित्त अहंकार को भी प्रभावित करता है। नशे का प्रभाव होते ही मस्तिष्क पर से नियन्त्रण हट जाता है और वह कुछ का कुछ सोचने-समझने तथा कुछ का कुछ देखने-समझने लगता है। इतना ही नहीं धीरे-धीरे उस नशेबाजी का प्रभाव सेवनकर्त्ता के गुण, कर्म, स्वभाव पर पड़ता चला जाता है और उसका चरित्र, दृष्टिकोण, स्वभाव आदि का स्तर निरन्तर गिरता चला जाता है। तथ्य बताते हैं कि आहार का प्रभाव केवल शरीर तक ही सीमित नहीं है, यह केवल भूख मिटाने, स्वाद देने और रक्त-मांस बनाने की स्थूल शारीरिक क्रिया तक ही सीमित नहीं रहता वरन् उसके सूक्ष्म प्रभाव मस्तिष्क के साथ-साथ अंतःकरण को भी प्रभावित करते हैं।

आत्मविद्या के ज्ञाता सदा से यह कहते आये हैं कि आत्मोन्नति की साधनात्मक प्रक्रिया में आहार शुद्धि का महत्वपूर्ण स्थान है। कई पदार्थों के सम्बन्ध में जो साधकों के लिए वर्जित है, कुछ समय पहले तक सीमित जानकारी थी। समझा जाता था कि नशीले पदार्थों का गुण खुमारी मस्ती तक ही सीमित है। इसलिए लोग थकान मिटाने गम गलत करने के लिए उनका सेवन करते थे। भाँग, गाँजा, चरस, अफीम, शराब, जैसे नशीले पदार्थ इसी प्रयोजन के लिये पिये जाते थे, पर अब उनमें अन्य अनेक विशेषताएँ नवीनताएँ पाई गई हैं और देखा गया है कि वे ऐसी अनुभूतियाँ कराते हैं, जो सामान्य चिन्तन से अलग बिल्कुल भिन्न प्रकार की होती हैं। कुछ रसायन ऐसे हैं, जो मस्तिष्कीय कणों को वर्तमान परिस्थिति एवं उपस्थिति से सर्वथा भिन्न प्रकार की अनुभूतियाँ सामने उपस्थिति करते हैं, मस्तिष्कीय कणों की चिन्तनधारा को सामने प्रस्तुत पदार्थों से सर्वथा असम्बद्ध करके किसी ऐसे कल्पना लोक में उड़ा ले जाते हैं, जिनका वास्तविकता से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। पुराने नशे वर्तमान स्थिति से किसी न किसी रूप में जोड़े तो भी रहते थे पर अभी नये प्रकाश में आये इन नशीले पदार्थों का प्रभाव तो ऐसा होता है कि वर्तमान के साथ मस्तिष्क का तारतम्य बिल्कुल टूट जाता है और आँखें वह देखने लगती हैं, जो सामने प्रस्तुत यथार्थता से सर्वथा भिन्न होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यों आहार के रासायनिक तत्वों का विश्लेषण बहुत पहले से होता है। खाद्य पदार्थों में कौन-सा तत्व कितनी मात्रा में होना चाहिए ? इस सम्बन्ध में ढेरों पुस्तकें लिखी गई हैं और सैकड़ों तालिकाएँ प्रकाशित हुई हैं। जहाँ तक माँस, रक्त और बलिष्ठ देह का प्रश्न है, वहाँ तक वे तालिकाएँ उपयुक्त भी हैं किन्तु शरीर केवल माँसपिण्ड ही तो नहीं है, उसमें बौद्धिक और भाव चेतनाएँ भी मिलती हैं। आहार में उनके सुपोषण का समावेश भी होना चाहिए।

इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए प्राचीन काल में भारतीय मनीषियों ने सादा, सरल और सुपाच्य भोजन ही प्रयोज्य बताते हुए आहार की सात्विकता पर अधिक जोर दिया था, न कि शरीर की मांसलता बढ़ाने वाले भोजन पर। कहा जा चुका है कि आत्मिक प्रगति के लिये की जाने वाली साधनाओं में आहार शुद्धि का अति महत्वपूर्ण स्थान है। यदि उस ओर ध्यान न दिया जाये और प्राणायाम, प्रत्याहार, नेति, धौति आदि आगे के क्रिया कलापों में उलझा जाये तो वह समय पूर्व की बात की है। अक्षर ज्ञान सीखें बिना किसी बच्चे से कोई पुस्तक पढ़ने के लिए कहा जाना जितना नासमझी का काम है उतनी ही नासमझी आहार शुद्धि के बिना आत्मिक प्रगति की अपेक्षा रखने में है। आहार में मस्तिष्क और हृदय को, बुद्धि और भावनाओं को सात्विकता तथा शुद्धि की दिशा में अग्रगामी बनाने वाले तत्वों का समावेश न किया जा सके तो वह भूखे पेट फुटबाल खेलने जैसा ही उपहासास्पद होगा। आज आत्मिक प्रगति के लिए आहार शुद्धि पर पूरा-पूरा ध्यान देना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। उस अनिवार्य आवश्यकता की पूर्ति किये बिना आत्मिक प्रगति की दिशा में एक कदम भी चल पाना सम्भव नहीं है।

सात्विक आहार-विहार का उपहार—दीर्घायु

स्वास्थ्य का संरक्षण और संवर्धन सरल है यदि सादगी का सरल स्वाभाविक जीवनयापन पसन्द करें तो बिना किसी बड़ी जानकारी का संग्रह किये—बिना कोई बहुमूल्य आहार खरीदे—बिना किसी दवादारू का उपयोग किये दीर्घजीवी हो सकते हैं और बीमारियों से बचे रहकर परिपुष्ट जीवन जी सकते हैं। बुद्धिमत्ता के नाम पर कृत्रिमता अपनाकर ही वस्तुतः हमने अपने स्वास्थ्य का सर्वनाश किया है।

इन दिनों जिसे देखें वही कब्ज का मरीज पाया जायेगा। यदि सबेरे का नाश्ता छोड़ दिया जाय और दिन में केवल दो बार ही भोजन किया जाय तो कब्ज से निन्यानवे प्रतिशत व्यक्तियों को छुटकारा मिल सकता है।

महात्मा गाँधी ने अपने एक संस्मरण में लिखा है—"जोहानिस वर्ग (दक्षिण अफ्रीका) में मुझे कब्ज रहता था और कभी-कभी सिर भी दुःखा करता था। खाने-पीने में पथ्य का ध्यान रखता था, पर उससे भी मैं रोग मुक्त न हो सका। सोचता था दस्तावर दवाओं से छुटकारा मिल जाय तो अच्छा हो। इन्हीं दिनों मैंने मैनचेस्टर (इङ्गलैण्ड) में हुई नो ब्रेक फास्ट एसोसियेशन की स्थापना का समाचार पढ़ा। उसकी दलील थी—अंग्रेज बहुत बार और बहुत मात्रा में खाते हैं। फलतः रोगी बनते हैं। यदि उस उपाधि से बचना हो तो सबेरे का नास्ता तो बिल्कुल ही छोड़ देना चाहिए। मुझे अपनी भी आदत अंग्रेजों जैसी लगी। सोचा नाश्ता छोड़कर देखूँ। सो छोड़ दिया। कुछ दिन तो अखरा पर सिर दर्द बिल्कुल मिट गया। मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि अधिक खाने के कारण ही कब्ज रहता था और सिर दर्द होता था।

मैदे से बनी डबल रोटी, बिस्कुट और माँसाहार ही इन दिनों सभ्य समाज का प्रमुख भोजन है, जबकि यह दोनों ही वस्तुएँ स्वास्थ्य के लिए घातक हैं।

मैदे से बनी सफेद रोटियाँ खाने का प्रचलन बढ़ रहा है। अधिक पीसने और चोकर निकल जाने से मैदा एक प्रकार से विटामिनों व खनिज लवणों से रहित ही रह जाती है। कुछ पूर्व अमेरिका में मैदा को अधिक उपयोगी बनाने की दृष्टि से आटा मिल वालों ने कई प्रकार की मिलावट करने के प्रयोग कराये थे। उन प्रयोगों में नाइट्रोजन, ट्रिक्लोराइड नामक पदार्थ का सम्मिश्रण भी था। इस प्रकार की मैदा से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनी रोटियाँ कुत्तों को खिलाई गईं तो उन्हें हिस्टेरिया आने लगा। फलतः उस देश के फूड एण्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन ने इस प्रकार के सम्मिश्रण पर रोक लगा दी। इसी प्रकार का एक दूसरा प्रयोग जिसमें क्लोराईन डाक्साइट मिलाकर मैदे को उपयोगी बनाने का प्रयोग किया गया, पर उसे भी हानिकारक घोषित करना पड़ा।

बहुभोजन और माँसाहार के गुण बहुत गाये जाते हैं पर वस्तुतः यह बहुत ही हानिकारक भोजन है। विश्व विख्यात पहलवान जैविस्को को जब भारतीय पहलवान गामा ने पछाड़ दिया तो उसे विश्व विजयी की उपाधि मिली। गामा का भीमकाय शरीर देखते ही बनता था, उसे उन्होंने बड़े प्रयत्नपूर्वक बहुत व्यायाम और कीमती खुराक की प्रचुर मात्रा लेकर बनाया था। उनके दैनिक भोजन में २० किलो दूध १ किलो घी, १ किलो बदाम-पिस्ता ६ किलो फल और ३ किलो माँस सम्मिलित था। दण्ड-बैठक भी हजारों की संख्या में नित्य करते थे। कुश्ती तथा दूसरे व्यायाम भी उनकी दिनचर्या के अङ्ग थे।

जवानी में कई कुश्तियाँ उनने पछाड़ीं और विश्व विजयी बने, पर बुढ़ापा बुरी तरह कटा। उन्हें श्वांस, खाँसी आदि कितनी ही बीमारियों ने आ घेरा और अन्ततः हड्डियों का ढाँचा मात्र बनकर बहुत कष्टपूर्ण जीवन बिताते हुए मृत्यु के मुख में चले गये।

भारत जैसे गरीब देश के लोगों का काम बहुमूल्य घी, मेवे आदि बिना भी आसानी से चल सकता है यदि वे अपने आस-पास बिखरी पड़ी सस्ती किन्तु बहुमूल्य वस्तुओं के गुणों के बारे में जानें और उनका उपयोग करना सीखें।

गाजर बहुत सस्ती चीज है पर गुणों की दृष्टि से उसे बहुमूल्य फलों की श्रेणी में रखा जा सकता है। गाजर में विटामिन ए विशेष मात्रा में और विटामिन बी, सी, जी और के. साधारण मात्रा में पाये जाते हैं। गाजर के ताजा रस में सोडियम, पोटैशियम, कैलशियम, मैगनेशियम, सल्फर, सिलकन और क्लोराइन आदि रसायनों की उपयोगी मात्रा पाई जाती है। गाजर में १० प्रतिशत तक ऐसी शकार पाई जाती है, जो बिना जिगर पर अतिरिक्त भार डाले सहज ही हजम हो सके। स्टेरेलिटी—इन डावरिन ग्लेण्डस एड्रेनल्स, मोनाडस डेर्माटिट्स ओफथोलिमिया, कंजूडिविटस कुछ रोग ऐसे हैं, जिनके लिए गाजर रामबाण औषधि सिद्ध हो सकती है।

भारत सरकार ने हैल्थ बुलेटिन नं. २३ के अनुसार आँवले में विटामिन सी० की पर्याप्त मात्रा रहती है। उसमें प्रोटीन, चिकनाई, खनिज तत्व कार्बोहाइड्रेट कैलशियम, फॉस्फोरस सरीखे उपयोगी पदार्थ भी रहते हैं। प्रति सौ ग्राम आँवले में १२ मिली ग्राम लोहा और प्रति सौ आँवलों में ६०० मिली ग्राम विटामिन सी रहता है।

बादाम, पिस्ते, काजू जैसे मूल्यवान मेवे बड़े आदमी खायें सो ठीक है, पर गरीब अपना वही काम मूँगफली से भी चला सकते हैं। वस्तुतः मूँगफली बादाम से किसी भी प्रकार घटिया नहीं है।

इसी प्रकार अन्यान्य सस्ती शाक-भाजियाँ और ऋतु फल हमारे लिए बहुमूल्य पदार्थों की तुलना में कहीं अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं और सरलतापूर्वक मिल सकते हैं।

पेट में कब्ज होने पर उपवास का सहारा लेकर हम सहज ही अपनी चिकित्सा आप कर सकते हैं। और खोई हुई पाचन शक्ति को पुनः प्राप्त कर सकते हैं, इनमें से यथसमय उपयुक्त उपवास चुन लिये जाया करें ताकि पेट की स्थिति ठीक बनी रहे और अनेकानेक बीमारियों में फाँसने का दुर्भाग्यपूर्ण अवसर न आये। दस उपवास निम्नलिखित हैं—

(१) प्रातःकालिक उपवास अर्थात् नाश्ता छोड़ देना (२) सायंकालिक उपवास—दोपहर को एक बार ही भोजन करना—रात्रि का भोजन बन्द कर देना (३) एकहारोपवास—एक समय में एक ही वस्तु खाना। जैसे—दोपहर की रोटी खानी है तो शाम को केवल शाक अथवा दूध। (४) रसोपवास—फलों के रस अथवा सब्जियों के सूप (रसा) पर रहना (५) फलोपवास—केवल फलों पर रहना (६) दुग्धोपवास—चार-पाँच-बार जितना पच सके उतना दूध लेकर रहना। (७) तक्रोपवास—छाछ पर रहना (८) पूर्णोपवास—केवल जल पीकर रहना (९) साप्ताहिकोपवास—सप्ताह में एक दिन केवल जल लेकर अथवा, दूध, रस, सूप आदि पर उपवास करना (लघु उपवास—सामान्य भोजन की अपेक्षा आधे परिमाण में खाना।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कठिन रोगों के निवारण के लिये यदि औषधियों की आवश्यकता पड़े तो उसके लिये स्थानीय क्षेत्र में उगने वाली जड़ी-बूटियों के आधार पर चिकित्सा करना ऐलोपैथिक तीव्र औषधियों की अपेक्षा कहीं उत्तम है। सन्त विनोवा का सुझाव है कि—हर गाँव में कुछ वनस्पतियाँ लगा देनी चाहिए। स्थानीय रोगों के लिए स्थानीय वनस्पतियों का ताजा रस जितना उपयोगी होगा, उतना गुण बाहर की दवाओं में नहीं हो सकता। सीधी-सस्ती जड़ी-बूटियों का उपयोग प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत ही समझा जाना चाहिए।

रोग निवारण के लिये औषधियों पर अधिक निर्भर रहना और उसको बड़ी-बड़ी आशायें करना ठीक नहीं। आपत्ति काल में किसी समय उसका उप हो सकता है, पर साधारण उनसे जितना बचा जा सके उतना ही उत्तम है।

औषधियों के सम्बन्ध में विशेषतया ऐलोपैथिक दवाओं के सम्बन्ध में कुछ अनुभवी लोगों के अभिमत इस प्रकार हैं।

औषधियों में से अधिकतर मारक गुणों में युक्त होती हैं। उनसे सृजनात्मक क्षमता किंचित ही रहती है। दवाओं की प्रत्येक खुराक मनुष्य की जीवन शक्ति को न्यून करती जाती है।

आरोग्यविद्या विशारद् **डोनल्ड सिम्पसन** का मत है कि वर्तमान में जीवनयापन में जो जेटिलताओं और विषमताओं का प्रवेश हो गया है उनके रहते हुए भी मनुष्य अपना इच्छानुसार आयु को लम्बा बना सकता है। अभी वह समय भी अधिक दूर नहीं गया है, जब हमारे पुरखे मनमानी उम्र का उपभोग करते थे।

अपनी नियमित दिनचर्या के कारण पितामह भीष्म चोटों और घावों से क्षतविक्षत होते हुए भी उत्तरायण सूर्य आने तक हठात् जीवन धारण किये रहे। राजा सत्यवान, मार्कण्डेय आदि आप्त पुरुषों ने इच्छानुवर्ती आयु प्राप्त की सोलहवीं सदी में इटली का एक साधारण नागरिक लुई कोरनारो अपनी संयम जीवनचर्या के कारण दो सौ साल से अधिक जीवित रहा। उसने कभी भी माँस, शराब आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन नहीं किया था। खाओ, पिओ और मौज करो की नीति नितान्त भ्रामक है। इससे जीवन शक्ति का क्षय होता है। मृत्युकाल पूर्व निश्चित है यह विश्वास मानकर जीने वाले जो जी में आये कर डालने वाले असमय ही मौत को निमन्त्रण दे देते हैं।

इस सम्बन्ध में प्रमुख अनियमितता है आहार की और वैज्ञानिक जानकारी का अभाव। केवल स्वाद के लिये चटपटे मसालेदार खाद्य पदार्थ जुटाने और फिर उन्हें दिन में कई बार जब जी में आये पेट की आवश्यकता व स्थिति का विचार किये बिना उदरस्थ करते रहने की आदत अत्यन्त दोषपूर्ण है। अधिक से अधिक प्राकृतिक नियमों के समन्वय से ही इस दिशा में सुधार सम्भव है। मिताहार भी उतना ही आदश्यक है। मैसूर निवासी सर विश्वेश्वरैया शतायु होते हुए भी ५० वर्ष के लगते हैं। चुस्त व सजग हैं। इसका कारण वे व्यायाम और मिताहारी होना बताते हैं। त्रिवेन्द्रम आयुर्वेद कालेज के दीर्घायुषी वर्तमान प्रिन्सिपल का तो गत 30 वर्ष तक वजन एक-सा बना रहा। वे स्वास्थ्य के चार प्रयोग बताते हैं। (१) नित्य तेल मालिश (२) नियमित व्यायाम (३) छाछ और (४) मिताहार।

ब्राजील के वयोवृद्ध प्राध्यापक का कहना है कि संयत जीवन से १२० वर्ष जीना सम्भव है बशर्ते कच्चा खायें ताजा खायें और खुली वायु का अधिकाधिक सेवन करें। वे भोजन को ३२ बार चबाकर निगलने पर अधिक जोर देते हैं। संसार के सबसे अधिक दीर्घजीवी बलगेरिया के लोग हैं। वैज्ञानिकों ने इसको नेकी गहन शोध की और बताया कि इसका मामूली-सा कारण हैं और वह यह है कि यहाँ के लोग आहार के सम्बन्ध में बहुत सतर्कता बरतते हैं।

आहार के सम्बन्ध में यह विशेष उल्लेखनीय है कि सच्ची व परिपक्व भूख लगने पर ही खाना खायें। रूस के स्वास्थ्य विशेषज्ञ ब्लाडीमार कोरेचोवस्को का मत है—भूख से जितना अधिक खाते हैं समझना चाहिए कि उतना ही विष खाते हैं।

केवल आहार की ओर सावधानी बरतना पर्याप्त न होगा। वीर्य रक्षा भी उतना ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। क्षणिक सुख के लिये अपना जीवन तत्व निचोड़ते रहने वालों को असमय ही

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मौत का शिकार होना पड़ता है। ब्रह्मचर्यपूर्वक जीवन जीने से शक्ति बढ़ती है, ओजस् निखरता है और आयु लम्बी होती है। महात्मा गाँधी ने ३६ वर्ष की उम्र में ब्रह्मचर्य के महत्व को समझा और उसका पालन किया। वे कहा करते थे कि मैं १२५ वर्ष जीऊँगा। ८० वर्ष की आयु में वे पूर्ण निरोग थे। गोली न मारी जाती तो उनकी इच्छा निश्चय ही पूर्ण होती।

अनुभवों का सार

अमेरिका के एक डॉक्टर ने सौ दीर्घजीवी मनुष्यों के अनुभवों को एकत्रित करके यह सार निकाला है कि (१) चिन्ताओं को अपने पास न फटकने देने और निरन्तर प्रसन्न रहने से (२) भोजन को खूब चबा-चबाकर खाने से—ताकि दाँतों का काम पेट को न करना पड़े (३) हरी साग-सब्जियों और फलों का सेवन करने से (४) चरबीदार पदार्थों से दूर रहने से—मनुष्य उत्तम स्वास्थ्य और लम्बी आयु को प्राप्त कर सकता है। अमेरिका के डॉ. शरमन ६८ वर्ष की आयु में भी नौजवानों की तरह स्फूर्ति से हाथ काम करते देखे गये हैं। वे अनुभव के आधार पर कहते हैं कि फल, दूध और छिलके सहित अन्न के सेवन से मनुष्य अपनी आयु को १० वर्ष बढ़ा सकता है। वे मिल में पिसे आटे और साफ किये चावल को इस्तेमाल न करने पर जोर देते हैं।

अमेरिका के कुछ अन्य दीर्घजीवियों के क्रियात्मक अनुभव देखिये—

रेन बोर्न—मैंने प्रति सप्ताह पचास मील पैदल चलने का नियम बनाया हुआ है। इसी के कारण मुझमें अभी तक ७२ वर्ष की आयु में भी नौजवान सा रक्त प्रवाहित होता दीखता है। मेरा अनुभव है कि पैदल चलने से हाजमा बढ़ता है, शरीर के विकार दूर होते हैं। फेफड़े अपना काम अच्छी तरह से करने लगते हैं। यह एक प्राकृतिक व्यायाम है। इसके साथ-साथ सिगरेट शराब और चाय को भी छोड़ देना चाहिए।

लुई क्रेमर के भी इसी प्रकार के अनुभव हैं। वह लिखते हैं पिछले पचास वर्षों में मेरे घूमने का प्रोग्राम नियमित रहा है। २३ वर्षों में तो मैं प्रतिदिन ३०-४० मील चलता रहा हूँ। शराब का सेवन तो कई वर्षों से छोड़ रखा है। चाय, काफी और सिगरेट की ओर तो मैनें कभी देखा तक नहीं। इनसे मुझे घृणा हो गई। शाम को दूध भाजी और फल लेता हूँ। बिना छाने आटे की रोटी खाता हूँ। दूध और फलों का रस तो मुझे बहुत अच्छा लगता है। जिनका स्वास्थ्य गिर चुका है, उनको मैं यही कहूँगा कि खूब पैदल चलो और उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त कर लो।

बैंजमिन जिनकी आयु १५४ वर्ष की थी अच्छे स्वास्थ्य के उपाय बताते हुए लिखते हैं भोजन को कम खाना चाहिए और अधिक चबाना चाहिए। मोटर आदि पर बैठने का स्वभाव न बनाकर पैदल चलने की आदत डालनी चाहिए। हँसना खूब चाहिए। विपत्तियाँ आयें तो उन्हें हँस-हँस कर झेलना चाहिए। यदि उनके चंगुल में फँसकर चिन्ताग्रस्त हो गये तो उससे स्वास्थ्य को धक्का लगेगा। अधिक और हानिकारक पदार्थों के सेवन से पेट के साथ अत्याचार नहीं करना चाहिए। माँस से दूर रहो शाकाहारी बनो।

विक्टर डेन स्वास्थ्य को गिराने वाले अन्य तत्वों से बचने का उपाय बताते हुए लिखते हैं—काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा आदि मनोविकारों से दूर रहना चाहिए। इनके प्रयोग से शरीर में विष उत्पन्न होता है और परिणामस्वरूप आयु कम होती है।

बेलगाँव के ८० वर्ष के श्री कोकर्ण का कहना है खेतों की स्वच्छ वायु का सेवन करो। दूध और ताजी सब्जियों का प्रयोग में लाओ। रात को जल्दी सोने और प्रातः काल जल्दी उठने का कार्यक्रम बनाना चाहिए।

१२६ वर्ष के एक ईरानी सज्जन की राय है कि चिन्ता शून्य रहना ही दीर्घ जीवन का रहस्य है। काम न करने का मतलब है शरीर को जङ्ग लगाना। श्रम को पूजा समझकर करना चाहिए।

१६० वर्ष की श्रीमती जोसफ रींगल ने अपने दीर्घ जीवन का रहस्य मिताहार को बताया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर तेमुल जी लिखते हैं कि ७५ वर्ष की आयु तक मुझे दवा की एक बूँद की भी जरूरत नहीं पड़ी। यदि हम खाने-पीने में गड़बड़ी करते हैं तो शरीर के साथ किये गये अत्याचार का दुष्परिणाम हमें अवश्य भुगतना पड़ेगा।

इस छोटे से लेख में संसार के सभी दीर्घजीवी मनुष्यों के अनुभवों को देना तो सम्भव नहीं है। जितने थोड़े से उदाहरण ऊपर दिये गये हैं, उनसे हम यही सार निकाल सकते हैं कि यदि हम मिताहार को अपना मूल मन्त्र माने, क्या खायें ? कब खायें और कितना खायें इसे भली प्रकार समझलें। सिगरेट, शराब, चाय और क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, चिन्ता, मनोविकारों से दूर रहें खूब हँसें और प्रसन्न रहें, घूमने, डण्ड-बैठक और आसन आदि के व्यायाम नियमित रूप से करते रहें तो यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि हम और आप अपने गिरे हुए स्वास्थ्य का सुधारकर के दीर्घ आयु की प्राप्ति कर सकते हैं।

कैलिफोर्नियाँ विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर डा० हैरिस सौवले ने यह दावा किया है कि यदि मनुष्य अपने बिगड़े हुए वातावरण अर्थात् रहन-सहन और आचरण पर नियन्त्रण कर लें तो आयु दुगनी-तिगुनी हो सकती है। उन्होंने कहा—शल्य और चिकित्सा के द्वारा थोड़ी आयु बढ़ सकती है स्थिर शतायु के लिए आस्तिकता, नियम-संयम और स्वच्छ आचरण का आश्रय लेना आवश्यक है।

डा० सोवले ने आगे बताया—मनुष्य को अपने शरीर का ज्ञान होना चाहिए। खाने-पीने पर ध्यान देना चाहिए। शारीरिक और मानसिक चुनौतियों का सामना करना चाहिए। यह भी याद रखना चाहिए कि बूढ़ा भी हो जाय तो यह बेकार नहीं हो जाता। उसे भी व्यस्त रखा जाय। काम न करने से शरीर को जंग लग जाती है और लोग शीघ्र ही संसार से चल देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को सदैव सीखने के भाव से कुछ काम करते रहना चाहिए। अन्त में उन्होंने शुद्ध, पौष्टिक खाद्य पदार्थ और जलवायु की बात कही।

डॉ० सोवले की बात को इस यान्त्रिक युग में झुठलाया जा सकता है पर जब तक शतायु पुरुषों के जो आँकड़े मिले हैं, उन्हें तर्क विसम्मत नहीं कहा जा सकता है। उन व्यक्तियों की जीवन पद्धति और अनुभवों के निष्कर्ष भी डॉ० सोबले के ही कथन की पुष्टि करते हैं।

हाइफा से प्राप्त एक रिपोर्ट में बताया गया है कि श्रीमती जोहरा अल्वो नामक संसार की सबसे बूढ़ी स्त्री का गत सप्ताह इजराइल के नगर टाइदेरियाज में स्वर्गवास हो गया। मरने के दिन उनकी आयु १४० वर्ष की थी, उनकी सबसे बड़ी पुत्री ६० वर्ष की है और सबसे छोटा पुत्र ६५ वर्ष का। श्रीमती जोहरा बड़ी धर्म परायण महिला थीं, उन्होंने मरने के दिन तक भगवान् की पूजा वन्दना की। उनका कहना है—अपने को भगवान् के सहारे छोड़ दें तो भगवान की शक्ति का प्राणों से मेल होता है, उसमें रोग-शोक दूर रहते हैं।

नवाशहर सब डिवीजन (जालंधर) के गाँव पंडरा की रोम गुज्जर नामक महिला का १२६ वर्ष की आयु में देहावसान हुआ। उनके कान अन्त तक पूरी तरह सुनते थे। आँखों की रोशनी भली चंगी थी। मुख में काफी दाँत भी थे। वह चाय तथा बिजली की चक्की का आटा उपयोग नहीं करती थी। हानिकारक भक्ष्य कभी नहीं लेती थी और अधिक से अधिक प्राकृतिक जीवन बिताती थीं।

मोत (सांतोजेल) इटली १६४ वर्षीय वृद्धा मारिया बास्ता अभी भी काफी स्वस्थ हैं। उनके अनुसार दीर्घायुष्य का कारण यह है कि उसने कभी भी दवा नहीं खाई और भारी आहार भी कभी नहीं किया। हल्के और सुपाच्य भोजन के कारण उनका पेट कभी खराब नहीं हुआ।

रियाद (सऊदी अरब) के एक १५० वर्षीय सऊदी शेख ने एक ५० वर्षीय महिला से विवाह किया है। शेख का कहना है कि पर्याप्त परिश्रम करते रहने से स्नायु जाल सशक्त बना रहता है। शरीर की नस-नारियों को अच्छी तरह काम करते रहने से दीर्घ-जीवन मिलता है।

जतोई (सोनीपत) के रहने वाले हमीम सोनुराम का निधन हाल ही में १५५ वर्ष की अवस्था में हुआ। उनके ८२ वर्षीय पुत्र का स्वास्थ्य युवकों जैसा है। भोजन में गाय के दूध और मक्खन को अधिक स्थान दिया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीपरा कछार आजमगढ़ के १३५ वर्षीय सिंहासनसिंह मरते क्षण तक अपना सारा काम अपने हाथों से करते रहे। श्रम ही उनकी दीर्घायुष्य का कारण था। रूस के किसान श्री गसानोव १५० वर्ष की आयु में भी अपने फार्म में व्यस्तता से काम कर रहे हैं। वे जीवन में कुल दो बार बीमार पड़े। इन सब उदाहरणों से डॉ० सोबले के कथन की पुष्टि हो जाती है। मनुष्य यदि नियम-संयम व श्रम का जीवन बिताएँ तो सौ वर्ष की आयु कोई आश्चर्य नहीं है।

श्रमशीलता, स्वच्छता, सुव्यवस्था नियमितता तथा सन्तुलित जीवन-क्रम गहरी नींद एवं तल्लीन क्रियाशीलता दोनों का ही आधार है। जिसने भी सौम्य-सन्तुलित सात्विक आहार-विहार का अभ्यास कर लिया, वह श्रम एवं विश्राम दोनों का भरपूर आनन्द प्राप्त करते हुए प्रकृति के अनुरूप जीवन जीता है तथा प्रकृति प्रदत्त स्वाभाविक दीर्घायुष्य हो भोगता है। मनुष्य को प्रकृति ने दीर्घजीवी होने के लिए ही पैदा किया है और प्राकृतिक नियमों को अपनाए रहने पर उसे दीर्घजीवन प्राप्त होता ही है। आवश्यकता जीवन को सरल स्वाभाविक ढंग से जीने की है।

आरोग्य एवं चिरयौवन का रहस्योद्घाटन

शरीर की निरोगता एवं बलिष्ठता के लिए मोटी दृष्टि पौष्टिक आहार या औषधि उपचार पर जाती है। बीमार होने पर लोग चिकित्सकों की शरण में दौड़ते हैं मानो रोगों को बुलाने भगाने की ठेकेदारी उन्ही ने हथिया रखी हो। इस प्रयास में रोगियों को बहुत कम सफलता मिलती है। ये चिकित्सक और नुस्खे बदलते, अपना पैसा और समय गँवाते रहते हैं पर बीमारी टस से मस नहीं होती। ऐसे जीर्ण रोगियों की भारी संख्या हम अपने इर्द-गिर्द ही गिन सकते हैं। यही बात पौष्टिक आहार से स्वास्थ्य संवर्धन के सम्बन्ध में है। अमीर लोग आमतौर से ऐसा भोजन करते हैं, जिसे असंदिग्ध रूप से पौष्टिक कहा जा सकता है। कैमिस्टों की दुकानें टॉनिकों की बोतलों और पौष्टिक खाद्यों के डिब्बों से भरी रहती हैं। विटामिन, मिनिरल तथा दूसरी ताकत की गोलियाँ खूब बिकती खपती हैं। पर इन्हें सेवन करने वालों में से किसकी कितनी तन्दुरुस्ती बढ़ी यह खोजने पर निराशा ही हाथ लगती है। यदि उनमें कोई तथ्य रहा होता तो उनका तथा उनके परिवार वालों का शरीर सर्वथा निरोग पाया जाता यदि वे दूसरों के रोग भगा सकने में समर्थ हैं तो अपने तथा घर वालों के शरीरों को क्यों रुग्ण रहने देते ? इसी प्रकार यदि पौष्टिक खाद्यों से बलिष्ठता मिली होती तो गरीबों की बात छोड़ भी दी जाय तो कम से कम अमीर लोग तो पहलवान स्तर के रहे ही होते। उन्हें किस आहार की कमी है ? वे पौष्टिक ही खाते हैं, और खा सकते हैं। ऐसी ही दशा में उन्हें क्यों दुर्बल रहना चाहिए ? पुष्टाई की दवा बेचने वाले कैमिस्ट एवं निर्माता तो बलवान रहने ही चाहिए थे। च्यवनप्राश शिलाजीत, मकरध्वज आदि बनाने वाले तथा उनका आकाश पाताल जैसा विज्ञापन करने वालों को जरा जीर्णता का कष्ट क्यों भोगना पड़ता ? यह लोग तो इन पौष्टिकों का उपयोग कर फिर यौवन का लाभ ले ही सकते थे। पर ऐसा होता कहाँ है ? लगता है आरोग्य की आकाँक्षा के लिए कैमिस्टों और चिकित्सकों के पीछे दौड़ने में मृग तृष्णा जैसी भ्रान्ति के अतिरिक्त और कुछ सार नहीं है। मानवी मस्तिष्क पर छाये हुए अगणित अन्ध-विश्वासों में अपने किस्म का यह एक बहुत ही भोंड़ा किन्तु अतीव व्यापक अन्ध-विश्वास है कि स्वास्थ्य सम्वर्धन में पौष्टिक खाद्यों और रोग निवारण में औषधियों का आश्रय लेने से काम चल सकता है। इनका आपत्ति काल में उपयोग तो किया जाता है और होता भी रहेगा किन्तु इसका प्रभाव तात्कालिक एवं स्वल्प है। वह इतना नहीं है, जिसके आधार पर दुर्बलता हटाने और रुग्णता मिटाने के लिए निश्चिन्त रहा जा सके।

आरोग्य की कुंजी इन आदतों में सन्निहित है, जो आहार-विहार के चयन करने तथा अपनाने के लिए उत्तरदायी है। इस सम्बन्ध में जो ढील बरती जाती तथा अव्यवस्था फैलाई जाती है, उसी से ईश्वर प्रदत्त स्वास्थ्य सम्पदा को आघात पहुँचता है और दुर्बलता एवं रुग्णता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घेरती है। जब तक वे विकृतियाँ पल्ले बन्धी रहेंगी, तब तक स्वास्थ्य समस्या के समाधान का कोई मार्ग नहीं मिल सकता। यदि असंयम पर—वासना और लिप्सा पर नियन्त्रण स्थापित किया जा सके, सुसंयत जीवन क्रम अपनाया जा सके तो उस परिवर्तन का प्रभाव सहज ही स्वास्थ्य सुधार के रूप में देखा जा सकता है। रुग्णता तो असंयम की प्रतिक्रिया भर है। यदि दृढ़तापूर्वक अपने आहार-विहार का निर्धारण किया जा सके और उस पर आरूढ़ रहा जा सके तो रुग्णता की जड़ें अपने आप सुखती चली जायेंगी और बिना चिकित्सा उपचार के भी निरोग बना जा सकेगा।

हकीम लुकमान कहते थे कि मनुष्य समय से पहले मरने और गड़ने के लिए अपनी कब्र अपनी जीभ से खुद खोदता है। इसका तात्पर्य यह था चटोरेपन से वशीभूत जिह्वा अनुपयोगी पदार्थों को अनावश्यक मात्रा में उदरस्थ कराती हैं और जीवन-मरण का संकट उत्पन्न करती हैं।

कहते हैं कि कोई राजा रास्ता भटककर वनवासियों के गाँव में जा पहुँचा। परिचय न होते हुए भी वहाँ के निवासियों ने अतिथि का सत्कार किया और भोजन वस्त्र की यथा सम्भव व्यवस्था कर दी। राजा उनकी सज्जनता से प्रभावित हुए और उस क्षेत्र के लिए एक अस्पताल खुलवा देने का निश्चय किया ताकि वहाँ के लोगों को आरोग्य लाभ मिलता रहे। अस्पताल खुला पर मरीजों के दर्शन न हुए। राजा एक वर्ष बाद प्रगति देखने वहाँ पहुँचे। जब मालूम हुआ कि कोई मरीज नहीं आया तो उस क्षेत्र के लोगों को बुलाकर कहा कि आप लोग अस्पताल का लाभ क्यों नहीं उठाते। इस पर उत्तर मिला के हम बीमार ही नहीं पड़ते तो अस्पताल जाकर क्या करें ? बीमार न पड़ने का कारण राजा ने बहुत आश्चर्य के साथ पूछा इसके उत्तर में ग्रामीणों ने दो बात कहीं एक तो यह कि हम भूख से कम खाते हैं इसलिए बीमार नहीं पड़ते। फिर इतना परिश्रम करते हैं कि यदि कोई बीमारी उपजे भी तो पसीने के रास्ते बहकर बाहर चली जाय। राजा आरोग्य का रहस्य समझ गये और उसने ऐसे लोगों के लिए अस्पताल आनावश्यक समझा और उसे बन्द करा दिया।

कितने ही व्यक्ति अपने आरम्भिक काल में दुर्बल और रुग्ण रहने लगे थे पर उसने जब-जब निर्वाहक्रम को नये सिरे से सुधरा हुआ निर्धारण किया तो स्थिति बदली और दुर्बलता सशक्तता में परिणत हो गई। हिन्द केशरी चन्दगीराम पहलवान उठती उम्र में क्षय ग्रसित हो गये थे और अकाल मृत्यु के मुख में जाने वाले थे। इस स्थिति से छूटने के लिए उन्होंने साहसपूर्वक अपनी जीवन यापन प्रक्रिया में मौलिक अन्तर किया और उस परिवर्तन के प्रभाव से न केवल बीमारी से छूटे वरन् बलिष्ठ पहलवानों की पंक्ति में जा विराजे। विश्व विख्यात पहलवान सेण्डो भी आरम्भ में ऐसे ही दुर्बल थे। वे एक बार किसी प्रदर्शनी में गये और पुष्ट पहलवानों के सुदृढ़ शरीरों को देखा। उनने ललचाई आँखों से अपने पिता से पूछा—क्या ऐसा ही शरीर बना सकना मेरे लिए सम्भव हो सकता है। पिता ने सुनिश्चित उत्तर दिया आहार विहार की रीति-नीति को सही बनाने वाला हर व्यक्ति सुदृढ़ स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है। सेण्डो ने क्या करना चाहिए यह पूछा और जो बताया गया था उसी को दृढ़तापूर्वक क्रियान्वित करने में जुट गया। फलतः स्वास्थ्य सुधरा और वे विश्व विख्यात पहलवान बने।

गाँधीजी जिन दिनों दक्षिण अफ्रीका में थे उन दिनों उनका पेट बुरी तरह खराब रहता था। टट्टी के लिए एनिमा का सहारा लेना पड़ता था। लगता था वे बहुत दिन न जी सकेंगे। स्थिति को बदलने के लिए उन्होंने दृढ़तापूर्वक स्वास्थ्य के नियम अपनाये। प्राकृतिक जीवनचर्या की राह अपनाई और लम्बा जीवन जिया। वे १२० वर्ष जीवित रहने की तैयारी कर रहे थे। दुर्धटना उन्हें उठा न ले गई होती तो सम्भवतः वे उतने दिनों जी भी लेते। ३० वर्ष की आयु में अखण्ड ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर उन्होंने अपनी जीवनी शक्ति में अद्‌भुत अभिवृद्धि की और उस ओजस के बल पर महामानवों की अग्रिम पंक्ति में पहुँच सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोकमान्य तिलक भी बचपन में बहुत दुर्बल और बीमार रहते थे, उनने भी अपना स्वास्थ्य सुधारने का उत्तरदायित्व स्वयं सम्भाला। आहार बिहार में दृढ़तापूर्वक सुव्यवस्था का समावेश किया और बलिष्ठता का उपहार प्राप्त किया, ऐसे असंख्य उदाहरण सर्वत्र मिल सकते हैं, जिनमें नियमत और व्यवस्थित जीवनचर्या अपनाने वालों ने स्वास्थ्य संर्वधन में सफलता पाई और कालाकल्प जैसा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

प्राचीन काल के हनुमान, भीष्म जैसे ब्रह्मचर्य पालनकर्त्ताओं के उदाहरण मौजूद हैं, ऋषि मुनि वन प्रदेश में रहते थे और वहाँ की स्थिति में कष्ट साध्य अभावग्रस्त जीवन यापन करते थे तो भी संयम के प्रभाव से उन्होंने सुदृढ़ दीर्घजीव्रन का सुख भोगा। स्वामी दयानन्द की बलिष्ठता प्रसिद्ध है। उन्होंने एक बार दो मजबूत साँड़ों को आपस में लड़ते हुए देखकर रोका था। दोनों की सींग पकड़कर उन्हें बलपूर्वक हटाया और पीछे धकेल दिया बग्घी को पकड़ कर घोड़ों के हजार प्रयत्न करने पर उसे आगे न बढ़ने देने का भी ऐसा ही एक घटना क्रम है। इसे ब्रह्मचर्य का प्रताप ही कह सकते हैं। वनवासी भील कोल अभावग्रस्त जीवन यापन करते हैं किन्तु समय शील रहकर आजीवन बलवान बने रहते हैं। यदि स्वास्थ्य मर्यादाओं का उल्लंघन न किया जाय तो ईश्वर प्रदत्त सुदृढ़ आरोग्य सहज ही आजीवन अक्षुण्ण बना रह सकता है।

सुकरात से किसी ने पूछा काम सेवन कितने समय बार करना चाहिए ? उत्तर में उसने कहा—जीवन में एक बार करके उसे जान लेना चाहिए कि इसमें बर्बादी के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। प्रश्न कर्त्ता इतने से सन्तुष्ट नहीं हुआ और अधिक छूट की बात करने लगा इस पर सुकरात ने कहा—मन न माने तो वर्ष में एक बार उसे समझा-जाना जा सकता है। इस पर भी उसे सन्तोष न हुआ तो सुकरात ने कहा अधिकतम एक महीने में एक बार की बात तक सोची जा सकती है। प्रश्नकर्त्ता अधिक के लिए आग्रह करता रहा। इस पर झल्लाकर सुकरात ने कहा—जो मर्जी हो करो पर मरने के लिए सिर से कफन बाँधकर तैयार रहो।

यह बात न केवल काम-सेवन पर वरन् सभी इन्द्रिय भोगों पर लागू होती है। यदि उत्पादन से खर्च अधिक किया जाय तो उस अपव्यय के समान संचित पूँजी चुकेगी और पूँजी चुकने पर दिवालिया बनने की तरह आरोग्य के क्षेत्र में भी खोखलापन सामने खड़ा दिखाई देगा।

किसी बुद्धिमान बाप ने मरते समय अपने बेटों को स्वस्थ और समुन्नत रहने के लिए तीन शिक्षायें दीं— (१) फूलों की सेज पर सोना (२) मोहन भोग खाना (३) बड़ों के हाथ पैर तोड़ देना। बच्चे इस पहेली का कुछ अर्थ न समझ सके। गरीबी के रहते फूलों की सेज पर सोना, मोहन भोग खाना कैसे सम्भव हो सकता है तथा बड़ों के हाथ-पैर तोड़ देने से क्या हाथ लगेगा ?

पहले का अर्थ समझाते हुए बच्चों से कहा। फूलों की सेज पर सोने का तात्पर्य यह कि इतना कठोर श्रम किया जाय कि थकान से किसी भी स्थिति में गहरी नींद आ सके। मोहन भोग का तात्पर्य है ऐसी कड़ी भूख लगने पर ही कुछ खाया जाय जिसे रूखी-सूखी दाल रोटी मोहन भोग जैसी स्वादिष्ट लगे। बड़ों के हाथ-पैर तोड़ने का मतलब यह है कि उनके कामों में हाथ बँटाने का सत् प्रयत्न किया जाय ताकि महत्वपूर्ण कार्यों का अनुभव हो सके और उनकी बारीकियाँ समझ में आ सकें।

शारीरिक और मानसिक आरोग्य को अक्षुण्ण रखने तथा बढ़ाने के लिए यह स्वर्णिम सूत्र सदा सबके लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होते रहेंगे।

आरोग्य का रहस्य बताते हुए पक्षी रूप में किसी दिव्यात्मा ने महर्षि चरक को तीन सूत्र बताये थे। ऋतमुक, हित मुक, मित मुक।

सात्विक और गुणकारी पदार्थों को यदि सीमित मात्रा में खाया जाय तो पाचन क्रिया ठीक बनी रहेगी और स्वास्थ्य पर आँच न आने पावेगी। ईश्वर प्रदत्त सुदृढ़ शरीर और सुनिश्चित आरोग्य का सर्वनाश हम अपने हाथों आप ही करते हैं। उसे अक्षुण्ण बनाये रहने की कुँजी भी अपने हाथ में है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रफुल्लता सुगठित स्वास्थ्य हेतु अनिवार्य आवश्यकता

आहार-विहार की सरल सौम्य स्थिति बनाये रहने पर शरीर समर्थ निरोग और दीर्घजीवी बनता है। स्वच्छ एवं पोषक अन्न-जल और वायु के मिलने पर अरोग्य सन्तुलन बिगड़ने नहीं पाता और उस घोंसले के भीतर रहने वाला पक्षी-प्राणी—सुखपूर्वक निर्वाह करता है। रोग उत्पन्न करने वाली अस्वच्छता-जातिवादिता से यदि बचे रहा जा सके तो शरीर की अन्तःशक्ति चिरकाल तक अक्षुण्ण रह सकती है और जीवन का भौतिक आनन्द लिया जा सकता है।

ठीक इसी प्रकार सूक्ष्म शरीर की मस्तिष्कीय चेतना की बात है यदि विक्षोभों, उत्तेजनाओं और आवेशों के झंझट दचके लगने से उसे बचाया जा सके और सरल सन्तोष हँसता-खेलता हल्का-फुल्का मन रखा जा सके तो मानसिक स्वास्थ्य ठीक बना रहेगा और उस स्थिति में शरीर के स्वस्थ्य, सुन्दर, स्फूर्तिवान रहने से भी अधिक ऊँचे स्तर का—आनन्द उल्लास अनुभव किया जा सकेगा। स्वस्थ और सुन्दर शरीर के प्रति दूसरों का सहज आकर्षक होता है। उस तेजस्विता से प्रभावित होकर अनेकों मित्र सहयोगी बनते हैं। मन मानसिक स्वास्थ्य इससे भी बढ़कर है। हँसते-हँसाते हल्के-फुल्के, खेलते-खिलाते स्वभाव का मनुष्य अत्यधिक आकर्षक होता है और अपने विराने का भेदभाव किये बिना हर कोई उसका कितना सान्निध्य चाहता है। अपने आप में प्रसन्न, सन्तुष्ट रहना-आशान्वित और उल्लसित अनुभूतियों का रसास्वादन करते रहना कितना सुखद होता है इसे अनुभवी ही जानते हैं।

देवताओं की सुन्दरता-सक्रियता एवं विशेषता का सुविस्तृत वर्णन पुराणों में मिलता है। अलंकार भाग को छोड़ दिया जाय तो देव वर्णन जो स्तरीय विभूतियाँ उन मनुष्यों पर लागू होती हैं, जो सुखी एवं सन्तुष्ट रहते हैं। ऐसे लोग जहाँ भी रहते हैं वहाँ स्वर्ग जैसा वातावरण बन जाता है। स्वर्ग कोई स्थान विशेष नहीं है किसी ग्रह नक्षत्र पर वैसा कोई नगर शहर बसा हुआ नहीं है। परिष्कृत दृष्टिकोण का नाम ही स्वर्ग है। जिस रंग का चश्मा पहना जाता है, उसी रंग की हर चीज दिखाई पड़ती है। यदि अपनी दृष्टि में हर्षोल्लास के बीज मौजूद हों तो संसार का प्रत्येक पदार्थ और प्राणी आनन्द प्रदान करने वाली प्रतिक्रिया उत्पन्न कर रहा होगा। इस आधार पर समीपवर्ती लोग—परिवारी कुटुम्बी और भी अधिक उल्लसित रहते हैं। अपना छोटा घर घरौंदा ही स्वर्गीय वातावरण से ओत-प्रोत बन जाता है।

सुकरात अपने समय के ग्रीस निवासी कुरूपों में एक थे पर उनके आन्तरिक सौन्दर्य की संसार के तत्वदर्शियों ने स्वर में प्रशंसा की है। अष्टावक्र ऋषि आठ जगह से टेड़े-मेड़े थे पर राजा जनक सहित पूरे विद्वान मण्डल के उनका उच्चस्तरीय मूल्यांकन किया। चाणक्य की कुरूपता प्रख्यात है। द्रोपदी काली-कलूटी होने के कारण कृष्णा कहलाती थी। गाँधीजी को कार्य सौन्दर्य की परख पर कुरूपों की ही पंक्ति में खड़ा किया जायेगा पर इससे उनके यथार्थ मूल्य में कोई अन्तर नहीं आया। विनोवा की शरीर सुन्दरता कहाँ है ?

आरोग्य शास्त्र के नवीन अनुसंधानों ने यह सिद्ध किया है कि शारीरिक स्वास्थ्य वस्तुतः मानसिक स्वास्थ्य की प्रतिच्छाया है। मानसिक स्थिति की प्रतिक्रिया स्वास्थ्य की उन्नति पर तत्काल देखी जा सकती है।

कोलगेट विश्वविद्यालय, मिल्टन (न्यूयार्क) की मनोविज्ञान प्रयोगशाला के निर्देशक **डॉ० डोनाल्ड ए० लेयर्ड** का कथन है अपच, गठिया तथा दूसरे सकुड़न सम्बन्धी रोग उन्हें अधिक सताते हैं, जिन्हें अपने जीवन में गहरा प्रेम न मिल सका। चिकित्सक चाहें तो उन्हें अपना प्रेम देकर भावनात्मक रक्त संचार कर सकते हैं और उसका वैसा ही चमत्कारी असर देखा जा सकता है जैसा सर्वथा अशक्त रोगी को बाहरी रक्त देने पर देखा जाता है।

मनोविज्ञानी चिकित्सा के निष्णात प्रो० ऐडेम ने कितने ही असाध्य और कष्टसाध्य रोगियों का उपचार किया है और उन्हें चिरकाल से चली आ रही आधिव्याधियों से मुक्त कराया है। वे अपनी चिकित्सा पद्धति को 'हँसी चिकित्सा' का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाम देते हैं, वे कहते हैं जो व्यक्ति जी खोलकर हँस सकता है, उसे किसी भी रोग से छुटकारा दिलाया जा सकता है। असाध्य तो वे हैं जो हर समय उदास, निराश और खीजे हुए दिखाई देते हैं और मन को सदा भारी किये रहते हैं।

न केवल बीमारियों के इलाज में वरन् नव-यौवन को वापिस बुलाने के लिए भी अपनी पद्धति को बहुत उपयोगी पाया है। उनका दावा है कि हँसोड़ आदमी अपना जी हल्का-फुल्का रखकर बुढ़ापे से बच सकता है—उसके चंगुल से छूट सकता है और नव यौवन का आनन्द ढलती उम्र में भी लेता रह सकता है। झुर्रियाँ मिटाने और चेहरे पर चमक लाने का इससे अच्छा उपचार दूसरा नहीं है।

इङ्गलैण्ड के सुप्रसिद्ध चिकित्सक और संगीतज्ञ जान आर्मस्ट्रॉंग कहा करते थे—संगीत से बढ़कर आरोग्यदायिनी शक्ति और किसी दवा में नहीं है। यदि भावविभोर होकर गाया जा सके और मस्ती के साथ बजाया जा सके इससे तो गायक वरन् सुनने वाले भी सुस्थिर स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं। उनके चिकित्सालय में रोगी मस्ती उत्पन्न करने वाले गीत वाद्य सुना करते थे और दुहरा लाभ प्राप्त करके जाते थे।

बालकों, युवकों और प्रौढ़ों की तुलना में बूढ़ों को ही बीमारियाँ अधिक मात्रा में क्यों घेरती हैं ? इसका अनुसंधान अमेरिकन मेडीकल एसोसियेशन की एक शोध समिति ने निरन्तर सात वर्ष तक किया और निष्कर्ष निकाला कि—इसका प्रमुख कारण शरीरगत अक्षमता नहीं वरन् इर्द-गिर्द घिरे जाने वाला वातावरण है। सबसे बड़ी कठिनाई यह माननी पड़ती है कि पचपन वर्ष के बाद उन्हें बलात् कार्य मुक्त कर दिया जाता है। यह मानवी अनुभव और कर्त्तव्य का बड़ा कारुणिक विकास है। काम करने योग्य रहने पर भी—तरुणों की अपेक्षा अधिक अनुभवी होने पर भी—उनके हाथ से काम छिन जाता है और बुढ़ापे में ठोकरों जैसी जिन्दगी बिताने के लिए विवश होना पड़ता है। यह शिर पर थोपी गई बलात् अक्षमता उन्हें अयोग्य, अशक्त और निरर्थक हो जाने की अनुभूति कराती है और उस निराशा से ग्रसित होकर उस मनोबल को खो बैठते हैं, जो उनकी सक्षमता और निरोगता के लिए अति महत्वपूर्ण था।

वे अपने को परमुखापेक्षी अनुभव करते हैं। सरकार पेन्शन देगी—कुटुम्बी उनकी सहायता करेंगे। वे अपने बाहुबल से अपनी नाव नहीं खे सकते किन्हीं दूसरों की कृपा पर निर्भर रहना पड़ेगा यह सोचते ही उनका आत्म विश्वास हिल जाता है और उस हिली हुई खोखली नींव में होकर एक-एक करके अशक्ततायें और बीमारियाँ दीमकों की तरह प्रवेश करने लगती हैं, यहाँ तक कि उस वृद्ध को समय से बहुत पहले मृत्यु के मुख में घसीट ले जाती है।

शरीर विज्ञानी कहते हैं आयु का मृत्यु से सीधा सम्बन्ध नहीं है। शरीर के अवयवों को पहुँचने वाली क्षति ही मरण का प्रधान कारण है। यदि शक्ति का अनावश्यक क्षय करने वाले व्यवधानों से बचा जा सके तो मनुष्य अप्रत्याशित रूप से दीर्घजीवी हो सकता है। शक्ति को सन्तुलन रूप से खर्च किया जाय—अपव्ययों को रोका जाय और आये दिन जो शारीरिक, मानसिक भावनात्मक आघात लगते हैं, उनसे बचा जा सके तो मृत्यु का दिन अधिकाधिक दूरी तक धकेला जा सकता है।

डॉ० सी० वार्ड क्रैम्पटन का कथन है, "हम में से अपनी मौत तो बहुत कम मरते हैं वस्तुतः आत्म हत्या के पीछे प्रयास में संलग्न रहकर ही समय से पूर्व मृत्यु को आग्रहपूर्वक बुलाते रहते हैं।"

डेवी ने लिखा है—शरीर को सही रखने के लिए व्यायाम का, मस्तिष्क को सही रखने के लिए अध्ययन का और हृदय को सही रखने के लिए प्रेम का सहारा नहीं ही छोड़ा जाना चाहिए। यदि यह साधन सुसन्तुलित रूप से उपलब्ध होते रहें तो बुढ़ापा और मौत दोनों ही बहुत आगे धकेले जा सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सशक्त दीर्घजीवन का राजमार्ग

हमें दीर्घजीवी ही होना चाहिये

भारतीय ऋषि-मुनियों ने अपने अनुभव के आधार पर मनुष्य की सामान्य आयु एक सौ पच्चीस वर्ष घोषित की है। यदि उन नियमनिष्ठ तथा तपःपूत ऋषि-मुनियों के विशिष्ट जीवन से तुलना न भी की जाये, तब भी संसार के सामान्य मनुष्यों की एक सौ साल आयु सर्वमान्य है। संसार के सभी प्राणिशास्त्री, अनुभवी तत्ववेत्ता तथा आयुर्वेदविज्ञ का स्वर से स्वीकार करते हैं कि मनुष्य की औसत आयु सौ साल होनी चाहिये।

यह कथन मात्र कल्पना अथवा आदर्श ही नहीं, एक सत्य है, जिसको हजारों व्यक्तियों के शत-शारदीय ही नहीं इससे भी अधिक जीवन में अनेक बार अनेक स्थानों में देखा गया है और आज भी देखा जा रहा है। जब से इन आयु-अनुपात की दिलचस्पी खोजियों में पैदा हुई है नित्य ही शतायु लोगों की खबरें नाम, निवास के साथ अखबारों में छपती रहती हैं। आये दिन प्रमाण के साथ पत्र-पत्रिकाओं में लेख छपते रहते हैं। क्या यह कोरी गप अथवा झूँठा प्रचार है ? हाँ, यह उनके लिये गप अथवा झूँठा प्रचार हो सकता है, जो मनुष्य की दीर्घकालीन जीवनी शक्ति में विश्वास नहीं रखते और शरीर को अनियन्त्रित वासनाओं का माध्यम मात्र मानकर इसे शीघ्र क्षयवान् मानते हैं। किन्तु शतायुता की बात उन मानव-मनीषियों के लिये एक ज्वलन्त सत्य है, जो उसमें विश्वास करते हैं और अपने इस अधिकार के उपभोग की क्षमता के लिये आवश्यक कर्त्तव्यों का पालन करने में तत्पर रहते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस प्रकार के अखण्ड आत्मविश्वासी इस शतशारदीय सत्य के दर्शन करते हैं, कर रहे हैं और करते रहेंगे।

मिश्र में सिकन्दरिया से दक्षिण-पूर्व में लगभग एक सौ चालीस-व्यालीस मील पर बसे गाजियाना गाँव में चला जाय तो एक सौ सात वर्ष से भी चार-छः महीने ज्यादा आयु वाले रजा-बका से मिल लें।

रजा-बका आजकल अमेरिका, स्वीडन, कैलीफोर्निया आदि अनेक देशों के स्वास्थ्य-विशेषज्ञों तथा प्रणिशास्त्रियों के लिये एक आकर्षण बिन्दु पर बने हुए हैं। नित्य ही डॉक्टरों तथा अन्वेषकों के दल के दल रजा-बका से मिलने जा रहे हैं, उनकी दिनचर्या देख रहे हैं और दीर्घायु का रहस्य खोज निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं। संसार के सारे परिचित स्वास्थ्य-विशेषज्ञों ने रजा-बका को मानव-वैचित्र्य की उपाधि दे रक्खी है। निःसन्देह रजा-बका मानव-वैचित्र्य ही हैं और उन्होंने आज की स्वास्थ्य सम्बन्धी मान्यताओं, धारणाओं तथा न जाने कितने विश्वासों को अपनी स्वस्थ आयुता से चुनौती दे दी है।

रजा-बका केवल दीर्घजीवी ही नहीं है, स्वास्थ्य के हर लक्षण से भरपूर एक तरुण हैं। उनकी आयु तो एक सौ सात-आठ की है ही। उनका बदन छरहरा और स्फूर्तिपूर्ण है। वजन एक सौ तेईस-चौबीस पौंड। लम्बाई पाँच फुट, आठ इञ्च है। एक स्वस्थ व्यक्ति के यह सब लक्षण होने के साथ जो सबसे विशेष बात है वह यह है कि इस आयु में भी उनकी त्वचा में एक भी झुर्री नहीं है। कमर बिल्कुल सीधी और लोचदार है। एक-एक बाल काला और प्रत्येक दाँत दृढ़ और पूर्ण हैं। अवयव सुडौल और आँखों की रोशनी पूरी तरह सुरक्षित है। आरोग्य तथा शरीर-शास्त्र के अधीन जाँच करने वाले डॉक्टरों ने बतलाया है कि इस लम्बी आयु में रजा-बका में तीस साल के परिपुष्ट तरुण की सारी विशेषतायें पूरी तरह से विद्यमान हैं। रजा-बका आज भी उतना ही श्रम कर लेते हैं जितना कि वे तीस-बत्तीस साल की तरुण आयु में कर लेते थे। उनकी शारीरिक अथवा मानसिक शक्तियों में किसी प्रकार का भी ह्रास नहीं हुआ है।

आज के अस्वस्थ एवं अल्पजीवी जन-समुदाय के लिये रजा-बका आश्चर्य अथवा अपवाद हो सकते हैं, किन्तु वास्तविकता यह है कि वे मानव-जीवन के सही और सच्चे नमूने हैं। सामान्यतः मनुष्य का जीवन ऐसा ही होना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए। आश्चर्य अथवा अपवाद तो उस पर आरोपित अस्वास्थ्य एवं अल्पायु से होता है।

फ्रांस के प्रसिद्ध सर्जन डॉ० वेर्ताँ रोशे ने चार दिन तक रजा-बका के सम्पर्क में रहकर और उनके शरीर के विभिन्न परीक्षण के बाद जो बात कही है, वह वास्तव में बड़ी ही सत्य, महत्वपूर्ण तथा ध्यान देने योग्य है। उन्होंने कहा—"रजा-बका से मिलने, उनका परीक्षण कर दिनचर्या एवं रहन-सहन देखने और अपने सहयोगी डाक्टरों से विचार-विमर्श करने के बाद मैं जिस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ, वह यह है कि रजा-बका का स्वास्थ्य आज के न जाने कितने स्वास्थ्य सम्बन्धी सिद्धान्तों एवं स्थापनाओं के समक्ष एक पर्वताकार चुनौती है। ऐसा लगता है कि स्वास्थ्य जैसे सरल एवं सामान्य विषय को आज हमने बहुत ही जटिल बना डाला है।"

स्वयं रजा-बका का कथन और भी अधिक प्रामाणिक तथा उनके आरोग्यपूर्ण दीर्घजीवन का रहस्य उद्घाटित करने के लिये उपयुक्त है। उन्होंने एक साक्षात्कार के अवसर पर अपने विषय में बतलाते हुए कहा कि—वे एक गरीब किसान हैं। पढ़ना-लिखना हमारी पीढ़ी के भाग्य में नहीं था। किन्तु हमारी पीढ़ी आज की पीढ़ी की तरह रोग-शोक से दुःखी नहीं रही है। मेरी सारी जिन्दगी खेतों पर ही बीती है और आज भी आठ घण्टे से कम खेतों पर काम नहीं करता। मुझे अपने जानवरों से बहुत प्यार है। इसीलिये माँस नहीं खाता मैं ही नहीं, मेरे परिवार में कोई भी माँस नहीं खाता। कम-से-कम पका हुआ भोजन करता हूँ और दोनों समय बकरी अथवा गाय का दूध पीता हूँ। अनाज से ज्यादा शाक-भाजी खाता हूँ। शराब या किसी नशे के नाम पर मैंने आज तक कोई चीज नहीं छुई। कुरान की हिदायत के अनुसार शराब पीना पाप समझता हूँ। खुदा पर पूरा अकीदा रखता हूँ। पाँचों वक्त नमाज पढ़ता हूँ। खुदा के नाते हर आदमी को अपना भाई समझकर प्यार करता हूँ। अपने बारे में कभी शिकायत नहीं करता। खुदा जिस तरह रखता है उसी तरह रहकर खुश रहता हूँ। खुले में सोता हूँ और नौ गज कपड़े में साल काट लेता हूँ। जहाँ तक बनता है दूसरों तथा जरूरतमन्दों की मदद करता हूँ। जरूरत की जगहों पर मैंने अब तक नौ कुएँ अपने हाथ से खोदे हैं।

इन सब बातों को सुनते-समझते हुए यही मानना पड़ता है कि अपने आरोग्य तथा अल्पायु का कारण हमारा अनियमित खान-पान तथा रहन-सहन है। नहीं तो कोई कारण नहीं कि जिस प्राकृतिक जीवन से कोई एक दीर्घजीवी होकर स्वस्थ रह सकता है तो हम सब क्यों नहीं रह सकते ? हम आज जितना-जितना प्राकृतिक जीवन से हटकर कृत्रिम जीवन की ओर बढ़ते जाते हैं, स्वास्थ्य के साथ अपनी आयु भी कम करते जाते हैं। मनुष्य मात्र एक प्राणी ही नहीं बल्कि प्रकृति का प्यारा पुत्र है, तब कोई कारण नहीं कि प्रकृति माता ने जो सौ साल की औसत आयु अपने पुत्र को दे रक्खी है, उनमें से किसी-किसी को पूरी तथा किसी-किसी को अल्पायु दे। प्रकृति ऐसा अन्यायपूर्ण पक्षपात नहीं कर सकती। उसने अपने सभी पुत्रों के लिये एक समान ही दीर्घायु निर्धारित की है। यह हम सब ही हैं, जो उसके नियमों का उल्लंघन करके अपनी आयु घटा लेते और स्वास्थ्य चौपट कर लेते हैं। यदि आज से ही हम अधिक से अधिक प्रकृति के निकट और सहज जीवन से रहने लग जायें तो हमारी आयु की क्षीणता दूर होने लगे। स्वास्थ्य तथा दीर्घ जीवन का रहस्य प्राकृतिक जीवन ही है। आज का कृत्रिम जीवन आरोग्य तथा आयु का बहुत बड़ा दुश्मन है।

प्रकृति ने जो आहार हमारे लिये निर्धारित किया है, उसे खायें और जीवन के आवश्यक नियम-संयम का निर्वाह करते हुए मनोबल के साथ आत्म-विश्वास बढ़ाते रहें तो अवश्य ही सौ साल तक स्वस्थ एवं सुखकर जीवन जी सकते हैं। जब सृष्टि के सारे जीव सामान्यतः अपनी निर्धारित आयु अपेक्षित स्वास्थ्य के साथ जीते हैं तो मनुष्य अपनी निर्धारित शतशारदीय आयु का भोग क्यों नहीं कर सकता ? कर सकता है, किन्तु तभी जब वह उस अधिकार के सम्बन्ध में अपने सारे कर्त्तव्यों का ईमानदारी के साथ पालन करे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जीवेम शरदां शतम्

संसार के सुखोपभोग करते हुए लम्बी आयुष्य प्राप्त करने की इच्छा सभी को होती है। जल्दी मर जाने की बात किसी को पसन्द नहीं आती। यह स्वाभाविक भी है। यह मानना भूल है कि आयु की घड़ियाँ पूर्व निर्धारित होती हैं। किसी को पच्चीस और किसी को पचास वर्ष की आयु देने का अन्याय ईश्वर नहीं कर सकता। दीर्घ जीवन के नियमों का पालन करते हुए हर कोई सौ वर्ष का जीवन सुख और सुविधापूर्वक बिता सकता है। आरोग्यविद्या विशारद् **डोनल्ड सिम्पसन** का मत है कि "वर्तमान में जीवनयापन में जो जटिलताओं और विषमताओं का प्रवेश हो गया है, उनके रहते हुए भी मनुष्य अपनी इच्छानुसार आयु को लम्बा बना सकता है।" अभी यह समय भी दूर नहीं गया है, जब हमारे पुरखे मनमानी उम्र का उपभोग करते थे।

अपनी नियमित दिनचर्या के कारण पितामह भीष्म चोटों और घावों से क्षात-विक्षत होते हुए भी उत्तरायण सूर्य आने तक हठात् जीवन धारण किये रहे। राजा सत्यवान्, मार्कण्डेय आदि आप्त पुरुषों ने इच्छानुवर्ती आयु प्राप्त की, सोलहवीं सदी में इटली का एक साधारण नागरिक लुई कोरनारो अपनी संयत दिनचर्या के कारण दो सौ साल से अधिक जीवित रहा। उसने कभी भी माँस, शराब आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन नहीं किया था। खाओ, पिओ और मौज करो की नीति नितान्त भ्रामक है। इससे जीवन-शक्ति का क्षय होता है। मृत्युकाल पूर्व-निश्चित है, यह विश्वास मानकर जीने-वाले, जो जी में आये कर डालने वाले असमय ही मौत को निमन्त्रण दे देते हैं।

इस सम्बन्ध में प्रमुख अनियमितता है आहार की और वैज्ञानिक जानकारी का अभाव। केवल स्वाद के लिये चटपटे मसालेदार खाद्य पदार्थ जुटाने और फिर उन्हें दिन में कई बार जब जी में आये पेट की आवश्यकता व स्थिति का विचार किये बिना उदरस्थ करते रहने की आदत अत्यन्त दोषपूर्ण है। अधिक से अधिक प्राकृतिक नियमों के समन्वय से ही इस दिशा में सुधार सम्भव है। मिताहार भी उतना ही आवश्यक है। मैसूर निवासी सर विश्वेश्वरैया शतायु होते हुए भी ५० वर्ष के लगते हैं। चुस्त व सजग हैं। इसका कारण वे व्यायाम और मिताहारी होना बताते हैं। त्रिवेन्द्रम आयुर्वेद कालेज के दीर्घायुषी वर्तमान प्रिन्सिपल का तो गत ३० वर्ष तक वजन एक-सा बना रहा। वे स्वास्थ्य के चार प्रयोग बताते हैं। (१) नित्य तेल मालिस, (२) नियमित व्यायाम, (३) छाछ और (४) मिताहार।

ब्राजील के वयोवृद्ध प्राध्यापक का कहना है कि संयत जीवन से १२० वर्ष जीना सम्भव है बशर्ते कच्चा खायें, ताजा खायें और खुली वायु का सेवन करें। वे भोजन को ३२ बार चबाकर निगलने पर अधिक जोर देते हैं। संसार के सबसे अधिक दीर्घजीवी बलगेरिया के लोग हैं। वैज्ञानिकों ने इसकी गहन शोध की और बताया कि इसका मामूली-सा कारण है और वह यह है कि यहाँ के लोग आहार के सम्बन्ध में बहुत सतर्कता बरतते हैं।

आहार के सम्बन्ध में यह विशेष उल्लेखनीय है कि सच्ची व परिपक्व भूख लगने पर ही खाना खायें। लन्दन के स्वास्थ्य विशेषज्ञ ब्लाडीमीर कोरेचोवस्की का मत है—"भूख से जितना अधिक खाते हैं, समझना चाहिये कि हम उतना ही विष खाते हैं।"

केवल आहार की ओर सावधानी बरतना पर्याप्त न होगा, वीर्य-रक्षा भी उतना ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। क्षणिक सुख के लिये अपना जीवन-तत्व निचोड़ते रहने वालों को असमय ही मौत का शिकार होना पड़ता है। ब्रह्मचर्यपूर्वक जीवन जीने से शक्ति बढ़ती है, ओजस् निखरता है और आयु लम्बी होती है। महात्मा गाँधी ने ३६ वर्ष की उम्र में ब्रह्मचर्य के महत्व को समझा और उसका पालन किया। वे कहा करते थे कि मैं १२५ वर्ष जीऊँगा। ८० वर्ष की आयु में वे पूर्ण निरोगी थे। गोली न मारी जाती तो उनकी इच्छा निश्चय ही पूर्ण होती।

इसी प्रकार शारीरिक और मानसिक सन्तुलन बनाये रखने के लिये श्रम का अधिक महत्व है। इससे शरीर चुस्त, खून गर्म तथा पाचन-संस्थान सशक्त बना रहता है। जो लोग यह मानते हैं कि व्यायाम और शारीरिक परिश्रम से शक्ति का क्षरण होता है वे भारी भूल करते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं। यह बात दैनिक प्रयोगों से भली भाँति जानी जा सकती है। ऑफिस में काम करने वाले क्लर्कों का स्वास्थ्य उतना अच्छा नहीं होता जितना खेत में काम करने वाले किसान का। भारतीय आयु सर्वेक्षण के आँकड़ों से पता चलता है कि उत्तर प्रदेश के लोगों की औसत आयु प्रान्तों की तुलना में अधिक बैठता है और इसका कारण वहाँ के लोगों का अधिक श्रमशील होना ठहराया गया है। अधिकांश में खेतिहर प्रान्त होने के कारण लोगों को कठिन परिश्रम करना पड़ता है। इससे स्वाभाविक भूख, प्राकृतिक आहार और स्वच्छ हवा की आवश्यकता सरलता से पूरी होती रहती है। दैनिक जीवन में शारीरिक श्रम का प्रचुर स्थान बनाये रखना चाहिये।

तुर्की का जारुआगा व्यक्ति सन् १६३४ में १६४ वर्ष की अवस्था में मरा। इस अवधि में उसने १३ शादियाँ कीं और अपने पीछे ३६ बेटे छोड़े। जब कभी लोग उससे इसका कारण पूछते तो वह कहता कि मैंने अपने आपको नशों से बचाया। उसने जीवन भर कभी शराब नहीं पी। अफीम, चरस, गाँजा, भाँग आदि नशीली वस्तुओं का प्रयोग बड़ी ही हानिकारक होता है। इनसे निकलने वाला टार और निकोटीन विष मानव-शरीर के सभी जीवन-तत्वों को सुखाकर खोखला बना देता है। ऐसी अवस्था में पूर्ण आयु प्राप्त करने की बात सोची भी नहीं जा सकती।

जीवन-रक्षा के नियमों में जितना उपर्युक्त व्यावहारिक बातों का पालन अनिवार्य है, उतना ही मानसिक आघातों से बचाव का भी पूरा ध्यान रखने की आवश्यकता है। क्रोध, उत्तेजना, चिन्ता, चिड़चिड़ापन, निराशा और जल्दबाजी से स्नायु संस्थान में बार-बार उत्तेजना और शिथिलता उत्पन्न होती है, जिससे खून के सशक्त जीवाणु मर जाते हैं और शरीर की सामान्य गतिविधि भी बोझिल-सी लगने लगती है। एक प्रयोग से जर्मनी डॉक्टरों ने पता लगाया कि एक बार के क्रोध से ८।। घण्टे तक काम करने सकने वाली शक्ति का नाश हो जाता है। सो मानसिक अस्त-व्यस्तता से अबूझ बने रहना दीर्घ जीवन के लिये उतना ही हानिप्रद है, जितना किसी विष के प्रत्यक्ष प्रयोग से। इङ्गलैण्ड के प्रसिद्ध चिकित्सक **हार्डर** का कहना है—"जैसे बने आप प्रसन्नचित्त रहें तो आपका स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहेगा। दीर्घ जीवन की कुञ्जी है आपकी मानसिक प्रसन्नता। अतः इसे किसी कीमत पर न लुटाइये।"

ये नियम इतने सस्ते, सरल व सर्वसुलभ हैं कि इन्हें हर कोई प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण कर सकता है। ऐसी कोई चीज नहीं जिनके लिये लम्बी दौड़-धूप, भारी सिफारिश तथा ऊँचे मूल्य की आवश्यकता हो। इन साधनों के बरतने में ऊँच-नीच, छोटे-बड़े का भेद-भाव भी कहीं नहीं। यदि कुछ त्रुटि है तो वह इतनी ही समझ में आती है कि लोग जीवन जीने के नियमों को जान-बूझकर लात मार रहे हैं। अपनी त्रुटिपूर्ण व्यवस्था की ओर ध्यान न दें, ईश्वर को अपराधी ठहराने की बात न्यायसङ्गत नहीं लगती। यह भी दोष देना उचित प्रतीत नहीं होता कि आज की परिस्थितियाँ वैसी नहीं जैसी हमारे पूर्वजों को प्राप्त थीं। दूध, घी का अभाव दीर्घजीवी होने के मार्ग में उतना बाधक नहीं जितना आज लोगों की गलत दिनचर्या तथा दोषपूर्ण आहार-विहार क्रम है।

सभी चाहते हैं कि उन्हें दीर्घ जीवन का सुख मिले। पूर्ण स्वस्थ व नीरोग जीवन की आकांक्षा हर किसी को होती है, पर इसके लिये जिन बातों के अनुसरण की आवश्यकता होती है, उनसे भटककर लोग सीधे शार्टकट रास्ते से आगे बढ़ना चाहते हैं पर अभी तक कोई ऐसा सस्ता मार्ग बना नहीं। इसका एक ही उपाय है—सादा भोजन, संयमित आहार-विहार और अधिकाधिक प्राकृतिक जीवन। इन्हीं का विस्तार करके धूप-सेवन, हल्के और ऐसे वस्त्र जिनको पहनने पर भी मौसम का शरीर पर प्रभाव पड़ता रहे, स्नान आदि की व्यवस्था आदि नियमों का प्रतिपादित किया जा सकता है। पर वे सभी संयमित दिनचर्या के ही विभिन्न अङ्ग हैं।

मनुष्य जीवन बड़े उपयोग की वस्तु है। इसे यूँ ही उपेक्षापूर्वक बिता देना बुद्धिमानी की बात नहीं। यह अवसर बार-बार नहीं आता। इसलिये इसका भरपूर उपयोग करने की सतर्कता हर एक को बरतनी चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम दीर्घजीवी क्यों नहीं बन पाते ?

वेदों में मनुष्य की औसत आयु सौ वर्ष बताई गई है। "जीवेम शरदां शतम्" हम सौ वर्ष तक जिएँ। प्रकृति के नियमानुसार भी मनुष्य की आयु सौ वर्ष से ऊपर ही मानी गई है। प्रकृति का यह सामान्य नियम है कि जो प्राणी जितने समय में प्रौढ़ होता है, उससे पाँच गुना जीवन जीता है। नियमानुसार घोड़ा पाँच वर्ष में युवा होता है तो घोड़े की उम्र २५ वर्ष से ३० वर्ष तक मानी गई है। ऊँट ८ वर्ष में प्रौढ़ होकर ४० वर्ष तक, कुत्ता २ वर्ष में विकसित होकर १० वर्ष तक और हाथी ५० वर्ष में युवा होकर २०० वर्ष तक जीवित रहता है। मनुष्य भी साधारणतया २५ की उम्र में युवा होता है। अतः १०० से १५० वर्ष तक की उम्र मानी गई है उसकी।

शरीर और आयु विज्ञान के अमेरिकी विद्वान् डॉक्टर कार्लसन ने कहा है यदि प्रकृति के नियम और गणित के हिसाब से मनुष्य की आयु १५० वर्ष होती है फिर भी मोटे रूप में उसको १०० वर्ष तो मान ही लेनी चाहिए यदि आयु-सीमा केवल अनुमान मात्र ही नहीं है अपितु सही है। गोस्वामी तुलसीदास जी १०० वर्ष से अधिक जीवित रहे। इससे पूर्व महाभारत काल में श्रीकृष्ण की आयु १२७ वर्ष और पितामह भीष्म की दो-सौ वर्षों से भी अधिक मानी गई है। आधुनिक युग में भी अनेकों शतजीवी हुए हैं। भारत के महर्षि कर्वे, महान् इञ्जीनियर विश्वैश्वरैया शतायु हुए हैं। भारत में तो सौ वर्ष जीवन की स्वाभाविक आयु मर्यादा मानी गई है।

विदेशों में भी नारवे का क्रिश्चियन डैकनवर्ग १४६ वर्ष तक जीवित रहा। उसने १३० वर्ष की उम्र में अपना अन्तिम विवाह किया। इससे पूर्व १११ वर्ष की उम्र में एक ६० वर्षीय विधवा से विवाह किया था। सौ वर्ष की उम्र तक वह सिपाही के रूप में शत्रु देश से लड़ता रहा। प्रसिद्ध प्रकृतिवादी डेमोक्रेटिस जीवन भर स्वस्थ, नीरोग रहकर १०६ वर्ष तक जीवित रहे। जोसफ़ सूरिंगटन १६० वर्ष तक जीवित रहा। उसके सबसे बड़े पुत्र की आयु १०८ वर्ष की थी तो छोटे की नौ वर्ष। हंगरी का बोविन १७२ वर्ष तक जीवित रहा उसकी पत्नी १६४ वर्ष की थी।

इस तरह के असंख्यों उदाहरण भरे पड़े हैं, जो मनुष्य के शतजीवी अथवा सौ वर्ष से अधिक होने से प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इतना ही नहीं प्राणियों के जीवनकोषों का स्वभाव सदा-सदा जीवित रहने का प्रयत्न करना है। वैज्ञानिक खोजों से यह सिद्ध हो चुका है कि—"प्राकृतिक रूप में भी मृत्यु निश्चित नहीं है।" प्रसिद्ध जीवन शास्त्री डॉ० अलेक्सिस कैरेल ने एक मुर्गी के भ्रूण को ३६ वर्षों तक तरल पोषक पदार्थ में सुरक्षित रखा। ३६ वर्ष के पश्चात् उन्होंने अपना प्रयोग इस निष्कर्ष पर बन्द कर दिया कि वह भ्रूण इसी तरह सदा-सदा जीवित रखा जा सकता है।

पूर्व मनीषियों के अनुभवपूर्ण, निष्कर्षों, वैज्ञानिकों के प्रयोग, प्रकृति की स्वाभाविक नियम मर्यादाओं के अनुसार मनुष्य की औसत आयु सौ वर्ष मान लेने की शङ्का की कोई गुञ्जायश नहीं।

आज के तथाकथित वैज्ञानिक और विकसित युग में स्थिति कुछ इससे भिन्न है। अधिकांश लोग सौ वर्ष के पूर्व ही जीवन समाप्त कर देते हैं और वह भी जीवन भर स्वास्थ्य की खराबी की चिन्ता नहीं करते हुए अनेकों रोग बीमारियों के शिकार बनकर। सुखपूर्ण स्वाभाविक और प्राकृतिक मृत्यु तो शायद ही किसी को प्राप्त होती हो। ५०-६० वर्ष की उम्र में काफी समझ ली जाती है।

कुछ समय पूर्व पश्चिमी जर्मनी में ३० देशों के लगभग १००० वैज्ञानिक जीवन शास्त्री मानस-रोग विशेषज्ञों का एक बड़ा सम्मेलन हुआ था, जिसमें आधुनिक युग में गिरते जा रहे स्वास्थ्य, असामयिक बुढ़ापे और अकाल मृत्यु पर विचार-विमर्श किया गया था इन सभी विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाला कि "शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की गड़बड़ी और अल्प-जीवन की जड़ है आज का अप्राकृतिक, स्वाभाविक, असन्तुलित जीवन।"

दीर्घ-जीवन के लिये मुख्यतया शारीरिक मानसिक और व्यावहारिक जीवन-क्रम में सन्तुलन व्यवस्था बनाये रखना आवश्यक है। इसके साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विजातीय तत्वों के प्रवेश में अपनी रक्षा करना भी अपेक्षित है।

इङ्गलैण्ड के थामस पार १५२ वर्ष तक स्वस्थ हालत में जीवित रहे। वे साधारण भोजन करते थे। बादशाह चार्ल्स ने एक बार इन्हें मुलाकात के लिये बुलाया और बढ़िया भोजन की दावत भी दी किन्तु इससे वे मर गये। डॉक्टरी जाँच करने पर पता चला की गरिष्ठ भोजन ने उनके पाचन को बिगाड़ दिया और उनके जीवन का अन्त कर दिया।

गलत खान-पान, अशुद्ध आहार, अनुपयुक्त वायु का सेवन करने वाले असंख्यों व्यक्ति अपने हाथों अपनी कब्र खोदते हैं। बहुत अधिक या अयुक्त खाद्य पदार्थ ग्रहण कर लेने पर शरीर के पाचन संस्थान पर भारी दबाव पड़ता है और उनकी क्रिया असन्तुलित अस्त-व्यस्त हो जाती है। यही बात अशुद्ध वायु के सम्बन्ध में भी लागू होती है। दवा, इन्जेक्शन आदि के रूप में लिये जाने वाले विजातीय द्रव्य भी इसी में आते हैं। आजकल अनुपयुक्त खान-पान, रहने के गन्दे घुटे हुए स्थान शरीर के क्षीण करने में बहुत कुछ उत्तरदायी हैं। यदि हम उपयुक्त और आवश्यकतानुसार खाद्य पदार्थ लें, शुद्ध-स्वच्छ हवा में अधिकाधिक रहें, शरीर से दूषित पदार्थ मलों के निष्कासन का पूरा-पूरा ध्यान रखें तो शरीर-स्वस्थ, सन्तुलित रहेगा और हम दीर्घजीवी बन सकेंगे।

दूसरी महत्वपूर्ण बात है जीवन का बाह्य जगत् के साथ तालमेल बैठाना। अपने कार्य, श्रम, विश्राम में सन्तुलन बना लेना दीर्घजीवन का महत्वपूर्ण नियम है। शरीर की क्षमता, शक्ति के अनुसार अपना कार्य करना, आवश्यकतानुसार विश्राम करना शरीर को सन्तुलित बनाये रखने के लिये अपेक्षित है। किन्तु वैज्ञानिक युग की घुड़दौड़ में मनुष्य अपनी आन्तरिक एवं बाह्य उत्तेजनाओं का संस्पर्श पाकर बेतहाशा जीवन में दोड़ लगा रहा है। मनुष्य की महत्वाकांक्षाएँ, प्रतिस्पर्धा, एषणाएँ आकाश को चूमने लगी हैं। मनुष्य उनकी उत्तेजनाओं से प्रेरित होकर दिन-रात भागता-दौड़ता है। तनाव पर तनाव पड़ने से बढ़ने-चढ़ने की तृष्णा और एषणाओं की उन्मादी दौड़ में मनुष्य का जीवन-क्रम बेसुरा हो जाता है। मनुष्य का स्नायु-संस्थान, हृदय, मस्तिष्क जल्दी ही रोगग्रस्त, अक्षम, असमर्थ हो जाते हैं और एक झटके के साथ उसका स्वास्थ्य गिर जाता है। अनिद्रा, आन्तरिक बेचैनी चिन्तायें बढ़ जाती हैं, जिससे कई शारीरिक, मानसिक गड़बड़ी उत्पन्न होकर मनुष्य के अल्पजीवन की कारण बनती हैं।

जीवन सम्बन्धी खोज विशेषज्ञ डॉक्टर **कार्लसन** का कहना—"अल्प मृत्यु और बुढ़ापे को रोकने के लिए सौ दवाओं की एक दवा है सुविधाजनक जीवन। जिस कार्य से शरीर और मन पर अत्यधिक दबाव पड़े, उसे छोड़ देना चाहिये। अपनी शक्ति-सामर्थ्य, क्षमता तथा उम्र के अनुसार अपने दैनिक कार्यक्रम में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करते रहना चाहिये। इसी सूत्र को पकड़कर मैंने लम्बी उम्र पायी है और अनेकों लोगों को जीवन के कष्टों और रोगों से मुक्ति दिलायी है।"

स्वास्थ्य आँकड़ा विशेषज्ञ लुई डबलिंग ने अपने आँकड़ों के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि चिन्ता प्रधान बाल्यजीवन और दुःखी संतप्त यौवन कभी भी दीर्घायु, सुन्दर स्वास्थ्य, सुखी जीवन नहीं बना सकता। दीर्घजीवन का मूलाधार है—चिन्ता और दुःखद अनुभूतियों से मुक्त बाल्यजीवन और उन्मुक्त, स्वच्छन्द, भाररहित यौवन। जर्मन विशेषज्ञ **डॉ० बोहर** का मत है कि दीर्घ-जीवन व सुन्दर स्वास्थ्य के लिये २० वर्ष तक का जीवन प्रसन्नता भरा हुआ और जीवन की विभीषिकाओं से रहित होना आवश्यक है। भारतीय जीवन विशारदों ने भी जीवन की विभीषिकाओं से रहित होना आवश्यक है। भारतीय जीवन विशारदों ने भी जीवन का प्रारम्भिक चौथाई काल २५ वर्ष की उम्र तक ऋषिकुलों में ब्रह्मचर्यपूर्वक उन्मुक्त बिताने का विधान रखा है।

किन्तु आज के तथाकथित सभ्य और विज्ञान के युग में बाल्यकाल से ही मनुष्य के जीवन में विभिन्न चिन्ता, परेशानी, उलझनों, समस्याओं का ताँता लग जाता है। बहुत ही कम लोगों को बचपन में यह सौभाग्य प्राप्त होता है, जिन्हें ऐसा अवसर मिलता भी है तो उनकी जीवनधारायें भौतिक आकर्षणों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मृगमारीचिका की ओर प्रभावित हो जाती हैं, जिससे जीवन का कोई उद्देश्य नहीं सधता। अन्ततः चिन्ता, निराशा, अवसाद, असफलता का ही सामना करना पड़ता है। इससे मानसिक संस्थान पर बुरा असर पड़ता है। साथ ही शारीरिक असन्तुलन भी। इससे मनुष्य अल्पायु में ही जीवन समाप्त कर देता है।

खेद की बात है कि हम सभ्यता और प्रगति के नाम पर जीवन के स्वाभाविक क्रम, प्रकृति की मर्यादाओं का उल्लंघन करके असन्तुलित जीवन बिताते हैं या किन्हीं कारणों से बिताने के लिये बाध्य होना पड़ता है। रहन-सहन, आहार-विहार, कार्यक्रम, विश्राम आदि में कोई ताल-मेल नहीं बैठाकर भौतिकता की अन्धी दौड़ में बेतहाशा भागे जा रहे हैं और फिर स्वास्थ्य की गड़बड़ी अल्पायु, रोग, बीमारियों, अशान्ति, क्लान्ति से पीड़ित हो नारकीय जीवन बिताते हैं। किन्तु इसके जिम्मेदार हम स्वयं हैं कोई दूसरा नहीं। इस स्थिति से उबरने के लिये हमें इस गलत जीवन-क्रम को बदलना होगा। तभी दीर्घजीवन, सुन्दर स्वास्थ्य, सबल मनोभूमि के वरदानों से हम कृत-कृत्य हो सकेंगे।

बुढ़ापे में हीनता न आने दें

बुढ़ापा जीवन का परिपक्व फल है, जिसमें पूर्णता, मिठास, उपयोगिता और अपनी एक विशिष्ट महत्ता होती है। वृद्धावस्था में ही मनुष्य स्वयं और संसार के अनुभव ज्ञान से समृद्ध होकर शत-शत प्रकाश किरणों से युक्त ज्योतिर्मय बन जाता है। जिससे अनेकों को मार्गदर्शन की प्रकाश किरण, प्रेरणार्थ प्राप्त होती है। बर्नार्डशॉ ने कहा है--"बुढ़ापा एक सिद्धि है, पूर्णता की मञ्जिल है। वह एक सामाजिक धरोहर है। कल्पना कीजिये सभी वृद्ध लोगों को किसी ग्रह में भेज दिया जाय तो फुटबाल के खिलाड़ियों के सिवा दुनियाँ में बचेगा ही क्या ?" ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री चर्चिल ने एक बार कहा था—"बुढ़ापा पके हुए फल की तरह है। उसका अपना एक महत्व है।" "जिन्दगी चालीस वर्ष से शुरू होती है" इस कहावत के अनुसार वृद्धावस्था जीवन का नवनीत है, सार भाग है। वस्तुतः संसार के अधिकांश महान् कार्य महापुरुषों के जीवन में चालीस वर्ष की उम्र के बाद ही हुए हैं। उनका जीवन चालीस वर्ष की उम्र के बाद ही प्रकाश में आया। बुढ़ापा मानव-जीवन के विकास का अन्तिम चरण है, जहाँ पहुँचकर प्रत्येक व्यक्ति गौरव, प्रतिष्ठा, समृद्धि, ज्ञान, सुलझे हुए प्रौढ़ विचारों से युक्त हो जीवन का वास्तविक लाभ ले सकता है।

किन्तु अधिकांश लोग बुढ़ापे को मौत का पैगाम, जीवन का अनुपयोगी अवसर, अक्षमता, अशक्ति का सूचक मानकर जिन्दगी के दिन गिन-गिन कर काटने लगते हैं। उन्हें अपनी शक्तियाँ धीरे-धीरे क्षीण होती जान पड़ती हैं। कोई महत्वपूर्ण कार्य करने का उत्साह मन में नहीं रहता वरन् बुढ़ापे की पराधीनता, अंग-शैथिल्य, बीमारी, रोग, क्लान्ति, असमर्थ आदि की कल्पनाएँ कुछ कम भयावह नहीं होतीं। इस रूप में बुढ़ापे की कल्पना करने वाले व्यक्ति के लिये सचमुच वृद्धावस्था एक अभिशाप और नारकीय यातना ही सिद्ध होती है।

वृद्धावस्था अपने आप में इतनी नीरस और कटु नहीं है जितना लोग समझते हैं। बुढ़ापे में संसार के महापुरुषों ने महान् कार्यों का सूत्रपात किया है, जीवन की महत्वपूर्ण सफलतायें अर्जित की हैं, अपने आप में नई प्रफुल्लता, सुख, सन्तोष, प्रसन्नता अनुभव की है। दूसरी ओर वृद्धावस्था को जीवन का अभिशाप, अशक्ति, पराधीनता का अवसर मान लेना मनुष्य के गलत दृष्टिकोण का ही परिणाम है।

मनुष्य की मनोभूमि का उसके जीवन-क्रम पर भारी प्रभाव पड़ता है। चालीस वर्ष की उम्र के बाद जब लोग सोचने लगते हैं कि उनका बुढ़ापा शुरू हो गया है तो सचमुच ही वे वृद्ध होने लगते हैं। दूसरों को देखकर, पुरानी धारणाओं, मान्यताओं के आधार पर निराशावादी जीवन-दर्शन की प्रेरणा से जब मनुष्य में यह विश्वास जम जाता है कि चालीस वर्ष के बाद मेरी शक्तियाँ घटने लग जायेंगी और बुढ़ापे का आरम्भ होकर साठ-सत्तर की उम्र तक जीवन का अन्त हो जायेगा तो इसकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप मनुष्य के लिये मौत का पैगाम ही बन जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी अनेकों घटनायें घटित होती रहती हैं। इतना ही नहीं असंख्यों लोग अपनी इसी तरह की धारणाओं के कारण वृद्धावस्था में सड़ी-गली जिन्दगी बिताते हैं। उनके विश्वास और निष्कर्षों के अनुसार शक्तियाँ नष्ट होने लगती हैं। दाँत गिरना, बालों की सफेदी, आँखों का जबाव दे जाना, इन्द्रियों का निर्बल, अशक्त होना, क्लान्ति के भार में दब जाना—ये सब उपद्रव मनुष्य की बुढ़ापे सम्बन्धी धारणा और विश्वास का ही परिणाम है। मनुष्य जितनी गिरती हुई बातें सोचेगा उतनी ही तीव्रता से वह गिरता चला जायेगा। जितना ही अपने को सामर्थ्य सम्पन्न समझेगा उतना ही वह सशक्त बना रहेगा, चाहे उसकी उम्र कितनी ही क्यों न हो ? महापुरुषों की अदम्य शक्ति का आधार उनकी प्रौढ़, प्रबल, पुरोगामी मानसिक शक्ति ही है।

बुढ़ापे को दुःखद और क्लेशमय बनाने का एक कारण है—संसार और यहाँ के पदार्थों में आसक्ति का होना। ४०-५० की उम्र तक पहुँचने पर मनुष्य के कई नाते-रिश्ते जुड़ जाते हैं, उसका सम्बन्ध व्यापक हो जाता है। कई नाती-पोते, बेटों के बड़े परिवार का वह मुखिया बन जाता है। व्यापक क्षेत्र में संयोग-वियोग, सुख-दुःख, हानि-लाभ, अनुकूलता-प्रतिकूलताओं का क्षेत्र भी व्यापक बन जाता है। आसक्तिवश मोह की प्रेरणा से मनुष्य इनसे प्रभावित होने लगता है। सुखद परिस्थितियाँ कम ही आती हैं और आती हैं तो उन्हें बीतने में समय नहीं लगता। फलतः मोहग्रस्त आसक्त मनुष्य के मानस पर दुःखद स्मृतियाँ ही शेष रहती हैं। इनके कारण वह दुःखी होता है, रोता है, खिन्न होता है और जीवन के पुण्य अवसर बुढ़ापे को क्लेश एवं अशान्ति का आगार बना लेता है।

बहुत-से लोग बुढ़ापे को अतीत की स्मृतियों और भविष्य की चिन्ता का अखाड़ा बना लेते हैं। वृद्धावस्था में अधिकांश लोग भारी कार्य-भार से मुक्त हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में बैठे-बैठे अतीत की स्मृतियों पर खेद, पश्चाताप करने से और भविष्य की चिन्ता में उलझ जाते हैं और इसी उधेड़-बुन में बुढ़ापे को कटु, कलेशपूर्ण, भारस्वरूप बना लेते हैं।

बहुत-से लोग अपने बच्चों के बड़े हो जाने पर भी उनकी चिन्ता में उसी तरह परेशान रहते हैं जैसे उनके बचपन में रहा करते थे। फलस्वरूप वे बच्चों के जीवन में अनावश्यक हस्तक्षेप करने लगते हैं, जबकि स्वातन्त्र्यप्रिय युवक स्वच्छन्दतापूर्वक जीवन जीना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें वृद्धजनों का हस्तक्षेप और अत्यधिक चिन्ता भार लगने लगता है। वे स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करने में वृद्धजनों को बाधा समझने लगते हैं, जो परस्पर संघर्ष एवं गलत व्यवहार का कारण बनता है और इससे वृद्धजनों को ही उल्टा परिणाम मिलता है, जिससे उन्हें दुःखी होना पड़ता है। इससे अर्थ यह भी नहीं कि बच्चों के जीवन में दिलचस्पी नहीं लेनी चाहिये, किन्तु यह आवश्यकतानुसार और उतनी ही हो जो बच्चों के लिये सुपाच्य एवं पोषक रहे। देखा जाता है कि प्रौढ़ और सक्षम हो जाने पर पशु-पक्षी भी अपने बच्चों के प्रति निश्चिन्त हो जाते हैं किन्तु मनुष्य ऐसा न करने के कारण उनके प्रति आसक्त रहने से दुःखी, संतत एवं परेशान होता है।

बहुत-से लोग वृद्धावस्था में में मृत्यु के भय से त्रस्त रहते हैं। मौत के चिन्तन में ही बैठे-बैठे घुलते रहते हैं किन्तु यह अविवेक और अज्ञान का फल है। पका हुआ फल समय पर यदि डाली से अलग होने के बजाय डाल पर ही सड़ा-गला जीवन बिताये तो क्या अच्छा रहेगा ? मनुष्य भी आसक्ति और मोहवश असमर्थ, सड़े-गले, जीर्ण-शीर्ण शरीर में चिपका रहे तो यह बुद्धिमानी नहीं होगी। जिसने बुढ़ापे में पहुँचकर जीवन के सुख-दुःखों का मर्म जान लिया हो, जीवन में अनेकों सफलताएँ अर्जित कर ली हों उसके लिये मौत से भयभीत होना अज्ञान ही माना जायेगा। नई जिन्दगी धारण करने के लिये भावी जीवन-यात्रा प्रारम्भ करने से पूर्व व्यवस्थित चित्त से अपनी तैयारी करने में जुट जाना ही वृद्धावस्था का सदुपयोग करना है।

वृद्धावस्था का सबसे सुन्दर सदुपयोग इसी में है कि जन-कल्याणकारी पारमार्थिक प्रवृत्तियों में अपनी समस्त शक्तियों को लगा दिया जाय। अपनी परमार्थिक रुचियों और प्रवृत्तियों का क्षेत्र व्यापक और विभिन्नताओं से युक्त बना लेना और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनमें निमग्न हो जाना चाहिये। इससे न तो मनुष्य को अपनी आयु के आँकड़े गिनने का अवसर रहता है न अतीत की स्मृतियों में डूबने का, न भविष्य की चिन्ताओं में खीझने का। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये भारतीय जीवन व्यवस्था में अन्तिम समय को वानप्रस्थ, संन्यासी के रूप में बिताने का विधान है।

वृद्धावस्था में मनुष्य के जीवन का प्रवाह एक नदी की तरह होना चाहिये, जो हिमशिखरों से पतली धारा के रूप में तीव्र वेग से निकलती है, अनेकों धाराओं को अपने अङ्क में समेटती है, सामने आये रोड़ों को टक्कर मारकर हटाती है तो कभी नया रास्ता ग्रहण करती है। फिर मैदान में बहती है, धरती की प्यास बुझाती है। अन्त में शत-शत धाराओं में विभक्त हो गम्भीरता के साथ विराट् समुद्र में प्रवेश करती है। मनुष्य वृद्धावस्था में पहुँचने तक पूर्णरूपेण "स्वः" से मुक्त हो परमार्थ को जीवन का अङ्ग बना ले और निःस्पृह भाव से सर्वजन हिताय कार्य करे तो वृद्धावस्था सचमुच ही जीवन स्वर्ण अवसर सिद्ध हो सकती है।

बुढ़ापा और यौवन की स्थिति का सम्बन्ध मनुष्य के मन से है, शरीर से नहीं। बुढ़ापे में भी कई लोग जवानों से अधिक सक्षम होते हैं और कई लोग जवांनी में वृद्धजनों से गये-बीते निकलते हैं। मनुष्य का सूक्ष्म शरीर, कारण शरीर और आत्मा न कभी वृद्ध होते हैं न मरते हैं। "न जायते म्रियते वा कदाचन" मनुष्य का मूल अस्तित्व अजर-अमर अविनाशी है। यह आध्यात्मिक दर्शन हमारे जीवन का केन्द्र बन जाय तो बुढ़ापा नाम ही न रहे। योगी इच्छा आयु प्राप्त करते हैं, लम्बी उम्र पाकर भी वे सदैव जवान दिखाई देते हैं। वह इसी रहस्य का परिणाम होता है। वे शरीर के घटने-बढ़ने, शिथिल होने को महत्व न देकर अजर-अमर आत्मा में ही रमण करते हैं।

किन्हीं अंशों में बुढ़ापे में मनुष्य की शारीरिक शक्तियों का विकास रुक जाता है, किन्तु मनुष्य की मानसिक शक्तियाँ इतनी प्रौढ़ और पुष्ट हो जाती हैं कि वह शारीरिक शक्तियों के कम हो जाने पर अपने ज्ञान, अनुभव, मानसिक सन्तुलन, आत्मिक स्थिरता के आधार पर अधिक सुख-शान्ति, सन्तोष का जीवन बिता सकता है।

बुढ़ापा संसार और जीवन के अनुप्रस्थ ज्ञान, संघर्षों का सार भाग—नवनीत है। बुढ़ापा जीवन-दीप का परिपुष्ट धूम्ररहित पुण्य प्रकाश है, जो शत-शत किरणों में छिटककर अनेकों को ज्योति दे सकता है। बुढ़ापा जीवन-विद्या का परिपक्व फल है, जिसके रस की एक-एक बूँद असंख्य लोगों को नव-जीवन प्रदान कर सकती है। बुढ़ापा श्रद्धा-सम्मान का धवल पुञ्ज है जिसकी छाया में बैठकर नई पीढ़ी नई राह पा सकती है।

आप वृद्धावस्था से सदा बचे रह सकते हैं

जिसे हम सब सामान्यतः वृद्धावस्था कहते हैं, वह वस्तुतः जीवन विकास की चरम-विधि होती है। आयु की बढ़ोत्तरी को ही बुढ़ापा नहीं कहा जा सकता। यदि बुढ़ापा आयु-वृद्धि पर ही निर्भर होता तो निश्चय ही संसार का कोई भी व्यक्ति एक निश्चित आयु के बाद बेकार हो जाता और एक निश्चित आयु तक पूर्ण रूप से कार्यक्षम बना रहता है। किन्तु सामान्यतः ऐसा देखने में नहीं आता।

संसार में सैकड़ों-हजारों ऐसे व्यक्ति मिलेंगे, जो तीस-चालीस वर्ष की तरुण आयु में ही थक जाते हैं और आगे की आयु को टूटे पहिये वाली गाड़ी की तरह ढकेलते नजर आते हैं, जबकि सैकड़ों हजारों व्यक्ति ऐसे देखे जा सकते हैं, जो साठ और सत्तर वर्ष की पक्की आयु में भी क्षिप्रता से भरे रहते हैं और उनका काम देखकर अनुमान लगाया जा सकता है कि यह लोग आगे भी इसी प्रकार जीवनपूर्ण जिन्दगी चलाते रह सकते हैं। इस प्रकार के उदाहरणों को देखकर इस विश्वास में शङ्का की कोई गुञ्जायश नहीं रह जाती कि बुढ़ापे की आयु की बढ़ोत्तरी से कोई सम्बन्ध नहीं है। आयु वृद्धि मानव जीवन की एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, कोई परिणाम नहीं। आयु को जन्म के दिन से लेकर मृत्यु तक निरन्तर क्षण-प्रतिक्षण बढ़ती ही रहती है। आयु की अग्रता तथा वृद्धता दोनों एक बात नहीं है, आयु का बढ़ना एक बात है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुढ़ापा दूसरी बात है। इसी बात को यों भी कहा जा सकता है कि आयु का बढ़ना एक गति है और वृद्धता एक स्थिति है। वैज्ञानिकों का मत है कि यदि मनुष्य-जीवन की साधारण शर्तों को पूरा करता हुआ, उस प्रकार जीवन-यापन करता चले, जिस प्रकार उसे करना चाहिये तो न केवल तरुणता ही बनी रहे, बल्कि जीवन की अवधि भी लम्बी हो जाये। प्रकृति के जीवन-विधान के अनुसार शरीर को यथाविधि उपयोग में लाने वाला व्यक्ति बुढ़ापे का शिकार नहीं बन सकता, फिर चाहे वह सौ साल से अधिक क्यों न जिये ? आज भी संसार में न जाने शतायु और अधिक आयु वाले कितने व्यक्ति मौजूद हैं, जिनके बुढ़ापे का कोई चिन्ह नहीं पाया जाता। पूर्वकाल में तो यह एक सामान्य बात रही है। आयु-वृद्धि ही वास्तविक बुढ़ापे का कारण नहीं होती, बुढ़ापे का कारण जीवन की वे भूलें ही होती हैं, जिन्हें मनुष्य असावधानी, उपेक्षा, स्वभाव, अज्ञान अथवा संस्कारोंवश जाने-अनजाने किया करता है। बुढ़ापा आयु की नहीं, जीवन के लिये असंगत भूलों की परिणति होती है। जीवन को ठीक-ठीक जीवन की तरह जीने वाले बुढ़ापे की सम्भावना से बहुत कुछ मुक्त रहते हैं।

बुढ़ापे के सम्बन्ध में मनुष्य की एक नहीं, दो आयु होती हैं। एक दैहिक तथा एक मनोवैज्ञानिक। यदि यह दोनों आयु सापेक्ष हैं, तब भी इनका एक स्वतन्त्र अस्तित्व भी है। दैहिक आयु तो एक अवधि के बाद ही समाप्त होती है, किन्तु मानसिक आयु में परिवर्तन आता रहता है। अनेक लोग जीवन में अनेक बार मानसिक रूप में मरते-जीते रहते हैं। यही नहीं, मनः स्थिति के अनुसार, देह से अलग भी बूढ़े, जवान होते रहते हैं। संसार में ऐसे न जाने कितने लोग पाये जा सकते हैं, जिनके शरीर में बुढ़ापे का कोई लक्षण न होने पर भी मन से बूढ़े हो चुके होते हैं। वृद्धों की तरह ही वे निराशा, हतोत्साह तथा निष्क्रियता के शिकार बने रहते हैं। उन्हें जीवन से उस प्रकार की कोई रुचि नहीं रहती, जो एक तरुण में होनी चाहिये। इसके विपरीत अनेक ऐसे वयोधनी पाये जा सकते हैं, जो आयु से, बालों से तथा अन्य इन्द्रियों से वृद्धता की सूचना देते हुए भी मन से बालकों की तरह प्रफुल्ल और नौजवानों की तरह रुचिपूर्ण बने रहते हैं। किन्तु मनुष्य का वास्तविक जीवन तथा वाँछनीय जीवन्तता इन दोनों संस्थाओं के समान रूप से स्वस्थ एवं सम्मिलित रहने से ही पूर्ण होती है। शरीर तथा मन दोनों से तरुण बने रहने से ही मनुष्य आयु की बढ़ोत्तरी पर विजय पाकर चिर तरुण तथा सक्षम बना रहता है और उभय-उपलब्धि तभी सम्भव है, जब मनुष्य जीवन के विधि-विधान का पूरा-पूरा पालन करे।

बुढ़ापे के कारणों तथा उसके प्रतिरोध के उपाय खोजने में व्यस्त वैज्ञानिकों का मत है कि यद्यपि आयु के बढ़ने पर मानव शरीर की नियामक प्रणालियों की क्रिया, प्रक्रिया एवम् प्रतिक्रिया में कुछ परिवर्तन अवश्य आ जाता है, किन्तु उनकी शक्ति नष्ट नहीं होती। जैसे बढ़ी आयु में हृदय, रक्त वाहिकाओं तथा अवयवों एवं ग्रन्थियों की सामान्य सम्वेदनशीलता कम हो जाती है, किन्तु साथ ही उनमें रासायनिकता के प्रति सम्वेदनशीलता बढ़ जाया करती है, जिससे जहाँ उनका काम कम हो जाता है, वहाँ उनकी आवश्यकता भी कम हो जाती है। वे जीवन की सामान्य सक्रियता के लिये कम आयु की अपेक्षा कम से कम तत्व में सन्तुष्ट होने लगती है। इसका ठीक-ठीक अर्थ यही है कि एक अवधि के बाद प्रकृति कुछ अवयवों तथा इन्द्रियों को अपना काम कम कर देने का संकेत देती हैं और उसी के अनुसार वह उनको कम भोजन में जीवित तथा प्राणपूर्ण बना रहने की क्षमता भी दे देती है। अब जो व्यक्ति प्रकृति के इस विधान की उपेक्षा करके निवृत्त अवयवों को जबरदस्ती काम में लगायें और अधिक तत्वों के बल पर उन्हें तेजस्वी बनाये रहने का प्रयत्न करते हैं, वह दोहरी गलती करते हैं। एक तो वे विश्रांत अङ्गों से अतिरिक्त परिश्रम लेते हैं, दूसरे उन्हें अनाधिकृत तत्व मात्रा को ग्रहण करने पर मजबूर करते हैं। यह नियति नियमों का स्पष्ट उल्लंघन है, जिसका परिणाम जीवनहीन बुढ़ापे के रूप में शीघ्र ही सामने आ जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शारीरिक श्रम अथवा उसके स्थान पर समुचित व्यायाम के साथ-साथ शरीर को सदा तेजस्वी बनाये रहने के लिये समुचित आहार व्यवस्था भी बहुत आवश्यक है। शारीरिक श्रम अथवा व्यायाम से उसकी पूर्ति करते रहने पर भी यदि आहार को अनुकूल तथा उचित नहीं बनाया गया तो लाभ के स्थान पर हानि की ही आशङ्का अधिक रहेगी। श्रम का कार्य तो शरीर के अङ्गों-उपाङ्गों को सक्षम तथा तेजस्वी बनाये रखना ही होता है, किन्तु उनको पोषण-तत्व तो आहार से ही प्राप्त हो सकेगा। अस्तु, श्रम के साथ समुचित आहार को शामिल कर लेना भी जरूरी है।

आहार का निर्धारण करते समय केवल दो-तीन मोटी-मोटी बातों को ध्यान में रखने से भी बहुत कुछ काम चल सकता है। पहली बात तो यह कि आहार अधिक से अधिक प्रकृति सम्मत, स्वास्थ्य तत्वों तथा खनिज लवणों से युक्त होना चाहिये। उसका चुनाव आयु, श्रम तथा स्वभाव के अनुकूल ही किया जाना चाहिये। आहार की मात्रा सन्तुलित तथा समय नियमित होना चाहिये। एक बार बहुत-सा खाने की अपेक्षा अनेक बार थोड़ा-थोड़ा खाना स्वास्थ्य के लिये अत्यधिक हितकर है। युवकों की अपेक्षा वयोवृद्धों को आहार की मात्रा कम ही रखनी चाहिये। बुढ़ापे के कारणों में आहार का असन्तुलित तथा अयुक्त होना भी एक विशेष कारण है। हरे शाक, ताजी सब्जियाँ तथा ऋतु-फल स्वास्थ्य के लिये सबसे उपयुक्त आहार माने गये हैं। मासिक तथा साप्ताहिक उपवास भी आहार के ही अंग हैं, जिनका निर्वाह भी आवश्यक है। जिस प्रकार आवश्यकता से कम खाना अकाल वृद्धता का हेतु है, उसी प्रकार आवश्यकता से अधिक भोजन भी शरीर को थकाकर असयम में ही बूढ़ा बना देता है।

इस प्रकार की विवेचना से पता चलता है कि बुढ़ापा मनुष्य की कोई आवश्यक स्थिति नहीं है और न आयु की बढ़ोत्तरी से ही उसका कोई स्म्बन्ध है। शरीर का सक्षम तथा तेजस्वी बना रहना ही यौवन है और उसका शिथिल हो जाना ही बुढ़ापा है, फिर मनुष्य की आयु चाहे तीस साल की हो अथवा नब्बे साल की। शरीर का सक्षम तथा तेजस्वी बना रहना श्रम, संयम तथा आहार-विहार के साथ विचारों तथा भावनाओं की युक्तता के अधीन है। प्रकृति के शरीर तथा जीवन सम्बन्धी विधान का निष्ठा के साथ पालन करते चलिये और यौवनपूर्ण लम्बी आयु का आनन्द लीजिये।

अपने जीवन में प्रकृति को प्रवेश होने दीजिये

"मैं एक गरीब किसान हूँ। हमारी दुनियाँ हमारा गाँव, हमारे खेत हैं। मैंने अपनी सारी जिन्दगी खेतों में ही बिताई है। मुझे छत के नीचे नींद नहीं आती। बरसात में कभी-कभी ही मैं छप्पर के नीचे सोता हूँ। हजारों की कमाई मैंने कठोर श्रम द्वारा कमाई है। बचपन में पका भोजन नहीं नसीब हुआ तो कच्चा अन्न खाने की मेरी आदत पड़ गई है। आज भी सभी चीजें कच्ची ही खाता हूँ। जानवरों से मुझे प्रेम है। मैं माँस नहीं खाता। कुरान में शराब को मनाही है। मैंने भी कभी शराब नहीं पी। बकरी का दूध पीता हूँ। आठ घण्टे परिश्रम करता हूँ। पहाड़ियों पर चढ़ने, तैरने, कुएँ खोदने में मुझे आनन्द आता है। ६ घण्टे की नींद मुझे पर्याप्त है। दोनों समय नहाता हूँ। भगवान् का भजन करता हूँ। मेरा जीवन पूर्ण सुखी है।"

उपर्युक्त शब्द मिश्र के गाजियाना गाँव के व्यक्ति श्री "रजाबका" के हैं, जिनके स्वास्थ्य को इस युग में आश्चर्य की दृष्टि से देखा जाता है। स्वीडन से लेकर केलीफोर्निया तक के अनेक स्वास्थ्य विशेषज्ञ पिछले कई वर्षों से उनके स्वास्थ्य का गम्भीर अध्ययन करने में लगे हुए हैं। डॉ० लेसरनेस फ्रांसीसी सरजन जनरल वेताँ रोशे तथा अनेक स्वीडिश आरोग्यशास्त्रियों ने बका के स्वास्थ्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। रजाबका का वजन १२३ पौंड, ऊँचाई ५ फुट ८ इञ्च, उम्र १०७ वर्ष। शरीर में कहीं झुर्री नहीं, पूरे दाँत, सीधी कमर, तीव्र नेत्र दृष्टि। १०७ वर्ष की आयु में वह पूरे नवयुवक से दिखाई देते हैं। स्वास्थ्य की दुर्बलता, रोग या बुढ़ापे का कोई चिह्न इस व्यक्ति के शरीर में नहीं है।

इस "स्वास्थ्य-वैचित्र्य" पर स्वास्थ्य विशेषज्ञ व आरोग्यशास्त्रियों ने अपने-अपने ढङ्ग के अनेक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन्तव्य निकाले हैं। पर प्रायः सबके सब इस बात पर एकमत हैं कि रजाबका के स्वास्थ्य को चिरस्थायी रखने वाली वस्तु है—प्राकृतिक जीवन पद्धति। बका के उपर्युक्त कथन से भी यह बात प्रकट हो जाती है कि उन्होंने अपने जीवन के प्रत्येक अङ्ग में प्रकृति को प्रवेश होने दिया है। सौ वर्ष तक पूर्ण स्वस्थ और बलिष्ठ बनाये रखने की क्षमता प्रकृति में है। प्रकृति के बीच रहने, प्राकृतिक आहार-बिहार रखने, प्राकृतिक जीवन जीने से मनुष्य अपनी पूर्ण आयु प्राप्त कर सकता है। मृत्यु पर्यन्त स्वास्थ्य और आरोग्य का सुखोपभोग कर सकता है। इसमें राई-रत्ती भर भी शङ्का की बात नहीं है।

पेड़-पौधे हमारे जीवन की रक्षा करते हैं। मनुष्य की पैदा की हुई गन्दी वायु, कार्बन-डाइ-ऑक्साइड आदि दूषित तत्त्व बेचारे वृक्ष ही खाते हैं और बदले में ऑक्सीजन तत्त्व जो जीवन रक्षा का प्रमुख साधन हैं हमारे लिये बराबर देते रहते हैं। फल, तरकारियाँ, फूल, औषधियाँ आदि भी प्रकृति से ही उपलब्ध हैं। वर्षा का कारण तथा वायु की तीव्रता आदि से बचाव भी यही करते हैं। प्रकृति हमारी जीवन-रक्षक है, उसके सान्निध्य में रहकर हम यह जीवन स्वर्ग-तुल्य बना सकते हैं।

पर मनुष्य अब इस सिद्धान्त से दूर हटता जा रहा है। पेड़-पौधे, बाग आदि लगाने का शौक घट रहा है। उल्टे वनों का निर्ममता से सफाया किया जा रहा है। मकानों की दूषित वायु में, शहरों की गन्दगी में रहने का जितना ही मनुष्य आदी होता जा रहा है, उतनी ही उसकी उम्र भी कम होती जा रही है। इसके विपरीत अभी ऐसे उदाहरण हैं, जबकि लोग प्रकृति के सम्पर्क में रहने के कारण अधिक आयु स्वस्थ शरीर तथा आरोग्य रक्षा के पूर्ण लाभ प्राप्त करते हैं। मनुष्य इस संसार में अन्योन्याश्रित जीवों के एक अङ्ग के रूप में ही रह सकता है। भिन्न रूपधारी प्राणियों के साथ एक भाग में ही रहने में उसकी कुशल है। प्रकृति पर नियन्त्रण करने, उसे नष्ट कर डालने से उसका जीवन खतरे में पड़ सकता है, इसके ठोस प्रमाण आज बढ़ती हुई बीमारियों के रूप में सर्वत्र दिखाई पड़ रहे हैं।

प्रकृति के अनुकूल चलने में मनुष्य सुखी, स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त रह सकता है। प्रतिकूल चलने में अनेक शारीरिक तथा मानसिक रोगों का प्रादुर्भाव होता है। जीवन की सरसता के लिये प्रकृति प्रेम अत्यन्त उपयोगी है। इससे जीवन में सन्तोष, उत्साह, उमङ्ग, शान्ति एवं तेजस्विता प्राप्त होती है। प्रातः काल उन्मुक्त प्रकृति में परिभ्रमण से शारीरिक और मानसिक बल बढ़ता है, चैतन्यता आती है, स्फूर्ति बढ़ती है। प्रकृति मन प्रफुल्लित रखने और शान्ति प्रदान करने में बड़ी सहायक है। ऋषियों का आवास इसी दृष्टि से सदैव घने जंगलों में रहा है। पक्षियों के कलरव, झरनों की कलकल, फूलों की महक से शरीर और मन को बड़ा सुख मिलता है। प्राण और जीवन तत्व बढ़ता है। सद्प्रवृत्तियों का अन्तःकरण में विकास होता है।

पं० जवाहरलाल जी ने लिखा है—"प्रकृति के इस सुनसान रूप में मुझे अजीव सन्तोष मिला है। एक ऐसा उत्साह और उमङ्ग का तूफान दिल में आया जो पहले कभी नहीं आया था। प्रकृति में दिमागी बल देने की ताकत है।"

प्रकृति का सामीप्य उदासीनता, मानसिक परेशानी तथा नीरसता को दूर करता है। इससे मनुष्य के मस्तिष्क में सुव्यवस्थित जीवन जीने की सूझ पैदा होती है। घर के रहन-सहन में सफाई तथा सजावट की प्रेरणा प्रकृति-प्रेम पर आधारित है। कला, विकास व चारित्रिक दृढ़ता को प्रभावित करने की अलौकिक शक्ति प्रकृति में है।

रहन-सहन की तरह आहार भी प्राकृतिक रहना स्वस्थ जीवन का मूलमन्त्र है। कच्चे फल, तरकारियाँ, गाजर, मूली, सकरकन्द जैसे पदार्थों में शरीर सुरक्षा तथा अभिवृद्धि के सब तत्व मौजूद होते हैं। रोग बाहर से नहीं आते वरन् शरीर के भीतर अप्राकृतिक ढङ्ग के आहार से उत्पन्न विजातीय द्रव्य के कारण ही पैदा होते हैं। प्राकृतिक पद्धति का बुनियादी सिद्धान्त यह है कि रोग अपने को नीरोग करने का शरीर की ओर से किया हुआ प्रयत्न है। शरीर अपने को स्वस्थ रखने के लिये ही रोग प्रस्तुत करता है। विजातीय पदार्थ का बढ़ना कम हो तो रोग के आघात भी कम हों। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्राकृतिक आहार ही लाभदायक होता है। शरीर में मल की मात्रा बढ़ाने का एक मात्र कारण अप्राकृतिक आहार है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य और आनन्द का जीवन जीने का यह अचूक सिद्धान्त है कि हमारी जीवन की प्रत्येक गतिविधि में प्रकृति का समावेश हो। गाजियाना के रजाबका की घटना इस देश के लिये सामान्य बात रही है। किन्तु वह तब थी जब प्रकृति हमारे जीवन का आधार थी। आज इसे भुला देने से स्वास्थ्य की समस्या ने इतना विकराल रूप बनाया है। हम पुनः प्रकृति का आश्रय ग्रहण करें तो कोई कारण नहीं कि हमारा भी जीवन सौ वर्ष से कम हो। प्रकृति हमारी जीवन रक्षा का आधार है। हमें उसकी गोद में से हटना नहीं चाहिये। उसकी शरण में बने रहकर सुख, स्वास्थ्य और धन प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये।

सौन्दर्य का मूल स्रोत तलाश करें

सौन्दर्य एक स्वाभाविक गुण है। जो स्वाभाविक रूप में सुन्दर होगा, वह सुन्दरता के किसी प्रसाधन का प्रयोग नहीं करेगा। उसका ओज-तेज सुन्दरता बनकर उसके मुख-मण्डल पर दमकता रहेगा। फल-सा खिला हुआ उसका चेहरा स्वाभाविक रूप से दृष्टि आकर्षित कर लेगा। स्वाभाविक रूप से सुन्दर व्यक्ति को किसी भी कृत्रिम उपाय की आवश्यकता नहीं होती और यदि वह किसी प्रसाधन का प्रयोग करेगा तो उसका आकर्षण बढ़ने के बजाय घट जायेगा।

किस देश में कितना स्वाभाविक सौन्दर्य है, इसका अन्दाज इसी से लगाया जा सकता है कि उस देश में कृत्रिम सौन्दर्य सामग्री की कितनी खपत है ? जिस देश में जितनी अधिक प्रसाधन सामग्री बिकती हो समझ लेना चाहिये कि उस देश के लोग उसी अनुपात में स्वाभाविक सुन्दरता से वंचित हैं और जिस देश में जितनी कम श्रृंगार सामग्री बिकती हो बिना किसी हिचक के विश्वास कर लेना चाहिये कि उस देश के लोग ही स्वाभाविक रूप से सुन्दर हैं।

सुन्दरता का आगमन बाहर से नहीं अन्दर से होता है। उसका कारण 'प्रसाधन' नहीं बल्कि स्वास्थ्य है। स्वस्थ व्यक्ति, चाहे वह स्त्री हो अथवा पुरुष कैसे भी फटे-पुराने कपड़े क्यों न पहने हुये हो, कितना ही परिश्रम तथा पसीने से लथपथ क्यों न हो देखने में सुन्दर ही लगेगा। उसकी स्वाभविक सुन्दरता बाह्य दिशा में छिप नहीं सकती। उसका भरा हुआ चेहरा, पुष्ट शरीर, सुडौल अवयव, कपोलों की लाली, माथे की चमक और आँखों की सम्पन्नता क्षीण वेशभूषा के ऊपर चढ़कर चमकेगी।

अस्वस्थ व्यक्ति क्यों न मखमल पहने हो क्यों न कितना ही क्रीम और पाउडर का प्रयोग किये हुये हो, उसके पिचके गाल, उभरी हड्डियाँ, भद्दा शरीर, धँसी आँखें इस बात की गवाही देंगी कि यह व्यक्ति असुन्दर है। इतना ही नहीं अस्वस्थ व्यक्ति पर अच्छी वेशभूषा एक व्यंग जैसी लगकर उसका उपहास ही उड़ाया करती है।

सुन्दरता स्वास्थ्य की देन है और स्वास्थ संयम और प्रकृति के सम्पर्क की देन है। प्रकृति की गोद में स्वास्थ्य और सुन्दरता दोनों का निवास है। जो व्यक्ति अधिक-से-अधिक अकृत्रिम और प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हैं, वे अवश्य ही स्वस्थ एवं सुन्दर रहते हैं। प्राकृतिक जीवन बिताने वाला संयमी वृद्ध भी असंयमी युवक से अधिक आकर्षक और सुन्दर लगा करता है। उसके चाँदी जैसे चमकते बाल, भरे हुये अरुणाभ गाल और उभरा हुआ ललाट युवकों के लिये ईर्ष्या का विषय बन जाता है।

अपना भारत देश सदा ही धीरों, वीरों और बलवानों का देश रहा है। राम, कृष्ण, भीम, अर्जुन, भीष्म, द्रोण, प्रताप, शिवा, छत्रसाल जैसे वीर योद्धा इसी भूमि के रत्न थे। सिकन्दर की विश्वविजयनी वाहिनी को रोक देने वाले पोरस और सेल्युकस जैसे दुर्धष ग्रीक सेनानी को परास्त करने वाले चन्द्रगुप्त इसी भूमि पर उत्पन्न हुये। राममूर्ति, गामा और जोधासिंह पहलवान इसी भारत में हुये हैं, जिन्होंने मल्ल-युद्ध में संसार के पहलवानों को पछाड़कर भारत का नाम संसार में ऊँचा किया है।

किन्तु आज उसी भारत भूमि पर पतली टाँगों और बैठी आँखों वाले नौजवान ही अधिक देखने में आते हैं। देश की तरुण पीढ़ी का स्वास्थ्य और उसके लक्षण देखकर आगे की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्भावनायें भी कुछ अधिक आशापूर्ण नहीं दीखतीं। आज फैशन ने संसार में सबसे अधिक इस भारत, इस ऋषि को ही घेर रखा है। आमदनी को देखते हुये, जिसे अनुपात से फैशन और प्रसाधन पर जितना पैसा भारत में व्यय किया जाता है, शायद उतना पैसा संसार के किसी भी देश में व्यय नहीं किया जाता।

फैशन का रोग इस कदर से बढ़ गया है कि घर में भले ही कठिनता से रोटी मिल पाती हो, लेकिन बाहर आधुनिक तरह की पोशाक पहनकर निकलना आवश्यक है। लोग एक कपड़े की सिलाई पर इतना पैसा व्यय करते हैं कि उतने में एक और कपड़ा बन सकता है। फैशन के दीवाने ऐसे सैकड़ों नवयुवक देखने को मिल सकते हैं, जो एक बार अपनी हवश पूरी करने के लिये बहुत-सा पैसा विचित्र पोशाक बनवाने में लगा देते हैं और फिर उसका निर्वाह न कर सकने पर वही फटी-पुरानी फैशनेबुल बुशशर्ट और पतलून वर्षों पहनते हुये अपनी और अपने फैशन की मखौल कराया करते हैं। जितने पैसे को उन्होंने एक बार फैशन की हवश पूरी करने में व्यय किया था, यदि उससे वे साधारण से कपड़े बनवाते तो अवश्य ही कई वर्ष तक अच्छी दशा में रह सकते थे। इस प्रकार के उपहासास्पद फैशन से यदि कोई आकर्षक दीखने के स्वप्न देखता है तो वह बहुत बड़ी गलती करता है।

स्वास्थ्य एवं संयम से पाये हुये व्यक्तित्व वाले स्वामी विवेकानन्द जैसे भारतीयों ने साधु की वेशभूषा में ही अमेरिका जैसे आधुनिक और धनवान्, फैशनपरस्त देश के लोगों को यह मानने पर विवश कर दिया कि आकर्षण वेशभूषा में नहीं स्वाभाविक स्वास्थ्य और सादगी में है, जो कि अकृत्रिम एवं स्वाभाविक जीवन पद्धति से ही सम्भव है। अपनी साधारणतम वेशभूषा पर हँसने वाले अमेरिकनों को अपने जिन शब्दों में स्वामी विवेकानन्द जी ने लज्जित किया था वास्तव में वे शब्द ही भारतीय जीवन का आदर्श हैं और आज भी होने चाहिये।

हँसने वाले अपटुडेट अमेरिकनों से स्वामी जी ने कहा था—"दाई टेलर मेक्स यू जेन्टलमैन, बट इट इज माई कन्ट्री व्हेअर करेक्टर मेक्स ए मैन जेन्टिल।" जिसका अर्थ यह है कि—"आपका दर्जी आपको भद्र पुरुष बनाता है, किन्तु हमारे देश में चरित्र मनुष्य को भद्र पुरुष बनाता है।"

स्वामी विवेकानन्द के इस सारपूर्ण शब्दों का तात्पर्य यही है कि मनुष्य का वास्तविक व्यक्तित्व कपड़ों, वेशभूषा अथवा फैशन से प्रकट नहीं होता बल्कि मनुष्य का आचरण ही उसका वास्तविक व्यक्तित्व है। स्वामी विवेकानन्द जी ने जिस समय यह शब्द अमेरिका में कहे थे, उस समय भारत में फैशन का रोग इतना जोर पर नहीं था। लोग फैशन के बजाय अपने स्वास्थ्य और आचरण पर अधिक ध्यान देते थे। स्वामी जी को उस समय स्वप्न में भी यह भान न रहा होगा कि जिस भारतवर्ष की साधारण वेशभूषा और असाधारण चरित्र को इस गौरवपूर्ण ढंग से आज अमेरिका में रख रहे हैं। वही भारतवर्ष आगे चलकर फैशन में इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि देशों के फैशन का गुलाम हो जायेगा।

फैशन प्रदर्शन की महामारी से ग्रस्त भारतीय नवयुवक आज स्वास्थ्य और चरित्र की ओर से पूरी तरह उदासीन होते जा रहे हैं। स्वास्थ्य-जन्य आकर्षण को वे प्रसाधनों के बल पर स्थानापन्न कर लेने और संयम को अप्राकृतिक बन्धन और चरित्र को जड़ता मानने लगे हैं। उन्हें कभी यह चिन्ता नहीं होती कि उनके अंग पुष्ट, उनका शरीर सुडौल, उनका मुख ओजस्वी और उनका चरित्र तेजस्वी बने। उन्हें कभी भी यह हौंस नहीं होती कि वे बिना किसी प्रसाधन के सुन्दर लगें और अपने भरे-पूरे शरीर के साथ शेर जैसी चाल से चलते हुये लोगों के लिये हर्ष का विषय बनें। उन्हें यदि चाह होती है तो इसकी कि वे कितनी किस प्रकार की क्रीम प्रयोग कर पा रहे हैं कितना और कौन-सा पाउडर उनके शरीर को सुगन्धित करता है ? आधुनिक तरह के कितने प्रकार के—कितने कपड़े-उनके पास हैं ?- उन पर किन रंगों और डिजायनों के कपड़े छपते हैं और किस वेशभूषा में वे लोगों के लिये आकर्षण के पात्र बनते हैं ? आज का कोई भारतीय तरुण कदाचित ही यह बतला पाये कि व्यायाम के कितने प्रकार हैं और उनका अभ्यास किस प्रकार किया जाता है ? किस आयु के व्यक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को किस प्रकार का कितना व्यायाम करना चाहिये ? शरीर को पुष्ट रखने के लिये किस प्रकार का कितना भोजन करना और किस प्रकार रहना-सहना चाहिये ? जीवन में शम, दम, नियम, संयम का क्या महत्त्व है और उनके पालन का क्या अर्थ एवं विधि है ? इसके विपरीत वह यह अवश्य प्रामाणिक रूप से बतला सकता है कि अमुक फैशन अमुक देश का है। इस प्रकार की कमीज का नाम यह है। पतलून का यह डिजायन इस देश से आविष्कृत हुआ है। सबसे आधुनिक फैशन यह है और इस वस्त्र के लिये यह कपड़ा सबसे अच्छा रहता है। वह भोजन के विषय में भले ही कुछ न जानता हो, किन्तु यह अवश्य बतला सकता है कि चाय इतने प्रकार से बनती है। काफी की इतनी किस्में होती हैं। किस होटल के मीनों में क्या-क्या वस्तुयें मिल सकती हैं ? उनकी रुचियों में दूध, घी, मलाई, फल, शाक-भाजी और कन्द-मूलों का स्थान आलू, कचालू, खटाई, मिठाई, समोसा, कचौड़ी, कटलस, पुटैटो, चाय, डबलरोटी, बिस्कुट, चाकलेट और सोडा, शराब ने ले लिया है। किस खाद्य पदार्थ से क्या हानि-लाभ होता है, इसका ज्ञान आज के भारतीय नवयुवक में बिल्कुल भी नहीं रहा है और यदि उसे इस विषय में बताने का प्रयत्न भी किया जाता है तो वह उस पर अविश्वास करता हुआ कह देता है कि यह सब पुराने जमाने की बातें हैं, आज के नये जमाने में इनका कोई मूल्य, महत्त्व नहीं है।

प्राकृतिक जीवन से तो वह इतना दूर चला गया है, जैसे वह प्रकृतिजन्य प्राणी ही न हो, कमरों के भीतर देर तक जगना और देर तक सोना उसका स्वभाव बन गया है। अवसर होने पर भी वह बाहर स्वच्छ हवा में प्रकृति के निकट सोने के स्थान पर कमरे में बन्द होकर बिजली के पंखे की हवा खाना ज्यादा पसन्द करेगा और इसे आज की सभ्यता बतलायेगा।

भारतीय तरुणों का कृत्रिम जीवन आज बहुत खेद का विषय बन गया है। कृत्रिम जीवन ने उनके स्वास्थ्य और स्वाभाविक सौन्दर्य का बहुत बड़ा अंश अपहरण कर लिया है। इसी कृत्रिमता के कारण भारत का तरुण वर्ग परिश्रम एवं पुरुषार्थ से दूर भागने का प्रयत्न करने लगा है। जहाँ अन्य देशों के नवयुवक शहरी जीवन से निकल-निकल कर खेतों में काम करने के लिये पहुँच रहे हैं, वहाँ भारत के नवयुवक खेतों से भाग-भाग कर शहरों में चपरासीगीरी अथवा क्लर्की करने पर उतारू दिखाई दे रहे हैं। भारतीय नव युवक थोड़े-से उल्टे-सीधे भोजन और फैशनेबुल पहनावे में प्रसन्न रहने लगा है। उसे स्वास्थ्य की उतनी चिन्ता नहीं है, उस देश की गरीबी और भूखमरी की इतनी परवाह नहीं है, जितनी कि फैशन और प्रदर्शन की। यह वास्तव में बड़े ही खेद का विषय है। आज जब देश के चारों ओर दुश्मनों की गतिविधियाँ सक्रिय हो रही हैं, तब यहाँ के नवयुवक का इस बुरी तरह फैशन परस्त और स्वास्थ्य के प्रति उदासीन होना कम खतरे की बात नहीं है। सारा संसार भारतीय नवयुवक की इस कमजोरी को अपनी नजर में भरे हुये है और किसी अवसर पर वह उसका लाभ उठाने में कदापि भी नहीं चूकेगा।

भारतीय तरुण को जानना और सोचना चाहिये कि सुन्दरता, प्रसाधन अथवा फैशन में नहीं है। उसका जन्म स्वास्थ्य से होता है और वास्तविक स्वास्थ्य उसे ही मिल सकता है, जो सादा, संयमपूर्ण और प्राकृतिक जीवन पद्धति से रहता है। नवयुवकों को फैशनों, प्रसाधानों होटली वस्तुओं का ज्ञान बढ़ाने के बजाय स्वास्थ्य के नियमों, आचरण की रीतियों, संयम निर्वाह की रीतियों का ज्ञान बढ़ाना और उनका पालन करना चाहिये। जिससे वे सादी वेशभूषा में भी अपने दमकते हुये व्यक्तित्व से फैशनेबुल देशों को स्वामी विवेकानन्द की तरह प्रभावित कर सकें। साथ ही भीम, अर्जुन, भीष्म और राणा, शिवा एवं पोरस, चन्द्रगुप्त की तरह आक्रान्ताओं को परास्त कर सकने की शक्ति पा सकें।

अन्दर और भीतर की पवित्रता

पवित्रता, शुद्धता, स्वच्छता मानव-जीवन को ऊँचा उठाने के लिये एक महत्त्वपूर्ण सद्गुण है। अनेक लोग स्वच्छता अथवा सफाई का अर्थ केवल ऊपर की टीमटाम, आकर्षक श्रृंगार या बढ़िया फैशन बना लेना ही समझते हैं। कुछ लोगों की दृष्टि में बढ़िया वस्त्र, आभूषण, प्रसाधन-सामग्री का उपयोग करना सफाई और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सौन्दर्य का प्रमाण माना जाता है। कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो शरीर और वस्तुओं की अधिक सफाई, सौन्दर्य की वृद्धि आदि बातों को सांसारिक प्रपंच मानकर इनकी उपेक्षा करने में ही महानता का अनुभव करते हैं। पर ये सभी दृष्टिकोण एकांगी हैं। यह हो सकता है कि कुछ लोग विलासप्रियता अथवा श्रृंगार के भाव से ही स्वच्छता और सफाई करते हों, यह भी हो सकता है कि अन्य लोग अपना वैभव, बड़प्पन प्रकट करने के दृष्टिकोण से सफाई पर ध्यान देते हों, पर इससे स्वच्छता की प्रवृत्ति को अनावश्यक या उपेक्षणीय नहीं माना जा सकता। वास्तव में स्वच्छता, सफाई पवित्रता एक ही उच्च मनोवृत्ति के रूप हैं और शरीर को स्वस्थ, मन को प्रसन्न तथा आत्मा को शान्त रखने में इनका बड़ा योग रहता है। बाह्य स्वच्छता और पवित्रता से अन्तःकरण की पवित्रता की भी वृद्धि होती है और मन में अशुद्ध भावों का उदय होना स्वयमेव कम पड़ जाता है।

पवित्रता और स्वच्छता से मनुष्य की श्रेष्ठता अथवा अधोन्मुख होने का परिचय मिल जाता है। हमारे देश में एक श्रेणी के ऐसे साधु पाये जाते हैं, जो सब तरह से गन्दे काम करने में ही आध्यात्मिकता समझते हैं। सर्व साधारण भी उनको परम आत्मज्ञानी अवधूत या अघोरी आदि समझकर पूजनीय मान लेते हैं। पर यह एक बड़ा भ्रम या अज्ञान ही है। मनुष्य के विकास और आध्यात्मिकता का प्रमाण केवल ज्ञान और भक्ति की बातें करने से नहीं मिल सकता। मनुष्य जो कुछ कहता है, उसका परिचय उसके व्यावहारिक जीवन से ही मिल सकता है। जो व्यक्ति तत्वज्ञान के नाम पर स्वच्छता को अनावश्यक बतलाते हैं, पर थोड़ी-सी सांसारिक सामग्री या सम्पत्ति के लिये मरने-मारने पर उतारू हो जाते हैं अथवा किसी प्रकार का नीच कर्म करने लगते हैं, उनकी बात का विश्वास कौन कर सकता है ?

संसार के लोग सुन्दरता के बड़े प्रेमी बनते हैं। क्या साधारण ग्रामीण और क्या नगर निवासी बाबूजी, सेठजी और रईस, सभी सुन्दरता के प्रशंसक और चाहने वाले होते हैं। पर उनकी सुन्दरता की रुचि या कसौटी पृथक्-पृथक् होती है तो भी एक बात सबको माननी पड़ती है कि सुन्दरता में स्वच्छता और निर्मलता का समावेश अवश्य होना चाहिये। ऐसा व्यक्ति शायद ही कोई होगा, जो मलयुक्त वस्तु को सुन्दर बतलाता हो। इसी तथ्य को एक लेखक ने इन शब्दों में प्रकट किया है—

"संसार में सभी सुन्दरता चाहते हैं। परन्तु वास्तविक सौन्दर्य का ज्ञान तो किसी-किसी बुद्धिमान, विवेकी मानव को ही होता है। जो कुछ निर्मल है, निर्लिप्त हैं, हितकर है वही सुन्दर है। जो मलयुक्त है, दोषयुक्त है वही असुन्दर है। दोष के सङ्ग से सुन्दर भी असुन्दर बन जाता है और गुण के सङ्ग से असुन्दर भी सुन्दर लगने लग जाता है। जिस प्रकार सुन्दर वस्त्रों के सङ्ग से शरीर सुन्दर प्रतीत होता है और सुन्दर शरीर पर वस्त्राभूषण भी सजने लगते हैं, उसी प्रकार सुन्दर, मधुर शब्दों से वाणी सुन्दर होती है, सुन्दर भावों से मन सुन्दर बन जाता है, सुन्दर विचारों से बुद्धि सुन्दर होती है और अनन्त सौंदर्य निधि आत्मा परमात्मा के सङ्ग से जीवात्मा सुन्दर होता है।"

वास्तविक सुन्दरता वही है जिससे मनुष्य का जीवन ही ऐसा सुन्दर बन जाये कि सब लोग उसकी तरफ आकर्षित हों, उसकी प्रशंसा करें और उससे प्रेम करने लगें। पर ऐसी सुन्दरता तभी प्राप्त हो सकती है, जब हमारा शरीर, मन, चरित्र, आचार-विचार आदि सब कुछ निर्मल और पवित्र हो। शारीरिक, स्वच्छता और पवित्रता के बिना स्वास्थ्य का ठीक रह सकना सम्भव नहीं होता! जिस व्यक्ति का स्वास्थ्य गिरा हुआ रहेगा, वह किसी भी सांसारिक कार्य में अच्छी सफलता न पा सकेगा। मन की शुद्धता के बिना मनुष्य सज्जनोचित व्यवहार नहीं कर सकता। संसार में सच्चे साथी, मित्र, हितैषी सद्व्यवहार द्वारा ही मिल सकते हैं। स्वार्थी अथवा कपटी स्वभाव के मनुष्यों को कभी सच्चे मित्र नहीं मिल सकने और उनको अन्य सभी लोग दुर्जन और ठगने वाले ही दिखाई पड़ते हैं। चरित्र की पवित्रता से ही मनुष्य समाज में विश्वसनीय बनता है तथा अन्य लोग उसका सम्मान करते हैं। जिसके चरित्र पर दूसरे व्यक्तियों को सन्देह हो वह सबकी निगाह में गिर जाता है और कभी सच्ची प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त कर सकता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सारांश यही है कि जिस प्रकार मनुष्य का अस्तित्व अन्योन्याश्रित है, उसी प्रकार जीवन के विभिन्न अंग भी एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। किसी एक विषय में उन्नति कर लेने से मानव-जीवन कभी सफल नहीं माना जा सकता। यदि केवल बाहरी सुन्दरता और रंग रूप को ही महत्त्वपूर्ण समझा जाय तो यह वेश्याओं में भी देखने में आता है, पर उनके जीवन को कौन प्रशंसनीय कह सकता है ? इसी प्रकार स्वास्थ्य की निगाह से खूब मजबूत तगड़े, शक्तिशाली, पहलवान जिनका चरित्र यदि उत्तम नहीं होता और बोल-चाल में भी अक्खड़पन प्रकट होता है कहाँ लोक-प्रिय या सम्माननीय समझे जाते हैं। इसी प्रकार जो लोग पूजा-पाठ में विशेष लगे रहते हैं और धार्मिक क्रियाकाण्ड का पालन करते रहते हैं, पर जिनमें परोपकार, विनय, सज्जनता आदि गुणों का अभाव होता है, वे कैसे जीवन में सफलता प्राप्त कर सकते हैं ? इसलिये हमको यह भली प्रकार समझ लेना चाहिये कि मानव-जीवन के अनेक पहलू हैं, उन सभी की उन्नति करने से, उनको शुद्ध तथा पवित्र बनाकर ही हम अपने जीवन को वास्तव में सुन्दर, संसार के लिये उपयोगी, महत्त्वपूर्ण बना सकते हैं।

इस प्रकार के सर्वांगपूर्ण और सुन्दर जीवन की प्राप्ति तभी हो सकती है, जब मनुष्य की आत्मा सुन्दर हो। यों प्रत्यक्ष में मनुष्य का शरीर भौतिक जान पड़ता है और अधिकांश मनुष्य उसी को सब कुछ समझते भी हैं पर वास्तव में मनुष्य एक आध्यात्मिक प्राणी है और जब तक उसका अन्तःकरण शुद्ध, पवित्र, सौन्दर्यवान न होगा, तब तक वह बाहरी दृष्टि से भी अपने जीवन को कदापि सुन्दर बनाने में समर्थ नहीं हो सकता। इसी तथ्य को समझकर भारत के प्राचीन मनीषियों ने मानव-प्रकृति के तीन गुणों—सात्विक, राजसिक, तामसिक की बड़े गम्भीर भाव से विवेचना की थी और प्रत्येक वस्तु, कार्य और मनुष्य की श्रेष्ठता अथवा निकृष्टता का आधार उसी में ढूँढ़ निकाला था। उनका कथन है कि प्राचीन संस्कारों बाल्यावस्था के वातावरण और अपने व्यवहार तथा रुचि के द्वारा जिस मनुष्य की आत्मा का जैसा विकास होता है, उसी के अनुसार उसे सफलता या असफलता प्राप्त होती है।

जिस मनुष्य ने अपना जीवन आलस्य अकर्मण्यता में व्यतीत किया है, जिसे उद्योग, परिश्रम अध्यवसाय की रुचि नहीं है, जिसमें हरामखोरी, पराश्रित रहने की प्रवृत्ति ने जड़ जमा रखी है, वह कभी श्रेष्ठ और सुन्दर जीवन प्राप्त करने की आशा नहीं रख सकता। चाहे भगवान ने जन्म से उसे सुन्दर शरीर दिया हो तो भी अपने आचरणों और गन्दे मनोविचारों के द्वारा वह उसे वीभत्स बना लेगा। ऐसे लोग सब जगह प्रायः तिरस्कार लांछना और अपमान ही पाते हैं और इसलिये उनकी दृष्टि में तमाम दुनियाँ ही दुःखपूर्ण, कुरूप, घृणा करने योग्य जान पड़ती है। फलतः वे स्वयम् भी वैसे ही बनते चले जाते हैं। अतः और बाह्य मलीनता ऐसे लोगों में प्रत्यक्ष दिखलाई देती है, और उसके कारण वे सर्वत्र उपेक्षणीय और निकृष्ट ही सिद्ध होते हैं। ये मनुष्य तामसिक श्रेणी के होते हैं।

दूसरे राजसिक श्रेणी के मनुष्य सांसारिक दृष्टि से बहुत कुछ अग्रसर अथवा प्रगतिशील दिखाई पड़ते हैं। वे पर्याप्त परिश्रमी, क्रियाशील, हर तरह के उपायों से अपने उद्देश्य की पूर्ति करने वाले होते हैं। साथ ही वे शारीरिक सुखों के इच्छुक, तरह-तरह के शौकों में लगे हुये स्वादिष्ट भोजन और सुन्दर वस्त्राभूषणों के प्रेमी भी होते हैं। इस कारण उनमें स्वार्थ की भावना प्रबल हो जाती है और वे तरह-तरह की चालों से काम लेने लग जाते हैं। ऐसे लोगों की दृष्टि में ईमानदारी या बेईमानी, सच्चाई या झूँठ उदारता या कठोरता, वास्तविकता या ढोंग आदि का कोई महत्त्व नहीं होता। जिस समय जिस उपाय से अपना स्वार्थ सिद्ध होता हो, उसी से वे काम लेने को तैयार हो जाते हैं। यही कारण है कि ऐसे लोगों का जीवन अस्थिर होता है। कभी वे बड़े भद्र पुरुष जान पड़ते हैं, बड़ी सज्जनता की मीठी बातें करते हैं और कभी स्थिति बदलते ही बड़े कठोर अनुदार, लड़ाका और असभ्यता का व्यवहार करने वाले भी बन जाते हैं। इसका कारण यही है कि उनकी आत्मा का विकास बहुत कम हुआ होता है और वे इस संसार तथा इसके भौतिक पदार्थों को ही सबसे अधिक महत्त्व का समझते हैं। इसके फलस्वरूप ऐसे लोगों की बाह्य सुन्दरता क्षणस्थायी और परिवर्तनशील बनी रहती है। उनकी स्वच्छता, शुद्धता, पवित्रता भी अधिकांश में दिखावटी ही होती है और उसका वैसा ही परिणाम भी होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस दृष्टि से जीवन की स्थायी श्रेष्ठता, सच्ची सुन्दरता और वास्तविक उपयोगिता का मूल आधार सात्विक प्रकृति ही हो सकती है, ऐसे मनुष्य में जो शुद्धता, पवित्रता और निर्मलता की भावना होती है, वह उसके आन्तरिक धर्म, कर्त्तव्य, आत्मोन्नति के विचारों द्वारा उत्पन्न होती है। वह केवल दिखाने के लिये ही सज्जनोचित व्यवहार नहीं करता वरन् उसके हृदय में दूसरे लोगों के लिये कल्याण-भावना होती है। वह केवल अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये मधुर वाणी में सम्भाषण नहीं करता वरन् उसके भीतर दूसरों के लिये आत्मभाव की भावना ही प्रबल रहती है। उसका बाह्य शौच, स्नान, ध्यान, व्यायाम, उचित आहार-विहार दिखावटी नहीं होते, वरन् ये उसकी आत्मिक पवित्रता, सत्यता से ही उत्पन्न होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि चाहे आरम्भ में लोगों ऐसे मनुष्य की तरफ आकर्षित न हों, पर धीरे-धीरे उसके गुण, उसका महत्त्व उनकी समझ में आता जाता है और अन्त में वे उसके प्रशंसक, सम्मान करने वाले, उसका अनुकरण करने वाले बन जाते हैं।

इस प्रकार मानव-जीवन की सार्थकता सफलता के लिये भीतरी और बाहरी दोनों प्रकार की सुन्दरता की आवश्यकता है। बाहरी सुन्दरता श्रेष्ठता के बिना दुनियाँ जल्दी किसी का आदर-सम्मान नहीं करती और भीतरी उत्तमता के बिना बाहरी आकर्षण ज्यादा समय तक टिक नहीं सकता। इस प्रकार के भीतरी गुणों—दैवी स्वभाव के कारण बाहर से काले कुरूप दिखाई पड़ने वाले व्यक्ति भी सुन्दर बन जाते हैं, संसार उनकी तरफ बहुत अधिक आकर्षित हो जाता है। जिन महापुरुषों के नाम हम आज याद करते रहते हैं, जिनके उदाहरण देकर लोगों को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी जाती है, जिनकी पूजा और उपासना की जाती है, उनमें से बहुसंख्यक गोरे रंग के या नख-शिख से बहुत सुन्दर नहीं थे। कितने ही तो इस दृष्टि से कुरूप भी कहे जा सकते हैं। पर अपनी आत्मिक सुन्दरता के कारण वे लोगों को सुन्दर ही लगते थे और आज तक भी इसी कारण उनको स्मरण किया जाता है।

वास्तव में जिस मनुष्य की आत्मा शुद्ध होती है, जिसके विचार शुद्ध होते हैं, जिसका चरित्र पवित्र होता है, वह बाहर से भी कभी मलिन, गन्दा या अपवित्र नहीं रह सकता। उसकी शारीरक स्वच्छता भी अन्य लोगों की अपेक्षा बढ़कर होती है और वह बाहर से भी वैसा ही स्वस्थ रहता है जैसा कि अन्तर में। चाहे वह अन्य दुनियादार लोगों की तरह बहुत अधिक श्रृंगार, फैशन, सजावट न करता हो, पर उसकी स्वच्छता, निर्मलता, सुन्दरता में सदैव एक पवित्रता की झलक दिखाई देती रहती है, जिससे लोगों की दृष्टि में उसका महत्त्व बढ़ जाता है।

थकावट कैसे दूर हो ?

प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति काम करना और स्फूर्त, चुस्त रहना चाहता है। फिर आप सुस्त क्यों रहते हैं ? आपको वीर्य सम्बन्धी कोई व्याधि नहीं, मूत्र सम्बन्धी कोई बीमारी नहीं, आमाशय सम्बन्धी कोई बीमारी नहीं, फिर आप थके से, निष्प्राण से क्यों रहते हैं ?

क्या थकावट भी कोई व्याधि है ? फिर आप पर इसका आतंक क्यों छाया रहता है ? दिन भर के साधारण परिश्रम की थकावट रात की लम्बी गहरी नींद द्वारा गायब हो जानी चाहिये। प्रातः काल आपको मुस्कराती हुई कली की भाँति, शरीर को हल्का होकर चारपाई से विदा ग्रहण करनी चाहिये, किन्तु आप प्रायः कम ही इस अवस्था का अनुभव करते हैं।

मनुष्य थकावट का अनुभव जिन कारणों से करता है आपके भी सुस्त, भारी-भारी से बने रहने के वही कारण हैं। जब शरीर और मस्तिष्क अत्यधिक कार्य भार से एक समय तक दबता रहता है, जब मनुष्य पेट को भूलकर, सुस्वादु व्यंजनों से मसक की भाँति ठूंस-ठूंस कर भर लेता है, शेखी में आकर शक्ति से अधिक काम और कम आराम करता है, व्यायाम अथवा खेलों की प्रतियोगिता में सर्वप्रियता प्राप्त करने के लिये जान पर खेलता है अथवा जब किसी के शरीर के अवयव पर्याप्त परिश्रम से काफी घिसते हैं और उनके पुनः निर्माण के लिये पर्याप्त पौष्टिक आहार नहीं मिलता, उस समय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर में एक प्रकार की विक्षुब्धता ही उत्पन्न हो जाती है और हम थकावट का अनुभव करते हैं। यह थकान निरन्तर जारी रहने से किसी न किसी व्याधि का रूप धारण कर लेती है।

शरीर में हर समय टूटने और बनने की क्रिया होती रहती है। पुराने कोष्ठ टूटते और नवीन बनते रहते हैं। जब कार्याधिक्य अथवा अथक परिश्रम के कारण टूटने का काम अधिक और बनने का कम होता है, उस समय हमारे रक्त में एक प्रकार की रासायनिक गन्दगी मिलकर उसके साथ परिभ्रमण करने लग जाती है। उस रासायनिक गन्दे द्रव्य के न्यूनाधिक्य पर ही हमारी थकावट, सुस्ती और परेशानी निर्भर करती है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि एक थका हुआ परिश्रान्त व्यक्ति वह है, जिसके रक्त में विष सञ्चालित हो रहा है। डाक्टरों और कतिपय वैज्ञानिकों ने इस विष को लेकर स्वस्थ पशुओं के रक्त में दाखिल किया है। परिणामस्वरूप उन पशुओं में भी थकावट के वे समस्त लक्षण पैदा हो गये हैं, जो उस थके हुये व्यक्ति में मौजूद थे, जिनके रक्त का विष लिया गया था।

यदि शरीर में थकावट बढ़ती रहे, रासायनिक विष की वृद्धि होती रहे, तो यह मांसपेशियों, हृदय, मस्तिष्क और रक्त को ही नहीं, समस्त शरीर को विषाक्त कर देगा। अस्तु, थकावट शरीर की ओर से आने वाले खतरे की एक घण्टी है। महर्षि चरकाचार्य ने व्यायाम करने वालों को चेतावनी भी दी है कि वे सामर्थ्य से अधिक श्रम न करें, थकावट से बचें।

थकावट के लक्षण शारीरिक भी हो जाते हैं और मानसिक भी अथवा दोनों ही। हम आये दिन इनका अनुभव करते रहते हैं। खूब व्यायाम करने अथवा तैरने के पश्चात् हमारी मांसपेशियाँ स्वतः थकान का अनुभव करने लग जाती हैं। शारीरिक थकावट, मानसिक थकावट का भी कारण बन जाती है। मानसिक थकावट मानसिक कारणों से भी उत्पन्न होती है: अधिक काल तक निरन्तर पढ़ते रहने, मस्तिष्क को अधिक उलझनों और चिन्ताओं के चंगुल में फँसा देने से मस्तिष्क की समतोलन शक्ति शिथिल हो जाती है। इस अवस्था में मस्तिष्क थककर कुछ काम नहीं कर पाता।

तुमुल कोलाहल और शोर भी मानसिक थकावट का एक प्रधान कारण है। आपने देखा होगा कि शहरों के निवासियों को थकावट बहुत जल्दी घेर लेती है। वे कुछ दूर चलते ही तांगा और बस की बाट जोहने लगते हैं। इसका कारण है शहरों का शोर-शराबा, सड़कों पर आने-जाने वाली मोटरों की भों-भों, ताँगों की खड़खड़ाहट, इंजनों की चीख और दुकानदारों ग्राहकों की कशमकश ! यह कोलाहल सीधा हमारे स्वास्थ्य पर कोई प्रभाव नहीं डालता किन्तु शनैः-शनैः स्नायविक क्षुब्धता उत्पन्न कर हमारी मानसिक थकावट का कारण अवश्य बनता है। शब्द लहरों द्वारा हमारे मस्तिष्क तक पहुँचता है। शरीर के सभी केन्द्र शब्द लहरों से प्रभावित होते हैं। यही कारण है कि किसी निर्जन पथ पर जाते हुये, जब आप भयानक शब्द सुनते हैं तो शरीर के केन्द्र प्रभावित होते हैं, हम चौंक पड़ते हैं और शरीर थर-थर काँपने लगता है। नगर निवासियों के अशान्त, नाजुक, निर्बल रहने का एक कारण यह भी है। जर्मन महासमर के समय विस्फोटक पदार्थों की चमक और शोर से कितने ही व्यक्ति मौत का शिकार बन गये थे।

अस्तु, शारीरिक मानसिक थकावट का यत्किंचित अनुभव करते ही कार्य बन्द कर आराम करना चाहिये। कभी-कभी स्वप्न दोष, हृदयस्पन्दन, ब्लडप्रेशर, उन्माद आदि के भयंकर रोग इसी थकावट के वरदान स्वरूप लोगों को मिल जाते हैं। मानसिक और शारीरिक थकावट ही है, जो लोगों को प्रायः गंगातट पर निवास करने, एकान्तवास करने, कश्मीर और शैल-शिखरों पर जाने, नगर निवासियों को गाँवों की ओर आकर्षित करने और लोगों को संसार विरक्त तक बनने के लिये प्रेरित करती है।

१—व्यायाम करने वालों को चाहिये कि शरीर में शैथिल्य का अनुभव करते ही वे उसे बन्द कर दें। १५ मिनट तक खुली हवा में टहलें। फिर दूध लस्सी या शरबत, बादाम अथवा अन्य किसी तरल-पौष्टिक पेय का सेवन करें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

२—मजदूरों और अन्य परिश्रम करने वालों को भी थकने पर सुस्ताना और परस्पर हँसना बोलना बहुत आवश्यक है।

३—विद्यार्थियों को मानसिक थकावट का अनुभव करते ही पुस्तक छोड़कर पार्क में टहलना और कुछ गाना थकावट को दूर करने के लिये आवश्यक है।

४—बहुत-से नागरिक मानसिक थकावट को दूर करने के लिये थियेटर, परिस्तान, पार्क अथवा सिनेमाघरों में पहुँचते हैं किन्तु यह तरीका उसे घटाने के बजाय बढ़ाता है। उन्हें काम से अवकाश पाने के पश्चात् टहलते हुये शहर के किसी निर्जन स्थान या नदी के तट पर जाकर घूमना, बैठना अधिक स्वास्थ्यकर और उपयोगी रहेगा।

श्रम ही नहीं विश्राम भी

श्रम की उपयोगिता निःसन्देह बहुत अधिक है। शारीरिक अंगों के परिचालन, रक्त-संचार में क्रियाशीलता तथा पाचन संयन्त्रों को मजबूत बनाये रखने के लिये परिश्रम का बड़ा महत्त्व है। इसमें आलस्य करने से स्वास्थ्य गिरता है, शक्ति क्षीण होती है और स्फूर्ति चली जाती है। आलस्य और प्रमाद से जीवन का हर एक पहलू प्रभावित हुये बिना नहीं रह पाता। इससे शारीरिक शक्तियाँ शिथिल पड़ जाती हैं, मनोबल गिरता है और समाज का गौरव नष्ट हो जाता है। सचमुच परिश्रम जीवन का प्रकाश है, जिससे मनुष्य सरलतापूर्वक अपनी विकासयात्रा पूरी कर लेता है।

किन्तु इसका एक दूसरा पहलू भी है। वह यह है कि निरन्तर श्रम करते रहने से शारीरिक शक्ति का एक निश्चित अंश खर्च हो जाता है। इससे शिथिलता आ जाती है और शरीर टूटने लगता है। नैसर्गिक रूप से पुनः जीवन शक्ति प्राप्त करने के लिये स्वयं प्रकृति हमें विश्राम करने के लिये विवश कर देती है। श्रम के बाद विश्राम की इसलिये अतीव आवश्यकता है। दिन के बाद रात, जीवन और मृत्यु का क्रम इसी सिद्धान्त पर आधारित है कि अति श्रम से उत्पन्न शक्ति-ह्रास दूर करके अगले जीवन के लिये पर्याप्त शक्ति व सजीवता प्राप्त कर ली जाये। श्रम का विश्राम से ऐसा ही सम्बन्ध है। संयत जीवन का आधार यही है कि हम परिश्रम तो करें किन्तु विश्राम करना न भूलें। इससे शक्ति और शान्ति मिलती है।

बड़ी-बड़ी मशीनों को भी निश्चित समय के बाद विश्राम देना पड़ता है। सप्ताह में एक दिन रविवार का अवकाश इसलिये दिया जाता है कि शेष ६ दिन तक जो शरीर शिथिल होता रहा, मानसिक तनाव पैदा हुआ, शक्ति खोई उसे एक दिन पूर्ण विश्राम देकर फिर से ठीक कर लें। श्रम एक प्रकार का ध्वंस कार्य है। हर श्रमयुक्त कार्य से शरीर का कुछ न कुछ अंश अवश्य क्षय होता है। इसे पुनः प्राप्त करने के लिये ही यह अवकाश देने की पद्धति चलाई गई है। इससे खोई हुई सामर्थ्य शक्ति व क्षमता आसानी से पुरी हो जाती है। इस प्रकार विश्राम में बिताया हुआ समय कभी-भी निरर्थक नहीं जाता। वरन् आगे के लिये शक्ति-संचय कर ली जाती है।

मानव जीवन में ऐसा सुयोग मिलना सरल नहीं है। इस युग में तो यह समस्या और भी जटिल रूप धारण कर चुकी है। आज की परिस्थितियों में आवश्यकतायें इतनी बढ़ गई हैं कि उन्हें जुटाने में मनुष्य को फुरसत नहीं मिलती। अभाव और दरिद्रता, लोभ और प्रभुत्व की महत्त्वाकांक्षाओं के कारण लोगों में बड़ी बेचैनी उठ रही है। सभी उतावले होकर इन अनियन्त्रित कामनाओं के पीछे बुरी तरह पागल हो रहे हैं। इसका मनुष्य के स्वास्थ्य पर कितना दूषित प्रभाव पड़ा है ? यह किसी से छुपा नहीं है। आठ घण्टे ऑफिस में काम करके आये हैं तो घड़ी भर चैन से बैठे नहीं कि ट्यूशन पढ़ाने चल दिये। वहाँ से लौटकर आये तो दूसरे भारी काम करने पड़े। हारा थका शरीर किसी प्रकार विवश होकर आज्ञायें तो पूरी करता रहता है किन्तु यह क्रम देर तक नहीं चल पाता कि कोई बीमारी, कमजोरी या रोग आ दबोचता है। फिर अति श्रम से कमाया हुआ यह धन डॉक्टरों की भेंट में ही स्वाहा कर देना पड़ता है। स्वास्थ्य की खराबी हुई, शक्ति का पतन हुआ सो एक तरफ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्य व्यस्तता बुरी नहीं, किन्तु समुचित विश्राम भी तो मिले। कड़ी धूप में कठोर शारीरिक श्रम करने वाले किसान हर थोड़ी देर बाद किसी घने वृक्ष की शीतल छाया में आराम कर लेते हैं तो दुबारा काम करने की शक्ति मिल जाती है। ऐसा अभ्यास बनाया जा सकता है कि चार घण्टे के परिश्रम के बाद आधा घण्टे बैठकर या लेटकर विश्राम भी कर लें इससे स्वास्थ्य स्थिर बना रहता है।

कार्य से शारीरिक शक्ति का पतन उतना नहीं होता जितना जल्दबाजी और चिन्ता से। एक कहावत है—"आदमी कैसे मरा ? काम के बोझ से ? नहीं जल्दबाजी और उद्वेग से।" दूसरों से आगे बढ़ जाने की प्रतियोगिता पूर्ण महत्वाकांक्षा के कारण मनुष्य को इतनी उतावली, इतनी जल्दबाजी मचती है कि वह एक दिन में सारी आवश्यकताओं की अधिक से अधिक पूर्ति कर लेना चाहता है। इस दौड़-धूप के कारण बेचारा आधी घड़ी विश्राम भी नहीं कर पाता। व्यर्थ ही शारीरिक शक्तियों को घुलाता रहता है। इसका परिणाम थोड़े ही दिनों में स्वास्थ्य की खराबी के रूप में दिखाई पड़ने लगता है तो वह बुरी तरह पछताते दुःखी एवं चिन्तित होते हैं। आखिर इस जल्दबाजी में क्या रखा है, यह एक विचारणीय बात है। यह मानसिक अस्थिरता कभी भी विश्राम नहीं लेने देती। इससे बचने में ही श्रेय है, इसी से स्वास्थ्य सुरक्षित रखा जा सकता है।

विश्राम का यह अर्थ कदापि नहीं होता कि जब काम से थक जाय तो बैठकर या लेटकर शारीरिक थकान तो दूर करें किन्तु मन में बुरी तरह दुश्चिन्तायें घूमती रहें। विद्वेष, क्रोध, प्रतिशोध और हिंसा की भावना उठ रही हों तो शारीरिक दृष्टि से विश्राम करते हुये भी आराम न मिलेगा। मानसिक बेचैनी का शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे धमनियाँ शिथिल पड़ जाती हैं, खून खराब होने लगता है और स्वास्थ्य गिर जाता है।

विश्राम की सार्थकता मानसिक तनाव से बचकर शारीरिक थकान को मिटाने से होती है। यह उद्देश्य सो जाने या निष्क्रिय बैठ जाने मात्र से पूरा नहीं होता। इस समय वे सभी साधन जो मानसिक थकान को दूर करते हैं—मनोरंजन, प्रसन्नता, उत्साह और प्रफुल्लता प्रदान करते हों, उन्हें भी अपनाया जाना चाहिये ताकि शरीर और मन दोनों का विश्राम हो जाय।

सामूहिक रूप से हँसते गाते और मनोरंजन करते हुये किसान दिन भर कड़ी मेहनत करते रहते हैं। सैनिकों में मनो-विनोद की आदत पड़ जाती है, जिससे वह चौबीसों घण्टे कार्य कर सकने की क्षमता रखते हैं। इससे यह पता चलता है कि मानसिक विश्राम शारीरिक विश्राम से भी आवश्यक है। स्वास्थ्य को सुस्थिर बनाये रखने के लिये इन दिनों की ही आवश्यकता है। **डा. हरबर्ट ए. रेमन** का कथन है कि शारीरिक विश्राम से मेल होने पर ही शरीर को पूर्ण विश्राम का सौभाग्य मिलता है।

मानसिक तनाव के कारण देखा गया है कि प्रायः लोगों को बड़ी देर तक नींद नहीं आती। यद्यपि शरीर चारपाई पर लेटा हुआ रहता है, पर इससे विश्राम की आवश्यकता पूरी नहीं हो पाती है। जब कभी ऐसी स्थिति आये तो शरीर को शिथिल करने का प्रयत्न करना चाहिये। यह विचार बार-बार मन में लाना चाहिये कि "मेरे जीवन में कोई समस्यायें नहीं हैं। मैं पूर्ण सुखी हूँ मेरा भविष्य सब प्रकार से उज्ज्वल है।" इस प्रकार सुखद विचारों में मस्तिष्क को उलझा देने से शरीर शिथिल होने लगेगा और थोड़ी देर में नींद आ जायेगी।

विश्राम करने के पूर्व अपने मन को चिन्ता शून्य बना लेना चाहिये। सारे शरीर को शिथिल बनाते हुये दोनों आँखें मूँद लेनी चाहिये। अब शरीर के आप किसी एक ही अंग का चिन्तन करना प्रारम्भ करें। आप देखेंगे कि अन्दर ही अन्दर उस अंग में क्षणिक उत्तेजना जागृत होती है और वह अंग शिथिल पड़ने लगता है। इसी प्रकार क्रम से सारे अंगों को शिथिल करने का अभ्यास करने से इच्छानुसार शरीर को शिथिल बनाकर पूर्ण विश्राम का आनन्द प्राप्त करना आसान हो जायेगा। एक-दो सप्ताह में यह क्रिया स्वाभाविक हो जायेगी। सोने या विश्राम करने के पूर्व शरीर को इस प्रकार शिथिल कर लेने से सच्ची व गहरी नींद आती है और उसी अनुपात से शरीर शक्ति प्राप्त कर लेता है और आगे कार्य करने के लिये सजीव हो उठता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिस प्रकार अधिक परिश्रम से विश्राम करने का जी करता है, उसी प्रकार किसी रोग की अवस्था में भी विश्राम की आवश्यकता है। विश्राम एक प्रकार रोग का प्राकृतिक इलाज है। **डा. सैमुएल जैक्सन** ने लिखा है—"पूर्ण विश्राम सभी बीमारियों का अचूक इलाज है।" इससे स्नायु स्निग्ध होते हैं और उनकी शिथिलता दूर हो जाती है फलतः रोग दूर होने लगते हैं।

विश्राम स्वास्थ्य के लिये उपयोगी ही नहीं आवश्यक भी हैं किन्तु इसकी अति न होने पावे इसका सदैव ध्यान बना रहे। अति विश्राम का अर्थ है आलस्य और अकर्मण्यता, जो विकास के महान् शत्रु हैं। हमें अपने शारीरिक स्वास्थ्य के लिये तथा खोई शक्ति प्राप्त करने के लिये ही विश्राम करना चाहिये। इसी दृष्टि से इसकी उपयोगिता है।

जीवन-रस को छककर पीते ये चिर-युवा

आमतौर पर ६०-७० वर्ष से अधिक आयु के सम्बन्ध में यह माना जाता है कि इस उम्र में मनुष्य की जीवनी शक्तियाँ चुकने लगती हैं। लोग इस आयु में मृत्यु की प्रतीक्षा करने लगते हैं और जीवन से हताश होकर निष्क्रिय, निद्रित, मरणोन्मुख मृत प्रायः जिन्दगी जीने लगते हैं। वास्तविकता यह है कि मनुष्य की पूर्ण आयु १०० वर्ष की निर्धारित की गई है। ऋषियों ने भी मनुष्य की आयु के चार भाग करके, उसे चार आश्रमों में बाँटकर क्रमशः व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों को पूरा करने के निर्देश दिये थे किन्तु इन दिनों थोड़े ही व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो ६०-७० की आयु पार करते हैं। ऐसे व्यक्तियों की गिनती तो उंगली पर की जा सकती है, जिन्होंने सौ वर्ष की जिन्दगी देखी और जीयी है। पिछले दिनों अमरीका में हुई जनगणना के अनुसार वहाँ २६ हजार व्यक्ति ऐसे थे, जो सौ वर्ष की आयु पार कर चुके थे और इसके बाद भी वे सक्रिय थे।

इतनी लम्बी अवधि तक कैसे जीवित रहा जा सका ? और कैसे क्रियाशील जीवन व्यतीत किया गया ? इसका उत्तर प्राप्त करने के लिये डॉ० आर्ष गोलुक और डॉ० एपिन हिल ने खोजबीन की, उन्होंने २६ हजार व्यक्तियों में से ४०० ऐसे व्यक्तियों को चुना, जो सौ वर्ष की आयु पार कर चुके थे और उसी प्रकार व्यस्त जिन्दगी बिता रहे थे, जैसी कि अन्य लोग ५०-६० की आयु में बिताया करते हैं। इन ४०० व्यक्तियों में ५५० पुरुष थे और २५० महिलायें थीं। महिलाओं की संख्या इसलिये अधिक रखी गई कि देखा गया था, पुरुषों की अपेक्षा महिलायें हीं अधिक दीर्घजीवी होती हैं।

इस सर्वेक्षण के समय आशा यह की गई थी कि ऐसे उत्तर प्राप्त होंगे, जिनसे दीर्घ जीवन के सम्बन्ध में किन्हीं अविज्ञात रहस्यों पर से पर्दा उठाया जा सकेगा और कुछ ऐसे सूत्र प्राप्त हो सकेंगे, जिन्हें अपनाकर दीर्घ जीवन की इच्छा रखने वाले दीर्घायुष्य प्राप्त कर सकेंगे, इस बात की भी तैयारी की गई थी कि जो निष्कर्ष प्राप्त होंगे, उन्हें अनुसन्धान का विषय बनाया जायेगा और देखा जायेगा कि इन सिद्धान्तों को किस स्थिति में, किस व्यक्ति के लिये किस प्रकार प्रयोग कर पाना सम्भव है ? किन्तु जब सर्वेक्षण पूरा हुआ तो सभी पूर्व कल्पनायें मिथ्या सिद्ध हुईं और प्राप्त अनुसन्धान के लिये की गई तैयारियाँ निरस्त कर देनी पड़ीं।

जिन व्यक्तियों से प्रश्न किया गया कि आप लम्बी अवधि तक कैसे जिये ? उनमें से २८ प्रतिशत ने कहा कि हम इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकते हम नहीं जानते कि इतनी उम्र हमने कैसे पाई ? हमने इसके लिये कोई विशेष प्रयास नहीं किया, यह अनायास ही हो गया। २२ प्रतिशत लोगों ने इसे ईश्वर की इच्छा बताया, २७ प्रतिशत का कहना था कि व अपनी समस्याओं की ओर से उदासीन रहें। १६ प्रतिशत व्यक्तियों ने अपने दीर्घ जीवन का कारण परिश्रमशीलता और नियमितता को बताया। ११ प्रतिशत ने कहा कि हमारे पूर्वज दीर्घजीवी होते रहे हैं, सो हमें भी दीर्घजीवन उनसे विरासत में मिला। केवल ६ प्रतिशत व्यक्ति ऐसे थे, जिन्होंने कहा कि उन्होंने जानबूझकर लम्बी जिन्दगी जीने के लिये नियमित आहार-विहार और स्वास्थ्यों के नियमों का पालन किया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस सर्वेक्षण में डॉ॰ गैलुप और डॉ॰ हिल ने दीर्घजीवी व्यक्तियों से जो उत्तर प्राप्त किये वे आश्चर्यजनक भले ही न हों पर कौतूहलवर्धक अवश्य हैं। ये निष्कर्ष ऐसे नये तथ्यों पर प्रकाश डालते हैं, जिनसे दीर्घ जीवन प्राप्त करने के लिये कोई चमत्कारी गुरु प्राप्त करने को लालायित व्यक्तियों के हाथ निराशा ही लग सकती है। इन उत्तरों में एक अजीब बात यह है कि सोचना पड़ता है, क्या सभ्यता के इस युग में दकियानूसीपन वास्तव में दीर्घजीवन का आधार बन सकता है ?

१५५ वर्षीय सिनेसिनोटी ने नशेबाजी से हमेशा परहेज रखा। १०० वर्षीय जान यषर्टस ने कहा कि मुझे पकवान कभी नहीं रुचे और मैंने हमेशा सादा भोजन ही किया। १०२ वर्षीय दन्त चिकित्सक को हमेशा मस्ती में रहना अच्छा लगा। अपने काम से फुरसत मिलने पर उसे हमेशा गाना ही प्रीतिकर लगा। हालांकि उसका कंठ मधुर नहीं है फिर भी वह अपने क्लिनिक में पुराने गीतों को भर्राये स्वर में गाता रहता है।

लुलु विलियम्स ने बताया कि उसने कभी भरपेट भोजन नहीं किया। वह हमेशा भूख से कम भोजन करता रहा। श्रीमती मैगार १०३ वर्ष की हो चुकी है, आलू और रोटी उनका प्रिय आहार रहा है। इसके अलावा उन्होंने कोई व्यंजन नहीं खाया। स्त्रियों में से अधिकांश ने कहा कि वे अपने घर गृहस्थी में इस तन्मयता और गहराई से लगी रहीं कि उन्हें अपनी उम्र का कभी ख्याल नहीं हुआ।

१७६ वर्षीय हैफगुच नामक गड़रिये ने कहा कि मैं अपने आपको भेड़ों के झुंड में से ही एक भेड़ मानता रहा और ढर्रे के जीवन क्रम पर सन्तोष किया। उसने न बेकार की महत्वाकांक्षायें पाली और न सिर खपाने वाले झंझट मोल लिये। **वलोरडे** का कथन है कि एक दिन जवानी में उसने ज्यादा शराब पी तो वह बीमार पड़ गया। ठीक होने के बाद उसने निश्चय किया वह ऐसी चीजें नहीं खाया करेगा, जिसने लाभ के स्थान पर उलटी हानि होती हो। मेनदोके ने जोर देकर कहा कि मैंने कभी ज्यादा सोच विचार करने की जहमत नहीं पाली और न ही कभी किसी बात पर खीझा।

यह आश्चर्य की बात है कि इन वृद्धों में से नियमित व्यायाम करने वाले तो १० प्रतिशत भी नहीं थे। अधिकांश का कहना यह था कि हमारा दिन भर का काम ही ऐसा रहा, जिसमें शरीर थककर चूर-चूर हो जाता है फिर हम क्यों बेकार के झंझट में पड़ते ? वर्ग विभाजन के अनुसार आधे से अधिक लोग ऐसे निकले जो श्रमजीवी थे और कड़ी मेहनत के द्वारा ही अपनी जीविका उपार्जित करते थे स्त्रियों में भी अधिकांश श्रमिक मजदूर वर्ग की थीं। मानसिक श्रम करने पर भी दीर्घजीवन प्राप्त करने वालों का प्रतिशत केवल ८ प्रतिशत ही निकला।

सैन फ्रान्सिस्को का १०३ वर्षीय विलियम मेरी सैनिक था। उसने कहा युद्ध में मुझे कई बार गोलियाँ लगी और प्रायः गहरी चोटें आईं। उपचार के लिये अस्पताल में भी रहना पड़ा और गम्भीर आपरेशन भी हुये पर मरने की आशंका कभी छू तक नहीं पाई। उन कष्टकर दिनों में भी कभी आँसू नहीं निकले बल्कि यही सोचता रहा कि अस्पताल से छुट्टी मिलने पर वह जल्दी ही घर लौटेगा और शानदार जिन्दगी गुजारेगा।

श्रीमती मेरुचीर्रे ने कहा कि उसे परिवार और पड़ौस के बच्चों से विशेष लगाव रहा है। उन्हीं के साथ हिलमिल कर उसने खुद को इतना तन्मय रखा कि अपना बुढ़ापा भी बचपन जैसी हर्षोल्लास भरी सरलता का आनन्द लेता रहा।

व्यवसाय के अनुसार दीर्घजीवियों का वर्गीकरण करने पर पता चला कि नौकरी पेशा लोगों की अपेक्षा स्वतन्त्र व्यवसाय में लगे लोग अधिक लम्बी जिन्दगी जीते हैं, उन्हें मालिकों की खुशामद नहीं करनी पड़ती और न उनकी डाँट-डपट सहकर अपने आपको व्यग्र रखना पड़ता है। स्वतन्त्र व्यवसाय करने के कारण इन लोगों को भले ही शारीरिक श्रम अधिक करना पड़ता हो, किन्तु उन पर हीनता और खिन्नता का दबाव नहीं पड़ता। कई व्यक्ति ऐसे भी थे जो नौकरी करते थे और नौकरी के दिनों में प्रायः अस्वस्थ रहते थे। देखा गया कि रिटायर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होने के बाद वे स्वस्थ रहने लगे। उनके नीरोग रहने का कारण यही था कि रिटायर होने के बाद उन्हें अपने पसन्द की दिनचर्या बिताने और स्वतन्त्र रूप से नई योजना बनाने का अवसर मिल गया।

इस सर्वेक्षण में एक बात स्पष्ट रूप से उभरकर आई। वह यह कि दीर्घायु प्राप्त करने के लिये अलमस्त प्रकृति का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसके बिना गहरी नींद नहीं आ सकती और जो शान्ति से निद्रा नहीं ले सकेंगे उन्हें लम्बी जिन्दगी कैसे मिलेगी ? इसी प्रकार खाने और पचाने की संगति जिन्होंने मिल ली, उन्हीं को निरोग रहने का अवसर मिला है और वे ही अधिक दिन तक जीवित रह सके हैं। एक वृद्ध व्यक्ति ने पेट के सही रहने की बात पर हँसते हुये प्रकाश डाला और कहा, यह तो नितान्त आसान है। बड़ी सरलता से कब्ज से बचा जा सकता है। भूख से कम खाया जाये तो न किसी को कब्ज रह सकता है और न ही डॉक्टर की शरण में जाने की जरूरत पड़ती है।

आस्था भी व्यक्ति को दीर्घायुष्य प्रदान करने में सक्षम और समर्थ आधार हैं। हेफेकु ने कहा, मैंने ईश्वर पर सच्चे मन से विश्वास किया है और माना है कि वह आड़े वक्त में निश्चित रूप से सहायता करता है। भावी जीवन के लिये निश्चिन्तता की स्थिति मैंने इसी विश्वास के आधार पर प्राप्त और निश्चित रहा। जेम्स हेनरी व्रन्ट का कथन है कि वह एक धार्मिक व्यक्ति है। विश्वास की दृष्टि से ही नहीं आचरण की दृष्टि से भी उसने धर्म का पालन किया। धार्मिक मान्यताओं ने उससे पाप पंक में गिरने का अवसर ही नहीं दिया।

गहराई से इन दीर्घजीवियों के मानसिक स्तर का विश्लेषण किया गया तो यह तथ्य सामने आये कि उन्होंने किसी के साथ छल-विश्वासघात या निष्ठुर व्यवहार नहीं किया। उन्होंने सज्जनता की नीति अपनाई और अपनी जिन्दगी की एक खुली किताब की तरह जिया, जिसमें दबाने लायक या छिपाने लायक कुछ भी नहीं था न तो उन्होंने किसी का बुरा चाहा और न ही कभी किसी का बुरा किया। फलतः सभी लोगों से उनके सम्बन्ध मैत्री और सद्भाव पूर्ण रहे, कभी कोई नोंक-झोंक हुई भी तो वह बात ऐसे ही भुला दी। किसी अप्रिय घटना को उन्होंने मन में गाँठ बाँधकर नहीं रखा। बेकार की बातों को अनसुनी कर देने और भुला देने के स्वभाव ने उन पर ऐसा मानसिक तनाव नहीं पड़ने दिया, जिसके कारण उन्हें उद्विग्न होकर रहना पड़े।

इन ४०० दीर्घजीवियों में से एक पेट्रिस ने अपने भूतकाल की सुखद स्मृतियों को बनाये रखने की आदत का अपना दीर्घजीवन का कारण बताया। वह अपनी सुखद स्मृतियों का रस ले-ले कर सुनाया करता था कि उसे इस बात की भी शिकायत नहीं थी कि वह वृद्ध हो गया है। उसे इस बात का गर्व था कि उसका अतीत बहुत शानदार रहा है। वह कहता था, भला यह भी कोई कम गर्व और सन्तोष की बात है ? आज के अवसान की तुलना करके अतीत की सुखद स्मृतियों और कल्पनाओं को क्यों धूमिल किया जाये ? हेन्स बोर्ड का कथन था कि उसने जिन्दगी भर आनन्द भोगा है। हर खट्टी-मीठी घटना से कुछ पाने और सीखने का प्रयत्न किया है। अनुकूलता का अपना आनन्द है और प्रतिकूलता का दूसरा। मैंने दोनों प्रकार की स्थितियों का रस लेने का उत्साह रखा और आजीवन आनन्दित रहा।

इस सभी दीर्घजीवियों के अनुभव प्राप्त करने के बाद निष्कर्ष यह सामने आया कि वे सभी अपनी वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट थे। वे मानते थे कि बुढापा अनिवार्य है और मौत भी एक निश्चित अटल सच्चाई है। फिर उससे डरने का क्या अर्थ ? इन ४०० व्यक्तियों में से सभी लोग सदा निरोग रहे हों, ऐसी बात नहीं है, बीच-बीच में बीमारियाँ भी सताती रहीं और दवा-दारू भी करानी पड़ी। पर मानसिक बीमारियों ने उन्हें कभी त्रास नहीं दिया। लम्बी अवधि में उन्हें अपने स्त्री-बच्चों तक को दफनाना पड़ा, कितनों का ही दाम्पत्य जीवन टूटा, अनेकों को तलाक लेना पड़ा और कईयों के बच्चे कृतघ्न निकले लेकिन इन सब बातों का उनके मन पर कोई गहरा प्रभाव नहीं पड़ने दिया। यों भी कहा जा सकता है कि वे मानसिक दृष्टि से इतने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परिपक्व थे अथवा उनकी संवेदना इतनी विकसित नहीं हुई थी कि इन घटनाओं का उन पर कोई असर होता। बहरहाल, इन दुःखद स्थितियों से वे अप्रभावित ही रहे छककर जीवन रस पीते रहे।

यह सुनकर अत्यन्त आश्चर्य होता है कि प्राचीन काल में सौ वर्ष से अधिक आयु तक जीवित रहना एक सामान्य बात थी। अविश्वसनीय इसलिये भी लगता है कि ऐसे उदाहरण मात्र अपवाद बनकर रह गये हैं। शतायु पार करने वाले व्यक्तियों को तो अब दैवी सामर्थ्य से सम्पन्न मानकर संतोष कर लिया जाता है। पर वास्तविकता यह है कि प्राकृतिक जीवनचर्या अपनाकर कोई भी व्यक्ति दीर्घ जीवन का लाभ प्राप्त कर सकता है, समय-समय पर विरले व्यक्तियों के उदाहरण मिलते रहते हैं। जो शतायु को पार कर चुके हैं, पर हाल ही में एक ऐसे गाँव का उदाहरण सामने आया है, जहाँ कि आकस्मिक दुर्घटनाओं के अतिरिक्त गाँव का कोई भी व्यक्ति सौ वर्ष के पूर्व नहीं मरता है।

सोवियत रूस से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका स्पूतनिक के मार्च १६८२ अंक में ऐसे ही एक गाँव का उल्लेख है, जहाँ कि शतायु प्राप्त करने वाले व्यक्तियों का जमघट है। रूस के दक्षिण-पश्चिम भाग के अजर-वैजान प्रान्त के वृहत् काकेशश पहाड़ी के बीच तेट-नेट नदी की घाटी में अवस्थित उस गाँव का नाम है—कासिम बीना केण्ड। सारे संसार में मात्र यही एक ऐसा गाँव है, जहाँ कि प्रायः अधिकांश व्यक्तियों की मृत्यु सौ वर्ष पूरे करने के बाद ही होती है। समुद्र तट से तीन हजार मीटर ऊपर बसे इस गाँव के चारों ओर गगनचुम्बी पर्वत की चोटियाँ गाँव के चारों ओर आठ माह तक बर्फ रूपी चादर ताने रहती हैं। प्रकृति का यह अनुपम श्रृंगार देखते बनता है। ऐसी मान्यता है पहले यह गाँव सुनसान था। भीषण ठंड और आगमन की असुविधा के कारण लोग वहाँ रहने से कतराते थे। कासिम बीना केण्ड गाँव का नाम कासिम नामक एक व्यक्ति के कारण पड़ा। कहते हैं कि प्रकृति के इस उन्मुक्त 'नयनाभिराम' अंचल में स्थायी रूप से रहने का दुस्साहस उस व्यक्ति ने किया। धीरे-धीरे परिवार की आबादी बढ़ती गयी और पूरा गाँव ही बस गया। कासिम की मृत्यु १३० वर्ष पूरे करने पर हुई। गाँव में परिवारों की संख्या अब दो सौ के लगभग है।

इस गाँव में अभी दर्जनों व्यक्ति ऐसे हैं, जिनकी आयु सौ वर्षों से ऊपर है। १४८ वर्षीय गुलीयमण्डम मेरी नामक वृद्धा जो अपने को युवती कहती है को आज भी नव जवानों की भाँति घुड़सवारी करते देखा जा सकता है। दर्शक उसकी अधिकतम आयु पचास वर्ष आँकते हैं। 'रुस्तम कीशी' नामक व्यक्ति की आयु १२० वर्ष है। वन रक्षक का कार्य पूरी मुस्तैदी से सम्भालते उन्हें देखा जा सकता है। रुस्तम कीशी के साथ ही उसका १३५ वर्षीय मित्र लकड़ी का व्यवसाय करता है। कई बार वन विभाग ने रुस्तम का सवैतनिक स्थायी रूप से छुट्टी कर देनी चाही पर उसने यह कहकर लेने से इन्कार कर दिया कि काम के बिना तो मैं जिन्दा भी नहीं रह सकता।

रूस के ही एक 'मखमूद इवाजोव' नामक किसान ९५८ वर्ष के हुये हैं। उनके कार्य, स्वास्थ्य एवं सक्रियता की बड़ी सराहना की गयी। सोवियत सरकार ने उन्हें "ऑनर ऑफ रेड बैनर आफ लेबर" से १६५६ ई. में विभूषित किया था।

रूस में ओसेतिया निवासी एक महिला 'तेपोआब्जीव' ने दीर्घायु का विशेष रिकार्ड स्थापित कर दिया। सन् ५८ में एक-सौ अस्सी वर्ष की लम्बी आयु में देहान्त हुआ था। उनका कथन है कि मात्र मन को सन्तुलित एवं शान्त रखकर जीवन यापन करने से शरीर रूपी यन्त्र बड़े लम्बे समय तक काम करता रह सकता है। इन चिरयुवाओं के दीर्घजीवन का रहस्य जानने के लिये विश्व के कितने ही देशों के विशेषज्ञ वहाँ जा चुके हैं। सबने एक स्वर से स्वीकार किया है कि गाँव के लोगों की नीरोगता, स्वस्थता तथा दीर्घ जीवन का एक मात्र रहस्य है—उनकी प्राकृतिक जीवनचर्या जो आज की तथाकथित सभ्यता की कृत्रिम जीवन चर्या के प्रभाव से अभी अछूते हैं। प्रसन्नता प्रफुल्लता चेहरे से टपकती रहती है। क्रोध एवं आवेश को

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे रोगों की श्रेणी में गिनते हैं। आहार में दूध, साग, सब्जियों की प्रधानता देते हैं। परिश्रम उनका आभूषण है। ग्रामवासियों के साक्षात्कार के लिये गये एक पत्रकार का कहना है कि "रुग्णता, दुर्बलता एवं अशक्तता के दावानल में जलते सुख-सुविधाओं से युक्त आज के प्रगतिशीलों को जीवन कैसे जीना चाहिये यह प्रेरणा इन पिछड़े ग्रामवासियों से लेनी चाहिये।"

लौकिक सुख के चार प्रमुख आधार

(१) आरोग्यता (२) योग्यता, (३) सम्पन्नता तथा (४) सौजन्य। इन चार तत्वों को लौकिक सुख का आधार माना जा सकता है। मनुष्य यदि इन आधारों को अपने जीवन में स्थापित कर सके तो अवश्य ही उसके लिये दुःख क्षोभ, क्लेश एवं खिन्नता की सम्भावनायें बहुत कुछ कम हो सकती हैं।

(१) प्रचुर साधन, सुविधा होने पर भी मनुष्य उनका सुख अनुभव नहीं कर सकता यदि वह रोगी है व्याधियों से घिरा हुआ है। रोगी मनुष्य भोजन और निद्रा के सामान्य सुख से भी वंचित हो जाया करता है। रोग होने से पीड़ा, वेदना, अरुचि, निराशा आदि का होना स्वाभाविक है, ऐसी दशा में सुख और प्रसन्नता कहाँ ? आरोग्यहीनता अथवा अस्वास्थ्य दुःख का बहुत बड़ा कारण है। शरीर स्वस्थ है निरोग है। एक स्फूर्ति, हौंसला हिम्मत और रुचि बनी रहेगी। भोजन अच्छा लगेगा, पचेगा और उसका सन्तोष मिलेगा। श्रम करने में अभिरुचि रहेगी और प्रगाढ़ निद्रा का अधिकार प्राप्त होगा। शारीरिक अस्वास्थ्य न जाने कितनी व्याधियों को जन्म दिया करता है।

स्वास्थ्य का सम्बन्ध केवल शरीर से नहीं है। मन से भी है, सुखानुभूति के लिये शारीरिक स्वास्थ्य की भी आवश्यकता है। मनुष्य शरीर से स्वस्थ, हृष्ट-पुष्ट और बलवान है, किन्तु उसके हृदय कुसुम में चिन्ता, निराशा, काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या द्वेष आदि के कीट घुसे हुये हैं, तो उसका शारीरिक स्वास्थ्य भी मिट्टी मोल का हो जायेगा।

सुख दुःख के अनुभव का केन्द्र मन ही है। मन मलीन है, खिन्न और विषण्ण है तो शरीर से स्वस्थ होते हुये भी मनुष्य मुर्दे की तरह भावहीन, रसहीन और निष्क्रिय जैसा बना रहेगा। न कुछ काम करते अच्छा लगेगा और न किसी से बात करते। मन के अस्वस्थ होने पर सुख के अवसर भी दुःखमय प्रतीत होने लगते हैं। मानसिक विषण्णता की दशा में भी क्षुधा तथा निद्रा का ह्रास हो जाता है। अतएव सुख और प्रसन्नता के लिये मानसिक स्वास्थ्य की भी बड़ी आवश्यकता है। इसके अभाव में मनुष्य को दुःख भोगने के सिवाय और कुछ नहीं रह जाता काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, निराशा, निरुत्साह, अशांति और असन्तोष, चिन्ता, क्षोभ तथा व्यग्रता आदि से मुक्ति मानसिक आरोग्य है। मन की आरोग्य अवस्था में सुख, शान्ति तथा प्रसन्नता, प्रफुल्लता की अनुभूति होना अनिवार्य है।

(२) सुख-शान्ति का दूसरा स्तम्भ योग्यता कहा गया है। जो अयोग्य है, अज्ञानी है, अशिक्षित तथा अविचारी है वह सुख का अविकारी कभी नहीं बन सकता। जीविका कमाने, समाज में यथोचित व्यवहार करने, सभ्यता तथा शालीनता की अभिव्यक्ति देने के लिये योग्यता की आवश्यकता है। अयोग्यता की दिशा में भूल होना, व्यवहार का स्खलन हो जाना, स्वाभाविक है। अयोग्य व्यक्ति कहीं ठगे तथा मूर्ख बनाये जा सकते हैं। इस प्रकार की अप्रिय परिस्थितियाँ दुःखपूर्ण वातावरण निर्माण करने के सिवाय और क्या कर सकती हैं ?

जीवन में समय-असमय पर न जाने कितनी उलझनें, समस्यायें तथा कठिनाइयाँ आया करती हैं। यदि उनको सुलझाया न जा सके, हल न किया जा सके, तो सिवाय, खिन्न-अप्रसन्न तथा दुःखी रहने के और क्या हो सकता है ? समस्याओं के हल करने और प्रश्नों के सुलझाने के लिये जिस सूझ-बूझ, विवेक बुद्धि और विचारशीलता की आवश्यकता है। अयोग्यता की स्थिति में उनका होना सम्भव नहीं।

जो योग्य, शिक्षित तथा सूझ-बूझ वाला है, वह कठिनाइयों तथा उलझनों के स्वरूप को ठीक से समझकर उनसे मुक्त होने के उपाय निकाल लेता है और इस प्रकार दुःख संताप के एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़े कारण को दूर करने में सफल हो जाता है, सुख की उपलब्धि करने के लिये योग्यता की नितान्त आवश्यकता है। योग्यता के अभाव में साहित्य, कला-कौशल तथा उपयुक्त मनोरंजन का सुख ले सकना तो दूर ठीक से जीविका भी नहीं कमाई जा सकती। जीविका की न्यूनता से आवश्यकता अभाव तथा आपूर्ति का क्लेश बना ही रहेगा, जिससे न तो शारीरिक स्वास्थ्य सुरक्षित रह सकता है और न मानसिक।

अयोग्य आदमी का सम्मान समाज में तो क्या अपने बन्धु-बान्धवों तथा परिवार परिजनों के बीच भी नहीं होता। उसकी व्यवहारहीनता के बदले में अव्यवहार ही आयेगा जिस दुःख, ग्लानि, क्षोभ तथा विषण्णता का आगमन नहीं रोका जा सकता। जो योग्य है वह नश्वर संसार के प्रति उतना मोह नहीं रखता जितना कि अज्ञानी व्यक्ति, वियोग, बिछोह, मृत्यु तथा हानियों की कटुता उसे शोकमग्न नहीं कर पाती। ऐसे अवसरों पर वह आत्म चिन्तन, स्वाध्याय तथा विवेक के बल पर अपने को शान्त तथा सन्तुलित रख सकने में समर्थ रहता है। प्रिय वियोग तथा मृत्यु हानि आदि की घटनायें जीवन में घोर दुःख शोक का कारण बनती हैं। अयोग्यता की स्थिति अथवा योग्यता के अभाव में इनसे ठीक प्रकार से मुकाबला कर सकना सम्भव नहीं।

(३) सम्पन्नता सुख का तीसरा आधार है। अभाव एवं विपन्नता की स्थिति इतनी कष्टदायक होती है कि कभी-कभी धैर्यवान व्यक्तियों को भी हिला दिया करती है। धनहीनता दुःख की जननी बतलाई गई है। शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य सुरक्षित हैं, आवश्यक योग्यता की भी कमी नहीं, तब भी क्या निर्धनता की स्थिति में मनुष्य सुखी रह सकता है ? अभाव और आवश्यकता के काँटे खटकेंगे, आवश्यक कार्य तथा प्रयोजन रुकेंगे तो अशान्ति होना स्वाभाविक ही है। धनहीन व्यक्ति एक बार अध्यात्म का सहारा लेकर अपनी विचारधारा को अपरिग्रह की ओर मोड़कर भले संतोष कर लें और अपने व्यग्र होने से बचालें किन्तु सामान्य स्थिति में ऐसा किया जाना सम्भव नहीं। भूख लगने पर भोजन न मिले तो उसका कष्ट कब तक सहन किया जा सकता है। आवश्यक कार्यों तथा आवश्यकताओं को एक-दो बार ही टाला जा सकता है, पर अन्त में उनकी अपूर्ति दुःख पूर्ण परिस्थितियाँ खड़ी ही कर देगी। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मनुष्य कर्ज लेगा, ब्याज चुकायेगा और उसको समय पर न भर पाने से दुःख क्लेश, अशान्ति और अधीरता का भोगी बनेगा। अपरिग्रह का अवलम्बन किसी अकेले, साधु अथवा संन्यासी द्वारा तो निभाया भी जा सकता है किन्तु जो परिवार वाला है, बीबी बच्चों वाला है, कुटुम्ब कबीले वाला है, उसके लिये केवल आत्म सन्तोष का सहारा काम नहीं आ सकता। उसे तो धन चाहिये ही साधन और उपादानों की आवश्यकता होगी, वस्तु और सामग्री की जरूरत पड़ेगी ही। लड़कों की शिक्षा, बेटियों का विवाह, अतिथि का आदर, घर की भोजन और वस्त्र की व्यवस्था बिना धन के नहीं हो सकती। जो काम धन से चलता है, उसके लिये धन ही चाहिये। सन्तोष अथवा ध्यान धारणा उसका कोई भी प्रयोजन सिद्ध नहीं कर सकते।

धन आज की दुनियाँ में रहने के लिये बहुत बड़ा साधन है। उसके बिना मनुष्य अपंग होकर किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा हो जाता है। जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं, भोजन वस्त्र घर मकान की व्यवस्था बिना धन के नहीं की जा सकती। विपन्नता इन सब कर्त्तव्यों में मनुष्य की गति रोककर दुःखी बना देती है। लौकिक सुख पाने के सहायक साधनों में सम्पन्नता का प्रमुख स्थान माना गया है किन्तु सम्पन्नता का अर्थ विपुल धनराशि अथवा प्रचुर साधन सामग्री नहीं है। हर व्यक्ति की स्थिति के अनुसार उसकी सम्पन्नता की एक सीमा है। किसी भी व्यक्ति के लिये वह स्थिति सम्पन्नता ही है, जिसमें उसके आवश्यक प्रयोजन न रुकें और उन्नति तथा विकास के उपक्रम में धन के लिये दूसरे का मुँह न ताकना पड़े। जिसकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है और जो धन के लिये पराश्रय से हर समय मुक्त हैं वह सम्पन्न ही माना जायेगा। इस प्रबलता की स्थिति से आगे बढ़ने पर आवश्यकता धन लोलुपता में बदल जाती है, जो किसी प्रकार भी वांछनीय नहीं कहा जा सकती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(४) सौजन्य और सुख में चोली दामन का साथ है। सब कुछ होने पर यदि मनुष्य सौजन्य भाव से रहित है। कर्कश, कठोर तथा अनुशासन-हीन है तो उसके लिये पग-पग पर दुःख की स्थिति रहेगी। स्नेह, प्रेम, मृदुता, मधुरता सौजन्य के विशेष लक्षण हैं। जिसके स्वभाव में इन गुणों का समावेश है, उसका हृदय तो यों ही शीतल बना रहेगा। प्रसन्नता, प्रफुल्लता उसकी अनुगामिनी बनी रहेगी। सौजन्यहीन व्यक्ति न तो किसी को स्नेह दे पाता है और न किसी से पाता है। उसका जीवन पराकाष्ठा तक पुरुष तथा नीरस बना रहता है। सौजन्य के अभाव में मनुष्य बड़े बड़प्पन में छोटों की भावनाओं को भूल जाता है। उसका व्यवहार अवांछनीय तथा असहनीय बन जाता है, जिससे कि संघर्ष तथा विवाद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। सौजन्यशील व्यक्ति सहज ही दूसरों को अपना बना लेता है। अपने अभाव के समय भी उसकी आवश्यकतायें दूसरों की सहायता तथा सहयोग से पूरी हो जाती हैं। मुक्ताचरण के कारण सौजन्यशील व्यक्ति का सब जगह आदर होता है। लोग उससे मृदुता एवं मित्रता का व्यवहार करते हैं, उसके सुख-दुःख में शामिल होते हैं। इस प्रकार वह बहुतों का अपना और बहुत-से उसके अपने बन जाते हैं।

सामाजिक जीवन तो दूर सौजन्य एवं स्नेहहीन व्यक्ति का पारिवारिक जीवन भी सन्तोषदायक नहीं रहता। उसके घर बुरे स्वभाव के कारण हर समय कलह-क्लेश का वातावरण छाया रहता है। परिवार के सारे सदस्य मन ही मन उससे घृणा किया करते हैं। इस प्रकार घृणा कलह-क्लेश का वातावरण किसी का भी जीवन दुःखी और सन्तापपूर्ण ही बना देता है। इस प्रकार आरोग्यता, योग्यता, सम्पन्नता तथा सौजन्य के चारों आधारों को स्थापित किये बिना मनुष्य के लिये सम्भव नहीं कि वह जीवन में लौकिक दृष्टि से भी सुखी, शान्त तथा सन्तुष्ट रहे। लौकिक जीवन सुखी, शान्त तथा सन्तुष्ट बनाने के लिये इन चारों आधारों की अनिवार्य आवश्यकता है।

अब प्रश्न यह है कि इन चार आधारों को प्राप्त किस प्रकार किया जाये ? वह कौन-सा मार्ग है जिस पर चलकर इनको प्राप्त किया जा सकता है ? इन आधारों को एक साथ प्राप्त करने का एक मात्र मार्ग है आध्यात्मिक जीवन पद्धति। आध्यात्मिक जीवन पद्धति अपनाकर चलने वाला संसार की किसी भी दिशा में सफलता प्राप्त कर सकता है। शारीरिक संयम और मानसिक परिष्कार आध्यात्मिक जीवन के दो ऐसे नियम हैं, जिनका पालन करने से सारी समस्याओं का हल हो जाता है और वांछित विभूतियों को प्राप्त कर लेता है।

स्पष्ट है कि शारीरिक संयम का निर्वाह करने वाला व्यक्ति न कभी रोगी होता है और निर्बल और यदि कभी संयोगवश ऐसा हो भी जाता है तो वह शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ कर लेता है। शरीर स्वस्थ तथा सबल रहेगा तो आवश्यक परिश्रम किया जा सकता है, जिससे आजीविका का प्रश्न पराकाष्ठा तक हल किया जा सकता है। अध्यात्मवादी व्यक्ति मानसिक परिष्कार के लिये काम, क्रोध, मोह, लोभ, ईर्ष्या द्वेष आदि की गर्हित भावनाओं को निकाल बाहर करता है। जिससे सौम्य, शालीनता, सौजन्यता तथा शीतलता की उपलब्धि होती है। संघर्ष तथा विवाद की सम्भावना कम हो जाती है। मानसिक प्रसन्नता सारी सफलताओं की मूल मानी गई है, जिसकी उपलब्धि आत्म परिष्कार से होना स्वाभाविक ही है।

आध्यात्मिक विचारधारा का निर्माण बिना शिक्षा तथा स्वाध्याय के नहीं हो सकता। इसका अभ्यास और वृद्धि मनुष्य में योग्यता का समावेश कर ही देगा। अध्यात्म का अवलम्बन मनुष्य में विवेकशीलता, स्थिरता, धैर्य, सहनशीलता सन्तोष आदि के गुणों का समावेश कर देता है। उसमें एक ऐसे अद्‌भुत ज्ञान का उदय हो जाता है, जिससे वह जीवन-मृत्यु, हानि-लाभ की कटुता, अप्रसन्नता से अनावश्यक रूप से प्रभावित नहीं होता। आस्तिकता, आध्यात्मिकता की विशेष देन है। अध्यात्मवादी का विश्वास ईश्वर में उसकी सत्ता तथा महत्ता में अडिग तथा निष्ठापूर्ण हो जाता है। वह हर समय अपने चारों ओर उस परमपिता की व्याप्ति अनुभव किया करता है। इस प्रकार अध्यात्मवाद द्वारा ईश्वर में निष्ठावान व्यक्ति की ऐसी कौन-सी उपलब्धि है, जो प्राप्त नहीं हो सकती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वस्थ शरीर श्रेष्ठ सुख

संसार सागर की यात्रा के लिये हमारा शरीर एक नाव है। शरीर के ऊपर हमारा पार उतरना या डूब जाना, बहुत कुछ निर्भर करता है। जिस तरह छिद्रयुक्त जीर्ण-शीर्ण, कमजोर नाव से चंचल, गतिशील संघर्षयुक्त जल धारा को पार करना कठिन है, उसी तरह रोगी, निर्बल, असमर्थ शरीर से जीवन यात्रा भली प्रकार पूरी करना सम्भव नहीं होता। विजय, सफलता, आनन्द, उल्लासमय, जीवन बहुत कुछ स्वस्थ एवं बलवान शरीर पर निर्भर करता है। शरीर मनुष्य के लिये एक ऐसी ईश्वरीय देन है, जिसके अभाव की पूर्ति संसार में अन्य कोई वस्तु नहीं कर सकती।

हृदय बुद्धि जैसे महत्त्वपूर्ण उपकरण भी अपना अस्तित्व सतेज स्वस्थ शरीर में ही कायम रख सकते हैं। शरीर के अस्वस्थ होते ही वृद्धि मन्द हो जाती हैं। विवेक जाता रहता है। हृदय अपना आनन्द संगीत बन्द कर देता है। मनुष्य के लिये शेष रह जाती है जीवन की भयानकता, कठोरता, अशान्ति, क्लेश, अपमान। वह जीवित होते हुये भी मृत तुल्य हो जाता है।

हमारा शरीर उस शीशे के ग्लोब की तरह है, जिसके माध्यम से लालटेन की दीप शिखा अपनी ज्योति बाहर प्रगट करती है। गन्दा, कालिख धुयें से खराब शीशा रोशनी को भली प्रकार बाहर प्रकट नहीं होने देता। जीर्ण-शीर्ण कमजोर शरीर भी आत्म- ज्योति की प्रकाश किरणों को संसार में व्यक्त नहीं होने देता। स्वस्थ एवं तेजस्वी शरीर ही आत्मा के तेजस्वी प्रकाश को धारण करके जीवन को आभामय-ज्योतिर्मय बना सकता है।

शास्त्रकार ने शरीर को ही सब धर्मों का साधन बताते हुये कहा है शरीरमाद्यम् खलु धर्मसाधनम्।" स्वस्थ शरीर के द्वारा ही जीवन और जगत के धर्म-कर्त्तव्यों का भार वहन किया जा सकता है। वस्तुतः बिना मजबूत शरीर के न हम किसी का ऋण चुका सकते हैं न अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर सकते हैं। दुर्बल शरीर से न किसी की सेवा ही हो सकती है।

शरीर आत्मा का मन्दिर है। बापू ने कहा है "शरीर आत्मा के रहनेकी जगह होने से तीर्थ जैसा पवित्र है।" आवश्यकता इस बात की है कि हम इसे तीर्थ की तरह ही स्वच्छ-सुन्दर विकारशून्य बनाने का प्रयत्न करें।

शरीर के माध्यम से ही जीवन और जगत का सौन्दर्य आनन्द लाभ किया जा सकता है। शरीर में जब भरपूर उछल-कूद, मन में अपार उत्साह होता है तो यह संसार क्रीड़ा भूमि-सा दीखता है। स्वर्ग लगने लगता है और जब शरीर असमर्थ, अयोग्य, बलहीन हो जाता है तो यह संसार नरक तुल्य जान पड़ता है। जीवन भार स्वरूप लगने लगता है। पाश्चात्य विद्वान **वीचर** ने कहा है "शरीर वीणा है और आनन्द संगीत। यह जरूरी है कि यन्त्र दुरुस्त रहे।" आनन्द का संगीत स्वस्थ शरीर में ही स्पन्दित होने लगता है।

शरीर का रोगी जीर्ण-शीर्ण, कमजोर होना अपने आप में एक बहुत बड़ा पाप है। **जार्ज बर्नार्डशॉ** ने कहा है "यदि कोई बीमार पड़ेगा तो मैं उसे जेल भेज दूँगा।" बीमारी सजा है प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने की। रोगी होना अपने आप में अपराधी होता है। मुख्यतः मनुष्य की अपनी भूलें, वे परिस्थितियाँ जिनमें वह रहता है और जिनके निर्माण में खासतौर से वह स्वयं ही उत्तरदायी है, मुख्य होती हैं। रोगी होकर जहाँ मनुष्य अपने लिये नरक या जीवन का द्वार खोलता है, वहाँ समाज की उन्नति में भी बाधा पहुँचाता है क्योंकि एक ओर तो वह व्यक्ति समाज के लिये जो कुछ करता है वह रुक जाता है, दूसरे अन्य लोगों का समय, श्रम, धन रोगी के लिये लगने लगता है। परिवार के लोगों में चिन्ता फैलती है।

स्वस्थ बलवान शरीर फटे कपड़ों में भी सुन्दर लगता है। रोगी और निस्तेज व्यक्ति सुन्दर कपड़ों के सौन्दर्य को भी भद्दा बना देता हे। उसे कितना ही सजाओ वह अनाकर्षक और कुरूप ही लगेगा।

उत्तम स्वास्थ्य ही जीवन का सौन्दर्य है, आनन्द की खान है। स्वास्थ्य और बल की उपासना की प्रथम कक्षा मानव देह है। शरीर को स्वस्थ, बलवान्, तरोताजा, स्फूर्तिवान, तेजस्वी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाना आवश्यक है। यही वह आधार है, जिसमें जीवन में अन्य स्रोत खुलने की सम्भावना हो सकती है। स्मरण रहे स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। बलवान शरीर ही आत्मा का तेज गुण धारण करने में समर्थ होता है। कान्तिवान्, हँसमुख चेहरा, तेज ओज ही दूसरों के लिये आकर्षण का प्रकृत केन्द्र होता है। मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य पर ही शक्ति, सामर्थ्य के अन्य स्रात निर्भर करते हैं। इसलिये शरीर को सर्वप्रथम बलवान, स्वस्थ, तेजस्वी बनाने पर ध्यान देना चाहिये।

वैयक्तिक जीवन में शरीर के बाद नम्बर आता है हृदय और बुद्धि का। कवीन्द्र-रवीन्द्र ने कहा है "हे भगवान ! यह शरीर तेरा मन्दिर है अतः इसे मैं हमेशा पवित्र रखूँगा, आपने मुझे यह हृदय दिया है, मैं इसे प्रेम से भर दूँगा, आपने मुझे यह बुद्धि दी है मैं इस दीपक को हमेशा निर्मल और तेजस्वी बनाये रखूँगा।" शरीर के साथ-साथ हृदय व बुद्धि का भी अपने-अपने क्षेत्र में स्वस्थ सतेज होना आवश्यक है।

अक्सर देखा जाता है कि कई व्यक्ति शरीर से स्वस्थ होते हैं लेकिन उनका हृदय बुद्धि अविकसित ही रह जाते हैं। बहुत-से पहलवान कहाने वाले लोग बुद्धि के ठस और हृदय से प्रेम, आनन्द, निर्मलताशून्य होते हैं। आज तो यह एक धारणा-सी बन गई है कि जो शरीर से तगड़ा होगा बुद्धि से कमजोर रहेगा। जो बुद्धिमान होगा उसका शरीर दुर्बल होगा लेकिन वस्तुतः यह विश्वास गलत है। शरीर, मन, हृदय तीनों में से एक के भी निर्बल होने पर मनुष्य बलवान नहीं कहा जा सकता।

हमारे यहाँ हनुमान को सर्वाङ्गीण बल का प्रतीक माना गया है। स्थान-स्थान पर हनुमान की मूर्ति कहीं न कहीं बगीचे, शहर से बाहर खुले मैदान में मिलती है। यह हमारे यहाँ किसी समय बलोपासना के व्यापक प्रसार का स्मृति चिन्ह है। श्री हनुमान के व्यक्तित्व का परिचय देते हुये कहा है—

मनोजवं मारुत तुल्य वेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमत्तां वरिष्ठम।

वातात्मजं वानरयूथं मुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।।

इस छोटे से श्लोक में सर्वतोमुखी शक्ति के प्रतीक हनुमान का चित्रण मिलता है। वे केवल शरीर से ही बलवान नहीं थे मन की भाँति चंचल-स्फूर्तिवान भी थे। 'मारुत तुल्य वेग' हवा के सदृश्य वे वेगवान थे। शक्ति उपासना का आदर्श शरीर को वज्र के समान, बनाने की प्रेरणा देता है तो उसे वायु के सदृश्य वेगवान भी। हनुमान का शरीर ऐसा ही था। वे चट्टानों को चूर-चूर कर देते थे तो दस कोस भी चले जाते थे। वे वायु जैसे गतिवान थे।

शक्ति के प्रतीक हनुमान शरीर के साथ-साथ मन में भी अपार बलशाली थे। उन्होंने वासना को जीत लिया था। जितेन्द्रिय थे, बुद्धिमान थे। उनका शक्ति, व्रत, तप प्रधान जीवन सभी प्रकार श्रेष्ठ था। शरीर और मन पर उनका पूरा-पूरा अधिकार था। वे बुद्धिमानों में भी श्रेष्ठतम थे। हृदय से वे सभी प्रकार निर्मल, पवित्र और सरल थे, तो परम भक्त भी थे। हनुमान राम के अनन्य भक्त थे।

शरीर, मन, बुद्धि-हृदय के साथ-साथ मनुष्य का एक बल और होता है, संगठन बल। संगठन के साथ ही व्यक्ति जीवित रह सकता है। शक्तिवान् मनुष्य भी समाज के सहयोग के अभाव में प्रभावशील नहीं रह सकता। असंगठित समाज—जातियाँ बहुत जल्दी नष्ट हो जाती हैं। व्यक्ति अपने आप में तो बलवान, सामर्थ्यवान हो सकता है लेकिन समाज के लिये वह किसी काम का नहीं, तो व्यर्थ है। आवश्यकता इस बात की है कि अन्य शक्तियों के साथ-साथ संगठन कुशलता भी होनी चाहिये। समूह में रहकर काम करना और समाज को सुसंगठित बनाने की सामर्थ्य भी होना आवश्यक है। हनुमान जी वानर सेना में प्रधान थे। उनके नेतृत्व में वानर सेना ने बड़े-बड़े काम किये।

शरीर, मन, बुद्धि-हृदय के विकास के साथ-साथ हमको संगठन को शक्तिशाली, सामर्थ्यवान बनाने के लिये भी प्रयत्न करना आवश्यक है क्योंकि संगठन में ही शक्ति है। असंगठित रहने वाले बड़े-बड़े योद्धा भी नष्ट हो जाते हैं।

शारीरिक, मानसिक एवं संगठन सम्बन्धी शक्तियों का क्या उद्देश्य है, ऐसा क्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यक है ? शक्ति के प्रतीक हनुमानजी के जीवन से सहज ही इन प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है। शक्ति साधनों का उपयोग किसलिये ? राम सेवा के लिये। रामदूत बनने में ही हनुमानजी अपना गौरव समझते हैं। भगवान का अवतार अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना करना होता है। सच्चे भगवत् भक्त को भी अपनी गति विधियों का निर्धारण इसी आधार पर करना होता है। राम सेवा का तात्पर्य है आसुरी शक्तियों का उन्मूलन। रावण की तरह समाज को पददलित करने वाले तत्वों के खिलाफ संघर्ष करके समाज को सभी भाँति सुरक्षित, स्वतन्त्र, सुखी बनाने की राम सेवा में लग जाना शक्ति का सर्वोत्तम उपयोग है। हनुमानजी अपने तन-मन संगठन सभी शक्तियों के साथ राम-सेवा के पुनीत उद्देश्य में लग गये थे।

शक्तियों का उपयोग दूसरों का शोषण, दलन, अपहरण करने में समाज के लिये आतंक, अत्याचार असुरता की भावना पैदा करना रावण का मार्ग अपनाना है। शक्ति तो हनुमान की तरह राम के पीछे चलकर ही पुण्यवान हो पाती है। ऋषि कहता है।

"आर्तत्राणाय यः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि।"

"तेरे शस्त्र पीड़ितों की रक्षा करने के लिये हैं, निरपराधों को सताने के लिये नहीं।" किसी सच्चे बलवान का बल समाज की निर्बलता की कमी की पूर्ति करने के लिये होना चाहिये न कि समाज को और भी निर्बल सिद्ध करने के लिये। जो निर्बल हैं, कमजोर हैं, असमर्थ हैं, उन्हें अपनी शक्ति का सहारा देकर बलवान बनाना, जीवन के सहज स्वाभाविक अधिकार प्रदान करना यही बलवान का धर्म है। बलवान माँ अपने नन्हें शिशु को अपनी शक्तियों से पाल-पोष कर एक दिन सामर्थ्यवान बना देती है। स्मरण रहे शक्तियों का महत्त्व बनाने में हैं—निर्माण में है, नष्ट करने में नहीं। कमजोर बनाने के लिये शक्तियाँ नहीं हैं। इससे शक्तिदान का पतन होता है, उसकी शक्तियाँ भी धीरे-धीरे नष्ट हो जाती हैं। शक्ति का रचनात्मक उपयोग शक्तियों को बढ़ाता है और शक्तिशाली को तेज सामर्थ्य प्रदान करता है।

शरीर, मन, हृदय एवं बुद्धि की शक्तियाँ का विकास कीजिये। शरीर से मन बुद्धि की शक्ति अधिक है। मन से हृदय की प्रेम शक्ति, निर्मलता, पवित्रता, सदाचार का शक्ति महान् है। सभी भाँति शक्तिशाली बनिये। स्मरण रखिये शक्ति ही जीवन है।

स्वास्थ्य गँवा बैठने में कोई समझदारी नहीं

स्वस्थ रहने पर ही कोई अपना और दूसरों का भला कर सकता है, जिसे दुर्बलता और रुग्णता घेरे हुये होगी वह निर्वाह के योग्य भी उत्पादन न कर सकेगा, दूसरों पर आश्रित रहेगा। परावलम्बन एक प्रकार से अपमानजनक स्थिति है। भारभूत होकर जीने वाले न कहीं सम्मान पाते हैं और न किसी की सहायता कर सकने में समर्थ होते हैं, जिससे अपना बोझ ही सही प्रकार से उठ नहीं पाता वह दूसरों के लिये किस प्रकार, कितनी उपयोगी हो सकता है ?

मनुष्य जन्म अगणित विशेषताओं और विभूतियों से भरा-पूरा है। किसी को भी यह छूट है कि उतना ऊँचा उठे जितना कि अब तक कोई महामानव उत्कर्ष कर सका है, "पर यह सम्भव तभी है कि शरीर और मन पूर्णतया स्वस्थ हो। जो जितनों के लिये जितना उपयोगी और सहायक सिद्ध होता है, उसे उसी अनुपात में सम्मान और सहयोग मिलता है, अपने और दूसरों के अभ्युदय में योगदान करना उसी से बन पड़ता है और स्वस्थ—समर्थ रहने की स्थिति बनाये रहता है।

अपंग-अविकसित तो असहाय, दीन-दरिद्र दीखते ही हैं, पर इस पंक्ति में वे लोग सम्मिलित होते हैं, जो दुर्बलता या रुग्णता से ग्रसित हैं। इसलिये अनेक दुःखद, दुर्भाग्यों और अभिशापों में प्रथम अस्वस्थता को ही माना गया है। प्रयत्न यह होना चाहिये कि वैसी स्थिति न उत्पन्न होने पाये। यदि किसी कारण इस चपेट में आना भी पड़े तो वह दुर्दिन अधिक समय ठहरने न पाये। सच्चे अर्थों में जीवन उतने ही समय का माना जाता है, जितना कि स्वस्थ रहकर जिया जा सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ अपवादों को छोड़कर अस्वस्थता अपना निज का उपार्जन है, भले ही वह अनजाने में, भ्रमवश या दूसरों की देखा-देखी न्योत बुलाया गया है। सृष्टि के सभी प्राणी जीवन भर निरोग रहते हैं। मरणकाल आने पर जाना तो सभी को पड़ता है, यह नियति की व्यवस्था है। इसमें किसी का चारा नहीं, पर निरोग रहना हर जीवधारी का जन्म सिद्ध अधिकार है। जिन प्राणियों को किसी के बन्धनों में बँधे रहने की विवशता नहीं होती, वे सभी जन्म से लेकर मरणपर्यन्त निरोग रहते हैं। स्वच्छन्द जीवन जीने वाले पशु-पक्षियों में कभी किसी को बीमार नहीं पाया जाता, कोई दुर्घटनाग्रस्त हो जाये तो बात दूसरी है।

मनुष्य की उच्छृंखल आदतें ही उसे बीमार बनाती हैं। जीभ का चटोरापन अतिशय मात्रा में अखाद्य खाने के लिये बाधित करता रहता है। जो जितना भार उठा नहीं सकता, उतना लादने पर किसी का भी कचूमर निकल सकता है। पेट पर अपच भी इसी कारण चढ़ दौड़ता है, बिना पचा सड़ता है और सड़न को रक्त प्रवाह में मिले जाने से जहाँ भी अवसर मिलता है, रोग का लक्षण उभर पड़ता है। कामुकता की कुटेव जीवनी शक्ति को बुरी तरह क्षरण करती है और मस्तिष्क की तीक्ष्णता का हरण कर लेती है। अस्वच्छता, पूरी नींद न लेना, कड़े परिश्रम से जी चुराना, नशेबाजी जैसी कुटेव भी स्वास्थ्य को जर्जर बनाने का निमित्त कारण बनती है। खुली हवा और रोशनी से बचना, घुटन भरे वातावरण में रहना भी रुग्णता का एक बड़ा कारण है। भय या आक्रोश जैसे उतार-चढ़ाव भरे ज्वार-भाटे भी मनोविकार बनते हैं और व्यक्ति को सनकी, कमजोर एवं बीमार बनाकर रहते हैं। हँसती-हँसाती जिन्दगी जीने वाले प्रायः स्वस्थ ही रहते हैं और लम्बी जिन्दगी जीते हैं।

अपने ऊपर औचित्य का अंकुश लगाये रहा जाये तो दुर्बल पड़ने या बीमार रहने का अवसर ही न आये। उच्छृंखलता सर्वत्र अराजकता स्तर की अव्यवस्था को जन्म देती है, इस कुमार्ग पर चलने वाले ही रोगग्रस्त बनते या रहते देखे गये हैं। इस अनाचार का परित्याग कर देने पर कोई भी अपने खोये स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर सकता है। प्रकृति उद्दण्डता का दण्ड भी हाथों हाथ देने में निष्पक्ष न्यायाधीश की तरह व्यवहार करती है किन्तु साथ ही इतनी दयालु भी हैं कि गलती मान लेने, आदत सुधार लेने और रास्ता बदल लेने पर क्षमा भी कर देती हैं। कितने ही स्वास्थ्य गँवा बैठने वाले लोग अपनी आदतें सुधार लेने के उपरान्त पुनः स्वस्थ और समर्थ बनते देखे गये हैं, यह रास्ता सभी के लिये खुला है।

दड के प्रतिफल की उपेक्षा करते रहने वाले ही बहुधा कुमार्ग पर चलने और कुकर्म करने पर उतारू होते हैं। यदि यह समय रहते समझा जा सके कि अस्वस्थता अपने लिये, अपने साथियों के लिये कितनी कष्टकर होती है तो सम्भव है, लोग आग में हाथ डालकर उस महत्त्वपूर्ण अंग को गँवा बैठने जैसी भूल न करें। दुर्बल शरीर इतना परिश्रम-पुरुषार्थ भी नहीं कर सकता कि निर्वाह की आवश्यकताओं को अपने बलबूते पूरा कर सके, बीमारों का कष्ट चाबुक से पिटने या हथौड़े से कुटने के समान कष्टकर होता है। परिचर्या में जिन साथियों को लगना पड़ता है, उनका समय नष्ट होता है, इलाज का खर्च भी कम महँगा नहीं पड़ता। घर में पूर्व संचय न होने पर कर्ज से लेकर कपड़े बेचने तक की नौबत आ जाती है। कितनों को ही खर्चीला उपचार न जुटा पाने पर अकाल मृत्यु का ग्रास होना पड़ता है। सहानुभूति का शिष्टाचार तो स्वजन सम्बन्धी निभाते ही हैं, पर मन से उन्हें भी रोगी भारभूत लगता है और उनसे अच्छा न हो सके तो बुरा हो जाने की कामना मन ही मन करने लगते हैं। स्वयं को भी ऐसे जीवन में कोई रस नहीं रह जाता, ज्यों-त्यों करके ही मौत के दिन पूरे करने पड़ते हैं। प्रगति की बात तो सोचते भी नहीं बनती, जब जीवित लाश की तरह जिन्दगी ढोई जा रही हो तो फिर अभ्युदय की योजना किस बलबूते बने ? उज्ज्वल भविष्य के सपने किस आधार पर देखे जायें ? यह सब दुःखद सम्भावनायें मात्र एक ही कारण से अवरोध बनकर खड़ी होती हैं शरीर के साथ मन भी अस्वस्थ रहने लगता है। दोनों एक साथ जुड़े जो हैं। मन को ग्यारहवीं इन्द्रिय कहा गया है। जिस प्रकार बीमार व्यक्ति की सभी इन्द्रियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

असमर्थता अनुभव करती हैं, उसी प्रकार शारीरिक अस्वस्थता की स्थिति में मन भी अस्वस्थ, अस्तव्यस्त एवं विकृत होने लगता है। बीमारों में प्रायः चिड़चिड़ापन देखा जाता है, वे आक्रमण करने की स्थिति में तो होते नहीं, अपना क्रोध, आवेश, खिन्न-उद्विग्न रहकर ही व्यक्त करते हैं। शरीर और मन के सहयोग से ही हमारे समस्त क्रिया-कलाप सही रूप से चल सकने की स्थिति में रहते हैं। शरीर गड़बड़ाता है तो मन को भी अपनी चपेट में ले लेता है और चिन्तन भी गड़बड़ाने लगता है, फलतः रोगी व्यक्ति किसी प्रकार शान्त रहने और रहने देने की स्थिति में भी नहीं रहता। दूसरों के सत्परामर्श न उसे सुहाते हैं और न अपना मानसिक स्तर इस योग्य रहता है कि किसी को कोई उपयुक्त एवं व्यावहारिक परामर्श दे सकें, यह दुहरी हानि है। शरीरगत अशक्तता, रुग्णता, बेचैनी तो स्वयं ही सहन करनी पड़ती है पर मानसिक अस्त-व्यस्तता का नया दौर चल पड़ने पर एक नया उपद्रव सामने आता है और स्थिति अर्धविक्षिप्त जैसी बन जाती है। मनुष्य शारीरिक और मानसिक रूप से रोगी रहने लगता है, इसके कारण उन्हें दुहरा दबाव सहना पड़ता है। सही चिन्तन के अभाव में इर्द-गिर्द के व्यक्ति और वातावरण पर ही सारे दोष थोपने का प्रवाह चलता है। अपनी गलतियाँ समझने और सुधारने का तो मानस ही नहीं रहता है। फलतः अपने को खिन्नता का और दूसरों को निराशा का सामना करना पड़ता है, रुग्णता के कष्ट में इस अतिरिक्त भार से त्रास और भी अधिक बढ़ता है—साथियों की हैरानी बढ़ जाती है सो अलग।

पीड़ित स्थिति में कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य एवं उपार्जन तो बन नहीं पड़ता, साथ ही चिकित्सा-पथ्य आदि का अतिरिक्त व्यय भार और बढ़ जाने पर सामान्य स्तर के लोगों के सामने आर्थिक कठिनाई भी दिन-दिन बढ़ती जाती है। जमा पूँजी चुक जाने पर चिकित्सा के अतिरिक्त पारिवारिक निर्वाह में भी अड़चन खड़ी हो जाती है, इससे न केवल रोगी वरन् उसका परिवार परिकर भी एक नई विपत्ति में फँस जाता है। सहानुभूति दिखाने वाले, पूछताछ करने वाले आते हैं तो उनका अतिथि सत्कार भी करना पड़ता है। इस मँहगाई के दिनों में वह भी कम वजन नहीं डालता। बीमारी से छूटकारा पाने के बाद भी इतनी शक्ति बहुत दिनों में आ पाती है कि परिश्रमपूर्वक उपार्जन करके पहले की तरह फिर अपना साधारण क्रम चलाया जा सके। बीमारी के दिनों में हुई आर्थिक क्षति एवं अस्त-व्यस्तता के कारण उत्पन्न हुई गड़बड़ियों की क्षतिपूर्ति की जा सके।

सामाजिक या राष्ट्रीय दृष्टि से हर रोगी समुदाय को क्षति पहुँचाने वाला अपराधी है, भले ही उसे दण्ड देने का कोई प्रावधान न हो। भले ही निर्दोष, दया, सहानुभूति या सेवा का पात्र समझा जाता हो। कारण कि रुग्णता प्रकारान्तर से समूचे समाज पर अनावश्यक भार डालती है। चिकित्सकों का प्रशिक्षण, अस्पताल का भारी भरकम ढाँचा, औषधियों की शोध, उनका निर्माण-वितरण यह सब मिलाकर इतना बोझिल होता है कि उसमें ढेरों धन, शक्ति और जनशक्ति खपती है। यदि इसे सरकार जुटाती है तो भी उसे उसका सन्तुलन जनता पर टैक्स लगाकर ही पूरा करना पड़ता है। यह राशि यदि बच सकी होती तो शिक्षा संवर्धन, उद्योगों के संवर्धन जैसे उपयोगी कामों में लगती और सार्वजनिक प्रगति में सहायक होती। उन सब में कटौती करके ही रोगियों के लिये उपचार के साधन जुटाये जाते हैं। यदि कोई व्यक्ति निजी साधनों से चिकित्सा करता है तो भी चिकित्सकों के प्रशिक्षण और औषधि निर्माण का जो ढाँचा खड़ा किया गया है, उसमें प्रकारान्तर से जन साधनों का नियोजन हुआ तो देखा ही जा सकता है। यह प्रत्यक्ष न सही परोक्ष रूप से राष्ट्रीय हित में हुई कटौती ही समझी जा सकती है। काम में, उत्पादन में कमी पड़ना जहाँ व्यक्ति की निजी हानि है, वहाँ उसके कारण राष्ट्र की समृद्धि एवं प्रगति को भी हानि पहुँचती है। रोगी की छूत दूसरों को भी लगती है, उसके श्वाँस में, मल-मूत्र में जो अतिरिक्त गन्दगी-विषाक्तता रहती है, वह घूम-फिर कर अन्य अनेक लोगों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करती है। इस प्रकार उस चपेट में सूखे के साथ गीला भी जलता है। जो लोग अपने स्वास्थ्य को साज-सँभालकर रखे हुये थे, वे इस रोग प्रदूषण से कहीं न कहीं प्रभावित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो सकते हैं। इसे जनसाधारण की क्षति ही मानना पड़ेगा, भले ही वह साधारण जैसी दीख पड़ती क्यों न हो। समर्थ-स्वस्थ व्यक्तियों के आधार पर समस्त राष्ट्र समर्थ बनता है और प्रगति करता है, वहीं रोगियों की संख्या बढ़ने से अवनति का, अवगति का प्रवाह चल पड़ता है। जो शक्ति दीवार उठाने में लगनी चाहिये थी, वह खाई पाटने में खप जाती है। इस घाटे से देश का हर नागरिक न्यूनाधिक मात्रा में प्रभावित ही होता है, इसलिये वैयक्तिक रुग्णता भी सामाजिक क्षति के रूप में फलित होती है। सामुदायिक प्रगति में जो जितनी बाधायें डालता है, जो जितनी उपेक्षा असमर्थता प्रकट करता है, उसके सहयोग से समस्त समाज को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हानि ही उठानी पड़ती है। इसी दशा में यदि उसे अपराधी स्तर का माना जाय तो इसमें कुछ भी अनुचित न होगा। राजदण्ड भले ही न मिले तो भी प्रकृति उसे उस भूल का दण्ड देने में कोई कोर-कसर नहीं रखती। रुग्णता आखिर कोई दैवी विपत्ति या आकस्मिक दुर्घटना तो है नहीं, उन्हें मनुष्य ही प्रकृति मर्यादाओं का उल्लंघन करके स्वयं ही न्योत बुलाता है। ऐसी दशा में कोई रोगी अपने को निर्दोष नहीं कर सकता, भले ही उसे अपनी भूल के बदले में साथी-सहयोगियों की सेवा-सहानुभूति मिलती रहे, पर इतने भर से उसकी निर्दोषता सिद्ध नहीं हो जाती है।

रुग्णता की बहुमुखी हानियों पर यदि गम्भीरतापूर्वक विचार किया जा सके तो यह सहज ही समझा जा सकता है कि इस विपत्ति से बचना बचाना ही उपयुक्त प्रतीत होगा। इस प्रयोजन की पूर्ति के लिये जिस आहार-विहार के संयम को अपनाने भर से काम चल सकता है, उसकी उपेक्षा करना किसी भी बुद्धिमान के लिये भार न प्रतीत होगा।

संयमित जीवन में हर दृष्टि से लाभ ही लाभ है। हानि केवल इतनी है कि उच्छृंखलता, अव्यवस्था, चटोरेपन की ललक जैसी अवांछनीयताओं पर अंकुश लगाने का साहस करना पड़ता है। रोग से लड़ने में जितनी शक्ति खर्च होती है, उतनी को यदि संयम बरतने, जीवनचर्या में सुव्यवस्था का समावेश करने में लगाया जा सके तो इतने भर से समग्र स्वास्थ्य रक्षा की गारण्टी मिल सकती है। उस आधार पर उस शास्त्र वचन के अनुरूप लाभ उठाया जा सकता है, जिसमें "आरोग्य" को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का मूल साधन माना गया है।

स्वास्थ्य रक्षा की छोटी, किन्तु महत्त्वपूर्ण बातें

स्वास्थ्य ईश्वर की महती अनुकम्पा है। वह जन्मजात रूप से हर किसी को सहज उपलब्ध है। उसे सुरक्षित रखने के लिये किसी बड़ी समझदारी या रहस्य भरी शिक्षा की आवश्यकता नहीं है। यह प्रयोजन तो प्रकृति संकेतों का अनुसरण करने भर से पूरा होता रहता है। सृष्टि के सभी प्राणी इस मर्यादा को अन्तःप्रेरणा के आधार पर अनुभव करते हैं और उसे निर्बाध रूप से अपनाये रहते हैं। उनके लिये किन नियमावलियों का परिपालन आवश्यक है, इसे सीखने के लिये उन्हें किसी विद्यालय का भारी-भरकम कोर्स नहीं पढ़ना पड़ता है, न किसी हकीम-डॉक्टर की सलाह लेने जाना पड़ता है और न स्वास्थ्य रक्षा के नाम पर किन्हीं टॉनिकों—बहुमूल्य पौष्टिक पदार्थों को खोजने की आवश्यकता पड़ती है। इतना कार्य तो संचित स्वभाव संस्कारों के आधार पर चलने, जीवन सत्ता के साथ गूँथी हुई प्रकृति प्रेरणाओं का अनुसरण करने भर से चल जाता है। इस मर्यादा चक्र को स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करके सृष्टि के सभी प्राणी अपने आरोग्य अक्षुण्ण बनाये रखते हैं। रुग्णता से उनमें से किसी का पाला नहीं पड़ता है। समय आने पर वे मरते तो अवश्य हैं, दुर्घटनाग्रस्त भी होते हैं, पर उस तरह रोगों की पीड़ा से व्यथित नहीं होते, जैसे कि मनुष्यों में से इस कारण अधिकांशों को रोते-कलपते देखा जाता है। यह और कुछ नहीं बुद्धिमान कहे जाने वाले मनुष्यों की परले सिर की मूर्खता भर है, जो आदत में शुमार हो जाने के कारण अखरती-खटकती भले ही न हो, पर वह अपना काम तो करती है। दुष्टता की तरह भ्रम-ग्रस्तता भी अपनी कड़ाई प्रतिक्रिया उपस्थिति किये बिना नहीं रहती है। कहते हैं पापीजनों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परलोक में यमदूत नरक में घसीटकर ले जाते हैं और वहाँ प्राणी को तरह-तरह के त्रास देते हैं। यह कथन सत्य है या कल्पित—यह बात विवादास्पद हो सकती है, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि प्रकृति मर्यादाओं के साथ जुड़ी संयमशीलता और सुव्यवस्था का व्यतिरेक करने वालों को नकद धर्म की तरह अपने कुकृत्यों का दण्ड सहन करना पड़ता है। रोग इसी का सहज स्वाभाविक विधि-विधान है। यदि कोई चाहे, तो नियत-संयम की रीति-नीति अपनाकर निरोग, समर्थ, दीर्घजीवन का वरदान प्राप्त कर सकता है। इसके लिये किसी दूसरे से अनुग्रह माँगने की आवश्यकता नहीं। यह सब तो पूरी तरह अपने हाथ की बात है। निरोगता स्वाभाविक है और रुग्णता सर्वथा अस्वाभाविक। इस तथ्य को लोग तब समझ पाते हैं, जब समय गुजर चुका होता है और चिड़ियों ने खेत चुगकर उसे खोखला कर दिया होता है।

आहार संयम को स्वास्थ्य रक्षा का प्रथम अनुशासन कह सकते हैं। मिर्च, मसाले, मिठाई, खटाई, भूनने-तलने से उत्पन्न होने वाला सोंधापन, चित्र-विचित्र पकवानों, मिष्ठानों आचार-मुरब्बों के आधार पर जो चटोरापन जीभ को सिखाया जाता है, आगे चलकर पेट को और उसके सहारे चलने वाले अंग-अवयवों को अपनी स्वाभाविक शक्ति सामर्थ्य गँवा बैठने के लिये बाध्य करता है। अत्याचार से पीड़ित होकर वे अपनी स्वाभाविक क्षमता गँवा बैठते हैं और विषाक्तता से ग्रसित होकर बीमारियों के चक्र में फँस जाते हैं।

इन दिनों आहार चुनने से लेकर, पकाने और खाने तक का सारा तन्त्र अवांछनीयता से घिर गया है। यदि हरी स्थिति में शाक, ऋतुफल, अंकुरित अन्न आदि भाप से पकाकर लिये जाते रहें, तो इतने भर से शरीर की समस्त आवश्यकतायें सहज ही पूरी होती रह सकती हैं। आहार को श्रृंगार से सजाकर उसे वेश्या स्तर का भड़कीला बनाने में कुछ आकर्षक भले ही लगता हो, पर उनके सम्पर्क में आने—घनिष्ठता जोड़ने में मात्र अहित-ही-अहित है। ठीक इसी प्रकार स्वादिष्टता के नाम पर पेट पर लादा गया अनावश्यक भार अन्ततः कष्टकारक ही सिद्ध होता है। खाद्य-पदार्थों का जो स्वाभाविक स्वाद है, उसी में रस लिया जाये, तो वह भी कम सन्तोषप्रद नहीं है। सृष्टि के समस्त प्राणी अपना आहार बिना मिलावट किये, तले-भुने, अपने प्राकृतिक स्वरूप में ही खाते-पचाते हैं, फिर मनुष्य ही अपनी कारिस्तानी जोड़कर जायके के नाम पर अभक्ष्य खाये और क्यों विषाक्तताजन्य हानि उठाये। भाप से उबालना भर पर्याप्त होना चाहिये। जायके के नाम पर नीबू, नारंगी, टमाटर, अदरक, सौंफ, धनियाँ, जीरा आदि कुछ मिलाया जा सकता है। काम न चले तो थोड़ा नमक और उसमें डाला जा सकता है। सफेद चीनी के स्थान पर शहद या गुड़ का प्रयोग हो सकता है। अन्न कम और शाक अधिक का अनुपात रखना अच्छा है। इस सन्दर्भ में रसोई बनाने की प्रक्रिया में असाधारण परिवर्तन करने की आवश्यकता है। खाने में इन दिनों अन्न की अधिकता और शाक की न्यूनता रहती है। यह आदत उलट देने की आवश्यकता है। शाक-भाजियों की अधिकता रहनी चाहिये। वे अपेक्षाकृत लाभदायक भी होती हैं, सस्ती भी पड़ती हैं और एक वर्ष में कई उत्पादन देने, अधिक फलने के कारण उनका परिमाण भी अधिक रहता है। अन्नों में ज्वार, बाजरा, मक्का जैसे धान्य कम समय में पकते हैं, वर्ष में कई फसल देते हैं और भावों में सस्ते पड़ते हैं। चावल सबसे अधिक सिंचाई माँगता है। पानी की अगले दिनों कमी पड़ेगी। फिर उन धान्यों से काम नहीं चल सकता, जो पूरे वर्ष में एक ही फसल देते हैं। गेहूँ इसी प्रकार का है। खाद्य की बढ़ती आवश्यकता, महँगाई, सुपाच्य, पकाने में सरल होने का दृष्टिकोण रखकर आहार का निर्धारण होना चाहिये। बदली हुई परिस्थितियों को देखते हुये हमारे खाने सम्बन्धी आदतें भी बदली जानी चाहिये। पकाने में अधिक ईंधन की विशेषतया लकड़ी-गोबर की आवश्यकता न पड़े, ऐसी नई रीति-नीति सोचनी चाहिये। प्रेशर कुकर इस दृष्टि से हर रसोईघर की सबसे बड़ी और महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। चूल्हे के धुएँ से पकाने वालों की आँखें खराब न हों, फेंफड़ों में कालिख न जमे, इस दृष्टि से जहाँ उपलब्ध है, वहाँ गैस का—गोबर गैस का निर्धूम चूल्हों का प्रयोग करना चाहिये। भाप पर उबालकर जो बन सके, उसी भोजन को अभिरुचि में सम्मिलित करना चाहिये। अधिक ठण्डे, अधिक गरम पदार्थों से बचा जाये। एक समय भोजन पकाकर उसे दोनों समय प्रयुक्त करने की आदत डाली जाये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इससे महिला समुदाय का समय बचेगा और वे उसे शिक्षा का, स्वास्थ्य, का स्वावलम्बन का लाभ उठाने में लगा सकेंगी। गरम भोजन ही खाना चाहिये यह बिल्कुल भी आवश्यक नहीं। दोपहर का भोजन रात को काम दे सके, इसमें किसी प्रकार की हानि नहीं है। चिकनाई, मसाले, चीनी आदि की भरमार करके भोजन को दुष्पाच्य नहीं बनाया जाना चाहिये। भूख से कम खाया जाये। अधिक चबाया जाय। दो बार के खाने को पर्याप्त माना जाय। तीसरे प्रहर या प्रातः कुछ आवश्यकता प्रतीत हो, तो दूध, छाछ, शाकों का रसा जैसी पतली चीजों से ही काम चलाया जाय। अधिक मात्रा में अधिक बार भोजन करना हर दृष्टि से हर किसी के लिये हानिकारक है।

पानी भी आहार की तरह ही आवश्यक, पोषक एवं आन्तरिक सफाई की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। उसकी शुद्धता का पूरा ध्यान रखा जाये। छानकर या कोई खतरा हो तो उबालकर पिया जाये। भोजन के एक घण्टे बाद तक पानी न पियें। शेष पूरे दिन में आठ-दस गिलास पानी तो पी ही लेना चाहिये।

जिन मकानों में हवा का आवागमन नहीं है, सीलन, घुटन है, उन्हें बदल ही देना चाहिये। खपरैल की झौंपड़ियाँ इस दृष्टि से सबसे उपयुक्त हैं। उनमें हवा आर-पार जाने के लिये दरवाजे, जंगलों, खिड़कियाँ बड़ी संख्या में होने चाहिये। जमीन का फर्श पक्का रहे, तो ठीक है। चोर आदि से डरकर बन्द घरों में रहने से हानि अधिक और लाभ कम है। निवास और वस्त्र जहाँ तक हों हवा के आवागमन के लिये खुले ही रखे जाने चाहिये। कपड़े भी इतने भारी व कसे हुये न हों, जो सर्दी-गर्मी सहने की स्वाभाविक आवश्यकता में ही अड़चन उत्पन्न कर दें।

स्वास्थ्य के लिये सफाई की अत्यधिक आवश्यकता है। रसोईघर और शौचालय आमतौर से गन्दगी के भण्डार बने रहते हैं। इन दोनों को सफाई पर निरन्तर ध्यान रखा जाये। बर्तन, उपकरण पुस्तकें, वस्तुयें सीमित मात्रा में इतनी व्यवस्थित रीति से रखनी चाहिये कि उनके पीछे गन्दगी न इकट्ठी होने पाये। कीड़े-मकोड़े अवसर पाते ही बढ़ने लगते हैं और गन्दगी बढ़ाने के साथ-साथ स्वास्थ्य को भी आघात पहुँचाते हैं। जुयें, चीलर, खटमल, पिस्सू तिलचट्टे, मकड़ी, चूहे, छछूँदर आदि घर के किसी कोने में पलने या बढ़ने न पायें, इसका पूरा ध्यान रखा जाय। कपड़ों को बार-बार धूप लगाते रहने की सतर्कता बरतनी चाहिये।

शारीरिक श्रम स्वस्थ रहने के लिये नितान्त आवश्यक है। हल्के काम करने भर से काम चलाते रहने में आराम तो मिलता है, पर शरीर के कल-पुर्जे जंग लगे औजारों की तरह निकम्मे हो जाते हैं। जिन्हें किसान-मजदूरों की तरह दिन भर कड़ा शारीरिक परिश्रम करने के अवसर नहीं हैं, उन्हें व्यायाम को अनिवार्य रूप से दिनचर्या का अंग बनाना चाहिये। किसके लिये नया और कितना व्यायाम उपयुक्त रहेगा, इसका निर्धारण किसी जानकार के परामर्श से निश्चित कर लेना चाहिये। अंग-संचालन के व्यायाम तो बूढ़े, बच्चे दुर्बल भी कर सकते हैं। उन्हें रुग्णता की स्थिति में भी किसी न किसी रूप में अपनाये ही रहना चाहिये।

कामुकता शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को नष्ट करने में विघातक ही सिद्ध होती है। यथासम्भव अधिक से अधिक समय ब्रह्मचर्य से ही रहना चाहिये। बाल-विवाह मात्र हानि-ही-हानि का संकट खड़ा करता है। अधिक संख्या में जल्दी-जल्दी बच्चे पैदा करने का जननी के स्वास्थ्य पर भयंकर दुष्प्रभाव पड़ता है। इन परिस्थितियों में वे खोखली हो जाती हैं, जीवनी शक्ति गँवा बैठती हैं और अनेक रोगों की शिकार बनती हैं। बढ़ी हुई संतानों से खर्च बढ़ता है, परिवार के वर्तमान सदस्यों की सुविधा में कटौती होती है और देश पर बढ़ती जनसंख्या के कारण असंख्य समस्याओं और कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। दरिद्रता के वातावरण में पले घिचपिच में रहने वाले, उपेक्षित बालकों का भविष्य तो निश्चित रूप से अंधकारमय बनता है। इन सब बातों पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिये और महिलाओं की जीवनी शक्ति उपयोगी कामों में लग सके, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये अतिवादी यौनाचार और अनावश्यक संतान उत्पन्न करने के लिये बाधित करके अत्याचार का शिकार नहीं बनाना चाहिये।

बाजार में अधिकाधिक खाद्य पदार्थों में हानिकारक मिलावट पाई जाती है। इनसे पेट भरते रहने पर स्वास्थ्य के लिये संकट खड़ा होता है, पैसा तो अधिक लगता ही है, इसलिये अच्छा यह है कि आटा, दाल, मसाले आदि की शुद्ध व्यवस्था घर पर ही बनाई जाये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आटा-चक्की घर में रह सके, तो उससे अच्छा व्यायाम हो जाता है और आटा-दाल, भी मिलता है। नकली दूध लेने की अपेक्षा तिल मूँगफली या सोयाबीन को भिगोकर पीस लेने से उससे दूध का प्रयोजन पूरा कर लेना कहीं अच्छा है। जिनके यहाँ पशु पलते हैं और सारा दूध बेच देते हैं, उनके लिये अच्छा है कि घी या मक्खन निकालकर बेच दें और बची हुई छाछ या मक्खन निकले दूध से घर का काम चलायें इतना अंश चिकनाई का हर किसी को मिलना चाहिये। घरेलू शाक-वाटिका लगा लेने से जहाँ शुद्ध भाजी मिलती है, वहाँ पैसे की भी बचत होती है। कपड़े घर पर धोने से जहाँ शारीरिक व्यायाम होता है, वहाँ बाजार में तेजाब से धुले कपड़ों के जल्दी फट जाने जैसी आर्थिक हानि सहनी पड़ती है। उपरोक्त सभी काम मिल-जुलकर किये जा सकें, उनमें घर के हर सदस्य को सहभागी बनाया जा सके। तो यह एक अच्छा प्रचलन होगा। इसमें सहकारिता और श्रमशीलता को अपनाना पड़ेगा। स्त्रियों को ही इस कम महत्त्व के समझे जाने वाले काम में ही मरते-खपते न रहने दिया जाये। पुरुष वर्ग का अहंकार भी सिर पर न चढ़ेगा। महिलाओं को छोटे काम के लिये रखी गयी दासी जैसी हीनता की अनुभूति भी न होगी। गृह-व्यवस्था में परिवार के हर सदस्य की साझीदारी होनी चाहिये। उसमें छोटे-बच्चों या रोगी, अबोध, असमर्थों को ही छूट दी जा सकती है। वैसे अपने हाथों अपना काम करने की आदत तो हर किसी में रहनी चाहिये। परावलम्बन की प्रवृत्ति को निरस्त ही किया जानी चाहिये।

"सादा जीवन उच्च विचार" का सिद्धान्त परिवार की हर सदस्य के गले उतारा जाये। तड़क-भड़क का—दूसरों को आकर्षित करने की दृष्टि से किया गया श्रृंगार शालीनता के निर्वाह में बाधक समझा जाना चाहिये। अनावश्यक ठाट-बाट बनाने के लिये जेवर, बहुमूल्य कपड़ों में एवं फैशन बनाने में लिये हुये धन खर्च को अपव्यय ही समझा और उसे रोका जाना चाहिये, क्योंकि उसके कारण जो पैसा खर्च होता है, उससे परिवार के स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वावलम्बन जैसे आवश्यक साधन जुटाने में कटौती करनी पड़ती है। सादगी और स्वच्छता मिलकर सुरुचि का ऐसा वातावरण बना देते हैं, जिस घर अहंकारी शान-शौकत को निछावर किया जा सकता है। विचारशीलों की दृष्टि में हर अपव्यय, ओछेपन और बचकानेपन का ही प्रतीक माना जाता है और उस उच्छृंखलता के रहते आर्थिक या नैतिक सदाचार खो बैठने का खतरा निश्चित रूप से बढ़ता है। प्रामाणिकता और शालीनता बनाये रहने के लिये हर किसी को मितव्ययी होना चाहिये। परिवार के हर पक्ष में सादगी और सुरुचि का समावेश रहना चाहिये। इसी में दूरदर्शी समझदारी का समावेश है।

बीमारियाँ गन्दगी से, असंयम से, अस्त-व्यस्तता से उत्पन्न होती हैं। नशेबाजी, आबारागर्दी भी घटियापन भरती, उसे गया-गुजरा बनाती हैं। समय को दिनचर्या के व्यस्त शिकंजे में कसे रहना चाहिये। खाली समय बिताने की किसी को भी छूट नहीं रहनी चाहिये, तथाकथित रिटायरों को भी नहीं। व्यस्त लोग अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ रहते हैं। नशेबाजी जैसे दुर्व्यसनों से बचे रहकर स्वास्थ्य रक्षा के क्षेत्र में उठने वाले संकटों से बहुत हद तक बचा जा सकता है।

बीमार पड़ने पर तीव्र मारक दवायें लेने की अपेक्षा यह कहीं अधिक अच्छा है कि आस-पास के क्षेत्र में उगने वाली किन्हीं जड़ी-बूटियों से जानकारों का परामर्श लेकर घरेलू उपचार कर लिया जाये। मसाले के रूप में प्रयुक्त होने वाली वस्तुयें भी एक प्रकार से औषधियाँ ही हैं। उसका उपयोग थोड़ा प्रयत्न करने पर ही जाना जा सकता है और साधारण रुग्णता से अपने बलबूते निपटा जा सकता है। जड़ी-बूटी चिकित्सा की जानकारी सर्वसाधारण को उपलब्ध कराने में शान्तिकुंज के उत्साह भरे प्रयत्न चलते ही रहते हैं। इस आधार पर थोड़ी खाली जगह में ही अपने काम आने योग्य जड़ी-बूटी वाटिका लगाई जा सकती है। वह पुष्पोद्यान से कहीं अधिक सुविधाजनक और स्वास्थ्य संरक्षक सिद्ध हो सकती है।

जल्दी मरने की उतावली न करें।

तनाव हर स्थिति में हानिकारक

यह तथ्य न केवल सर्वविदित है वरन् प्रत्येक का अनुभव भी है कि आज का जीवन व्यस्त और तनावपूर्ण है। आजकल सभी लोग तनावूपर्ण जीवन के शिकार हैं। युवा, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, व्यवसायी और नौकर पेशा, गरीब और अमीर हर वर्ग तथा हर स्तर का व्यक्ति तनावग्रस्त है। सड़कों पर भागती हुई जिन्दगी, आपस में बात करने और मिलने-जुलने के लिए समस्या, जरा-सी बात पर दाँत पीसना और बाँहें चढ़ाना, व्यापारियों का चीख-चिल्लाकर बात करना, गृहणियों की बच्चों पर डाँट फटकार आदि सभी इस बात के प्रतीक हैं कि चारों ओर मानसिक तनाव व्याप्त है। यों तनाव से सामान्य अर्थ मानसिक तनाव ही लिया जाता है, पर वस्तुतः तनाव तीन प्रकार के होते हैं, शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक तनाव। इन्हें आधिदैविक और आध्यात्मिक ताप भी कहा जा सकता है। दैविक और भौतिक चिन्ताओं तापों के रूप में भी इन्हीं की चर्चा की जाती है।

लम्बे समय तक लगातार एक ही प्रकार का काम करने और अत्यधिक श्रम करने के कारण जो थकान उत्पन्न होती है, उसे शारीरिक तनाव कहा जा सकता है। थक जाने या बहुत अधिक श्रम करने के बाद मनुष्य इस कदर लस्त-पस्त हो जाता है कि उसकी और कुछ करने की बात तो दूर रही, कुछ कहने या सुनने की भी इच्छा नहीं होती। यहाँ आवश्यक नहीं है कि बहुत अधिक सोने, दिन चढ़े तक पड़े रहने, ज्यादा खाने, आवश्यकता से अधिक आराम करने के कारण भी मस्कुलरटेन्शन उत्पन्न होता है। आहार-विहार की गड़बड़ी और अस्त-व्यस्तता भी शरीरिक तनाव उत्पन्न करती है।

जहाँ तक अधिक श्रम के कारण उत्पन्न हुई थकान से पैदा होने वाले शारीरिक तनाव का प्रश्न है, वह मुख्यतः दो कारणों से उत्पन्न होता है। एक तो अनिच्छापूर्वक कार्य करना और दूसरे मैं, काम कर रहा हूँ—यह भावना काम करते समय विद्यमान रहना। श्रम की यह भावना कि मैंने काम किया यदि मनुष्य किसी प्रकार भूल जाय तो तीन-चार घण्टे का विश्राम कर और एक-दो बार भोजन कर आसानी से सोलह घण्टे तक काम कर सकता है।

शरीरिक तनाव के बाद मानसिक तनाव का क्रम आता है। यह बहुत अधिक सोचने-विचारने या चिन्ता करने से उत्पन्न होता है। सोचना केवल उसी दिशा और उसी विषय में चाहिए, जिसमें कि सोच-विचार आवश्यक हो। परन्तु अधिकांश व्यक्ति काम की बातें बहुत कम और व्यर्थ की, बेकार ऊल-जलूल की बातें ज्यादा सोचते हैं, जिनसे वर्तमान जीवन का कोई सम्बन्ध नहीं होता। पिछली बातें या घटनाएँ, जिनको अनहुआ करना किसी भी प्रकार सम्भव नहीं है, अधिकांश व्यक्ति उन्हीं की स्मृतियों में डूबते-उतराते रहते हैं और सोच-सोचकर परेशान होते रहते हैं। किसी से लड़ाई हो गई, किसी ने गाली दे दी या अपमान कर दिया अथवा कोई दुर्घटना हो गई तो इतने मात्र से लम्बे समय तक मानसिक सन्तुलन अस्त-व्यस्त हो गया। इस तरह के मानसिक तनाव का पहला परिणाम नींद कम हो जाने के रूप में होता है।

स्वास्थ्य के लिये अच्छी, पूरी और प्रगाढ़ निद्रा आवश्यक है, यह तो सभी जानते हैं। कोई व्यक्ति एक हफ्ते तक बिना कुछ खाए रह सकता है, पर एक सप्ताह तक नींद के बिना रह पाना सम्भव नहीं है क्योंकि नींद शरीर और दिमाग की क्षतिपूर्ति करती है तथा मन मस्तिष्क और शरीर को विश्राम पहुँचाती है। लेकिन जब मानसिक तनाव के कारण नींद में अवरोध उत्पन्न होते हैं तो उसका शरीर और स्वास्थ्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। पहले तो चिड़चिड़ापन, थकान, अरुचि और ऊब उत्पन्न होती है। इसके बाद और कई तरह की मानसिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

अत्यधिक सोच-विचार और चिन्ता करने से उत्पन्न होने वाला मानसिक तनाव यदि लम्बे समय तक बना रहे तो "मेंटल रिटार्डेशन" नामक स्थिति आ जाती है। इस स्थिति में आने पर मस्तिष्क की शक्तियाँ काम करना बन्द-सी कर देती हैं और मस्तिष्क लगभग सुन्न सा हो जाता है। आधुनिक जीवन की यांत्रिक सभ्यता के कारण उत्पन्न होने वाले मानसिक तनावों के परिणामस्वरूप "मेंटल रिटार्डेशन" के लाखों मामले प्रकाश में आ रहे हैं। इस दुःस्थिति का सामना तो मानसिक तनाव सह पाने क्षमता सीमा टूट जाने के बाद उत्पन्न होती है। प्रथम तो इनके लगातार बने रहने के कारण अवसादग्रस्त बन जाती है, जिसे डिप्रेशन भी कहा जाता है।

इस प्रकार का तनाव बढ़ जाने पर शिराएँ फटने-सी लगती हैं, आँखें कमजोर हो जाती हैं। कब्ज रहती है, खाना हजम नहीं होता। नशा पीने की इच्छा होती है और यदि शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार के तनाव एक साथ उत्पन्न हो गए तो काम और क्रोध के आवेग भी बार-बार पैदा होने लगते हैं। शरीरिक व मानसिक तनाव के बाद आता है भावनात्मक तनाव। मनुष्य को अपने जीवन में कई तरह के उतार-चढ़ावों का सामना करना पड़ता है। वह निरन्तर भावनाओं के थपेड़े खाता रहता है।

प्रायः भावनाएँ यथार्थ पर आधारित नहीं होतीं। किन्तु अत्यधिक आसक्ति के कारण मनुष्य उन्हीं से चिपके रहते हैं। किसी का प्रिय मित्र, पुत्र, पति या पत्नी अथवा रिश्तेदार कल आने वाला है तो उसे रात भर नींद नहीं आती। एक घण्टे बाद परीक्षाफल घोषित होने वाला है तो दिल की धड़कन बहुत बढ़ गई। दूर कहीं प्रवास पर है, रात में सहसा किसी की याद आ गई तो नींद गायब, यही है—भावनात्मक तनाव। ये भावनात्मक तनाव प्रायः हमारे जाने-अनजाने व्यवहारों में प्रकट होते हैं। कुछ लोग कन्धे उचकाते रहते हैं, कुछ पैर हिलाते रहते हैं, कुछ गुनगुनाते रहते हैं, कुछ सीटी बजाते हैं। कोई बार-बार पलकें झपकाते रहते हैं तो किसी की नाक से खूँ खूँ की आवाज आती रहती है। ये सब भावनात्मक तनाव के ही परिणाम हैं।

इन तनावों की तत्काल प्रतिक्रिया परिणति किसी न किसी रूप में तो देखने को मिलती ही है। इनके दूरगामी प्रभाव भी होते हैं और शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर इनकी तीखी प्रतिक्रिया होती है, जिनसे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। मानसिक तनाव के कारण सिरदर्द रहना तो साधारण-सी बात है। कई बार पेट के फोड़े (अल्सर), उच्च रक्तचाप, हृदय रोग तथा अन्य कई बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं। समय पर तनावों का यदि नियन्त्रण समाधान नहीं किया गया तो हाइपरटैन्शन, हार्ट अटैक या पैरालिसिस जैसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं और जीवन अस्तित्व को ही संकटग्रस्त कर देते हैं।

इस प्रकार के रोग किसी भी तरह के तनावों के कारण उत्पन्न हो सकते हैं। कभी मस्कुलरटेन्शन से, कभी मेंटल टेन्शन से, कभी तीनों के सम्मिश्रित कारणों से इस प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उदाहरण के लिए थके हुए व्यक्ति को बहुत जल्दी क्रोध आता है। क्रोध आने के अलावा जल्दी थक जाने वाले व्यक्ति चिंतित भी रहने लगते हैं। दिमागी उलझन में फँसे व्यक्ति को सिरदर्द, हृदय की पीड़ा, अम्लता, कब्ज आदि रोग तंग करते रहते हैं। जब व्यक्ति अपने को उपेक्षित समझता है और उसकी भावनाएँ अतृप्त रही आती हैं, तो उसे दमा, यक्ष्मा, आर्थराईटिस, कुष्ठ रोग आदि जैसे रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

कहने का आशय यह है कि तनाव किसी भी क्षेत्र में संव्याप्त क्यों न हो उससे जीवनी शक्ति का क्षरण होता है। शारीरिक और मानसिक श्रम से थकान आती तो है पर वह उथली रहती है और विश्राम करने एवं बलवर्धक आहार उपचार लेने से इसकी क्षतिपूर्ति थोड़े ही समय में हो जाती है, किन्तु मानसिक या भावनात्मक तनाव ऐसे होते हैं, जिनके मूल में गहरे आघात विद्यमान रहते हैं। आघातों से उत्पन्न हुए ये घाव नासूर बन जाते हैं और समय-समय पर उभरते फूटते रहते हैं। यह स्मरण रखा जाना चाहिए कि शारीरिक स्वास्थ्य को नष्ट करने में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

केवल आहार-विहार की अनियमितता ही कारण नहीं है। मानसिक शान्ति को नष्ट करने में केवल प्रतिकूल परिस्थितियाँ ही निमित्त नहीं होतीं, वरन् उसका कारण मनुष्य की भावनात्मक दुर्बलता और मानसिक सन्तुलन का अभाव भी है क्योंकि बड़े-बड़े संकट सामने होने पर भी कितने ही मनस्वी लोग उन्हें सामयिक चुनौती मात्र मानते हैं और उनका मुकाबला खेल के मैदान में गेंद से जूझने वाले खिलाड़ियों की तरह करते हैं। इसके विपरीत कितने ही व्यक्ति विपत्ति की कल्पना मात्र से घबड़ा उठते हैं और इतने असन्तुलित हो जाते हैं मानो आपत्तियों का पर्वत ही उन पर टूट पड़ा हो।

जो भी हो, तनाव के कारण उत्पन्न होने वाले दुष्परिणामों को जितना विघातक माना जाय उतना कम है। इनके कारण उस जीवनी-शक्ति का बुरी तरह अपव्यय होता है जिस पर स्वास्थ्य, सन्तुलन, शान्ति और आनन्द निर्भर रहते हैं। दीपक का यदि तेल समाप्त हो जाय तो वह मात्र रुई, बत्ती आदि के सहारे ही ज्वलन्त नहीं रखा जा सकता। जीवनी शक्ति को मानवीय सत्ता का तेल भण्डार कहा जाता सकता है। तनाव का सीधा आक्रमण उसी पर होता है और जितनी तेजी से उस भण्डार का क्षय होता जाता है उतनी ही तेजी से सोचने समझने की क्षमता और व्यवस्थापूर्वक कुछ करने की दोनों सम्भावनाएँ ही अस्त-व्यस्त होती चली जाती हैं। इस स्थिति में फँसकर व्यक्ति खोखला बनकर रह जाता है। उसके शरीर की बनावट भले ही न बदले पर स्थिति अर्ध विक्षिप्त जैसी बन जाती है। ऐसे व्यक्ति न केवल स्वयं सन्तप्त रहते हैं वरन् सम्पर्क में आने वालों को भी अपने व्यवहार से उद्विग्न करते रहते हैं।

तनाव के कारण मनःस्थिति दिनोंदिन दुर्बल होती चली जाती है, उसके साथ ही दुर्बल मनःस्थिति के व्यक्ति के दिमाग में छोटे-छोटे कारणों से भी भयंकर तनाव उत्पन्न हो सकता है। अतः तनाव से छुटकारे की युक्ति सभी व्यक्तियों को आनी चाहिए। प्रतिकूल स्थिति उत्पन्न होने पर विचार करना चाहिए कि उसकी चिन्ता कर असन्तुलित होने के स्थान पर उतार-चढ़ाव को स्वाभाविक मानते हुए सन्तुलन बनाये रखने की दूरदर्शिता अपनानी चाहिए तथा प्रस्तुत प्रतिकूलताओं के साथ खिलाड़ी की भावना से आँख मिचौली खेलने की दृष्टि रखनी चाहिए। इस तरह का साहस, ऐसा दृष्टिकोण रखा जाय तो फिर कोई भी कठिनाई ऐसी नहीं रह जाती, जिसका प्रयत्नपूर्वक हल अथवा धैर्यपूर्वक समाधान न किया जा सके।

सर्वप्रथम तो उन स्थितियों को समझने और उनके कारणों को पहचानने की चेष्टा की जानी चाहिए जिनसे तनाव या चिन्ताएँ उत्पन्न होती हैं। चाहे वह परिवार में असामञ्जस्य के कारण उत्पन्न होने वाला तनाव हो या आर्थिक कठिनाइयों से पैदा हुई चिन्ता हो। कई बार बहुत-सी समस्याएँ व्यक्ति को परेशान किए रहती हैं। उन सबको एक साथ सोचने का अर्थ है सब शत्रुओं को एक साथ लड़ने के लिए चुनौती देना। सब समस्याओं पर एक साथ विचार करने के कारण किसी भी समस्या का समाधान नहीं हो पाता और परेशानियाँ अपने स्थान पर खड़ी रहती हैं। इस स्थिति से निबटने के लिए कारगर उपाय यह है कि एक-एक समस्या को क्रमवार सुलझाया, निबटाया जाय।

समस्याओं के समाधान में सन्तुलित और सुलझी हुई नीति अपनाने के साथ यह भी आवश्यक है कि सुखद सम्भावनाओं की आशा लगाने की तरह दुःखद दुर्घटनाओं एवं प्रतिकूल परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना चाहिए। उस तरह सजग रहने पर ढेरों कठिनाइयों से बचा जा सकता है। कम से कम तनाव के बोझ को तो हल्का किया ही जा सकता है। श्रम, सन्तुलन और आहार-विहार की सुव्यवस्था बनाये रहकर शारीरिक तनाव से बचा जा सकता है। मानसिक श्रम को अदलते-बदलते रहकर और किये जा रहे कार्यों में दिलचस्पी रखते हुए, उन्हें सुव्यवस्थित बनाने का कला-कौशल प्रस्तुत करने की रीति-नीति अपनाकर मानसिक तनाव से बचा जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शारीरिक गतिविधियाँ मनोवेगों द्वारा संचालित

मनुष्य शरीर की सारी गतिविधियों और क्रियाकलापों का संचालन मस्तिष्क द्वारा होता है। वैज्ञानिकों के अनुसार कोई भी इच्छा, आकांक्षा, विचार, भावना और संकल्प मस्तिष्क से ही उठते हैं तथा उन्हें पूरा करने की योजना बनाने का कार्य भी उसी के जिम्मे आता है। मस्तिष्क शरीर का प्रशासक, नियता, संचालक और निर्देशक है तो स्वाभाविक ही है कि उसकी स्थिति दशा का प्रभाव शरीर पर भी पड़े। प्रशासक यदि अयोग्य और अकुशल होगा तो व्यवस्था भी गड़बड़ायेगी ही। संचालक के हाथों हुई किसी गलती का प्रभाव उसके अधीन क्षेत्र पर भी पड़ता है। आधुनिक मनोविज्ञान इस दिशा में कई महत्वपूर्ण खोजें कर चुका है और इस निष्कर्ष पर पहुँच चुका है, जिनका प्रतिपादन प्राचीन काल में महर्षियों ने किया था।

मनोभावों का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है ? इस दिशा में कई प्रयोग हुए हैं। पिछले दिनों अमेरिका के न्यूयार्क शहर में रहने वाला एक युवक एलेक्सी सेंट मार्टिन अपने एक मित्र द्वारा असावधानी से चल गई बन्दूक के कारण घायल हो गया। गोली पेट में लगी थी और पेट में दो इंच व्यास का छेद हो गया था। लगता था कि बचना मुश्किल है, फिर भी डा० विलियम बोमोर्ट नामक एक चिकित्सक ने उसे बचाने का भरसक प्रयास किया। डा० बोमोर्ट के प्रयासों से मार्टिन की प्राण रक्षा तो हो गई पर, पेट के भीतर वह सूराख बना रहा। उसके पेट की बाहरी और आंतरिक त्वचा तो जुड़ गयी, पर पेट के भीतरी अङ्गों में ऐसा विकार आ गया, जिससे कि उसका खाया हुआ भोजन साफ दिखाई देता था।

डाक्टर बोमोर्ट ने मार्टिन की पर्याप्त सहायता और देखभाल की, उसे अपने साथ भी रखा ताकि वह भोजन की पाचन प्रक्रिया को उसके पेट में देखकर अध्ययन कर सके। डाक्टर बोमोर्ट ने मार्टिन पर कुल मिलाकर २८३ प्रयोगात्मक अध्ययन किये और उन प्रयोगों द्वारा प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में बताया गया है कि पेट के सबसे अन्दर की पर्त लाल, गुलाबी, मखमल सी दीखती है और वह श्लेष्मा से ढकी रहती है। ज्यों ही मुँह में भोजन रखा जाता है यह पर्त और भी अधिक सुर्ख गुलाबी रंग की हो जाती है और श्लेष्मा से एक तरल पदार्थ स्रवित होने लगता है, जो आमाशय में जमा हो जाता है। भोजन जब आमाशय में पहुँचता है तो श्लेष्मा और सिकुड़ने लगती है फलतः वहाँ अधिक तरल पदार्थ जमा होने लगता है।

यह तरल पदार्थ भोजन को अपने में लिपटाकर उसे गलाने लगता है। एक प्रयोग के दौरान मार्टिन को गुस्सा दिलाया गया। गुस्से की हालत में ही मार्टिन ने भोजन किया। उधर डा० बोमोर्ट परीक्षण करते रहे। उन्होंने देखा कि प्रयोग के दौरान रोगी-मार्टिन को गुस्सा आने पर भोजन पचाने में अधिक समय लगा। डा० बोमोर्ट के इन निष्कर्षों की पुष्टि अन्य वैज्ञानिकों ने भी की है और बताया है कि उत्तेजित मनःस्थिति में किया गया भोजन स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालता है। खासतौर से पाचन संस्थान पर तो उसकी तुरन्त ही प्रतिक्रिया होती है।

न केवल उत्तेजना वरन् निराशा, घृणा, उदासी, ईर्ष्या, द्वेष और तनावग्रस्त मनःस्थिति भी पाचन क्रिया को प्रभावित करती है। यदि ये मनोविकार देर तक टिके रहें तो पेट के रोग यहाँ तक कि अल्सर भी हो सकते हैं। डा० जैक्सन का तो यहाँ तक कहना है कि पेट सम्बन्धी सभी रोग अस्त-व्यस्त मनःस्थिति के कारण होते हैं।

अल्सर के फोड़े प्रायः पक्वाशय (ड्यूओडेनम) में होते हैं, जो छोटी आँत का वह भाग है, जिससे पेट की धुरी दूसरे सिरे से जुड़ी रहती है। तनावग्रस्त या निराश उद्विग्न मनःस्थिति में पेट की लहरार सिकुड़न की गति बढ़ जाती है। फलतः पेट के भीतर विद्यमान खाई हुई वस्तुएँ तथा अन्य रस पक्वाशय में आ जाते हैं। पेट की भीतरी पर्त तो श्लेष्मा द्वारा सुरक्षित रहती है पर पक्वाशय में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं होती। उत्तेजित और उद्विग्न रहने के कारण जब उपरोक्त प्रक्रिया बार-बार सम्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती है तो पक्वाशय की भीतरी पर्त कई स्थानों से छिल जाती है और वहाँ फोड़ा बन जाता है। अल्सर के फोड़े पुरुषों को प्रायः ३० से ४० वर्ष की आयु के बीच होते हैं। ज्ञातव्य है जीवन का संघर्ष काल भी यही है। इसी वर्ग के लोग महत्वाकांक्षी होने के साथ-साथ अहंमन्य भी होते हैं। अहमन्यता के विपरीत कहीं कोई बात होती दीखी और सन्तुलन डगमगाया अथवा असन्तुलन स्वभाव का एक अङ्ग बन गया तो अल्सर के अलावा और भी कई रोग इसी उम्र में आ घेरते हैं।

उदाहरण के लिए रक्तचाप और हृदय रोगों को ही लो। किसी भी उत्तेजनापूर्ण स्थिति में हृदय की धड़कन बढ़ जाना, साँस तेजी से चलने लगना, रक्त का दौरा तेजी से होने के कारण शरीर का गर्म हो जाना आदि बातें तो प्रत्यक्ष अनुभव की जा सकती हैं। यद्यपि ये सब व्यवस्थाएँ प्रकृति ने मनुष्य की रक्षा के लिए ही की हैं ताकि किसी संकट के समय शरीर के यह महत्वपूर्ण अङ्ग पूरे शरीर की रक्षा करने में तत्परतापूर्वक सक्रिय हो जायँ। परन्तु उत्तेजना जब व्याधि विकार की तरह बन जाती है तो उसकी प्रतिक्रिया भी बार-बार शरीर के उन अङ्गों को उत्तेजित करती है और परिणामतः स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

उतावली और हड़बड़ी में रहने की प्रवृत्ति प्रायः इन रोगों की जननी होती है। कामकाज निबटाने में उतावली से काम लेना और आराम करते समय भी काम-काज की चिन्ता इन रोगों का स्वागत करती है। कुछ वर्षों पूर्व आयरलैण्ड में जन्मे ५७५ जुड़वाँ बच्चों पर तुलनात्मक अध्ययन किया गया। बाद में दो जुड़वाँ भाइयों में से एक को अमेरिका के बोस्टन शहर में ले जाया गया। जो वहाँ कुछ महीनों तक रहा। दोनों भाइयों को एक समान भोजन दिया गया, एक समान काम दिया गया लेकिन बाद में पाया गया कि बोस्टन में रहने वाला भाई, डबलिन (आयरलैण्ड) में रहने वाले भाई की अपेक्षा हृदय रोग के दौरे की सम्भावना से ज्यादा ग्रस्त है। यह उस स्थिति में जब कि डबलिन वाला भाई अधिक घण्टे तक काम करता था और अपने दूसरे भाई से ज्यादा मोटा भी था। अन्तर केवल इतना ही था बोस्टन वाला भाई अपना हर काम करते समय उतावली और हड़बड़ाहट बरतता, जबकि डबलिन वाला भाई अधिक काम करता था।

यों हृदय का दौरा अकस्मात् ही पड़ता है परन्तु यह रोग कोई अचानक पैदा हो जाने वाली बीमारी नहीं है। प्रसिद्ध हृदय रोग विशेषज्ञ डा० जे० बर्नार्ड के अनुसार यह बीमारी लम्बे समय तक यहाँ तक कि कभी-कभी २० वर्ष तक पनपती और बढ़ती रहती है। अनुमान लगाया गया है कि आधुनिक सभ्यता की यांत्रिक दौड़ जैसे-जैसे तीव्र होती जायेगी वैसे-वैसे रक्त चाप और हृदय रोगों का आक्रमण बढ़ता जायेगा।

इन रोगों से बचाव के लिए डा० जे० बर्नार्ड ने कहा है आप चाहे रोगी हों या न हों। रोगी हों तो स्वस्थ होने के लिए अथवा रोगी न हों तो इस रोग से बचने के लिए आवश्यक है कि आधुनिक सभ्यता द्वारा प्रदत्त जीवन दर्शन बदला जाय। बहुत हबड़, दबड़, भाग-दौड़, व्यग्रता, उतावली और तीव्र मानसिक संवेगों से बचा जाय। जैसा जो कुछ जीवन में है, उसे स्वीकार किया जाय और सुनियोजित, शान्त ढङ्ग से उन्नति के लिए प्रयास किये जायँ। परिवर्तन या उन्नति के लिए शारीरिक अथवा मानसिक बोझ उठाना हर दृष्टि से हानिकारक ही है।

पाचन संस्थान, रक्तचाप और हृदय रोग ही नहीं सिरदर्द जैसा साधारण रोग भी प्रायः मानसिक असन्तुलन के कारण ही होता है। डाक्टरों का कहना है कि सिरदर्द की शिकायत करने वाले ६० प्रतिशत रोगी केवल मानसिक तनाव के कारण सिरदर्द से पीड़ित होते हैं। एक अध्ययन में रोगियों से कहा गया कि जब उन्हें सिरदर्द हो तब वे उस स्थिति को नोट करें, जो कि सिरदर्द होते समय थी। इस अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर कहा गया कि सभी रोगियों को उसी स्थिति में सिरदर्द उत्पन्न हुआ, जिसमें कि उन्होंने दुःख अनुभव किया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दुःखोत्पादक भावनाओं के कारण गर्दन और सिर की माँसपेशियों में ऐंठन होती है और यह ऐंठन ही सिरदर्द के रूप में अनुभव होती है। इस अध्ययन के दौरान खासतौर से यह नोट किया गया कि ऐंठन का कारण कोई शारीरिक या मानिसिक श्रम नहीं था वरन् उद्वेग अथवा दुःख की अनुभूति के परिमाण से ही ऐंठन होती थी। शरीरशास्त्रियों के अनुसार सिरदर्द का, मस्तिष्क से कोई सम्बन्ध नहीं होता। मस्तिष्क के चारों ओर खून ले जाने वाली शिराएँ ही सिरदर्द को जन्म देती हैं। तनाव अथवा दुखोत्पादन भावनाओं के समय यह नलिकायें फैल जाती हैं। इस फैलाव को कभी-कभी कनपटी की त्वचा पर हाथ रखकर भी अनुभव किया जा सकता है। माँसपेशी की ऐंठन से होने वाला सिरदर्द इन नलियों के ज्यादा सिकुड़ जाने से होता है।

माइग्रेन भी सिरदर्द का एक प्रकार है। यह सिर के एक तरफ ही होता है। कई बार इसका आक्रमण होने पर जी मिचलाने, उल्टी होने तथा आँखों से ठीक-ठीक न दिखाई देने की शिकायत भी होने लगती है। डॉक्टरों के अनुसार माइग्रेन का हमला उन लोगों पर ज्यादा होता है, जो स्वयं की स्थिति और आस-पास की परिस्थितियों से बहुत अधिक असंतुष्ट या लगभग क्षुब्ध रहते हैं। स्वाभाविक ही ऐसी स्थिति में मानसिक तनाव उत्पन्न हो जाता है और रोग हमला कर बैठता है।

चिन्ता, तनाव, निराशा, हताशा, उद्विग्नता, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि भावनाएँ मन में क्षोभ और शरीर में रोग उत्पन्न करती हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। प्रकृति न शरीर में ऐसी व्यवस्था कर रखी है कि स्वाभाविक क्रम से उत्पन्न होने वाले विकारों का परिशोधन अपने आप ही होता रहे, परन्तु जब भावनाओं द्वारा विकार उत्पन्न होने लगते हैं तो शरीर की सुरक्षा व्यवस्था कमजोर पड़ जाती है और उसकी प्रतिक्रिया रोगों के रूप में उत्पन्न होने लगती है। इनसे बचना चाहिए और ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हों भी, जबकि वास्तव में भावना क्षोभ उत्पन्न हों, तो उनका समाधान सहज स्वीकार भाव से करना चाहिए।

भावनात्मक सन्तुलन, न केवल जीवन की एक अनमोल निधि है, वरन् वह जीवन जीने की एक कला भी है। इस कला के द्वारा जीवन हरा-भरा, पल्लवित, पुष्पित और सुखी शांत बनाया जा सकता है। परन्तु इस भावनात्मक संक्षोभों का उपचार क्या है ? डाक्टर जार्ज स्टीवेंसन के अनुसार जब भी भावना क्षोभ या तनाव उत्पन्न होता है तो उसमें डूबने, झुलसने की बजाय उसे पहचानने की कोशिश करनी चाहिए कि उसका क्या कारण है। वह कारण कुछ भी सकता है, जो भी कारण हो उसका उपचार करने की बात सोचनी चाहिए न कि उससे उत्तेजित होना चाहिए। उत्तेजित होकर हर किसी औषधि की शरण लेने से तो रोग घटते नहीं, बढ़ते ही हैं।

प्लेटो ने कहा था—"आत्मोपचार की अवहेलना करके शरीर के उपचार का कभी प्रयास नहीं किया जाना चाहिये।" स्वास्थ्य के सम्बन्ध में प्रयुक्त अनेक शब्दों की उत्पत्ति चिकित्सा और अध्यात्म दोनों ही से हुई है। अंग्रेजी में इसे 'हेल्थ' कहते हैं, जो ग्रीक शब्द 'हील्थ' का अपभ्रंश है। इसका अर्थ है पूर्णता, समग्रता, अक्षुण्णता। इसी हील्थ शब्द से अँग्रेजी का 'होली' शब्द निकला है अर्थात् पवित्रता। होली व्यक्ति न केवल पवित्र होता है वरन् वह 'होल' अर्थात् पूर्ण पुरुष होता है। इस सबका आशय यह है कि अध्यात्मवादी एवं पवित्र आदमी वही है, जो पूर्ण है और पूर्ण वही है, जो समग्र रूप से स्वस्थ है। इस प्रकार स्वास्थ्य और अध्यात्म एक-दूसरे के साझीदार हैं, न केवल साझीदार अपितु एक-दूसरे से अन्योन्याश्रित रूप से जुड़े हुए हैं।

ईसाई धर्म में प्रारम्भिक दिनों में चर्च ही अस्पताल हुआ करते थे, जहाँ आत्मा, मन व शरीर तीनों ही का उपचार हुआ करता था। जिसकी आत्मा शुद्ध है, निष्पाप है, उसका मन एवं शरीर कैसे विकृत, चिन्तन तथा असन्तुलन की ओर बढ़ सकता है। 'प्रायश्चित प्रक्रिया' (कन्फेशन) के रूप में यह चर्च संस्था चिकित्सा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का कार्य करती रही। मध्यकाल में बहिरङ्ग पर ही दृष्टि केन्द्रित हो जाने से पत्तियों को ही सुधारने, सँवारने का कार्य चला, जड़ पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। शारीरिक सुख एवं भौतिक सम्पदा समृद्धि ही सब कुछ है—इसी पर जोर दिया जाता रहा। रोगों का बाहुल्य हुआ एवं समृद्धि के अपरिमित साधनों के बावजूद मानिसिक अशान्ति एवं शरीरगत व्याधियाँ बढ़ती चली गयीं। पिछले दिनों इस भूल को पाश्चात्य जगत के कुछ विद्वानों ने अनुभव किया है। अब वहाँ पेस्टर (पादरी), साइकेट्रिस्ट (मनश्चिकित्सक) एवं फिजिशयन (कायचिकित्सक) की सम्मिलित टीम द्वारा रोग निदान एवं उपचार की प्रक्रिया पूरी की जाती है।

ऐसे ही एक पादरी नार्मन विन्सेंट पील न केवल ईसाई जगत में अपितु विचारकों एवं चिकित्सकों के मध्य भी अपने जीवनदर्शन सम्बन्धी क्रान्तिकारी विचारों के कारण माने जाते हैं। जीवन के साधारण व्यावहारिक प्रश्नों को वे अधिक महत्व देते हैं, अन्य सामान्य ईसाई धर्मगुरुओं की तरह उनकी उपेक्षा नहीं करते—स्वास्थ्य रक्षा के सम्बन्ध में उनके विचार उतने ही ज्वलन्त एवं प्रखर हैं। वे कहते हैं 'मेडीकेट' एवं 'मेडीटेट' दोनों शब्दों का एक ही उद्‌गम है। रोगमुक्ति तभी सम्भव है जब हम ध्यान करें। यह ध्यान चाहे अपने स्वयं के चिन्तन के विषय में हो, चाहे अपने पिछले कर्मों के विषय में अथवा विधेयात्मक भविष्य की रूपरेखा बनाने के रूप में।

बाइबिल के 'एक्सोडस' ग्रन्थ में लिखा है—"यदि हम उस परमपिता के निर्देशानुसार चलेंगे, प्राकृतिक जीवन जीयेंगे एवं कभी निषेधात्मक दृष्टि से विचार नहीं करेंगे तो रोग हमारे पास भी नहीं फटकेगा।"

वे कहते हैं कि हममें से कितने हैं जो भौतिक शरीर के स्वामी बनने का प्रयास करते हैं। सही रूप में इस शरीर का, भगवान के अनुदान का यदि हममें से प्रत्येक व्यक्ति उपयोग करे तो वह क्या नहीं कर सकता ? ब्रैंक रिची नामक अपने मित्र के जीवन से सम्बन्धित एक घटना श्री पील बताते हैं। वह बेसबाल का प्रसिद्ध खिलाड़ी था, पर अपने उस हाथ को अधिक महत्व देता था, जिससे वह खेलता था। इसके लिए उसने ७५ हजार का बीमा भी करा रखा था। उसका कहना था कि "दैनिक प्रैक्टिस के लिये नहीं, किसी बड़े खेल के लिए मैंने अपने हाथ को सुरक्षित रखा है। लेकिन उस 'बड़े खेल' का कभी मौका ही नहीं आया। उपयोग न करने से वह अपने क्रीड़ाकौशल को भूल गया। प्रयुक्त होने पर ही शरीर की एवं मन की कार्यक्षमता बढ़ती है। यदि इन्हें समुचित रूप में, ईश्वर के निर्देशानुसार उपयोग करने का प्रयास किया जाय तो हर व्यक्ति गतिशील, उत्साहयुक्त एवं उल्लासमय जीवन व्यतीत कर सकता है। इसके लिये प्राथमिक आवश्यकता बताते हुए श्री नार्मन विसेंट पील कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने मन में स्वस्थ विचारों को स्थान देना चाहिये। मन के कुविचार ही शरीर में प्रवाहित होकर उसे रोगयुक्त कर देते हैं। न्यू आटलिस के एक अस्पताल में एक सर्वेक्षण में ५०० में से ३८३ रोगी (७७ प्रतिशत) शारीरिक जाँच के बाद स्वस्थ पाये गये, पर जब उनसे गहराई से प्रश्न किये गये तो उनके अस्वास्थ्यकर निषेधात्मक विचार ही रोगों का कारण थे। प्रतिदिन अपने मन को गन्दे विचारों से मुक्त करने का नियमित प्रयास करने के आध्यात्मिक निर्देश पाकर वे सभी स्वस्थ होकर चले गये। सद्‌भाव एवं सत्चिन्तन ही सद्‌कर्म तथा स्वस्थ शरीर को जन्म देते हैं, यह एक अनुभूत अकाट्य सत्य है।

एक महिला गम्भीर रूप से बीमार हो उपचारार्थ अस्पताल में भरती थी। अपने दुःख, कष्टों के लिये वह भाग्य एवं भगवान को निरन्तर कोसती रहती थी। सारे उपचार व्यर्थ जा रहे थे। इसी बीच किसी शुभचिन्तक रिश्तेदार ने उसे एक पुस्तक लाकर दी—जिसमें आशावादी चिन्तन को महत्ता दी गयी थी। किताब का शीर्षक था 'बेटर हेल्थ थ्रू पॉजिटिव थिंकिंग' (विधेयात्मक चिन्तन से उत्तम स्वास्थ्य)। उसे पढ़ते ही उसका चिन्तन आमूलचूल बदल गया। चिन्ता एवं निराशा को मन से निकाल फेंका। उसने मन में अच्छे विचारों को जगह देने का संकल्प लिया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निराशावादी चिन्तन वस्तुतः बहुत ही खतरनाक होता है। यह वैसे प्रत्यक्षतः दृष्टिगोचर नहीं होता, इसीलिये इसकी गम्भीर भयावहता तब तक समझ नहीं आती, जब तक कि वह शरीरगत व्याधि का रूप न ले ले। डा० शिंडलर नामक एक विख्यात चिकित्सक जो विस्कांसिन (अमेरिका) में अध्यात्म चिकित्सा करते थे—कहा करते थे, अधिकांश लोगों की बीमारी का कारण सी. डी. टी. होता है। पूछने पर वे व्याख्या करते हुए बताते हैं कि—"सी" अर्थात् केयर (चिन्ता) "डी"—अर्थात् डिफिकल्टीज (कठिनाइयाँ) और "टी"—अर्थात् ट्रबल्स (कष्ट) इन तीनों की परिणिति मानसिक निराशा में होती है। कोई इंजेक्शन, औषधि उपचार ऐसे रोगी को स्वस्थ नहीं कर सकता। उनकी सलाह मात्र यही थी कि 'प्रतिदिन कम से कम दस मिनट तो प्रसन्न रहो और देखो तुम कैसे स्वस्थ होते चले जाते हो।'

जेम गिल्वर्ट एक प्रसिद्ध अंग्रेज टेनिस खिलाड़ी थी। उसकी मृत्यु बड़े दुःखद ढंग से हुई। जब वह छोटी थी, उसकी माँ दन्त चिकित्सक के पास अपना दाँत निकलवाने गयी। जैसे ही वे दन्त चिकित्सक की कुर्सी पर बैठीं, हृदयाघात, जो कि मात्र एक संयोग था के कारण वहीं प्राण खो बैठीं। इस घटना ने गिल्बर्ट को काफी भयभीत कर दिया। यह तस्वीर आगमी तीस वर्षों तक उसके मस्तिष्क पटल पर छाई रही। दाँत के कष्ट ने उसे कई बार परेशान किया पर अचेतन में घुसे भय ने उसे चिकित्सक के पास जाने से रोक दिया। एक बार जब कष्ट असहनीय हो गया, तो उसे जबर्दस्ती चिकित्सा हेतु ले जाया गया। जैसे ही वह दन्त चिकित्सक की कुर्सी पर बैठी, उसके सामने फिर वही दृश्य घूम गया और तुरन्त उसकी मृत्यु हो गयी। यह उदाहरण बताता है कि चिन्ता, डर एवं निराशा किस प्रकार स्थूल शरीर को इस सीमा तक प्रभावित करते हैं।

जीवनी शक्ति को दृढ़तापूर्वक स्वीकार करना एवं उसका दैनिक जीवन में अभ्यास करना स्वस्थ रहने के लिये बहुत आवश्यक है। हम जो भी कुछ कहते हैं, वही हमारे विचारों में होता है और जो कुछ विचारों में होता है, वह निश्चित ही जीवन के क्रिया-कलापों में रूपान्तरित होता है। बीमारी तभी हम पर हावी होती है जब जीवनी शक्ति क्षय होती चली जाती है। ईश्वर की स्वास्थ्यदायक शक्ति हर समय हर व्यक्ति-जीवधारी के शरीर, मन व आत्मा को अनुप्राणित करती रहती है। जितने भी व्यक्ति दीर्घकाल तक जिये हैं, जीवन जीने की विधा को जानकर ही स्वस्थ्य रह पाये हैं। यदि इस सूत्र का अनुसरण किया जा सके तो हर क्षण, हर पल उल्लास पूर्ण रीति से जिया जा सकता है।

अक्षुण्ण स्वास्थ्य की धुरी आहार नहीं, चिन्तन

सामान्यतः समझा जाता है कि शरीर का पोषण और विकास पेट में पहुँचने वाले आहार से होता है। पेट में आहार पहुँचता है और वहाँ उसका पाचन होकर रस, रक्त आदि का निर्माण होता है, जो शरीर के विभिन्न अङ्ग अवयवों में पहुँचकर उन्हें शक्ति प्रदान करते हैं। उस शक्ति से विभिन्न अंग अवयव काम करने योग्य ऊर्जा प्राप्त करते हैं। इसलिए स्वच्छ, पौष्टिक और सन्तुलित भोजन की आवश्यकता एक स्वर से बताई, समझाई व स्वीकार की जाती है।

शरीर स्वस्थ रहे, इसके लिए निश्चित ही पौष्टिक भोजन का होना आवश्यक है किन्तु उससे भी अधिक आवश्यक है—मानसिक स्थिति का सन्तुलित और शुचितर होना। भोजन से शक्ति मिलती है और शक्ति से स्वास्थ्य, किन्तु भोजन को पचाने में जो शक्ति खर्च होती है, वह कहाँ से आती है ? भोजन को पचाने की शक्ति ही नहीं शरीर के अन्यान्य अंग अवयवों को भी समुचित ढङ्ग से सक्रिय और सुव्यवस्थित रखने के लिए आवश्यक शक्ति का स्रोत भी मस्तिष्क ही है। मस्तिष्क यदि अशान्त है तो कितना ही अच्छा और पौष्टिक भोजन क्यों न किया जाए, इससे कोई विशेष लाभ नहीं होता। इसके विपरीत जब मानसिक स्थिति शान्त और सन्तुलित हो तो रूखा-सूखा भोजन खाकर भी स्वस्थ रहा जा सकता है। आदिवासियों और जगलों में कन्दमूल खाकर अपना जीवन व्यतीत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने वाले लोगों को कहाँ सन्तुलित और पौष्टिक भोजन मिल पाता है ? फिर भी वे शहरी और सम्पन्न व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ्य देखे जा सकते हैं। इसका कुल कारण इतना ही है कि वे शहरी लोगों की अपेक्षा कम अशान्त और उद्वेलित मनःस्थिति का शिकार बनते हैं।

यदि भोजन से ही शक्ति मिलने की बात में कुछ वजन होता तो प्रश्न उठता है कि काम के बाद आराम की आवश्यकता क्यों पड़ती है ? जैसे ही थकान चढ़ती वैसे ही कुछ खा-पीकर काम चला लिया जाता। किन्तु सोना हर स्थिति में आवश्यक और उपयोगी होता है, क्योंकि इससे मस्तिष्क को आराम मिलता है। रात भर सोने के बाद सुबह जागने पर प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको इतना तरोताजा अनुभव करता है कि वह पूर्ववत् श्रम कर सके और कठोर दिनचर्या का पालन कर सके।

मस्तिष्क को दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक वह जिसमें मन और बुद्धि काम करती है। सोचने, विचारने तथा समझने की क्षमता इसी भाग में रहती है। दूसरा भाग वह है जिसमें आदतें संग्रहित रहती हैं और वहाँ से शरीर के क्रिया-कलापों का निर्धारण किया जाता है। शरीर की नाड़ियों में रक्त बहता है, हृदय धड़कता है, फेंफड़े श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया सम्पन्न करते हैं, माँसपेशियाँ सिकुड़तीं और फैलती हैं, पलकें झपकती, खुलती हैं, सोने-जागने का, खाने-पीने और मलमूत्र त्यागने का क्रम अपने ढर्रे पर अपने आप स्वसंचालित ढङ्ग से चलता रहता है। यह सब अनायास ही नहीं होता। इसके पीछे निरन्तर सक्रिय मन की वह शक्ति काम करती रहती है, जिसे अचेतन मस्तिष्क कहते हैं। शरीर के यन्त्र अवयव अपना-अपना काम करते रहने योग्य कलपुर्जों से बने हैं, पर उनमें अपने आप संचालित रहने की क्षमता नहीं होती। यह शक्ति मस्तिष्क के इसी अचेतन भाग से मिलती रहती है।

मस्तिष्कीय क्रिया-कलाप छोटी-छोटी कोशिकाओं के माध्यम से चलता रहता है। इन्हें नर्वसैल्स या तन्त्रिका कोशिकाएँ कहते हैं। इनकी संख्या लगभग दस अरब होती है। इन्हें आपस में जोड़ने वाले नर्व फाइबर (तन्त्रिका तन्तु) और उनके इन्सुलेशन खोपड़ी के भीतर खचाखच भरे रहते हैं। एक तन्त्रिका कोशा का व्यास एक इन्च के हजारवें भाग से भी कम होता है और उसका वजन एक औंस के आठ अरबवें भाग के करीब होता है। तन्त्रिका तन्तुओं से होकर जो विद्युत धारा दौड़ती है, वह ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से आवश्यक सूचनाएँ उस केन्द्र तक पहुँचाते हैं। तन्त्रिका कोशाणु एक सफेद धागेयुक्त तन्तु होता है, यह तन्तु अन्यायन्य न्यूटानों से जुड़ा रहता है। इस प्रकार पूरा मस्तिष्क इन परस्पर जुड़े हुए धागों का बुना हुआ तन्तु जाल है। इन्हीं सूत्रों से वे परस्पर सम्बद्ध रहते हैं और अपने कार्यों तथा उत्तरदायित्वों का परस्पर मिल-जुलकर निर्वाह करते हैं।

चाहे हम सो रहे हैं अथवा जाग रहे हों, हर समय लगभग १४०० ग्राम भारी मस्तिष्क, मेरुदण्ड एवं लगभग दस अरब तन्त्रिकाओं द्वारा देह की समस्त क्रियाओं का नियन्त्रण एवं संचालन होता रहता है। अस्तु यह नहीं समझना चाहिए कि भोजन से शक्ति प्राप्त होती है। शक्ति का उद्गम केन्द्र तो मस्तिष्क है, जो पूरे शरीर में अपना एक जाल बिछाये हुए है और उस जाल के माध्यम से शरीर को नियन्त्रित करता है। मस्तिष्क से निकलकर नासिका, कान, नेत्र, मुँह और त्वचा तक पहुँचने वाली तन्त्रिकाएँ उन्हें सक्रिय रहने के लिए शक्ति प्रदान नहीं करतीं बल्कि उन्हें आदेश और निर्देश भी प्रदान करती हैं। यदि किसी अंग से इनका सम्बन्ध विच्छेद हो जाये तो अंग पाचन संस्थान से पर्याप्त रस रक्त मिलते रहने के उपरान्त भी कार्य करने में सक्षम नहीं रह जाता।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि मस्तिष्क ही देखता है आँखें नहीं, मस्तिष्क ही सुनता है कान नहीं और मस्तिष्क ही स्पर्श आदि का अनुभव करता है त्वचा नहीं। संक्षेप में यदि मस्तिष्क का शरीर में महत्व की दृष्टि से कोई स्थान निर्धारित करना हो तो उसे शरीर राज्य का सम्राट कहा जा सकता है तथा वही कर्ता-भर्ता और भोक्ता भी। क्योंकि उसके बिना शरीर का कोई भी क्रिया-कलाप सम्पन्न होना सम्भव ही नहीं है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवशास्त्रियों ने अपने प्रयोगों और अनुसंधानों से जो निष्कर्ष निकाले हैं, वे और भी विस्मय विमुग्धकारक हैं। डा० जेम्स फील्ड ने अपने दीर्घकाल के प्रयोगों और अन्वेषणों के आधार पर यह सिद्ध किया है कि यदि हम बिना भूख के, थके हुए मस्तिष्क के समय भोजन करते हैं तो उस भोजन से शरीर को शक्ति मिलने के स्थान पर विपरीत प्रभाव ही होता है क्योंकि तब थका हुआ मस्तिष्क पाचन संस्थान को सुसंचालित रखने की स्थिति में नहीं रहता। इसके अलावा उन्होंने यह निष्कर्ष भी प्रतिपादित किया कि रोगी लम्बे समय तक बिना भोजन के रह सकता है क्योंकि मस्तिष्क को भोजन की आवश्यकता नहीं होती। उसका पोषण आहार से कम विचारों से अधिक होता है। यदि अच्छे विचार मस्तिष्क में आते रहें तो मानसिक सन्तुलन बना रहता है और वह मनःसंस्थान अधिक सक्षमता के साथ कार्य करता रह सकता है।

भूख के कारण रोग उत्पन्न होने की सम्भावना को नकारते हुए डा० जेम्स फील्ड ने कहा है कि 'भूख के कारण रोगों का सामना करना पड़ता है, यह सोचना गलत है। सही बात तो यह है कि अधिकांश रोग भोजन के कारण ही होते हैं क्योंकि तब मस्तिष्क की शक्ति अन्य क्रियाओं के साथ भोजन को पचाने में जितना योगदान दे सकती है उतना नहीं दे पाती। अतः यह तथ्य भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि शरीर में शक्ति का स्रोत भोजन नहीं मस्तिष्क है और शक्ति सम्पन्न, स्वस्थ तथा पुष्ट शरीर के लिए भोजन से अधिक मानसिक स्थिति का सन्तुलित होना अधिक आवश्यक है।

अमेरिका के मनशास्त्री डा० जान ए० शिण्डलर ने अपनी पुस्तक "रुग्णता की गहराई" में लिखा है—'आहार-विहार की अनियमितता से जितने रोग होते हैं उसकी तुलना में मानसिक असन्तुलन के कारण उत्पन्न होने वाले रोगों की संख्या कहीं अधिक है।

शरीर की संरचना ऐसी है कि वह बाहरी हमलों, टूट-फूटों और प्रतिकूलताओं से जूझती और छुट-पुट गड़बड़ियों का मुकाबला करती रह सके। अन्य प्राणियों को भी प्रतिकूलताओं का सामना करना पड़ता है और आघातों को सहने तथा कष्टकारक स्थिति में होकर गुजरने के लिए विवश होना पड़ता है। इतने पर भी उनके शरीर गड़बड़ाते नहीं, पटरी बिठा लेते हैं और टूट-फूट को सम्भालकर अपनी गाड़ी चलाते रहते हैं। चोटें तो लगती हैं, पर उनमें से किसी को बीमारियों के चंगुल में फँसकर कराहते रहने की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता।

मनुष्य ही है, जो मानसिक असन्तुलन उत्पन्न करता है और उनके विक्षोभों के फलस्वरूप शरीर के विभिन्न अवयवों को सामान्य कार्य पद्धति में अवरोध उत्पन्न करता है। फलतः बीमारियाँ उसे आ घेरती हैं।

शरीर यात्रा में रक्त संचार का कितना ही महत्व क्यों न हो, वस्तुतः उसका नियन्त्रण केन्द्र मस्तिष्क में रहता है। हृदय पोषण देता यह सही है पर उसमें प्रोत्साहन एवं नियमन की क्षमता नहीं है, यह कार्य मस्तिष्क का है। उसी के ज्ञान तन्तु मेरुदण्ड के माध्यम से समस्त शरीर में फैलते हैं और निर्देश देकर सारे काम कराते हैं। मस्तिष्क में नींद आने लगे तो अन्य अङ्ग सहज ही शिथिल होते चले जाते हैं। आकुंचन-प्रकुंचन, निमेष-उन्मेष, श्वास-प्रश्वास जैसी प्रक्रियाएँ अचेतन मन-संस्थान के इशारे पर ही चलती हैं। जीवनी शक्ति भोजन से नहीं वरन् मनोगत साहसिकता और प्रसन्नता के आधार पर मिलती और पनपती है। यदि इस केन्द्र में गड़बड़ी चले तो उसका प्रभाव शरीर के विभिन्न अवयवों पर पड़े बिना रह नहीं सकता।

रोगों की जड़ शरीर में हो तो कार्य चिकित्सा में सहज सुधार होना चाहिए। पोषण की पूर्ति आहार से होनी चाहिए और विषाणुओं को औषधि के आधार पर हटाने में सफलता मिलनी चाहिए। किन्तु देखा जाता है कि जीर्ण रोगियों की काया में रोग इस बुरी तरह रम जाते हैं कि उपचारों की पूरी-पूरी व्यवस्था करने पर भी हटने का नाम नहीं लेते। एक के बाद दूसरे चिकित्सक और नुस्खे बदलते रहने पर भी रुग्णता से पीछा नहीं छूटता। इलाज के दबाव में बीमारियाँ रङ्ग-रूप बदलती रहती हैं, पर जड़ें न कटने से टूटे हुए फिर से नई कोपलों की तरह उगते रहते हैं। जड़ों को खुराक मिलती रहे तो टहनियाँ तोड़ने से भी पेड़ सूखता नहीं है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर और मनःशास्त्र के मूर्धन्य विशेषज्ञ डा० हेन्स सिली ने अपने अस्पताल के प्रायः तीन हजार रोगियों की कई प्रकार से जाँच-पड़ताल की और वे इस नतीजे पर पहुँचे कि पुराने रागियों में से अधिकांश की व्यथा मनःक्षेत्र की विकृतियों से सम्बन्धित थी। दवादारू के प्रयोग उन पर कारगर नहीं हुए। किन्तु जब मानसोपचार आरम्भ किया गया और उनके चिन्तन के क्षेत्र में घुसी हुई अनुपयुक्त मान्यताएँ हटाई गईं तो वे बिना दवादारू के ही अच्छे होने लगे और खोया हुआ स्वास्थ्य पुनः वापिस प्राप्त कर सके।

सत्ताईस साल के प्रयोगों के उपरान्त डा० सीली का निष्कर्ष यह है कि गर्दन एवं कमर दर्द के रोगियों में से ७५ प्रतिशत, थकान, तनाव और सिर-दर्द वालों में से ८० प्रतिशत, उदर रोगियों में ७० प्रतिशत, गाँठों की जकड़न वालों में ६४ प्रतिशत और रक्तचाप हृदय रोगियों में ६० प्रतिशत मानसिक असन्तुलन के कारण इन व्यवस्थाओं में फँसे और मूल स्थिति यथावत बने रहने के कारण अनेकों चिकित्साएँ परिवर्तित करते रहने पर भी अस्वस्थ बने रहे। व्यथा से छुटकारा तब मिला जब वे अपनी मान्यताओं और सन्तुलनों से छूटने के उपाय अपनाने पर सहमत हुए।

जर्मनी की मनोविज्ञान शोध परिषद् ने सम्पन्न और निर्धन परिवार के एक-एक सौ बच्चे स्वास्थ्य परीक्षण के लिए चुने गये। पाया गया कि सुविधा एवं असुविधा के कारण उनके स्वास्थ्य में कोई अन्तर नहीं पड़ा। बढ़िया और घटिया भोजन के रहते हुए भी उनके बीच स्वास्थ्य सम्बन्धी कोई बड़ा अन्तर नहीं पाया गया । किन्तु जब दूसरे सौ-सौ बच्चों को इस दृष्टि से जाँचा गया कि पारिवारिक परिस्थितियों का उन पर क्या असर पड़ता है तो तथ्य बिलकुल दूसरे ही सामने आये। मालूम पड़ा कि जिनके परिवार में तनाव, मन-मुटाव, असन्तोष, विग्रह रहता था बच्चे न केवल दुर्बल पाये गये वरन् बीमारियों तथा बुरी आदतों के भी शिकार बने हुए थे। इसके विपरीत जिन घरों में स्नेह, सौजन्य और सहयोग का वातावरण था वे न केवल शारीरिक दृष्टि से सुदृढ़ वरन् मानसिक दृष्टि से भी कुशल पाये गये।

अब यह तथ्य क्रमशः अधिक उजागर होता जा रहा है कि शरीर मात्र रासायनिक पदार्थों का ढाँचा नहीं है वरन् उसकी दृढ़ता एवं क्षमता पर मनःस्थिति का भारी प्रभाव रहता है। आहार-विहार का कितना ही महत्व क्यों न हो, पर मानसिक सन्तुलन के बिना सुविधाओं और अनुकूलताओं के रहते हुए सुदृढ़ आरोग्य प्राप्त कर सकना सम्भव नहीं। इस निष्कर्ष पर पहुँचने के उपरान्त अब चिकित्सा क्षेत्र के मूर्धन्य यह सोचने लगे हैं कि मानवी स्वास्थ्य की समस्याओं का स्थायी समाधान उनके चिन्तन में हल्कापन लाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। जो मनोविकारों से दबे हुए हैं, उन्हें उनसे छुड़ाने की प्रक्रिया को चिकित्सा विज्ञान में सम्मिलित करना चाहिए।

अमेरिकी मनोवैज्ञानिक चिकित्सक रेबेका ने अनेकों रोगियों की चिकित्सा के उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला कि बेहद अहंकार की भावना से शरीर के कई अङ्ग कठोर हो जाते हैं और व्यर्थ अहङ्कारी जीवन जीने तथा असली रूप छिपाने से हृदय कठोर हो जाता है और मूत्राशय में पथरी रोग पनपता देखा गया है।

घृणा, ईर्ष्या, क्लेश-कलह के भावों से भीतर नसों में रस या रक्त प्रवाह मन्द हो जाता है। इन्हीं महिला चिकित्सक का मत है कि निरशंक, प्रसन्नता और निर्भय भावना शरीर के भीतरी अङ्गों में तेल मालिश का काम करती है।

देखा गया है कि मन के उतार-चढ़ावों का प्रभाव शरीर पर तत्काल पड़ता है। क्रोध आने से चेहरा लाल पड़ जाता है, रक्त संचार की गति बढ़ जाती है, शरीर काँपने लगता है। इसके विपरीत शोक के समय चेहरा पीला पड़ जाता है, आदमी चिन्तित, बेहाल हो जाता है। बार-बार क्रोधित या आवेशित होने से आमाशय, पक्वाशय, संचार, तिल्ली, जिगर, रक्तवाहनियों आदि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जबकि भय व शोक के समय रक्तवाहिनयाँ संकुचित हो जाती हैं। रक्त प्रवाह धीमा पड़ जाता है, जिससे नाना प्रकार की बीमारियाँ धर पकड़ती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भले या बुरे विचार अपना प्रभाव धीरे-धीरे मनुष्य की मनःस्थिति पर छोड़ते-छोड़ते स्थायी रूप धारण कर लेते हैं, जिससे उनके ही अनुरूप मन का स्थायी निर्माण होता है। सद्विचारों से , जहाँ शारीरिक, मानसिक कार्य-क्षमता की वृद्धि होती है, उसके विपरीत कुविचारों का दुष्परिणाम यह होता है कि रक्तचाप, मधुमेह, अपच, नपुसंकता आदि के रोग प्रकट होने लगते हैं। इस वर्ग के रोगों को मानस रोगों की श्रेणी में रखा जा सकता है।

स्वास्थ्य समस्या का वास्तविक समाधान खोजने वाले रोगियों, विचारकों एवं चिकित्सकों को इस तथ्य को समझना होगा कि आरोग्य का स्थिर रहना एवं गड़बड़ाना अधिकतर मानसिक सन्तुलन पर निर्भर रहता है। अवांछनीय चिन्तन से बचकर हल्की-फुल्की जिन्दगी जीने की नीति पसन्द की जा सके तो भयावह नजर आती स्वास्थ्य समस्या को सरलतापूर्वक सुलझाया जा सकता है।

हल्के-फुल्के रहें, स्वस्थ बनें

शरीर स्वतन्त्र रूप से कुछ भी नहीं करता। वह तो एक यन्त्र मात्र है, जिसका संचालन मन रूपी यान्त्रिक करता है। भारतीय मनीषियों ने इसे एक रथ बताया है और मन को सारथि कहा है। सारथि रथ की उचित देखभाल नहीं करेगा तो उसका टूटना-फूटना स्वाभाविक है। मन भी यदि कुमार्गगामी, कुसंस्कारी है तो उसका प्रभाव शरीर के रोगाक्रांत होने के रूप में लक्षित होता है। अब तक समझा जाता था कि रोग बीमारियों का कारण मनुष्य के शरीर में ही कहीं विद्यमान है। उन्हीं का उपचार किया जाता था, किन्तु चिकित्सा विज्ञान क्रमशः इस निष्कर्ष पर पहुँचता जा रहा है कि बीमारियाँ शरीर में उत्पन्न नहीं होतीं बल्कि मन से उपजती हैं।

तीन सौ से भी अधिक रोगियों का अध्ययन कर डा० जेम्स चार्ल्स ने एक कर्नल के बेटे का उदाहरण देते हुए कहा है कि छोटी-मोटी बीमारियाँ ही नहीं रक्तचाप, यक्ष्मा, कैन्सर तथा हृदय रोग जैसी भयावह बीमारियाँ भी मानसिक कारणों से उत्पन्न होती हैं। उन्होंने रक्तचाप के एक मरीज का विचित्र केस सुलझाया। यह रोग आमतौर पर बड़ी उम्र में होता है, परन्तु उनके पास जो मरीज लाया गया था वह २१ वर्ष का युवक था। पिता मिलेट्री में कर्नल थे। अच्छा खासा सम्पन्न परिवार था। किसी बात की कमी नहीं, किसी तरह की चिन्ता नहीं। स्वास्थ्यप्रद भोजन, माता-पिता का भरपूर लाड़-प्यार और हर तरह के साधन सुविधाएँ, फिर यह रोग क्यों उत्पन्न हुआ ?

कारणों को कुरेदते हुए डा० जेम्स चार्ल्स ने उसकी पिछली जिन्दगी में झाँका। बीमारी की जड़े उस समय पड़ी थीं जब लड़के ने अपने पिता की जेब से दस रुपये का एक नोट निकाला और सिनेमा देख आया। कर्नल के पास वैसे ही पैसों की कमी नहीं थी। बेफिक्र और पैसे वाले कर्नल साहब को यह भी पता नहीं रहता था कि उनकी जेब में कितने पैसे हैं ? सो ध्यान नहीं गया। एक बार पैसे निकाल लेने पर जब उसकी कोई प्रतिक्रिया देखने में नहीं आई तो लड़के ने समझ लिया पिताजी बाबले हैं, उन्हें कुछ पता नहीं चलता और फिर जो सिलसिला चल पड़ा तो ऐसा चला कि लड़का बड़ी रकमों पर हाथ साफ करने लगा। कुसंगति में पड़कर वह शराब भी पीने लगा और दूसरी गन्दी बातों में भी पैसा खर्च करने लगा।

दूसरे लोगों से अपने बेटे की हरकतों के बारे में जब कर्नल साहब को पता चला तो उन्होंने लड़के को बुरी तरह डाँटा। गन्दा नाला एक बार बह निकलता है तो दुर्गन्ध भी अभ्यास में आ जाती है और वह स्वाभाविक लगने लगती है। फिर यदि उस नाले को एकाएक रोक दिया जाए तो दुर्गन्ध एक ही स्थान पर यकायक तीव्र हो उठती है। ऐसा ही हुआ। कर्नल साहब ने एकाएक ब्रेक लगाया तो लड़के के मानसिक कुसंस्कार एक स्थान पर रुककर मानसिक निराशा और आतंक के रूप में सड़ने लगे। उसे हाई ब्लडप्रेशर की बीमारी हो गई। काफी इलाज कराया गया परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में उसे जेम्स चार्ल्स के पास ले जाया गया जो अपनी मनोवैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति के लिए काफी प्रसिद्ध थे। डा० जेम्स ने सहानुभूतिपूर्वक लड़के का इलाज किया तथा उससे पिछली सारी बातें उगलवाईं, उसके मन से भय और आतंक के काँटे बीने। तब कहीं जाकर वह पूरी तरह स्वस्थ हो सका।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डा० जेम्स ने अपनी पुस्तक "हाऊ टू गेट फिजिकल एण्ड मेण्टल हेल्थ" में लिखा है कि अधिकांश बल्कि लगभग सभी रोगों की जड़ शरीर में नहीं मन में होती है। संताप, कष्ट, आकस्मिक विपत्ति, अप्रत्याशित दुर्घटनाओं के कारण तो सैकड़ों लोग असमय में ही दम तोड़ देते हैं, परन्तु कई मनोविकार धीरे-धीरे अपना प्रभाव उत्पन्न करते हैं तथा मनुष्य को रुग्ण बनाते हैं। दीर्घकाल के सन्ताप से रक्त संचार मन्द पड़ जाता है, चेहरा पीला, त्वचा शुष्क और आँखें गन्दली हो जाती हैं।"

इसी सिद्धान्त की पुष्टि करते हुए डा० आल्स्टन ने कहा है—यह शरीर का साधारण नियम है कि आमोद-प्रमोद, आशा, प्रेम और स्वास्थ्य एवं सुख की कामना शरीर को सुदृढ़ तथा उसे भरपूर स्वास्थ्य प्रदान करती है। वहीं यह भी एक तथ्य है कि भय, उदासीनता, ईर्ष्या, घृणा, निराशा अविश्वास और अन्य मनोविकार शरीर के क्रिया व्यापार को भी रुग्ण बनाते हैं।"

एल्मा ममेरियन का कथन है कि "मन-क्षेत्र में जमा हुआ कोई विचार जब बहुत अधिक क्षुब्धता उत्पन्न करता है, तब उसकी प्रतिक्रिया कम ज्यादा रूप में शरीर पर भी प्रकट होती है। कई बार तो यह प्रभाव इतना अधिक होता है कि मृत्यु तक हो जाती है।" मेअल्से का कथन है कि क्षोभ के कारण शारीरिक पोषण में निश्चित रूप से रुकावट या व्यक्तिक्रम आता है। इसके कारण रक्तवाहिनी नलियाँ असामान्य रूप से फैलती और सिकुड़ती हैं।

अफ्रीका में रहने वाले व्यक्तियों का स्वास्थ्य परीक्षण करते समय पाया गया है कि सामान्यतः वे स्वस्थ रहते हैं, उन्हें कभी-कभार ही कोई रोग होता है। देखा गया है कि अफ्रीकी लोग तभी बीमार होते हैं जब या तो वे क्रोधित अथवा किसी विपत्ति के कारण भयभीत हो जाते हैं। सर रिचर्डसन ने प्रमेह रोग पर अनुसंधान करते हुए पाया है कि कई बार प्रमेह रोग नहीं होता, फिर भी उसी जैसी वेदना, पीड़ा और लक्षण उभर आते हैं। परीक्षण करने पर उस स्थिति में यद्यपि प्रमेह के कोई कारण नहीं दिखाई देते किन्तु रोग की पीड़ा वैसी ही होती है। इसका कारण उन्होंने अचानक किसी मानसिक आघात का पहुँचना पाया है।

बहुत अधिक चिन्ता करने या किसी चिन्ता में घुलते रहने के कारण त्वचा सम्बन्धी रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं। डा० जार्ज पेगेट के अनुसार फोड़े-फुन्सियाँ रक्त विकार की अपेक्षा चिन्ता और तनाव के कारण ही अधिक होती हैं और रक्त विकार भी प्रायः मानसिक कारणों से ही उत्पन्न होता है। पेगेट ने अपनी पुस्तक 'द हेण्ड बुक ऑफ साइकोथैरेपी' में लिखा है—बहुत-से लोगों को, जो त्वचा सम्बन्धी रोगों से पीड़ित हैं, देखने के बाद और उनका परीक्षण करने पर मुझे विश्वास हो गया है कि इनका प्रमुख कारण बहुत अधिक और लम्बे समय तक चिन्ता करना ही रहा है। इसी पुस्तक में डा० मुर्चिसन के प्रयोगों को उद्धृत करते हुए जार्ज पेगेट ने लिखा है कि फेंफड़े सम्बन्धी रोगों का प्रमुख कारण लम्बे समय तक किसी मानसिक आघात को सहते रहना है। इतना ही नहीं पथरी और वक्षस्थल के कैंसर जैसे रोगों का कारण भी दिन-रात चिन्ता में घुलते रहना है।

डा. रिचर्डसन् ने लिखा है कि बेमन से लगातार मानसिक श्रम करते रहने के कारण चमड़ी पर खरोंच तथा अन्य त्वचा सम्बन्धी बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। उनके अनुसार क्रोध, आवेश और उत्तेजना के समय अथवा निराशा और हताशा की मनःस्थिति में शरीर के भीतर विषैले रसायन उत्पन्न हो जाते हैं।

इन शारीरिक रोगों के अतिरिक्त कई बीमारियाँ तो मानसिक ही होती हैं। उन्हें मनोरोग ही कहा जाता है। यद्यपि इन मनोरोगों के लक्षण शरीर पर भी प्रगट होते हैं, परन्तु मुख्यतः इनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध मन से ही होता है। हताशा रहने तथा अकारण किसी बात को लेकर भयभीत होने की दो बीमारियाँ जिन्हें मनःशास्त्री डिप्रेशन तथा फोबिया कहते हैं, आधुनिक सभ्यता की देन कही जा सकती हैं। इस तरह के रोगी सामाजिक और पारिवारिक कर्त्तव्यों के प्रतिकूल गाँव की-सी भावना रखते हैं। बात-बात में चिढ़ जाना या उबल उठना तथा इस प्रकार चिड़िचिड़ा जाने, गरम होने के बाद अचानक रोने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य ४.१४

लगने के प्रमुख लक्षण इन रोगियों में देखे जा सकते हैं।

इस तरह के रोगियों के लिए मनोविज्ञान चिकित्सा, रिक्रियेशनल अथवा एक्यूपेशनल थैरेपी आदि प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का उपयोग किया जाता है। रोगी की मानसिक सम्पन्नता और स्थिरता के लिए उसे किस प्रकार के वातावरण में रखा जाय ? कैसे बातचीत की जाय ? क्या सुझाव और परामर्श दिये जाएँ आदि सब बातों का ध्यान रखा जाता है। इन सबके पूर्व उससे पिछले जीवन की सारी गुप्त और प्रकट बातों को बता देने के लिए यह कह दिया जाता है। कारण कि अनेकों प्रयोगों और प्रमाणों के द्वारा यह सिद्ध हो गया है कि रोगों की जड़ें मनुष्य के मन में जमे हुए कुसंस्कार ही होते हैं।

रोगी के रोग का सम्पूर्ण उपचार करने के लिए अब चिकित्सा विज्ञानी उसके व्याधि लक्षणों की अपेक्षा उसके स्वभाव, आदतों, कार्यों, चिन्ताओं का पर्यवेक्षण करने पर अधिक जोर देने लगे हैं। जहाँ तक छोटी-मोटी भूलों के कारण रोग उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है, वहाँ निष्कासन प्रयोग अधिक सफल और प्रभावशाली सिद्ध हुआ है, किन्तु अपराध मनोवृत्ति के और उन संस्कारों को जिन्हें रोगी स्वयं नहीं पहचानता, उन्हें मनोवैज्ञानिक कैसे ठीक कर सकता है ? उसके लिए प्राचीनकाल में भारतीय मनीषियों ने कृच्छ चान्द्रायण जैसे तपश्चर्या प्रधान व्रतों का निर्धारण किया था। मनोवैज्ञानिक भी अब इस विधि की कारगर प्रभावशीलता को एक स्वर से स्वीकार करने लगे हैं। कृच्छ चान्द्रायण में जब शरीर में अन्न ही नहीं पहुँचता तो तात्कालिक बुरे विचार शिथिल पड़ जाते हैं और अन्तर्गत में दबे हुए जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार स्वप्नों के रूप में, अनायास विचारों के रूप में निकलकर साफ होने लगते हैं।

इस पद्धति की वैज्ञानिकता का परीक्षण करने से पूर्व प्रचलित मनोचिकित्सा पद्धति सिद्धान्ततः सही सिद्ध होने पर भी व्यावहारिक दृष्टि से कुसंस्कारों को और भी उकसाने वाली तथा मन में नई उत्तेजनाएँ भरने वाली सिद्ध हो रही थी। हिस्टीरिया के मामले में विशेषतः ऐसा ही होता है, जिसे भूत-प्रेत का प्रकोप भी कहा जाता है। वह वस्तुतः किसी ऐसे व्यक्ति की मानसिक चेतना होती है जिसके साथ रोगी ने कभी छल किया हो, कपट किया, हत्या या ऐसा ही कोई बुरा कृत्य किया हो जिससे शरीर के नष्ट हो जाने पर भी पीड़ित व्यक्ति की चेतना में उससे प्रतिशोध लेने की बात दबी रह जाती है। चेतना का वही संघात, भले ही पीड़ित व्यक्ति जीवित हो अथवा मृतक प्रेत पीड़ा जैसे लक्षण उत्पन्न करता है।

साइकोसोमैटिक रोग प्रत्यक्ष में शारीरिक होते हैं, किन्तु उनकी जड़ मानसिक विकारों में ही होती है। मस्तिष्क का विचार संस्थान उस नाड़ी जाल को प्रभावित करता है, जो शरीर में गूँथा पड़ा है। अच्छे विचारों के उमड़ने से शरीर में स्वास्थ्यवर्धक और आरोग्यवर्धक रस उत्पन्न होते हैं, जो रक्त में मिलकर स्वास्थ्य पोषक तत्व उत्पन्न करते हैं। उसी प्रकार खराब विचार विष उत्पन्न करते हैं। अतएव यह बात निर्विवाद सत्य है कि आज की बढ़ती हुई बीमारियों का इलाज औषधियाँ नहीं, विचार और चिन्तन प्रक्रिया में संशोधन ही है। दूषित विचार मानसिक परेशानी के रूप में उत्पन्न होते हैं तथा अल्सर, कैंसर, टी. वी. जैसे भयंकर रोगों के रूप फूट पड़ते हैं। कई बार तो कई जन्मों के संस्कार इस बुरी तरह पीछा करते हैं कि उन्हें समझ पाना ही कठिन होता है। उन सबका एक ही उपचार है कि मनुष्य व्यवहार, आचरण और कर्तत्व में सच्चाई का परित्याग न करे।

स्वस्थ रहने के लिए उच्चस्तरीय स्वार्थ साधन की आवश्यकता और महत्ता को विज्ञान भी स्वीकार करने लगा है। कार्ल रोजर ने 'सेल्फ एक्यूअलाइजेशन' नामक ग्रन्थ में लिखा है कि स्वार्थ और परोपकार यों एक-दूसरे के विरोधी सिद्धान्त प्रतीत होते हैं, परन्तु व्यवहारतः उनमें कहीं भी कोई विरोध नहीं है। जो दूसरों का जितना हित साधन करता है, औरों की भलाई के लिए अपने स्वार्थ का त्याग करता है, वह उतना ही अपने उच्च स्वार्थ की पूर्ति कर लेता है।

रूस के प्रसिद्ध चिकित्सा शास्त्री डा० स्तीव शैंकमान ने लिखा है कि सभी प्रकार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुविचारों से दूर रहना प्रसन्न रहने का सबसे उत्तम उपाय है। उन्होंने 'निरोग रहने के छह उपाय' पुस्तक में लिखे हैं कि अधिक से अधिक प्रसन्न रहने का प्रयत्न कीजिए। यदि आपकी परेशानियाँ इतनी अधिक बढ़ गई हैं और चिन्ताओं का बोझ बेतहाशा बढ़ गया है कि आप उसे और अधिक सह नहीं सकते तो किसी उपयुक्त व्यक्ति के सामने अपनी परेशानियाँ उँड़ेलकर उसकी सहानुभूति प्राप्त कीजिए तथा प्रसन्न होने का प्रयास कीजिए। किसी को अपना हमराज भी बनाया जा सकता है और वह हमराज कोई भी हो सकता है। अपनी पत्नी, माता, पिता, दोस्त आदि कोई भी। जिसे आप उपयुक्त समझते हैं, उसके सामने अपनी परेशानियाँ जी खोलकर उँड़ेल दीजिये ताकि आप स्वस्थ और प्रसन्न रह सकें।

प्रसन्न रहना सब रोगों की एक दवा है और प्रसन्न रहने के लिए आवश्यक है अपना जीवन निष्कलुष बनाया जाए। निष्कलुष, निष्पाप, निर्दोष, पवित्र और हल्का जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति ही सभी परिस्थितियों में प्रसन्न रह सकता है। प्रसन्न मनःस्थिति ही वह नींव है जिस पर शरीर रूपी भवन का निर्माण होता है।

चिकित्सा हेतु शरीर नहीं मन को टटोलिए

मन का एक भाग जिसे विज्ञान की भाषा में मस्तिष्क भी कहा जाता है, शरीर की स्वसंचालित प्रक्रियाओं को सम्पन्न करता है। रक्त संचार, श्वांस-प्रश्वांस, आकुंचन-प्रकुंचन, निद्रा, स्पन्दन, मल विसर्जन आदि क्रिया कलापों पर मन के इसी भाग का नियन्त्रण होता है। दूसरे सचेतन भाग द्वारा विभिन्न प्रकार के जीवन व्यवहार सम्पन्न होते हैं और वह दसों इन्द्रियों के अङ्ग प्रत्यंगों के क्रिया व्यापार का नियमन करती है। इस प्रकार मन को शरीर राज्य का अधिपति कहा जा सकता है।

समाज व्यवस्था में उत्पन्न होने वाली गड़बड़ियों को भले ही पूरी तरह शासन सत्ता को उत्तरदायी न ठहराया जा सके क्योंकि समाज में ऐसे तत्वों का अस्तित्व भी रहता है जो शासन सत्ता को चुनौती देते हैं और उसकी व्यवस्था में रुकावट डालते हैं। पर शरीर के सम्बन्ध में ऐसा कुछ नहीं है। वह निर्विवाद रूप से मन की इच्छा कहना चाहिए। यह ऐसा राज्य है जिस पर मन का एकछत्र और निर्द्वन्द्व शासन है। इस तथ्य को जानने के बाद यह मानने से इंकार करने का कोई कारण नहीं है कि मन को असंतुलित करने का अर्थ न केवल शोक-संतापों में डूबना और असंतोष उद्वेग की आग में जलना है वरन् अच्छे-भले शरीर को भी रोगी बना डालना है। विज्ञान भी इस निष्कर्ष पर पहुँचता जा रहा है कि रोगों का कारण शरीर में नहीं मन में है। वहीं सारे रोग जन्म लेते हैं और शरीर को विभिन्न रूपों में खोखला बनाते हैं।

अमेरिका के मानसिक रोग विज्ञानी राबर्ट डी राय ने व्यापक सर्वेक्षण के बाद यह प्रतिपादन किया कि असाध्य समझे जाने वाले अधिकांश रोगों का कारण मनुष्य मन में विद्यमान रहने वाली दुश्चिन्ताएँ, कुंठाएँ, उलझनें, ग्रन्थियाँ और चिंतन की विकृतियाँ हैं। अरब देश में कुछ शताब्दियों पूर्व एक विख्यात् चिकित्सक हुआ है हकीम इब्नसीना। उसने अपनी पुस्तक 'कानून' में ऐसे अनेक अनुभवों का उल्लेख किया है कि अमुक प्रकार के मानसिक उभारों के कारण शरीर में अमुक प्रकार की विकृतियाँ अथवा बीमारियाँ उठ खड़ी होती हैं। चिकित्सा उपचार में इब्नसीना ने दवादारू के स्थान पर रोगी की मनःस्थिति बदलने के उपाय किये और उससे असाध्य लगने वाले रोग भी असानी से अच्छे हो गये।

जटिल से जटिल रोग मानसिक कारणों से ही उत्पन्न होते हैं। साधारण रोगों की जड़ में भी यही मानसिक विकृतियाँ बैठी रहती हैं। कनाडा के एक शरीरशास्त्री और मनोविज्ञानी डा० डानियल कापोन के अनुसार, तमाम उपचारों के बाद भी काबू में न आने वाला साधारण सा रोग जुकाम केवल मानसिक कारणों से ही उत्पन्न होता है। शरीरशास्त्रियों के अनुसार जुकाम के भी विषाणु होते हैं, पर उनकी प्रकृति अन्य सजातियों से सर्वथा भिन्न होती है। चेचक, पोलियो आदि रोगों का आक्रमण एक बार होने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर शरीर में उस रोग से लड़ने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है। फलतः इन रोगों के दुबारा आक्रमण का खतरा नहीं रहता लेकिन जुकाम के बार में यह बात लागू नहीं होती। वह कई बार आता है और लगातार बना रहता है। जिस दवा से एक बार अच्छा हो जाता है दुबारा उससे अच्छा नहीं होता। सही बात तो यह है कि दवाओं से वह ठीक ही नहीं होता। मन बहलाने के लिए चाहे जो दवायें ली जाती रहें लेकिन वास्तव में जुकाम की कोई दवा नहीं होती।

इसका कारण बताते हुए डा० डानियल कापोन का मत है कि जुकाम इतना शारीरिक रोग नहीं है जितना कि मानसिक। जब मनुष्य थक-हारकर निहाल हो जाता है, उसे अपनी असफलताएँ निकट दिखाई देने लगती हैं तो मन उस लांछन से बचने के लिए वह जुकाम बना लेता है ताकि दूसरे उसकी हार का दोष इस आपत्ति के सिर मढ़ते हुए उसे निर्दोष ठहरा सकें। डा० कापोन का मानना है कि यह रोग वस्तुतः अनार्मन का अनुदान है जो व्यक्ति को थोड़ा सा शारीरिक कष्ट देकर उसे असफलता के लाँछन से बचाता है। ऐसी स्थिति में रोगी बहुत हद तक पराजय की आत्म प्रताड़ना से बच जाता है। जुकाम की दैवी विपत्ति टूट पड़ने से वह हारा या असफल हुआ। इसकी योग्यता, हिम्मत एवं चेष्टा की कहीं कोई कमी नहीं थी। यह मान लेने पर मनुष्य को सांत्वना की एक हलकी थपकी मिल जाती है। इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए अंतःचेतना जुकाम का ताना-बाना बुनती है।

इस प्रतिपादन की पुष्टि में कोपीन ने अनेकों प्रमाण प्रस्तुत किये। उदाहरण के लिए उन्होंने कहा—खिलाड़ी लोग प्रतियोगिता के दिनों में, विद्यार्थी परीक्षा के दिनों में, प्रत्याशी चुनाव तिथि पर अक्सर जुकाम से पीड़ित होते हैं, इन में अधिकांश ऐसे होते हैं, जिन्हें अपनी सफलता पर सन्देह होता है और हार की कल्पित विभीषिका उनकी मनःचेतना को जुकाम निमंत्रित करने के लिए विवश करती है। हालाँकि जुकाम के विषाणु होते हैं। ऐसी बात नहीं है कि वे होते ही नहीं, उनका अस्तित्व होता है। पर शरीर में जिस प्रकार अन्य रोगों को लड़ भगाने की प्रतिरोधी क्षमता होती है, उसी प्रकार जुकाम के रोगाणुओं को मार-काट देने की क्षमता रहती है। दूसरे, जुकाम के विषाणु इतने कमजोर होते हैं कि वे अन्य रोगों के समान मनुष्य के लिए कष्टकारक नहीं होते। चूहे, बन्दर आदि के शरीर में जुकाम के विषाणु प्रविष्ट कराये गये किन्तु उनके शरीर पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

यह मानना भी गलत है कि सर्दी के कारण जुकाम होता है। ध्रुव प्रदेशों के कड़ाके की ठिठुरा और जमा देने वाली शीत पड़ती है। फिर भी वहाँ निवास करने वाले एस्कीमो लोग अपनी सारी उमर उसी शीत में गुजार लेते हैं पर उन्हें कभी जुकाम नहीं होता। उस क्षेत्र में अन्वेषण के लिए जाने-वाले खोजी दलों का भी यह कथन है कि जब तक वे ध्रुव प्रदेश में रहे तब तक उन्हें जुकाम नहीं हुआ। इस विषय में किये गये शोध अन्वेषणों का निष्कर्ष यह है कि जुकाम का प्रकोप शीत ऋतु की अपेक्षा गर्मी के दिनों में अधिक होता है। इस सामान्य से रोग का उपचार करने के लिए कितनी ही औषधियाँ, चिकित्सा फार्मूले खोजे गये पर वे सभी असफल रहे। इसका मात्र एक ही कारण है कि जुकाम दीखने भर में शारीरिक रोग लगता है पर वस्तुतः यह है मनोरोग।

पिछले दिनों जर्मन पत्रिका 'मेडिजिनेश क्लीनिक' में एक लेख प्रकाशित हुआ उसमें कई चिकित्सा विज्ञानियों के अनुभव साररूप में छपे थे। लेख में कहा गया था कि शरीर के विभिन्न अंगों में होने वाली पीड़ा, वेदना आदि के लिए जितने कारण शरीर में विद्यमान होते हैं, उससे कहीं अधिक मानसिक कारण इसके लिए उत्तरदायी होते हैं।

इस लेख में मनःस्थिति के शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों का विवरण भी था। ऐसे कई प्रयोगों का उल्लेख इस प्रतिपादन की पुष्टि में किया गया था, जिनसे सिद्ध होता था कि शरीर मन मस्तिष्क का एकनिष्ठ आज्ञानुवर्ती सेवक है और उसे जैसे निर्देश मिलते हैं, वह उनका अक्षरशः पालन करता है। डा० जूलियस ने अपने कुछ प्रयोगों का विवरण लिखते हुए कहा है, "एक बार मैंने केवल डिस्टिल्ड वाटर की सुई लगाकर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोगी को यह बताया कि उसे गहरी नींद की दवा दी गई है। वह कई दिनों से अस्पताल में ठीक नींद नहीं ले पा रहा था। सुई लगाने के दस पन्द्रह मिनट बाद जब मैं उधर से निकला तो मैंने देखा कि वह गहरी नींद ले रहा है। एक-दूसरे रोगी को जिसे भी यही शिकायत थी, नींद लाने वाली तेज औषधि दी गई और कहा इससे थोड़ी नींद आ जायेगी और तुम्हारा दर्द भी हल्का पड़ जायेगा यह सन्देह पैदा करने के बाद रोगी को नींद नहीं आई और वह पूर्ववत् दर्द की शिकायत करता रहा।"

इस प्रयोग के बाद उन्हीं दवाओं के विपरीत निर्देश देकर, उनके दूसरे परिणाम बता कर दिया गया तो देखने में आया कि पहले से सर्वथा भिन्न प्रतिक्रिया हुई है। पहले दिन का पानी का इन्जैक्शन साधारण दवा बताकर लगाया गया तो उससे न दर्द कम हुआ न ही रोगी को नींद आई। इसके साथ ही दूसरे रोगी को नींद लाने का आश्वासन दिया गया तो उसे गहरी नींद आई। इन प्रयोगों के आधार पर डाक्टर जूलियस ने यह निष्कर्ष प्रतिपादित किया कि दवाएँ जितना परिणाम उत्पन्न करती हैं उनसे अधिक प्रभाव कहीं उनके सम्बन्ध में मान्यताओं का होता है।

इसके साथ ही यह भी एक तथ्य है कि एक ही तरह के दर्द को भिन्न-भिन्न मनःस्थिति के लोग अलग-अलग तरह से अनुभव करते हैं। डरपोक किस्म के रोगी किसी प्रकार के दर्द के कारण बुरी तरह चीखते-चिल्लाते हैं। मध्यम मनःस्थिति वाले मात्र हल्के-हल्के कराहते रहते हैं। लेकिन साहसी लोग उसी कष्ट को बहुत हल्का मानते हैं। युद्ध के मोर्चे पर घायल होने वाले सिपाही अपनी बहादुरी की मान्यता के आवेश में कम कष्ट अनुभव करते हैं जबकि उतने ही घाव लगने पर अन्य व्यक्ति कई गुना अधिक कष्ट अनुभव करते हैं।

भावनात्मक तनाव भी कई बार दर्द में परिणत हो जाता है। सिरदर्द, पेट का दर्द, जोड़ों का दर्द, छाती का दर्द, कमर का दर्द आदि दर्द शारीरिक कारणों से अधिक मनोवैज्ञानिक कारण उत्तरदायी होते हैं। इनके मूल में कोई चिन्ता, कोई आशंका, कोई भय, भावी अशुभ की आशंका अथवा भूतकाल की कोई दुःखद स्मृति काम करती है। मन की यह अवस्था शरीर के किन्हीं भी अंगों पर आच्छादित होकर उन्हें पीड़ा का अनुभव कराती है।

कई बार ऐसी स्थिति भी देखी गई है कि डाक्टर अपने समस्त निदान परीक्षण करने के उपरान्त भी रोगी में अस्वस्थता के कोई कारण नहीं जान पाता या कोई कारण का पता नहीं चलता। किंतु रोगी अपने को बराबर रोग से पीड़ित अनुभव करता है, कष्ट उठाता है, दिनों दिन दुबला होता जाता है और साधारण काम-काज करने में समर्थ नहीं रहता। यद्यपि रोग का कोई कारण पकड़ में नहीं आता फिर भी उसका कष्ट स्पष्ट दीख पड़ता है। यह कहा जाय कि रोगी ढोंग कर रहा है तो उसका भी कोई कारण समझ में नहीं आता, क्योंकि उस रुग्णता का पूरा भार रोगी को उठाना पड़ता है। इस प्रकार के विचित्र रोगों की जड़ खोज लेने में अब मनोविज्ञान सफल होता जा रहा है।

मनोविज्ञान के क्षेत्र में हुई नवीनतम खोजों के अनुसार इस प्रकार के विचित्र और न पकड़ में आने वाले रोगों का कारण मानसिक होता है। कोई पुरानी कटु अनुभूति मस्तिष्क के किसी भाग पर आक्रमण करती है और वहाँ के संतुलन को गड़बड़ा देती है। चूँकि मस्तिष्क की प्रत्येक कोशिका आपस में एक-दूसरे के साथ जुड़ी रहती है और आपस में कई प्रकार के आदान-प्रदान का क्रम चलता है। इसी प्रक्रिया के अन्तर्गत लगे हुए आघात सम्बद्ध केन्द्र तक ही सीमित न रहकर शरीर के अन्य अङ्ग अवयवों को भी प्रभावित करते हैं और वे अङ्ग भी रुग्णता अनुभव करने लगते हैं। शारीरिक दृष्टि से वह अङ्ग नीरोग रहता है किन्तु मस्तिष्क का विद्युत प्रवाह उस स्थान तक ठीक तरह से नहीं पहुँच पाता क्योंकि संवेदना अनुभव करने लगते हैं। शारीरिक दृष्टि से वह अङ्ग निरोग रहता है किन्तु मस्तिष्क का विद्युत प्रवाह उस स्थान तक ठीक तरह से नहीं पहुँच पाता क्योंकि संवेदना अनुभव करने वाले कोश रुग्णावस्था में पड़े रहते हैं। यह गड़बड़ी सम्बन्धित अङ्ग तक पूरी खुराक और सही निर्देश नहीं पहुँचने देती। इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचित्र स्थिति के कारण ही मस्तिष्क के संवेदना केन्द्र अमुक रोग जैसा अनुभव करते हैं। जबकि वास्तव में ऐसा होता नहीं। इस तरह के रोग न होने पर भी रोगी वस्तुतः कष्ट का वैसा ही अनुभव करता है जैसा कि वह अनुभव करता है। लेकिन डाक्टर के सामने भी यह समस्या रहती है कि वह क्या करे और क्या न करे ? इस तरह की मानसिक गुत्थियों और उलझनों की उसे जानकारी नहीं होती। इसलिए ऐसे रोगियों को मनश्चिकित्सक के पास जाने की सलाह देकर वह अपना पिंड छुड़ा लेता है।

मानसिक कारणों से इस तरह के रोग कैसे प्रकट होते हैं ? इस प्रश्न का निश्चित उत्तर डाक्टरों के पास नहीं है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की अलग-अलग मनोभूमि होती है। उसके मनःसंस्थान की अलग-अलग संरचना होती है। इसलिए सबके सम्बन्ध में एक जैसा विवेचन लागू नहीं होता। कई व्यक्ति आये दिन अपमान सहते हैं और उसके इतने अभ्यस्त हो जाते हैं कि उन पर अपमान का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। कई व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जो साधारण सी बात को बहुत अधिक महत्व देकर तड़प उठते हैं क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी मनःस्थिति के अनुसार एक ही घटना का अलग-अलग विवेचन करता है। कौन किस घटना पर कैसी प्रतिक्रिया अनुभव करेगा, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। मानसिक और कानूनी मापदण्ड निश्चित रहते हैं कि इस तरह का आचरण असामाजिक या आध्यात्मिक कहा जायेगा। लेकिन किसको कौन-सा व्यवहार कितना अप्रिय लगता है, इसका निश्चित मूल्यांकन करने के लिए कोई मापदण्ड नहीं है।

कितने ही व्यक्तियों के सामने हत्या, मार काट और उत्पीड़न के दृश्य आते रहते हैं। उन पर इनका कोई विशेष प्रभाव नहीं होता, किन्तु अभ्यस्त और भावुक व्यक्ति पर उन्हीं घटनाओं का ऐसा प्रभाव पड़ता है कि वह किसी भयङ्कर अवसाद में डूब जाता है अथवा विक्षिप्त हो उठता है। अपमान, असफलता, हानि, बिछोह, जैसी अप्रिय घटनाएँ भी मनुष्य जीवन में घटती रहती हैं। इनकी सम्भावनाओं को न निर्मूल किया जा सकता है और न ही इनसे इन्कार किया जा सकता है। जब सम्मान, सफलता, लाभ, मिलने जैसे प्रसन्नतादायक प्रसंग जीवन में आते रहते हैं तो उससे भिन्न प्रकार की घटनाओं के घटित न होने का कोई कारण नहीं हो सकता। रात और दिन की तरह जीवन की रचना भी प्रिय और अप्रिय प्रसंगों से मिलकर हुई है। सदा एक जैसी स्थिति बने रहना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है।

धनवान, बलवान, विद्वान व्यक्तियों को भी प्रियजनों के बिछोह, इच्छापूर्ति में बाधा और असफलता, शारीरिक रुग्णता तथा छल-कपट जैसा व्यवहार दुःख का कारण बन सकता है। इन सबसे ज्यादा मानसिक संतुलन को गड़बड़ा देने वाला कारण है—अपने ही रचे हुए कल्पना लोक में अवांछनीय चिन्तन का चल पड़ना। आशंकाएँ प्रायः इसी स्तर की होती हैं। दूसरे व्यक्तियों का व्यवहार, परिस्थितियों का प्रवाह निकट भविष्य में हमारे प्रतिकूल चलेगा और और उसे भयङ्कर विपत्ति आयेगी, ऐसा चिन्तन कितने ही व्यक्ति करते और उद्विग्न रहते हैं, जबकि वैसा व्यवहार या घटनाक्रम कदाचित कम ही सामने आता है।

मानसिक संतुलन विपरीत परिस्थितियों के वास्तविक एवं काल्पनिक घटनाक्रमों के सहारे ही चलते हैं। यह व्यक्ति की भावुकता या संवेदनशीलता पर निर्भर करता है कि वह उन्हें मजाक में टाल देता है, साहस समेटकर उनसे निपटने का फैसला करता है या भयभीत होकर अपना संतुलन खो बैठता है। यदि व्यक्ति डरपोक प्रकृति का और अतिभावुक है तो इसके लिए छोटी घटना भी बहुत बड़ी हो सकती है और नन्हीं-सी अशुभ कल्पना से भी तिलमिला कर उद्विग्न हो सकता है। इस प्रकार परिस्थितियों के आघात सर्वप्रथम और सम्पूर्ण रूप से मानसिक संस्थान को प्रभावित करते हैं। ज्वर, सिरदर्द, आदि की स्थिति में शरीर असहाय बन जाता है, उसे कुछ करते नहीं बनता, बेचैनी सताती है। मानसिक सन्तुलन इससे भी बुरी स्थिति पैदा कर देता है क्योंकि शरीर पूरी तरह मन के नियन्त्रण में चलता है। रक्त-माँस से नहीं मन के निर्देशों से शरीर की गाड़ी चलती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यही कारण है कि मन के विकृत होने पर शरीर का स्वस्थ बने रहना असंभव हो जाता है। इस प्रकार का स्वास्थ्य संकट अमुक घटना या अमुक परिस्थिति के कारण उत्पन्न होगा, इसका पर लागू होने वाला कोई सिद्धान्त नहीं। कहा जा चुका है कि एक ही घटना की अनेक व्यक्तियों पर परस्पर विरोधी प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं। विरोधी न हों तो भी निश्चित ही है कि सब पर अलग-अलग तरह की कम ज्यादा और भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएँ होती हैं। घटनाओं को रोका नहीं जा सकता और उत्पन्न होने वाली परिस्थितियों से बचा नहीं जा सकता। इसलिए स्वस्थ रहने का एकमात्र यही तरीका है कि सोचने-समझने का सही तरीका अपनाया जाय, परिस्थितियों से ताल-मेल बिठाने की कला सीखी जाय और अपनी चिन्तनात्मक दुर्बलता के कारण उत्पन्न होने वाली ऐसी स्थितियों से बचा जाय जो व्यक्ति के जीवनक्रम को अस्त-व्यस्त और तहस-नहस कर देती हैं।

किन्हीं अप्रिय अथवा अवांछनीय घटनाओं की शारीरिक, मानसिक स्थितियों में हल्की-सी उद्विग्नता चढ़ आती है। यह उद्विग्नता व्यक्ति की अपनी मनःस्थिति के अनुसार कम ज्यादा हो सकती है। इस स्थिति को खीझ, परेशानी, तनाव कुछ भी कहा जा सकता है। कमजोर मनःस्थिति वाले व्यक्ति साधारण-सी बातों को लेकर इतने परेशान हो उठते हैं कि उनके मन पर कई समस्याएँ एक साथ चढ़ आती हैं और सभी जल्दी-जल्दी अपने सम्बन्ध में विचार किये जाने की माँग करती हैं। इस धमा चौकड़ी में अधूरी एकांगी उथली समझ ही काम करती है और उसमें कोई निष्कर्ष निकलना तो दूर रहा उलटे सिर चकराने लगता है। प्रतीत होता है कि मानों उलझनों के घटाटोप चढ़ आये हैं। इन विचारों के हुड़दंग को रोकना चाहिए और एक समय में एक ही विचार को अपनाकर बारी-बारी से शान्त चित्त प्रस्तुत समस्याओं पर विचार करना चाहिए। इस तरह आसानी से चित्त का बोझ हल्का किया जा सकता है।

रोगों की जड़ शरीर में नहीं मन में होती है, यह मानकर अपने मानसिक संतुलन को सुस्थिर रखा जाय तो कोई शारीरिक रोग होने पर भी वह जीवन क्रम सामान्य ढंग से चलाया जा सकता है। मानसिक संतुलन साधने के लिए यह मान्यता बड़ी ही उपयोगी सिद्ध हो सकती है। यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि उस तथ्य को सभी रोगों में एक समान लागू होते देखा जा सकता है। उनकी प्रतिक्रया लक्षण शरीर पर भले ही दिखाई दें लेकिन उनकी जड़ मनुष्य के मन में होती है। वृक्ष की जड़ जिस प्रकार जमीन के भीतर होती है और उसका तना शाखायें, पत्ते, फूल, फल और शिखर आकाश में होते हैं। इसी प्रकार रोगों का स्वरूप, उत्पात, प्रतिक्रिया शरीर के तल पर दिखाई देते हैं लेकिन उनका मूल मन में होता है। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए महर्षियों ने हजारों वर्ष पूर्व कहा है "प्रज्ञापराधं रोगस्य मूल कारणम्", अर्थात् प्रज्ञापराध, मानसिक अस्त-व्यस्त असन्तुलित मनःस्थिति, चिंता, क्षोभ और अन्यान्य मानसिक विकृतियाँ समस्त रोगों का मूल कारण हैं। यदि अपनी मानसिक स्थिति को सम्हाला जाय, उसे शत संतुलित बनाया जाय तो शरीर को पूर्ण स्वस्थ, नीरोग और पुष्ट रखा जा सकता है। शरीर का निदान-परीक्षण बाद में, पहले मन को ही स्वस्थ बनाये रखने की बात सोचनी चाहिए। इसके लिये प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों से परे मन को हल्का-फुल्का बनाने वाली किसी भी विधि का सहारा लिया जा सकता है। संगीत का स्थान इनमें सर्वोपरि है। ऐलोपैथी, नैचरोपैथी, होम्योपैथी, बायोकेमिकल चिकित्सा पद्धति आदि चिकित्सा प्रणालियों की तरह पश्चिमी देशों में संगीत से भी रोगों के उपचार की विधि खोज ली गयी है और उसका सफलतापूर्वक उपयोग किया जाने लगा है। पश्चिम जर्मनी के कुछ अस्पतालों में इस चिकित्सा पद्धति का सफलतापूर्वक उपयोग किया जाने लगा है। वहाँ के एक मानसिक चिकित्सालय में, जो बर्लिन में स्थित है, दो असाध्य मानसिक रोगी लड़कियों का संगीत से पहली बार १९६२ में इलाज किया गया। ये दोनों लड़कियाँ जुड़वाँ बहनें थीं और दोनों ही जटिल रोगों से ग्रस्त थीं।

डॉक्टर उन पर सभी चिकित्सा प्रयोग आजमा चुके थे। दोनों ही शारीरिक रोगों के अतिरिक्त मानसिक रोगों से ग्रस्त थीं। कहना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए उनके रोग शारीरिक कम मानसिक अधिक थे। किसी भी प्रकार के रोग में जब कोई फायदा नहीं हुआ तो एक लड़की पर डॉ० कुर्त्त ने सर्वथा नया प्रयोग किया। उस लड़की को ऐसे ग्रुप में शामिल किया गया, जिसमें रहने वाले सभी रोगी असाध्य मान लिये गये थे और काफी शोरगुल करते थे। वह लड़की भी इस ग्रुप में शामिल हो गयी। ग्रुप के सभी मरीज काफी शोरगुल करते थे। इस लड़की को शोरगुल पसन्द नहीं आया और वह अस्पताल में पड़ा हुआ ड्रम बजाने लगी। जब भी रोगी चीखते, शोरगुल मचाते तभी वह लड़की ड्रम बजाने लगती।

डा० कुर्त्त का लड़की की इस हरकत पर ध्यान गया और उन्होंने रोगिणी लड़की को कुछ ठप्पे दिये। अब उसने ड्रम बजाना छोड़ दिया और उन लकड़ी के ठप्पों को ही धीरे-धीरे किसी वाद्य यन्त्र की तरह बजाती, इससे डॉक्टर को संगीत द्वारा उसका उपचार करने की सूझी तथा कुछ ही समय बाद उसे वाद्ययन्त्र खेलने के लिए दिये जाने लगे। धीरे-धीरे वह वाद्ययन्त्रों को बजाने लगी। उसका आत्मविश्वास लौटने लगा था। शीघ्र ही उसमें इतना आत्मविश्वास पैदा हो गया कि वह उन ध्वनियों का संगीत के माध्यम से उत्तर देने लगी।

इस प्रगति से डा० कुर्त्त को सन्तोष हुआ और उनका उत्साह भी बढ़ा। उन्होंने निश्चय किया कि संगीत द्वारा ही उसे रोग मुक्त करने का प्रयास किया जाय। यह प्रयास प्रयोग के तौर पर ही किये गये थे, पर उनमें आश्चर्यजनक सफलता मिली। धीरे-धीरे लड़की की बीमारी दूर होती गयी और वह अपनी परिधि से निकलकर स्वस्थ लोगों के सम्पर्क में आती गयी। संगीत द्वारा मनोरोगों के उपचार का बर्लिन में यह पहला प्रयोग था। अन्य देशों में तो इससे पूर्व भी संगीत द्वारा मनोरोगों की चिकित्सा के सफल प्रयोग किये जा चुके थे। लेकिन ये प्रयोग सामान्य रोगियों पर ही किये गये थे। जटिल तथा असाध्य समझे जाने वाले मानसिक रोगों के उपचार का यह पहला प्रयोग था।

अब तो संगीत को मानसिक रोगों से मुक्ति दिलाने वाली अचूक औषधि समझा जाने लगा है। पश्चिमी देशों में संगीत चिकित्सा दिनों-दिन लोकप्रिय होती जा रही है। इस चिकित्सा पद्धति के अन्तर्गत रोगियों को एक-दूसरे के साजों से निकलने वाली ध्वनियों का उत्तर धुनों के माध्यम से ही देने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। पागल और विक्षिप्त समझे जाने वाले व्यक्तियों की मस्तिष्कीय क्षमता पहले ही प्रयास में इस योग्य तो नहीं बन पाती कि वे बतायी गयी विधि का अक्षरशः पालन कर लें। लेकिन धीरे-धीरे वे एक-दूसरे के साजों से निकलने वाली धुनों को पहचानने लगते हैं तथा उन धुनों द्वारा ही उत्तर देने लगते हैं। धुनों के माध्यम से उत्तर देने का यह क्रम धीरे-धीरे शब्दों तक भी पहुँच जाता है और परिणामतः रोगी के रोगमुक्त होने में दिनों-दिन सफलता प्राप्त होने लगती है।

गत वर्ष बर्लिन में ही सम्पन्न हुई 'अन्तर्राष्ट्रीय संगीत चिकित्सा परिषद्' में कहा गया कि—जिन व्यक्तियों को विक्षिप्त मान लिया जाता है और पागल समझकर समाज से अलग कर दिया जाता है, ऐसे व्यक्ति का दिमाग वास्तव में बेकार नहीं हो जाता है। वस्तुतः लोग भावनाओं पर अत्यधिक ठेस लगने के कारण मस्तिष्कीय सन्तुलन खो बैठते हैं। कभी-कभी यह असर इतना गहरा हो जाता है कि वह व्यक्ति समाज की धारा से पूरी तरह कट-पिटकर अपने आप में सिमट जाता है।

संगीत में भावनाओं को जागृत करने और सम्बल देने की ही नहीं, उनके परिष्कृत बनाने तथा उनका सन्तुलन साधने की प्रभावशाली क्षमता है। शरीरशास्त्रियों की मान्यता है कि मस्तिष्क के कुछ भाग भावनाओं को उत्तेजित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संगीत का उन अंगों पर बहुत अच्छा और अनुकूल प्रभाव पड़ता है। संगीत द्वारा मस्तिष्क की उन सिकुड़ी हुई माँस-पेशियों को शक्ति मिलती है फलतः व्यक्ति को भावनात्मक बल और आनन्द मिलता है। वे पेशियाँ जो कारणवश निष्क्रिय हो जाती हैं पुनः सक्रिय हो उठती हैं। संगीत की स्वर लहरियों से तनाव हल्का होने की बात तो आम है। लोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संगीत का यह प्रयोग तो आमतौर पर करते हैं। इसी नियम को एक विधि व्यवस्था के साथ रोग चिकित्सा के लिए अपनाया जाता है और अब तो जटिल से जटिल रोगों का उपचार भी संगीत द्वारा किये जाने की विधियाँ खोज ली गयी हैं।

वाद्ययन्त्रों के माध्यम से रोगोपचार की यह पद्धति तो कुछ वर्षों पूर्व ही आविष्कृत की गयी है। अब चिकित्साशास्त्रियों का ध्यान इस दिशा में भी गया है कि वाद्ययन्त्रों के अलावा गायन का शरीर व स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है। बाहरी उपकरण इतना प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं तो स्वयं अपनी ही वाणी, शब्द और स्वर तो और अधिक प्रभाव उत्पन्न करते होंगे। इस विषय पर चिकित्साशास्त्रियों का ध्यान भले ही अभी गया हो परन्तु यह तो पिछले काफी समय से जान समझ लिया है कि प्रेरणा गीतों का सस्वर उच्चारण मनुष्य को न केवल हल्का-फुल्का व प्रफुल्लित कर देता है वरन् उसकी कई चिन्ताओं, दबाव और तनावों तथा समस्याओं के बोझ को भी बड़ी सीमा तक समाप्त कर देता है।

भारतीय मनीषियों ने संगीत की इस शक्ति को हजारों वर्ष पूर्व पहचान कर उसका उच्च उद्देश्यों के लिए प्रयोग करना आरम्भ कर दिया था। मंत्र साधना का अपना एक स्वतन्त्र विज्ञान तो है ही पर उसमें लय और गति का तालमेल बहुत कुछ संगीत की इस जीवन-दात्री क्षमता के प्रयोग का उदाहरण है। कोई आश्चर्य नहीं कि संगीत का स्वास्थ्य प्रयोजन के लिए उपयोग करते-करते विज्ञान इस तथ्य को भी बहुत जल्दी स्वीकार करने की स्थिति में आ जाय।

न निराश हों, न उत्तेजित

"किसी भी इमारत की सबसे ऊपरी मंजिल की छत पर चढ़कर तुम अगर नीचे झाँकते हो तो डरने क्यों लगते हो ? ब्रिटेन के प्रसिद्ध मनःशास्त्री डा० स्टेनले ने अपने छात्रों से प्रश्न किया। छात्रों ने इसके अलग-अलग उत्तर दिये, किन्तु उसमें से एक भी उत्तर सही नहीं था। बाद में स्वयं डॉ० स्टेनले ने अपने ही प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा—"क्योंकि उस समय तुम्हें यह भय होने लगता है कि कहीं मैं यहाँ से गिर न जाऊँ। किसी भी व्यक्ति के दिमाग में बहुत ऊँचे स्थान पर चढ़कर नीचे झाँकने से यह विचार आ सकता है कि यदि मैं यहाँ से कूद जाऊँ या गिर जाऊँ तो क्या होगा ? यह विचार अकारण नहीं, बल्कि मनुष्य का अपना अवचेतन मन ही उसे कूद पड़ने या गिर जाने के लिए प्रेरित करता है।"

डा० स्टेनले का यह प्रतिपादन विवाद का विषय हो सकता है, पर इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अधिकांश लोग अपने जीवन को निस्सार, व्यर्थ और निरर्थक अनुभव करते हैं। यही कारण है कि सामान्य-सी रोग, बीमारियों के समय, थोड़ी-सी प्रतिकूल परिस्थितियाँ आने पर व्यक्ति मर जाने अथवा जीवन का अन्त हो जाने की कामना करने लगता है। एक मनोवैज्ञानिक के मतानुसार प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में एक से अधिक बार आत्महत्या कर लेने की बात सोचता है। यह बात अलग है कि वह अपने जीवन का अन्त कर लेने का साहस नहीं जुटा पाता।

फिर भी कई दुस्साहसी व्यक्ति परीक्षा में असफलता, नौकरी छूट जाने या उन्नति न होने, परिवार में कलह होने, मुकदमेबाजी में हार जाने के छोटे-छोटे कारणों से आत्महत्या कर लेते हैं। इन कारणों से आत्महत्या करने वालों की संख्या दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। विश्व-स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार प्रतिदिन १२ हजार व्यक्ति आत्महत्या का प्रयास करते हैं अर्थात् एक मिनट में लगभग ६ व्यक्ति आत्महत्या की चेष्टा करते हैं। इन नौ व्यक्तियों में से आठ व्यक्ति या तो बचा लिये जाते हैं अथवा मृत्यु की यन्त्रणा न सह पाने के कारण स्वयं ही सहायता के लिए पुकारने लगते हैं और किसी न किसी प्रकार बच जाते हैं। नौ में से एक व्यक्ति प्रति मिनट आत्महत्या करता है।

विश्व स्वास्थ्य-संगठन के अनुसार आत्महत्या करने वालों की संख्या पिछले बीस वर्षों में तीन गुना बढ़ी है। प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि लोग आत्महत्या क्यों करते हैं ? मनोवैज्ञानिक इस प्रश्न के अलग-अलग उत्तर देते हैं। कुछ लोगों को कहना है कि व्यक्ति अपने चारों ओर भरे निराशापूर्ण वातावरण से इतना घबड़ा उठता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि उसे इसके अलावा कोई चारा ही नहीं सूझता। कुछ मनोविश्लेषण कर्ताओं के अनुसार जो व्यक्ति हिंसक प्रवृत्ति के होते हैं और वे इसे व्यक्त नहीं कर पाते, वे इस प्रवृत्ति से स्वयं को ही नष्ट कर लेते हैं। इसके समर्थन में यह तर्क दिया जाता है कि युद्ध के दिनों में आत्महत्या की घटनाएँ कम होती हैं, क्योंकि उस समय लोगों की हिंसा-वृत्ति युद्ध में होने वाले नर-संहार से तृप्त हो लेती है।

कुछ लोग अपने आपको इतना अकेला और असहाय अनुभव करते हैं कि उन्हें जीवन जीने में कोई लाभ नहीं दिखाई देता और वे सोचने लगते हैं कि क्यों न आत्महत्या करली जाय। जीने में क्या रखा है ? कोई व्यक्ति आत्महत्या का विचार भावनात्मक उत्तेजना में आकर करने लगते हैं और उस उत्तेजना की स्थित में कार्यक्रम भी बना लेते हैं। इस सन्दर्भ में न्यूयार्क की एक घटना का प्रायः उल्लेख किया जाता है, जिसमें एक युवक ने २०० फुट ऊँचे पुल से पानी में छलांग लगाली थी। संयोगवश उधर से बचाव के लिए पुलिस की नाव भी आ गई। नाव में सवार पुलिस वालों ने उस युवक को बाहर निकलने के लिए कहा और पकड़ भी लिया। इस पर युवक छटपटाने लगा कि मुझे अकेला छोड़ दो, मैं मरना चाहता हूँ, मुझे मर जाने दो। इस पर पुलिस वालों ने कहा—"ठीक है, हम तुम्हारी इच्छा पूरी किये देते हैं। यह कहकर उन्होंने युवक को निशाना बनाकर बन्दूक तान दी तो उसका मन मरने का उत्साह न जाने कहाँ काफूर हो गया।

मनोविश्लेषण आत्महत्या का प्रमुख कारण अवसाद बताते हैं, जो किसी भी कारण से उत्पन्न हो सकता है। चाहे वह शारीरिक-रोग के कारण उत्पन्न हुआ हो अथवा परीक्षा, प्रेम या प्रतियोगिता में असफलता के कारण। एक लड़का—जिसकी माँ मर चुकी थी, आत्महत्या करने के लिए ढेर-सारी गोलियाँ खा गया। यह बात किसी तरह घर के अन्य लोगों को पता चल गई और उन्होंने उसे दिल्ली के अस्पताल में भर्ती कर दिया। उपचार के बाद जब वह ठीक हो गया तो उसने बताया कि इस प्रकार वह अपनी मृतक माँ से मिलना चाहता था।

कुछ मनःशास्त्री आत्महत्या के पीछे प्रतिशोध की भावना भी देखते हैं। उनके मतानुसार परिवार का कोई सदस्य अपने परिवार के अन्य सदस्यों को सबक सिखाने के लिए भी आत्महत्या कर लेता है। उस समय आत्मघात करने वाला यही सोचता है कि इससे इन लोगों को काफी परेशानियाँ उठानी पड़ेंगी और उन्हें यह पता चल जायेगा कि मैं कितना अच्छा था ? कई व्यक्ति अपराध भावना से दबे रहने के कारण भी आत्महत्या कर लेते हैं। क्योंकि उन्हें इसके अलावा अपराध बोध से मुक्त होने का कोई दूसरा अच्छा उपाय नहीं सूझता। दूसरे कई लोग वृद्धावस्था, जीवन साथी की उपेक्षा, बेराजगारी, मुकदमेबाजी जैसे कारणों से तङ्ग आकर आत्महत्या करते हैं।

कुल मिलाकर आत्महत्या का कारण जीवन की व्यर्थता अनुभव होना है और यह सच है कि प्रत्येक व्यक्ति जीवन में एक नहीं, अनेक बार अपने जीवन को व्यर्थ तथा कई बार तो भार-स्वरूप समझने लगता है। उस भार से छुटकारा पाने के लिए ही वे आत्म-हनन की बात सोचते हैं। प्रश्न उठता है कि जीवन क्या सचमुच इतना व्यर्थ है कि छोटी-छोटी बातों से निराश होकर उसका अन्त करने की बात सोची जाय ? गम्भीरतापूर्वक आत्म-विश्लेषण किया जाय तो प्रतीत होगा कि प्रत्येक व्यक्ति कई बार अपने जीवन को व्यर्थ और भार रूप अनुभव करता है। कारण कुछ भी हो सकता है, पर जीवन की व्यर्थता इतनी तीव्रता के साथ अनुभव होती है कि उसे न रहने देने से कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता। बल्कि भला इसी में दीखता है कि ऐसे निरर्थक जीवन को फटे हुए कपड़ों की तरह फेंक दिया जाय, कूड़े-कचरे की तरह नष्ट कर दिया जाय।

जाने-अनजाने प्रत्येक व्यक्ति के मन में अपने जीवन के प्रति निराशा, हताशा और निरर्थकता की भावना भरी रहती है और समय-समय पर विभिन्न रूपों में व्यक्त भी होती रहती है। कभी असफलताजन्य खिन्नता के रूप में, तो कभी थकान के कारण उत्पन्न हुए तनाव के रूप में भी, कभी अधिक परिश्रम के कारण खीझ के रूप में तो कभी किसी के व्यवहार से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षुब्ध होने के रूप में। इस तरह के जितने भी निषेधात्मक भाव हैं, वे सब निरर्थकता बोध की ही प्रच्छन्न अभिव्यक्तियाँ हैं। अन्यथा जीवन है—एक पुष्प की भाँति, जो अपने चटखने से लेकर धरती पर गिरने तक निरन्तर खिला ही रहता है और अपनी सुगन्धित सुवास चतुर्दिक बिखेरता रहता है। जीवन है—एक सरिता की भाँति, जो अपने स्रोत से लेकर सागर तक निरन्तर बहती ही रहती है। कहीं न रुकती है और न सड़ाँद फैलाती है। यदि जीवन व्यर्थ अनुभव होता है तो इसका अर्थ है—उसे खिलने नहीं दिया गया, खिलने से पहले ही तोड़ दिया गया और न उसमें प्रवाह ही आने दिया गया।

फूल खिलेगा नहीं तो धरती पर गिरेगा भी नहीं—यह निश्चित है। नदी बहेगी नहीं तो सागर तक नहीं ही पहुँचेगी, यह भी निश्चित है और साथ ही यह भी सच है कि वह नदी न रहकर झील बन जायेगी। इस दृष्टि से डा० स्टेनले की यह व्याख्या शत-प्रतिशत सही सिद्ध हो सकती है कि ऊँचाई पर चढ़ने के बाद कोई व्यक्ति नीचे झाँकता है तो उसके मन में केवल इसलिए भय उत्पन्न होने लगता है कि कहीं मैं आत्महत्या न कर लूँ ? कहीं नींचे न कूद पड़ूँ ? स्पष्ट ही यह भय इस कारण अनुभव होता है कि उसके अवचेतन में भरा हुआ जीवन के प्रति व्यर्थता का बोध उसे नीचे कूद पड़ने के लिए प्रेरित करता है या अन्य इतनी ऊँचाई पर से कौन नीचे धकेलना चाहता होगा।

माना कि भय ऊँचाई पर उपस्थित अन्य लोगों की उपस्थिति से उत्पन्न होता होगा या हवा के झोकों से गिर जाने का डर पैदा होता होगा। किन्तु देखा यह गया है कि भीड़ की अपेक्षा अकेले होने पर यह भय और तीव्रता के साथ व्यापता है। हवा शान्त हो, वातावरण निस्पन्द हो तब तो और अधिक स्पष्ट अनुभव होता है कि कोई नीचे कूद पड़ने के लिए प्रेरित करता है। भीड़ होने पर तो फिर भी सुरक्षा का भाव रहता है कि नीचे गिरने से कोई भी बचा लेगा, किन्तु एकान्त में व्यक्ति नितान्त असुरक्षित और असहाय अनुभव करता है। क्यों ? इसलिए कि उस समय सुरक्षा का ऐसा कोई आश्वासन कहीं से मिलता दिखाई नहीं देता।

जीवन व्यर्थ होने का भाव आत्म-हनन की प्रेरणा देता है, यह इस बात से भी सिद्ध होता है कि मनुष्य केवल उपयोगी और सार्थक वस्तुओं को ही अपने पास रखना चाहता है। व्यर्थ का कूड़ा-कर्कट जमा करने में जिनकी कोई उपयोगिता नहीं है, किसी की भी रुचि नहीं होती। इसलिए जीवन भी व्यर्थ अनुभव हो रहा है तो उसे बचाने की अपेक्षा नष्ट कर देने में ही मनुष्य की प्रवृत्ति होना स्वाभाविक है। कहीं कोई सूत्र होते हैं, जो मोह और आसक्ति के कारण उसे बचाये रखने का सन्तुलन साधते हैं और जब कभी ये सूत्र टूट जाते हैं तो आत्म-हनन की स्पष्ट इच्छा होने लगती है। यह इच्छा भी तभी पूरी हो पाती है, जब वैसा करने का साहस जुटाया जा सके। अन्यथा व्यक्ति केवल कामना करके ही रह जाता है।

इस व्यर्थता के बोध से ही अधिकांश व्यक्ति खिन्न, दुःखी, उदास, ग्लानि और उद्विग्न हुए देखे जाते हैं। अन्यथा ऐसा कोई बाहरी कारण नहीं, जिससे दुःखी हुआ जाय। प्रश्न उठता है कि व्यर्थता के इस बोध से कैसे छुटकारा पाया जाय और किस प्रकार जीवन को सार्थक बनाया जाय ? उत्तर स्पष्ट है। अब तक जिन बातों में जीवन की सार्थकता खोजी गई है, वे व्यर्थ और दिकभ्रान्त ही सिद्ध हुई हैं। किन्हीं ने धन में जीवन की सार्थकता खोजी, किन्तु धनवान व्यक्ति भी आत्महत्या करते देखे गये हैं। यश, ख्याति और प्रसिद्धि प्राप्त कर अनेकों ने अपने जीवन को सफल बनाने का प्रयास किया है। उन प्रयासों के सफल होने पर भी आत्म-सन्तोष नहीं मिलता दिखाई दिया। कोई सोचते हैं कि विद्वता, पाण्डित्य और ज्ञान-सम्पादन से जीवन सार्थक होता है, किन्तु बड़े-बड़े विद्वान, पण्डित और ज्ञानी-विज्ञानी आत्महत्या करते देखे गये हैं। इस तरह की सभी सफलताएँ सार्थकता का भ्रम तो उत्पन्न करती हैं, पर जीवन को सार्थक नहीं बनातीं। यदि इनसे जीवन की सार्थकता सिद्ध होती तो बड़े-बड़े धनवानों, वैभव सम्पन्नों, ख्याति प्राप्त व्यक्तियों, बड़े-बड़े नेताओं, पण्डितों और विद्वानों को कभी भी हताश, निराश और दुःखी नहीं देखा जा सकता था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फिर जीवन की सार्थकता किस बात में है ? थोड़ा-सा विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है। मनुष्य की अपनी जीवन-चेतना विराट् समष्टि चेतना का एक अङ्ग है। बूँद जिस प्रकार सागर से अलग होकर वापस सागर में ही मिलने के लिए छटपटाती है, कभी मेघमाला बनकर धरती पर बरसती है और सागर की ओर दौड़ने लगती है तो कभी जलाशयों में जा गिरती है। जलाशय में गिरने के बाद फिर वह बादल बनकर उड़ती है या धरती की अतल गहराईयों में घुसकर अपने उसी विराट रूप की ओर दौड़ लगाती है। उसी प्रकार मनुष्य की सीमाबद्ध व्यष्टिचेतना भी समष्टि-चेतना के सागर से मिलने के लिए आतुर है। जिनने भी इस आतुरता को समझा है, अपने संकीर्ण स्वार्थों को विराट् हितों में घुला देने की चेष्टा की है, उन्हें कभी भी निराश होते नहीं देखा गया है और न किसी ऐसे व्यक्ति का कोई विवरण ही मिलता है, जिससे यह दिशा ग्रहण करने के बाद आत्म-हनन किया हो। बूँद जिस प्रकार अपने मूलस्वरूप को प्राप्त कर स्वयं को सार्थक बनाती है, उसी प्रकार मनुष्य का जीवन भी अपने क्षुद्र-अहं की परिधि को तोड़कर विराट्-चेतना से मिलकर स्वयं को सार्थक और धन्य बनाता है। फिर आत्महत्या करने का विचार आने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

निर्बलता भी उसी प्रकार एक अक्षम्य अपराध है जो भावोद्वेगों व अंततः रोगों को जन्म देता है। नीति शास्त्र में कहा गया है—'वीर भोग्या वसुन्धरा' अर्थात् बलवान ही संसार के सुखों का उपभोग कर सकते हैं, निर्बल नहीं। इस तथ्य के प्रतिपादन से बलहीनों के हताशा और क्षोभ होना स्वाभाविक है परन्तु प्रकृति ने निर्बलता, कोई रोग, विवशता या दयनीय स्थिति नहीं माना है। मनीषियों ने निर्बलता को एक पाप कहा है, जिसका दण्ड सभी क्षेत्रों में भुगतना पड़ता है। प्रकृति के कण-कण से जब शक्ति अर्जित करने की प्रेरणा मिलती है और शक्ति संचय की सुविधाएँ सर्वत्र उपलब्ध हैं तो आलस्य और अकर्मण्यता में पड़कर निर्बल क्यों रहा जाए ? निर्बलता कोई स्थिति नहीं है, बल्कि वह आलस्य और अकर्मण्यता की ही परिणति है। यही कारण है कि निर्बलता चाहे किसी भी प्रकार की क्यों न हो, शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या आत्मिक मनुष्य किसी भी दृष्टि से निर्बल हो तो उसे सम्बन्धित क्षेत्र में प्रत्येक प्रयत्न का विपरीत परिणाम भुगतना पड़ता है।

निर्बल व्यक्ति अपने प्राकृतिक और जन्म सिद्ध अधिकारों से भी समुचित लाभ नहीं उठा पाता। प्रकृति की व्यवस्था का उस पर विपरीत प्रभाव ही पड़ता है और जो नियम या व्यवस्थाएँ बलवानों के लिए लाभ पहुँचा सकती हैं, वे व्यवस्थाएँ उसके लिए हानिकर सिद्ध होती हैं। उदाहरण के लिए स्वास्थ्य खराब हो तो सामान्य आहार भी नहीं पचता। स्वादिष्ट और पौष्टिक भोजन कमजोर व्यक्ति को अरुचिकर लगता है। ऐसे व्यक्ति के लिए गीत, वाद्य, मनोरंजन, सुख-सुविधाएँ, धन-दौलत सब कुछ व्यर्थ है। यहाँ तक कि वह चैन की नींद नहीं सो पाता। सर्वविदित है कि स्वास्थ्य खराब होने का कारण निर्बलता ही तो होती है। बलवान और पुष्ट शरीर में रोगाणु और स्वास्थ्य को नष्ट करने वाले विजातीय द्रव्य एक क्षण के लिए भी नहीं रहते। उनके प्रविष्ट करते ही मनुष्य की जीवनी शक्ति उसे नष्ट कर डालती है। निर्बल व्यक्ति के लिए ऐसा कहाँ सम्भव हो पाता है ?

यही बात बौद्धिक दृष्टि से निर्बल व्यक्तियों पर भी लागू होती है। संसार में जो भी श्रेष्ठ और सुन्दर है, उसका रस साहित्य में संचित है। मधुरता, प्रेम और सौन्दर्यानुभूति सब कुछ का बोध और अनुभव साहित्य के माध्यम से ही होता है। दुर्भाग्य से कोई व्यक्ति यदि बौद्धिक निर्बलता का शिकार हो तो उसके लिए संसार के अतुल ज्ञान और आनन्द के भण्डार का कोई मूल्य ही नहीं है। अन्धे व्यक्ति सुनकर और बहरे व्यक्ति पढ़कर साहित्य से लाभ उठा लेते हैं किन्तु मन्द बुद्धि लोग तो समर्थ और स्वस्थ रहते हुए भी उस रस माधुरी से वंचित रह जाते हैं। इस प्रकार मानसिक निर्बलता के कारण व्यक्ति प्रकृति द्वारा, ईश्वर द्वारा दिये गये उन अवसरों का कोई लाभ नहीं उठा पाते जो वस्तुतः उनके लाभ तथा आगे बढ़ने के लिए प्रकृति द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। प्रतिकूल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिस्थितियों और कष्ट कठिनाइयों में मनोबल सम्पन्न व्यक्ति आगे बढ़ते हैं। इसके विपरीत मानसिक रूप से निर्बल व्यक्ति उन परिस्थितियों में निराश और किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं।

आत्मिक दृष्टि से निर्बल व्यक्तियों के लिए आध्यात्मिक क्षेत्र में किसी प्रकार की प्रगति कर पाना कहाँ सम्भव रहता है ? उनके लिए तो वह आनन्द और वह शान्ति दुर्लभ ही नहीं असाह्य और अप्राप्य भी है, जिसे आत्मबल सम्पन्न व्यक्ति प्राप्त कर जीवन को सफल बना लेते हैं।

यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि प्रकृति की सभी शक्तियाँ मनुष्य के हित में ही काम करती हैं। आध्यात्मिक भाषा में इन्हीं शक्तियों को देवता कहा है। वेदों में सूर्य, चन्द्र, वरुण, पवन, अग्नि, इन्द्र आदि अनेक देवताओं का उल्लेख है। सर्वविदित है कि ये देवता प्रकृति की ही विभिन्न शक्तियाँ हैं। जल, वायु, ऊष्मा, खुला प्रकाश जैसी शक्तियाँ कभी किसी को हानि नहीं पहुँचातीं। किन्तु निर्बलों के लिए वे भी घातक बन जाती हैं। कहा भी गया है "देवोऽपि दुर्बलः घातकः" देवता भी दुर्बल के लिए घातक हैं। लोग अपनी असावधानी आलस्य या प्रमादवश जीवन की सर्वोपरि आवश्यकताओं की ओर कोई ध्यान नहीं दे पाते। उनकी अपनी कमजोरी ही पोषक शक्तियों का विपरीत प्रभाव ग्रहण करती है।

'देवोऽपि दुर्बलः घातकः' वाली उक्ति इस तथ्य से भी प्रमाणित होती है कि बलवानों के लिए सहायक सिद्ध होने वाले तत्व निर्बलों के लिए घातक बन जाते हैं। ऋतुओं का प्रभाव ही लें। सर्दियों में स्वस्थ व्यक्ति अपना स्वास्थ्य बनाते और शक्ति बढ़ाते हैं। यह ऋतु स्वास्थ्य और बलवर्धक तथा सक्रियता बढ़ाने वाली कही गई है। निरोग व्यक्ति इस ऋतु में अपना आरोग्यवर्धन करते हैं। परन्तु कमजोरों के लिए यही सर्दी, जुकाम, निमोनिया और गठिया जैसे रोगों का कारण बन जाती है। इस ऋतु में कमजोर लोग इन विकारों के शिकार हो जाते हैं तथा अपनी परेशानियों की शिकायत करने लगते हैं। स्वस्थ व्यक्ति इस ऋतु में प्रातःकाल की सुहानी धूप में प्रकृति से जीवनी शक्ति प्राप्त करता है, जबकि कमजोर व्यक्ति को इन दिनों घर के भीतर बैठकर आग तापनी पड़ती है।

स्वास्थ्य और शान्ति ही नहीं सम्मान और प्रतिष्ठा भी शक्तिशाली लोगों को ही मिलती है। कमजोर और क्षीणमना लोगों को हर कोई क्रूर दृष्टि से देखता है। शेर को उसके बल और स्फूर्ति के कारण ही जंगल का राजा कहा गया है। वन्य-जन्तु तो उससे डरते ही हैं, मनुष्य भी सिंह का कम सम्मान नहीं करता। सामान्यतया सिंह को पराक्रम और शक्ति का प्रतीक समझा जाता है। उसे राज चिह्न के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता है। इसके विपरीत निर्बल बकरी और खरगोश जङ्गली जानवरों से लेकर मनुष्य और देवता तक घबड़ा जाते हैं। उन्हें हर घड़ी अपने प्राणों का भय बना रहता है। छोटे-छोटे पेड़-पौधे जो वर्षा ऋतु में सूख जाते हैं, जबकि उसी बसन्त में बड़े वृक्ष लहलहाने लगते हैं, उनमें नई कोपलें फूटने लगती हैं।

अशक्त और निर्बल का अस्तित्व हर स्थान और हर स्थिति में असुरक्षित ही रहता है। उनके विकास में कोई भी सहयोगी नहीं बनता, ईश्वर तक भी उनकी घात लगाए बैठा रहता है। मृत्यु ऐसे ही तत्वों पर तो अपना कालपाश प्रथम फेंकती है। उत्तम की रक्षा, प्रकृति के विकास का सिद्धान्त है, उसका नियम है। इसीलिए उसकी व्यवस्था में निर्बल और अशक्त लोगों को कदम-कदम पर खतरे तथा हानियाँ उठानी पड़ती हैं।

सफल सुरक्षित और सुखी जीवन के लिए बल सम्वर्धन की आवश्यकता स्वीकार की जानी चाहिए। इसी तथ्य की ओर युवकों का ध्यान आकर्षित करते हुए स्वामी विवेकानन्द ने एक स्थान पर लिखा है—सर्वप्रथम आपको बलवान बनना पड़ेगा। शक्ति सम्वर्धन ही उन्नति का एकमात्र मार्ग है। इसी प्रकार परमात्मा और आत्मा के अधिक निकट पहुँचा जा सकता है। कोई भी उद्देश्य हो, व्यक्तिगत या सार्वजनिक शक्ति और सामर्थ्य के द्वारा ही तो प्राप्त किया जा सकता है। किसी भी क्षेत्र में अनायास सफलता नहीं मिलती। उसके लिए तो निरन्तर प्रयत्न करते हुए अपनी शक्तियों को विकसित करना होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सभी वस्तुएँ और उपलब्धियाँ स्वयं सिद्ध हैं। लेकिन यह भी सच है कि उनको प्राप्त करने के लिए पात्रता और सुरक्षित रखने के लिए शक्ति का विकास आवश्यक है। इस पात्रता का विकास अनवरत् श्रम साधना द्वारा ही किया जा सकता है। संसार में ज्ञान का अभाव नहीं है, अभाव है उस बौद्धिक सामर्थ्य का जिसके कारण हम उसे प्राप्त करने में अक्षम हैं। शिक्षा साधना द्वारा उस क्षमता का विकास करना होता है। किसी भी क्षेत्र में सफलता के लिए पात्रता और शक्ति के विकास का यही नियम लागू होता है। इसीलिए निर्बलता को एक अपराध, एक पाप कहा गया है, जो पथभ्रष्ट करता और विपत्तियों के गर्त में धकेल देता है। प्रकृति के विधान में निर्बलता को कठोर दण्ड लिखा गया है। यदि उसे दूर नहीं किया गया तो भाजन बनना ही पड़ेगा। जो सबल है वही जीवन संग्राम में सदा सफल होता है। ऐसा व्यक्ति कभी बूढ़ा नहीं होता, चिरयुवा बना रहता है।

शरीर भले ही बूढ़ा हो, मन युवा बना रहे

यौवन का सम्बन्ध तन की अपेक्षा मन से अधिक है। यौवन का अर्थ है—ऐसी युवा मनःस्थिति जिससे सदा उत्साह, उमंग उमड़ता हो। प्रफुल्लित, प्रमुदित, प्रसन्नचित मनःस्थिति युवावस्था की परिचायक है। जहाँ भी यह विशेषता होगी जीवन तत्परता एवं सक्रियता से ओत-प्रोत होगा तथा सफलताओं का मार्ग प्रशस्त होगा। यों तो यौवन का आरम्भ किशोर वय से माना जाता है जो पच्चीस और तीस तक अपनी परिपक्व अवस्था में पहुँचता है तथा जिसे जीवनपर्यन्त अक्षुण्ण बनाये रखा जा सकता है।

पर कितने ही व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जो युवावस्था में भी चिन्ता, आवेश तथा निराशा की मनःस्थिति से ग्रस्त होते हैं। आलसी और प्रमादियों को भी इसी श्रेणी में रखा जा सकता है, जो युवक होते हुए भी वृद्धों जैसा जीवन जीते हैं तथा किसी प्रकार जीवन के दिन काटते हैं। सचमुच ही जो जीवन से निराश हो चुके हैं—जिनके मन में कुछ विशेष करने अथवा कुछ विशेष बनने की प्रेरणा नहीं उठती वे वृद्ध कहे जा सकते हैं। इसके विपरीत उन व्यक्तियों के भी अनेकों उदाहरण ढूँढ़ने पर मिल सकते हैं, जो आयु के हिसाब से तो वृद्धों की श्रेणी में जा पहुँचे हैं पर मनःस्थिति की दृष्टि से युवकों जैसे लगते हैं। यौवन उनके भीतर से सदा अँगड़ाई लेता रहता है। उनकी सक्रियता एवं तत्परता देखते बनती है।

कहा जा चुका है कि मनुष्य युवा शरीर से नहीं मन से होता है। तन में तो मात्र वह एक विशेष अवधि में अभिव्यक्त होता है। पर प्रवृत्तियों में वह सदा उमंगता दिखायी पड़ सकता है। यह मान्यता निराधार है कि वृद्धावस्था में मन की रचनात्मक तथा क्रियात्मक उमंगें थम जाती हैं तथा मनुष्य कुछ विशेष कर पाने में असमर्थ होता है। यह बात उनके लिए सही हो सकती है, जो युवावस्था में भी बैठे-ठाले दिन गुजारते रहे अथवा आलस्य प्रमाद के चंगुल में जकड़े रहे, फलस्वरूप वृद्धावस्था भी उनके लिए अभिशाप बन गयी। अन्यथा संसार में कितने ही व्यक्ति हुए हैं, जो चिरयुवा बने रहे। युवावस्था की अपेक्षा जीवन के उत्तरार्ध पक्ष में उन्होंने कहीं अधिक महत्वपूर्ण कार्य किये। संचित अनुभव परिपक्वता तथा संतुलित एवं उत्साही मनःस्थिति के सहारे उत्तरार्ध वय में कहीं अधिक महत्वपूर्ण कार्य कर सकना सम्भव है।

इतिहास में अनेकों व्यक्तियों के उदाहरण मौजूद हैं, जिन्हें जीवन के उत्तरार्ध सर्वाधिक व्यस्त देखा गया तथा जिस आयु को वृद्धावस्था मानकर अधिकांश व्यक्ति असमर्थों जैसी जिन्दगी बिताते हैं, उसमें उन्हें महत्वपूर्ण भूमिका सम्पादित करते पाया गया। प्रख्यात अंग्रेजी कवि लाँगफेलो ने अपनी पुस्तक 'मारी च्यूरी सैल्यूटेमस' में लिखा है कि मुझे यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि अस्सी वर्ष की अवस्था में कैरी ने यूनानी भाषा सीखी तथा अनेकों यूनानी दुर्लभ ग्रन्थों का अनुवाद अँग्रेजी में किया। अस्सी ही वर्ष की आयु में सोफोक्लीज ने अपना महान ग्रन्थ ओडिपल पूरा किया जिस पर उसे अनेकों प्रकार के पुरस्कार प्राप्त हुए। थियोफ्रास्टस जब ६० वर्ष का हुआ तब उसने 'कैरेक्टर आफ दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मैन' लिखना शुरू किया। इस ग्रन्थ को एक महान साहित्यक कृति माना जाता है। गेटे अस्सी वर्ष की वय में बीमार पड़ा तो भी उसने अपना समय बर्बाद नहीं किया। प्रख्यात ग्रन्थ फौस्ट उसने रुग्णावस्था में पूरा किया।

सतहत्तर वर्ष की उम्र में वनस्पति शास्त्री लिनेयस को उनके महत्वपूर्ण शोध कार्यों के लिए पुरस्कृत किया गया। हैमवल्ट नब्बे वर्ष की आयु में युवकों की भाँति विज्ञान का अध्ययन करते रहे। उन्हें इसी आयु में वैज्ञानिक आविष्कारों के लिए ख्याति मिली। महान् साहित्यकार तथा कलाकार माइकेल इंजिलो की कृतियों में से यदि ८३ वर्ष की उम्र में लिखे गये 'सानेटी' को निकाल दें तो कुछ विशेष नहीं बचता। ग्लेडस्टन ८३ वर्ष की आयु में भी ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री पद पर काम करते रहे तथा पूरी निष्ठा के साथ राजनीतिक दायित्वों का निर्वाह करते रहे। चर्चिल का नाम भी उनके राजनीतिक कार्यों के लिए चिरकाल तक याद किया जाता रहेगा। वह इतिहास प्रसिद्ध घटना उल्लेखनीय है कि द्वितीय विश्वयुद्ध में हिटलर आंधी-तूफान की भाँति बढ़ता चला जा रहा था। उसका अगला शिकार था इंग्लैण्ड। तत्कालीन प्रधानमंत्री एटली इतने भयभीत हो उठे कि उन्होंने सुरक्षा दायित्व संभालने में असमर्थता व्यक्त की। तब चर्चिल की आयु अस्सी वर्ष थी। इंग्लैण्ड के किंग चर्चिल के युवा मनोबल से परिचित थे। उन्होंने चर्चिल को तुरन्त राजनीतिक नेतृत्व संभालने के लिए आमंत्रित किया। कहते हैं कि रूजवेल्ट, स्टालिन तथा चर्चिल की सम्मिलित सूझ-बूझ से हिटलर को मुँह की खानी पड़ी।

गाँधी जी को सबसे अधिक व्यस्त ७५ और ८० के बीच देखा गया। इस आयु में उनकी स्फूर्ति युवकों जैसी थी। भारत रत्न विश्वेश्वरैया १०१ वर्ष तक जीवित रहे, पर उन्हें कभी बेकार समय गँवाते नहीं देखा गया। एक बार किसी ने उनसे पूछा कि आपके स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन का क्या रहस्य है ? उत्तर में उन्होंने कहा—हर समय व्यस्त रहना और मन को निराशावादी विचारों से बचाये रखना। 'हिस्ट्री ऑफ हिन्दू कैमिस्ट्री' के प्रणेता और प्रख्यात रसायनविद् आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय से एक व्यक्ति ने प्रश्न किया आपके जीवन के सबसे अधिक व्यस्त दिन कौन-से रहे हैं। उन्होंने उत्तर दिया—"साठ वर्ष की आयु पार कर लेने के बाद में सबसे व्यस्त रहा।"

यहूदी मानव सेव्रक सट मोजेज मांठी फायर अपनी मृत्यु तक जन-सेवा का कार्य करते रहे। ६० वर्ष की आयु में यहूदियों के लिए वे लड़ते रहे। जन-जागृति के लिए उन्होंने अनेकों पूर्वीय देशों का दौरा किया। काम करते हुए १०१ वर्ष की उम्र में मरे। सालवेशन आर्मी से सम्बद्ध पादरी जनरल विलियम बूथ ने अस्सी वर्ष की उम्र के बाद विश्वयात्रा शुरू की। ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया ८२ वर्ष की आयु में गुरुतर पद का भार कुशलतापूर्वक सँभालती रहीं। आणविक खोजों के लिए प्रसिद्ध भौतिक विद् सोमरविले को ख्याति ८६ वर्ष की अवस्था में मिली।

८३ वर्ष की आयु में विक्टर ह्यूगो की मस्तिष्कीय प्रखरता को देखकर लोग आश्चर्यचकित रह जाते थे। इसका रहस्योद्घाटन करते हुए वे स्वयं कहते थे कि "मस्तिष्क को मैंने जितना अधिक व्यस्त रखा उतना ही उसकी रचनात्मक शक्ति बढ़ती गयी।" टेनिसन ने ८० वर्ष की उम्र में 'क्रॉसिंग द वार' नामक अनुपम ग्रन्थ की रचना की। टालस्टाय की अधिकांश महत्वपूर्ण कृतियाँ अस्सी वर्ष की उम्र के बाद लिखी गयी हैं। प्रसिद्ध वैज्ञानिक थामस एल्वा एडिसन की ८०वीं वर्षगाँठ पर उनके एकमित्र ने सलाह दी—'अब तो आपको काम की रफ्तार कम कर देनी चाहिए तथा विश्राम करना चाहिए। उन्होंने हँसते हुए उत्तर दिया कि "अभी मैं इतना बूढ़ा नहीं हुआ हूँ और न ही कभी होना चाहता हूँ।"

फिर कारण क्या है कि अधिकांश व्यक्ति वृद्धावस्था को भारभूत समझते तथा असमर्थों जैसा जीवन बिताते हैं ? मनःशास्त्री मार्केटियर कालिन्स का कहना है कि आदमी यदि अनुभव करे कि वह वृद्ध हो चुका है, तभी वृद्ध होता है और इसके साथ ही उसकी सृजन शक्ति घटने लगती है। मन से वह यदि भावना निकाल दे कि वृद्धावस्था आ गयी तथा उत्साह एवं उमंग से मन को अनुप्राणित रखे तो कभी भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तन में वार्धक्य के चिह्न उसे निराश नहीं कर सकेंगे। कालिन्स का मत है कि मनुष्य में जितनी रचनात्मक शक्ति ३० वर्ष की आयु में होती है उतनी ही ८० वर्ष में भी रह सकती है बशर्ते कि वह सतत् अभ्यास में उसे बनाये रखे। यह सही है कि उम्र के साथ-साथ स्मरण शक्ति कमजोर पड़ जाती है। पर सृजनात्मक प्रवृत्तियाँ तो अप्रभावित रहती तथा हर आयु में एक जैसी रहती हैं।

सिसरो ने तो कालिन्स की इस बात का भी खण्डन किया है कि वृद्धावस्था में स्मरण शक्ति कमजोर पड़ जाती है। अपने तथ्य के समर्थन में उसने तर्क प्रस्तुत किया है कि जिन बातों को अनुभव के आधार पर वृद्ध महत्वपूर्ण समझता है, उन्हें कभी नहीं भूलता। भूलती वे ही बातें हैं, जो अनुपयोगी तथा कम महत्व की होती हैं। सेमुअल जान्सन ने भी अपने लम्बे अनुभव के बाद सिसरो की ही बात का समर्थन किया है। मनःशास्त्री डाक्टर लाजे का कहना है कि मनुष्य की मानसिक शक्तियाँ मृत्युपर्यन्त एक-सी बनी रहती हैं तथा किसी भी दशा में पहले की अपेक्षा क्षीण नहीं होतीं।"

विश्वविख्यात चित्रकार तथा मनोविज्ञान लियानार्दो ने लिखा है कि—"लोहा उपयोग में न लाने से जंग खा जाता है, गति एवं प्रवाहरहित जल अपनी शुद्धता गँवा देता है, उसमें सड़न पैदा हो जाती है। अकर्मण्यता के कारण ही मानसिक शक्तियाँ कमजोर पड़ जाती हैं। इस रोग से बचा जा सके तो मनुष्य सदा अपनी मानसिक प्रखरता स्थिर बनाये रख सकता है।"

शिकागो विश्वविद्यालय में शरीर विज्ञान के प्रोफेसर डा० कार्लसन निष्क्रिय जीवन को बुढ़ापे का चिन्ह मानते हैं तथा कहते हैं कि कोई भी निष्क्रियता अपनाकर असमय बुढ़ापा बुला सकता है। बुढ़ापे को रोकने के लिए सौ दवाओं की एक दवा मानते हुए वे इस बात की सिफारिश करते हैं कि अपने को सदा व्यस्त रखा जाय तथा आलस्य प्रमाद से बचा जाय। वृद्धों के लिए कार्य के विषय में उनका कहना है कि जो भी कार्य किया जाय वह सुविधाजनक, रुचिकर तथा शारीरिक दृष्टि से कष्टकारक न हो। स्वयं के सम्बन्ध में लिखते हैं कि मैंने इसी सूत्र को पकड़कर लम्बी उम्र पायी है तथा सैकड़ों को प्रेरणा देकर बुढ़ापे के कष्ट से मुक्ति दिलाकर यौवन की उमंगें भरी हैं।

प्रसिद्ध गणितज्ञ तथा दार्शनिक बर्ट्रेण्ड रसेल लिखते हैं कि यदि आपने छोटे-छोटे विविध कार्यों में रस लेना तथा अपने को व्यस्त रखना सीख लिया तो कभी भी बूढ़े नहीं हो सकते। जहाँ तक मेरा व्यक्तिगत अनुभव है कि दो खतरे अवश्य ऐसे हैं, जिनसे प्रत्येक व्यक्ति को बचना चाहिए। एक-यह कि अतीत की स्मृतियाँ बहुत अधिक नहीं एकत्र करनी चाहिए। बीते दिनों पर खेद व्यक्त करने अथवा हर्ष मनाने का कोई औचित्य नहीं है। अतीत से मात्र उपयोगी प्रेरणाएँ ली जायें इतना ही काफी है। उससे तभी बचा जा सकता है, जब वर्तमान का सुनियोजन किया। दूसरा खतरा उत्पन्न होता है—मन में वृद्धावस्था में निराशावादी विचारों के आधिपत्य जमा लेने से। इन दोनों से बचाव सम्भव हो सके तो तन से वृद्ध होते हुए भी मन से युवकों जैसी जिन्दगी गुजारी जा सकती है।

डा० हूदेलैण्ड का कहना है कि आलसी व्यक्तियों पर वृद्धावस्था का जाल शीघ्रता से फैलता है। एक विचित्र तथ्य का रहस्योद्घाटन उन्होंने यह किया है कि निकम्मे व्यक्तियों को आज तक किसी ने स्वस्थ तथा दीर्घायु होते नहीं देखा है। पाश्चात्य चिकित्साशास्त्री हमेन बेबर ने अपनी तथ्यपूर्ण खोजों के उपरान्त यह निष्कर्ष संसार के सामने रखा है कि संसार में जितने भी दीर्घजीवी मनुष्य हुए हैं, उनमें से शत-प्रतिशत जीवनपर्यन्त परिश्रमी रहे। उस सत्य की पुष्टि में उन्होंने लाखों उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जिनमें कुछ विश्वविख्यात ये हैं—प्लेटो गेसेन, केटो, सिरो; टिटियन माईकेल, एंग्लो, वेस्ली फ्रैकलिन, गेटी वाल्टेयर, फानमाल्टकी, विस्मार्क, ग्लेडस्टन, टालस्टाय आदि।

तथ्य, तर्क एवं प्रमाण इस बात के साक्षी हैं कि यौवन का आयु से राई रत्ती भर सम्बन्ध नहीं है। मनःस्थिति को सदा सन्तुलित, प्रसन्नचित्त तथा उत्साह एवं उमंग से युक्त रखा जा सके तो हर व्यक्ति चिर यौवन का लाभ प्राप्त कर सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिछले दिनों चिकित्सा विज्ञान में उत्साहवर्धक प्रगति हुई है। मेडीकल कालेजों की तथा चिकित्सा स्नातकों की संख्या अत्यधिक बढ़ी है। नयी औषधियों के आविष्कार भी हुए हैं और शरीर शास्त्र तथा आरोग्य शास्त्र के विभिन्न पक्षों पर शोध कार्य भी इतना हुआ है, जिसे देखते हुए आरोग्य रक्षा के प्रति उत्पन्न हुई जागरूकता को सराहा जा सकता है।

होना यह चाहिए था कि इतने प्रयासों के फलस्वरूप रोगों की रोगियों की संख्या घटती और स्वास्थ्य संवर्धन के संतोषजनक चिन्ह दिखाई पड़ते। किन्तु ऐसा हो नहीं रहा है। उल्टे रोगों की रोगियों की संख्या बेतरह बढ़ रही है। लगता है कि या तो चिकित्सा पद्धति असफल रही है अथवा रोग वृद्धि के कुछ ऐसे कारण हैं जिनकी ओर ध्यान नहीं दिया गया। फलतः चिकित्सा और रुग्णता की घुड़-दौड़ में अस्वस्थता आगे निकल गयी।

स्वयं चिकित्सा पद्धति के बारे में लोगों को भारी शिकायतें हैं। वे रोगों को अच्छा करने का आश्वासन तो देती हैं किन्तु क्षणिक चमत्कार दिखाके समय पर थोड़ी-सी राहत देकर अपनी बाजीगरी का खेल समाप्त कर देती हैं। इलाज करने वालों में से अधिकांश की हालत उससे भी बदतर हो जाती है जैसा कि चिकित्सा से पूर्व थी। कारण कि रोग समाप्त हो नहीं पाया और औषधियों के साथ जुड़ी हुई विषाक्तता ने शरीर में अड्डा जमाकर नया सिरदर्द खड़ा कर दिया। कहीं कोई बच्चा किसी दवाई के इन्जेक्शन की प्रतिक्रिया से मर जाता है तो कभी किसी दवा के एलर्जी रिएक्शन की चर्चा बहुत से व्यक्तियों से सुनने को मिलती है। यदि चिकित्सा शास्त्र की अभिनव खोज देखें तो पता चलता है कि जीवाणुओं की नयी-नयी एण्टी बायोटिक रेसीस्टेन्ट किस्में बनती जा रही हैं तथा शरीर क्रमशः विषाक्तता के प्रकोप से रोगी होता जा रहा है। उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, कैन्सर जैसे असाध्य रोगों की जितनी रोकथाम हो रही है, उतने ही वे बढ़ते जा रहे हैं तथा उतनी ही कम उम्र के लोगों को ग्रस्त करते जा रहे हैं। कुछ वर्ष पहिले जो दिल का दौरा चौथी या पाँचवी शताब्दी के लोगों को व्याधिग्रस्त करता था वह आज अक्सर तीसरी शताब्दी में ही लोगों को आ घेरता है। इन सब व अन्य सफलताओं का कारण व निवारण समझना आज का ज्वलन्त प्रश्न है।

गलती वहाँ शुरू हुई जहाँ मनुष्य को एक शरीर माना गया। कहने-सुनने के लिए यह भी मान लिया गया कि इस शरीर के साथ इच्छायें, विचारणायें व भावनायें भी जुड़ी हुई हैं। प्रधान तो यह रसायन से बना शरीर है तथा मन उसका सहायक व उसके लिए बना एक स्थूल स्वरूप मात्र है। इस आधार को लेकर हर रोग के कारण की स्थूल शरीर में खोज की गई पर किसी का भी कारण नहीं मिला। हारकर जो भी स्थूल विकृति पाई गई, उसका किसी न किसी प्रकार निराकरण करने की बात सोची गई। यदि गुर्दे में पथरी बन गई तो यह पता नहीं चला कि पथरी क्यों बन गई पर फिलहाल उस पथरी को हटा दिया गया। बार-बार पथरी बनती गई तथा एक स्थिति ऐसी आ गई कि जब उस गुर्दे को निकाल देने के अलावा कोई चारा ही नहीं रह गया। यदि किसी कारणवश दोनों गुर्दे लाइलाज हो गये तो उनका कारण तो ठीक किया न जा सका पर उनके परिणामस्वरूप होने वाली रक्त की विकृति को डाईलिसिस के द्वारा ठीक करने का प्रयास किया गया। इस डाईलिसिस के परिणाम स्वरूप होने वाले नुकसानदायक साइड इफैक्टस को ठीक करने के लिए अनेकानेक इलाज किये जाने लगे। यदि उचित समझा गया तो नया गुर्दा लगाने का भी प्रयास किया गया, उसमें होने वाले ग्राफ्ट रिजैक्शन की प्रक्रिया को रोकने के लिए इश्यूनोसप्रैशन किया गया जिसकी वजह से रोगी को हानिरहित जीवाणुओं से भी जान बचानी मुश्किल हो गई तथा म्यूनो सप्रैसिव दवाओं के उपहार स्वरूप होने वाले "बोनमैरो डिप्रैशन" ने रोगी को रक्त विहीन कर दिया। रक्त की कमी को पूरा करने के लिए बाहर से रक्त दिया गया। मनुष्य डाक्टरों व दवाओं का गुलाम बनकर नरक भोगकर दुनियाँ से कूँच कर गया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस कहानी को विवेक पर परखें तो पता चलता है कि गलती दो प्रकार से हुई (१) रोगी से होने वाली विकृति को ठीक करने का हर सम्भव सराहनीय प्रयत्न किया गया पर विकृति आगे न हो यह नहीं रोका जा सका क्योंकि विकृति क्यों हो रही है, इस सारी कहानी का तो पता ही नहीं चला। (२) जो इलाज किया गया या दवा दी गई वह सब इतना अप्राकृतिक था कि शरीर ने उसे बाह्य पदार्थ विजातीय माना तथा जहाँ इस पदार्थ ने एक रोग को सही किया वहीं दूसरे एक नये रोग को जन्म दे दिया। इस प्रकार जहाँ मूलरूप से जो रोग था वह तो बढ़ता ही रहा, साथ ही साथ दवा के फलस्वरूप होने वाला रोग उसमें जुड़ता रहा। जितना इलाज किया जाता रहा, दुःख व कष्ट उसी अनुपात में बढ़ता रहा। रोग के लिए दवा—दवा से रोग की एक श्रृंखला चलती रही। रोग जितना बढ़ता रहा उतना ही वह जटिल व सूक्ष्म होता गया तथा उसके लिए उतनी ही जटिल पद्धतियाँ इलाज के कार्य में लाई गईं तथा उन पद्धतियों के उतने ही अधिक जटिल दुष्परिणाम होते गये।

वस्तुतः रोग की उत्पत्ति का कारण स्थूल शरीर से नहीं है। कारण प्रकृति के नियमों के उल्लंघन में है। इस उल्लंघन के फलस्वरूप शरीर में इतने मल इकट्ठे हो जाते हैं कि उनकी विषाक्तता शरीर को रोगी बना देती है। उदाहरणार्थ देखा जाये तो गुर्दे में होने वाली पथरी उन मलों का ही स्वरूप है, जो अनावश्यक रूप से आहार रूप में ग्रहण किये गये थे तथा जिन्हें गुर्दे ने बाहर तो कर दिया परन्तु वे इतने घने थे कि वहीं जम गये। बेचारा गुर्दा इतना पानी व इलैक्ट्रोलाइट्स नहीं जुटा पाया कि वे घनीभूत पदार्थ बाहर फेंक दिये जाते।

इस बात को यों भी कह सकते हैं कि गुर्दे में प्राणशक्ति का अभाव था। वह पूरी तरह से संचित मलों को नहीं निकाल पाया। यदि गुर्दा पूरी तरह से सभी मलों को निकाल देता तो पथरी नहीं बनती।

दोनों ही पक्ष अपने-अपने स्थान पर सही हैं। मल वस्तुतः गुर्दे को इतने अधिक मिले जितने कि निकालने की प्रकृति ने उससे अपेक्षा नहीं की थी तथा पहिले से अप्राकृतिक रूप से अधिक मल निकालते-निकालते गुर्दे की प्राणशक्ति कम भी हो चुकी थी। दोनों ही पक्षों ने मिल कर रोग को जन्म दिया। आधुनिक मतानुसार पथरी जम गई है, उसे शल्य क्रिया से निकाल देना ही उचित है पर साथ ही साथ यदि प्राण का सम्वर्धन कर दिया जाय व आहार-विहार को अधिकाधिक प्राकृतिक बनाया जाय तो आगे रोग की रोकथाम हो सकती है तथा रोग की श्रृंखला टूट सकती है, जो कि शल्कयक्रिया से सम्भव नहीं हो पाती।

रोग निवारण एवं आरोग्य संवर्धन की आवश्यकता अनुभव करने वालों को समझना चाहिए कि शरीर में जीवनीशक्ति का संवर्धन करने से ही बात बनेगी। रोगों की उत्पत्ति-विषाणुओं का आक्रमण उतना भयानक नहीं जितना कि आहार-विहार का असंयम, प्रकृति मर्यादाओं के प्रतिकूल आचरण। मानवी काया जीवनी शक्ति का भण्डार है। उसमें और कुछ अतिरिक्त रूप में भरने की आवश्यकता नहीं। आत्मसंयम, अनुशासन और सदाशयता का आश्रय लेकर जीवनी शक्ति की बर्बादी रोकी जा सकती है। इस रोकथाम से ही वह क्षमता उपलब्ध होगी जो रुग्णता से चिरस्थायी मुक्ति दिला सके।

आयु एवं स्वास्थ्य शरीर पर नहीं, मन पर निर्भर

यूनान के एक प्राचीन चिकित्सा शास्त्री सन्त इब्नेसिया से किसी ने पूछा कि मृत्यु पर्यन्त युवा और स्वस्थ रहने के लिए हमें क्या करना चाहिए ? इब्नेसिया ने जो उत्तर दिया वह बहुत ही साधारण था। उन्होंने कहा 'आजीवन युवा और स्वस्थ रहने के लिए किसी कठिन या विशेष उपाय की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता इस बात की है हम अपनी भूलों को सुधार लें और भ्रान्तियों से छुटकारा पा लें। क्या हैं वे भूलें, जो असमय ही बुढ़ापा ला देती हैं और क्या हैं वे भ्रान्तियाँ जो रोग, बीमारियों को निमन्त्रण देती हैं ? इसका उत्तर भी साधारण-सा ही है कि मनुष्य अपने आहार-विहार

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और आचार-विचार को न जाने क्यों इतना बिगाड़ लेता है कि स्वास्थ्य संकट उत्पन्न हो जाता है ? वस्तुतः किसी को स्वस्थ रहने के लिये डॉक्टरों से सलाह लेने और मल्टी विटामिन, टॉनिकों के सेवन की आवश्यकता नहीं है, डॉक्टर की सलाह और औषधियों का सेवन तो तब आवश्यक है जब बीमार पड़ा जाय। प्रश्न उठता है कि बीमार हुआ ही क्यों जाये ? स्वस्थ रहना जब अपने हाथ की बात है तो बीमार होना भी अपनी इच्छा पर निर्भर है। चाहे तो स्वस्थ रहे, चाहें तो बीमार पड़ें।

खान-पान का असंयम, दिनचर्या की अनियमितता, श्रम-विश्राम का असन्तुलन और कृत्रिम अप्राकृतिक जीवन ही वे कारण हैं जो मनुष्य के स्वास्थ्य को चौपट करते हैं। अन्यथा खानपान में सादगी और संयम रखा जाय, नियमित दिनचर्या बनाकर रहा जाय, पर्याप्त श्रम और पर्याप्त विश्राम किया जाय तो शरीर यन्त्र के किसी कलपुर्जे को बिगड़ने-गड़बड़ाने की स्थिति ही नहीं आती और लम्बे समय तक स्वस्थ, निरोग और शक्तिशाली रहा जा सकता है। कहा जा सकता है कि बुढ़ापा तो अनिवार्य है। वह तो आना ही है, उसे रोका नहीं जा सकता। वह कहावत पुरानी हो चली जिसमें कहा जाता था कि 'जवानी वह देखी जो जाकर के नहीं आती और बुढ़ापा वह देखा जो आकर के नहीं जाता' हाल ही में हुई वैज्ञानिक शोधों के निष्कर्ष को दृष्टिगत रखते हुए इस कहावत में यदि कोई संशोधन करना पड़े तो वह इस प्रकार होगा कि 'जवानी वह देखी जो आने पर भगा दी जाती है बुढ़ापा वह होता जो न आने पर बुलाया जाता।'

स्वास्थ्य विज्ञानियों ने पिछले दिनों जो शोध अनुसन्धान किये हैं उनसे ये निष्कर्ष सामने आये हैं कि जवानी का उम्र से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। वह उस समय भी बनी रहती है जिसे हम आमतौर पर वृद्धावस्था कहते हैं। जीवन की सभी अवस्थायें मनुष्य की आयु से कहीं किसी रूप में सम्बन्धित हैं तो उसकी धुरी चिन्तन पर टिकी हुई है। यदि कम उम्र का व्यक्ति अपने आपको प्रौढ़ समझे और तदनरुप उत्तरदायित्व ओढ़े तो वह प्रौढ़ों की भूमिका प्रस्तुत कर सकता है। इसके विपरीत उपेक्षा और अवसाद के कारण जवानी भी बुढ़ापे में बदल सकती है। बुढ़ापे में भी जवान रहा जा सकता है यह मनुष्य के साहस, उत्साह, परिश्रम और मनोबल पर निर्भर है। ऐसे कई ऐतिहासिक उदाहरण मिल सकते हैं जिन्होंने वृद्धावस्था में जवानों से अधिक स्फूर्ति दर्शायी और जीवन के सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण काम किये। गोस्वामी तुलसीदास ने पचास वर्ष की आयु हो जाने के बाद रामचरित मानस लिखना शुरू किया था। रवीन्द्रनाथ टैगोर ६० वर्ष की उम्र तक साहित्य लेखन का काम करते रहे थे। वेदों के प्रसिद्ध भाष्यकार और संस्कृत के मर्मज्ञ विद्वान सातवलेकर पचपन वर्ष की आयु तक अध्यापकी करते रहे थे। रिटायर होने के बाद उन्होंने संस्कृत का अध्ययन आरम्भ किया और जीवन के उत्तरार्ध में संस्कृत तथा संस्कृति की सेवा की कि आज उन्हें इस देवभाषा के पुनरुद्धारकर्ता के रूप में ही जाना जाता है।

सन् १९३२ में महात्मा गांधी ने एक विदेशी पत्रकार द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा था कि मैं ६३ वर्ष का जरूर हो गया हूँ, पर मुझे कभी ख्याल नहीं आता कि मैं बूढ़ा हो गया हूँ, जिस आदमी को ऐसा लगेगा वह पाठशाला के एक विद्यार्थी की तरह उर्दू का अध्ययन करेगा और कैसे बंगला, तमिल, तेलगु पढ़ने के सपने देखेगा ? प. जवाहर लाल नेहरू अस्सी वर्ष के करीब जा पहुँचे थे, पर उस उम्र में भी वे दौड़कर सीढ़ियाँ चढ़ते थे। भूतपूर्व प्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई भी अस्सी के लगभग हैं, परन्तु वे अभी भी जवानों के से स्फूर्तिवान दिखाई देते हैं। दो वर्ष पूर्व ही समुद्र में एक जहाज से दूसरे जहाज पर रस्सी के सहारे गये।

इतिहास में भी इस तरह के कई उदाहरण मिलते हैं जब लोगों ने जीवन के उत्तरार्ध में ही ऐसे काम किये जिनसे वे विश्व-विख्यात हो गये। यूनानी नाटककार सोफोक्लीन ने ६० वर्ष की आयु में अपना प्रसिद्ध नाटक 'आड़ीपस' लिखा था। अंग्रेजी कवि मिल्टन ४३ वर्ष की आयु में अन्धे हो गये थे। अन्धे होने पर उन्होंने अपना सारा ध्यान साहित्य सृजन पर केन्द्रित किया और ५० वर्ष की आयु में 'पैराडाइज लास्ट' लिखा। जर्मन कवि गेटे ने ७० वर्ष की आयु में अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'फास्ट' पूरा किया था। ६२ वर्ष का अमेरिकी दार्शनिक जानडेवी अपने क्षेत्र के अन्य सभी विद्वानों में अग्रणी था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अंग्रेजी राजनीति का इतिहास जिनने पढ़ा होगा वे जानते होंगे कि ग्लेडस्टन ७६ वर्ष की आयु में तीसरी बार प्रधानमन्त्री बना था और ८४ वर्ष की आयु में उन्होंने 'ओडेसी आफ हारर' नामक ग्रन्थ की रचना की। आठवी जर्मन सेना का सेनापतित्व जब 'पाल्वान हिण्डैन वर्ग' को सौंपा गया तो वे ६७ वर्ष के थे। ७८ वर्ष की आयु में वह पार्लामेण्ट के अध्यक्ष चुने गये और ७ वर्ष की आयु तक इसी पद पर प्रतिष्ठित रहे। हैनरी फिलनिन पिटैन जब फ्रांस के प्रधानमन्त्री बनाये गये तब उनकी आयु ८४ वर्ष की थी। लायड जार्ज ब्रिटेने के मूर्धन्य राजनेता रहे हैं, ८५ वर्ष की आयु में भी उनमें युवकों जैसी स्फूर्ति और काम करने की शक्ति थी। चर्चिल ने दूसरे विश्वयुद्ध के समय जब इंग्लैण्ड का प्रधानमन्त्री पद सम्भाला तो वे ८० वर्ष के थे। जनरल मेक आर्थर ६० वर्ष की आयु में भी ४५ वर्ष की आयु वाले व्यक्तियों के समान सक्रिय रहे। दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति सिगमन ८० वर्ष की आयु में पूरी तरह सक्रिय रहे।

अमेरिका के प्रख्यात उद्योगपति राकफैलर ने पूरी १०० वर्ष की आयु पाई और उन्हें कभी बेकार समय गुजारते नहीं देखा गया। एक-दूसरे व्यवसायी कोमोडोर विण्डरविट ने ७० वर्ष की आयु में व्यापार के क्षेत्र में प्रवेश किया और ६० वर्ष की आयु में उनकी गणना संसार के प्रसिद्ध उद्योगपतियों में की जाने लगी। मोटर उत्पादक हैनरी फोर्ड ८२ वर्ष की आयु में भी युवकों के समान चुस्त और क्रियाशील रहते थे।

महान् साहित्यकार जार्ज बर्नार्डशा ने ६० से ६३ वर्ष की आयु के बीच इतना अधिक साहित्य लिखा जितना कि वे ५० से ६० की आयु के बीच नहीं लिख पाये थे। दार्शनिक वेनेदित्तो क्रोचे ८० वर्ष की अवस्था में भी नियमित रूप से १० घण्टे काम करते थे। उन्होंने दो पुस्तकें तो ८५ वर्ष की अवस्था में ही लिखीं। नोबुल पुरस्कार विजेता साहित्यकार मारिल मैटरलिक ने ८८ वर्ष की आयु में 'द एवाट आफ सेटुवाल' नामक पुस्तक लिखी जिसे उनकी रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। ब्रिटेन के प्रसिद्ध समाचार पत्र 'डेली ऐक्सप्रेस' के संचालक लार्डबीवन वर्क ८० वर्ष की आयु में भी दस घण्टे नियमित रूप से अपने दफ्तर में बैठकर काम करते थे।

टैनीसन ने ५८ वर्ष की आयु में अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'क्रासिंग द वार' पूरा किया। दार्शनिक काण्ट ने ७४ वर्ष की आयु में ख्याति अर्जित की और 'एन्थ्रोपोलॉजी' 'मेटाफिक्स आफ ईथिक्स' और स्ट्राइफ ऑफ फैकल्टिज' नामक पुस्तकें लिखीं जो दर्शन की उच्च कक्षाओं में पढ़ाई जाती हैं। होब्स ने ८८ वर्ष की आयु में 'इलियड' का अनुवाद प्रकाशित कराया था। चित्रकार टीटान का विश्वख्यिात चित्र 'बैटिल आफ लिटाण्टो' जब पूरा हुआ था, तब उनकी आयु ८८ वर्ष की थी।

अमेरिका की सुप्रसिद्ध फिल्म अभिनेत्री 'दादी रेनाल्ड' ने पश्चिमी जगत में बहुत ख्याति अर्जित की। ६५ वर्ष की आयु में जब वे चार बच्चों की माँ और दर्जनों नाती-पोतों की दादी बन चुकी थीं, तब शिक्षा प्राप्त करने की सूझी और कॉलेज जाने लगीं। ६६ वर्ष की आयु में वे कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय से स्नातिका हुयीं। इसके बाद वे हालीवुड पहुँची। उनकी रुचि, लगन और मधुर व्यवहार देखकर फिल्म डायरेक्टर ने उन्हें एक छोटा रोल दे दिया। इस भूमिका को उन्होंने इतनी कुशलता के साथ निभाया कि बाद में उनके सामने फिल्मों के ढेर लग गये और वे लगातार १३ वर्ष तक फिल्मों में काम करती रहीं।

कहा जा चुका है कि यौवन का आयु से कोई सम्बन्ध नहीं है, वह वृद्धावस्था में भी बना रह सकता है और छोटी आयु में भी विकसित हो सकता है। बुढ़ापे में भी जवान रहा जा सकता है और लोग वृद्धावस्था में युवकों की-सी स्फूर्ति तथा कुशलता के साथ काम करते रहे हैं, इसके कुछ उदाहरण ऊपर दिये गये हैं, इसी प्रकार कम आयु में भी परिष्कृत और विकसित व्यक्तित्व का परिचय देने वालों की कमी नहीं है। आद्यशंकराचार्य ने ३२ वर्ष की आयु में ही इतना साहित्य रच डाला था कि उसे पढ़ने और समझने के लिए कई जीवन चाहिए। इतना ही नहीं, उन्होंने चारों धामों की स्थापना की, देशभर में घूम-घूमकर पण्डितों से शास्त्रार्थ किया। १६ वर्ष की आयु से लेकर ३२ वर्ष की आयु तक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के सोलह वर्ष यदि लगन के साथ किसी दिशा में जुटा दिये जायें तो हर किसी के लिए उतना कुछ कर सकना असम्भव है जितना कि आद्यशंकराचार्य ने कर दिखाया।

वायुयान के आवष्किारक विल्वर राइट और आरविल राइट बीस और तीस वर्ष के ही थे, जबकि वे वायुयान उड़ाने का परीक्षण करने लगे थे और कुछ ही वर्षों में उन्होंने हवाई उड़ान भरकर संसार को आश्चर्यचकित कर दिया था। ब्लेज पास्कल ने ज्यामिति पर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक १६ वर्ष की अवस्था में लिखी और उसी आयु में गणना यन्त्र एटिन मशीन का आविष्कार कर लिया। वैज्ञानिक क्षेत्र में कितनी ही प्रतिभायें ऐसी हुयीं जिन्होंने छोटी आयु में आविष्कार किये। एलीव्हिरची ने २८ वर्ष की आयु में कपास ओटाने की मशीन का आविष्कार किया। चार्ल्स मार्टिन हाल ने २३ वर्ष की आयु में विद्युत संश्लेषण द्वारा अल्युमिनियम उत्पादन की नई विधि पेटेण्ट कराई।

इन बाल प्रतिभाओं के सम्बन्ध में यह भी कहा जा सकता है कि ये विलक्षण विभूतियों से सम्पन्न रही होंगी। पूर्व जन्म के संस्कार उनके इस जन्म में छोटी अवस्था में ही उत्पन्न हो गये होंगे। किन्तु इससे यौवन की अवस्था का कोई सम्बन्ध नहीं होता। पूर्व जन्म के संस्कार स्वरूप ही सही, इस जन्म में बचपन में ही प्रतिभा के अंकुर तो फूटे। फिर भी इस विषय को यहीं छोड़ दिया जाय तो उन लोगों को क्या कहेंगे, जो वृद्धावस्था में भी जवानों से अधिक स्फूर्तिवान रहे हैं और स्वस्थ, चुस्त ढङ्ग से सक्रिय जीवन व्यतीत करते रहे हैं। वस्तुतः युवावस्था का आयु से उतना सम्बन्ध नहीं है, जितना कि मनोभूमि और चित्त की दशा से। ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध साहित्यकार और राजनेता वेंजामिन डिजरायली यौवन का सम्बन्ध मन की अवस्था बताते हुए कहा करते थे कि जिनने जवानी गँवा दी, उनके पास कुछ और बचा ही नहीं। उनका अभिप्राय था कि महत्वपूर्ण कार्य करने का उत्साह, क्रियाशीलता, जोश, उमंग, स्फूर्ति और लगन का नाम ही यौवन है और यह यौवन स्वस्थ शरीर के भीतर विद्यमान स्वस्थ मन में निवास करता है।

इस सन्दर्भ में यूनान के प्रसिद्ध शल्य चिकित्सक इम्नेसिया का कथन है कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए विचारों को स्वस्थ रखना आवश्यक है। स्वास्थ्य रक्षा के सभी आवश्यक साधन निबाहते रहने पर भी यदि विचार शुद्ध नहीं, मन निर्मल नहीं है तो स्वास्थ्य प्राप्ति का उद्देश्य कदापि प्राप्त नहीं किया जा सकता। शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार के स्वास्थ्यों पर आचार-विचार का गहरा प्रभाव पड़ता है। अस्तु अपने आचार-विचार को ठीक रखते हुए, मन में उत्साह और उमंग रखकर स्फूर्ति, आशा तथा उत्साह को ही जीवन धन बनाया जाये तो चिरयौवन की प्राप्ति कोई असम्भव बात नहीं। वह तो एक मनःस्थिति का नाम है, जिसे तैयार करने के लिए आचार-विचार से लेकर रहन-सहन तक सर्वाङ्गपूर्ण साधना करनी पड़ती है।

मनःस्थिति सम्भालिए—आयुष्य का आनन्द लीजिये

वृद्धावस्था जिसे कभी परिपक्व आनन्द, प्रगाढ़-ज्ञान, अनुभव कोष और मानवी गरिमा का पर्याय माना जाता था, आज की परिस्थितियों में सर्वत्र भार प्रतीत होती दीखती है, तो परमात्मा के विधान में कहीं कोई भूल हुई जान पड़ती है। अधिकांश लोग इस अवस्था में दुःखी खीझते दिखाई देते हैं, वे इस स्थिति का दोष या तो अपने भाग्य और भगवान को देते हैं या फिर आज के समाज को कोसने में सन्तोष मानते हैं। किन्तु तथ्य ठीक इसके विपरीत है। वृद्धावस्था के क्षोभ का कारण वह स्वयं ही है। सच तो यह है कि चिन्तन की विकृति के कारण वह असामयिक वृद्धावस्था का कारण स्वतः ओढ़ लेता है।

फ्रेंक एण्ड वैगनाल्स कम्पनी द्वारा एक पुस्तक प्रकाशित हुई—स्टेइंग यंग वियोंड योर डयर्स' लेखक है—डॉ० एच० डब्ल्यू० हैगर्ड। इस पुस्तक में लेखक ने कहा है कि काहिली वृद्धावस्था की जननी है। एक जर्मन चिकित्सक क्रिस्टोफ विलहेल्स ह्यूफलैंड ने अपनी मैक्रोविओटिया नामक पुस्तक में लिखा है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारी भावनात्मक आदतें ही हममें बुढ़ापा ला देती हैं। यदि हम निराश, उदास, चिन्ताग्रस्त मनोवृत्ति के हैं तो वृद्धावस्था शीघ्र ही आना सुनिश्चित है।" वे कहते हैं कि चिर युवा बने रहने का सूत्र—प्रसन्नता एवं प्रफुल्लता है।

हाइजिया नामक पत्रिका में डॉ० ए० सी० आढ़ती ने डॉ० रेमाण्ड पर्ल द्वारा किये पर्यवेक्षण निष्कर्ष का उल्लेख किया है। डॉ० रेमण्ड ने ५००० व्यक्तियों का अध्ययन किया जो ६० वर्ष की आयु से ऊपर थे। अध्ययन का निष्कर्ष यह निकला कि एक विशेषता सबके साथ जुड़ी थी—निश्चिन्तता का जीवनक्रम। आशावादी दृष्टिकोण एवं प्रफुल्लता से परिपूर्ण मनोभूमि।

वद्धावस्था का कारण बताते हुए 'गैलेट वर्गेस' 'लुक—एलेविन इयर्स यंगर' नामक पुस्तक में लिखते हैं कि एकाकी एवं एकान्त प्रिय मनोवृत्ति चिन्ता एवं निराशा का कारण बनती है। यह प्रवृत्ति इस बात का परिचायक है कि वृद्धावस्था शीघ्र आने वाली है। उदासी, खिन्नता, निराशा के रहते कोई भी शक्ति सम्पन्न बने रहने का प्रयत्न कारगर सिद्ध नहीं हो सकता। अधिक दिनों तक जीना हो—चिरयौवन की आकांक्षा हो तो लोगों में घुलना, मिलना सीखिये। सदा प्रसन्न रहिये और प्रत्येक छोटे बड़े कार्य में रुचि लीजिये।

'लिविंग नामक पत्रिका में "एण्ड्रूज एलन" नामक विद्वान ने वृद्धावस्था न आने देने की ६ सूत्रीय योजना प्रकाशित कराई थी, जो हर व्यक्ति के मनोबल को ऊँचा बनाये रखने—चिरयौवन का आनन्द लेने की कुञ्जी है। वे सूत्र इस प्रकार हैं—

(१) भूतकाल की कल्पनाओं में अपना समय निरर्थक न गँवाइये। यौवन के दिन जीवन में अग्रसर होने के लिए संघर्ष के थे और अनिश्चितता को आमन्त्रित करना विवेक सम्मत नहीं है। संघर्ष की उस अवस्था को अब आप पार कर चुके हैं। आनन्द अतीत नहीं है—वर्तमान है और वर्तमान अपनी झोली में आनन्द का भण्डार लिए सामने खड़ा है। देर बस आमन्त्रण के स्वीकार करने की है।

(२) अतीत की अपनी असफलताओं पर क्षोभ मत प्रकट कीजिये। उनसे प्रेरणा लीजिये और वर्तमान का अधिक कुशलता से उपयोग कीजिये। ईश्वर को धन्यवाद दीजिये जिसके सहारे जीवन के पूर्वार्द्ध के संघर्षों को पार कर लिया। अब तो केवल जीवन का आनन्द लेना आपके लिए अवशेष है। चिन्ता छोड़िये और प्रकृति के अक्षय आनन्द भण्डार को अपनी बाँहों में समेटकर सदा प्रसन्न रहें।

(३) यदि आप कुछ अधिक उम्र के दिखलाई पड़ते हैं तो उसकी किञ्चित चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। अतीत के संघर्ष के कारण चेहरे पर जो झुर्रियाँ उभर आयी हैं वे प्रौढ़ परिपक्वता की द्योतक हैं, जिन्हें देखकर लोग सम्मान देते हैं। उसे परिपक्वता का चिन्ह मानकर गर्व अनुभव करना तथा अनुभवों का लाभ दूसरों को देना ही इस आयु का वास्तविक सदुपयोग है।

(४) अधेड़ आयु में ही लम्बी-चौड़ी अनेकों योजनायें बनाने से व्यक्ति और भी संकट में पड़ जाता है। कई कार्यों में हाथ डालने की अपेक्षा अपनी सामर्थ्य एवं स्थिति के अनुरूप एक कार्य में मनोयोग लगाना अधिक उपयुक्त है। अनावश्यक भाग-दौड़ एवं चिन्ता से थकान आती और बुढ़ापे का प्रभाव दिखलाई पड़ने लगता है। काम करें पर अपनी सामर्थ्य के अनुरूप और साथ ही विश्राम की उपेक्षा भी न करें।

(५) कभी यह न सोचें कि हमारी क्षमता की 'इतिश्री' यहीं तक है। नवीन स्फूर्ति के लिये नई दिशाओं की तलाश करें और नये काम सीखने में मन लगायें। नई-नई खोजें आपको आनन्द देंगी।

(६) भविष्य की अनावश्यक चिन्ता उचित नहीं। कभी यह न सोचें कि संसार हमें इसलिये छोड़ देगा कि हमारी शक्ति क्षीण हो चुकी है। यह सोचना निराशा को जन्म देगा। वास्तविकता यह है संसार को अनुभवशीलों के मार्ग-दर्शन की विशेष आवश्यकता है। आयु ने आपको छः अनुभवों की पूँजी दी है। इसका सदुपयोग करने में कभी पीछे न हटें। आत्म-विश्वास सदा बनाये रखें।

योग्यता, प्रतिभा एवं अनुभवों की दृष्टि से आयु का उत्तरार्द्ध पक्ष सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है। पर देखा जाये तो अधिकांश की आयु का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह पक्ष यों ही बेकार चला जाता है। कारण स्पष्ट है अनावश्यक चिन्ताओं एवं आशंकाओं के कारण असमय बुढ़ापा हावी हो जाता है। यह सच है कि अवस्था के अनुरूप शारीरिक चिन्ह प्रकट होते हैं। बालों का पकना, आखों से कम दिखाई देना, कानों से कम सुनाई देना जैसे चिन्ह असमर्थता के नहीं आयु के अनुरूप परिवर्तन के लक्षण हैं। जिनको एक सीमा तक ही रोका जा सकता है, पर इनको ही बुढ़ापे का, असमर्थता का लक्षण मान लेना भारी भूल है। संसार के परदे पर सैकड़ों व्यक्ति हुये हैं, जो जीवन-पर्यन्त युवा उमंगों से भरपूर बने रहे। आयु के अनुरूप शारीरिक परिवर्तन तो उनमें भी दिखाई पड़े किन्तु इन लक्षणों को उन्होंने अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। हर क्षण का उसी उत्साह एवं उमंग के साथ उपयोग किया जितना कि युवावस्था में।

मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में यह मान्यता जोर पकड़ती जा रही है कि यौवन का सम्बन्ध आयु से नहीं, मनःस्थिति से है। वह सन्तुलित प्रसन्नचित्त बनी रहे तो मनुष्य सदा बुढ़ापे से बचा रह सकता है। गांधीजी ८० वर्ष की आयु में भी अपने को युवक मानते थे। इस अवस्था में भी उनकी स्फूर्ति देखते बनती थी। इसका रहस्योद्घाटन करते हुये उन्होंने एक बार कहा—"मैंने कभी भी परिस्थितियों को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। अपने समय के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग करना एवं अनावश्यक चिन्ताओं से मन को विमुक्त रखना ही मेरे चिरयौवन का रहस्य है। "चर्चिल" बुढ़ापे को एक गाली मानते थे, उनका यही कहना था—कि "वृद्धावस्था पके हुये फल के समान है। जिसमें मिठास अधिक है। इस आयु में मनुष्य समाज के लिये सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता है।" जार्ज बर्नाडशा" का कहना है कि "प्रकृति का वास्तविक आनन्द जीवन के उत्तरार्द्ध में ही उठाया जा सकता है। भूत के अनुभवों से प्रेरणा लेकर मनुष्य संसार का आनन्द लेते हुये समाज के लिये अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता है। वह कहते हैं कि बुढ़ापे को मैं जीवन का अभिशाप मानता हूँ।"

मनःस्थिति निराशा एवं आशंकाओं से ग्रस्त हो तो असमय ही वृद्धावस्था के चिन्ह प्रकट होने लगते हैं और मनुष्य अपने को असमर्थ, असहाय अनुभव करने लगता है। इस स्थिति से बचने के लिये शक्ति एवं सामर्थ्य के अनुरूप सतत् रचनात्मक कार्यों में संलग्न रहना श्रेयस्कर है। सत्कार्यों में निरत रहने पर आत्म-संतोष की अनुभूति होती है, जो स्वयं जीवन को और भी अधिक श्रेष्ठता से जीने की प्रेरणा देती रहती है।

आत्मोन्नति के लिये परिपुष्ट शरीर की आवश्यकता

'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा का निवास होता है' यह कथन अक्षरशः सत्य है। जिसका शरीर स्वस्थ होगा, उसकी आत्मा भी स्वस्थ एवं समुन्नत होगी। स्वस्थ आत्मा के लिये शरीर का स्वस्थ होना आवश्यक है।

स्वस्थ आत्मा के लक्षण हैं—साहस, शौर्य्य, वीरता, धीरता, स्थिरता, शान्ति, सन्तोष, प्रसन्नता, प्रफुल्लता एवं असंकीर्णता आदि दैवी, सात्विकी अथवा आध्यात्मिक गुणों का बाहुल्य। जिन व्यक्तियों में इन गुणों की अभिव्यक्ति पाई जायेगी, उनकी आत्मा को स्वस्थ ही कहना होगा। इसके विपरीत जो कायर है, अधैर्यवान्, भीरु, दीन-हीन एवं मलीन है, वह स्वस्थ आत्मा वाला नहीं माना जा सकता। आत्मा को स्वस्थ बनाने अथवा स्वस्थ आत्मा पाने के लिये जिन गुणों की आवश्यकता है, उनमें प्रथम स्थान शरीर का ही है। शरीर के पूर्ण रूप से स्वस्थ होने से बाहर-भीतर चारों ओर सामर्थ्य ही सामर्थ्य दृष्टिगोचर हुआ करती है।

संसार के प्रत्येक क्षेत्र में स्वस्थ शरीर की अनिवार्य आवश्यकता है। उपार्जन से लेकर भोजन तक और संघर्ष से लेकर मनोरञ्जन तक ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है, जिसमें अस्वस्थ शरीर वाले व्यक्ति सफलता एवं सार्थकतापूर्वक बस सकें। किसान से लेकर क्लर्क तक और उद्योगपति से लेकर श्रमिक तक—यदि वह शरीर से स्वस्थ एवं समर्थ नहीं होगा तो अपना उपार्जन-क्रम नहीं चला सकता। यदि रो-झींक कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चलाता भी है तो उसका काम सुन्दर एवं सन्तोषजनक नहीं हो सकता। अस्वस्थ-शरीर व्यक्ति अधिक दिनों तक उपार्जन क्षेत्र में नहीं डट सकता। शीघ्र ही वह या तो रोगी होकर चारपाई पकड़ लेगा अथवा पूर्णरूप से क्षीण होकर क्षय हो जायेगा। बहुत-से अस्वस्थ व्यक्ति खाते कमाते देखे जाते हैं। किन्तु उनके खाने-कमाने में कोई रस अथवा कोई आनन्द नहीं होता। वे मुर्दों की तरह कमाते और उनकी तरह ही जीते हैं।

यह भी सम्भव हो सकता है कि ऐसे अनेक अस्वस्थ व्यक्ति हों जिनके काम करने वाले नौकर-चाकर हों, पुत्र व पौत्र हों और उनको उपार्जन के लिये किसी प्रकार की चिन्ता न करनी पड़ती हो, तब भी ऐसे परावलम्बी व्यक्ति जीवन का कोई सुख नहीं पा सकते। परावलम्बी, पराश्रित अथवा परमुखापेक्षी व्यक्ति की आत्मा दीन-हीन तथा मलीन होकर मर तक जाती है। सन्तान वाला होकर भी अनाथ और धनवान् होकर भी भिखारी जैसा बना रहता है। पर-निर्भर, सो भी शारीरिक निर्भरता वाला व्यक्ति ऊपर से कितना ही अभिमान, मान, गुमान अथवा स्वाभिमान क्यों न दिखलाये किन्तु वह सब उसका आडम्बर मात्र ही होता है। उसका मन, उसकी आत्मा अन्दर ही अन्दर रोया-सिसका करती है।

जीवन का आधार कहा जाने वाला भोजन अस्वस्थ शरीर के लिये विष होता है। वह जो कुछ खाता है अजीर्ण बन जाता है, यों ही पेट के बाहर निकल जाता है अथवा अन्दर ही अन्दर रुककर सड़ा करता और कष्ट बढ़ाया करता है। बहुत कुछ खाने-पीने को होने पर भी जब असमर्थ शरीर व्यक्ति दो ग्रास रुचिकर भोजन करने के लिये तरसता है, तब उसकी आत्मा की क्या दशा होती है इसे तो भुक्तभोगी ही जान सकते हैं।

अन्य सुख तो दूर की चीज है असमर्थ व्यक्ति निद्रा सुख से भी वञ्चित रहता है। अस्वस्थ व्यक्ति को अनेक चिन्तायें, पीड़ायें तथा वेदनायें घेरे रहती हैं, इस कारण उसे रात में नीद नहीं आती। जब संसार मौज से मीठी तथा गहरी नींद सोता है और असमर्थ व्यक्ति अनिद्रा का आखेट बना तारे गिनता रहता है, तब उसकी आत्मा पर क्या बीतती है यह भी कोई भुक्तभोगी ही जान सकता है। भोजन, नींद, श्रम एवं स्वावलम्बन के सुख से वञ्चित असमर्थ शरीर वाला व्यक्ति आध्यात्मिक क्षेत्र में कौन-से तारे तोड़ सकता है, कितनी उन्नति कर सकता है, कितना आगे बढ़ सकता है—इसका उत्तर केवल नकारात्मक ही हो सकता है।

आत्मोन्नति के इच्छुक अध्यात्मवादियों की सबसे प्रमुख एवं प्रथम साधना यह है कि वे अपने शरीर को पूर्ण रूप से स्वस्थ एवं पुष्ट बनायें। जो असमर्थ व्यक्ति साधारणतम दैनिक श्रम नहीं कर सकता—अपने जीवन शकट को ठीक से नहीं खींच सकता, वह साधना-समर में आवश्यक संयमों का निर्वाह कर सकेगा—काम, क्रोध, मोह, लोभ, ईर्ष्या, डाह आदिक शत्रुओं से डटकर मुकाबला कर सकेगा, ऐसी कल्पना भी नहीं की जा सकती। साधन-समर के लिये स्वस्थ एवं पुष्ट शरीर की अनिवार्य आवश्यकता है, जिसे पूरा किये बिना कोई भी व्यक्ति अध्यात्म-पथ पर एक कदम भी नहीं बढ़ सकता। "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा रहती है।" यह तथ्य किसी भी आध्यात्मिक जिज्ञासु को नहीं भूलना चाहिये।

निर्बल शरीर व्यक्ति बहुधा चरित्रहीन भी हुआ करते हैं। उनकी शारीरिक निर्बलता ही इस बात का विज्ञापन है कि यह व्यक्ति पूरी तरह सदाचारी नहीं है। बहुत बार लोग किसी रोग का शिकार होकर क्षीणकाय हो जाते हैं। किन्तु वह रोग भी उनको किसी अनियमित आहार-विहार के दण्ड स्वरूप ही मिला होता है। आहार-विहार तथा आचार-विचार का असंयम स्वयं में ही एक असदाचार एवं चरित्रहीनता है। हीन-चरित्र अथवा आचरणरहित व्यक्ति यदि उस आध्यात्मिक दिशा में बढ़ना चाहता है, जिसमें अखण्ड आत्मबल एवं सदाचरण की आवश्यकता है तो वह दिन में स्वप्न देखता है। इस प्रकार के तेजस्वी चरित्र को क्षीण अथवा दीन-हीन शारीरिक अवस्था वाला नहीं पा सकता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असमर्थ एवं अस्वस्थ शरीर व्यक्ति स्वभाव से ही आवेश-प्रधान होते हैं। निर्बल का क्रोधी होना चिर प्रसिद्ध है। जरा-सी बात पर उत्तेजित हो उठना, तनिक-सी प्रतिकूलता देखकर आवेश में आ जाना, अणुमात्र अप्रियता से क्रोधग्रस्त हो जाना और बिन्दु भर विषमता से बड़ी सीमा तक चिन्तित हो उठना, निर्बल व्यक्तियों का विशेष अवगुण होता है। असमर्थ शरीर, आलस्य, प्रमाद तथा काम-विकार का स्थायी निवास-स्थान होता है। अस्वास्थ्य के कारण भली प्रकार न पचने वाले भोजन का रस रक्त कामुक प्रवृत्ति को उत्तेजित करने वाला ही होता है। इतने अधिक और विषैले कृमि कीटों के लगे रहने पर किसी की आध्यात्मिक कृषि फलीभूत हो सकती है, ऐसा विश्वास किसी प्रकार भी नहीं किया जा सकता। आध्यात्मिक उन्नति करने के लिये जिस निर्मलता, निर्विकारिता एवम् निर्भयता की आवश्यकता है। वह शरीर को सबल, स्वस्थ एवं समर्थ बनाकर ही पायी जा सकती है। दीन-हीन, क्षीण तथा निर्बल शरीरावस्था में नहीं।

मन स्वस्थ तो शरीर स्वस्थ

मनुष्य जीवन की समस्त गतिविधियों का परिचालन मन द्वारा होता है। सूक्ष्म और अदृश्य रूप में मस्तिष्क से जैसे विचार उत्पन्न होते हैं, वैसी ही जीवन में क्रियाशीलता आती है। कर्मों के फल भी वैसे ही होते हैं। जीवन के विभिन्न पहलुओं के साथ स्वास्थ्य भी इसी प्रभाव क्षेत्र में आता है। यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं वरन् पूर्ण सत्य है कि मनुष्य का आरोग्य उसकी मनोदशा पर निर्भर करता है। मन की विकृति और कुरूपता ही बुरे स्वास्थ्य के रूप में परिलक्षित होती है उसी प्रकार मन का स्वस्थ होना शारीरिक पुष्टता का प्रमाण है।

एक अँग्रेजी कहावत के अनुसार "तन्दुरुस्त शरीर में तन्दुरुस्त मन" वाले व्यक्ति को ही नीरोग माना जाना चाहिये। शरीर अस्वस्थ हो पर यदि मन को अवस्वस्थ, निराश और उद्विग्न न होने दिया जाय तो उस दुर्बलता के लक्षण चिरस्थायी न होंगे। उसे दूर भागना पड़ेगा। हीनता और निराशा की भावनायें कुछ काल तक मन एवं विचारों में परिपोषित रहने के कारण रोग की भावना-ग्रन्थि का रूप धारण कर लेती हैं। साधारण बीमारी हलके उपचार से ठीक हो सकती है, किन्तु इस ग्रन्थि-चेतना का उपचार अलभ्य है। वह कठिनाई से दूर होती है। मन की निराशा एक संक्रामक रोग है। इसे दूर करने के लिये आत्म-अपमान की भावनायें मन से निकालकर सदैव उत्साही, आशावादी एवं क्रियाशील बने रहना चाहिये। अशुभ भावनायें मन से निकल जाती हैं तो शरीर उनके दूषित प्रकोप से बच जाता है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण वाले के लिये हर स्थिति में सुख और आनन्द है। अतः खिन्नता की स्थिति को त्याग कर, कायरता और घबराहट को हटाकर सदैव शुभ संकल्पों और रचनात्मक योजनाओं में लगे रहना चाहिये।

शारीरिक स्वास्थ्य का मूल मन है, इस बात को भूलना नहीं चाहिये। अनेक रोग केवल मानसिक विकारों के कारण उत्पन्न होते हैं। अतः उत्तम स्वास्थ्य के लिये मानसिक रूप से भी स्वस्थ होना अति आवश्यक है। सद्विचार ही उत्तम जीवन का निर्माण करते हैं। अतः प्रयत्न यह हो कि बुरे विचार, बुरी भावनायें, चिन्ता, हीनता आदि से दूर रहें और यदि इनका प्रहार होता है तो उनका संशोधन बराबर किया जाते रहना चाहिये।

यह देखना चाहिये कि आपके जीवन में कोई मानसिक कष्ट तो नहीं है। किसी रोजगार में घाटा हुआ हो, नौकरी न लग रही हो, विवाह की समस्या हो, परीक्षा में असफल रहे हों, इन्टरव्यू सफल न हुआ हो, दाम्पत्य-जीवन में मनोमालिन्य हो—ऐसा कोई कारण हो सकता है जिससे आपका मन पीड़ित हो। स्वास्थ्य की खराबी का शत-प्रतिशत कारण इस तरह की मानसिक वेदना होती है। यदि इस तरह की किसी खास पीड़ा से स्वतन्त्र न हुआ जाय तो उसका शारीरिक स्थिति पर दबाव पड़ता है और स्वास्थ्य खराब हो जाता है। प्रयत्न कीजिये कि आपकी यह परेशानी दूर हो जाय, कुछ हद तक परिस्थिति के साथ समझौता हो जाय तो भी बुरा नहीं, पर आप इसी उलझन में न पड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रहिये। अभाव दूर न हो तो उसकी कल्पना ही छोड़ दीजिये। संसार में अनेकों निर्धन, बेकारीग्रस्त, अनुत्तीर्ण, असफल व्यक्ति हैं। फिर भी वे सब जी रहे हैं, फिर आपको क्या इतनी भी गुञ्जायश नहीं कि आप कुछ थोड़े-से अभाव को सहन कर जायँ। हर स्थिति में प्रसन्न रहने का 'फारमूला' अपना लें तो आपको यह कष्टकारक परिस्थितियाँ बेकार-सी प्रतीत होंगी और आप उस जटिलता से बच जायेंगे, जिसके कारण आपके स्वास्थ्य पर उस दुश्चिन्ता का खराब असर पड़ने वाला था। आपको मानसिक विकारों से हर घड़ी स्वतंत्र रहना चाहिये।

यदि आप विनोदप्रिय हैं और व्यक्तिगत जीवन में उसे वरदान की तरह प्रयोग किये हुए हैं तो आप अपने को स्वास्थ्य की दृष्टि से अधिक सकुशल अनुभव करेंगे। विनोद प्रसन्नता प्रदान करता है, जिससे स्नायु-संस्थान भी सशक्त बना रहता है। जी खोलकर हँस लेने वाले लोगों को आमाशय तथा यकृत् आदि रोग नहीं होते। छाती मजबूत और शेष शरीर भी नीरोग रहता है। कठिन परिस्थितियों, चिन्ता व निराशा के क्षणों में शरीर पर पड़ने वाले बोझ को विनोदप्रियता हल्का और सहनशील बना देती है। अपनी असफलताओं पर ही सदैव चिन्तन करते रहना रोग का प्रमुख कारण है। इससे मन की शक्ति अकारण खर्च होती है, जिससे शरीर की शक्ति खिंचकर मानसिक चिन्ता में खर्च होने लगती है।

अकेलापन भी मनुष्य को कम कष्ट नहीं देता। विशेषकर जब कोई विपत्ति आती है उस समय तो अकेला रहने में मनुष्य की उदासी तथा खीझ और भी अधिक बढ़ जाया करती है। कोई बात एक ही मनुष्य के मन में अधिक दिनों तक पड़ी रहे तो इस दबाव के कारण स्वास्थ्य में अधिकांश खराबी उत्पन्न हो जाती है। कष्ट भी सुखों की भाँति बाँटने से निबट जाते हैं। अपने मित्रों, सुहृद परिजनों तथा धर्मपत्नी से समय-समय पर समस्याओं के सुलझाव में सहायता लेते रहने से उतना कष्टकर दबाव नहीं पड़ता, जिससे शरीर में हैरानी पैदा हो जाय। दूसरों की सहानूभूति तथा सहयोग मिल जाने से आत्मिक प्रसन्नता होती है, साहस जागता है तथा मनोविकार दूर होते हैं। चित्त की प्रफुल्लता बढ़ने से स्वास्थ्य में सजीवता आती है। इसलिए आरोग्य का एक सबसे अच्छा उपचार यह भी है कि अपने दुःख बाँट दिये जाया करें। उनमें अपने मित्रों, परिजनों को सहयोगी बना लिया जाना चाहिये।

किसी की उन्नति देखकर ईर्ष्यालु भावना उत्पन्न नहीं करनी चाहिये। ईर्ष्या मन की प्रबल शत्रु है, यह उसमें संशय उत्पन्न करती है और कमजोर बना डालती है। सही सोचने और उचित व्यवहार करने की क्षमता ईर्ष्यालु व्यक्ति में नहीं होती। वे केवल हीन, आत्मघाती विचारों में ही लगे रहते हैं और शारीरिक शक्ति का महत्वपूर्ण अंश व्यर्थ की योजनाओं में बर्बाद करते रहते हैं। इससे बात-बात पर चिढ़ जाना, तुनुकमिजाजी, सिर में चक्कर आना, विचारों का ठीक काम न करना आदि अनेकों उपद्रव उठ खड़े होते हैं और शारीरिक दृष्टि से मनुष्य का बड़ा अहित हो जाता है। दूसरों की उन्नति देखकर प्रसन्न होना चाहिये। सबके साथ आत्मीयतापूर्ण सम्बन्धों का निर्वाह करने में सुख का अनुभव होना चाहिये।

अपने सुख की तरह औरों के सुख का भी ध्यान रखना चाहिये। सर्वथा अनहोनी बातों पर ही विचार करते रहना अच्छा नहीं होता। मन व्यर्थ के प्रलापों में न फँसा रहे और वह अशुभ चिन्तन में ही न लगा रहे, इसका सर्वोच्च उपाय यह है कि उसे हर घड़ी कार्य-व्यस्त रखा जाय। आलस्य एक बहुत बड़ा अपराध है, जिससे शरीर की स्थूल और सूक्ष्म, बाह्य और आन्तरिक सभी प्रकार की शक्तियों का तेजी से पतन होता है। खुराफात की बातें प्रायः आलसी प्रकृति वालों को ही सूझती हैं। जिनके पास कोई काम न होगा उन्हीं के मस्तिष्क में कूड़ा-कचरा भर रहा होगा और वे अपने आपको उतना ही परेशान अनुभव कर रहे होंगे।

विचार और चिन्तन की विकृति से जिस तरह मनोभूमि अस्वच्छ और दूषित होती है, उसी तरह आहार-विहार में असंयम से भी मन दुष्प्रवृत्तियों की ओर आकर्षित होता है। इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बात को ध्यान में रखकर ही हिन्दू धर्म में अनेक निषेध एवं निर्देश लगाये गये हैं। नशीली वस्तुओं के प्रयोग, माँस, मदिरा आदि अभक्ष्य, मादक, तीखे, चटपटे खाद्यों पर प्रतिबन्ध लगाने का यही तात्पर्य रहा है कि इस तरह मनुष्य का मन स्वस्थ रहे, शरीर स्वस्थ रहे। नित्य शारीरिक व्यायाम आदि की आवश्यकता भी इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये है। स्वास्थ्य रक्षा के यह दोनों ही पहलू आवश्यक हैं। इनमें से कोई एक भी उपेक्षणीय नहीं है।

उत्तम स्वास्थ्य आध्यात्मिक जीवन की मूल आवश्यकता है। उसे प्राप्त करने के लिये प्रत्येक व्यक्ति को प्रयत्नशील होना चाहिये। आहार, व्यायाम, विश्राम आदि स्वास्थ्य की स्थिरता के लिए उपयोगी हैं किन्तु आत्म-विकास, दीर्घ-जीवन, आत्म-विश्वास तथा आनन्द प्राप्ति के लिये उससे भी अधिक आवश्यक मानसिक रोगों से मुक्त होना है। मन का स्वास्थ्य ही शरीर का स्वास्थ्य है। मन स्वस्थ है तो शरीर अपने आप स्वस्थ बना रहेगा।

मनोविकारों का शरीर पर प्रभाव

चिकित्साशास्त्रियों के सामने यह एक विचित्र समस्या मौजूद है कि शरीर में रोग के अमुक कीटाणु न होने पर भी उस रोग से रोगी ग्रसित क्यों बना रहता है ? कई बार ऐसे रोगी देखने को मिलते हैं, जिसको समस्त परीक्षणों के उपरान्त भी किसी रोग से ग्रसित नहीं पाया गया। रोगी बहुत कष्ट पीड़ित होते हैं पर चिकित्सक यह समझ नहीं पाते कि वस्तुतः उन्हें क्या रोग है और उसकी क्या चिकित्सा की जाय ?

कई बार ऐसे रोगी भी देखने में आते हैं जिनका आहार-विहार, संयम-नियम सब कुछ ठीक होता है फिर भी उन्हें बीमारी ने घेर रखा होता है। कई बार उत्तम से उत्तम चिकित्सा करने पर भी, यहाँ तक कि पीड़ित अङ्गों की शल्य-क्रिया करने पर भी कष्ट से छुटकारा नहीं होता है। कितनी ही बार आपरेशन से पूर्व जिस अङ्ग के खराब होने की कल्पना की गई थी वह फाड़-चीड़ करते समय बिल्कुल निर्दोष पाया गया है और डॉक्टरों को अपनी भूल का पश्चात्ताप करना पड़ा है।

'मैन्स प्रिजम्पशस ब्रेन' नामक ग्रन्थ के प्रणेता डाक्टर साइमन्स ने ऐसे सैकड़ों उदाहरण प्रस्तुत करते हुए बताया है कि ऐसे रोगी वस्तुतः मानसिक कारणों से रुग्ण होते हैं और उनकी चिकित्सा औषधि-विज्ञान या शल्य-क्रिया द्वारा सम्भव नहीं होती। उन पागलों या अर्ध विक्षिप्तों की बात छोड़ भी दें, जिन्हें प्रत्यक्ष मानसिक रोगी कहा जा सकता है तो भी असंख्य रोगी ऐसे मिलेंगे, जो अपनी किन्हीं अनुपम विचारणाओं एवम् भावनाओं के फलस्वरूप शारीरिक दृष्टि से रोगी बने हैं और निरन्तर कष्ट सहते रहते हैं। उनका कष्ट निवारण तभी सम्भव है, जब उनकी मानसिक व्यथाओं और द्विविधाओं का निराकरण हो सके।

रक्तचाप बढ़ने के सम्बन्ध में अब तक जितनी शोधें हुई हैं, उनकी चर्चा करते हुए फ्रांसीसी मेडीकल ऐसोसियेशन के प्रधान डा० ब्लैवस्की ने लिखा है—इस रोग के तीन चौथाई पीड़ितों ने चिन्ताओं से ग्रसित रहकर अपने शरीर में इस व्यथा को आमन्त्रित किया होता है। मद्यपान एवम् अनुपयुक्त रहन-सहन के कारण रक्तचाप से पीड़ित होने वालों की अपेक्षा चिन्ताग्रस्त कई गुने अधिक होते हैं। उन्होंने हृदय रोगों की चर्चा करते हुए लिखा है कि क्रोधी और ईर्ष्यालु स्वभाव के लोगों को बहुधा यह व्यथा आ दबोचती है। जिन्हें छोटी-छोटी बातों पर डर बहुत लगता है, तरह-तरह की आशङ्कायें किया करते हैं और दुःखद भविष्य के बुरे चित्र मस्तिष्क में बनाया करते हैं, उनकी रक्त-वाहिनी नाड़ियाँ सकुच जाती हैं, खून गाढ़ा हो जाता है और उसमें बढ़ी हुई फुटकियाँ हृदय की धड़कन तथा अन्य बीमारियाँ पैदा करती हैं।

जो महिलायें गर्भ धारण नहीं करना चाहतीं हैं पर वे वैसी विपत्ति में फँस जाती हैं तो उनकी पश्चात्ताप भरी उद्विग्न मनोदशा जन्मने वाले बालक के शरीर और मस्तिष्क पर बुरा असर छोड़ती हैं, इतना ही नहीं वे महिलायें रक्ताल्पता तथा बहुमूत्र की शिकायत बनती हैं। शिकागो विश्वविद्यालय के स्वास्थ्य अन्वेषण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विभाग ने दाम्पत्य-विद्वेष के कारण जुकाम और गठिया का प्रकोप होना सिद्ध किया है। अन्वेषकों का कथन है कि ऐसे लोगों की मानसिक उलझन तब तक हल न होगी, जब तक उत्तम से उत्तम चिकित्सा से भी उन्हें कुछ लाभ न पहुँचेगा। भीतर ही भीतर घुटने वाले, अपनी मन की व्यथा किसी से न कह सकने वालों को बहुधा दमा, साँस फूलना, फेंफड़ों की जलन, प्लूरिसी जैसी बीमारियाँ प्रकट होते देखी गई हैं।

औषधि चिकित्सा उन्हीं रोगों पर सफल होती है, जो शरीर विकारों के कारण उत्पन्न होते हैं। दवाओं के कितने ही रोगों पर असफल होने का एक बड़ा कारण यह है कि उन बीमारियों की जड़ मन में होती है। मन का विक्षोभ शरीर को प्रभावित करता है और जहाँ अवसर देखता है वहीं कोई रोग खड़ा कर देता है। गन्दगी को रोगों का बड़ा कारण माना जाता है और कहा जाता है जो स्वच्छता का ध्यान नहीं रखते वे अधिक बीमार पड़ते हैं पर यह मान्यता अब पुरानी हो चली है। नवीन शोधों ने यह सिद्ध किया है कि निश्चिन्त और प्रसन्नचित्त रहने वाले लोग सबसे अधिक नीरोग रहते हैं। निम्न स्तर के समाजों में सफाई का ध्यान नहीं रखा जाता, वहाँ गन्दगी भी बहुत रहती है और स्वास्थ्य के सर्वमान्य नियमों की भी वे लोग उपेक्षा करते हैं फिर भी मानसिक उलझनों से बचे रहने के कारण वे उन लोगों से कहीं अच्छा स्वास्थ्य बनाये रहते हैं, जो सफाई तो बहुत रखते हैं पर मनोविकारों से निरन्तर भावनात्मक उत्तेजना बनाये रखते हैं।

हालैण्ड के डाक्टर रेमाण्ड इलियन ने अपने ४० वर्षीय मनोविज्ञान अनुसन्धानों का निष्कर्ष प्रकाशित करते हुए लिखा है—छल, कपट और दुराव का व्यवसाय करने वाले—बाहर से कुछ और भीतर से कुछ और बने रहने वाले मनुष्यों में दुहरे व्यक्तित्व पनपते हैं और वे दोनों परस्पर विरोधी होने के कारण निरन्त संकल्प करते हुए एक ऐसी विषाक्त मनोभूमि प्रस्तुत करते हैं, जिससे कितने ही शारीरिक और मानसिक रोग उपज पड़े। एक कोट को एक समय में दो आदमी पहनने का प्रयत्न करें या एक म्यान में दो तलवारें ठूँसी जायें तो उन आवरणों में टूट-फूट होकर रहेगी। इसी प्रकार जो लोग बाहर से अपने को बहुत अच्छा दिखाने का प्रयत्न करते हैं और भीतर बहुत बुरे होते हैं वे अपने आरोग्य के लिये एक स्वास्थ्य सङ्कट उत्पन्न करते हैं। इससे यह अच्छा है कि वे जैसे भी कुछ हों भीतर और बाहर से एक-सा रहने का प्रयत्न करें।

झूठ और कपट को नैतिक दृष्टि से पाप माना गया है और इससे ईश्वरीय दण्ड मिलने की बात कही गई है। शारीरिक दण्ड तो प्रत्यक्ष ही है। असत्यवादी एवम् धोखेबाज लोग प्रपञ्च भरी धूर्तता से अपना ही अहित सबसे अधिक करते हैं। उनके भीतर जो अन्तर्द्वन्द्व चलता है, वह मानसिक संस्थान को एक प्रकार से क्षत-विक्षत कर डालता है। फलस्वरूप शरीर का रोगी रहना आरम्भ हो जाता है।

इस शरीर पर मन का पूर्णतया अधिकार है। क्रोध, शोक एवम् हर्ष उल्लास में चहरे की आकृति एवम् शरीर की स्थिति बदलते हम बार-बार देखते रहते हैं। कोई बड़ा मानसिक आघात लगने पर, पागल हो जाने या मर जाने की घटनायें अक्सर घटित होती रहती हैं। क्रोध में उन्मत हुए व्यक्ति ऐसे नृशंस कार्य कर बैठते हैं, जिससे उन्हें आजीवन पछताना पड़ता है। शोक में उद्विग्न हुए व्यक्ति आत्म-हत्या तक कर बैठते हैं। प्रसन्नता और प्रतिष्ठा मिलने पर दुर्बल एवम् रुग्ण व्यक्तियों का स्वास्थ्य भी तेजी से सुधरने लगता है। मिथ्या भय से भी मनुष्य थर-थर काँपने लगता है और आपत्ति की सम्भावना का समाचार सुनते ही भूख, प्यास एवम् नींद के विदा होते देर नहीं लगती। इन प्रत्यक्ष तथ्यों से हर कोई सहज ही यह जान सकता है कि मन की स्थिति का कितनी जल्दी और कितना गहरा प्रभाव पड़ता है।

ज्ञान तन्तुओं में प्रवाहित होने वाली विद्युत धारा का केन्द्र मस्तिष्क ही तो है। मन की जैसी स्थिति होती है, उसी स्तर का यह विद्युत प्रवाह भी रोम-रोम में दौड़ता रहता है। रक्त के निर्मल और विषाक्त होने का स्वास्थ्य पर जैसा प्रभाव पड़ता है, उससे भी अधिक परिणाम मस्तिष्क द्वारा ज्ञान तन्तुओं में प्रभावित विद्युत धारा के गुण-दोषों का होता है। जो मस्तिष्क

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनोविकारों के कारण उत्तेजित रहते हैं, उनकी वह विकृति सारे शरीर में फैलती है और विविध रोगों का सृजन करती है। शान्त मन, एकाग्र चित्त, नियमित विचारों का अभ्यास करके योगीजन जो आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करते हैं, उसमें अशान्तिजन्य अपव्यय रोककर शान्ति के कारण सुविकसित बनी हुई मानसिक स्थिति का सदुपयोग ही प्रधान आधार होता है। मन को निर्मल करने से आध्यात्मिक प्रगति तो होती है साथ ही मानसिक विकृतिजन्य अधिकांश रोगों के निराकरण और सुदृढ़ स्वास्थ्य का वरदान भी मिलता है। मनोविकारों से बचे रहना स्वास्थ्य की सुरक्षा का सर्वोपरि आधार माना जा सकता है।

लुकमान का कथन है कि "आदमी में कोई रोग नहीं होता, हाँ रोगी आदमी अवश्य देखे जाते हैं।" आहार-विहार के सुधार द्वारा स्वास्थ्य ठीक होता है। पौष्टिक और बलवर्धक पदार्थ शरीर को पुष्ट करते हैं। इतना जानना ही पर्याप्त नहीं, हमें यह भी जानना चाहिये कि मन को शान्त, निश्चिन्त, निर्मल और प्रसन्न रखने से स्वास्थ्य की तीन चौथाई समस्या हल हो सकती है। जिसका मन नीरोग होगा शरीर उसी का नीरोग रहेगा।

आत्म-निरीक्षण से मानसोपचार

शरीर और मन का सम्बन्ध अटूट है। मन विकृत हुआ तो शरीर भी सुखी न रहेगा। इसी प्रकार शारीरिक दुर्बलता, रोग और पीड़ा का मन पर भी प्रभाव पड़ता है। शरीर की अपेक्षा मन अधिक शक्तिशाली है। मनुष्य का सम्पूर्ण क्रिया-व्यापार मन की विचार-स्थिति के अनुरूप होता है। जो सोचते हैं, वही करते हैं। मन में जैसे विचार उठते हैं, वैसी ही क्रियायें व्यवहार में आती हैं। बाह्य कर्म का आधार मन है, इसलिये स्वास्थ्य पर मन की असंयत प्रवृत्तियों का प्रभाव अवश्य पड़ता है। साधारणतया बीमारी और स्वास्थ्य की खराबी को शारीरिक विकार समझकर उपचार की व्यवस्था की जाती है किन्तु इसका प्रधान कारण मन है। अतः मानसोपचार की उपयोगिता सर्वप्रथम है।

मानसिक वृत्तियों का शारीरिक स्थिति पर जो प्रभाव पड़ता है, वह अधिक अस्पष्ट नहीं है। धन और पद की अनियन्त्रित इच्छाओं के कारण आज लोगों में महामारी की तरह मानसिक बैचेनी उठ खड़ी हुई है। इसका यह प्रभाव हुआ कि लोग दिन भर ऑफिस में, घर के बाहर काम करते हैं। सांयकाल हारे-थके लौटते हैं, तो दुकान, ट्यूशन, सभा-सोसायटी, सिनेमा-नाच-घरों की ओर भागते-फिरते हैं। मन की इस असंयत-स्थिति के कारण पर्याप्त विश्राम तक नहीं कर पाते। फलतः शरीर गिरने लगता है, थकावट शरीर के अङ्ग-अङ्ग में समा जाती है। दिल की धड़कन अनिद्रा की शिकायत प्रायः ऐसे ही लोगों को होती है, जो अत्यधिक व्यस्तता के कारण पर्याप्त विश्राम तक नहीं कर पाते।

हमारे गुर्दों के ऊपर दो ग्रन्थियाँ होती हैं इन्हें "ग्लैण्ड्स आफ फ्लाइट" कहा जाता है। यह शरीर को आने वाले भय से सावधान करती हैं। अत्यधिक व्यस्तता, बेचैनी और श्रम के कारण इन्हें विश्राम न मिले तो शारीरिक विकार के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। नींद आनी बन्द हो जाती है, पाचन-क्रिया खराब होने लगती है। माँस-पेशियाँ थोड़े से मानसिक तनाव से बुरी तरह उत्तेजित हो उठती हैं और उनकी सारी अवरोधक शक्ति समाप्त हो जाती है। यह हलचल इसलिये होती है कि "ग्लैण्ड्स ऑफ फ्लाइट' से निकले वाले एक विशेष प्रकार के तत्व का स्राव बन्द हो जाता है। इससे ये सारे उपद्रव उठ खड़े होते हैं।

भय, घृणा, ईर्ष्या, कुढ़न, जलन आदि अनेक मानसिक आवेश का प्रभाव शारीरिक अवयवों पर स्पष्ट रूप से पड़ता है। अत्यधिक भय की अवस्था में हृदय धड़कने लगता है और दम फूल जाता है। हृदय की धड़कन की तीव्रता के फलस्वरूप रक्त-शुद्धि का कार्य शिथिल पड़ जाता है, जिससे शरीर में दूषित तत्व कारबोनिक एसिड की मात्रा बढ़ने लगती है और एकाएक दम फूल जाने से फेफड़ों में तेज धक्का लगता है, जिसका स्वास्थ्य पर अनिष्टकारी असर पड़ता है। यह उत्तेजना यदि निश्चित सीमा को पार कर गई तो लोगों की मृत्यु तक हो जाती है। भूत-व्याधा के भय से मरने वालों की मानसिक शक्ति इतनी निर्बल रही होती है कि उनका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शरीर भय के कारण उत्तेजना को सहन नहीं कर पाता और मृत्यु हो जाती है। इस उत्तेजना का प्रमुख कारण मानसिक तनाव की स्थिति को ही माना जाता है।

यह कार्य हमारे मस्तिष्क के अधीन होता है। वह यदि इन आवेशों, भयों या उत्तेजनाओं को उपेक्षित कर दे तो शरीर के स्नायु केन्द्र पर पड़ने वाली हानिकारक प्रतिक्रिया से बच सकते हैं। जैसे कोई व्यक्ति यदि आपको गाली दे देता है या ऐसे अपशब्द कह देता है जिसे आप सहन नहीं कर सकते, ऐसी दशा में आपका स्नायु-संस्थान भी उत्तेजित होगा ही। अतः आप उसके अपशब्दों को हँसकर टाल दीजिये। यह समझिये कि वह व्यक्ति मूर्ख है, नासमझ है, हम भी वैसे ही क्यों बनें, तो आप क्षणिक आवेश से उत्पन्न भारी दुष्परिणाम से बच जायेंगे।

यह भी देखा गया है कि आवेग के समय आहार का पौष्टिक अंश माँस-पेशियों की उत्तेजना से हुई क्षति की पूर्ति के लिये चला जाता है। यह कार्य एक झटके से सम्पन्न होता है, जिसका पाचन क्रिया पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे पाचन संयन्त्र शिथिल पड़ जाते हैं। चूहों के ऊपर प्रयोग करके देखा गया कि शान्त वातावरण में वजन बढ़ता और स्वास्थ्य स्थिर रहता है, जबकि भयावह और कोलाहलपूर्ण स्थानों में शरीर गिरने लगता है और आयु कम हो जाती है।

आत्म-निरीक्षण की प्रवृत्ति को कड़ाई से लागू करने से ही यह सम्भव है कि सही बात का पता चले। अन्यथा ऐसी स्थिति में भी यह पक्षपात कर सकते हैं। कारण यह है कि मन इतना जबर्दस्त वकील है कि वह अपने पक्ष में अनेकों प्रमाण प्रस्तुत करके रख देता है। हम जिसे स्नेह करते हैं, उसमें हजार बुराईयाँ हैं तो भी एक भी नहीं दिखाई पड़ती किन्तु किसी से द्वेष हो तो वह अनेकों दुर्गुण उसमें दूर से ही दिखलाई देने लगते हैं। अपने प्रत्येक वस्तु को उदार दृष्टि से देखने और दूसरों के कार्यों में खामियाँ निकालने की लोगों में आम धारणा होती है। इससे वस्तु के सही दृष्टिकोण का पता नहीं चल पाता। दूसरों के अधिक धन कमाने की यह कहकर ईर्ष्या करने लगते हैं कि उसने डटकर मुनाफाखोरी, चोर-बाजारी, ठगी और धोखादेही की है। वही कार्य स्वयं करें तो इसे अपनी बुद्धि का कौशल मानते हैं। इससे सचाई छुपती है और पक्षपात बढ़ता है। ईर्ष्या, विद्वेष, क्रोध और कलह का अधिकांश कारण यही है कि हमारा परखने का दृष्टिकोण स्वार्थपूर्ण होता है।

आत्म-निरीक्षण का यह कार्य इस दृष्टि से करें कि गलत अन्दाज लगाने से उठने वाली दुर्भावनायें हमारे स्वास्थ्य को खराब करेंगी। इससे हमारी सामाजिक प्रतिष्ठा गिर जायेगी, लोग बुरा कहेंगे और हमसे कोई भी आत्मीयतापूर्ण व्यवहार नहीं करेंगे। इस प्रकार सोचने से आपको सही बात का समर्थन करने में किञ्चित हिचक व सङ्कोच नहीं होगा। इससे आपका मनोबल बढ़ेगा, शक्ति आयेगी, प्रसन्नता होगी और स्वास्थ्य भी स्थिर बना रहेगा।

आप दूसरों से जैसे व्यवहार की अपेक्षा करते हैं, वैसा ही आचरण दूसरों के साथ भी कीजिये। दुःख और चिन्ता से बचाने वाला इससे अच्छा कोई दूसरा उपाय नहीं है। जो दूसरों को दुःख देगा या अभद्र व्यवहार करेगा, उसे सामाजिक दण्ड—प्रतिकार, घृणा, निन्दा का पात्र बनना ही पड़ेगा। अपनी आत्मा भी उसके लिये धिक्कारती ही रहेगी, इनसे बचने का सीधा रास्ता और सरल उपाय यही है कि सबके साथ आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करें। सहयोग, सहानुभूति और सहृदयता के सद्गुणों के कारण दूसरों से प्रेम, स्नेह, प्रशंसा एवं सम्मान प्राप्त होता है, इससे प्रसन्नता होती है, सुख मिलता है।

निराशा मनुष्य की शारीरिक व मानसिक गिरावट तथा प्रबल कारण होती है। इससे सफलता का मार्ग ही अवरुद्ध हो जाता है, इसलिये आशावादी बनने का प्रयत्न करना चाहिये। आशा आध्यात्मिक जीवन का शुभ आरम्भ है। आशावादी व्यक्ति सर्वत्र परमात्मा की सत्ता विराजमान देखता है। उसे सर्वत्र मङ्गलमय परमात्मा की मंगलदायक कृपा बरसती दिखाई देती है। सच्ची शान्ति, सुख और सन्तोष मनुष्य को निराशावादी प्रवृत्ति के कारण नहीं, अपने ऊपर अपनी शक्ति पर विश्वास करने से होता है। पुरुषार्थ से बड़े-बड़े प्रारब्ध भी वश में किये

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाते हैं। जिसमें स्फूर्ति है, शक्ति है और आलस्य जिसे छू नहीं गया, वे ही आशावान् व्यक्ति जीवन में सफल होते हैं।

काम शक्ति भी इसी प्रकार जीवन शक्ति का प्रतीक है किन्तु गर्भ धारण तक ही सीमित रखने की इसकी एक सुनिश्चित मर्यादा है। अमर्यादित कामेच्छा एक प्रकार की आग है, जो आदमी को जलाया करती है। काम-लिप्सा के साथ ही शरीर की गर्मी बढ़ने लगती है। साँस की गर्मी बढ़ती और त्वचा का तापमान बढ़ जाता है। इस गर्मी के दाह से कुछ जीवन तत्त्व व शारीरिक धातु पिघलने लगती हैं और मूत्र के साथ स्रावित होने लगती हैं। इसका शरीर और मन पर तुरन्त प्रभाव होता है। शिथिलता और अशक्तता के साथ ही आत्म-हीनता, आलस्य, निराशा और दुर्बुद्धि जागृत होने लगती है। जो लोग अधिक विषयी होते हैं, उनकी शारीरिक शक्ति का इस प्रकार पतन होता है कि सर्दी, जुकाम जैसे हल्के रोग सहन करने की शक्ति तक चली जाया करती है।

अपनी सम्पूर्ण चेष्टायें, ब्रह्मचर्य, संयम और पवित्र जीवन जीने के विविध कार्यक्रमों में लगी रहें। नारी के प्रति अपनी भावनायें आदरपूर्वक रहें। विचारोत्तेजक नृत्य, गाने और अश्लील सिनेमा आदि से अधिक से अधिक बचने का पवित्र प्रयत्न करें तो ही यह आशा रखी जा सकती है कि व्यक्ति का शरीर बल ऊँचा होगा, आत्म-बल उच्च स्तर का चढ़ा-बढ़ा होगा।

क्रोध भी शरीर और मन पर विषैला प्रभाव डालने वाली महाव्याधि है। डाक्टर आरोली और केनन का कथन है कि क्रोध के कारण अनिवार्य रूप से उत्पन्न होने वाली विषैली शर्करा पाचन-क्रिया को शिथिल कर देती है, इससे हाजमा खराब हो जाता है। "पन्द्रह मिनट क्रोध से उत्पन्न शक्ति को यदि बचालें तो इससे साढ़े सात घण्टे अनवरत् श्रम किया जा सकता है।" डाक्टर जेस्टर के इस कथन से क्रोध के भीषण परिणामों का सहज ही में अन्दाज किया जा सकता है।

क्रोध का अधिकांश कारण अपना झूँठा अहङ्कार होता है। अतः सदैव शिष्ट, उदार, मितभाषी और नम्र बनने का प्रयत्न करना चाहिये। जो स्वयं को सबसे छोटा मानता है, उसे इस दुष्ट महारोग से बिना औषधि छुटकारा मिल जाता है।

इसी प्रकार लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष, कलह और कटुता की दुर्भावनायें भी मनुष्य को नीचे गिराती हैं। इनकी हर घड़ी अपने मस्तिष्क की प्रयोगशाला में निगरानी बनाये रखना चाहिये। इन्हें असंयत, अमर्यादित छोड़ देंगे तो मानसिक शारीरिक विग्रह उत्पन्न होते देर न लगेगी। इनकी भयङ्करता से जीवन का सम्पूर्ण उल्लास और आनन्द समाप्त हो जाता है।

सात्त्विकता की अभिवृद्धि होने से आत्मा में असाधारण शान्ति, सन्तोष, प्रसन्नता और प्रफुल्लता का आनन्द छाया रहता है। सदाचरण से जीवन का प्रत्येक क्षेत्र फलता-फूलता दिखाई देता है। सत्कर्म मनुष्य को ऊँचे उठाते हैं। सभी प्रकार के सुखों और सफलताओं की कुञ्जी यह आत्म-निरीक्षण की प्रवृत्ति जिसने अपना ली, उसका कायाकल्प होते देर न लगेगी। मनुष्य शरीर में भी देवत्व के दर्शन यदि कहीं सम्भव हो सकते हैं तो वे शीलवान् पुरुष में प्रत्यक्ष देखे जा सकते हैं, इसलिए अपना प्रत्येक कार्य सतोगुणी हो। भावनाओं में लोककल्याण सन्निहित हो। ऐसा कर सकें तो हमारे शरीर और मन का रोग मुक्त, शान्त एवं संतुलित रह सकना सम्भव हो सकता है।

निग्रहीत मन की अपार सामर्थ्य

सूर्य की स्वाभाविक धूप जो शरीर पर पड़ती है, कठिन गर्मी में भी उसे शरीर सहन कर लेता है। किरणें बिखरी हुई होती हैं, अतः वे अपना सामान्य ताप ही दे पाती हैं। किन्तु नतोदर शीशे के लेन्स से एक इञ्च स्थान की धूप को केन्द्रित कर दिया जाय तो उस ताप को शरीर का कोई भी अङ्ग सहन न कर सकेगा। कोई भी वस्त्र उसमें बिना जले न रहेगा। उससे कहीं भी अग्नि पैदा की जा सकेगी और विशिष्ट प्रयोजन पूरे किये जा सकेंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य-किरणों की केन्द्रीभूत शक्ति की तरह निग्रहीत मन की शक्ति और सामर्थ्य भी अतुलित है। अस्त-व्यस्त मनोदशा से जीवन का कोई विशेष उद्देश्य पूरा नहीं होता। सामान्य श्रेणी के जीवों की तरह ही वह आहार-विहार की सांसारिक बातों में उलझा रहता है। किन्तु यदि उसे एक लक्ष्य पर स्थिर कर दिया जाय तो उससे साधारण जीवन में भी कई गुनी शक्ति दिखाई देने लगेगी और मनचाही कल्पना पूरी की जा सकेगी।

साधारण लोगों के मन की कोई निश्चित गति नहीं होती। तालाब के पानी की तरह जिधर से हवा चली उधर से वैसी ही कम-ज्यादा वेग वाली लहरें उठने लगेंगी। प्रायः लोग अपने से बड़े, पास-पड़ौस और उस समाज के व्यक्तियों के आचरणों का ही अनुकरण करते रहते हैं और उतने ही क्षेत्र में विचार उठाते रहते हैं। इससे मनुष्य के जीवन में कोई विशेषता नहीं आती। किन्तु यदि मन को सङ्कल्पपूर्वक किसी विशेष लक्ष्य की पूर्ति में लगा दिया जाता है तो उसमें समुद्री ज्वारभाटे की तरह ऐसी शक्ति भर जाती है कि कठिन दिखाई पड़ने वाले कार्य भी आसानी से पूरे हो जाते हैं। लोग उनकी सफलता पर आश्चर्य प्रकट करते हैं। यह सब उन्हें चमत्कार-सा लगता है। पर चमत्कार सी दिखाई देने वाली यह सफलता एकाग्र मन की संग्रहीत शक्ति के परिणाम से और अधिक कुछ नहीं होती। मन की तन्मयता में वह शक्ति है, जो बड़े से बड़े कार्य आसानी से पूरे कर सकती है।

मन में उठने वाली इन विचार-तरङ्गों को स्वेच्छापूर्वक विचरण न करने देना चाहिये। क्योंकि निरन्तर उठते रहने वाले विचार अच्छे-बुरे जैसे भी होंगे वैसे ही तत्त्व वे सूक्ष्म जगत् से आकर्षित करते रहेंगे और वह विचार स्वभाव में परिणत होने लगेगा। बाह्य रूप से शारीरिक परिवर्तन भले ही दिखाई न पड़े पर यदि कुविचारों में ही मन रस लेता रहे तो बुरे स्वभाव का परिपक्व हो जाना अवश्यम्भावी है। इस अवस्था में मनुष्य अपना नैतिक पतन तो करता ही है, औरों को भी पथ-भ्रष्ट करने का एक सजीव केन्द्र-सा बन जाता है। इस तरह के विचारों वाले मनुष्य की समीपता जिसे भी मिलेगी उसके भी दुष्ट और दुराचारी हो जाने की सम्भावना रहेगी।

मनःशक्ति के इस दूषित पक्ष को देखकर ही उसे स्वेच्छाचारी न होने देने की सलाह दी गई है। शास्त्रकारों ने निरन्तर अभ्यास द्वारा उसे नियन्त्रण में रखने की शिक्षा दी है। उन्हें यह मालूम था कि दृश्य जगत् के सम्पर्क में रहने के कारण मनुष्यों की वासना एवं तृष्णापरक आकांक्षाओं का उठना स्वाभाविक है। उन्हें जिधर आकर्षण दिखाई देगा उधर ही दौड़ेंगी। मन को स्थूल भोगों में ही अधिक सुख मिलता है, अतः उसकी इच्छायें, आकांक्षायें, कल्पनायें तथा विचारणायें भी वैसी ही अधोगामी होंगी। हीन विचारों के कारण मनुष्य के जीवन में चंचलता, अस्थिरता, क्षुद्रता और निकम्मापन आता है। फलस्वरूप यह जीवन अनेक कष्टों एवं उद्वेगों में फँसा रहता है। उस उलझन में न किसी तरह की भौतिक उन्नति ही हो पाती है न आध्यात्मिक लक्ष्य ही पूरा हो पाता है।

अनियन्त्रित मन प्रयोग रूप में अनेकों आकांक्षायें बनाता-बिगाड़ता रहता है। कभी वह असंख्य धन प्राप्त करने की इच्छा करता है, कभी विद्वान होने का सपना देखता है। पहलवान बनने, नेता बनने, प्रतिष्ठा पाने, धनी होने, भोग भोगने की अनेकों योजनायें वह बनाया करता है। यह योजनायें स्थिर नहीं होती हैं। दूसरों के जीवन की प्रतिक्रिया स्वरूप ही वह इन लालच भरे सपनों के पीछे अन्धी दौड़ लगाया करता है। पर उसकी कोई आकांक्षा निर्दिष्ट नहीं होती। हृदय की संवेदनशीलता के कारण वह प्रत्येक अवस्था में अपने आपको ही ठीक समझता है। पर इन अनेक कामनाओं का वह समन्वय नहीं कर पाता। एक ही समय पर कोई वक्ता बनना चाहे और पहलवान् भी बन जाय यह असम्भव है। एक बार में एक ही क्रिया को अधिक सुविधा और सफलतापूर्वक पूरा किया जा सकता है। अभी खाना, अभी पानी, अभी घर, अभी दुकान, अभी रेल, अभी मोटर—सब बातें एक साथ नहीं होतीं। उन्हें क्रमिक रूप से पूरा करने से ही कोई उचित व्यवस्था बन पाती है। इनका क्रम किस प्रकार हो ? कौन-सी आकांक्षा किस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सीमा तक संजोकर रखी जाय ? उसकी पकड़ कितनी मजबूत हो ? इन सब पर भली प्रकार विचार करने से ही जीवन दशा को सुनियोजित रखा जा सकता है।

सबसे महत्व की बात यह है कि एक लक्ष्य के लिए अनेक आकांक्षायें परस्पर पूरक कैसे बनें ? इस स्थिति को यदि विचारपूर्वक समझ लिया जाय तो अपने अभीष्ट मनोरथों को लोग बड़ी आसानी से पूरा कर सकते हैं। इच्छायें जीवन के विशिष्ट पहलू व परिस्थितियों से बँधी होती हैं, अतः उनका योग्य निर्धारण तथा उपयोग जीवन का एक केन्द्र-बिन्दु, एक लक्ष्य निश्चित करने में है। यह लक्ष्य जितना महान्, उच्चस्तरीय, भव्य, सम्पूर्ण जीवन को दृष्टिगत रखकर निर्धारित, सर्वाङ्गीण और व्यापक होगा। इच्छाओं और आकांक्षाओं का वेग भी उतनी ही मजबूती तथा कठोरता से सम्हालने की जरूरत पड़ेगी। छोटी ऊँचाई से गिरने पर चोट की उतनी आशंका नहीं रहती जितनी बड़ी ऊँचाई से गिरने पर लग सकती है। ऊँचे लक्ष्यों को साधने के लिये इसीलिये अधिक लगन, गहन तत्परता और कठोर मानसिक नियन्त्रण की आवश्यकता पड़ती है। यदि मन को साध लिया जाय और वह रुचिपूर्वक लक्ष्य पूर्ति में लगा रहे तो कठिनाइयाँ सरल हो जाती हैं और मनुष्य अभीष्ट सफलता प्राप्त कर लेता है।

पर यह कार्य उतना सरल नहीं है। लक्ष्यपूर्ति के मार्ग में अनेक द्विविधायें तथा उलझन भरे प्रश्न आते हैं, जिनका निराकरण करना कठिन हो जाता है। एक प्रश्न के दो पहलू आ जाते हैं, दोनों ही उचित और आवश्यक प्रतीत होते हैं पर चुनाव एक का ही करना होता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि आवश्यकता से भिन्न कोई बात अटल प्रारब्ध बनकर सामने आ जाती है, उस समय यह अनुमान करना कठिन हो जाता है कि किसे ग्रहण करें और किसे छोड़ दें ? पर यदि मन स्वस्थ और नियन्त्रित है तो वह अपने विवेक-बल से अच्छे-बुरे का, उचित-अनुचित का ज्ञान प्राप्त कर परिस्थितियों को काबू में ला सकता है। आवश्यकता सिर्फ इतनी है कि ऐसी स्थिति में विवेक का अंकुश, मनः नियन्त्रण इतना कठोर हो कि उसे प्रलोभनों की ओर झुकने न दिया जाय क्योंकि मन प्रायः रुचि के ही निर्णय निकालता है, जो लक्ष्य पूर्ति में बाधक भी हो सकते हैं।

आशा, विश्वास, दृढ़ता, तन्मयता, कर्मठता, धैर्य और कष्ट सहिष्णुता मनोबल के प्रतीक हैं। मन को सन्तुलित अवस्था में रखने, एक ही लक्ष्य की ओर उसे प्रेरित करने में इन गुणों का प्रादुर्भाव होता है और आन्तरिक महानता विकसित होने लगती है। इन गुणों से मन की तमाम शक्तियाँ केन्द्रीभूत होकर प्रचण्ड दावानल-सी बन जाती हैं। ऐसे बलवान् मन को चाहे जहाँ लगा दिया जाय उधर से ही सफलता का मार्ग खुलता हुआ दिखाई देगा। निराशा, उद्विग्नता, चञ्चलता और अश्रद्धा यह मनोविकार हैं। ईर्ष्या, विद्वेष, कुढ़न, चिड़चिड़ापन आदि के होने से मानसिक शक्तियों का ह्रास होता है और जीवन में किसी विशेषता या महत्ता के दर्शन नहीं होते। यह दोनों ही पहलू मनुष्य के सामने हैं, जिसे चाहे चुन ले और वैसा ही सफल या असफल जीवन बना ले।

मन बड़ा ही शक्तिशाली है। पर उससे कोई विशिष्ट लाभ तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब उसे पूर्ण नियन्त्रण में रखा जाय। जीवन-लक्ष्य की प्राप्ति, सुख-सुविधायें प्राप्त करने के लिये भी यह शर्त अनिवार्य है। हमारा मन वश में हो जाय तो इस जीवन को स्वस्थ व समुन्नत बना सकते हैं और पारलौकिक जीवन का मार्ग भी प्रशस्त कर सकते है।

मन को सुधारिये—वह जरूर सुधर जायेगा

जीवन में सफलता और अभ्युदय पाने के लिये मनुष्य का परम-कर्तव्य है कि वह अपने मन को सुसंस्कारयुक्त बनाये। अपनी मनोगति को अधोमुखी न होने दे। ऊँचे मनोरथों एवं उदात्त भावनाओं से हृदय को परिपूर्ण रक्खे। मनुष्य का मन जितना विशाल एवं विस्तृत होगा, उसका जीवन उतना ही महान् और सफल होगा। मानसिक सङ्कीर्णता ही मनुष्य के जीवन को संकुचित तथा असन्तोषजनक बना देती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य जीवन का कर्ता-धर्ता उसका मन ही है। जैसा मन होगा—जीवन का निर्माण भी उसी प्रकार का होगा। मन को मनुष्य जीवन का साँचा ही समझना चाहिये और जीवन को मन का दर्पण। यह साँचा जितना ही सुन्दर, सुघड़, और पूर्ण होगा मनुष्य का जीवन भी उसमें ढल कर उतना ही सुन्दर, सुघड़ और पूर्ण बन जायेगा। मन की अवस्थायें ही क्रिया रूप में मनुष्य जीवन में प्रतिबिम्बित एवं परिलक्षित होती हैं।

सुख-शान्ति की उपलब्धि किन्हीं बाहरी साधनों तथा उपकरणों में नहीं होती। सुख-शान्ति का निवास मनुष्य की मानसिक वृत्तियों में ही होता है। जिसके हृदय की वृत्ति प्रसन्न है, प्रफुल्ल तथा प्रमोदमयी है, उसे बात-बात में हर्ष और प्रसन्नता की ही उपलब्धि होगी। जिसका मन विषादी, प्रमादी और असन्तुष्ट है, उसे जलन, घुटन, असन्तोष तथा कुण्ठाओं की विभीषिका में पड़ना होगा।

जिसने अपने मन का परिष्कार कर लिया है, उसे अपने वश में कर लिया है, उसको संसार में किसी भी सहायक की आवश्यकता नहीं रहती। स्वाधीन मन मनुष्य का सबसे बड़ा और सच्चा सहायक होता है। मन का परिमार्जन स्वयं ही एक बहुत बड़ा तप है।

सामान्यतः मनुष्यों को मन के वश में न रहने की शिकायत रहती है। मन के उच्छृंखल, प्रतिकूल तथा प्रतिगामी होने को वे एक स्वाभाविक वृत्ति मानते हैं। विविध साधनाओं, अनुष्ठानों और उपासनाओं के बावजूद भी जब वे मन को अनुकूल नहीं कर पाते तो हताश होकर यह विश्वास बना लेते हैं कि मनुष्य का मन बहुत प्रबल होता है, उसका वश में कर लेना असम्भव नहीं तो दुरूह अवश्य है और कभी-कभी तो मन की प्रतिकूलता को भाग्य का दोष मानकर सन्तोष कर लेते हैं। यह कहकर बुराइयों एवं असफलताओं के प्रति आत्म-समर्पण कर लेते हैं कि अच्छाइयाँ और सफलतायें उनके भाग्य में ही नहीं हैं।

यह विचार ठीक नहीं। मन की विकृतियों के दोषी वास्तव में हम स्वयं ही होते हैं। मन की स्वाभाविक गति अधोगामिनी नहीं है। उसको गति हम स्वयं देते हैं। मनुष्य का प्रारम्भिक मन बड़ा ही भोला तथा निर्विकार होता है। उसमें किसी प्रकार की दुर्वृत्तियों का निवास नहीं होता। बच्चे का मन कुटिल, कपटी, स्वार्थी अथवा लोभी कब होता है ? वह तो एक भोले-भाले बटुक की तरह ही होता है। जब तक वह अबोध रहता है—अवयस्क रहता है—तब किसी प्रकार की विकृति उसमें नहीं आने पाती। बच्चे को यदि कोई बुरी बात बतलाता है तो वह सहम जाता है, डर जाता है, भाग जाता है अथवा क्षोभ से रोने लगता है। किसी अनौचित्य को ग्रहण करने को वह तैयार नहीं होता। भोले बच्चे कटुता, क्रूरता अथवा गन्दा वातावरण देखकर उससे दूर रहने का ही प्रयत्न करते हैं।

मनुष्य स्वयं भी जब कोई बुरी आदत ग्रहण करना शुरू करता है, तब उसका मन, उसका विरोध करता है, उसको स्वीकार करने में आनाकानी करता है। सिगरेट पीना सीखने वालों को शुरू में घोर अरुचि का सामना करना होता है, उन्हें चक्कर आता है, कै होती है, तबियत घबराती है। यह सारी अरुचि-जन्य प्रतिक्रियायें मन की ही हुआ करती हैं। बेचारा भोला मन अपनी शक्ति भर बुराइयों का विरोध करता रहता है, किन्तु जब मनुष्य उसे वैसा करने को बार-बार विवश करता है तो आज्ञाकारी होने के कारण वह धीरे-धीरे उसे ग्रहण भी कर लेता है।

बुराइयों के प्रति इस प्रारम्भिक अरुचि एवम् असहयोग से स्पष्ट है कि मन की स्वाभाविक गति बुराइयों की ओर नहीं अच्छाइयों की ओर ही है किन्तु जब उसके सहयोग की अवहेलना करके उसकी अरुचि की उपेक्षा करके उसे किसी विकृति को हटात् ग्रहण करने के लिये बलात्कार किया जाता है, तब वह भी उसकी प्रतिक्रिया में विकृतियों की पराकाष्ठा कर देता है। अपने अधीनस्थ सेवक पर जब अनुचित अत्याचार किया जाता है, उसकी हर अच्छी बात और ईमानदारी का तिरस्कार किया जाता है, तो वह अवश्य ही विद्रोही हो जाता है और बलात्कार की प्रतिक्रिया से हुआ विद्रोही जल्दी हाथ नहीं आता और सृजन की ओर से मुड़कर ध्वंस की और दौड़ पड़ता है। ठीक यही बात मन की भी होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य का मन स्वभावतः प्रतिगामी नहीं होता है। उसे धक्के देकर स्वयं मनुष्य ही पतन पथ पर चलाया करता है। पतन का पथ अधोगामी है, इसलिये उस पर ढकेला हुआ मन बड़े वेग से भागकर चलता है और तब उसका रोका जाना बड़ा कठिन हो जाता है।

बुराइयों का दोष मन के मत्थे मढ़ना ठीक नहीं। मनुष्य स्वयं इसका अपराधी होता है और इसी में उसका कल्याण है कि वह अपना दोष स्वीकार कर ले और उसका परिमार्जन करने का प्रयत्न करे। जिस मन को उसने बलात्कारपूर्वक अधोगामी बनाया है, उसी प्रकार उसे प्रयत्नपूर्वक ऊपर लाने का प्रयत्न करे।

मन प्रतिक्रियावादी तो अवश्य होता है, किन्तु हठवादी कदापि नहीं होता। जब वह अपने स्वभाव के विरुद्ध अरुचि होने पर भी मनुष्य के बुरे आदेश मान लेता है, तब कोई कारण नहीं कि वह उदात्त आदेशों की अवहेलना करे। इतना अवश्य है कि विद्रोही बने हुए अथवा रूठे हुए मन को सुधारने एवम् मनाने का प्रबल प्रयत्न अवश्य करना होगा।

यदि आप अपना कल्याण चाहते हैं तो अपने रूठे मन को मनाइये। यदि एक-दो, दस-बीस बार में न माने तो हजार बार मनाइये। जिस दिन आपका मन मानकर पुनः ठीक राह पर आ गया उसी दिन से आपकी जीवन उन्नति के सारे द्वार खुल जायेंगे। आज जो निकृष्ट एवम् निम्नकोटि की परिस्थितियाँ घेरे हुए हैं, वे क्रमशः कल्याणकारी अवस्थाओं में बदल जायेंगी।

मन को मनाने का एक ही सहज तरीका है कि उसके सामने जीवन के आशापूर्ण चित्र रखिये, कल्याणकारी संकेतों से उसे परिपूर्ण बनाइये। पुण्य, परमार्थ एवम् परोपकार के विचारों में मन को मनाने की सबसे अधिक क्षमता है। जो कुछ सोचिये ऊँचा सोचिये, जो कुछ चिन्तन करिये कल्याणकारी करिये, जो भी कल्पना, इच्छा अथवा मनोरथ करिये जनहित एवम् आत्महित की दृष्टि से करिये।

पवित्र विचारों से मन पर वांछित संस्कार पड़ते हैं, उसका परिमार्जन होता है और उसमें ऊर्ध्वगामी होने की रुचि पुनः उत्पन्न होती है। मन 'मनुष्य के मनोरथों को पूरा करने वाला सेवक होता है। मनुष्य जिस प्रकार की इच्छा करता है, मन तुरन्त उसके अनुकूल सञ्चालित हो उठता है और उसी प्रकार की परिस्थितियाँ सृजन करने लगता है। मन आपका सबसे विश्वस्त मित्र और हितकारी बन्धु होता है।

यह सही है कि बुरे विचारों का त्याग श्रमसाध्य अवश्य है कि असाध्य कदापि नहीं। विकृतियों के अनुपात में ही सत्प्रयासों की आवश्यकता है। बीसों साल की पाली हुई विकृतियों को कोई एक-दो महीनों में ही दूर कर लेना चाहता है तो वह गलती करता है। विकृतियाँ जितनी पुरानी होंगी उतने ही शीघ्र एवं दृढ़ अभ्यास की आवश्यकता होगी। अभ्यास में लगे रहिये एक-दो साल ही नहीं जीवन के अन्तिम क्षण तक लगे रहिये। मानसिक विकृतियों हार मानकर बैठे रहने वाला व्यक्ति जीवन में किसी प्रकार की सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

मन को परिमार्जित करने, उसे अपने अनुकूल बनाने मे केवल विचारशक्ति ही नहीं अपनी कर्मशक्ति भी लगाइये। जिस कल्याणकारी विचार को बनाइये उसे क्रियारूप में परिणत भी करिये। विचारों द्वारा संकेत पाया हुआ मन जब काम में नियोजित कर दिया जायेगा तो दोहरे प्रयत्न से शीघ्र ही वह आपकी अमोघ-शक्ति बनकर वांछित सफलताओं को मूर्तिमान् कर देगा।

मानसिक सन्तुलन इस प्रकार सही रहे

मस्तिष्कीय स्वास्थ्य को सही रखने के लिए आवश्यक है कि जीवन को खिलाड़ी की तरह जिया जाय। उस भाग-दौड़ में लगने वाली छोटी-छोटी चोट-ठोकरों, हार-जीतों को महत्व न दिया जाय। इन्हें रात-दिन के ज्वार-भाटे जैसा नियति का कौतुक-कौतूहल मात्र माना जाय। हर काम में चुस्ती और मुस्तैदी बरती जाय, पर यह आशा न रखी जाय कि इच्छित कामना के अनुरूप ही परिस्थितियाँ बनती चली जायेंगी। प्रतिकूलतायें भी आती रहती हैं, उनका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

खट्टा-मीठा स्वाद तो चखते रहा जाय, पर अवसर ऐसा न आने दिया जाय कि हर्ष-शोक की इतनी असाधारण अनुभूति हो कि मानसिक सन्तुलन ही गड़बड़ा जाय। आवेश चढ़ा, दौड़े और उत्तेजना में ऐसा कुछ न कर बैठा जाय, जो अस्वाभाविक एवं अनावश्यक हो, जिसके लिए पीछे पछताना और लोगों का उपहास-तिरस्कार सहना पड़े।

हर काम को पूरी समझदारी, जिम्मेदारी, तत्परता और तन्मयता के साथ किया जाय। उसमें आलस्य-प्रमाद को प्रवेश न होने दिया जाय। उपेक्षा-शिथिलता का लांछन न लगने दिया जाय। इतने पर भी यह निश्चित नहीं कहा जा सकता कि जो चाहा है, वही होकर रहेगा। तैयार उसके लिए भी रहा जाय कि आंशिक सफलता मिले अथवा सर्वथा असफल रहना पड़े तो विचलित होने की मनःस्थिति न बनने पाये। सोचा जाना चाहिए कि संसार हमारे लिए ही नहीं बना है। इसमें असंख्यों की साझेदारी है। जो अपने लिए लाभदायक समझा जाता है, उससे दूसरों की हानि भी हो सकती है। प्रकृति का सन्तुलन बनाये रखने के लिए सभी का ध्यान रखना पड़ता है। खेल में एक जीतता है, तो दूसरा हारता है। यही बात घटनाक्रमों के सम्बन्ध में भी लागू होती है। इच्छापूर्ति की आतुरता की महत्वाकाँक्षा रहती है। आवश्यक नहीं है कि वे हर किसी की पूरी ही होती रहें। अस्तु किसी भी विचारशील को हार-जीत के लिए, अनुकूलता-प्रतिकूलता में से कोई भी हाथ लगने की संभावना से पूर्व मानस बना लेना चाहिए। प्रतिकूलतायें ऐसी न हों, जो आवेशग्रस्त मानस बना दें और अपनी विवेक शक्ति का ही अपहरण कर लें। वही तो एकमात्र ऐसा माध्यम है, जिसके सहारे कठिनाइयों से बचना-छूटना संभव होता है। अन्य मार्ग खोजने और नया उपाय सोचने के लिए चिन्तन चेतना काम करती रह सकती है। यह स्तर सही रहे तो यह संभव है कि वर्तमान अवरोध से निपटना और नये सिरे से नया कदम उठा सकना संभव हो सके।

मन को हर स्थिति में हल्का-फुल्का रहने दिया जाय। संतोष और धैर्य को इतनी मजबूती से पकड़े रहा जाय कि वे किसी भी कारणवश छिनने न पायें। हर्ष-शोक को क्षणिक उभार समझा जाय और उन्हें जुगनू की चमक जैसा अस्थिर माना जाय। कल्पना की रंगीली उड़ानों में उड़ते हुए शेखचिल्ली का अनुसरण न किया जाय, और न आशंका से इतना भयभीत रहा जाय कि अगले दिनों कोई विपत्ति ही टूटने वाली है। नाविक रात को भी नाव चलाते हैं, पर ध्रुव तारे को देखकर दिशा ज्ञान पाते रहते हैं। उज्ज्वल भविष्य की सम्भावना पर विश्वास करना वह ध्रुवतारा है, जिस पर विश्वास रखे रहने पर लक्ष्य तक जा पहुँचने की आशा-ज्योति प्रज्ज्वलित रहती है। इसे स्वयं बुझा लेने पर तो इस तमिस्रा के माहौल में मात्र अन्धकार ही हाथ रह जाता है। निराशा एक प्रकार की मानसिक अपंगता है, जिसकी पकड़ में जकड़ जाने पर कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ता। रुग्णता, दुर्बलता, जराजीर्णता जैसी परिस्थितियों में मनुष्य असहाय-असमर्थ बनकर रह जाता है। यही दशा उन लोगों की होती है, जो किन्हीं असफलताओं को तिल का ताड़ बनाते हैं। रस्सी का साँप बनाना और झाड़ी में से भूत निकलना ऐसा ही मानसिक भ्रम है, जैसा कि निराशाग्रस्त, खीजते, रोते, कलपते रहने वालों के सामने निरन्तर खड़ा रहता है। विपत्ति के इस मानसिक भँवर से बचे रहने में ही भलाई है। संतुलित, शान्त स्थिर और आशान्वित रहने का अभ्यास सतर्कतापूर्वक निरन्तर करना चाहिए।

शरीर की बलिष्ठता और सुन्दरता का महत्व सभी जानते हैं। उसके लिए इच्छा और चेष्टा भी करते हैं। इससे अधिक महत्वपूर्ण मनोबल की प्रखरता और प्रसन्न मुद्रा को समझा जाना चाहिए। आत्म-विश्वास के रहते कोई कार्य असम्भव नहीं रह जाता। गई-गुजरी परिस्थितियों में सर्वथा साधनहीन रहते हुए भी लोगों ने आत्मविश्वास के सहारे प्रगति का मार्ग स्वयं सोचा, खोजा और उस पर स्वयं अपने पैरों चलते हुए उन्नति के चरम शिखर पर पहुँचे हैं। यह सम्भावना हर किसी के साथ जुड़ी रह सकती है, शर्त एक ही है कि कठिनाई से निराश होकर हाथ-पैर फुला न बैठा जाय।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुस्कान मनुष्य के पास एक प्रत्यक्ष दैवी वरदान है। जो हँसता-हँसाता रहता है, वह चुम्बक की तरह आकर्षण शक्ति से भरा-पूरा और कमल पुष्प जैसा सुन्दर-सुगंधित बना रहता है। यह अपना निजी उत्पादन है। यदि उसे स्वभाव का अंग बना लिया जाय और दृढ़तापूर्वक उसका अभ्यास कर लिया जाय, तो व्यक्तित्व असाधारण रूप से सुन्दर बन जाता है। उसे न तो बुढ़ापा छीन सकता है और न कठिनाइयों के बीच रहते हुए ही उस पर कोई आँच आती है। शरीर मात्र यौवन के दिनों ही बलिष्ठ रहता है। बचपन और बुढ़ापे में तो असमर्थता ही छाई रहती है। बीमारी और परेशानी ही उसे लुञ्ज-पुञ्ज कर देती है, पर आत्म-विश्वास के आधार पर उपार्जित किया गया मनोबल ऐसा है, जो सदा-सर्वदा साथ देता है और प्रचण्ड जीवनी शक्ति की तरह हर कठिनाई से लड़ पड़ने के लिए समुद्यत रहता है। प्रसन्न रहना उच्च-स्तरीय कला-कौशल है। जिसे मुस्काते रहने की आदत है, वह सम्पर्क में आने वालों पर अपनी एक विशिष्ट छाप छोड़ता है। उस सौन्दर्य की अपनी अतिरिक्त गरिमा है, जिससे हर कोई देखने वाला प्रसन्नता और उत्साह उपलब्ध करता है। निकट आने वाले किसी फूल-फल वाले महकते वृक्ष की सघन छाया में बैठने जैसा आनन्द पाते हैं। प्रसन्नचेता के सान्निध्य में रहकर प्रसन्न रहने के कौशल में प्रवीण होने के लिए आरम्भ में दर्पण में अपनी मुस्काती छवि का सौन्दर्य अनुभव करते हुए स्वभाव का अंग बनाया जा सकता है, पर बाद में तो वह एक आदत ही बन जाती है, जो व्यक्ति का अविच्छिन्न अंग बनी रहती है। बुरे दिनों में भी उसका साथ नहीं छूटता। प्रसन्न रहना प्रकारान्तर से सफल और सुखी जीवन को उपलब्ध कर लिए जाने की घोषणा करते रहना है। इस तथ्य पर विश्वास भी किया जाता है और सम्पर्क में आने वाले उस स्तर को अपनाने वाले व्यक्ति से प्रभावित भी होते हैं, सम्मान करते और सहयोग भी देने के लिए स्वयं उत्सुक रहते हैं। इसके विपरीत संकोची स्वभाव के डरे, सहमे, उदास, एकाकी प्रकृति के लोग सदा उपहासास्पद बने रहते हैं। कोई उनकी कठिनाई पूछने और सहानुभूति दर्शाने नहीं आते, जैसाकि इस प्रकार के लोग आमतौर से आशा किया करते हैं। जब हम हँसते हैं, तो दस लोग उस आनन्द में भागीदार बनने के लिए साथ लग लेते हैं, पर जब मुँह लटकाये रहने की स्थिति में होते हैं तो पुराने साथियों में से भी अधिकांश छिटकते और अलग हटते जाते हैं। दो परस्पर विरोधी परिस्थितियों में से किसी का वरण कर लेना सर्वथा अपने हाथ की बात है। परिस्थितियों की तुलना में मनःस्थिति का वर्चस्व कहीं अधिक बढ़ा-चढ़ा है। इस प्रकट रहस्य से हर किसी को अवगत रहना चाहिए।

स्वभाव की कुटिलता एक ऐसी विपत्ति है, जिसे दुर्दिनों का पूर्वाभास भी कहा जा सकता है। स्वार्थी, लालची, अहंकारी प्रकृति के व्यक्ति इच्छित बड़प्पन को सहज रीति से पा सकने में सफल नहीं हो सकते। तब उन्हें कुटिलता ही सूझती है। आतंक और छद्म यह दो ही हथियार उनके पास बने रहते हैं, जिनका वे उचित-अनुचित का विचार किए बिना समय-कुसमय इनका प्रयोग करने लगते हैं। साथ ही यह भूल जाते हैं कि क्रिया की प्रतिक्रिया भी होती है। तुके-बेतुके जबाव भले ही न मिले, पर ऐसों का सम्मान तो निश्चित रूप से चला जाता है। अवसर आने पर उस आक्रमण से प्रभावित लोग ही नहीं, सुनने-देखने वाले भी बागी हो जाते हैं और अवसर मिलते ही नीचा दिखाने में नहीं चूकते। यह स्पष्टतः पतन का मार्ग है। उच्छृंखलता, उद्दण्डता अपनाने वालों को सहयोग से, सम्मान से वंचित रहने के कारण प्रगति की दिशा में बढ़ा सकने वाली परिस्थितियाँ ही हाथ नहीं लगतीं। अनुशासनहीन, उद्दण्ड, आक्रामक प्रकृति के व्यक्ति कभी कहीं तात्कालिक लाभ भले ही उठा लें, पर वस्तुतः वे अपने व्यक्तित्व को इतना हेय बना लेते हैं कि किसी महत्वपूर्ण प्रगति के साथ जुड़ने की प्रायः समस्त सम्भावनायें ही समाप्त हो जाती हैं। ऐसे लोग खीझते, कुड़कुड़ाते जिस-तिस पर दोषारोपण करते हुए ही जीवन यात्रा समाप्त करते हैं। ऐसा कुछ भी हस्तगत नहीं कर पाते, जिसे अभिनन्दनीय या अभिवन्दनीय कहा जा सके। कुटिलता का परिणाम घृणा के बोझ से अधिकाधिक लद जाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता है। सच्चे अर्थों में उनका साथी सहायक और प्रशंसक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोई रह ही नहीं जाता। श्मशान में एकाकी भ्रमण करते रहने वाले भूत-पलीतों की तरह वे मात्र डरती-डराती जिन्दगी ही व्यतीत करते हैं।

निषेधात्मक दृष्टिकोण अपना लेने पर हर किसी के दोष-दुर्गुण खोजते रहने की आदत पड़ जाती है। सदा शिकायतें ही शिकायतें बनी रहती हैं। फलतः द्वेष की मनोभूमि बनती रहती है। द्वेष की प्रतिक्रिया प्रत्याक्रमण में भी हो सकती है। वैसा न हो तो भी विद्वेषी के प्रति किसी के मन में सहानुभूति उत्पन्न नहीं होती। भले ही वह अपने को अनीति के विरुद्ध संघर्ष करने वाला शूरवीर घोषित करता रहे। सिद्धान्तों का आवरण ओढ़कर भी संचित निकृष्टता को छिपाया नहीं जा सकता। वह पोटली में बँधी होने पर भी हींग की बदबू की तरह अपनी उपस्थिति की अप्रत्यक्ष घोषणा करती रहती है। किसी को सुधारने-बदलने का एकमात्र तरीका है अपने सद्भाव को बनाये रखकर प्रतिकूल समझे जाने वाले को सुधरने का अवसर देना। बुद्ध, गांधी, ईसा आदि ने यही नीति अपनायी और वे अपने अनोखे आदर्शों को सदा-सर्वदा जीवित रहने के लिए छोड़ गये। युद्ध तो अब तक असंख्यों हुए हैं। उनसे मात्र विनाश ही हुआ है। किसी प्रकार की कहीं कोई समस्या नहीं सुलझी। इसी शताब्दी के दो विश्वयुद्ध इस बात के साक्षी हैं कि संघर्ष में नहीं, सहयोग की नीति अपनाने में हर दृष्टि से लाभ है। व्यक्तिगत विद्वेषों को भी पंचायत जैसे माध्यमों से बहुत हद तक हल किया जा सकता है। कानून भी किसी हद तक ऐसे प्रसंगों में सहायता कर सकता है। डाक्टरों द्वारा अपनाई जाने वाली वह नीति ही सही है, जिसमें रोग को तो मारा जाता है पर रोगी के प्रति समुचित सद्भावना रखकर उसे न बचाया जाता है। इन दिनों ऐसे मनोरोगियों की ही अधिकता है, जो अहंकारी, आक्रामक, उद्दण्डता अपनाते और बदले में पग-पग पर ठोकरें खाते हैं। जिन्हें सुधारना कठिन भले ही लगता है, पर वह असम्भव नहीं है।

दूसरे गलती करते हैं, इसका दण्ड उन्हीं को भोगना चाहिए। हम स्वयं क्यों भोगें ? ऐसे प्रसंगों में उपेक्षा भी बड़ा काम दे जाती है। ईंधन न पड़ने पर आग अपने बलबूते जीवित नहीं रह सकती।

लालच भी बुरी बला है। औसत नागरिक स्तर का निर्वाह अपर्याप्त मानकर जो धन में कुबेर और अधिकार में इन्द्र बनने की आकुलता सँजोये रहते हैं, उन्हें अनर्थ करने के अतिरिक्त और कुछ उपाय ही नहीं सूझता। विलासिता और अहमन्यता मिलकर आत्मप्रदर्शन की प्रवृत्ति भड़काते हैं। जिन्हें औरों से बड़ा दीखने के लिए अपने आडम्बरों को बड़ा बनाने भर की युक्ति सूझती रहती है, वे अपने ऊपर चित्र-विचित्र विडम्बनायें लादते और रामलीलाओं में लगाये जाने वाले कागज के पुतले रावणों जैसा दीखने के लिए कुछ ऐसे ही स्वाँग रचते हैं। ठाठ-बाट, बचकाने श्रृंगार, मँहगी फैशन, शेखीखोरी, सस्ती वाहवाही लूटने के लिए कराई गई चमचागीरी, चारणबाजी, विज्ञापनबाजी, धूमधाम में समय और पैसा तो खर्च होता ही है, साथ ही जिन्हें इस काम को करने के लिए सहयोगी बनाया जाता है, उनका भी समय और श्रम अनुत्पादक कार्य में बर्बाद होता है। हानि इतनी ही होती तो भी उसे दर-गुजर किया जा सकता है। सस्ती वाहवाही लूटने की प्रवृत्ति चरितार्थ होती देखकर अन्य अनेकों के मन में वैसी ही नई विडम्बना रचने की फिक्र उभरती है और व भी वैसा ही करने के लिए अपने ढंग से कुछ न कुछ कर गुजरने के लिए आतुर होते हैं। मृतक भोज, धूमधाम वाली शादियों, तीर्थयात्राओं के पीछे यह सस्ती वाहवाही लूटने की आकांक्षा ही प्रधान रूप से काम करती है।

यह दुष्प्रवृत्ति भी कामुकता की तरह ही आकर्षक, उत्तेजक और मस्तिष्क में खलबली मचाकर उसे सत्यप्रयोजनों से विलग करती है। मानसिक क्षेत्र में वह गुंजायश नहीं रहती, जिससे प्रगति की दूरगामी योजनायें शान्त चित्त से बन सकें और कोई ठोस उपलब्धि हस्तगत कर सकें। यही कारण है कि लोकेषणा, कामोत्तेजना और वित्तेषणा को गर्हित स्तर का ठहरया गया है और इन विकृत महत्वाकांक्षाओं से बचे रहने के लिए कहा गया है। मनोविकारों से ग्रस्त न होने के लिए इन तीनों अनावश्यक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्तेजनाओं से अपने आपको भड़काने-जलाने से बचाकर ही रहना चाहिए।

चिन्ता, भय, क्रोध, आशंका, कुकल्पना जैसी सनकी में अधिकांश कुकल्पनायें ही काम करती रहती हैं। निराशा, हीनता, दीनता जैसी प्रवृत्तियाँ भी मनुष्य को अपंग बनाती हैं। इससे बचना आत्मशिक्षण पर अवलम्बित है। जिस प्रकार दूसरों को कुमार्ग-गमन से रोका जाता है, उसी प्रकार अपने सम्बन्ध में अधिक सतर्कता और जागरूकता बरतने की आवश्यकता है।

मस्तिष्क को सदा रचनात्मक कामों में लगाये रहा जाय। इसी आधार पर प्रस्तुत विपत्तियाँ भी टलती हैं और प्रगति के लिए उपयुक्त राह भी मिलती है। अवांछनीयताओं को निरस्त करने के लिए रचनात्मक दूरगामी परिणाम उत्पन्न करने वाले उपाय ही अपनाने चाहिए। मात्र कमर कसकर लड़ने पर उतारू हो जाना ही परास्त करने का उपाय नहीं है। इससे तो आक्रमण—प्रत्याक्रमण का ऐसा कुचक्र भी चल सकता है, जिसका कभी अन्त ही न हो। कीचड़ कीचड़ से नहीं धोया जा सकता। अनाचार के प्रति उसी अस्त्र का उपयोग करना आवेश की स्थिति में लगता तो अच्छा ही है और आवश्यक भी, पर उसकी परिणतियों पर ध्यान देने से निष्कर्ष निकलता है कि सर्वसाधारण को तालमेल की नीति ही अपनानी चाहिए। प्रताड़ना देने का कार्य शासन के हाथ ही छोड़ना चाहिए। निजी क्षेत्र में तो असहयोग, विरोध और बहिष्कार जैसे आधार ही समस्याओं का ऐसा हल निकाल देते हैं, जिनमें कुछ समय भले ही लगे, पर और भी अधिक दुःखदायी प्रतिक्रिया उत्पन्न करने से बचा लेते हैं।

मानसिक आवेगों से बचे रहने की गीताकार ने असाधारण उपयोगिता बताई है। शारीरिक स्वास्थ्य की रक्षा को ध्यान में रखते हुए भी उस नीति को अपनाया जाना चाहिए।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

असंयम बनाम आत्मघात

शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्

स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा का निवास होता है, यह कथन अक्षरशः सत्य है। जिसका शरीर स्वस्थ होगा, उसकी आत्मा भी स्वस्थ एवं समुन्नत होगी। स्वस्थ आत्मा के लिये शरीर का स्वस्थ होना आवश्यक है।

स्वस्थ आत्मा के लक्षण हैं— साहस, शौर्य वीरता, धीरता, स्थिरता, शान्ति, प्रसन्नता, प्रफुल्लता एवं असंकीर्णता आदि दैवी, सात्विकी अथवा आध्यात्मिक गुणों का बाहुल्य। जिन व्यक्तियों में इन गुणों की अभिव्यक्ति पाई जायेगी, उनकी आत्मा को स्वस्थ ही कहना होगा। इसके विपरीत जो कायर हैं, अधैर्यवान, भीरु, दीन-हीन एवं मलीन हैं, वह स्वस्थ आत्मा वाला नहीं माना जा सकता। आत्मा को स्वस्थ बनाने अथवा स्वस्थ आत्मा पाने के लिये जिन गुणों की आवश्यकता है, उसमें प्रथम स्थान स्वस्थ शरीर का ही है। शरीर के पूर्ण रूप से स्वस्थ होने से बाहर भीतर चारों ओर सामर्थ्य ही सामर्थ्य दृष्टिगोचर हुआ करती है।

संसार के प्रत्येक क्षेत्र में स्वस्थ शरीर की अनिवार्य आवश्यकता है। उपार्जन से लेकर भोजन तक और संघर्ष से लेकर मनोरंजन तक ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है, जिसमें अस्वस्थ बाल्य शरीर व्यक्ति सफलता एवं सार्थकतापूर्वक जी सके। किसान से लेकर क्लर्क तक और उद्योगपति से लेकर श्रमिक तक—यदि वह शरीर से स्वस्थ एवं समर्थ नहीं होगा तो अपना उपार्जनक्रम नहीं चला सकता। यदि रो-झींक कर चलाता भी है तो उसका काम सुन्दर एवं सन्तोषजनक नहीं हो सकता। अस्वस्थ शरीर व्यक्ति अधिक दिनों तक उपार्जन क्षेत्र में नहीं डट सकता। शीघ्र हो वह या तो रोगी होकर चारपाई पकड़ लेगा अथवा पूर्ण रूप से क्षीण होकर क्षय हो जायेगा। बहुत-से अस्वस्थ व्यक्ति खाते कमाते देखे जाते हैं। किन्तु उनके खाने कमाने में कोई आनन्द नहीं होता, वे मुर्दों की तरह जीते हैं।

यह भी सम्भव हो सकता है कि ऐसे अनेक अस्वस्थ व्यक्ति हों, जिनके काम करने वाले नौकर-चाकर हों, पुत्र व पौत्र हों और उनको उपार्जन के लिये किसी प्रकार की चिन्ता न करनी पड़ती हो, तब भी ऐसे परावलम्बी व्यक्ति जीवन का कोई सुख नहीं पा सकते। परावलम्बी, पराश्रित अथवा परमुखापेक्षी व्यक्ति की आत्मा दीनहीन तथा मलीन होकर मर तक जाती है। सन्तान वाला होकर भी अनाथ और धनवान होकर भी भिखारी जैसा बना रहता है। पर निर्भर को भी शारीरिक निर्भरता वाला व्यक्ति ऊपर से कितना ही अभिमान, मान, गुमान अथवा स्वाभिमान क्यों न दिखलाये किन्तु वह सब उसका आडम्बर मात्र ही होता है। उसका मन उसकी आत्मा अन्दर ही अन्दर रोया सिसका करती है।

जीवन का आधार कहा जाने वाला भोजन अस्वस्थ शरीर व्यक्ति के लिये विष होता है। वह जो कुछ भी खाता है, अजीर्ण बन जाता है, यों ही पेट के बाहर निकल जाता है अथवा अन्दर ही अन्दर रुककर सड़ा करता है। बहुत कुछ खाने-पीने को होने पर भी जब असमर्थ शरीर व्यक्ति दो ग्रास रुचिकर भोजन करने के लिये तरसता है, तब उसकी आत्मा की क्या दशा होती है इसे तो भुक्त-भोगी जान सकते हैं।

अन्य सुख तो दूर की चीज है, असमर्थ व्यक्ति निद्रा सुख से भी वंचित रहता है। अस्वस्थ व्यक्ति को अनेक चिन्तायें, पीड़ा तथा वेदनायें घेरे रहती हैं। इस कारण उसे रात में नींद नहीं आती। जब सारा संसार मौज से मीठी तथा गहरी नींद सोता है और असमर्थ व्यक्ति अनिद्रा का आखेट बना तारे गिनता रहता है तब उसकी आत्मा पर क्या बीतती है यह भी कोई भुक्त-भोगी ही जान सकता है। भोजन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नींद, श्रम एवं स्वावलम्बन के सुख से वंचित असमर्थ शरीर वाला व्यक्ति आध्यात्मिक क्षेत्र में कौन-से तारे तोड़ सकता है, कितनी उन्नति कर सकता है, कितना आगे बढ़ सकता है— इसका उत्तर केवल नकारात्मक ही हो सकता है।

आत्मोन्नति के इच्छुक अध्यात्मवादियों की सबसे प्रमुख एवं प्रथम साधना यह है कि वे अपने शरीर को पूर्ण रूप से स्वस्थ एवं पुष्ट बनायें। जो असमर्थ व्यक्ति साधारणतम दैनिक श्रम नहीं कर सकता—अपने जीवन शकट को ठीक से नहीं खींच सकता, वह साधन समर में आवश्यक संयमों का निर्वाह कर सकेगा—काम, क्रोध, मोह, लोभ, ईर्ष्या, डाह आदिक शत्रुओं से डटकर मुकाबला कर सकेगा, ऐसी कल्पना भी नहीं की जा सकती। साधन समर के लिये स्वस्थ एवं पुष्ट शरीर की अनिवार्य आवश्यकता है, जिसे पूरा किये बिना कोई व्यक्ति अध्यात्म पथ पर एक कदम भी नहीं बढ़ सकता "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा रहती है" यह तथ्य किसी भी आध्यात्मिक जिज्ञासु को नहीं भूलना चाहिये।

निर्बल शरीर के व्यक्ति बहुधा चरित्रहीन भी हुआ करते हैं। उनकी शारीरिक निर्बलता ही इस बात का विज्ञापन है कि यह व्यक्ति पूरी तरह सदाचारी नहीं है। बहुत बार लोग किसी रोग के शिकार होकर क्षीणकाय हो जाते हैं। किन्तु वह रोग भी उनको किसी अनियमित आहार-विहार के दण्ड स्वरूप ही मिला होता है। आहार-विहार तथा आचार-विचार का असंयम स्वयं में ही एक असदाचार है एवं चरित्रहीनता है। हीन चरित्र अथवा आचरणरहित व्यक्ति यदि उस आध्यात्मिक दिशा में बढ़ना चाहता है जिसमें अखण्ड आत्मबल एवं सदाचरण आवश्यक है तो वह दिन में स्वप्न देखता है, इस प्रकार के तेजस्वी चरित्र को क्षीण अथवा दीनहीन शारीरिक अवस्था वाला नहीं पा सकता।

आवेग, आवेश, आक्रोश एवं आतुरता आध्यात्मिक पथ पर लगने वाले बड़े ही क्रूर डाकू हैं। यह डाकू कठिनता से कमाई हुई मानसिक शान्ति अथवा स्थिरता को क्षण भर में ही लूटकर साधक को निर्धन एवं निर्बल बना देते हैं। यह दस्यु किस समय किस प्रकार आक्रमण कर सकते हैं, इसका कोई ठिकाना नहीं। विश्वामित्र, ययाति, पाराशर तथा दुर्वासा आदि महान् आध्यात्मिक साधक जब इनके शिकार बन सकते हैं, तब साधारण जन जो तिल-तिल कर उस पथ पर बढ़ पाते हैं, इन क्रूर एवं असामयिक पथ-पिण्डारियों से सुरक्षित रह सकते हैं, ऐसी आशा आत्मप्रवंचना ही मानी जायेगी।

असमर्थ एवं अस्वस्थ शरीर के व्यक्ति स्वभाव से ही आवेश प्रधान होते हैं। निर्बल का क्रोधी होना चिर प्रसिद्ध है। जरा-सी बात पर उत्तेजित हो उठना, तनिक-सी प्रतिकूलता देखकर आवेश में आ जाना, अणु मात्र अप्रियता से क्रोधग्रस्त हो जाना और बिन्दु भर विषमता से बड़ी सीमा तक चिन्तित हो उठना निर्बल व्यक्तियों का विशेष अवगुण होता है। असमर्थ शरीर आलस्य, प्रमाद तथा काम-विकार का स्थाई निवास होता है। अस्वास्थ्य के कारण भले प्रकार न पचने वाले भोजन का रस-रक्त कामुक प्रवृत्ति को उत्तेजित करने वाला ही होता है। इतने अधिक और विषैले कृमि-कीटों के लगे रहने पर किसी की आध्यात्मिक कृषि फलीभूत हो सकती है, ऐसा विश्वास किसी प्रकार भी नहीं किया जा सकता। आध्यात्मिक उन्नति करने के लिये जिस निर्मलता, निर्विकारता एवं निर्भयता की आवश्यकता है, वह शरीर को सबल स्वस्थ एवं समर्थ बनाकर ही पायी जा सकती है। दीन-हीन, क्षीण तथा निर्बल शरीरावस्था में नहीं।

"अभय" आध्यात्मिक उन्नति का महत्त्वपूर्ण आधार है। आधार यों भी कहा जा सकता है कि "अभय स्थिति" प्राप्त करना ही आध्यात्मिक साधक का लक्ष्य है। जैसे शत्रु-भय, अस्वास्थ्य भय, अयश भय, बिछोह भय आदि सताते रहते हैं। वह एक प्रकार से जीते जी नरक में पड़ा रहता है। भय चिन्ताओं को जन्म देने वाला विष बीज है। जिसके हृदय में चिन्ता की ज्वाला जल रही है, जिसकी वृद्धि विविध प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष भयों से भ्रमित हो रही है, वह आध्यात्मिक पथ पर एक कदम आगे नहीं बढ़ सकता। इन्हीं भवभयों पर विजय पाना ही आध्यात्मिक साधना का लक्ष्य है। भयों से मुक्त हो जाने पर मनुष्य की आत्मा एक अनिर्वचनीय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुख-शान्ति की अनुभूति पाती है—एक ऐसी निःशंक सुख-शान्ति की अनुभूति जो ब्रह्मानन्द के समक्ष ही होती है।

अभय का अभ्यास समर्थ शरीर द्वारा ही सम्भव है। शरीर में शक्ति एवं ओज-तेज रहने से मनुष्य का मनोबल भी बढ़ता है। उसे विश्वास रहता है कि वह किसी भी समय परिश्रम, पुरुषार्थ एवं सहनशक्ति के बल पर किसी भी प्रतिकूलता का मुकाबला सफलतापूर्वक कर सकता है। किसी दुष्ट के आने पर उससे निबट सकता है, शत्रु के आने पर टक्कर ले सकता है, संकट आने पर स्थिर रह सकता है और आपत्ति में फँस जाने पर अपना सन्तुलन बनाये रह सकता है। उसे कभी भी यह शंका नहीं रहती कि संसार की कोई भी विषम परिस्थिति उसको विचलित कर उसका बाल-बाँका कर सकती है। शरीर सामर्थ्य भरे-पूरे शरीर वाले की हिम्मत, हौसला तथा साहस को बहुत बढ़ा-चढ़ा देती है, शारीरिक सामर्थ्य के अभाव में मनोबल तथा आत्म-विश्वास की सम्भावना दूर की बात है। असमर्थ व्यक्ति जीवन में पल-पल पर त्रस्त, व्यग्र, आतुर तथा शंकाकुल ही रहा करते हैं और यदि कभी वे किसी कारणवश कोई साहस भी कर बैठते हैं तो बहुधा उन्हें पराजय, अपमान अथवा असफलता का सामना करना पड़ता है, जिनसे उनकी आत्मा पर अन्धकारपूर्ण प्रतिक्रिया ही होती है। ऐसी स्थिति में आत्मा की उन्नति तो दूर, उल्टा पतन ही होता है।

आध्यात्मिक उन्नति के लिये साधनाओं एवं साधनों की आवश्यकता है, उनमें शरीर रूपी साधन को सक्षम एवं सुयोग्य बनाने के लिये स्वास्थ्य-साधना की प्रमुख एवं प्रथम आवश्यकता है। शरीर को स्वस्थ, सबल एवं सक्षम बनाने के लिये सात्विक आहार, इन्द्रिय संयम, मानसिक सन्तुलन, व्यवस्थित दिनचर्या के अतिरिक्त उचित मात्रा में शारीरिक श्रम करना भी है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये व्यायाम आवश्यक है। श्रम करने को तो यों सभी लोग कुछ न कुछ शारीरिक श्रम करते रहते हैं। किसान तथा मजदूर तो केवल शारीरिक श्रम के आधार पर ही अपनी आजीविका कमाते हैं। एकमात्र शारीरिक श्रम को ही स्वास्थ्य का आधार मान लेना गलत है। किसी रूप में केवल शारीरिक श्रम करते रहने से व्यायाम की पूर्ति नहीं हो सकती है। कार्यक्रम तथा व्यायामिक श्रम में जो भेद है वह यह है कि साधारण क्रियाशीलता के श्रम में स्वस्थ सम्वर्धन की भावना नहीं रहती जबकि व्यायामिक श्रम में मात्र इसी भावना का समावेश रहता है। स्वास्थ्य सम्वर्धन की भावना से रहित श्रम से वांछित स्वास्थ्य की उपलब्धि नहीं हो सकती। व्यायाम केवल शारीरिक श्रम नहीं वरन् शारीरिक श्रम व मानसिक भावना के सम्मिश्रण का नाम है। शारीरिक श्रम तथा मन दोनों के सम्मिश्रण पर जो नियमित एवं विधिपूर्वक किया जाता है, उसे ही व्यायाम की संज्ञा दी जाती है और वही परिश्रम मनुष्य को स्फूर्ति, प्रेरणा, शक्ति, सामर्थ्य, साहस, उत्साह, मनोबल तथा आत्मविश्वास प्रदान कर सकता है, जिसके आधार पर. अध्यात्म मार्ग के सहायक गुण, अभय एवं उल्लास को प्राप्त किया जा सकता है।

अनेक लोग बढ़िया पौष्टिक भोजन की प्रचुरता को स्वास्थ्य एवं शारीरिक बल का आधार मानते हैं। ऐसा विश्वास रखने वाले भी इस दिशा में अन्धेरे में ही भटकते कहे जायेंगे। दूध, घी, मक्खन, मलाई, मेवा, फलों को अधिक ने अधिक खाते रहने से ही कोई स्वस्थ एवं सबल नहीं हो सकता। स्वास्थ्य के लिये महत्त्वपूर्ण यह नहीं है कि हम क्या और कितना खाते हैं ? स्वास्थ्य के लिये महत्त्वपूर्ण यह है कि हम क्या खाते हैं और कितना पचाते हैं ? यह बात है कि गरिष्ठ असात्विक तथा अवांछनीय भोजन अस्वास्थ्यकर होता है किन्तु वह सात्विक भोजन भी तामसी अवगुण में बदल जाता है, जो पूरी तरह से पचाया नहीं जाता।

भोजन को पूरी तरह पचाने और उसका शक्ति तत्व आत्मसात् करने के लिये व्यायाम के रूप में शारीरिक श्रम करना, बहुत आवश्यक है। व्यायाम के अभाव में बढ़िया से बढ़िया पौष्टिक एवं स्वास्थ्यदायक भोजन भी अपच बनकर शरीर को हानि पहुँचायेगा जबकि व्यायाम श्रम द्वारा पूरी तरह पचाया हुआ सस्ता तथा ज्वार जैसा साधारण अन्न तक उन सब आवश्यकताओं की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्ति कर देगा, जिनकी शारीरिक स्वास्थ्य एवं सामर्थ्य के लिये अपेक्षा है।

इससे उसकी शारीरिक शक्ति बढ़ेगी, मनोबल तथा आत्मविश्वास की उपलब्धि होगी, आध्यात्मिक मार्ग के संयमों, नियमों तथा कठिनाईयों को सहन करने की क्षमता प्राप्त होगी, अभय की सिद्धि होगी जो कि भव भय से मुक्त करने में सहायक होगी।

धर्म साधन में शरीर रक्षा का महत्त्व

दो बातें संसार में पूर्णतया सत्य हैं। वे यह कि—(१) हमें संसार में पृथ्वी पर रहना है, और (२) कभी न कभी पृथ्वी को छोड़ना है। ये दोनों प्रत्यक्ष और स्वाभाविक बातें हैं और साथ ही यह भी स्वाभाविक है कि प्रत्येक व्यक्ति की यह इच्छा होती है कि पृथ्वी पर हमारा रहना सुखपूर्ण हो, पृथ्वी का त्याग (मृत्यु) भी दुःख रहित हो। जिन साधनों से ये दोनों ध्येय प्राप्त हों, उन्हीं को धर्म कहना चाहिये।

पृथ्वी पर रहकर काम करने के लिये हमारा औजार भौतिक (स्थूल) शरीर है। यह समझना भूल है कि हम स्वयं शरीर हैं। न ही हम आत्मा हैं और हमारा शरीर स्वयं औजार है। हमारे शास्त्रों में भी लिखा है और आधुनिक अनुसंधानों से भी पता चलता है कि भौतिक शरीर के नष्ट हो जाने पर भी आत्मा सूक्ष्म शरीर में स्थित रहती है और कभी-कभी उसका भूलोक के मनुष्यों से सम्पर्क भी हो जाता है। इसलिये हमारा स्थायी और असली भाग अभौतिक आत्मा ही है और भौतिक शरीर बाहरी वस्त्रों की भाँति आत्मा से चिपके हुये एक वस्त्र के समान है, जिसका नाश होने पर भी आत्मा का अस्तित्व बना रहता है।

जिस तरह यदि हम एक घोड़े पर सवार हों तो उस घोड़े की शक्ति, तेजी और स्वभाव का हमारे कार्यक्रम पर भी अच्छा या बुरा प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार हमारे शरीर का स्वास्थ्य दक्षता और सत्स्वभाव (अच्छी आदतें) पृथ्वी पर हमारी सफलता के आधार होते हैं क्योंकि हमारा शरीर ही हमारी आत्मा का मुख्य औजार है। इसी तत्व को दृष्टिगोचर रखकर शास्त्रकारों ने कहा है —शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम्" अर्थात् शरीर निश्चय ही धर्म का प्रथम साधन है। इसी बात को अन्य स्थान पर विस्तारपूर्वक समझाया गया है।

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेवतु।
बुद्धितु सारथिं विद्धि, मनः प्रगहमेवच।।
इन्द्रियाणि हयान्याहुर्विषयान् तेषु गोचरानू।
आत्मेन्द्रिय मनोयुक्त भौक्तेत्याहुर्मनीषिणः।।

अर्थात्—यह आत्मा शरीर रूपी रथ पर सवार है। बुद्धि सारथी है, मन लगाम है। इन्द्रियाँ घोड़े हैं। जगत के विषय कार्यक्षेत्र हैं, इन्द्रिय और मन सहित आत्मा भोक्ता है। ध्यान रखिये कि भोक्ता आत्मा है शरीर नहीं। मन, इन्द्रिय और शरीर सब आत्मा के सहायक हैं, साथी हैं पर ये स्वयं आत्मा नहीं कहे जा सकते। पर इसका अर्थ यह भी नहीं है कि शरीर का कोई महत्त्व नहीं। अगर डाक्टर का नश्तर साफ और तेज न होगा तो वह अच्छा आपरेशन (चीर-फाड़) न कर सकेगा। इसी प्रकार जिस व्यक्ति का शरीर रोगी या निर्बल होगा, वह संसार के बहुत काम का नहीं हो सकता, उसका मूल्य थोड़ा ही समझा जायेगा।

इसलिये शरीर उपेक्षा की वस्तु नहीं है और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है। पर इसका अर्थ यह नहीं कि आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुये हम शरीर के वशीभूत हो जायें। सेवक के रूप में शरीर हमारे लिये उपयोगी है, पर उसको स्वामी बना देने का परिणाम बड़ा दुःखजनक होता है। इसलिये शरीर की यथायोग्य रक्षा करने के लिये भोजन, वस्तु, घर आदि की उचित व्यवस्था पर ध्यान देना चाहिये और साथ ही उसे सद्मार्ग पर चलाने के लिये नीति के नियमों का भी ध्यान रखना आवश्यक है। नीचे हम इन तीनों विषयों पर अलग-अलग विचार करते हैं—

भोजन में जिन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है, वे हैं—पौष्टिकता, स्वच्छता और ईमानदारी। भोजन की पौष्टिकता का विषय बड़ा लम्बा है और इस पर अनेक पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। हमारे भोजन में एसिड (अम्ल),

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

एलकलाइन (क्षार), कार्बोहाइड्रेट, प्रोटिन, फैट (चिकनाई) आदि कई तत्व माने गये हैं। इनके अतिरिक्त आजकल भोजन में विटामिन होने पर भी जोर दिया जाता है। जिन खाद्य पदार्थों से उपयुक्त तत्व संतुलित रूप में प्राप्त हो सकें वही स्वास्थ्य का रक्षक और स्वास्थ्य बढ़ाने वाला है।

भोजन स्वच्छ होना भी बड़ा महत्त्वपूर्ण है, इसके सम्बन्ध में भारतवर्ष में काफी विचार किया गया है, इसमें विचार निरामिष—वानस्पतिक और सामिश-पशुओं से प्राप्त का है। भारतवर्ष के बाहर इस विषय पर कुछ विचार नहीं किया जाता पर हमारे शास्त्रकारों ने स्पष्ट कह दिया कि मनुष्य के लिये निरामिष आहार ही शरीर और आत्मा के विकास की दृष्टि से हितकारी है। माँस खाना न तो मानव शरीर के लिये स्वास्थ्यप्रद कहा जा सकता है और न उसके व्यवहार से हमारी मनोवृत्तियाँ शान्त और कल्याणकारी स्थिति में रह सकती हैं।

हमारे वस्त्रों का उपयोग तो ऋतु की विकृति से शरीर की रक्षा करने में है, पर आज-कल वस्त्रों को दो अन्य अन्य दृष्टियों से भी व्यवहार में लाया जाता है। (१) सौन्दर्य की वृद्धि और (२) समाज में सम्मान प्राप्त करने का साधन। ये विचार मर्यादित मात्रा में दूषित नहीं हैं, पर इनमें अति करना निसन्देह हानिकारक है।

रहने के मकानों की आजकल हर जगह कमी है, इसके दो कारण जान पड़ते हैं—(१) जनसंख्या की वृद्धि और (२) युद्ध में मकानों का नाश। इसलिये सबको अपनी पसन्द के मकान मिल सकना कठिन है। फिर भी मकान यथासम्भव खुला हुआ तो होना ही चाहिये जिसमें धूप और हवा पर्याप्त मात्रा में मिल सके। हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि पड़ोसी की गली और आस-पास के स्थानों को गन्दा न करें, न अन्य किसी को हानि पहुँचायें। जो लोग किराये के मकान में रहते हैं, उनको दूसरों के मकान की भी उतनी ही देखभाल करनी चाहिये, जितनी कि हम अपने मकानों की करते हैं।

तीसरी बात है—ईमानदारी से धन प्राप्त करने की। इसकी आवश्यकता जीवन निर्वाह की सभी बातों में है। यह भी धर्म का सर्वप्रथम और परमावश्यक लक्षण है। समस्त वस्तुओं की प्राप्ति का साधन धन है। जिसके लिये वैज्ञानिक शब्द अर्थ है। अर्थ की प्राप्ति और उसका व्यय एक बड़ा विषय है। अर्थ की प्राप्ति के सम्बन्ध में आचार्य बिनोवा ने लिखा है कि कर्मयोगी का जीविका अर्जन कार्य समाज उपकारक होगा। बौद्ध-धर्म में 'सम्यक्-आजीवन' को धर्म के आठ अंगों में गिना गया है, जिसका आशय यही है कि आजीविका उचित एवं धर्मयुक्त मार्ग से प्राप्त की जाये। इस सम्बन्ध में हमको यह समझना चाहिये कि संसार में सब वस्तुयें समाज की हैं। हमारी ईमानदारी इसी में है कि हम जितने मूल्य की समाज की सेवा करें उतने ही मूल्य की वस्तुओं का उपभोग करें। यदि हम अधिक मूल्य की वस्तुओं का उपभोग करते हैं तो इसका अर्थ यह हुआ कि हम समाज के ऋणी हो गये और समय आने पर हमें समाज के इस ऋण को चुकाना होगा।

इस सिद्धान्त पर कार्य करने से समाज में शान्ति बनी रह सकती है। जिस प्रकार बैंक में रुपया जमा किया जाता है और आवश्यकता पड़ने पर उसे निकाला जा सकता है, पर यदि हम अपने जमा किये हुये की अपेक्षा अधिक धन निकालें तो वह बाद में लौटाना पड़ता है और उसका ब्याज भी देना पड़ता है। बैंक में जो रुपया होता है, वह किसी एक व्यक्ति का तो होता नहीं। यदि उसमें से ज्यादा रुपया निकाल लें और वापस न करें तो जिनका वह रुपया होगा, उनसे झगड़ा होगा और व्यक्तिगत तथा समाजगत संग्राम छिड़ जायेगा। दूसरों के परिश्रम से अर्जित वस्तु या अर्थ के उपभोग की लिप्सा के ही कारण गत पचास वर्षों में दो बार महा भयंकर युद्ध हो चुके हैं। अपनी योग्यता और श्रम से उपार्जित जो सम्पत्ति है, चाहे वह थोड़ी ही हो, उसी तक अपना व्यय सीमित रखना संसार में सुख और सार्वजनिक सुख का मुख्य साधन है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस दृष्टि से धर्म-साधन के लिये शरीर की रक्षा की ओर ध्यान देना और उसे सक्षम बनाये रखना परमावश्यक है। रोगी और निर्बल मनुष्य से धर्म-साधन प्रायः असम्भव होता है और वह स्वयं ही दूसरों के आश्रित रहता है। पर शरीर-रक्षा के साधनों को प्राप्त करने में सर्व प्रथम सच्चाई व ईमानदारी का ध्यान अनिवार्य है क्योंकि यदि इन बातों का ध्यान न रखा जायेगा तो समाज में शान्ति का स्थिर रखना कठिन होगा और उससे सभी व्यक्तियों को हानि सहन करनी पड़ेगी। इसलिये मनुष्य का हित इसी में है कि वह अन्य व्यक्तियों के हित की रक्षा करते हुये अपना भी हित साधन करे।

स्वाध्याय की उपेक्षा न करें

मनुष्य सांसारिक कर्त्तव्य को पूर्ण लगन व तत्परता के साथ निभाता रहे, इसके लिये नीरोग जीवन जीने का सर्वाधिक महत्त्व है। सामान्य जीवन के हर छोटे-बड़े कार्य स्वस्थ रहे बगैर पूरे नहीं किये जा सकते। महान् कार्यों को पूरा करने के लिये उसकी उपयोगिता और भी कई गुना बढ़ जाती है, इसी से स्वास्थ्य को धार्मिक सदाचार की संज्ञा दी जाती है। वस्तुतः यह सच बात है कि व्यक्ति में नैतिक सद्गुणों का विकास स्वस्थ व नीरोग रहने से प्रारम्भ होता है। इसी के सहारे धर्म की रक्षा और असत् तत्वों से बचाव रखा जा सकता है। शास्त्रकार ने लिखा—

"शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्"

अर्थात् धर्म का कर्त्तव्य पालन का प्रमुख साधन है उत्तम स्वास्थ्य। अप्राकृतिक कर्मों द्वारा स्वास्थ्य को गिरा देना, रोगी होना महान् पाप है।

आध्यात्मिक जीवन बिताते हुये मनुष्य उससे महान् परिणामों की आशा रखता है। इसके लिये स्वास्थ्य सर्वप्रथम है। शरीर का अर्थ है साध्य तक पहुँचाने का साधन अथवा इस प्रकार कहना चाहिये कि यह वह उपकार है, जिसके द्वारा महान् आध्यात्मिक परिणाम प्राप्त किये हैं। साधन हीन अस्त-व्यस्त व डाँवाडोल रहें, उपकरण यदि जीर्ण-शीर्ण हों तो सिद्धि प्राप्ति की कामना कभी भी साकार न होगी। लक्ष्य चाहे आध्यात्मिक हो अथवा लौकिक, उसकी प्राप्ति के लिये सर्वप्रथम स्वस्थ व नीरोग जीवन की उपासना करनी पड़ती है। इसकी उपेक्षा करने वालों को तो अभीष्ट प्राप्ति से वंचित ही रहना पड़ता है। रोगी व शारीरिक दृष्टि से दुर्बल व्यक्ति सीधा शार्ट-कट मार्ग ढूँढ़कर किसी प्रकार की सफलता प्राप्त करना चाहें तो उन्हें निराश ही होना पड़ेगा। सफलता का राजमार्ग अच्छे स्वास्थ्य से प्रारम्भ होता है।

आध्यात्म विद्या के आचार्य जब किसी को पारमार्थिक उद्देश्य की पूर्ति अथवा जीवन लक्ष्य की प्राप्ति की प्रेरणा देते हैं तो उन्हें जप, तप ध्यान धारणा आदि की उच्च प्रक्रियायें बाद में बताते हैं, पहले तो उनका प्रशिक्षण स्वास्थ्य कायम रखने, नीरोग जीवन बिताने पर होता है, पीछे दूसरे उपाय भी बताते हैं। नींव मजबूत किये बिना अगला कदम सफल नहीं हो सकता। कई लोग यह समझते हैं कि शरीर चाहे जिस स्थिति में पड़ा रहे, जप-तप मात्र से ही अभीष्ट-प्राप्ति सम्भव है किन्तु ऐसा नहीं हो पाता। कोई ड्राइवर कहे कि उसकी गाड़ी टूटी-फूटी है तो क्या हुआ इञ्जन, गेयर, ब्रेक आदि अच्छे नही तो इसमें क्या हर्ज, तो समझदार यात्री उसकी बात पर विश्वास नहीं कर सकते। इसी प्रकार टूटे-फूटे, जीर्ण-शीर्ण एवं रुग्ण शरीर को लेकर कोई व्यक्ति जीवन लक्ष्य प्राप्त कर सकेगा, उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

मनुष्य की जिन्दगी भी ऐसी ही एक यात्रा है। इसे शरीर की मोटर पर सवार होकर पूरा किया जाता है। मञ्जिल की ओर ले चलने वाला वाहन यह शरीर ही है। इसे यूँ ही उपेक्षित रखा गया रोग, शोक और दुर्बलता के यातनालय में पड़ा सिसकना रहने दिया गया तो लक्ष्य प्राप्ति की प्रक्रिया भला कैसे पूरी हो सकेगी ? पूजा पाठ करें सो ठीक है, सदाचार पर चलते हुये जीवन को समुन्नत बनाते चलें यह सराहनीय है। उचित रीति से धनोपार्जन करता हुआ अपने परिवार का उचित ढंग से पालन-पोषण करें, यह सभी अध्यात्म के महत्त्वूर्ण अंग हैं। किन्तु इन सबसे अधिक और सर्वप्रथम ध्यान देने योग्य यदि कोई वस्तु है तो वह है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्तम स्वास्थ्य और नीरोग जीवन। स्वास्थ्य सफलता का मूलाधार माना गया है। शरीर रुग्ण हो तो चित्त कभी स्थिर न रहेगा, शारीरिक अशक्तता से मन खिन्न रहेगा। रोग-शोक और पीड़ाओं में फिर वह एकाग्रता कहाँ बन पड़ेगी, जिसकी अपेक्षा की गई थी। ऐसे व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन का क्या आनन्द पा सकेंगे ? शारीरिक रुग्णता और निर्जीव इच्छाशक्ति दोनों सगी बहनें हैं। क्षीणकाय व्यक्ति कामनायें कितनी ही कर लें पर कुछ सफलता पा जायेंगे, इसमें सदैव सन्देह ही रहता है। श्रमिक अपने श्रम से उद्योगों को चलाता और उत्पादन को बढ़ाता है। लोक-सेवी निरन्तर श्रम करके मानसिक सत्प्रवृत्तियों को बढ़ाता है। सैनिक शत्रु से घोर संघर्ष करते हुये अपने देश का सम्मान कायम रखता है। किसान सर्दी-गर्मी की परवाह न कर दिन-रात खेतों में लगा रहता है और उत्तम फसलें उगाकर अपना तथा सैकड़ों दूसरे लोगों का पेट पालन करता है। यह सभी कार्य उत्तम स्वास्थ्य के माध्यम से ही पूरे किये जाते हैं। श्रम का जन्मदाता स्वास्थ्य ही है।

महान् मनीषी पी० साइरस ने लिखा है "अच्छा स्वास्थ्य एवं अच्छी समझ, जीवन के दो सर्वोत्तम वरदान हैं।" स्वास्थ्य का अच्छी समझ से बड़ा सीधा-सा सम्बन्ध है। एक अंगरेजी कहावत है स्वस्थ दिमाग स्वस्थ शरीर में होता है। जिसकी शारीरिक स्थिति ही अच्छी न होगी उसका मस्तिष्क उसके विचार व समझ कदापि परिपक्व न होंगे। व्यक्तित्व की परख स्वास्थ्य के अच्छे अथवा खराब होने से ही की जाती है। सदाचार व नैतिक जीवन जीने वाले व्यक्ति स्वस्थ, बलिष्ठ व नीरोग होते हैं। उनके चेहरे में दैवी मुस्कान खिली रहती है। ऐसे व्यक्तियों में कुछ ऐसा आकर्षण होता है कि हर कोई उनसे बात करके मित्रता बढ़ाने और सदैव मिलते-जुलते रहने के लिये लालायित रहता है। उनसे अलग होने का ही जी नहीं करता। स्वस्थ व्यक्ति में प्राण शक्ति होती है, इसी से लोग उसकी ओर आकर्षित बने रहते हैं।

दूसरे व्यक्ति वे होते हैं, जो अपने मित्रों के पास पहुँचते ही अपने दुःख दुर्भाग्य का रोना शुरू कर देते हैं। ये दुर्बल व्यक्ति खाज, खुजली, सर्दी जुकाम के नुस्खे ही तलाश करते रहते हैं। इनके पास न तो कोई बैठने की इच्छा करता है न ही इनसे मिलकर किसी को प्रसन्नता मिलती है। संसार में सभी के पास अपनी निज की समस्यायें ही इतनी अधिक होती हैं कि औरों की सुनने की उसकी इच्छा ही नहीं होती है। दूसरों से मिलने, प्रसन्नता प्राप्त करने का ही भाव अधिक रहता है। जो बेचारा स्वयं खीझा हुआ, अप्रसन्न, अस्वस्थ एवं चिन्तित रहता है वह औरों को क्या तो प्रसन्नता देगा ? क्या किसी को अपनी ओर आकर्षित कर सकेगा ? कहते हैं लोग निर्धन व्यक्ति का कभी साथ नहीं देते। किन्हीं परिस्थितियों में सम्भव है अधिक आत्मीय व्यक्ति, सच्चे मित्र धनाभाव में भी सम्बन्धों का निर्वाह करते दिखाई दे जाते हों किन्तु दुर्बल व्यक्ति रुग्ण पुरुष से तो सभी आँखें छिपाते और कतराते रहते हैं। उनसे कुछ लाभ उठाने की बात तो कभी सोच भी नहीं सकते। वे वास्तव में कभी किसी का उपकार नहीं कर सकते। ऐसे व्यक्ति समाज व राष्ट्र के अभिशाप ही माने जाते हैं।

रुग्ण व्यक्ति खुद तो परेशान, चिन्तित एवं निराश रहता ही है, अपने परिवार वालों, समीपवर्ती लोगों को भी हर घड़ी परेशानियों में फँसाये रखता है। किसी शायर ने लिखा है—

तंगदस्ती अगर न हो गालिब।
तन्दुरुस्ती हजार नियामत।।

दैनिक परेशानियों से छुटकारा पाने का एक ही उपाय है तन्दुरुस्ती अच्छा स्वास्थ्य। यह बात सिर्फ वैयक्तिक हित के लिये नहीं है वरन् इससे सभी को लाभ मिलता है। जीवन के विभिन्न व्यवसायों में अनेकों लोगों के साथ हमारा सम्बन्ध बना रहता है। बेटे की स्वास्थ्य खराबी अकेले उसी को तकलीफ दे सो बात नहीं। उसके इलाज के लिये माँ चिन्तित होगी ही। अपने व्यवसाय को छोड़कर चिकित्सा के लिये बाप को जाना ही पड़ेगा। पास-पड़ौस वाले भी इस कार्य में हाथ बँटाते हैं। धन का अपव्यय होता है सो अलग, समय की बर्बादी होती है वह एक तरफ। जितना श्रम व धन किसी उपयोगी कार्य में लग सकता था, वह एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्ति ही ले बैठा। धर्म-कर्त्तव्य समझकर लोग रोगी की सेवा सहायता करते हैं पर साथ ही यह भी अनुभव करते हैं कि उसके कारण उन्हें कितनी हानि उठानी पड़ी। फिर रोगी के प्रति धीरे-धीरे समीपर्ती लोगों में घृणा और उपेक्षा की भावना पनपने लगती है। इसलिये स्वास्थ्य को बनाये रखने और उस हेतु आवश्यक संयम को जीवन में सदैव स्थान दिये रहने में भूल नहीं करनी चाहिये।

स्वास्थ्य को असंयम की वेदी पर बर्बाद करना आत्मघात है और वह राष्ट्र की भी सबसे बड़ी सम्पत्ति का नाश करना है, इसलिये स्वास्थ्य की उपेक्षा न करें।

आरोग्य का मूल्य-महत्त्व समझें

जीवन-क्रम को सुव्यवस्थित रीति से चलाने के लिये आवश्यक साधनों में आरोग्य का स्थान सर्वप्रथम है। सुख, शांति और प्रगति के साधनों को जुटाने के लिये स्वस्थ शरीर ही समर्थ हो सकता है। जब शरीर की शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं, बुढ़ापा आ घेरता है अथवा रोगों के चंगुल में जकड़ जाता है तो मनुष्य की स्थिति दीन-हीन एवं आर्त कातर जैसी हो जाती है। युवावस्था में जो लोग सिंह की तरह गरजते और हिरन की तरह उछलते रहते हैं, उन्हें वृद्धावस्था में शक्तियों के क्षीण हो जाने पर एक असहाय एवं लुंज-पुंज असमर्थ प्राणी की तरह छोटी-छोटी बातों के लिये दूसरों की सहायता के लिये तरसते देखा है। यों वृद्धावस्था शान्ति की अवस्था है। यदि युवावस्था में शक्तियों का दुरुपयोग करके शरीर के जीवन तत्व को क्षत-विक्षत न कर लिया गया हो तो साधारणतः वृद्धावस्था में भी काम चलाऊ शक्ति बनी रहती है। अगणित व्यक्ति ऐसे हैं, जो वृद्ध कहे जा सकने की आयु के होते हुये भी तरुणों जैसी सक्षमता बनाये रहते हैं। इसके विपरीत ५० वर्ष की आयु के ऐसे व्यक्ति भी बहुत बड़ी संख्या में देखे जा सकते हैं, जिनके लिये जिन्दगी भार हो रही है। शक्ति का भण्डार चुक जाने पर खोखला बना हुआ शरीर किसी भी आयु का क्यों न हो, असहाय स्थिति को पहुँच जाता है और जीवित रहते हुये भी मृतक से अधिक दुःख भुगतता है।

बीमारियों ने जिन्हें घेर लिया है, उनके कष्टों का तो कहना ही क्या है ? प्रत्येक रोग अपने साथ एक जलन, अशान्ति एवं पीड़ा लिये हुये होता है। रोगों की भिन्नता के कारण यह कष्ट न्यूनाधिक हो सकता है पर अशांति हर रोगी को रहती है। कुछ रोग ऐसे होते हैं जिनके शरीर में रहते हुये भी मनुष्य किसी प्रकार अपना दैनिक कार्यक्रम चलाता रहता है और कुछ ऐसे होते हैं, जिनकी तीव्र व्यथा के कारण चारपाई पकड़नी पड़ती है। आमतौर से रोगी उन्हें ही माना जाता है, जो काम करने में असमर्थ होकर चारपाई पर गिर पड़ें, दर्द से कराहें, दूसरों की सहायता की अपेक्षा करें और जिनकी सहायता के लिये डाक्टर बुलाना पड़े। अब अस्वस्थता इतनी व्यापक होती चली जा रही है कि जो लोग किसी प्रकार अपनी देह को घसीटते ले चलते हैं, कष्ट को बाहर प्रकट न करके भीतर ही भीतर सहते रहते हैं, उन्हें मोटे तौर से रोगी भी नहीं माना जाये। कुछ न कुछ व्यथा बनी रहना तो आज एक फैशन जैसा आम रिवाज हो गया है। कुल्ला, दातौन की तरह दवाओं का सेवन भी एक आवश्यकता बनती जा रही है।

रोग मन्द हो या तीव्र, शरीर की शक्तियों का उत्पादन रोकता है और संग्रहीत बल को दिन-दिन नष्ट करता चलता है। मन्द रोगों में यह विनाश प्रक्रिया धीरे-धीरे चलती है और मनुष्य अकाल मृत्यु की ओर धीरे-धीरे घिसटता चलता है। तीव्र रोगों में यह कार्य आँधी तूफान की तरह होता है और यदि समुचित रोक-थाम न हुई तो असह्य पीड़ा को सहता हुआ रोगी तेजी से दौड़ता हुआ काल के मुख में प्रवेश कर जाता है। जो लोग बीमारियों से ग्रसित हैं, उनको जीवन धारण किये रहना ही एक समस्या है, जिन्दगी के दिन किसी प्रकार काट लें, तो यही उनके लिये एक बड़ा पुरुषार्थ है। अन्यथा एक-एक दिन पीड़ा और परेशानी के कारण पहाड़ की तरह भारी मालूम पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में फँसे हुये मनुष्य उन्नति और प्रगति की कल्पनायें ही कर सकते हैं, उनके लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्हें वह अवसर कहाँ मिल पाता है, जो स्वस्थ और पुष्ट शरीर वालों के लिये सम्भव होता है।

रोग मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। वह भीतर ही भीतर जीवन तत्व को चूसता रहता है ओर उसे ऐसा खोखला एवं निकम्मा बना देता है कि किसी दिशा में पुरुषार्थ करने की क्षमता शेष नहीं रही। प्रगति पथ में बाधा पहुँचाने वाली संसार में अनेक कठिनाइयाँ हैं। गरीबी, अविद्या, शत्रुता, शोषण, अविवेक, अनुपयुक्त शासन, अविवेकी समाज, दैवी प्रकोप आदि बहुत-से कारण ऐसे हैं, जो मनुष्य की उचित प्रगति को राकते हैं। आलस्य, असभ्यता, उत्तेजना, निराशा, मूर्खता आदि कई व्यक्तिगत दोष भी ऐसे हैं, जो जीवन को उपर उठने नहीं देते और बार-बार नीचे दबोचते रहते हैं। पर इन सबसे बढ़कर मनुष्य का शत्रु रोग है। बीमार आदमी यदि सद्गुणी भी हो और सांसारिक परिस्थितियाँ प्रतिकूल न भी हों तो भी वह हीन स्थिति में ही पड़ा रहेगा। प्रगति के लिये जिस पुरुषार्थ की आवश्यकता है, वह तभी बन पड़ता है जब शरीर निरोग हो। बीमार का सारा ध्यान अपनी व्यथा पर केन्द्रित रहता है। दिन काटने की आवश्यक बातें तो उसे विवश होकर पूरी करनी ही पड़ती हैं पर उन मजबूरियों से ऊपर उठकर मनःक्षेत्र में कुछ ऐसा उत्साह शेष नहीं रहता, जिसके आधार पर उन्नति की किसी बड़ी योजना को पूरा किया जा सके।

रोग के साथ-साथ क्षरण और कष्ट की प्रक्रिया निरन्तर बढ़ती रहती है। देह में जो कुछ जमा पूँजी है, बीमारी उसे दिन-दिन घटाती और बर्बाद करती जाती है। कष्ट में कराहता हुआ बेचैनी और अशान्ति अनुभव करता हुआ मनुष्य क्या तो प्रगति की बात सोचेगा और क्या उस मार्ग पर दूर तक चल सकेगा ? महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति आगे तो बढ़ना चाहते हैं, उनकी कामनायें तो बड़ी-बड़ी होती हैं पर शरीर साथ नहीं देता। ऐसी दशा में वे शक्ति से बाहर खींच-तान करके शरीर पर कुछ देर अत्याचार भी करते रहते हैं पर इतने से भी क्या काम बनने वाला है। पूरे पुरुषार्थ की शरीर में क्षमता नहीं होती स्वल्प प्रयत्न से वह महत्त्वाकांक्षायें पूरी नहीं होती, ऐसी दशा में उन्हें निराशा, दुर्भाग्य, क्षोभ आदि के खीज भरे विचार और उठने लगते हैं, जिससे एक विशेष प्रकार का मानसिक कष्ट और बढ़ जाता है।

आजीविका उपार्जन के लिये अच्छे अवसर प्राप्त कर सकना स्वस्थ मनुष्य के लिये ही सम्भव है। क्या व्यापार, क्या नौकरी, दोनों ही कार्य शरीर बल की अपेक्षा रखते हैं। विद्या और बुद्धिबल बढ़ाने के लिये जिस शिक्षण और अध्यवसाय की जरूरत है, वह भी निरोग रहने पर ही बन पड़ता है। समाज सेवा, परमार्थ, साधना, भजन, ध्यान, धर्म-कर्म जैसे पुण्य कर्मों के लिये जिस मनोबल की आवश्यकता है, वह अस्वस्थ रहने वालों में कहाँ होता है। थोड़ी खींच-तान कर गाड़ी आगे चलाते हैं, पर दूर तक वह भी नहीं चल पाती। यश-कीर्ति की कामना करने वालों को जो त्याग करना पड़ता है उनके लायक अस्वस्थ व्यक्ति में न तो साहस होता है और न साधन ही जुट पाता है। मौज मजा करने की कामना भी ऐसे लोग कहाँ पूरी कर पाते हैं ? विनोद और मनोरंजन के लिये अवकाश की भी जरूरत पड़ती है और मनःस्थिति की भी, यह दोनों ही बातें अस्वस्थता की स्थिति में नहीं बन पड़तीं। इन्द्रियों की शक्ति घट जाने से कोई भी रोग भोगते हुये दूनी पीड़ा बढ़ जाने की आशंका सामने खड़ी रहती है। इस प्रकार आशा और आनन्द के सभी द्वार रोगी व्यक्ति के लिये अवरुद्ध बने रहते हैं।

संसार में कोई महत्त्वपूर्ण काम करने की, उन्नति एवं सफलता की, आनन्द-उल्लास की, सन्तोष और शान्ति प्राप्त करने की आकांक्षा हर व्यक्ति को रहती है, कितने लोग हैं जो अपना अभीष्ट मनोरथ पूरा कर पाते हैं। इन मन मसोसकर असफल रहने वाले व्यक्तियों में से अधिकांश वे होते हैं, जिन्हें अस्वस्थता घेरे रहती है। उनके लिये न तो अपने लिये प्रसन्नता प्राप्त करना संभव होता है और न अपने परिवार की कोई महत्त्वपूर्ण सेवा बन पड़ती है। रोगी की सेवा में घर के लोगों को समय लगाना पड़ता है। यह परिचर्या किन्हीं विरले ही मनस्वी व्यक्तियों को रुचती है अन्यथा सब लोग हँसते-खेलते वातावरण में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहना पसन्द करते हैं और दुःखी बीमारों की मनोव्यथा के सम्पर्क में आकर अपने चित्त उदास बनाने से बचना चाहते हैं। कुछ समय तो भले ही उत्साहपूर्वक रोगी की सेवा बन पड़े पर देर तक उसमें लगना पड़े तो घृणा और खिन्नता उत्पन्न होती है। रोगी की परिचर्या करने वाले घर के लोग बाहर से ही शिष्टाचार बरतें, पर भीतर ही भीतर घृणा और खिन्नता के भाव भरे रहते हैं। इस प्रकार की मनो-भावनाओं के बीच रोगी अपने दिन काट सकता है, पर शान्ति एवं प्रसन्नता अनुभव नहीं कर सकता। छूत का भय, घर और बस्ती में बढ़ने वाली गन्दगी, परिचर्या में लगने वाला समय, कष्टमय वातावरण की मनहूसियत, दवादारू का खर्च, उपार्जन में कमी आदि का चिड़चिड़ापन आदि कितनी ही बातें ऐसी उत्पन्न हो जाती हैं, जिससे रोगी व्यक्ति से उसके घर वाले भी खिन्न रहते हैं और उनके सम्पर्क में आने से कतराने एवं पीछा छुड़ाने की भावनायें व्यक्त करने लगते हैं। ऐसी परिस्थितियों से घिरा हुआ रोगी जो अपने आपके लिये ही भार रूप है, क्या अपने परिवार की सेवा करेगा ? और क्या उन्हें सुखी रखेगा ?

रोग को आज जिस प्रकार एक फैशन मान लिया गया है और उसकी हानियों को गम्भीरता से न सोचने का जो स्वभाव बनता जा रहा है वह बीमारी से भी अधिक भयंकर है। किसी चीज को हटाने या मिटाने का प्रयत्न मनुष्य तभी करता है, जब उसकी भयंकरता और हानियों को भली प्रकार समझे। बीमारी और कमजोरी मानव जीवन की सबसे बड़ी क्षति है। लोग धन की हानि को प्रधानता देते हैं पर वस्तुतः स्वास्थ्य की हानि ही सबसे बड़ी हानि है। कमाई में लोग, धन सम्पत्ति या प्रतिष्ठा को सब कुछ समझते हैं पर यह भूल जाते हैं कि स्वस्थ शरीर के बिना न तो किसी भी बड़ी सफलता को उपलब्ध किया जा सकता है और न उसे स्थिर रखा जा सकता है। विभूतियाँ उसी के पास ठहरती हैं, जो उनकी सुरक्षा रखने में समर्थ है। दुर्बल व्यक्ति से लक्ष्मी ही नहीं, विभूति भी तिरस्कृत करती हुई विदा हो जाती है। इसलिये लक्ष्य जो भी हो उसे प्राप्त करने एवं सुरक्षित रखने के लिये सर्वोपरि साधन स्वास्थ्य की चिन्ता, अभिवृद्धि एवं सुरक्षा करनी ही चाहिये।

स्वास्थ्य की उपयोगिता हमें समझनी चाहिये और यह भी जानना चाहिये कि इस बहुमूल्य विभूति को खो देने पर मनुष्य मणिहीन सर्प की तरह निस्तेज हो जाता है। उपेक्षा करने से हर चीज घटती और नष्ट होती है। हमारे स्वास्थ्य का विनाश भी इस बुरी आदत के कारण ही होता है कि हम स्वास्थ्य की उपयोगिता की ओर ध्यान नहीं देते और न यह सोचते हैं कि उसकी क्षति जीवन की कितनी भयानक क्षति है ? यदि इस ओर हमारा समुचित ध्यान हो तो जिस प्रकार धन-दौलत की चिन्ता में बहुत सारा समय लगाते हैं, उसी प्रकार आरोग्य की रक्षा के लिये क्यों समय न लगावेंगे। क्यों कर ध्यान न देंगे। जिस ओर ध्यान दिया जायेगा उस ओर प्रगति का होना अवश्यम्भावी है। मनुष्य का चित्त एक जादू भरी शक्ति अपने अन्दर छिपाये बैठा है, उस शक्ति को जिस दिशा में भी प्रयुक्त किया जाने लगे, उसी ओर भारी सफलता के उपकरण देखते-देखते इकट्ठे होने लगते हैं।

गम्भीर एवं महत्त्वपूर्ण समस्या

जिस प्रकार बिना विद्या पढ़े कोई विद्वान नहीं बन सकता, उसी प्रकार स्वास्थ्य की दिशा में जागरूक रहे बिना और उसकी सुरक्षा के लिये सचेष्ट रहे बिना कोई व्यक्ति न तो निरोग रह सकता है, और न दीर्घजीवी बन सकता है। इसलिये जिन्हें जीवन से प्यार है, जो मनुष्य जीवन का कुछ लाभ लेना चाहते हैं, उन्हें सबसे प्रथम एक ही काम करना चाहिये कि स्वास्थ्य के महत्त्व पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें उसके अभाव में होने वाली हानियों तथा स्वस्थ शरीर की सम्भानाओं पर देर तक सोचें। यदि यह महत्त्व ठीक तरह समझ में आ जाये तो हम आरोग्य को प्राप्त करने के लिये सच्चे मन से सचेष्ट होंगे ओर तब दुर्बल शरीर को सबल बनाना और रोगों से छुटकारा प्राप्त करना कुछ भी कठिन न रहेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

संसार सागर की यात्रा के लिये हमारा शरीर एक नाव है। शरीर के ऊपर हमारा पार उतरना या डूब जाना, बहुत कुछ निर्भर करता है। जिस तरह छिद्रयुक्त जीर्ण-शीर्ण, कमजोर नाव से चंचल, गतिशील संघर्ष युक्त जल धारा को पार करना कठिन है, उसी तरह रोगी, निर्बल, असमर्थ शरीर से जीवन यात्रा भली प्रकार पूरी करना सम्भव नहीं होता। विजय, सफलता, आनन्द, उल्लासमय जीवन बहुत कुछ स्वस्थ एवं बलवान शरीर पर निर्भर करता है। शरीर मनुष्य के लिये एक ऐसी ईश्वरीय देन है, जिसके अभाव की पूर्ति संसार में अन्य कोई भी वस्तु नहीं कर सकती।

हृदय बुद्धि जैसे महत्त्वपूर्ण उपकरण भी अपना अस्तित्व सतेज स्वस्थ शरीर में ही कायम रख सकते हैं। शरीर के अस्वस्थ होते ही बुद्धि मन्द हो जाती है। विवेक जाता रहता है। हृदय अपना आनन्द संगीत बन्द कर देता है। मनुष्य के लिये शेष रह जाती है जीवन की भयानकता, कठोरता, अशान्ति, क्लेश, अपमान। वह जीवित होते हुये भी मृत तुल्य हो जाता है।

हमारा शरीर उस शीशे के ग्लोब की तरह है, जिसके माध्यम से लालटेन की दीप शिखा अपनी ज्योति बाहर प्रकट करती है। गन्दा कालिख धुयें से खराब शीशा रोशनी को भली प्रकार बाहर प्रकट नहीं होने देता। जीर्ण-शीर्ण कमजोर शरीर तो आत्म ज्योति की प्रकाश किरणों को संसार में व्यक्त नहीं होने देता। स्वस्थ एवं तेजस्वी शरीर ही आत्मा के तेजस्वी प्रकाश को धारण करके जीवन को आभामय बना व ज्योतिर्मय बना सकता है।

शास्त्रकार ने शरीर को ही सब धर्मों का साधन कहा है। स्वस्थ शरीर के द्वारा ही जीवन और जगत के धर्म-कर्त्तव्यों का भार वहन किया जा सकता है। वस्तुतः बिना मजबूत शरीर के न हम किसी का ऋण चुका सकते हैं, न अपना कर्त्तव्य पूर्ण कर सकते हैं, दुर्बल शरीर से न किसी की सेवा हो सकती है।

शरीर आत्मा का मन्दिर है। बापू ने कहा है "शरीर आत्मा के रहने की जगह होने से तीर्थ जैसा पवित्र है।" आवश्यकता इस बात की है कि हम इसे तीर्थ की तरह ही स्वच्छ, सुन्दर, विकार शून्य बनाने का प्रयत्न करें।

शरीर के माध्यम से ही जीवन और जगत का सौन्दर्य—आनन्द लाभ किया जा सकता है। शरीर में जब भरपूर उछल-कूद, मन में अपार उत्साह होता है तो यह संसार क्रीड़ाभूमि सा दीखता है। स्वर्ग लगने लगता है और जब शरीर असमर्थ, अयोग्य, बलहीन हो जाता है तो यह संसार नरक तुल्य जान पड़ता है। जीवन भार स्वरूप लगने लगता है। पाश्चात्य विद्वान बीचर ने कहा है "शरीर वीणा है और आनन्द संगीत। यह जरूरी है कि यन्त्र दुरुस्त रहे।" आनन्द का संगीत स्वस्थ शरीर में ही स्पन्दित होने लगता है।

शरीर का रोगी, जीर्ण-शीर्ण, कमजोर होना अपने आप में एक बहुत बड़ा पाप है। जार्ज बर्नाडशा ने कहा है— "यदि कोई बीमार पड़ेगा तो मैं उसे जेल भेज दूँगा।" बीमारी सजा है प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने की। रोगी होना अपने आप में अपराधी होना है। मुख्यतः मनुष्य की अपनी भूलें व परिस्थितियाँ जिनमें वह रहता है और जिनके निर्माण में खासतौर से वह स्वयं ही उत्तरदायी है, मुख्य होती हैं। रोगी होकर जहाँ मनुष्य अपने लिये नरक या जीवन का द्वार खोलता है, वहाँ समाज की उन्नति में भी बाधा पहुँचाता है क्योंकि एक ओर तो वह व्यक्ति समाज के लिये जो कुछ करता है वह रुक जाता है, दूसरे अन्य लोगों का समय, श्रम, धन रोगी के लिये लगने लगता है। परिवार के लोगों में चिन्ता फैलती है।

स्वस्थ, बलवान शरीर फटे कपड़ों में भी सुन्दर लगता है। रोगी और निस्तेज व्यक्ति सुन्दर कपड़ों के सौन्दर्य को भी भद्दा बना देता है। उसे कितना ही सजाओ, वह अनाकर्षक और कुरूप ही लगेगा।

उत्तम स्वास्थ्य ही जीवन का सौन्दर्य है, आनन्द की खान है। स्वास्थ्य और बल की उपासना की प्रथम कक्षा मानव देह है। शरीर को स्वस्थ, बलवान, तरोताजा, स्फूर्तिवान, तेजस्वी बनाना आवश्यक है। यही वह आधार है, जिससे जीवन में अन्य स्रोत खुलने की सम्भावना हो सकती है। स्मरण रहे, स्वस्थ शरीर में ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वस्थ मन निवास करता है। बलवान शरीर ही आत्मा का तेज गुण धारण करने में समर्थ होता है। कान्तिवान हँस-मुख चेहरा, तेज ओज़ ही दूसरों के लिये आकर्षण का प्रकृत केन्द्र होता है। मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य पर ही शक्ति सामर्थ्य के अन्य स्रोत निर्भर करते हैं। इसलिये शरीर को सर्वप्रथम बलवान, स्वस्थ, तेजस्वी बनाने पर ध्यान देना चाहिये।

वैयक्तिक जीवन में शरीर के बाद नम्बर आता है हृदय और बुद्धि का। कविन्द्र-रवीन्द्र ने कहा है, "हे भगवान ! यह शरीर तेरा मन्दिर है अतः इसे मैं हमेशा पवित्र रखूँगा, आपने मुझे यह हृदय दिया है, मैं इसे प्रेम से भर दूँगा, आपने मुझे यह बुद्धि दी है, मैं इस दीपक को हमेशा निर्मल और तेजस्वी बनाये रखूँगा।" शरीर के साथ-साथ हृदय व बुद्धि का भी अपने-अपने क्षेत्र में स्वस्थ सतेज होना आवश्यक है।

अक्सर देखा जाता है कि कई व्यक्ति शरीर से स्वस्थ होते हैं लेकिन उनका हृदय और बुद्धि अविकसित ही रह जाते हैं। बहुत से पहलवान कहाने वाले लोग बुद्धि के ठस और हृदय से प्रेम, आनन्द, निर्मलताशून्य होते हैं। आज तो यह एक धारणा-सी बन गई है कि जो शरीर से तगड़ा होगा बुद्धि से कमजोर रहेगा। जो बुद्धिमान होगा उसका शरीर दुर्बल होगा लेकिन वस्तुतः यह विश्वास गलत है। शरीर, मन, हृदय तीनों में से एक के भी निर्बल होने पर मनुष्य बलवान नहीं कहा जा सकता।

हनुमान जी की सच्ची उपासना

हमारे यहाँ हनुमान को सर्वांगीण बल का प्रतीक माना गया है। स्थान-स्थान पर हनुमान की मूर्ति कहीं न कहीं बगीचे, शहर से बाहर खुले मैदान में मिलती है। यह हमारे यहाँ किसी समय बलोपासना के व्यापक प्रसार का स्मृति चिन्ह है। श्री हनुमान के व्यक्तित्व का परिचय देते हुये कहा है—

मनोजवं मारुत तुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम।
वातात्मजं वानरयूथ मुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये।

इस छोटे से श्लोक में सर्वतोमुखी शक्ति के प्रतीक हनुमान का चित्रण मिलता है। वे केवल शरीर से ही बलवान नहीं थे, मन की भाँति स्फूर्तिवान भी थे। 'मारुत तुल्य वेग' हवा के सदृश वे वेगवान थे। शक्ति उपासना का आदर्श शरीर को वज्र के समान बनाने की प्रेरणा देता है तो उसे वायु के सदृश वेगवान भी। हनुमान का शरीर ऐसा ही था। वे चट्टानों को चूर-चूर कर देते थे तो दस कोस भी चले जाते थे। वे वायु जैसे गतिवान थे।

शक्ति के प्रतीक हनुमान शरीर के साथ-साथ मन में भी अपार बलशाली थे। उन्होंने वासना को जीत लिया था। वे जितेन्द्रिय थे, बुद्धिमान थे। उनका शक्ति, व्रत, तप प्रधान जीवन सभी प्रकार श्रेष्ठ था। शरीर और मन पर उनका पूरा-पूरा अधिकार था। वे बुद्धिमानों में भी श्रेष्ठतम थे। हृदय से वे सभी प्रकार निर्मल, पवित्र और सरल थे, तो परम भक्त भी थे। हनुमान राम के अनन्य भक्त थे।

शरीर, मन, बुद्धि, हृदय के साथ-साथ मनुष्य का एक बल और होता है, संगठन बल। संगठन के साथ ही व्यक्ति रह सकता है। शक्तिवान मनुष्य भी समाज के सहयोग के अभाव में प्रभावशील नहीं रह सकता। असंगठित समाज—जातियाँ बहुत जल्दी नष्ट हो जाती हैं। व्यक्ति अपने आप में तो बलवान, सामर्थ्यवान् हो सकता है लेकिन समाज के लिये वह किसी काम का नहीं, तो व्यर्थ है। आवश्यकता इस बात की है कि अन्य शक्तियों के साथ-साथ संगठन कुशलता भी होनी चाहिये। समूह में रहकर काम करना और समाज को सुसंगठित बनाने की सामर्थ्य भी होना आवश्यक है। हनुमानजी वानर सेना में प्रधान थे। उनके नेतृत्व में सेना ने बड़े-बड़े काम किये।

शरीर, मन, बुद्धि-हृदय के विकास के साथ-साथ हमें संगठन को शक्तिशाली, सामर्थ्यवान बनाने के लिये भी प्रयत्न करना आवश्यक है क्योंकि संगठन में ही शक्ति है। असंगठित रहने वाले बड़े-बड़े योद्धा भी नष्ट हो जाते हैं।

शारीरिक, मानसिक एवं संगठन सम्बन्धी शक्तियों का क्या उद्देश्य है, ऐसा क्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यक है ? शक्ति के प्रतीक हनुमानजी के जीवन से सहज ही इन प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है। शक्ति साधनों का उपयोग किस लिये ? राम सेवा के लिये रामदूत बनने में ही हनुमानजी अपना गौरव समझते हैं। भगवान का अवतार अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना करने को होता है। सच्चे भगवद् भक्त को भी अपनी गतिविधियों का निर्धारण इसी आधार पर करना होता है। राम सेवा का तात्पर्य है—आसुरी शक्तियों का उन्मूलन। रावण की तरह समाज को पददलित करने वाले तत्वों के खिलाफ संघर्ष करके समाज को सभी भाँति सुरक्षित, स्वतन्त्र, सुखी बनाने की रामसेवा में लग जाना शक्ति का सर्वोत्तम उपयोग है, हनुमानजी अपने तन, मन, संगठन सभी शक्तियों के साथ रामसेवा के पुनीत उद्देश्य में लग गये थे।

शक्तियों का उपयोग दूसरों का शोषण, दलन, अपहरण करने में करना, समाज के लिये आतंक, अत्याचार, असुरता की भावना पैदा करना रावण का मार्ग अपनाना है। शक्ति तो हनुमान की तरह राम के पीछे चलकर ही पुण्यवान हो पाती है। ऋषि कहता है—

"आर्तत्राणाय यः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि"

'तेरे शस्त्र पीड़ितों की रक्षा करने के लिये हैं, निरपराधों को सताने के लिये नहीं।" किसी सच्चे बलवान का बल समाज की निर्बलता की कमी की पूर्ति करने के लिये होना चाहिये न कि समाज को और भी निर्बल सिद्ध करने के लिये। जो निर्बल हैं, कमजोर हैं, असमर्थ हैं, उन्हें अपनी शक्ति का सहारा देकर बलवान बनाना, जीवन के सहज स्वाभाविक अधिकार प्रदान करना, यही बलवान का धर्म है। बलवान माँ अपने नन्हें शिशु को अपनी शक्तियों से पाल-पोषकर एक दिन सामर्थ्यवान बना देती है। स्मरण रहे कि शक्तियों का महत्त्व बनाने में है—निर्माण में है, नष्ट करने में नहीं। कमजोर बनाने के लिये शक्तियाँ नहीं हैं। इससे शक्तिवान का पतन होता है। उसकी शक्तियाँ भी धीरे-धीरे नष्ट हो जाती हैं। शक्ति का रचनात्मक उपयोग शक्तियों को बढ़ाता है और शक्तिशाली को तेज, सामर्थ्य प्रदान करता है।

शरीर, मन, हृदय एवं बुद्धि की शक्तियों का विकास कीजिये। शरीर से मन, बुद्धि की शक्ति अधिक है। मन से हृदय की प्रेम शक्ति, निर्मलता, पवित्रता, सदाचार की शक्ति महान् है। सभी भाँति शक्तिशाली बनिये। स्मरण रखिये कि शक्ति ही जीवन है। आरोग्य ही प्रगति का आधार है।

हम स्वास्थ्य और शक्ति की उपेक्षा न करें

घर में धन-दौलत की कमी न हो, स्त्री-बच्चे, नाते-रिश्तेदार सब कोई हों, किन्तु आरोग्य न हो तो इन सब सुखदायक वस्तुओं से क्या कोई सच्चा हर्ष या उल्लास मिल सकता है ? घर में उत्सव का अवसर हो, लड़के-लड़की का विवाह हो, सब ओर चहल-पहल दिखाई दे रही हो किन्तु आप स्वयं अस्वस्थ पड़े हों तो क्या उस उत्सव का कोई आनन्द पा सकते हैं ? उस अवस्था में एक नैतिकता अन्य बौद्धिक सन्तोष के सिवाय वह आनन्द पुलक जिसे मन और शरीर तक में अनुभव की जाती है, नहीं मिल सकती। सारा उत्सव नीरस और फीका-फीका ही अनुभव होगा।

भोजन-वस्त्र, सुविधा-साधन सभी कुछ हों, किन्तु आरोग्य के अभाव में उसका कोई आदर नहीं रहता। पथ्य के अतिरिक्त किसी अन्य भोजन का तो अधिकार ही नहीं रहता। आराम के साधनों का उपयोग किया जा सकता है, किन्तु बीमार के लिये उनका क्या सुख हो सकता है। स्वास्थ्य सही हो, शरीर में पूर्ण आरोग्य हो तो साधारण भोजन-वस्त्र और सामान्य सुविधा-साधनों के साथ भी सुख और उल्लासपूर्ण जीवन बिताया जा सकता है। स्वास्थ्य स्वयं एक सुख है, उसे बाह्य साधनों पर जीवित रहने की अपेक्षा नहीं होती। युग के धनकुबेर कहे जाने वाले राकफेलर जैसे न जाने कितने व्यक्ति सर्व सम्पन्न होने पर भी दो रोटी खा सकने और जीवन में खुलकर हँसने के लिये तरसते रहते हैं। स्वास्थ्य सम्पदा से रहित वे करोड़ों-अरबों के स्वामी होते हुये भी दीन-हीन और मलीन बने रहते हैं। उन्हें स्वयं की तुलना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में अपने मिल के मजदूर भाग्यशाली लगते हैं, जो दिनभर पसीना बहाते, डटकर काम करते और शाम को जो कुछ मिल जाता है, डटकर खाते ओर चैन की नींद सोते हैं। स्वास्थ्य सम्पन्न के धनी होने से वे फटे वस्त्रों और टूटे मकानों में वह आनन्द पा लेते हैं, जो स्वास्थ्यहीन पूँजीपति अपनी सजी-धजी कोठियों में नहीं पाते। स्वास्थ्य संसार में सुख का बहुत बड़ा आधार है। इसी में वे सारी सुखानुभूतियाँ निहित होती हैं, जो साधनों का सम्पर्क पाकर अधिक उद्दीप्त हो उठती हैं। स्वास्थ्य के अभाव में सुख-साधनों का मूल्य नहीं। इस सम्पदा की रक्षा हर उपाय से करनी ही चाहिये।

संसार शक्ति के आधार पर चलता है। यदि शक्ति का सर्वथा ह्रास हो जाये तो संसार का चलता हुआ चक्र वैसे ही रुक जाये, जैसे बिजली फेल हो जाने से चलती हुई मशीन रुक जाती है। शरीर में जब तक शक्ति है, इसका मूल्य, महत्त्व अपरिमित है पर शक्ति समाप्त हो जाने पर बोझ बन जाता है। किसी काम का नहीं रहता। फिर इससे न स्वयं प्रेम रहता है और न दूसरों को सहानुभूति। निरुपयोगी होकर अवहेलना की वस्तु बन जाता है। उपयोगिता समाप्त हो जाने पर संसार में हर वस्तु मूल्यहीन एवं तिरस्कार के योग्य हो जाती है। अनुपयोगी का महत्त्व, इस कर्मभूमि संसार में हो भी कैसे सकता है ? शक्ति शून्य किसी वस्तु की चाहे वह शरीर हो अथवा अन्य वस्तु, कोई कदर नहीं होती।

शक्तिहीनता और भय का सगा सम्बन्ध है। जहाँ अशक्तता होगी वहाँ भय का रहना स्वाभाविक है। शक्तिहीन शरीर को रोगी को सशक्त मनुष्य दुष्टों और शत्रुओं का भय रहता है। निर्बल धनवान् को चोर, लुटेरों का भय सताता रहता है। शक्ति-हीन न जीवन संघर्ष में ठहर सकता है और न प्रतिकूलताओं से टक्कर ले सकता है। अपमान, तिरस्कार, उपेक्षा और अवहेलना शक्तिहीनता के अनिवार्य दण्ड हैं। वह विरोधियों का अवरोध तो कर ही नहीं सकता साथ ही भय और विरोध के कारण किसी सत्य बात को भी सामने प्रकट नहीं कर सकता।

साहसहीनता और कायरता के कारण, शक्तिहीन को दब्बू जीवन बिताने के लिये विवश होना पड़ता है। ऐसी दशा में सुख-शान्ति की आशा कैसे की जा सकती है ? शक्तिहीन को लोग जरा-जरा सी बात पर ही दबाने, सताने का प्रयत्न किया करते हैं, शक्तिहीन का स्वत्व, सम्पत्ति और अधिकार छिनते देर नहीं लगती। कमजोर का कोई साथी बनने को तैयार नहीं होता। यहाँ तक कि निर्बलता से अभिशप्त मनुष्य को परमात्मा तक भुला देता है। शक्तिहीनता संसार में बहुत बड़ा दुःखदायक पाप है, फिर चाहे वह शारीरिक, मानसिक अथवा बौद्धिक किसी प्रकार की भी क्यों न हो ?

इस प्रकार देख सकते हैं कि स्वास्थ्य और शक्ति ही सुख-शान्ति के आधार एवं स्तम्भ हैं। इनका अभाव न जाने कितनी तरह की कटुतायें और कुण्ठायें जीवन में पैदा कर देता है। जीवन का समुचित विकास हो, शरीर हृष्टपुष्ट हो, हृदय उदार हो, मन प्रसन्न और बुद्धि निर्विकार हो, तभी सम्भव हो सकता है। अस्त-व्यस्त शारीरिक अवस्था, जीवन गति से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता।

स्वास्थ्य सुधार के लिये धैर्य की आवश्यकता

किसी वस्तु को नष्ट करना आसान है पर बनाना कठिन है। किसी बड़े कारखाने को आग लगाकर कुछ घण्टों में बर्बाद किया जा सकता है पर नये सिरे से उसे खड़ा करना मुश्किल है। किसी बड़ी इमारत को तोड़ना हो तो कुछ मामूली श्रेणी के अनजान मजदूर भी कुछ दिन में उसे तोड़ सकते हैं पर यदि नये सिरे से मकान बनाना हो तो कुशल कारीगरों की बहुत सामान की जरूरी पड़ेगी और बहुत दिन उसे निर्माण में लगेंगे। इसी प्रकार स्वास्थ्य को नष्ट कर डालना सुलभ है पर उसे बनाने के लिये, सुरक्षित रखने के लिये बहुत प्रयत्न करने की आवश्यकता पड़ती है।

उपेक्षा और लापरवाही स्वास्थ्य की बर्बादी का प्रधान कारण है, उस कारण को ठीक किये बिना कोई व्यक्ति न तो अपने बिगड़े हुये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य को सुधार सकता है और न स्वस्थ शरीर को देर तक सुरक्षित रख सकता है। उपेक्षा के गर्त में पड़ी हुई हर वस्तु नष्ट होती है, जिस चीज की साज-संभाल न की जायेगी वही कुछ दिन में बिगड़ने लगेगी और संभाल कर रखने पर वह जितने दिन जीवित रहती उसकी अपेक्षा लापरवाही का तिरस्कार सहकर कहीं जल्दी टूट-फूट जायेगी। लोग अपने धन-दौलत की चौक सी रखते हैं। खेती-बाड़ी की, कोठी गोदाम की रखवाली का समुचित ध्यान रखते हैं पर आरोग्य जैसी अमूल्य सम्पत्ति की ओर सर्वथा उपेक्षा धारण किये रहते हैं। ऐसी दशा में यदि दिन-दिन क्षीण होता चले तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है।

शरीर एक मोटर के समान है, जिसमें अनेकों सूक्ष्म यन्त्र लगे हुये हैं। ड्राइवर यदि उन यन्त्रों के सम्बन्ध में सावधानी बरतते और उन्हें ठीक तरह काम में लेते तो मोटर देर तक चलती है। अनाड़ी ड्राइवर जिसे तेज-दौड़ाने का तो शौक है पर इस बात का ध्यान नहीं कि क्या-क्या सावधानी बरतना आवश्यक है ? वह मोटर को थोड़े ही दिनों में बर्बाद कर देगा। इन्जन के कीमती पुर्जे अपने चलाने वालों से इस बात की अपेक्षा करते हैं कि उनकी क्षमता से अधिक भार न पड़ने दिया जाये। अत्याचार से हर चीज नष्ट होती है फिर वे बेचारे पुर्जे भी अपवाद क्यों होंगे ? अनाड़ी ड्राइवर जिस प्रकार असावधानी के कारण कीमती मोटर को भी कुछ दिन में कूड़ा बना देता है, उसी प्रकार शरीर के प्रति लापरवाही बरतने वाले, अत्याचार करने वाले लोग भी कमजोरी और बीमारी के शिकार होकर अकाल मृत्यु के मुख में चले जाते हैं। चतुर ड्राइवर जिस प्रकार पुरानी मोटर से बहुत दिन काम ले लेते हैं, उसी प्रकार शरीर के प्रति सावधानी बरतने वाले दुर्बल मनुष्य भी अपनी सामान्य शारीरिक स्थिति से भी बहुत दिन तक काम चलाते रहते हैं।

महात्मा गाँधी का वजन ६६ पौंड था। शरीर की दृष्टि से दुर्बल और स्वल्प सामर्थ्य वाले थे, यदि कोई असंयमी व्यक्ति उनकी जैसी शारीरिक स्थिति में होता तो वह अधेड़ होने तक रोगों में ग्रस्त होकर मर खप गया होता। पर गाँधी जी ने जीवन का महत्व समझा। शरीर को भगवान की सौंपी हुई एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अमानत मानकर उसके द्वारा समुचित सत्कर्म करने का निश्चय किया तो उन्हें यही उचित प्रतीत हुआ कि सबसे प्रथम शरीर की सुरक्षा पर ध्यान दिया जाये। उन्होंने ३६ वर्ष की आयु में ब्रह्मचर्य का व्रत लिया, भोजन पर से स्वाद की दृष्टि बदली और औषधि रूप में उपयोगी से उपयोगी आहार ही लेना आरम्भ कर दिया, दैनिक क्रिया-कलापों से प्राकृतिक नियमों का पालन और मन का सन्तुलन रखने का दृढ़ निश्चय कर लिया, फलस्वरूप वे दुबले-पतले शरीर को लेकर ही दीर्घ जीवन एवं नीरोग शरीर का लक्ष्य प्राप्त करने के लिये तेजी से बढ़ने लगे। यदि दुर्घटना घटित न हुई होती—गोली का शिकार उन्हें न बनना पड़ा होता तो वे शारीरिक दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण आदर्श लोगों के सामने रखने जा रहे थे। उनकी इच्छा एक सौ बीस वर्ष जीने की थी। अस्सी वर्ष की आयु में उनका शारीरिक संस्थान एवं जीवन क्रम ऐसा सन्तुलित चल रहा था कि बीमार पड़ने का कोई प्रश्न ही न था। वे एक सौ बीस वर्ष अवश्य जी सकते थे, पर दैव-दुर्विपाक को क्या कहा जाये ?

सृष्टि के समस्त जन्तुओं पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि ये प्राणी भले ही अल्प बुद्धि हों पर प्रकृति की मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं करते। फलस्वरूप वे जन्म के दिन से लेकर मृत्यु के दिन पर्यन्त निरोग जीवन ही जीते हैं। जंगली जानवरों से वन प्रदेश भरा रहता है। क्या शाकाहारी, क्या मांसाहारी सभी पशु आनन्द की किलकारियाँ भरते हुये निरोग जीवन व्यतीत करते हैं। पक्षियों को लीजिए तितली, मक्खी से लेकर बड़े-बड़े पक्षियों तक कोई भी बीमार पड़ते नहीं देखे जाते। बुढ़ापे से संत्रस्त, दुर्बलता से ग्रसित, बीमारियों के पाश में जकड़ा हुआ कभी कोई जीव-जन्तु नहीं देखा जाता। समय आने पर मरते तो सभी हैं, पर मनुष्य की तरह सड़ते और कराहते रहने का कष्ट किसी को नहीं भुगतना पड़ता। मनुष्य ने प्राकृतिक मर्यादाओं को उल्लंघन करते रहने की जो ठान ठानी है, उसी के फलस्वरूप उसे नाना प्रकार के रोगों में ग्रसित होना पड़ता है। अपनी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुरी आदतें उसे अपने बन्धन में बाँधे हुये हैं। जिन पशु-पक्षियों को वे सिखा दी हैं, उनकी प्रकृति के विपरीत अनुपयुक्त आहार-विहार करने को विवश किया है, वे भी बीमार पड़ने लगे हैं। सभ्यताभिमानी मनुष्य ने अपना ही स्वास्थ्य गंवाया है वरन् अपने आश्रय में आये हुये अन्य जीवों की भी ऐसी ही दुर्दशा की है।

प्रकृति के अनुकूल जब तक मनुष्य चलता रहा, तब तक वह स्वस्थ और निरोग जीवन व्यतीत करता रहा। हमारे पूर्वज कई-कई सौ वर्षों तक जीवित रहते और इतने बलवान होते थे कि उनके शारीरिक पराक्रमों की गाथायें सुनकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है। यह स्थिति दिन-दिन दुर्बल होती चली गई। इसका एकमात्र कारण यही रहा है कि सभ्यता की घुड़-दौड़ में पड़कर कृत्रिमता को अपनाया गया और वह कृत्रिमता आहार-विहार में भी गहराई तक प्रवेश करती गई। शरीर के यन्त्र इसी ढंग से बने हुये हैं कि वे प्राकृतिक आहार-विहार के आधार पर ही ठीक प्रकार काम करते रह सकते हैं। उन पर बलात्कार किया जायेगा तो फिर उन अंगों का असमर्थ और रुग्ण हो जाना स्वाभाविक है। सभी जीव-जन्तु स्वाभाविक स्थिति में उपलब्ध होने वाला आहार उसके मूल रूप में ग्रहण करते हैं। घास खाने वाले जानवर घास को और मांस को खाने वाले जानवर मांस को पकाते, उबालते, तलते, भूनते नहीं हैं। चिड़िया दाने बीनती हैं या कीड़े-मकोड़े खाती हैं तो उन्हें वह उनके मूल रूप में ही उदरस्थ करती है। मनुष्य का आहार अन्न, कन्दमूल, फल, शाक दूध, शहद आदि हैं। पर उसका लाभ तभी है जब उसे प्राकृतिक रूप से लिया जाये। भूनने, पकाने, जलाने की क्रियाओं में खाद्य के जीवन तत्व अग्नि द्वारा नष्ट हो जाते हैं और फिर कोयला जैसी निस्सार स्थिति में पहुँचा हुआ आहार खाना पड़ता है। पूरी, पकोड़ी, मिठाई, अचार, चटनी और नाना प्रकार के व्यंजन जो आज हमारी थाली की शोभा बढ़ाते हैं और बहुत जायका ले-ले करके खाये जाते हैं उनके जीवन तत्व नष्ट हो जाते हैं। बहुत पैसा खर्च करके जीवनतत्व से रहित निर्जीव जैसा आहार खाकर भला कैसे आशा करें कि उसमें से हमें स्वास्थ्य-प्रद तत्वों की उपलब्धि होगी।

ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में समस्त विश्व के जीव-जन्तुओं की एक सुदृढ़ परम्परा है कि क्रीड़ा या विनोद के लिये कोई भी प्राणी कभी काम सेवन नहीं करता। मादा को जब संतानोत्पत्ति की प्रकृति प्रदत्त प्रेरणा होती है, तभी वह नर के सामने अपनी वासना प्रकट करती है, तभी नर उसे सन्तुष्ट करने के लिये उत्तेजित होता है। नर की ओर से अनिच्छुक मादा के सामने कभी काम प्रस्ताव नहीं होता। इसी प्राकृतिक मर्यादा के बन्धनों में बँधे हुये प्राणी अपने ओज और पराक्रम की रक्षा कर पाते हैं। मनुष्य ने इस दिशा में जितनी अति बरती है, मर्यादाओं का जितना उल्लंघन किया है, उसे देखते हुए अस्वस्थता का जितना दण्ड मिल रहा है, उसे कम ही कहा जा सकता है। रात को देर तक सोना, बिजली की रोशनी से आँखों पर दबाव, कपड़ों से शरीर को लादे रह कर स्वच्छ हवा से रोम कूपों को वंचित रखना, शारीरिक परिश्रम की अधिकता या कमी औषधियों की भरमार आदि कितने ही ऐसे कारण हैं जो स्पष्टतः प्रकृति विरोधी आचरण कहे जा सकते हैं और जिनका स्वास्थ्य के ऊपर निश्चित रूप से अहितकर प्रभाव पड़ता है।

इन बुराइयों को यदि मनुष्य आँखें मूँदकर अपनाये रहे, प्रकृति की मर्यादाओं का पालन करने में सावधानी न बरते तो फिर उसकी शारीरिक स्थिति का ईश्वर ही रक्षक है। जिन्हें अपने जीवन से प्यार रहा है, उनने सबसे पहला कार्य एक ही किया है कि अपनी प्रकृति विरोधी बुरी आदतों को छोड़ने और अपने आहार-विहार को सुधारने में दृढ़ता एवं कठोरता के साथ आत्म नियन्त्रण के लिये कदम उठाया है। जो आदतों के गुलाम हैं, इन्द्रिय लोलुपता पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते, जीभ के चटोरेपन को रोकने की जिनकी शक्ति नहीं होती, ब्रह्मचर्य का महत्त्व जो नहीं समझते, वे कभी निरोग न रह सकेंगे। निरन्तर अपराध करने वाला अपराधी सजग शासन में देर तक स्वेच्छाचार नहीं कर सकता। उसे दण्ड का भागी बनना ही पड़ता है। इसी प्रकार प्रकृति के शासन में स्वेच्छाचारी बनने वाले निरंकुश लोग दण्ड के भागी बनें और रोगों की नारकीय योजनायें सहें तो इसमें आश्चर्य की क्या बात होगी ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिनने अपने स्वेच्छाचार के फलस्वरूप रोगों का दण्ड पाया है, उनके लिये यही उचित है कि सच्चे हृदय से प्रायश्चित करते हुये अपनी आदतों और गतिविधियों को सुधारते हुये प्राकृतिक जीवन यापन की सौम्य पद्धति को अपनावें। पर देखा जाता है कि लोग इसके लिये तैयार नहीं। वे चाहते हैं कि हमारा स्वेच्छाचार ज्यों का त्यों कायम रहे। रोग के निवारण के लिये कोई जादू जैसी दवा मिले तो पेट में आते-जाते सारे रोगों को छू मन्तर कर दें। इसी आशा से वे एक के बाद दूसरे डाक्टर के पास दवायें और सुइयाँ लेने के लिये मँडराते रहते हैं। प्रयोजन कुछ सिद्ध नहीं होता। दवायें कुछ देर के लिये रोग को छिपा देती हैं, उनका असर जैसे ही दूर हुआ कि रोग उसी रूप में उभर आता है। एक मर्ज अच्छा हो नहीं पाया कि दूसरे नये रोग की शुरूआत हो गई। इसी कुचक्र में भूलते हुये लोगों की सारी जिन्दगी बीत जाती है।

किसी कष्ट विशेष को दूर करने के लिये तात्कालिक उपचार के रूप में दवायें कारगर हो सकती हैं पर उनके आधार पर खोये हुये स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर सकना सर्वथा असम्भव है। इसके लिये धैर्य और साहस से काम लेना पड़ेगा। जिस मकान को गिराने में आठ दिन लगे उसे यदि फिर से बनाना या ठीक करना हो, उसमें निश्चय ही उससे दूने चौगुने दिन लगेंगे। स्वास्थ्य को खराब करने से हमने वर्षों तक शरीर पर निरन्तर अत्याचार किया है तो उसके सुधार में भी कुछ तो देर लगेगी ही। फिर भी जिस प्रकार टूटी मोटर की मरम्मत हो जाने के बाद भी उसकी साज-सम्भाल रखनी पड़ती है—उसी प्रकार खोये स्वास्थ्य को प्राप्त कर लेने के बाद भी अपेक्षाकृत अधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता होगी।

उतावली न की जाय

जो रोगी या दुर्बल शरीर वाले व्यक्ति स्वास्थ्य सुधारने के लिये अत्यधिक उतावले होते हैं। चन्द दिनों या कुछ घण्टों में जादू मन्त्र की तरह पूर्व निरोगिता चाहते हैं, वे उतावले बच्चों की तरह हैं, जो हथेली पर सरसों जमाना चाहते हैं और अन्त में निराश एवं खिन्नता अनुभव करते हैं। हममें से हर एक को यह जान लेना चाहिये कि स्वस्थ संसार एक साधना है। बिगड़े हुये शरीर को रोग रहित और सतेज बनाने के लये तप करने की आवश्यकता होती है। आत्म-नियन्त्रण करके अपनी बुरी आदतों पर विजय प्राप्त करने एवं प्रकृति का अनुसरण करते हुये अपने आप को मानवोचित विधि व्यवस्था में ढालने के लिये जो लोग दृढ़तापूर्वक कदम उठाने का साहस कर सकें, उन्हें ही स्वस्थ शरीर का दिव्य वरदान प्राप्त करने की आशा करनी चाहिये। जिन्हें इतना धैर्य न हो, उन्हें मृग तृष्णा में भटकते हुये हिरन की तरह अपनी शक्तियों को बर्बाद करते रहने और पग-पग पर पछताते हुये जादू भरे इलाज की खोज में लगा रहना चाहिये। परन्तु यदि स्वास्थ्य का स्थायी आधार उपलब्ध करना हो तो अस्वस्थता की जड़ों को ही समाप्त करना होगा।

रास्ता केवल एक ही है

मनुष्य की अनेक मानसिक दुर्बलताओं में एक बहुत बुरी दुर्बलता यही है कि वह उचित मूल्य चुकाये बिना बहुत जल्दी में, बहुत आसानी से, बहुत कुछ प्राप्त कर सकना चाहता है। इसी का नाम लालच है। इस संसार में हर काम एक नियम, क्रम और व्यवस्था के अनुसार चल रहा है। सूर्य, चन्द्रमा, तारे, पृथ्वी सब अपनी यात्रा एक पूर्ण सुव्यवस्थित गतिविधि के आधार पर चलाते हैं। यदि उनकी चाल में क्षण भर का भी अन्तर आ जाय तो प्रलय जैसे अवसर उपस्थित हो सकते हैं। पृथ्वी, जल, हवा, अग्नि आकाश पाँचों तत्व अपने गुण-धर्म को अत्यन्त दृढ़तापूर्वक धारण किये न रहें तो इस संसार का सारा संचार क्रम ही अस्त-व्यस्त हो जाये। गेहूँ से गेहूँ, मनुष्य से मनुष्य और पशु से पशु उत्पन्न होने की, समय पर ऋतु के आने की, पुण्य और पाप का समुचित परिणाम मिलने की व्यवस्था यदि संसार में न रहे, सब कुछ अनियमित होने लगे, तब तो इस दुनियाँ का काम एक दिन के लिये भी चलना कठिन हो जाये। निश्चय ही भगवान का विधान या प्रकृति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की व्यवस्था पूर्ण सुव्यवस्थित है और यहाँ हर काम उचित समय पर उचित क्रम से, उचित व्यक्तियों द्वारा, उचित साधनों से पूर्ण होता है। किन्तु लालची लोग चाहते हैं कि हमारे लिये सृष्टि का नियम बदल जाये और जैसे हम चाहते हैं तुत-फुत हमारा उद्देश्य पूरा हो जाये।

स्वस्थ शरीर में अपार सुख है और सुख का लाभ हर कोई उठाना चाहता है। पर खेद है कि उसका उचित मूल्य चुकाने के लिये कटिबद्ध होने की अपेक्षा लोग पगडंडी ढूँढ़ते हैं, जिससे उन्हें लम्बी यात्रा न करनी पड़े और काम जल्दी ही बन जाये। इस लालच में बहुत से लोग कुछ उपाय सोचते और कुछ तरकीबें भिड़ाते रहते हैं, फिर भी सृष्टि के नियमों को बदल सकने में अब तक किसी को सफलता नहीं मिली। उचित मूल्य चुकाकर ही महत्त्वपूर्ण वस्तु के लेने का क्रम ज्यों का त्यों बना हुआ है। व्यतिक्रम करने वाले जल्दबाज लोग समय-समय पर तरकीबें सोचते रहते हैं पर अन्ततः उन्हें निराश ही होना पड़ता है।

जादू के खेल मनुष्य की लालची वृत्ति की तृप्ति का एक मनोरंजक पहलू है। लोग चाहते हैं कि मिट्टी से रुपया बन जाये, झोली में से जानवर पैदा हाने लगें, हथेली पर सरसों उग आवे, डिब्बी में से मिठाई पैदा होने लगे। बाजीगर इन बातों को इसी प्रकार करके दिखा भी देता है। पर वह सफलता देखने भर की होती है। बाजीगर आँखों में धूल झोंककर, भुलावा देकर दर्शकों को थोड़ी देर के लिये बहका भर देता है, वे कुछ समय तक खुश भी हो जाते हैं, पर अन्ततः उसका परिणाम समय की बर्बादी और निराशा के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होता। बिना श्रम के रुपया, मिठाई, पौधे, जानवर आदि उपलब्ध करने की आकांक्षा असफल ही रह जाती है। यदि इतनी जल्दी यह सब काम हो सके होते तो बेचारा बाजीगर क्यों दर-दर मारा फिरता, वह तो स्वयं ही कब का लखपती-करोड़पती बन गया होता। पर करे क्या, सारी बुद्धि लड़ाकर भी वह बेचारा प्रकृति के कठोर नियमों का उल्लंघन करने में समर्थ कहाँ हो पाता है ? बाजीगरी केवल बच्चों का मन बहलाने का खेल बनकर रह जाती है। रुपया, मिठाई, पौधे, जानवर आदि दुनियाँ में जो लोग प्राप्त करते हैं, वे बाजीगरी से नहीं उचित श्रम के आधार पर प्राप्त करते हैं। बुद्धिमान लोग इस तथ्य को भली प्रकार जानते हैं इसलिये वे उचित मूल्य देकर अभीष्ट वस्तु प्राप्त करने की योजना बनाते हैं और अपना अभीष्ट मनोरथ पूरा करते हैं।

स्वास्थ्य सुधार का मनोरथ जितना ही महत्त्वपूर्ण है, उतना ही बड़ा उसका मूल्य भी है। जिनने भी अपने बिगड़े स्वास्थ्य को बनाया है, बने स्वास्थ्य को बढ़ाया है, उनने उचित मूल्य चुकाने में आनाकानी नहीं की है। जिन नियमों के तोड़ने से स्वास्थ्य खराब होता है, उनके पालन से ही गलती में सुधार हो सकता है। गलती को दुहराते रहा जाय और किसी चालाकी से बात की बात में स्वास्थ्य की सम्पदा मिल जाये ऐसा सोचना किसी बुद्धिमान के लिये नहीं लालची व्यक्ति के लिये ही उचित है। लालची पाता कुछ नहीं खोता बहुत है। ठग विद्या इसी तथ्य पर ठहरी हुई है। ठग लोग मनुष्यों की लालची प्रवृत्ति को जानते हैं, वे जिसमें लालच भाँपते हैं, उसी पर अपना जाल फैला देते हैं और उसे बुरी तरह ठग लेते हैं। ठगों द्वारा लोगों को ठगने की नई-नई तरकीबें प्रयोग की जाती रहती हैं। सब के मूल में एक ही तथ्य रहता है कि—किसी भोले लालची आदमी को बहुत जल्दी अत्यधिक लाभ मिलने की बात बताई जाय। लोभ में अन्धे मनुष्य का विवेक कुण्ठित हो जाता है। वह यह सोच नहीं पाता कि इतनी जल्दी इतने स्वल्प प्रयास में इतना अधिक लाभ भला किस प्रकार हो सकता है ? बेचारा बहक जाता है, ठग उसे अपने जाल में फँसा लेते हैं और वह नासमझ बहुत कुछ खोकर पछताता हुआ हाथ मलकर रह जाता है। घटनायें भिन्न-भिन्न प्रकार हो सकती हैं पर सारी ठग विद्या की मूल प्रक्रिया यही रहती है। हर ठगे जाने वाले को यही तथ्य दुहराये जाते हैं।

स्वास्थ्य के बारे में भी यही लालची प्रवृत्ति मनुष्यों में पाई जाती है। वे ऐसी तरकीबों के पीछे पड़े रहते हैं, जिनसे वर्षों तक शरीर पर अत्याचार करके उसे बिगाड़ने में जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अस्वास्थ्यकर परिणाम सामने आये हैं, उन्हें क्षण भर में सुधार लिया जाये। इसके लिये एक ही तरकीब उन्हें सूझ पड़ती है, वह है—'दवा'। दवाओं के विज्ञापनबाज अपनी मामूली-सी चीज का लाभ, उसकी वास्तविकता की अपेक्षा सैकड़ों हजारों गुना बढ़ा-चढ़ाकर बताते हैं। लम्बे-चौड़े आश्वासन देते हैं। अच्छे हुये लोगों के प्रमाणपत्र छापते हैं। दीवारों को पोस्टरों से और अखबारों को विज्ञापनों से भर देते हैं। सूचीपत्र, पर्चे, पोस्टर, पेम्फलेट आदि अगणित विज्ञापन-साधनों की गोलाबारी से बेचारा परास्त हो जाता है। वह अपना त्राण इन्हीं के आश्रय में देखता है। जल्दी निरोग होने की उसकी आकांक्षा का दवादारू वाले अनुचित लाभ उठाते रहते हैं। उसके मामूली से रोग को बढ़ा-चढ़ा कर बता देते हैं। डरा हुआ व्यक्ति प्राण रक्षा के लिये अपना सब कुछ होमने को तैयार हो जाता है, डाक्टरों की जेबें गरम होती रहती हैं, कोठी, बंगले और मोटरें बढ़ती रहती हैं। बेचारा मरीज बहुत कुछ गँवाकर भी मरीज का मरीज बना रहता है।

हमारा उद्देश्य यहाँ औषधियों या चिकित्सकों की निन्दा करना नहीं वरन् लोगों की इस भूल पर प्रकाश डालना है कि आरोग्य के जिन नियमों का उल्लंघन करने से शरीर के भीतरी कल पुर्जे जिस प्रकार दुर्बल और अशक्त होते गये और अन्ततः वे बीमारी के चंगुल में फँस गये, उस उल्टी चाल को पलटे बिना आखिर शरीर सुधर कैसे जायेगा ? दवा की उपयोगिता हो सकती है। उसकी उत्तेजना और संहारक शक्ति से शरीर में बढ़ा हुआ विष परास्त किया जा सकता है। पर दवाओं के इस आक्रमण से केवल रोग कीटाणु ही नहीं मरते साथ में रक्त के स्वस्थ एवं संरक्षक जीवाणुओं का भी विनाश होता है। कोई दवा ऐसी नहीं हो सकती जो शरीर में भीतर जाकर रोग-कीटाणुओं को ही मारे और स्वस्थ कणों को बचा दे। दोनों ही प्रकार के अणु साथ-साथ रहते हैं। इसलिये उनका संहार भी साथ-साथ ही होता है। दवायें रोगों को मारने का जितना लाभ पहुँचाती हैं उतनी ही हानि स्वस्थ जीवन तत्वों को मारकर साथ की साथ पहुँचा देती हैं। फिर जो विष दवाओं द्वारा परास्त किया गया था, वह शरीर से बाहर कहाँ निकला ? वह तो भीतर ही दबा हुआ किसी कोने में मूर्छित-सा बना पड़ा रहता है। अवसर मिलते ही वह उसी रूप में या अन्य किसी रूप में पुनः प्रकट हो जाता है। देखा गया है कि एक रोग दूर हुआ नहीं कि दूसरा नया उपज पड़ा। फिर वह तीक्ष्ण दवायें भी तो विषैले और विजातीय पदार्थों से बनी होती हैं। उनका शरीर में प्रवेश होना एक प्रकार के नये रोग तत्वों का शरीर में प्रवेश करना है।

कुनैन के सेवन से मलेरिया बुखार दूर हो जाता है पर उसकी ऐसी गर्मी चढ़ जाती है कि बहरापन या कान बहना जैसे नये रोग उठ खड़े होते हैं। ऐस्प्रीन खाने से ज्ञान-तन्तु संज्ञाशून्य हो जाने से एक प्रकार का जो नशा सा आता है, उससे दर्द की अनुभूति बन्द हो जाती है। इस प्रकार कुछ देर तक ऐस्प्रीन खाने से दर्द में लाभ हुआ तो प्रतीत होता है पर दिल पर उसका बुरा प्रभाव पड़ने से हृदय रोग होने लगते हैं। अफीम मिली दवाओं से अतिसार तो बन्द हो जाता है पर आँतें सिकुड़ जाने से मलावरोध की नई शिकायत शुरू हो जाती है। पेन्सलीन की प्रतिक्रिया कई बार प्राणघातक होती देखी गई है, इसलिये डाक्टरों ने अब उसे अन्धाधुन्ध हर मर्ज में देते रहने की अपनी आदत पर पुनर्विचार करना शुरू कर दिया है और अब उसे सोच समझ कर ही देते हैं। कई प्रकार के इंजेक्शन ऐसे होते हैं जो रोग कीटाणुओं पर असर करने से पहले, अपना बुरा असर दिखा देते हैं। सुई लगते ही बुखार जैसा असर शरीर में दीखने लगता है। इन बुराईयों की जानकारी हमें होनी चाहिये। अन्यथा स्वास्थ्य सुधार के लिये दवाओं की उपयोगिता के सम्बन्ध में अन्धविश्वास चल रहा है वह अन्ततः घातक ही सिद्धि होगा।

आदत सुधारें

स्वास्थ्य सुधार के लिये अपनी आदतों की, आहार-विहार की पद्धति को बदलना ही एक मात्र स्थायी उपाय है। चूँकि यह उपाय कष्टसाध्य है, इसमें मन मारना पड़ता है, आरम्भ से ही सुधरे स्वास्थ्य को प्राप्त करने के लिये अन्य निर्माण कार्यों की तरह धैर्यपूर्वक समय की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतीक्षा करनी पड़ती है। इसके विपरीत दवा-दारू के बल पर निरोग हो जाने की कल्पना में इस प्रकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं रहता। डॉक्टर लोग आहार-विहार का कोई खास प्रतिबन्ध नहीं लगाते, जी चाहे सो खाते-पीते रहने और चाहे जैसे रहने-सहने की छूट देते हैं। दवा सेवन या इन्जेक्शन लगने में कुछ मिनट ही खर्च होते हैं और कभी न पूरे होने वाले जल्दी स्वास्थ्य लाभ करा लेने वाले चिकित्सा के आश्वासनों में रोगी का मन बहलता रहता है। इस प्रकार तुलनात्मक दृष्टि से मनुष्य को लाभ इसी में दीखता है कि आहार-विहार में परिवर्तन करने की कष्टकर प्रक्रिया को अपनाने, उसमें समय लगाने और मन मारने की अपेक्षा दवा-दारू के बल-बूते पर निरोग हो जाना सरल और अच्छा है। यही सोचकर आज कोटि-कोटि जनता अपनी रोगमुक्ति के लिये दवाखानों की शरण में पड़ी डाक्टरों के पैर पलोटती रहती है। जादूगर की मिठाई की तरह तत्काल कुछ लाभ भी इसमें दीखता है। तत्काल का चमत्कार लोगों की बाल बुद्धि सन्तुष्ट करने देने के लिये पर्याप्त माना जाता है।

एक रोगी ने अपने ऊपर अब जो चमत्कार किसी दवा या डाक्टर का देखा था, वह उसकी चर्चा किसी दूसरे रोगी से करता है। वह रोगी अपना कोई ऐसा ही अनुभव अन्य रोगी को बताता है। इस प्रकार दवाओं की प्रशंसा भी चलती रहती है। चिकित्सकों का गुणगान भी होता रहता है और साथ ही रोगों का कष्ट भी यथावत् बना रहता है। यही भूल-भुलैया आज व्यापक रूप से एक गहरे अन्ध विश्वास की तरह सर्वत्र व्याप्त हो रही है। अमुक तालाब या कुण्ड में स्नान कर लेने से, अमुक बाबा की भभूत लगा लेने से समस्त रोग दूर हो जाते हैं। ऐसी बातों को तो अब अन्ध-विश्वास माना जाने लगा है, पर दवाओं से, आरोग्य प्राप्त हो सकता है, यह अन्ध-विश्वास अभी भी अत्यन्त भयावह रूप से मानव जाति के मस्तिष्क पर चढ़ा हुआ है। चूँकि तालाब, कुण्ड के स्नान से भभूत से या मियाँ मसानी की पूजा से आरोग्य लाभ की बात अशिक्षित ओझा सयाने ज्योतिषी बाबाजी कहते हैं, इसलिये उनकी बात संदेहास्पद मानी जाने लगी, पर जिस बात को मोटर बंगले वाले उच्च शिक्षित कहे जाने वाले प्रमाण पत्र प्राप्त सरकार में सामान्य डाक्टर लोग कहें, उस बात को कैसे झुठलाया जाय ? दवा से आरोग्य प्राप्त हो सकता है, दीर्घ जीवन मिल सकता है। यह मान्यता विशुद्ध रूप से अन्ध-विश्वास है। इस तथ्य को आज नहीं तो कल स्वीकार किया जाने वाला है।

अपना वर्षों का समय और सारी कमाई गँवाकर भी जिनने भूल-भूलैया में भटकने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं पाया है, वे रोगग्रस्त एवं दुर्बलकाय व्यक्ति कभी न कभी तो वास्तविकता पर विचार करने के लिये विवश होंगे ही। जब भी वे इस समस्या पर ठण्डे दिल से विचार करेंगे, तब उन्हें इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ेगा कि अनियमिततायें ही आरोग्य नाश का एकमात्र कारण होती हैं और स्वास्थ्य सुधार के लिये एक ही उपाय है—स्वास्थ्य के सनातन नियमों का पालन। आज असंयम का युग है। सर्वत्र उच्छृंखलता का बोलबाला हो रहा है। ऐसी स्थिति में संयम की बात को उपहास एवं उपेक्षा में ही डाल, हथेली पर सरसों उग आवे, डिब्बी में से मिठाई पैदा होने लगे। बाजीगर इन बातों को इसी प्रकार करके दिखा भी देता है पर सफलता देखने भर की होती है। बाजीगर आँखों में धूल झोंककर भुलावा देकर दर्शकों को थोड़ी देर के लिये बहका भर देता है, वे कुछ समय तक खुश भी हो जाते हैं पर अन्ततः उसका परिणाम समय की बर्बादी और निराशा के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। बिना श्रम के रुपया, मिठाई, पौधे, जानवर आदि उपलब्ध करने की आकांक्षा असफल ही रह जाती है। यदि इतनी जल्दी यह सब काम हो सके तो बेचारा बाजीगर क्यों दर-दर मारा फिरता, वह तो स्वयं ही कब का लखपती, करोड़पति बन गया होता। पर क्या करे, सारी बुद्धि लड़ाकर भी वह बेचारा प्रकृति के कठोर नियमों का उल्लंघन करने में समर्थ कहाँ हो पाता है ? बाजीगरी केवल बच्चों का मन बहलाने का खेल बनकर रह जाती है। रुपया, मिठाई, पौधे, जानवर आदि दुनिया में जो लोग प्राप्त करते हैं, वे बाजीगरी से नहीं उचित श्रम के आधार पर प्राप्त करते हैं। बुद्धिमान लोग इसको अच्छी प्रकार जानते हैं इसलिये वे उचित मूल्य देकर अभीष्ट वस्तु प्राप्त करने की योजना बनाते हैं और अपना अभीष्ट मनोरथ पूरा करते हैं। धैर्यपूर्वक सतत् प्रयास से ही स्वास्थ्य सुधार सम्भव होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आरोग्य रक्षा के प्रति सतर्क रहें

शरीरशास्त्रियों ने काया की संरचना के ईश्वरीय कौशल पर विस्तृत प्रकाश डाला और बताया है कि इसकी तुलना में मनुष्यकृत सारे निर्माण तुच्छ हैं। इसका प्रत्येक कल पुर्जा इतनी कुशलता के साथ बनाया गया है कि उसे सौ वर्ष तक नहीं, सैकड़ों वर्षों तक भली प्रकार काम करते रहने में किसी प्रकार की अड़चन नहीं हो सकती। वे अपना काम बिना किसी गड़बड़ी के चिरकाल तक आसानी से करते रह सकते हैं। हथौड़ा कुल्हाड़ी लेकर उसे बर्बाद करना हो तो बात दूसरी है अन्यथा इतनी मजबूत और इतनी सही स्वसंचालित मशीन संसार भर में एक भी नहीं है जैसी कि मानवीय काया। इतना ही नहीं इसमें एक और भी विशेषता है कि टूट-फूट की मरम्मत और बाहरी आक्रमणों को निरस्त करने की भी अद्‌भुत क्षमता इसके कण-कण में भरी पड़ी है। रक्त के श्वेता सैनिक बाहर से भीतर आने वाले अथवा भीतर ही उत्पन्न होने वाले मारक विषाणुओं को परास्त करने की क्षमता से पूरी तरह सम्पन्न हैं। चोट लग जाने पर रक्त का एक विशेष अंश ऊपर चमड़ी पर चिपककर खुरंट बन जाता है और रक्त बहने से रोकने तथा बाहर के अवांछनीय तत्वों को उसमें न घुसने देने के दोनों ही कार्य पूरे कर देता है। रक्त में प्रवेश विष फोड़े-फुंसियों के दर्द, ताप दाह आदि के रूप में बाहर निकाल फेंकने के लिये जीवन शक्ति अनायास ही प्रबल प्रयत्न करती रहती है। शरीर जैसी अद्‌भुत रसायनशाला इस धरती पर कहीं भी नहीं है। अनाज से रक्त बनाने वाली रासायनिक क्रिया की वैज्ञानिक अभी कल्पना भी नहीं कर सके हैं। आहार का शारीरिक बल और मस्तिष्कीय चिन्तन में बदल जाना ऐसा चमत्कार है, जिसे रसायन शास्त्री स्वयं प्रस्तुत कर सकने में अपने को सर्वथा सहायता अनुभव करते हैं।

लगता है सृष्टा ने अपनी कलाकृति को यथासम्भव सर्वथा पूर्णता के अनुरूप ही बनाया है। आवश्यक और अवांछनीय तोड़-फोड़ की जाये तब तो बारूद के सहारे पहाड़ तक गिराये जा सकते हैं, पर यदि सम्भाल कर रखा जा सके और अनावश्यक छेड़खानी करने से हाथ रोका जा सके तो यह शरीर बिना किसी विशेष प्रयत्न के ऐसे ही सुदृढ़ बना रह सकता है।

शरीर विज्ञानियों का यह तथ्य अक्षरशः सही प्रतीत होता है क्योंकि जानबूझ कर तोड़-फोड़ न मचाने वाले वनवासी-अभावग्रस्त और अशिक्षित होते हुये भी सशक्त रोग मुक्त और दीर्घजीवी पाये जाते हैं। तलाश करने पर इतना ही निष्कर्ष निकला है, वे भी अन्यत्र रहने वाले पिछड़े समझे जाने वाले लोगों में से ही हैं। विशेषता एक ही है कि शरीर को अपने ढंग से काम करने देते हैं उसके साथ शरारत नहीं करते। इतने भर से उनका स्वास्थ्य, समस्या का रूप धारण नहीं करता है और निरोगता की गाड़ी अपने पहियों पर ठीक तरह लुढ़कती हुई-लम्बा सफर पार कर लेती है। यही बात अन्यत्र पाये जाने वाले स्वस्थ मनुष्यों के सम्बन्ध में भी है। प्रकृति प्रदत्त सहज ज्ञान के आधार पर यदि आहार-विहार की क्रिया पद्धति बनी रहे तो फिर न कमजोरी घेरेगी, न बीमार पड़ना पड़ेगा। काया को क्षत-विक्षत कर डालने वाली कुल्हाड़ी असंयम की अनियमितता ही है। इसी भारी रेती से हम अपने अच्छे भले कल-पुर्जों को काट पीट कर दुर्दशाग्रस्त स्थिति में पटक देते हैं। अस्वस्थता के अभिशाप में दैवी प्रकोप की, विधि-विधान की बात सोचना व्यर्थ है। इस आत्म प्रवंचना को अपनाने से तो सुधार का उपाय सोचना की भी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती और भविष्य अन्धकारमय बन जाता है।

बात विधि के विधान और भाग्य दोष की चल पड़ी तो लगे हाथों इस पर भी विचार क्यों न कर लिया जाये ? सृष्टि के समस्त प्राणियों पर दृष्टि डालकर उसकी शारीरिक स्थिति का पर्यवेक्षण किया जाय और देखा जाये कि उनमें से कितनों को दुर्बलता एवं रुग्णता का शिकार बनना पड़ रहा है। जलचर, नभचर और थलचर प्रकृति के स्वेदज, अंडज, उद्‌भिज, जरायुज वर्ग के समस्त प्राणियों का गहरा उथला सर्वेक्षण करने पर प्रतीत होता है कि इनमें से किसी के भी सामने स्वास्थ्य समस्या नहीं है। बुढ़ापा और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मरण तो सभी के सामने आता है, पर मध्यावधि में किसी को भी बीमारियों का त्रास नहीं सहना पड़ता। सर्दी-गर्मी, भूख, आक्रमण के शिकार होते रहने, अनेकानेक प्रतिकूलताओं का सामना करते रहने पर भी वे आजीवन नीरोग ही बने रहते हैं। मनुष्य को तो अनेक सुविधायें प्राप्त हैं। फलतः उसे अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ रहना चाहिये। पर देखा विपरीत जाता है। पिछड़ी समझी जाने वाली योनियों के प्राणी आरोग्य का आनन्द लेते रहें और प्रगतिशील कहलाने वाला मनुष्य उस सहज सौभाग्य से वंचित ही बना रहे यह कैसी विषम विडम्बना है ? मनुष्य स्वयं बीमार पड़ा और अपने चंगुल में फँसे हुये पालतू पशुओं, पक्षियों को भी बीमार बनाया। यदि इसी का नाम बुद्धिमत्ता है तो उसे पाकर मनुष्य ने क्या लाभ कमाया ?

इन सब बातों पर विचार करने से अपने समीपवर्ती क्षेत्र में जो भी निरोग, समर्थ, प्रफुल्लित, स्फूर्तिवान व्यक्ति पाये जाते हैं, उनके सम्बन्ध में यही धारणा बनानी पड़ती है कि वे किन्हीं विशेष सुविधाओं के कारण इस उत्तम स्थिति में नहीं रह रहे हैं मात्र शरीर यात्रा के लिये प्रकृति की निर्धारित आचार संहिता का पालन करने भर से ही आरोग्य का वह आनन्द पाया जा सकता है, जिसे जीवन का प्रथम सुख कहा जाता है।

स्वस्थ, उत्साही और स्फूर्तिवान मनुष्य से अपनी तुलना की जाये, यदि उनके अंग-अवयवों से अपनों की समता की जाये तो प्रतीत होगा कि एक ही वर्ग के जीवधारी होते हुये भी हम लोगों के बीच अन्य क्षेत्रों में ही नहीं, आरोग्य स्तर की विषमता भी बुरी तरह छाई हुई है। यह सभी विषमतायें कृत्रिम हैं, ईश्वर प्रदत्त नहीं। मनुष्य ने अपने सभी पुत्रों को प्रायः समान स्तर के शरीर और मन दिये हैं। इनका सही गलत उपयोग करके ही मनुष्य पिछड़ेपन की एवं समुन्नत स्तर की परिस्थितियों का निर्माण करते हैं। इसी प्रयास प्रक्रिया के परिणाम ही देर-सबेर में सामने आते रहते हैं। इसलिये भाग्य का एक नाम कर्म भी है। कर्म विधान, कर्म रेखा, कर्म लेख आदि शब्दों का यदि भाग्य के स्थान पर प्रयोग किया जाय तो इसमें उसकी अधिक सार्थकता समझी जा सकेगी।

कुछ अपंग, अविकसित अपवादों को छोड़कर प्रायः सभी मनुष्य एक जैसी स्थिति में उत्पन्न होते हैं। आरोग्य से लेकर जीवन के अनेकानेक क्षेत्रों में दृढ़ता एवं प्रगति की सफलतायें तो मनुष्य की अपनी गतिविधियों पर निर्भर रहती हैं। अपना आरोग्य यदि पिछड़ा या बिगड़ा हुआ है तो उसके लिये परिस्थितियों को दोष देते रहने से काम नहीं चलेगा। अपना उत्तरदायित्व स्वीकार करना पड़ेगा। कहीं अपने से ही भूल होती है या होती रही है। अपने पैर कुल्हाड़ी मारने से ही यह जख्म हुआ है। ऐसा दूसरा कोई पास में दीखता नहीं जिसके कारण इतनी मजबूत इमारत खोखली होती। आँख बन्द किये रहें तो बात दूसरी है अन्यथा पलक खोलकर देखने पर वस्तुस्थिति स्पष्ट हो जाती है और वह छिद्र स्पष्ट दीखता है, जिनमें होकर इन नाव में पानी भरा है और वह डूबने के करीब जा पहुँची है। अपनी ही बुरी आदतें हैं जिनने घुन की तरह इस मजबूत शहतीर को खोखला करके रख दिया है। यदि अपनी भूलें, स्वास्थ्य की बर्बादी का कारण समझ में आ सके और उनका पश्चात्ताप हो तो प्रायश्चित एक ही है कि जो हो चुका है उसे सुधारने के लिये उतनी ही हिम्मत के साथ कदम बढ़ाये जायँ, जितने उत्साह से निराशा के पथ पर बढ़ने में उत्साह दिखाया गया है।

देखा जाता है कि सृष्टि के समस्त प्राणी अपने लिये निर्धारित आचार संहिता का पालन करते हैं। अन्तःचेतना में विद्यमान प्रकृति-प्रेरणा मार्गदर्शन करती है और प्राणी उसका अनुसरण करते हैं। इतने भर से सुव्यवस्था बनी रहती है और आरोग्य पर कोई आँच नहीं आने पाती। हर प्राणी के लिये जीवन-निर्वाह की आचार-संहिता उसकी मूल प्रकृति में मौजूद है। यदि उसे विकृत न किया जाय तो वह ऐसा मार्गदर्शन करती रहती है, जिसका अनुसरण करने पर किसी निरोग को पूर्णायुष्य प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होती। आदत बिगड़ने पर तो कोई भी अनुपयुक्त आचरण करने लग सकता है। घोड़ों को शराब, बन्दरों को भाँग,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पक्षियों को अफीम की थोड़ी-थोड़ी मात्रा देकर पीछे उन्हें ऐसा अभ्यस्त बना लिया जाता है कि बिगड़ी आदत के अनुसार ही उनके आचरण होते हैं। इन्द्रियों की आदतें हमें बिगाड़ती हैं। पीछे वे इतनी ढीठ हो जाती हैं कि उसी गिरी आदत को पूरा करने के लिये मचलती रहती हैं, उसमें कमी पड़े तो रूठने मटकने लगती हैं। नवजात बालक की जीभ पर जरा-सी मिर्च लग जाय तो वह बेतरह व्याकुल हो जाता है, पीछे वह अभ्यास चलता रहे तो मिर्च के बिना भोजन में रस ही नहीं आता और कई बार तो उसकी मात्रा बढ़ाते रहने पर ही सन्तोष होता है। यही बात तम्बाकू आदि नशों के सम्बन्ध में है, आरम्भ में उनके तनिक से सेवन से मिचली आती है पर पीछे अभ्यस्त बनते-बनते उसे खाये पिये बिना टट्टी उतरना तक कठिन हो जाता है। यह अभ्यास की करामात है, जिसके सहारे बुरे आचरण के लिये भी मनुष्य विवश होता चला जाता है।

मूल प्रकृति को समझा गया होता, प्रकृति के संकेतों का अनुसरण किया गया होता तो न स्वास्थ्य सम्वर्धन के उपाय खोजने पड़ते और न रोग निवारण के उपाय। उपचार खोजने के लिये जहाँ-तहाँ ठोकरें खाते-फिरने की, पैसा, समय गँवाने की झक मारनी पड़ती। तब सृष्टि के अन्य प्राणियों की तरह अपना जीवन भी बिना दुर्बलता एवं रुग्णता का कष्ट सहे हुये आनन्दपूर्वक व्यतीत हो रहा होता।

अपना शरीर कामचलाऊ भले ही हो पर जिसे स्वस्थ कहा जा सके उस स्तर की उसकी स्थिति कहाँ है ? फिर आये दिन छोटी-बड़ी बीमारियों की खट-खट भी तो लगी रहती है। अपच को ही लें, स्वभाव का अंग बन जाने से अखरता नहीं, किन्तु है तो वह भी शरीर में जड़ता, आलस्य, उदासी, अनख आदि कितने भार लादे रहने वाला अभिशाप ही। नींद में कमी, सिर का भारीपन यह छोटे रोग ही हैं पर पेड़ में लगने वाली दीमक की तरह उनकी विनाश लीला तो किसी प्रकार कम नहीं है। मसूड़ों में पाया जाने वाला पायेरिया तो बहुत कष्टकर होता है और न विदूप फिर भी मुँह की बदबू ओर पेट में पहुँचने वाली मवाद कितनी अधिक हानिकारक होती है, इसका पता आरम्भ में नहीं बाद में चलता है।

अपने शरीर को छोटी हानि सहनी पड़ रही है या बड़ी, इसकी विवेचना करना आवश्यक नहीं। इतना जान लेना ही काफी है कि छोटे से विकार भी यदि पनपते रहें तो अन्ततः भारी संकट उत्पन्न करते हैं। छप्पर के एक कोने में लगी आग बढ़ते-बढ़ते उस घर को और समूचे गाँव को जला डालने वाली विभीषिका बन जाती है। यदि कोई बड़ा रोग नहीं है किन्तु अपच जैसे घुन स्वास्थ्य को खोखला करने में लगे हुये हैं तो भी यह कम चिन्ता की बात नहीं है। उसके द्वारा पहुँचने वाली क्षति बढ़ते-बढ़ते आयु का बड़ा भाग समाप्त कर सकती है और आगे चलकर किसी भयंकर रोग का कारण बन सकती है। ऐसा न भी हो तो उसकी वर्तमान क्षति ही कौन प्रसन्नतादायक है। उससे कुछ तो असुविधा होती है। क्रियाशील की घटोतरी, उत्साह और स्फूर्ति की कमी से भी तो अर्ध मृतक की स्थिति बन जाती है और जो कुछ किया या पाया जा सकता है, उसका आधा अंश ऐसे ही बर्बाद हो जाता है। हमें अपने स्वास्थ्य में यदि थोड़ी-सी भी गड़बड़ी दीखती है तो उसे सम्भालने सुधारने में उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। रोग और शत्रु को छोटा मानकर नहीं चलना चाहिये, यह बड़ों की शिक्षा बहुत ही अनुभवपूर्ण है। हम दूसरों के लिये इतना करते हैं कि अपने सम्बन्ध में सोचना या करना नहीं बन पड़ता। यह आत्म प्रवंचना अपनी त्याग वृत्ति का रौब गांठने के लिये गढ़ी जाती है पर वस्तुतः उसमें अदूरदर्शिता और प्रमाद की वृत्ति ही काम करती है। दूसरों को संभाला जा सकता है तो अपने आप को भी क्यों न सम्भाला जाय। बच्चे को स्वच्छ रखा जा सकता है और स्वच्छता अच्छी बात समझी जाती है तो स्वयं भी स्वच्छ क्यों न रहा जाये। शरीर दुर्बल और अस्वस्थ रहने लगे और स्वयं उसकी ओर आँखें बन्द करके रहा जाये तो इसमें अदूरदर्शिता का ही परिचय मिलेगा।

आहार और विहार सम्बन्धी मर्यादाओं का उल्लंघन ही समस्या बिगाड़ने का एकमात्र कारण है। सृष्टि के समस्त प्राणी अपनी शारीरिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मर्यादाओं का पालन करते हैं, फलस्वरूप वे अल्प बुद्धि और साधनहीन होने पर भी सदा निरोग बने रहते हैं। जलचर, थलचर, नभचर सभी जीव-जन्तु आमतौर पर निरोग रहते हैं। दृष्टि दौड़ाकर देखिये, चौरासी लाख योनियों में से एक मनुष्य को छोड़कर अन्य सभी जीव आरोग्य का आनन्द उठाते, अपने जीवन के दिन पूरे करते दिखाई देंगे—खोजने पर भी बीमारियों में पड़ा कराहता हुआ कोई प्राणी दिखाई न देगा। एक अभागा मनुष्य ही ऐसा है जिसे अपने बहुमूल्य जीवन का एक बहुत बड़ा भाग बीमारी और कमजोरी की व्यथा सहते हुये बर्बाद करना पड़ता है।

बुद्धिमानों का यह कथन सर्वांश में सत्य है कि धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का मूल आधार शरीर है। दुर्बल और रुग्ण शरीर वाला अपनी जीवन यात्रा का भार स्वयं वहन नहीं कर पाता, उसे पग-पग पर दूसरों की सहायता अपेक्षित होती है। दूसरे लोग सहायता न करें तो अपना ही काम न चले। लोग धर्म कार्य कर सकने के लिये श्रम कैसे कर पायेंगे ? धन कमाने के योग्य पुरुषार्थ भी कैसे बन पड़ेगा ? कामोपभोग के लिये इन्द्रिय में सक्षमता कैसे स्थिर रहेगी और फिर मोक्ष के योग्य श्रद्धा, विश्वास और धैर्य 'श्रम' का संकल्प का बल भी उनमें कहाँ से रहेगा ? इसलिये बीमार और कमजोर आदमी इस संसार में कुछ भी प्राप्त कर सकने की स्थिति में नहीं रहता। रोग को पाप का फल माना गया है। वस्तुतः वह प्रत्यक्ष नरक ही है। नरक में पापी लोग जाते हैं। स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन करना भी सदाचार के, धर्म के नियमों को तोड़ने के समान ही अनुचित है। जब झूठ-हिंसा, चोरी, व्यभिचार आदि दुष्कर्मों द्वारा सामाजिक एवं नैतिक नियमों का उल्लंघन करने वाले ईश्वरीय और राजकीय दण्ड भोगते हैं तो स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन करने वाले क्यों पापी न माने जायेंगे। क्यों उन्हें प्रकृति दण्ड न देगी। शरीर के भीतर व्यथा और बाह्य जीवन में असफलता, वह दुहरा दण्ड उन लोगों के लिये सुनिश्चित है जो पेट पर अत्याचार करके उसे शक्तिहीन बना देते हैं। चटोरेपन की बुरी आदतें ही स्वास्थ्य की बर्बादी का एकमात्र कारण हैं। इसलिये इन आदतों को भले ही राजकीय दण्ड विधान में अपराध न माना गया हो पर प्रकृति की दण्डसंहिता में अपराध ही गिना गया है और उसके लिये वह दण्ड सुनिश्चित है, जिसे आज सब ही भुगते रहे हैं। भीतर व्यथा और बाहर असफलता के दण्ड हममें से अधिकांश को आज सहन करने पड़ रहे हैं।

आयुर्वेद शास्त्र का मान्य सिद्धान्त यह है कि सम्पूर्ण रोग पेट के अपच से आरम्भ होते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में ही यही मान्यता है कि सम्पूर्ण रोगों का एकमात्र कारण कब्ज है। अनेक रोग तो उसके बाह्य रंग रूप मात्र हैं। इन सबकी जड़ पेट में रहती है। पेट खराब रहने से सभी रोग उपजते हैं और पाचन-क्रिया के ठीक रहने पर कोई आकस्मिक रोग बाहरी कारणों से लग जाय तो वह जल्दी ही अच्छा हो जाता है। एक यूनानी कहावत है "रोग और आरोग्य दोनों की ही कुञ्जी हर मनुष्य के पेट में सुरक्षित रखी हुई है" जिसे कब्ज रहता है उसे विभिन्न रोगों का शिकार रहना ही पड़ेगा, जिसका पेट ठीक है, उसके आरोग्य को कोई शक्ति नष्ट नहीं कर सकती, इस तथ्य को हम जितनी जल्दी समझ लें उतना ही अच्छा है।

यदि पेट में पड़े हुये आहार का ठीक प्रकार पाचन न हो तो वह सड़ने लगता है। सड़न से विषैली गैस उत्पन्न होती है और विष फिर रक्त में मिलकर या श्वांस-प्रश्वांस क्रिया के सहारे सारे शरीर में घूमने लगती है। उस विष के ठहरने के लिये जहाँ भी आश्रय मिल जाता है, वही अधिक होते ही वहाँ रोग फूट निकलता है। रेगिस्तानों में रेत की आँधियाँ चलती रहती हैं। उड़ते हुई रेत को किसी पेड़, चट्टान आदि के सहारे थोड़ा-सा रुकने का आश्रय मिल गया तो कुछ ही देर में वहाँ रेत का एक टीला जमा हो जाता है। यही बात हमारे शरीर में कब्ज के कारण उत्पन्न हुये विष की है। साँस के साथ वह एक आँधी की तरह घूमता है और जहाँ भी थोड़ा सहारा मिला वहीं अड्डा जमाकर बैठ जाता है। वर्षाती नदियों में पहली वर्षा होते ही आस पास का कूड़ा-कचरा इकट्ठा होकर बहने लगता है। यह कचरा अपने ढंग से यों ही बहता चला जाता है पर यदि कहीं पानी में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थोड़ी-सी रोक या मोड़ आ जाये तो वह कचरा वहाँ जमा होने लगता है। नाली-मोरियों में रुकावट पड़ने पर कूड़े-कचरा जमा होने का दृश्य हर जगह देखा जा सकता है। यही बात हमारी शरीर की भी है। पेट में निरन्तर विष की उत्पत्ति एकमात्र कब्ज से होती है।

कुछ बाहरी एवं सामयिक कारण भी शरीर में विष की मात्रा उत्पन्न करने वाले हो सकते हैं, पर उनका प्रभाव थोड़ी ही देर में समाप्त हो जाता है। रक्त में श्वेत कणों की मात्रा यदि पर्याप्त हो तो बाहरी विष से लड़ने और फरास्त कर बाहर निकाल फेंकने की बात आसानी से पूरी हो जाती है। जिस प्रकार सरकार शत्रुओं से देश की रक्षा करने के लिये सेना व्यवस्था रखती है वैसे ही हमारे रक्त में भी श्वेत कणों की एक ऐसी फौज रहती है, जो किसी बाहरी हमले का आसानी से मुकाबला कर सकती है। उसे परास्त करके देह से निकाल फेंकने में पूर्णतया सफल हो सकती है। छूत की बीमारियाँ आम तौर से उन्हें लगती हैं, जिनका रक्त पहले से ही दूषित होने के कारण अपनी प्रतिरोधक शक्ति खो बैठता है। हैजा, प्लेग आदि महामारियों के दिनों में भी अनेक स्वयंसेवक रोगियों की सब प्रकार की सेवा करते हैं पर उन्हें कुछ भी नहीं होता। पर सब तरह बचते रहने वाले लोग वायु में उड़ने वाले कीटाणुओं से ही प्रभावित होकर उन फैली हुई महामारियों से ग्रसित हो जाते और बचाव की बाहरी व्यवस्था द्वारा बहुत प्रयत्न करने पर भी अपनी जान खो बैठते हैं।

कब्ज एक स्थायी रोग सरीखा बन जाता है। खान-पान सम्बन्धी बुरी आदतों से सताया हुआ पेट अन्ततः अशक्त हो जाता है और अपना काम ठीक तरह कर सकने के अयोग्य हो जाता है। किसी प्रकार गाड़ी खिंचती तो है, जीवन रक्षा होती रहे इतना पहिया लुढ़कता तो है पर अपच के कारण उत्पन्न हुयी सड़न तो निरन्तर जारी ही रहती है। निरन्तर झरते रहने वाले पानी के झरने से सदा धार बहती ही रहती है। निरन्तर आग उगलने वाले ज्वालामुखी से सदा धुआँ निकलता ही रहता है। कमजोर पेट में जब-जब कब्ज रहने लगा तो वहाँ से भी विषों का उत्पादन निरन्तर ही होता रहेगा। निरन्तर की लड़ाई-लड़ना किस सेना के वंश की बात है ? मौके-मौके पर युद्ध-कौशल दिखाया जा सकता है पर अनन्तकाल के लिये चौबीसों घण्टे गोली चलाते रहने का भार जिस सेना पर आ पड़े और शत्रु का दल बादलों की तरह उभरता हुआ निरन्तर चलता ही आवे तो सैनिक कब तक अपने पैर टिकाये रहेंगे। शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति का भी इस निरन्तर की कब्ज से उत्पन्न विषों के साथ लड़ते-लड़ते एक प्रकार से अन्त ही हो जाता है। तब फिर शत्रुओं को खुलकर खेलने का अवसर मिलता है और देह नाना प्रकार के रोगों से ग्रसित होती जाती है।

रोगों के नाम, लक्षण, चिन्ह निदान के झंझट में पड़ने और उनके वर्गीकरण की उखाड़-पछाड़ में उलझने से कुछ लाभ नहीं। पेट में उत्पन्न हुआ विष जिस स्थान पर जमा होगा वहीं पीड़ा देगा। गाँठों में जमने से उसका नाम गठिया, सिर में जमने से सिरदर्द, फेफड़ों में जमने से क्षय, श्वांस नली में जमने से खाँसी, चमड़ी में जमने से खुजली, दाँतों में जमने से पायरिया, गुर्दे में जमने से बहुमूत्र, उंगलियों में भर जाने से कोढ़ नाम हो जायेगा। बीमारियों का नामकरण करने ओर उनके निदान लक्षण में माथापच्ची करने से क्या लाभ ? गाँठ की बीमारी, सिरदर्द की बीमारी, कान की बीमारी, दाँतों की बीमारी, कहकर भी वही प्रयोजन सिद्ध हो सकता है, जो बड़े-बड़े वैद्यों से रोग का निदान और नामकरण कराने से होता है।

पेट में उत्पन्न होने वाली सड़न शरीर के किसी भी भाग में पहुँच सकती है और उससे किसी भी अंग में रोग उत्पन्न हो सकता है। डकारों में मुँह की और वायु से गुदा मार्ग की ओर वह सड़न गैस के रूप में बाहर आती है तो उसकी दुर्गन्ध का कुछ अनुभव हो जाता है। यह गैसें अपने साथ सड़न भरे और भी विषाक्त तत्व साथ में उड़ाकर लाती हैं तो इनका जमाव प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। जीभ और दाँतों पर जो रोज मैल जमता है वह पेट से उड़कर उपर आई हुई गैसों का ही विकार है। धुआँ जहाँ उठता रहता है वहाँ छतों पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कालिख जमा हो जाती है। जीभ और दाँतों का मैल इसी प्रकार की कालिख है, जिसे रोज साफ न किया जाये तो मुँह में बदबू आने लगे और स्वाद कड़ुआ रहने लगे। यह विकार जब तेज हो जाते हैं तो मसूड़ों को गलाने लगते हैं, तब पायरिया पैदा हो जाता है, जीभ में छाले रहने लगते हैं, साँस के साथ बदबू आने लगती है, सोते में लार बहती है, यह सब एक ही बात के विभिन्न स्वरूप है।

रक्त में विकार घुल जाने से पित्ती, चकत्ता, फुंसी, दाद, कोढ़, खुजली, गठिया आदि कितने ही तरह के रोग फूट निकल सकते हैं। हृदय की धड़कन लकवा, दमा, प्लुरिसी, अन्वक्षय, ज्वर, उन्माद, स्नायु दौर्बल्य, नासूर, नपुंसकता जैसे कुछ रोग ऐसे है जो स्वतन्त्र प्रकृति के दिखाई पड़ते हैं पर इनके मूल में भी उन विषों का धीरे-धीरे संचित होते रहना ही कारण होता है।

चोट लगना, जलना जैसे बाहरी कारणों से भी कभी-कभी शारीरिक कष्ट होते हैं पर यदि रक्त की शुद्धता अक्षुण्ण हो तो उनके अच्छे होने में देर नहीं लगती। शुद्ध रक्त अपनी जीवनी शक्ति के आधार पर ऐसे आघातों का समाधान जल्दी ही कर देता है। एक छोटा-सा घाव भी लम्बा समय लेकर कठिनाई से अच्छा होता है। जिनके रक्त में शर्करा की मात्रा अधिक होती है उन मधुमेह के रोगियों की छोटी-सी फुंसी भी महीनों में अच्छी होती है। कोई बड़ा आपरेशन करना पड़े तो उसका घाव भरना कठिन हो जाता है। कोढ़ी का खून ही खराब हो जाता है। उसकी उँगलियों पर छोटे-छोटे जख्म होते हैं पर वे किसी भी दवा से अच्छे नहीं होते। ऐसी ही खराबियों के कारण भीतर ही भीतर जहाँ-तहाँ पीड़ायें उठती रहती हैं और मनुष्य उनसे निरन्तर दुःख पाता रहता है। जब दाँत उखड़ने का समय आता है तो सालों तक उनमें दर्द, सिर में दर्द, पसली में दर्द आये दिन ऐसे ही झंझट खड़े रहते हैं। स्त्रियाँ जब मासिक धर्म से होने को होती हैं, तब उन्हें कई दिन तक बुरी तरह पीड़ित रहना पड़ता है। प्रसव काल भी उनके लिये मृत्यु जैसा कष्टकारक होता है। पर ऐसा होता तभी है, जब रक्त की सजीवता क्षीण हो चुकी हो। जिनकी जीवनी शक्ति सक्षम है उन्हें इस प्रकार की कोई कठिनाई नहीं होती। बुढ़ापे में भी उसके दाँत, आँख सब काम करते रहते हैं। देहातों के श्रमशील नर-नारी जिनका पाचन ठीक रहता है, उन्हें इस प्रकार की कठिनाइयों में पड़ने और व्यथा सहने के लिये विवश नहीं होना पड़ता।

पाचन क्रिया की खराबी समस्त रोगों की जड़ है। यदि जड़ काट दी जाये तो पेड़ के पुष्प-पल्लव भी सूखने लगेंगे। जिसकी जड़ें हरी हैं उसे ऊपर से काट भी दिया जाये तो फिर नयी शाखायें फूटने लगेंगी। बीमारियों की जड़ निश्चित रूप से पेट में है। जिस अंग में रोग है, वहाँ भी उपचार करने में हर्ज नहीं, रोग की स्थानीय चिकित्सा भी होनी चाहिये, पर जड़ को ठीक किये बिना बाहर की लीपा-पोती से क्या काम बनने वाला है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

नैसर्गिक जीवन—आवश्यकता और उपयोगिता

प्राकृतिक जीवन हर दृष्टि से निरापद

मानवी काया प्रकृति की सर्वोत्तम रचना है। इतना समर्थ और अद्‌भुत ऑटोमेटिक यन्त्र संसार में दूसरा कोई नहीं हो सकता। अनावश्यक छेड़-छाड़ न की जाय तथा स्वास्थ्य के लिए आवश्यक आहार-विहार के नियमों का ठीक प्रकार पालन भर कर लिया जाय तो इतने मात्र से शरीर को जीवन-पर्यन्त स्वस्थ और निरोग रखा जा सकता है। मौसम में होने वाले हेर-फेर से कभी-कभी शरीर संस्थान में भी व्यतिक्रम दिखायी पड़ता है। परिवर्तित परिस्थितियों से समायोजन स्थापित करने के लिए शरीर सचेष्ट होता है, सामाजिक शारीरिक असन्तुलन इसीलिए परिलक्षित होते हैं। शरीर संस्थान में प्रविष्ट हुए विजातीय तत्वों के निष्कासन एवं परिशोधन के लिए भीतर की जीवनी शक्ति निरन्तर प्रयत्नशील रहती है। इस शोधन प्रक्रिया में कभी-कभी विभिन्न प्रकार के रोग भी उभरते हैं। ऐसे समय में हड़-बड़ा कर तेज दवाओं की शरण में जाने की अपेक्षा थोड़ा धैर्य रखा जा सके, खान-पान में संयम बरता जा सके और प्रकृति को अपना काम स्वतन्त्रता से करने दिया जाय तो कुछ ही समय में रुग्णता से छुटकारा मिल सकता है। आपातिकालीन परिस्थितियों की बात और है। जरूरी हो तो ही हल्की-फुल्की दवाएँ सामायिक राहत के लिए ली जा सकती हैं। पर स्थायी उपचार की बात सोचनी हो तथा स्वस्थ एवं निरोग जीवन अभीष्ट हो तो प्रकृति के नियमों का ही पारेपालन करना होगा।

प्रकृति संसार का सर्वोत्तम चिकित्सक है। विश्व के मूर्धन्य शरीरशास्त्रियों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है। आधुनिक सभ्यता एवं कृत्रिम जीवन क्रम से जो प्राणी जितने दूर हैं वे उतने ही स्वस्थ और निरोग हैं। इस सत्य का यदि दर्शन करना हो तो प्रकृति के अधिक सामीप्य में रहने वाले जीव-जन्तुओं के जीवन को देखकर किया जा सकता है। वे यदा-कदा ही बीमार पड़ते भी हैं तो बिना किसी दवा के शीघ्र ही ठीक हो जाते हैं। खाना-पीना छोड़ देते हैं तथा प्रकृति को अपना उपचार करने के लिए स्वतंत्र रूप से समर्पित कर देते हैं। फलतः सदा निरोग और स्वस्थ रहते हैं। मनुष्य में भी कितनी ही अविकसित पहाड़ी और जंगली जातियाँ ऐसी हैं, जिन्हें प्रकृति का सान्निध्य अधिक प्राप्त है। असुविधाओं में रहते हुए भी वे सर्वाधिक स्वस्थ और दीर्घजीवी होती हैं। असाध्य रोग इनमें शायद ही किसी को होता हो। इसके विपरीत सुविकसित और प्रगतिशील समाज में ऐसे रोगों की बहुलता है। यहाँ न तो पिछड़ेपन का समर्थन किया जा रहा है और न ही प्रगतिशीलता का खण्डन वरन् उन तथ्यों पर प्रकाश डाला जा रहा है, जिनकी उपेक्षा, अवहेलना करके सभ्य समाज ने निर्बलता और रुग्णता को स्वतः आमंत्रित किया है।

कृत्रिम जीवन क्रम का एक और अभिशाप जुड़ा है आरोग्य प्राप्ति के लिए दवाओं की गुलामी स्वीकार कर लेने से। एलोपैथी अपनी बाल्यावस्था में तेज प्रभावों के कारण अत्यन्त लोकप्रिय हुई थी। बीमारियों के लिए उसे रामबाण समझा गया और सर्वत्र अपनाया गया। आज वह प्रौढ़ावस्था में है। अब यह अनुभव किया जा रहा है कि तात्कालिक राहत के लिए एलोपैथिक दवाएँ जितनी लाभकारी सिद्ध होती हैं, दूरगामी परिणामों की दृष्टि से उतनी ही हानिकारक हैं। तेजमारक दवाएँ रोगों के कीटाणुओं को ही नहीं शरीर की स्वस्थ कोशिकाओं को भी बिना एक-दूसरे में विभेद किये मारती हैं तथा जीवनी शक्ति को कमजोर बनाती हैं। इन दवाओं के अन्धाधुन्ध सेवन से कितनी ही गम्भीर प्रक्रियाएँ सामने आयी हैं। दवाओं का दुष्प्रभाव आएट्रोजेनिसीटी के रूप में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिकित्साजगत में एक नवीन सकट की तरह प्रस्तुत हुआ है।

सम्बन्धित विषय पर 'एरिक डब्ल्यू मारटिन की पुस्तक 'हेजार्ड्स आफ मेडिकेशन' विस्तृत प्रकाश डालती है। आमातौर से सामान्य व्यक्ति यह कल्पना भी नहीं कर सकता है कि जिन दवाओं का वह सेवन कर रहा है, वे इतनी ही खतरनाक भी हो सकती हैं। पुस्तक ऐसे व्यक्तियों के लिए एक मार्गदर्शिका है तथा उन हानियों से अवगत कराती हैं, जिनसे वे सामान्यता अपरिचित होते हैं। पुस्तक में उद्धरित 'स्टेट युनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क' की 'स्कूल आफ फार्मेसी' में प्रकाशित रिपोर्ट 'हेजार्ड ऑफ ड्रग इन्टर एक्शन्स' के अनुसार अमेरिका में जितना समय कुल चिकित्सालयों के कर्मचारी मरीजों के देख-रेख में लगते हैं उसका सातवां हिस्सा मात्र ऐसे मरीजों की देख-भाल में जाता है जो दवाओं के विषैले प्रभावों से ग्रस्त होते हैं। अनुमानतः तीन अरब डालर प्रतिवर्ष खर्च ऐसे रोगियों पर किया जाता है। पुस्तक के लेखक के अनुसार दवाओं के विषाक्त प्रभावों से एक लाख चालीस हजार अमेरिकी प्रतिवर्ष मरते हैं। इन आँकड़ों से दवाओं की प्रतिक्रियाओं की गम्भीरता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

श्री ए० एच० रॉलेन ने अपनी थीसिस 'इन्फलुएन्स ऑफ यूरिनरी पी० एच० आन एक्सक्रीशन ऑफ एक्फीटामिन' में एक आँकड़ा प्रस्तुत किया है कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के अस्पतालों में प्रतिवर्ष १५ लाख से तीस लाख की संख्या में ऐसे मरीज दाखिल होते हैं जो ए० डी० आर० (एडवर्स ड्रग रिएक्शन) दवाओं के घातक दुष्परिणामों से ग्रस्त होते हैं। 'बोस्टन के पाँच अस्पतालों में दो वर्ष के भीतर चिकित्सा के लिए भर्ती हुए कुल रोगियों में से 'ए० डी० आर० (एडवर्स ड्रग रिएक्शन) से ग्रस्त रोगियों का अनुपात ३१ प्रतिशत था, ज़िनमें से ८० प्रतिशत रोगियों की स्थिति विशेष गम्भीर थी। वे भयङ्कर यातनाओं से पीड़ित थे। 'जान हॉकिन्स अस्पताल' में किये गये तीन माह के एक सर्वेक्षण में पाया गया कि दवाओं की विषैली प्रतिक्रियाओं से पीड़ित रोगियों का अनुपात १७ प्रतिशत था। इनमें से ३० प्रतिशत मरीजों की स्थिति अस्पताल में और भी खतरनाक हो गयी। कुप्रभावों की मात्रा बढ़ गयी। इन ३० प्रतिशत में से २२ प्रतिशत रोगी कुछ दिनों बाद भयंकर यातना सहते हुए अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए। 'ट्रान्स फर्मेशन एण्ड एक्सक्रीशन ऑफ ड्रग्स इन बायोलॉजीकल सिस्टम' पुस्तक के लेखक द्वय अरीता, टी० एवं होरी आर० ने उपरोक्त तथ्य का रहस्योद्घाटन अपनी पुस्तक में किया।

विगत दस वर्षों से अमेरिका के मूर्धन्य चिकित्साशास्त्री दवाओं के कुप्रभावों के प्रति जागरूक हुए हैं। अमेरिका के 'फूड एन्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन' ने अनेकों अस्पतालों एवं शोध संस्थानों को दवाओं की विषैली प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करने के लिए करोड़ों डालर का अनुदान दिया है ताकि घातक प्रभावों की रोकथाम के लिए उपाय निकल सके। पचास लाख डालर के खर्च से स्थापित हुए 'कैंसर परमानेन्ट फाउन्डेशन' में सैकड़ों वैज्ञानिक शोधरत हैं। जिसे 'यू० एस० एस० काँग्रेस के' ऑफिस टेक्नोलॉजी एसेसमेण्ट' विभाग द्वारा मान्यता प्राप्त है। १९७६ के बाद इस शोध कार्य में और भी गति आयी है तथा कितने ही महत्वपूर्ण चौंकाने वाले निष्कर्ष प्राप्त हैं। सम्बन्धित विषय पर "प्रैक्टीशनर" पत्रिका में प्रकाशित एक लेख 'ब्रेन ड्रग्स इन्टर एक्ट' के अनुसार एक प्रकार की बीमारी 'कन्जेस्टिव हार्ट फेल्योर' के लिए डिजिटेलिस ग्लाइकोसाइड्स को विश्व भर में सबसे प्रभावी दवा के रूप में स्वीकार किया जाता है किन्तु इस दवा के सेवन से कितनी ही मानसिक विकृतियाँ पैदा होती हैं, जिनकी ओर सामान्यता चिकित्सकों का ध्यान भी नहीं जाता।

'इस्ट्रोजन्स' को विश्व के मूर्धन्य चिकित्सकों ने एक अत्यन्त हानिकारक दवा माना है। एक खोज के अनुसार इस्ट्रोजन उपयोग करने वालों की तुलना में उपयोगकर्ताओं को कैंसर होने की सम्भावना १४ गुनी अधिक बढ़ जाती है। सर्वाधिक घातक प्रभाव गर्भस्थ शिशुओं के ऊपर पड़ता है। इन दवाओं से उनके अङ्ग अवयवों के अप्राकृतिक होने का अनुपात ५ गुना बढ़ जाता है। 'इस्ट्रोजन' के उपयोग से अन्य प्रकार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

६.३ चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य

प्रतिगामी प्रभाव विविध रोगों के रूप में उभरते हैं। थोम्बोएम्बोलिक फिनामिना रक्तचाप में वृद्धि, मधुमेह, गम्भीर हाइ पर कैल्सेमिया जैसे रोग उत्पन्न होने की सम्भावना अधिक हो जाती है। इस्ट्रोजनस के प्रयोग से पैदा होने वाले रोगों का विस्तृत वर्णन शिकागोकीइयर बुक १९७७ में 'ड्रग्सइफेक्ट औन इन्जाइम्स, फार्मोकोलाजिक टेक्नीक्स इन ड्रग इवेलुएशन' शीर्षक से छपा था। लेखक थे डा० बर्न्स जे० जे० तथा मॉयर जे० एच०।

'न्यू इङ्गलैंड जर्नल आफ मेडीसिन' में प्रकाशित 'दी इविल्स ऑफ कैमोफ्लैज ऐज इलस्ट्रेटेड बाय थैलिडोमाइड' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित हुआ जिसमें विश्व विख्यात दवा' 'थैलिडोमाइड' की हानियों पर प्रकाश डाला गया था। फरवरी १९७० में प० जर्मनी की एक थैलिडोमाइड उत्पादक कम्पनी को न्यायालय के फैसले एवं निर्देशानुसार तेईस सौ अभिभावकों को २ करोड़ ७३ लाख डालर जुर्माना देना पड़ा। ऐसे ही एक केस में स्वीडन की 'एस्ट्राफार्मेस्युटिकल' कम्पनी को एक फैसले के अनुसार नार्वे के १३ बच्चों को जीवन पर्यन्त प्रतिवर्ष २० हजार डालर देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

अमेरिका में किये गये सर्वेक्षण में पाया गया कि वर्ष १९७७ में 'फेनफार्मिन' नामक दवा ३ लाख ३६ हजार रोगियों को दी गयी, जिसमें से ५० प्रतिशत मर गये। 'लैन्सेट' पत्रिका में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार इनमें से कितने ही रोगी दवा की विषैली प्रतिक्रियाओं के कारण मरे। 'नेशनल ड्रग एप्लिकेशन ब्यूरो' ने जाँच करने पर घटना को सत्य पाया तथा १९७८ में इस दवा की बिक्री पर पूरी तरह पाबन्दी लगा दी। जो दवाएँ बाजार में उपलब्ध थीं उन्हें तुरन्त बाजार से बाहर कर देने का निर्देश दे दिया।

निस्संदेह चिकित्सा विज्ञान के विकास ने मानव जाति की विशेष सेवा की है। कितनी ही असाध्य बीमारियों के उपचार ढूँढ़ निकाले गये हैं और कितनों ही के लिए चिकित्सक गण भागीरथ श्रम कर रहे हैं। इसके लिए उनकी जितनी भी प्रशंसा की जाय कम है। संकट तब उत्पन्न होता है, जब दवाओं के उपयोग में अदूरदर्शिता का परिचय दिया जाता है और हर छोटी-मोटी बीमारी में एलोपैथिक दवाओं का अन्धाधुंध सेवन किया जाता है। ऐसे व्यक्तियों को इस तथ्य से भलीभाँति परिचित होना चाहिए कि औषधियाँ आपत्तिकालीन परिस्थितियों के लिए सामयिक राहत हेतु एक अस्थायी व्यवस्था भर होती हैं, न कि स्वास्थ्य और पोषण का साधन। प्रयोग के अतिरेक द्वारा शरीर संस्थान की विभिन्न गतिविधियों की प्राकृतिक व्यवस्था में व्यवधान पड़ना स्वाभाविक है। रोगों को दबाने के लिए ली जाने वाली दवाएँ अन्ततः शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए घातक सिद्ध होती हैं।

तनाव, भाग-दौड़ और प्रतिस्पर्धा से भरी आज की जिन्दगी में अनिद्रा एक आम रोग हो चला है और विकसित देशों में तो अधिकांश लोगों को बिना नींद लाने वाली दवाओं को लिए नींद नहीं आती। लोग नींद के लिए इन दवाओं का प्रयोग करते हैं, इसके लिए 'डायजेपान, 'मेप्रोबमेट', 'बोर-बिरुचेट्स' आदि नामक औषधियाँ प्रयुक्त होती हैं। परन्तु इन दवाओं का सेवन करने पर शरीर में अन्य विकार उत्पन्न होने लगते हैं। जर्मन कम्पनी से नई दवा 'थैलिडो माइल' का विज्ञापन किया कि इसका शरीर पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। इतना ही नहीं यह भी कहा गया कि यदि भूल से इसकी ज्यादा मात्रा भी ले ली जाय तो कोई नुकसान नहीं होता, जबकि अन्य शामक दवाएँ अधिक मात्रा में खा लेने पर प्राण सङ्कट उत्पन्न कर देती हैं और सामान्य मात्रा में अन्य लेने पर विकार तो उत्पन्न करती हैं।

दवा के हानिरहित होने का जोरदार विज्ञापन किया गया और इसका परिणाम यह हुआ कि दवा चल निकली। थोड़े ही दिनों में अकेले जर्मनी में पन्द्रह करोड़ गोलियाँ प्रतिमास बिकने लगीं। कुछ समय के भीतर ही विश्व के करीब ५० देशों में इस दवा का विभिन्न नामों और लेबिलों से प्रचलन हुआ। आरम्भ में इस दवा का शरीर पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा किन्तु कुछ ही दिनों बाद की गई सारी घोषणाएँ और विज्ञापित तमाम विशेषताएँ थोथी साबित हुयीं। जो महिलाएँ इस दवा का सेवन करने लगी थीं, उनके शरीर पर कुछ ऐसा

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रभाव पड़ा कि वे विकलांग बच्चों को जन्म देने लगीं। इन बच्चों में से अधिकांश "फोकोमेलिया" नामक रोग के शिकार होते थे। इस रोग में जन्म से ही हाथ-पैर बुरी तरह मुड़े-तुड़े रहते हैं। इस रोग के कारणों की जाँच करने पर पाया गया कि यह विकार पैलिडो माइल में रहने वाले 'ग्लूटेमिक ऐसिड' के कारण उत्पन्न होता है। जब इसके व्यापक परिणाम सामने आये तो इङ्गलैंड तथा कनाडा में इनकी बिक्री तुरन्त बन्द कर दी गयी। अमेरिकी प्रशासन को इस औषधि की प्रामाणिकता पर पहले ही सन्देह था और उसने दवा का लाइसेंस प्राप्त करने वाली कम्पनी के आवेदन को रोक रखा था। जब यह परिणाम सामने आये तो आवेदन तुरन्त रद्द कर दिया गया। इस दवा के कुपरिणाम व्यापक रूप से सामने आये तो जर्मनी के अतिरिक्त आस्ट्रेलिया, स्विट्जरलैण्ड, लेबनान, इजरायल और रूस आदि देशों में भी इसी तरह की प्रतिक्रिया हुई।

यह तो एक दवा के कुपरिणाम की चर्चा हुई। ऐलौपैथिक चिकित्सा पद्धति में प्रयुक्त की जाने वाली अधिकांश औषधियाँ इस प्रकार की होती हैं कि वे रोग को नष्ट करने के साथ-साथ रोगी को भी हानि पहुँचाती हैं और कभी-कभी तो रोगी को ही मार डालती हैं। अमेरिका में पिछले दिनों 'डाइएथिलिन ग्लाइकोज' दवा के कारण सैकड़ों व्यक्ति मारे गये। फ्रांस में 'डाई आयडोएथिल' नामक दवा के कारण भी इसी प्रकार सैकड़ों व्यक्ति मरे।

पिछली बार जब फ्लू व्यापक रूप से फैला तो उसकी रोकथाम के लिए एक निरोधक टीके का आविष्कार हुआ। इस टीके का निर्माण होने के बाद तेजी से व्यापक स्तर पर उपयोग किया। बाद में पता चला कि टीके ने फ्लू को तो रोक दिया है, पर उसके संगी साथी दूसरे रोगों को शरीर में आमन्त्रण दिया है। टीके के दुष्प्रभावों को जाँचने के लिए शरीरशास्त्रियों की एक मीटिंग सेनफ्रान्सिस्को में हुई। इस मीटिंग में चिकित्सा बोर्ड के अधिकारी डा० रानज ने कहा कि 'फ्लू से जितने लोग मरेंगे, उससे ज्यादा लोग इस टीके के कारण मरेंगे।

ऐलोपैथिक चिकित्सा पद्धति से नित नूतन जो आविष्कार होते रहे हैं, उसके कारण यह पद्धति इतनी समृद्ध हो गई है कि प्रायः सभी रोगों की दवा और उपचार इसके पास मौजूद हैं। परन्तु इसके मूल में कुछ दोष ऐसे हैं, जो रोग के मूल कारणों को दूर करने की अपेक्षा उसके कारण उत्पन्न होने वाले कष्ट से राहत दिलाने का काम अधिक होता है। मूल कारण का निवारण किये बिना गलत आधार पर चिकित्सा विज्ञान को अग्रसर किये जाने का परिणाम है कि रोगोपचार के साथ अन्य कई दुष्परिणाम भी उत्पन्न होते हैं और वे रोग से अधिक घातक सिद्ध होते हैं।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ऐसी औषधियाँ प्रस्तुत करने में लगा हुआ है, जो बीमारी के कीटाणुओं को मारने के साथ-साथ जीवन रक्षक स्वस्थ कणों को भी समान रूप से मारती हैं। ऐसी औषधियाँ तैयार की जा रही हैं, जिसके कारण नया रोग उत्पन्न हो जाने से लगता है मानो पुराना रोग चला गया हो। यह ठीक वैसा ही है जैसे कि भेड़िया भगाने के लिए शेर को लाकर बैठा दिया हो। इस उपचार से क्या लाभ हुआ ? इसमें तो यह झूठी सांत्वना ही मिली कि भेड़िया चला गया। लेकिन उसके स्थान पर शेर के आ धमकने से भयातुर को कहाँ राहत मिली ? होना यह चाहिए था कि चिकित्सा विज्ञान रोग के मूल कारण असंयम को रोकने तथा स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने की शिक्षा और व्यवस्था पर जोर देता। लेकिन हो इसका उल्टा ही रहा है और उसी आधार पर औषधि अन्वेषण के क्षेत्र में उन्हीं आधारों को लेकर नई-नई खोजें हो रही हैं तथा नित नये इन्जेक्शन, कैप्सूल निकलते चले आ रहे हैं।

इन औषधियों से तत्काल तो राहत मिलती दिखाई देती है, पर वास्तव में नफा औषधि विक्रेताओं को होता है। रोगी को तत्काल आराम पहुँचाने के लिए डॉक्टर भी ऐसी दवाएँ लिख देते हैं और अपना धन्धा चमकाने में लग जाते हैं। घाटे में बेचारा रोगी ही रहता है, जिसका पैसा भी जाता है, शरीर भी खराब होता है और पूर्ण उपचार की आशा में नई-नई दवाओं तथा इलाजों के जंजाल में उलझता चला जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

६.५ चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य

इस स्थिति पर फिर से विचार किया जाना चाहिए जबकि दवाओं के अन्धाधुन्ध प्रयोग से अनेकों दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं। औषधियों से होने वाली हानियों को ध्यान में रखा जाना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। कुछ दवाओं के विषैले प्रभावों की चर्चा तो आरम्भ में की जा चुकी है और भी कई औषधियों के दुष्प्रभाव सामने आये हैं। उदाहरण के लिए तपैदिक से बचाव के लिए इनों बी० सी० जी० का टीका लगाया जाता है। इस टीके का अन्धाधुन्ध प्रयोग हो रहा है। लेकिन अभी इस बात का निष्कर्ष नहीं निकल सका है कि तपैदिक का टीका लगाने के बाद उसकी सम्भावना निश्चित रूप से समाप्त हो जाती है।

इस दिशा में अभी तक अँधेरे में टटोलने के समान ही प्रयोग चल रहे थे। अब तो ब्रिटेन के स्वास्थ्य मन्त्रालय की मेडिकल मेमोरेंडम क्रमांक ३२४ में स्पष्ट कहा गया है कि बी० सी० जी० का टीका हानिरहित है, इस बात की कोई निश्चित गारन्टी नहीं है। इसी औषधि के विशेषज्ञ डा० के० नोविल ने अपनी पुस्तक 'बी० सी० जी० वेक्सनेशन थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस' में अनेक प्रयोगों का निष्कर्ष देते हुए लिखा है कि इस दवा के फलस्वरूप तपैदिक से पूरी तरह छुटकारा पा सकना तो संदिग्ध है ही उसके कारण कितने को ही गाँठें उभर आना, घाव हो जाना, भीतरी फोड़ा निकलना जैसी दुखद प्रतिक्रियाएँ देखी गई हैं। डा० नोविल ने चेचक के टीकों के बारे में भी लिखा है कि इसे लगाने के बाद भी निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि चेचक फिर नहीं होगी।

इस प्रकार प्रचलित औषधियों द्वारा रोग पर नियन्त्रण संशयास्पद तो है ही, इसके कारण अनेकों दुष्प्रभाव भी होते देखे गये हैं। एस्पिरिन और पेनीसलिन का इन दिनों जो अन्धाधुन्ध प्रयोग किया जा रहा है, उसके परिणामों के सम्बन्ध में ब्रिटिश मेडिकल ऐसोसियेशन के सदस्यों ने चिन्ता व्यक्त की है। पेनीसिलीन के व्यवहार से तो इतनी अधिक दुर्घटनाएँ घटती देखी गईं कि अब उनका प्रयोग रोगी का पूर्व परीक्षण किये बिना नहीं किया जाता। ब्रिटिश मेडिकल ऐसोसियेशन के डा० हेचिन्स ने ऐलोपैथिक दवाओं के हानिकारक परिणामों की चर्चा करते हुए यहाँ तक कहा है कि—"नित नये नामों से निकलने वाली इन अवांछनीय दवाओं को रोकने के लिए क्यों नहीं कोई प्रयास किये जा रहे हैं ?

चिकित्सा विशेषज्ञ भी ऐलोपैथिक दवाओं के अन्धाधुन्ध प्रयोग से होने वाले खतरों के प्रति चिन्तित हैं। पिछले दिनों "ब्रिटिश मेडिकल जनरल" में एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक का अनुभव छपा था कि 'टेट्रासाइक्लिन' वर्ग की ऐंटी बायोटिक दवाओं के प्रयोग से एक बार कुछ रोगियों की जीभ पर कैंसर के चिन्ह उभर आए। उसने लिखा है कि इस प्रकार का और भी उपद्रव हो सकता है। डाक्टरी पत्रिका 'लान्सेट' में एक समाचार छपा है कि किसी किसान ने अपनी गाय को रोगमुक्त रखने के लिए दो वर्ष तक पेन्सलीन के इन्जेक्शन दिये। इसके परिणामस्वरूप उसका दूध इतना विषाक्त हो गया कि उसे पीने वाले चर्मरोग के शिकार होने लगे।

पोलियो निरोधक टीके का आविष्कार करने के लिए कनाडा के टोरोंटो विश्वविद्यालय में बन्दरों पर प्रयोग किये गये। इस प्रयोग के लिए १८ हजार बन्दरों को चुना गया। प्रयोग के दौरान बेचारे सभी बन्दर मारे गये। इसके बाद घोड़े, चिम्पांजी और मुर्गी के बच्चों पर प्रयोग किया गया ताकि पोलियो का भी कोई कारगर टीका निकाला जा सके। परिणाम तो कुछ नहीं निकला, मौत के मुँह में उन्हें भी जाना पड़ा।

फिलाडेल्फिया के डा० रावर्ट वाइज अपने चिकित्सकीय अनुभवों के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सल्फाड्रग और एन्टी बायोटिक दवाओं से केवल साधारण श्रेणी के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। किन्तु उनके प्रयोग से स्टेफिलीकोकस जाति के खतरनाक कीटाणु उत्तेजित होकर भी बलवान बन जाते हैं और पहले से अधिक हानि पहुँचाते हैं। डाक्टर मेलिविनकीथ की पुस्तक 'नरक जाने का सीधा रास्ता' पुस्तक में सप्रमाण इस सम्भावना का प्रतिपादन किया गया है, पीढ़ी दर पीढ़ी हम अधिक अविकसित पशु अन्धी, गूँगी, बहरी, नपुंसक और विकृत मस्तिष्क की सन्तानें पैदा करते चले जा रहे हैं। उन्होंने यह सम्भावना व्यक्त की है कि सौ वर्ष बाद हमारे वंशजों की आकृति-प्रकृति तथा शारीरिक-मानसिक स्थिति इस प्रकार बदल जायगी कि उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाजार में बिकने वाले अन्न, फल, शाक, दूध, चीनी आदि पदार्थों को कीटाणुरहित बनाने के लिए उन पर कई तरह की दवाएँ छिड़की जाती हैं। इस विषाक्त छिड़काव की मात्रा थोड़ी होने पर भी मनुष्य शरीर में अनेक विकृतियाँ उत्पन्न करती हैं और इन्हें बिना छिड़के जो हानि हो सकती थी, उससे भी अधिक हानिकर परिणाम उत्पन्न करती है। जर्मनी की फेडरलफूड लेबोरेटरी के अध्यक्ष प्रो० वाल्टर सूसी तथा अन्य डॉक्टरों का कथन है कि इस रासायनिक सम्मिश्रण का परिणाम ऐसी अद्‌भुत बीमारियाँ उत्पन्न होने के रूप में सामने आ सकता है, जिनका निदान और कारण समझ पाना भी असम्भव हो सकता है। मांस वृद्धि के लिए पशुओं के शरीर में जो इंजेक्शन लगाये जाते हैं उस माँस का प्रभाव नपुंसकता जैसे रोगों के रूप में सामने आ सकता है। ऐसी अनेक घटनाओं के समाचार कनाडा के कई अखबारों में प्रकाशित हुए हैं। इन हैरतअंगेज परिणामों को जानते हुए भी इनका प्रयोग बन्द नहीं होता, दिन-दिन बढ़ता ही जाता है।

ऐसे में सर्वोत्तम विकल्प यही हो सकता है कि हम प्राकृतिक जीवन की ओर लौटें और स्वास्थ्य सम्बन्धी उन विपत्तियों से छुटकारा पायें, जो इन दिनों मनुष्य को बेतरह त्रास दे रही हैं।

दीर्घायुष्य का रहस्य प्राकृतिक जीवन-क्रम

खरगोश की औसत आयु ७ वर्ष की होती है। बिल्लियाँ और बकरियाँ १२ वर्ष तक जीवित रहती हैं। कबूतर ८ वर्ष और घोड़े ५० वर्ष तक जीवित रहते हैं। कछुए एवं सर्प की औसतन आयु १५० वर्ष और १२० वर्ष होती है। मनुष्य की आयु १०० वर्ष आंकी गई है। मनुष्य को छोड़कर अन्य जीवों के जीवनक्रम पर दृष्टि डालते हैं तो पता चलता है कि उनमें सदा यौवन का उत्साह बना रहता है। आयु की दृष्टि से उनकी सम्पूर्ण आयु में बचपन, यौवन एवं वृद्धावस्था की कोई स्पष्ट सीमारेखा दृष्टिगोचर नहीं होती है। अपवादों एवं दुर्घटनाओं को छोड़ दिया जाय तो पर्यवेक्षण करने पर शायद ही कोई जीव ऐसा दिखाई पड़े, जो रोगग्रस्त पड़ा हो अथवा वृद्धावस्था के कारण शक्ति रहित बना असमर्थता के चंगुल में जकड़ा हो। अधिकांशतः पशु-पक्षी जीवन-पर्यन्त युवा बने रहते हैं। उनकी मृत्यु वृद्धावस्था की असमर्थता में नहीं यौवन जैसे उत्साह एवं उमंगों के बीच होती है। उछलते, कूदते, मचलते, इठलाते, जीवों को कभी भी मृत्यु या वृद्धावस्था का आभास नहीं होता। पैदा होते है चिर यौवन की उमंगों के साथ और मरते हैं यौवन की उमंगों के बीच। जरावस्था की थकान क्या होती है इससे वे सदा अनभिज्ञ बने रहते हैं। साधनों की दृष्टि से पिछड़े, शक्ति, सामर्थ्य एवं बुद्धि में अविकसित इन मनुष्येत्तर जीवों के चिरयौवन के कारणों की खोज करते हैं तो एक ही तथ्य हाथ लगता है, प्राकृतिक दिनचर्या आशंकाओं से रहित उमंग एवं उत्साह से भरा जीवन-क्रम।

मचलते, इतराते युवा उमंगों से युक्त पशु-पक्षियों के मस्त जीवन का रहस्योद्‌घाटन करते हुए सन्त फ्रान्सिस कहते हैं कि प्राणि-सृष्टि ईश्वर के पितृ-हृदय के बहुत समीप हुआ करते हैं। इस तथ्य से मैं पूर्णतया सहमत हूँ कि प्रकृति की सहज प्रेरणा से अभिप्रेरित होकर प्रत्येक प्राणी जीवन से असीम प्यार करता एवं उसका भरपूर आनन्द उठाता है। उनमें चिर उत्साह का यही कारण है।

'एलन डिबाय' प्रकृति प्रेमी रहे हैं। उनका अधिकांश समय जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों के अध्ययन में ही बीता है। उन्होंने रहस्योद्‌घाटन किया है कि प्रकृति के इन नन्हें जीवों में चिरउत्साह का कारण है, उनकी प्रकृति प्रेरणा के अनुरूप क्रियायें। लिखते हैं कि मेरा अधिकांश समय पशुओं की जानकारी में बीता है। घनिष्ठ साथियों में खरगोश, गिनीपिग, सफेद चूहे, हिरण, रैकून्स, स्कन्ध, लोमड़ियां सदा मेरा मन बहलाते रहे तथा प्रेरणायें देते रहे हैं। मैंने ८० वर्ष से इन प्राणियों से इतना कुछ सीखा है, जितना कि तत्वज्ञान की पुस्तकों में भी नहीं। वे कहते हैं कि जीव मूक रूप से कहते हैं कि 'प्रत्येक क्षण का आनन्द लूटना सीखो'। सृष्टि का प्रत्येक प्राणी अपने जीवन का भरपूर आनन्द उठाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गोधूलि बेला में गिलहरिया नटों की भाँति हवाई कौशल प्रस्तुत करती हैं। उन्हें न तो रात के अन्धकार का डर होता है न कल की चिन्ता। चौकड़ी भरता हिरन सम्पूर्ण पृथ्वी पर अपना अधिकार जताता है। हरी-भरी घास का आनन्द लेते समय उसके मनोयोग को देखते ही बनता है।

एलन डिवाय लिखते हैं कि "एक बार मैंने एक बुड्ढे हिरन को घास चरते देखा। इतने में एक सर्प उसकी नासिका के पास आ पहुँचा। उस समय उसकी सतर्कता परिवर्तित भाव मुद्रा देखते ही बनती थी। एक क्षण में ही आनन्द के भाव तिरोहित हो गये और वीर रस के भाव में हुँकार भरने लगा। पैने खुरों से आवाज करते हुए उसने साँप को दबोचकर काम तमाम कर दिया। तुरन्त बाद वह अपनी पूर्ववत् स्थिति में आ गया और इस प्रकार घास चरने का आनन्द लेने लगा जैसे कोई घटना ही न हुई हो। इन जीवों के जीवन-क्रम से मनुष्य प्रेरणा ले सकता है। सामान्य घटना एवं बातों से प्रभावित होकर अपना सन्तुलन खोने वाले, निराशा व चिन्ता से घिर जाने वाले मनुष्य उद्विग्नता और चिन्ता से मुक्ति पा लें तो ८० वर्ष की आयु में भी वे हिरन की-सी कुचालें भरते रह सकते हैं।

प्रकृति की प्रेरणा है कि अनावश्यक चिन्तायें छोड़ो, ईश्वर प्रदत्त जीवन का सर्वोत्तम उपयोग करो। प्रसन्नता एवं प्रफुल्लता का प्रत्येक कार्य में समावेश रखो। इस प्रेरणा के अनुरूप जीवन-क्रम अपनाकर पशु-पक्षी सदा प्रसन्न रहते तथा जीवन-पर्यन्त यौवन का आनन्द लेते हैं। कृत्रिमता से वे सदा दूर रहते हैं। समय पर उठना, प्रकृति का अभिवादन करना, आहार जुटाना एवं निश्चन्त होकर सोना ही उनके सदा स्वस्थ व चिरयुवा रहने का रहस्य है।

आकृति सामर्थ्य एवं बुद्धि की दृष्टि से सबसे पिछड़ी चिड़ियों के फुदकने को देखकर लगता है जैसे प्रकृति ने सम्पूर्ण आनन्द उसकी झोली में भर दिया हो। बच्चों को भोजन कहाँ से प्राप्त होगा ? कल के लिए आहार की व्यवस्था क्या होगी, इसकी बिलकुल चिन्ता नहीं करतीं। बस सूर्योदय का अभिवन्दन करके अपने काम में जुट जाती है। जो आहार प्राप्त होता है उसे अपने बच्चों में मिल बाँटकर खाती है। हाथी जैसे विशालकाय जीव को सर्वाधिक आहार की आवश्यकता होती है पर उसे थोड़ी भी चिन्ता नहीं रहती। भूख लगने पर वह घने जंगल में स्वच्छन्द निकल पड़ता है तथा हरी फूल-पत्तियों का आहार करता है। मनुष्य जैसे संग्रह की चिन्ता उसे नहीं सताती। फलतः वह सदा स्वस्थ रहता है। बिल्लियाँ, बकरियाँ, घोड़े, कबूतर यदा-कदा ही रुग्ण होते हैं। सूर्य देवता अपनी प्रातःकालीन स्वर्गीय आभा के लिए उन्हें उछलने, मचलने के लिए जैसे बाध्य कर देते हों।

प्रकृति विज्ञान एलडिवाय ने अपने जीवन की एक घटना का उल्लेख किया है किस प्रकार नन्हें पक्षी प्रतिकूल परिस्थितियों से जूझने के लिए जान की बाजी तक लगा देते हैं। वे लिखते हैं कि एक बार मैंने एक पुराने लकड़ी के पुल के नीचे एक पक्षी का घोंसला बना देखा। उसके अण्डे देखने के लिए सावधानी से आगे बढ़ रहा था। एकाएक मादा पक्षी ने मेरी नाक से एक इंच दूर मेरी आँखों पर अपने पंखों से प्रहार किया। चौंककर सिर उठाया कि उतने में नर-पक्षी ने झपट्टा मारकर मेरा चश्मा गिरा दिया। इस अप्रत्याशित संघबद्ध आक्रमण से मैं घबड़ा उठा और पैर फिसल जाने के कारण कमर तक पानी में जा गिरा। किसी प्रकार उठकर वहाँ से भागा। मुझे उस घटना से प्रेरणा मिली कि आने वाली कठिनाइयों का जब नन्हे-नन्हें जन्तु वीरों की तरह सामना कर जाते हैं, तब छोटे-छोटे उतार-चढ़ावों से घबड़ाकर अपनी शक्ति मनुष्य नष्ट करे, उसका यह दुर्भाग्य ही है।

एक अन्य घटना का वर्णन करते हैं एक कठफोड़वा पक्षी उड़ता हुआ मेरे खेत में आया और किनारे रखे हुए एक बड़े पत्थर पर बैठ गया और कुछ क्षणों में शरीर को निश्चेष्ट छोड़कर मृत्यु की गोद में समा गया। अन्तिम समय में भी उसे न किसी प्रकार का कष्ट था न ही मृत्यु का भय। मुझे उसकी शानदार मौत पर विशेष आश्चर्य हुआ। मनुष्य से तुलना की तो मालूम हुआ कि रोते बिलखते कष्ट से कराहते मनुष्य की तुलना में जीवों की मृत्यु भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कितनी सरल एवं कष्टरहित होती है। निःसन्देह यह उनके स्वच्छन्द, चिन्तारहित प्राकृतिक रहन-सहन का ही प्रतिपादन है।

मनुष्य पशु-पक्षियों से बुद्धिमान है और सामर्थ्यवान् भी। प्रकृति के सर्वाधिक अनुदान उसे ही मिले हैं। नन्हें जीवों को तो सीमित सामर्थ्य प्राप्त है। अपने सीमित क्षेत्र में सीमित साधनों के सहारे असीम आनन्द अनुभव करते हैं। किन्तु मनुष्य के लिए इससे बढ़कर दुर्भाग्य की बात और क्या हो सकती है कि उसे जीवन का आनन्द लेना नहीं आ सका। कारणों की खोज में जाते हैं तो एक ही तथ्य हाथ लगता है, उसकी चिन्ताओं, आशंकाओं, कृत्रिमताओं से भरा जीवन-क्रम।

प्राकृतिक दिनचर्या, प्रसन्नता तथा प्रफुल्लता से युक्त जीवन-क्रम अपनाने वाले मनुष्यों में ही अधिकांशतः चिरयुवा बने रहे। ढलती उम्र में भी उनमें असाधारण उत्साह एवं उमंग देखी गयी। चर्चिल वृद्धावस्था को सर्वोत्तम काल कहते थे। उनका कहना था, जवानी खिला हुआ फूल है तो बुढ़ापा पका हुआ फल—एक रंग का खजाना है तथा दूसरा रस का कलश। दोनों की अपनी सुवास है और अपना सौन्दर्य। इस दृष्टिकोण के कारण ही उनमें ८० वर्ष की आयु में भी युवकों जैसी उमंग और बच्चों जैसी मस्ती थी। इंग्लैण्ड के शासकीय कार्यों में भी आयु की अन्तिम अवधि में भी परमार्थ देते रहे। महात्मा गाँधी ८० वर्ष की आयु में भी अपने को युवक मानते थे। उनकी फुर्ती देखते ही बनती थी। वृद्धावस्था में भी बर्नार्डशा की चुस्ती एवं फुर्ती देखकर उनके युवा होने का सन्देह होने लगता था। उसका कारण था कि वे सक्रियता, प्रसन्नता, प्रफुल्लता एवं प्राकृतिक दिनचर्या को बिताते थे।

एक जापानी संत का कथन है—बुढ़ापे की झुर्रियाँ, ईश्वर का दिया हुआ वरदान है। निश्चय ही प्रसन्नता मुख-मण्डल पर सतत् बनी रही तो वृद्धावस्था अभिशाप नहीं बन सकती। भूतपूर्व राष्ट्रपति सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन ने चिरयौवन का रहस्य बताते हुए कहा है कि चिरयुवा बने रहने के लिए मनुष्य को हँसमुख स्वभाव को वास्तविक एवं गम्भीर रूप में विकसित करना चाहिए। उन्होंने संयमित प्रकृति के अनुरूप आहार-विहार को चिरयौवन की कुंजी माना।

डा० मेलविन कीथ अपनी पुस्तक "रायलरोडटू हेल्थ" में लिखते हैं कि अप्राकृतिक दिनचर्या के कारण मानव जाति दिन-प्रतिदिन शक्ति-सामर्थ्य की दृष्टि से क्षीण होती जा रही है। जिसका प्रतिफल है असमय बुढ़ापा—अनेकानेक रोगों की उत्पत्ति। मनुष्य को प्रकृति के अन्य पशु-पक्षियों से प्रेरणा लेनी तथा अनुकरण करना चाहिए, जो आयु के अन्तिम समय में भी असीम उत्साह एवं उमंग से भरे रहते हैं। जबकि मनुष्य अनेकों प्रकार के रोगों से ग्रस्त हुआ रोते-कलपते जीवन के अन्तिम दिन पूरे करता है।

अविकसित प्राणी जो मनुष्य से हर दृष्टि से छोटे हैं। उनके पास न तो रहने के मकान हैं न ही अन्य साधन। कल के लिए आहार की समस्या है। संचय के नाम पर कुछ भी नहीं है। ऐसी स्थिति में भी सदा स्वस्थ एवं प्रसन्नचित रहते हैं। वृद्धावस्था की असमर्थता का अभिशाप उन्हें नहीं लगने पाता। जबकि मनुष्य साधनों, योग्यता, प्रतिभा की दृष्टि से सबसे आगे है। फिर भी रोग-क्लेशों का, असमर्थता का, बुढ़ापे का रोना उसे ही रोना पड़ता है। निस्सन्देह यह अप्राकृतिक रहन-सहन अनावश्यक चिन्ताओं एवं आशंकाओं का ही दुष्परिणाम है। शारीरिक सक्रियता, मानसिक प्रसन्नता एवं प्रफुल्लता बनी रहे तो कोई कारण नहीं है कि उसे चिर-यौवन के आनन्द से भी वंचित रहना पड़े। इस तथ्य को समझा एवं अपनाया जा सके तो उसी प्रकार जीवन-पर्यन्त स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त रहा जा सकता है, जिस प्रकार पशु-पक्षी। मनुष्य को श्रेष्ठतम जीवों में गिना जाता है, यहाँ तक कि मानव को परमात्मा की सर्वोत्कृष्ट कृति कहा गया है। उसे पंचतत्वों से निर्मित परमात्मा का निवास स्थान माना जाता है। इसीलिए इसे देव मन्दिर भी कहा गया है। परमात्मा के निवास गृह देवरूपी मन्दिर को पवित्रता, निर्मलता और शोभा-सुषमा—सौन्दर्य से भरा रहना चाहिए। ईश्वर के इस दुर्लभ, अनोखे एवं सुन्दर देहरूपी उपहार की उपेक्षा-अवहेलना तिरस्कार करके उसे रोगी, शक्तिहीन, कुरूप बनाना महापाप अर्जित करना है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य ६.६

इसको सुन्दर, स्वस्थ और रोगमुक्त रखना ही सर्वोपरि कर्तव्य है।

'शरीरमाद्यम् खलुधर्मसाधनम्' यह शरीर ही धर्मादि को प्राप्त करने का साधन है। कोई भी भौतिक अथवा अध्यात्मिक उपलब्धि बिना स्वस्थ एवं नीरोग-सशक्त शरीर से संभव नहीं। इस संसार में जीवन का आधार यह शरीर ही है।

इस देव मन्दिर देह की जब इतनी महत्ता शास्त्रों में प्रतिपादित की गयी, तो प्रश्न उठता है कि इसे निरोग, स्वस्थ एवं सशक्त कैसे रखा जाय ? यह तो सभी जानते हैं कि इस मानव-देह का निर्माण अवनि, अम्बु, अनल, अनिल और आकाश के पंचतत्वों से हुआ है। शरीर में यदि इन तत्वों का सन्तुलन साम्य बना रहे तो उसमें निरोगता एवं सशक्तता बनी रहती है और उनमें असन्तुलन, विकृति अथवा कुपित हो जाने के कारण रोगों की उत्पत्ति हो जाती है। ये पंचतत्व प्राकृतिक हैं। इसके असंतुलन, न्यूनता, अधिकता से उत्पन्न रुग्णता, दुर्बलता आदि को प्राकृति के सामीप्य सानिध्य में रहकर ही दूर किया जा सकता है। जीवन को भौतिक कृत्रिमता से अधिकाधिक दूर रखकर रोगमुक्त, शक्तियुक्त रखना पंचतत्वों की साधना-प्राकृतिक जीवन से सम्भव है।

मनुष्य प्रकृति विरोधों का आचरण करके अपनी भूल, प्रमाद या अज्ञानवश रोगों को आमंत्रित कर लेता है और अपने इस पंचतत्व के कलेवर का उपचार तीव्र एवं विषैली औषधियों के इन्जेक्शनों या शल्य-क्रिया से कराता है, जिसके दूरगामी परिणाम हानिप्रद ही होते हैं। यद्यपि क्षणिक राहत इन उपायों से जान पड़ता है। कालान्तर में अन्य जीर्ण-साध्य व्याधियाँ प्रकट हो जाती हैं, जो शरीर का अन्त करके ही छोड़ती हैं। प्रकृति माता बड़ी उदार है। जब भी मानव अपने को प्रकृति के आंचल में छोड़ पंचतत्वों का उपचार प्रारम्भ करता है, वह करुणामयी, अपना वरदहस्त उसके सिर पर रखकर स्वास्थ्य, निरोगता एवं सशक्तता का अनुदान-वरदान देना प्रारम्भ कर देती है। उसकी अनन्त अनुकम्पा से मनुष्य देह रूपी देव-मन्दिर, रोगमुक्त, शक्तियुक्त हो जाता है। अस्तु अधिक से अधिक प्राकृतिक आहार-विहार के अनुरूप जीवनचर्या बनाकर तदनुरूप पालन कर इस देह को स्वस्थ और सशक्त रखा जाय और देव-मन्दिर की सार्थकता को पूर्ण किया जाय।

जहाँ तक मृत्यु का प्रश्न है, संसार का कोई भी प्राणी इससे बचा नहीं है। जिसने जन्म लिया है, उसे निश्चित रूप से मरना है। शास्त्रकारों ने मृत्यु को सुखद नींद और दिव्य-लोक कहा है। अर्थववेद में कहा गया है—

"यह देवताओं का प्यारा लोक है। यहाँ पराजय का क्या काम ? तुम सोचते हो कि तुम मौत के प्रति संकल्पित हुए हो। बात ऐसी नहीं है, हम तुम्हें वापिस बुलाते, बुढ़ापे से पहले मरने की न सोचो।"

वस्तुतः मृत्यु से कोई बचा नहीं, वह तो अवश्यम्भावी है। जन्म-मृत्यु का चक्र निरन्तर गतिशील है। जहाँ जन्म है, वहाँ मृत्यु भी एक दिन अवश्य होती है परन्तु मौत को उत्कृष्ट विचारों की शक्ति एवं सद्भाव सम्पन्न मनःस्थिति द्वारा आनन्ददायक अवश्य बनाया जा सकता है। उसे संघर्ष करते हुए आगे को टाला जा सकता है। वेदों में इस तथ्य का उद्घोष किया गया है—

वर्च प्रा नेहि मे तन्वांऽसह ओजोवयं ललम्।
इन्द्रियाय त्वा कर्मणे वीर्याय प्रतिगृहणाभि शतं शारदाय।।
(अ. १६। ३७। २)

अर्थात्—"मेरे शरीर में शक्ति, ओज, पराक्रम, पौरुष सदा बना रहे। मैं सौ वर्षों तक अपनी समस्त इन्द्रियों में कर्म करता हूँ।"

मानव-जीवन की सार्थकता इसी में है कि मनुष्य अपने जीवन-पर्यन्त पूर्ण स्वस्थ, शक्तिवान् एवं वीर्यवान् बना रहे। आर्षग्रन्थों में स्थान-स्थान पर दीर्घ जीवन के रहस्यों का उद्घाटन किया गया है।

"अनुहूत पुनरेति विदवानुदयनं पथः।
आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतोऽयनम्।"
(अ० ५। ३०।। ७)

अर्थात्—"हे मनुष्यो ! तुम मृत्यु की ओर क्यों जा रहे हो ? मैं तुम्हें जीवन, उल्लास,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य ६.१०

यौवन, उत्साह की ओर बुला रहा हूँ, वापिस आओ।"

वस्तुतः उल्लास, स्फूर्ति, निरोगता ही यौवन है, वास्तविक आयु कुछ भी हो। उदासी, कायरता, निषेधात्मक मनःस्थिति, प्रमाद ही बुढ़ापा है।

सूर्य सेवन से जीवनी शक्ति बढ़ाएँ

सामान्यतया इतना ही समझा जाता है कि सूर्य से गर्मी और रोशनी मिलती है। यों यह दोनों ही जीवन निर्वाह और सृष्टि व्यवस्था के लिए आवश्यक हैं, पर तथ्यों को गम्भीरता से विचार करने से प्रतीत होता है कि सूर्य की सत्ता ही जीवन सम्पदा का रूप धारण करती है। रोग निवारण और स्वास्थ्य सम्वर्द्धन में निरन्तर काम आने वाली "जीवनी शक्ति" शरीर का अपना उपार्जन नहीं वरन् सूर्य का दिया हुआ अनुदान है। इसे प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हम सूर्य ऊर्जा के निकट सम्पर्क में रहें। उससे बचते फिरने से तरावट की सुविधा भले ही मिल सके, पर उस पर सामर्थ्य की कमी होती जायेगी जो स्वास्थ्य रक्षा एवं दीर्घ जीवन के लिए आवश्यक है।

इस तथ्य से सभी परिचित हैं कि सूर्य के बिना पृथ्वी पर जीवन की सम्भावना नहीं है। सूर्य किरणें सभी प्राणियों के साथ मानव-जीवन को प्रत्यक्षतः प्रभावित करती हैं, पृथ्वी के सभी पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं एवं मनुष्यों का जीवन सूर्य पर ही अवलम्बित है। सभी खाद्यान्नों की उत्पत्ति सौर ऊर्जा से ही होती है। पौधा अपने हरे रंग से सूर्य की शक्ति को शोषित करता है जड़ों द्वारा जल, हवा से कार्बन डाईआक्साइड, सूर्य शक्ति के माध्यम से पौधे अपने हरे रंग (क्लोरोफिल) से एक संयुक्त पदार्थ बना लेते हैं, जिन्हें कार्बोहाइड्रेट कहते हैं। पौधों को पोषण इन्हीं से मिलता है। इन कार्बोहाइड्रेट में वसा, स्टार्च एवं शक्कर होते हैं। वनस्पति शास्त्र में इसी क्रिया को (पौधों में भोजन निर्माण की प्रक्रिया) (फोटोसिन्थेसिस) प्रकाश संश्लेषण के नाम से जाना जाता है।

पेड़-पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया से उनका भोजन बनता है। मनुष्य का आहार वनस्पति है, दूध गाय-भैंस से प्राप्त होता है लेकिन वे भी उसे वनस्पतियाँ खाकर ही बना सकते हैं अर्थात् प्रकारान्तर से भी खाद्य पदार्थ सूर्य किरणों से ही उत्पन्न माने जा सकते हैं।

सूर्य-रश्मियों के अदृश्य भाग में इन्फ्रारेड और अल्ट्रावायलेट किरणें और भी अधिक महत्वपूर्ण हैं। पृथ्वी को गर्म रखने, जैव रासायनिक क्रियाओं को तीव्र करने का कार्य इन्फ्रारेड किरणों से होता है। अल्ट्रावायलेट किरणों से हमारे शरीर में विटामिन "डी" का निर्माण होता है। मात्र इसी विटामिन का मानव शरीर में निर्माण होता है। यह कैलशियम, फास्फोरस आदि के खनिज लवणों को उपयोगी बनाने का कार्य करता है। इन्फ्रारेड और अल्ट्रावायलेट किरणों को कृत्रिम रूप से पैदा करके रोगों के उपचार में प्रयोग होने लगा है। सूर्य किरणों का प्रत्यक्ष रूप से उपयोग अन्य कृत्रिम उपायों से प्राप्त लाभों की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छा रहता है।

फ्रान्स के एक वैज्ञानिक डॉ० हापकिन्स का कहना है कि 'मानव-शरीर एक ऐसा पुष्प है, जिसे सूर्य के प्रकाश की सबसे अधिक आवश्यकता है।" वहाँ कुछ व्यक्तियों पर प्रयोग करके देखा गया, उनको हल्के सफेद वस्त्र पहिनाकर सूर्य के प्रकाश में रखा गया। फिर उन्हीं को उतने समय के लिए बिना वस्त्रों के सूर्य किरणों के सम्पर्क में रखा गया। निष्कर्ष यह निकला कि वस्त्र सहित रहने की अपेक्षा बिना वस्त्रों के रहने पर वजन में वृद्धि अधिक पाई गई। कार्य करने की क्षमता अधिक देखी गई तथा स्वास्थ्य भी अपेक्षाकृत अधिक अच्छा पाया गया और नींद भी अच्छी आई।

जर्मन के प्रसिद्ध डॉक्टर लुईकुने ने कई रोगों के उपचार के लिए किरणों का उपयोग सफलतापूर्वक किया। सूर्य में रोगों को नष्ट करने तथा प्राणी मात्र को स्वास्थ्य एवं नवजीवन प्रदान करने की अपूर्व प्राकृतिक शक्ति है। प्राचीनकाल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से ही वैदिक त्रिकाल संध्या करने की पद्धति सूर्य की इसी लाभकारी शक्ति का सान्निध्य प्राप्त करने के लिए बनाई गयी थी। ऋषि—मुनियों के आश्रय, गुरुकुल आदि ऐसे ही स्थान पर होते थे, जहाँ सूर्य का प्रकाश, खुली वायु एवं निर्मल आकाश और पवित्र वातावरण रहता था।

विगत महायुद्ध के समय डा० सोरेल ने घायल सिपाहियों के उपचार के लिए सूर्य किरणों का उपयोग किया। पहले तो उन्होंने केवल घावों पर सूर्य-रश्मियों का प्रयोग किया, बाद में पूरे शरीर पर प्रयोग करके देखा तो सूर्य के प्रकाश को दृश्य एवं अदृश्य दो प्रमुख भागों से मिलकर बना माना जाता है। अदृश्य भाग में पराबैंगनी (अल्ट्रावायलेट) किरणें होती हैं तथा दूसरे प्रकार की "इन्फ्रारेड" किरणें भी होती हैं। इनका शरीर पर चमत्कारी प्रभाव पड़ता है। इन्फ्रारेड किरणें शरीर को गर्म करती हैं तथा अल्ट्रावायलेट किरणें लाल रक्तकणों की वृद्धि करती हैं। उनमें हीमोग्लोबिन की मात्रा बढ़ने से ही यह वृद्धि होती है।

सूर्य की रश्मियों में रोगों के कीटाणुओं को नष्ट करने की अद्‌भुत क्षमता है। सूर्य चिकित्सा विज्ञानियों का कहना है है कि सभी प्रकार के रोगों में सूर्य की किरणों से लाभ प्राप्त किया जा सकता है। भूख न लगना, डिसेण्ट्री, खांसी, फोड़ा-फुन्सी, कालरा, पुराना नेत्र रोग, मानसिक असन्तुलन आदि सबमें सूर्य-किरणों की लाभदायक शक्ति का उपयोग हो सकता है। कैलशियम की कमी, एवं विटामिन "डी" की अल्पता में तो सूर्य रश्मियों का उपयोग लाभप्रद है ही।

डा० स्किली का कहना है कि रोगों से छुटकारा पाने, स्वस्थ होने के लिए रवि-रश्मियों का विधिवत् उपयोग किया जाय। प्रातः धूप में बैठकर सरसों के तेल की मालिश कान्ति वृद्धि के लिए अतीव उपयोगी है। फेफड़ों के टी. वी. रोग एवं अन्यान्य बुखार सम्बन्धी रोगों में धूप सीधे शरीर पर न पड़ने पाये बल्कि कपड़े या काँच से छनकर उपयोग किया जाय। इसके अतिरिक्त सूर्य-किरणों के प्रयोग के समय निम्नलिखित सावधानियाँ अपनाई जायें—

शीत प्रधान देशों में जब धुन्ध बदली नहीं रहती और स्वच्छ प्रकाश धरती पर आता है तो लोग सूर्य सेवन के लिए आतुर हो उठते हैं शरीर को निर्वस्त्र करके उस पर खुली किरणें देर तक पड़ने देते हैं। मात्र जननेन्द्रिय और सिर को हरे पत्तों से ढके रहते हैं। उन देशों में सूर्य सेवन को अलभ्य अवसर मानकर उसका लाभ आतुरतापूर्वक उठाने के लिए अनेक विधि विधान बनाये गये हैं, पर भारत जैसे देशों में तो वह सहज सुलभ है इसलिये यहाँ तेज धूप से बचने एवं प्रातःकालीन स्वर्णिम रश्मियों को अधिक हितकारक मानने का जो प्रचलन है, उसी को पर्याप्त माना जा सकता है।

दोपहर की कड़ी धूप से बचना एक बात है और उस बचने में शान समझना दूसरी। अमीरी के चोचलों में यह भी है कि गर्मी से बचा जाय और ठण्डक में रहा जाय। ऐसे लोगों के शरीर में विषाणु पलने लगते हैं और ऋतु प्रभाव से लेकर अन्यान्य प्रतिकूलताओं का सामना करने की सामर्थ्य घट जाती है। उन्हें उन पोषणों से भी वंचित रहना पड़ता है जो अन्तरिक्ष में बिना मूल्य बरसते हैं और कीमती टॉनिकों से भी अधिक गुणकारी होते हैं। इनसे बचने का अर्थ है प्रकृति प्रदत्त उन बहुमूल्य अनुदानों को अस्वीकार करना जो शरीर और मन को सुदृढ़ बनाये रहने के लिए आवश्यक हैं, सूर्य सान्निध्य में जीवन-यापन करना शक्ति सम्वर्धन और रोग निवारण दोनों ही दृष्टियों से दैवी वरदान है।

जड़ी-बूटी प्रयोग—उपचार की एक पूर्णतः नैसर्गिक विधा

एलोपैथी आज की सुविकसित अत्याधुनिक चिकित्सा पद्धति है। रोग विज्ञान, शरीर विज्ञान एवं शरीर क्रिया विज्ञान की दृष्टि से गहन अध्ययन एवं शोध के आधार पर रोगों की सम्भावना, स्वरूप एवं जटिलताओं के सम्बन्ध में बड़ी मजबूत नींव इस पद्धति के नेताओं ने खड़ी की है। यह बात चिकित्सा के सम्बन्ध में खरी नहीं उतरती। एक नहीं, अनगिनत उदाहरण इस बात को गले नहीं उतरने देते कि यह पद्धति सुनिश्चित है, हानिरहित है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आधुनिक चिकित्सालयों में हृदय सम्बन्धी कष्टों के लिए विशेष यूनिट होती है। इन्हें इन्टेसिव केयर यूनिट कहा जाता है। एक यूनिट के निर्माण पर लाखों रुपये खर्च आता है। १९३६, १९४६, १९६६ में हृदय कष्ट के लिए जितने व्यक्ति अमरीकी अस्पतालों में भरती किये गये, उनमें मरने वालों की संख्या में पहले की अपेक्षा कोई कमी नहीं थी। अब इन्हीं व्यक्तियों के प्रयोगशाला परीक्षण, इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम, एक्सरे आदि के प्रयोग से होने वाले खर्च में तिगुनी वृद्धि हुई है। २२ अप्रैल, १९७८ का लेसेट पत्र लिखता है कि 'हृदय कष्ट का उपचार घर में भी उतनी ही दक्षता से सम्भव है, जितना कि अस्पताल में।" एक अध्ययन से वैज्ञानिकों ने यह पता लगाया कि हृदय कष्ट के संकटपूर्ण छह सप्ताह के बाद घर पर रहने वाले आई० सी० यू० में चिकित्सा कराने वाले दलों में मरने वालों की संख्या में कोई विशेष अन्तर नहीं था।

एक्सरे एक व्यय साध्य प्रयोग है, पर पूरे विश्व में परीक्षण का महत्वपूर्ण अङ्ग है। जितने एक्सर कराये जाते हैं, उनमें से आधे व्यर्थ होते हैं। इसकी कैंसर उत्पादकता पर भी लोगों का अब ध्यान गया है। बचपन में एक्सरे कराने वाले कई व्यक्तियों को चढ़ती उम्र में कैंसर से ग्रस्त होते पाया गया है। उपचार एवं परीक्षण के अलावा तीसरा महत्वपूर्ण पक्ष चीर-फाड़ का है। एक अमरीकी विशेषज्ञ डॉ० एलवर्ट हैवरकैम्प का कहना है कि गर्भस्थ बालकों के परीक्षण हेतु आज लैसर उपकरण का प्रयोग अधिकाधिक हो रहा है एवं बिना किसी प्रयोजन के माँ के पेट का आपरेशन कर बच्चों की प्रसूति कराई जा सकती है। अब अमरीका में चार में से एक बच्चे का जन्म आपरेशन द्वारा होता है। ८ अक्तूबर, १९७७ के लेसैंट के अनुसार ऐसे बच्चों का स्वास्थ्य जन्म के कुछ माह अधिक ही खराब रहता है। उन्हें श्वांस सम्बन्धी रोग अधिक उत्पन्न होते हैं। न्यूमोनिया एवं आगे चलकर टी. वी. होने के अवसर उन्हें अधिक होते हैं। इन माँओं के गर्भाशय की झिल्ली में भी सूजन आ जाती है। आगे भी जब प्रसव हो तो उसमें आपरेशन की आवश्यकता होती है।

उपचार, परीक्षण, सर्जरी के अतिरिक्त एक चौथा पक्ष आहार का है। जितनी उदारता इस क्षेत्र में आधुनिक चिकित्सा पद्धति ने दर्शाई है उतना ही रोगों का प्रत्याक्रमण बढ़ता चला गया है। बीसवीं शताब्दी के भोजन में मैदा, चीनी, चोकर युक्त भोजन की ही प्रधानता है। चोकररहित भोजन आँतों की सक्रियता को कम करता है। जगह-जगह थैलियाँ बन जातीं हैं, जिन्हें डायवर्टिकुलोसिस रोग का कारण कहा जाता है। यह रोग कैंसर को जन्म देने वाला माना जाता है। सामान्य, प्राकृतिक आहार करने वाले आदिवासियों में यह न के बराबर होता है।

उपरोक्त चारों पक्षों की समीक्षा करने के बाद चिकित्सा पद्धति के औचित्य पर पुनर्विचार करना आवश्यक हो जाता है। आरम्भिक लाभ के बावजूद अन्ततः घाटा कहाँ तक स्वीकार है, इस पर विवेक बुद्धि यही कहती है कि यह अदूरदर्शितापूर्ण अन्धविश्वास यथाशीघ्र जनमानस से मिटाया जाना चाहिए। तुरन्त का चमत्कार हतप्रभ तो कर देता है, पर अपने दूरगामी दुष्परिणाम छोड़ जाता है। वह उपेक्षणीय तो नहीं है, पर ऐलोपैथी का शब्दार्थ भी कुछ ऐसा ही इङ्गित करता है। 'द बुक ऑफ नोलेज एनसायक्लोपीडिया' के अनुसार ऐलोपैथी वह चिकित्सा पद्धति है, जो औषधि के प्रयोग से व्याधि के अलावा अन्य दूसरे लक्षण पैदा करती है, कष्टों को जन्म देती है। भावार्थ यही कि बीमारी का उपचार करने के लिए दूसरा रोग उत्पन्न कर देना है। एण्टी बायोटिक्स शब्द का अर्थ होता है वे औषधियाँ जो जीवन के लिए घातक हैं। एण्ट्री, अर्थात् विरुद्ध, बायोसिस अर्थात् जीवन। इसीलिए "हीलिंग एण्ड कन्क्वेस्ट ऑफ पेन" के लेखक डॉ० जे० फील्ड कहते हैं कि वर्तमान चिकित्सा पद्धति एक प्रयोग मात्र है। इसमें वैज्ञानिक अन्धविश्वास की ही प्रधानता है।

इन सब तथ्यों पर विचार करने पर यही श्रेयस्कार जान पड़ता है कि उन पक्षों का पुनर्मूल्यांकन किया जाये जो रोग का कारण बनते हैं। इतना बन पड़ने पर ही अभीष्ट चिकित्सा पर कुछ टिप्पणी की जा सकनी सम्भव है। शरीर का धर्म है अपनी रक्षा के लिए व्यवस्था बनाना। जीवनी शक्ति के रूप में उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक सुरक्षा संस्थान मिला हुआ है। रक्त के श्वेत कण एवं इम्यून संस्थान सुरक्षा सेना, सीमा आरक्षी बल का कार्य करते हैं। बाह्य आक्रमणकारी जीवाणु-विषाणु पहले मानव शरीर में सुरक्षा पंक्ति की कमजोरी का जायजा लेते हैं। उनकी घातक सामर्थ्य में वृद्धि शरीर की कमजोरी के साथ बढ़ती जाती है एवं शरीर रोगी हो जाता है। रोग से निवृत्ति भी इस पर निर्भर करती है कि कितना शीघ्र विकृत द्रव्यों का निष्कासन सम्भव हो पाता है। शरीर के निष्कासन संस्थाओं का सक्षम होना व्यक्ति के समग्र स्वस्थ होने का सूचक है। आन्तरिक अङ्गों में से एक का भी व्याधिग्रस्त होना कमजोर जीवनी शक्ति, अपाहिज शारीरिक स्थिति एवं नये-नये रोगों के आक्रमण में सहायक होता है। गुर्दे छन्नी की तरह रक्त में से विजातीय द्रव्यों को निकालकर मूत्र रूप में बाहर निकाल फैंकते हैं। यही गुर्दे जब रोगग्रस्त हो जाते हैं, तब सारा विजातीय द्रव्य शरीर में एकत्र होता चला जाता है। ऐसे व्यक्ति जीवित लाश की तरह अपनी यात्रा खींचते हैं। न श्वांस ढंग से ले पाते हैं, न खाना ठीक से खा पाते हैं। बाह्य जीवाणुओं का घातक प्रभाव उन्हें शीघ्र मृत्यु के मुख में ले जाता है। चयापचय के परिणामस्वरूप उत्पन्न विकार द्रव्य जब एकत्र होते चले जाते हैं तो आहार-विहार में व्यतिक्रम आ जाता है, प्रकृति के अनुकूल दिनचर्या का निर्धारण नहीं हो पाता तो रोग की बाढ़-सी आ जाती है।

इस मूल आधार को समझने के बाद चिकित्सा व्यवस्था का स्वरूप निर्धारित कर सकना सम्भव है। किसी भी लक्षण को दबाने के बजाय उसे जन्म देने वाले कारण को जड़ से मिटाना ही श्रेयस्कर है। तुरन्त लाभ की दृष्टि से तो यही उचित लगता है कि सामयिक लक्षण को दृष्टिगत होते ही मिटा दिया जाय। गन्दगी पर मिट्टी को डालने पर वह उस समय तो आँखों से ओझल हो सकती है पर वह नष्ट नहीं होती। दर्द को, वेदना का औषधियों से उस समय तो मिटाया जा सकता है परन्तु मूल रूप में बैठे रोग की यदि समूल नष्ट नहीं किया गया तो वह नये रूप में अधिक तीव्रता से उभरकर आ सकता है। अन्ततः निष्कर्ष यही निकलता है कि इस चिकित्सा-पद्धति के अन्तराल में छिपे अन्धविश्वास को जड़ से निकाल फेंक कर अब जनमानस को अपनी दृष्टि का परिमार्जन करना ही चाहिए। जितना भी श्रेष्ठ है, वह तो ग्राह्य है, पर सामयिक लाभ का दर्शन किसी भी मूल्य पर जीवन में नहीं उतारा जा सकता।

विकल्प के रूप में हमारे समक्ष एक ऐसा जीवन दर्शन आता है, जिसमें प्राकृतिक आहार-विहार, रोगों के प्रति परिष्कृत दृष्टिकोण एवं औषधीय पौधों के रूप में सब ओर उपलब्ध दिव्य जड़ी-बूटियों की प्रधानता हो।

अनियमित एवं प्रकृति के प्रतिकूल जीवनक्रम विजातीय द्रव्य को एकत्र होने के लिए बाध्य करता है। ऐसे में खान-पान के विषय में सर्वत्र-व्याप्त अन्ध-विश्वासों के प्रति जनमानस का सचेत होना अत्यावश्यक है। सर्वसुलभ वनस्पतियों—हरी सब्जियों में अन्य खनिज पदार्थों की अपेक्षा नमक इतना होता है कि शरीर की आवश्यकता की पूर्ति बराबर होती रहे। पर इससे भी अधिक मात्र स्वादपूर्ति हेतु लिया जाने वाला 'सोडियम क्लोराइड' नामक यह रसायन हृदय, रक्त संस्थान, गुर्दों पर प्रतिकूल प्रभाव डालकर अनावश्यक तत्वों के जमाव तथा आवश्यक घटकों के निष्कासन में सहायक होता है। दूध-हरी, सब्जियाँ, अंकुरित अन्न, खटाई-मिर्च मसालों से रहित भोजन एक औसत श्रम में रुचि लेने वाले व्यक्ति को पूरी मात्रा में कैलोरी दे सकने में समर्थ है, ऐसा मत विख्यात चिकित्सकों का है। फिर भी अनावश्यक चर्बी युक्त भोजन जिस मात्रा में पूरे विश्व में लिया जाता है, वह मात्र एक प्रकार की भ्रांति ही है, जो विश्वमानस को जकड़े हुए है।

वनस्पतियों का जीवनी शक्ति संवर्धन एवं रोग निवारण में उपयोग चिर पुरातन काल से प्रतिपादित होता चला आया है। कहा जाता है कि एक बार ब्रह्माजी ने चरक ऋषि को निर्देश दिया कि पृथ्वी पर जो भी पौधा व्यर्थ हो, तोड़ लाओ। ११ वर्ष भटकने के उपरान्त वे ब्रह्माजी के सामने नमस्तक होकर बोले—'प्रभो' ! पृथ्वी पर एक भी पत्ता ऐसा नहीं मिला जो किसी न किसी रोग के उन्मूलन में सहायक न हो', इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कथन से पेड़-पौधों, जड़ी-बूटियों की महत्ता समझ में आती है। चरक ऋषि के बारे में वर्णित है कि वे औषधियों से उसके गुणों को पूछते जाते थे एवं तदनुसार उपयोग हेतु उनका संकलन करते थे।

इन सब आख्यानों से औषधीय पौधों की विलक्षण प्रभावकारी क्षमता पर प्रकाश पड़ता है। इसी मान्यता के कारण हिन्दू अध्यात्म में पौधों को देव समान मानकर पूजा-अर्भ्यथना करने का विधान बनाया गया है। पौधों को मध्यम योनि प्राप्त देव पुरुष माना गया है। उपनिषदकारों का कथन है कि—

यो देवो अग्नौ या अप्सु यो विश्वं भुवनमाविवेश।
य औषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै, देवाय नमोनमः।। —वेश्ताश्वतरोपनिषद् २/१७

अर्थात्—'जो परमात्मा अग्नि में है, जो जल में है, जो समस्त लोकों में समाविष्ट है, जो औषधियों में है तथा वनस्पतियों में है, उस परमात्मा को नमस्कार है।' इस महात्म्य को अब वैज्ञानिकों ने तथ्य रूप में स्वीकार कर लिया है। इसी पर शोधें केन्द्रित भी हैं।

पाश्चात्य जगत में सबसे महत्वपूर्ण शोध इन दिनों 'रगग्जी' (बार्धक्य) पर चल रही है कि किस तरह अपनी मृत्यु को आगे बढ़ाया जा सके, इसी पर प्रयास केन्द्रीभूत है। हिमालय की तराई से प्राप्त कायाकल्पी एवं अमरकंटकी नामक पौधे इन्हीं विशेषताओं से भरे-पूरे हैं। इस पर विशद् खोज की आवश्यकता है। वार्धक्य को नियन्त्रित करने से मानव को कैंसर रूपी असाध्य रोग का उपचार भी हस्तगत हो सकता है। कायाकल्प एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके सधना चिकित्सकगण देखते आये हैं। दोनों औषधियों में ये क्षमताएँ छिपी पड़ी हैं। 'चंदलिया नामक औषधि से पथरी का उपचार राजस्थान में बड़ा लोकप्रिय है। इसी प्रकार सहज सुलभ शंखपुष्पी स्मरण शक्ति को तेज करने के लिये बड़ी तादाद में गाँवों में प्रयोग होती आयी है।

आज कैंसर का उपचार रेडियो आइसोटोपों के माध्यम से किया जाता है। हिमालय के ऊपरी भाग में पाये जाने वाले 'कुमारिका' पौधे में भी इन आइसोटोपों को पहचान लिया गया है। कैंसर का उपचार इससे सम्भव है। प्रत्यक्ष प्रयोग परीक्षण द्वारा यदि सिद्ध किया जा सके तो चिकित्सा विज्ञान की यह सबसे बड़ी क्रान्ति होगी। रतनजोत, इल्लर-विल्लर, सेल्सिया, भापिया, निकोटियाना आदि पौधों से भी कैंसर का उपचार ढूँढ़ा जा रहा है। केन्द्रीय भैषज अनुसंधान संस्थान लखनऊ एवं बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में इन पर प्रयोग चल रहे हैं।

एक्यूपंक्चर पद्धति के जन्मदाता चीन ने जड़ी-बूटियों पर आधारित चिकित्सा पद्धति का विकास करके कम खर्च में ही अपनी आबादी को अच्छा स्वास्थ्य देने में सफलता प्राप्त की है। आधुनिक चिकित्सा पद्धति भले ही इन जड़ी-बूटियों पर आधारित प्राचीन उपचार पद्धतियों की भर्त्सना करती हो लेकिन यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि प्रयोगशालाओं में रासायनिक विधियों से तैयार इन दवाओं में अनेक गुणकारी तत्वों की जानकारी सर्वप्रथम जड़ी-बूटियों के माध्यम से ही हुई थी।

ल्हासा में स्थापित तिब्बती चिकित्सा संस्थान में चीनी आयुर्वेद से सम्बन्धित अनेक अलभ्य पुस्तकें सुरक्षित हैं। एक विशेषज्ञ के अनुसार चीन में लगभग ५००० जड़ी-बूटियाँ इलाज के काम में प्रयुक्त हो रही हैं। आधुनिक शोध उपकरणों की चीन ने अपनी जड़ी-बूटी कोष में निरन्तर अभिवृद्धि की है। 'वर्मवुड' नामक जड़ी से चीनी आयुर्वेदज्ञों ने 'चिंग हाओस्' नामक दवा निकाली जो मलेरिया रोग में क्लोरोक्वीन से भी बेहतर उपयोगी पाई गयी है। चीन में सड़कों के दोनों ओर पेड़-पौधे लगाते समय यह ध्यान रखा जाता है कि चिकित्सा की दृष्टि से उपयोगी पौधे अवश्य लगाए जायें। स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता उन्हें एकत्र करने व उगाने में सतत् व्यस्त रहते हैं। वे इन औषधियों से काढ़ा, चूर्ण अवलेह बनाकर गाँव-गाँव घूमकर बाँटते रहते हैं। सन् ९६७१ से अब तक चीन सरकार तीन लाख स्वास्थ्य कार्यकर्ता प्रशिक्षित कर ग्रामीण क्षेत्रों में भेज चुकी है। हृदयाघात में साल्बिया मिल्टिरोइजा', ब्लड कैंसर में 'सिफेलोटेक्सस', सांस अवरोध में 'रियम टांकुटीकम तथा रेफेनस' का चीन में बड़ी सफलता से प्रयोग किया गया है। यह चीनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आयुर्विज्ञान ईसा से ३०० वर्ष पूर्व का है, जबकि भारत का आयुर्वेद का इतिहास इससे भी पुराना है।

चीन की तरह भारत को भी इस गरिमा के प्रति सचेत हो जाना चाहिए। इस देश की विशाल जनसंख्या के स्वास्थ्य की सुरक्षा और रोगों से बचाव के लिये महँगी चिकित्सा पद्धति कतई उपयोगी नहीं है। पीपल, तुलसी जैसी दिव्य वनौषधियों की हमारे यहाँ पूजा की जाती रही है। इनकी रोग निवारक क्षमता के अतिरिक्त भी इनमें कई ऐसे गुण हैं, जो मनुष्य के सर्वांगीण विकास में सहायक हो सकते हैं। जटामाँसी, पीली कनेर, सर्पगंधा, गुग्गल, हरिद्रा, दारुहल्दी जैसी औषधियों पर विशद् अनुसंधान किया गया है एवं इसके फलदायी परिणाम सामने आये हैं। शरीर औषधि अनुसंधान परिषद् के निर्देशक डा० पी० एन० वी० कुरुप के अनुसार अब भारतीय जड़ी-बूटियों से ऐसी दवाओं को बनाने में सहायता मिल सकने की सम्भावना है, जो असाध्य रोगों को ठीक कर सके।

आयुर्वेद की प्रतिष्ठा अक्षुण्ण है। आवश्यकता मात्र उसे आधुनिक परिपेक्ष्य में प्रस्तुतीकरण की है। पिछले दिनों अमेरिका के एक विद्यार्थी ने पूना आयुर्वेद कालेज से आयुर्वेद में स्नातक की उपाधि ली है। प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त इस प्रतिभाशाली वैज्ञानिक ने आयुर्वेद के इस महान स्वरूप को विश्वव्यापक बनाने का संकल्प लिया है। रूस के राष्ट्रपति लियोनिडब्रेजनेव के हृदयाघात के उपचार के लिये भारत से ही आन्ध्र प्रदेश के एक जड़ी-बूटी विशेषज्ञ द्वारा 'सुनुम-ए-ए-मुखरीफ ए स्तावत' नामक जड़ी-बूटी भेजी गयी थी।

यह विज्ञान चिर-प्रतिष्ठित ।चेकित्सा विज्ञान है। बड़े सुनिश्चित एवं मजबूत आधारों पर खड़ी यह पद्धति प्रकृति के अनुकूल जीवनचर्या को प्रधानता देती है। हमारे चारों ओर पायी जाने वाली इन दिव्य वनौषधियों के उपयोग को यदि बढ़ावा दिया जा सके तो एक वैकल्पिक जीवन दर्शन एवं पीड़ित मनुष्यता के लिए समग्र चिकित्सा प्रणाली का प्रतिपादन किया जा सकता है। आर्थिक दृष्टि से यह पद्धति कर्म खर्च की भी है और हानि रहित भी। रोग निवारण में कुछ समय भले ही अधिक लगे, पर प्रतिकूल परिणाम सामान्यतया इसके नहीं होते। जीवनी शक्ति संवर्धन एवं जैविक वातावरण के अनुकूल ही शरीर का व्यवस्था का सुनियोजन इन औषधियों का उद्देश्य है। आध्यात्मवादी दर्शन यही है। आज इसी को अपनाये जाने की नितान्त आवश्यकता है।

नैसर्गिक जीवन अपनायें—स्वस्थता बढ़ायें

प्रख्यात चिकित्सा शास्त्री 'डॉ० जी० सी० जारविस' अपनी पुस्तक 'नेचर एज ए हीलर' में लिखते हैं कि 'मुझे यह देखकर भारी आश्चर्य हुआ कि मनुष्येत्तर जीव अपनी अन्तःप्रेरणा द्वारा रोगमुक्ति के लिए प्राकृतिक उपचार के नियमों का उपयोग करते हैं। वे बिना भूल किये यह अच्छी तरह जानते हैं कि कौन-सी जड़ी-बूटी किस बीमारी को दूर करेगी तथा प्राकृतिक साधनों पर निर्भर रहकर तथा आहार संयम का पालन करते हुए किस तरह आरोग्य की प्राप्ति सम्भव है ? बीमार पड़ने पर वे प्राकृतिक उपचारों द्वारा कुछ ही समय में रोगमुक्त हो जाते हैं। वे प्रकृति प्रदत्त औषधियुक्त पौधों, जड़ी-बूटियों तथा शुद्ध वायु एवं जल द्वारा अपना इलाज करते हैं।

डॉ० जारविस ने कितने ही प्राणियों का उदाहरण प्रस्तुत किया है। पेरू पक्षी द्वारा अपने बच्चों तथा स्वयं को ठण्डक से बचाने के लिए शरीर को गरम रखने वाली मसालों की पत्तियों का प्रयोग किया जाना इस बात का परिचायक है कि वह भलीभांति यह जानता है कि ठण्डक से रक्षा किस तरह की जा सकती है ? साँप के काटने पर नेवले जैसे कितने ही जीव विशिष्ट प्रकार की जड़ को चबाकर विषाक्त प्रभाव को दूर करते हैं। बुखार से ग्रस्त पशु शीघ्र ही हवादार जगह की खोज में जिसके निकट पानी की सुविधा हो, दौड़ते हैं। वे बिना कुछ खाये शान्त पड़े रहते हैं तथा बारम्बार पानी पीते हैं, जब तक निरोग नहीं हो जाते। गठिया के रोग से प्रभावित पशु खुली धूप की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवनदायी किरणों का सेवन करते हैं और पूर्ण स्वस्थ हो जाते हैं।

प्रकृति के नियमों का पालन करते हुए किस तरह स्वस्थ और निरोग रहा जा सकता है, यह बुद्धिहीन प्राणी अच्छी प्रकार जानते हैं। यही कारण है कि वे यदा-कदा बीमार पड़ते हैं तो शीघ्र ही संयमित दिनचर्या अपनाकर निरोग हो जाते हैं। फिर मनुष्य जैसा स्वस्थ, समझदार, सृष्टि का सबसे अधिक बुद्धिमान प्राणी क्योंकर बीमार पड़ता है, आधि-व्याधियों से ग्रसित होकर क्यों रोता कलपता है ? अन्तर एक ही है—कृत्रिम दिनचर्या के कारण ही वह अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक बीमार पड़ता है।

विज्ञान एवं टेक्नालॉजी के विकास के साथ-साथ मनुष्य के जीवन क्रम में कृत्रिमता का समावेश होता गया। उसकी वह प्रकृति प्रदत्त क्षमता जाती रही, जो अन्य जीवों को भी प्राप्त है तथा जिसके सहारे वे स्वस्थ एवं निरोग जीवन का लाभ लेते हैं। कृत्रिम दिनचर्या तथा असंयम ने अनेकों प्रकार के रोगों को जन्म दिया। ऐसे कितने ही रोग उत्पन्न हुए, जिनका पहले कभी नामोनिशान नहीं था।

आज भी अनेकों जातियाँ ऐसी हैं जो तथाकथित सभ्यता के प्रभाव से दूर हैं। प्रकृति का सुरम्य आँचल उनका घर है। आधुनिक सुविधाएँ उन्हें उपलब्ध नहीं हैं तो भी वे पूर्ण निरोग और स्वस्थ रहती तथा मस्ती भरी जिन्दगी जीती हैं। अफ्रीका के आदिवासी प्रतिकूलताओं से जूझने वाले एस्किमो, हिमालय के बर्फीले क्षेत्र में रहने वाले पहाड़ी तथा अमेरिकी रेड इण्डियन्स जैसी कितनी ही जातियाँ हैं, जो आज की औद्योगिक सभ्यता से बहुत दूर हैं पर इन जातियों का अध्ययन करने वाले विशेषज्ञों को घोर प्रतिकूलताओं एवं अभावों में रहते हुए भी उनके उत्तम स्वास्थ्य, बलिष्ठ काया एवं प्रसन्नचित मनःस्थिति को देखकर अचरज होता है। गहन मंथन द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि स्वास्थ्य एवं जीवट एक ऐसा उपहार है, जो प्रकृति के निकट रहकर उसके नियमों के अनुरूप चलकर प्राप्त किया जा सकता है।

एलोपैथी दवाओं के आविष्कारों ने रोगों की शृंखला में कितनी ही नवीन कड़ियाँ जोड़कर जनमानस के गिरते-स्वास्थ्य को और भी गिराया तथा बढ़ते रोगों को और बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। तब चिकित्सा विज्ञान की पहुँच भी शरीर के सूक्ष्म परतों तक नहीं थी। एलोपैथी की तेज मारक तथा तात्कालिक राहत देने की सामर्थ्य को देखकर आरम्भ में उसे एक वरदान समझा गया। रोग निवारण एवं स्वास्थ्य संवर्धन के लिए अन्धाधुन्ध उनका प्रयोग शुरू हुआ। वरदान अभिशाप तब सिद्ध हुआ जब यह पता चला कि इन दवाओं के 'साइडएफेक्ट' अत्यन्त घातक हैं तथा कितने ही गम्भीर रोगों को जन्म देते हैं। शरीर की जीवनी शक्ति इनके प्रयोग से घटती जाती है। विश्व के मूर्धन्य चिकित्साशास्त्रियों का ध्यान एलोपैथिक दवाओं से उत्पन्न होने वाले दुष्प्रभावों की ओर अब आकर्षित हुआ है। सम्बद्ध विषय पर गम्भीरता से खोज-बीन करने के लिए चिकित्सा जगत की एक नई शाखा विकसित हुई है, जिसे 'आइट्रोजेनिक मेडिसिक' कहते हैं, जो इन दवाओं से उत्पन्न होने वाले रोगों का अध्ययन विश्लेषण करती तथा निकले निष्कर्षों से चिकित्सकों को अवगत कराती है।

तत्काल राहत के लिए ली जाने वाली ऐलोपैथिक दवाओं के हानिकारक प्रभावों से प्रायः अधिकांश व्यक्ति अपरिचित होते हैं। कितनी दवायें रक्त, लिम्फ तथा अन्तःरस (इण्टर स्टीशियल फ्लुइड) में रहती हैं। वे रक्त-मस्तिष्क अवरोधक और लासेन्टल अवरोधक को पार नहीं कर पातीं पर उनमें से जो इन सुरक्षात्मक परतों को पार कर जाती हैं, वे गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। 'सल्फोनेमाइड ग्रुप' की दवाएँ रक्त में जाकर 'बिलीरुविन' पदार्थ को विस्थापित कर देती हैं। नवजात शिशुओं पर इसकी भयंकर प्रतिक्रिया 'कर निक्टरस'—एक प्रकार का पीलिया रोग के रूप में उत्पन्न होती है। 'क्लोफाइब्रेट जैसी दवाएँ गर्भवती स्त्री को देने पर, भ्रूण में एकत्रित होकर उसे नुकसान पहुँचाती हैं। भ्रूण की स्थिति अत्यन्त नाजुक होती है। उसकी इन्जाइम प्रणाली इतनी सशक्त नहीं होती कि स्वतः जहरीली दवाओं को निष्कासित कर सके। फलतः जन्म-जात शिशुओं में अनेकों तरह के शारीरिक रोग पैदा होते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य ६.१७

'साउथ अफ्रीका मेडीकल जनरल में प्रकाशित एक लेख के अनुसार 'नानआयोनाइज्ड ड्रग्स' जैसे कि—एल्कोइलिक एल्केलायड्स, एनेस्थेटिक गैसिज, बारबीचुरेट्स क्लोरेम्फेनिकौल, क्लोर प्रोपेपाइड, सैलिसिलेट्स तथा सल्फोनामाइड्स आदि दवाएँ माता के रक्त से गर्भस्थ शिशु तक नाल के माध्यम से तथा नवजात शिशु को माता के दूध के द्वारा पहुँच जाती हैं। इनसे गर्भस्थ शिशु विकलांग हो सकते हैं तथा नवजात शिशु को अनेकों प्रकार के आएट्रोजेनिक रोग हो सकते हैं।

'अमेरिकन जर्नल ऑफ आब्सटेट्रिक्स एण्ड गाइनेकोलाजी' में प्रकाशित एक लेख "पैसेज आफ ड्रग्स ए क्रास प्लैसेन्टल बैरियर" तथा 'जर्नल ऑफ अमेरिकन मेडीकल ऐसासियेशन' के सित० १९७० अंक में प्रकाशित लेख 'स्टडीज आन दी डिटेक्शन ऑफ एडवर्स ड्रगरिएक्शन इन द न्यूबार्न' के अनुसार ६७ गर्भवती महिलाओं पर अनुसंधान किया गया। अध्ययन में यह पाया गया वे प्रसूति के कुछ सप्ताह पूर्व अनेकों प्रकार की दवाओं का सेवन करती रहीं। ६० प्रतिशत अन्टासिड्स, ७६६ प्रतिशत ऐस्पीरिन तथा ६६ प्रतिशत विटामिन्स का उन्होंने प्रयोग किया। परीक्षण के दौरान यह पाया कि जिन नवजात शिशुओं में प्लेटलेट डिसफक्शन (रक्तस्राव सम्बन्धी एक रोग) का व्यतिरेक हुआ था—उनकी माताओं ने प्रसूति से एक सप्ताह पूर्व तक डेढ़ ग्राम एस्पीरिन दवाई ली थी।

'फूड एन्ड ड्रग ऐडमिनिस्ट्रेशन' संस्था ने अमेरिका में प्रकाशित बुलेटिन अक्टूबर १९७७ के अंक में 'फीटल एल्कोहलसिनड्रोम' नामक लेख में चौकाने वाले तथ्यों का रहस्योद्घाटन किया है कि गर्भावस्था में अधिकांश स्त्रियाँ ऐसे टानिकों का प्रयोग करती हैं, जिनमें एल्कोहल की मात्रा अधिक होती है। उनका अत्यन्त हानिकारक प्रभाव जन्मने वाले बच्चे पर पड़ता है। पचास से अधिक प्रतिशत केसों के अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि नवजात शिशु जन्मजात 'कार्डियल सेप्टल डिफेक्ट्स' (हृदय कपाट में छिद्र) तथा 'हिमान्जियोमाक्स' जैसे रोगों से ग्रसित थे। उनमें से कितने ही सिर और चेहरे पर होने वाली विकृतियों—उदाहरणार्थ 'माइक्रोसिफेली, पलकों में 'फिसर्स', ऊपरी होठ में 'वर्टीकल ग्रूव का चपटा होना' आदि से प्रभावित थे। यह भी देखा गया कि ऐसे बच्चों में 'आई० क्यू०' सामान्य की अपेक्षा ३५ से ४० पोइन्ट कम था।

दवाओं से उत्पन्न होने वाले सर्वाधिक हानिकारक दुष्प्रभाव इस प्रकार बताये गये हैं—ब्लड डिसक्रेजियाज, कार्सिनोजेनेसिटी, कार्डियोवास्कुलर टाक्सिटी, जन्मजात विकलांगता, हेपेटोटाक्सिसिटी तथा न्यूरोटाक्सिटी'। सामान्यतया दवाएँ शरीर के किसी अङ्ग विशेष को ही अपने दुष्प्रभाव के चपेट में नहीं लेतीं वरन् एक साथ कई अंगों को ग्रसित करती हैं। लम्बे समय तक यदि दर्दनाक दवाएँ ली जायँ तो उनकी लत पड़ जाने का एक अतिरिक्त खतरा और जुड़ जाता है, जो किसी प्रकार के नशा सेवन से कम घातक नहीं। 'एस्पीरिन', 'फेनासिटीन', नींद की गोलियाँ जैसी दवाएँ इस श्रेणी में आती हैं। 'लान्सेट' पत्रिका में प्रकाशित लेख 'एनलजेसिक ए० यूज इन साइकीआइट्रिक पेशेन्ट्स' में इस तथ्य पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है तथा यह कहा गया है कि इन दवाओं के सेवन से शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही प्रकार की विकृतियाँ पैदा होती हैं। 'एम्फीटासमीन' नामक दवा ने चिकित्सा जगत में १९३० में जीवनीशक्ति वर्धक (एनालेप्टिक) तथा आनन्ददायक (यूफोरिक) दवा के रूप में प्रवेश किया। यूरोप, अमेरिका आदि पश्चिमी देशों में इसका अत्याधिक प्रयोग चिकित्सकों की अनुमति से किया जाने लगा। पर यह दवा अन्य नशीली दवाओं से कहीं अधिक घातक साबित हुई। 'क्लिनीकल टाक्सीकालीजी' पत्रिका के मार्च, १९७९ में प्रकाशित एक लेख के अनुसार इस वर्ग की दुवाओं ने रोगी को आराम पहुँचाने की अपेक्षा नुकसान अधिक पहुँचाया। सेन्ट्रल नर्वससिस्टम को उत्तेजित करके इस वर्ग की दवाएँ कितने ही प्रकार की विकृतियों को जन्म देती हैं।

एन्टीबायोटिक दवाओं का धड़ल्ले से प्रयोग कुछ समय पूर्व तक होता रहा है पर विश्व के मूर्धन्य चिकित्साशास्त्रियों ने चेतावनी दी है कि इन्हें आपत्तिकालीन परिस्थितियों में ही लेना चाहिए। इनके निरन्तर सेवन से लीवर में अनेकों प्रकार की विकृतियाँ आ जाती हैं। बहुचर्चित 'एनीमियाँ' की बीमारी प्रायः उन्हें अधिक होती है, जो एण्टीबायोटिक दवाओं का प्रयोग बहुधा करते रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एलोपैथिक दवाओं से उत्पन्न होने वाले खतरों को देखते हुए यह अधिक श्रेयस्कर जान पड़ता है कि जहाँ तक हो सके, उनके सेवन से बचा जाय तथा आहार-विहार के संयम का राजमार्ग आरोग्य प्राप्ति के लिए अपनाया जाय। कुछ दशकों पूर्व तक प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली भी अत्यन्त उपयोगी तथा निरापद थी पर जिन पंचतत्वों के माध्यम से प्राकृतिक चिकित्सा की जाती है, वे भी आज के संव्याप्त प्रदूषण के कारण विषाक्त हो गये हैं। अतएव उपचार में सफलता मिलेगी, यह संदिग्ध है। वर्तमान परिस्थितियों में यदि दवा लेना आवश्यक ही हो तो जड़ी-बूटी से युक्त औषधियों का सेवन कहीं अधिक श्रेष्ठ है। प्रकृति के प्रांगण से सहज ही उपलब्ध ये निरापद औषधियाँ मूलतः जीवनीशक्ति वर्धक हैं। यदि जनमानस को इनके उपयोग की ओर मोड़ा जा सके तो स्वास्थ्य जगत की यह सबसे बड़ी क्रान्ति होगी।

स्वास्थ्य की कुंजी अपनी मुठ्ठी में

प्रकृति ने मानवी शरीर की संरचना ऐसी कलाकारिता के सहारे की है कि उसै चिरकाल तक निरोग और दीर्घजीवी बनाये रखा जा सके। बीमार पड़ना शरीर का स्वभाव नहीं है। जब सृष्टि के अन्य प्राणी मात्र प्रकृति-प्रेरणा का अनुसरण करके जीवन जी लेते हैं तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य को ही रुग्णता और दुर्बलता घेरे रहे। यदि संयम बरता जाय और सुरक्षा के सामान्य नियमों का पालन किया जाय तो शारीरिक और मानसिक अधिव्याधियों से सहज ही बचा जा सकता है। स्वास्थ्य सम्वर्धन और रोग निवारण पर जितना ध्यान दिया जाता है, उससे कम यदि संयम बरतने, अपव्यय को रोकने, अनावश्यक बर्बादी बचाने और निरर्थक दबावों को कम करने की सावधानी बरती जाय तो आरोग्य का चिरस्थायी आनन्द सहज ही प्राप्त किया जा सकता है।

शरीर पर व्यर्थ का दबाव न आने दिया जाय और उसकी समुचित साज-सम्हाल की जाती रहे, तो यह स्थूल-शरीर अनेक अमूल्य अनुदानों से हमें आजीवन समृद्ध, सुखी बनाये रख सकता है। इस तथ्य से अनभिज्ञ रहने पर, स्थूल शरीर रूपी सेवक की न्यूनतम आवश्यकताओं की भी उपेक्षा करने का अर्थ है—जीवन को भार बना लेना, इस सेवक की अवज्ञा और विद्रोह से सन्तप्त और सुविधाओं से वंचित बने रहना तथा लगभग आधी जिन्दगी बीमारी को भेंट कर अकाल मृत्यु के लिए विवश होना। इस तथ्य को जितनी जल्दी ही समझ लिया जाए, उतना ही अधिक शरीर में छलक रहे जीवन-रस का लाभ लिया जा सकता है।

मनुष्य शरीर जिन छोटे-छोटे जीवकोशों से बना है, वे प्रतिक्षण टूटते रहते हैं और नए स्वस्थ कोशों का निर्माण भी उसी क्रम में निरन्तर चलता रहता है। मनुष्य की त्वचा के कोश ५ दिन में नए बदल जाते हैं। ८० दिन में सम्पूर्ण शरीर की प्रोटीन बिल्कुल नई हो जाती है। पुरानी का पता भी नहीं चलता कि सड़-गल कर कहाँ चली गई ?

डा० केनिथ रोंसले ने अनेक सूक्ष्म प्रयोगों के बाद यह प्रतिपादित किया कि यदि मनुष्य शरीर के कोशों में कोई गड़बड़ी न आये, तो गुर्दे २६० वर्ष और हृदय ३०० वर्ष तक जीवित रखे जा सकते हैं। इसके बाद उन्हें बदला जा सकता है। हृदय प्रतिरोपण के प्रयोग तो बहुत ही अधिक सफल हुए हैं। इसके अतिरिक्त चमड़ी, फेफड़े और हड्डियों को तो क्रमशः १००० वर्ष, १५०० वर्ष और ४००० वर्षों तक भी जीवित रखा जा सकता है।

जीव-कोशों को विकृत होने से रोककर उन्हें पुनः पोषण देकर मनुष्य को दीर्घजीवी बनाया जा सकता है। अध्यात्म की भाषा में जिसे कायाकल्प कहते हैं, वह पुराने शरीर में ही इन जीविकोशों की नई जिन्दगी आरम्भ करा देने का ही नाम है, जो योग और आयुर्वेद की सम्मिलित प्रक्रिया से पूरा हो सकता है। च्यवन ऋषि का वृद्ध शरीर अश्विनी कुमार की चिकित्सा से इसी प्रक्रिया से नवयौवन सम्पन्न हुआ था। राजा ययाति को भी पुनः यौवन इसी तरह प्राप्त हुआ था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति की कमी, कलपुर्जों की घिसाई, संचित पूँजी का खर्च, नये उत्पादन में शिथिलता, कचरे-दूषण में निरन्तर वृद्धि, इनका परिणाम ही शरीर का मरण होता है। जीवकोशों में चलती रहने वाली रासायनिक प्रक्रिया में विषाक्त पदार्थों का अनुपात बढ़ जाता है और प्रोटीन का चालीस प्रतिशत भाग कोलाजेन में बदल जाता है। त्वचा के नीचे का कोलाजेन कठोर हो जाने से चमड़ी पर झुर्रियाँ पड़ने लगती हैं। इस जराजीर्णता से बचने के लिए शारीरिक-मानसिक शक्तियों का अपव्यय रोककर सीधा, सरल, सौम्य जीवनक्रम अपनाना ही सर्वोत्तम औषधि है। अपव्यय रोका जा सके तो ढलती आयु में भी शिथिलता से बचे रहा जा सकता है।

भारतीय मनीषियों द्वारा प्रतिपादित यह तथ्य अब आधुनिक शरीरशास्त्रियों द्वारा भी स्वीकृत हो चला है कि शरीर को नियमित-सन्तुलित रखे रहना ही शक्ति का सही स्रोत एवं विधि है। विश्व विख्यात शरीर क्रियाविद् क्लाड बर्नार्ड ने "नियमन" को ही चिकित्सा का एकमात्र उद्देश्य निरूपित किया है। उनका कहना है कि समस्त जीवन क्रियाएँ एक निश्चित सीमा में ही गतिशील रहती हैं। सामान्य अवस्था में तो देह की जीवन क्रियाएँ इस सीमा में 'नियमित' रहती ही हैं। विकारग्रस्त अवस्था में भी इसी 'नियमित' सीमा के भीतर ही जीवन क्रियाएँ कार्यशील रहती हैं अर्थात् विकारग्रस्त अवस्था बहुत दिनों तक नहीं टिक सकती। विकारों की सफाई के बाद स्वतः ही सामान्य अवस्था आ जायेगी। यही 'नियमन' की धारणा है। इस प्रकार शरीर अपना 'नियमन' स्वतः ही करते रहने में पूर्ण समर्थ हैं। वातावरण के दूषण और आहार-विहार की अव्यवस्था-असन्तुलन को दूर करना तथा इनके कारण उत्पन्न शरीरिक असन्तुलन के स्वतः ही क्रमशः नियमित हो जाने तक प्रतीक्षा करना ही वास्तविक चिकित्सा है।

प्रख्यात शरीर क्रिया विज्ञानी वाल्टर कैनन ने "विजडम ऑफ द बाडी" नामक ग्रन्थ में इसी तथ्य का स्पष्ट विवेचन किया है कि डाक्टर के मुख्य कर्तव्य दो हैं—(१) इस तथ्य को भली-भाँति स्मरण रखना कि रोगी की देह-क्रिया, जो इस समय अस्वाभाविक और विकृत रूप में कार्यशील है, नियमन-प्रणाली के अनुरूप स्वतः ही सामान्य हो जाएगी तथा इस बात की जानकारी रखना कि अनुमानतः कितने समय में रोगी की देह-क्रिया स्वभाविक हो जाएगी। (२) रोगी में 'आशा और उल्लास' का संचार करना, ताकि अपेक्षित समय तक रोगी बेचैनी से मुक्त रहे अथवा बेचैनी अधिक बढ़े नहीं। इसके लिए ही आवश्यकतानुसार दवाएँ आदि दी जा सकती हैं।

डाक्टर वाल्टर कैनेन के अनुसार जब ऐसा लगे कि रोग स्वाभाविक नियमन-प्रणाली के परे है, तो उपचार द्वारा उसे नियमन की सीमा में ले आना चाहिए। इसके आगे का काम रोगी का शरीर स्वतः ही कर लेगा। हाँ, विघातक वातावरण से मुक्ति आवश्यक है क्योंकि मनुष्य का पर्यावरण से घनिष्ठ सम्बन्ध है। पर्यावरण-प्रदूषण, रेडियो-सक्रियता और घातक शोरगुल के दुष्परिणाम आज पूरी दुनियाँ में चर्चा का विषय बने हुए हैं। दूषित, विकृत वातावरण में रहते हुए शरीर का अव्यवस्थित जीवन क्रियाओं को नियमित कर पाना अति दुष्कर हो जाता है।

आहार-विहार के नियमन-सन्तुलन द्वारा स्थूल शरीर की शक्तियों को जागृत, गतिशील रखे रहा जा सकता है और उससे बहुविधि महत्वकार्य सम्पादित कराये जा सकते हैं। योगवशिष्ठ में इसीलिये इसे देह नगरी को अतिरम्या और सर्वगुणान्विता कहा गया है। महर्षि वशिष्ठ भगवान राम से तत्व-दर्शन का उपदेश करते हुए कहते हैं—

"रम्येयं देहनगरी राम सर्व गुणान्विता।
अज्ञेस्येयमनन्तानां दुःखानां कोशमालिका।
ज्ञस्यत्वियमनन्तानां सुखानां कोशमालिका।"

—योगवाशिष्ठ ४। २३ । ४ और १८

अर्थात् हे राम ! यह देह नगरी बड़ी सुम्य और गुणसम्पन्न है। यह ज्ञानियों के लिए सुख और अज्ञानियों के लिए दुःख देने वाली है।

शरीर की स्वाभाविक शक्तियों को विकसित करते रहने पर जहाँ इसकी विलक्षण सामर्थ्य प्रकट होती है, वहीं आहार-विहार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असंयम-असन्तुलन से उसकी सामान्य क्रियाशीलता का भी ह्रास होता है।

शरीर की स्वाभाविक सामर्थ्य का वर्णन करते हुए विख्यात लेखक व चिकित्साविद् डाक्टर विलियम ली हावर्ड ने कहा है कि मानव-शरीर में भी एक भी ऐसा अंग-उपांग नहीं है, जो स्वयं ही अपना हित किसी बड़े से बड़े डाक्टर या चिकित्सा-विशेषज्ञ से अधिक न कर सकता हो। दवाएँ और नशीली वस्तुएँ शरीर के अनुपम अवयवों बेतार के स्टेशनों को तोड़-फोड़ डालती हैं। इस तोड़-फोड़ के अधिक हो जाने पर उनकी मरम्मत असम्भव हो जाती है।

आस्टियोपैथी नामक चिकित्सा-विधि का आविष्कार उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रसिद्ध अमरीकी डाक्टर एन्ड्रूज टेलर स्टिल ने किया। इस चिकित्सा पद्धति का पहला विद्यालय सन् १८७४ में अमरीका के कर्कस—मिले मस्सूरी में खुला था। आज अमरीका में इसके बड़े-बड़े अस्पताल हैं।

आस्टियोपैथी के आधारभूत सिद्धान्त ही यह हैं कि शरीर में आत्मरक्षा की शक्ति पर्याप्त है। शारीरिक यन्त्र रचना अपने आपमें परिपूर्ण है। इस यन्त्र रचना की अव्यवस्था ही शरीर में रोग पैदा करती है। शरीर के एक अंग की यन्त्ररचना में गड़बड़ी और कार्यक्षमता में क्षति आने से शरीर के नाड़ी-संस्थान में अव्यवस्था फैलती है और रक्त-संचालन की क्रिया प्रभावित होती है। आस्टियोपैथी में शारीरिक यन्त्र रचना की ही देखभाल की जाती है और उन्हें अति क्षति पहुँचाने वाली गलतियाँ सुधारी जाती हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा का भी आधार यही सिद्धान्त है कि शरीर अपने आप में एक अद्वितीय तथा सर्वाङ्गपूर्ण यन्त्र है। रोगों का कारण जाने में या अनजाने में प्रकृति के नियमों का उल्लघंन है। यह उल्लंघन विचार, श्वसन-क्रिया, भोजन, पेय, वस्त्र, सेक्स, श्रम किसी से भी सम्बन्धित हो सकता है। प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त के अनुसार रोगमुक्ति शरीर के अन्दर से होने वाली एक क्रिया है। मानव-देह में ही वह शक्ति निहित है, जो शरीर के भीतर जाम कचड़े या विजातीय द्रव्य को शरीर से बाहर निकाल फेंकती हैं।

शरीर की समुचित देखभाल की जाए, तो सुदीर्घ स्वस्थ जीवन सहज ही जिया जा सकता है और प्रकृति द्वारा प्रदत्त असंख्य अनुदानों से न केवल स्वयं ही धन्यता की अनुभूति की जाती है अपितु औरों को भी उनसे लाभान्वित करने का पुण्य प्रयोजन पूरा होता रह सकता है।

अमेरिकन मेडिकल ऐसोसियेशन तथा जेरियाट्रिक्स सोसायटी के भूतपर्व अध्यक्ष डा० एडबर्ड बोर्ड के अनुसार मनुष्य इन सात भूलों से बचकर विश्वासपूर्वक शतायु हो सकता है।

(१) आहार सम्बन्धी मर्यादाओं का उल्लंघन। (२) अत्यधिक या अत्यल्प परिश्रम। (३) अस्त-व्यस्त दिनचर्या। (४) नशेबाजी। (५) काम-वासना सम्बन्धी असंयम। (६) अधिक मानसिक तनाव। (७) स्वच्छता-शुचिता की उपेक्षा।

जोन्स हापकिन्स विश्वविद्यालय के विद्वान डा० रेमण्ड पर्ल की शोधों का निष्कर्ष यह है कि आहार-विहार सम्बन्धी त्रुटियों के परिणामस्वरूप शरीर की कोशाओं में धीरे-धीरे दुर्बलता आती है और टाक्सिन नामक विष वृद्धावस्था तक पहुँचते-पहुँचते शरीर से उत्पन्न होने लगता है। यह टाक्सिन कोशों को धीरे-धीरे विनिष्ट करता है। यदि इस विष की रोकथाम की जा सके तो बुढ़ापे से छुटकारा मिल सकता है। इस विश्वविद्यालय के चिकित्साशोधार्थियों ने मेढ़कों को चिरयुवा बनाए रखने का सफल परीक्षण भी किया है।

पिछले दिनों सोवियत रूस के सर्वाधिक आयु वाले व्यक्ति १६२ वर्षीय श्री शेराली और उनकी ६४ वर्षीय पत्नी के स्वास्थ्य, सक्रियता और शक्ति का रहस्य पूछे जाने पर उन्होंने सादे रहन-सहन और सरल निश्चिन्त मनःस्थिति को ही इसका कारण बताया।

शरीर के इन रहस्यों से प्राचीन भारतीय मनीषी परिचित थे। इसीलिए यहाँ सदा आहार-विहार के संयम पर बल दिया गया और सुव्यवस्थित आश्रम-व्यवस्था द्वारा सामाजिक जीवन में भी इन नियमों को भली-भाँति लागू किया जाता रहा। सात्विक आहार-विहार से ही रक्त शुद्ध रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तामसिक भोजन से स्थूल शरीर में फैला यह स्वच्छ रक्त-सरोवर भी अशुद्ध हो, अनेक रोगों का केन्द्र बनाता है। आहार के साथ ही विहार का दूषण भी रक्त को दूषित करता है। असन्तुलन, विक्षोभ, क्रोध, भय, शोक, हताशा जैसी मनःस्थिति का प्रभाव धीरे-धीरे रक्त को विषाक्त बनाता चलता है और तब वह विजातीय द्रव्यों रोगाणुओं के अनुकूल हो उठता है, यह मौका पाकर बीमारियाँ चढ़ाई करने से भला क्यों चूकेंगी ? आवेशों-विक्षोभों से मात्र रक्त ही दूषित नहीं होता, अपितु इन अनभीष्ट मनोवेगों का प्रत्यक्ष और गहरा प्रभाव स्नायुकोशों, नाड़ी-तन्तुओं पर पड़ता है। वे दुर्बल, अशक्त तथा शिथिल होते जाते हैं।

काया को रुग्ण और दुर्गति ग्रस्त न बनायें

स्रष्टा ने इस संसार में जितने भी प्राणी बनायें हैं, उन सभी को ऐसा शरीर, ऐसा अवसर एवं ऐसा साधन भी प्रदान किया है कि वे सभी सुख-शान्ति पूर्वक रह सकें और जितना आयुष्य मिला है, उसे पूरी अवधि तक निरोग रहकर जी सकें। अपवाद तो सर्वत्र देखे जाते हैं, पर सामान्य नियम यही है। इस आधार पर प्राणियों के अपने संसार चल रहे हैं।

आश्चर्य इस बात का है कि मनुष्य ही क्यों इस सृष्टि-व्यवस्था से अलग हटकर रह रहा है, जबकि उसे अपेक्षाकृत और भी प्रसन्न और बलिष्ठ होना चाहिए था। जिन्हें मात्र प्रकृति प्रेरणा और उपलब्ध साधनों से ही गुजारा करते हुए काम चलाना पड़ता है, उनकी तुलना में मनुष्य की स्थिति कहीं अधिक अच्छी है। अन्यान्यों की अपेक्षा उसकी शरीर-संरचना में विलक्षणता है। ऐसे सुनियोजित हाथ किसी को नहीं मिले, जिनमें इतनी अँगुलियाँ, इतने मोड़ और इतने जोड़ हों। खड़े होकर चलना किसी को नहीं आता। इसके अतिरिक्त बोलने और सोचने के तन्त्र भी ऐसे हैं, जिनकी समता और किसी प्राणी के साथ नहीं होती। सहकारिता का, आदान-प्रदान का ऐसा विलक्षण स्वभाव उसे मिला है, जिसके सहारे वह परिवार बसाने और समाज बनाने में समर्थ हो सके। प्रगति क्रम इतना आगे बढ़ सकने की सुविधा उसे निजी पुरुषार्थ से नहीं मिली है, ईश्वर-प्रदत्त ऐसे उपहार अनुदान भी उसके साथ हैं जो एकाकी उसी के हिस्से में आये हैं। यदि ऐसी विलक्षण काया हस्तगत न हुई होती, तो कदाचित, वह भी अपने तथाकथित पूर्वजों की श्रेणी में ही रह रहा होता। चिंपांजी, गोरिल्ला जैसे वन मानुषों की तरह आदिम काल जैसी स्थिति में रहकर ही किसी प्रकार दिन व्यतीत कर रहा होता।

स्रष्टा के अनुदानों का उसने भौतिक सुविधा साधन बढ़ाने में समुचित उपयोग भी किया है। प्रकृति की उसने विनम्र मनुहार भी की है और लड़-झगड़ कर अधिक हथियाने की चेष्टा भी, उसके अंचल में छिपे अनेकानेक रहस्यों को उसने इस-उस खिड़की में से ताक-झाँक लगाकर आश्चर्यजनक मात्रा में समेट-बटोर लिया हैं। आज बिजली, भाप, गैस जैसे सामान्य साधनों से होकर ईथर तरंगों, लेसर किरणों, अणु-विकरणों जैसे रहस्यों तक उसकी पहुँच दौड़ी है। फसल उगाने, खनिजों को खोद निकालने, जल, थल और नभ में द्रुतगामी वाहनों पर दौड़ लगाने, दूर श्रवण दूरदर्शन जैसी सिद्धियों का अधिष्ठाता बनने की सफलताएँ देखते ही बनती हैं। कला और साहित्य में उसकी प्रगति अद्भुत है। आजीविका कमाने, सुविधा सम्पन्न निर्वाह करने, समाज बनाने, शासन करने, युद्ध में प्रवीण होने जैसे अनेकानेक कौशल भी हस्तगत किये हैं। शिक्षा, चिकित्सा, परिधान जैसे अगणित सुविधा-साधनों के रहते मनुष्य अन्यान्य प्राणियों की तुलना में अधिक खिन्न विपन्न रहे तो समझना चाहिए कि कहीं कोई मौलिक भूल हो रही है, अन्यथा कोई सामान्य कारण ऐसा हो नहीं सकता, जिसके कारण सृष्टि का मुकुटमणि समझा जाने वाला इस प्रकार दीन-हीन मनःस्थिति और खिन्न-विपन्न परिस्थिति में पड़े रहकर दिन गुजारे।

आरोग्य प्रकृति प्रदत्त ऐसा अनुदान है, जो सभी प्राणियों को समान रूप से उलब्ध है। मनुष्य के पाशबन्धन में जो प्राणी नहीं बँधे हैं, उन्हें छोड़कर सभी पशु-पक्षी निरोग रहते और कलोल करते हैं। नियत समय पर मौत-बुढ़ापा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो सबको आता है। दुर्घटनाग्रस्त भी कारणवश होना पड़ता है पर आये दिन बीमार पड़ने जैसा त्रास किसी को भी नहीं सहना पड़ता। सभी गहरी नींद सोते, प्रसन्न वदन उठते और दिनभर कुदकते-फुदकते जिन्दगी का आनन्द लूटते हैं। एक मनुष्य ही है, जो आये दिन कराहता-कलपता है। दर्द, सूजन, जकड़न, तनाव, अपच, अवरोध उभार जैसी अनेकानेक शिकायतें लेकर हकीमों और दवाखानों में झक मारता फिरता है। दवा-दारू बेचारी क्या करे। उनकी औकात ही कितनी है ? कुछ क्षण जादू-चमत्कार दिखाने के अतिरिक्त उनमें से किसी में भी ऐसी क्षमता नहीं है, जो रोग की जड़ तक पहुँच सके और मूल-कारण यथावत् बना रहने पर भी रोग मुक्ति का वरदान दे सके। यही कारण है कि अस्पतालों, डॉक्टरों और नये-नये औषधि विज्ञापनबाजी के होते रहने पर भी सर्वसाधारण का आरोग्य दिन-दिन क्षीण होता चला जाता रहा है। हर नया दिन पुरानों से बुरा बीतता है। हर नयी पीढ़ी पुरानी से कमजोर होती है।

स्वास्थ्य सवंर्धन के निमित्त सरकारों से लेकर वैज्ञानिकों तक को बहुत चिन्ता है। बलवर्धक टॉनिकों से चमत्कारी गुण बताकर विज्ञापनबाज करोड़पति बन गये, किन्तु यथार्थता सर्वथा नंगी है। इस आधार पर किसी को भी खोया स्वास्थ्य वापिस लौटाने का अवसर नहीं मिला। टॉनिक-कैप्स्यूल निगलते रहने पर भी किसी का कोई भला नहीं हुआ। अन्धविश्वासों में बुरे किस्म की मूढ़-मान्यताएँ यह हैं कि दवाओं के सहारे खोया स्वास्थ्य पाया जा सकता है। इसी में एक कड़ी और भी जुड़ सकती है कि बीमारियों का कारण ग्रह-नक्षत्र, भूत पलीत या विषाणु कीटाणु हैं। यदि वे ही कारण रहे होते तो फिर किसी का भी उनसे बच निकलना कठिन था। वे इतने समर्थ हैं कि किसी को भी दबोच सकते हैं और किसी का भी कचूमर निकाल सकते हैं। उनके सामने बेचारी दवा-दारू की क्या बिसात ? किस बलबूते पर वे विषाणुओं को मारें—बात, पित्त, कफ से निपटें और ग्रह नक्षत्रों के विरुद्ध किस प्रकार मोर्चा ठानें। यदि वस्तुतः बीमारियों के कारण शरीर से बाहर अन्यत्र रहे होते और वे आक्रमण करके रोगी बनाते तो निश्चय ही उनकी पकड़ से एक भी पशु-पक्षी, जीव-जन्तु न बचा होता। जब आँठ-गाँठ कुम्यैत, चतुरता में कौए और चीते को मात देने वाले मनुष्य पर वे घात लगा सकती हैं, तो बुद्धिहीन, साधनहीन जीव-जन्तुओं को वे क्यों बख्शतीं। सबसे पहले वे उन्हीं का सफाया करके अपना पेट भरतीं, इसके बाद मनुष्य से लोहा लेने की मोर्चाबन्दी करतीं। इस रणनीति से तो बीमारियों समेत हर कोई परिचित है कि पहले दुर्बल पर हमला करना चाहिए। सरल काम में हाथ डालना चाहिए। बीमारियों को इतना भी पता न हो, यह हो ही नहीं सकता। ऐसी दशा में विचारणीय यह है कि बीमारियाँ मात्र मनुष्य पर ही हमला क्यों करती हैं, अन्य जीव-जन्तुओं को दबोचने में उनकी रुचि क्यों नहीं ?

तथ्यों तक पहुँचना हो तो आज या हजार वर्ष बाद इसी निष्कर्ष पर पहुँचना होगा कि प्रकृति कि अनुशासन के प्रति विद्रोह करके मनुष्य ने अपने सिर पर आफत मोल ली है। प्रकृति किसी को नहीं बख्शती। वन विनाश होगा तो वह अतिवृष्टि, अनावृष्टि-भूक्षरण, महामारी का दण्ड देगी। जीवनी शक्ति का नाश होगा तो प्रकृति का ब्रह्मास्त्र सीधे प्रतिकूलताओं से मोर्चा लेने वाली रण सेना पर पड़ता है और उनके कमजोर पड़ते ही बीमारियाँ आ घेरती हैं। जीवाणु तो हमारे अपने अन्दर भी हैं। फिर वे क्यों आफत नहीं मचाते। जब-जब भी उनसे छेड़खानी की जाती है, परावलम्बन पर जी रहे, पर मनुष्य के सहयोगी बनकर बसे हुए ये जीवाणु घातक एण्टीबायोटिक दवाओं से नष्ट होते हुए विकृति को जन्म दे जाते हैं। ऐसी व्याधियाँ विकास क्रम में अत्यन्त घातक बन जाती हैं और धीरे-धीरे मनुष्य को अपना गुलाम बना लेती हैं। आज की परिस्थितियों में जी रहे मनुष्य ने तो सचमुच मूर्खतावश इन बीमारियों को न्यौत बुलाया है, और आवभगत के साथ उन्हें अपना मेहमान बनाया है। मनुष्य कितना ही चतुर क्यों न हो, पर वह चतुरता ऐसी नहीं हो सकती जो प्रकृति को चकमा दे सकने में सफल हो सके। मनुष्य कितना ही बड़ा क्यों न हो, वह प्रकृति व्यवस्था से बड़ा नहीं हो सकता। मनमानी आपस में तो की जा सकती है, दुर्बलों को भी सताया जा सकता है, पर प्रकृति को परास्त करने में उस मनमानी को सफलता नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिल सकती। इसी को कहते हैं राई का पर्वत होना, चिनगारी का दावानल के रूप में प्रकट होना, बीज का वृक्ष बनना और खड्ड में गिरने का मजाक करते ही बेमौत मरना।

मनुष्य ने अनेकानेक आविष्कार किये हैं, और वे सभी एक से बढ़कर अद्‌भुत हैं। उनमें से चकित करने वाला बहुत बड़ा आविष्कार है—बीमारियों को जन्म देना और उन्हें अपनी ही काया में पाल-पोसकर दैत्य जितनी बलिष्ठ बनाना। यह आविष्कार वहाँ से आरम्भ होता है जहाँ अपने निर्वाह क्रम में से प्रकृति की विधि व्यवस्था को तोड़-फोड़ कर फेंक देने का दुस्साहस संजोया जाता है, आहार-विहार के क्षेत्र में जानबूझकर पग-पग पर अतिक्रमण उत्पन्न किया जाता है।

इसे दुबुद्धि का प्रथम दौर ही कहा जा सकता है, जिसके अनुसार मनुष्य सोचता है कि शरीर खिलौना है और उसके साथ किसी भी प्रकार खिलवाड़ की जा सकती है। उसे औंधा-सीधा किसी भी प्रकार झुनझुने की तरह बजाया जा सकता है और गेंद की तरह कहीं भी उछाला-पटका जा सकता है, ठोकर मारकर कहीं-से-कहीं पहुँचाया जा सकता है। यह समझना भूल है कि काया को प्रकृति अवस्था से छीनकर पूरी तरह अपना बना लिया गया है और उसके साथ वैसा ही व्यवहार करते रहने की छूट मिल गई है। यह अहमन्यता एक सीमा तक ही निभ सकती है। जब पेट में हवा भरकर बैल बनने के प्रयास करने वाले मेढक जैसा दुस्साहस अपनाया जायेगा तो निश्चय ही उसका बुरा नतीजा होगा। प्रकृति अनुशासन की उपेक्षा करके शरीर के साथ मनमानी करके धींगामुश्ती बरतने में मनुष्य ने पाया कम और खोया अधिक। अच्छा होता वह तथ्य को समझता, भूल अनुभव करता, वापस लौटता और निर्वाह-क्रम ऐसा बनाये रहता जैसा कि संसार के समस्त प्राणी शालीनतापूर्वक अपनाते और सुख-शान्ति के साथ दिन बिताते हैं।

प्रकृति अनुशासन ऐसे नहीं है जिन्हें सीखने-पढ़ने के लिए किसी कॉलेज में भर्ती होना पड़े या अभ्यास के लिये उस्तादों का शागिर्द बनना पड़े। वह अन्तःचेतना के साथ जुड़े हुए हैं। प्रकृति-प्रेरणा इसी को कहते हैं। इसे हर जीव-जन्तु भली प्रकार अनुभव ही नहीं, पालन भी करते हैं। ईश्वर उदार है, वह भक्त जनों के साथ पक्षपात करता और प्रार्थना करने पर क्षमा करता भी सुना जाता है, किन्तु प्रकृति अनुशासन में इस प्रकार के व्यतिरेक की कहीं कोई गुंजायश नहीं है। मनुष्य हो या देवता, जो भी उसकी अवज्ञा करेगा, करनी का फल भुगतेगा, और औंधे मुँह गिरेगा। मनुष्य की कायिक दुर्गति का यदि एकमात्र कारण इसी दुर्बुद्धि को कहा जाय, तो उसमें तनिक भी अत्युक्ति न होगी।

शरीर मनुष्य को उपभोग करने भर के लिये मिला है। उसके साथ निर्धारित नियमों का उल्लंघन करने की मनमानी नहीं की जा सकती। धरोहर पर मालिक का भी अधिकार बना रहता है। सही उपयोग करने की शर्त पालन करने तक ही वह अधिकार अक्षुण्ण रहता है। किरायेदार मकान की तोड़-फोड़ करने लगे, ऑफिसर सरकारी खजाने को अपने काम लाने लगे तो मुसीबत खड़ी होगी कि नहीं ? मोटर अपनी होने पर भी ड्राइवर निर्धारित विधि व्यवस्था तोड़े तो दुर्घटना होनी निश्चित है। शरीर के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है। इस तथ्य को भली-भाँति समझ लेना चाहिए।

यह काया सही उपयोग करके लाभ उठाते रहने भर के लिये अमानत के रूप में दी गयी है। उस पर शत-प्रतिशत अपनी मालिकी नहीं है। इतनी तो स्त्री-बच्चों तक पर भी नहीं हो सकती। उन्हें अनुचित रीति से सताया नहीं जा सकता। पशुओं तक पर निर्दयता बरतने के विरुद्ध कानून है और वैसा करने पर राजकीय कोप का भाजन बनना पड़ता है। लोक-भर्त्सना तो होती ही है। शरीर के सम्बन्ध में इतना तो सोचा ही जाना चाहिये कि वह प्रकृति व्यवस्था से सर्वथा मुक्त नहीं है। उसे सही रूप में सही समय तक बनाये रहना यदि सचमुच ही अभीष्ट हो तो फिर इतना और गाँठ बाँधना चाहिये कि प्रकृति-मर्यादाओं को पालन करने के लिये इच्छा या अनिच्छा से बाधित होना ही पड़ेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपना मन क्या कहता है ? आदत क्या पड़ गई है ? प्रचलन क्या है ? इन सब बातों को ताक में रखकर इतना ही सोचना होगा कि इन समस्त अडंगेबाजी की तुलना में प्रकृति का अनुशासन बड़ा है। अराजकता मचाने पर शासकीय प्रताड़ना सहनी पड़ती है। असामाजिक आचरण करने वाले अपराधी आततायी अपनी करनी का फल भुगतते हैं। प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध ताल ठोकने वाले भी चट्टान से टकराकर सिर फोड़ने का उदाहरण बनते हैं।

स्वास्थ्य की उपयोगिता जिन्हें विदित हो, जिन्हें निरोग रहना अच्छा लगता हो, जिन्हें अकाल मृत्यु से जल्दी मरने की उतावली न हो, उनको इतनी समझदारी का भी परिचय देना चाहिये कि प्रकृति अनुशासन ऐसा उपक्रम है जिसे जानने, अपनाने और पालने में ही भलाई है। इस संदर्भ में सभी प्राणियों ने अपना आचरण ऐसा बनाया है, जिसमें न तो व्यतिरेक का दोष उन पर लगे, न अराजकता, उच्छृंखलता अपनाने पर प्रताड़ना का भाजन बनना पड़े। विष खाने पर न विद्वान बन सकता है न मूर्ख। आग में हाथ डालने पर जलने में न धनी बन सकता है न निर्धन। उस क्षेत्र में राजा रंक सभी को एक पंक्ति में खड़ा होना पड़ता है।

आहार और विहार की मर्यादाएँ ऐसी हैं, जो हर किसी को पालनी चाहिये। वे क्या हो सकती हैं। इसके लिये न वैज्ञानिकों से पूछताछ करनी है, न विशेषज्ञों के पास जाना है और न पंडितों से धर्मशास्त्रों के अभिवचन जानने हैं। यह कार्य इस सृष्टि के छोटे-से-छोटे जीव-जन्तु द्वारा अपनाई जाने वाली गतिविधियों का निरीक्षण करके भी सरलतापूर्वक सम्पन्न किया जा सकता है। मनुष्य के पास ऐसा कुछ नहीं है जिसे सृष्टि के अन्य प्राणी सीखें और अपना सुधार करने की बात सोचें। जीवजगत के हर सदस्य के पास ऐसा बहुत कुछ है, जिसे तथाकथित प्रगति की डींग हाँकने वाले मनुष्य में से प्रत्येक को सीखना समझना चाहिये और गलतियों को सुधारने की दूरदर्शिता अपनानी चाहिए। आहार-विहार में औचित्य का समावेश करते ही वह राजमार्ग मिल जाता है, जिस पर चलते हुए अविच्छिन्न आरोग्य का लाभ मिल सके। निरोग, बलिष्ठ और दीर्घ जीवन का लाभ मिल सके।

यहाँ यह तथ्य और भी स्मरण रखने योग्य है कि प्रकृति-विपर्यय अपनाने में अहित ही अहित है। दुर्बुद्धि हर क्षेत्र में दुर्गति में परिणत होती है। आहार-विहार की प्रकृति विरोधी नीति अपनाये रहने पर हमें अनन्तकाल तक काया को निरोग रखने के लिये ठहरना और तरसना पड़ेगा। औषधि नहीं, प्रकृतिक जीवन क्रम ही एक मात्र वह सम्बल है, जो मनुष्य में प्राण शक्ति सतत फूँकता रहता है। इसी के अभाव में व्यक्ति ओजहीन, तेजहीन होते देखे जाते हैं। प्राण शक्ति का संचय आहार-विहार के नियमों का पालन करने पर ही संभव है, इसे एक अकाट्य तथ्य मानकर चलना चाहिए।

उपवास—एक समर्थ उपचार पद्धति

यों तो रोगों को दूर करने की एलोपैथी, होम्योपैथी, यूनानी, आयुर्वेदिक आदि अनेकानेक चिकित्सा पद्धतियाँ हैं तथापि उनके उपचार के लिए उपवास एक जबरदस्त प्राकृतिक साधन है। प्राकृतिक चिकित्सकों ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि उपवास, व्यायाम आदि से घातक रोग भी दूर किये जा सकते हैं। अमरीका के डा० एडवर्ड ने तो अपने बच्चे की 'डिप्थीरिया' जैसी विकट बीमारी भी उपवास के द्वारा ठीक की थी।

वस्तुतः रूग्णावस्था में प्रकृति ही हमें उपवास की प्रेरणा देती है। रोग की तीव्रता होने पर तनिक भी भूख नहीं लगती। परन्तु हम प्रकृति से इतने दूर हो गये हैं कि उसकी आवाज सुनना ही नहीं चाहते। रोग की अवस्था में, खाने की तनिक भी इच्छा न होते हुए भी पेट में कुछ न कुछ ठूँसते रहते हैं, जिससे कि 'कमजोरी' न आये। परन्तु हम यह भूल जाते हैं कि रोग काल में शरीर में अनेक विजातीय द्रव्य एकत्रित हो जाते हैं। जुकाम, बुखार, दस्त, दर्द आदि के माध्यम से प्रकृति अन्दर की गन्दगी को शरीर के बाहर निकालती है। ऐसे समय में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ न कुछ खाते रहना विसर्जन की प्राकृतिक क्रिया में अवरोध पहुँचाना है।

पशु-पक्षी आहार-विहार में प्राकृतिक नियमों की अवहेलना नहीं करते अतएव वे स्वस्थ भी रहते हैं। ये शारीरिक रोगों में से कदाचित ही पीड़ित होते हैं। यों पारस्परिक झगड़ों में उन्हें प्रायः चोट लगती रहती है यदि उन्हें कोई बीमारी हो जाये तो तुरन्त खाना बन्द कर देते हैं। घर के पालतू पशुओं—गाय, घोड़ा, कुत्ता, बिल्ली, बकरी आदि में भी इस वृत्ति को देखा जा सकता है। चाहे हम उन्हें खिलाने का कितना ही प्रयास करें परन्तु बीमार होने पर वे भोजन की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखते। पूर्णतः रोग मुक्त हो जाने पर ही खाना प्रारम्भ करते हैं। परन्तु आज का सभ्य कहलाने वाला मनुष्य स्वास्थ्य रक्षा में पशुओं से भी नीचे गिर गया है। सही अर्थों में स्वस्थ मनुष्य शायद ही कोई दिखलाई पड़ता है अन्यथा सब किसी न किसी छोटी-बड़ी बीमारी से आक्रान्त दिखलाई देते हैं।

अमेरिका के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डा० एरनाल्ड टुरहिट ने अपने प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध कर दिखाया कि उपवास काल में चोटें तथा घाव अत्यन्त शीघ्रता से भरते हैं। उन्होंने अपने हाथ पर चाकू से एक गहरा घाव कर लिया तथा एक सप्ताह तक पूर्णतः उपवास रखा। इस दौरान उन्होंने जल के अतिरिक्त और कुछ नहीं लिया। पाँच-छह दिन में ही उनका घाव खुश्क हो गया और उस पर पपड़ी उतर गयी। न तेज दर्द हुआ, न मवाद पड़ा, न सूजन आयी। फिर कुछ दिनों के पश्चात् उन्होंने हाथ पर उतना ही गहरा घाव किया और भोजन में अन्न और फल का प्रयोग किया। इस बार घाव ठीक होने में दुगना समय लगा। उससे खून और मवाद भी निकला तथा दर्द भी हुआ। कुछ समय उपरान्त तीसरी बार उन्होंने फिर घाव किया और भोजन में माँस और मदिरा का प्रयोग किया। परिणाम यह हुआ कि घाव से बहुत खून-सा निकला। सूजन और मवाद इतना अधिक बढ़ गया कि सैप्टिक होने की नौबत आ गयी। फिर उन्होंने तीन दिन का उपवास किया, तब कहीं जख्म खुश्क हुआ।

इसका कारण स्पष्ट करते हुए डा. एरनाल्ड ने बताया कि उपवास काल में पाचन से अवकाश पाकर शरीर की पूरी शक्ति घाव भरने में लग जाती है अतएव वह शीघ्र ठीक हो जाता है। साथ ही जैसा हम भोजन करते हैं, वैसे ही तत्व शरीर को मिलते अथवा माँस मदिरा जैसे अभक्ष्य पदार्थ शरीर में विष उत्पन्न करते हैं, जिनका प्रभाव घाव तथा बीमारी पर भी पड़ता है। यही कारण था कि जब उन्होंने माँस का प्रयोग किया तो उनका घाव सड़ने तक की नौबत आ गयी।

साधारणतः लोगों की धारणा है कि उपवास शरीर के लिए हानिकारक है। वे सोचते हैं कि भोजन न करने से शरीर कमजोर हो जाता है। उनकी दृष्टि में उपवास करने और भूखों मरने में कोई अन्तर नहीं है। अपने इस दृष्टिकोण के कारण वे समय-कुसमय भक्ष्य-अभक्ष्य पेट में ठूँसते हैं और बीमार पड़ते हैं।

अमरीका के डाक्टर एडवर्ड डेनी ने यह सिद्ध किया है कि प्रातःकाल का नाश्ता स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। उन्होंने 'नाश्ते के उपवास' से ही अपने बहुत से रोगी ठीक किये। डॉ० डेवी का कथन है कि ५० प्रतिशत रोग और विशेषतः पेट के रोग प्रातःकालीन नाश्ते से होते हैं। वस्तुतः होता यह है कि रात्रि में पाचन यन्त्र अत्यन्त मन्द गति से कार्य करते हैं। प्रातः तक कार्य पूरा भी नहीं कर पाते कि पुनः उन पर भार लाद दिया जाता है। सुबह हमें नाश्ते के समय विशेष भूख भी नहीं रहती, हम अभ्यासवश बिना भूख के ही नाश्ता कर लेते हैं। परिणाम यह होता है कि मध्यान्ह के भोजन के समय खुलकर भूख नहीं लग पाती। बिना पूरी तरह भूख लगे, भोजन करने से कब्ज, अपच आदि अनेक बीमारियों का डर रहता है।

जब 'नाश्ते का उपवास' ही इतना अधिक लाभदायक है तो 'पूर्ण उपवास' की महत्ता तो और भी बढ़ी-चढ़ी है। इससे नये-पुराने प्रायः सभी रोगों का उपचार हो सकता है। अनेकों रोग तो ऐसे होते हैं, जिन्हें डाक्टर, वैद्य असाध्य घोषित कर देते हैं परन्तु उपवास से वे ठीक हो जाते हैं। दमा, रक्तचाप, बवासीर, एक्जिमा, मधुमेह आदि रोग—जो कि डाक्टरों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृष्टि में पूर्णतः दूर होने सम्भव नहीं हैं। उपवास के प्राकृतिक उपचार से समूल नष्ट होते पाये गये। प्राकृतिक चिकित्सालयों में उपवास द्वारा बुखार, टाइफाइड, चेचक, खसरा, दस्त, सर्दी-जुकाम आदि का भी स्वस्थ उपचार किया जाता है। औषधियों से रोग समूल नष्ट नहीं हो पाते। उस समय तो जाते हैं परन्तु अन्त में विविध विकारों के रूप में फूटते हैं। प्राकृतिक उपचार से ऐसा होने का भय नहीं रहता।

न केवल हिन्दू धर्म में अपितु इस्लाम और ईसाई धर्म में भी उपवास को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। महात्मा गान्धी का कथन है कि विशुद्ध उपवास से 'शरीर, मन और आत्मा की शुद्धि होती है। उससे इन्द्रियों का दमन होता है।"

उपवास को जो इतना अधिक महत्व दिया गया है वह निराधार नहीं है। इससे अनेक प्रकार के शारीरिक तथा मानसिक रोगों पर हितकारी प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक चिकित्सकों का भी कथन है कि उपवास रखने से स्वास्थ्य सबल बनता है। वस्तुतः अधिक स्टार्च और चर्बी युक्त पदार्थों को खाने से शरीर में स्टार्च और चर्बी जमा होती है, जिससे कि अनेक विजातीय द्रव्य उत्पन्न हो जाते हैं। इन विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने में केवल उपवास ही सहायक होता है।

उपवास से लाभ पहुँचना है, यह नितान्त सत्य है परन्तु शरीर की प्रकृति को न समझा जाये और समझदारी से न किया जाये तो उपवास हानिप्रद भी सिद्ध होता है। उपवास या व्रत का अभिप्राय यह कदापि नहीं कि सारे दिन भूखे रहकर शाम को भारी भरकम पदार्थ पेट में ठूँसे जायें। ऐसा करने से तो लाभ पर हानि की ही सम्भावना रहती है। उपवास काल में केवल जल का ही प्रयोग किया जाना चाहिए, अधिक हुआ तो फलों का रस या अन्य कोई तरल पदार्थ ले लिया जाये।

यह नियम नहीं बनाया जा सकता कि कितने दिन का उपवास करना चाहिए। व्यर्थ की शारीरिक स्थिति तथा रोग के अनुसार ही निर्णय करना चाहिए। उपवास से प्रथम तो शरीर में एकत्रित विजातीय द्रव्य बाहर निकलते हैं, तदुपरान्त शारीरिक शक्ति का ह्रास होना प्रारम्भ होता है। इसका सीधा-साधा यही अर्थ है कि उतने दिन का उपवास रखना चाहिए जितने दिन में शरीर से विजातीय द्रव्य बाहर हो जायें। उसके बाद उपवास चालू नहीं रखना चाहिए अन्यथा स्वस्थ कोषाणु नष्ट होने लगेंगे।

यों उपवास काल में प्रायः शरीर का वजन कम होता जाता है और कुछ कमजोरी भी अनुभूत होती है परन्तु मस्तिष्क या ज्ञान तन्तु बिल्कुल नहीं छीजते अतएव मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है। नींद गहरी आती है। विचार भी सात्विक होते हैं।

उपवास प्रारम्भ होने पर नित्य के नियमानुसार भोजन से शरीर को शक्ति प्राप्त नहीं होती अतएव इसके लिए अन्य उपाय काम में लाने चाहिये यथा—शुद्ध वायु, सूरज का प्रकाश और शुद्ध जल का उपयोग। शुद्ध वायु में गहरी साँस लेने से प्राण वायु के स्पर्श से रक्त में पहले के उपस्थित विषैले तत्व दूर होते हैं। उपवास काल में कोई अप्राकृतिक खाद्य शरीर में नहीं जाता अतएव अतिरिक्त विजातीय द्रव्य रक्त में नहीं मिलते तथा उसकी शुद्धि होती है। धूप-स्नान से शरीर को अनेक विटामिन मिलते हैं तथा रोगों के कीटाणु नष्ट होते हैं। उपवास काल में अधिक पानी पीना चाहिए, जिससे कि अधिक मूत्र-विसर्जन के माध्यम से शरीर से अधिक गन्दगी बाहर हो। मूत्र गुर्दों में रक्त से छनकर बनता है अतएव रक्त में जल की अधिकता होने से अधिक गन्दगी साफ होती है।

उपवास रोग के अनुसार २-३ दिन से लेकर निरन्तर २ मास तक किया जा सकता है। एक सप्ताह से अधिक का उपवास लम्बे उपवास की श्रेणी में आता है। लम्बा उपवास अत्यन्त सावधानीपूर्वक विधिवत् किया जाना चाहिये अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि का भय रहता है।

लम्बे उपवास तोड़ने में काफी सावधानी बरतनी चाहिए। नीबू के पानी या सन्तरे-मौसमी आदि के रस से तोड़ना चाहिए। फिर एक दिन तक मौसम के फल लेने चाहिए। जितने दिन उपवास किया गया हो उसके चौथाई समय तक फल लेने चाहिए तदुपरान्त अन्न खाना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर यह ध्यान रखना चाहिए कि उपवास के बाद पुनः गलत भोजन न लें। ऐसा करने पर उपवास लाभ भी जाता रहेगा तथा शरीर शुद्ध हो जाने पर यदि विजातीय द्रव्य शरीर में जायेगा तो पूरी मात्रा में वह शरीर के लिए हानिकारक होगा।

उपवास द्वारा शरीर और मन की स्वस्थता

भारतीय धार्मिक प्रथाओं में व्रत-उपवास को बहुत महत्व दिया गया है। और जातियों के लोग तो अपने विशेष पर्वों पर ही कभी-कभी उपवास कर लेते हैं, पर हमारे यहाँ तो प्रत्येक तिथि और दिन का ऐसा माहात्म्य बतलाया है कि उस दिन पूरा या आधा उपवास कर लिया जाय तो बड़ा पुण्य प्राप्त हो सकता है। एकादशी तथा प्रदोष के व्रत तो सर्वत्र प्रसिद्ध ही हैं। रविवार और मंगल को उपवास करने या एक समय आहार करने वालों की संख्या भी लाखों में है। फिर जन्माष्टमी, शिव चतुर्दशी, गणेश चौथ, हरितालिका तीज, अनन्त चौदस आदि बीसियों तिथियाँ ऐसी हैं, जिनका उपवास करना अनिवार्य माना जाता है। अगर पुराणों को उठाकर देखा जाये तो उसमें पाँच-सात सौ तरह के उपवासों का माहात्म्य विस्तारपूर्वक मिल सकता है, जिसमें से कितने ही का तो नाम भी अब लोग भूल चुके हैं।

हमारे पूर्वजों द्वारा व्रत-उपवासों को इतना महत्व देने का कारण केवल उनका धर्म या पुण्य दृष्टिकोण ही न था वरन् वे जानते थे कि शारीरिक और मानसिक विकास के लिए भी व्रत-उपवास एक अत्यन्त प्रभावशाली उपाय है। एकादशी व्रत का विधान बतलाते हुए उसके लाभों का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

मातेव सर्वबालानां औशधं रोगिणामिव।
रक्षार्थं सर्व लोकानां निर्मितैकादशी तिथिः।।

अर्थात् "एकादशी का निर्माण बालकों के लिए माता समान, रोगियों के लिए औषधि की तरह हितकारी है और यह सब लोगों की रक्षा करने वाली है।"

इससे स्पष्ट है कि प्राचीन लोगों में भी उपवास द्वारा रोगों का शमन और स्वास्थ्य-लाभ के तथ्य की जानकारी है। पर उन लोगों ने यह देखकर कि सामान्य जनता बुद्धिसंगत और उपयोगितामूलक शिक्षाओं पर अधिक ध्यान देती है, धर्म और परलोक के नाम पर ही यह कठिनाइयों को सहन करने तथा स्वार्थ-त्याग के लिए उद्यत होती है ? व्रतों का धार्मिक महत्व खूब बढ़ा-चढ़ा कर वर्णन किया है। वे जानते थे कि यदि लोग धर्म की भावना से व्रत उपवास करेंगे तो भी उनको शारीरिक लाभ मिलेंगे ही।

पर अब जमाना बदल चुका है। अधिक समय बीत जाने से लोग व्रतों का मूल उद्देश्य और उनका वास्तविक स्वरूप तो भूल गये और केवल लकीर पीटना आरम्भ कर दिया। आवश्यकता तो यह थी कि व्रत के दिन वे अपने पाचन-यन्त्रों को पूरी छुट्टी देकर सुस्ताने और नई शक्ति संग्रहीत कर लेने का मौका देते, इसके विपरीत वे उस दिन साधारण रोटी, दाल, भात के बजाय फलाहार के नाम पर मिठाई हलुआ, पकवान आदि और भी गरिष्ठ पदार्थ खाने लगे जिससे पेट में खराबी पैदा हो जाती है।

इधर योरोप-अमरीका के निवासी जो इन दिनों मुख्यतया यान्त्रिक विकास की तरफ दत्तचित्त हो रहे थे और शरीर को भी एक यन्त्र ही समझने लगे थे, धीरे-धीरे अन्य मशीनों की तरह उसकी भी सफाई और सुस्ताने का अवसर देना आवश्यक मानने लगे। उन्होंने देखा कि यद्यपि शरीर में रोग पैदा हो जाने पर दवा से उसका निराकरण हो जाता है, पर उससे उसका मूल कारण दूर नहीं हो पाता। साल, दो साल बाद फिर यही रोग पहले से भी अधिक जोर से आक्रमण करता है, जिसके लिये पहले की अपेक्षा अधिक तीव्र दवा सेवन की आवश्यकता पड़ती है। यही क्रम कुछ समय तक चलते रहने से रोग लाइलाज हो जाता है।

यह दशा देखकर उन्होंने विचार किया कि दवाओं के द्वारा रोग को मिटाने की विधि स्वाभाविक नहीं है। एक तरफ वे कष्ट को मिटाकर रोगी को यह अनुभव कराती हैं कि वह चंगा होता जाता है, पर दूसरी तरफ उन्हीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दवाओं की प्रतिक्रिया स्वरूप देह के भीतर विजातीय द्रव्य (विषैला माददा) का परिमाण बढ़ता जाता है। यही दूषित पदार्थ कुछ समय पश्चात् पुनः भयंकर रोग के रूप में प्रकट होता है और तब दवा भी बहुत कम असर करती है। इस प्रकार रोग जीर्ण होकर जीवन को सदा के लिये कष्टप्रद बना देता है।

तब कुछ विचारकों का ध्यान प्राकृतिक नियमों की ओर गया। उन्होंने समझा कि रोग का वास्तविक कारण आजकल के अधिकांश मनुष्यों का प्रकृति विरुद्ध खान-पान और रहन-सहन है। मनुष्य प्रायः अपनी शारीरिक स्थिति और पाचन शक्ति का ख्याल न रखकर स्वादवश अथवा लालच से अधिक आहार ग्रहण करते हैं। कितने ही तम्बाकू, भाँग, गाँजा, शराब आदि ऐसी वस्तुएँ व्यवहार में लाते हैं, जो प्रत्यक्षतः विषाक्त होती हैं और अपना कोई हानिकारक तत्व शरीर में छोड़ जाती हैं। इस प्रकार मनुष्य के शरीर में हानिकारक विजातीय द्रव्य (कूड़ा-गन्दगी) का परिमाण बढ़ता रहता है। शरीर की प्रकृतिदत्त रोग निवारक शक्ति जब बलपूर्वक उसको बाहर निकालना चाहती है तो मनुष्य को कष्ट प्रतीत होता है और इसी कारण वह बीमार समझ लिया जाता है। अगर उस अवसर पर भी मनुष्य क्षण-स्थायी दवाओं का भरोसा त्याग कर प्रकृतिदत्त शक्ति को अपना काम करने दे और स्वयं भी उसको यथाशक्ति सहायता दे तो वह शीघ्र फिर वास्तविक अर्थों में निरोग हो सकता है। इस प्रकार की 'सहायता' का सबसे सरल और स्वाभाविक उपाय है उपवास। एक नैचरोपैथ डाक्टर ने इसको उदाहरण देकर इस प्रकार समझाया है—

"जिस प्रकार कुएँ या तालाब का पानी बराबर भरा रहने से गन्दा और दूषित हो जाता है, उसी प्रकार शरीर में जमा होने वाले शक्ति उत्पन्न करने वाले पदार्थ भी, यदि शरीर में निष्क्रिय (बेकार) पड़े रहें तो वे पुराने और दूषित हो जाते हैं। इसलिये इनको भी कभी-कभी पूरी तरह खर्च कर डालना चाहिये, जिससे उनके स्थान पर नये शक्ति-उत्पादक पदार्थों का निर्माण हो सके। इस प्राकृतिक आवश्यकता की पूर्ति उपवास द्वारा ही सम्भव है—क्योंकि उपवास की अवस्था में ही, शरीर में जमा हुये पदार्थों को खर्च हो जाने का अवसर मिलता है और जब शरीर में पुनः शक्तिदायक पदार्थों की भूख पैदा हो जाती है, तब उपवास तोड़कर उपर्युक्त आहार होने से, शरीर में फिर से ताजे पदार्थ तेजी से जमा हो जाते हैं। इस प्रकार शरीर की भीतरी सफाई और फिर से उसके नवीनीकरण के लिए 'उपवास' एक स्वाभाविक और आवश्यक प्रक्रिया है।"

पिछले दिनों अमेरिका में डा. बरनर मैकफैडन ने इस सम्बन्ध में बहुत कुछ अध्ययन, लेखन और प्रचार कार्य किया है। उन्होंने 'उपवास चिकित्सा' को एक स्वतन्त्र, पद्धति का रूप दिया है और हजारों व्यक्तियों पर उसका प्रयोग करके यह सिद्ध कर दिया है स्वास्थ्य, युवावस्था और शक्ति को बढ़ाने के लिये उपवास से बढ़कर और कोई विधि नहीं है। उन्होंने उपवास-चिकित्सा की उपयोगिता और प्राचीनता का वर्णन करते हुए लिखा है—

"मानव-सभ्यता की गति समुद्र के ज्वार-भाटा की तरह यद्यपि पूर्ण संतुलित तो नहीं है तब भी उसी की तरह कभी ऊँची और कभी नीची हुआ करती है। जो वैज्ञानिक सिद्धान्त प्राचीन काल में लोगों को मालूम थे, वे बीच के समय (मध्य-युग) में लुप्त प्रायः हो गये। वे ही सिद्धान्त अर्वाचीन युग में कुछ हेर-फेर से संचालित हो रहे हैं। जिस समय भूमध्य सागर के क्षेत्र में पनपने वाली दो महान् सभ्यताएँ—रोमन और ग्रीक—अपने उच्च शिखर पर पहुँची थीं, उस समय यह एक नियम सा हो गया था कि तन्दुरस्ती और मानसिक शान्ति चाहने वाले मनुष्य को दिन में एक बार ही भोजन करके सन्तुष्ट हो जाना चाहिए, अर्थात् जब तक दिन भर का कार्य पूरा न होकर खूब-भूख न लगे और पचाने का अवकाश न मिले तब तक कुछ न खाया जाय।"

इन देशों में दिन भर काम करने के पश्चात् पुरुष लगभग चार-पाँच बजे घर लौटते थे। नारियाँ उसी समय ताजा भोजन तैयार रखती थीं। घर के सब व्यक्ति एक स्थान पर मिल-जुल कर प्रसन्नतापूर्वक भोजन करते थे। सब लोग दिन भर के परिश्रम से इतने थके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और भूखे होते थे कि सूखी रोटी भी अमृत की तरह जान पड़ती थी। भोजन समस्त परिवार का एक उत्सव सा बन जाता था। अमीर-गरीब दोनों ही समय से पूर्व बार-बार थोड़ा-थोड़ा खाकर भूख को नष्ट नहीं करना चाहते थे। दोपहर का भोजन तो वे लोग जानते ही न थे। सुबह काम पर जाते समय रोटी का एकाध टुकड़ा या दो चार बिस्कुट काफी समझे जाते थे।

सिकन्दर के साथ भारत वर्ष को आने वाली सेना के सिपाहियों का भी यही भोजन क्रम लिखा है कि वे केवल शाम के पाँच बजे एक बार सादा भोजन करते थे। पर इसी से वे काफी लम्बे-चौड़े और बड़े-बड़े धनुषों को चलाने में समर्थ होते थे। भारत के सप्तसिन्धु प्रदेश में निवास करने वाले आदिम आर्यगणों की भी ऐसी ही दिनचर्या थी। इसके फलस्वरूप वे सौ वर्ष तक स्वस्थ और सशक्त बने रहते थे और रोगों का नाम कदाचित् ही कभी सुनने में आता था।

पर जब से आधुनिक सभ्यता की वृद्धि हुई और ज्ञान-विज्ञान द्वारा मनुष्य अपनी शारीरिक शक्ति के बजाय यन्त्रों द्वारा काम करके अधिकाधिक उत्पादन करने लगा, तब से स्थिति बदल गई। बहुसंख्यक मनुष्य परिश्रम कम और भोजन अधिक करने लगे और तभी से रोगों का शरीर में प्रवेश करने का दरवाजा खुल गया। इस समय शरीर और सम्पन्न वे ही समझे जाते हैं, जो काम कम से कम करें ओर उपभोग्य सामग्री को ज्यादा से ज्यादा खर्च करें। परिणाम यह होता है कि परिश्रम के अभाव में पेट में भरे गये वे पदार्थ जीवनी शक्ति की वृद्धि करने के बजाय उल्टा उसका शोषण करते हैं। इससे रोगों की उत्पत्ति और वृद्धि होती है तथा ऐसे लोग सदैव दवाओं और चिकित्सकों के दास बने रहते हैं।

यह सोचना बिल्कुल भ्रमपूर्ण हैं कि हम जितना बढ़िया और अधिक भोजन करेंगे वह हमें उतना ही ताकतवर और तन्दुरुत बनायेगा। इसके विपरीत सोवियत रूस के जीव-विज्ञान वेत्ता ब्लादिमिर निकित्तन के नवीनतम प्रयोगों से यह सिद्ध होता है कि उपवास द्वारा ही फिर से जवान होना और यौवन की बहुत समय तक रक्षा संभव हो सकती है। अनेक व्यक्तियों के मरने का कारण जरूरत से ज्यादा-भोजन करना और इस प्रकार अपनी पाचन शक्ति को बिगाड़ लेना होता है। पहले अधिक भोजन किया जाय और फिर उसे पचाने के लिये अनेक प्रकार के चूरन-चटनी आदि का प्रयोग किया जाय यह एक मूर्खता है, जो वर्तमान 'सभ्यता' की देन है। अब चिकित्सा विज्ञान का मंथन करने वाले डाक्टर भी इस सच्चाई को समझ गये हैं और अन्त में वे उसी नतीजे पर पहुँचे हैं, जिसे आज से ३ हजार वर्ष पहले का यूनानी चिकित्सक 'हिप्पोक्रेट्स' पहुँचा था। वर्तमान डाक्टरों के 'आदि पुरुष' माने जाने वाले इस डाक्टर ने अपने ग्रन्थ में स्पष्ट लिखा है कि "यदि हम शरीर की भीतरी सफाई न करके उसमें भोजन ठूँसते चले जायें तो उससे हानि ही होगी और हम बीमार हो जायेंगे।"

उपवास करने की विधि—उपवास का अर्थ है पेट को आराम दिया जाय और भोजन का पूर्णतः त्याग किया जाय। उपवास करते समय ध्यान रखना चाहिए कि बदपरहेजी न हो और उपवास करने के पहले दिन संध्या समय भोजन करके केवल फलों को लेना चाहिए, उबली हुई तरकारियाँ व हरी सब्जी जैसे गाजर, मूली, टमाटर आदि भी ली जा सकती हैं। उपवास के दिन प्रातः काफी मात्रा में जल पीकर टहलना चाहिए। अगर आवश्यकता हो तो एनीमा भी लिया जा सकता है। दिनभर पानी पीना चाहिए, यदि कमजोरी मालूम पड़े तो नीबू और शहद का पानी लिया जा सकता है। उपवास के दिन कठिन परिश्रम नहीं करना चाहिए, जहाँ तक सम्भव हो आराम करना चाहिए। उपवास के दूसरे दिन हल्का एवं सुपाच्य भोजन करना चाहिए जैसे फल, सादा भोजन, दूध, दलिया, खिचड़ी इत्यादि ली जा सकती है।

आध्यात्मिक दृष्टि से तो उपवास का महत्व और भी अधिक है। विषय-विकारों के शमन का उपाय वर्णन करते हुए गीताकार ने कहा है—

"विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् निराहार रहने से विषय-विकारों की निवृत्ति होती है। "उपवास-दर्शन" या "फिलासफी आफ फास्टिंग" के विद्वान रचियता श्री ए० ए० प्युरिंगटन ने लिखा है कि रोग चाहे शारीरिक हो अथवा मानसिक, उपवास से सभी में लाभ होता है। यदि आप स्वास्थ्य और सौन्दर्य, शक्ति व और साहस प्राप्त करना चाहते हैं तो उपवास कीजिये।" उपवास से नैतिक व आध्यात्मिक प्रगति होती है, नैसर्गिक बुद्धि का उदय होता है। रोग निवारण, आत्मविश्वास की प्राप्ति, प्रेम की विशालता की दिव्य अनुभूति, विराट् के साथ आत्म-सामंजस्य आदि का महत्वपूर्ण प्रसाधान उपवास ही है।" उनके अनुसार उपवास आरोग्य लाभ का प्राकृतिक व निषेधात्मक पहलू है।

बीमारी में उपवास का अधिक महत्व बढ़ जाता है क्योंकि सब रोगों की जड़ पेट ही है और जब तक उसे साफ न रखा जाये तब तक शरीर की किसी भी बीमारी को दूर नहीं किया जा सकता। अतः पेट की सफाई व मन की शान्ति के लिए लम्बा उपवास आवश्यक है। जैसे शरीर को नई स्फूर्ति सोने व विश्राम से मिलती है, उसी प्रकार आँतों को स्फूर्ति उपवास से मिलती है।

उपवास से लाभ—हमारा शरीर दो कार्य करता है—(१) पाचन (२) निष्कासन। इसी तरह भोजन भी हमारे पेट में तीन कार्य करता है—(१) शारीरिक मेहनत के समय जो कोष (सैल) टूट जाते हैं, उनकी मरम्मत करना (२) जीवन सत्ता बनाये रखने के लिए आवश्यक जीवनदायिनी शक्ति उत्पन्न करना, (३) खाद्य-पदार्थों के जलने से शरीर को गर्मी प्रदान करना। भोजन से रस बनते हैं और रसों से रक्त बनता है। रक्त से हमें शक्ति और पुष्टि मिलती है। सभी भोजन रस और रक्त के रूप में परिवर्तित नहीं होता, उसमें से बहुत-सा निष्क्रिय अंश बच जाता है और वही अंश मल के रूप में हमारे शरीर से निकलता है। साधारण अवस्था में दोनों क्रियाएँ पाचन व निष्कासन नियमित रूप से बिना बाधा के होती रहती हैं, किन्तु उपवास के समय में भोजन न करने के कारण शरीर के पाचन का कार्य बन्द हो जाता है केवल निष्कासन का कार्य करता है। अतः शरीर अपनी पूर्ण शक्ति के साथ उस कार्य में जुट जाता है और जब पेट का विकार निष्कासन की क्रिया से निकल जाता है तो शीघ्र ही शरीर निरोग हो जाता है।

किसी भी रोग अथवा व्याधि के समय हमारी सारी शक्ति रोग से जूझने में लगी रहती है। ऐसे समय हमें स्वभावतः भोजन से अरुचि हो जाती है मानो हमारी जठराग्नि यह सूचना दे रही है कि रसोई घर की मरम्मत की आवश्यकता है, मैं अपना कार्य भण्डार में रक्खी हुई चीजों से चलाकर मरम्मत कर डालूँगी। दूसरे शब्दों में, हमारी शारीरिक क्रिया में जहाँ किसी प्रकार का व्यतिक्रम होता है हमारी भूख बन्द हो जाती है और इस प्रकार वह उपवास के महत्व की घोषणा करती है। अस्तु कड़ी भूख लगने की प्रतीक्षा में तो नित्य ही उपवास करना चाहिए। इसके अतिरिक्त सप्ताह में एक दिन या आधे दिन उपवास करने की भी आदत डालनी चाहिए। इससे स्वास्थ्य सुधार में निश्चित रूप से सहायता मिलेगी।

स्वच्छता को भी महत्व मिले

हमारे समाज की यह कुधारणा बन गई है कि सफाई करना एक जाति विशेष का काम है। इसके विपरीत गन्दगी फैलाना सबका काम है। तथाकथित सभ्य गन्दगी से दूर रहना तो चाहते हैं। परन्तु गन्दगी को दूर करना नहीं चाहते। जहाँ जाते हैं, वहाँ अपनी अस्वच्छता की छाप छोड़ आते हैं।

अपना घर झाड़-बुहार कर कूड़ा किसी दूसरे के दरवाजे पर डाल आना अथवा सड़क या नाली में डाल देना कुछ शिक्षित और स्वच्छता प्रेमियों के लिए आम बात हो गई है। इससे चाहे अन्य यात्रियों को अथवा मोहल्लेवासियों को किसी तरह की परेशानी हो, उन्हें क्या ! उनका अपना घर तो साफ हो गया। नाली रुककर चाहे सड़न पैदा हो, कीटाणु बढ़ें, सड़क पर चलते यात्री चाहे छिलके पर पैर पड़ने से फिसलकर गिर जायें उन्हें क्या ! वे तो अपना घर साफ रखेंगे। स्वच्छता प्रेमी जो हैं। रेल अथवा बस में सफर कर रहे, हैं। मूँगफली खाई और छिलका वहीं फैला दिया,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पान खाया तो पीक वहीं थूक दी। सन्तरे, केले खाये और छिलका बिखेर दिया। बीड़ी सिगरेट पी और ठूँठ वहीं फेंक दी। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक जगह अस्वच्छता फैलाना अपना अधिकार समझते हैं क्योंकि उसकी सफाई करने वाला दूसरा आदमी नियुक्त किया गया है।

अनेक लोग फुटपाथ पर बिकने वाले ठेलों से चाट-पकौड़ी खाते हैं और जूठा पत्ता, कागज आदि वहीं डाल देते हैं। हवा में उड़कर वही राहगीरों के ऊपर पड़ते हैं। सारा कपड़ा बरबाद हो जाता है, सड़क गन्दी हुई सो अलग। किसी की कार या स्कूटर बिगड़ गया, रास्ते पर ही खोलकर मरम्मत की और कालिख वहीं छोड़कर शान से गाड़ी पर चलते बने। पीछे किसी यात्री का पैर उसमें पड़ने से गिर गया तो किसी का आवश्यक कागजात नष्ट हो गया अथवा कपड़ा रंग गया। लघु शंका और दीर्घ शंका निवारण हेतु उपयोगिता कक्ष कौन ढूँढ़े ! सड़क के आस-पास निबट लिया।

इसका कारण विचार करने पर यही लगता है कि लोगों में अपने गाँव और शहर के प्रति अपनत्व की भावना नहीं पाई जाती। वे केवल अपने घर तक ही सीमित रहते हैं। चौखट के बाहर चाहे कितनी भी गंदगी फैली रहे, उन्हें कोई शिकायत नहीं। कूड़े और गन्दगी के दुर्गन्ध से इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि उधर किसी का ध्यान ही नहीं जाता। कई लोग यह सोचते हैं कि सार्वजनिक स्थान तो गन्दे रहते ही हैं, फिर हम ही उसमें थोड़ी-सी अस्वच्छता फैला दें तो कौन-सा अन्तर पड़ता है ? यदि हम सफाई करेंगे भी तो दूसरे आकर पुनः गन्दगी फैला देंगे। सामूहिकता का यह अभाव जब दूसरे घरों से महामारी के रूप में फूटकर अपने तक पहुँचता है। तब पता चलता है कि छूत कितनी बड़ी हुई ?

गावों में लोग अशिक्षा और गरीबी के कारण स्वच्छता की ओर विशेष ध्यान नहीं दे पाते। परन्तु शहरों में अस्वच्छता का एकमात्र कारण नागरिकों की लापरवाही और अपने कर्तव्यों के प्रति उदासीनता की भावना ही मुख्य मालूम पड़ती है। वहाँ सफाई विभाग होते हुए भी गन्दगी फैली दिखने का सही कारण यही लगता है कि वे गन्दगी से घृणा तो कर सकते हैं परन्तु उसे दूर रखने में अपना हाथ नहीं बँटाना चाहते।

अस्वच्छता से होने वाली प्रत्यक्ष और परोक्ष हानियों से प्रायः सभी परिचित होते हैं परन्तु इसके निवारण की ओर कोई ध्यान नहीं देना चाहता। स्वच्छता के अभाव में हमारा शरीर, मन, वातावरण सारा का सारा दूषित हो जाता है। गन्दी आदतों के कारण अपने शरीर की सफाई नहीं कर पाते, जिससे जुएँ पड़ जाना, दाद-खाज होना एवं अन्य अनेक तरह की बीमारी हो जाना साधारण-सी बात हो जाती है। शरीर रुग्ण हो तो उसका प्रभाव मन पर भी पड़ता है। स्वस्थ मन तो स्वस्थ शरीर में ही निवास कर सकता है। वातावरण अस्वच्छ हो जाय तो रोगाणु के फैलते देर नहीं लगती। इसके अतिरिक्त आँखों को अप्रिय लगता है सो अलग है।

परोक्ष हानियाँ तो प्रत्यक्ष हानियों से भी अधिक हैं। भारत की प्राचीन मान्यता और संस्कृति से आकर्षित होकर विदेशी लोग यहाँ आने के लिये बहुत उत्सुक रहते हैं। अनेक लोग प्रतिवर्ष अपनी ज्ञान-पिपासा को शान्त करने का उद्देश्य लेकर आते भी हैं। परन्तु यहाँ की गन्दगी से उनकी नाक सड़ने लगती है। उन्हें अपनी कल्पना के अनुरूप स्वच्छता न मिलने से उन पर उल्टी प्रतिक्रिया होती है। यहाँ से एक दूषित भावना लेकर स्वदेश लौटने पर इसकी चर्चा करते हैं। जो यहाँ आने के लिए आकर्षित रहते हैं, उन्हें निराशा होती है और देश को विदेशी मुद्रा की एक बड़ी रकम से वंचित रहना पड़ता है।

अस्वच्छता वातावरण में रहने से हमारी भी भावनायें अस्वच्छ हो जाती हैं। धीरे-धीरे गन्दगी के अभ्यस्त होते जाते हैं। आगे चलकर अस्वच्छता हमारी आँखों को बिलकुल नहीं खटकती।

अस्वच्छता का निवारण कर स्वच्छता का वातावरण बनाने के लिये उपाय किया जाना आवश्यक है। सफाई की जिम्मेदारी एक जाति पर हो और भगवान की पूजा दूसरी जाति पर, यह न्यायसंगत नहीं है। सफाई को भी भगवान की पूजा का अंश बनाना आवश्यक है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वच्छता रखने हेतु न तो तख्ती लगाने की आवश्यकता होनी चाहिये और न किसी को मना करने टोकने की। स्वप्रेरित भावना से जो कार्य हो सकता है, वह दूसरों के कहने से नहीं। लोगों के मन में अस्वच्छता के प्रति अरुचि और स्वच्छता बढ़ाने के लिये पहले स्वयं सफाई करना प्रारम्भ करना उचित है। इसके लिए एक संगठित क्रम भी चलाया जा सकता है। मोहल्ले के कुछ समाज सेवा की भावना वाले युवकों की टोली बना लें तथा एक-एक दिन अलग-अलग मोहल्लों में जाकर सार्वजनिक स्थानों की सफाई किया करें। इससे वहाँ के कुछ भावनाशील लोगों में जागृति आयेगी। लोगों को स्वयं ही लज्जा होगी कि अन्य लोग जब हमारे मुहल्लों की सफाई कर रहे हैं, तब हमें क्यों न करना चाहिए ? इसी प्रकार कुछ बूढ़े स्वयं सेवकों के दल भी करें तो बहुत अच्छा प्रभावोत्पादक कार्य हो सकता है। धीरे-धीरे लोगों में आदत बन जायेगी और वे स्वयं स्वच्छता के अभ्यस्त हो जायेंगे।

बच्चों में स्वच्छता की आदत शाला के प्राथमिक स्तर से ही डालना अच्छा होता है। उन्हें अपने शरीर, कक्षा, पाठशाला, बगीचा, घर आदि की स्वच्छता का अभ्यस्त बनाना चाहिए। शाला के बच्चों को कुछ टोलियों में बाँटकर स्वच्छता की स्वस्थ स्पर्धा कायम की जा सकती है। कुछ मात्रा में इसके लिये अंक निर्धारित कर देने से वे अधिक आकर्षित हो सकते हैं।

अस्वच्छता को स्वच्छता में बदलने की आजकल एक वैज्ञानिक पद्धति विकसित हुई है। इससे दोहरा लाभ प्राप्त होता है। सफाई तो होती ही है साथ ही कूड़े का सदुपयोग भी हो जाता है।

इधर-उधर के कूड़े अस्वच्छता उत्पन्न करते हैं, उन्हें एकत्र कर सड़ाया जाय तो उससे बहुत अच्छी खाद बन सकती है। इस खाद के प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति बहुत अंशों में बढ़ जाती है क्योंकि यही उसका वास्तविक खाद्य है। इसके अभाव में आकलैण्ड मे तो एक ऐसा कारखाना लगाया गया है, जहाँ प्रतिदिन शहर का लगभग दस-हजार मन कूड़ा आता है। उसे एक सप्ताह में खाद रूप में परिणित कर दिया जाता है। इस तैयार खाद के प्रयोग से खेतों की पैदावार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। वैज्ञानिकों के अनुसार कूड़ा हमारे आहार का आहार है अतः उसे एकत्रित कर सड़ायें तथा काम में लायें।

जहाँ-तहाँ फलों और सब्जियों के छिलके तथा गुठलियाँ लोग प्रायः यत्र-तत्र बिखेर देते हैं। यह आभास ही नहीं होता कि ये हमारे लिये उपयोगी भी हो सकते हैं। अंगूर के बीज, बेर की गुठली, किशमिस और मुनक्के के बीज से भी तेल निकाला जाता है। यह तेल रङ्गों को पक्का करने और वारनिश बनाने के काम आता है। चुकन्दर के अनुपयोगी ग्लूकोनैटिक एसिड तथा अमरूद की लुग्दी से अमरूद दूध बनाया जाता है। इसके विपरीत अस्वच्छता से हानि ही हानि है। अपने देश में जिन बीमारियों के कारण सर्वाधिक लोग मरते हैं, उनमें संक्रामक रोगों का स्थान सबसे ऊपर है। चेचक, मलेरिया, यक्ष्मा, हैजा जैसे छोटे-मोटे राजरोग भी कितने ही ऐसे हैं, जिनके मूल में अस्वच्छता या गन्दगी रहती है। जहाँ-तहाँ थूकने, पेशाब करने के लिए हम लोग बदनाम तो हैं ही, सड़कों पर कूड़ा-करकट डालने से लेकर आसपास स्वयं के द्वारा फैलायी गयी गन्दगी को बर्दाशत करते रहने तक अनेक उपायों से हम इन रोगों को आमन्त्रण देते रहते हैं।

भारत की अस्सी प्रतिशत जनता देहातों में रहती है। गाँव में जितने स्त्री पुरुष और बच्चे रहते हैं, घर के किसी कोने या सड़क पर ऐसे स्थानों पर पखाना पेशाब करते हैं, जहाँ से उनकी निकासी का कोई रास्ता ही नहीं होता है। आदमी से ज्यादा पशुओं का मलमूत्र भी रहता है। गाय-भैंसों का गोबर भले ही उपले बनाने के काम में लाया जाता हो पर उसका एक बड़ा अंश तो जमीन ही पीती रहती है। यही हाल उनके पेशाब का भी होता है और प्रायः ऐसे स्थानों पर ही मिलता हैं, मच्छरों को भोजन। सो वे वहीं दिन भर रहते हैं। रात को आदमी का खून चूसते हैं। एक विशेष प्रकार का मच्छर 'एनोफीलिज' मनुष्य की इसी उदारता या लापरवाही का उपहार कहें अथवा दण्ड स्वरूप दे जाता है मलेरियल पैरासाइट्स।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्ष १९७५ में अन्तर्राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन अभियान के अन्तर्गत अपने देश से भी मलेरिया खत्म कर दिया गया था। पर उनका मूल कारण गन्दगी—जहाँ से उसे फैलाने वाले मच्छर पैदा होते हैं, तो जहाँ की तहाँ ही रही। सो पिछले वर्ष से फिर मलेरिया बढ़ने लगा है। कभी मलेरिया प्राणलेवा ज्वर था। चिकित्सा विज्ञान की प्रगति ने उसकी भयङ्करता को कम तो किया है पर एक सप्ताह का मलेरिया इस कदर आदमी को कमजोर बना डालता है कि डाक्टरों को महीने भर तक आराम करने की सलाह देनी पड़ती है।

मलेरिया की तरह एक और रोग होता है फाईलेरिया। यह रोग विशिष्ट जलवायु वाले गन्दे स्थानों में रहने वाले मच्छरों के कारण होता है। अनुमान है कि १३ करोड़ लोग ऐसे क्षेत्रों में रहते हैं जहाँ फाईलेरिया फल सकते हैं। मच्छरों और उनके लार्वाओं द्वारा फैलाये गये इस रोग के विषाणु स्वास्थ्य परीक्षण में १—२ करोड़ लोगों में पाये गये हैं। स्मरणीय है यह रोग देहाती क्षेत्रों की अपेक्षा शहरी इलाकों में अधिक फैलता है। देहाती क्षेत्रों में मलेरिया तो—शहरी इलाकों में फाइलेरिया—चीख-चीख कर गन्दगी की उपस्थिति जताते हैं।

गर्मी के दिनों में आहार की मलीनता के कारण होने वाला हैजा तो प्राणघातक ही है। प्रसिद्ध वैद्य पं० रामनारायण शर्मा ने लिखा है—'मेरा बहुत-बहुत बार का देखा हुआ अनुभव है कि ब्याह शादियों में खूब पका और न जाने कैसे तैयार हुआ खाना भरपेट खाकर कई लोगों को एक साथ हैजा हो गया।' एक स्वास्थ्य वैज्ञानिक के अनुसार गन्दगी पर मँडराती रहने वाली मक्खियाँ अपने पैरों द्वारा हैजा के रोगाणु सामान्य भोजन में भी पहुँचा देती हैं। आमतौर पर हैजे के कीटाणु गन्दे और बन्द तालाबों, सड़े कुओं और इकट्ठे हुए पानी के डबरों में पैदा होते हैं और संक्रमण पद्धति से जल्दी ही इस रोग को फैला देते हैं। सामान्य अजीर्ण के कारण हुए हैजे की अपेक्षा रोगाणुओं के कारण हुआ हैजा अधिक प्राणघातक होता है। इसमें प्रायः ६ से १० घण्टे ही में रोगी की मृत्यु हो जाती है। प्रायः रात को सोते समय रोगी को एकाध कै और दस्त बिना किसी तकलीफ के होता है, जो उसे अति दुर्बल कर देता है और कुछ ही घण्टों में मरणोन्मुख कर देता है।

गीली या गन्दी जगह पर रहने तथा दूषित वायु के सेवन से होने वाले रोग तपेदिक की माँ भी अस्वच्छता कही जा सकती है। इस सम्बन्ध में किये गये सर्वेक्षण के अनुसार भारत में ७५ से ८० लाख व्यक्ति इस रोग के शिकार पाये गये थे। हालांकि अधिक मैथुन, शक्ति से अधिक श्रम, अपुष्ट और अखाद्य वस्तुओं का सेवन भी इस रोग के कारण हैं पर सबसे बड़ा कारण है गन्दगी, जहाँ पैदा हुए रोगाणु श्वांस के साथ शरीर में पहुँचते हैं और फेफड़ों में इकट्ठे होते रहते हैं। ये रोगाणु फेफड़ों को धीर-धीरे चाटते रहते हैं और तपैदिक का रोगी कमजोर होते २ अपने गन्तव्य तक पहुँच जाता है।

यहाँ कुछ मोटे-मोटे रोगों का ही उल्लेख किया गया है, पर ऐसे अनेकों रोग हैं जिनका एक मात्र कारण है अस्वच्छता और इस मामले में अपने देश की जनता को स्वच्छताप्रिय नहीं कहा जा सकता। क्या गाँव और क्या शहर—सामान्य जनता को सार्वजनिक स्थानों पर गन्दगी फैलाना तो अनुचित नहीं लगता। व्यक्तिगत या पारिवारिक जीवन में भी अस्वच्छता से नहीं, स्वच्छता से परहेज करने वाला वर्ग बहुत बड़ा है। एक विदेशी विद्वान ने भारतीय गाँवों का भ्रमण करते समय अपनी डायरी में लिखा था जो बाद में प्रकाशित भी हुआ कि—जब कभी मैं रास्ता भटका और किसी समीपवर्ती गाँव को खोजने की बात मेरे मन में आयी तो अनुभव द्वारा निकाला गया एक उपाय ही काम में आया। मैं ध्यानपूर्वक सब ओर की गन्ध लेता और जिधर बदबू आती समझ लेता उधर ही कोई गाँव है। मेरा यह अनुमान हर बार सही निकलता रहा।" हम भारतीयों पर यह कितना पैना व्यंग है।

मलमूत्र के विसर्जन में असावधानी और लापरवाही बरतकर हम न केवल रोगों को फैलाने में सहायक बनते हैं वरन् अपने राष्ट्र की बहुमूल्य सम्पदा को भी क्षति पहुँचाते हैं। जापान में मनुष्य के मलमूत्र का एक-एक कण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कृषि के लिए खादरूप में प्रयुक्त करने की प्रवृत्ति को सराहना की दृष्टि से देखा जाता है। अपने देश में भी जनस्तर पर इस पद्धति को प्रोत्साहित करने की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। यदि देखा जाय तो मानुषी मल-मूत्र से बने हुए खाद्य की तुलना में अन्य श्रेष्ठ खाद कोई और सुलभ नहीं है। मलमूत्र के विसर्जन की स्वच्छन्दता को त्यागकर गन्दगी तज्जनित रोग और उनकी पीड़ा से छुटकारा पाने के साथ खाद के रूप में उसका उपयोग तिहरा लाभदायी है।

इस दिशा में क्या किया जाना चाहिए ? सर्वप्रथम हर घर में या गलियों में पेशाबघरों की व्यवस्था आवश्यक है। घर में यदि स्थान हो तो पेशाबघर की यह व्यवस्था हो सकती है। ईंट की हल्की गिट्टी एक गड्ढे में में भर दी जाय और ऊपर से चूना छिड़क दिया जाय। जमीन पेशाब पीती रहे। नीचे रेत-घास-भूसे की परत रहे तथा महीने में एक बार उसकी सफाई करते रहा जाय।

गाँवों में पखाने की गन्दगी न फैले इसका आसान उपाय यह है कि टट्टी जाते समय पानी के लोटे के साथ-साथ एक खुरपी भी ले जायी जाय। जहाँ बैठा जाय पहले उस स्थान पर खुरपी से एक गड्ढा बना लिया जाय तथा उसमें शौच किया जाय। शौच के बाद खुरपी से मिट्टी डालकर वह गड्ढा बन्द कर दिया जाय। बड़ा गड्ढा खोदकर पाखाना भी तैयार किया जा सकता है।

सब जगह थूकने और गन्दगी फैलाने की प्रवृत्ति पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। साथ सार्वजनिक स्थानों पर, घर से बाहर सड़कों पर घर का कूड़ा-करकट फेंकने की आदत भी बुरी है। रोका इसे भी जाना चाहिए। इसके लिये घर के बाहर कूड़ादान बनाना तथा उसे कूड़ा डाल देने के बाद ढक देना चाहिए। इकट्ठा हो जाने पर कूड़ा नियत स्थान पर खाद के लिये जमा किया जा सकता है।

व्यक्तिगत रूप से, रहन-सहन और खान-पान में सुधरे और सलीकेमन्द रहना सज्जनोचित तो है ही स्वास्थ्य की दृष्टि से भी लाभप्रद है। नित्य स्नान, रोज कपड़े बदलना या सुविधा न हो तो कम से कम तीसरे दिन तो साफ धुले कपड़े पहन ही लेना चाहिए। स्वच्छता की इन सामान्य बातों का देखने में कोई विशेष महत्व भले ही न लगता हो पर स्वास्थ्य संरक्षण की दृष्टि से वह व्यक्तिगत हो या सामाजिक, नितांत अनुपेक्षणीय है। स्वच्छ रहने का अर्थ है हजार रोगों से सुरक्षा करने की व्यवस्था बनाना। हमें व्यक्तिगत जीवन में स्वच्छताप्रिय होने के साथ-साथ अपने आस-पास के वातावरण को—स्थान को भी स्वच्छ सलीकेदार बनाने के लिये प्रयत्नशील रहना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य रक्षा के कुछ सरल उपाय

अपनी चिकित्सा आप स्वयं करें

रोग हो जाने पर उसकी चिकित्सा चिकित्सकों के द्वारा कराई जा सकती है। उससे तात्कालिक कष्ट मिट भी सकता है पर स्वास्थ्य की सुरक्षा एवं अभिवृद्धि की समस्या का हल किसी भी इलाज से नहीं हो सकता। इसके लिये तो अपना आहार विहार ही सुधारना होगा। यदि हमारा स्वास्थ्य गिर रहा हो तो उसे सुधारने के लिये चिकित्सकों को नहीं प्रकृति माता की शरण में जाना चाहिये। जिस माता के राज्य में कीट, पतंग, पशु-पक्षी सभी आनन्द की किलोल करते और निरोग जीवन व्यतीत करते हैं, वह मनुष्य के प्रति अपनी कृपा में कंजूसी क्यों करेगी ? बालक से माता तभी तक रुष्ट रहती है, जब तक वह उद्दंडता बरतता है। उच्छृंखलता छोड़ते ही वह माता को पूर्ववत् ही प्राप्त करने लगता है। अपनी गतिविधियों में आवश्यक हेर-फेर किये बिना बिगड़े हुये स्वास्थ्य का सुधारा जाना सम्भव नहीं। औषधियों से यदि बिगड़े हुये स्वास्थ्य सुधर जाया करते तो सभी धनी लोग एक-से एक बढ़कर हृष्ट-पुष्ट होते। जो जितने पैसे खर्च कर सकता, वह उतनी ही अधिक औषधियाँ खरीद कर उतना ही अधिक बलवान बन जाता। तब गरीब मजदूरों को दुर्बल ही रहना पड़ता। पर प्रकृति ने यहाँ धन या वस्तुओं के आधार पर नहीं उचित संयम के आधार पर ही स्वास्थ्य की सुरक्षा का आधार रखा है। इसीलिये हर एक को यह समझ लेना चाहिये कि यदि बिगड़े स्वास्थ्य को सुधारना है या सुधरे का बढ़ाना है तो उसका एक मात्र उपाय यही हो सकता है कि हम प्रकृति के नियमों का अधिकाधिक अनुसरण करें।

आत्म-निरीक्षण और आत्म-सुधार

आमतौर से मनुष्य को अपनी भूलें दिखाई नहीं पड़तीं। दूसरों के दोष वह आसानी से ढूँढ़ सकता है पर अपनी कमियों की वह सदा उपेक्षा किया करता है। हम कहाँ चूक रहे हैं यह जानने के लिये आत्म-निरीक्षण एवं आत्मचिन्तन की प्रवृत्ति जागृत करनी चाहिये। दोष-दर्शन एवं आलोचना करने की कुशलता को यदि अपने ऊपर मनुष्य प्रयुक्त करने लगे तो कल्याण के सभी अवरुद्ध मार्ग खुल सकते हैं। अपनी भूलों को समझने और सुधारने के लिये जो प्रयत्नशील हैं, उसे देर तक दुरवस्था से घिरा नहीं रहना ,पड़ सकता। यह सिद्धान्त जीवन के हर क्षेत्र में लागू होता है। लौकिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही क्षेत्रों में मनुष्य निश्चित रूप में आशाजनक उन्नति अपने प्रयत्न और पुरुषार्थ के आधार पर कर सकता है। उसकी आन्तरिक दुर्बलतायें रास्ता रोके रहती हैं। सबसे बड़ी बाधा यही है यदि इसे हटाने के लिये कोई व्यक्ति समुद्यत हो जाये तो उसकी प्रगति का मार्ग हर दिशा में खुल सकता है। लोग परिस्थितियों को सुधारना चाहते हैं, इच्छानुकुल लाभ एवं अवसर उपलब्ध करना चाहते हैं पर इसके योग्य अपने आपको बनाने का प्रयत्न नहीं करते।

पात्र को ही उपयुक्त वस्तुयें मिलने का नियम इस सृष्टि में अनादिकाल से चला आ रहा है, उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता। वर्षा का पानी सभी जगह समान रूप से बरसता है पर जहाँ जितना गहरा गड्ढा होता है, वहाँ उतना जल जमा हो जाता है। पात्रत्व की वृद्धि के साथ-साथ विभूतियों की अभिवृद्धि का सनातन नियम अनादि काल की तरह अभी भी विद्यमान है, जो इस तथ्य को समझते हैं, वे अपनी त्रुटियों और कमजोरियों को ढूँढने एवं उन्हें सुधारने का प्रयत्न करते रहते हैं और इस कार्य में जितनी सफलता मिलती जाती है सफलता का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लक्ष्य उतना ही निकट आ जाता है। आरोग्य की विभूति प्राप्त करने के लिये भी यही बात अक्षरशः लागू होती है। जिनने अपनी भूलों को ढूँढ़ने की पैनी दृष्टि को अपनी समीक्षा में लगाया और देह को खोखला कर डालने वाली भीतर छिपी अपनी बुरी आदतों को ढूँढ़ निकाला, वे अपने चिकित्सक आप ही हैं। उनकी आत्म चिकित्सा कभी निष्फल नहीं जा सकती।

वस्तुस्थिति की जानकारी

हमें कुछ प्रश्न अपने आपसे उसी प्रकार पूछने चाहिये, जिस प्रकार कोई सुयोग्य चिकित्सक अपने रोगी की स्थिति जानने के लिये उससे अनेकों प्रश्न करके, बीमारी की निदान एवं वस्तुस्थिति को जानने के लिये करता है। हमें आपसे पूछना चाहिये कि—

(१) क्या हम लोग केवल तीव्र भूख लगने पर ही खाते हैं ? कहीं ऐसा तो नहीं करते कि भूख न लगी हो और आदत से लाचार होकर खाने बैठ जाते हैं।

(२) पहला भोजन अच्छी तरह पचने की प्रतीक्षा किये बिना क्या बीच-बीच में कुछ वस्तुयें स्वाद के लिये तो नहीं खाते रहते हैं ?

(३) पेट की गुञ्जायश का आधा भाग भोजन के लिये, चौथाई पानी के लिये और चौथाई हवा के लिये खाली छोड़ने का नियम क्या हम ठीक तरह पालन करते हैं ? कहीं आधे पेट से अधिक तो भोजन नहीं कर लेते ! भोजन इतनी मात्रा में तो नहीं हो जाता जिससे आलस्य आने लगे ?

(४) मुँह में गया हुआ प्रत्येक ग्रास क्या काफी चबाने के बाद ही उदरस्थ करते हैं ? कहीं उसे पतली चीजों के सहारे जल्दी-जल्दी आधा कुचल करके ही तो नहीं निगल लेते ?

(५) क्या आपके भोजन में अन्न की मात्रा आधे से कम और हरे शाक फलों की मात्रा आधे से अधिक रहती है ?

(६) कहीं आप का भोजन मांस, मछली, पकवान, मिठाई, चटनी, अचार मिर्च मसाले जैसे हानिकारक पदार्थों से भरा तो नहीं रहता ?

(७) नशीली चीजों की आदत तो आपने नहीं डाल ली ? चाय, तमाखू, पान की भरमार से कहीं आप अपना पाचन संस्थान नष्ट तो नहीं करते रहते ?

(८) रात को जल्दी सोने और सबेरे जल्दी उठने का स्वर्ण नियम आप पालन करते हैं या नहीं ?

(९) कहीं आपकी रोटी बेईमानी से कमाई हुई तो नहीं होती ? आपको पता है न कि बिना परिश्रम की कमाई बीमारी बनकर फूटती है।

(१०) शारीरिक परिश्रम की उपयोगिता आप भली प्रकार समझते हैं न ? दिन भर में शरीर से इतना परिश्रम आप करते रहते हैं न जिससे थककर रात को गहरी नींद आवे ?

(११) व्यायाम, आसन, सूर्य नमस्कार, व्यायाम, टहलना, मालिश आदि स्वास्थ्य सुधारने वाली क्रियाओं का आपके दैनिक जीवन में स्थान है न ?

(१२) गंदगी से आपको घृणा है न ? अपने शरीर, वस्त्र, बिस्तर घर, बर्तन रसोई आदि की सफाई का पूरा ध्यान रखते हैं न ? अन्न, जल और सांस को ग्रहण करते हुये उसकी स्वच्छता की उपेक्षा तो नहीं करते ? मुँह ढककर तो नहीं सोते ? एक ही थाली कटोरी में कई लोग मिलकर भोजन तो नहीं करते ?

(१३) ब्रह्मचर्य की मर्यादाओं का ध्यान रखते हैं न ? अश्लील बातों का चिन्तन तो नहीं करते रहते ? कामोत्तेजक, संगीत, सिनेमा, वार्तालाप चित्र एवं साहित्य से दूर रहते हैं न ?

(१४) चिन्ता, शोक, क्रोध, आवेश, ईर्ष्या, द्वेष, उत्तेजना, भय आशंका, निराशा जैसे मनोविकारों ने आपको ग्रसित तो नहीं कर रखा है ? समस्याओं को शान्त चित्त और धैर्य के साथ सुलझाने की अपेक्षा आपने हड़बड़ाने, क्षुब्ध एवं किंकर्त्तव्यविमूढ़ होने की आदत तो नहीं डाल रखी है।

(१५) आये दिन आप रूठे तो नहीं बैठे रहते। हँसने और मुस्कराने की आदत को कहीं आपने छोड़ तो नहीं दिया है।

(१६) सप्ताह में एक बार उपवास करके पेट को एक दिन की छुट्टी दिया करते हैं न ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१७) अपनी सामर्थ्य से अधिक शारीरिक या मानसिक काम तो नहीं करते ? आँखों को खराब करने और दिमाग को भन्ना देने जितनी मात्रा में आप पढ़ने-लिखने का काम तो नहीं करते ? शारीरिक श्रम की मात्रा शक्ति से बाहर तो नहीं है।

(१८) बात-बात में दवादारू की भरमार तो आप नहीं करते रहते ? तीव्र औषधियों के अधिक सेवन से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव का आपको ज्ञान है न ?

(१९) ईश्वर उपासना की सर्वोपरि सब रोग नाशक औषधि का आप नित्य सेवन करते हैं न ? उपासना के लिये अपने दैनिक कार्य-क्रम में कोई समय नियत रखा है न ?

यह उन्नीस प्रश्न अपने आपसे पूछने चाहिये और उनका उत्तर प्राप्त करके अपने रोग के मूल कारणों को स्वयं ही तलाश करना चाहिये। रोग का सही निदान आधा इलाज ही माना जाता है। अस्वास्थ्यकर कारणों को हटा देना चिकित्सा का प्रधान अंग है इस मानी से अपना अधिकांश इलाज हम स्वयं कर सकते हैं। शेष जो तात्कालिक उपचार बच रहा, उसे किसी भी विवेकशील चिकित्सक की थोड़ी-सी सहायता में दूर हटाया जा सकता है। वस्तुतः अपने सर्वोत्तम चिकित्सक हम स्वयं ही हो सकते हैं।

स्वास्थ्य समस्या और हमारा कर्त्तव्य

जिन्हें आरोग्य की आकांक्षा रही है, उन्हें इन्हीं नियमों पर चलना पड़ा है और आगे भी जो निरोग जीवन व्यतीत करना चाहेंगे उन्हें आत्म संयम और नियमितता के इन्हीं नियमों का पालन करना पड़ेगा। बीमारी न आवे इसकी सुरक्षा के लिये इनका पालन आवश्यक है और चिकित्सा द्वारा रोग मुक्त होने के पश्चात् जो यह चाहते हैं कि पुनः उन्हें बीमारी का शिकार न होना पड़े उन्हें इन सभी बातों का ध्यान रखना पड़ेगा, जिनकी चर्चा इस लेख में की गई है। प्रकृतिं बड़ी दयालु है उसने हमें आरोग्य रक्षा के अनेक साधनों से सम्पन्न शरीर दिया है और उसे सुविकसित करने योग्य अगणित साधन उत्पन्न किये हैं पर साथ ही उसकी कठोरता भी निश्चित है। अनुशासन भंग करने पर फौजी सिपाही को जिस प्रकार 'कोर्ट मार्शल' का कड़ा दण्ड भुगतना पड़ता है, उसी प्रकार प्रकृति का कठोर शासन भी उच्छृंखल आचरण करने वालों को 'सबक सिखाने' के लिये काफी कड़ाई बरतता है। उच्छृंखल आचरण को जब तक छोड़ा न जायेगा, तब तक बीमारी और कमजोरी की सजा भी बराबर मिलती रहेगी। मकान को तोड़-फोड़ करने वाला किरायेदार जबरदस्ती निकाल बाहर किया जाता है वैसी ही स्वास्थ्य को बर्बाद करने में लगे हुये असंयमी मनुष्य अकाल में ही काल-कवलित होते हैं, उन्हें दीर्घ जीवन के अपने स्वाभाविक अधिकार से वंचित होने के लिये विवश होना पड़ता है।

आरोग्य की उलझन भरी गुत्थी

आरोग्य की समस्या हल करने के लिये साधारणतः ध्यान दो बातों की ओर आकर्षित किया जाता है। एक यह है कि—हर व्यक्ति प्रकृति के नियमों का ध्यान रखते हुये स्वास्थ्य को स्थिर रखने वाले नियमों का कड़ाई से पालन करें और आज सभ्यता के नाम पर अस्वाभाविक जीवन की जो उच्छृंखलता फैली हुई है, उसे रोका जाये। दूसरा यह कि रोगग्रस्त होने पर बीमारी को दबाकर जल्दी अच्छी होने की उतावली करने की चिकित्सा की अपेक्षा रोग को जड़ से उखाड़ने वाली चिकित्सा प्रणाली अपनाई जाये। भले ही कुछ देर लगे, भले ही कुछ झंझट भरे उपचार अपनाने पड़ें, पर एक बार पूरी तरह सफाई करके स्थायी रूप से रोगमुक्ति का प्रबन्ध किया जाये। इन दोनों बातों की ओर यदि जनसाधारण का समुचित ध्यान आकर्षित होने लगे तो स्वास्थ्य की उलझी हुई समस्या सहज ही हल हो सकती है और राष्ट्र अर्धमूर्छित स्थिति से उबरकर सशक्त एव सूक्ष्म बन सकता है। भौतिक या अध्यात्म की स्थायी प्रगति की आशा भी इन्हीं परिस्थितियों में की जा सकती है।

पंच तत्वों की सात चिकित्सा

यह शरीर पंचतत्वों से बना हुआ है। देह में जो कुछ दिखाई पड़ता है, वह सब मिट्टी, पानी, हवा, गर्मी और आकाश का ही रूपान्तर है। मकान में टूट-फूट जाने पर मरम्मत के लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी ईंट, चूना, सीमेन्ट, मिट्टी, पत्थर आदि की ही जरूरत पड़ती है, क्योंकि वह इन्हीं का बना होता है। कपड़ा फट जाय तो उसकी मरम्मत कपड़े का दूसरा टुकड़ा लगाकर ही की जाती है। फुटे हुये बर्तन में पंच तत्वों का संतुलन ही अस्त-व्यस्त होता है। तूफान में छप्पर उड़ जाये तो उसकी टूट-फूट फूंस से ही की जाती है और फिर उसे यथा स्थान रख देने से यथावत् काम चलने लगता है। शरीर के लिये भी यही प्रणाली अपनानी पड़ती है। जो तत्व देह से विकृत हो गया है, उसे पंचतत्वों से की जाने वाली चिकित्सा प्रणाली से ही स्थायी रूप से अच्छा किया जा सकता है।

महात्मा गान्धी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे थे। वे जीवन के अन्तिम दिनों में प्राकृतिक जीवन यापन एवं चिकित्सा पद्धति को विस्तृत करने के लिये बहुत कुछ करने की योजना बना चुके थे। उरुली कांचन में उन्होंने इसके लिये एक केन्द्र भी बनाया था और धन का प्रबन्ध भी किया था। वे वहाँ स्वयं कुछ नियमित समय भी देते रहने वाले थे, पर काल की कराल गति ने उन हाथों वह कार्य सुविकसित होने का अवसर आने न दिया। यद्यपि आज भी उनका लिखा हुआ आरोग्य सम्बन्धी साहित्य इस प्रकार की चिकित्सा के लिये एक महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन कराने के लिये प्रस्तुत है। संसार के अगणित विचारशील आरोग्य शास्त्री पहले से ही इस निष्कर्ष पर पहुँच चुके हैं कि रोगों का निराकरण, भीतर भरे हुये विषों को तीव्र दवाओं से दबा देने से नहीं, जीवनी शक्ति को उत्साहित करके उसकी रोग निरोध शक्ति को सजग कर देने से ही सम्भव हो सकता है। जल चिकित्सा, कटिस्नान, मेहन स्नान, मेरुदण्ड स्नान, गीले कपड़े के बन्धन, वाष्प स्नान, मिट्टी की पट्टी, सूर्य अभिताप, सेंक मालिश जैसे प्राकृतिक उपचार देह की रोग निरोधक शक्ति को ऐसा सक्षम बना देते हैं कि रोगों को एक बार पूरी तरह बाहर निकाल फेंकना और शरीर को शुद्ध बना सकना सम्भव होता है। सबसे बड़ी बात इस प्रणाली में यह है कि अन्य चिकित्सा पद्धतियों की तरह वर्षों तक थका देने वाला शिक्षण इसके लिये प्राप्त नहीं करना पड़ता। थोड़ी-सी जानकारी और समझदारी के आधार पर कोई भी व्यक्ति अपनी और दूसरों की प्राकृतिक चिकित्सा कर सकता है। आगे दी जा रही प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति पढ़कर पाठकों को आश्चर्य होगा कि इतनी महान् चिकित्सा प्रणाली इतनी सरल कैसे हो सकती है ? पर बात यही है कि जो कुछ वास्तविक है, उसे परमात्मा ने सरल ही रखा है ताकि उसका हर पुत्र आसानी से उसे अपना सके। पशु-पक्षियों तक को जब यह ज्ञान प्रकृति ने समझाकर रखा है तो फिर मनुष्य के लिये ही वह क्यों दुस्साध्य रखा जाता।

पेट की सफाई सर्वोत्तम

पेट की सफाई आरोग्य रक्षा की आधारशिला है। यदि पाचन यन्त्र ठीक काम करने लगे तो फिर भरपूर मात्रा में स्वस्थ रक्त उत्पन्न होते रहने के मार्ग में क्या कठिनाई शेष रह जायेगी ? और यदि यह कठिनाई हल हो गई तो बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य क्यों न सँभल जायेगा ? इसलिये पेट में जमे पुराने कब्ज को बस्तिक्रिया (ऐनेमा) द्वारा साफ कर दिया जाय और उपवास द्वारा कुछ समय पेट को पूर्ण विश्राम मिलने की व्यवस्था कर दी जाये तो थका हुआ पेट फिर तरोताजा होकर अपना कर्त्तव्यपालन करते रहने के लिये कटिबद्ध हो जायेगा। साथ-साथ शीतल जलीय प्रतिक्रिया द्वारा सुप्त शक्तियों का जागरण मृतिका द्वारा विष बहिर्गमद, ऊष्मा द्वारा प्रवाह संचरण आदि प्रक्रियायें भी साथ-साथ चलती रहें तो एक प्रकार से देह के भीतर कल-पुर्जों का पुनर्गठन ओवर हालिंग ही हो सकता है। प्रयोग और परीक्षण इस चिकित्सा पद्धति की उपयोगिता से स्वतः ही प्रभावित कर देते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा क्या है ?

प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रणाली का अर्थ है प्राकृतिक पदार्थों विशेषतः प्रकृति के पांच मूल तत्वों द्वारा स्वास्थ्य-रक्षा और रोग निवारण का उपाय करना। विचारपूर्वक देखा जाये तो यह कोई गुह्य विषय नहीं है और जब तक मनुष्य स्वाभाविक और सीधा-सादा जीवन व्यतीत करता रहता है, तब तक वह बिना अधिक सोचे-विचारे भी प्रकृति की इन शक्तियों का प्रयोग करके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लाभान्वित होता रहता है। पर जब मनुष्य स्वाभाविकता को त्यागकर कृत्रिमता की ओर बढ़ता है, अपने रहन-सहन तथा खान-पान को अधिक आकर्षक और दिखावटी बनाने के लिये प्रकृति के सरल मार्ग से हटता जाता है तो उसकी स्वास्थ्य-सम्बन्धी उलझनें बढ़ने लगती हैं और समय-समय पर उसके शरीर में कष्टदायक प्रक्रियायें होने लगती हैं, जिनको 'रोग' कहा जाता है। इन रोगों को दूर करने के लिये अनेक प्रकार की चिकित्सा प्रणालियाँ आजकल प्रचलित हो गई हैं। जिनमें हजारों तरह की औषधियों, विशेषतः तीव्र विषात्मक द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है। इन तीव्र दवाओं से जहाँ कुछ रोग अच्छे होते हैं, वहाँ उन्हीं की प्रतिक्रिया से कुछ अन्य व्याधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं और संसार में रोगों के घटने के बजाय नित्य नवीन रोगों की वृद्धि होती जाती है। इस अवस्था को देखकर पिछले सौ-डेढ़-सौ वर्षों के भीतर योरोप अमरीका के अनेक विचारशील सज्जनों का ध्यान प्राकृतिक तत्वों की उपयोगिता की तरफ गया और उन्होंने मिट्टी, जल, वायु, सूर्य-प्रकाश आदि के विधिवत् प्रयोग द्वारा शारीरिक कष्टों, रोगों को दूर करने की एक प्रणाली का प्रचार किया। वही इस समय प्राकृतिक चिकित्सा या 'नेचर क्योर' नाम से प्रसिद्ध है।

पर यह समझना कि प्राकृतिक-चिकित्सा प्रणाली का आविष्कार इन्हीं सौ-दो सौ वर्षों के भीतर हुआ, ठीक न होगा। हमारे देश में अति प्राचीन काल में प्राकृतिक पंच-तत्वों की चमत्कारी शक्तियों का ज्ञान था और उनका विधिवत् प्रयोग भी किया जाता था और तो क्या हमारे वेदों में भी, जिनको अति प्राचीनता के कारण अनादि माना जाता है और जिनका उद्भव वास्तव में वर्तमान मानव सभ्यता के आदि काल में हुआ था प्राकृतिक चिकित्सा के मुख्य-सिद्धान्तों का उल्लेख है। ऋग्वेद का एक मन्त्र देखिये—

आपः इद्वा उभेषजीरापो अमीवचातनीः।

आपः सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कणवन्तु भैषजम्।।

(१०—१३६—६)

"जल औषधि रूप है, यह सभी रोगों को दूर करने वाली महान् औषधि के तुल्य गुणकारी है। यह जल तुमको औषधियों के समस्त गुण (लाभ) प्राप्त करावे।"

इस तरह के वचन ऋग्वेद और अथर्ववेद में अनेक स्थानों पर मिलते हैं। साथ ही सूर्य-प्रकाश तथा वायु के आरोग्यदायक गुणों का भी उल्लेख मिलता है। तमिल भाषा में वेदों के समान ही पूजनीय माना जाने वाले 'कुरल' नामक ग्रन्थ में प्राकृतिक चिकित्सा की विधियों की बड़े उत्तम ढंग से शिक्षा दी गई है। यह ग्रन्थ दो हजार वर्ष से अधिक पुराना है। इसी प्रकार योरोप के सर्वप्रथम चिकित्साशास्त्री माने जाने वाले हिप्पोक्रेट्स ने मनुष्यों को स्वास्थ्य विषयक उपदेश देते हुये स्पष्ट लिखा है "तेरा आहार ही तेरी औषधि है और तेरी औषधि तेरा आहार हो" आजकल भी प्राकृतिक चिकित्सकों का एक बहुत बड़ा सिद्धान्त यही है कि आहार ही ऐसा किया जाय जो औषधि का काम दे और जिससे शरीर के विकार स्वयं दूर हो जायें। हिप्पोक्रेट्स का सिद्धान्त पूर्णतया भारतीय विद्वानों के मत से मिलता हुआ है और उसे भारत वर्ष की विद्याओं का ज्ञान हो तो कोई आश्चर्य भी नहीं क्योंकि उस ढाई हजार पुराने युग में भारत की सभ्यता और संस्कृति का संसार के सभी भागों में प्रचार हो चुका था।

इस प्रकार जब तक मनुष्य प्रकृति की गोद में, पलते-खेलते थे, उनका रहन-सहन भी प्राकृतिक नियमों के अनुकूल था तो वे अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति प्राकृतिक ढंग से ही करते थे। पर मध्यकाल में जब बड़े-बड़े राज्यों और साम्राज्यों की स्थापना हो गई तो बड़े आदमियों के रहन-रहन में भोग-विलास की अधिकता होने लगी और उसकी पूर्ति के लिये भाँति-भाँति के कृत्रिम उपायों का प्रयोग भी बढ़ने लगा। साधारण लोग भी उनकी नकल करके नकली चीजों को अधिक सुन्दर और आकर्षक समझने लगे, जिसके फल से लोगों का स्वास्थ्य निर्बल, पड़ने लगा, तभी तरह-तरह के रोगों की वृद्धि होने लगी। जब काल क्रम से यह अवस्था बहुत बिगड़ गई और संसार की जनसंख्या तरह-तरह के भयानक तथा गन्दे रोगों के पंजे में फँस गई तो विचारशील लोगों का ध्यान इसके मूल कारण की तरफ गया और उन्होंने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कृत्रिम आहार-विहार की हानियों को समझकर "प्रकृति की ओर लौटो" (बैक टू नेचर) का नारा लगाया।

यदि हम भारतीय धर्म और संस्कृति की दृष्टि से इस चिकित्सा-प्रणाली की व्याख्या करें तो हम कह सकते हैं कि मनुष्य के स्वास्थ्य और रोगों के भीतर भगवान की दैवी शक्ति ही काम कर रही है। व्यावहारिक क्षेत्र में यह रोगों और व्याधियों के निवारण के लिये केवल उन्हीं आहारों तथा पञ्च तत्वों का औषधि रूप में प्रयोग करना बतलाती है, जो सर्वथा प्रकृति के अनुकूल है। इस प्रकार इस चिकित्सा के छः विभाग हो जाते हैं—मानसिक चिकित्सा, उपवास, सूर्य-प्रकाश-चिकित्सा, वायु चिकित्सा, जल चिकित्सा, आहार अथवा मिट्टी चिकित्सा।

आजकल जिस डाक्टरी चिकित्सा पद्धति का विशेष प्रचलन है, उसका उद्देश्य किसी भी उपाय से रोग में तत्काल लाभ दिखला देना होता है, फिर चाहे वह लाभ क्षण स्थायी-धोखे की टट्टी ही क्यों न हो ? हम देखते हैं कि अस्पतालों में एक-एक रोगी को महीनों तक प्रतिदिन तीव्र इंजेक्शन लगते रहते हैं, पर एक शिकायत ठीक होती है तो दूसरी उत्पन्न हो जाती है। पर पीड़ा के कुछ अंशों में मिटते रहने के कारण लोग इस बाह्य चिन्हों की चिकित्सा के फेर में पड़े रहते हैं। इसके विपरीत प्राकृतिक चिकित्सा में रोगों के विभिन्न नामों तथा रूपों की चिन्ता न करके उनके मूल कारण पर ही ध्यान दिया जाता है और उसी को निर्मूल करने का प्रयत्न किया जाता है। इतना ही नहीं इस चिकित्सा का वास्तविक लक्ष्य केवल शारीरिक ही नहीं वरन् मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त कराना भी माना गया है, क्योंकि मानसिक तथा आध्यात्मिक सुधार के बिना शारीरिक स्वास्थ्य स्थायी नहीं हो सकता। इसलिये भारतीय चिकित्सा प्रणाली में जहाँ शुद्ध आहार-विहार का विधान है, वहाँ उच्च और पवित्र जीवन व्यतीत करने पर भी जोर दिया गया है। प्राकृतिक चिकित्सा के तत्व का यथार्थ रूप में हृदयंगम करने वाला व्यक्ति गीता के "कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" वाले वाक्य पर पूर्ण श्रद्धा रखकर "सत्य आचरण" को ध्यान रखता हैं और फल को भगवान के ऊपर छोड़ देता है। सत्य-आचरण वाला व्यक्ति प्रथम तो रोगी ही नहीं होगा और यदि किसी गलती या दुर्घटना से हो भी गया तो उसी आचरण के प्रभाव से रोग का निवारण शीघ्र ही हो जायेगा। रोगी की अवस्था में यह "सत्य-आचरण" उपवास, शुद्ध वायु, प्रकाश, जल स्नान तथा औषधि रूप आहार का प्रयोग करना ही हो सकता है, इन साधनों से हम सब प्रकार के रोगों की सफलतापूर्वक चिकित्सा करने में सक्षम हो सकते हैं।

आगे चलकर जब रोगों के कारण और स्वरूप पर विचार करते हैं तो मालूम होता है कि रोग जीवित शरीर में ही उत्पन्न हो सकता है। जीवित शरीर एक मशीन या यन्त्र की तरह है, जिसका संचालन एक सूक्ष्मशक्ति (प्राण) द्वारा होता है। यही शक्ति भौतिक पदार्थों का सार ग्रहण करके, उससे शरीर का निर्माण कार्य करती रहती है और दूसरी ओर इसी के द्वारा सब प्रकार के आहार से बचे हुये निस्सार मल रूप अंश का निष्कासन किया जाता है। ये दोनों क्रियायें एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं और इन दोनों के बिना ठीक तरह संचालित हुये न तो जीवन और न स्वास्थ्य स्थिर रह सकता है। पर हम देखते हैं कि अधिकांश लोग ग्रहण करने की—भोजन की क्रिया के महत्त्व को तो कुछ अंशों में समझते हैं और अपनी बुद्धि तथा सामर्थ्य के अनुसार पौष्टिक, शक्ति प्रदायक, ताजा रुचिकारक भोजन की व्यवस्था करते हैं, पर निष्कासन की क्रिया के महत्त्व को समझने वाले और उस पर ध्यान देने वाले व्यक्तियों की संख्या अत्यन्त न्यून है। लोग समझते हैं कि उत्तम भोजन को पेट में डाल लिया जायेगा तो वह लाभ ही करेगा। पर यह भोजन यदि नियमानुसार परिमित मात्रा में पथ्य-अपथ्य का ध्यान रखकर न किया जायेगा तो निष्कासन की क्रिया का बिगड़ जाना अवश्यम्भावी है। उसके परिणामस्वरूप शरीर के भीतर मल और विकार जमा होने लगते हैं और स्वास्थ्य का सन्तुलन नष्ट हो जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह विकार या विजातीय द्रव्य शरीर के स्वाभाविक तत्वों के साथ मिल नहीं पाता और एक प्रकार का संघर्ष अथवा अशान्ति उत्पन्न कर देता है। हमारी जीवनी-शक्ति यह कदापि पसन्द नहीं करती कि उस पर विजातीय द्रव्य का भार लादकर, उसके स्वाभाविक देह-रक्षा के कामों में बाधा उपस्थित की जाये। वह हर उपाय से उसे शीघ्र से शीघ्र बाहर निकालने का प्रयत्न करती है। यदि वह उसे पूर्ण रूप से निकाल नहीं पाती तो ऐसे अंगों में डाल देने का प्रयत्न करती है, जो सबसे कम उपयोग में आते हैं और जहाँ वह कम हानि पहुँचाकर पड़ा रह सकता है। इस प्रकार जब तक जीवनी-शक्ति विजातीय द्रव्य के कुप्रभाव को मिटाती रहती है, तब तक हमें किसी रोग के दर्शन नहीं होते। पर जब हम बराबर गलत मार्ग पर चलते रहते हैं और विजातीय द्रव्य का परिणाम बढ़ता ही जाता है, तो लाचार होकर जीवनी शक्ति को उसे स्वाभाविक मार्गों के बजाय अन्य मार्गों से निकालना पड़ता है। चूँकि यह कार्य नवीन होता है, हमारे नियमित अभ्यास और आदतों के विरुद्ध होता है, इसलिये उससे हमको असुविधा, कष्ट, पीड़ा अनुभव होती है और हम उसे 'रोग' या बीमारी का नाम देते हैं। पर वास्तविक रोग तो हमारी शारीरिक प्रकृति अथवा जीवनीशक्ति द्वारा उस रोग को मिटाने का उपाय होते हैं। अगर हम इस तथ्य को समझकर तथा कष्ट और पीड़ा को प्रकृति की चेतावनी के रूप में ग्रहण करके सावधान हो जायें तो रोग हमारा कुछ भी अनिष्ट नहीं कर सकता। उस समय हमारा कर्त्तव्य यही होना चाहिये कि हम प्रकृति के काम में किसी तरह विघ्न बाधा न डालें वरन् अपने गलत रहन-सहन को बदलकर प्राकृतिक जीवन के नियमों का पालन करने लगें। इससे विजातीय द्रव्य के बाहर निकालने के लिये कार्य में सुविधा होगी और हम बिना किसी खतरे को अपेक्षाकृत थोड़े समय में रोग-मुक्त हो जायेंगे। संक्षेप में यही प्राकृतिक चिकित्सा का मूल रूप है, जिसको उपवास, मिट्टी और जल के प्रयोग, धूप-स्नान आदि कितने ही विभागों में बाँटकर सर्व साधारण को बोधगम्य बनाने का प्रयत्न किया गया है।

कीटाणु नहीं विजातीय द्रव्य

रोग की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्राकृतिक चिकित्सा में जो कारण बतलाया गया है, उसका प्रबल विरोध एलोपैथिक चिकित्सा का कीटाणु सिद्धान्त करता है। इन लोगों की मान्यता है कि प्रायः सभी रोगों की उत्पत्ति के मूल कारण वे अत्यंत छोटे और हमारे नेत्रों से अदृश्य कीटाणु होते हैं, जो जल में, वायु में, समस्त खाद्य पदार्थों में पाये जाते हैं और सदैव मुख, नासिका, चर्म आदि के द्वारा हमारे शरीर में प्रवेश करते रहते हैं। जब इन कीटाणुओं की संख्या अधिक हो जाती है। तभी ये हमको दबा लेते हैं और जिस रोग से वे सम्बन्धित होते हैं, वही हमारे शरीर में उत्पन्न कर देते हैं। अगर इस सम्बन्ध में डाक्टरों के कथनों पर पूरा विश्वास किया जाय तो वास्तव में एक दिन भी इस संसार में मनुष्य का रहना दुर्लभ हो जाये। वे लोग इनको महा भयंकर सर्प से बढ़कर घातक बतलाते हैं। एक डॉक्टर ने लिखा है कि यदि इन कीटाणुओं को दवाओं द्वारा नष्ट न किया जाये तो अनुकूल जलवायु पाने पर वे तीन दिन में एक से बढ़कर तीस खरब तक हो सकते हैं।

पर जब इस मत पर तर्क की दृष्टि से विचार किया जाता है, तो इसकी निस्सारता बहुत शीघ्र प्रकट हो जाती है। यह कीटाणु सिद्धान्त अब से सौ वर्ष पहले फ्रांस के पास्चर नामक डाक्टर ने प्रचारित किया था। उसके पहले इसकी न तो कहीं चर्चा थी और न किसी को इसका कुछ भी ज्ञान था। उस समय तक किसी ने कीटाणुनाशक दवाओं का आविष्कार या प्रयोग न किया था। पर यह एक प्रकट बात है कि उस समय के व्यक्तियों का स्वास्थ्य आजकल की अपेक्षा अधिक मजबूत तथा स्थायी होता था और शारीरिक दृष्टि से वे अधिक शक्तिशाली होते थे। यदि कीटाणुओं की सेना ऐसी ही भयंकर होती तो अब तक मनुष्यों का नाम निशान बच सकना भी कठिन था।

वास्तविक बात यह है कि रोगों के कीटाणु होते अवश्य हैं, पर वे कहीं बाहर से आकर हमारे शरीर में प्रवेश नहीं करते और न उनके कारण रोगों की उत्पत्ति होती है। वरन् जब मल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के विकार से हमारे शरीर में गन्दगी बढ़ती है और रोग पैदा होता है तो उसके साथ कीटाणु भी पैदा हो जाते हैं। कनाडा के डाक्टर फ्रेजर ने बार-बार परीक्षा करके सिद्ध किया है रोग की उत्पत्ति होने के पश्चात् ही कीटाणु दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार रोग कारण हैं और कीटाणु उसके कार्य या फल हैं। कार्य का कारण से पहले हो सकना असम्भव है।

कीटाणुओं के सिद्धान्त को असत्य सिद्ध करने वाला दूसरा प्रमाण यह भी है कि अनेक व्यक्तियों के शरीर की परीक्षा करने पर उसमें अनेक रोगों के कीटाणु पाये जाते हैं, पर वे लोग उन रोगों के बीमार नहीं होते, वरन् साधारण रूप में उनको स्वस्थ ही माना जाता है। प्राकृतिक चिकित्सकों ने तो दावे के साथ कहा है कि जिस व्यक्ति का शरीर सर्वथा स्वस्थ होगा अर्थात् जिसके भीतर विजातीय द्रव्य जमा न होंगे, उसका ये कीटाणु कुछ नहीं बिगाड़ सकते। इसको प्रमाणित करने के लिये जर्मनी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रोफेसर पैटेन कोफर ने तो सैकड़ों विद्यार्थियों के सम्मुख शीशी में भरे हैजे के कीटाणुओं को पी लिया था, पर उनको कुछ हानि नहीं हुई। वैसे डाक्टरों के मतानुसार उन कीटाणुओं की तादाद इतनी थी कि वे एक पूरी फौज को मार सकते थे। प्रोफेसर ने पहले ही कह दिया था कि मेरे शरीर में गन्दगी नहीं है इसलिये वहाँ ये कीटाणु पनप ही नहीं सकते।

डाक्टर लोग जो चेचक आदि का टीका लगाते हैं और उसके प्रभाव से लोगों को जो ज्वर हो जाता है या साधारण चेचक निकल आती है, उसका कारण भी कीटाणु नहीं होते, वरन् डाक्टरी इन्जेक्शन में जो मल का अंश होता है वही ये सब दुष्परिणाम उत्पन्न करता है। मल ही विशाल प्रभाव वाला पदार्थ है, वह शरीर में जिस किसी भी रीति से प्रवेश करेगा अपना कुप्रभाव अवश्य दिखलायेगा। इसलिये जिन लोगों के शरीर में आहार-विहार सम्बन्धी गलतियों के कारण पहले से मल जमा होता है और उसके कारण जिनका रक्त दूषित पड़ गया होता है, उन पर ही रोगों के कीटाणु प्रभाव डालते हैं। अगर मल का परिणाम अधिक होगा तो कीटाणुओं का प्रभाव भी ज्यादा होगा और तो उनका साधारण असर ही पड़ेगा।

टोरण्टो (कनाडा) में कुछ पहले एक संस्था की स्थापना की गई थी, जिसका उद्देश्य कीटाणुओं के सिद्धान्त की छानबीन करना था। उनमें अनेकों प्रसिद्ध वैज्ञानिक तथा डाक्टर भी सम्मिलित थे तथा जनसाधारण में से भी जिनको इस विषय से अनुराग था उसमें भाग लेते थे। उन लोगों ने जाँचकर के यही परिणाम निकाला कि मानव शरीर में कीटाणुओं का प्रकट होना रोगोत्पत्ति के पश्चात् ही होता है इसलिये कीटाणु रोगों के कारण नहीं हो सकते, वरन् रोगों का कारण भिन्न ही होता है। इस सिद्धान्त का प्रत्यक्ष प्रमाण देने के लिये कुछ लोगों ने अपने को स्वयं सेवक के रूप में उपस्थित किया। डाक्टरों ने उनको भोजन तथा जल के साथ मिलाकर डिफ्थीरिया, निमोनिया, टाइफायड ज्वर (मोतीझरा) और गर्दन तोड़ बुखार आदि के ताजे और स्वस्थ कीटाणु दिये, पर उनके शरीर में उनके कारण कोई भी विकार या रोग उत्पन्न न हो सका और वे कीटाणु साधारण रीति से मल के साथ बाहर निकल गये। इसी प्रकार अमरीका के डॉक्टर ऐडरमण्ड ने चेचक के टीके की असत्यता सिद्ध करने के लिये अपने समस्त शरीर में चेचक का बहुत-सा मवाद मल ड़ाल लिया। वहाँ के कानून के अनुसार उनको रोगी मानकर कारंटाइन (रोगियों का निरोध गृह) में बन्द कर दिया, पर कई दिन बीत जाने पर भी जब उन पर उसका कोई प्रभाव न पड़ा तब उन्हें छोड़ दिया गया।

हम फिर यह बतला देना चाहते हैं कि हमारा उद्देश्य कीटाणुओं के अस्तित्व से इन्कार करना नहीं है और न हम उनको निष्प्रयोजन बतलाते। ये कीटाणु प्रकृति के एक बड़े साधन के रूप में हैं, जिनके द्वारा वह निर्माण और विनाश दोनों कार्यों को सम्पन्न करती है। एक प्रकार के कीटाणुओं द्वारा प्रकृति जीवन की उत्पत्ति और वृद्धि करती है और दूसरी प्रकार के कीटाणु चारों तरफ पैदा होने वाली गन्दगी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और मल की सफाई करते हैं। अगर ये कीटाणु न होते तो यह संसार मुर्दा और सड़ी गली चीजों से भर जाता और उसमें स्वस्थ जीवन के विकास के लिये स्थान ही न रहता। इसलिये प्रकृति कीटाणुओं द्वारा प्रकृति जीवन की उत्पत्ति और वृद्धि करती है और दूसरी प्रकार के कीटाणु चारों तरफ पैदा होने वाली गन्दगी और मल की सफाई करते रहते हैं। अगर ये कीटाणु न होते तो यह समस्त संसार मुर्दा और सड़ी-गली चीजों से भर जाता। उसमें स्वस्थ जीवन के विकास के लिये नया स्थान प्रकृति ही मुर्दा और रोगी प्राणियों, पौधों और वनस्पतियों को नष्ट कराके नई वस्तुओं का निर्माण किया करती है। इस दृष्टि से कीटाणुओं को दोष देना या उनको भयंकर बतलाना निरर्थक है। अगर हमको उससे किसी प्रकार की हानि पहुँचती है तो उसका कारण हमारे शरीर के भीतर जमा विजातीय द्रव्य या गन्दगी ही है। उसके कारण ही हमारे शरीर में तरह-तरह के विचार उत्पन्न होते हैं, जो अन्त में रोगों के रूप में प्रकट होते हैं। कीटाणु वास्तव में उस गन्दगी को मिटाने को आते हैं और इस प्रकार वे हमारे शत्रु नहीं मित्र ही समझे जाने चाहिये। यह दूसरी बात है कि हम अपनी अज्ञानता से या स्वार्थ पर चिकित्सकों के उपदेशों से भ्रम में पड़कर उस समय उल्टा-सीधा काम करने लगें और अपने ही हाथ से रोग को गम्भीर या घातक बना दें। कीटाणुओं को इसके लिये दोषी नहीं बताया जा सकता।

वास्तव में हमारे रोगों का सर्वप्रधान कारण हमारा आहार है। हम जैसा आहार करेंगे वैसा ही हमारा शरीर बनेगा और वैसा ही आस-पास के वतावरण का उस पर प्रभाव पड़ेगा। आजकल लोगों ने आहार सम्बन्धी नियमों और संयम का अधिकांश में त्याग कर दिया है और वे जिव्हा के स्वाद के लिये और आहार-तत्व को न समझने के कारण प्रायः आवश्यकता से बहुत अधिक खाया करते हैं या ऐसे पदार्थ खाते हैं जो हमारी शारीरिक प्रकृति के अनुकूल नहीं होते और भीतर पहुँचकर विकारों को उत्पन्न करते हैं। जब ऐसे पदार्थ कब्ज पैदा करके भीतर ही पड़े रहते हैं तो उनमें सड़न पैदा होती है और विषाक्त रस तथा गैसों की उत्पत्ति होकर रक्त दूषित होने लगता है। यह दूषित रक्त ही समस्त रोगों की जड़ है, क्योंकि रक्त शरीर में नख से शिख तक प्रत्येक अंग में बराबर दौरा करता रहता है और उसमें जो विषाक्त द्रव्य मिल जाता है, उसे वह समस्त शरीर में फैलाता जाता है। उस अवसर पर हमारा जो अंग सबसे अधिक निर्बल अवस्था में और असुरक्षित होता है, उसी पर रोगों का आक्रमण हो जाता है। यही रोगों का सच्चा कारण है, कीटाणुओं को इसके लिये दोषी बनाना व्यर्थ है।

विजातीय द्रव्य की उत्पत्ति और वृद्धि

रोगों का मुख्य कारण शारीरिक मल ही माना गया है। जब हम प्रकृति के नियमों का विरुद्धाचरण करके अपना आहार-विहार दूषित बना लेते हैं और जिह्वा तथा भोगेन्द्रिय की तृप्ति के लिये आवश्यकता से अधिक भोग्य पदार्थों का प्रयोग करने लगते हैं, तो हमारे शारीरिक अंगों पर अधिक भार पड़ता है और वे अपना काम ठीक ढंग से नहीं कर पाते। इन अंगों में मुख्य आमाशय भी माना गया है, जो सब प्रकार के आहार को पचाकर उसके रस से देह की पुष्टि करता है। जब उसका कार्यभार बढ़ जाता है तो वह खाये हुये भोजन का रस पूर्ण रूप से नहीं निकाल पाता और अर्द्धभुक्त आहार ही हमारे मलाशय में पहुँच जाता है। ऐसा आधा पचा आहार मलाशय में पहुँचकर शीघ्र ही सड़ने लग जाता है और उसमें से गन्दगी मिश्रित रस निकलकर रक्त में मिल जाता है। यह दूषित रक्त ही रोगों का मूल कारण, क्योंकि वह रक्त-वाहिनी नसों द्वारा समस्त शरीर में संचरण करता रहता है और अपनी उस गन्दगी को जगह-जगह छोड़कर अस्वास्थ्यकर अवस्था उत्पन्न करता है।

पर यह समझना कि मल केवल प्रतिदिन खाये जाने वाले भोजन से ही निकलता है, पूर्णतः ठीक नहीं है। भोजन से काफी मल अवश्य निकलता है, पर आँतों से छनकर जो मल निकलता है, वह भी परिमाण में कम नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता। यही कारण है कि कई दिन तक उपवास करने की दशा में भी प्रतिदिन कुछ मल निकलता ही रहता है।

शरीर के जीवकोष (सेल) हमेशा टूटते-फूटते रहते हैं। अगर वे ठीक समय से शरीर के बाहर न निकाल दिये जायें तो वे भी मल की तरह विकार उत्पन्न करते हैं। इसी प्रकार शरीर के विभिन्न अंग, यकृत, गुर्दा, आमाशय, फेफड़ा आदि जो कार्य करते हैं। उनकी कार्यप्रणाली से भी कार्बोनिक एसिड, यूरिक एसिड, फास्फरिक एसिड आदि कई विषाक्त द्रव्य उत्पन्न होते हैं, उनको भी बाहर निकालना आवश्यक होता है। चौथे नम्बर पर शरीर के दोषयुक्त अंग खराब टानसिल कमजोर दाँत, प्रदाहयुक्त श्वाँस नली से भी विष उत्पन्न होते हैं। शरीर पूर्ण स्वस्थ न हो तो शरीर के भीतर रहने वाले। विभिन्न प्रकार के कीटाणु भी विष के परिणाम को बढ़ाते हैं।

यह समस्त विष या मल शरीर के लिये विजातीय ही होता है और हमारे स्वास्थ्य का आधार इसी पर है कि यह शीघ्र से शीघ्र मल द्वार, मूत्र नली, फेफड़े, चर्म आदि के द्वारा निकलता चलां जाये। यदि ये मल निकालने के मार्ग साफ और खुले हुये रहते हैं और मल को आसानी से बाहर निकालते रहते हैं तो हमको कोई रोग होने की सम्भावना नहीं होती। पर यदि किसी कारणवश इनमें कुछ खराबी आ जाती है, ये अपना कार्य ठीक ढंग से नहीं कर सकते तो शरीर के भीतर विजातीय द्रव्य की वृद्धि होने लगती है और जब वह एक नियत सीमा को पार कर जाती है, तो रोग प्रगट होने लगते हैं। इसी तथ्य को दृष्टिगोचर रखकर सुप्रसिद्ध चिकित्सा विज्ञान के ज्ञाता **डॉ० सर विलियम आरबूथनट** ने कहा है कि "चाहे रोगों का कितना ही विस्तार क्यों न किया जाय पर वास्तव में रोग एक ही है अर्थात् शरीर को ठीक तरह सफाई न हो सकना।"

यह विजातीय द्रव्य शरीर में किस प्रकार जमा होकर वृद्धि को प्राप्त होता है और क्रमशः स्वास्थ्य को नष्ट करके मनुष्य को रोगी बना देता है। इसका विशद् वर्ण जल-चिकित्सा के आचार्य डॉ० लुई कूने ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "एम आई वैल और सिक" (मैं तन्दुरस्त हूँ या बीमार) में किया है। वे कहते हैं कि—

"शरीर में बहुत दिन तक अप्राकृतिक भोजन तथा अपचे भोजन को निकालते रहने की ताकत नहीं रह जाती। तब शरीर में विजातीय द्रव्य जमा होने लगता है। आरम्भ में विजातीय द्रव्य पेडू के पास मल-मूत्र त्याग के स्थानों के पास इकट्ठा होता है। फिर उसमें नित्य नया विजातीय द्रव्य मिलकर उसकी मात्रा बढ़ती रहती है और शीघ्र ही अन्दर ही अन्दर उसमें एक परिवर्तन होने लगता है। उसके रेशे बिखरने लगते हैं और एक प्रकार का प्रकोप या सड़न पैदा हो जाती है। विजातीय द्रव्य घुलकर शरीर के ऊपर तथा नीचे के हिस्सों में फैलता है और धीरे-धीरे शरीर के भिन्न-भिन्न हिस्सों में जमा हो जाता है। यह द्रव्य ऊपर मस्तक तक तथा नीचे पाँव और हाथों की सीमा तक पहुँचे बिना नहीं रुकता। शरीर इसे हर कोशिश से बाहर निकलना चाहता है, पर अधिक काल तक वह इस क्रिया में समर्थ नहीं होता। इस कोशिश में शरीर पर बहुत ज्यादा पसीना आता है, फोड़े-फुन्सियाँ आदि क्रियायें होती हैं। पाँव का पसीना, जिसके सम्बन्ध में इतना अधिक मतभेद है, दर असल शरीर की सफाई के लिये ही होता है। वास्तव में यह रोग का लक्षण है। इसे कृत्रिम उपायों से रोकने का फल केवल यह होगा कि शरीर में अव्यवस्था बढ़ेगी। शरीर को उत्तेजित करने वाली घटनायें जैसे आकस्मिक ठंड, बाहरी चोट, प्रबल मनोविकार इत्यादि का नतीजा प्रायः यह होता है कि अंगों के सिरों पर जमा हुये विजातीय द्रव्य को शरीर उसके उत्पत्ति स्थान की ओर वापस भेजने लगता है। उस समय वह द्रव्य प्रायः जोड़ों के पास आकर रुक जाता है। यह सूजन का कारण होता, जो उपर्युक्त कारणों से सदा जोड़ों के नीचे की ओर ही प्रकट होती है। हम गठिया के किसी भी रोगी में यह दशा देख सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"जिन अंगों में विजातीय द्रव्य जमा रहता है, वे अपना स्वाभाविक कार्य उचित रूप से पूरा नहीं कर सकते। वहाँ रक्त प्रवाह में रुकावट होने लगती है और इससे शरीर का पूरा पोषण नहीं हो पाता। जहाँ विजातीय द्रव्य बहुत अधिक जमा हो जाता है, वहाँ अंग छूने पर ठण्डे जान पड़ते हैं। उनमें गरमी लाना बहुत मुश्किल हो जाता है। पहले पहल शरीर के अग्रभाग—हाथ-पैर ठंडे जान पड़ने लगते हैं, पर जल्दी ही दूसरे अंगों के हिस्सों में भी इसका असर होने लगता है।"

जब इस प्रकार शरीर में मल या विजातीय द्रव्य की वृद्धि होती है तो उसका कुपरिणाम भी कुछ समय में प्रकट होने लगता है। जब खाया हुआ भोजन अधपचे रूप में छोटी और बड़ी आँत में चला जाता है तो वह नियमित मल की तरह बाहर नहीं निकल पाता, वरन् बीच में ही रुककर सड़ने लग जाता है। उसका कुछ अंश गैस रूप होकर ऊपर के अंग में चढ़ने लगता है। अगर उसके मार्ग में कोई भी बाधा न हो तो वह सहज ही में मस्तक तक पहुँच सकता है। पर बीच में जो शारीरिक अवयव हैं, वे उसको रोकने की चेष्टा करते हैं। इन क्षेत्रों के पारस्परिक संघर्ष के कारण सिर गर्म हो उठता है और अगर मल अधिक होता है तो उसकी गर्मी से बुखार भी हो जाता है। यह बुखार शारीरिक अवयवों द्वारा उसी विजातीय द्रव्य के बाहर निकालने की चेष्टा का परिणाम होता है। आरम्भ में जब यह मल कम होता है तो दस्त और पसीना के रूप में निकल जाता है। पर जितना मल निकलता है उससे अधिक यदि हम अनुचित खान-पान द्वारा शरीर के भीतर डालते रहते हैं, तो यह समस्त शरीर में बिखरकर जहाँ सुविधा होती है, अपना स्थान बना लेता है। शारीरिक अस्वस्थता के अतिरिक्त ऐसे मलभारयुक्त लोगों की आकृति भी बिगड़ने लगती है। मुखाकृति खराब होकर मस्तक भी बेडौल हो जाता है। गर्दन जैसी होनी चाहिये, उसकी अपेक्षा छोटी या बहुत लम्बी दिखलाई पड़ने लगती है। अनेक लोगों का मुँह फूला हुआ जान पड़ता है। ऐसे फूले शरीर को बहुत-से लोग पुष्टता या शक्ति का चिन्ह समझते हैं, परन्तु उनका यह विचार सर्वथा भ्रमपूर्ण होता है। यह लक्षण शक्ति की वृद्धि के न होकर मल भर जाने के होते हैं। छाती ऊँची-नीची हो जाती है, पेट आगे को लटकने लगता है, टाँगे खम्भे के समान दिखाई देने लगती हैं। कुछ लोगों के शरीर में मैल अधिकांश में भीतरी भागों में ही रहता है, इसलिये उनके शरीर में ऐसे चिन्ह तो नहीं दिखलाई पड़ते पर उनके शरीर में झुर्रियाँ पड़ जाती हैं और खाल लटक जाती है। गर्दन को इधर-उधर फेरने से खाल तनने लगती है। मुख का रंग, फीका, पीला अथवा बहुत लाल हो जाता है। शरीर का रंग यदि बहुत चमकने लगे तो यह भी विजातीय द्रव्य इकट्ठा होने का लक्षण है।

मल के इकट्ठे होने की पहचान यह भी है कि उसके शरीर की फुर्ती जाती रहती है और उसका स्थान आलस्य ग्रहण कर लेना है। ऐसा व्यक्ति सदैव निकम्मा बनकर पड़ा रहना चाहता है और अपना कोई काम स्वयं करना पसन्द नहीं करता। उसे सब प्रकार का परिश्रम, चलना, फिरना, खेलना-कूदना बहुत बुरा जान पड़ता है।

मनुष्य यद्यपि अपनी लापरवाही और चटोरेपन के कारण शरीर को अनावश्यक खाद्य पदार्थों और फलस्वरूप मल से भरता रहता है, पर प्रकृति जहाँ तक सम्भव होता है, उसको किसी न किसी मार्ग से निकाल शरीर को रोग से बचाने की चेष्टा करती ही रहती है। वह मलाशय से बचे हुये को पेशाब, पसीना और श्वांस द्वारा पूरा कराने का प्रयत्न करती है। इस विधि से चर्म का काम गुर्दे से और गुर्दे का काम चर्म से लेकर प्रकृति किसी प्रकार शारीरिक व्यवस्था को ठीक बनाये रखने की चेष्टा करती है। पर यदि मनुष्य इतने पर भी नहीं चेतता और अपने प्रकृति विरुद्ध तथा अनियमित रहन-सहन में सुधार नहीं करता, अति भोजन, तम्बाकू, मद्य, नशा, असमय की निद्रा, बन्द स्थान में सोना और कुटेवों द्वारा मल को बढ़ाकर शारीरिक व्यवस्था विश्रृंखलित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर देता है, तो शारीरिक अवयव शरीर को साफ रखने में असमर्थ हो जाते हैं और वह मल शरीर के भीतर ही जमा होकर हानिकारक विकार उत्पन्न करने लगता है। ऐसी व्यवस्था आ जाने पर प्रकृति भी अपना रूप बदल देती है और सहज उपायों को छोड़कर कठोर उपायों से काम लेने लगती है। इन मलों को भस्म करने के लिये ही वह अक्सर ताप (ज्वर) को उत्पन्न करती है, जिसकी गर्मी से मल घुलकर विभिन्न रास्तों से बाहर निकल जाय। जब कभी मल भिन्न प्रकार का होता है तो प्रकृति पेचिश और आंव के दस्त पैदा कर देती है। यदि मल श्वांस नली द्वारा निकलने लायक हुआ तो प्रकृति खाँसी जुकाम उत्पन्न मल को कफ के रूप में निकालने की कोशिश करती है। जब वह दोषों को चर्म द्वारा निकालने का प्रयत्न करती है तो उनका स्वरूप फोड़ा, फुन्सी, खाज आदि का हो जाता हैं।

इसी सिद्धान्त की पुष्टि करते हुये इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध डाक्टर टामस सिडेनहम ने अपने ग्रन्थ में कहा है कि "प्रत्येक रोग रोगी के शरीर में स्वास्थ्य को वापस लाने की प्राकृतिक चेष्टा के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता।" इसी प्रकार योरोपीय चिकित्सा के आदि गुरु हिप्पोक्रेटस ने लिखा है—"प्रत्येक रोग एक प्राकृतिक क्रिया है और उसमें जो रोग के लक्षण उत्पन्न होते हैं, वे शरीर प्रतिक्रिया से उत्पन्न होते हैं। इसलिये रोग की अवस्था में चिकित्सक का एक मात्र कर्त्तव्य यही है कि वह जैसे सम्भव हो प्रकृति की सहायता करें।"

पर आजकल हम उल्टी गति देख रहे हैं। प्रकृति को सहायता देकर रोग के मूल कारण विजातीय द्रव्य को बाहर निकाल देने के बजाय अधिकांश डाक्टर तीव्र दवाओं के इंजेक्शन, गोलियों कैपसूल देकर उसे दबा देने की चेष्टा करते हैं। इसका परिणाम यह होता है वह विष रूप विजातीय द्रव्य शरीर के अन्दर ही दबा पड़ा रह जाता है, वही धीरे-धीरे बढ़ता रहता है और कुछ समय पश्चात् जीर्ण रोग के रूप में प्रकट होता है।

इस प्रकार हम स्वयं ही अपनी भूल से शरीर के भीतर विजातीय द्रव्य को उत्पन्न करके निरन्तर उसकी वृद्धि करते रहते हैं और जब प्रकृति रोग के रूप में उसे बाहर निकाल देने की चेष्टा करती हैं, तब भी शान्त रहकर उस प्रक्रिया को पूर्ण हो जाने देने की बजाय तरह-तरह की हानिकर दवाओं से उसके कार्य में बाधा डालते हैं। इस प्रकार यदि कहा जाय कि हम स्वयं अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारते हैं तो इसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं। यदि हम इस विपत्ति से परित्राण पाना चाहते हैं तो प्राकृतिक उपायों से विजातीय द्रव्यों को बाहर निकालकर शरीर को सदैव स्वच्छ और निर्मल रखने का प्रयत्न करना चाहिये, यही स्वास्थ्य प्राप्ति का सच्चा मार्ग है।

पंचतत्व—चिकित्सा का आश्चर्यजनक प्रभाव

संसार में मनुष्य की उत्पत्ति में प्रकृति के विशेष नियम या दैवी-विधान का प्रभाव स्पष्ट रूप से पाया जाता है। जो व्यक्ति इन नियमों और सिद्धान्तों को समझकर अपना रहन-सहन तदनुकूल रखते हैं, वे सदैव स्वास्थ्ययुक्त और सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। अस्वस्थता तथा रोग हमारे अनियमित अथवा विपरीत रहन-सहन के ही परिणाम होते हैं। अप्राकृतिक अथवा अति मात्रा में किये गये आहार-विहार के परिणाम से शरीर में मल की वृद्धि होने लगती है, विषाक्त विजातीय द्रव्य उत्पन्न होकर विभिन्न अवयवों में जमा होने लगते हैं, रक्त संसार में बाधा पड़कर मल का बाहर निकलना कम होने लगता है और अन्त में जब यह विजातीय द्रव्य शरीर की सहन शक्ति से अधिक बढ़ जाता है तो ज्वर, दस्त, खाँसी आदि रोग उत्पन्न कर देता है। पर ये रोग भी आरम्भिक दशा में मनुष्य के हित के लिये ही होते हैं, उनके द्वारा प्रकृति शरीर के संचित मल को निकालकर शुद्ध और निर्मल बनाने का प्रयत्न करती है। पर अधिकांश मनुष्य इस बात के रहस्य को न समझकर रोग को पीड़ा का कारण और एक आकस्मिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दुर्घटना के समान मानकर उसे दवा या अन्य अप्राकृतिक उपायों से मिटाने की दवा देने की कोशिश करते हैं, जिसका परिणाम और भी बुरा होता है और सरल रोग, जटिल रोग का रूप धारण कर लेता है।

ऐसी स्थिति में हमारा क्या कर्त्तव्य है ? जो इस प्रश्न को एक सच्चे जिज्ञासु के रूप में पूछता है, उसे हमारा उत्तर यही है कि अगर तुम अपना जीवन सुख और शान्ति से व्यतीत करने की अभिलाषा रखते हो तो प्रथम तो प्रकृति के अनुसार ही अपना रहन-सहन रखो और यदि अनजाने में या लापरवाही से प्रकृति के विरुद्ध चलकर तुमने अपने शरीर में विजातीय द्रव्य और रोग को उत्पन्न कर लिया तब भी फिर पीछे की तरफ लौटो, अर्थात् अप्राकृतिक आदतों और कार्यों को त्यागकर शुद्ध प्राकृतिक मार्ग पर चलने लगे। यह बात तो हम सभी जानते हैं कि हमारा शरीर प्रकृति के पंचतत्वों—आकाश, वायु, अग्नि, जल पृथ्वी से मिलकर बना है, इन्हीं के द्वारा हमारे देखते-देखते यह हाथ भर के बालक से बढ़कर साढ़े तीन हाथ का युवक बन जाता है, इसलिये इससे सम्बन्ध रखने वाली जो भी समस्या उत्पन्न हो, जो भी आवश्यकता आन पड़े उसके लिये पंचतत्वों की ही सहायता लेनी चाहिये। इन पंचतत्वों का परिणाम और क्रम ठीक रहने से ही स्वस्थ अवस्था कायम रहती है और इनमें गड़बड़ी हो जाने से, परिणाम घट-बढ़ जाने से रोग पैदा हो जाता है। जांच करने से ज्ञात होता है कि वायु-तत्व की मात्रा घट-बढ़ जाने से गठिया, लकवा, दर्द, कम्प, अकड़न, गुल्म, हड़फूटन, नाड़ी विक्षोभ आदि उत्पन्न होते हैं। अग्नि तत्व में अन्तर पड़ने से फोड़े, फुन्सी, रक्तपित्त, हैजा दस्त, क्षय, श्वांस, उपदंश, दाह, खून फिसाद आदि की वृद्धि होती है। जलतत्व की गड़बड़ी से जलोदर, पेचिस, संग्रहीन, बहुमूत्र, प्रमेह, स्वप्नदोष, सोमप्रदर, जुकाम, खांसी जैसे रोग प्रकट होते हैं। पृवी तत्व बढ़ जाने से फीलपाँव, तिल्ली, जिगर, रसौली, मेद वृद्धि, मोटापा आदि रोग होते हैं। आकाश तत्व के विकार से मूर्छा, मृगी, उन्माद, पागलपन, सनक, अनिद्रा, बहम, घबराहट, दुःस्वप्न, गूँगापन, बहरापन, विस्मृति आदि शिकायतें पैदा होती हैं। दो-तीन अधिक विकारों के मिश्रण से अन्य पचासों तरह के रोग उत्पन्न होते हैं।

जिस कारण से कोई विकार पैदा हुआ हो उस कारण को दूर कर देने से वह दूर भी हो जाता है। जब हम यह जान लेते हैं कि अमुक रोग अमुक तत्व की कमी या ज्यादती से पैदा होता है तो उसी तत्व का प्रयोग करके निवारण करना सहज हो जाता है।

मिट्टी—मिट्टी में विष या विकारों को खींचने की अद्भुत शक्ति पाई जाती है। शरीर के जिस अंग पर मिट्टी का लेप किया जायेगा और जिस अंग को मिट्टी में डाला जायेगा उसी का विकारयुक्त अंश खिंचकर मिट्टी में आ जायेगा। इसके साथ ही मिट्टी में पोषण देने की भी अपूर्व क्षमता है। जैसे फल, फूल आदि से एक प्रकार की गन्ध निकलती है, जो वास्तव में एक तरह की वाष्प या गैस होती है, उसी प्रकार पृथ्वी या मिट्टी से भी एक विशेष गैस निकलती है, जो बड़े अद्भुत गुणों से युक्त होती है। पृथ्वी में बड़े अमूल्य रासायनिक तत्व भरे पड़े हैं। सब प्रकार की धातुयें, वनस्पतियाँ, औषधियाँ तथा सभी खाद्य पदार्थ से ही प्रकट होते हैं। पृथ्वी का रासायनिक द्रव्य ही इन सब वस्तुओं के रूप में परिवर्तित होकर दृष्टिगोचर होता है। यही रासायनिक तत्व वाष्प के साथ भी बाहर आता है। पृथ्वी के समीप शरीर रहने से वह गैस स्वास्थ्य पर बहुत हितकारी प्रभाव डालती है। प्राचीन समय के ऋषि मुनि प्रायः कच्ची झोंपड़ियों या खोदी हुई गुफाओं में रहते थे, जहाँ उनका सम्पर्क सदैव पृथ्वी में रहता था। इससे उनका स्वास्थ्य सुदृढ़ रहता था और पोषण भी मिलता था। इसका परिणाम यह होता था कि नाममात्र के आहार को लेकर ही वे दीर्घजीवी होते थे। इसी प्रकार छोटे बालक जो प्रायः धूल मिट्टी में खेलते-लेटते रहते हैं उनकी शारीरिक वृद्धि बड़ी शीघ्रता से होती है और उनकी बड़ी चोट भी शीघ्र ठीक हो जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जल—मनुष्य के शरीर में जल का अंश ६० प्रतिशत बतलाया है। इसी से जल की सर्वाधिक आवश्यकता प्रतीत होती है। जल की कमी में देह सूखने लगती है, नाड़ियाँ जकड़ती हैं, हड्डियाँ निकल आती हैं, खून गाढ़ा हो जाता है तथा दाह, प्यास आदि अनेक उपद्रव होने लगते हैं।

जल हमारे शरीर को सींचना है, इसलिये मनुष्य को प्रतिदिन कई सेर पानी पीना आवश्यक होता है। ताजा जल में ऐसे कितने ही रासायनिक तत्व पाये जाते हैं, जिनसे शरीर को पर्याप्त पोषण मिलता है। शरीर के भीतर के अनेक विकार इस पानी के साथ ही पसीना और मूत्र में बाहर निकल जाते हैं। पर्याप्त मात्रा में उचित विधि से यदि अंग प्रत्यगों को जल प्राप्त होता रहे तो शारीरिक स्वास्थ्य के स्थिर रहने में बड़ी सहायता मिलती है।

हिन्दू धर्म-शास्त्रों में जगह का महत्त्व बतलाया गया है और लिखा है—"अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति" अर्थात् शरीर की शुद्धि जल से ही होती है। देह में जो विकार, दोष, मल भरे हैं उनको दूर करके शरीर को शुद्ध बनाना है तो जल का यथोचित उपयोग अनिवार्य है। अभी तक योरोप के लोग ठण्ड के कारण अधिक स्नान नहीं करते थे। इसलिये इसके लाभों से भी अपरिचित थे। पर अब वहाँ के अनेक अन्वेषकों ने जाँच करके स्नान के महान् गुणों का पता लगाकर सर्व साधारण को बतलाया तो वहाँ इसका खूब प्रचार हो गया है और तरह-तरह के स्नानों के द्वारा सर्व प्रकार के रोगों की सफलतापूर्वक चिकित्सा की जाती है।

हमारे देश में तो प्राचीन काल से ही स्नान को इतना महत्त्व दिया गया है कि हर एक श्रेष्ठ कर्म या धार्मिक कृत्य के पहले स्नान का विधान हैं। तीर्थ-स्नान, माघ-स्नान, बैसाख-स्नान, कार्तिक-स्नान, पर्व स्नान अनेक विधियों से लोगों को सदैव स्नान करने की प्रेरणा की गई है, जिससे वे मूलतत्व न भी समझें तो भी धर्म का ख्याल करके ही नियमित स्नान करके लाभ उठाते रहें। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिये जल का विधिपूर्वक काफी मात्रा में प्रयोग करना अत्यावश्यक है।

अग्नि—अग्नि तत्व जीवन का उत्पादक है। संसार में जितने जीव-जन्तु, पौधे, वनस्पति आदि पैदा होते हैं और बढ़ते हैं, उनने मूल में गर्मी अवश्य रहती है। जहाँ कहीं चैतन्यता दिखाई देती है, वहाँ गर्मी अवश्य पाई जाती है। शरीर में से गर्मी का अन्त हो जाये तो जीवन का अन्त हो जाना भी अवश्यम्भावी है। वेद में भी सर्वप्रथम 'अग्नि मीले पुरोहितम्' कहकर सब तत्वों में अग्नि की विशेषता को प्रकट किया है।

सूर्य ही अग्नि तत्व का प्रतीक है अथवा यों कहिये कि अग्नि सूर्य का ही प्रतिनिधि है। इस कारण शास्त्रों में सूर्य को जगत की आत्मा कहा गया है। यह बात सदा देखने में आती है कि जिन पौधों, पेड़ों को ठीक धूप लगती है, वे शीघ्र बढ़ते हैं और खूब फलते-फूलते हैं, और जिनको ठीक धूप नहीं लगती, वे पीले और मुर्झाये से ही बने रहते हैं।

हमारे देश और धर्म में इस तत्व को समझकर सदा से सूर्य की उपासना को प्रधान-धर्म कार्य स्वीकार किया है। अब पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने भी सूर्य की आश्चर्यजनक शक्ति और गुणों का पता लगाया है और वहाँ सूर्य किरणों के प्रयोग से रोग निवारण की नई ही चिकित्सा प्रणाली का प्रचार किया गया है। वहाँ मशीनों द्वारा सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों को पृथक् करके सैकड़ों कठिन रोगों को सहज में ठीक किया जा रहा है। कितने ही बड़े-बड़े अस्पताल केवल सूर्य किरणों द्वारा चिकित्सा करते हैं। साथ ही सात तरह के रंगीन काँचों और बोतलों में भरे पानी द्वारा भी रोगों का निवारण किया जाता है। रोग के कीटाणुओं को नष्ट करने की जितनी क्षमता सूर्य की धूप में है उतनी और किसी चीज में नहीं है। इसलिये रोगियों के लिये धूप का सेवन अनिवार्य माना गया है।

वायु—समस्त तत्वों में वायु बहुत सूक्ष्म है और इसलिये उसका प्रभाव भी शीघ्र होता है। अन्न और जल के बिना मनुष्य काफी समय तक जीवित रहे हैं, पर वायु के बिना किसी सामान्य मनुष्य का दस-पाँच मिनिट भी काम नहीं चल सकता। जिस प्रकार इसके गुण और लाभ अधिक हैं, उसी प्रकार इसके गलत प्रयोग से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हानियाँ भी अधिक होती हैं और जिस अंग की वायु विकृत हो जाती है, उसमें तुरन्त ही असह्य वेदना होने लगती है अथवा वह पक्षाघात जैसी स्थिति में होकर सर्वथा बेकार ही हो जाता है। वायु को प्राण माना गया है और इसीलिये जीवन की निर्भयता प्राण वायु पर मानी गई है। सांस रुक जाने पर मृत्यु में कुछ देर नहीं लगती। हवा के खराब हो जाने से ही तरह-तरह की महामारियाँ, छूत के रोग आदि फैलते हैं। इसलिये बुद्धिमान लोग सदा स्वच्छ वायु के स्थान में निवास करना ही पसन्द करते हैं।

चिकित्सा जितनी स्थूल होती है, उतना ही उसका प्रभाव देर से होता है। चूर्ण चटनी, अवलेह आदि के रूप में ली गई दवा पहले पेट में जाकर पचती है, फिर रस और रक्त के रूप में परिवर्तित होकर कुछ असर दिखाती है। यदि पाचन क्रिया ठीक नहीं होती तो वह दवा बिना कुछ असर किये मल के साथ बाहर निकल जाती है। इसलिये चिकित्सक प्रायः तरल दवा देते हैं, जिससे वह शरीर में जल्दी मिल सके। वायु इन दोनों से शीघ्र असर करती है। इसका उदाहरण क्लोरोफार्म है, जिसे सूँघते ही बेहोशी आ जाती है, खाने की किसी प्रकार की दवा से इतनी जल्दी बेहोशी नहीं आ सकती है।

वायु के इस गुण को ध्यान में रखकर ही भारतीय ऋषियों ने यज्ञ-हवन को प्रभावशाली वैज्ञानिक विधि का आविष्कार किया था। हवन में जिन औषधियों का प्रयोग किया जाता है, वे वायु में मिलकर सूक्ष्म रूप ग्रहण कर लेती हैं और मस्तिष्क तथा समस्त शरीर पर तुरन्त प्रभाव डालती हैं। फ्रांस के एक वैज्ञानिक गिलबर्ट ने परीक्षणों द्वारा सिद्ध किया है कि शक्कर के जलाने से जो गैस उत्पन्न होती है उससे हैजा, तपेदिक, चेचक आदि रोगों का विष दूर होता है। डाक्टर हैफकिन ने बतलाया है कि घी के जलने से उत्पन्न होने वाली गैस चर्मरोग, रक्त विकार, शुष्कता, दाह और आन्त्र रोग के विकारों को नष्ट करती हैं। डाक्टर टाटलिक ने दाख के धुयें को टाइफाइड और निमोनियाँ ज्वर की उत्तम औषधि बताया है।

इस प्रकार हवन द्वारा वायु तत्व शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य प्रदान करने वाला बन जाता है। आजकल डाक्टर भी कई रोगों का इलाज केवल सूँघने वाली दवाओं से करते हैं। वैद्यक में बीसियों रोगों के लिये धूनी देने और धूम्रपान करने का उपचार बतलाया गया है।

आकाश—आकाश तत्व इतना अधिक सूक्ष्म है कि उसका अनुभव साधारण रीति से तो क्या बड़े-बड़े यन्त्रों द्वारा भी भली प्रकार नहीं हो सकता। पर कार्य रूप से उसका परिचय मिलता है। वह प्रत्येक पोले स्थान में पाया जाता है और वैज्ञानिकों ने उसको 'ईथर' का नाम दिया है। इसका प्रधान गुण शब्द है। हम जितने भी शब्द सुनते हैं, वे आकाश तत्व के द्वारा ही हमारे पास पहुँचते हैं। यदि यह तत्व न होता तो हम बाजा, घण्टा, तोप, बन्दूक, मोटर आदि किसी की आवाज जरा भी नहीं सुन सकते थे। और तो क्या उस अवस्था में किसी बात को सुनना भी असम्भव होता। पर आकाश तत्व ऐसा है कि जिसको कोई किसी प्रकार पृथक् नहीं कर सकता। वही सदा प्रत्येक स्थान में व्याप्त रहकर पदार्थों के अस्तित्व को कायम रखता है।

आकाश जैसे स्थूल शब्द को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाता है वैसे ही वह विचारों को भी गति प्रदान करता है। हम जैसे भी विचार करते हैं वे आकाश तत्व द्वारा चारों तरफ बिखर जाते हैं और आकाश में बादलों की तरह इधर-उधर मँड़राते रहते हैं। हम अगर उन पर नियन्त्रण रखने की विधि जान लें तो उनको किसी भी व्यक्ति के पास पहुँचाकर उसके मन पर इच्छानुसार प्रभाव डाल सकते हैं। इसी प्रकार हम अभ्यास द्वारा आकाश में व्याप्त श्रेष्ठ विचारों को अपनी विचार शक्ति द्वारा आकर्षित करके तरह-तरह के लाभ भी उठा सकते हैं।

इस सिद्धान्त की विवेचना करते हुये मनोविज्ञान के आचार्यों ने बतलाया है कि जो लोग बीमारी की कल्पना किया करते हैं, उससे भयभीत रहते हैं, उसकी चिन्ता करते रहते हैं, वे वास्तव में अधिक बीमार पड़ते हैं। इसके विपरीत जो लोग, साहसी, प्रसन्नचित्त, निर्भय, निश्चित स्वभाव के होते हैं, उनके पास बीमारी कदाचित् ही फटकती है। स्वास्थ्य का आधा भाग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उचित आहार-विहार पर और आधा भाग उपयुक्त मानसिक स्थिति पर निर्भर है।

जो निरोगता चाहते हैं, स्वास्थ्य को कायम रखने और बीमारी को दूर करने के अभिलाषी हैं, उन्हें अपने विचारों को सदा ऊँचा उठाकर रखना चाहिये। पाप की वासना, गन्दगी, निराशा, ईर्ष्या, द्वेष, चिन्ता आदि के हीन विचारों को त्यागकर आशा, उत्साह, पुरुषार्थ, साहस, दृढ़ता, प्रेम, पवित्रता के विचारों से अपने मन को ओत-प्रोत रखें। अगर कभी किसी रोग का आक्रमण हो जाये तो उससे तनिक भी न घबड़ाकर इस बात का दृढ़ विश्वास रखें कि हम इसको बहुत शीघ्र मार भगावेंगे। स्वस्थ रहने की अवस्था में यही विश्वास रखें कि हम कभी बीमार नहीं हो सकते। इस प्रकार के विचार शरीर को स्वस्थ रखने में बड़ी सहायता करते हैं। इसी प्रकार जिस चिकित्सा को किया जाय पर हृदय से विश्वास करने से ही वह पूरा लाभ पहुँचा सकती है। यदि आपको चिकित्सक और उसके द्वारा बतलाये उपचार पर पूरा विश्वास नहीं है तो उससे नाम मात्र का ही फायदा हो सकता है।

इस प्रकार हमारे शरीर और मल का निर्माण तथा सञ्चालन पञ्च तत्वों द्वारा ही होता है। अगर उनके उचित परिमाण तथा क्रम में अन्तर पड़ जायेगा तो निस्सन्देह हमारा स्वास्थ्य खराब हो जायेगा और कोई न कोई रोग हमारे पीछा करने लगेगा। इसलिये निरोग जीवन की कामना रखने वाले व्यक्तियों को इन पाँचों तत्वों का उचित समन्वय करके आरोग्यता प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये और कभी भूल या दुर्घटनावश रोगी हो जाये तो कृत्रिम औषधियों के फेर में न पड़कर इन्हीं तत्वों द्वारा पुनः स्वास्थ्य प्राप्त करने का उद्योग करना चाहिये।

शारीरिक मल का निष्कासन—उपवास

पिछली पंक्तियों में जिस पञ्च-चिकित्सा का जिक्र किया गया है, उसमें सर्वप्रथम स्थान उपवास का माना जाता है। शरीर में कोई भी रोग हो और उसकी कैसी भी चिकित्सा करनी हो पर सबसे पहले दो-चार दिन का उपवास कर लेना अनिवार्य है। जिस प्रकार धर्म कार्यों में सबसे पहले गणेश जी की पूजा अनिवार्य मानी जाती है, उसी प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा के प्रत्येक उपचार में सर्वप्रथम उपवास कर लेना परमावश्यक है। कारण यही है कि प्रत्येक रोग शरीर में विजातीय द्रव्य या मल की वृद्धि का परिणाम होता है। इसलिये रोग मिटाने का उपाय यही है कि उस मल को बाहर निकाल कर शरीर की शुद्धि की जाय और शुद्धि का पहला उपाय उपवास ही है। उपवास का अर्थ है सब प्रकार का भोजन बिल्कुल बन्द कर देना। जब हम भोजन बन्द कर देते हैं तो दस-पाँच घण्टे में हमारा आमाशय बिल्कुल खाली हो जाता है और शरीर की जो प्राण-शक्ति भोजन को पचा कर रस-रक्त बनाने में लगी रहती थी, वह इस कार्य से छुट्टी पा जाती है और शरीर की सफाई करने के काम में लग जाती है। यदि हम खाना बन्द न करेंगे और प्राण-शक्ति का अधिकांश भोजन को पचाने के कार्य में ही लगा रहेगा तो शरीर की सफाई, मल के बाहर निकलने, रोग के घटने आदि में कोई बात पूरी न हो सकेगी। इसीलिये हम किसी भी शारीरिक कष्ट को मिटाने के लिये जल मिट्टी, सूर्य-ताप, वायु-स्नान आदि कुछ भी उपचार करें, उसमें तब तक पूर्ण सफलता नहीं मिल सकती जब तक उपवास द्वारा देह की शुद्धि न कर ली जाये।

जब उपवास द्वारा प्राण-शक्ति को छुट्टी मिलती है तो वह तुरन्त शरीर के सुधार और निर्माण के काम में जुट जाती है। उपवास के समय केवल गुदा मार्ग से ही मल नहीं निकलता वरन् आँख, कान, नाक से भी मैल निकलने लगता है। जीभ और दाँतों के ऊपर भी मैल की तह जम जाती हे। चर्म के रोम कूपों द्वारा मल का कुछ अंश निकलने से पसीना भी बदबूदार हो जाता है। पेशाब में पीलापन बढ़ जाता है और उसमें कड़वापन आ जाता है। और तो क्या साँस में भी स्पष्ट रूप से बदबू जान पड़ती है। इस प्रकार जरा फुर्सत पाते ही शरीर के सभी अंग सफाई के काम में जुट जाते हैं। इस कारण इन दिनों त्वचा और इन्द्रियों को जल्दी-जल्दी साफ करते रहना आवश्यक होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उपवास करने में दूसरे अथवा तीसरे दिन कुछ अधिक कष्ट जान पड़ता है। किसी-किसी को उबकाई (मितली) आती जान पड़ती है। पर यह कोई हानि की बात नहीं, दो-एक दिन में स्वयम् ही मिट जाती है। जो लोग शारीरिक या मानसिक दृष्टि से निर्बल हैं, उन्हें एक-दो दिन के उपवास बाद ही जब इच्छा हो तब फल का रस लेना आरम्भ कर देना चाहिये। यह रसाहार कहलाता है और इससे भी उपवास का उद्देश्य पूरा हो जाता है, यद्यपि उसमें समय कुछ अधिक लगता है। सन्तरा, मौसम्बी, मीठा नीबू, अँगूर, अनार आदि का एक-दो छटाँक रस दिन में ४-५ बार ले सकते हैं। यदि ये फल अधिक महँगे हों अथवा मिलते न हों तो टमाटर और अन्य तरकारियों का रस भी लिया जा सकता है। जो तरकारियाँ कच्ची खाई जा सकती हैं, उनका रस कच्ची अवस्था में निकाल लिया जाय और जो पकाकर खाई जाती हैं, उनको उबालकर रस निकाल लें। पर इस बात का ध्यान रखें कि रस में ठोस भाग जरा भी न आने पावे। खूब अच्छी तरह से छना हुआ पानी के जैसा रस मात्र ही हो। तरबूज का रस या नारियल का पानी भी लाभदायक रहता है। अगर इनमें से कुछ भी न मिल सके या कोई अन्य कठिनाई जान पड़े तो मठा का प्रयोग कर सकते हैं। नमक, चीनी और मिर्च मसालों का इस रसाहार के साथ प्रयोग न करना चाहिये। यदि शाक का रस बहुत अस्वादिष्ट जान पड़े तो उसमें थोड़ा नमक मिलाया जा सकता है। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिये कि यह रसाहार भी परिमित मात्रा में किया जाये। बहुत अधिक पेट भर लेने से उपवास का उद्देश्य नष्ट हो जाता है। इसलिये थोड़ी मात्रा और अधिक देर में, इन दो सिद्धान्तों के अनुसार ही काम चलाना चाहिये।

थोड़े दिन के उपवास में किसी तरह के भय या खतरे की बात नहीं है। जो लोग समझते हैं कि दो चार दिन भोजन न करेंगे तो दुबले हो जायेंगे। उनका ख्याल ठीक नहीं है। उपवास के बाद पथ्याहार लेने से शरीर की इतनी शीघ्रता से उन्नति होती है कि भूखे रहने के दिनों में जितनी कमी पड़ी थी, उससे अधिक वृद्धि हो जाती है। पाठकों ने देखा होगा कि जब बीमारी के कारण दस-पाँच दिन का लंघन करना पड़ता है तो उसके बाद बड़े कड़ाके की भूख लगती है और शरीर में जितनी निर्बलता आती है, वह ठीक आहार मिलने पर शीघ्र पूरी हो जाती है। इसका कारण यही होता है कि उपवास के कारण शरीर की सफाई हो जाती है भीतरी अंगों को एक प्रकार की नई शक्ति भी प्राप्त हो जाती है, इसलिये वे रस और रक्त बनाने का कार्य पहले की अपेक्षा कहीं अधिक उत्तमता से करते हैं। उपवास के समय मनुष्य का भार जरूर कम हो जाता है और कमजोरी भी आती है, पर शरीर की शुद्धि हो जाने से उसका परिणाम बहुत लाभजनक निकलता है।

किसी समय फ्रांस देश का छोटा स्टीमर समुद्र में तूफान के कारण रास्ते से भटक गया। उसमें भोजन सामग्री थोड़ी ही थी, जो यात्रियों की संख्या देखते हुये छः दिन से अधिक काम नहीं दे सकती थी। यह देखकर कप्तान ने सब सामग्री लोगों में बराबर बाँट दी और कहा कि अभी हमको किनारे तक पहुँचने में लगभग एक महीना लग जायेगा, इस सामग्री को इस प्रकार खर्च करो, जिससे उस समय तक काम चल जाये। यात्रियों ने ऐसा ही किया और एक महीना बाद जब वे किनारे पर जाकर लगे तो सब को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उनके स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया था। उनमें से कितने ही व्यक्तियों को जो रक्त-विकार, श्वांस, बहुमूत्र आदि की शिकायतें थी वे दूर हो गई थीं। वे सभी कुछ कमजोर पर स्वस्थ जान पड़ते थे। ऐसा ही एक उदाहरण जर्मनी का है। वहाँ किसी खान के बैठ जाने से एक मजदूर उसमें बन्द हो गया। वह स्थान छतनुमा था और उसमें साधारण रूप से रहा जा सकता था। उसके पास किसी अन्न के लगभग पाव भर दाने थे। जब उसे बहुत अधिक भूख लगती तो उन्हीं में से कुछ दाने मुँह में डाल लेता। कड़े होने के कारण वह उनको तुरन्त नहीं चबा सकता था इसलिये काफी देर तक मुँह में रखकर उनको नर्म कर लेता, तब चबाकर खाता था। लगभग बीस दिन के बाद जब खान दुबारा खोदी जा सकती उसे निकाला गया। सब लोगों को और स्वयं उसे भी यह देखकर आश्चर्य हुआ कि इतने दिनों तक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बन्द रहने के कारण उसकी कोई क्षति नहीं हुई थी वरन् कई शारीरिक शिकायतें दूर होकर स्वास्थ्य में बहुत सुधार हो गया था।

साधारण रीति से स्वास्थ्य-प्राप्ति के लिये उपवास का अभ्यास धीरे-धीरे बढ़ना ठीक रहता है। दो-तीन दिन का पूरा उपवास करके फिर चार-पाँच दिन फलाहार पर रहना चाहिये और उसके बाद अन्नाहार शुरू करके एक सप्ताह में उसे पूर्ण मात्रा तक पहुँचाना चाहिये। जैसे चान्द्रायण व्रत में एक-एक ग्रास बढ़ाकर १५ दिन में पूरा भोजन करने लगते हैं वैसी ही विधि से उपवास में भी काम लेना चाहिये।

वास्तविक खतरा उपवास करने में नहीं होता वरन् उसे छोड़ने में होता है। इसलिये अधिक लम्बा उपवास तो किसी आरोग्यशास्त्री की देख-रेख में किसी चिकित्सालय या स्वास्थ्य-आश्रम में करना चाहिये। उपवास के बाद यदि भारी, स्थूल, कब्ज करने वाली खुराक अधिक मात्रा में ले ली जायेगी तो उससे बड़ी हानि की संभावना है। इसलिये उपवास को धीरे-धीरे तोड़ना और खुराक को क्रमशः बढ़ाना चाहिये। पहले दिन केवल फलों का रस ले दूसरे दिन रस की मात्रा कुछ बढ़ा दें। तीसरे दिन गूदेदार फल लेवें। चौथे दिन खजूर खरबूजा, टमाटर, गाजर आदि ले सकते हैं। पाँचवें दिन उबाली हुई तरकारियाँ और छठे दिन दलिया आदि खाना ठीक रहता है। इस प्रकार सप्ताह में साधारण भोजन तक पहुँचना निरापद रहता है। जिन लोगों को माफिक हो वे इस सप्ताह में दूध भी ले सकते हैं। ताजा धारोष्ण दूध सबसे अच्छा माना गया है। यदि ज्यादा देर का दूध हो तो उसे गरम कर लेना चाहिये। ज्यादा देर तक खौलाने से दूध के पौष्टिक तत्व नष्ट हो जाते हैं। दूध में मीठा मिलाना ठीक नहीं। इसी प्रकार एक बार के भोजन में अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थ खाना भी हानिकारक है। कई दाल, कई शाक, मिठाई, चटनी, अचार, फल, खीर, दही, रोटी चावल आदि बहुत-सी चीजें एक ही साथ खा लेने से न तो भोजन ठीक तरह से पचता है और न उससे अच्छा रक्त ही बनता है। इसलिये एक बार के भोजन में रोटी शाक, रोटी-दाल, चावल-दाल, दलिया-दाल आदि कोई भी दो चीजें लेना ठीक रहता है।

उपवास के सम्बन्ध में लोगों में कितनी ही तरह ही भ्रान्तियाँ देखने में आती हैं। कुछ लोग उपवास को एक प्रकार का भूखों मरना मानते हैं। वे भोजन को शरीर का स्वाभाविक धर्म मानते हैं और कहते हैं कि शरीर को भोजन न देना प्रकृति विरुद्ध है। पर वे इस बात को भूल जाते हैं कि स्वस्थ रहना भी मनुष्य के लिये स्वाभाविक है। जब वह अपनी गलती से या जवान के चटोरेपन से अनुचित और अनियमित रीति से आहार करके, स्वास्थ्य को ठीक करने के लिये उपवास जैसे पीछे लौटने वाले उपाय की आवश्यकता पड़ती है। इसलिये यद्यपि ऊपर से देखने पर उपवास और भुखमरी में एक समानता जरूर दिखलाई पड़ती है कि दोनों अवस्थाओं में मनुष्य भोजन से वंचित हो जाता है, पर तो भी इन दिनों अवस्थाओं में जीवन आसमान का अन्तर है। उपवास तब किया जाता है, जब कि शरीर को भोजन की आवश्यकता नहीं होती, उसके भीतर पहले से ही अधपचा, सड़ा, भोजन मल रूप में भर जाता है। पर भुखमरी उस हालत को कहा जाता है, जबकि शरीर को भोजन की बहुत आवश्यकता हो फिर भी मनुष्य न खाय। इस दृष्टि से उपवास प्राणरक्षक है और भुखमरी प्राणों को नष्ट करने वाली है। उपवास हमारी शारीरिक या मानसिक किसी प्रकार की हानि नहीं होती, पर भुखमरी से हमारी सभी शक्तियाँ क्षीण होती हैं और हम मृत्यु के निकट ढकेले जाते हैं। इसलिये हम यह कह सकते हैं कि जहाँ उपवास का अन्त होता है, वहीं से भुखमरी का आरम्भ होता है। इसलिये उपवास करने वाले को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये कि वह कभी आवश्यकता से अधिक उपवास न करे। जब वास्तविक उपवास पूरा हो जाता है, तब थकावट या क्लान्ति के बजाय मन में एक प्रकार का ताजगी और प्रसन्नता का भाव उत्पन्न होता है और ऐसी स्वाभाविक भूख लगती है जिसका अनुभव हमको पहले जीवन में कदाचित ही हुआ होता है। बस उसी समय उपवास को तोड़ देना और क्रमशः अल्प भोजन तक बढ़कर स्वाभाविक भोजन पर आ जाना मनुष्य का कर्त्तव्य है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अगर कोई इस बात की विशेष जानकारी प्राप्त करना चाहे कि उपवास पूरे हो जाने की ठीक पहिचान कैसे की जा सकती है, तो उसे अपनी सभी शारीरिक क्रियाओं का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करना पड़ेगा, क्योंकि उपवास शरीर के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग पर पड़ता है। उपवास काल में वे सभी अपने भीतर जमा हो गये मैल को निकालकर शुद्ध कर देते हैं और तभी पूर्ण रूप से स्वच्छ दिखाई पड़ता हैं, जबकि उपवास का उद्देश्य पूरा हो जाता है।

जीभ—जैसे ही उपवास शुरू किया जाता है कि तुरन्त ही जीभ पर मैल जमना आरम्भ हो जाता है और जैसे-जैसे उपवास बढ़ता जाता है इस मैल का परिणाम और बदबू बढ़ती जाती है। जब तक विजातीय द्रव्य निकलता रहेगा, तब तक जवान पर मल जमता रहेगा, पर जब मल समाप्त हो जायेगा, तब जीभ का रंग साफ होकर गुलाबी हो जायेगा, जैसा कि साधारणतः कभी देखने में नहीं आता। यह जीभ का परिवर्तन उसे समय होते है, जब उपवास पूरा होकर ठीक भूख लगने लगती है। यह जीभ का मैल एक ऐसा चिन्ह है कि जिससे रोगी की अवस्था की ठीक पता सहज में लग जाता है।

साँस—उपवास आरम्भ के बाद ही साँस में भी अन्तर पड़ जाता है और उसमें एक प्रकार की खराब गन्ध आने लगती है, जो उपवास भर जारी रहती है। जीभ के मैल और साँस की बदबू में सदैव सम्बन्ध रहता है। मैल की तह जितनी ही मोटी होगी साँस की बदबू भी उसी हिसाब से अधिक होगी। इससे यह प्रकट होता है कि हमारे फेंफड़े भी भीतर से मैल को अधिकाधिक परिणाम में बाहर फेंकने का प्रयत्न कर रहे हैं। इस तरह हमारे फेंफड़े दिन-रात गन्दी हवा को निकालकर बहुत अधिक मैल को प्रतिदिन बाहर निकाल देते हैं। जैसे-जैसे उपवास के दिन बढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे ही साँस की बदबू भी बढ़ती जाती है और कभी-कभी तो वह बहुत ही तीव्र और असहनीय हो जाती है। यह साँस कुछ मीठी-मीठी जान पड़ती है, पर उससे स्वास्थ्य की ताजगी का मीठापन नहीं होता, वह क्लोरोफार्म की तरह मीठी-सी जान पड़ती है।

तापमान—उपवास का प्रभाव तापमान पर दो तरह का पड़ता है। अगर वह सामान्य (नार्मल) से अधिक होता है तो उपवास के साथ-साथ कम होता जाता है और यदि तापमान सामान्य से कम होता है तो वह उपवास के प्रभाव से बढ़ जाता है। जैसे उपवास के आरम्भ करने के समय रोगी का तापमान ९४ डिगरी हो तो वह क्रमशः बढ़कर ९८ डिगरी तक पहुँच जायेगा। यह बात कुछ आश्चर्यजनक जान पड़ती है कि जब जरा भी भोजन ग्रहण नहीं किया जा रहा है और माँस घटता जाता है, फिर भी तापमान कैसे बढ़ जाता है ? इसका कारण यह होता है कि तापमान का कम होना जीवनी शक्ति की कमी का चिन्ह होता है और यह कमी रक्त वाहिनी नाड़ियों के मल से भर जाने के कारण उत्पन्न होती है। उपवास के फलस्वरूप जैसे-जैसे मल का शोधन होकर नाड़ियाँ खुलती जाती हैं, वैसे-वैसे ही रक्त-संचरण में वृद्धि होती है और परिणामतः तापमान बढ़ जाता है।

वजन का घटना-बढ़ना—इसमें सन्देह नहीं कि उपवास के फलस्वरूप मांस की क्षति होती है। आरम्भ में यह कमी बहुत अधिक जान पड़ती है पर जैसे-जैसे उपवास बढ़ता जाय कमी का परिमाण कम होता जाता है। यह बात स्वाभाविक भी है, क्योंकि आरम्भ में शरीर की चर्बी तेजी से घटती है, पर उसके बाद प्रकृति अन्य दूषित तत्वों को धीरे-धीरे निकालती है और घटने का परिमाण कम हो जाता है। अनेक बार ऐसा देखने में आता है कि उपवास के अन्तिम दिनों में वजन का घटना बिल्कुल बन्द हो जाता है।

बहुत-से लोगों की यही धारणा है कि उपवास से चाहे अन्य लाभ भले ही होते हों पर उससे वजन अवश्य घटता है। इसलिये जो पहले से ही दुबले हैं, उनके लिये उपवास लाभदायक नहीं हो सकता। पर यह धारणा वास्तव में सत्य नहीं है। अगर कोई व्यक्ति अपनी शारीरिक स्थिति से उचित अनुपात की अपेक्षा अधिक दुबला है तो उनका कारण यही है कि उसकी पाचन-क्रिया दोषपूर्ण है और उसे उचित पोषण प्राप्त नहीं होता। जब उपवास द्वारा आमाशय की शुद्धि होकर भोजन का ठीक ढंग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से परिपाक होने लगेगा तो रस, रक्त भी अधिक बनेगा और दुबलापन अवश्य मिट जायेगा। इस बात की परीक्षा अनेक रोगियों के सम्बन्ध में की जा चुकी है और इसलिये उपवास के कारण दुबलापन उत्पन्न होने का भय निराधार है।

इस तरह यदि उपवास और एनीमा आदि के द्वारा शरीर की सफाई वर्ष में एक बार भी कर ली जाये और आहार-विहार में प्रकृति में अनुकूल चलाने का अधिकाधिक ध्यान रखा जाय तो खोया हुआ स्वास्थ्य निस्सन्देह प्राप्त किया जा सकता है और आगे के लिये रोगों से मुक्त रहकर निरोग और सुखी जीवन बिताया जा सकता है। इस दिशा में जितनी ही सफलता प्राप्त की जा सकती, उतनी ही आरोग्यता की वृद्धि होगी। उत्तम स्वास्थ्य दवाओं से नहीं प्राकृतिक नियमों के अनुसार जीवन-यापन करने से ही प्राप्त हो सकता है।

पेट के भीतरी कल-पुर्जों की सफाई-एनीमा

एनीमा के सम्बन्ध में कुछ बातें उपवास द्वारा स्वास्थ्य रक्षा के विवेचन में लिखी जा चुकी हैं, पर यह विषय इतना अधिक महत्त्वपूर्ण और प्राकृतिक चिकित्सा के आधार स्वरूप है कि इसका स्वतन्त्र रूप से भली प्रकार परिचय देना आवश्यक है। उपवास अवश्य ही सर्व प्रथम कदम है पर उसके साथ एनीमा का सहयोग अनिवार्य है। उपवास शरीर के भीतर के मल को कोने-कोने से निकालकर मलाशय की तरफ धकेलता है, पर वह सब अपने आप शरीर के बाहर नहीं निकल सकता। कारण यह है कि उस समय भोजन न करने के कारण आमाशय और आँतें बहुत कुछ सिकुड़ जाती हैं और इनमें इतना स्फुरण नहीं होता कि वह अधिक-मल को बाहर फेंक सके। इसके लिये किसी बाहरी उपचार की आवश्यकता होती है, जिससे प्रकृति को अपने कार्य में सहायता मिले, वही उपाय एनीमा है।

जो लोग अभी तक सफाई का अर्थ नहाना धोना आदि बाहरी सफाई ही समझते हैं, वे बड़े भ्रम में हैं। शरीर के ऊपर का मैल तो हमको दिखाई ही पड़ता है और इसलिये हमारा ध्यान बार-बार उसकी ओर जाता रहता है और हम उसे साफकर ही डालते हैं। पर भीतरी गन्दगी आँखों से दिखाई नहीं देती, उसे केवल अनुभव से या चिन्हों से जाना जाता है। इसलिये अनेक लोगों का ध्यान उस तरफ नहीं जाता। पर कुछ भी हो वह गन्दगी अधिक हानि पहुँचाने वाली होती है और धीरे-धीरे हमारे समस्त शरीर को मल से भर देती है। यही मल सब प्रकार के रोगों तथा अस्वस्थता का कारण होता है और जो लोग बीमारी और कमजोरी दूर करना चाहते हैं, उनका सबसे पहला कर्त्तव्य इस मल की सफाई कर डालना ही है। शरीर की इस अवस्था की तुलना हम उस नाली के साथ कर सकते हैं, जो कीचड़ रुक जाने से सड़ रही हो और दुर्गंध फैला रही हो। बहुत-से लोग ऐसी नाली में फिनायल आदि डालकर उसकी बदबू रोकने की कोशिश करते हैं, पर यह उपाय टिकाऊ नहीं होता। दूसरे ही दिन फिर पहले से अधिक बदबू आने लगती है। तब अन्त में यही करना पड़ता है कि एक बार नाली में जमा कीचड़ को पूरी तरह निकाल दिया जाय और उसे साफ पानी से धो डाला जाये। इसी प्रकार जो मल छोटी और बड़ी आँतों में इकट्ठा होकर हमारे शरीर को अस्वस्थ बनाता है। जब तक एक बार उसकी पूरी सफाई नहीं की जायेगी, तब तक उस रोग की जड़ कटना सम्भव नहीं है।

जुलाव की हानियाँ

अनेक व्यक्ति इस मल को निकालने के लिये जुलाव या दस्तावर दवाओं का सहारा लेते हैं। पर सड़ा हुआ मल, गाँठें, सुद्दे कृमि विकृत वायु आदि जो तरह-तरह के विकार बड़ी आँत में जमा रहते हैं, वे इन दस्तों की औषधियों से बहुत कम निकल पाते हैं। दस्तावर औषधियाँ जब पेट में पहुँचती हैं तो तीक्ष्णता के कारण अमाशय में पाचन रसों का स्राव हेने लगता है। इस रस के साथ अन्धा पचा हुआ भोजन बह-कर नीचे की तरफ चला जाता है। औषधि की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बहुत शक्ति तो इस आमाशय में ही खर्च हो जाती है, जो थोड़ी-बहुत बचती है, उसके द्वारा छोटी आँतों से रस निचुड़ता है। इस प्रकार कच्चा मल पतला होकर दस्त के रूप में निकल जाता है। दस्तावर दवा का असर छोटी आँतों में खत्म हो जाता है और बड़ी आँत में उपस्थित विकार ज्यों के त्यों बने रहते हैं। पुराने दोष जो बड़ी-आँतों में थे वे जैसे के तैसे रहे केवल आमाशय और छोटी आँतों का कच्चा मल निकल गया। ऐसे दस्तों में सफाई का वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं होता। इसके अतिरिक्त दवा की गर्मी, जलन तथा आमाशय के कीमती रस के दस्त के साथ बहने से पेट में कमजोरी आ जाती है। ये दोनों ही बातें स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक हैं और इसलिये इस जुलाव की प्रणाली में लाभ की अपेक्षा हानि अधिक है। दस्तावर दवायें प्राय: अत्यन्त उष्ण और विषाक्त भी होती हैं। वे यदि दस्त लाने के बजाय शरीर में पच जायें तो खून खराबी, कोढ़, भयंकर व्रण आदि उत्पन्न कर देती हैं। यही कारण है कि कभी-कभी जुलाव के बाद बहुत दिन तक बड़ी गर्मी और बेचैनी का अनुभव होता रहता है और कई छोटे-बड़े रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

एनीमा कैसे ली जाय

इस दृष्टि से मलाशय को साफ करने के लिये एनीमा का प्रयोग सबसे अच्छा है। बाजार से एनीमा का साधारण-सा यन्त्र हर नगर में मिल सकता है। चीनी के लम्बे से डिब्बे में ४.५ फीट लम्बी रबड़ की नली लगी रहती है, जिसके दूसरे सिरे पर प्लास्टिक की एक टोटी फिट कर दी जाती है। डिब्बे में सेर-डेढ सेर मामूली ठंडा या जरा गुन-गुना पानी जिसका तापक्रम शरीर के समान हो, भर दिया जाता है। जब टोंटी को खोला जाता है तो पानी नल की तरह बाहर निकलने लगता है। पानी सादा ही ठीक होता है। अगर मिल सके उसमें एक नीबू का रस मिला दिया जाय, जिससे उसका असर कुछ बढ़ जाता है। विशेष अवस्थाओं में थोड़ा नमक या नीम का पानी या प्याज का रस आदि भी मिलाया जाता है।

एनीमा लेते समय जमीन पर चटाई बिछाकर दाँयी करवट लेट जाना चाहिये। एनीमा के बर्तन को बगल में लगभग तीन फीट की ऊँचाई पर टाँग देना चाहिये। टोंटी के सिरे पर जरा-सा तेल-मल कर गुदा मार्ग में एक इञ्च प्रवेश कर लीजिये और टोंटी को खोल दीजिये। धीरे-धीरे समस्त पानी मलाशय में चला जायेगा। इस समय पेट को धीरे-धीरे मलते भी रहिये, जिससे मल के छूटने में सहायता मिले। आरम्भ में पानी जाने पर पेट में दर्द-सा जान पड़ता है और तुरन्त ही टट्टी की इच्छा होती है। अगर ये बातें साधारण हों तो सहन करके पानी लेते जाना चाहिये और यदि ज्यादा दर्द जान पड़े तो टोंटी बन्द करके पानी चढ़ना रोक देना चाहिये। कुछ देर बाद जब दर्द बन्द हो जाये तो फिर टोंटी खोलकर पानी चढ़ाना चाहिये। अगर इस प्रकार कई बार पानी बन्द करना पड़े तो कोई हर्ज की बात नहीं है। अगर पानी जाना शुरू होने के थोड़ी देर बाद ही मल-त्याग की अत्यन्त तीव्र इच्छा हो तो उसी समय उठकर मल त्याग करना चाहिये और दस-पाँच मिनिट बाद फिर पूरा जल भर-कर एनीमा लेना चाहिये। जब पूरा पानी चला जाय तो टोंटी को बाहर निकालकर १५-२० मिनिट तक सीधे और दाँयी-बाँयी करवट से लेटना चाहिये और पेट को थोड़ा-थोड़ा फुलाते और सकोड़ते रहना चाहिये, जिससे पानी हिलकर मल को घुला सके। जब मल त्याग की इच्छा काफी तीव्र हो तो मल-त्याग को चला जाये। इसलिये एनीमा का प्रयोग शौच स्थान के समीप ही करना उचित होता है।

एनीमा लेने की एक दूसरी विधि भी है। बजाय चटाई पर करवट से लेटने के औंधा पेट के बल लेटा जाय और दोनों घुटनों को सकोड़ कर ऊंट की तरह करने से पेट कुछ नीचा हो जायेगा और चूतड़ ऊपर की तरफ उठ जायेंगे। इस विधि में यह लाभ बतलाया जाता है कि पेट ढीला रहने से पानी आसानी से ज्यादा दूर तक चला जाता है। करवट लेकर एनीमा लेने से पानी का भार एक तरफ कम और दूसरी तरफ ज्यादा रहता है। पर इस दूसरी विधि में दोनों तरफ समान भार रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ये दोनों ही तरीके ठीक हैं, जिनको जिनमें सुविधा जान पड़े, वह उससे काम ले सकता है। इसके लिये सुबह या शाम का समय अधिक ठीक रहता है। एनीमा लेने के लिये पहले मामूली ढंग से शौच हो आना उचित है।

एनीमा विधि की प्राचीनता

एनीमा की यह प्रणाली कोई नई बात नहीं है। हमारे यहाँ के अति प्राचीन ऋषि-मुनि और योगी लोग भी इस प्रकार की "बस्ति-क्रिया" से गुर्दा मार्ग में पानी चढ़कर मलाशय की सफाई किया करते थे। वे जल में बैठकर पेट की नसों को चलाकर पिचकारी की तरह पानी खींच लेते थे। यह विधि अधिक लाभदायक और दोष रहित है और अब भी योगाभ्यासी इस तरह पानी चढ़ाया करते हैं। पर साधारण लोगों के लिये इसका अभ्यास कर सकना कठिन है। वह कार्य एनीमा द्वारा सहज में हो जाता है। इसमें कोई कठिनाई या खतरा नहीं है और हर एक मामूली समझ का आदमी इसे कर सकता है। यह हर एक मौसम में और अस्वस्थ तथा स्वस्थ दशा में बिना किसी आशंका के प्रयोग में लाई जा सकती है।

केवल एक दिन एनीमा लेने से सफाई नहीं हो सकती। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये इसे एक सप्ताह तक तो नियमित रूप से लगाना ही चाहिये फिर सप्ताह में तीन बार और फिर दो बार लगाकर छोड़ा जा सकता है। कठिन और पुराने रोगों में महीने, दो महीने तक भी लगातार एनीमा लगानी पड़ती है। पेट में जमा हुआ, आँतों में चिपका हुआ, सूखा, सड़ा मल की गाँठें, सूदे धीरे-धीरे निकलते हैं। नीबू का पानी उन्हें फुलाता है, छुड़ाता है, खुरचता है, कुरेदता है, तब कहीं उनका निकलना आरम्भ होता है। देखने में आता है कि जब दो-चार एनीमा ले चुकते हैं, तब काला-काला बदबूदार मल बाहर निकलता है। साधारण अवस्था में भी पेट की ठीक तरह से सफाई होने में कम से कम एक सप्ताह तो लगता ही है। जब तक खराब, पुराना, मल निकलता रहे, तब तक एनीमा लेना जारी रखना आवश्यक है।

एनीमा द्वारा शरीर की सफाई का कार्य तब तक ठीक तरह पूरा नहीं होता, जब तक साथ में कुछ उपवास भी न किया जाये। दो-तीन दिन का उपवास तो सभी को करना चाहिये। उपवास के समय पानी खूब पीना चाहिये और दिन में दो-चार बार पानी शहद तथा नीबू मिलाकर पीना चाहिये। इन दिनों साधारण परिश्रम करना, कुछ टहलना तो आवश्यक है पर अधिक परिश्रम का कोई काम नहीं करना चाहिये। ज्यादा काम करने से शरीर की शक्ति उसमें लग जाती है और सफाई के काम में कमी पड़ जाती है। इसलिये उस समय शरीर की पूरी शक्ति को जहाँ तक सम्भव हो मल के निकालने और अंगों को ठीक करने में ही लगाना चाहिये।

सूर्य चिकित्सा या धूप-स्नान

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणयाग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तथुस्थश्च।

—ऋग्वेद १-११ १-१

"देवगण का अद्‌भुत मुख रूप तथा मित्र, वरुण (जल), अग्नि का नेत्र रूप सूर्य उदय हो गया। जो सूर्य समस्त स्थावर तथा जंगम सृष्टि का प्राणस्वरूप है, उसने आकाश, पृथ्वी और अन्तरिक्ष को सब ओर से प्रकाशित कर दिया।"

संसार में हमको जितनी प्रकार की शक्तियाँ दिखाई पड़ती हैं, उन सबका मूल सूर्य में ही है। जल का बहना, वायु का चलना, अग्नि का जलना, पृथ्वी का भाँति-भाँति की वनस्पतियों को उत्पन्न करना आदि सबका आधार सूर्य ही है। वास्तविक बात तो यह है कि हमारी पृथ्वी, ग्रह, उपग्रह सब सूर्य से ही उत्पन्न हुये हैं और उसी के द्वारा पाले जा रहे हैं। इसलिये पंचतत्वों से उत्पन्न कोई भी पदार्थ या प्राणी सूर्य की शक्ति के द्वारा ही अपने अस्तित्व को स्थिर रखता है, वृद्धि को प्राप्त होता है और समयानुसार परिवर्तित रूप को ग्रहण करता है। साधारणतः लोग सूर्य को प्रकाश तथा उष्णता का साधन मानते हैं और उससे रोगों के निवारण का कार्य भी लेते हैं। पर सूर्य का महत्त्व इससे कहीं अधिक है और वह मनुष्य के लिये भोजन या आहार का काम भी देता है। अगर सूर्य का प्रकाश ठीक ढंग से न मिले या उससे बिल्कुल ही वंचित रहना पड़े तो मनुष्य थोड़े समय में अवश्य ही निर्बल और अस्वस्थ हो जायेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानव-शरीर में जो अनेक रासायनिक तत्व पाये जाते हैं, उनमें फास्फोरस और कैलशियम की गणना प्रधान द्रव्यों में की जाती है। हमारी हड्डियों और दाँतों का निर्माण विशेषतः इन्हीं से होता है। सूर्य की धूप जब हमारे चर्म पर लगती है तो उससे रक्त में उष्णता आती है और गति बढ़ने लगती है, जिससे नया रक्त ऊपर आने लगता है। इस रक्त में "अर्गोसठेरोल" नामक पदार्थ होता है, जो सूर्य की धूप के संयोग से 'विटामिन डी' में बदल जाता है। यह विटामिन डी आँतों में एसिड (अम्ल) और अल्कली (क्षार) के परिमाण की नियन्त्रित करता है और भोजन में से केलशियम (चूना) और फास्फोरस को ग्रहण करने में सहायता पहुँचाता है। इसलिये यदि मनुष्य को सूर्य प्रकाश प्राप्त न हो तो वह इन दो प्रधान तत्वों को भोजन में से प्राप्त करके शरीर में सम्मिलित नहीं कर सकता। ऐसी अवस्था में हड्डियों का निर्माण ठीक ढंग से नहीं हो पाता और बहुसंख्यक बालकों को 'रिकेट' 'सूखा' रोग लग जाता है।

प्राकृतिक-चिकित्सा में बिना पकाये भोजन का बहुत अधिक महत्त्व बतलाया गया है। उससे खाद्य पदार्थ के समस्त स्वाभाविक तत्व शरीर को प्राप्त हो जाते हैं। खासकर भोजन में पाये जाने वाले कई प्रकार के विटामिन, जिनको नवजीवनदाता कहा जाता है, आग पर पकाने से अधिकांश में नष्ट हो जाते हैं। इसलिये सब देशों के प्राकृतिक चिकित्सक रोगियों और स्वास्थ्याभिलाषियों को ताजा फल, तरकारी, शाक आदि कम से कम परिवर्तन किये बिना भोजन के रूप में ग्रहण करने की सलाह दिया करते हैं। बहुत-से लोग ऐसे भोजन को 'कच्चा भोजन' या 'बिना पकाया भोजन' के नाम से पुकारते हैं, पर वास्तव में वह भोजन सूर्य द्वारा पेड़ के ऊपर ही पकाया जाता है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि ऐसा सूर्य द्वारा पकाया भोजन स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त लाभदायक होता है और उससे शरीर को ऐसे अमूल्य तत्व प्राप्त होते हैं।

सूर्य सेवन हमारे लिये परम उपयोगी

महर्षि चरक का कथन है—"आरोग्यं भास्करादिच्छेत्" आरोग्य की कामना सूर्य भगवान की सहायता से पूरी करें। इस उक्ति में कितना अधिक तथ्य है, अब विज्ञान के शोध निष्कर्ष दिन-दिन अधिक स्पष्ट और प्रामाणिक सिद्ध करते चले जा रहे हैं।

किसी समय सूर्य को रोशनी और गर्मी देने वाला एक अग्नि पिण्ड मात्र माना जाता था। अति प्राचीन काल में वह कोई चमत्कारी देवता था और पूजा उपासना करने वालों को प्रसन्न होकर वरदान देने वाला समझा जाता है। अब गहन अन्वेषण ने उसे पृथ्वी की जड़-चेतन सत्ता में विविध-विधि स्पन्दन उत्पन्न करने वाला शक्ति स्रोत माना जाता है और स्वीकार किया जाता है कि धरती पर जितना कुछ जीवन तत्व है—जितनी भी हलचल है उसका उद्गम केन्द्र सूर्य सता में ही सन्निहित है।

ताप और प्रकाश तो सूर्य के स्थूल अनुदान हैं। वस्तुतः उसकी ऊर्जा 'तेजस्' रूप है। जिस विज्ञान की भाषा में 'सोलर एनर्जी' कहते हैं। यही प्राणियों की 'वाइटल एनर्जी' उसका प्रभाव रेडियो एक्टिविटी के रूप में पहचाना जाने लगा है और समझा जाने लगा है कि विभिन्न शक्तियों की उपलब्धियाँ इसी केन्द्र से होती हैं। प्रगति के लिये जिन शक्ति अनुदानों की आवश्यकता पड़ेगी, उन्हें सविता देवता के भण्डार से ही उपलब्ध करना पड़ेगा।

भारतीय तत्वदर्शियों ने सूर्य को सहस्र किरण वाला माना है और उनकी प्रधान एवं सुपरिचित किरणों को 'सात-रश्मि' कहा है।

रवे रश्मि सहस्रं यत् पराङ् मया समुदाहृतम्।
तेषां श्रेष्ठाः पुनः सप्त रश्मियो गृह योन यः।।

—वायु पुराण

अर्थात्—सूर्य की सहस्र रश्मियाँ हैं, उनमें से सात प्रधान हैं। ऋग्वेद १०। १३६।१ कौशीत की ब्राह्मण—शतपथ ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में भी सात रश्मियों का वर्णन है। उनके नाम—(१) सुषुम्णः (२) हरिकेशः (३) विश्वकर्मा (४) संपहसु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(५) अर्वावसु (६) विश्वश्रवः (७) स्वराट् गिनाये गये हैं। इन नामों में उन विशेषताओं एवं शक्तियों का संकेत है, जो भौतिक जगत में प्रगति का और आत्मिक जगत में ब्रह्म तेजस् का पथ-प्रशस्त करती है। सात रंगों के रूप में हम उनका प्रत्यक्ष परिचय चर्म चक्षुओं से भी प्राप्त करते हैं।

इंग्लैण्ड की शरीर विज्ञानी श्रीमती हेरियट चिक ने बताया है कि—सूर्य की धूप का सेवन मनुष्यों के लिये अन्न तथा दूध की तरह ही उपयोगी है, उनने रोगी और दुर्बलों को प्रातःकालीन धूप को नंगे बदन पर पड़ने देने की सलाह दी है और जिनने उस प्रयोग को नियमित रूप से चलाया है, उन्हें आशातीत लाभ भी हुआ है।

जो बाबू लोग बन्द दफ्तरों में बैठे रहते हैं—जो श्रमिक अन्धेरे कारखानों में काम करते हैं, स्त्रियाँ जिन्हें घरों के कैदखाने में ही जिन्दगी गुजारनी पड़ती है। धूप से वंचित रहने के कारण ही दुर्बल रहते हैं और आये दिन बीमारियों के शिकार बनते रहते हैं। यदि उन्हें खुली धूप में रहने का अवसर मिला होता तो निश्चय ही वे अस्वस्थता की दयनीय दुर्दशा से बच सकते थे। छोटे घरों की बनावट में खुली धूप और खुला हवा जाने की आर-पार जाने वाली खिड़कियाँ छोड़ी गई होतीं तो सन्दूकनुमा बने बिजली के पंखा और बत्तियों के सहारे रहने योग्य बने हुये विशाल भवनों की अपेक्षा वे कहीं अधिक स्वास्थ्य कर होते। जमीन के नीचे या ऊपर तहखानेनुमा घिरे हुए मकान बनाने की पद्धति भी उतनी ही दुर्भाग्यपूर्ण है जितनी कि आटे और शाकों के छिलके फेंक देने की। सूर्य किरणों को दैनिक जीवन से जितनी दूर रखा जायेगा, अस्वस्थता हमें उतनी ही अधिक घेरेगी।

सूर्य की खुली किरणों से जो जितना दूर रहेगा, उसे उसी अनुपात से अविकसित और दुर्बल रहना पड़ेगा। छाया वाली जगहों में वनस्पतियाँ प्रायः उगती और बढ़ती ही नहीं। इसका कारण उनका सूर्य किरणों से वंचित रहना ही है। बड़े पेड़ों के नीचे छोटे पौधे उगते नहीं उसका कारण केवल यही नहीं है कि पेड़ उन पौधों की खुराक खा जाते हैं। वास्तविक कारण यह है कि उन्हें छाया से ढके रहने के कारण धूप से वंचित रहना पड़ता है। बड़े पेड़ों की जड़ें गहरी होती हैं और वे अपनी खुराक गहराई में जाकर खींचती हैं, जबकि छोटे पौधे या घास जमीन की ऊपरी उथली सतह पर ही अपनी जड़ें सीमित रखते हैं। इससे खुराक खींचने वाली बात उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है, जितनी उनके विकसित न होने में सूर्य किरणों के प्राप्त न होने की कठिनाई।

अनाज के पकने में, फलों के उत्पादन में सूर्य किरणों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। बीजों, फलों और शाकों के ऊपरी छिलके में महत्त्वपूर्ण खनिज, क्षार विटामिन और प्रोटीन पाये जाते हैं, यह अनुदान उन्हें सीधे सूर्य किरणों के समपर्क से मिलता है। फलों की ऊपरी सतह सीधी सूर्य सम्पर्क में रहती है और गूदा भीतर परतों में छिपा रहता है। इससे छिलके में सारतत्व अधिक और गूदे में न्यून मात्रा में रहना क्यों होता है ? इसका रहस्य सहज ही समझा जा सकता है। छिलके में थोड़ा कड़ापन और कसैलापन देखकर लोग उसे फैंक देते हैं। आटे को छानकर भूसी फैंक देते हैं और शाक-भाजियों के—दालों के छिलके उतार देते हैं, जबकि इसी भाग में उनकी वास्तविक पौष्टिकता छिपी रहती है। पाक विद्या में घुसी हुई यह मूर्खता अत्यन्त ही दुर्भाग्यपूर्ण है।

शिशु रोग विशेषज्ञ डा० सी० डब्ल्यू० सेलिली अपने अस्पताल में आने वाले रुग्ण बालकों के अभिभावकों को यह सलाह दिया करते थे कि बच्चों को आधा घण्टा सूर्य ताप का सेवन तो अवश्य ही कराया करें। यह औषधि उपचार से कम लाभदायक नहीं है।

डाक्टर वारिन न अपने प्रयोगों से बताया कि किस प्रकार सूर्य किरणों का उपभोग करके शरीर में फास्फेट, कैल्शियम, आयोडीन, फास्फोरस, उपयोगी खनिज एवं विटामिनों की पर्याप्त मात्रा बिना उस प्रकार का आहार लिये अथवा औषधि सेवन किये ही प्राप्त हो सकती है।

मानवी स्वास्थ्य का सूर्य सेवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह तथ्य पूर्ण प्रतिपादन चिरकाल से स्वीकार किया जाता रहा है कि—जहाँ सूर्य किरणें' पहुँचती हैं, वहाँ चिकित्सक के जाने की जरूरत नहीं पड़ती।" सूर्य किरणों से इतनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति उपलब्ध की जाती है—की जा सकती है जो किसी भी पौष्टिक आहार की अपेक्षा अधिक बलवर्धक सिद्ध हो और किसी भी कीटाणु-नाशक औषधि की तुलना में रोगों के निवारण में अधिक उपयोगी सिद्ध हो। भारतीय तत्ववेत्ता इस रहस्यमयी क्षमता को प्राण तत्व कहकर पुकारते रहे हैं और उसे शारीरिक, मानसिक ही नहीं आध्यात्मिक प्रगति का आधार बताते रहे हैं। प्राण विद्या भारतीय अध्यात्म शास्त्र का एक अति महत्त्वपूर्ण अंग रहा है।

अमेरिका के सुप्रसिद्ध डाक्टर वेविट ने सूर्य किरण चिकित्सा पर दीर्घकालीन शोध तथा प्रयोग करके यह निष्कर्ष निकाला है कि यह चिकित्सा पद्धति संसार की अन्य किसी उपचार प्रक्रिया कम लाभदायक नहीं है। बल्कि वह अपनी सभी सहेलियों की तुलना में अधिक निर्दोष है। उसकी कोई ऐसी प्रतिक्रिया नहीं होती, जिससे रोगी को नई व्यथाओं में फँस जाने की शिकायत करनी पड़े।

डा० वैविट ने अपने प्रयोगों का विवरण अपने "हैल्थ मेनुअली" ग्रन्थ में प्रकाशित किया है। उनकी एक पुस्तक 'प्रिन्सपिल्स ऑफ लाइट एण्ड कलर' भी बहुत प्रसिद्ध हुई। उनका एक और भी ग्रन्थ है—'ह्यूमन कलचर एण्ड क्योर' उसमें उन्होंने बताया है कि मनुष्य को जीवनी शक्ति सूर्य से प्राप्त होती है फिर वह रोग निवारण जैसा छोटा प्रयोजन क्यों पूरा नहीं कर सकता ?

ऊर्जा विज्ञान के अध्येता विक्टर इनियुशिन ने कहा है हम सामान्य सूर्य किरणों के सीमित प्रभाव से ही परिचित हैं यदि उनमें से छानकर रंगीन किरणों का भी उपभोग करना जानें तो उससे कितने ही महत्त्वपूर्ण अतिरिक्त लाभ उठाये जा सकते हैं।

नोबेल पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता जीव विज्ञानी अल्वर्ट जेन्ट जोजी ने प्राणियों की त्वचा के रंग द्वारा सोखी जाने वाली विभिन्न स्तर की सूर्य किरणों का उल्लेख किया है और बताया है कि उनकी विशेषतायें किस प्रकार इस रंग विज्ञान के आधार पर सूर्य देवता द्वारा अनुदान में मिलती है। इसी स्थापना को उसके अनुवर्ती विक्टर इनियुशिन ने अधिक खोज-बीन करके क्यूलर वायोलोजी के रूप में सुव्यवस्थित किया था।

सूर्य की सात किरणों के अपने-अपने गुण एवं प्रभाव हैं। इन सात रंगों के मूल में तीन ही प्रधान हैं। लाल, नीला और पीला। इन्हीं के सम्मिश्रण से अन्य रंग बनते हैं। सूर्य किरणों पर भी यह बात लागू होती है। सप्त किरणों का उद्गम इन त्रिविध रंग प्रवाहों को ही ठहराया जा सकता है। सूर्य किरण चिकित्सा में प्रधानतया इन तीन रंगों से और आवश्यकतानुसार उनके सम्मिश्रण से रुग्ण अवयवों को प्रभावित करने का प्रयत्न किया जाता है। लाल रंग गर्मी एवं उत्तेजना उत्पन्न करता है। इसके विपरीत नीला रंग शान्ति एवं शीतलता प्रदान करता है। पीले रंग को पाचक एवं शमन समाधानकारक कह सकते हैं। रोग के चिन्हों को देखकर यह समझा जा सकता है कि सर्दी की अधिकता या गर्मी की अधिकता से रुग्ण अवयव को कष्ट सहना पड़ रहा है अथवा अवरोध से, विकृति से पीड़ा उत्पन्न हुई है। इसी निदान के आधार पर उपरोक्त तीनों रंगों में से किसी विशेष का प्रयोग करने का निश्चय करना पड़ता है। यदि इनमें से किन्हीं के सम्मिश्रण जैसे लक्षण मालूम पड़ते हैं तो फिर उपचार के लिये मिश्रित रंगों का प्रयोग किया जाता है। सभी जानते हैं कि पीला नीला बनने से हरा—पीला लाल बनने से नारंगी—नीला लाल बनने से बैंगनी रंग बनता है। काला और सफेद रंग सूर्य किरण चिकित्सा में काम नहीं आता। अस्तु उपचारकर्त्ता उपरोक्त तीन प्रधान और तीन मिश्रित कुल छः रंगों का प्रयोग करते हैं। मिश्रण की मात्रा में न्यूनाधिकता लाने से तो फिर सैकड़ों, हजारों रंग बन सकते हैं। किस रोग के मूल में किस-किस प्रकार की विकृतियों का समावेश है और उनके उपचार में किस रंग का कितना न्यूनाधिक मिश्रण किया जाय, यह पूर्णतया चिकित्सक की सूझ-बूझ और दूरदर्शिता पर निर्भर रहता है। सही निर्णय पर पहुँचने के लिये कई बार तो उसे उलट-पुलटकर प्रयोग करने पड़ते हैं और सही निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए कई परिवर्तन करने पड़ते हैं। निदान और उपचार यदि सही मिल जाये तो यह निर्णय सही है कि किस रंग का प्रयोग किया जाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयुक्त है तो फिर रोग निवारण में सफलता मिलना बहुत ही सरल हो जाता है।

सविता देवता की भौतिक उपासना सूर्य सेवन से और आध्यात्मिक उपासना तेजस् का ध्यान करते हुये की जा सकती है। उसका शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर आशाजनक प्रभाव पड़ता है।

गर्मी और रोशनी से दूर न भागें

इन दिनों तथाकथित बड़े लोगों अमीरों को गर्मी से बचने की धुन सवार रहती है। प्रयत्न यह करते हैं कि ठण्डक में रहें ओर तेज धूप से बचें। घर के हर कमरे में पंखा लगा होता है। वातानुकूलित कमरों में ठण्डक बनाये रहने वाले उपकरण लगाये जाते हैं। गर्मी का मौसम आया नहीं कि बर्फ की खपत आसमान चूमने लगती है। इसके बिना आतिथ्य ही नहीं बनता। खाद्य पदार्थों को फ्रिज में जमा रखा जाता है। बच्चों तक को खाने चाटने को जेब खर्च मिलते ही वे चुस्की की बर्फ वाले की तलाश करते हैं।

यह बुरी आदत है। गर्मी हमारी जीवन संगिनी है। उसकी अति मात्रा से सीमित बचाव करने की बात समझ में आती है पर उसे विपत्ति मान बैठना गलत है। गर्मी के बिना कोई वस्तु पकती नहीं। पेट में बच्चे गर्मी के वातावरण में रहकर ही विकसित होते हैं। अण्डे को पक्षी छाती की गर्मी से ही सेते और पकाते हैं। कुम्हार यदि आँवा न लगाये तो उसका एक भी बर्तन काम में न आ सके।

गर्मी और रोशनी प्रायः दोनों ही साथ-साथ जुड़े रहते हैं। प्रकाश भी कम लाभदायक नहीं। जो गर्मी से बचते हैं, वे प्रकाश के लाभों से भी वंचित रहते हैं फलतः शारीरिक और मानसिक दृष्टि से दुहरे घाटे में रहते हैं। खुली धूप एवं हवा में रहने वाले उनकी अपेक्षा अधिक स्वस्थ रहते हैं, जो ठण्डक ही तलाशते रहते हैं और धूप में रहने की अपेक्षा अँधेरे तहखानों को पसन्द करते हैं।

श्रुति उद्गाता अन्तरात्मा ने परमेश्वर से प्रार्थना की है—"अन्धकार से प्रकाश" की ओर ले चल। उसका अभिप्राय ज्ञान, उल्लास, पराक्रम, उत्साह से है। इन उमंगों को प्रकाश का प्रतीक माना गया है। निष्क्रियता, निराशा को अन्धकार का।

यह दिव्य प्रकाश की विवेचना हुई। देखना यह है कि प्रत्यक्ष प्रकाश में से भी इन प्रवृत्तियों का कुछ सम्बन्ध है क्या ? क्या दृश्यमान परिस्थितियों के साथ भी इसकी संगति बैठती है। रात्रि का अन्धकार होते ही सभी को निद्रा आ घेरती है। चिड़ियाँ घोंसलों में घुस जाती हैं पशु समुदाय आश्रय खोजते हैं, जिनके नियत स्थान हैं, वे उनमें बैठकर सुस्ताने लगते हैं। पौधों तक का यही हाल है। उनकी अभिवृद्धि रुक जाती है। मनक्षेत्र में उदासी छाने लगती है। उत्साह ठंडा पड़ जाता है और इसी प्रकार समय गुजारने की विधा अपनाई जाती है।

इसके विपरीत प्रकाश का प्रत्यक्ष प्रभाव सूर्योदय होते ही दृष्टिगोचर होने लगता है। सोतों की नींद खुल जाती है। उठने, बिस्तर समेटने और नित्यकर्म से निबटने की इच्छा होती है। भूख जागती है और चूल्हे गरम होने लगते हैं। अपने-अपने कामों पर जाने की तैयारी करते हुये किसी को देखा जा सकता है।

चिड़ियाँ घोंसले छोड़कर जमीन पर उतरती और चहचहाती—फुदकती दीखती हैं। वन्य पशुओं को आहार की तलाश में जिधर-जिधर चल पड़ते देखा जाता है। कलियाँ खिलने लगती हैं और पौधों में बढ़ोत्तरी का क्रम चल पड़ता है। यह प्रकाश के विस्तार का प्रभाव है। उसमें गर्मी और रोशनी दानों का ही समन्वय रहता है। दोनों का अपना-अपना महत्त्व है। साथ ही उनका समन्वय भी। जहाँ एक है वहाँ न्यूनाधिक मात्रा में दूसरे को भी जुड़ा रहना पड़ेगा।

शरीर जब तक गरम है तभी तक वह जीवित है। ठण्डा हो जाना मरण का प्रमुख चिन्ह है। ग्रह-नक्षत्रों में प्लूटो जैसों में निस्तब्धता इसलिये है कि उनमें गर्मी नहीं के बराबर है। यों दूध जैसे अग्नि पिण्ड भी उसकी अति से निरर्थक बनकर रहते हैं पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊर्जा का सुसन्तुलन बनाये रहने पर पृथ्वी की शोभा, सुन्दरता, असाधारण स्तर की बन पड़ी है। वनस्पतियों और प्राणियों का उत्पादन एवं निर्वाह क्रम भूलोक में इसीलिये उत्साहवर्धक रीति से चल रहा है कि उस पर प्रकाश की स्थिति सन्तुलित बनी हुई है।

प्रकाश यों आग जलाकर या बिजली की सहायता से भी उत्पन्न किया जाता है, पर उसका उद्गम स्रोत सूर्य ही है। उसकी किरणों में जिन सप्त वर्णों और प्रभाव किरणों का समावेश है, वे मात्र उजाला ही नहीं देती, समुचित परिपोषण भी प्रदान करती हैं। विटामिन 'डी' विशेषतया इसी आधार पर होने वाला उत्पादन है।

ऐसे-ऐसे अनेक कारण हैं जो बताते हैं कि जीवनी शक्ति अक्षुण्ण रखने एवं बढ़ाने के लिये हमें अधिकाधिक समय तक सूर्य प्रकाश में रहना चाहिये। इसके लिये धूप में बैठना आवश्यक नहीं, जहाँ खुला प्रकाश पहुँचता है और रोशनी रहती है, वहाँ निवास करने से भी वह पोषण मिलता रहता है, जो मनुष्य के शारीरिक और मानसिक आरोग्य के लिये आवश्यक है।

मस्तिष्क के एक छोटे से शिखा केन्द्र पर अवस्थित "पीनियल" ग्रन्थि प्रकाश तरंगों को अन्य अवयवों की अपेक्षा अधिक पकड़ती है। यों आँखों की संरचना ही प्रकाश में वस्तुओं का स्वरूप देखने के लिये हुई हैं, पर "पीनियल" ग्रन्थि तो अदृश्य प्रकाश तरंगों का अनुभव करती है इसलिये उसे तृतीय नेत्र या आज्ञाचक्र भी कहते हैं। उसे जागृत करने के लिये प्रकाश बिन्दु पर ध्यान एकाग्र रखने की त्राटक प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इस ग्रन्थि से एक विशेष प्रकार का हारमोन स्रवित होता है, जिसे "मेलाटोनिन" कहते हैं। इसकी सप्लाई प्रकाश के वातावरण में बढ़ती और अन्धेरा होते ही घट जाती है। जब यह स्राव ठीक मात्रा में रिसते हैं तो मस्तिष्क का "हाइपोथैलेमस" क्षेत्र सक्रिय हो उठता है और उससे सम्बन्धित सभी प्रवृत्तियाँ अपना काम करने में उत्साहपूर्वक जुट जाती हैं। मानसिक विकास की दृष्टि से प्रकाशवान क्षेत्र में रहना आवश्यक माना गया है।

खुले प्रकाश के सम्पर्क में रहने वालों का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य सही रहता है, पर जिन्हें अंधेरे में काम करना पड़ता है, जो धूप से जितना दूर रहते हैं, उन्हें उसी अनुपात में दुर्बलता एवं रुग्णता का शिकार बनना पड़ता है। उदासी ही उन्हीं पर अधिक छाई रहती है और साथ ही निष्क्रियता भी। गर्मी के दिनों में अधिक काम-धन्धा होता है, जबकि जाड़े के दिनों में लोग सुकड़े-मुकड़े बैठे रहते हैं और ठण्डे हाथ-पैरों से कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ता। शीत ऋतु और कुछ नहीं, प्रकाश की कमी से ही ठण्डक बढ़ने की प्रक्रिया है। सूर्य जब पृथ्वी से अधिक दूरी पर होता है, तब उसकी गर्मी पृथ्वी तक स्वल्प मात्रा में ही पहुँच पाती है। फलतः स्थिति बदल जाती है। पौधे बढ़ना बन्द कर देते हैं। कितनों को ही पाला मार जाता है। शेष के पत्ते झड़ने लगते हैं। इस अभिशाप से पीछा तब छूटता है, जब गर्मी का अनुपात बढ़ता है। बसन्त का आगमन यही है। बढ़ते प्रकाश का अभिनन्दन समूचे वनस्पति जगत में होता है। कोपलें फूलती हैं। फूल खिलते हैं और प्राणियों में उमंगें उफनती हैं। वे अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय होते हैं और वंश वृद्धि के विनोद में तत्परता प्रदर्शित करते हैं।

अमेरिका के "नेशनल इस्टीट्यूट ऑफ मेन्टल हैल्थ के मनोविज्ञान विभाग का प्रतिपादन है कि ठण्डक वाले क्षेत्रों पर दिनों में उदासी का अनुपात अधिक रहता है। प्रकाश की मात्रा बढ़ने पर उस अवसाद से अनायास ही छुटकारा मिल जाता है। काम करने को जी चाहता है, उमंगें उठने और आँखें चमकने लगती हैं।

असह्य ताप से सीमित बचाव करना एक बात है और गर्मी को देखते ही घबराना दूसरी। हमें ऊर्जा की आवश्यकता पग-पग पर पड़ती है। इसलिये गर्मी और रोशनी के सम्पर्क में रहना ही हितकर है। अध्यात्म उपचारों में अग्निहोत्र, धूप, दीपक इत्यादि की, पारसियों में अग्नि की एवं थियोसॉफी वालों में भी अग्निदेव के पूजन सम्पन्न किये जाने का विधान सम्भ्रान्त, इसी कारण है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धूप के सम्पर्क में रहिये

समझा जाता है कि धूप में रहने से आदमी काला पड़ जाता है। उसकी सुन्दरता में कमी आ जाती है। मोटी दृष्टि से इस मान्यता की पुष्टि इस प्रकार भी होती है कि योरोप के, अमेरिका के जिन देशों में ठण्ड अधिक पड़ती है, धूप कम निकलती है, वहाँ के लोग अपेक्षाकृत स्वस्थ और सुन्दर होते हैं। इस प्रतिपादन के अनुसार धूप से बचा जाना चाहिये और छाया में रहना चाहिये। सम्भवतः इसी कारण सामन्तकाल के अन्तःपुरों में भरी रहने वाली रूपसियों को धूप हवा से रहित कमरों में रखा जाता था। उनके लिये 'असूर्यस्पर्श्या" शब्द प्रयुक्त किया जाता था। जिसका अर्थ होता था—वे महिलायें जो सूर्य को देख नहीं पातीं। इस स्थिति को सम्मानजनक मानने के लिये उन्हें इसलिये सहमत किया गया होगा कि वे सूर्य की तेजस्विता से लाभान्वित होकर अपना पौरुष प्रकट न करने लगें और अनीति के विरुद्ध विद्रोह पर उतारू न हो जायें।

सर्व देशों में फसलें उन्हीं महीनों में उगती हैं, जिनमें धूप रहती है। शेष महीने वे मांस आदि से काम चलाकर जीवित रहते हैं या उस भण्डारण पर गुजारा करते हैं, जो गर्मी के दिनों में उत्पादित किया जाता है। चमड़ी का रंग, चेहरे की बनावट वंश परम्परा पर निर्भर है। फिर मनुष्य परिस्थितियों के साथ तालमेल बिठा लेने का अभ्यस्त भी हो जाता है। मध्यकाल में जेलों में बन्द कैदियों को धूप, हवा से वंचित रखा जाता था। इससे वे पके आम की तरह पीले पड़ जाते थे। जीवनी शक्ति घट जाने से जल्दी बीमार होते और असमय में ही अकाल मृत्यु से मरते थे। मछलियाँ ठण्डे पानी में जी सकती हैं। ध्रुव प्रदेशों में एक्सिमो रहते हैं। यह अपवाद भरी विचित्रता है नियम नहीं।

प्रकट तथ्य यह है कि सूर्य के प्रकाश में जो रंगीन तरंगें प्रवाहित होती हैं, वे मनुष्य और पशु-पक्षियों के लिये महत्त्वपूर्ण पोषण प्रदान करती हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण वृक्ष-वनस्पतियों में देखा जा सकता है। जिन स्थानों में छाया अधिक रहती है। धूप का अभाव रहता है, वहाँ हरियाली उगती ही नहीं। किसी प्रकार उगा भी ली जाये तो वह बढ़ती-पकती नहीं। जमीन से मिलने वाला खाद-पानी जितना आवश्यक है, उससे कहीं अधिक उपयोगिता धूप की है। बर्फीले प्रदेशों में एक तिनका तक नहीं पाया जाता, जबकि अधिक गर्मी वाले रेगिस्तानों में भी कैक्ट्रिस जैसे पौधे बढ़ते और फूलते-फलते देखे गये हैं।

आसमान से पानी की वर्षा तो होती ही है ओस की बूँदें वनस्पति के पत्तों को धोती, सींचती और धूलि के कारण रुँधे हुये छिद्रों को भी खोलते रहने का पथ प्रशस्त करती रहती हैं। इससे पत्ते साँस लेने और जीवित रहते हैं। मनुष्यों के लिये भी रात के समय चाँदनी तथा ठण्डी हवा क्लान्ति को मिटाती और नव चेतना प्रदान करती है।

दिन में सूर्य का साम्राज्य रहता है। मोटे तौर पर हम उससे गर्मी और रोशनी पाते हैं। यह भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। पृथ्वी पर वनस्पतियों का प्राणियों का अस्तित्व इन्हीं दो कारणों से है। वे सूर्य से विद्युत तरंगों युक्त प्राण शक्ति उपलब्ध करते और बढ़ते-पकते रहते हैं। निरर्थक हो जाने पर गलने और ढलने की प्रक्रिया द्वारा यह ऊर्जा परिवर्तन भी करती है। समुद्र का जल धरती तक पहुँचाने का माध्यम यह सूर्य ऊर्जा ही है। सभी जीवधारियों का जागरण और पुरुषार्थ उसी सौर सामर्थ्य पर निर्भर है। पुष्प खिलने, पौधे बढ़ने, चिड़ियों के घोंसला छोड़ने, चहचहाने, प्राणियों के आहार की खोज में, निकलने तथा परिपक्वता आते ही प्रजनन कर्म की प्रेरणा और सामर्थ्य पाते हैं।

इस सन्दर्भ में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सूर्य किरणें जिस भी स्थान को स्पर्श करती हैं, उसमें से हानिकारक विषाणुओं को मारकर समाप्त करती हैं, साथ ही उस सतह पर जीवन तत्वों का अनुदान बिखेरती हैं। भूमि की सतह पर उर्वरता इसी आधार पर उपलब्ध होती है। खदानों, धातुओं, कोयला तथा खनिजों में जो विशेषता पाई जाती है, उन्हें सौर किरणों की ही चमत्कारी अनुकम्पा समझा जा सकता है।

वनस्पतियों की फलियाँ जो बीज रूप में विकसित होती हैं, धूप सम्पर्क का चमत्कार ही समझना चाहिये। अनाजों, शाकों, फलों की ऊपर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की परत सूर्य किरणों के सीधे सम्पर्क में आती हैं इसलिये उनके उस भाग में विटामिन 'डी' जैसे तत्वों की बहुलता उत्पन्न होती है। वे बीज उपजने की नयी सामर्थ्य से सुसज्जित होते हैं। यदि वे धूप से वंचित रहें तो उनका फलित होना ही सम्भव नहीं, फिर यदि कुछ बीज किसी प्रकार बनें भी तो स्वाद, गुण हलकी श्रेणी का होता है। उनके बीज उपजने की समर्थता से तो वंचित ही रह जाते हैं। इस प्रकार देखा जाता है कि पृथ्वी पर बिखरी बहुमूल्य जीवन सम्पदा प्रकारान्तर से सूर्य द्वारा ही भेजी और विकसित की गयी है। प्राणियों को जीवन भी उसी केन्द्र से मिलता है। वे सम्भावित शीत से भी इसी आवरण की छत्रछाया में अपनी रक्षा कर पाते हैं।

मनुष्य के लिये सौर ऊर्जा इसलिये आवश्यक है कि शरीर को सक्रिय रखने वाला तापमान देखा तो काय-कलेवर में जाता है, पर वह उपलब्ध सूर्य से ही होता है। शीत की अधिकता में देह ठण्डी पड़ जाती है और प्राण निकल जाते हैं। आँखों में रोशनी, कानों में श्रवण शक्ति, नासिका में घ्राण क्षमता और जननेन्द्रिय में कामुक उत्तेजना से लेकर गर्भधारण कराने तक की सामर्थ्य का उद्गम सूर्य की सप्तरंगी किरणें ही हैं। उनमें इस प्रकार की इतने स्तर की विशेषतायें भरी पड़ी हैं, जिन्हें वैज्ञानिक क्षेत्रों में जादू की पिटारी कहा जाता है। परमाणु ऊर्जा सौर ऊर्जा का ही एक छोटा संस्करण है। लेसर जैसी सशक्त किरणें धरती पर आसमान से उसी साधना लोक से उतरती हैं।

मनुष्य को अधिक से अधिक समय सूर्य के सम्पर्क में रहना चाहिये। गर्मी के दिनों में मध्यान्ह का तापमान तो प्रायः असह्य हो जाता है, इसलिये उस समय उससे वंचित रहना ही उपयुक्त है। किन्तु दिन के चढ़ते तथा ढलते समय की सहज ऊर्जा शरीर पर पड़ती रहे तो ही हितकर है। भारत की प्राचीन परम्परा में कटिवस्त्र और कन्धे पर उत्तरीय धारण करने के वस्त्रों को पर्याप्त माना जाता था। वे ढीले भी रहते थे ताकि सौर ऊर्जा के लाभ शरीर के प्रमुख अंगों को पर्याप्त मात्रा में मिल सके। शीत निवारण के लिये धूप सेंकने से निरापद और उपयुक्त उपाय दूसरा नहीं है। अधिक भारी और मोटे वस्त्र इस सन्दर्भ में व्यवधान ही उत्पन्न कर सकते हैं। पहनने से कपड़ों पर पसीना लगता है और धूलि का मैल भी जमता है, इसलिये उन्हें जहाँ नित्य धोने की आवश्यकता समझी जाती है, वहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिये कि उन्हें देर तक कड़ी धूप में सूखने दिया जाय। इससे उनमें जहाँ सफेदी और चमक आती है, वहाँ सबसे बड़ी बात यह है कि रोगी बना देने वाले जीवाणुओं का सरलतापूर्वक विनाश हो जाता है। जहाँ कीटाणु-नाशक दवाओं के प्रयोग की आवश्यकता समझी जाती है, वहाँ वह कार्य सूर्य की किरणें सीधी पड़ने देने की व्यवस्था बनाकर भी किया जा सकता है।

रोगियों कि चिकित्सा और परिचर्या में जहाँ विभिन्न उपायों, उपचारों का प्रबन्ध किया जाता है, वहाँ यह भी स्मरण रखने योग्य है कि उनके शरीर के सभी भागों तक धूप पहुँचने की व्यवस्था भी की जाये। इसके लिये प्रातःकाल की धूप तब तक सर्वोत्तम मानी जाती है, जब तक कि वह असह्य स्तर की गरम न हो जाये। जो लोग चल-फिर सकते हैं, वे धूप में टहलें। यदि यह कार्य हरियाली पर नंगे पैर चलते हुये हो सके तो और भी उत्तम है, अन्यथा चारपाई पर पड़े हुये हलका चादरा ओढ़कर धूप सेवन करने की दैवी चिकित्सा का लाभ तो उठाया ही जाना चाहिये। ठण्डक के दिनों में यदि धूप में गरम किये गये पानी से स्नान किया जा सके तो वह साधारण जल की अपेक्षा कहीं अधिक स्फूर्तिदायक एवं रोगनाशक सिद्ध होता है।

घरों का निर्माण इस प्रकार होना चाहिये कि उनमें खुली हवा और धूप का आवागमन हो सके। ऐसा ही निवास स्वास्थ्यकर माना जाता है, भले ही वह झोंपड़े जैसा सस्ता ही क्यों न हो ? बन्द घरों में सीलन, सड़न, कृमि-कीटक, खटमल, पिस्सू, जुएँ, चूहे मकड़ी आदि की निरन्तर अभिवृद्धि होती रहती है और अनेकों रोग उत्पन्न करने वाले अदृश्य जीवाणुओं की बेहिसाब बढ़ोत्तरी होती है। इन्हें विषैली दवायें छिड़ककर पूरी तरह नहीं मारा जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह कार्य कर सकने में तो मात्र तेज धूप ही समर्थ हो सकती है।

खाद्य पदार्थों की ऊपरी परत सूर्य सम्पर्क में रहने के कारण अधिक गुणकारी होती है। अन्नों को पकाने से पूर्व पीसा या दला जा सकता है, पर उनके छिलके को फेंकना नहीं चाहिये क्योंकि गूदे की अपेक्षा छिलके में गुण कई गुने अधिक होते हैं। दालें बिना छिलका उतारे ही पकानी चाहिये। शाकों में से जो छिलके समेत खाये जाते हैं, उन्हें उसी रूप में खाना चाहिये। फलों के सम्बन्ध में भी यही बात है। यदि वे न खाये जा सकें और उतारने की मजबूरी आ पड़े फिर भी ध्यान रखना चाहिये कि यह गुणकारी अंश है। उसे सुखाकर, पीसकर किसी अन्य उपाय से खाने या उबटन की तरह लगाने में प्रयुक्त करना चाहिये। छिलकों को पानी से उबालकर उन्हें स्नान के काम में लाया जा सकता है। उनकी परिशोधन की उपयोगिता को समझते हुये दवा रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। सूर्य किरणों की महिमा अपार है।

आइये पहले हम यह समझें कि धूप कब, कैसे लेनी चाहिये ?

(१) प्रातःकाल के निकलते सूर्य की प्रथम रश्मियाँ (अल्ट्रा वायलेट रेंज) स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त लाभप्रद हैं। उससे घटिया सायंकाल के समय डूबते हुये सूरज की किरणें हैं। सूर्य की किरणें नंगे बदन लेना चाहिये। स्त्रियाँ यदि नंगे बदन न ले सकें तो एक बहुत पतला या झीना कपड़ा पहन लें। अब तो सूर्य-चिकित्सा विज्ञान के आधार पर अनेक रोगों का सफल चिकित्सा हो रही है। सूर्य की धूप से रंगीन शीशों आदि का तैयार किया हुआ वैज्ञानिक ढंग से पानी तथा तेल आदि अनेक रोगों को दूर करने में समर्थ हुआ है।

(२) जाड़े के दिनों में दस बजे के पहले और गर्मी में आठ बजे के पहले धूप स्नान कर लें। सर्दी के दिनों में भले ही दोपहर को धूप लें। पर ऐसे समयों में पैर घुटने तक कपड़े से ढके रहे और चेहरा हरे पत्तों से या कम से कम कपड़े से ढका रखें। करवट लेते रहें ताकि सारे शरीर में धूप लगे। पाँच मिनट से प्रारम्भ करके एक घंटे तक या और अधिक तक बढ़ा सकता है। शरीर से तेजी से पसीने द्वारा विकार निकलता है और रोम-कूप खुल जाते हैं। (फिर स्नान कर लें।) चर्म रोगों में जैसे खाज, दाद, उकौता आदि में तथा स्नायु-दुर्बलता तथा शारीरिक कमजोरी में धूप बेहुत लाभ करती है। अस्थि-क्षय में यह राम बाण है। पर फेंफड़े के क्षय में रोगी सीधी धूप कभी भी न लें। यह घमसी ले। क्योंकि धूप से रोगों का उन्माद तेजी से होता है। विशेष कर जिन्हें बीमारी तेजी पर हो या जिन्हें एक बार भी खून आ गया है, ऐसी क्षयी, सीधी धूप से, कम से कम तेज धूप से बचें। वे प्रातः रश्मियों का सेवन कर सकते हैं—वह भी धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाकर। प्रखर सूर्य किरणों से तो स्वस्थ मनुष्य को भी बचना चाहिये।

यह जानना भी आवश्यक है कि धूप कब न लें ?

(१) तेज हवा चलती हो, बदली हो, पाला हो उस दिन धूप-स्नान स्थगित रखें। बहुत सर्दी हो तो एक हल्का कपड़ा पहन सकते हैं।

(२) खाना खाने क बाद कम से कम एक घंटे तक धूप न लें।

(३) नहाने के भी तुरन्त बाद धूप न लें। १०-१५ मिनट गुजर जाने दें।

(४) एनीमा लेने के १५-२० मिनट तक धूप न लें। वैसे ही धूप के १५-२० मिनट तक एनीमा न लें।

(५) दोपहर की प्रखर धूप से बचें।

विटामिन 'डी' तो शरीर में अपने आप धूप में बैठने से उत्पन्न हो जाता है। सरसों का तेल यदि धूप में रखकर गर्म कर लें और फिर धूप में शरीर मलें तो विटामिन डी पैदा हो जाता है। यही कारण है कि मातायें शिशुओं के शरीर धूप में लिटाकर कडुआ तेल मलती हैं। विटामिन डी की कमी से हड्डी और दाँत सम्बन्धी रोग, हड्डी का टेढ़ा हो जाना (रिकेट) दाँतों का ठीक समय पर न निकलना, सूखा रोग, जुकाम, मृगी, हिस्टीरिया, पीलिया, दाद, खुजली, उकौता, हृदय रोग, क्षय, इनफ्लुऐंजा निमोनिया आदि रोग हो जाते हैं। निर्धन मनुष्य भले ही दवा आदि तथा उन पदार्थों का प्रयोग करने में समर्थ हों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिनसे विटामिन 'डी' उसे प्राप्त हो, पर धूप और धूप में तेल-मालिश में तो कुछ खर्च नहीं होता। अतः धनी, निर्धन, युवा, बाल, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सभी को धूप और प्रकाश का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिये। हमारे यहाँ सूर्य नमस्कार, सूर्य पूजा आदि इसी से महर्षियों ने प्रचलित की। सूर्योदय के पूर्व नहा धोकर निकलते सूर्य को जल चढ़ाने की धार्मिक प्रथा है, उसके अन्दर बड़ी अल्ट्रा वायलेट किरण के लाभ वाली बात छिपी है।

स्वास्थ्य रक्षा में सूर्य किरणों का उपयोग

प्रकाश क्या है ? देखने में उसे सफेद चमक भर कहा जाता है, पर विश्लेषण करने पर उसके अन्तराल में कुछ विशिष्ट शक्तिधाराओं का समुच्चय पाया जाता है। इन्हें रंग कहते हैं। सूर्य किरणों में सात रंग हैं इसलिये सविता देवता को सात अश्वों के रथ पर सवार होकर परिभ्रमण करते हुये निश्चित किया गया है। किरणों का विश्लेषण करने या उन्हें सात विशेषताओं से युक्त—सात रंगों के रूप में देखा गया है।

इन रंगों की अपनी-अपनी विशेषता है। उन सबके पृथक्-पृथक् प्रभाव शरीर और मन पर पड़ते हैं। इसलिये उनका उपयोग उसी प्रकार करने के लिये परामर्श दिया जाता है जैसा कि भोजन से आवश्यक तत्वों का समन्वय रखने का प्रतिपादन किया जाता है।

मनुष्य जीवन की एक अविज्ञात आवश्यकता प्रकाश की है। प्रकाश के साथ गर्मी भी जुड़ी होती है। दोनों के समन्वय से विस्तार और हलचल का लाभ मिलता है। इसके अभाव से जड़ता छाने लगेगी और विकास विस्तार का क्रम अवरुद्ध हो जायेगा। अपने सौर मण्डल को ही लें। अधिक दूरवर्ती नेपच्यून, प्लेटो, यूरीनस ग्रह और उनके उपग्रह सूर्य प्रकाश का वैसा लाभ नहीं पाते जैसा कि समीपवर्ती पृथ्वी आदि को मिलता है। यही कारण है कि उन दूरवर्ती ग्रहों में ठण्डकों की चरम सीमा है। वहाँ न जीवन है न वनस्पति। गति भी उनकी धीमी है। दिन में प्राणियों और वनस्पतियों को गतिशील रहते तथा विकसित होते देखा जाता है, जबकि रात्रि के अन्धेरे में सर्वत्र सन्नाटा छाया रहता है और प्रगति के हर क्षेत्र में विराम जैसा लग जाता है।

धरती पर जीवन का अवतरण स्थानीय रासायनिक सम्पदा के साथ सूर्य ऊर्जा का सम्मिश्रण होने पर ही सम्भव हुआ है। यदि यह सुयोग न बना होता तो फिर नेपच्यून प्लेटो ग्रहों की तरह धरती भी शून्य तापमान से नीचे की स्थिति में रहकर निर्जीव स्थिति में दिन गुजार रही होती। सूर्य को जीवन कहा गया है। पुराणों में आदित्य का पति के और पृथ्वी का पत्नी के रूप में वर्णन हुआ है और प्राणियों की उत्पत्ति उन्हीं दोनों के सुयोग से सम्भव हुई बताई गई है। वैदिक प्रतिपादन में सूर्य ही इस जगत की आत्मा है।

सूर्य किरणों के माध्यम से धरती पर आने वाले सप्त रंगों को सप्त अश्व कहा गया है और उस रथ पर सवार होकर, उनके परिभ्रमण का वर्णन किया गया है। हर रंग की अपनी-अपनी विशेषता है। वस्तुओं के गुण धर्मों में इसी आधार पर भिन्नता पाई जाती है।

मानवी शरीर पर भी इन रंगों की मात्रा न्यूनाधिक हो जाने से स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। जिस प्रकार आवश्यक रासायनिक पदार्थ कम होने पर कई प्रकार के रोग एवं असन्तुलन उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार प्रकाश रंगों की उपयुक्त मात्रा में कारणवश कमीवेशी हो जाने पर भी स्वास्थ्य संकट उत्पन्न होता है। अतएव जहाँ चिकित्सा उपचार में वनस्पतियों, क्षारों तथा खनिजों का उपयोग करके तद् विषयक घट-बढ़ को ठीक किया जाता है, उसी प्रकार विज्ञजन रंगों की न्यूनाधिकता हो जाने के सम्बन्ध में भी जाँच करते हैं और उस क्षतिपूर्ति के लिये किये गये प्रयत्नों को रंग-चिकित्सा का नाम देते हैं।

ठंडजनित रोगों में लाल रंग का उपभोग करने से ऊष्मा बढ़ती है। रक्त विकार एवं चर्म रोगों में भी उसका उपयोग किया जाता है। रक्त की कमी, उदासी, निराशा की मनःस्थिति में भी लाल रंग के कपड़े पहनने तथा उसमें रंगी वस्तुओं को सम्पर्क में रखने से लाभ होता है। उस रंग के गिलास में पानी पीने की भी उपयोगिता बताई गई है। गठिया, लकवा, सूजन दर्द में भी उसका उपचार-प्रयोग होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीला रंग पाचक माना गया है। पेट के अपच या अन्य अवयवों की परिपाक प्रक्रिया शिथिल हो जाने पर उसका उपयोग हितकर होता है। फलों में से अधिकांश पीले होते हैं। आम, नीबू, पपीता, बेर, लुकाट, मकोय में अन्य गुणों के अतिरिक्त पाचन में सहायता करने की भी विशेषता है। बलगम, बुखार, खुजली आदि रोगों में जमी हुई विकृतियाँ प्रधान कारण होती हैं। उन्हें निकाल बाहर करने में पीला रंग लाभदायक माना गया है।

नीला रंग शीतल है, उसे गर्मी शान्त करने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। शिर दर्द, नेत्र रोग, जलन, अनिद्रा, रक्तचाप उत्तेजना, जैसे रोगों को उष्णता प्रधान माना जाता है। इसलिये उनकी निवृत्ति के लिये नीला रंग उपयुक्त समझा गया है। लगने, फोड़ा- फुन्सी उठने, जहरीले कीड़ों के काट लेने पर इस रंग का कपड़ा पानी में भिगोकर पीड़ित अंग पर रखने से ठण्डक की अनुभूति होती है। सूखी खाँसी, श्वांस में भी उस रंग के उपयोग से राहत मिलती है।

प्रमुख रंग तीन ही हैं लाल, पीला और नीला, इन्हीं के सम्मिश्रण से अनेक रंग बनते हैं। पीले और नीले के सम्मिश्रण से हरा-पीले और लाल के मिलने से नारंगी, नीले और लाल के मिलने से कत्थई रंग बनते है। इस मिश्रण में उनकी मात्रायें न्यूनाधिक होने से भी रंग बदलते हैं। उसी आधार पर उनके गुणों का भी मिश्रण होता है और तदनुरूप प्रभाव परिणाम में भी अन्तर आता है।

किस रंग की शरीर में कमी है, इसका अनुमान इस आधार पर भी लगाया जाता है कि व्यक्ति की पसन्दगी किस रंग की ओर अधिक आकर्षित होती है। खान-पान के सम्बन्ध में देखा गया है कि जिन रासायनिक पदार्थों की शरीर में कमी पड़ती है, उन्हें खाने के लिये मन विशेष रूप से चलता है। इच्छित वस्तु पाने पर इन्हें तृप्ति ही नहीं मिलती, आवश्यकता की पूर्ति होने पर रोग से निवृत्ति भी मिलती है। इसी प्रकार रंगों के सम्बन्ध में भी है। कौन किसे पसन्द करता है। इस रुचि-भिन्नता को देखकर भी अनुमान लगाया जाता है कि किसे किस तत्व की आवश्यकता पड़ रही है ?

रंगों की प्रभाव क्षमता पर विज्ञान की मुहर

रंगीन वस्तुयें प्रायः उन्हीं रंगों की किरणें अपने में ग्रहण एवं धारण करती हैं, जिसकी कि वे स्वयं होती हैं। इस प्रकार खिले पुष्पोद्यान, रंगे हुये वस्त्र-परिधान, दृश्य चित्रावली या पदार्थ न केवल नेत्रों को आकर्षक एवं मनमोहक प्रतीत होते हैं वरन् अपने स्तर की विशेषताओं से भरे रहने के कारण जहाँ रहते हैं या जिनके प्रयोग में आते हैं, प्रभावित करते हैं। सौन्दर्य या सज्जा में प्रयुक्त होने वाली साधारण वस्तुयें भी रंगों के कारण आकर्षक-सुन्दर लगने लगती हैं। प्रकृति का सौन्दर्य तो वर्णों की विविधता के कारण ही है। यदि यह जानकारी उपलब्ध हो सके कि कौन-सी ऋतु में किस स्वभाव के व्यक्ति के लिये कौन-सा रंग उचित रहेगा तो उससे सर्वसाधारण को वांछित वर्ण चुनकर लाभान्वित होने का अवसर भी मिलेगा एवं अवांछनीयता से होने वाली हानि से वे बच भी सकेंगे।

सुप्रसिद्ध रंग-चिकित्सा विज्ञानी मेरी एण्डर्सन का कहना है कि जिस प्रकार मानव स्वास्थ्य पर भवन संरचनाओं (ज्यामितीय आकार-प्रकार) का प्रभाव पड़ता है, ठीक उसी तरह उनमें किये गये रंग-रोगनों का साज-सज्जा का भी अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि भवन-निर्माण के साथ अब "रंग-योजना" को भी प्रमुखता दी जाने लगी है। इसके आधार पर कमरे आकर्षक सुन्दर तो बनते ही हैं साथ ही उनके आकार में, लम्बाई-चौड़ाई में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगता है। लाल, नारंगी और पीले रंग से पुते कमरे अन्दर से आकार में छोटे दिखते हैं जबकि सफेद, आसमानी और नीले रंग के कमरे आकार में लम्बे प्रतीत होते हैं। हरा रंग सही अनुपात दर्शाता है। इन रंगों का प्रभाव मानवी व्यक्तित्व पर पड़े बिना नहीं रहता। आसमानी रंग व्यक्ति के अहं को विस्तृत करता और वातावरण के साथ तालमेल बिठाकर चलने को प्रेरित प्रोत्साहित करता है। लाल रंग व्यक्ति को स्वकेन्द्रित बनाता है, जबकि हरा रंग हृदय के लिये अत्यन्त हितकारी सिद्ध होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूस के प्रख्यात गुह्यविद जार्ज इवानोविच गुरजिएफ के अनुसार रंगों के कुछ निश्चित सम्मिश्रण शान्तिदायक प्रभाव डालते हैं। तो कुछ रंगों का प्रभाव मानवी काया एवं मन पर विघातक भी होता है। "व्यूज फ्राम दी रियल वर्ल्ड" नामक पुस्तक में उनके प्रवचनों का संग्रह प्रकाशित किया गया है, जिसमें बताया गया है कि प्रत्येक रंग का अपना विशिष्ट गुण होता है और नियम विशेष के आधार पर वे कार्य करते हैं। उनकी रासायनिक भिन्नता ही अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न करती है। उदाहरण के लिये लाल रंग के प्रकंपन क्रोध दिलाते रोष उत्पन्न करते हैं, जबकि आसमानी रंग के वाइब्रेशन्स, प्रेम, सहानुभूति को सहृदयता की भावना को जाग्रत करते हैं। पीलापन युयुत्सा को भड़काता है।

प्रत्येक रंग का एक सम्पूरक रंग होता है। उदाहरण के लिये लाल रंग का आसमानी, नारंगी का बैंगनी, पीले का बैंगनी, हरे रंग का बैंगनी, लाल आसमानी का लाल, नीले का नारंगी तथा बैंगनी का पीला रंग अनुपूरक हैं। सात वर्णों के अतिरिक्त भी अन्य सैकड़ों कलर हैं, जो दो या अधिक वर्णों के सम्मिश्रण से बनते हैं। इनका भी रंग योजनाओं या रंग चिकित्सा में प्रयोग होता है। ये हैं—जामुनी (पर्पिल) सिंदूरी (स्कारलेट), लेमन कलर, मैजेन्टा, कलर और टारक्वाइज अर्थात् फीरोजी रंग। मिश्रित रंगों के अपने-अपने गुण, प्रभाव और परिणाम होते हैं, जिन्हें ध्यान में रखते हुये प्रयुक्त किया जाना ही हितकर होगा। गहरे रंगों की प्रतिक्रिया भी गहरी होती है, जो प्रतिकूल पड़ने पर कई बार अधिक हानिकारक भी सिद्ध होती है। स्वस्थ मनःस्थिति के लिये सामान्यतः हल्के रंग ही उपयुक्त पड़ते हैं।

विशेषज्ञों का कहना है कि उद्विग्न-अशान्त व्यक्ति भी रंग-बिरंगे फूलों के बीच बैठकर नया उल्लास उपलब्ध करता है, जो इस तथ्य की पुष्टि करता है कि मिश्रित रंगों की प्रभावोत्पादक क्षमता सामान्य एकाकी वर्णों की तुलना में अधिक होती है। उसमें उनकी शोभा, सुषमा, सुगन्ध के अतिरिक्त रंगों का उतार-चढ़ाव एक प्रमुख कारण है। अतः रंगों को मात्र शोभा-सज्जा के लिये ही नहीं प्रयुक्त किया जाना चाहिये वरन् उनके प्रभावों परिणामों को भी ध्यान में रखते हुये प्रयुक्त किया जाना अधिक उपयुक्त होता है। यह एक ऐसा महत्त्वपूर्ण विज्ञान है, जिसकी जानकारी बने रहने पर सामान्य जीवन को अधिक सुखद एवं प्रसन्न बनाया जा सकता है।

शारीरिक मानसिक स्फूर्ति और उत्तेजना प्रदान करने में रंगों की प्रभावकारी भूमिका के सम्बन्ध में मैक्सिको विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने गहन अनुसंधान किया है। रंगों का खिलाड़ियों पर पड़ने वाले प्रभाव को जाँचने-परखने के लिये उन्होंने खिलाड़ियों के कपड़े तथा फुटबाल जैसे खेल उपकरणों को भिन्न-भिन्न रंगों से रंगवाकर यह देखा कि इसका हार-जीत पर क्या कुछ प्रभाव पड़ता है। इस आधार पर किये गये परीक्षणों से जो निष्कर्ष उभरकर सामने आये उनसे पता चला कि रंग मात्र नेत्रों को ही सुरुचिपूर्ण-कुरुचिपूर्ण नहीं लगते, वरन् उनका प्रभाव मानसिक स्थिति पर भी पड़ता है। फलतः हार जीत के साथ उसका सम्बन्ध जुड़ता है। इस अध्ययन में पाया गया कि लाल रंग वाला पक्ष प्रायः शिथिल रहा, जबकि पीला एवं हल्का नीला रंग सफलता दिखाता रहा।

एक प्रयोग में शिकागो खेल निर्देशकों ने खिलाड़ियों की थकान उतारने के लिये विभिन्न रंगों से कमरे पुतवाये और उनमें उन्हें ठहराया। मैदान में जाते समय उन्हें नारंगी रंग वाले कमरे में कपड़े बदलने और चाय पीने के लिये बुलाया जाता था। परीक्षण करने पर इससे उनमें स्फूर्ति और उत्तेजना का अनुपात बढ़ा हुआ पाया गया।

स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने भी रंग के प्रभाव रोगियों पर जाँचने के लिये अनेकों प्रयोग परीक्षण किये हैं। उनने निष्कर्ष निकाला है कि मित्र रोगियों को शान्ति एवं शीतलता की आवश्यकता थी, उनके लिये नीले रंग से पुते कमरे—जिनमें उसी रंग के पर्दे लगे हुये थे, अधिक लाभदायक सिद्ध हुये। मानसिक रोगियों को तो इससे विशेष रूप से राहत मिली। काले रंग का प्रभाव जी मिचलाने, चक्कर आने, ऊब लगने जैसा देखा गया। जिन जलयानों या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वायुयानों के कमरे इन रंगों में रंगे थे, उन्हें परेशानी रही, किन्तु जब उनकी रंगयोजना बदल दी गई तो यात्री प्रसन्नता अनुभव करने लगे। उन्हें उन्हीं कमरों में अच्छा लगने लगा। पीले रंग से विचार शक्ति और स्मरण शक्ति अभिवृद्धि होती देखी गयी है। विद्यार्थियों पर इसका अनुकूल प्रभाव पड़ता है। विशेषज्ञों का कहना है कि बुद्धिजीवी वर्ग का विशेष कर हल्के पीले रंग के वस्त्रों तथा उपकरणों का प्रयोग करना चाहिये। इससे वे उद्विग्न होने से बचे रहेंगे और एकाग्र रहने में सहायता मिलेगी।

रंगों के प्रभाव पर गम्भीर अनुसंधान करने वाले सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक **हावर्ड कीथ** का कहना है कि "उपयुक्त रंग हमें ताजगी स्फूर्ति प्रदान करते हैं, जबकि अनुपयुक्त वर्णों से उद्विग्नता उत्पन्न होती और थकान आती है। आहार में जो महत्त्व स्वाद का है, वही दृष्टिक्षेत्र में रंगों का है। वे मात्र नयनाभिराम ही नहीं होते, वरन् शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर भी सीधा असर डालते हैं।

डॉ० कीथ ने अपने प्रयोग परीक्षणों में पाया है कि रंगों की प्रभाव-क्षमता अतिविलक्षण है। एक भोजनालय को उनने गहरे नीले रंग से पुतवाया, जिससे उसमें आने वाले आगन्तुकों की संख्या घटने लगी कारण यह था कि वहाँ बैठने वालों को ठंड लगने, जी मिचलाने जैसी अनेक शारीरिक मानसिक परेशानियों का शिकार होना पड़ा। कीथ ने जब उन कमरों को उसी ऋतु में नारंगी रंग से पुतवा दिया तो सभी शिकायतें दूर हो गईं और ग्राहक ऋतु बदलने की चर्चा करने लगे।

मूर्धन्य रंग-चिकित्सा विज्ञानी एम० जी० हिब्बन ने अपने प्रयोगों में भोजन के रंगों का पाचन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया है। एक बहुमूल्य सुस्वादु व्यंजन वाले भोज में उनने रंगीन बल्ब इस प्रकार जलाये कि पदार्थों का रंग कुछ से कुछ प्रतीत होने लगा। इसका परिणाम खाने वालों पर यह हुआ कि उनको अरुचि हो गई और वे आधे-अधूरे ही भोजन कर सकें। इसके विपरीत हिब्बन ने एक दूसरी पार्टी आयोजित की, जिसमें सामान्य से खाद्य-पदार्थ परोसे गये, किन्तु रंगीन प्रकाश ऐसा अच्छा था कि थालियाँ, कटोरियाँ जिन वस्तुओं से सजी थीं, वे सभी बहुमूल्य और सुस्वादु लगने लगीं। फलतः मेहमानों ने आशा से अधिक खाया और दावत की हर वस्तु को सराहा।

रंगों ने अपनी प्रभावशीलता की अमिट छाप शिक्षण-तन्त्र पर भी छोड़ी है। छोटे बच्चों की पुस्तकों में रंगीन चित्रों का होना आवश्यक है। इसके बिना पढ़ने के लिये उनका उत्साह ही नहीं उभरता। बच्चों की भाव-संवेदनाओं को उभारने में वर्णों से काफी सहायता मिलती है। लॉस एन्जिल्स के प्रख्यात चिकित्सक डा० ब्राइट हॉस ने रंगों के माध्यम से विद्यार्थियों की शारीरिक क्षमता एवं बौद्धिक प्रखरता घटाने-बढ़ाने के अनेकों प्रयोग भी किये हैं। इसके लिये उन्होंने एक जैसी स्थिति के छात्रों को वर्गों में बाँटकर उन पर लाल, नीले और पीले रंग के प्रभावों को देखा। उनने पाया कि आलसी और मन्दबुद्धि वालों में उत्तेजना लाने के लिये लाल रंग अच्छा रहा, जबकि चंचल और आवेशग्रस्त रहने वालों को हल्के नीले रंग से शान्ति मिली। पीले वर्ण की प्रतिक्रिया मध्यवर्ती रही। मध्यवर्ग के विद्यार्थी अपनी कुशलता और प्रसन्नता में पीले रंग से अभिवृद्धि होने की बात कहते थे। अधिकांश को वही रुचिकर भी लगा।

यही प्रयोग काम-काजी व्यापारी वर्ग के लोगों पर भी किये गये। उनकी घड़ियाँ ले ली गईं और कई रंग के कमरों में बैठकर वार्तालाप करने के लिये उनके कई वर्ग योजनानुसार बिठा दिये गये। लाल रंग वाले कमरों में बैठकर बात करने वालों ने दो घन्टे काटे, पर उन्हें चार घन्टे जितने थकाने वाले लगे। उनमें गर्मा-गर्मी होती रही और किसी निष्कर्ष पर पहुँचे बिना ही उठ गये। उसके विपरीत नीले रंग वालों ने वार्ता के समय को वास्तविक के विपरीत आधा बताया। साथ ही हँसते-मुस्कराते बाहर निकले उनने घनिष्टता बढ़ाई और दुबारा ऐसी ही मिलन की आवश्यकता बताई। पीले रंग वाले कमरों के लोगों को समय का अनुभव उतना ही हुआ, जितना कि वस्तुतः बीता था। उनने उतनी ही अवधि में कितनी ही समस्यायें सुलझाईं और कितने ही सौदे पक्के कर लिये। सभी सफलता पर प्रसन्न देखे गये। आत्म-विश्वास बढ़ा हुआ पाया गया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गुणों के अभिवर्धन के सम्बन्ध में भी रंगों की उपयोगिता है। पीला रंग, सात्विक, नीला राजसिक और लाल रंग तामसिक माना जाता है। प्रकृति की परख और सद्गुणों की अभिवृद्धि के लिये भी रंगीन वस्त्रों तथा उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ एवं साधु प्रकृति के धर्म परायण लोग पीला वस्त्र धारण करते हैं। भगवान राम एवं कृष्ण का वर्ण नील कमल जैसा माना गया है। आकाश एवं समुद्र का रंग नीला है। उन्हें वैभव एवं वर्चस्व का प्रतीक मानते हैं। रक्त और आग का रंग लाल होता है। क्रोधावेश में आँखें लाल पड़ जाती हैं। इनमें तमोगुण का दर्शन होता है। रंगों के उपयोग से उपरोक्त गुण स्वभाव में घट-बढ़ की जा सकती है। आरोग्य वृद्धि के साथ-साथ मानसिक एवं भावनात्मक स्थिरता को अक्षुण्ण रखने के लिये उपयुक्त रंग का चुनाव किया जाय तो उसके फलितार्थ भी वैसे ही मिलते हैं।

लाल रंग गर्मी उत्तेजना और चिड़चिड़ापन उत्पन्न करता है। इससे स्नायु विकार हो सकते हैं। इसके विपरीत नीला रंग शीतल और शान्तिदायक होता है। गर्मी वाले मौसम या स्थान में नीले रंग का उपयोग करने से आँखों के माध्यम से शरीर को भी राहत मिलती है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण रंगीन चश्मे हैं। लाल काँच वाला चश्मा लगाकर निकला जाय तो चारों ओर आग बरसती दिखाई पड़ेगी और शिर गरम होने लगेगा। इसके विपरीत हरा या नीला चश्मा लगाकर निकलने पर कड़ी धूप भी हल्की प्रतीत होती है और बदली-सी छाई लगती है। गर्मी दूर करने के लिये यह छाता लगाने जैसा उपाय है।

एक कारखाने के श्रमिकों को अधिक प्यास लगने और अधिक पेशाब जाने की शिकायत बढ़ गई। फलतः बीच-बीच में काम छूटता और उत्पादन कम होता। इस नई व्यथा का कारण विशेषज्ञों को बुलाकर तलाश कराया गया तो प्रतीत हुआ कि कमरे काले रंग के पुते हुये थे। वह रंग हटाकर हरा रंग पुताया गया तो उस व्यथा से सहज छुटकारा मिल गया। एक-दूसरे कारखाने से मंजूर जिन लोहे के बक्सों को ढोते थे, उनके अधिक वजनी होने की शिकायत करते थे। जब उनका रंग बदलकर हरा करा दिया गया तो सभी की शिकायत दूर हो गई और अपेक्षाकृत हल्के लगने लगे।

लन्दन की टेम्स नदी के पुल पर से कूदकर आत्महत्या करने वालों की संख्या जिन दिनों असाधारण रूप से बढ़ गई थी, उन दिनों इसका कारण तलाशने वालों में से कुछ विशेषज्ञों ने यह सलाह दी कि पुल पर लगाये गये काले रंग को हटाकर बदल दिया जाय। वैसा करने पर आत्म-हत्याओं की संख्या आश्चर्यजनक रूप से घट गई।

शरीर की धातुओं और कार्य पद्धतियों पर रंगों का प्रभाव होता है और इस आधार पर नये रंग चिकित्सा विज्ञान का नया ढाँचा खड़ा हो रहा है। सर्दी-गर्मी की मात्रा घटाने-बढ़ाने में भी रंग सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त उनका मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी कम नहीं है। हरे रंग में कुछ विशेष भावनायें उत्तेजित एवं शान्त करने का गुण है। जो लोग जिस प्रवृत्त की विशेषता अपने भीतर बनाये होते हैं, वे तदनुरूप रंग पसन्द करते और चुनते हैं। इस प्रकार जिन्हें जिस भावना से प्रेरित प्रभावित करना होता है, उनके लिये उस रंग के आवरण आच्छादित जुटाने का प्रबन्ध आवश्यक होता है। फूलों के बगीचे में परिभ्रमण करने, उन्हें घर आँगन में लगाने, मेज पर गुलदस्ता सजाने में रंगों से मस्तिष्क का प्रभवित करने की आवश्यकता पूर्ण होती है। शोभा, सुरुचि और कला-सौन्दर्य का इसमें समावेश तो है ही।

नीले रंग के साथ, स्नेह, सौजन्य, शान्ति, पवित्रता जैसी प्रवृत्तियाँ जुड़ती हैं। लाल रंग उग्रता, उत्तेजना, संघर्ष का प्रतीक है। सफेद में सादगी, सात्विकता, सरलता की क्षमता है। चाकलेटी रंग में एकता, ईमानदारी, सज्जनता के गुण हैं। पीले रंग में संयम, आदर्श, पुण्य परोपकार का बाहुल्य है। हरे रंग में ताजगी, उत्साह, स्फूर्ति एवं शीतलता का प्रभाव है। चाकलेटी रंग कल्पनाशीलता उभारता है। सिलहटी में दूरदर्शी बुद्धिमत्ता की विशेषता है। काला रंग तमोगुणी है, उसमें निराशा, शोक दुःख एवं बोझिल मनोवृत्ति का परिचायक है। नारंगी रंग जीवन में आत्म विश्वास साहस की जानकारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देता है। गुलाबी रंग में आशायें, उमंगें और सृजन की मनोभूमि बनाने की विशेषता है।

रंग विशेषज्ञ एन्थोनी एल्डर के अनुसार बहिर्मुखी जीवन लालिमा प्रधान होता है। अन्तर्मुखी जीवन में नीलाकाश जैसी उदात्त मनःस्थिति होती है। पीले रंग की कर्मठता, तत्परता और उत्तरदायित्व निर्वाह की भाव-चेतना का प्रतीक माना जा सकता है। हरे रंग का स्थिरता और बुद्धिमत्ता का प्रतिनिधि समझा गया है। एल्डर कहते हैं कि स्वभावगत विशेषताओं को घटाने-बढ़ाने के लिये उन रंगों का उपयोग या बहिष्कार करना चाहिये, जिनमें अभीष्ट विशेषताओं का समावेश है।

रत्नों की अँगूठी, नाक, कान गले में पहनने में जहाँ मनुष्य की सम्पन्नता का बोध होता है, वहाँ उस रंग के कारण पहनने वाले को लाभ भी होते हैं। साथ ही विपरीत गुण रहने पर हानि भी हो सकती है। रत्नों के इन गुण-दोषों में उनके प्राकृतिक रंग को भी आधारभूत कारण माना गया है।

इंग्लैण्ड के द्वितीय महायुद्ध के समय रहे प्रख्यात प्रधानमन्त्री लार्ड बिस्टन चर्चिल ने सेवा निवृत्त होने पर खाली समय के अनुभवों का विस्तारपूर्वक उल्लेख अपनी आत्मकथा में किया हे। वे लिखते हैं—जीवन भर अत्यधिक व्यस्त रहने, महत्त्वपूर्ण सोचने और करते रहने के कारण मेरी मनोभूमि ऐसी बन गई है, जिससे निरर्थक दिन गुजारना मेरे लिये कष्टकारक बन गया। पर किया जाय न शरीर काम देता था और न मस्तिष्क ही उपयुक्त कल्पनायें कर सकने में समर्थ था। इस भारभूत स्थिति से छुटकारा पाने के लिये एक मित्र ने चित्रकला में रुचि लेने और उसमें उलझे रहने की सलाह दी। इस दिशा में सर्वथा अपरिचित होने के कारण लगा तो अटपटा पर मैंने उसका भी प्रयोग किया। बनाने के लिये आवश्यक साधन सामग्री मँगाई और मार्गदर्शिका पुस्तकों के सहारे अपने आप ही कुछ औंधा-सीधा करने लगा।

इस प्रयोग से मुझे बहुत राहत मिली। निरर्थक पड़ी हुई सृजन-क्षमता फिर जगी और बगीचे में रंग-बिरंगे फूल उगाने में रस लेने लगा रंगों को साथी बनाने पर ऐसा लगा मानो किसी अविज्ञात लोक के साथियों से रिश्ता जुड़ गया। जिन्दगी भारभूत नहीं रही और रंग-रंगीली हो गई।

सन् १९३८ में आड्रियन हिल नामक चित्रकार ने एक पुस्तक छपाई, जिसका नाम था 'कला बनाम रोग'। उसने इस पुस्तक में संगीत और चित्रकला की स्वास्थ्य सम्वर्धन और रोग निवारण के लिये महत्त्वपूर्ण माध्यम बताया है।

उसमें अपने अस्पताल की चारपाई पर व्यतीत हुई लम्बी अबधि का वर्णन किया है, जिसमें लिखा है कि इन दिनों पीड़ा, असमर्थता, निराशा और ऊब के अतिरिक्त और कोई साथी दीखता न था। डाक्टर और नर्स अपना-अपना काम करके चले जाने पर निरन्तर साथ रहने को कोई तैयार न था। निदान मैंने समीपवर्ती मेज पर रखे हुये एक गुलदस्ते से मित्रता जोड़ी और उसमें लगे हुये रंग-बिरंगे तथा विभिन्न आकार-प्रकार के फूलों की रुचिपूर्वक देखना आरम्भ किया। कितने कोमल और कितने उमंग भरे थे वे सब ? बच्चों जैसी मुस्कान बखेरते देख उन सबको तो मेरा मन बहुत हल्का हो गया और उन्हीं की बिरादरी में सम्मिलित हो गया। इस नये सहचरत्व में नया जीवन मिला और मन की मुरझाई दूब फिर से हरी-भरी हो गई। मेरे स्वास्थ्य सुधार में इस नई बिरादरी ने डाक्टरों और औषधियों से किसी भी प्रकार कम सहायता नहीं थी।

अस्पताल से छुट्टी पाने के उपरान्त उसने अपने पुराने प्रकृति पर्यवेक्षण वाले रुझान को कला में सम्मिलित करने और आजीविका आधार बनाने का निश्चय किया। फलतः सतत् अभ्यास से न केवल प्रकृति चितेरा बना वरन् अन्य स्तर की कलाकृतियाँ बनाने में भी समर्थ हो गया।

उसने अपनी चित्र चिकित्सा चलाई, जिसका आधार रंगों को दृश्य रूप में प्रस्तुत करके रोगियों की मनोदिशा में परिवर्तन करना था। यह समझने समझाने में देर नहीं लगी कि मानसिक परिवर्तन का किस प्रकार स्वास्थ्य सुधार के साथ सघन सम्बन्ध है। रोगी भर्ती हुये और अच्छे होते गये। उसने अन्य अस्पतालों को भी अपनी सेवायें दीं और विशेषतया विकृत मनःस्थिति वाले रोगियों का रंग उपचार से प्रभावित करने का सिलसिला शुरू किया। इस प्रयास में आशाजनक सफलता मिली।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीछे यह पद्धति जन साधारण की चर्चा एवं रुचि का विषय बनी। सन् १९४२ में उसके 'आर्ट थिरेपी' पर कई विचारोत्तेजक भाषण भी प्रसारित हुये, जिन्हें जनता ने बड़े चावपूर्वक सुना, नोट किया और लाभ उठाया।

ठीक ऐसा ही प्रसंग एक यहूदी चित्रकार का भी है। उसका नाम था हिमन सिनाल। वह सर्वप्रथम बाल मनोरंजन के लिये रंग-बिरंगे चित्र बनाता था और उनमें पेड़-पोधों फूलों तथा पशु-पक्षियों कि आकृतियाँ बनाकर रंगों से सुसज्जित करता था। जब उसकी आकृतियाँ बालकों में लोकप्रिय हुईं तो उसमें बड़ों के लिये भी इस कला का लाभ देने का निश्चय किया। उससे सैकड़ों चित्र बनाये। वे कला प्रधान नहीं थे वरन् विभिन्न मनुष्यों की मानसिक स्थिति का समाधान सम्वर्धन करने के लिये उन्हें बनाया गया। लेखा-जोखा लेने पर अपने समय का यह अभिनव प्रयोग बहुत सफल भी रहा और सराहा भी गया।

पुरातन चीन की युवतियाँ अपने पतियों और प्रेमियों को आकर्षित वशवर्ती करने के लिये अपने वस्त्रों का आवश्यकतानुसार उपयोग करती रही हैं। उनकी मान्यता थी कि—सफेद रंग के प्रभाव से पुरुष कोमल बन जाते हैं। पीले रंग से उन पर बसन्त बहार आती है। नीला रंग वशवर्ती बनाता है। हरे रंग से वे खिंचते चले आते हैं। गुलाबी रंग से वे व्याकुल हो उठते हैं और लाल रंग के प्रभाव से झल्लाने लगते हैं। काला रंग बीच में दीवार खड़ी करता है।

ग्रीक रोमन, ईजिप्ट में देवताओं के गुण और रंग निर्धारित हैं। उन देवताओं की पूजा के लिये भी उसी रंग की वस्तुयें प्रयुक्त होती हैं। भारतवर्ष में चार वर्णों की संगति चार रंगों से बिठाई गई है। ब्राह्मण का पीला, क्षत्रिय का लाल, वैश्य का नीला और शूद्र का काला बताया गया है। चेकोस्लाविया में बच्चों को वपतिस्मा के समय गिरजे में लाल तौलिये से ढककर ले जाया जाता है। आयरलैण्ड में केशरिया रंग बड़प्पन का प्रतीक माना जाता है।

पान अमेरिकन एयरवेज के सामने एक संकट आया। बस में सफर करने वाले यात्रियों की आकाशीय बीमारी—मितली की शिकायत बढ़ गई। कारणों की खोज करते हुये उसके भीतरी भाग की पुताई बदली गई। चाकलेटी के स्थान पर हरा रंग कराया गया साथ ही उभरी हुई शिकायत दूर हो गई।

विश्व विख्यात मनोरोग चिकित्सक डा० गोल्ड स्फेन ने विभिन्न रोगों एवं कठिनाइयों से ग्रसित लोगों पर किये गये रंग प्रयोगों का विवरण प्रकाशित करते हुये यह कहा है कि यदि रुग्ण व्यक्ति में अभीष्ट रंग या रंग सम्मिश्रण की कमी का सही-सही पता लगाया जा सके और उसकी क्षतिपूर्ति की उचित व्यवस्था बिठायी जा सके, तो यह चिकित्सा पद्धति भी उतनी ही सशक्त और कारगर सिद्ध हो सकती है, जितनी कि अन्य है। उनका कहना हैं कि इस प्रणाली में असफलता का एकमात्र कारण शरीर में किस रंग का अभाव है, इसका सही निर्णय नहीं कर पाना है। इसका निर्धारण हो जाने के उपरान्त रोगोपचार कठिन नहीं रह जाता। हर कोई अनुभव द्वारा इस कठिनाई को दूर कर सकता है।

वास्तव में वर्गों में वर्णों का संसार जितना चित्र-विचित्र है, उतना ही हमारे दैनन्दिन जीवन में वह महत्त्व भी रखता है। इस सच्चाई को यदि समझा जा सके, तो न सिर्फ उससे साज-सज्जा सम्बन्धी उपयोगी कार्य सम्पन्न किये जा सकते हैं, वरन् स्वास्थ्य सम्वर्धन को उभयपक्षीय लाभ भी लिया जा सकना सम्भव है।

वेदों में सूर्य-चिकित्सा

सूर्य किरण से नाना प्रकार के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। वाष्प स्नान से जो लाभ होता है, वही लाभ धूप स्नान से होता है। धूप स्नान से रोम कूप खुल जाते हैं और शरीर से पर्याप्त मात्रा में पसीना निकलता है और शरीर के अन्दर का दूषित पदार्थ गलकर बाहर निकल जाता है, जिससे स्वास्थ्य सुधर जाता है।

जिन गायों को बाहर धूप में घूमने नहीं दिया जाता है और सारे दिन घर में ही रखकर खिलाया-पिलाया जाता है, उनके दुग्ध में 'डी' विटामिन विशेष मात्रा में नहीं पाया जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उदय काल का सूर्य निखिल विश्व का प्राण है। प्राण प्रजनामुदवत्येष सूर्यः प्रश्नोपनिषद् १/८ सूर्य प्रजाओं का प्राण बनकर उदय होता है।

अथर्ववेद में सूर्य किरणों से रोग दूर करने की चर्चा है। अथर्ववेद कांड १ सूक्त २२ में :

अनुसूर्यमुदयतां हृदयोतो हरिमाङ्चते।
गो रोहितस्य वर्णन तेन त्वा परिद्धयसि।।१।।

अर्थ—हे रोगाक्रान्त व्यक्ति ! तेरा हृदय धड़कन, हृदयदाह आदि रोग और पांडु रोग सूर्य के उदय होने के साथ ही नष्ट हो जाये। सूर्य के लाल रंग वाले उदयकाल के सूर्य के उस उदय कालिक रंग से भरपूर करते हैं।

इस मन्त्र में सूर्य को रक्त वर्ण की किरणों को हृदय रोग के नाश करने के लिये प्रयोग करने का उपदेश है। सूर्य किरण चिकित्सा के अनुसार कामला और हृदयरोग के रोगी को सूर्य की किरणों में रखे लाल कांच के पात्र में रक्खे जल को पिलाने का उपदेश है।

"परित्वा रोहितेवर्णदीर्घायुत्वाय दम्पति।
यथायमरपा असदथो अहरितो भुवत्।।२।।

अर्थ—हे पांडुरोग से पीड़ित व्यक्ति ! दीर्घायु प्राप्त कराने के लिये तेरे चारों ओर सूर्य की किरणों से लाल प्रकाशयुक्त आवरणों से तुझे रखते हैं, जिससे यह तू रोगी पाप के फलस्वरूप रोगरहित हो जाय और जिससे तू पांडुरोग से भी मुक्त हो जाये।

ऐसे रोगियों को नारंगी, सन्तरे, सेव, अंगूर, आदि फलों को खिलाने तथा गुलाबी रंग के पुष्पों से विनोद कराना भी अच्छा है।

या रोहिणी दैवत्या गावो या उत रोहिणीः।
रूपं रूपं वयोवयस्तामिष्ट्वा परिदध्यासि।।३।।

अर्थ—जो देव, प्रकाश सूर्य की प्रातःकालीन रक्त वर्ण की किरणें हैं और जो लाल वर्ण की कपिला गायें हैं या उगने वाली औषधियाँ हैं, उनके भीतर विद्यमान कान्तिजनक चमक को और दीर्घायुजनक तन द्वारा तुझको सब प्रकार से परिपुष्ट करते हैं।

हृदयरोग के सम्बन्ध में वाग्भटूट अष्टांग संग्रह हृदयरोग निदान अ. ५ में लिखते हैं, पाँच प्रकार का हृदय रोग होता है वातज, पितज, कफज त्रिदोषज और कृमियों से। इनके भिन्न-भिन्न लक्षण प्रकट होते हैं। इसी प्रकर पांडुरोग का एक विकृतरूप हलीमक है। इसमें शरीर हरा, नीला-पीला हो जाता है। उसके सिर में चक्कर, प्यास, निद्रानाश, अजीर्ण और ज्वर आदि दोष अधिक हो जाते हैं। इनकी चिकित्सा में रोहिणी और दारिद्रय और गोक्षीर का प्रयोग दर्शाया गया है। रोहित रोहिणी, रोपण का यह एक ही वर्ग प्रतीत होता है। हारिद्रव हल्दी और इसके समान अन्य गाँठ वाली औषधियों का ग्रहण है। एक भी एक वृथा वर्ग का वाचक है।

अथर्ववेद काण्ड ६, सूक्त ८३ में गंडमाला रोग को सूर्य से चिकित्सा करने का वर्णन है।

अपचितः सूपर्णो वसतेरिव।
सूर्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वो पोच्छतु।।

(अथर्व० ६।८३।१)

अर्थ—हे गंडमाला ग्रन्थियों ! घोंसले से उड़ जाने वले पक्षी के समान शीघ्र दूर हो जाओ। सूर्य चिकित्सा करे अथवा चन्द्रमा इनको दूर करें।

यहाँ सूर्य की किरणों से गंडमाला की चिकित्सा करने का उपदेश है। नीले रंग की बोतल से रक्त विकार के विस्फोटक दूर होतें हैं। यही प्रभाव चन्द्रालोक का भी है। रात में चन्द्रातप में पड़े जल से प्रातः विस्फोटकों को धोने से उनकी जलन शान्ति होती है और विष नाश होता है।

एन्येका एयेन्येका कृष्णेका रोहिणी वेद।
सर्वसामप्रभं नामावीरपुनीरपेतन।।

(अथर्व० ६।८३)

अर्थ—गंडमालाओं में से एक हल्की लाल श्वेत रंग की स्फोटमाला होती है, दूसरी श्वेत फुंसी वाली होती है। तीसरी एक काली फुन्सियों वाली होती है और दो प्रकार की लाल रंग की होती है, उनको क्रम से ऐनी, श्येनी, कृष्ण और रोहिणी नाम से कहा जाता है। इन सबका शल्य क्रिया के द्वारा जल द्रव पदार्थ निकालता हूँ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुरुष का जीवन नाश किये बिना ही दूर हो जाओ।

असूतिका रामायणयऽपचित प्रपतिष्यति।
ग्लेरितः प्र प्रतिष्यति स गलुन्तो नशिष्यति।।
(अथर्व० ६।८३।३)

अर्थ—पीव उत्पन्न न करने वाली गंडमाला, रक्तनाड़ियों के मर्म स्थान में होने वाली, ऐसी गंडमाला भी पूर्वोक्त उपचार से विनाश हो जायेगी। इस स्थान से व्रण की पीड़ा भी विनाश हो जायेगी।

वीहि स्वामाहुतिं जुषाणो मनसा स्वाहा यदिदं जुहोमि। (अथर्व० ६।८३।४)

अर्थ—अपने खाने-पीने योग्य भाग को, मन से पसन्द करता हुआ सहर्ष खा जो यह सूर्य किरणों से प्रभावित जल, दूध, अन्नादि पदार्थ में देता हूँ।

सं ते शीष्णः कपालानि हृदयस्य च यो विधुः।
उद्यन्नादित्य रश्मिभिः शीर्ष्णो रोगमनीनशोंग मेदमशीशमः। (अथर्व० ६।८।२२)

अर्थ—हे रोगी! तेरे सिर के कपाल सम्बन्धी रोग और हृदय की जो विशेष प्रकार की पीड़ा थी, वह अब शान्त हो गई है। सूर्य ! तू उदय होता हुआ ही अपनी किरणों से सिर के रोग को नाश करता है और शरीर के अंगों को तोड़ने वाली तीव्र वेदना को भी शान्त कर देता है।

इस प्रकार समस्त रोगों को सूर्य उदय होता हुआ अपनी किरणों से दूर करता है।

धूप स्नान करते समय रोगी का शरीर नग्न होना चाहिये। जब सूर्य का किरणें त्वचा पर पड़ती है तो उससे विशेष लाभ होता है। सिर को सदैव धूप लगने से बचाना चाहिये। छाजन (एक्जिमा) रोग में धूप स्नान से बहुत लाभ होता है। यदि शरीर का कोई प्रधान अंग निर्बल हो गया हो, तो धूप स्नान से उन्हें लाभ होता है। कुछ रोगों में धूप स्नान मना भी है यथा सभी प्रकार के ज्वर में।

इस तरह से वेदों में नैसर्गिक सूर्य किरण चिकित्सा का स्पष्ट वर्णन है।

ब्राह्म मुहूर्त में ही जागना चाहिये

प्रातःकाल—जिसको कि हम आगे चलकर ब्राह्म मुहूर्त कहेंगे—जबकि प्रकृति मां अपने दोनों हाथों से स्वास्थ्य, बुद्धि, मेधा, प्रसन्नता और सौन्दर्य के अमित वरदानों को लुटा रही होती है, जबकि जीवन और प्राण शक्ति का अपूर्व भण्डार प्राणी मात्र के लिये खुला हुआ होता है, तब हम बिस्तरों में पड़े निद्रा पूरी हो जाने पर भी आलस्यवश करवटें बदल-बदल कर अपने शरीर में विद्यमान इन सम्पूर्ण वस्तुओं का नाश कर रहे होते हैं। हमें यह ज्ञान भी नहीं होता कि प्रभात के उस पुण्य काल में निद्रा की गोद में पड़े-पड़े हम प्रकृति के कितने वरदानों से वंचित हो रहे हैं।

प्रातःकाल का वह समय जिस समय मनुष्य को निद्रा को छोड़ देना चाहिये। ब्राह्म मुहूर्त कहलाता है। ब्राह्म मुहूर्त का लक्षण धर्मशास्त्रों में इस प्रकार वर्णन किया है। यथा—

रात्रोः पश्चिमयायस्य मुहूर्तो यस्तृतीयकः।
स ब्राह्म इति विज्ञेयोविहितः स प्रबोधने।।

अर्थात्—रात्रि के अन्तिम प्रहर का जो तीसरा भाग है, उसको ब्राह्म मुहूर्त कहते हैं। निद्रा त्याग के लिये यही समय शास्त्र विहित है।

आधुनिक सभ्यता का मूर्तिमान प्रतीक रेडियो यद्यपि सूर्योदय के बाद ७।। बजे सुरम्य शब्दों में—

"जागा सब संसार, उठो अब भोर भई !"

गा—गाकर प्रातःकाल हो जाने की सूचना देकर आधुनिक संसार को जगाता है, किन्तु वास्तव में प्रातःकाल तो उससे बहुत पहिले हो चुकता है। भगवान मनु के आदेशानुसार तो,

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत

अर्थात्—उपरिलिखित ब्राह्म मुहूर्त में ही उठना चाहिये।

यदि मनुस्मृति को हम उस काल के कानून और आर्डिनैन्सों की पुस्तक स्वीकार करें जैसा कि आधुनिक गवेषक मानते हैं तो हमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानना पड़ेगा कि मनु के समय से प्रजा के लिये उपर्युक्त आदेश कानून-मानना अनिवार्य होता था और इसके विपरीत आचरण वाले के लिये दण्ड का विधान था। यथा—

ब्राह्मे मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी।
तां करोति द्विजो मोहात् पाद कृच्छ्रेण शुद्धयति।।

अर्थात्—चूंकि प्रातःकाल की निद्रा पुण्यों सत्कर्मों का नाश करने वाली है इसलिये आलस्यवश जो द्विज प्रातः न उठे उसे "पाद कृच्छ" नामक व्रत करके उसका प्रायश्चित करना चाहिये।

मनु के इस नियम का उस समय सर्वत्र ही आदर के साथ पालन होता था। सभ्य मानव से राक्षस पर्यंत सभी इस नियम को मानते थे। भारतीय साहित्य सबसे पुराने ऐतिहासिक ग्रन्थ श्री वाल्मीकि रामायण में हमें इस सम्बन्ध का बड़ा सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है।

हनुमान जी जगज्जननी श्री जनक नन्दिनी की खोज में अशोकवाटिका में पहुँचे हैं, रात्रि का अन्तिम प्रहर है। श्री वाल्मिकि जी ने लिखा है—

विचिन्वतश्च वैदेहीं किंचिच्छेषा निशाभवेत्।
षडङ्गवेदविदुषां क्रतुप्रवरयाजिनाम्।।
शुश्राव ब्रह्म घोषान् स विरात्रे ब्रह्मरक्षसाम्।।

(बा० रा० सुन्दर सर्ग १८,—१, २ श्लोक)

अर्थात्—इस प्रकार सीता की खोज करते-करते रात्रि थोड़ी शेष रह गई और तब हनुमान जी ने ब्राह्म मुहूर्त में वेदज्ञ और याज्ञिक पुरुषों द्वारा किये जाने वाले वेद पाठ को सुना।

प्रातः जागरण में जिन लाभों का ऊपर वर्णन किया गया है, वह कोरा वर्णन नहीं है बल्कि स्वास्थ्य शास्त्र सम्मत है, यथा—

वर्णं कीर्तिं यशः लक्ष्मी, स्वास्थ्यमायुश्च विन्दति।
ब्राह्मे मुहुर्ते संजाग्रच्चियं वा पंकजं यथा।।

(भैषज्य सार ६३)

अर्थ—ब्राह्म मुहूर्त में उठने वाला पुरुष सौन्दर्य, लक्ष्मी, स्वास्थ्य, आयु आदि वस्तुओं को प्राप्त करता है। उसका शरीर कमल के सदृश सुन्दर हो जाता है।

प्रातःकाल उठने से इतने लाभ क्यों हैं ? इस प्रश्न का उत्तर प्रातःकाल की उस प्राणप्रद वायु में निहित है, जो प्राकृतिक रूप से उस समय बहा करती है। जिसके एक-एक कण में संजीवनी शक्ति को अपूर्व सम्मिश्रण रहता है। यह वायु रात्रि में चन्द्रमा द्वारा पृथ्वी पर बरसाये हुये अमृत बिन्दुओं को अपने साथ लेकर बहती है। इसलिये शास्त्रों में इसे वीर वायु के नाम से स्मरण किया गया है।

जो व्यक्ति इस समय निद्रा त्याग कर चैतन्य होकर इस वायु का सेवन करते हैं, उनका स्वास्थ्य सौन्दर्य, मेधा और स्मरण शक्ति बढ़ती है, मन प्रफुल्लित हो जाता है और आत्मा में नव चेतनता का अनुभव होने लगता है।

इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण रात्रि के पश्चात् प्रातः जब भगवान् सूर्य उदय होने वाले होते हैं तो उनका चैतन्यमय तेज आकाश मार्ग द्वारा विस्तृत होने लगता है, यदि मनुष्य इससे पहिले सजग होकर स्नानादि से निवृत्त हो, उपस्थान द्वारा उन प्राणाधिदेव भगवान सूर्य की किरणों से अपने प्राणों में उनके अतुल तेज का आह्वान करने योग्य बन जाये तो वह पुरुष दीर्घजीवी बन जाता है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त वायु का विभाग साधारणतया निम्न क्रम से किया जाता है—

ऑक्सीजन वायु	२१ प्रतिशत
कार्बन डाइऑक्साइड वायु	६ "
नाइट्रोजन वायु	७३ "
	१०० "

विज्ञान के अनुसार सम्पूर्ण दिन वायु का यही प्रवहण क्रम रहता है किन्तु प्रातः और सायं जब सन्धि काल होता है, इस क्रम में कुछ परिवर्तन हो जाता है। सूर्यास्त होने के बाद मनुष्य की प्राण शक्ति इसीलिये क्षीण पड़ जाती है कि उस समय जगत्प्राण प्रेरक भगवान् सूर्य के अस्त हो जाने के कारण ऑक्सीजन अर्थात् प्राणप्रद वायु भी अपने स्वाभाविक स्तर से निम्न हो जाती है और इसी प्रकार प्रातःकाल के समय उस वायु के अत्यधिक बढ़ जाने के कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य सम्पादन में उसका समुचित उपयोग किया जाना चाहिये। यही इसका वैज्ञानिक रहस्य है।

संसार के सभी महापुरुषों ने प्रकृति के इस अलभ्य वरदान से बड़ा लाभ उठाया है।

विश्ववंद्य महात्मा गांधी प्रतिदिन रात्रि में ३ बजे उठकर ही अपने दैनिक कार्यों में लग जाया करते थे। पिछले पत्रों के उत्तर, समाचार पत्रों के लिये लेख तथा सन्देशादि वे इसी समय तैयार किया करते थे। लिखने-पढ़ने के लिये तो इससे उपयुक्त समय हो ही नहीं सकता। एकान्त और सर्वथा शान्त वायु मंडल में जबकि मस्तिष्क बिल्कुल उर्वर होता है ज्ञान तन्तु रात्रि के विश्राम के बाद नवशक्ति युक्त होते हैं, मनुष्य यदि कोई बौद्धिक कार्य करे तो वह उसे इसके लिये विशेष श्रम नहीं करना पड़ेगा इसलिये हमें प्रकृति के इस अमूल्य वरदान से लाभ उठाना चाहिये और अभ्यास करना चाहिये कि हम प्रति दिन प्रातः उठ बैठें। इस अभ्यास के लिये एक साधारण-सा उपाय कार्य में लाया जा सकता है। रात्रि को सोते समय ईश्वर स्मरण के अनन्तर हमें अपनी चैतन्य आत्मा से अपना प्रातः चार बजे उठने का संकल्प जतला देना चाहिये और कहना चाहिये "मुझे प्रातः चार बजे जगा देना"। यह शत-प्रतिशत अनुभव की बात है प्रातः चार बजे अपनी अवश्य ही नींद खुल जायेगी और यदि फिर आलस्य में आप न पड़े रहें तो फिर बिना किसी घड़ी की सहायता के उठने लगेंगे।

रूस के सम्राट पीटर दिन ग्रेट लन्दन में जहाज बनाने की विद्या सीखते समय जैसे सूर्योदय के पहिले उठा करते थे वैसे ही सिंहासनारूढ़ होकर प्रजा पालन करते समय भी भोर में शय्या त्याग किया करते थे। सुप्रसिद्ध उपन्यासकार सर वाल्टर स्काट प्रतिदिन भोर में उठकर अपने हाथ से चिराग जलाते और कार्य करने लगते। जब नौ बजे प्रातःकालीन भोजन का समय होता तभी वह अपना कार्य बन्द करते उसके पहले कभी वह अपना कार्य छोड़कर नहीं उठते थे। यदि वह इस प्रकार नियमबद्ध कार्य नहीं करते, तो कदापि इतने ग्रन्थों की रचना करने के साथ-साथ अपने दैनिक कार्य समूह को सुचारु रूप से सम्पादन करने में समर्थ न होते। महात्मागांधी भी तीन बजे ही शय्या का परित्याग कर देते थे।

प्रसिद्ध ग्रन्थकार ट्रोलोप डाकखाने में नौकरी करते थे। उन्होंने प्रतिदिन भोर में उठकर ग्रन्थ रचना करने की प्रतिज्ञा कर ली थी। इस प्रकार नियमित रूप से कार्य करने सें ही वह अंग्रेजी साहित्य भण्डार को इतने जीवन चरित्रों तथा अनेकों भ्रमण वृत्तान्तों से भरने में समर्थ हुये थे।

भोर में उठने के लिये रात में नौ-दस बजे के भीतर ही सो जाना आवश्यक है। अधिक रात बीतने पर सोने से भोर में शय्या त्याग करना तो कठिन है, यदि करें भी उसके लाभ के बदले हानि ही होती है। शरीर दुर्बल और अस्वस्थ हो जाता है, माथा भारी हो जाता है, आंखों में जलन पैदा होती है और कोई कार्य करने में उत्साह नहीं होता। अतएव भोर में ४, ५ बजे उठने वाले की रात में नौ-दस बजे सो जाने का अभ्यास करना होगा और ऐसा ही करना उचित भी है।

रात्रि में सब भावनाओं को मन में हटाकर शान्त चित्त से शयन करने का अभ्यास करना चाहिये। ऐसा करने से अच्छी नींद आती है, जिससे सबेरे उठने पर आदमी का मन प्रसन्न तथा उत्साहपूर्ण होता है और वह अपने कार्यों का उत्तम रूप से सम्पादन करने में समर्थ होता है। यही नहीं, इस अभ्यास से अनेक प्रलोभनों, विपत्तियों तथा आशंकाओं से रक्षा होती है।

यदि आप दीर्घजीवी बनना चाहते हों, अपने हृदय को बसन्तकालीन वायु प्रवाह की तरह आनन्दोल्लास पूर्ण करना चाहते हों, अपनी धमनियों में झरझर शब्द करती हुई प्रवाहित होने वाली छोटी नदी की धारा की भांति स्वच्छ रक्त की धारा प्रवाहित करने की अभिलाषा रखते हों, आयु को बढ़ाने वाली पुष्पफलादि के सौरभ से पूर्ण प्रातः समीर का सेवन करके अपने जीवन की तेजस्विता बढ़ाने की इच्छा रखते हों, तो खूब तड़के शय्यात्याग करने का अभ्यास करें।

यदि आप इस जीवन में कोई महत्त्व का कार्य करके, अपने मानव जन्म को सार्थक बनाना चाहते हों, यदि अकाल मृत्यु से बचने की अभिलाषा रखते हों तो प्रतिज्ञापूर्वक नियमित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूप से भोर में उठा करें तथा प्रातःकालीन वायु का सेवन करें और ईश्वर का नाम लेकर उत्साह पूर्वक अपने कार्य में प्रवृत्त हों।

उषःपान कीजिये

उषःपान का कार्य नासिका द्वार से ही होता है। नासिका की भीतरी दीवार किंचित् आर्द्र होना स्वाभाविक ही है, अगर उसमें कुछ आर्द्रता या शुष्कता मालूम हो तो यह जानना चाहिये कि शरीर में कुछ वैषम्य पैदा हो रहा है। शुष्कता जब अधिक बढ़ जाती है, तब उसमें जलन पैदा हो जाती है और बाद में खून भी निकलने लगता है। ये लक्षण शरीर में पित्त-दोष की वृद्धि के सूचक होते हैं। ऐसी अवस्था में उषःपान करना लाभकारी है। पित्त दाहात्मक अवस्था में उषःपान से विशेष लाभ होता देखा गया है।

उषःपान की विधि

'विगत धन निशीथे प्रातरुत्थाय नित्यं
पिबति खलु नरो यो घ्राणरंध्रेणवारिः।

तथा—

मनुदिनंत्वनुदिते रविमण्डले
विपत्ति तोय मनुंजलिम् मविट्।

सूर्योदय के पहले नासिका से जलपान करना उषःपान कहलाता है। इसके लिये रात के समय ताँबे के पात्र में जल भर अपने बिस्तर के पास रखते हैं और सुबह उठते ही उस जल को पी जाते हैं, रात भर ताँबे के पात्र में जल रहने के कारण उसमें ताँबे का कुछ गुण आ जाता है। ताँबे के बर्तन में रक्खा हुआ जल १२ घण्टे के बाद विशुद्ध हो जाता है। चांदी के बर्तन में रक्खा हुआ पानी और भी विशुद्ध होता है। इस सम्बन्ध में इस बात पर भी विचार रखा जाता है कि सबेरे सोकर उठने पर वह पानी पीते समय इस पर ध्यान रक्खा जाये कि उसका तापमान (Temperature) शरीर के तापमान के बराबर है।

इसके लिये यदि काँच का गिलास हो तो उससे नाक से पानी पीने में सुविधा होती है। सबेरे ४-५ बजे उठकर पहले नाक साफ कर लेना चाहिये और तब पानी से भरे हुये गिलास को नाक के किनारे लगाकर उसी तरह पानी पीना चाहिये, जिस तरह से मुँह से पिया जाता है। नाक के भीतर के पुष्ट भाग में झिल्लियाँ हैं। एक झिल्ली से उदर की ओर नलिका गई है। इसके ऊपर वाली झिल्ली में गधवह श्रोतसों के तन्तु आते हैं, अगर उषःपान करते समय जरा जोर से पानी खींचा जाये तो इस ऊपर वाली झिल्ली में पानी के छींटे जाते हैं, जिससे सिर में झनझनाहट-सी होती है और वह सुन्न हो जाता है। अतः उषःपान करते समय इसका विशेष ध्यान रखना चाहिये कि पानी जोर से न खींचा जाये। पानी को धीरे-धीरे ही नीचे उतारना चाहिये। कुछ लोग उषःपान करते समय थोड़ा-सा नमक भी जल में मिला देते हैं। इससे उसकी दाहशयिकता और भी बढ़ती है। लवण का यह धर्म है। शरीर में उष्णता को सम रखे। शुशलर (Schuessler) के टिशूरेमेडी (Tissue Remedy) वाले लवण का स्वल्प प्रयोग दाह की अवस्था में बड़ी सफलता के साथ किया जा सकता है, यह बात सिद्ध हो चुकी है।

कुछ लोगों का यह विचार है कि उषःपान के बाद फिर से सो जाना चाहिये। पर उषःपान के बाद थोड़ी देर के लिये लेट रहना ही ठीक होगा। उषःपान के बाद विशेष रूप से निद्रा का आवश्यकता हो, ऐसी कोई बात नहीं। सोकर उठते ही हम उषःपान से शरीर के अन्दर जो एक शीत आन्दोलन पैदा करते हैं, उसमें बाहर जाने या किसी अन्य काम में लगे रहने के कारण शीतोष्ण का व्यत्यय न आने पावे, यही खासतौर से ध्यान देने योग्य बात है। उषःपान के द्वारा शरीर में उत्पन्न हुई शीत लहर शरीर में स्थिर हो इसलिये १५-२० मिनट क लिये लेट रहना लाभदायक है।

उपयोग—यह क्रियाशीतला उत्पन्न करने वाली होने के कारण पित्त प्रकृति के लोगों के लिये तथा उष्ण प्रदेश में रहने वाले व्यक्तियों के लिये खासतौर से उपयुक्त है। गरमी के दिनों में नाक से खून निकलने की शिकायत प्रायः हुआ करती है। लू का प्रकोप भी बहुत होता है। इन अवस्थाओं में शरीर की उष्णता बढ़ जाती है, जिसका लक्षण दाह के रूप में प्रकट होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह शरीर की स्वाभाविक गति है कि वह अन्दर की उष्णता को बाहर निकाल देने का प्रयत्न करता है, ऐसी हालत में अगर दिन निकलते ही शरीर के अन्दर शीत-आन्दोलन रख छोड़ें तो उपरोक्त विकार के दूर होने में बहुत कुछ मदद मिल सकती है।

यह देखा गया है कि नाक से खून निकलने की हालत में उषःपान से विशेष लाभ होता है। इस ऋतु में मूत्रकृच्छ की शिकायत भी अक्सर देखी जाती है। इसमें पेशाब बहुत कम और पीले रंग का होता है और पेशाब करने में जलन-सी होती है। उषःपान से यह शिकायत बिल्कुल जाती रहती है। अधिक लाभ के लिये पानी में कुछ नमक मिलाने की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है। पाव भर पानी में दो रत्ती नमक छोड़ने से काम चल जाता है।

नेत्र विकार—इस ऋतु में नेत्र विकार अधिकतर उत्पन्न होते हैं। आयुर्वेद में नेत्र को पित्त का स्थान माना गया है। शरीर में पित्त की होने वाली वृद्धि का लक्षण प्रायः नेत्र से प्रकट होता है। जब शरीर में दाह बढ़ता है तो आँखों में जलन होने लगती है। आँखें लाल हो जाया करती हैं। किसी-किसी को तो जरा-सी धूप में निकलने पर ही आँखें लाल हो जाने की शिकायत हो जाया करती है। आँख आना इस ऋतु की साधारण बीमारी है। इन सब अवस्थाओं में उषःपान आश्चर्यजनक रूप से लाभकारी सिद्ध हुआ है। उषःपान से शरीर की अनावश्यक गरमी बाहर निकल आती है। उषःपान के उपरान्त खूब साफ पेशाब होना इसके सुन्दर परिणाम का परिचायक होता है।

उषःपान से नासिका के पिछले भाग की झिल्ली में शीतलता उत्पन्न होती है, जिसका प्रभाव मस्तिष्क पर भी पड़ता है। मस्तिष्क के पिण्ड इस शीतलता से पुष्ट होकर अधिक कार्यक्षम बनते हैं। इसलिये प्राचीन ग्रन्थों में उषःपान की फलश्रुति के सम्बन्ध में "भवति मतिपूर्णः चक्षुषस्तार्क्ष्य तुल्यः" ऐसा वर्णन मिलता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उषःपान एक सुलभ उपाय है, जिसमें एक टके का भी खर्च नहीं। उष्ण प्रदेश में रहने वालों को तो इसका उपयोग जरूर करना चाहिये। गरमी के दिनों में सभी स्त्री-पुरुषों के लिये यह अमृत तुल्य है।

उष्णकाल समाप्त हो जाने पर यह क्रिया प्रत्येक व्यक्ति के लिये उपयुक्त न होगी क्योंकि उषःपान शीतलता उत्पन्न करता है इसलिये शीतकाल में इस क्रिया का किंचित् अनुपयोग ही होगा। अतः शीतकाल में इनका प्रयोग न करना चाहिये और अगर किया भी जाय तो जरा कम करना चाहिये। कफ प्रकृति के व्यक्तियों को ग्रीष्म ऋतु में भी कुछ कम करना चाहिये। ऐसा देखा गया है कि जहाँ पित्त का कुछ भी सम्बन्ध न हो ऐसी अवस्था में किया हुआ उषःपान उदराग्नि को मन्द कर देता है और शरीर में जड़ता उत्पन्न करता है।

उषःपान नहीं करना चाहिये

जलोदर, गठिया, पक्षाघात, कुष्ठ, तीव्रज्वर और जुकाम में उषःपान नहीं करना चाहिये, इसमें लाभ की जगह हानि होने की अधिक सम्भावना है। उषःपान के अभ्यासी को जो अभ्यास पहले पहल करना चाहता है, कुछ बातें ध्यान में रखनी चाहिये। सूर्योदय से पूर्व तो उषःपान किया ही जाता है इसके अतिरिक्त नौसिखिये को ऐसे समय से शुरू करना चाहिये जब न अधिक ठंड हो और न अधिक गर्मी। यदि फाल्गुन-चैत से इसका अभ्यास किया जाये तो अच्छा हो, वैसे जब चाहो शुरू किया जा सकता है। गर्मियों के दिन में मिट्टी के पात्र में, जाड़ों में चांदी, सिलवर, ताम्र पात्र में पानी रखना अधिक लाभप्रद होता है। इस क्रिया में शीघ्रता कभी नहीं करनी चाहिये, धीरे-धीरे पीना चाहिये। शरीर में जो विकार हो उस पर ध्यान लगाकर मन में यह संकल्प एवं भावना पैदा करना चाहिये कि अमुक रोग के लिये मैं अमृत पान कर रहा हूँ।

उषःपान से लाभ—

अजीर्ण दूर होकर शौच बिल्कुल साफ होता है। पेट की गुड़-गुड़ाहट एवं फूलना बन्द हो जाता है। रक्त शुद्ध बनता है, मस्तिष्क शक्तिशाली तथा दृष्टि तीव्र होती है। शरीर में एक प्रकार की अद्भुत शक्ति पैदा होती है शरीर का रंग निखर जाता है। उषःपान करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के दूसरे दिन ही भूख खूब लगने लगती है। स्वप्न दोष तथा अन्य वीर्य दोषों में आश्चर्यजनक लाभ होता है, कितने ही प्रमेह एवं स्वप्न दोष ग्रस्त रोगी नियमित रूप से उषः पान करने से रोगमुक्त होते देखे गये हैं। रक्त विकार में भी आशातीत लाभ होता है। बाल सफेद होना रुक जाता है।

स्वास्थ्य के लिये स्नान और जल की उपयोगिता

मनुष्य जीवन के निर्माणकारी तत्वों में जल का प्रमुख स्थान है। शारीरिक स्वास्थ्य बाह्य और भीतरी अंगों की सफाई, शारीरिक शुद्धि और पवित्रता के लिये जल का उपयोग आदि-काल से किया जाता रहा है। कटे हुये स्थानों में गीले कपड़े की पट्टी बाँधने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है।

इंग्लैण्ड में सर जानसन क्लेयर ने सत्रहवीं शताब्दी में स्नान को स्वास्थ्य और दीर्घायु जीवन का महत्त्वपूर्ण साधन बताया था। "फेब्रिकुगम मेगनम" के विद्वान् लेखक जानहेन काक ने चेचक और ज्वर में ठंडे पानी पीने को बहुत लाभकारी बताया है। मुस्लिम देशों में गैलन के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त को आज भी मानते हैं और अनेकों बीमारियों में शीतल जल प्रयोग करने को अत्यन्त लाभदायक मानते हैं।

शरीर में खून की सफाई, मलों की सफाई और कांति प्रदान करने वाली वस्तु जल है। जल जब आँतों में पहुँचता है तो इसका एक अंश पाचन क्रिया में भाग लेता है। आहार को रसयुक्त बनाकर पाचन क्रिया में मदद देता है और मल को गीला बनाकर मल-द्वार का ओर धकेल देता है।

इस बीच जल-चूषक कोशिकायें अपना कार्य प्रारम्भ करती हैं और जल से ऑक्सीजन प्राप्त कर सारे शरीर को कान्तिवान, रक्त को शुद्ध और शिराओं को प्रवाहमान बनाती है। इसलिये संतुलित आहार में आधा भाग पेट आहार और चौथाई भाग जल से भरने की उपयोगिता बताई जाती है। आहार के बाद एक-एक घंटे में कई बार थोड़ा-थोड़ा पानी पीना स्वास्थ्य के लिये बड़ा हितकर होता है। प्रातःकाल उषापान अर्थात् चारपाई से उठते ही एक गिलास शीतल जल का प्रयोग स्वास्थ्य के लिये अमृत तुल्य माना जाता है। इससे आँखों की ज्योति बढ़ती है और मस्तिष्क की ताजगी दिन भर बनी रहती है।

ठंडा पानी जब आँतों में पहुँचता है या जब किसी विशेष स्थान में शीतल जल या बर्फ का प्रयोग करते हैं तो दूसरे अंगों का रक्त उस स्थान की ओर खिंच जाता है, जिससे वह स्थान मजबूत बनता है और उस स्थान का विष या रोगवर्धक शक्ति समाप्त हो जाती है। आमाशय की यह क्रिया आँतों को मजबूत करती है और पाचन-क्रिया को सशक्त बनाती है। उपवास काल में जल के अधिकाधिक प्रयोग से संचित मल गीला होकर बाहर निकल जाता है।

जल से स्वास्थ्य बनाये रखने के साथ-साथ उसका प्रयोग अनेकों बीमारियाँ दूर करने में भी होता है। फिलाडेल्फिया के प्रसिद्ध चिकित्सक बेन्जामिन रश ने ठंडे पानी के प्रयोग से पीले ज्वर, गठिया, चेचक तथा शीतला माता का सफल इलाज किया है। बर्फ से भरी हुई थैली का प्रयोग रश के सिद्धान्त के अनुसार ही सन् १७९४ में प्रचलित हुआ, जो अब डाक्टरी चिकित्सा का अंग माना जाता है। गीली पट्टी बनाकर घाव या चोट में रखना भी ऐसा ही पद्धति है। इससे उस स्थान में रक्त की रोग निरोधक ऊष्मा बढ़ती है, जिससे तात्कालिक लाभ मिलता है। इन प्रयोगों से जल के महत्त्व पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

शरीर में जल का उपयोग मुख्यतया दो प्रकार से होता है। आहार की तरह जल पीने से और स्नान के द्वारा शरीर जल के सूक्ष्म और स्थूल प्रभाव ग्रहण करता है। यह दोनों ही साधन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। स्वास्थ्य के लिये इन दोनों का विकास आवश्यक है।

स्नान स्वास्थ्य से सम्बन्ध रखने वाली एक प्रमुख क्रिया है। सम्भवतः इसीलिये हमारे यहाँ इसे एक धार्मिक सांस्कृतिक और सामाजिक कर्त्तव्य माना जाता है और जो नियमित रूप से स्नान नहीं करता, उसे स्पर्श करना भी बुरा माना जाता है। भले ही इस अवहेलना का कोई वैज्ञानिक आधार न हो किन्तु मनोवैज्ञानिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृष्टिकोण से कोई भी इस महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया से वंचित न रहे, इस सिद्धान्त का प्रचलन कोई बुरा नहीं है। भारत उष्ण प्रकृति का देश है इसलिये यहाँ प्रत्येक ऋतु में स्नान करना उपयोगी तो है ही आवश्यक भी है।

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरकाल में दो अंग्रेज चिकित्सक क्यूरी और जैक्सन ने भी यह साबित किया कि शीतल जल से स्नान करना स्वास्थ्य के लिये बड़ा लाभदायक होता है। उन्होंने लिखा है 'ठंडे पानी से स्नान करने से शरीर को विश्राम मिलता है और स्फूर्ति बढ़ती है। इस क्रिया से शरीर को शक्ति और सजीवता प्राप्त होती है।" इससे भी पूर्व सन् १७८० के लगभग डॉ० क्राफोर्ड ने ठंडे पानी से स्नान के मनोवैज्ञानिक प्रभाव तथा प्राण वायु सम्बन्धी महत्त्व पर प्रकाश डाला था। शीतल जल से स्नान करने के पश्चात् रक्तवाहिनी नाड़ियों में एक प्रकार की गति उत्पन्न होती है और रक्त के रंग में परिवर्तन होने लगता है।

सन् १८०१ ई. में गर्म पानी के प्रयोग पर पनमिलवानिया यूनिवर्सिटी के मेडीकल फेकल्टी (स्वास्थ्य संगठन) के ट्रस्टियों के समक्ष थेसिस के रूप में प्रस्तुत किया गया। इसमें विभिन्न प्रकार के प्रयोग सम्मिलित थे और कम से कम व अधिक से अधिक फारेनहाइट तापमान पर नाड़ियों की गति के आँकड़े प्रस्तुत किये गये थे और यह निश्चय किया गया था कि जब जल का तापमान धीरे-धीरे बढ़ाकर ११० डिग्री फारेनहाइट तक कर दिया जाता है तो नाड़ी की गति में ८३ से लेकर ९३ तक हो जाती है, इससे रक्त संचालन में तीव्रता आने से मस्तिष्क में दर्द होने लगता है।

शीतल जल में स्नान करने से शरीर में हल्कापन आता है। रोमकूप साफ हो जाते हैं, शरीर की गन्दगी मिट जाती है और दिनभर काम करने से उत्पन्न थकान व रात्रि में सोने से उत्पन्न शिथिलता समाप्त हो जाती है। शरीर में ताजगी तथा नव-जीवन का संचार होने लगता है। प्रातःकाल का स्नान इस दृष्टि से अधिक उपयोगी माना जाता है। सायंकालीन स्नान से शरीर का पसीना, चिपचिपापन और सुस्ती दूर हो जाती है। इससे थकावट दूर होती है और भूख खुलकर लगती है। रात्रि में पूरी नींद लेने के लिये सायंकालीन स्नान लाभदायक होता है।

स्नान से शरीर की माँसपेशियों की शिथिलता दूर होती है और सारे शरीर में "विशिबा" नामक चैतन्य विद्युत का प्रवाह दौड़ जाता है, जिससे शरीर को स्फूर्ति मिलती है। रोम कूप खूल जाते हैं, जिससे रक्ताभिसरण में मदद मिलती है। स्नान से केवल त्वचा और बाहरी अंगों की ही सफाई होती हो, केवल त्वचा ओर बाहरी अंगों की शुद्धि होती हो इतना ही नहीं, वरन् आन्तरिक चेतना भी प्रादुर्भूत होती है। इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है और पेट सम्बन्धी शिकायतें दूर होती हैं।

प्रातःकाल स्नान करने के बाद सूर्य की बाल-किरणों से शरीर को सेंकने से प्राकृतिक विटामिन्स प्राप्त होते हैं और शरीर में स्निग्धता आती है और त्वचा की कोमलता बढ़ती है। इसलिये स्नान के बाद कुछ देर तक शरीर को वस्त्रविहीन रखना चाहिये ताकि वायु के द्वारा जो जल की आर्द्रता शरीर में शेष रह गई है, वह समाप्त हो जाये अन्यथा दाद, खुजली और चकत्ते पड़ने की शिकायतें उठ खड़ी होती हैं।

स्नान के लिये तालाब का जल उतना अच्छा नहीं होता। तालाबों में गन्दगी सड़ती रहने से पानी खराब हो जाता है और छोटे-छोटे कीड़े पड़ जाते हैं। कुयें का जल या बहता हुआ जल स्नान के लिये अधिक उपयुक्त होता है। बहते हुये जल में चूँकि सल्फेट जैसे खनिज तत्व बहुतायत से मिले होते हैं, इसलिये उसका स्वास्थ्य पर हितकर प्रभाव पड़ता है। कुयें का जल तालाब की अपेक्षा अधिक शीतल रहता है। इससे कुयें के जल में अधिक शक्ति व स्फूर्ति होती है। इससे चमड़ी, दिमाग तथा आँखों को तरावट मिलती है। गर्म जल से स्नान करना स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है। इससे शरीर में प्रतिकूल प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है और शरीर बल, नेत्र-ज्योति तथा मानसिक शक्ति घटती है।

स्नान करने का वैज्ञानिक तरीका यह है कि पहले खूब रगड़कर शुद्ध सरसों के तेल की मालिश करें, फिर थोड़ी देर विश्राम कर लें ताकि मालिश से उत्पन्न खून की गर्मी कम हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाये। अब आप अपने पैरों से ऊपर हृदय की ओर के अंगों को खूब रगड़कर धोना प्रारम्भ करें। शरीर को खूब मल-मल कर धोना चाहिये और पानी की कमी का संकोच न करना चाहिये। साबुन का उपयोग स्वास्थ्य की दृष्टि से उतना उपयोगी नहीं माना जाता। यह आवश्यकता मुल्तानी मिट्टी से पूरी कर सकते हैं, मिट्टी में विष खींचने की अपूर्व शक्ति होती है पर साबुन में कुछ रासायनिक तत्व ऐसे होते हैं, जो शरीर पर बुरा प्रभाव डालते हैं। कास्टिक की अधिकता वाले साबुनों का प्रयोग तो बिल्कुल भी नहीं करना चाहिये।

स्नान करने के उपरान्त किसी खद्दर या रोंयेदार मोटे तौलिये से शरीर के अंग-प्रत्यंग को इतना रगड़कर सुखाना चाहिये कि रक्त का उभार स्पष्ट दिखाई देने लगे। इससे शरीर में गर्मी दौड़ जाती है और थकावट दूर होकर शरीर में हल्कापन आ जाता है।

तैरकर स्नान करने से स्वास्थ्य को दोहरा लाभ होता है। तैरना एक प्रकार का रोचक व्यायाम है, इससे शरीर के सभी अंग-प्रत्यंगों का संचालन होता है और श्वांस-प्रश्वांस की क्रिया में गति उत्पन्न होती है। तैरने से छाती चौड़ी होती है और फेफड़े मजबूत होते हैं। तैरने से मनुष्य को दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। मारकर्ड (दक्षिणी अफ्रीका) की दो जुड़वाँ बहनों ने जिनकी उम्र ६० से अधिक हो चुकी थी, अपने जन्म दिवस पर उपस्थित अतिथियों को अपने दीर्घ जीवन के रहस्य पर प्रकाश डालते हुये बताया करती कि उन्होंने अपनी दिनचर्या में नियमित रूप से तैरने को भी प्रमुख स्थान दिया है। बावेरिया (बोन) के श्रम मन्त्री श्री वाल्टर स्टाय ने अपने स्टाफ के लोगों को स्वास्थ्य सुधारने के लिये यह आदेश दिया कि वे काम के घंटों में बीच ही सप्ताह में एक दिन अनिवार्य रूप से तैरकर मनोरंजन प्राप्त किया करें।

जल के नीचे फौवारों में बैठकर स्नान करना भी स्वास्थ्य के लिये अच्छा होता है। वर्षा में दो-तीन जल-वृष्टि के बाद बरसते पानी से स्नान करना भी अच्छा होता है। छोटे बालकों को छोटे टब में स्वच्छ जल भरकर उछल-कूद करते हुये स्नान करने देना चाहिये। इससे मानसिक प्रसन्नता भी साथ-साथ बढ़ती है।

जल का स्वास्थ्य से बड़ा गहरा सम्बन्ध है। यों भी कह सकते हैं कि जल ही जीवन है। इसकी प्रामाणिकता कुछ दिन स्नान न करने या कम जल पीने से ही सिद्ध हो जाती है। अतः हमें अपने आहार के साथ जल भी पर्याप्त मात्रा में लेने का स्वभाव बनाना चाहिये। स्नान के द्वारा बाह्य और भीतरी अंगों की सफाई, शक्ति और सजीवता भी बनाये रखना चाहिये।

रोगनाशक जल तत्व—

वेदों में जल की रोगनाशक शक्तियों का अत्यन्त विशद् वर्णन है। कुछ ऋचायें देखिये—

आपो इद्वा उ भेषजीरापो अभीव चातनीः।
आपः सर्वस्य भषजीस्तास्तु कृण्वन्तु भेषजम्।

अर्थात् "जल ही परमौषधि है, जल रोगों का दुश्मन है, यह सभी रोगों का नाश करता है—इसलिये यह तुम्हारे भी सब रोग दूर करे।"

अथर्ववेद में लिखा है—

"जल ही दवा है, जल रोग को दूर करता है, जल सब रोगों को संहार करता है। इसलिये जल तुम्हें भी कठिन रोग के पंजे से छुड़ावें।"

भगवान ने आदेश किया है—"जल से अभिसिंचन करो, जल सर्व-प्रधान औषधि है। इसके सेवन से जीवन सुखमय बनता है और शरीर की अग्नि भी आरोग्यवर्द्धक होती है।"

—ऋ मं. ६ अ. ५७ मं. २

वेदों में एक स्थान पर प्रार्थना की गई है कि—

"जल हमको सुख दे, सुखोपभोग के लिये हमें पुष्ट करे, बड़ा और दृढ़ करे। जिस प्रकार मातायें अपने दुधमुँहे बच्चों को दूध पिलाती हैं, हे जल ! उसी प्रकार तुम हमें अपना मंगलकारी रसपान कराओ। तुम हमारे मलों का नाश करो और योग्य संतान प्राप्त करने में सहायक हो। हे परमेश्वर ! हम तुमसे अन्नादिक पदार्थों के स्वामी मनुष्य मात्र का रक्षक तथा रोग मात्र की औषधि जल मांगते हैं।

"जल में अमृत है, जल में औषधियाँ हैं। हे ईश्वर ! दिव्य गुणों वाला जल हमारे लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुखकारी हो, अभीष्ट पदार्थों की प्राप्ति करावे, हमारे पीने के लिये हो, सम्पूर्ण रोगों का नाश करें, तथा रोगों से उत्पन्न होने वाले भय को न पैदा होने दे और हमारे सामने बहे।"

हे परमात्मा ! मुझ में जो पाप (भीतर और बाहर) हैं, मैंने जो द्रोह, विश्वासघात किया है या मैंने जो अपशब्द कहे हैं या मैं जो झूठ बोलता हूँ, उन सबको जल बहा ले जाये।"

जल के अमृतोपम गुण—

जल में जो गुण होते हैं, उन्हें भली भाँति स्मरण रखना चाहिये। शीतलता, तरलता, हल्कापन एवं स्वच्छता इसके प्राकृतिक गुण हैं। भ्रम, क्रान्ति, मूर्च्छा, पिपासा, तन्द्रा, वमन, निद्रा को दूर करना, शरीर को बल देना, उसे तृप्त करना, हृदय को प्रफुल्लित करना, शरीर के दोषों को दूर करना, छः प्रकार के रसों का प्रधान कारण बनना तथा प्राणियों के लिये अमृत तुल्य सिद्ध होना, कब्ज इत्यादि आन्तरिक मल पदार्थों को निकाल देना, स्नान के द्वारा शरीर को स्वच्छ करना, शरीर के विजातीय तत्वों को निकाल फेंकना, आमाशय, गुर्दा त्वचा को क्रियाशील बनाना, शरीर में खाद्य पदार्थ का काम देना—जल के कुछ गुण हैं।

मनुष्य के शरीर में ७० प्रतिशत जल-तत्व ही है। केवल जल पीकर हम एक मास तक जीवित रह सकते हैं। हमारे ही शरीरों को नहीं, वनस्पतियों का तो यह जीवनदाता है। जल में रहने वाले जीवों का तो यही जीवनाधार है। पृथ्वी जल-तत्व से उत्पन्न हुई है।

गीता में भगवान ने निर्देश किया है—"रसोऽहमसु कौन्तेय" (७/८) हे अर्जुन ! मैं जल में रस रूप से रहता हूँ अर्थात् जल में जीवन बसाने वाला जो रस (प्राण) है, वह मैं हूँ।

जलोपचार की प्रमुख विधियाँ—

जल में कई और गुण हैं जैसे अनेकरूपता, गर्मी सोख लेने की शक्ति, बीजों को अपने में मिला लेने और रूप परिवर्तन की शक्ति। शरीर के विकारों को धो डालने के लिये तरल रूप में इसका उपयोग किया जाता है। शरीर की गर्मी निकालने एवं गर्मी पहुँचाने में जल का प्रमुख हाथ है। इसे धोने की शक्ति के कारण अन्य विजातीय पदार्थों के साथ जल मानव शरीर में से यूरिक एसिड और आक्जेलिक एसिड जैसे हानिकारक पदार्थों को बाहर निकाल देता है।

दैनिक जीवन में जल का उपयोग—

वायु और धूप की भाँति जल हमारे लिये प्रधान तत्व है। यह ऑक्सीजन की ७५ प्रतिशत खपत बढ़ा देता है और ८५ प्रतिशत हाइड्रोजन की मात्रा को शरीर से निकाल देता है। प्रत्येक रोम में जल का उपयोग अधिक से अधिक मात्रा में होना चाहिये। कम जल पीने वाले प्रायः आमाशय और अंतड़ियों को सूखा डालते हैं, कब्ज हो जाता है, पेट में दर्द बना रहता है। पानी का ठीक उपयोग अनेक रोगों को उत्पन्न नहीं होने देता। ठंडा पानी शरीर के ताप को कम कर देता है, रक्त चाप घटाता तथा त्वचा के रंध्रों को क्रियाशील बनाता है, स्नायु तथा नाड़ियों को हलकेतौर पर प्रभावित करता है। जल कम पीने से हाजमा बिगड़ता है। अतः हमें चाहिये कि जल के प्रयोग में आलस्य न करें।

रोग निवारण में जल का प्रयोग—

प्रधान विधियाँ तीन हैं—(१) पानी पीकर रोग-निवारण (२) स्नान द्वारा शरीर शुद्धि (३) गीली पानी की पट्टी के प्रयोग।

सर्व प्रथम हम पानी पीने के नियम को लेंगे। पानी कब्ज नाश की सरल औषधि है। कम पानी पीने से पेट का दूषित पदार्थ जम कर सड़ता है, अंतड़ियों में से गुजरते हुये तकलीफ होती है। उसे निकालने में पानी ही प्रधान कार्य करता है।

प्रातःकाल उठते ही थोड़ा-सा जल पी लेने से सारे दिन शरीर में तरावट रहती है। उठते ही उषःपान कीजिये, फिर थोड़ा-सा टहलिये और शौचादि से निवृत हूजिये। कब्ज जड़ से चला जायेगा। अपच में भोजन के डेढ़ घंटे पश्चात् गर्म पानी पीने से अग्नि प्रदीप्त होती है और उदरशूल दूर हो जाता है। लोग सर्दी में गर्म चाय पीते हैं। वास्तव में उन्हें यदि कुछ लाभ होता है तो वह गर्म जल के ही कारण। शरीर की गंदगी और विष को निकालने में गर्म पानी का भी उपयोग होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। पेशाब आने से अवयव धुल जाते हैं और तरावट रहती है। गले की जलन तथा अति भोजन के कारण पेट में जो जलन हो उसे दूर करने के लिये कुछ-कुछ समय पश्चात् एक-एक चम्मच ठण्डा जल पीना चाहिये। प्रातःकाल एक ग्लास जल में कुछ नीबू की बूँदें डालकर पीने से पेट ठीक रहता है। चेहरे का रंग लाल रखने के लिये, स्फूर्तिदायक एवं तरोताजा दीखने के लिये कम से कम तीन सेर जल दिन में अवश्य पीना चाहिये। रुधिर की तरलता जल से ही कायम रह सकती है।

प्रमेह, वीर्यपात, मूत्र नली की जलन, सफाई इत्यादि यथेष्ट जल के प्रयोग से दूर हो जाते हैं। अत्यधिक परिश्रम के कारण गहरे लाल रंग का जो बदबूदार पेशाब उतरता है, वह जल की कमी के कारण ही होता है। थोड़ी मात्रा में पिया हुआ जल पसीने आदि के रूप में बाहर हो जाता है। उसका बचा हुआ थोड़ा-सा भाग ही गुर्दों को धो पाता है। अतः यदि परिश्रम करते समय थोड़ा-थोड़ा जल घंटे डेढ़-घंटे के बाद पीने का क्रम रक्खें, तो तरोताजगी बनी रह सकती है। बहुत-से व्यक्तियों को अजीर्ण अथवा नजला प्रायः आवश्यकता से कम मात्रा में जल पीने के कारण होता है।

अमेरिका के सुप्रसिद्ध लेखक मैकफैडल ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि यदि प्यास लगी हो, तो गुनगुना अर्थात् थोड़ा गर्म पानी उत्तम है। यदि संभव हो और आदत पड़ सके तो जल भोजन के आध घंटे पश्चात् ही पीयें। यदि पाचन शक्ति क्षीण हो या अग्निमांद्य हो, तो उस समय भी गर्म जल का प्रयोग करना उत्तम रहेगा। इससे पाचन शक्ति प्रदीप्त होगी।

फादरनीय के जल विषयक विचार—

प्राकृतिक चिकित्सा में फादरनीय के विचार बड़े बहुमूल्य हैं। उन्होंने जल चिकित्सा द्वारा स्वयं नव जीवन प्राप्त किया और दूसरों को मरने से बचाया। फादर नीय जल के अपने प्रत्येक प्रयोग के साथ शरीर के अंग-प्रत्यंग और त्वचा को कठोर बनाने के लिये कुछ बहुत सीधे निरापद उपाय बताते थे। उनमें कुछ उपाय ये हैं। पाठकों को चाहिये कि दैनिक जीवन में इनका उपयोग करने लगें—

(१) नंगे पांव टहलना—इससे टांगें और पांव की उँगलियाँ कठोर तथा सहनशील बनती हैं।

(२) भीगी घास पर नंगे पाँव चलना—गीली घास के स्पर्श से आप प्राण शक्ति खींच सकेंगे। ओस की भीगी घास श्रेष्ठतम है।

(३) गीले पत्थरों पर टहलना—जल तथा पत्थर के स्पर्श से शरीर कठोर तथा सहनशील बनेगा। पैरों में रक्त की गति बढ़ जायेगी, ताजी हवा, प्रकाश और जल से नई जान आयेंगी।

(४) तुरन्त की गिरी हुई बर्फ पर टहलना— ऐसी बर्फ पर चलने से सारा रक्त पाँवों में खिंच आयेगा। पैर में बेवाई फटने और दांत में दर्द होने पर यह अच्छा इलाज है।

(५) ठण्डे पानी में टहलना—थोड़े-थोड़े पानी में टहलना शरीर को दृढ़ और श्रेष्ठ बनाता है। मसाने और गुर्दे पर इसका विशेष प्रभाव होता है। रुके हुये पेशाब को लाने में यह क्रिया विशेष लाभदायक है। पाचन शक्ति ठीक होती है, अधोवायु शान्त हो जाती है, छाती का भारीपन ठीक होता है और श्वांस की गति भी ठीक हो जाती है। निर्बल रोगियों को पहलें साधारण ठण्डे पानी में यह क्रिया करनी चाहिये। घुटनों तक पाँवों को जल में डाले रहना शरीर को दृढ़ करने की एक उत्तम विधि है। इससे रिक्त धमनियों में रक्त भर जाता है और व्यर्थ जमा हुआ रक्त उर्ध्व भाग की ओर खिंचता है। जाड़ों के दिनों में इसे कम कर देना चाहिये।

(६) हाथ-पाँवों को ठण्डे जल में धोना—लाल बुखार, मोतीझरा और हाफा-डाफा सरीखे रोगों के लिये लाभप्रद है।

(७) सम्पूर्ण शरीर पर या केवल पैरों पर पानी डालना—उपरोक्त ७ क्रियायें प्रत्येक पाठक दैनिक जीवन में अधिक से अधिक अपनाकर रोग मुक्त और शरीर को कठोर एवं सहनशील बना सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जल के विविध स्नान—

लुई कूने साहब ने जल को इतना अधिक महत्त्व केवल स्नानों के कारण ही प्रदान किया है। लुई कूने की सर्व प्रसिद्धि सम्पूर्ण चिकित्सा प्रणाली केवल शास्त्रीय स्नानों पर ही अवलम्बित है।

आपके अनुसार रोगों का मूल सिद्धान्त एक रूप है। लूई कूने के अनुसार सब रोग एक ही मूल जड़ से उत्पन्न होकर नाना रूपों में प्रस्फुटित होते हैं। शरीर के विभिन्न अवयवों में पेट मुख्य है। अतः सबसे अधिक अत्याचार उसी बेचारे पर होता है। आवश्यकता से अधिक भोजन अप्राकृतिक भोजन ठूँस-ठूँस कर खाने से, उसमें विजातीय तत्व एकत्रित होने लगते हैं।

इन विजातीय तत्वों को बाहर निकालने के लिये लूई कूने साहब ने दो स्नानों का आविष्कार किया है—

(१) उदर स्नान या कटि स्नान।

(२) मेहन-स्नान।

इन स्नानों से अस्वाभाविक गर्मी दूर होती है। बहुधा ये चिरसंचित विजातीय द्रव्य देर तक जमे रहते हैं। वस्तुतः शीघ्र आरोग्य के लिये उस मल को स्नानों द्वारा ढीला करते हैं। ढीला करने के लिये लूई कूने साहब ने वाष्प स्नान तथा सूर्य-स्नान का भी व्यवस्था की है।

कटि स्नान—इस स्नान से सैकड़ों रोगियों को लाभ हुआ है। जिन रोगियों का रक्तचाप बढ़ा हुआ हो, फालिज़ या ब्रोनकाइटिस, दमा प्लूरेसी, निमोनिया, प्रदाह, अण्डकोष का बढ़ा हुआ होना, जांघों की रगों की पीड़ा, सूजाक या गर्मी हो, पीलिया अथवा पाण्डु रोग हो, स्त्रियों को मासिक धर्म सम्बन्धी गड़बडी हो, बांझपन हो उनके लिये कटि-स्नान बड़ा लाभदायक है।

कटि स्नान की विधि यह है। एक टब या नांद में पानी इस प्रकार भरिये कि जब रोगी उसमें लेटे तो दोनों पाँव बाहर रख सके और जल उसकी नाभि और जांघों तक पहुँचें। जांघों का ऊपरी भाग और नाभि तक का सब हिस्सा जल में डूबा रहे। पेडू को जल से भीगे वस्त्र से एक ओर से दूसरी और तक रगड़ता रहे। यह अत्यन्त आवश्यक है कि टांगें पांव और शरीर का ऊपरी भाग पेडू के साथ ही ठण्डा न किया जाये।

रक्तचाप के लिये जल की गर्मी ५० डिग्री से ८५ तक और दबे हुये जुकाम की जीर्णावस्था में जल का तापक्रम ८८ डिग्री से १०० डिग्री तक रखना चाहिये, पुरुष की जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोगों या स्वप्नदोष में जल ८८ से ६४ डिग्री तक जल रखना चाहिये। पाखाना या मुँह के रास्ते रक्त गिरने की दशा में ६५ से ७५ डिग्री तक दस दिन का कटि स्नान करना चाहिये, पुराने सूजाक और गर्मी (आतशक) में या तत्सम्बन्धी अन्य बीमारियों में ८८ से ६४ डिग्री तक गर्मी रखनी चाहिये। डॉ० दिलकश इत्यादि प्राकृतिक चिकित्सकों ने कटि-स्नानों के ताप्रकक्रमों में कुछ परिवर्तन किये हैं। उनके अनुसार—"कटि-स्नान लेते समय वे पांवों को गर्म पानी (तापमान १०२ से १०४ तक) में रखने की सलाह देते हैं। पेट को मलने के साथ-साथ कमर के उस भाग को भी मलवाते हैं। इस स्नान को उन्होंने तीन भागों में बांट दिया है—(१) ठण्डे पानी का कटि-स्नान (तापमान ५० से ८५ डिग्री तक) (२) सामान्य जल का कटि-स्नान (तापमान ८८ से ६४ डिग्री तक)। (३) गर्म जल का कटि स्नान (तापमान १०२ से १०८ डिग्री तक)। ठण्डे या सामान्य जल के कटि स्नान के गुण वही है, जो लूई कूने के बताये हुये हैं। सिर की पीड़ा जैसी बीमारयों में, या जिनका चेहरा सुर्ख हो जाता हो कटिस्नान के साथ पांवों को गर्म पानी के टब में रखने से लाभ होता है। पानी का तापमान १०२ प्रारम्भ में होना चाहिये फिर बढ़ाकर १०८ तक ले जाना चाहिये।"

मेहन स्नान—टब में शीतल जल भरकर रोगी एक स्टूल या पटरे पर इस प्रकार बैठता है कि पानी स्टूल के धरातल तक रहे। इसके लिये ५५ से ६५ तक के गर्म पानी की आवश्यकता होती है। रोगी अपने पैरों को टब के बाहर रखकर स्टूल पर बैठता है। जननेन्द्रिय ही जल में डूबी रहती है। रोगी को चाहिये कि वह बायें हाथ की दो उँगलियों से इन्द्रिय को इस प्रकार पकड़ रहे कि उसके आगे का कोमल अंश बाह्य झिल्ली से ढक जाय। अब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस चमड़े को पानी के अन्दर मुलायम भीगे कपड़े से धीरे-धीरे मलना चाहिये। घृणित रोगों, जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोगों में यह स्नान रामबाण का कार्य करता है। यह स्नान दिन में दो या तीन बार अधिक से अधिक १० से ३० या ४५ मिनट तक दिया जा सकता है। हिस्टीरिया और मिर्गी में भी यह लाभदायक है। प्राकृतिक चिकत्सा सम्बन्धी अन्य उपचारों के साथ यह स्नान क्षय में भी लाभदायक है। बांझपन, गर्भपात, डिप्थिरिया, जैसे भयानक रोगों में भी उत्तम है। नासूर, भगन्दर, कारवन्कल आदि में भाप स्नान के बाद इसे देना चाहिये।

वाष्प स्नान—लूई कूने ने भाप के स्नान पर जार दिया है। इसके लिये साधारण बेंत की एक कुर्सी से कार्य हो सकता है। कुर्सी के नीचे सम्हालकर खौलते हुये जल का पात्र रखना चाहिये। रोगी का सम्पूर्ण शरीर कम्बल से इस प्रकार ढक देना चाहिये कि भाप बाहर न निकलने पावे। इसमें धुआँ न जाने पावे अतः स्टोव या कोपले की आग का उपयोग अच्छा है।

एडोल्फ जुस्ट का प्राकृतिक टब स्नान—इसका प्रयोग स्नायु दौर्बल्य, वायु विकार, दूषित जिगर, चक्कर आना, नेत्रों की बीमारियाँ पुरुषों के जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोगों में किया जाता है।

टब की लम्बाई ४ फिट, चौड़ाई १८ इंच और गहराई ६ इंच होनी चाहिये। ४ से ६ इंच गहरा पानी ७० से ७२ डिग्री के तापमान का टब में डाला जाता है। रोगी टब में टांग फैलाये हुये घुटनों को पानी के ऊपर एक-दूसरे से पृथक् करके बैठ जाता है। अपने हाथों से जल में डूबे हुये सींवन और अ डकोषों को ५ मिनट तक धोता और मलता है। फिर पानी को हथेलियों से पेडू पर जोर से फेंकता है और साथ ही मलना शुरू कर देता है। ५ मिनट पश्चात् जल से निकलकर पानी को उठाकर अपने शरीर पर रोगी डाल लेता है। शरीर को हाथों से मलकर सुखाता है। प्राणशक्ति की वृद्धि के लिये इसका उपयोग उत्तम माना गया है।

जल की पट्टी का प्रयोग—

जल की पट्टी नाना प्रकार की हो सकती है। आवश्यकतानुसार सम्पूर्ण शरीर पर पानी की पट्टी बांधी जा सकती है तथा किसी अंग विशेष पर भी इसका उपयोग हो सकता है। पट्टी में गर्म तथा ठण्डे दोनों ही प्रकार के जल का उपयोग हो सकता है। यदि चाकू या अन्य नुकीली वस्तु से शरीर का अंग कट जाय तो ठण्डे पानी की पट्टी ही सर्वोत्तम है। उदर के विकारों के लिये गर्म पट्टी पेडू पर बाँधनी चाहिये। गले के दर्द में गर्दन पर गर्म पट्टी से सेंक करते हैं। पेट के दर्द में गर्म जल बोतल में भरकर सेंकना बहुत उत्तम है। स्थानिक रोग मिटाने के लिये गर्म पानी की पट्टी का प्रयोग ही सर्वोत्तम है।

स्वर्गीय डा० वडथ्वाल ने इस विषय में लिखा है—"स्थानिक दर्द मिटाने के लिये कई पर्तवाली फलालेन की पट्टी लेनी चाहिये। उसको खूब गर्म जल से भिगो निचोड़कर उसकी पट्टी बाँधनी चाहिये। फिर, उसे ऊपर उसी प्रकार ऊनी वस्त्र बांध लेना चाहिये, जिस प्रकार ठण्डी पट्टी में। गर्म पट्टी के बाद हमेशा फिर ठन्डी पट्टी बांधनी चाहिये, अन्यथा लाभ के बदले हानि होगी। निमोनिया में इस प्रकार एकान्तर से कई बार गर्म और ठण्डी पट्टी का प्रयोग करना चाहिये। गर्म पट्टी का प्रयोग सब प्रकार की वेदना मिटाने के लिये किया जा सकता है, किन्तु जलोदर में भूलकर भी गर्म पट्टी का प्रयोग न करना चाहिये।"

तरेरा—जब ज्वर अधिक हो, तो ठण्डी पट्टी के प्रयोग से ज्वर कम हो जाता है। दूर तक टहलने के पश्चात् उखते हुये पाँवों को जल में धो डालने से थकावट दूर हो जाती है। ठण्डे स्नान बड़े बलवर्धक एवं दीर्घजीवन देने वाले होते हैं। स्नान में जब जल कुछ दूरी से डाला जाता है तो उसे तरेरा कहते हैं। तरेरा केवल शीतल जल का ही उत्तम है। यदि ऊपरी भागों में रोग हो तो कमर से ऊपर तरेरा लेना चाहिये। निचले भागों के लिये कमर से नीचे तरेरा लीजिये। नेत्र, कान इत्यादि के शूल से मुक्ति के लिये सिर पर ठण्डे पानी का तरेरा उत्तम है। शरीर के भिन्न-भिन्न अवयवों पर भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यकतानुसार किसी जल चिकित्सा के विशेषज्ञ से पूछकर तरेरा का प्रयोग किया जा सकता है।

जल के इन असंख्य उपयोगों को देखकर ऋग्वेद में उचित ही निर्देश किया गया है—

हे जल ! तुम्हीं स्वास्थ्य के कारण हो, अतः हमें ऐसा बल दो कि सत्य को जान पावें।"

स्नान कैसे किया जाय ?

ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने के लिये मन और वाणी शुद्धि के बाद यह भी अनिवार्य है कि शारीरिक अशुद्धि न रहने पाये। शारीरिक अशुद्धि बीमारी का घर है और जो रोगी है, उसका ब्रह्मचारी होना भी सम्भव नहीं। डाक्टरों एवं मनोविज्ञान वेत्ताओं का तो कहना है कि रोगी और निर्बल ही अधिक विषयी होते हैं और फलतः क्षीण होते चले जाते हैं।

शरीर में इतने छिद्र और रोमकूप इसलिये बने हैं कि शरीर की भीतरी गन्दगी दूर होती रहे और साथ ही शुद्ध वायु का प्रवेश भी जारी रहे। नाक और मुँह के अतिरिक्त रोम कूपादि भी सांस लिया करते हैं और स्वस्थ रहने के लिये यह आवश्यक है कि उन्हें साफ रखा जाये और यह ध्यान एवं कोशिश बनी रहे कि वे बन्द न होने पायें।

स्नान मात्र ही पर्याप्त शुद्धि नहीं दे सकता। केवल १०-२० लोटा पानी डाल लेने या नदी तथा तालाब में १-२ डुबकी लगा लेना ही पर्याप्त स्नान नहीं। साथ ही शरीर को मल-मलकर धोना भी पर्याप्त या आवश्यक स्नान कदापि नहीं है। स्वस्थ रहने, वीर्य की रक्षा करने तथा रोग विमुक्त रहने के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति शरीर को स्वच्छ करने में कदापि आलस्य न करे और विधिवत् स्नान को सुख, सौन्दर्य और स्वास्थ्य का सर्वोच्च साधन माने।

इसके लिये यह आवश्यक है कि रगड़कर स्नान किया जाये। इस विधि से स्नान करने से मनुष्य तेजस्वी, निर्विकारी, नीरोग ब्रह्मचारी तथा दीर्घजीवी बन सकता है। जो अपने शरीर को गन्दा बनाये रहते हैं, वे अल्पायु को प्राप्त होते हैं और अल्पायु में भी सदैव रोग एवं मनोविकार के शिकार बने रहते हैं। शरीर को किसी खुरदरे गमछे या तोलिये से रगड़ना ही रोम कूपों को साफ रखने का मुख्य साधन है। रोमकूप साफ रहेंगे तो शरीर की गन्दगी ओर विष आसानी से बाहर निकल आयेगा। डाक्टरों का कथन है बहुधा मंदाग्नि, कब्जियत, चर्म रोग आदि रोमकूपों की गन्दगी से हो जाते हैं और क्रमशः रक्त अत्यन्त अशुद्ध हो जाता है। रगड़कर स्नान करने से रोमकूप साफ रहते हैं, छिद्रों के मुँह खुल जाते हैं और साथ ही त्वचा बड़ी मुलायम और सुन्दर हो जाती है।

स्नान का सर्वोत्तम समय प्रातःकाल है। प्रातःकाल स्नान कर लेने से दिन भर चित्त प्रसन्न रहता है और जठराग्नि दीप्ति होने से भोजन भी ठीक से पचता है। फिर जब पेट ठीक रहता है तो मन की विमलता भी बनी रहती है और आलस्य पास फटकने नहीं पाता। सूर्योदय के पूर्व स्नान करना अत्यन्त लाभकर है। फिर भी यदि किसी कारणवश देर हो जाये तो सूर्योदय के पश्चात् स्नान कर लेना चाहिये।

स्नान सदैव शीतल जल से ही करना चाहिये। हाँ किसी रोग या अन्य कारणवश यदि डाक्टर कहें तो गर्म जल से स्नान कर लेना हानिकर नहीं है तथापि यह ध्यान तो रखना ही पड़ेगा कि सिर पर गर्म जल न पड़े। यह स्मरण रहे कि स्नान से जो लाभ हैं, वे तभी प्राप्त हो सकते हैं, जब शीतल जल का उपयोग किया जाये। शीतल जल से स्नान करने से नस-नस में स्फूर्ति की बिजली-सी दौड़ पड़ती है और जठराग्नि प्राप्त होती है। अतएव प्रातःकाल शीतल स्नान स्वास्थ्य का परम साधन है। यह साधन इतना सुलभ है कि गरीब से गरीब प्राप्त कर सकता है—भले ही बहुत बड़ा अमीर अपनी जान के भय से गर्म जल से स्नान कर अपना समय और धन का दुरुपयोग करे। आजकल के नवयुवक गर्म जल को स्नान करना अपना भाग्य और स्वास्थ्य का चिन्ह समझते हैं लेकिन यह बात ध्यान में नहीं आती कि फिर भी क्यों उनका स्वास्थ्य क्षीण होता जा रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाड़े में जिन्हें सर्दी लगने का विशेष भय रहता है, वे अवश्य घर्षण स्नान करें। स्नान करने से पूर्व एक खुरदरे तौलिये या गमछे से शरीर को खूब रगड़ें। डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। खास-खास अंगों को छोड़कर बाकी शरीर पर बल लगाकर घर्षण करें। इससे शरीर एकदम गर्म हो उठेगा, पसीना निकलेगा और छिद्र खुल जायेंगे। इसके बाद फिर हाथों से तमाम शरीर को रगड़ना चाहिये। एक दो दिन के अभ्यास से ही उसका गुण प्रकट हो जायेगी। पेट को रगड़ने से पेट की शिकायत भी दूर होगी और स्वास्थ्य उत्तम हो जायेगा।

इसके अतिरिक्त स्नान करते समय भी घर्षण किया जा सकता है—यानी शरीर पर जल डालकर या तौलिये को जल में भिगोकर शरीर को रगड़ा जाता है। लेकिन प्रथम विधि सर्वोत्तम है। शरीर पर जल डालने के सम्बन्ध में यह नियम याद रखना चाहिये कि पहले सिर भिगो लिया जाये फिर शरीर के अन्य भागों पर जल पड़े। शरीर के अन्य भाग पर सिर से पूर्व जल डालने से शरीर की गर्मी नीचे से उपर सिर में पहुँच बहुत हानि करती है, लेकिन यदि सिर को पहले ही भिगो लिया जाय तो फिर वह डर नहीं रहता।

कुछ विद्वान विशेषज्ञों का यह मत है कि स्नान सोने में सुगन्ध उत्पन्न कर देता है। हिन्दू धर्म में सूर्योपस्थान आदि की विधि भी शायद इसी लाभ को मद्दे नजर रखकर रखी गयी है। यह सूर्य स्नान कर लेने पर घर्षण स्नान का पूरा लाभ मिलता है।

सुबह और शाम दो बार स्नान करना चाहिये। यदि शीत अधिक पड़ती हो तो १०-१५ मिनट अन्यथा आध घण्टे का समय स्नान में व्यतीत करना चाहिये। भली भाँति विधिवत् स्नान ही अपने गुण दिखा सकता है। स्नान का स्थान एकान्त होना चाहिये। पाश्चात्य विद्वानों ने नंगे स्नान करने की राय दी है लेकिन यह भारतीय सभ्यता के विरुद्ध है। तथापि शरीर में जितने कम कपड़े हों उतना ही अच्छा। यह भी ध्यान रखना चाहिये कि भोजन करने के बाद स्नान का अवसर न आये। इस प्रकार स्वास्थ्य को सुधारने से तथा घर्षण स्नान से ब्रह्मचर्य व्रत का पालन हो सकता है।

शीतल जल स्नान—इसको अंग्रेजी में The cold plunge bath (कोल्ड प्लंज बाथ) कहते हैं। कोमल और शीतल जल का स्नान मनुष्य देह के लिये ईश्वर की एक बड़ी देन है। हृष्ट-पुष्ट व्यक्तियों के लिये यह स्नान, सब स्नानों से उत्तम है। यह स्नान स्वास्थ्यवर्धक तो है ही, साथ-ही-साथ, सौन्दर्यवर्द्धक भी है। शीतकाल में, बन्द कमरों में, गर्म पानी से नहाने वाले स्त्री-पुरुष, अधिक नहीं, केवल एक पखवारा ही किसी खुले जलाशय के शीतल जल में स्नान कर देखें, उनको यह अनुभव कर महान् आश्चर्य होगा कि उनके स्वास्थ्य और सौन्दर्य में पहले से कहीं अधिक वृद्धि हो गई है। हमारे शास्त्रों में जो शीतकाल में, समय-समय पर गंगा जी आदि पवित्र सरिताओं के शीतल जल में स्नान करने की व्यवस्था है, वह इस प्रयोजन से दी गई है ताकि इस स्नान के असाधारण गुणों से एक भी व्यक्ति वंचित न रह जाये और सभी इसे अपने धर्म का एक आवश्यक अंग समझकर करें।

शीत-जल में नियमित रूप से स्नान करने वाले मनुष्य, काफी बड़ी आयु पाते हैं और मरते दम तक शक्तिशाली, तेजस्वी एवं स्वस्थ बने रहते हैं। ठंडे जल के स्नान से शरीर की त्वचा को शक्ति मिलती है और उसके काम में सहूलियत पैदा हो जाती है, जिससे बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य भी आसानी से सुधर जाता है। इस स्नान से शरीर की जीवन-शक्ति बढ़ती है। मोटी बात यह समझ लेनी चाहिये कि स्नान के लिये जल जितना ही ठंडा होगा, शरीर को वह उतना ही अधिक लाभ पहुँचायेगा।

शीत-जल से स्नान करने का ढंग वही है, जो साधारण-स्नान करने का अर्थात् स्नान से पहले सारे शरीर की हल्की मालिश कर लेनी चाहिए या थोड़ा हल्का व्यायाम ही कर लेना चाहिये, जिससे रक्त की गति थोड़ी तीव्र हो जाये। उसके बाद स्नान सिर की ओर से शुरू कर देना चाहिये। साधारणतौर पर इस स्नान में ५ से १५ मिनट का समय लगाना चाहिये। यदि इस स्नान के करने का कहीं बाहर जलाशय आदि में सुभीता न हो तो घर में ही किसी जगह स्नान-कुण्ड बनवा लेना चाहिए। यह भी न हो सके तो मामूली नहाने के टब में ही ठंडा जल भरवाकर स्नान कर लेना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उष्णजल-स्नान—यह स्नान जाड़ों में और कभी-कभी करना चाहिये। इस स्नान के नियमित रूप से रोज-रोज करना ठीक नहीं। दिन भर की थकावट के बाद शाम को सोने से पहले गरम पानी से स्नान कर लेना अधिक लाभप्रद होता है जिन लोगों की खाल सूखी-सूखी-सी रहती हो, पसीना ठीक से न निकलता हो तथा उस पर मैल अधिक जम गई हो, ऐसे लोगों के लिये गरम जल का स्नान विशेष रूप से लाभदायक है।

स्नान का तरीका यह है। स्नान-कुण्ड या टब गर्म पानी से भर लें। पानी अधिक गरम न होना चाहिये। उसकी गर्मी ६८ से १०० डिग्री के अन्दर-अन्दर होनी चाहिये। अब सिर पर ठंडे पानी से भीगा तौलिया लपेट लें और कुण्ड या टब में प्रवेश कर अंग-प्रत्यंग को खुरदुरे तौलियों या स्पञ्जादि से रगड़-रगड़ कर धोयें और स्नानोपरान्त बाहर निकलकर समूचे शरीर को तुरन्त ठंडे जल से धो डालें और बदले पोंछ कर स्वच्छ कपड़े पहन लें। इस स्नान में यही एक बात रखने की है कि स्नान करते समय गरम जल गले के ऊपर के अंगों को न छूने पावें अन्यथा मस्तिष्क में रक्त अधिक तेजी से दौड़ जाने के कारण हानि हो सकती है। सिर से गरम पानी से स्नान करने से दृष्टि मन्द हो जाती है तथा बाल गिरने और सफेद होने लगते है। स्वस्थावस्था में गरम जल का स्नान न करना ही उत्तम है। त्वचा पर गरम जल का बार बार प्रयोग, त्वचा के लिये हानिप्रद है। गरम जल में त्वचा की शक्ति क्षीण हो जाती है। इससे शरीर की जीवनी शक्ति भी मंद पड़ जाती है।

उष्णजल-स्नान जब कभी भी किया जाये तो ५-७ मिनट से अधिक समय उसमें न लगाया जाये, नहीं तो स्नान से लाभ के बदले हानि ही अधिक होगी।

गुनगुने जल से स्नान—गुनगुने पानी से मतलब, शरीर के तापमान के बराबर ताप वाले पानी से है। यह स्नान भी उसी प्रकार किया जाता है, जिस प्रकार उष्ण-जल-स्नान। अन्तर केवल यही होता है कि इसमें स्नान करने के बाद ठंडे पानी में बदन धोने की आवश्यकता नहीं होती। यह स्नान खासकर शरीर की थकावट दूर करने के लिये किया जाता है।

घर्षण स्नान

घर्षण का अर्थ है रगड़ना। प्रातः विधि पूर्वक घर्षण स्नान का अर्थ हुआ वह स्नान जिसमें किसी उचित विधि के अनुसार रगड़ने की क्रिया हो।

जिस तरह से एक बर्तन रगड़े हुये अच्छी तरह से साफ नहीं होता और उसमें चमक नहीं आती उसी प्रकार हमारा शरीर भी, केवल दो चार लोटे पानी डालने से धूल मिट्टी के छोटे-छोटे कणों को जो कि त्वचा के छिद्रों के अन्दर भर जाते हैं परिमार्जित नहीं कर सकता। अतः स्नान से प्रथम हमें चाहिये कि हम समस्त शरीर को ऊपर से नीचे की ओर अपने दोनों हाथों की हथेलियों से शरीर के प्रत्येक अवयव को उचित शक्ति के साथ घर्षण करें। सिर के बालों को धीरे-धीरे हाथ की अंगुलियों से रगड़ें। ऐसा करने से सिर की मांस पेशियों में रक्त की गति में वृद्धि हो जाती है अतः बाल पुष्ट होते हैं और कुसमय में हुये श्वेत बाल भी काले हो सकते हैं।

शरीर को रगड़ने की क्रिया किसी छोटे से खुरदुरे वस्त्र से भी की जा सकती है परन्तु हथेलियों से रगड़ने की क्रिया अधिक उत्तम है क्योंकि उसके द्वारा त्वचा के छिद्र तो साफ होते हैं, इसके साथ-साथ हथेलियों की रगड़ से एक प्रकार की विद्युत उत्पन्न होती है, जो कि हमारे शरीर में स्फूर्ति एवं नवीन शक्ति का संचार करती है। तदुपरान्त हमें स्वच्छ एवं शीतल जल से स्नान उस समय तक लेना चाहिये, जब तक कि त्वचा अच्छी तरह से साफ न हो जावे इसका समय १०-१५ मिनट से लेकर आधे घण्टे तक ऋतु एवं शरीर की सहन शक्ति के अनुसार हो सकता है। स्नान में जल सबसे प्रथम सिर पर डालना चाहिये। हमें चाहिये कि पेडू को ऊपर से नीचे और बायें से दायें और दायें से बायें एक हाथ से रगड़े और दूसरे हाथ से लोटे से जल पेडू पर डालते जावें। सीने को रगड़ना भी न भूलें। इससे सीना विस्तृत होता है और जमा हुआ कफ आसानी से निकल जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्नानोपरान्त हम शरीर के प्रत्येक अवयव को अच्छी तरह से किसी वस्त्र से पोंछ डालें ताकि सारा बदन शीघ्र ही सूख जावे क्योंकि शरीर के बिना सूखे ही वस्त्र पहनने से कभी-कभी दाद जैसे दुःखदायी रोग से पीड़ित होना पड़ता है।

इस प्रकार के घर्षण स्नान से त्वचा के छिद्र खुल जाते हैं, जिसके कारण शरीर का बहुत-सा विष पसीना द्वारा निकल जाता है और त्वचा स्वच्छ वायु को श्वांस द्वारा सेवन कर सकती है।

जिस प्रकार बर्तन मांजने के बाद उसे धोने की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार शरीर की त्वचा को रगड़ने के कारण निकले हुये विष को साफ करने के लिये जल स्नान की आवश्यकता है। फिर जल का कहना ही क्या, यह तो परम पिता परमात्मा ने प्राणी के लिये एक प्रकार का अमृत प्रदान किया है। जल पर तो एक प्रकार की चिकित्सा ही निर्भर है, जिसे हम जल चिकित्सा के नाम से पुकारते हैं। परन्तु हाँ जहाँ दो-चार दिन के लिये जल स्नान का प्रबन्ध न हो सके, वहाँ शरीर को हाथों द्वारा रगड़कर एक भीगे तौलिये से अवश्य पोंछ लेना चाहिये।

जो मनुष्य इस प्रकार का स्नान प्रति दिन लेते हैं, उन्हें चर्म रोग तो कभी हो ही नहीं सकते। मेरा अपना तो ऐसा विश्वास और दावा है कि उपयुक्त स्नान शरीर को चर्म रोगों से रोकने के लिये रामबाण है।

पेट और पेडू को रगड़ने के कारण, उनकी नसों को एक अच्छी कसरत मिल जाती है। बहुत समय का संचित हुआ विजातीय द्रव्य ढीला पड़ जाता है अतः गुदा मार्ग द्वारा निकलने में सुविधा हो जाती है। इस प्रकार से हम कोष्ठबद्धता अथवा कब्ज से जो कि प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार प्रायः समस्त रोगों की जड़ है, छुटकारा पा जाते हैं। इससे सिर की पीड़ा और आलस्य कोसों दूर भाग जाता है। शरीर में चैतन्यता आ जाती है और यह शीशे की भांति चमकने लगता है। मुख भी सतेज हो जाता है स्नानोपरान्त दिन भर चित्त प्रसन्न रहता है। नवीन शक्ति आयी हुई सी प्रतीत होती है, अतः कार्य क्षमता में वृद्धि हो जाती है।

वायु स्नान—

वैज्ञानिक आधार पर स्नान तीन तरह के होते हैं। जल, वायु और धूप। अमेरिकन डाक्टरों ने इन स्नानों को बहुत ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध किया है। वायु पर प्रत्येक प्राणी का जीवन निर्भर है। बिना पानी के मनुष्य कुछ दिनों तक जीवित रह सकता है। किन्तु बिना हवा के एक क्षण भी रहना कठिन है। डाक्टरों और वैद्यक का सिद्धान्त भी यही है कि अशुद्ध वायु ही अनेक रोगों का कारण है। प्राचीन समय में यह एक नियम था कि वायु की शुद्धि के लिये हर एक गृहस्थ अपना घर बनवाते समय एक-एक नीम का पेड़ जरूर लगाते थे। अब भी प्रायः ऐसा ही नियम कहीं-कहीं देखने में आता है।

"वायु स्नान, जल और धूप स्नान से भी अधिक लाभदायक है।" अनेक मनुष्यों ने इससे आरोग्य लाभ किया है। जिस व्यक्ति ने इसका अनुभव नहीं किया, वह इसके वास्तविक गुणों को नहीं जान सकता। शरीर भीतरी अवयवों को अत्यन्त शुद्ध वायु की आवश्यकता हमेशा रहती है। इसी तरह बाहरी शरीर के भी शुद्ध वायु के (ऑक्सीजन) की हमेशा आवश्यकता रहती है।

सबसे पहले शान्त और एकान्त स्थान ढूँढ़ना चाहिये, जहाँ शुद्ध वायु अधिकता से प्राप्त हो सके। यदि घर में ही शुद्ध वायु मिल सके तो घर ही में इस प्रयोग को कर लेना चाहिये। स्नान के समय स्थान एकान्त और निर्जन हो, तो अधिकांश वस्त्र उतार देना चाहिये। यदि सब वस्त्र न उतार सकें तो लंगोट आदि का उपयोग किया जा सकता है। वायु स्नान करते समय उष्ण और ठण्डी हवा का ख्याल रखें। जहाँ तक हो सके ठण्डी हवा का ही प्रयोग करें। पहिले व्यायाम कर लेना चाहिये, फिर पीछे वायु सेवन करना चाहिये। प्रातःकाल इस क्रिया को कर लेने से अद्‌भुत लाभ होता है। इससे शरीर में फुर्ती और चपलता बढ़ेगी।

गांव के बाहर अथवा मैदान की वायु अधिक शुद्ध और लाभदायक होती है। कसरत करने के बाद जब विषैला पसीना बाहर निकल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवे तब शुद्ध वायु ग्रहण करना चाहिये। इससे एक विशेष लाभ यह है कि सरदी और जुकाम का कभी भय नहीं रहता। यह स्नान शरीर की निर्बलता के लिये रामबाण है, वायु से शरीर की सम्पूर्ण नसें नवीन और उत्तेजित हो जाती हैं। प्रातःकाल अवश्य ही बाहर घूमने की आदत डालें।

मालिश-स्वास्थ्य संवर्धन की कला

बूढ़े और बीमारों की एक बड़ी कठिनाई यह होती है कि अंग-संचालन का श्रम वहन न कर सकने के कारण वे जकड़ और अकड़ जाते हैं। हर अवयव में निरन्तर परिपोषण के साथ-साथ विषाक्तता उत्पन्न होने की क्रिया चलती है। पोषण को शरीर रक्षा के निमित्त उपयोग करना आवश्यक है। उससे भी अधिक आवश्यक है कि विषाक्तता को कहीं रुकने और जमने न दिया जाये। इन दोनों ही क्रियाओं को समान महत्त्व देना पड़ता है।

पोषण के साधन जुटाने के लिये मनुष्य स्वयं भी प्रयत्न करता है और परिवार वाले तथा चिकित्सक भी ध्यान देते हैं। पर वे यह भूल जाते हैं कि मल निष्कासन का सरल और उपयुक्त तरीका क्या हो सकता है? एनिमा जैसा विरचन और भाप द्वारा पसीना निष्कासन इसके लिये उपयुक्त उपाय हो सकता है ? पर इस ओर ध्यान कम ही जाता है और उत्पन्न मलीनता को दबा देने के लिये 'एन्टीबायटिक्स' स्तर की औषधियों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार संग्रहीत मल अन्ततः किसी और रूप में फूट पड़ते हैं।

घर, वस्त्र, बिस्तर, शरीर आदि की स्वच्छता ही पर्याप्त नहीं, हमें शरीरगत भीतरी अवयवों में संचित विषाक्तता के निष्कासन के उपाय करने चाहिये। ऐसे उपायों में व्यायाम परिश्रम को ही प्रमुखता दी जाती है पर कठिनाई यह है कि बूढ़े, दुर्बल या अशक्त व्यक्ति वैसा कर सकने की स्थिति में नहीं होते। बुद्धिजीवी, व्यस्त व्यापारी सरकारी बड़े अफसर आदि से भी यह नहीं बन पड़ता कि वे बागवानी जैसे कोई उपयोगी शौक लगा लें और उस बहाने अपने घर-बंगले की परिधि में आवश्यक दौड़-धूप करते रहे। इसमें हेठी अनुभव करते हैं और अनख मानते हैं।

इस प्रकार की मनः स्थिति या परिस्थिति से ग्रसित लोगों के लिये सुलभ उपाय है मालिश। इसे काफी हद तक जहाँ तक हाथ पहुँच सके और क्षमता काम दे सके, वहाँ तक स्वयं करने का नियम बना लेना भी उत्तम है। न कुछ से कुछ अच्छा की नीति के अनुसार बिस्तर पर पड़े-पड़े अंग-संचालन अथवा मालिश कर लेना कुछ विशेष कठिन नहीं पड़ता। जिनके पास साधन हैं, जिन्हें सहयोग उपलब्ध हैं उनके लिये यह उपाय अपनाना भी सम्भव है कि दूसरों से अपने शरीर की मालिश करा लें।

मालिश में तेल अनिवार्य नहीं है, उसे तो इसलिये प्रयोग में लाना पड़ता है कि अधिक दबाब पड़ने पर चमड़ी में जलन न होने लगे या बाल न टूटने लगें। कपड़े चिकने अथवा बिस्तर मैला हो जाने के भय से कई लोग मालिश नहीं कराते। वे तेल लगाना आवश्यक मानते हैं क्योंकि अखाड़ों में पहलवानी करने वालों को अवसर जोर-जोर से तेल मालिश करते देखा जाता है। उस मालिश में माँस-पेशियों पर दबाब भी बहुत पड़ता है। इसलिये दुर्बल प्रकृति के व्यक्ति उस कल्पना के आधार पर न रगड़ाई के लिये तैयार होते हैं और न कपड़े मैले करने की रजामन्दी देते हैं।

दुर्बलों की मालिश का अपना अलग तरीका है जैसे छोटे बालकों की माँस-पेशियाँ हिलाने डुलाने के लिये माता मालिश करती है। वैसा ही हल्का तरीका वयोवृद्धों के निमित्त काम में लाया जा सकता है। कम तेल लगे तो वह रगड़ने पर चमड़ी में ही सूख जाता है अथवा मालिश के बाद साबुन से गरम पानी से स्नान किया जा सकता है ताकि चिकनाई का असर न रहे।

सूखी मालिश के लिये पिसा हुआ सीप स्टोन काम में लाया जा सकता है। इससे फिसलन बनी रहती है। अधिक दबाब वाली मालिश तो केवल पहलवानों या बड़े खेल खेलने वालों के लिये ही काम की हो सकती है। दुर्बल शरीर वालों के लिये इतना ही बहुत है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनके समस्त शरीर की मांस-पेशियों को झकझोरने से काम चलाया जाये।

साधारणतया हृदय की ओर हाथ ले जाने का प्रचलन है पर दायें-बाँये ऐंठने मरोड़ने स्तर की विधा अपनाई जाय तो कुछ हर्जा नहीं है। उद्देश्य माँस पेशियों की जड़ता दूर करके, उनमें हलचल उत्पन्न करना है ताकि उन क्षेत्रों में रक्त संचार की शिथिलता दूर हो सके।

त्वचा के नीचे के भाग में महत्त्वपूर्ण अवयव होते हैं। फेफड़े, गुर्दे, जिगरपेट, हृदय, मस्तिष्क आदि भीतरी भागों में होते हैं। मालिश इस क्रम से होनी चाहिये कि उसका प्रभाव मात्र त्वचा और माँसपेशियों तक सीमित न रहकर भीतर वाले अंगों में भी हलचल पैदा कर सकें और उनकी शिथिलता को सक्रियता में बदल सकें।

प्रातः नित्य कर्म के उपरान्त अथवा रात्रि को सोने से पूर्व मालिश का समय उत्तम है। रोयेंदार तौलिये को गरम पानी में भिगोकर, उससे भी मालिश की जा सकती है। अंगों का संचालन, व्यायाम, स्वयं न बन पड़े और हाथ सभी अंग अवयवों तक न पहुँच सकें तो दूसरों से मालिश कराना ही ठीक है। पीठ, नितम्ब, गरदन का पिछला भाग जैसे कुछ ही अवयव ऐसे हैं, जिन्हें निज के प्रयत्न से हिलाने-डुलाने या मालिश करने का जुगाड़ बहुत उल्टे, तिरछे होने पर भी किसी हद तक बैठ पाता है।

मालिश असमर्थों के लिये ही नहीं समर्थों और निरोगों के लिये भी बल वृद्धि की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। इतना आवश्यक है कि मालिश करने वाले को दाल पीसने या कुट्टी कूटने की तरह अनगढ़ रीति से नहीं करना चाहिये। वरन् धीरे-धीरे अवयवों को हिलाने, थरथराने कम्पन उत्पन्न करने के लिये ही करना चाहिये। कितने ही अभ्यस्त व्यक्ति इस कला में प्रवीण भी होते हैं। वे सिर दर्द को अपने कौशल से देखते-देखते बन्द कर देते हैं। पेट जकड़ गया हो तो उसे मुलायम कर देने में भी उन्हें प्रवीणता प्राप्त होती है।

विदेशों में इस विज्ञान का विधिवत विकास हुआ है और उसके प्रयोग से विभिन्न स्थिति के लोगों का लाभान्वित करने वाले कौशलों का विधिवत् अभ्यास कराया जाता है। ईसा से ५०० वर्ष पूर्व जन्मे हिप्पोक्रेटस ने इस कला का बहुत विकास किया था। वह अपने समय का माना हुआ चिकित्सक था।

कोलम्बिया के मारेक ने इस सन्दर्भ में बहुत खोजा और बहुत लिखा है। 'दि बुक ऑफ मसाज' में इस विषय पर बहुत प्रकाश डाला है और उन लोगों का विवरण लिखा है, जो इस आधार पर रोग मुक्त हुये तथा बलिष्ठ बने। स्वीडन में हेनसिक, जापान में शियात्सू विधि उस क्षेत्र में बहुत लोकप्रिय है। अमेरिका में 'मसाज ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट' में इस विषय पर विधिवत् शिक्षा दी जाती है और इसके सिद्धहस्त तैयार किये जाते हैं, जो बिना दवा दारू के सहारे ही मात्र मालिश के आधार पर रोगियों को निरोग तथा दुर्बलों को काम चलाऊ बना सके।

विदेशों में अब मालिश को एक सशक्त प्राकृतिक उपचार पद्धति के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा है, शरीर की मौलिक ऊर्जा संचरण प्रक्रिया को यथावत् बनाये रखने अथवा उसे पुनर्जीवन प्रदान करने के लिये एक्यूपंक्चर, जोन थेरपी, रिफ्लेक्सीलॉजी, पोलैरिटी थेरैपी जैसे कितने ही रूपों में मालिश का प्रचलन विभिन्न देशों में अपनी-अपनी तरह से प्रचलित है। 'शियात्सु' जापान की प्रख्यात मालिश चिकित्सा पद्धति है। इसके प्रचलन का श्रेय यहाँ के तोकुजीरो नामीकोशी नामक एक वैज्ञानिक को जाता है। शियात्सु का अर्थ होता है—अंगुलियों द्वारा मालिश करने की चिकित्सा प्रणाली। विभिन्न शारीरिक बीमारियों एवं कमजोरियों को दूर करने में वह प्रक्रिया बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

इसी प्रणाली के अन्तर्गत चीन तथा जापान में प्रचलित 'एक्यूपंक्चर' प्रणाली का समावेश किया गया है। उस पद्धति में शरीर के विभिन्न केन्द्रों को—विभिन्न भागों को प्रभावित करने वाला माना गया है। रुग्ण स्थानों में जीवनी शक्ति का अधिक नियोजन करने के लिये केन्द्रों में सुई को चुभोकर उत्तेजना उत्पन्न की जाती है। फलतः बीमारी से सम्बन्धित विजातीय पदार्थ हटकर कहीं से कहीं चला जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शियात्सु मालिश में भी उसी सिद्धान्त का समावेश किया जाता है। मालिश करते समय समस्त अंग अवयवों का व्यायाम होने तथा रक्त संचार को बल मिलने के सामान्य लाभ के अतिरिक्त उन केन्द्रों को विशेष रूप से थपथपाया-दबाया जाता है, जिसे कि नियन्त्रण केन्द्र माना जाता है। यद्यपि इन केन्द्रों की मान्यता सर्वमान्य नहीं है। कुछ वैज्ञानिक इसे हिप्टोनिज्म पद्धति का मनोविज्ञान मानते हैं। जो हो, लाभ तो उसके निश्चित रूप से देखे जाते हैं।

किस अवयव में किस मर्ज के लिये उसका नियन्त्रण कहाँ समझा जाय ? इसके लिये एक्यूपंक्चर चिकित्सा प्रणाली को विस्तारपूर्वक समझने की आवश्यकता है, पर मोटे रूप में जहाँ व्याधि हो उस स्थान की हल्की मालिश करने के अतिरिक्त निकटवर्ती जोड़ों को भी अँगूठे एवं अंगुलियों की हल्की थपकी देते हुये उत्तेजना देनी चाहिये, ताकि वहाँ की रुकावट के कारण कोई गड़बड़ी चल रही हो तो स्थानान्तरित हो जाये। उदाहरण के लिये—सिर दर्द दूर करने के लिये सर्वप्रथम कपाल को दबाया जाता है। तत्पश्चात् सिर के पीछे पहले दाँयी ओर फिर बाँयी ओर की नसों को धीरे-धीरे कई बार अँगूठे के सहारे दबाते हुये हँसली तक उस प्रक्रिया को दोहराया जाता है। इससे सिर का भारीपन तो दूर होता ही है साथ ही गर्दन की जकड़न दूर होती और मानसिक थकान उतरती है। शरीर में सक्रियता और फुर्ती आती है। पीठ, कन्धे एवं अन्यान्य अंगों जोड़ों के दर्द इस प्रक्रिया से सहज ही दूर किये जा सकते हैं। उच्च रक्तचाप को कम करने में भी इससे सहायता मिलती है। संक्षेप में शियात्सु मालिश पद्धति को अपनाने से गिरा हुआ शारीरिक स्वास्थ्य ठीक हो जाता है।

जापान की तरह अमेरिका में—"रिफ्लेक्सोलाजी' नामक मालिश उपचार पद्धति अधिक लोकप्रिय है। इस प्रणाली में प्रमुख रूप से पैर के तलबों पर हाथ की अंगुलियों एवं अँगूठे से हलका-सा दबाव डाला जाता है। कई बार इसके अतिरिक्त सिर पर, हाथों पर अथवा आवश्यकतानुसार शरीर के अन्य भागों में दबाव डाला या मालिश की जाती है। फिजिकल डिसार्डर से लेकर माइग्रेन, सिरदर्द, मोटापा, जिगर की बीमारी आदि को इस विधि से दूर किया जा सकता है।

प्रख्यात चिकित्सा शास्त्री डा. वर्गसन के अनुसार शारीरिक एनाटामी में रक्त नलिकाओं एवं तन्त्रिका-तन्तुओं के अतिरिक्त एनर्जी चैनल्स भी हैं, जिनमें लाइफ फोर्स—प्राण ऊर्जा का आवागमन होता रहता है। इसके प्रवाह में विघ्न उपस्थित होने पर स्वास्थ्य सन्तुलन गड़बड़ाने लगता है। मालिश द्वारा पड़ने वाले दबाव से यह बाधा दूर हो जाती है और प्राण प्रवाह अपने मार्ग में निर्बाध रूप में फिर से बहने लगता है। इसी तरह का एक और प्रतिपादन वरिष्ठ चिकित्सक डा. रैन्डोल्फ स्टोन ने अपनी पुस्तक "वाइटिलिटी बेलेन्स एण्ड पोलैरिटी थेरेपी" में तथा डा० एस० डी० चेस्ने ने 'जोन थेरेपी इज साइन्टीफिक" में किया है।

मालिश कराते समय रोगी को यह भाव मन में लाना चाहिये कि मालिश से पीड़ित अंग में जीवनी शक्ति बढ़ रही है और वह रोग मुक्त होता चला जा रहा है। इस संकल्प से मालिश चिकित्सा को और भी अधिक बल ही मिलता है और उसके परिणाम भी जल्दी मिलते हैं।

मालिश—एक सशक्त उपचार पद्धति

स्वास्थ्य-निर्माण में मालिश एक अत्यन्त उपयोगी व्यायाम है। इससे स्वस्थ जीवन जीने के लिये ऐसी ही मदद मिलती है जैसी आहार, विश्राम, उपवास व टहलने आदि से मिलती है। आयुर्वेद में कहा गया है—

वातव्याधि हरति कुरुते सर्व गात्रेषु पुष्टि।
दृष्टि मन्दामीप वितानुतेवैवतेयोयां च।।
निद्रां सौख्यं जनपति जरां हंति शक्ति विधतै
धत्तेकान्ति कनक सदृशीं नित्यमभ्यंग योगात्।

अर्थात्—"नियमित रूप से तेलमालिश करने से बात रोग दूर होता है। अंग पुष्ट होते हैं, दृष्टि तेज होती है, निद्रा और सुख—उत्पन्न होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, वृद्धावस्था दूर होती है, शरीर में शक्ति उत्पन्न होती है और शरीर का वर्ण सोने के समान हो जाता है।"

मालिश का प्रमुख कार्य है रक्त संचार में तेजी लाना। शरीर में रुधिर संचार का कार्य हृदय में सम्पन्न होता है। स्वच्छ खून धमनियों द्वारा सारे शरीर में दौड़ता है और अशुद्ध-रक्त-वाहिनी शिराओं द्वारा अस्वच्छ रुधिर हृदय में एकत्रित होता है। यहाँ उसकी सफाई होती है। खून जब पर्याप्त मात्रा में हृदय में नहीं पहुँचता तब तक सफाई की प्रक्रिया तेज नहीं होती। अशुद्ध रक्त सारे शरीर में फैला रहता है। शिरायें शिथिल बनी रहती हैं किन्तु मालिश से इन शिराओं में गर्मी उत्पन्न होती है और तेजी से रक्त संचार होने लगता है। हृदय गति भी उसी अनुपात से बढ़ जाती है और सारे शरीर में स्वच्छ रुधिर प्रवाहित होने लगता है।

जिन स्थानों में रक्त जमा हुआ होता है या हल्की गुत्थियाँ पड़ जाती हैं, उसे पिघलाकर पतला बनाने का काम मालिश से आसानी से पूरा हो जाता है। इससे रक्त वाहिनी नाड़ियों को विवश होकर कार्य में तेजी से जुट जाना पड़ता है। रक्त पतला हो जाने से फेफड़े भी असानी से दूषित रक्त-विकार दूर कर देते हैं। यह गन्दगी मल-मूत्र और पसीने द्वारा स्वतः बाहर निकल जाती है। साथ ही शरीर का हल्का व्यायाम हो जाने से हल्कापन चैतन्यता एवं स्फूर्ति बढ़ जाती है। इससे फेफड़े, जिगर, तिल्ली छोटी व बड़ी आँतें, गले की ग्रन्थियाँ, रीढ़ के चक्रों की बीमारी खराबी व कमजोरी दूर हो जाती है।

शारीरिक अंगों में क्रियाशीलता पाचनशक्ति, रस निःसरण, पचे हुये रस का शरीर में शोषण तथा सफाई के कार्यों में तेजी लाने का सर्वोत्तम उपाय मालिश है। धमनी और शिराओं की आकुञ्चन क्रिया में तेजी आने से रक्त चाप बढ़ जाता है। इससे रक्त के श्वेत जीवाणु सशक्त होते हैं, जो किसी भी रोग के कीटाणुओं का मुकाबला करने में सफल होते हैं। रोग-निरोधक शक्ति बढ़ती है और सम्पूर्ण रुधिर विकार दूर हो जाते हैं।

मनुष्य के सारे शरीर में लगभग ३४७ पेशियाँ होती हैं। इनमें से ऊपरी सतह वाली लगभग ४४ पेशियाँ होती हैं। दूसरे व्यायामों से ऊपरी सतह की माँस पेशियों में तो हलचल हो जाती है किन्तु आन्तरिक माँस पेशियों को लाभ और स्नेह सिंचन पहुँचाने के लिये गहरी मालिश की आवश्यकता होती है। इनसे निष्क्रिय पड़े अंगों में क्रियाशीलता उत्पन्न होती है और ये माँस पेशियाँ बढ़ने लगती हैं, जिनमें अधिक मोटापा या भद्दापन आ जाता है वे सुडौल बनने लगती हैं।

माँसपेशियों की मालिश से उनमें शक्ति आती है, थकान दूर होती है। मानसिक या शारीरिक श्रम से उत्पन्न थकावट पैदा करने वाला दूषित तत्व जो इनमें जमा हो जाता है, वह दूर हो जाता है और स्फूर्ति बढ़ जाती है। इनमें वृद्धि व विकास के साथ-साथ ही बोझा उठाने व कार्य करने की शक्ति जागृत होती है।

शरीर की स्नायु प्रणाली पर मालिश का बड़ा महत्वपूर्ण असर पड़ता है। इनमें मालिश से उत्तेजना पैदा होती है, जिससे थकावट दूर होकर आराम की स्थिति आती है। जिन स्नायुओं में किसी प्रकार का दर्द होता हो, उनकी मालिश करने से दर्द कम हो जाता है।

सरसों का तेल इस क्रिया के लिये अधिक उपयुक्त होता है। रोगनाशक शक्ति होने के साथ ही इससे शरीर की शीतलता व चिकनाई मिलती है। गाँठें परिपुष्ट होती हैं और चर्म विकार दूर होते हैं। शुद्ध घनी का तेल मिल के तेल की अपेक्षा अधिक लाभदायक होता है। जिन्हें मँहगा न पड़े, उन्हें नारियल का तेल इस्तेमाल करना चाहिये। नारियल का वृक्ष प्रायः सभी पेड़ों से अधिक ऊँचा होता है अतः वह सूर्य किरणों से व्यापक शक्ति खींच लेता है। इसमें एक रेडियम नामक विशेष प्रकार का तत्व होता है, जो शारीरिक धातु को पुष्ट करने में लवण का कार्य करता है। स्नायु मण्डल रक्त-वाहिनी नाड़ियों, अन्तड़ियों तथा दूसरे शारीरिक अवयवों की उष्णता को हटाकर शीतलता पैदा करता है। नैसर्गिक विटामिन प्राप्त होता है। कुछ बीमारियों में जैसे लकवा वात आदि में राई या तिल का तेल भी इस्तेमाल करते हैं। रंगीन काँच की बोतलों में नारियल का तेल भरकर कुछ दिन धूप में रखने से वह भी इन रोगों में इस्तोल करने योग्य हो जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मालिश के प्रमुख तरीके ये हैं—(१) घर्षण (२) दण्डन (३) थपकी (४) कम्पन और (५) सन्धि प्रसारण। इनका प्रयोग अवस्था स्थिति और आवश्यकता के मुताबिक किया जाता है। शरीर के ऊपरी सतह पर समान दबाव से गदेलियों की सहायता से रगड़ने या मालिश करने को घर्षण कहते हैं। इससे रक्त में गर्मी पैदा करने के लिये तेजी से हाथ चलाना पड़ता है। यह गति प्रति मिनट ३० से लेकर १८० तक होनी चाहिये और तब तक किया जाना चाहिये, जब तक रोम-कूपों से सारे तेल का शोषण नहीं हो जाता। केवल तेल चुपड़ लेना या उसे ऊपर-ऊपर ही रगड़ते रहना लाभदायक नहीं होता। इस क्रिया में यह ध्यान रखना चाहिये कि हाथों की गति हर बार हृदय की ओर हो जैसे यदि पाँव का घर्षण कर रहे हैं तो पिण्डुली से मोटी जंघाओं की ओर हाथ ले जाना चाहिये। इसी प्रकार बारी-बारी से हर अंग की मालिश करने से चर्म-विकार दूर होते हैं, त्वचा स्वच्छ कोमल व स्निग्ध हो जाती है, दूसरे अवयवों के भी दूषित पदार्थ बाहर निकल जाते हैं।

शरीर के विभिन्न स्थानों की मालिश करने से कई प्रकार के लाभ होते हैं। पेडू की मालिश करने से कब्ज की शिकायत दूर होती है। सन्धि बात में जोड़ों की मालिश करते हैं। चर्बी इकट्ठा हुये स्थानों की मालिश करने से मोटापा दूर होता है और शरीर सुडौल बनता है। सिर की मालिश अनिद्रा को भगाती है। मसूड़ों की घर्षण क्रिया भी एक प्रकार की मालिश ही है, इससे दाँत मजबूत होते हैं। मधुमेह के रोगियों को मालिश कराने से रक्त के अन्दर बेकार शर्करा जल जाती है और उसका पेशाब से निकलना कम हो जाता है। पक्षाघात, अपच, सायटिका, पथरी, लीवर की दुर्बलता, डिम्बाशय, प्लूरिसी तथा हृदय की दुर्बलता के लिये शरीर की नियमित मालिश करनी चाहिये, इससे तात्कालिक लाभ मिलता है।

मालिश करने के लिये जिन्हें साधन व समय न मिले उन्हें स्नान करते समय शरीर के सभी अंगों को खूब मलकर धोना चाहिये। रगड़ने की क्रिया मालिश जैसी ही—छोरों से हृदय की ओर को हो तो स्नान से भी वही लाभ मिलता है, जो किसी तेल या उबटन से प्राप्त होता है। स्नान करने के उपरान्त किसी मोटे तौलिये से सारे शरीर को रगड़कर पोंछ डालना चाहिये, इससे रक्त के संचार में तेजी तथा सजीवता उत्पन्न होती है।

मालिश करने के बाद थोड़ी देर तक हलकी धूप में बैठना स्वास्थ्य के लिये लाभदायक होता है। दर्द या चोट की मालिश में तो सेंकने की क्रिया भी साथ-साथ चलाते हैं, इससे खून में गर्मी पैदा होती है और दूषित पदार्थ निकल जाते हैं। मालिश से उत्पन्न पसीना व तेल आदि के समिश्रण से उत्पन्न गन्दगी तथा रोमकूपों की सफाई के लिये साबुन या मुल्तानी मिट्टी से स्नान कर लेना बड़ा लाभदायक होता है। इससे शरीर को शीतलता प्राप्त होती है।

धनी-निर्धन, रोगी या स्वस्थ, बालक, वृद्ध या नवयुवक सभी मालिश से अपना स्वास्थ्य सुधार सकते या स्थिर बनाये रख सकते हैं। इसमें किसी प्रकार हानि की आशंका नहीं है। नियमित रूप से प्रतिदिन तेल मालिश करना स्वास्थ्य के लिये अतीव हितकारी होता है।

आयुर्वेद में मालिश की बहुत प्रशंसा है। यथा—

उद्वर्त्तनं वातहरं कफमेदोविलोपनम्।
स्थिरीकरणमङ्गानां त्वक्प्रसादकरं परम्।।
शिरासुखविवित्तत्वं त्वक्स्थस्याग्रेश्च तेजनम्।

—सुश्रुत

मालिश से बात रोग दूर होते हैं। कफ और मेद का शमन होता है, अंग सदृढ़ होते हैं। त्वचा कोमल बनती है और नाड़ियाँ बलवान होती हैं।

कफ वायु मेदो वात रोग नाशित्वम्।
अंगस्थैर्य्यं चर्म्मनिर्मल कारित्वञ्च।।

—राजवल्लभ

मालिश से कफ, वात घटते हैं। मोटापा दूर होता है। अंगों में दृढ़ता आती है और त्वचा की कान्ति निखरती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़ों के पैर दबाने के रूप में मालिश का भारतीय शिष्टाचार में भी समावेश है। पैर धोना सम्मानस्पद अतिथियों के सत्कार का एक प्रचलन है। चरणस्पर्श के साथ-साथ घुटने तक पैरों को कई बार दोष देने की परम्परा निभाई जाती है। पत्नियाँ पतियों के और वधुएँ सास के पैर इसी प्रकार दाबते हैं। सन्त महात्माओं के निमित्त भी शिष्यगण इस शिष्टाचार का निर्वाह करते हैं। इस प्रचलन के पीछे यह रहस्य भी सन्निहित है कि मालिश स्वास्थ्य के लिये उपयोगी है। पैर हाथ दाबना भी मालिश का ही एक विशेष प्रकार है।

बड़े आदमियों को सोने से पहले हाथ-पैर दबाने के लिये सेवक नियुक्त रहते हैं। थकान उतारने के लिये शिर की मालिस करने वाले कुछ समय पहले तक इसे एक व्यवसाय के रूप में अपनाते थे और हस्त-कौशल का चमत्कार दिखाकर अच्छी आजीविका भी उपार्जित करते थे। पहलवानों को कसरत की तरह ही तेल मालिश को भी अपनाना पड़ता है। कमर में पीठ में दर्द होने पर मालिश ही सर्व विदित उपचार है। बुखार की तेजी में जब सिर दर्द होने लगता है तो उन्हें सांत्वना एवं राहत देने के लिये परिवार के लोग सिर दबाने लगते हैं। छोटे बच्चों के शरीर पर मातायें आमतौर से तेल मालिश करती हैं, उससे उनके शरीर का विकास होने की मान्यता है। प्रसव के उपरान्त जच्चाओं को भी बहुत दिन तक तेल मालिश कराने का नियमित प्रबन्ध किया जाता है। इन प्रचलनों से प्रकट है कि मालिश की उपयोगिता के सम्बन्ध में लोक मान्यता में एक सुनिश्चित स्थान रहा है।

जर्मनी तथा स्कैडिनोविया के चिकित्सक प्राचीनकाल में मालिश की कला एवं प्रक्रिया से भली भाँति अवगत थे, उन्होंने इसे चिकित्सा उपचार में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया था। रोगियों के औषधि सेवन कराने के अतिरिक्त अंग विशेष की निर्धारित समय तक मालिश करने का निर्देश भी वे करते थे। इस कला में कईयों को प्रवीणता भी प्राप्त रहती थी।

सन् १८६० के लगभग एमस्टरडम के डाक्टर के मेनेजर मालिश की सुनियोजित रीति का चिकित्सा पद्धति में समावेश किया। वे उसे मेनिपुलेशन कहते थे। इस आधार पर शिथिल अवयवों को उत्तेजना प्रदान करने और उनकी गतिविधियों में तीव्रता लाने में वे इस आधार पर बहुत सफल रहे।

मानसिक रोगी की उपचार में ब्रिटेन के मनोविज्ञानी डॉ० बीयर मिचेल ने आश्चर्यजनक चमत्कार प्रस्तुत किया। उनके अस्पताल में जितने मनोरोगी आते उनमें से प्रायः प्रत्येक को ही वे किसी न किसी प्रकार की मालिस बताते हैं। स्नायु संस्थान के साथ मनः तन्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध बताते हुये उनने यह सिद्धान्त बनाया था कि शरीर में संव्याप्त तन्त्रिकाओं में विभिन्न प्रकार के उत्तेजना देकर मस्तिष्कीय अव्यवस्थाओं को सुधारा जा सकता है।

अन्य डाक्टरों में मांस पेशियों, धमनियों को सुव्यवस्थित बनाने में मालिश के सहारे बहुत सफलता पाई और उसे चिकित्सा का आवश्यक प्रयोग बताया जोड़ों की जकड़न दूर करने में भी इसके सफल प्रयोग होते रहे हैं।

जकड़न को शिथिल करने में मालिश का प्रतिफल हाथों हाथ देखा जा सकता है। गरदन पीठ आदि अकड़ जाने हाथ-पैर में मोच आने की दशा में प्राचीन काल की तरह अभी भी मालिश का उपयोग किया जाता है। घुटने मोड़ने में जिन्हें कठिनाई होती है, उन्हें भी मालिश के द्वारा लाभ मिलता है। अकड़न मुलायमी में बदल जाती है।

मालिश की प्राकृतिक चिकित्सा में बहुत महत्त्व दिया गया है। पानी, मिट्टी, भाप, सूर्य स्नान आदि की तरह ही उसे भी पीड़ित अंगों को राहत देने तथा समग्र उत्तेजना प्रदान करने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। उसके कई प्रकार भी हैं और उतार-चढ़ाव भी। इस पद्धति का नाम 'मेनिपुलेशन' है। उसके भेद-उपभेदों में स्टोकिंग, प्रेशर, परकशन, फ्रिक्शन, वाइब्रेशन, आदि विधियों का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जाता है।

जिन्हें जिस मालिश से अनुकूलता पड़ती हो, वे उसे अपना सकते हैं। किसी जानकार से सीख सकते हैं, उसे दूसरों की सहायता के बिना निजी प्रयत्नों से भी किया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पेट की मालिश करते समय यह ध्यान रहे कि भोजन को किये हुये कम से कम तीन घण्टे हो गये हों तथा पेशाब कर चुका हो। हाथ घुमा-घुमाकर पेट मालिश करना चाहिये। शरीर के विभिन्न स्थानों की मालिश विभिन्न ढंगों से होती है।

पेट की मालिश कुछ दशाओं में वर्जित है। स्त्रियों के गर्भ हाने पर, मासिकधर्म की दशा में, पेट में गांठ या ट्यूमर होने पर, हार्निया रोग में, एपेंजीसाउटिस दस्त आने पर, आँख आने पर, पेट में किसी प्रकार का घाव होने पर आदि दशाओं में पेट की मालिश वर्जित है। यकृत की मालिश भी पेट की मालिश से ही हो जाती है। साधारणतया सारे शरीर की मालिश करना चाहिये। हाँ यदि अंग विशेष में कष्ट हो तो केवल उसी भाग पर ध्यान केन्द्रित रखना चाहिये।

मालिश करने वाला यदि स्वयं रोगी होगा तो मालिश कराने वाले को उसका रोग आ सकता है। अतः मालिश स्वस्थ मनुष्य से कराये। जिसके हाथ में पसीना बहुत आता हो, उससे भी मालिश न करावें। मालिश उसी से करावे जिसका हाथ कोमल तथा सूखा हो। मालिश करते समय अत्यधिक जोर नहीं लगाना चाहिये। फिर इतनी देर मालिश न की जाय कि शरीर का चमड़ा कुपित हो जाये। बच्चों तथा बूढ़ों का चमड़ा तो शीघ्र ही गरम हो जाता है अतः उन्हें तो थोड़ी देर तक की मालिश करना चाहिये। पेट की मालिश के लिये १०-१५ मिनट तथा सारे शरीर की मालिश के लिये आध-घण्टे से एक घण्टा तक पर्याप्त है। मालिश कराने वाले को अपने शरीर को मालिश कराते समय बिल्कुल ढीला छोड़ देना चाहिये। यों तो मालिश से सभी को लाभ हैं, पर बच्चों तथा दुबले पतले व्यक्तियों को इससे अत्यन्त तथा अतिशीघ्र लाभ होता है।

मालिश प्रायः कडुवे तेल से की जाती है। सरसों, तिल तथा जैतून के तेल के अतिरिक्त घी से भी मालिश कुछ रोगों में की जाती है। जैतून का तेल सर्वोत्तम है।

गांधीजी प्रतिदिन प्रायः एक घंटा मालिश कराते थे। यह मालिश बिल्कुल वैज्ञानिक ढंग की होती और मालिश कराते-कराते गांधीजी खर्राटे भरने लगते थे। जब गांधीजी उपवास करते थे तब भी उनकी मालिश का व्यायाम बन्द नहीं होता था।

अतिशय गरम या शीतल कमरे में मालिश न करनी चाहिये। अति गरम कमरे में मालिश करने से पसीना आता है। पसीने का पानी मालिश के आनन्द को मार देता है। शीतल या जहाँ हवा के झोंकें आते हों, ऐसा कमरा शरीर को बार-बार शीतल कर रक्त संचालन क्रिया में बाधा डालता रहता है। स्वच्छ कमरे में चटाई पर बैठकर मालिश करना चाहिये। सूर्य की कोमल किरणों में मालिश करने अथवा मालिश के बाद, सूर्य की कोमल किरणों में बैठने से स्वास्थ्य सुधरता है। मालिश का अच्छा समय सुबह या शाम का है। भोजन के बाद तुरन्त मालिश करनी न चाहिये। मालिश और भोजन के बीच कम से कम दो घण्टे का अन्तर रखना आवश्यक है। मालिश की पद्धति का ज्ञान होना जरूरी है। अधिकांश लोग बलपूर्वक तेल घिसने की क्रिया मालिश समझते हैं। बाजारू लोगों से मालिश कराना सचमुच हानिप्रद है। मालिश एक व्यवस्थित विज्ञान है, विकसित चिकित्सा पद्धति है और आरोग्य प्राप्त की सुन्दर कला है। शरीर विज्ञान की अज्ञानता, स्वास्थ्य-नियमों की अनभिज्ञता और मालिश पद्धति की अनुभवहीनता मालिश के लिये सर्वथा अनुपयोगी है। जिस मनुष्य की मालिश करनी हो, उसे स्वच्छ चद्दर पर लिटा देना चाहिये। दायें या बायें पैर की ऊँगलियों से मालिश शुरू कर पैर के पंजे, पिंडली, घुटने और जंघा की ओर मालिश करते हुये क्रमशः आगे बढ़ना चाहिये। संक्षेप में बाल की विरुद्ध दिशा में हृदय की ओर मालिश के हाथ घुमाना उचित है। भूल से रक्त भ्रमण की दिशा में मालिश की न जाये। दोनों पैरों की मालिश हो जाने पर कमर की मालिश की जाये और हाथ की मालिश करनी चाहिये। हाथ की मालिश भी उंगलियों से शुरू कर कन्धे की ओर की जाये। तत्पश्चात् पीठ, क्रोड़ रज्जु, गर्दन, मुख के स्नायु और छाती की मालिश करनी चाहिये। सबसे अन्त में अधिक सावधानी और ध्यानपूर्वक पेट की मालिश करनी चाहिये। नाभि की दाहिनी ओर ४-६ अंगुल दूर छोटी और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़ी आंत का सन्धिस्थान है। इस स्थान से ऊपर जाने वाली आंत से मालिश शुरू कर बाईं तरफ हाथ लाकर नीचे लाया जाये अर्थात् नाभि के आसपास गोलाकार दाहिनी ओर से शुरू कर पेट की मालिश करनी चाहिये। मालिश के समय पैर के तलुवों और सिर में अच्छी तरह तेल पचाया जाये।

१—मालिश कैसे तेल से की जाये ? सामान्य नियम यह है कि शीतलकाल में सरसों, ग्रीष्म-ऋतु में नारियल और वर्षा ऋतु में तिल के तेल का उपयोग किया जाये। तिल के तेल की मालिश बारहों मास की जा सकती है।

२—मालिश के पश्चात् स्नान कब करना चाहिये ? मालिश के एक-दो घण्टे बाद काली मिट्टी या बेसन से शरीर का उबटन कर स्नान करना चाहिये।

३—मालिश किसे न करनी चाहिये ? चर्म-रोग जैसे खाज, खुजली, सूजन आदि, हो जाने पर लम्बी बीमारी के बाद और उग्र रोगों में मालिश न करनी चाहिये। जिन रोगों में आराम की जरूरत है, उनमें मालिश करना उचित नहीं, क्योंकि यह एक प्रकार व्यायाम है।

४—मालिश स्वयं करनी चाहिये या किसी अन्य से करानी चाहिये ? स्वयं मालिश करने से स्वेच्छानुसार और उत्तम ढंग से मालिश होने के अतिरिक्त परमोत्तम व्यायाम हाथों, कन्धों, छाती आदि अंगों को उपलब्ध होता है। निर्बल और विशेष प्रकार के रोगी को अच्छे मालिश कर्त्ता से मालिश करानी चाहिये। मालिशकर्त्ता स्वस्थ, स्वच्छ और सुदृढ़ शरीर का होना चाहिये। चर्म या अन्य किसी रोग से पीड़ित मानव से मालिश न करानी चाहिये और सावधानी रखनी चाहिये कि मालिश करते समय मालिशकर्ता का पसीना रोगी के शरीर पर न गिरे।

५—मालिश कसरत से पहले या पश्चात् ? मालिश करने के बाद कसरत या अन्य शारीरिक श्रम करने से तेल और पसीना मिलकर चर्म रोग-खुजली, दाद आदि उत्पन्न कर देते हैं। शरीर में तेल का समुचित शोषण नहीं हो पाता। व्यायाम या शारीरिक श्रम से शरीर में विशेष परिमाण में तोड़-फोड़ होती है। विजातीय पदार्थों जैसे कि लोकाटिक एसिड, यूरिया और अग्निवायु का परिमाण बढ़ जाता है। थकावट भी बढ़ जाती है और कार्यक्षमता कम हो जाती है। अंग-प्रत्यक्ष जड़, शुष्क और चेतनाशून्य हो जाते हैं। अतः कसरत करने के पश्चात् शरीर शीतल और पसीना बन्द हो जाने के बाद शरीर को अच्छी तरह पोंछकर मालिश करना लाभदायक होगा। मालिश से स्नायु-जाल उत्तम सुसंगठित बन जाता है। व्यायाम से कभी-कभी स्नायु पर जब अघटित दबाव पड़ता है, तब वे टूट जाते हैं अथवा खिंच जाते हैं। मालिश इन स्नायुओं को सुयोजित कर चमकदार बना देती है।

६—पाउडर या बिजली के यन्त्र से मालिश करना उचित है ? मालिश आज कल वैभव की वस्तु बन बैठी है। विद्युत यन्त्र से की जाने वाली मालिश अप्राकृतिक है और उससे कोई लाभ नहीं। बिद्युत से एक ही प्रकार की मालिश—कम्पन मालिश सम्भव बनती है। रक्त-संचालन क्रिया को सतेज बनाने के अतिरिक्त इसका अन्य कोई लाभ न होने से यह सर्वथा त्याज्य है। मालिश का मूल उद्देश्य शरीर में तेल को पचाने का है। कथित सुधरे हुये लोग तेल को पसन्द न कर सुगन्धित पाउडर पसन्द करते हैं पाउडर हस्त-संचालन की क्रिया को सरल और व्यवस्थित होने नहीं देता। अतः पाउडर या विद्युत् यन्त्र से मालिश करने की अपेक्षा न करना ही अच्छा है।

चिकित्सा-क्षेत्र में मालिश का महत्त्व समस्त जगत में बढ़ता जा रहा है। प्राकृतिक चिकित्सा में मालिश पद्धति का बहुत उपयोग किया जाता है और इसके द्वारा अनेक रोगों में जिस रोगी की जीवनी शक्ति अल्प होती है, ऐसी घटनाओं में, जीर्ण, अशक्त और शारीरिक रूप से क्षीण रोगियों के रोगों की अचूक चिकित्सा विज्ञान सिद्ध मालिश ही है।

मानव का शारीरिक, मानसिक या आध्यात्मिक विकास का केन्द्र—बिन्दु पेट है। मानव ने आहार-विषयक भूलों से पेट को कब्रिस्तान बना दिया है। कब्जियत मन्दाग्नि, अपच आदि आदि रोग आजकल सर्व व्यापक हैं। मालिश आँतों की आकुंचन-क्रिया को बढ़ाती है। शिथिल और रोगग्रस्त पाचन-क्रिया को तेजवान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाकर उदर-रोगों को दूर करती है। यकृत आमाशय और प्लीहा की पीड़ा और रोग में मालिश उपयोगी है।

दिन-प्रतिदिन जीवन-संघर्ष विकट बनता जा रहा है। चिन्ता, व्यग्रता, जातीय उत्तेजना, भ्रष्ट अम्ल प्रधान आहार से ज्ञानतन्तु रोगी होते जा रहे हैं। अनिद्रा शिर दर्द, थकावट, मानसिक शिथिलता में वृद्धि हो रही है। ज्ञान-तन्तु के रोगी को पैर के तलुओं, मस्तक तथा क्रोड-रज्जु की मालिश करानी चाहिये। यह मालिश बादाम के तेल की होना चाहिये।

इस प्रक्रिया के अन्तर्गत हृदय की निर्बलता, धड़कन और अन्य रोगों में मालिश एक अच्छे सेवक का काम करती है। मालिश से हृदय को पूर्ण विश्राम मिलता है। रक्ताभिसरण की अव्यवस्था के कारण उत्पन्न रोग दूर होते हैं। रक्त का संचालन उचित रूप में होते रहने से अपोषण से पीड़ित रोगी के लिये मालिश आशीर्वाद के समान है। मांसपेशियों को खुराक मिलती है। वजन बढ़ता है। शरीर की अनावश्यक चरबी का प्रशमन होता है।

शरीर अम्लता बढ़ जाने से अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। लकवा इत्यादि को आयुर्वेद में बात व्याधियों के अन्तर्गत माना गया है। इस प्रकार के रोगों में आयुर्वेद-प्रणीत विषगर्भ तेल या नारायण तेल से मालिश करनी चाहिये। बाल लकवे की घटनायें बढ़ती जा रही हैं। बालक को आरम्भ से उचित रूप से मालिश की जाये, तो लकवा-रोग नहीं होता और यदि हो भी जाये तो लाभ होता है।

मुख की त्वचा निस्तेज, फटी हुई या दागवाली हो, तो चाहे जैसा सुव्यवस्थित रूपवाला मुख भी आकर्षक प्रतीत नहीं होता। हमारी गृह-देवियों विशेषतया नागरिक जीवन में निष्क्रिय बनती जा रही हैं, अतः शरीर में चरबी बढ़ती जाती है। गले और हड़पची का निम्न-भाग लटक पड़ता है। मालिश मुख की चरबी को गलाकर मुख को नवीन आकर्षण चमक और ताजगी प्रदान करती है। मुख पर मुहाँसे दाग हों तो दूध की मलाई घी में हाथ से मुख पर मलने से जादू का असर होता है। मुख सौन्दर्य के लिये मलाई की मालिश आज से ही शुरू कर दें। इसके अतिरिक्त अस्थिभङ्ग शारीरिक विकृति आदि में मालिश की परमोपयोगिता अनुभव सिद्ध है।

संक्षेप में शारीरिक अवयवों की कार्य शक्ति के अभाव या स्वयं अवयवगत व्याधि में मालिश अति लाभदायक है। मालिश शरीर में चार प्रकार का काम करती है—(१) निर्माण, (२) विनाश (३) उत्तेजना और (४) आराम का काम करती है। नये तन्तु उत्पन्न कर शरीर को पोषण प्रदान करती तथा चयापचय की क्रिया को बल देती है। शरीर की अतिरिक्त चरबी विजातीय पदार्थ, टूटे हुये और निरर्थक तन्तुओं को दूर कर शरीर के, सांघातिक तत्वों को नष्ट करती है। मालिश ज्ञान-तन्तुओं की उत्तेजनाजन्य शिथिलता अनिद्रा और शारीरिक निर्बलता दूर कर स्फूर्ति और चेतना प्रदान करती है। मानसिक थकावट मिटाकर शरीर की पीड़ा कम कर शरीर के किसी विशेष अवयव में एकत्र रक्त को वितरित कर मालिश शान्ति और विश्राम देती है। मालिश करते-करते कभी-कभी नींद छा जाती है।

(१) सामान्य और स्थानीय इस प्रकार मालिश के दो भाग हैं। किसी विशेष अंग की मालिश को स्थानीय—स्थल, विशेष की—मालिश कहा जाता है। समस्त शरीर की मालिश सामान्य कहलाती है। रोगग्रस्त अंग पर २० से ३० समग्र शरीर पर ४० से ५० मिनट तक मालिश करनी चाहिये। बहुत अधिक समय तक मालिश करना हानिकारक है।

(२) मालिश बहुत जल्दी-जल्दी करने की आदत अच्छी नहीं। मालिश करते समय शरीर के सभी अंग ढीले और आराम की स्थिति में होने चाहिये। मन को भी स्वस्थ रखना चाहिये। मालिश के समय मन को सभी ओर से हटाकर उन अंगों पर केन्द्रित कर आरोग्य का विचार करना चाहिये, जिनकी मालिश की जा रही हो। तेल को शरीर में रगड़ने की अपेक्षा थोड़ा-थोड़ा तेल शरीर में पचाने की आवश्यकता है।

(३) सभी अंगों की समुचित और समान मालिश करनी चाहिये। एक अंग पर विशेष ध्यान देकर दूसरे की अपेक्षा करनी न चाहिये। नियम समग्र शरीर की मालिश के लिये हैं। आरोग्यकांक्षियों को चाहिये कि वे ८-१० दिन में मालिश किया करें। रोगोपचार के लिये नित्य और आवश्यक होने पर दिन में दो बार भी मालिश करनी चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने देश में माता बालकों की पत्नियाँ पतियों की, नाइनें जच्चाओं की मालिश किया करती थीं। बड़ों के पैर दबाना एक शिष्टाचार भी है। नव वधुर्ये जब ससुराल जाती हैं तो सास के पाँव में हाथ लगाते समय पिण्डलियों को दबाने की चिन्ह पूजा भी करती हैं। आवश्यकता इस बात की है कि लोग मालिश का महत्त्व समझें और विभिन्न प्रयोजनों के लिये उनके पृथक्-पृथक् प्रयोगों का अनुभव प्राप्त करें।

सूखी मालिश स्वास्थ्य वृद्धि का सुलभ साधन

स्वास्थ्य-वृद्धि का एक सस्ता सुलभ साधन है—सूखी मालिश। वस्तुतः तेल—मालिश का भी मुख्य उद्देश्य वही है, जो सूखी मालिश का। दोनों में भेद सुविधा की ही दृष्टि से किया गया है।

सूखी मालिश से त्वचा उद्दीप्त हो उठती है। शरीर का व्यायाम भी हो जाता है। त्वचा की मृत परतें इससे झड़ जाती हैं। विजातीय द्रव्यों के निष्कासन की प्रक्रिया तीव्र हो जाती है। रक्त नलिकायें अपना कार्य मुस्तैदी से करती हैं और रक्त-संचार गति में तीव्रता आती है। हारमोन-ग्रन्थियाँ एवं तेल उत्पादक ग्रन्थियाँ भी सक्रिय हो उठती हैं। स्नायुविक प्रवाह में गति आती है। पेशियाँ मजबूत बनती हैं। वसा का शरीर में संतुलित वितरण होता है। इस प्रकार शरीर में नवीन स्फूर्ति, शक्ति तथा दीप्ति आती है। असमय शरीर जीर्णता की सम्भावना घटती है।

तेल-मालिश करने वालों को भी यदा-कदा पहले सूखी मालिश करके बाद में तेल-मालिश कर धूपसेवन करना चाहिये। इसी प्रकार सूखी मालिश करने वालों को कभी-कभार तेल-मालिश कर लेनी चाहिये। तिल या सरसों का तेल अपनी प्रवृति के अनुसार चुना जा सकता है। बादाम तथा जैतून का तेल भी लाभकारी होता है।

सूखी मालिश के लिये सूखी तौलिया का उपभोग उत्तम रहता है। तौलिया न हो तो मोटे खुरदरे कपड़ों से भी वही कार्य किया जा सकता है। सम्पन्न वर्ग के लोग इस हेतु सुअर के बालों के ब्रुश का प्रयोग करते हैं। किन्तु उसके प्रयोग से बचना ही अच्छा है।

सूखी मालिश पैर की एड़ी से शुरू करनी चाहिये। अपने शरीर की त्वचा की संवेदना को स्वयं ही भाँपकर उस पर उतना ही दबाब डालते हुये घर्षण करना चाहिये, जितना वह सह सके। पैर की एड़ी से शुरू कर ऊपर तक घिसना चाहिये। अधिक अच्छा हो कि बाँयें पैर की एड़ी से शुरू कर जाँघ तक आने के बाद, दूसरे पैर की एड़ी से फिर शुरू किया जाय व ऊपर जाँघ तक तौलिया द्वारा रगड़ें। फिर दोनों हाथ व भुजायें। इसी प्रकार उँगलियों के पैरों से रगड़ना शुरू करें व कंधे के जोड़ तक पहुँचे। तदुपरान्त पेडू से घर्षण प्रारम्भ कर पीठ व पेट में सूखी मालिश करें। पीठ के घर्षण के लिये लम्बे तौलिया को तिकोना लपेटा जा सकता है। पीठ-पेट के बाद गर्दन, फिर मुँह व अन्त में सिर की मालिश करें। गर्दन एवं मुँह में भी घर्षण नीचे से ऊपर की ही ओर रहे, जबकि पूरे सिरे में सूखा तौलिया गोलाकार घुमायें एवं सिर को उलट-पुलट कर रगड़ें जैसे साबुन से धोते समय करते हैं। ५ या १० मिनट से अधिक घर्षण की आवश्यकता नहीं।

इसके उपरान्त या तो गीली तौलिया से या फिर फब्बारे से पुनः शरीर का घर्षण करें। जो लोग व्यवस्था कर सकें व सहन कर सकें, वे गरम तथ ठंडे पानी का फब्वारा अदल-बदल कर लें। पहले गरम पानी का फिर उससे कम समय ठंडे का, पुनः गरम तदुपरान्त ठंडा और फिर गरम पानी का फब्वारा लेकर सबसे अन्त में ठंडे पानी से नहायें। गरम पानी सिर में कम ही डालना चाहिये, अधिक समय तक नहीं।

सूखी मालिश की यह प्रक्रिया शरीर के लिये निश्चित ही लाभकारी स्वास्थ्यप्रद सिद्ध होती है। इसे प्रत्येक वयस्क सदस्य को करना चाहिये। विशेष कर शीत ऋतु में इसका अभ्यास ताजगी देता है। दिन भर स्फूर्ति बनी रहती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वायु प्रदूषण का सरल उपचार—तुलसी आरोपण

इन दिनों बढ़ती हुई जनसंख्या एवं यान्त्रिक गतिविधियों से वायुप्रदूषण का अनुपात असाधारण रूप से बढ़ा है। कारखानों तथा द्रुतगामी वाहनों में जो कोयला, तेल जलता है, उसका विषैला धुआँ इस वायुमण्डल में निरन्तर बढ़ता जा रहा है। यह वायु प्राणिमात्र के लिये अन्न, जल से भी अधिक आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण है। जिस प्रकार जल या पानी के सहारे जीवित रहते हैं, उसी तरह हम सब हवा के समुद्र से प्राण सम्पदा प्राप्त करते हैं। जल विषाक्त होने पर मछलियों का दम घुट जाता है। वायु में घुलता और बढ़ता प्रदूषण पशु-पक्षियों समेत मनुष्यों को भी घुटन का अभिशाप सहन करने के लिये विवश करेगा।

वायु प्रदूषण के साथ विषैली सांस से आरोग्य नष्ट होने, रुग्णता का दौर उभरने, महामारियाँ फैलने के अतिरिक्त एक संकट तापमान बढ़ने का भी है। संतुलित तापमान से मौसम का नियन्त्रित क्रम यथावत् बना रहता है किन्तु यदि गर्मी की मात्रा बढ़े तो उसकी भयानक प्रतिक्रिया मौसम गड़बड़ाने के रूप से प्रकट होती है। अतिवृष्टि, अनावृष्टि के कारण दुर्भिक्ष पड़ते हैं। जमी बर्फ पिघलती है और समुद्र की सतह ऊँची उठने लगती है फलतः अग्नि-युग, हिम-युग जैसे प्रकृति प्रकोप उभरते हैं, जिनके कारण भूमि-परिभ्रमण प्रक्रिया लड़खड़ाती है। भूकम्प आते हैं और थल की जगह जल और जल की जगह थल आ धमकने जैसे व्यतिक्रम खड़े होते हैं। भूतकाल में जब भी ऐसे प्रकृति विपर्यय उभरे हैं, प्राणियों का जीवन और वनस्पतियों का अस्तित्व संकट में पड़ा है। खण्ड प्रलय जैसी स्थिति बनी है। इन दिनों बढ़ते वायु प्रदूषण के कारण उन भूतकालीन विभीषिकाओं का नया दौर आने की आशंका है।

युद्धोन्माद में प्रयुक्त होने वाली बारूद विषाक्त सामान्य धुयें की तुलना में हजारों गुनी अधिक भयंकर होती है फिर पिछले दिनों अणु विस्फोटों का नया सिलसिला चला है। जापान में फेंकें गये दो छोटे-छोटे एटम बमों ने उन दिनों तत्काल कितनी हानि पहुँचाई तथा बाद में उस विकिरण से प्रभावित कितने व्यक्ति अपंग, असमर्थ हो गये, विकलांग बच्चे उत्पन्न हुये इसका लेखा-जोखा ध्यानपूर्वक पढ़ने से कलेजा दहलने लगता है। जापान पर गिराये गये बमों की तुलना में हजारों गुना विकिरण उन परीक्षण विस्फोटों के कारण उत्पन्न हुआ है, जो जल-थल और आकाश में अनेक देशों द्वारा निरन्तर किये जाते रहे हैं।

विज्ञजनों न पर्यवेक्षण करके बताया है कि अब तक हो चुके अणु-विस्फोटों के कारण उत्पन्न हुई विकृतियाँ ही ऐसी हैं, जो सैकड़ों वर्षों तक कष्टकारक रहेंगी और पीढ़ियों तक त्रास देंगी। यदि यह सिलसिला आगे भी जारी रहा तो उसका प्रभाव एक प्रकार से महा-प्रलय जैसा सर्वनाशी होगा। वायुमण्डल की विकृतियाँ धरती और जल पर उतरती हैं और उनमें भी ऐसे तत्व फैलते हैं, जो अन्न-जल को भी साँस की तरह विषाक्त करके जीवन संकट उत्पन्न करें।

बिगाड़ने वाले जब इतनी निर्भीकतापूर्वक विनाश पर उतारू हैं तो देवत्व के पक्षधर लोगों के लिये यह उचित नहीं कि हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहें। यदि बिगाड़ने वाले हाथों को रोक सकने की सामर्थ्य न हो तो कम से कम सफाई की व्यवस्था तो करनी ही चाहिये। यह सरलतम और सफलतम उपचार है। इतना तो नगरपालिकाओं के मेहतर तक करते रहते हैं। हम उतना भी कुछ न करें और दूसरों के साथ जुड़े हुये अपने भाग्य-भविष्य को पीढ़ियों के निर्वाह को अन्धकारमय बनाने में रोकथाम न कर सकें, यह दुर्भाग्य की बात होगी। यों होना यह भी चाहिये कि महाविनाश पर उतारू लोगों पर जनमत का दबाब डालें और इस सृष्टि का सर्वनाश करने वाले आततायियों और आतंकवादियों को मनमानी न करने दें। जाग्रत लोकमत दोनों ही काम कर सकता है। रोकथाम तत्काल बन पड़ती न देखें तो भी परिशोधन प्रयोगों को हाथों में लेने का उत्साह तो प्रकट करे ही।

इस सन्दर्भ में सरलतम उपाय उपचार दो हैं—एक अग्निहोत्र प्रक्रिया दूसरा हरितमा संवर्धन।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अग्निहोत्र के सम्बन्ध में मत-भेद और विवाद भी हो सकते हैं किन्तु हरितमा-संवर्धन में तो आस्तिक-नास्तिक का, धर्म सम्प्रदाय का, विज्ञान बुद्धिवाद का भी विरोध-अवरोध नहीं है, उसे तो सर्व सम्मत उपचार की तरह सर्वत्र सरलतापूर्वक अपनाया जा सकता है।

वृक्ष, वनस्पतियों का यह गुण सर्वविदित है कि वायु में से अनुपयुक्त तत्वों के सोखते और प्राण वायु को निःसृत करते रहते हैं। आरोग्य सम्पादन के उपायों में एक यह भी कि हरे-भरे क्षेत्र उद्यान में रहकर प्राणप्रद वायु सेवन की व्यवस्था बनाई जाय। प्रगतिशील देशों में शोभा और स्वास्थ्य का समन्वित लाभ लेने के लिये घरों के साथ हरितमा भी जोड़कर रखी जाती है। कई तो उस बागवानी को घरेलू विनोद-मनोरंजन की तरह परिवार के सदस्यों द्वारा ही सम्पन्न करते हैं। माली का उपयोग तो मात्र मार्गदर्शन और सहयोग भर के लिये लेते हैं। यह एक सृजनात्मक पद्धति है। शिशुपालन, पशु पालन की तरह हरितमा संवर्धन के माध्यम से भी निर्माण और संवर्धन की सत्प्रवृत्ति, उगती, बढ़ती और परिष्कृत होती है। स्वभाव-अभ्यास में इस प्रकार का समावेश होना बड़ी बात है। देखने में यह छोटी बात दिखती हुये भी वस्तुतः बड़ी बात है। मनुष्यों में जो महामानव बने हैं, उनमें सृजनात्मक प्रवृत्तियाँ ही विशेष रूप से विकसित हुईं हैं। हरितमा संवर्धन के प्रचार का यह अति महत्त्वपूर्ण दूरगामी लाभ है। वनस्पतियों के सान्निध्य में प्राणवायु की प्रचुर मात्रा में उपलब्ध—देखने में भले ही सामान्य हों वस्तुतः वह है—असामान्य।

चर्चा इन दिनों वायुमण्डल में बढ़ती विषाक्तता और उस कारण प्राणियों तथा वनस्पतियों के लिये उत्पन्न संकट की हो रही है। उसके लिये हरितमा संवर्धन द्वारा रोकथाम करने के उपाय उपचार पर विचार किया जा रहा था। इस सम्बन्ध में मोटेतौर पर यह कहा जा सकता है कि वृक्षारोपण एवं वनस्पति सम्वर्धन को उत्साह भरे आन्दोलन का रूप दिया जाय और उसमें जन-जन को किसी न किसी प्रकार सम्मिलित किया जाय।

जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ ईंधन और इमारती कामों के लिये लकड़ी की आवश्यकता बढ़ रही है। पेड़ कट रहे हैं पर नये लगते नहीं। ऐसी दशा में मौसम का संतुलन बिगड़ता है। अनावृष्टि से दुर्भिक्ष का माहौल बनता है। भूमिक्षरण और रेगिस्तान बढ़ने का संकट खड़ा होता है।

जिनके पास अपनी जमीन है, वे उसका एक भाग वृक्ष उगाने, पुष्प खिलाने और शाक उत्पन्न करने के लिये सुरक्षित रखें। मात्र अन्न और नकदी देने वाली फसलें ही पर्याप्त नहीं होंगी। जिनके पास अपनी जमीन न हो वे सरकारी या दूसरों की जमीन में मालिकों का स्वामित्व स्वीकार करते हुये उन्हीं के लिये अपने परिश्रम से पेड़ लगायें, सींचें। पूर्वजों की तथा अपनी स्मृति में किये जाने वाले पुण्य परमार्थ में वृक्ष लगाना या पैसा देकर दूसरों से लगवाने का कार्य बहुत ही श्रेष्ठ और सत्परिणाम उत्पन्न करने वाला है।

घरों में शाक-वाटिका लगाने का आन्दोलन इसी अभियान का एक अङ्ग है। वनस्पति से भी छोटे रूप में वृक्षों जैसे लाभ मिलते हैं। जिनके पास भूमि नहीं है, वे भी आँगन-बाड़ी, छप्पर-बाड़ी, छत-बाड़ी के रूप में शाक उगा सकते हैं। साथ ही उससे मुफ्त में ताजे शाक मिलने जैसे आर्थिक लाभ उठाते रह सकते हैं। इन दिनों हरे, पौष्टिक आहार के न मिलने से कुपोषणजन्य अनेकानेक रोग बढ़ते जा रहे हैं। इनका निराकरण घी-मलाई से—टानिकों से नहीं वरन् शाक, फल अंकुरित अन्न जैसे जीवित आहार से ही सम्भव हो सकता है। घरेलू शाक-वाटिका के माध्यम से गरीब लोग भी यह सुविधा प्राप्त कर सकते हैं। बड़े परिवारों के लिये छोटे घर में भी हरी चटनी की दैनिक व्यवस्था बनाये रहने के लिये—पोदीना, धनिया, अदरक, मिर्च, पालक अनार आदि लगाने से काम चल सकता है। खिलते हुये पुष्प हँसते हुये बालकों की तरह होते हैं। उनकी छटा तथा महक उदास, निराशों में भी उत्साह उभारती है। सज्जा-पूजा में उनका उपयोग असंदिग्ध ही है।

तुलसी आरोपण को हरितमा संवर्धन के प्रयासों का मुकुटमणि कहा जा सकता है। तुलसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में वायु-प्रदूषण का परिशोधन करने की अद्‌भुत क्षमता है। उसके सम्पर्क से बहने वाली हवा में आरोग्यवर्धक अनेकों विशेषतायें भरी रहती हैं। यहाँ तक कि मक्खी, मच्छर, खटमल, पिस्सू ही नहीं साँप, बिच्छू तक को दूर करती है। औषधियों में तुलसी को अनुपम एवं मूर्धन्य माना गया है। इस अकेली में प्रायः सभी छोटे-बड़े रोगों का उपचार करने की क्षमता है तुलसी, काली मिर्च गंगाजल के योग से गायत्री मन्त्र जपते हुये छोटी गोलियाँ बनाकर रख लेने और उन्हें अनुपान भेद विभिन्न रोगों में घरेलू चिकित्सा की तरह काम में लाया जा सकता है।

वृक्ष वनस्पतियों के उगाने, पौधने, बढ़ाने की कला को अधिकाधिक विकसित किया जाना चाहिये। इसके द्वारा सम्बद्ध लोगों में सृजनात्मक कुशलता बढ़ती है। कलाकारिता, सौन्दर्य, बुद्धि सुरुचि निखरती है। शिशुपालन जैसा आनन्द आता है। पौधों की मैत्री से हाथोंहाथ सुगन्धित सुरभित प्राण-वायु के रूप में जीवनी शक्ति का उपहार मिलता है। घरों में उगाई शाक-भाजी और बाजार से खरीदी हुई में उतना ही अन्तर है जितना घर के दूध एवं आहार में। बाजार से उन्हें उतनी शुद्ध एवं जीवन्त स्थिति में खरीदा ही नहीं जा सकता। पैसे की बचत, शारीरिक मानसिक व्यायाम, पोषण आहार जैसे सामान्य एवं महत्त्वपूर्ण लाभों की भी एक शृंखला इस प्रक्रिया के साथ जुड़ती है। तुलसी आरोपण में औषधियों के लिये प्रयुक्त होने वाली जड़ी-बूटियों को उगाने, बढ़ाने का भी एक अभिनव शुभारम्भ संकेत है।

गान्धीजी ने नमक सत्याग्रह जैसे छोटे से कार्यक्रम को लेकर सत्याग्रह आन्दोलन का श्री गणेश किया था। कालान्तर में वही चिनगारी बढ़कर दावानाल के रूप में विकसित हुई और 'करो या मरो' का विप्लव खड़ा करते हुये अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने में समर्थ हुई।

हरितमा संवर्धन की योजना उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कि मनुष्यों के निर्वाह की घरेलू शाक-वाटिका। इसे तुलसी आरोपण के शुभारम्भ के रूप में इसलिये चलाया गया है कि उसे सुगम उपचार के रूप में सर्वसाधारण द्वारा अपनाया जा सके। वस्तुतः यह हरितमा का महत्त्व समझाने और वृक्ष, वनस्पतियों, अन्न शाकों, जड़ी-बूटियों के उत्पादन का ऐसा आन्दोलन है जिसे अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण माना और उसे जीवनचर्या में प्रमुख स्थान मिलने की स्थिति तक पहुँचाना चाहिये। धरती को हरी-भरी रहना चाहिये और उस प्रकृति अनुदान का भरपूर लाभ समूची मनुष्य जाति को-प्राणी समुदाय को मिलना चाहिये।

इन दिनों बढ़ते प्रदूषण से बचने के लिये कारगर उपचार के इस सन्दर्भ में वनस्पति सम्वर्धन का उपचार यदि काम में लाना हो तो इसके लिये तुलसी आरोपण को प्रमुखता देनी होगी। उसके पौधे हर आँगन में लगाये जाने चाहिये और इस आधार पर आस्तिकता धर्मधारणा के सम्वर्धन का भी दुहरा लाभ उठाया जाना चाहिये। धातु या पत्थर से ही प्रतिमा नहीं बनती वरन् अक्षय वट, बोधिवृक्ष, देव अश्वत्थ की तरह पेड़ों और पौधों को भी भगवान की प्रतिमा मानकर उनको श्रद्धा सम्वर्धन का निमित्त कारण बनाया जा सकता है।

तुलसी का विरवा आँगन में एक सुसज्जित थावले के रूप में लगाया जाये और उसे खुले आकाश में सूर्य भगवान की, खुले पवन की, वरुण की, बादल की छत्र छाया में पलने वाला देवता माना जाये। वनस्पति मन्दिर सच्चे अर्थों में एक पुनीत देवता है। धातु या पाषाण की प्रतिमा की तुलना में तुलसी का महत्त्व किसी प्रकार कम नहीं है। इस स्थापना का अर्थ है घर में भगवान के मन्दिर का निर्माण कर लेना। इसमें कोई पूजा भी नहीं करनी पड़ती है। मात्र श्रमदान से ही सारा काम चल जाता है। थांवले को जल्दी-जल्दी पोतते रंगते रहा जाय तो उसका सुहावना रूपश्रद्धा संवर्धन की भूमिका भी सम्पन्न करता रहेगा।

प्रातः सायं जब भी अवकाश हो सूर्यार्घ्य, अगरबत्ती, मानसिक गायत्री जप, सविता का ध्यान, नमन, वन्दन, परिक्रमा जैसे उपचार से इस वनस्पति मन्दिर की पूजा आरती सरलतापूर्वक की जा सकती है। घर का कोई भी सदस्य इसे करता रह सकता है। इस पूजा उपचार में घर के सभी श्रद्धालु लोग किसी न किसी रूप में भागीदार बन सकते हैं। नमन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वन्दन तो निकलते-बरतते भी हो सकता है। इस आधार पर घर-परिवार में आस्तिकता, धार्मिकता, का वातावरण बनता है। इस छोटी व्यवस्था में घर-परिवार में पनपने वाली श्रद्धा अन्तः दूरगामी सत्परिणाम उत्पन्न करती है।

इन दिनों वायु प्रदूषण की तरह ही चेतनात्मक वातावरण भी कम विषाक्त नहीं हो रहा है। वातावरण के परिशोधन में जिस धर्म श्रद्धा का पुनर्जीवन आवश्यक है, उसकी पूर्ति तुलसी देवालय के माध्यम बन पड़ती है। इस प्रकार तुलसी आरोपण में न केवल वायुमण्डल के संशोधन की वरन् आस्था संकट से घिरे हुये वातावरण से श्रद्धा संवर्धन की आवश्यकता भी बहुत हद तक पूरी होती है। एक प्रकार से दुहरा लाभ प्रदान करने वाले हरितमा संवर्धन अभियान का शुभारम्भ तुलसी आरोपण के साथ करने की बात सोचनी चाहिये। इसके लिये बीज इकट्ठे करने पौध उगाने, लगाने का प्रचार करने के लिये हम सभी को प्रयत्न करना चाहिये। उत्साह उभारा जाय और तत्काल सहायता देने के लिये प्रयत्न किया जा सके तो प्रज्ञा परिवार संकट की इस महती आवश्यकता को पूरी करने में भली प्रकार सफल हो सकता है।

तुलसी को प्रतीक मानकर हरितिमा संवर्धन के कार्य का श्रीगणेश एक व्यापक और विस्तृत प्रक्रिया है। वनस्पति हमारे लिये जीवन प्राण है वह धरती से आहार, बादलों से जल, आकाश से प्राण वायु खीचकर जीवन सम्पदा के रूप में प्रदान करती है। इसलिये उसे पशुपालन, गोपालन की तरह ही महत्त्वपूर्ण माना जाना चाहिये। तुलसी के साथ दिव्य औषधि की विशेषतायें तथा अध्यात्म परायण श्रद्धा भावनायें भी जुड़ती हैं और इसके लाभ तीन से बढ़कर पाँच हो जाते हैं। श्रद्धा आरोपण के लिये देव प्रतिमाओं की पूजा परम्परा प्रचलित है। प्रतिमाओं को धातु पाषाण की अपेक्षा वनस्पति के तुलसी के रूप में पूजा जाना उपयोगिता के साथ भी जुड़ता है। उसमें कृतज्ञता की एक नई भाव गरिमा का समावेश होने से लाभ का अनुपात दुहरा बनता है।

भारतीय संस्कृति को आरण्यक संस्कृति कह सकते हैं। उसमें गोधन के निर्वाह का सान्निध्य का अविच्छिन्न अंग रखे रहने का निर्धारण है। साथ ही यह मान्यता भी है कि वृक्ष वनस्पति को कुटुम्ब परिवार की तरह साथ लेकर चला जाये। हमारे घर भले ही घास फूँस, मिट्टी, खपरैल के बने हैं, पर उनके चारों ओर हरीतिमा अवश्य लहलहाती दृष्टिगोचर हो। वनस्पति उगाने-बढ़ाने में भी प्रायः उसी भावना की तत्परता का परिचय देना पड़ता है। जिसके आधार पर परिवारों को समुन्नत सुसंस्कृत बनाया जाता है। उसी सद्भाव सम्पन्न दृष्टिकोण का क्रमिक विकास करते हुये "वसुधैव कुटुम्बकम्" के लक्ष्य तक पहुँच सकना सम्भव हो सकता है। तुलसी आन्दोलन उसी का ध्वजारोहण है।

तुलसी लगायें स्वस्थता बढ़ायें

जिस प्रकार प्राणियों में मनुष्य, छन्दों में गायत्री देवताओं में इन्द्र, नदियों में गंगा, पर्वतों में हिमालय और हाथियों में ऐरावत हाथी श्रेष्ठ है, उसी प्रकार वनस्पतियों में तुलसी का पौधा ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यही कारण है कि हिन्दू परिवारों में घर की पवित्रता की रक्षार्थ तुलसी का पौधा लगाया जाता है।

जहाँ तुलसी उगी होती है उसके समीपवर्ती वातावरण में मनसिक पापों को दूर करने वाले तत्वों की अभिवृद्धि होती है। तुलसी में जहाँ रासायनिक विशेषतायें हैं, वहाँ "सूक्ष्म" "कारण" शक्ति भी ऐसी है, जो मानसिक एवं भावनात्मक क्षेत्रों को भी प्रभावित करती है। इन्हीं विशेषताओं के कारण उसे देव तुल्य मानकर स्थापना से लेकर पूजा अर्चना तक का विस्तृत माहात्म्य बताया गया है। प्रत्यक्षतः आरोग्य रक्षा और रोग निवारण के दोनों ही गुण तुलसी में हैं। प्रचलित औषधियों में से अधिकाश में मारक गुण अधिक होता है। वे रोग कीटाणुओं के साथ शरीर के संरक्षण कोषों और जीवाणुओं को भी मारती है। इस प्रकार जहाँ एक हाथ में लाभ मिलता है दूसरे हाथ से वह छिन जाता है। तुलसी में यह दोष नहीं है। वह आरोग्य बढ़ाने की दृष्टि उपयोगी टॉनिक भी है। साथ ही रोगों का शमन करते समय शरीर के सुरक्षा पक्ष की तनिक भी हानि नहीं पहुँचाती। इसके अतिरिक्त उसमें ऐसा कोई दोष नहीं है, जिसमें सेवन सम्बन्धी छोटी-मोटी भूल के कारण किसी संकट में पड़ना पड़े। लाभ धीमे हो यह हो सकता है किन्तु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साथ ही चिकित्सा उपचार के साथ-साथ जो खतरे जुड़े रहते हैं, उसकी आशंका तनिक भी नहीं है। तुलसी अपने आप में पूर्ण है। वह समग्र औषधि की तरह, हर किसी के लिये लाभदायक ही सिद्ध होती है।

धन्वन्तरि, निघंटु, राज निघंटु, राज वल्लभ निघंटु भाव प्रकाश, चरक सुश्रुत आदि आयुर्वेद ग्रन्थों में तुलसी के अमृतोपम गुणों की प्रशस्ति भरी पड़ी है। धर्म ग्रन्थों में प्रायः सभी पुराणों में तुलसी के आध्यात्मिक प्रभाव का वर्णन है। पद्म पुराण में उसकी महिमा का अधिक विस्तार है।

ईसाई धर्म ग्रन्थों में उल्लेख है कि ईसा की कब्र पर तुलसी पौधा उग आया तो शिष्यों ने उसे ईश्वर पुत्र का मूर्तिमान आशीर्वाद माना और प्रसाद की तरह ग्रहण किया। पूर्वी योरोप के गिरजों में अभी भी तुलसी की पूजा होती है और उसका जन्म दिवसोत्सव मनता है। ग्रीस में आधुनिक युग में भी एक विशेष दिन तुलसी का उत्सव मनाया जाता है, जिसे "सेन्ट बैसिल डे" कहते हैं। इस दिन वहाँ की स्त्रियाँ तुलसी की शाखायें अपने गृह द्वार पर लाकर टाँगती है। उनका विश्वास होता है कि इससे उनकी मुसीबतें कष्ट दूर होंगे। अंग्रेजी में इसे 'होली बेसिल' कहते हैं अर्थात् "पवित्र तुलसी"। बेसिल शब्द का अर्थ अंग्रेजी, फ्रेंच और ग्रीक में दैवी या शाही है। उसे पवित्र वनस्पति सम्राट या "सन्त जनों का शाही पौधा" समझा जाता है। यहूदी लोग अपने धर्म कृत्यों में इसका उपयोग करते हैं। बौद्ध धर्म के कर्मकाण्डों में भी आदरपूर्वक उपयोग किया जाता है। गुणों की दृष्टि में उसे संजीवनी बूटी कहा जाय तो कुछ अत्युक्ति न होगी।

अब वैज्ञानिक अनुसंधान और रासायनिक विश्लेषणों के आधार पर यह सिद्ध हो गया है कि तुलसी में कीटाणु-नाशक तत्व प्रचुर मात्रा में हैं, जिससे रोग निवारण में यह काफी लाभप्रद सिद्ध होता है। तुलसी के पत्तों में एक प्रकार का कीटाणु-नाशक द्रव्य होता है, जो हवा के संयोग से इधर-उधर उड़ता है। तुलसी का स्पर्श करने वाली वायु जहाँ भी आती है, वहीं अपना रोग-नाशक एवं शोधक प्रभाव डालती है। मनुष्य शरीर में स्वांस के द्वारा और स्पर्श से यह अनुकूल परिणाम पैदा करती है। शरीर से रोगों का निवारण होता है और स्फूर्ति, प्रफुल्लता पैदा होती है। तुलसी शरीर की टूट-फूट से होने वाले विषैले कोषों को शुद्ध करती है और शरीर से दूषित तत्वों को नष्ट करती है।

शास्त्रकार ने कहा है कि—

तुलसी काननं चैव गृहेयस्याव तिष्ठते।
तद्गृहे तीर्थभूतंहि न यान्ति यम किंकराः।।

"जिस घर में तुलसी का वन है वह घर तीर्थ के समान पवित्र है। उस घर में यमदूत नहीं आते।' यहाँ यमदूतों का अर्थ जहरीले कीड़े, सर्प, बिच्छू आदि रोग कीटाणु, बीमारियों से है।

इसी तरह अन्यत्र कहा है—

तुलसी विपिनस्यापि समन्तात्पावनं स्थलम्।
कोशमात्रं भवत्येव गंगे यस्येव पायसः।।

"तुलसी वृक्ष के चारों ओर एक कोश अर्थात् दो मील तक की भूमि गंगाजल के समान पवित्र होती है।" स्मरण रहे रोग कीटाणु नाश की गङ्गा जल में अपूर्व शक्ति है। उसमें कोई कीटाणु जीवित नहीं रह सकता और इसीलिये गंगाजल कभी सड़ता नहीं।

एक धर्म ग्रन्थ में लिखा है—

तुलसी गंधमादाय यत्र गच्छति मारुतः।
दशो दिशाः पुनव्याशु भूत ग्रामान् चतुर्विधान।।

"तुलसी की गन्धयुक्त हवा जहाँ भी जाती है, वहाँ की दशों दिशायें शीघ्र ही पवित्र हो जाती हैं और आकाश, पृथ्वी, वायु, जल आदि चारों तत्व उससे शुद्ध हो जाते हैं।"

पद्म पुराण में तुलसी माहात्म्य के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक लिखा गया है। उसका कुछ अंश यह है—

तुलसीकाननं राजगृहे यस्यायतिष्ठते।
तद्गृहं तीर्थरूपं तु नायान्ति यम किङ्कराः।।
सर्वपापहरं पुण्यं कामदं तुलसीवनं।
रोपयन्ति नरश्रेष्ठा न ते पश्यन्ति भास्करीम्।।
दर्शन नर्मदायास्तु गंगास्नानम् तथैव च।
तुलसीवनसंसर्गः समरोतत्त्रयम्मृतम्।।
रोपणात्पालनात्सेकाद्दर्शनात्स्पर्शनान्नृणाम्।
तुलसी दहते पापंवाङ्मनः कायसञ्चितम्।
पुष्करादीनि तीर्थानि गङ्गाया सरितस्तथा।
वासुदेवादयो देवास्तिष्ठति तुलसीदले।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हे राजन् जिसके घर में तुलसी का वन उपस्थित है, वह सम्पूर्ण घर ही तीर्थ रूप है और वहाँ पर कभी भी यमराज के किंकर नहीं आया करते हैं। समस्त प्रकार के पापों का हरण कर देने वाले पुण्यमय तथा कामनाओं को प्रदान करने वाला तुलसी का वन है। जो श्रेष्ठ पुरुष इस वन का आरोपण किया करते हैं। वे भास्करी अर्थात् यमराज के मुख का दर्शन नहीं किया करते हैं। नर्मदा नदी के दर्शन गंगा का स्नान और तुलसी वन का संसर्ग होना ये तीनों समान बताये गये हैं अर्थात् तीनों का पुण्य फल समान होता है। तुलसी इसके रोपण करने से—इस तुलसी का पालन करने से—इसके सींचने से—दर्शन से और केवल स्पर्श से मनुष्यों के वाणी—मन और शरीर में सञ्चित पापों का दाह कर दिया करती है। पुष्कर प्रभृति तीर्थ—गंगा आदि पुण्य सरितायें और वासुदेव प्रभृति देव इस तुलसी के दल में स्थिति रहा करते हैं।

तुलसीमञ्जरी युक्तो यदि प्राणान्विमुर्चिति।
विष्णोः सायुष्यमाप्नोति सत्यं सत्यं नृपोत्तम्।।
तुलसीकाष्ठजं यस्तु चन्दनम् धारयेन्नरः।
तद्देहं नप्पृशेत्पापं क्रियमाणम्पीह यत्।।
तुलसीविपिनच्छाया यत्र-यत्र भोवेन्नृप।
तत्र श्राद्धं प्रकर्त्तव्यं पितृणां दत्तमक्षयम्।।
किं च गङ्गाजलेनैव किं च पुष्करसेवया।
तुलसीदलमिश्रेण जलेनैव प्रमोद्यते।।

तुलसी के द्वारा दत्त (दिया हुआ दान)—हुत (किया हुआ हवन)—ज्ञात (प्राप्त किया हुआ ज्ञान) कृत (किया हुआ कर्म)—यज्ञ और व्रत आदि सब जन्म-जन्मों में भासमान होते हैं तथा सुख, भाग्य, यश, श्री कुल, शील, कलत्र, पुत्र, पुत्री, धन, राज्य, नीरोगता, ज्ञान, विज्ञान, वेद, वेदांग, शास्त्र, पुराण, आगमन संहिता सभी कुछ तुलसी दल के द्वारा हरि का अभ्यर्चन करने से हस्तगत हो जाया करते हैं। जिस तरह भागीरथी गंगा परम पवित्र अंग वाली है और सुर लोक में मोक्ष प्रदान करने वाली होती है तथा भागीरथी परम पुण्यमयी है, उसी भाँति यह तुलसी परम शिवा होती है।

गौरी तन्त्र तुलसी महात्म्य में बताया है—

तुलसी पत्र सहितं जलं पिबति यो नरः।
सर्व पापविनिमुक्तो मुक्तो भवति भामिनी।।३४।।

तुलसी दल को जल में डालकर जो उस शीत-कषाय को पीते हैं, वे अनेक रोगों से छुटकारा पाते हैं। चरणामृत वस्तुतः एक प्रकार का शीत-कषाय ही है। राज निघंटु करवीरादि० १५२ में बताया है कि यह स्वाद और भोजन के रुचि बढ़ाती है, कीड़ों और छोटे कृमियों को जो आँख से नहीं दिखाई देते (वायरसों) को मारती है।

पद्म पुराण में लिखा है—

तुलसी मृत्तिका लिप्त ललाट यस्मदृश्यते।
कुलं स्पृशति नो तस्य कलिर्भुनिवरोत्तम।।

(पद्म पुराण उत्तर खण्ड)

अर्थात्—चन्दन की तरह तुलसी की मिट्टी या लकड़ी को घिसकर माथे में लगाने से वंश परम्परा के (अनुवांशिक) रोग भी अच्छे हो जाते हैं।

तुलसी के गुणों का वर्णन करते-करते शास्त्रकार थक गया तो उसने एक वाक्य में सारी गाथा समाप्त कर दी—

अमृतोऽमृतरूपासि अमृतत्वप्रदायिनी।
त्व मामुद्धार संसारात् क्षीरसागर कन्यके।।

विष्णुप्रिये ! तुम अमृत स्वरूप हो, अमृतत्व प्रदान करती हो, इस संसार से मेरा उद्धार करो।

तुलसी की पूजा-अर्चा से वस्तुतः कोई स्वर्ग उपलब्ध होता है या नहीं, ज्ञात नहीं, किन्तु रोग-शोक के नरक में फँसे हुये लोगों के लिये तुलसी सचमुच ही इतनी उपयोगी पाई गई है कि उसे "उद्धार कर्त्री" ही कहा जा सकता है।

तुलसी के अनेक गुणों का प्रकाश उसके अनेक पर्यायवाची नामों से ही हो जाता है। तुलसी के पत्ते चबाने से मुँह में लार जो कि अत्यन्त पाचक, अग्निवर्धक, भूख बढ़ाने वाला तत्व बढ़ता है, इसलिये उसे 'सुरसा' कहा है। दूषित वायु, रोग और बीमारी के कीटाणु 'वायरस' रूपी भूत, राक्षस और दैत्यों को मार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगाने के कारण उसे 'भूतघ्नी', 'अपेतराक्षसी' तथा 'दैत्यघ्नी' कहते हैं। हिस्टीरिया, मृगी, मूर्छा, कुष्ठ आदि रोग जिन्हें पूर्व जन्मों से पाप कहा जाता है जो दीर्घकालीन विकृतियों (पापों) के फलस्वरूप पैदा हो जाते हैं और बहुत उपचार करने पर भी अच्छे नहीं होते वह भी तुलसी से अच्छे हो जाते हैं इसीलिये उसे 'पापाघ्नी' कहा गया है। इसका एक नाम 'फूल-पत्री' है, अर्थात् इसके पत्ते चबाने से शरीर शुद्ध होता है। शरीर में जीवनी शक्ति बढ़ाती और स्थिर रखती है इसलिये इसे 'कायस्था', तेजी से प्रभाव डालने के कारण 'तीव्रा' तथा यह एक अत्यन्त सरल चिकित्सा है, इसलिये इसे 'सरला' नाम से भी पुकारते हैं। यह तुलसी के हजारों नामें में से कुछ एक हैं, जो उसके महान् गुणों की ओर संकेत करते हैं।

भगवान के पंचामृत भोग प्रसाद में तुलसी का ही उपयोग किया जाता है। मरते समय तुलसी पत्र मुख में डालते हैं। तुलसी की माला पर किया हुआ जप श्रेष्ठ मानते हैं, प्रायश्चित विधान में पंचगव्य के साथ तुलसी पत्र मिश्रित किया जाता है। तुलसी पूजन, दीपक संध्या छवि, तुलसी परिक्रमा आदि धार्मिक कर्मकाण्ड होते रहते हैं। घरों में तुलसी विरवा की स्थापना उसे भगवान की प्रतिभा मानकर ही की जाती है।

यह सब विधान वह श्रद्धा उत्पन्न करने के लिये है, जिसके आधार पर हर घर में तुलसी की स्थापना हो और उसके द्वारा वहाँ का वातावरण सात्विकता से सम्पन्न हो सके।

तुलसी पंचाङ्ग द्वारा विनिर्मित एक ही तुलसी वटी द्वारा अनुपात भेद से समस्त रोगों का उपचार हो सकता है।

ऐसी ही अनेक विशेषताओं के ध्यान में रखते हुये घरों में तुलसी की स्थापना, खेत बगीचों में उसका आरोपण पुष्प फलदायक माना गया है।

तुलसी में रोग-नाशक शक्ति प्रचुर मात्रा में होती है। चरक के अनुसार यह हिचकी, खाँसी, दमा, फेफड़ों की बीमारी तथा विष-निवारक होती है। भावमिश्र ने तुलसी को हृदय रोगों में लाभकारी रक्त विकार को दूर करने वाली बताया है। सुश्रुत ने भी इसे रोगनाशक, तेजवर्धक बात कफ-शोधक, छाती के रोगों में लाभदायक तथा आन्त्र क्रिया को स्वस्थ रखने वाली बताया है। पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान ने भी तुलसी को खाँसी ब्रांकाइटिस, निमोनियाँ, फ्लू, क्षय आदि रोगों में लाभदायक बताया है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि संसार की सभी चिकित्सा पद्धतियों में तुलसी के महत्त्व को स्वीकार किया गया है। आयुर्वेदिक, ऐलोपैथिक, यूनानी, होमियोपैथिक वाले सभी अपने-अपने ढंग से रोग निवारण और स्वास्थ्य सुधार के लिये तुलसी का उपभोग करते हैं। वैज्ञानिकों द्वारा की गई खोजों के आधार पर पता चला है कि तुलसी से प्राप्त होने वाला द्रव्य क्षय रोग के कीटाणुओं का नाशक होता है।

अधिकांश रोंगों में तुलसी बहुत ही प्रभावशाली सिद्ध हुई है। दैनिक जीवन में सामान्य रूप से भी इसका सेवन करते रहना बहुत ही हितकर होता है। जुकाम, बुखार, मलेरिया, इन्फ्लूएन्जा आदि में तुलसी का काढ़ा बनाकर देने से लाभ होता है। मलेरिया के लिये तो यह अमोघ औषधि है। जहाँ तुलसी होती है, वहाँ मच्छर नहीं रहते हैं। एक प्रयोग के अनुसार तुलसी का घोल पिचकारी से छिड़कने पर या तो मच्छर भाग जाते हैं या मर जाते हैं। तुलसी को शरीर पर मलकर सोया जाय तो मच्छर नहीं काटते।

आमाशय और आँतों पर तुलसी का अनुकूल प्रभाव पड़ता है। इसके नियमित सेवन से पाचन संस्थान भली प्रकार काम करता है। मन्दाग्नि दूर होती है। पेट के कीड़े नष्ट हो जाते हैं। प्रातःकाल तुलसी के चार-पाँच पत्ते चबाकर शीतल जल पीने से शरीर के कई दोष दूर होते हैं। ओज, तेज, मेधा, बल की वृद्धि होती है। आमाशय जिगर, हृदय, छाती के रोगों में लाभ होता है। पुराण के अनुसार जो प्रातः मध्यान्ह और संध्या तीनों समय तुलसी का सेवन करता है, उसकी काया उसी तरह शुद्ध हो जाती है जैसे सैकड़ों चान्द्रायण व्रतों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से होती है। रक्त विकार फोड़े-फुन्सियों चर्म रोगों में भी इसका लाभदायक प्रभाव पड़ता है। इसके लिये तुलसी का सेवन और इसका लेप दोनों ही उपयोगी रहते हैं।

इस तरह तुलसी बीमारियों के निवारण के लिये अपने आप में एक परिपूर्ण औषधि है। प्रायः सभी रोगों में यह प्रभावकारी सिद्ध हुई है क्योंकि इसमें एक महत्त्वपूर्ण गुण है। शरीर से विषैले तत्त्वों का शमन करना और शरीर की कार्य प्रणाली को स्वस्थ, सशक्त बनाना। विभिन्न रोग शरीर में विजातीय पदार्थ इकट्ठे हो जाने, या रोग कीटाणुओं के बढ़ जाने अथवा शरीर के अक्षम हो जाने से ही पैदा होते हैं। तुलसी इन तीनों का निवारण करती है। यह शरीर को शुद्ध करती है, कीटाणुओं को नष्ट करती है और शरीर को शक्तिशाली समर्थ बनाती है।

शरीर-शोधन के साथ-साथ तुलसी मानसिक शुद्धि के लिये भी काफी प्रभावशाली है। सर्व प्रथम शरीर की अशुद्धि ही मन की अशुद्धि का कारण होती है। तुलसी इसे दूर करती है और स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन काम करता है। तुलसी सूक्ष्म रूप से शान्ति, सात्विकता, निर्मलता, शीतलता के गुणों से युक्त होती है। आप कुछ समय के लिये तुलसी के उपवन में बैठ जायें आपको तत्काल ही शान्ति मिलेगी। इसलिये आध्यात्मिक साधनाओं से तुलसी का अनन्य सम्बन्ध है। तुलसी के सेवन, उसकी सेवा पूजा, सान्निध्य रखने से सात्विकता की वृद्धि होती है और आत्मिक गुण बढ़ते हैं। जिस तरह शरीरगत दोषों को तुलसी दूर करती है, उसी तरह मानसिक दोषों को भी दूर कर सद्गुणों का विकास करने में लाभप्रद होती है। अक्सर तुलसी का माला, कण्ठी आदि शरीर में धारण करने का विधान है हमारे यहाँ। यह इसी ठोस सिद्धान्त पर आधारित है। हमारे यहाँ ही नहीं विदेशों में भी इसका आध्यात्मिक कार्यों में उपयोग होता है। तुलसी की लकड़ी को किसी भी रूप में शरीर में धारण करने पर यह शान्तिदायक सिद्ध होती है। मन्दिरों में तुलसीदल युक्त चरणोदक दिया जाता है, इससे क्रोध और अहंकार, उत्तेजनायें शान्त होते हैं। नम्रता पैदा होती है। तुलसी का स्पर्श कर आने वाली वायु से पवित्र भावनायें जाग्रत होती हैं। सूक्ष्म प्रेरणाओं को ग्रहण करने की सामर्थ्य प्राप्त होती है।

हमारे यहाँ दैनिक जीवन में तुलसी का सम्पर्क बनाये रखने के लिये ही पूर्वज-मनीषियों ने इसे धार्मिक-मान्यता दी थी। घरों में तुलसी के विरवा लगाना, जल चढ़ाना, उनका पूजन करना, परिक्रमा करना आदि गृहस्थ के लिये आवश्यक धर्म कर्त्तव्य के रूप में माना गया है। इन सब के पीछे ऋषियों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण और उनके जीवन का लम्बा अनुभव ही था।

खेद है हम दिनों-दिन इस लाभदायक पौधे को और इसके विज्ञान सम्मत गुणों को भूलते जा रहे हैं। थोड़ा बहुत उपयोग इसका धार्मिक क्षेत्र में रह गया है, वह भी केवल पूजा, तुलसी विवाह, जल चढ़ा देने तक ही सीमित रह गया है। हमारे घरों में से इसका निवास उठता जा रहा है। सामान्य बीमारियों में भी हम इस गुणकारी औषधि को छोड़कर डाक्टरों के पास दौड़े जाते हैं और अपना धन लुटाते हैं। यदि हम थोड़ा-बहुत भी ध्यान घर में तुलसी के उपवन लगाने में लगावें और आवश्यकता पड़ने पर इसे ही दवा रूप में लें या दैनिक उपयोग करें तो हमारा शरीर और मन दोनों ही शुद्ध और पुष्ट हों। हमारे घर के आस-पास का वातावरण भी शुद्ध निर्मल और शान्तिदायक बने। तुलसी हमारे दैनिक जीवन में बहुत ही उपयोगी है। हमें इसके महत्त्व को समझकर तुलसी का उत्पादन और उसका उपयोग बढ़ाने का प्रयत्न करना ही चाहिये।

सुगन्ध और दुर्गन्ध भी स्वास्थ्य को प्रभावित करती है

मस्तिष्क को ऊर्जा तन्त्र माना गया है। हृदय उसके लिये ईंधन जुटाता है। मस्तिष्कीय संरचना कैसी ही विलक्षण क्यों न हो, इसे आवश्यक जानकारियाँ प्राप्त करने और ज्ञान सम्पदा बढ़ाने के लिये ज्ञानेन्द्रियों पर निर्भर रहना पड़ता है। आम धारणा यह है कि कान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और आँख की भूमिका अन्य इन्द्रियों की तुलना में अधिक है।

जिनके कान ठीक काम नहीं करते वे बहरे लोग बोलना भी नहीं सीख पाते क्योंकि शब्दोच्चार सुनने और उनका अनुकरण करने से ही बोलने का अभ्यास आरम्भ होता है। जो सुनेंगे ही नहीं उनका मस्तिष्क शब्द ध्वनि और उसके साथ जुड़े हुये तात्पर्य को समझने में समर्थ न होगा इसलये बोलने का आधार न बन सकेगा और बहरे को गूँगा ही रहना पड़ेगा।

आँख से दृश्य देखते हैं। वस्तुओं का स्वरूप समझ में आता है साथ ही उसके गुण एवं प्रयोग की जानकारी भी मिलती है। पढ़ने-लिखने में कान को तरह आँख का भी योगदान रहता है। ज्ञानवृद्धि में शिक्षा का महत्त्व माना जाता है। पुस्तकें पढ़ने में आँख और अध्यापक का मार्ग दर्शन समझने में कान सहायता करते हैं। पहचानने, वर्गीकरण करने में आँखों की सहायता लेनी पड़ती है। स्मृतियों को संजोये रख सकना बहुत करके दृश्यों पर आधारित है।

इतना सब होते हुये भी नाक की अपनी विशेषता है। उसकी क्षमता सूक्ष्म है तो भी इतनी अधिक है कि वह अचेतन तक को प्रभावित करने को सामर्थ्य रखती है। गंध की ज्ञानवृद्धि में कितनी बड़ी भूमिका है, इस प्रश्न के उत्तर में हमें अचेतन की महत्ता और क्षमता को समझना होगा। ज्ञान भंडार मात्र आँख और कान से ही नहीं भरता उसमें गंध का भी योगदान रहता है। क्रमिक मानवी प्रगति में आँख और कान का महत्त्व बढ़ गया है। प्रत्यक्ष के साथ व्यवहार अब अधिक चल पड़ा है। इसलिये प्रत्यक्ष ही सब कुछ प्रतीत होने लगा है, इससे बौद्धिक परिधि के मनःक्षेत्र को विकसित करने में सहायता मिली है। फिर भी अचेतन को जिन परोक्ष जानकारियों की आवश्यकता होती है, उनकी पूर्ति के लिये इन दो प्रमुख समझी जाने वाली इन्द्रियों से काम नहीं चलता है। अचेतन पर सर्वाधिक प्रभाव गन्ध का पड़ता है। इस दृष्टि से नासिका की महत्ता अधिक सिद्ध होती है। नासिका को भगवान ने व्यर्थ नहीं बनाया वह आँख और कानों के बीच इसलिये अवस्थित है कि अचेतन को आवश्यक जानकारियाँ एवं उत्तेजना प्रदान करने का काम करती रहें। गंध की महत्ता दर्शन या श्रवण से कम नहीं अधिक ही ठहरती है क्योंकि जीवन को समर्थ और प्रखर बनाने में मस्तिष्क के सचेतन भाग से अचेतन का महत्त्व किसी भी प्रकार कम नहीं है। इस क्षेत्र को प्रभावित करने में गंध का असामान्य योगदान होता है।

प्राणियों के विकास क्रम पर दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है कि प्रागैतिहासिक काल के जीवधारी निर्वाह व्यवस्था जुटाने, कठिनाइयों से निपटने ओर सहयोग बढ़ाने में घ्राण शक्ति का ही सबसे अधिक उपयोग करते रहे हैं। आँख और कान का विकास तो बहुत बाद में हुआ है। प्रारम्भ में वे गौण ही रहें आगे चलकर उनने प्रमुखता प्राप्त कर ली यह दूसरी बात है।

पशु-पक्षियों की जीवनचर्या में अभी भी घ्राणशक्ति का ही प्रमुख योगदान रहता है। हिंस्र पशु अपना शिकार ढूढ़ने और जिन पर आक्रमण की आशंका है, वह उसी आधार पर खतरा समझने में समर्थ होते हैं। सिंह व्याघ्र आदि भी इसी आधार पर यह पता चलता है कि उन्हें क्या शिकार किस दिशा में, कितनी दूरी पर क्या करता हुआ मिलेगा। विभिन्न पशुओं के शरीर से निकलने वाली गन्धों की तुलना में उनकी घ्राण शक्ति अपने काम के पशुओं की गन्ध अधिक अच्छी तरह पहचानती है। इसलिये आक्रमण करने और शिकार पकड़ने में जिस पूर्व जानकारी की आवश्यकता है, उसे उनकी नासिका जुटाती रहती है।

हिरन, खरगोश, सुअर आदि का घ्राण हिंस्र वर्ग के पेट में जान पड़ता है। उन्हें आत्म रक्षा का अवसर मिलता रहे इस सतर्कता में उनकी भी घ्राण शक्ति ही काम करती है। इस आधार पर वे जान लेते हैं कि आक्रामक कहाँ और किस स्थिति में है ? संकट से बचने के लिये वे दौड़ने, छिपने, दिशा बदलने की सुरक्षात्मक कार्यवाही करने लगते हैं। इसी आधार पर उन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह भी पता चलता है कि आक्रामक भूखा है या नहीं। भूखे होने पर ही वे आक्रमण करते हैं। भूख के शरीर से अन्य प्रकार की गन्ध आती है। यही कारण है कि जब खतरा देखते हैं तभी चौकन्ने होते हैं अन्यथा भरे पेट के सिंह आस-पास भी शिकार हो सकने वाले प्राणी निर्द्वन्द होकर विचरण करते रहते हैं।

कुत्ते, बिल्ली और भेड़िये अपने शरीर में एक विशेष प्रकार की गन्ध निकालते हैं। उसका प्रभाव जितने क्षेत्र में रहता है। उतने में उस बिरादरी के अन्य प्राणी प्रवेश नहीं करते, करते हैं तो यह समझकर करते हैं कि लड़कर ही उस क्षेत्र में पैर जमाये जा सकते हैं। जिसका आधिपत्य है वह आक्रमण करेगा। इस क्षेत्रीय बँटवारे के आधार पर उन वर्गों वाले अपने लिये अन्य सुरक्षित क्षेत्र ढूँढ़ते हैं अथवा आक्रमण के लिये तैयार होकर हड़पने या मर मिटने के लिये तैयार होते हैं। अक्रामक पशुओं के अपने क्षेत्र इसी आधार पर बनते और घटते-बढ़ते रहते हैं। इस प्रयोजन में नासिका की समर्थता ही उनका मार्गदर्शन करती है। शिकार के अन्य क्षेत्र में घुस जाने पर प्रायः आक्रामक वापिस लौट पड़ते हैं दूसरे के अधिकार क्षेत्र में शिकार पकड़ने पर उन्हें क्षेत्र के अधिकारी को रुष्ट करने का खतरा उठाना पड़ेगा।

कुत्ते इस सम्बन्ध में और भी आगे हैं। उनकी घ्राण शक्ति अन्य पशुओं की तुलना में अधिक होती है। मनुष्य में तो सैकड़ों गुनी अधिक है। इसलिये प्राचीन काल से शिकारी लोग कुत्तों के झुण्ड साथ लेकर चलते थे। अभी भी उनका प्रयोग अपराधियों को पकड़ने के लिये पुलिस द्वारा किया जाता है।

पक्षियों के झुण्ड बनाकर रहने, अपने परिवार वालों को पहचानने में आँखों से नहीं नासिका से सहायता मिलती है। उनमें से नेता कौन है, किसका अनुकरण करना है, यह निर्णय वे प्रमुख की जानी-पहचानी गन्ध से ही करते हैं। चिड़ियों के परिवार और दम्पत्ति जीवन में जिस पहचान की आवश्यकता पड़ती है, उसे वे घ्राण शक्ति के सहारे ही पूरा करते हैं। मधुमक्खियों, तितलियों और चीटियों की अति जटिल जीवनचर्या इसी आधार पर चलती है। तितलियों को नर-मादा पुष्पों के बीच निषेचन की दलाली करनी पड़ती है। वे नर वर्ग का पराग अपने पैरों और पंखों में लपेटकर मादा वर्ग तक पहुँचाती है। उन्हें इन दोनों वर्गों का अन्तर गन्ध भिन्नता के आधार पर ही करना पड़ता है। मधुमक्खियाँ इसी आधार पर तोड़ लेती हैं कि उन्हें किस दिशा में खिले हुये किन पुष्पों से मधुसंचय में सुविधा रहेगी। चींटियाँ मिठास का पता लगने और वहाँ तक टेढ़े-मेढ़े रास्ते पार करके भी जो पहुँचने में अपनी नासिका से ही सहायता लेती है।

मछलियाँ अपने तैरते अण्डे बच्चों की स्थिति इसी आधार पर समझती और उनकी सहायता करती रहती हैं। इसी प्रकार अन्य जल जन्तु भी बहते प्रवाह एवं गहरे जलाशयों में रहते हुये भी अपना परिवार सँभालते, शिकार पकड़ते और आक्रामकों से जान बचाते रहते हैं। वंशवृद्धि के लिये उपयुक्त समय, स्थान और साथी ढूँढ़ निकालने का सुयोग्य बिठाने में भी उन्हें शरीरों से निकलने वाली गन्ध के सहारे ही काम चलाना पड़ता है।

पशु-पक्षियों से लेकर कृमि-कीटकों तक में यथा समय मादा वर्ग के शरीरों से एक विशेष प्रकार की तेज गन्ध निकलती है। वह जितने क्षेत्र में फैलती हैं, उसमें रहने वाले नर वर्ग को उत्तेजित एवं आकर्षित करती है। निमन्त्रण पाते ही वे दौड़ पड़ते हैं और वंश वृद्धि के कार्य में जुट पड़ते हैं। गन्ध समाप्त होते ही आकर्षण भी समाप्त हो जाता है और वे अपना-अपना रास्ता पकड़ते हैं।

मौसम बदलने और कोई प्राकृतिक प्रकोप उभरने का पूर्वाभास कितने ही प्राणियों को होता है। वे संकट आने से पूर्व ही अपना स्थान बदलते और सुरक्षित स्थान पर पहुँचने का प्रयत्न करते हैं। इसे उनकी अतीन्द्रिय क्षमता द्वारा जाना जा सकता है। यह क्या है और कहाँ से उत्पन्न होती है ? इसका रहस्य खोजने वालों का निष्कर्ष यह है कि यह उस गन्ध का चमत्कार है, जो घटना क्रम बदलने के साथ-साथ अपना स्वरूप एवं स्तर बदलती रहती है। जिनकी घ्राण शक्ति पैनी है, वे उसे पहचान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लेते हैं और संकट से बचने का प्रयत्न करते हैं।

कृमि कीटकों के यौनाचार का संयोग बिठाने में मादा वर्ग के शरीर से निकलने वाली जिस गन्ध की प्रधान भूमिका रहती है, उसे फैरोमोन' रसायन कहा जाता है। इसे अब वैज्ञानिक विधि से उन शरीरों से पृथक् भी किया जाने लगा है उसे कृत्रिम तरीकों से भी बनाया जाने लगा है, इस गन्ध को जहाँ बखेरा जाता है, वहाँ उस वर्ग का नर समुदाय दूर-दूर से आकर इकट्ठा होने लगता है। इस आधार पर उन्हें पकड़ने या मारने का उद्देश्य पूरा किया जाता है। नर वर्ग भी अपनी परिपक्वता की छाप छोड़ता है और समूह की अनेकों मादायें उसके हरम में सम्मिलित होती हैं। कोई नया नर उभरता है तो उस परिपक्वता के दबाव में अपना मन भर लेता है। या तो बिना दाम्पत्ति सहयोग के ही काम चला लेता है या फिर अन्यत्र जाने या प्रमुख को खदेड़ने की बात सोचता है। नव युवकों को क्या करना चाहिये इसके लिये उसे प्रमुख की गन्ध प्रखरता को देखते हुये ही अनुमान लगाना पड़ता है। ऐसा भी देखा गया है कि किसी की प्रखरता के सामने उस सुदाय का मन ही ठण्डा पड़ जाता है। रानी मधुमक्खी की प्रजनन शक्ति इतनी प्रखर होती है कि उस छत्ते की अन्य मादाओं में प्रजनन की आकांक्षायें ही नहीं उभरती, वे अपना चुपचाप श्रम करती और दिन काटती रहती हैं। नरों का दबाव भी अपने झुण्ड के अन्य नरों को निस्पृह बनाकर रख देता है।

मनुष्य की घ्राण शक्ति आँख और कान की प्रखरता मिलने के करण दब गयी है। काम न मिलने, उपयोग न होने पर ही वस्तु निकम्मी हो जाती है। अपनी नाक का भी यही हाल है वह सांस लेने भर का काम करती है। सर्दी जुकाम होने पर ही उसके अस्तित्व का पता चलता है। इतने पर भी वह अचेतन अनेकानेक परोक्ष जानकारियाँ अभी भी देती रहती है। यदि वस्तुतः वह अपनी क्षमता गँवा बैठें तो मनुष्य बुद्धिमान दीखते हुये भी अचेतन क्षेत्र के समस्वरता गँवा बैठेगा और बुद्धू या सनकी बनने लगेगा।

प्राण विद्युत की इन दिनों बहुत चर्चा है। शरीर में पाई जाने वाली बिजली के ऊपर गहरे अनुसंधान चल रहे हैं। इस सम्पर्क में नये तथ्य यह सामने आये हैं कि यह प्राण विद्युत ताप, शब्द या प्रकाश तरंगों के रूप में पहचानी तो जाती है। पर वस्तुतः होती गन्ध की प्रतिक्रिया भर ही है। ऋषि आश्रमों में सिंह गाय के एक घाट पानी पीने में वातावरण की जिस विशिष्टता पर दृष्टिपात किया गया है, अब उसे गन्ध विशेष के रूप में निरूपित किया जा रहा है। व्यक्ति विशेष के शरीर से जो गन्ध निकलती है, उस आधार पर व्यक्तित्व के अनेक पक्षों का पता चलता है। यहाँ तक कि शारीरिक एवं मानसिक रोगों तक का स्वरूप समझा जा सकता है। चिकित्सा क्षेत्र एवं मानसिक रोगों तक का स्वरूप समझा जा सकता है। चिकित्सा क्षेत्र में अब तक मल, मूत्र, रक्त आदि की परीक्षा ही निदान के लिये प्रयुक्त होती थी, अब इसमें रोगी के शरीर से निकलने वाली गन्ध को भी जाँच पड़ताल का एक माध्यम माना जाने लगा है। हर रोग के रोगी में एक विशेष प्रकार की गन्ध पाई जाती है, जिसे घ्राण शक्ति विकसित कर लेने वाला कोई भी चिकित्सक सहज ही पहचान सकता है और रोग के स्वरूप को समझने की गुत्थी सुलझा सकता है।

इसी प्रकार गन्ध चिकित्सा की एक उपचार पद्धति विनिर्मित की जा रही है। येल विश्व विद्यालय के शोधकर्त्ता डा० जुडिथ रोडन ने सिद्ध किया है कि भोजन में स्वाद ही नहीं उसकी गन्ध भी खाने वालों के शरीर में उतार-चढ़ाव उत्पन्न करती है। कपड़ों में घर आँगन में रहने वाली गन्ध का भी मनुष्य के स्वास्थ्य एवं सन्तुलन पर प्रभाव पड़ते देखा गया है। परीक्षण में प्रसंगों का उल्लेख करते हुये रोडन ने लिखा है— "एक व्यक्ति को चाकलेट की गन्ध मात्र से स्वास्थ्य सुधरा और वजन बढ़ा। चर्बी घटाने एवं शर्कराजन्य रोगों पर नियन्त्रण पाने में गन्ध सम्पर्क से उत्साहवर्धक परिणाम देखने को मिला है।"

जार्ज टाउन यूनिवर्सिटी मेडीकल सेन्टर के अध्यक्ष जीव विज्ञानी राबर्ट हेन सिन ने अपने प्रयोगों से सिद्ध किया है कि श्रमजीवियों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थकान घटाने या बढ़ाने में कारखाने कार्यालयों में पाई जाने वाली गन्ध का भी हाथ रहता है। अस्तु श्रमिकों का तनाव घटाने के लिये कार्यालयों में उपयुक्त स्तर की गन्ध का छिड़काव होना चाहिये।

सुगन्ध उत्पादन में अरबों-खरबों की राशि खर्च होती है। इनका उपयोग आमतौर से भोजन, वस्त्र, घर को नासिका प्रिय बनाने के लिये किया जाता है। अब इस सन्दर्भ में एक नया अध्याय जुड़ा है कि शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य सुधार के लिये किन प्राकृतिक या कृत्रिम गन्धों का उपयोग किया जाय, यहाँ यह समझना भी उपयुक्त होगा कि मनुष्य के स्वभाव, आचरण एवं दृष्टिकोण को भी विशेष गन्ध प्रभावित करती है। पूजा उपचार में इसी हेतु विभिन्न गन्धों का प्रबन्ध किया जाता है। अगरबत्ती, धूपबत्ती, कपूर चन्दन, दीपक, हवन आदि को इसलिये भी अध्यात्म कृत्यों में सम्मिलित रखा गया है कि उनके सहारे चेतन, अचेतन और सुपर चेतन को उपयुक्त दिशा में विकसित होने का अवसर मिलता है।

दुर्गन्ध के साथ जुड़े रहने वाली अहितकर सम्भावनाओं से सभी परिचित हैं। सड़न से उठने वाली कुरुचिपूर्ण गन्ध यह बताती है कि यहाँ रहने में खैर नहीं। उसे हटाया जाय या स्वयं भागा जाय। अन्यथा रुग्णता का संकट सिर चढ़ेगा। कार्य क्षमता घटेगी और मानसिक सन्तुलन बिगड़ेगा।

इत्र फुलेल आदि का इन दिनों बहुत प्रचलन है। यह कृत्रिम और उत्तेजक होने से उलटी प्रक्रिया भी उत्पन्न कर सकते हैं। सात्विक एवं उपयोगी गन्ध है, जो वृक्ष वनस्पतियों और खिले फूलों से, निकलती है। इसे भी जीवनोपयोगी आवश्यकताओं में सम्मिलित रखा जाना चाहिये। ऐसे क्षेत्र में रहना चाहिये, जहाँ ऐसा सुव्यवस्थित वातावरण हो अथवा अपने घरों में पुष्पोद्यान लगाने का प्रबन्ध करना चाहिये। इस व्यवस्था को भी सुविधा एवं सुसज्जा की तरह एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता समझा जाना चाहिये। इससे वातावरण की शोभा सुषमा भी बनी रहेगी और प्रकृति के सान्निध्य में रहने का अवसर मिलेगा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी बहुमूल्य लाभ भी हस्तगत होगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वच्छता—मनुष्यता का गौरव

मनुष्य के प्रारम्भिक गुणों में स्वच्छता का प्रथम स्थान है। दूसरे जीवों में इस प्रवृत्ति की कमी पाई जाती है। वे अपने शरीर एवं निवास-स्थान को उतना स्वच्छ नहीं रख पाते, जितना एक सुरुचिपूर्ण प्राणी के लिए आवश्यक है। मनुष्य की अनेक विशेषताओं में एक विशेषता यह भी है कि वह मलीनता से घृणा करता है और स्वच्छता से प्रेम। स्वभावतः उसे सफाई पसन्द है। नाक और आँख इस सम्बन्ध में उसे सदा सतर्क करती रहती हैं। गन्दगी देखने में अप्रिय लगती है। जैसे ही हम किसी गन्दी, घिनौनी चीजों को देखते हैं, चित्त में घृणा उत्पन्न होती है और उसे सुधारने या छोड़ने की इच्छा होती है। गन्दी चीजों का स्वरूप ही घृणित नहीं होता वरन् उसे स्पर्श करके बहने वाली वायु भी दुर्गन्धित हो जाती है। नाक तुरन्त ही उसे पहचान लेती है। दुर्गन्ध सूँघते ही घृणा होती है, उसे उस वस्तु के दूर हटने को मन करता है। इसका तात्पर्य है कि मानव-प्रकृति ईश्वर ने ऐसी बनाई है, जिसके अनुसार उसे गन्दगी को दूर करने व स्वच्छता अपनाने की प्रेरणा मिलती रहे।

इस ईश्वर प्रदत्त-गुण का हमें अधिकाधिक विकास एवम् सदुपयोग करना चाहिये। इसी में मनुष्यता का गौरव एवम् सम्मान है। हमारा रुचि ऐसी परिष्कृत होनी चाहिए, जिसमें गन्दगी असह्य हो उठे। स्वच्छता प्राप्ति के लिए कितना ही श्रम करना पड़े, कष्ट उठाना पड़े तो भी सङ्कोच न हो। हम यह अनुभव करें कि स्वच्छता जैसी श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिए जो कष्ट सहा जाय जो भी खर्च किया जाय वह कम ही है क्योंकि स्वच्छता से होने वाली आत्म तुष्टि की तुलना में गन्दगी हटाने की कठिनाई नगण्य मानी जायेगी।

स्वच्छता और स्वास्थ्य का अनन्य सम्बन्ध

स्वच्छता का स्वास्थ्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है। आरोग्य को नष्ट करने के जितने भी कारण हैं, उनमें गन्दगी प्रमुख है। बीमारियाँ गन्दगी में ही पलती हैं। कूड़े-कचरे के ढेर जहाँ जमा रहते हैं, मल-मूत्र सड़ता है, नालियों में कीचड़ भरी रहती है, सीलन और सड़न जहाँ बनी रहती है, वहीं मक्खी, मच्छर, पिस्सू, खटमल जैसे बीमारियाँ उत्पन्न करने वाले कीड़े उत्पन्न होते हैं। उन्हें मारने की दवायें छिड़कना तब तक बेकार है, जब तक गन्दगी को हटाया न जाय। दवा आदि से इन्हें मारा जाय तो भी क्या हुआ पैदावार न रुके तो अगले दिन वे उतने ही और पैदा हो जाते हैं, जितने मारे या हटाये गये थे। कहना न होगा कि हैजा, मलेरिया, दस्त, पेट के कीड़े, चेचक, खुजली रक्त-विकार जैसे कितने ही रोग इन मक्खी, मच्छर जैसे कीड़ों से ही फैलते हैं। मलेरिया का विष मच्छर फैलाते हैं, मक्खियाँ हैजा जैसी संक्रामक बीमारी की अग्रदूत है। प्लेग फैलाने में पिस्सुओं का सबसे बड़ा हाथ रहता है। खटमल खून पीते ही नहीं वरन् रक्त को विषैला भी करते हैं। इन कीड़ों के द्वारा पग-पग पर जो कष्ट होता है असुविधा और बेचैनी उठानी पड़ती है, उसका कष्ट तो अलग ही दुःख देता रहता है।

निवास-स्थान तथा उसके आस-पास गन्दगी का रहना स्वास्थ्य के लिये स्पष्ट खतरा है। गन्दगी जितनी निकट आती जाती है, उतनी ही उसकी भयङ्करता और बढ़ती जाती है। आग की तरह वह जितनी समीप आवेगी उतनी ही अधिक घातक बनती जायेगी। कपड़े मैले-कुचैले होंगे तो उनकी दुर्गन्ध और कुरूपता हर किसी को अखरेगी। वस्त्र चाहे कितना ही कीमती क्यों न हों, यदि मैला-कुचैला होगा तो उसकी कीमत देखने वाले की आँखों में दो कौड़ी की भी न रहेगी क्योंकि वह बेजान, बेजवान होते हुए भी पहनने वाले की—अपने मालिक की भरपेट चुगली कर रहा होगा, कह रहा होगा—मेरा कीमती होना भी इस गन्दे आदमी ने बेकार बना दिया।

मलीनता एक कलङ्क

मैला वस्त्र, पहनने वाले के आलसी और कुरुचिपूर्ण स्वभाव वाला होने का खुला विज्ञापन है। दुकानों पर साइन बोर्ड लटकते हैं। वे बताते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं कि यहाँ क्या चीज मिलती है ? ठीक उसी प्रकार कपड़ों की मलीनता यह बताती है कि यह व्यक्ति आलसी, गँवार, फूहड़, निर्लज्ज और घटिया स्तर का आदमी है। अपने शरीर पर रहने वाले कपड़ों तक को यह स्वच्छ नहीं रख सकता, तब उससे अच्छे व्यवहार की, अच्छे काम की, ऊँचे विचारों की किसी को आशा नहीं करनी चाहिये। जैसा कि इसका पहनाव फूहड़पन से लदा है, उसी प्रकार इसका व्यवहार एवम् कर्तृत्व भी गन्दा, फूहड़, अस्त-व्यस्त एवम् घटिया होगा इतनी बातों का भेद जासूस की तरह अपने कपड़े निकाल लेते हैं और जो भी सम्पर्क में आता है, उसी से इतनी बातें चुप-चाप कह देते हैं। जिसके बारे में कपड़ों जैसे दिन-रात के सहचर ने इतनी चुगली की हो उसके बारे में दूसरों के मन में हुए, घृणा एवम् अविश्वास के विचार उत्पन्न होना कुछ असम्भव नहीं है।

शरीर की गन्दगी इससे भी बढ़कर भयावह है कि जिसके दाँतों पर मैल जमा है, बात करते समय दाँत और होठों पर चिपचिपाहट के तार उठते हैं, होठों के किनारों पर थूक जमा होता है, बात करते समय थूक के छींटे उड़ते हैं, ऐसा घिनौना आदमी चाहे वे शास्त्र का ज्ञान भी बाँट रहा होगा, हितकर और उपयोगी बात कर रहा होगा तो उसे सुनने की इच्छा न होगी, क्योंकि मस्तिष्क पीछे कोई बात सुनेगा, समझेगा पहले तो देखते ही आँखें अश्रद्धा उत्पन्न कर देंगी और मस्तिष्क से चुगली कर रही होंगी कि जो अपने मुख तक को स्वच्छ नहीं रख सकता, जिसकी गन्दगी इस हद तक बढ़ी-चढ़ी है कि दाँत, जीभ, होठ तक को स्वच्छ न रखा जा सके, उसके विचार सुनने से क्या लाभ ? जो कह रहा होगा वह ऊँटपटांग बातें ही होंगी।

स्नान में जल्दबाजी या कमी करने से दुर्गन्ध उत्पन्न होती है। वह पास बैठने वालों से कहती है—हटो-हटो यहाँ से दूर भागों पड़े हुए कूड़े के ढेर की तरह गन्दा इन्सान इस लायक नहीं कि कोई भला आदमी इसके पास बैठे।" यह तो स्पष्ट ही है कि मलीनता बीमारियाँ उत्पन्न करती है। जो अच्छी तरह नहाता, धोता नहीं, जिसकी त्वचा पर मैल जमा रहता है, वह सड़कर कई प्रकार के चर्म-रोग उत्पन्न करता है। खाज, खुजली, दाद, छाजन पित्ती, फोड़े-फुन्सी जैसी कितनी ही बीमारियाँ अक्सर गन्दे लोगों को ही होती हैं। त्वचा पर जमा हुआ मल रोम कूपों के द्वारा अपना विष शरीर के भीतर भेजता रहता है, उससे माँस और रक्त में पहुँच हुआ विषैला पदार्थ वे रोग उत्पन्न करता है, जो वहाँ से उत्पन्न हो सकते हैं। शिर तथा अन्य स्थानों के बालों की जड़ों के नीचे लोग ठीक तरह सफाई नहीं करते। नहाते समय दो-चार लोटा पानी डाल लेते हैं, नीचे मैल जमा रहता है, ऐसे लोगों के शिर में सफेद पर्त की भूसी-सी जमती रहती है, खुरन्ट पड़ते रहते हैं, बगल में बुरी तरह की भभक उठती है, जंघाओं में इतनी मलीनता रहती है कि दाद, खाज सरीखे चर्म-रोग तो क्या वहाँ पनपने वाले बारीक रोग के कीटाणु कई तरह के मूत्र-रोग तक उत्पन्न कर देते हैं। जुँए काटने पर जैसे सिर में खुजली मचती है वैसे ही इन अदृश्य कीटाणुओं के काटने से कामोत्तेजना बढ़ती है और स्वप्न-दोष आदि कई तरह के रोग उत्पन्न होते हैं। स्वप्न-दोष की बीमारी में बहुत करके जंघाओं की मलीनता ही प्रमुख कारण होती है। काम सेवन के उपरान्त इन स्थानों में भरी रहने वाली गन्दगी आमतौर से स्त्रियों के गुप्त रोगों का कारण बनती है। मलीनता हमेशा सड़ती है और सड़न से विष उत्पन्न होता है। यह विष जहाँ भी रहेगा, वहाँ जलाने-गलाने एवम् तोड़-फोड़ करने की बात करेगा। इसी अदृश्य क्रिया का दृश्य-रूप बीमारी बनकर सामने आता है।

सड़ाँदों का आमन्त्रण

जिन्होंने आरोग्य का क, ख, ग, घ, भी जाना है, वे समझते हैं कि ६५ प्रतिशत बीमारियाँ पेट में भरी हुई गन्दगी कब्ज के कारण होती है। पेट में भरा हुआ मल निकाल बाहर नहीं किया जाता तो वह सड़ता है। सड़ने से विष उत्पन्न होता है और वह रक्त के साथ वायु के साथ मिलकर सारे शरीर में फैल जाता है। फिर जहाँ कहीं उसे जड़ जमाने की जगह मिल जाती है, वहाँ इकट्ठा होकर उन अङ्गों में भी पीड़ा—उत्पन्न करता है। हर बीमारी का यह एक ही कारण है। जिन स्थानों में कष्ट होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है, उनकी जानकारी की दृष्टि से रोगों के नाम अलग-अलग रखे गये हैं, पर वस्तुतः एक ही रोग इस शरीर में होता है और वह है पेट में इकट्ठे हुए मल की विषैली सड़न का किसी स्थान विशेष पर इकट्ठा हो जाना। स्थानीय कष्ट को दूर करने के लिए तात्कालिक परेशानी हटाने के लिये दवा-दारू के सामयिक उपचार भी हो सकते हैं, पर स्थायी चिकित्सा तो पेट की सफाई की ही है। जिसका पेट साफ रहेगा उसका रक्त शुद्ध होगा और जिसका रक्त शुद्ध है उस पर हवा में उड़ने वाले, छूत से फैलने वाले रोगों के कीटाणु भी असर न कर सकेंगे। शुद्ध रक्त में प्रवेश करते ही वे मर जायेंगे। संक्रामक छूत की बीमारियाँ उन्हीं पर असर करती है, जिनका रक्त अशुद्ध होता है। शुद्ध रक्त वाले को यदि साँप भी काट खाय तो उस पर असर न होगा।

गन्दगी चाहे कहीं भी क्यों न हो सड़ाँट ही उत्पन्न करेगी। पेट के भीतर, शरीर के बाहर, इन्द्रियों के छिद्रों में, जहाँ भी गन्दगी इकट्ठी होगी, वहीं विष विद्रूप पैदा होगा और अनिष्टकर उपद्रव खड़े करेगा। जिसे बीमार होना वह गन्दगी से दोस्ती जोड़ ले। गन्दगी अपनी सगी बहिन बीमारी को कुछ ही दिन में आमन्त्रित करके बुला लेगी। अपने स्वजन सम्बन्धी और निकटवर्ती लोगों में जिसे अपने लिये घृणा एवं अश्रद्धा उत्पन्न करनी हो वह गन्दा रहना आरम्भ कर दे हर कोई उससे नफरत करने लगेगा। बूढ़े आदमी, जिन्हें कफ खाँसी की शिकायत हो जाती है, यह व्यवस्था नहीं कर पाते कि उस कफ को कहाँ कैसे निकालकर डालें। हर जगह वे उसे डालते-पटकते रहते हैं, जहाँ सोते-बैठते रहते हैं, वहाँ के फर्श, दीवार गन्दे कर देते हैं। ऐसी दशा में वयोवृद्ध होने के कारण उनका जो आदर होना चाहिये था, वह तो दूर रहा, उलटे घर के छोटे-बड़े सभी सदस्य उनसे घृणा करने लगते हैं और मन ही मन मरने की मनौती मनाने लगते हैं। यही बात उन लोगों के बारे में भी होती है, जिन्हें जुकाम के कारण नाक या मुँह से कफ जाने लगता है पर वे उसे व्यवस्थित रूप से निकालने और यथास्थान गन्दगी रखने की कला से अनभिज्ञ होने के कारण जहाँ-तहाँ गन्दगी उड़ेलते रहते हैं। इससे घर तो नरक बनता ही है, उसमें रहने वाले सदस्यों का जी भी मिचलाने लगता है। शारीरिक न सही, उन्हें मानसिक कष्ट बहुत होता है।

शरीर मल का भण्डार है उसमें से कभी कम कभी ज्यादा मल तो निकलता ही रहता है। इसमें कोई अनहोनी बात नहीं है अचम्भे की बात तब होती है, जब मनुष्य जैसा सुरुचिपूर्ण प्राणी उस गन्दगी को हटाने में आलस करता है और उसे दूर हटाने की अपेक्षा अपने चारों ओर लपेट लेता है। यों स्वच्छता उसे भी अच्छी लगती है जो स्वयं गन्दा रहता है। किसी स्वच्छ व्यक्ति को देखता है तो प्रसन्नता और अस्वच्छ को देखकर अप्रसन्नता अनुभव करता है। यदा-कदा अपनी भी सफाई कर लेता है तो सन्तोष अनुभव करता है, इससे स्पष्ट है कि उसकी ईश्वर-प्रदत्त आन्तरिक सुरुचि उस हालत में भी मौजूद रहती है—मिटती नहीं—जिससे कि उसने अपने आपको गन्दे गलीज की स्थिति में पटक रखा है। आत्मा की पुकार एवं ईश्वरीय प्रेरणा को सहज ही भुलाया भी तो नहीं जा सकता है। कितनी ही गन्दी परिस्थितियों में क्यों न रहा जा रहा हो, अन्तःकरण स्वच्छता की ही माँग करता रहेगा। गन्दगी के प्रति उसका विरोध बना ही रहेगा। नाक-आँख कभी भी उस स्थिति में न पहुँच सकेगी, जब गन्दगी में प्रसन्नता और स्वच्छता में अप्रसन्नता अनुभव की जा सके। आखिर मनुष्य का प्रकृति-प्रदत्त स्वभाव सर्वथा बदल भी तो नहीं सकता।

मनुष्यता का प्रथम चिन्ह

मनुष्यता के प्रथम चिन्ह स्वच्छता की ओर हमें अधिक तत्परता के साथ आगे बढ़ना चाहिये। इस दिशा में जितनी प्रगति हो सकेगी उतना ही यह समझा जायेगा कि पशुता को छोड़ा जा रहा है। स्वच्छता में मानवता का सम्मान है। भले ही कोई व्यक्ति निर्धन हो, अभाव के कारण घटिया, कम या फटे-टूटे कपड़े पहनकर दिन गुजारता हो पर यदि उसके वस्त्र धुले हुए हैं, सलवट हटाने के लिए दबाये हुए हैं, फटी हुई जगह पर सिले हुए है, करीने से पहने हुये हैं, बटन ठीक तरह लगे हुए है तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आर्थिक गरीबी में भी दिल की अमीरी का इजहार कह रहे होंगे। ऐसा मनुष्य आर्थिक अभाव-ग्रस्त सिद्ध होते हुए भी व्यक्तित्व की दृष्टि से अपनी महत्ता अक्षुण्ण रख रहा होगा। वह दूसरों की सहानुभूति का पात्र हो ही सकता है, घृणा का नहीं।

शरीर, वस्त्र, घर, सामान इन सभी क्षेत्रों में जो मलीनता पाई जाती है, उसका कारण कोई भौतिक कठिनाई नहीं, मनुष्य का घटिया व्यक्तित्व ही एकमात्र कारण होता है। फुरसत न मिलना, नौकर न होना, घर के अन्य लोगों का ध्यान न देना आदि बहाने हो सकते हैं, तथ्य नहीं। तथ्य यह है कि स्वच्छता का मूल्य एवम् महत्व नहीं समझा गया। उसके अभाव में होने वाली हानि को नहीं जाना गया। यदि जाना जाता तो बहानेबाजी का रास्ता अपनाने की अपेक्षा आलस्य छोड़कर गन्दगी को हटाने के लिए परिश्रम किया होता। इसमें समय एवम् श्रम भी उतना नहीं पड़ता, आवश्यकता केवल सतर्कता की होती है। शारीरिक आलस्य जितनी गन्दगी फैलाता है, उससे ज्यादा मानसिक आलस्य का हाथ होता है। मन में गन्दगी के प्रति घृणा नहीं होती तो वह जमकर बैठने लगती है। यदि मन में सतर्कता रहे और यह भावना बनी रहे कि गन्दगी में लिपटकर हमें अपना व्यक्तित्व ओछा नहीं बनाना है तो अवश्य ही यह सूझता रहेगा कि कहाँ मलीनता एकत्रित हो गई और उसे किस प्रकार दूर किया जाय ? जब यह सूझता ही नहीं, तो उपाय करने का प्रश्न ही कहाँ से उठेगा ? जब तक हम किसी बात की हानि अनुभव नहीं करते, तब तक उसे छोड़ते नहीं और जब तक किसी बात का लाभ समझ में नहीं आता, तब तक उसे करने के लिए तैयार नहीं होते। सच बात यह है कि न तो हमने गन्दगी की हानि को समझा है और न स्वच्छता के लाभ को जाना है। इसलिये मनोभूमि ऐसी बन गई है कि उसे गन्दगी के साथ समझौता कर लेने जैसी कहा जा सकता है।

आँख के आगे कूड़े-करकट के ढेर लगे रहते हैं पर वे खटकते नहीं, घर में नाली, पाखाना, पेशाबघर बुरी तरह सड़ते रहते हैं पर वे अखरते नहीं। कपड़े गन्दे-गलीज रहते हैं पर उनमें कोई बुराई नहीं लगती। सामान बिखरा अस्त-व्यस्त पड़ा रहता है पर उसे सुव्यवस्थित रखने की सूझ सूझती ही नहीं। जैसा कुछ ढर्रा चल रहा है चलता रहता है। छतों में मकड़ी के जाले बढ़ते जाते हों पर उन्हें हटाने की कभी इच्छा नहीं होती। दीवाल-तिखालों में अनावश्यक कूड़ा-कवाड़ा भरा रहता है पर यह विचार नहीं किया जाता कि इसकी क्या उपयोगिता है ? पुरानी, टूटी, रद्दी, बेकार निकम्मी चीजें घर के कोने में भरी रहती है। वे जो कभी किसी काम में आने वाली नहीं हैं ऐसी चीजें ढेरों जगह घेरे पड़ी रहती हैं और अपनी छाया में गन्दगी के पर्त जमा करती रहती हैं। यदि दृष्टिकोण परिष्कृत हो और ऐसा कबाड़ी की दुकान जैसा घर अनुपयुक्त लगे तो यह सूझ-सूझेगी ही कि क्या चीज रखे जाने योग्य है, क्या हटाये जाने योग्य। किस सामान के लिए कौन-सा क्या स्थान उपयुक्त और कौन-सा अनुपयुक्त ? यदि सुरुचि जागृत हो और हर वस्तु यथास्थान-सुव्यवस्थित ढङ्ग से रखने पर उत्पन्न होने वाली सुन्दरता भी यदि अन्तःकरण को आकर्षित करती हो, तो कोई कारण नहीं कि वह उत्साह न उठे, जिसके कारण बात की बात में यह सारा कवाड़खाना एक सुरुचिपूर्ण सद्गृहस्थ के सुरम्य निवास का रूप धारण न कर ले।

सावधानी बरतें निगाह रक्खें

चोर वहाँ सेंध लगाते हैं, जहाँ उन पर किसी की निगाह न पड़ती हो। सोते हुए बेखबर लोगों के घरों में ही अक्सर चोरी होती है। जो जागते रहते हैं, सावधान रहते हैं, चोरों के प्रवेश न होने देने के बारे में सावधानी बरतते हैं, उनके यहाँ चोरी कदाचित् ही होती है। गन्दगी के सम्बन्ध में भी यही बात है। जो उसकी उपेक्षा करते हैं, हटाने का प्रबन्ध नहीं करते, आलस और उदासीनता का दृष्टिकोण अपनाये रहते हैं, उनके घर में धीरे-धीरे मलीनता जमा होती चली जाती है, पर जिनकी आँखों में वह इतनी अखरे कि एक क्षण भी बर्दाश्त न कर सकें, उसे हटाना अपना प्रथम कर्त्तव्य समझें तो फिर यह सम्भव नहीं कि वहाँ गन्दगी के पैर जम सकें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रक्त में ऐसे श्वेत कण होते हैं, जो बाहर से रोग कृमि प्रवेश होते ही उनसे लड़ने को तैयार हो जाते हैं और उन्हें मार भगाने के लिए तत्काल संघर्ष ठान लेते हैं। शरीर में जब तक यह क्रिया चलती रहती है, तब तक बीमारियाँ पैर नहीं जमाने पातीं, पर जब रक्त के श्वेत कण निर्बल हो जाते हैं और रोग कीटाणुओं से उतनी उत्परतापूर्वक लड़ नहीं पाते तो फिर रोगों का अड्डा शरीर में जमने लगता है। गन्दगी भी एक प्रकार से रोगकृमियों की सेना ही है। उसे हटाने की तीव्र प्रतिक्रिया जब तक हमारे स्वभाव का अंग बनी रहती है, तब तक उसके पैर टिकना सम्भव नहीं होता। अवांछनीय तत्वों से संघर्ष न हो तो वे कभी भी हटने का नाम न लें। शत्रुओं को, गुण्डे बदमाशों को यदि प्रतिरोध का भय न हो तो वे अपनी करतूतें बढ़ाते ही चले जायेंगे। इसलिए आत्म-रक्षा के लिए संघर्ष करना मनुष्य का आवश्यक धर्म कर्त्तव्य माना गया है। इस कर्त्तव्य को जो छोड़ देगा, उसके लिए जीवित रह सकना कठिन हो जायेगा। गन्दगी की लानत द्वारा जिसे अपना गौरव नष्ट होने से बचाना हो, उसे संघर्षशील होना ही होगा—जहाँ भी गन्दगी दिखाई पड़े वहीं भिड़ जाना होगा। उसे जब तक हटा न दिया जाय चैन न पड़े, तुरन्त जुट जाय कोई सहायक न मिले तो अकेला ही जुट पड़े, तब ही यह सम्भव है कि स्वच्छता का गर्व, गौरव एवम् आनन्द उपलब्ध किया जा सके।

गन्दगी हटाने में उत्साह रहे

कई व्यक्ति गन्दगी से घृणा तो करते हैं, पर उसे हटाने से कतराते हैं। यह घृणा का विलक्षण तरीका है चोर से घृणा तो की जाय पर जब वह घर में घुसे तो उससे दूर ही खड़ा रहा जाय, ऐसा करने से चोर को हटाया जाना कैसे सम्भव होगा ? घर में कहीं बिल्ली ने टट्टी कर दी है अथवा चूहा मरा पड़ा है या कोई और ऐसी ही बात है आप उसे छूने या हटाने से झिझकते हैं तो, फिर वह गन्दगी हटेगी कैसे ? मलीनता से घृणा करना उसी का सार्थक है, जो उसे हटाने के लिए जुट जाए ? जिससे ऐसा न बने उसके बारे में तो यही कहा जायेगा कि स्वच्छता से घृणा करता है। यदि ऐसा न होता तो गन्दगी को हटाने के लिए अपने शत्रु को खदेड़ने के वास्ते तत्परता प्रदर्शित क्यों न करता ?

होना यह चाहिये कि जहाँ भी गन्दगी दिखाई दे, हम तत्काल एक क्षण भी बिना गँवाए उसे हटाने के लिए तत्पर हो जायें। प्रसव-पीड़ा के बाद ही शिशु-जन्म का आनन्द माता को मिल सकता है। जो गन्दगी को हटाने के लिए, उसे खदेड़ने के लिए जितना अधिक उत्साही एवम् सक्रिय रहेगा, उसे उतना ही स्वच्छ रहने का आनन्द मिलेगा। जो सफाई तो चाहते हैं पर मैलेपन को हटाने से कतराते हैं, वे भला किस तरह अपनी चाहना को साकार बना सकेंगे ? जहाँ कूड़ा-करकट देखा कि बुहारी लेकर उसे झाड़ने में तुरन्त जुट गये, जहाँ सामान अस्त-व्यस्त देखा, वहाँ तुरन्त उसे यथास्थान रखने में लग गये, यह स्वभाव जिसका बन जाय, समझना चाहिए कि उसे स्वच्छताप्रिय मनुष्य का सम्मान मिलेगा। जो गन्दगी को देखकर कुड़कुड़ाता तो है, नाक-भौं तो सिकोड़ता है, पर उससे बचता-बचता फिरता है, छूना नहीं चाहता, हटाने में गन्दगी के सम्पर्क में आना पड़ता है, उससे बचता है वह स्वच्छता का नहीं, घृणा का उपासक कहा जायेगा। स्वच्छता तो एक वरदान है, जो उसे मिलता है, जिसे गन्दगी से लड़ने की साधना करने में उत्साह रहे।

गाँधीजी के साबरमती आश्रम में यह नियम था कि आश्रमवासी टट्टियाँ स्वयं साफ करें दूसरे स्थानों की गन्दगी भी स्वयं हटावें। यह नियम उन्होंने इसलिए बनाया था कि आश्रमवासी अपनी स्वच्छता की अभिरुचि परिष्कृत करने की मानवता की प्रथम परीक्षा को भली-भाँति उत्तीर्ण कर सकें। कोई यह पूछता था कि यह कार्य मेहतर से क्यों न कराया जाय ? तो वह यही उत्तर देते थे कि ऐसा करने पर अपनी गन्दगी को हटाने की परिष्कृत अभिरुचि का विकास न हो सकेगा और केवल शौचालय में ही नहीं वरन् अपने कार्यालय में भी आप गन्दगी के ढेर लगाये रहेंगे। इसलिए स्वच्छता के लिए गन्दगी हटाने की तत्परता आपको एक आध्यात्मिक एवम् नैतिक साधना की तरह ही करनी चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गन्दगी में इतना ही दोष नहीं है कि उनसे बीमारियाँ फैलने का डर है या देखने में कुरूपता प्रतीत होता है। यदि इतनी ही हानि होती तो उसे सहन भी किया जा सकता था। यह भौतिक हानियाँ मात्र थीं, उनकी एक सीमा तक उपेक्षा भी की जा सकती है। सबसे बड़ी हानि तो स्वभाव के दूषित होने की है। गन्दगी सहने की आदत जिसे पड़ गई, उसका कोई कार्यक्रम व्यवस्थित नहीं रह सकता। अव्यवस्था उसके स्वभाव का अङ्ग बन जाती है। जो भी काम करता है, वे अधूरे बेतरतीब, लँगड़े-लूले, टूटे-फूटे बने रहते हैं। आदि से अन्त तक वह एक भी काम को यथावत् नहीं कर पाता, फलस्वरूप उसका प्रतिफल भी संदिग्ध ही रहता है। अभी एक कार्य आरम्भ किया वह पूरा न होने पाया कि दूसरा आरम्भ कर दिया, वह भी समेटा नहीं कि तीसरा शुरू हो गया। यह मानसिक अस्त-व्यस्तता ही गन्दगी की जननी है। क्या घर का सामान बिस्तर, कपड़े, बर्तन, पुस्तक, क्या उपार्जन-अध्ययन का कार्यक्रम दोनों में एक स्वभाव काम करता है। घरों में यही होता है कपड़ा उतारा, उसे यथास्थान ठीक तरह रखने से पूर्व ही दूसरा काम शुरू कर दिया, कपड़ा या बर्तन जहाँ का तहाँ पड़ा रहा, नया काम चल पड़ा। गर्मी में बाहर से आये हैं, पंखा झलने लगे, पानी पीकर गिलास एक ओर पटक दिया, कपड़े उतारकर इधर-उधर डाल दिये और दूसरे काम में लग गये। अव्यवस्था इसी प्रकार बढ़ती है। बच्चे यही सब तो करते रहते हैं, वे हर काम अधूरा छोड़ते हैं। यह बचपन जिसके स्वभाव का अङ्ग बन गया है। वे दफ्तर में, क्या दुकान में, क्या लोक-व्यवहार में, हर जगह ऐसी ही अस्त-व्यस्तता बरतते हैं। हर काम अधूरा—हर काम अधूरा—हर काम अधूरा, जिसकी गतिविधियाँ इस प्रकार चल रही हों, उसे बड़े कामों में तो क्या, दैनिक छोटे-छोटे कामों में भी पग-पग पर असफलता का मुँह देखना पड़ता है।

अधूरे काम गन्दगी के अम्बार

जो काम आरम्भ किया उसका अन्त करके ही दम लेना, कोई काम अधूरा न छोड़ना, यह दृष्टिकोण स्वच्छता का आधार है। लापरवाही हटाकर उत्तरदायित्व की भावना जिस व्यक्ति ने अपना स्वभाव बनाया होगा, वह यह बात कैसे सहन कर सकेगा ? उसका कोई काम अधूरा पड़ा रहे और वह दूसरों के सामने उसके फूहड़ होने की चुनौती करें। एक काम आदि से अन्त तक पूरा करना, जब जो काम हाथ में लिया हो तब उसे पूरा करके दूसरा आरम्भ करना। यदि यह आदत डाल ली जाय तो फिर अस्त-व्यस्तता जो गन्दगी की ही एक रूप है—उत्पन्न न हो। कोई बहुत बड़ा काम हो, उसे खण्ड-खण्ड करके पूरा करना हो या कोई अनायास ही आकस्मिक कार्य सामने आ जाय, यह बात दूसरी है, उसके लिए तात्कालिक हेर-फेर किया जा सकता है—यह अपवाद है, साधारणतया आदत ऐसी ही डालनी चाहिये कि जब जो काम करना हो उसे पूरा करके उठा जाय। कपड़े, बर्तन, पुस्तक, जूते आदि जो पहले ठीक तरह यथास्थान रखकर तब दूसरा काम आरम्भ किया जाये तो हर चीज यथास्थान रखी मिलेगी और घर में कूड़ा-करकट कहीं भी दिखाई न पड़ेगा। जहाँ भी जो चीज अव्यवस्थित रखी दिखाई पड़े, उसे तुरन्त सम्भालना, ऐसी आदत है, जिसके कारण इस तरह की भूलें होते रहना बन्द हो जाता है और गृह-व्यवस्था में कोई आवश्यक व्यवधान उत्पन्न नहीं होता। तब सोचने का ढङ्ग यह बन जाता है कि एकाध घण्टे पीछे जो सफाई फजीहत एवं नाराजी के साथ की जाती है, उसे पहले से ही क्यों न कर लिया जाय ? यह प्रश्न जब बार-बार मन में उठता रहता है तो फिर ढील-पोल का स्वभाव भी बदल जाता है। घर का प्रमुख व्यक्ति जब स्वच्छताप्रिय स्वभाव का होता है, गन्दगी हटाने में उत्साहपूर्ण सावधानी बरतता है तो उसका अनुकरण परिवार के दूसरे लोगों को भी करना पड़ता है। वैसी आदत घर-भर को पड़ जाती है किन्तु यदि परिवार का प्रमुख व्यक्ति आलसी, लापरवाह और फूहड़ आदतों का होगा और स्वयं गन्दगी पैदा करता रहता होगा तो घर-भर में वही बुराई छूत की बीमारी की तरह पनपेगी और सारा घर गन्दगी के ढेर की तरह दिखाई देगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सफाई सभ्यता का अंग

सीधी सच्ची बात है कि जब तक हमारे घर, द्वार और रास्ते गन्दे रहेंगे, हमारी आदतें गन्दगी रहेंगी तब तक हम अपने आपको सभ्य और सुसंस्कृत नहीं कह सकते। आज पूरा भारत और भारतीय समाज गन्दगी का अखाड़ा बन गया है। इस बात से न हम इन्कार कर सकते हैं न आप। गाँवों की गलियाँ गन्दी हैं, सड़कों के किनारे गन्दे हैं लोगों के पाखाने जाने और पेशाब करने के तौर-तरीके गलत हैं इतना ही नहीं, आज जीवन के हर क्षेत्र में गन्दगी प्रवेश कर गई है। सोचने और व्यवहार करने का तरीका भी गन्दा हो गया है। दूषित मनोवृत्ति और दूषित वातावरण के रहते, भले ही लोगों का धर्म और दर्शन कितना ही—गौरवपूर्ण एवं प्राचीन क्यों न हो उन्हें कोई सम्मान नहीं दे सकता। श्रेष्ठता और संस्कृति का पहला गुण स्वच्छता है। हम साफ रहकर ही अपने आदर्श सिद्धान्तों की रक्षा कर सकते हैं।

सफाई प्रकृति का एक मौलिक गुण है। स्वच्छता और पवित्रता धर्म का प्रमुख अङ्ग भी माना जाता है तो उसका सही-सही ज्ञान भी होना आवश्यक है। शिक्षा और संस्कृति के साथ सफाई का स्वास्थ्य से भी अटूट सम्बन्ध है पर आजकल लोगों ने सफाई के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण बड़ा संकुचित कर लिया है। शरीर की सफाई, वस्त्रों की और घर के भीतरी-कमरों की सफाई ही पर्याप्त नहीं। वर्तमान विज्ञान और अर्थ प्रधान युग में हमें यह भी देखना पड़ेगा कि मनुष्य के व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन में सफाई का आर्थिक, सामाजिक और नैतिक दृष्टि से क्या स्थान है ? हमने सफाई को आध्यात्मिक जीवन का मुख्य पहलू माना है तो उसे एक निश्चय क्षेत्र में ही सीमित नहीं रख सकते। समाज के सर्वाङ्गीण हित की दृष्टि से सफाई से बुनियादी तथ्यों तक पहुँचाना पड़ेगा। गन्दगी के कारण जानने होंगे और उनका निवारण भी करना होगा।

शहरों में मकानों के जो अहाते होते हैं या नालियाँ होती हैं, वहाँ तरह-तरह के कचरे के ढेर पाये जाते हैं। बच्चे रास्तों के किनारों पर टट्टी कर जाते हैं, पाखानों से नालियाँ पाट जाते हैं। कचरे के ढेर में जूठन, मरे चूहे, थूक बच्चों के पाखाने के साथ-साथ खाली-फूटी शीशियाँ, डिब्बे घड़ों के ठीकरे, कागज, चीथड़े, टूटे-फूटे झाड़ू, कदो, काँच के टुकड़े, दातूनों की चोरियाँ, तरकारी के ठण्डल हर तरह की परित्यक्त और गन्दी वस्तुओं का मैला लगा रहता है।

गाँव में लोग खुले स्थानों में खेतों में मेड़ों में, गलियारों के दोनों तरफ, गाँवों के भीतर टूट-फूटे मकानों में पाखाना कर देते हैं। कई गाँवों में तो नाक बन्द करके ही प्रवेश करना पड़ता है। खुले में किये पाखाने की बदबू हवा में फैलती है और उससे बीमारी फैलती है। मल पर मक्खियाँ बैठती हैं और फिर वही मक्खियाँ लोगों के शरीर तथा खाने-पीने की वस्तुओं पर बैठती हैं, वही खाना लोग खाते हैं तो मक्खियों के द्वारा लाई हुई गन्दगी पेट में पहुँच जाती है और हमारे लिए बीमारी का साधन बन जाती है।

किसी रेलवे-स्टेशन पर जाकर चक्कर लगा आयें। प्लेटफार्म पर थोड़ी देर रुककर रेलगाड़ी चली जाती है, तब वहाँ क्या दिखाई देता है ? रेल की पटरियों पर ढेर सारा पाखाना, पेशाब प्लेटफार्म पर कुल्हड़ के टुकड़े, बीड़ी सिगरेट के सिसकते हुए टुकड़े, पान की पीक, फलों के छिलके यही सब तो सफर करने वाली यात्री छोड़ जाते हैं। भला बताइये यह भी कोई सभ्यता हुई कि आप तो चले गये पर वहाँ पर रुकने वालों, रहने वालों के लिये रोग, बीमारी और मौत की दवा छोड़ते गये।

यत्र-तत्र सर्वत्र

सिनेमा हालों में भारी संख्या में दर्शक पहुँचते हैं। इण्टरवल होता है तो दर्शकों का हजूम भीतर से निकलता और टिड्डी दल की तरह सिनेमा बिल्डिंग के आस-पास फैल जाता है। पेशाब-घर होते हुए भी खुले में, दीवालों के सहारे पेशाब कर जाते हैं।

शहरों में ऊपर स्टाल पर लोग होटलों पर बैठकर भोजन करते हैं, नीचे नाली में टट्टी बहती रहती है। दुकानदारों का पेशाबघर भी वही नाली होती है। बचा हुआ जूठन, बर्तनों की धोवन भी वहीं पटकते रहते हैं। कुल मिलाकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भोजनालय के नीचे एक भरा-पूरा दुर्गन्धालय बन जाता है। इन दोनों का सम्बन्ध मक्खियाँ जोड़ देती हैं और रोग के कीटाणुओं का निर्यात प्रारम्भ हो जाता है।

ऐसी गन्दगी हर शहर, हर गाँव में देखने को मिलती है और उनसे प्रतिवर्ष हैजा, मलेरिया प्लेग, क्षय और अनेक तरह के स्त्रियों तथा बच्चों के रोग फैलते हैं। पर इस सामूहिक बुराई के प्रति लोग अपने व्यक्तिगत कर्त्तव्य पालन के लिए तैयार नहीं होते।

स्वच्छता, सरल व सापेक्ष

मल-मूत्र की सफाई ऐसा मोटा विषय है, जिसके लिये लोगों के शिक्षित अशिक्षित होने का सवाल ही नहीं उठता। कुत्ता जहाँ बैठता है, उस स्थान को पहले पंजों से साफ कर लेता है, बिल्ली हमेशा किसी धूल वाले स्थान के पर टट्टी करती है और टट्टी होने के बाद उसे रेत से ढक देती है। जङ्गली बिलाव अपने निवास स्थान से बहुत दूर टट्टी जाते हैं। मधुमक्खियाँ दिन में दो बार सामूहिक रूप से छत्ते से उड़ती हैं और बड़ी देर तक बाहर उड़ती हुई टट्टी कर लेती हैं। यह छोटे-छोटे जीव-जन्तु यदि गन्दगी के प्रति इतने सावधान रहते हैं तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य भी सफाई का प्रबन्ध न कर सके। पर अपनी गन्दी आदत के कारण वह इस घिनौनी शक्ल का मिटाने की इच्छा नहीं करता अथवा यह कहना चाहिए कि गन्दगी उसकी प्रकृति में मिल गई है और उसे वह बुरी नहीं लगती।

कुछ को बुरी न लगे न सही पर समाज में दूसरे लोग भी तो होते हैं, जिनको सफाई प्यारी होती है, स्वास्थ्यप्रिय होता है। सफाई का महत्व सामाजिक दृष्टि से भी समझना चाहिए। सफाई का समाज में महत्वपूर्ण स्थान है। इसके बिना समाज टिक नहीं सकता। अतः जिस प्रकार व्यक्तिगत जिन्दगी में अन्य सामाजिक नियमों को स्थान दिया जाता है ठीक उसी तरह मल-मूत्र की स्वच्छता को भी सामाजिक जीवन का एक अनिवार्य अङ्ग मानकर आचरण करना चाहिए।

स्वच्छता सांस्कृतिक सद्गुण

सफाई मनुष्य जीवन और मानवीय सभ्यता का अविभाज्य अङ्ग है। हिन्दू धर्म ही नहीं, हर एक धर्म में सफाई की ओर निर्देश करने वाले आचार वर्णित हैं। अंग्रेजी में कहावत है—"सज्जनता के बाद स्वच्छता का ही स्थान है।" रस्किन ने शिक्षा की व्याख्या करते हुए लिखा है कि —"हवा पानी और मिट्टी का ठीक ढङ्ग से उपयोग करना ही शिक्षा है।"

मोहनजोदड़ों की खुदाई से ज्ञात होता है कि ईसा से २००० वर्ष पहिले भी सफाई के लिए नालियाँ होती थीं। क्नोसास तथा ट्राय को पराजय के पूर्व से ही मिस्र के पुराने शहरों में भी नालियों का उपयोग किया जाता था। हिन्दू-धर्म में तो शुचिता को प्रमुख स्थान ही दिया गया है, पर आजकल हमारे सामूहिक जीवन में गन्दगी ने पूरी तरह डेरा डाल दिया है, सफाई की जरूरत जीवन में आरम्भ से अन्त तक है इसलिए उसका बुनियादी प्रशिक्षण भी लोगों को मिलना चाहिए, आरोग्य के लिए भी सफाई बहुत जरूरी है। बड़े रोगों और बुखार, खुजली तथा छोटे रोगों का असली कारण अस्वच्छता ही है, उसे दूर करके ही हम स्वास्थ्य संरक्षण कर सकते हैं।

हमें अपनी सभ्यता और संस्कृति की श्रेष्ठता की रक्षा करनी हो तो सफाई का ध्यान देना होगा, स्वास्थ्य और आरोग्य की रक्षा के लिए भी वह आवश्यक है। आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए भी सफाई का सर्वोपरि महत्व है। इसलिए उसकी व्यावहारिक जानकारी भी बहुत आवश्यक है।

गन्दगी रोग की जननी

खुले स्थानों पर या नालियों के किनारे लगे हुए कूड़े-कचरे के ढेर और पाखाने पर कभी दृष्टि दौड़ाने का अवसर मिले और खुर्द बीन की सहायता से ध्यानपूर्वक देखा जाय तो उसमें सर्प के बच्चे जैसा एक छोटे-से आकार का रेंगता हुआ जीव हर किसी को देखने को मिल सकता है इसका वर्ण केंचुये जैसा मलिन और किंचित लाल जैसा होगा। यह छोटा-सा जीव पाखानों की गन्दगी में आमतौर पर जन्म ले लेता है पर चूँकि लोग उन स्थानों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निकलते समय दुर्गन्ध और घृणा से उधर से मुँह फेर लेते हैं, इसलिये उनके दर्शन नहीं हो पाते और न ही लोगों को इसके कारनामों का पता चल पाता है।

यह शुण्डाकार जीव, नर और मादा—दोनों रूप में पाये जाते हैं। नर को चूँकि प्रसव का कष्ट नहीं उठाना पड़ता इसलिये वह आकार में काफी छोटा होता है। डॉक्टरों का ऐसा अनुमान है कि इस जाति की प्रत्येक आसन्न प्रसव गर्भिणी के गर्भ में लगभग पौने तीन करोड़ गर्भ जीव होते हैं। यह जीव कितने छोटे होते होंगे इसका सहज ही में अनुमान लगाया जा सकता है।

कीटाणु कैसे पलते हैं

गर्भ पक जाता है तो यह जीव अण्डे देना शुरू करता है। एक दिन में मादा आमतौर पर २ लाख अण्डे उस मल के ढेर पर उड़ेल देती है और इस क्रिया को जब तक जारी रखती है तब तक कि उसका पूरा पेट खाली नहीं हो जाता। मल को कई दिनों तक खुला छोड़ रखने से यह जीव तो मर जाता है पर यह अत्यन्त सूक्ष्म जीवाणु अपना कार्य प्रारम्भ कर देते हैं। मल साफ हो जाने पर भी नीचे जितना मल जमीन जकड़ लेती है, वहाँ तथा आस-पास के वातावरण में यह कीटाणु फैल जाते हैं। लोग समझते हैं कि मल की दुर्गन्ध ही हानिकारक होती है पर यह कीटाणु मनुष्य के आरोग्य के लिये उससे भी अधिक घातक सिद्ध होते हैं।

मादा अण्डे देकर मर जाती है पर प्रकृति उन अण्डों की रक्षा करती है। जिस अण्डाकार खोल के बीच में यह जीवाणु बैठा हुआ है, वह आवरण इतना कड़ा होता है कि तेज धूप में भी न तो वह टूटता ही है और न ही जलता है। जीव भीतर ही भीतर पकता रहता है और अपनी क्रियायें जारी रखता है। वायु, बरसात तथा पानी का भी उस पर कोई असर नहीं होता और न ही जीव को बाहरी पोषण की आवश्यकता होती है। इस प्रकार स्थानान्तरण होते रहने पर भी यह जीव वर्षों तक सुरक्षित जीवन धारण किये रहते हैं।

अब इन जीवाणुओं के फैलने की बारी आती है। हवा में उड़-उड़कर यह एक स्थान से दूसरे स्थानों में पहुँचते हैं। नालियों में पानी के बहाव के साथ बहते हुए वह जहाँ गन्दा नाला गिराया जाता है, वहाँ तक पहुँचते हैं। आमतौर पर सभी शहरों के गन्दे नाले बड़ी नदियों में ही गिराये जाते हैं। गङ्गा, यमुना जैसी पवित्र नदियों को भी नहीं छोड़ा गया। यह जीवाणु आराम से उन नदियों के पानी में मिल जाते हैं और दूर-दूर तक फैलते चले जाते हैं। इस पानी को जो लोग पीते हैं जरूरी है कि उनके पेटों में भी यह कीटाणु पहुँचते होंगे और स्वास्थ्य को चौपट करने में जुट जाते होंगे।

रोग की अम्मा

कीटाणुओं की सबसे खतरनाक ढङ्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने का काम निरन्तर इधर से उधर चहलकदमी करने वाली मक्खी करती है। "रोग की अम्मा" कहलाने के गौरव को मक्खी भली प्रकार चरितार्थ करती है, पर चूँकि न तो यह मल से उत्पन्न कीटाणु ही आँखों से दिखाई देते हैं और न ही इस मक्खी के षडयन्त्र का लोगों को पता चल पाता है, इसलिये लोग उससे बिल्कुल बेखबर और असावधान रहते हैं। मक्खी आदमी की इस बेखबरी का पूरा लाभ उठाती है और बेरोक-टोक अपनी काली करतूत जारी रखती है।

स्वाद बदलने में मक्खी बड़ी प्रवीण होती है। उसकी नासिका इतनी तीव्र होती है कि वह जिधर से अपने खाद्य की सुगन्ध पाती है क्षणभर में ही उधर जा पहुँचती है। मल के ऊपर असंख्य मक्खियाँ मँड़राया करती हैं लोग इससे आगे कुछ नहीं जानते। पर मक्खी की क्रिया कोई सावधानी से देखता रहे तो मालूम हो कि वह कितने अनौखे ढङ्ग से उन कीटाणुओं को—एक स्थान से दूसरे स्थानों तक पोस्टमैन द्वारा चिट्ठी बाँटने की तरह बाँटती फिरती है।

मक्खी के छै पैर होते हैं, उन-पैरों में बहुत ही महीन बाल होते हैं और पैरों के सिरों पर एक तरल चिपकदार पदार्थ लगा रहता है। मक्खी जब मल पर बैठती है तो उसके पैरों में, पैर के बालों से पाखानों की गन्दगी के साथ-साथ अनेक कीटाणु भी लिपट जाते हैं। दूसरा नम्बर मुँह का है। मल में बैठते ही वह अपना थूथन के आकार की सी चोंच को नीचे झुकाती है और मुँह से थोड़ी-सी लार उस मल पर टपका देती है। इससे काफी सूखा मल भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काफी तरल पड़ जाता है। अब इसे मक्खी बड़े मजे से चूस लेती है, जिससे मल और कीटाणुओं की बहुत-सी मात्रा उसके पेट में दाखिल हो जाती है।

अभी वह मल से तृप्त भी न हो पाई थी कि सड़क पर बैठे हलवाई की मिठाई की खुशबू उसकी नाक तक पहुँची। मक्खी ने तेज उड़ान भरी और सीधे मिठाई वाले की दुकान पर दाखिल हुई। मिठाई वाला बेचने और पैसे वसूल करने में मस्त था उसे क्या पता, कौन दोस्त आया और कौन दुश्मन ? मक्खी बड़े मजे से मिठाई पर बैठ गई और मल के ढेर से लाई हुई गन्दगी तथा कीटाणुओं को उड़ेल देती है। काम हुआ और मक्खी गई। दिन भर दुकानों में गुड़, मिठाई, गीले फलों, पिण्डखजूर, घी, पट्टी, गुड़धानी आदि अनेक पदार्थों में यह मक्खी गन्दगी और रोग के कीटाणु ले जाकर उड़ेलती रहती है। फिर जो लोग उन पदार्थों को खरीदकर खाते हैं, यह कीटाणु उनके शरीरों में पहुँच जाते हैं और इस प्रकार बीमारी पैदा करते हैं।

इधर भी ध्यान दें

नालियों और खुले स्थानों में विसर्जित किया हुआ मल कई बार किन्हीं बड़े घातक रोग वाले रोगियों का भी होता है, उसमें कीटाणुओं के साथ रोगों के जीवाणु भी होते हैं, मक्खी उन्हें भी इधर से उधर फैलाती है। चेचक, हैजा, मलेरिया, दस्त आदि संक्रामक बीमारियाँ मुहल्ले में इसीलिए तेजी से फैलती हैं। सब लोग मक्खियों से बचाव का प्रयत्न करते हैं पर यह उतना आसान नहीं। मक्खी तो जगह-जगह बैठती है, उसे किन-किन स्थानों से हटाया जायेगा। इस समस्या का सीधा और सरल हल तो सफाई ही है। सड़कों और नालियों के किनारे पाखाना, फिरने की असावधानी लोग न करें तो मक्खियों को रोग, फैलाने का अवसर भी न मिले।

हमारी लापरवाही

मक्खियों का दोष है पर हम गन्दगी के प्रति लापरवाह लोग उनसे भी अधिक दोषी हैं। मल और मूत्र को विसर्जित करने की स्वेच्छाचारिता बरतकर रोग और बीमारी को निमन्त्रण देने के कारण हम स्वयं ही हैं। इससे हम उन असंख्य बालकों और वयस्कों को बीमार करने एवम् मृत्यु के मुख में धकेल देने के पाप के भागीदार बनते हैं। जहाँ- तहाँ खुलेआम टट्टी करते-फिरते रहने वाले लोग नहीं जानते कि वे अपनी थोड़ी-सी लापरवाही से कितना बड़ा राष्ट्रीय अहित एवं सामाजिक पाप करते हैं।

लोग थोड़ी-सी परवाह करें तो टट्टीघरों में पाखाना फिरना कोई कठिन बात नहीं है। गाँवों में भी लोग थोड़ा-सा ध्यान दें तो मल-मूत्र की समस्या इतनी जटिल नहीं है कि उसे काबू में न किया जा सके। नागरिक की दृष्टि से हमारा कर्त्तव्य है कि हम सब जगह गन्दगी फैलाकर समाज के लिए खतरा पैदा न करें। "खुद साफ रहो, सुरक्षित रहो, औरों को रोग और बीमारी से बचाओ" हमें इस सिद्धान्त का पालन करना चाहिए। इसमें समाज की सुरक्षा है और व्यक्तिगत सुरक्षा भी।

मल-मूत्र का आर्थिक महत्व, उसका सदुपयोग

आजकल विकसित देशों में मल-मूत्र का खाद के लिए बहुत अच्छा उपयोग किया जाता है। साधारणतया एक फसल उगाने के बाद जमीन का नाइट्रोजन तत्व कम पड़ जाता है। फास्फोरिक एसिड तथा पोटाश की कमी से भी उपजाऊपन कम हो जाता है। यह तीनों तत्व मानवीय मल-मूत्र से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो जाते हैं। जापान के सरकारी कृषि केन्द्रों से प्रसारित आँकड़ों में दिखाया गया है कि वहाँ प्रति व्यक्ति वर्ष भर में १२० पौण्ड मल और ७०० पौण्ड मूत्र इकट्ठा होता है। इस मल में नाइट्रोजन, भा० एसिड तथा पोटाश की मात्रा क्रमशः १२० पौण्ड, ४१ पौण्ड, ३६ पौण्ड होती है। यह मात्रा प्राकृतिक साधनों से प्राप्त किये गये तत्वों का दशांश होती है। इससे मालूम होता है कि मनुष्य का मल-मूत्र कृषि के लिए खाद की बहुत बड़ी आवश्यकता को पूरा कर सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मल एक सुन्दर खाद

भारत वर्ष में कृषि के लिए खाद का प्रमुख स्रोत जानवर है। जानवरों के गोबर का भी ३० प्रतिशत भाग तो ईंधन के रूप में फूँक दिया जाता है और मूत्र को इकट्ठा करने की व्यवस्था न होने से वह भी प्रायः बेकार चला जाता है। आगे देश की जनसंख्या बढ़ेगी और मशीनों का बाहुल्य होगा तो जानवरों की संख्या पर निश्चित रूप से असर पड़ेगा, वे क्रमशः कम होते जायेंगे। इससे खेतों के लिए खाद की समस्या भी बढ़ेगी। इसका कोई खास हल अभी से किया जाना चाहिए, अन्यथा खाद्य की प्रचण्ड समस्या को हल करना और भी कठिन हो जायेगा।

पाश्चात्य देशों में इङ्गलैण्ड, नार्वे, स्वीडन आदि देशों में मनुष्य के मलमूत्र को खाद के रूप में प्रयुक्त किये जाने के सफल प्रयोग हुए हैं। १९३४ में डाक्टर रिचर्डसन ने जो ६ वर्ष तक चीन में रहे और कृषि सम्बन्धी अनुसन्धान किये, भारत में अपने एक व्याख्यान में बताया कि चीन ने अपनी जमीन को उपजाऊ शक्ति बढ़ाई है, इसमें गोबर की खाद का उतना महत्व नहीं जितना उन्होंने मनुष्य के मैले का उपयोग किया है। उन्होंने कहा—यदि चीन आदमी के मैले का उपयोग नहीं करता तो वह इतनी बड़ी आबादी को जीवित भी नहीं रख सकता था। "चालीसवीं सदी के किसान" नामक पुस्तक के रचयिता मिस्टर किंग ने भी चीनी, कोरियन तथा जापानियों द्वारा मल-मूत्र का प्रयोग कर कृषि की उपज बढ़ाने का उल्लेख किया है। मिस्टर किंग अपने समय के विश्व-विख्यात कृषि विशेषज्ञ माने जाते थे।

इसे बर्बाद न करें तो

भारतवर्ष में खाद देने वाले जानवरों की अपेक्षा मनुष्यों की संख्या दुगुनी मानी जाती है इतने मनुष्यों के मल-मूत्र का खाद के रूप में उपयोग किया जा सके तो उससे खाद और खाद्य दोनों ही समस्याओं को हल करने में आशातीत सफलता मिल सकती है। इस बात की ओर सन् १९३५ के लगभग बोएलकर तथा लेधर नामक दो बड़े भारतीय कृषि विभाग के अधिकारियों ने सरकार का भी ध्यान आकर्षित किया था। उनका कहना था कि खाने की फसलें उगाने के लिए जमीन को जितने द्रव्य की आवश्यकता होती है, उसका आधा भाग मनुष्य के मल-मूत्र से बड़ी आसानी से पूरा हो सकता है।

इन्होंने यह भी सिद्ध किया था कि यदि मल-मूत्र की खाद को इस्तेमाल किया जाय तो उससे सालभर में प्रतिव्यक्ति ६०० रुपये की अधिक फसल उगाई जा सकती है। यदि एक गाँव की आबादी ५०० की औसत से मानी जाय तो प्रत्येक गाँव में ३ लाख रुपये की अधिक फसल उगाई जा सकती है। भारतवर्ष में गाँवों के कुल सुख्या ५६७१६६ है। इस हिसाब से कुल अधिक उपज की कीमत निकालें तो यह १ अरब ७० करोड़ ९५ लाख ७ हजार के बराबर बैठती है। इतना धन हमारी कितनी भी बड़ी से बड़ी खाद्य समस्याओं को आसानी से पूरा कर सकता है।

हमारी कठिनाइयाँ

सुरगाँव (वर्धा) में इस तरह का प्रयोग किया गया है। पहले वर्ष एक खेत में बिना कुछ खाद दिये धान बोया गया। दूसरे वर्ष उसी में मल-मूत्र की खाद देकर धान बोया गया। दोनों फसलों की पैदावार का अनुपात निकाला गया तो यह देखा गया कि मलमूत्र की खाद उपज को डेढ़ गुना अधिक तक बढ़ा देती है। यह अनुपात गोबर की खाद की उपज से किसी भी प्रकार कम नहीं है। इस निष्कर्ष पर पहुँचकर मल-मूत्र की उपयोगिता सहज ही समझ में आ जाती है।

हमारे लिये सबसे बड़ी समस्या यह है कि मल-मूत्र को कृषि से सम्बन्धित करने में धार्मिक बुराई मानते हैं पर यदि ऐसा ही सोचा जाय तो फिर गाँवों के अधिकांश व्यक्ति खेतों में ही पाखाना करते हैं, उन्हें ऐसा न करना चाहिये। वस्तुतः हम जिसे मल कहते हैं, उसे यदि खुले में ही छोड़ दिया जाय और वह सूखी मिट्टी की लपेट में रहे तो कुछ दिन के सम्पर्क से ही उसमें ऐसा रासायनिक परिवर्तन होता है कि सारा मल मिट्टी के रूप में ही बदल जाता है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खुला रहने के कारण दुर्गन्ध के साथ तो उसकी बहुमूल्य उपजाऊ शक्ति उड़ ही जाती है। यदि उसे मिट्टी से ढक देने की प्रक्रिया देहातों में प्रारम्भ कर दी जाय तो उसी मल को प्रकृति बड़े मजे से खाद में बदल देती है। जब मल प्राकृतिक रूप से धरती का ही अङ्ग बनकर उसी में मिल जाता है तो उसमें धार्मिक बुराई जैसी कोई बात समझ में नहीं आती।

लोगों की ऐसी भी मान्यता है कि मल का खाद्य फसलों पर दूषित प्रभाव पड़ता है। चीन में भी कुछ दिन लोगों की ऐसी ही धारणा रही कि मल का खेती में उपयोग करने से बीमारी फैलती है। पर यदि मल को एक ढङ्ग से प्रयोग में लाया जाय, अर्थात् पूरी तरह गल जाने के बाद ही उसका खाद के रूप में उपयोग किया जाय तो हानि की कोई सम्भावना नहीं रहती। महात्मा गाँधी के आश्रम में जब वे थे, तभी से विभिन्न फसलों में मैले की खाद का उपयोग किया जाता रहा है और भी कई संस्थाओं ने ऐसे प्रयोग किये हैं पर उससे ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिला कि मैले की खाद का खाद्य पर अथवा उसके सेवन करने वालों पर कोई बुरा असर पड़ता हो।

मल-मूत्र के अच्छे-बुरे दानों पहलू सामने हैं बुराई यह है कि उसे खुला छोड़ने, जगह-जगह पाखाना फिरते रहने से उसके कीटाणु वातावरण में फैलते हैं और लोगों की रोग और बीमारी बाँटते हैं। पर मैला अच्छी खाद, उसका समुचित ढङ्ग से उपयोग किया जाय तो खाद्यान्न की उपज बढ़ती है। अब इन दोनों स्थितियों से लाभ या हानि उठाने का उत्तरदायित्व मनुष्य समाज की है वह जिसे चाहे उसे चुन ले।

गन्दगी और स्वास्थ्य

मल-मूत्र की गन्दगी का नियन्त्रण में रखने का एक आर्थिक लाभ यह भी है, कि लोग रोगों के इलाज के लिये पैसे की तङ्गी से बच सकते हैं। भारत वर्ष में स्वास्थ्य व्यवस्था पर प्रतिवर्ष अनुमानतः ३० करोड़ रुपया सरकारीतौर पर खर्च होता है। १९५६ के स्वास्थ्य सम्बन्धी आँकड़ों में यह बताया गया है कि इस वर्ष ६६३५ अस्पताल और दवाखाने थे। प्रत्येक अस्पताल में एक डॉक्टर एक कम्पाउन्डर, एक नर्स, एक सहायक तथा एक चपरासी कुल ५ कर्मचारी माने जायें तो सारे देश में लगभग ५० हजार कर्मचारी केवल स्वास्थ्य की समस्या के लिये हो गये। इतनी बड़ी धन और जन-शक्ति लगने के मूल में यदि कारण की खोज की जाय तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मनुष्य की अव्यवस्था से उत्पन्न गन्दगी ही, उसका प्रमुख कारण होती है। जबकि इसी वर्ष के आँकड़ों में यह भी स्पष्ट किया है कि स्वास्थ्य मन्त्रालय ५ करोड़ व्यक्तियों के लिए मल-मूत्र आदि के बहाने की व्यवस्था नहीं कर सका अन्यथा आर्थिक बजट और भी ऊँचे उठ जाता यह आर्थिक बोझ भी परोक्ष रूप से हम लोगों पर ही आता है। यदि इस पर थोड़ा-सा भी ध्यान दिया जा सके तो इस बेकार के खर्चे को बचाकर निर्माण कार्यों को विकसित किया जा सकता है। मलमूत्र को खुला छोड़कर सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा राष्ट्रीय व्यवस्था को नुकसान पहुँचाने की अपेक्षा यही उत्तम है कि उसे सुव्यवस्थित रूप में रखें और उसका सदुपयोग करें तो बीमारियों की बाढ़ से पिण्ड छूटे। संसार के सामने अस्वस्थ बनने के कलंक से मुक्ति मिले और आर्थिक उन्नति का खाद्य स्थिति सुधारने का भी अवसर प्राप्त हो।

सङ्कीर्ण मनोवृत्ति

एक बात यह भी है कि यहाँ के लोग यह समझते हैं कि मल-मूत्र की सफाई मेहतरों का कार्य है, अन्य जातियों से उसका कोई सरोकार नहीं। एक लम्बे समय से ऐसा होता जा रहा है इसलिए यह एक सामाजिक परम्परा बन गई। भङ्गियों का एक वर्ग ही अलग कर दिया गया और मल-मूत्र की सफाई का उन्हें ही ठेकेदार मान लिया। प्रत्येक गाँव में भङ्गियों के एक या सिर्फ दो घर होते हैं। उनमें भी सफाई करने लायक दो-चार भङ्गी ही होते हैं और वही सारे गाँव की गन्दगी साफ करते हैं। सोचने की बात है कि ६००—७०० आबादी वाले गाँव की दो-चार भङ्गी भली-भाँति सफाई करना चाहें तो यह कैसे सम्भव हो सकता है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शहरों में भङ्गियों की कमी रहती है। कभी ये लोग एक दिन की हड़ताल कर देते हैं तो सारा नगर दुर्गन्ध से बिलबिलाने लगता है। लोग मल-विर्सजन के सही ढङ्ग के पालन के लिये तत्पर न हों और इधर-उधर गन्दगी बढ़ाते फिरते रहें तो उतनी सफाई के लिए भङ्गियों की व्यवस्था होना बड़ी मुश्किल बात है। दर-असल यह उत्तरदायित्व समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अपने आप निभाना चाहिए। अपने मल-मूत्र की सफाई के लिए लोगों को स्वयं जिम्मेदार बनना चाहिए।

भङ्गियों के आश्रित न बनें

यह काम आदि काल से भङ्गी करते रहे हैं यह मानना भूल है। संस्कृत वाङमय में भङ्गी के लिए कोई सम्बोधन नहीं है। लोग दूर जङ्गलों में पाखाना जाते थे और उसे मिट्टी से ढक देते थे। भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों में आज भी पाखाना जाने को—"बाहर जाना" "जङ्गल जाना" "दूर जाना" आदि शब्दों का प्रयोग होता है। भङ्गियों के जन्मदाता तो मुसलमान हैं, उन्होंने यहाँ के लोगों को जीतकर यह काम जबरन करवाया। श्री बल्लभ स्वामी लिखित "सफाई विज्ञान और कला" नामक पुस्तक में इस सम्बन्ध में बड़ा उपयुक्त प्रमाण प्रस्तुत किया है लिखा है—

"हिन्दुस्तान में पाखाना, भङ्गी आदि प्रथा मुसलमानों ने शुरू की। लड़ाई में जीते हुए लोगों को जीवनदान देने और उनकी मानहानि करने के लिए उन्हें भङ्गी का कार्य सौंपा गया। गोंदिया से लेकर गोवा तक के मराठी भाषी प्रदेश में एक भी ऐसा भङ्गी नहीं है, जिसकी मातृभाषा मराठी हो। गोंदिया-नागपुर की तरफ हिन्दी, बम्बई की तरफ गुजराती, कोल्हापुर की तरफ कन्नड़ भाषा-भाषी भङ्गी है। इस पर से भङ्गी वर्ग की उत्पत्ति के बारे में ऊपर के अनुमान को बल मिलता है।"

भङ्गियों के ऊपर चिरकाल तक निर्भर रहा भी नहीं जा सकता। भारतीय संविधान में उन्हें भी अन्य जातियों के समान ही अधिकार दिये गये हैं, ऐसी अवस्था में यह आशा नहीं की जा सकती है कि यह लोग अन्त तक इस प्रकार का कार्य जिसे सर्वसाधारण को दृष्टि से हीन या हेय समझा जाता है—करते ही रहेंगे। सरकारी तौर पर पिछड़ी हुई जातियों को शिक्षा आदि की सुविधायें दी जा रही हैं, उनसे भी इसी बात की पुष्टि होती है। पढ़े-लिखे भङ्गी मल-मूत्र की सफाई का कार्य कभी भी स्वीकार न करेंगे, करना भी नहीं चाहिए। मानवीय दृष्टि से किसी से अपना मैला साफ करवाना कोई सभ्यता को बात नहीं है। अब नहीं तो बीस वर्ष बाद यह कार्य लोगों को स्वयं ही करना पड़ेगा। इसलिए अभी से अपनी आदतों को ठीक कर लेना चाहिए। अगली पीढ़ी को तो कम से कम मल-मूत्र का अनुशासन सीखने का पूरा अवसर प्रदान करना चाहिए।

गन्दगी निवारण के रचनात्मक उपाय

"स्वर्ग" शब्द में जिन गुणों का बोध होता है, सफाई और शुचिता उनमें सर्व प्रमुख है। पर चूँकि लोगों की यह मान्यता है कि स्वर्ग कहीं अन्यत्र शून्य में, बहुत दूर बसा हुआ है और वहाँ केवल जीवन-मुक्त आत्मायें ही पहुँच सकती हैं, हम स्वर्ग का विवेचन नहीं करना चाहते। हम जिस युग-निर्माण योजना को लेकर राष्ट्र के आध्यात्मिक तथ्यों को पुनः जागृत हुआ देखना चाहते हैं, उनका उद्देश्य भी स्वर्ग की कल्पना को स्पर्श करता है पर यह स्वर्ग ऊपर आसमान में नहीं यहीं इस धरती पर जहाँ हम रहते हैं, होना चाहिये। इसलिए हम जब स्वर्ग की व्याख्या करेंगे तो उसका सम्बन्ध अपने मनुष्य—समाज से ही 'देव-समाज" बनाना होगा।

देव समाज की रचना

देवता जहाँ रहते हैं वहाँ सफाई, स्वच्छता, शुचिता, पवित्रता, सुगन्ध, सौन्दर्य और निर्मलता प्रमुख रूप से रहती है। यह बातें जहाँ पर होंगी स्वभावतया वहाँ प्रसन्नता, निरालस्यता, प्रेम, सद्भाव, सहयोग, कर्मठता, सहिष्णुता, उदारता आदि गुण भी होने चाहिए, जहाँ यह गुण व्यापक मात्रा में विद्यमान होंगे, वहाँ सुख, शान्ति, सन्तोष, समृद्धि और सम्पन्नता का होना भी अनिवार्य है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारे व्यक्तिगत सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन का उद्देश्य भी तो यही है कि हम सुखी बनें, शान्तिपूर्वक जीवन जियें और किसी बात का अभाव न रहे।

तो फिर धरती पर स्वर्ग अवतरित करने का प्रारम्भ सफाई और स्वच्छता से ही होना चाहिए। गन्दगी चाहे शरीर की हो, कपड़ों या घर की, भली नहीं होती, उससे मनुष्य का जीवन अपवित्र ही बनता है पर सामूहिक गन्दगी का रूप तो और भी बुरा है मल-मूत्र की समस्या को इसीलिए सफाई की समस्या से पृथक् किया गया है। हमारे देश में गन्दगी के न बढ़ने के सामाजिक कर्त्तव्य का लोग पालन नहीं करते, जहाँ-तहाँ पेशाब-पाखाना कर देते हैं। इससे गन्दगी बढ़ती है, रोग बढ़ते हैं और इनके साथ ही परेशानी, गरीबी और निर्धनता भी बढ़ती है। अतः अपने कर्त्तव्य के पालन में प्रत्येक नागरिक को जागरूक रहना चाहिये। एक व्यक्ति का अकर्त्तव्य भी सामाजिक बुराई को जन्म दे सकता है अतः हमें सामूहिक रूप से कर्त्तव्यों के पालन पर ध्यान देना चाहिये।

सफाई हमारा स्वभाव बने

मल-मूत्र की समस्या यदि लोग अपने स्वभाव ठीक कर लें तो कोई बड़ी समस्या नहीं है। जो लोग शहरों में रहते हैं, उन्हें पाखानों का नियमित इस्तेमाल करना चाहिए। जहाँ-तहाँ नालियों में दूकान के नीचे, मोटर स्टैण्ड के अगल-बगल, प्लेटफार्म की बिल्डिगों के पीछे शहर के बीच, जहाँ रेलवे लाइनें गुजरती हैं पाखाना या पेशाब नहीं करना चाहिये। पेशाब और पाखानों के लिए शहरों में टट्टी और पेशाबघर बने होते हैं, स्टेशनों, बस अड्डों पर भी मुसाफिरों के लिये शौचालय बने रहते हैं, उन्हीं में पेशाब और पाखाना करना चाहिये। प्रायः लोग उन्हें ढूँढ़ने की दिक्कत नहीं उठाना चाहते हैं इसीलिए इधर-उधर टट्टी पेशाब कर देते हैं। ऐसा न करने की आदत प्रत्येक नागरिक को निभानी चाहिए।

स्त्रियाँ सोचें, समझें और करें

मातायें बच्चों को नालियों के सहारे बैठाकर टट्टी करा देती हैं, वे अनुभव करती हैं कि इस तरह वे टट्टी उठाकर फेंकने की परेशानी से बच जाती हैं, पर उन्हें यह भी मालूम होना चाहिये कि यह गन्दगी उन्हीं के बच्चों के लिए हानिकारक होती है। कोमल शरीर के बच्चों पर ही रोग के कीटाणुओं का जल्दी असर होता है। थोड़ा सावधानी के साथ बच्चों को भी पाखानों में टट्टी करा ली जाया करे या बाहर कराकर इसे किसी ऐसे स्थान पर डाल दिया करें, जहाँ से मेहतर उसे साफ कर ले जाया करें, तो इसमें कोई बड़ी परेशानी नहीं होती।

पाखाने की व्यवस्था

खुले हुए पाखानों की जगह सीवर की टट्टियाँ बनवा ली जायें तो उससे पाखाने की सफाई और भी अच्छी होती है तथा भङ्गी के कार्यों की आवश्यकता नहीं होती। जिन शहरों में गन्दगी को नीचे धरातल से बहाने की व्यवस्था है, वहाँ सीवर की लैट्रिन बड़ी लाभदायक होती है। बम्बई आदि बड़े शहरों फ्लश-सण्डासों की व्यवस्था हुई है पर बड़े शहरों में झोंपड़ी बस्तियाँ भी होती हैं, जिनके लिये सण्डास की कोई व्यवस्था नहीं होती। बम्बई में ही अनुमान से ऐसे सात लाख व्यक्ति हैं, जिन्हें रोजाना सुबह-शाम किसी भी स्थान पर पाखाने के लिए बैठना पड़ता है। जहाँ पाखाने बने हैं, वहाँ भी भङ्गियों को पाखाना बाल्टियों या खुली ढकेल-गाड़ी में ढोना पड़ता है। अब चूँकि यह जिम्मेदारी मेहतरों को दे दी गई है इसलिये वे बेचारे करते हैं अन्यथा यह काम मनुष्य का नहीं है, लोगों को अपनी सफाई के लिए आप जिम्मेदार होना चाहिये। नगरपालिकाओं और कार्पोरेशनों का स्थान भी इस ओर आकर्षित किया जाना चाहिये ताकि मल विसर्जन के साधन हर शहरी व्यक्ति को उपलब्ध हो सकें।

सड़कों के किनारे पेशाबघरों की अधिक व्यवस्था हो, साथ ही उनकी सफाई भी नियमित रूप से होती रहनी चाहिए। कई लोग पेशाबघरों में ही चुपचाप पाखाना कर आते हैं। यह भोंड़ी आदत है ऐसा न करना चाहिये। नगरों तथा उपनगरों में जहाँ सर्विस सण्डास है, उन्हें भी फ्लश सण्डासों में बदलने के लिए प्रयत्न करना चाहिये। जिन-जिन सड़कों या सार्वजनिक स्थानों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में लोग चुपचाप या निर्लज्जतापूर्वक पाखाना कर आते हैं, वहाँ पहरे की व्यवस्था रहनी चाहिये ताकि लोग ऐसा न करने के लिए विवश हों।

समय-समय पर जगह-जगह सफाई शिविरों की आयोजन करना चाहिये। सफाई के सरल, सस्ते और अच्छे साधनों का प्राथमिक तथा सामान्य सफाई और आरोग्य के नियमों की चर्चा व प्रशिक्षण किया जाना चाहिये। इसके लिए मुहल्ले में सफाई-समितियाँ रहें तो और भी अच्छी बात है। यह समितियाँ सफाई कार्यों का निरीक्षण करती रहें और जहाँ सफाई की व्यवस्था न हो वहाँ व्यवस्था करावें।

मल के सदुपयोग की जानकारी

मैला कम्पोस्ट की जगह निर्गन्ध मल-खाद तैयार करने के तरीकों की खोज हो तथा कम्पोस्ट बनाने के तरीकों में इस प्रकार का परिवर्तन किया जाय, जिससे गाँव के किसानों के लिए शुद्ध बढ़िया खाद उपलब्ध की जा सकें। नगरवासियों में सफाई की भावना विकसित करने के लिए—टेक्निकल और सामाजिक सम्वादों से भरी हुई सिनेमा फिल्म्स, पोस्टर्स, प्रदर्शनी आदि योजनाओं को प्रसारित किया जा सकता है। नासिक रोड (महाराष्ट्र) में केन्द्रीय गाँधी निधि की ओर से सफाई महाविद्यालय और संशोधन-केन्द्र चल रहे हैं, वहाँ पर नगरपालिकायें अपने चुने हुए कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षण लेने के लिए भेज सकती हैं।

इस सम्बन्ध में सफाई महाविद्यालय नासिक रोड (महाराष्ट्र) अथवा ११० ई० विट्ठल भाई पटेल रोड बम्बई-४, के पते पर पत्र-व्यवहार करना चाहिए। स्थानीय सफाई-पत्रिकायें भी शुरू की जा सकती हैं। समाज-सेवी व्यक्तियों को ऐसे भाषण तथा लेख भी प्रसारित करने चाहिये, जिससे नगरवासी सफाई के महत्व को समझ सकें और अपने दैनिक जीवन में उसे भी एक आवश्यक कर्त्तव्य मानकर उसका पालन करते रहें।

गन्दगी के सम्बन्ध में हमारी भ्रमपूर्ण धारणा

वास्तव में गन्दगी के सम्बन्ध में हमारी धारणा बड़ी भ्रमपूर्ण और अज्ञानतामूलक है। गन्दगी किसी वस्तु या पदार्थ में नहीं है, वरन् उसके प्रयोग और व्यवहार में है। अपनी गलती से हम अमृतोपम फलों को भी सड़ाकर गन्दा बना सकते हैं। दूध को वासी और फटा बना डालते हैं तो वह भी फेंकना पड़ता है। गर्मी में रोटियों की असावधानी से रखने पर उनमें से तार टूटने लगते हैं और वे खाने के अयोग्य समझकर फेंक दी जाती या पशुओं को दे दी जाती हैं, ये सब चीज वास्तव में गन्दी नहीं होती, पर मनुष्य अपनी गलती या असावधानी से उनको बिगाड़ डालता है और तब उनको उसी प्रकार फेंक देना पड़ता है, जिस प्रकार अन्य गन्दी माने जाने वाली वस्तुओं को।

दूसरी तरफ हम अनेक ऐसी चीजों को देखते हैं, जो गन्दी और फेंकने योग्य होने पर भी समझदारी से प्रयोग करने पर लाभदायक सिद्ध होती हैं। एक बार एक व्यक्ति ने अपने घर के सामने की खाली जमीन में अंगूर की दो बेलें लगाईं । वे जैसे-तैसे लग तो गईं पर काफी सींचने पर भी ज्यादा न बढ़ी और न उनमें फल आये। यह देखकर पास ही रहने वाले एक कहार ने कहा कि मैं इनको ठीक कर दूँगा। दूसरे दिन वह मछली-बाजार में से मछलियों के कटे हुए बेकार अंगों तथा छिलकों आदि को बटोरकर एक टोकरे में भर लाया और बेलों की जड़ में गड्ढा करके, उसमें उस "गन्दगी" को भरकर मिट्टी से दाब दिया। दस-पाँच दिन के बाद ही बेल बढ़ने लगी और बहुत ऊँचाई तक पहुँचकर वर्षों तक फल देती रही।

इन दो उदाहरणों से हम समझ सकते हैं कि गन्दगी या उपयोगिता का निर्णय मुख्य रूप से किसी वस्तु के उपयोग के आधार पर ही किया जा सकता है। बरसात में हम प्रायः देखते हैं कि गाय-भैंसों का गोबर मार्ग में पड़ा सड़ा करता है, उसमें कीड़े पड़ जाते हैं और चारों तरफ गन्दगी दिखाई पड़ने लगती है। कारण यही है कि गर्मी और जाड़े में तो गोबर बटोरने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाली स्त्रियाँ और लड़के-लड़कियाँ गोबर को ले जाकर उसके उपले थाप देते हैं पर बरसात में एक तो पशुओं का गोबर नई घास खाने से पतला होने लगता है और दूसरे वर्षा होते रहने के कारण उसके सूखने की स्थिति नहीं रहती। नगरों से आस-पास की सड़कों पर गोबर की खाद बना सकने की कोई व्यवस्था भी नहीं होती। इससे वह तमाम गोबर सड़ने लगता है और उस गन्दगी को हटाने के लिए म्युनिसपैलिटी को बहुत कुछ खर्च और परिश्रम करना पड़ता है।

इसी प्रकार एक दर्शक ने मुझे बतलाया कि बम्बई शहर में मैला, जहाँ समुद्र में गिरता है वहाँ एक समय तो गन्दगी ही गन्दगी दिखाई पड़ती है, पर जब समुद्री मछलियाँ उसे खाकर साफ कर देती हैं तो उन्हीं मछलियों में से कुछ को पकड़कर मछली वाले बाजार में बेचने ले जाते हैं और ग्राहक लोग मैले का विचार न करके काफी दाम देकर उनको ले जाते हैं। हमारे ग्रामीण सुअर विशेष रूप से मैले को खाकर ही पलते हैं। पर मांसाहारियों को उनका माँस खाने में कोई एतराज नहीं होता। इन सुअरों के बाल तो बहुत अधिक कीमत में बिकते हैं और उनमें से कुछ तो दाँतों के ब्रुश रूप में तैयार होकर मनुष्यों के मुख के अन्दर भी पहुँच जाते हैं।

अगर हम इस प्रकार गहरी दृष्टि से गन्दगी और स्वच्छता की समस्या पर विचार करें तो यही विदित होता है कि हम अपनी धारणा से ही विभिन्न पदार्थों में इस प्रकार की भावना बना लेते हैं। मुख्य बात प्रत्येक वस्तु के सही उपयोग की है। मनुष्य ने अपनी मल को सबसे अधिक गन्दा मान लिया है, यह उसकी धारणा ही है, अन्यथा शौच हो आने पर भी हर एक मनुष्य के शरीर के भीतर सेर दो सेर मल भरा ही रहता है। जिन लोगों को पुराना कब्ज होता है, उनके मलाधार में से तो डॉक्टर ने मरने के बाद शरीर को काटकर कई-कई सेर तक मल निकाला है। इस प्रकार हम एक मल से भरे थैले को लेकर जीवन भर समस्त कार्य करते रहते हैं, पूजा-पाठ, भजन-उपासना भी करते हैं, पर उस समय उसमें हमें कुछ गन्दगी नहीं जान पड़ती। पर जैसे ही वह बाहर आ गया कि हम उसे सबसे अधिक गन्दी और घृणा के योग्य वस्तु मान लेते हैं। इसे हम एक भ्रमपूर्ण धारणा न कहें तो और क्या कहें ?

वास्तव में गन्दगी प्रत्येक वस्तु के व्यवहार में है। मनुष्य का मल और प्राणियों के मल की अपेक्षा शीघ्र सड़ने लगता है, इसलिए वह हमको ज्यादा गन्दा लगता है। पर इसका यह अर्थ नहीं कि हम उससे दूर भागने की कोशिश करें। इसका उपाय तो यही है कि हम शीघ्र से शीघ्र उसकी ऐसी व्यवस्था कर दें, जिससे उसकी गन्दगी बढ़ने और फैलने न पावे। इसका सर्वोत्तम तरीका महात्मा गाँधी के आश्रम में निकाला गया था, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति शौच जाने के पश्चात् पास ही रखी हुई मिट्टी में से एक खुरपी मिट्टी उठाकर उससे मल को अच्छी तरह ढक देता। इससे उसकी दुर्गन्ध तुरन्त दब जाती थी। जब शौच वाली बाल्टी भर जाती थी, उसे खाद के गडढे में लौट दिया जाता था। इससे गन्दगी जरा भी बढ़ नहीं पाती थी और मल का 'सदुपयोग' भी हो जाता था।

सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के कर्त्तव्य

शहरों की मल-मूत्र समस्या को बहुत शीघ्र नियन्त्रण में किया जा सकता है पर गाँवों की समस्या कुछ अधिक दुरुह है। गाँवों की अधिकांश जनता अनपढ़ होने से वे लोग किसी बात की उपयोगिता उतनी जल्दी नहीं समझते तो भी युग-निर्माण आन्दोलन के कर्मठ कार्यकर्त्ता यदि आवश्यक प्रशिक्षण एवं जानकारी देने के लिए कटिबद्ध हो जायें तो यहाँ भी मल-मूत्र की समस्या को शीघ्र ही काबू किया जा सकता है।

पहला कार्य यह है कि लोगों को मल-मूत्र की गन्दगी से पैदा होने वाले रोग और बुराइयों की जानकारी दी जाय। नम्बर दो—उन्हें मल-मूत्र की उपयोगिता और उसे खाद के रूप में प्रयोग करने को तैयार किया जाय। दो कार्यक्रम सैद्धान्तिक हुए। इसके बाद रचनात्मक कार्यक्रमों का आन्दोलन उठाना चाहिए।

पहला तरीका यह है कि लोग खेतों पर पाखाना करें तालाबों के आस-पास ही जमीन में या गाँव के किनारे रास्तों में मैला न फैलायें, पाखाना जाते समय लोग अपने साथ खुरपी लेकर जायें और गड्ढा खोदकर उसमें पाखाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य ८.५७

करें बाद में उसे मिट्टी से ढक दें। इससे वह मल कुदरती तौर पर खाद बन जाता है।

जमीनी छप्परों का घेरा डालकर सामूहिक पाखाने तैयार किये जायें, इनकी गहराई इतनी होनी चाहिये जिससे एक पाखाना कम से कम एक वर्ष या छै महीने तक तो काम दे ही जाय। पाखाने के लिये बैठने को लकड़ी को काटकर इस तरह तैयार किया जाय कि दोनों पैरों को रखने के लिए दो मजबूत पट्टे बने रहें और उनके बीच में मल विसर्जन के लिए काफी चौड़ाई से उसे काट दिया जाये। इस प्रकार एक पाखाने को घेर दिया जाय ताकि एक साथ दस-बारह व्यक्ति भी अगर पाखाने को बैठें तो इसमें कोई परेशानी न आये। पाखाने पुरुषों के लिये अलग, स्त्रियों के लिए अलग हों।

बच्चों के लिए बाल्टी की टट्टियाँ बनवा ली जायें और वे मकान के ऐसे कोने में हों, जहाँ दुर्गन्ध न फैले। बैठने के लिए कुर्सीनुमा लगाना चाहिये और जब एक बार बच्चा पाखाना फिर ले तो मिट्टी या राख से ढक देना चाहिये ताकि बदबू न फैले।

छोटे सॉक पिट्स

घरों के आस-पास पेशाब फैलाने की घृणित आदत से बचने के लिए छोटे-छोटे साँक पिट्स बनाये जायें। २ × २ फुट का एक गड्ढा खोदकर उसमें कङ्कड़ भर दिये जायें और दो ईंट रखकर पैर रखने का प्रबन्ध कर लिया जाय। सामने से फूँस की टट्टी या कच्ची मिट्टी की दीवार उठाकर परदा बना लिया जाय। यह साँक पिट्स मूत्र की गन्दगी रोकने में सहायक होते हैं। कंकड़ सारा मूत्र पीते रहते हैं और धूप में वह सूखता रहता है फलस्वरूप न तो मूत्र जमा हो पाता है न दुर्गन्ध बढ़ने पाती है और कंकड़ों की बदलने की भी परेशानी नहीं होती। इनमें कभी-कभी चूना ,अथवा फिनाइल डालते रहना चाहिये, यह सार्वजनिक उपयोग का भी काम दे सकते हैं।

सरकारी प्रयत्नों की जानकारी

मल-व्यवस्था के लिये उत्तर प्रदेश सरकार का अनुसंधान भी उल्लेखनीय है। गाँवों के लिये एक ऐसे सर्वसुलभ एवं दुर्गन्धरहित शौचालय का डिजाइन तैयार किया गया है, जो काफी सस्ता है, थोड़े जल से साफ किया जा सकता है, कम खर्च में बन जाता है तथा गाँव के कारीगर गाँव में ही बड़ी सरलता से उसे बना भी सकते हैं। इस व्यवस्था से मल सड़ जाने के बाद उसका खाद के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। इसकी जानकारी विकास खण्ड चिनहट जिला लखनऊ से प्राप्त की जा सकती है। हर गाँव में इस प्रकार के शौचालयों का निर्माण किया जा सकता है। उससे गाँवों के कुछ बेकार लोगों को काम भी मिल सकता है। मल-मूत्र की समस्या भी हल हो सकती है और उस मल की खाद का सदुपयोग भी हो सकता है।

श्रेष्ठ सद्गुण एवं शुभ संस्कार

क्रिया और विचारों के सम्मिश्रण से संस्कार बनते हैं— इसे ही स्वभाव भी कहते हैं। जैसा सोचा जायेगा और वैसा किया जायेगा, थोड़े समय में वह एक ढर्रा बन जायेगा। आदतें वैसी ही ढल जायेंगी। फिर बिना प्रयत्न के ही अपने आप उसी दिशा में कदम उठने लगेंगे। अन्तःकरण में स्वच्छता के बार में श्रद्धा-स्थापित करनी चाहिए और व्यवहार में निरन्तर यह देखते रहना चाहिए कि अधिक सलीके की, अधिक व्यवस्था की, अधिक सफाई की क्रम-व्यवस्था कैसे बन सकती है ? जो उपाय सम्भव हो उसे तत्काल काम में लाने का प्रयत्न करना चाहिए। इसी प्रकार गन्दगी के प्रति घृणा को तीव्र करते जाना चाहिए, जहाँ भी अव्यवस्था एवं मलीनता दिखाई पड़े, उससे लड़ने के लिए-हटाने के लिए पूरे उत्साह के साथ जुट जाना चाहिए। कुछ समय इस साधना को संकल्प, दृढ़ता, निष्ठा एवं तत्परतापूर्वक किया जाय तो स्वभाव में एक परम सात्विक परिष्कृति उत्पन्न होगी और इसका प्रतिफल वस्तुओं के दीर्घ-जीवन, सुरुचि-प्रदर्शन, आरोग्य-सम्वर्धन एवं जन-सम्मान के रूप में ही नहीं, आध्यात्मिक लाभ के रूप में भी होगा। अपनी इस श्रेष्ठता पर हर घड़ी आत्म-गौरव और आत्म-सन्तोष की अनुभूति होगी। प्रत्यक्षतः यह आत्म-विकास का ही एक चिन्ह है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाहरी सफाई मनुष्य का बाहरी गौरव बढ़ाती है। साफ कपड़े पहनकर कहीं जाइये, देखने वालों की दृष्टि में आपका व्यक्तित्व सुसंस्कृत जचेगा। वे आपको शिक्षित सभ्य एवं सुरुचि सम्पन्न मानेंगे। गन्दे कपड़े पहनकर आप जहाँ जायेंगे वहीं अपने को ओछा, कुसंस्कारी एवं फूहड़ सिद्ध करेंगे। आपके व्यक्तित्व का आधा मूल्य तो कपड़े ही घटाते बढ़ाते रहते हैं। यह जरा भी आवश्यक नहीं कि कपड़े कीमती, रेशमी या बढ़िया किस्म के हों। वे भी गन्दे होंगे तो घृणित लगेंगे। सस्ते-सादे और मामूली कपड़ा भी यदि ठीक तरह धुला और ठीक तरह तह किया हुआ होगा तो वह किसी वेश-कीमती वस्त्र से कम, गौरव प्रदान न करेगा। बहुत जोड़ी वस्त्र खरीदना, कीमती पोशाकें बनवाना, तनिक भी आवश्यक नहीं। कम कपड़े से भी काम चल सकता है, यदि आप अपने आप धोना और तह करना सीख लें। फुरसत का एकाध घण्टा नित्य लगाने भर से आप चमचमाती हुई स्वच्छता अपना सकते हैं और अपना स्तर इतने मात्र प्रयत्न से लोगों की आँखों में काफी ऊँचा उठते देख सकते हैं।

घर में सामान यथा स्थान रखेंगे तो वह देखने में अच्छा लगेगा, खोयेगा नहीं, जब आवश्यकता होगी, तभी मिल जायेगा। इसके विपरीत यदि वह इधर-उधर बिखरा पड़ा होगा तो देखने में कूड़े के ढेर-सा लगेगा, आवश्यकता होने पर सुई, दियासलाई जैसी वस्तुएँ नहीं मिलती और उन्हें तलाश करने में ढेरों समय बर्बाद होता है। सारी जगह-घिरी रहती है, लगता है चीजों ने इतनी जगह रोक रखी है कि कहीं पैर रखने की जगह नहीं। वस्तुओं की टूट-फूट भी ऐसी ही स्थिति में होती है और उसका प्रभाव आर्थिक स्थिति पर भी बुरा ही पड़ता है। अव्यवस्थित रखी हुई हर चीज कूड़ा कहलाती है। उपयोगी पुस्तकों का भी बेतरतीब ढेर किसी कोने में लगा दिया जाय तो वे कूड़ा-कचरा मात्र प्रतीत होंगी। यदि वे सुसज्जित रूप से आलमारी में रखी हुई होती तो एक बढ़िया पुस्तकालय के रूप में नयनाभिराम लगतीं। धर में झाड़ू लगाकर इकट्ठे हुए कूड़े को एक टोकरी या बाल्टी में यथास्थान रख दिया जाय तो वह भी अपने स्थान पर सुन्दर लगेगा, पर यदि उसी कूड़े को बिखराकर, छितराकर फैलाये रखा जाय तो भयानक अव्यवस्था एवं फूहड़पन का दृश्य उपस्थित हो जायेगा। संसार की कोई वस्तु कूड़ा-कचरा नहीं, केवल उसके रखने का गलत ढंग ही गन्दगी फैलाता है। मल-मूत्र को भी यदि खाद के गड्ढों में ठीक तरह ढककर रखा जाय तो वह सोना पैदा करने वाला बहूमूल्य खाद बन जाता है। गलत जगह पर रहने से वही दुर्गन्ध, बीमारी एवं घृणित दृश्य के रूप में कष्टकारक सिद्ध होता है। यदि वस्तुओं के यथा स्थान रखने की कला हम सीख लें तो सत्यं शिवं सुन्दरं के आध्यात्मिक आदर्श में एक सुन्दरम् के सफल उपासक माने जा सकते हैं।

व्यवस्थित जीवन-क्रमिक विकास

हमारा जीवन-क्रम व्यवस्थित है या नहीं, इसी एक बात पर क्रमिक-विकास की सम्भावना निर्भर रहती है। बाप के उत्तराधिकार में या लाटरी, सट्टे में किसी को आकस्मिक लाभ हो जाय, बात दूसरी है, पर जिन्होंने स्वाभाविक राजमार्ग पर चलते हुए किसी भी दिशा में आशाजनक उन्नति अपने बाहुबल से की है, उनमें एक गुण आवश्यक रूप से रहा है और वह है—दृष्टिकोण एवं कार्य-पद्धति की सुव्यवस्था। अस्त-व्यस्त जीवन का अभिशाप है। अव्यवस्था शक्तियों को बखेरती है। जो बारूद बिखर जायेगी वह गोली को किसी लक्ष्य तक पहुँचाने का झटका कहाँ से दे सकेगी ? सफलता, किसी भी दिशा में क्यों न मिलेगी तभी जब उसका क्रमबद्ध नियोजन किया गया हो। अधूरा और बिखरा हुआ काम, शक्ति और समय की बर्बादी के अतिरिक्त और प्रयोजन पूर्ण नहीं करता। इसलिए सफल व्यक्तियों की परम्परा का ध्यान रखते हुए हमें भी व्यवस्थित कार्य-पद्धति को ही अपनाना चाहिए। इसी का नाम सफाई है। सफाई का अर्थ है व्यवस्था—व्यवस्था का नाम है सफाई। वस्तुएँ कहीं न कहीं तो रखनी ही पड़ेगी। जगह तो वे लेंगी ही, पर यदि उन्हें बिखरकर पटक दिया गया है तो उन्हीं का काम गन्दगी होगी और यदि यथाक्रम रखी गई हैं तो उन्हें ही सुसज्जा कहा जायेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वच्छता मूलतः एक परिष्कृत दृष्टिकोण का नाम है। यह अध्यात्मिक गुण है। सब कुछ व्यवस्थित रहे। सब कुछ स्वच्छ, सुसज्जित एवं व्यवस्थित दिखाई पड़े, यह अभिरुचि जब परिपक्व हो जाती है तो व्यक्ति में एक तरह का उत्साह भरा रहता है, यह सतर्क सैनिक की तरह अपने आपको कटिबद्ध रखता है कि उस पर असावधानी का कलङ्क न लगाया जा सके। किसी प्रहरी सैनिक के लिए यह लज्जा की बात है कि उसकी असावधानी का लाभ उठाकर शत्रु अपने खेमे में भीतर घुस आवे और नुकसान पहुँचावे। इसी प्रकार मनुष्यता के अभिमानी किसी भले आदमी के लिए यह भी आवश्यक है कि वह न अपने विचारों में और न अपने व्यवहार में, कहीं भी अस्त-व्यस्तता का प्रवेश होने दें। आलसीपन और असावधानी बरतने का अर्थ है आधे मन से काम करना। आधे मन से काम करने वाला व्यक्ति आधा पागल या आधा मरा हुआ माना जा सकता है। देखा जाता है कि बीमार आदमी नित्य स्नान नहीं कर पाता और उसकी असमर्थता के कारण और भी कई तरह की सफाई में कमी रहती है, वह दूसरों पर आश्रित रहता है। अपना शरीर यथा स्थिति रखने में, दूसरों की सहायता ताकता है। उसके अपने लिए ठीक तरह ऊँचा संचालन कर सकना भी कठिन पड़ता है। ठीक उसी प्रकार एक मानसिक बीमारी भी कई आदमियों में घेरे रहती है और उसका नाम है—आलसीपन, उपेक्षा, आधे मन से काम करना, निरुत्साहित रहना, वक्त काटना और काम को पीछे के लिए धकेलते जाना। यदि दुर्गुण जिसमें भी हो समझना चाहिए, उसने अपनी स्थिति एक मानसिक रोगी जैसी बना रखी है। शरीर का रोगी अपनी ही चिर संचित आहार-विहार सम्बन्धी भूलों के कारण बीमारी के आक्रमण का शिकार बनता है। मानसिक रोगी आलसी एवं अस्त-व्यस्त व्यक्ति अपनी पतित आन्तरिक स्थिति का परिचय गन्दगी एवं अव्यवस्था द्वारा दूसरों को देता है, दूसरे लोग उसे ओछा और घृणित समझते हैं। इतना ही नहीं उसे आगे चलकर घाटे, हानि, परेशानी या असफलता के रूप में भारी क्षति उठानी पड़ती है और दिन-रात बेचैनी से कराहते रहने वाले रोगी की तरह उसे भी पश्चाताप की आग में निरन्तर जलते रहना पड़ता है।

अपना दुर्गुण अपना दोष

कुछ बातें ऐसी भी होती हैं, जिसमें मनुष्य का उतना दोष नहीं होता। आकस्मिक दुर्बलता के रूप मे कोई हानि या पीड़ा उठानी पड़ती है, तब लोगों की सहानुभूति उसके साथ रहती है। भूकम्प, बाढ़ अग्निकाण्ड, महामारी, दुर्बलता जैसे आकस्मिक कारणों से विपत्ति में फँसे हुए व्यक्ति को दोष नहीं दिया जाता पर उस असफल विद्यार्थी के लिए किसकी सहानुभूति होगी जो सालभर तक इधर-उधर मटरगस्ती करता रहा, पुस्तकों को भार समझकर यहाँ-वहाँ पटकता रहा, अधूरे मन से पन्ने इधर-उधर उलटकर रख दिये। ऐसे लड़के को फेल होना ही था। उसके लिए कोई आँसू नहीं बहाता, वरन् असफलता का उचित दण्ड मिलने पर एक हल्का-सा सन्तोष अनुभव किया जाता है। जिसने बही खाते ठीक नहीं रखे, लेन-देन में लापरवाही बरती, आमदनी खर्च का सन्तुलन ठीक नहीं किया, बाजार के उतार-चढ़ाव की ओर से आँखें मीचलीं और किसी प्रकार दुकान खोलने, बन्द करने, सौदा बेचने भर की बेगार भुगतता रहा, ऐसे व्यक्ति को घाटा लगना ही चाहिए, दिवाला निकलना ही चाहिए। उसकी हानि एवं दुर्गति पर कौन आँसू बहावेगा ? प्रकृति के नियम बड़े कठोर हैं। वे किसी के साथ भी रिआयत नहीं बरतते। न चोर न सन्त कोई भी प्रकृति के कठोर नियमों से बच नहीं सकता। परिश्रमी और सतर्क चोर भी लाभान्वित होता है और आलसी एवं असावधानी सन्त, सज्जन भी पग-पग पर असफलता की ठोकरें खाता है। आलस, असफलताओं का प्रमुख कारण है। असावधानी उतनी ही घातक बीमारी है जितनी आधे-अङ्ग की लकवा मार जाने की व्यथा। जिसने इन दोष-दुर्गुणों को अपना रखा है, उसने अपने भविष्य को अन्धकारमय बनाने का पथ प्रशस्त कर रखा है—यही मानना चाहिए।

गन्दगी बाहर से देखने में एक फूहड़पन एवं कुरुचि का प्रदर्शन मात्र मालूम पड़ती है, पर वस्तुतः वह उतनी हल्की बात है नहीं उस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुराई की जड़ काफी गहरी है। व्यक्ति की अन्तः चेतना जब अर्ध-मूर्छित होती है, तब ही वह आलसी और असावधान रहता है। चूल्हे में आश्यकता की अपेक्षा आधी चौथाई लकड़ी ही जलाई जाय तो पकाई जाने वाली वस्तु नियत समय पर ठीक तरह पक जायेगी, इसकी कोई आशा नहीं। इसी प्रकार अधूरापन और अधूरे पुरुषार्थ से जो कुछ किया जा रहा है, उसकी उत्कृष्टता एवं सफलता को भी संदिग्ध ही समझना चाहिए। स्पष्टतः असावधानी का फलितार्थ असफलता ही होना चाहिए।

सामान्य नहीं असामान्य

गन्दगी का बाहरी स्वरूप उतना घातक नहीं, उसमें आँखों को बुरा लगना, बदबू फैलना, चीजों का अस्त-व्यस्त होना जैसी छोटी-सी हानियाँ हो सकती हैं पर मूल बात बहुत गम्भीर है। वह मनुष्य की आन्तरिक हीन स्थिति के प्रमाण मात्र है और इस हीनता से जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में इतनी हानियाँ उठानी पड़ सकती हैं, जिसकी तुलना में गन्दगी को देखने, सूँघने में प्रतीत होने वाली कुरुचि तो नगण्य है। छींकें आना कोई बात नहीं है पर उसके पीछे छिपी हुई जुकाम की सम्भावना चिन्ताजनक है। शरीर वस्त्र, घर, सामान को गन्दा या अव्यवस्थित रखने में चाहे तात्कालिक हानि बहुत बड़ी न हो पर उस बुरी आदत के कारण जिससे कि यह बिखरापन दिखाई दे रहा है, अनेकों प्रकार की असफलताओं का मुँह देखना पड़ सकता है।

स्वच्छता, आन्तरिक उत्कृष्टता को स्थिर रखने और बढ़ाने का एक व्यायाम है। दण्ड-बैठक का अपने आप में कोई विशेष महत्व न भी माना जाय तो भी उसके द्वारा प्राप्त होने वाली सुदृढ़ता से जो लाभ मिलते हैं, उनकी उपयोगिता कम नहीं आँकी जानी चाहिए। इसी प्रकार सफाई रखने में आन्तरिक सतर्कता, व्यवस्था, उत्कृष्टता एवं जागृति जैसे उच्च आध्यात्मिक गुणों का परिष्कार होता है और उनके आधार पर व्यक्तित्व की सर्वाङ्गीण उन्नति की व्यापक सम्भावनाएँ बढ़ती हैं। स्वच्छता के लिए लगाये गये मनोयोग एवं श्रम को एक प्रकार से व्यक्तिगत सद्गुणों के परिष्कार का व्यायाम ही मानना चाहिए। यह सम्भव है कि कोई अमीर आदमी नौकरों के द्वारा अपने शरीर, वस्त्र, घर, सामान की, सफाई का प्रबन्ध कर लें पर जब तक स्वयं ही उस ओर ध्यान न दिया जाय। नौकरों के साथ-साथ स्वयं भी उस स्वच्छता-क्रम में भाग न लिया जाय, तब तक आन्तरिक परिष्कार का उद्देश्य पूरा नहीं होता। नौकर भी काम करे तो भी उसकी देखभाल स्वयं करनी चाहिए और जिस प्रकार धन कमाने आदि बड़े कामों का ध्यान रखा जाता है, उसी प्रकार सर्वाङ्गीण स्वच्छता की व्यवस्था बनाने में नौकरों का सहयोग एवं मार्ग-दर्शन स्वयं ही करना चाहिए। जिनके पास नौकर नहीं हैं, उन्हें तो इस मानसिक व्यायाम को स्वयं ही करना चाहिए। हर वस्तु स्वच्छ और सुसज्जित रखने के जो गर्व, गौरव, असन्तोष एवं उल्लास का अनुभव होता है, उसका लाभ स्वयं ही आना चाहिए।

गन्दगी से लड़ने में मनुष्य की वैसी ही शूर वीरता मानी जायेगी जैसी—चोर, डाकू, सिंह, व्याघ्र आदि से मुकाबला करने में होती है। सीमा के रक्षक सैनिक शत्रु की हरकतों का ध्यान रखते हैं और जहाँ-कहीं भी कोई अवांछनीय सम्भावना दिखाई पड़ती है, वहीं अपना सारा ध्यान एकाग्र करके बन्दूक तान लेते हैं। ऐसी ही सावधानी गन्दगी एवं अव्यवस्था की ताड़का, पूतना के प्रति हमें भी बरतनी चाहिए। इन दुष्टाओं ने जहाँ-कहीं भी अपना घोंसला बनाना शुरू किया हो, वहीं से उन्हें हटा देना चाहिए। बर्रों का छत्ता, बिच्छुओं का घर कोई अपने निवास-स्थान के साथ-साथ नहीं रहने देता। गन्दगी का कहीं भी कोई अड्डा अपने शरीर या सम्पर्क क्षेत्र में स्थापित नहीं होने देना चाहिए। अन्यथा उसे हर प्रकार की हानि ही हानि होगी। बीमारी, कुरूपता, लोक-निन्दा आर्थिक हानि ही नहीं, अस्वच्छता की सहन करने की वह आदत भी बन जायेगी, जो अनेक प्रकार की अव्यवस्थाओं को भी सहन करते रहते करने का स्वभाव बनकर वे अगणित प्रकार की असफलतायें तथा उलझनें सामने आ खड़ी करेंगी। बीज छोटा होता है पर उसके कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उगे हुए वृक्ष का विस्तार काफी बड़ा होता है। ठीक उसी प्रकार गन्दगी सहन करने की बुरी आदत छोटी-सी दीखती है पर उसके फलितार्थ बहुत भयानक होते हैं। अस्त-व्यस्त एवं अव्यवस्थित स्वभाव के कारण गन्दगी ही नहीं पनपती जीवन की उज्जवल सम्भावनाओं की ज्योति को भी बुझा देती है।

सुकरात की शिक्षा

सुकरात के पास एक व्यक्ति आत्मिक उन्नति का मार्ग पूछने गया। उन्होंने सिर से पाँव तक उसे देखा और कहा—आत्मिक उन्नति का प्रथम मार्ग उसके लिए यही है कि अपने बिखरे हुए बालों को तेल डालकर कँघी करें और बिना बटन वाले मैले कुर्ते को धोये और उसमें बटन टाँक कर फिट करें। लोगों ने सुकरात से पूछा—अन्य धर्मोपदेश तो ईश्वर प्राप्ति के विविध-विध धर्मानुष्ठान करने की शिक्षा देते हैं, फिर आपने इतनी साधारण बात क्यों बताई ? सुकरात ने कहा—व्यक्तिगत जीवन की सुव्यवस्था ही आत्म-निर्माण का प्रथम सोपान है, जो उसे सँभाल लेता है, उसी के लिए यह सम्भव होता है कि आत्मोन्नति के अन्य कदम उठा सकें। यह व्यक्ति सिर से पैर तक अव्यवस्थित था, जब तक यह व्यवस्था की साधना न करे, तब तक ईश्वर प्राप्ति एवं आध्यात्मिक प्रगति के लिए किसी प्रकार की आशा नहीं करनी चाहिए।

सुकरात की यह शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं सारगर्भित है। वह इस जिज्ञासु के लिए ही नहीं, हम सबके लिए समान रूप से विचारणीय एवं माननीय है। ऊँची-ऊँची महत्त्वाकांक्षाएँ हम किया करते हैं पर प्रगति की लम्बी मंजिल पर क्रमबद्ध रूप से कैसे आगे बढ़ सकते हैं ? यदि वस्तुतः कोई आध्यात्मिक या भौतिक महत्वाकांक्षाएँ पूर्ण करना चाहता हो तो उसे हवाई उड़ानें उड़ना छोड़कर व्यावहारिकता का मार्ग अपनाना चाहिए। लक्ष्मी देवी प्रसन्न होकर सोने की अशर्फियों का घड़ा भरकर घर में रख जायेंगी, पर घट में भैरव सिद्ध कर लेने पर अलाउद्दीन के चिराग की तरह नाना प्रकार की मनोकामनाएँ पूरी होती रहेंगी, स्त्रोत पाठ कर लेने पर भगवान् आकर अपने विमान में स्वर्ग ले जायेंगे, दो-चार दिन में कुण्डलिनी शक्ति जगा लेने पर संसार की समस्त ऋद्धि-सिद्धियाँ करतलगत हो जावेंगी, लाटरी का टिकट पर लाखों रुपये का इनाम मिलेगा, सट्टा लगाते ही मनोवाँछित धन प्राप्त कर अमीरी का सुखोपभोग करेंगे। दवा की गोलियाँ खाते ही सिंह पछाड़ने वाले पहलवान बन जायेंगे, इस तरह की सस्ती कल्पनाओं की उड़ानें भरते रहना दिल बहलाव का एक साधन हो सकता है, पर इससे प्रयोजन कुछ भी सिद्ध होने का नहीं। यदि उच्च सफलताएँ इतनी सस्ती होतीं तो उन्हें हर कोई प्राप्त कर लिया करता और तब उनका कोई मूल्य या महत्व भी शेष न रह जाता।

क्या भौतिक क्या आध्यात्मिक कोई भी उन्नति क्रमिक विकास के राजमार्ग पर चलने से ही सम्भव हो सकती है और यह यात्रा हर किसी को अपने पैरों पर ही चलकर पार करनी पड़ी है। आगे भी यदि कोई उस लक्ष्य तक पहुँचेगा तो वह वही व्यक्ति होगा, जो एक-एक करके कक्षाएँ पार करेंगे। सीढ़ियाँ पर क्रमशः ही ऊपर चढ़ना पड़ता है। स्कूल की कक्षाएँ नम्बर से ही से ही पास करनी पड़ती है। आत्मिक विकास भी सद्गुणों को बढ़ाने का प्रयास करना पड़े और न दुर्गुणों का समाधान करने का संघर्ष करना पड़े, बस सरलतापूर्वक सब कुछ ठीक हो जाय आत्मिक लाभ मिल जाय, भौतिक उन्नति हो जाय—ऐसा सोचते रहना शेखचिल्ली की योजनाओं की तरह निरर्थक है। प्रगति चाहे भौतिक हो चाहे आध्यात्मिक किन्हीं योग्यताओं, प्रतिज्ञाओं एवं विशेषताओं के आधार पर ही उपलब्ध होती है। चोरी, डकैती जेबकटी, ठगी जैसे दुष्ट कामों में भी वे ही सफल हो जाते हैं, जिनमें कुछ चातुर्य कुछ प्रतिभा, कुछ सूझ-बूझ विशेषता नियमित होती है। यदि कोई विशेषता न हो तो इस प्रकार के दुष्कर्मों तक में सफलता नहीं मिल सकती। बुरे कामों की अपेक्षा अच्छे काम स्वभावतः कठिन होते है पतन की तुलना में उत्थान में श्रम अधिक करना पड़ता है। अतएव आत्मिक या भौतिक प्रगति में भी उन विशेषताओं को बढ़ाया ही जाना चाहिये, जिनके आधार पर आगे बढ़ सकना सम्भव होता है, होता रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तित्व विकसित करने वाली विशेषता

व्यक्तित्व को विकसित करने वाली विशेषताओं में सर्व प्रथम स्वच्छता का स्थान है। शरीर वस्त्र, घर सामान का यथा स्थान रखना निर्मल रखना भले ही साधारण-सी बात दीखती है पर उसके लिये निरालस्यता एवं जागरूकता दोनों ही अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं। जिनकी सुरुचि—अन्तः चेतना—परिष्कृत न हुई होगी, यह न गन्दगी हटा सकेगा न सफाई रख सकेगा। अस्त-व्यस्तता को दूर करना और व्यवस्था बनाने में दत्त-चित्त रहना यही तो स्वच्छता का आधार है। बाहरी सफाई तो मानसिक उत्कृष्टता का प्रमाण परिचय मात्र है। भीतर से जिस आलस्य और प्रमाद ने घर कर रखा है, वह धोबी, नाई, दर्जी, मोची, झाड़ू लगाने वाले की सहायता से केवल दिखावे भर की सफाई ही रख सकेगा। स्वच्छता उसके स्वभाव में सम्मिलित न हो सकेगी। अतएव भोजन स्नान, आध्यात्मिक पूजन आदि करने की तरह गन्दगी हटाने और स्वच्छता बढ़ाने में अपना निज का योगदान भी अधिकाधिक रखना चाहिये ताकि वह श्रेष्ठ सद्गुण अपने स्वभाव का एक अङ्ग बन सके।

हिसाब-किताब की स्वच्छता, काम निपटाने की स्वच्छता और वचन की स्वच्छता जैसे महान् आध्यात्मिक गुण दैनिक जीवन में पगपग पर बरती जाने वाली स्वच्छता के ही परिष्कृत स्वरूप है, जिसका पैसा लेना या देना है उसका हिसाब ठीक रखना। कब कितना दे दिया, कब कितना देना है आदि समुचित लिखा-पढ़ी रखी जाय तो गन्दा हिसाब रखने वाले, भूल से सब कुछ पड़ा रखने वाले, समय पर इसी कारण बहुत-सा नुकसान धोखा या जोखिम सदा उठाते रहते हैं, वह न उठानी पड़े। हिसाब के मामले में ढीलपोल रखने वाले सदा घाटे में रहते हैं। जिनके साथ लेन-देन है, वह इस कमजोरी को ताड़ लेता है और भुलक्कड़पन का अनुचित लाभ उठाने से नहीं चूकता। जिनके काम गन्दे पड़े रहते हैं। फायलें, कागज, चिट्ठियाँ, बिल, वाउचर, इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। कब किस काम को, किस क्रम से निपटाना है, इसका जिन्हें ध्यान नहीं रहता, उनके आवश्यक काम या कागज बेखबरी में पड़े-पड़े बर्बाद होते रहते हैं और जब उनके खराब होने का संकट सामने आता है तो पश्चाताप के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं रहता। काम का सिलसिला ठीक तरह जमाये रहना जिन्हें आता है, वे उतने ही समय और उतने ही श्रम में कहीं अधिक काम निपटा लेता है, जितना वे तरतीव और वे सिलसिले कुछ खटपट करते रहने वाले कर पाते हैं। काम को क्रमबद्ध रूप से करना एक प्रकार की स्वच्छता ही तो है।

स्वच्छता एक महान् आध्यात्मिक गुण

मन में कुछ और पेट में कुछ और, कहना कुछ और, करना कुछ और इस तरह की भावनात्मक अस्वच्छता जिनके मन में भरी रहती है, वे न कोई एक निर्णय कर पाते हैं, न एक रास्ते चल पाते हैं, न उनकी एक दिशा निश्चित रहती है। दिग्भ्रान्त की तरह कभी ऐसे कभी वैसे सोचते, करते रहते हैं। इस स्थिति में शक्ति का अत्यधिक अपव्यय होता है। क्रम बन नहीं पाता, व्यवस्था जम नहीं पाती! न सन्तोष मिलता है और न शान्ति। हर घड़ी कुछ खोया-खोया सा लगता रहता है। अशान्ति, उद्वेग एवं खोज के उबाल आते रहते हैं पर यह मन एवं कर्म के बीच सामंजस्य रहे, विचारणा, वाणी और क्रिया में समस्वरता रहे तो एक निर्धारित क्रम पर चलता हुआ, मनुष्य प्रगति के पथ पर तेजी से आगे बढ़ता चलता रह सकता है। मानसिक स्वच्छता—दूसरों की दृष्टि में मनुष्य की प्रामाणिकता बढ़ती है और यह स्मरण रखना ही चाहिए कि प्रामाणिकता ही किसी मनुष्य का वास्तविक मूल्य है। गरीब होते हुए भी वह गम्भीर माना जायेगा, लोग उसके प्रति सद्भाव रखेंगे और सहयोग करेंगे। जन-सम्मान और जन सहयोग की सीढ़ी पर चढ़ते हुए ही तो व्यक्ति आत्मोन्नति का—भौतिक समृद्धि का लाभ प्राप्त कर सकता है। अतएव मन की स्वच्छता, आचरण की स्वच्छता को, ईश्वर तक पहुँचने का सुनिश्चित मार्ग माना गया है। लौकिक प्रगति भी उसी विभूति-विशेषता के साथ जुड़ी हुई है।

स्वच्छता एक मनोवृत्ति है, एक साधना है, इनकी सिद्धि जिसे हो गई वह मलीनता के नरक से छुटकारा पाकर निर्मलता का स्वर्गीय वातावरण उपलब्ध करता है। जिसने भीतर और बाहर से स्वच्छ रहना सीख लिया समझना चाहिये, उसने मनुष्यता को सार्थक बनाने का प्रथम गुरु मन्त्र जान लिया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संयम बनाम सफलता

संयम-हमारी एक महत्वपूर्ण आवश्यकता

राम – रावण युद्ध का प्रथम दौर प्रारम्भ हुआ। रावण ने अपने सर्वोच्च सेनापति मेघनाद को ही सबसे पहले लड़ने भेजा। वह मेघनाद जिस पर रावण के युद्ध का, उसकी विजय का पूरा-पूरा दारोमदार था। मेघनाद को आता देख राम पीछे हट गये और बोले—"लक्ष्मण! तुम्हें ही मेघनाद से युद्ध करना है।"

कैसी विचित्र बात थी। अपार शक्तिशाली राम को पीछे क्यों हटना पड़ा मेघनाद से और अकेले लक्ष्मण को ही क्यों उसका सामना करने भेजा ? इसका स्पष्टीकरण करते हुए राम ने ही कहा है, "लक्ष्मण! मेघनाद बारह वर्षों से तप कर रहा है, ब्रह्मचारी है और तुमने चौदह वर्षों से स्त्री का मुँह तक नहीं देखा। मेरे साथ रहकर, तपस्वी, संयमी जीवन बिताया। इसलिये तुम ही मेघनाद को हरा सकते हो। मैं तो गृहस्थ हूँ।" और सचमुच लक्ष्मण ही उसे हरा सके। मेघनाद को इन्द्रजीत कहा जाता है। इसका तात्पर्य वस्तुतः अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर लेने से है।

पितामह भीष्म के बारे में कौन हिन्दू जानता न होगा! महाभारत का वह घनघोर युद्ध, जिसमें श्रीकृष्ण को भी अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग करनी पड़ी उनके समक्ष। हनुमान से लेकर महर्षि दयानन्द, विवेकानन्द तथा बहुत-से महापुरुष संसार में जो कुछ कार्य कर सके, उसका मूलाधार उनका संयमी ब्रह्मचर्यपूर्ण जीवन ही था। स्वयं महात्मा गाँधी का जीवन उस समय से प्रकाश में आया, जब से उन्होंने अखण्ड संयम, ब्रह्मचर्य की धारणा की।

मनुष्य का शरीर एक शक्ति उत्पादक डायनेमो की तरह है। इससे नित्य निरन्तर महत्वपूर्ण शक्तियों का उत्पादन होता रहता है। जब इन्हें रोककर संग्रहीत कर लिया जाता है और उचित दिशा में लगा दिया जाता है तो महान् कार्य सम्पन्न होते हैं और जब इसे विषय भोगों के छिद्रों से नष्ट कर दिया जाता है तो मनुष्य दीनहीन, असहाय, परतन्त्र-परावलम्बी बन जाता है। अपने शक्ति धन को लुटा देने के बाद मनुष्य थोथा है, रोता है। अपनी शक्ति को संचित रखकर उसका सदुपयोग करने से ही मनुष्य का जीवन प्रभावशाली, महत्वपूर्ण बनता है।

इसीलिए हमारे मनीषियों ने संयम-ब्रह्मचर्य को जीवन का आवश्यक अङ्ग बताया। उसे आवश्यक धर्म कर्तव्य कहा है। धर्म का एक अङ्ग बना दिया। वस्तुतः ब्रह्मचर्य ही जीवन है, तेज है, शक्ति है, सामर्थ्य है। ब्रह्मचर्य के अभाव में उत्कृष्ट जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती। मनुष्य जितना संयमी होगा। उसका व्यक्तित्व उतना ही प्रखर, तेजस्वी, सामर्थ्यवान् बनेगा। दूसरों को प्रभावित कर सकेगा।

यह ध्रुव सत्य है और हमारे प्राचीन मनीषियों से लेकर आधुनिक महापुरुषों का अनुभव सिद्ध तथ्य है कि भोगों में मनुष्य को सुख नहीं मिल सकता। गीताकार ने कहा है—

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः।।

"जो ये इन्द्रिय तथा विषयों के संयोग से उत्पन्न होने वाले सब भोग हैं, वे निःसन्देह दुःख के ही हेतु हैं और अनित्य हैं। हे अर्जुन! बुद्धिमान् विवेकी पुरुषों को उसमें रमण नहीं करना चाहिये।

मनुष्य जब सुख की खोज में इन्द्रिय और विषयों को साधन बनाकर प्रयत्न प्रारम्भ करता है। मन, बुद्धि को भी इसी ओर लगाता है तो इसी प्रयत्न में अनेकों दुःखों का उसके लिये सूत्रपात हो जाता है। मनुष्य जब शरीर की आवश्यकता के लिये नहीं वरन् रसना के माध्यम से अनेक स्वाद के आनन्द के लिए भोजन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करता है तो भोजन मात्रा और उसके स्वरूप का निर्णय पेट न करके जिह्वा करने लगती है। जीभ की तृप्ति के लिये मनुष्य तरह-तरह के सुस्वाद भोजन करता है और परिणाम रोग, शारीरिक कष्टों के रूप में ही प्राप्त होता है। यही बात जननेन्द्रिय के सम्बन्ध में है। उसका उपयोग सन्तानोत्पादन के लिये होता है। उसके साथ जुड़ा हुआ सुख तो प्रकृति का एक पारितोषिक और वरदान है। लेकिन जब मनुष्य सन्तानोत्पादन के लिये नहीं वरन् उस सुख को प्रधान मानकर विषयों में प्रवृत्त होता है और प्रकृति की मर्यादा का उल्लंघन करता है तो परिणाम में अपनी शक्तियों का ह्रास करता है और दुःखों को निमन्त्रण देता है। अपनी जीवनी शक्ति का नाश करके मनुष्य मृत्यु की ओर अग्रसर होता है।

विषय-भोगों में, इन्द्रिय, मन, बुद्धि में, संसार और इसके पदार्थों में मनुष्य को सुख मिल ही नहीं सकता। जिसे हम सुख समझते हैं उसके बदले वस्तुतः बड़े दुःख के रूप में मूल्य चुकाना पड़ता है। जब तक वह सुख नहीं मिलता तो उसे प्राप्त करने की बेचैनी, फिर भोगते ही वह समाप्त हो जाता है। फिर नये सिरे से उसकी प्राप्ति के लिये मन, बुद्धि, इन्द्रियों को सञ्चालित करना पड़ता है और कोल्हू के बैल की तरह एक अन्धी दौड़ में मनुष्य को इनके पीछे दौड़ते रहना पड़ता है। दुःख, पश्चाताप, क्लेश, आत्मग्लानि, आसक्ति न जाने कितनी ही हानियाँ उठानी पड़ती हैं इनके लिये। इसमें कोई सन्देह नहीं कि विषय-भोगों में हम जितने लिप्त रहते हैं, उतने ही मृत्यु और विनाश की ओर ही अग्रसर होते जाते हैं।

क्या आपको उस व्यक्ति की घटना याद है जिसने एक सुन्दर फूल देखा देखकर उसका मन ललचाया। उसने उसे तोड़कर नाक से सूँघा ही था कि वह दर्द के मारे चिल्ला उठा। क्यो ? उस फूल के अन्दर एक मधुमक्खी बैठी थी। सूँघते समय उसी ने उसे डङ्क मार दिया और वह दुःख से तिलमिला उठा। विषय-भोगों का सुख भी इसी तरह है। वह हमें लुभावना लगता है, हम उसमें लीन होते हैं लेकिन परिणाम के दुःख के जहरीले डङ्क से भी हमें घायल होना पड़ता है।

हमारे शरीर में निहित जीवनी शक्ति ही सर्वत्र अपना काम करती है। सुनने में, खाने में, पीने में, काम करने में, यही अपना काम करती है। अन्य क्षेत्रों में शक्ति का इतना क्षय नहीं होता जितना सम्भोग में होता है। एक सीमा तक जबकि भोग मर्यादित होते हैं, तब शक्ति अनावश्यक रूप से खर्च नहीं होती। लेकिन अमर्यादित वासना-तृप्ति में अन्य विषयों से अधिक शक्ति का क्षय होता है। इसलिये यह अधिक हानिकारक सिद्ध होता है। संयम में ब्रह्मचर्य इन्द्रिय-निग्रह को ही अधिक महत्व दिया गया है। यद्यपि अन्य भोगों का संयम भी आवश्यक होता है लेकिन मुख्य रूप से काम-वासना तथा रसना का संयम ब्रह्मचर्य का मूलाधार है, अन्य सब इसके पूरक हैं।

अनियंत्रित, अमर्यादित वासनापूर्ति का हमारे शरीर, मन, ज्ञानतन्तुओं पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। उससे केवल कुछ शारीरिक सत्त्व जो कि महत्वपूर्ण होते हैं, उनका क्षरण ही नहीं होता अपितु सूक्ष्म प्राणशक्ति, जीवनी शक्ति का भी बहुत बड़ा अंश व्यय होता है। इस अपव्यय से हम खोखले, रिक्त, जर्जरित बनते जाते हैं, चाहे हमारा बाहरी कलेवर कितना ही मोटा-ताजा क्यों न दीखता हो। बीमारियाँ, रोग कीटाणु जिसे धर दबाते हैं, उसे मृत्यु समय से पूर्व ही उठा ले जाती है। यह सब उस जीवनी शक्ति के अपव्यय के कारण ही होता है।

वासना में लिप्त रहने से वह जीवन-रस जो शरीर को तेजवान्, रसवान् बनाता है, काफी मात्रा में नष्ट होता है और यही कारण है कि भोगी मनुष्य निस्तेज रसहीन, सूखा-सा दिखाई देता है। उसके जीवन में सरसता, चेतना एवं स्फूर्ति जैसी नाम मात्र को शेष रहती है। उत्साह और साहस की मात्रा ऐसे लोगों में बहुत ही कम दृष्टिगोचर होती है।

इस तरह से होने वाले अपार क्षय को रोकने के लिये शक्तियों को संगृहीत सञ्चित करने के लिये, परिणाम में प्राप्त होने वाले दुःखों से बचने के लिये, हमारे पूर्वजों ने संयम तप, ब्रह्मचर्य-जीवन के लिये आवश्यक बताया है। यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कोरी कल्पना नहीं है व्यवहार सिद्ध है। विषय में नष्ट होने वाली शक्ति को आप बचालें, उसे उपयोगी कार्यों में लगावें तो यह शक्ति अपने सूक्ष्म से सूक्ष्म रूपों में परिवर्तित होती हुई महत्वपूर्ण कार्यों को सम्पन्न कर देगी। उर्द्धरेतस् का यही अर्थ है कि मनुष्य अपनी जीवनी-शक्ति गन्दे मार्ग में नष्ट न करे उसे सञ्चित कर उत्कृष्ट कार्यों की साधना में लगाता है, इसे कई सूक्ष्म शक्तियाँ परिवर्तित कर कला, साहित्य, ज्ञान-विज्ञान का सृजन करने लगता है।

काम-शक्ति एक महत्वपूर्ण शक्ति है जिसको निम्नगामी बनाकर उसे नष्ट करके अपने दुःखों का आधार बनाया जा सकता है, समाज में अपराधों को प्रोत्साहन दिया जा सकता है। या इसके विपरीत इसे संयमित कर उपयोगी महान् कार्यों में व्यक्त किया जा सकता है और इसीलिये संयम की आवश्यकता को महत्व दिया गया है। कोई व्यक्ति यदि अपनी शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक क्षमताओं को बढ़ाना चाहे, कोई महत्वपूर्ण सृजन अनुसन्धान का काम करना चाहे तो उसे संयम का पथ ही अपनाना पड़ेगा।

क्या आप शक्ति-सम्पन्न, विजयी, सफल, महान् जीवन बिताना चाहते हैं ? क्या आप अपना व्यक्तित्व उत्कृष्ट बनाना चाहते हैं ? तो आपके लिए एक ही मार्ग है, वह है संयम का मार्ग, ब्रह्मचर्य की साधना। भोगों के पथ पर चल कर शक्ति का, महानता का, विश्वास का पथ सन्धान नहीं किया जा सकता। यह उतना ही सत्य है जितना छिद्रयुक्त घड़े में पानी का सञ्चय नहीं किया जा सकता। संयम को छोड़कर अन्य कोई मार्ग नहीं है अपने उत्कर्ष का, जीवन का, महानता का, सुख का, शान्ति का।

इन्द्रिय संयम की आवश्यकता

मनुष्य के शरीर में परमात्मा ने दस इन्द्रियाँ दी हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ। १—आँख २—कान ३—नाक ४—जिह्वा ५—त्वचा। ये पाँच इन्द्रियाँ विषयों का ज्ञान प्राप्त कराती हैं। आँख से भला-बुरा देखना, कान से कोमल-कठोर शब्द सुनना, नाक से सुगन्ध-दुर्गंध सूँघना, जिह्वा से खाद्य-अखाद्य को स्वाद जानना, त्वचा से कोमलता-कठोरता का अनुभव करना। प्रत्येक इन्द्रिय का एक देवता होता है, उसी से विषयों की उत्पत्ति होती है। आँख का विषय रूप है सूर्य देवता। सूर्य या अग्नि न हो तो आँखें बेकार हैं। कान का विषय शब्द, गुण आकाश है। नाक का विषय गन्ध और गुण पृथ्वी है। जीभ का विषय रस और गुण जल है। त्वचा का विषय स्पर्श और गुण वायु है। इन गुणों और शक्तियों के कारण इन इन्द्रियों का उपयोग बहुत अधिक है।

पाँच कर्मेन्द्रियों में १—वाणी २—हाथ ३—पैर ४—जननेन्द्रिय और ५—गुदा है। वाणी या मुख से बोलते हैं, स्वाद चखते हैं। हाथ से कार्य करते हैं, पैर से चलते हैं। जननेन्द्रिय से मूत्र त्याग और गुदा से मल निकालते हैं।

यह इन्द्रियाँ आत्मा की सुविधाजनक विकास यात्रा के सहायक उपकरण हैं। यह आत्मा के औजार हैं, सेवक हैं, परमात्मा ने इन्हें इसलिये प्रदान किया है कि इनकी सहायता से आत्मा अपनी आवश्यकतायें पूरी करे और सुख प्राप्त करे। यह सभी इन्द्रियाँ बड़ी उपयोगी हैं। सभी का कार्य जीव को उत्कर्ष और आनन्द प्राप्त करना है। यदि उनका सदुपयोग किया जाय तो मनुष्य निरन्तर जीवन का मधुर रस चखता हुआ जन्म को सफल बना सकता है।

ज्ञानेन्द्रियाँ ईश्वर ने शरीर में ऊपर की ओर बनाई हैं और कर्मन्द्रियाँ नीचे की ओर। इससे परमात्मा ने ज्ञान को प्रधानता दी है और यह संकेत दिया है कि ज्ञान के अनुसार, विवेक के अनुसार ही कर्म करो। इनसे तुम्हें सुख मिलेगा और अधोगामी विषयों में भटके तो यही इन्द्रियाँ तुम्हारे लिये काल रूप और विनाश का कारण बन जायेंगी।

उपनिषद्कार ने बताया है—

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रिय मनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।।

अर्थात्—यह शरीर एक रथ है, इस पर आरूढ़ होने वाला स्वामी जीवात्मा है। जीवात्मा को यह वाहन मोक्ष प्राप्त करने के लिये मिला

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। दसों इन्द्रियाँ इस रथ के घोड़े हैं। मन इन घोड़ों को नियन्त्रण में रखने वाली बागडोर है। इन्द्रियों के घोड़े विषयों की सड़क पर चलते हुए मुक्ति यात्रा की ओर बढ़ते हैं। इस वाहन पर सारथी है मनुष्य की बुद्धि और उसका विवेक। यदि वह सजग है तो इन्द्रियाँ विषयों में न भटक कर कुशलतापूर्वक अपने स्वामी को परमात्मा की समीपता में पहुँचा देती हैं।"

इन्द्रिय-संयम का सिर्फ इतना ही मतलब है कि इन्द्रियाँ जब भी विषयों की ओर दौड़ें, तब उन्हें सावधानी से सम्हाला जाय और उस शक्ति को बरबाद न किया जाय, जिससे आत्मा की विकास यात्रा पूरी होती है।

इन्द्रियों का उपयोग पाप नहीं है। विषय भी आवश्यक है। सच तो यह है कि अन्तःकरण की विविध क्षुधाओं, तृषाओं को तृप्त करने का इन्द्रियाँ एक उत्तम माध्यम हैं। शरीर की इन आवश्यकताओं को समय पर पूरा न किया जाता रहे तो जीवन का सन्तुलन उसी तरह बिगड़ जाता है, जिस तरह पेट को आहार न मिलने से स्वास्थ्य-सन्तुलन बिगड़ सकता है।

इन्द्रिय-नियन्त्रण का मूल मन्त्र है आत्म-संयम। शरीर की शक्तियाँ जीव की विकास यात्रा के लिये उपयोगी ही नहीं आवश्यक भी हैं। शरीर में बल और वीर्य की प्रचुर मात्रा न रहे तो वह आत्मिक आदेशों का पालन भली प्रकार नहीं कर सकेगा। इसलिये वीर्यरक्षा आवश्यक है और सम्भोग-क्रिया को नियन्त्रित कर दिया जाता है। यह सन्तानोत्पत्ति का साधन है ताकि भावी पीढ़ियाँ चलती रहें। पर बेकाम वीर्य-पात का कोई उपयोग नहीं, उल्टे उससे शारीरिक शक्ति का पतन होता है और मनुष्य की बुद्धि विभ्रमित होकर आत्मकल्याण का मार्ग छोड़ देती है।

आहार शरीर की बहुत बड़ी आवश्यकता है इसे सभी जानते हैं। आहार न मिले तो जीवित रहना मुश्किल हो जाय। यह शरीर के लिये अत्यन्त आवश्यक धर्म है किन्तु शरीर-रक्षा के लिये स्वाद की उपयोगिता समझ में नहीं आती। केवल स्वाद-स्वाद की लालसा में पेट खराब हो जाता है, स्वास्थ्य गिर जाता है। इस तरह आहार जो शरीर की आवश्यकता थी, वही विधर्मी बनकर हमारी शक्तियों के पतन का कारण बन जाता है। कोई भी इन्द्रिय हो उसके उपभोग की एक सीमा निर्धारित है। उस सीमा के अन्दर बने रहने से ही उसका सच्चा उपयोग किया जा सकता है। पर यदि उसका अतिक्रमण किया गया तो रोग और शोक घेर लेंगे। उपकारी इन्द्रियाँ ही तब बन्धन का कारण बन जायेंगी। इसलिये इन्द्रिय-निग्रह के लिये आत्म-संयम की बड़ी आवश्यकता है।

इतना जानते, समझते हुए भी लोग विषयासक्त देखे जाते हैं। इसका कारण भाँति-भाँति के प्रलोभन होते हैं। लोगों को तरह-तरह के भाग भोगते देखकर, श्रृंगार, सजावट तथा बनावट करते देखकर अविवेकीजन खुद भी वैसा ही करने के लिये लालायित होते हैं। इन प्रलोभनों में प्रायः नैतिक दृष्टि से कमजोर और निर्बल चरित्र वाले व्यक्ति ही फँसते हैं। जिनकी आवश्यकतायें विलासी इच्छायें, चटोरपन, अनुचित मांगें, नशे बढ़ हुए हैं, वे ही प्रायः प्रलोभनों के सामने घुटने टेकते और उनके दुष्परिणाम भोगते हैं।

इन प्रलोभनों से बचने के लिए प्रतिदिन कुछ समय निकालकर आत्मचिन्तन करना और आत्म-संकेतों द्वारा आत्मा तथा मन को बलवान् बनाना आवश्यक है—"मेरा मन पर पूर्ण अधिकार है। मैं अपने मन का स्वामी हूँ। वह मेरी आज्ञा से कार्य करता है। प्रचण्ड अग्नि और भयङ्कर तूफान भी मुझे नष्ट नहीं कर सकते। मैं अमर हूँ, शाश्वत हूँ। शरीर का सम्राट् मैं (आत्मा) असंख्यों सूर्यों की शक्ति रखता हूँ। मैं विश्व को प्रेममय देखता हूँ। मेरा मन से कोई विरोध नहीं। मैं जो कुछ करता हूँ, वह सब आत्म-कल्याण की भावना से होता है।" इस प्रकार का सङ्कल्प प्रतिदिन शरीर के तमाम झंझटों से थोड़ा समय निकालकर दुहराते रहना चाहिए। ऐसा करने से विषयों के प्रलोभनों से सावधान बने रहेंगे।

इन दिनों इस देश में दीर्घजीवी पुरुषों की कमी इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि वीर्य-रक्षा पर आवश्यक ध्यान नहीं दिया जाता।

इन्द्रिय-संयम के लिये ब्रह्मचर्य-व्रत की महिमा सर्वविदित है। इसकी शक्ति अमोघ मानी गई है और आज संसार में जितने व्यक्तियों ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

महान् और उपयोगी कार्य कर दिखाये हैं, वे किसी न किसी रूप में ब्रह्मचर्य के अनुगामी थे। आजकल के लोग जब कभी सम्भोग नीति की स्वच्छन्दता का प्रचार करते हैं, तब वे केवल भोग-प्रधान पार्थिव अंश को ही ध्यान में लेते हैं। जीवन की इतनी क्षुद्र कल्पना वे ले बैठे हैं कि थोड़े ही दिनों में उन्हें यह अनुभव हो जाता है कि ऐसी स्वतन्त्रता में किसी तरह की सिद्धि नहीं है और न सच्ची तृप्ति ही। उन्हें कभी सन्तोष नहीं मिलता।

मनुष्य शरीर में जीवात्मा का अवतरण निःसन्देह उसका बहुत बड़ा सौभाग्य होता है। विचार, विवेक और जीवन-मुक्ति के अन्य साधन जितने मनुष्य-योनि में मिले होते हैं, वे अन्यत्र उपलब्ध नहीं। मनुष्य चाहे तो अनन्त विभूतियों का स्वामी बन सकता है। मनुष्य देवता बन सकता है। मनुष्य भगवान बन सकता है। सारी सम्भावनायें इस शरीर में सन्निहित हैं किन्तु उनका उत्कर्ष और जागरण तभी सम्भव है जब शक्तियों का संयम किया जाय और उनके अनावश्यक अपव्यय को रोका जाय। इसके लिये इन्द्रिय-संयम का मनुष्य को प्रमुख आवश्यकता है। बिना इस कक्षा को उत्तीर्ण किये कोई आत्म-कल्याण की उच्च भूमिका प्राप्त नहीं कर सकता।

आत्मिक उन्नति की ही तरह भौतिक प्रगति भी मनुष्य जीवन के लिए अनिवार्य और उपयोगी है। बिना इसके जीवन सफल और सार्थक नहीं माना जा सकता। इसके लिए समय के सदुपयोग पर विशेष ध्यान देना होता है, कारण कि लौकिक जगत में 'समय' को सर्वोपरि शक्ति के रूप में मान्यता मिली है। जिसने इस शक्ति का संयमपूर्वक सदुपयोग सीख लिया, आगे बढ़ने और उत्कर्ष करने का सुयोग उसी के लिए सुरक्षित रहता है और जिसने लापरवाही के साथ वक्त काटा उसके पल्ले हाथ मलते रहना ही रहा। सबेरे जल्दी उठना, हर काम को फुर्ती और मुस्तैदी से निबटाना, अपने कार्यक्रम में आशावादी और उत्साही रहना समय विभाजित करके हर काम ठीक समय पर करना ऐसा दिव्य गुण है, जिसे अपनाकर कोई सामान्य स्थिति में पड़ा हुआ मनुष्य भी प्रगति के साधन उपलब्ध करता हुआ विजय श्री का वरण कर सकता है। घड़घड़ाती हुई विशाल मशीन के हर पुर्जे और कार्य पर ध्यान रखने वाला कोई जिम्मेदार इन्जीनियर जैसे पूरी सावधानी और मुस्तैदी से अपना काम करता है वैसे ही हमें भी जीवन की प्रत्येक क्रिया को सुव्यवस्थित रखने के लिए बिना तनिक भी आलस्य प्रमाद किये मानव जीवन के अपने महान उत्तरदायित्वों को तत्परता पूर्वक पूर्ण करना चाहिए। एक क्षण की भी बर्बादी करना अपने आपके साथ अत्याचार करना है। समय की पूँजी का पूरा-पूरा सदुपयोग हो, एक क्षण भी व्यर्थ न हो, इसका हमें ध्यान रखना चाहिए। मानसिक ढील-पोल के कारण हमारे सारे कार्य अनियमित होते हैं। छोटे काम जो कुछ ही देर में पूरे हो सकते थे इसी ढिलाई के कारण देर तक बिना किये हुये पड़े रहते हैं। पाश्चात्य देशों ने जो उन्नति पिछली दो तीन शताब्दियों में ही कर ली, उसके पीछे वहाँ के नागरिक जीवन में समय के एक-एक क्षण का सदुपयोग करने की प्रवृत्ति ने ही प्रधान कार्य किया है। हम आलस्य और असंयम में किसी प्रकार वक्त गुजारते रहते हैं और यह सोचते तक नहीं कि अपने वर्तमान कार्यक्रम को सुव्यवस्थित करने पर कितना वक्त फलतू निकाला जा सकता है और उसका सदुपयोग करके अपनीं अभिरुचि के किसी भी विषय में कितना अधिक आगे बढ़ा जा सकता है।

संसार में समय-समय पर अनुकूल और प्रतिकूल, प्रिय और अप्रिय घटनाएँ घटित होती रहती हैं। जीवन की धूप-छांह में भले और बुरे, हानि और लाभ के अवसर आते ही रहते हैं, इनके कारण हर्ष, शोक की प्रतिक्रिया भी मन पर होती ही है पर वह इतना अधिक न होनी चाहिए कि मानसिक संतुलन ही बिगड़ जाय। किन्हीं बातों घटनाओं के कारण ऐसा अधिक उत्तेजित हो जाना कि निराशा, क्षोभ, क्रोध, दीनता, रुदन, आत्महत्या शोक-मान्यता, चिन्ता, भय, आतंक, कायरता, उद्वेग अशान्ति, प्रतिहिंसा की भावनाओं से मनः क्षेत्र क्षुब्ध हो जाय, यह हमारी मानसिक दुर्बलता एवं हीन स्थिति का चिन्ह है। इस मानसिक असंयम पर काबू प्राप्त करने का प्रयत्न करना हर दूरदर्शी का आवश्यक कर्तव्य है। क्षोभ एक प्रकार का

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानसिक ज्वर है। इसमें मस्तिष्क की दशा अर्धविक्षप्ति जैसी हो जाती है। उस स्थिति में न तो कर्तव्य अकर्तव्य सूझ पड़ता है और न उस कठिनाई से पार होने का सही मार्ग ढूँढ़ सकने लायक मानसिक क्षमता शेष रह जाती है। यह अधपागलपन किसी भी समझदार आदमी के लिये लज्जास्पद ही कहा जा सकता है। संसार में जितने भी सत्पुरुष हुए हैं, जिनने भी प्रगति के पथ पर अग्रसर होने का आदर्श उपस्थित किया है, उनने अपने मनःक्षेत्र को स्वस्थ, शान्त और संतुलित रखने की आदत अवश्य डाली थी। क्षण में उत्तेजित, क्षण में भयभीत, क्षण में उत्साही क्षण में निराश, क्षण में प्रसन्न, क्षण में दुःख कातर होने वाले क्षणिक बुद्धि लोग उपहासास्पद ही कहे जा सकते हैं। इस संसार में समुद्र के ज्वार-भाटों की तरह हर घड़ी उथल-पुथल होती रहती है। अभी ऐसी परिस्थिति है कल वैसी आ सकती है। इस झंझावात में जो लोग दृढ़तापूर्वक खड़े रह सकते हैं, मानसिक संतुलन सही बनाये रह सकते हैं उन्हें ही पुरुष कहा जा सकता है, उन्हीं के पौरुष की सराहना की जा सकती है। घबराने वाले लोगों को बे मौत मरते और घोर गम्भीर लोगों को बड़े-बड़े तूफानों को हसते-हँसते खेलते पार कर लेते हुए देखा गया है। पर इस प्रकार की शक्ति असंयमी लोगों को प्राप्त हो सकनी कठिन है। ऐसे मनुष्य का चित्त सदैव अस्थिर रहता है और कठिनाइयों के मुकाबले में शान्त नहीं रह सकता।

संयमी ही आत्म-जयी होते हैं

परमाणु-शक्ति को धारण करने वाला बम, कहते हैं कि इतनी शक्तिशाली धातु का बना होता है कि उस पर बाहरी आघात का कोई प्रभाव नहीं होता। इतनी कड़ी और मजबूत धातु का आवरण उस पर न चढ़ाया जाय तो उस बम के किसी भी क्षण विस्फोट हो जाने का खतरा बना रहेगा। मानसिक शक्ति के सङ्गठन से आत्मा की चैतन्य शक्ति भी बढ़ती है। इस शक्ति को धारण करने के लिए भी पुष्टिमान शरीर की आवश्यकता होती है। अतः आत्म-विजय के साधक को शक्तियों पर नियन्त्रण करने की विद्या आनी चाहिए। एक और शक्ति को श्रम, साधना और एकाग्रता से संञ्चय करें और उसे इन्द्रिय-छिद्रों से निर्बाध बह जाने दें तो शक्तिशाली बन सकने का अनुमान गलत ही सिद्ध होगा। प्रयत्न और परिश्रम का फल संयम से मिलता है। जो अपने आवेगों, भावों और इच्छाओं को वश में रखता है, आत्म-विजय की कीर्ति का वही सच्चा अधिकारी है।

आवेगों को निरन्तर काबू में रखने की सहनशक्ति का ही पर्याय है संयम। आवेग और इच्छायें मन में पैदा होती हैं, फिर उनका प्रभाव और प्रतिक्रिया इन्द्रियों पर पड़ता है। इसलिये विपरीत परिस्थितियों से निरन्तर संघर्ष करने की मानसिक दक्षता होनी चाहिए। अवांछित बातों का प्रभाव मस्तिष्क को उत्तेजित न करे यही संयम की कसौटी है।

यूनान के विख्यात दार्शनिक 'पैरी क्लीज' के पास एक दिन कोई क्रोधी व्यक्ति आया। वह पैरीक्लीज से किसी बात पर नाराज हो गया और वहीं खड़ा होकर गालियाँ बकने लगा। पर पैरीक्लीज ने उसका जरा भी प्रतिवाद न किया। क्रोधी व्यक्ति शाम तक गालियाँ देता रहा। अँधेरा हो गया तो घर की ओर चल पड़ा तो पैरीक्लीज ने अपने नौकर को लालटेन लेकर उसे घर तक पहुँचा आने के लिए भेज दिया। इस आन्तरिक सहानुभूति से उस व्यक्ति का क्रोध पानी-पानी हो गया।

सामान्य श्रेणी का व्यक्ति होता तो वह भी लड़ बैठता और हिंसा भड़क उठती। दोनों पक्षों की हानि होती, शक्ति खर्च होती। आत्म-संयम मनुष्य को अनेक झगड़ों से बचाकर शक्ति का अपव्यय रोक देता है।

मानसिक संयम, शारीरिक संयम की बुनियाद है। मन इच्छानुवर्ती हो जाता है और उसकी दिशा संयम की ओर मुड़ जाती है तो शारीरिक शक्तियों का असाधारण विकास होना सम्भव है। यौगिक साधनाओं के लिये तो संयम साक्षात् कामधेनु है। बड़े-बड़े चमत्कार दिखाने वाले पहलवान् राममूर्ति संयम के बल से बड़ी-बड़ी गाड़ी, मोटरों को रोक लेते थे। हाथी को छाती पर चढ़ा लेना उनके लिये सहज कार्य था। संयम ही वस्तुतः साधना की पृष्ठभूमि है। इसके बिना कोई विशेष शक्ति पाना प्रायः असम्भव ही है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त कर लेना मनुष्य की सर्वोत्कृष्ट साधना है। इन्द्रियों की लालसायें, क्रोध, मोह, पापकर्म आदि से जो लोग घिरे रहते हैं, उनके शरीर और मन का पतन निश्चित है। इस कारण उन्हें व्याधियाँ सताती रहें तो यह कुछ अनहोनी बात न कही जायेगी। हीनता, दुर्बलता और मानसिक दुर्दशा का कारण ये वासनायें ही हैं। उनसे मुक्त हुए बिना आत्म-कल्याण का मार्ग प्रशस्त नहीं होता। मन में जब तक क्रोध है, तब तक विष की क्या आवश्यकता ? ईर्ष्या अग्नि के समान जलाती रहती है। इन्हीं में पड़े रहने से मनुष्य के जीवन का कोई भी लक्ष्य पूर्ण नहीं होता। कठोपनिषद् में इस सम्बन्ध में बड़ी मार्मिक उक्त दी है। लिखा है—

विज्ञान सारथिर्यस्तु मनः प्रग्रहवान् नरः।

सोऽध्वनः पारमाप्नोतितद्विष्णोः परमं पदम्।।

(१। ३। ६)

अर्थात् जो मनुष्य विवेकी सारथी के समान जागृत बुद्धि के द्वारा मन की लगाम को वश में रखता है, वह इस संसार से पार होकर परमेश्वर का परम पद प्राप्त करता है।

असंयम का प्रभाव मनुष्य जीवन पर सदैव ही दूषित होता है। गुस्से में या अपमानजनक बात सुनने के बाद उस पर तुरन्त अपना मन्तव्य प्रकट करना या अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करना भला नहीं होता। कामुकता पर भी इसी तरह सद्यःनिर्माण पतनकारी होता है। आप पर उस समय जो आरोप लगाये गये हैं, अथवा किसी कामुक विचार ने यदि आक्रमण किया है तो उसी वक्त उसे मत मान लीजिये। थोड़ी देर रुक कर, एकान्त में जाकर उस पर विचार कर लीजिये। हित-अहित का यथोचित किये बिना प्रायः हानि ही उठानी पड़ती है।

आक्रामक परिस्थिति को कुछ देर तक के लिये टाल देने से तुरन्त के आवेग से आप बच सकते हैं और निर्णय के लिये समय मिल जाता है। विपक्षी का व्यवहार भी तब तक शान्त हो जाता है। अपने मानसिक आवेशों को भी इसी तरह भुलाया-बहकाया जा सकता है। भावुकता से दूर रहकर विषय को हर दृष्टि से परख लेने से समस्या का एक अच्छा हल निकल आता है और व्यर्थ के शक्ति व्यय से बच जाते हैं।

मनुष्य की इन्द्रियाँ रात-दिन उसे अपनी ओर खींचती रहती हैं। जीभ चाहती है कि तरह तरह के मिठाई, पकवान और स्वादिष्ट व्यञ्जन खाने को मिलें। सुन्दर दृश्य देखने के लिये आँखें बार-बार उत्सुक रहती हैं, कानों को हमेशा मधुर सङ्गीत की खोज रहती है। इन्द्रियों और मन् के विशष असीम हैं। इनसे मनुष्य की कभी तृप्ति नहीं होती वरन् जीवन दिशा पूर्णतया साँसारिक हो जाती और आत्म-ज्ञान की महत्त्वपूर्ण आवश्यकता बीच में छूट जाती है। अनन्त सुख-सामर्थ्य, सौंदर्य और माधुर्य का भण्डार हमारी आत्मा है। वह नित्य, शाश्वत, अव्यय और अविनाशी है। काम, क्रोध, मद्, लोभ, मोह, राग, द्वेष, ईर्ष्या आदि हीन वृत्तियों के अधीन होकर आत्म-विजय की मूलभूत आकांक्षा को मनुष्य ठुकरा देता है। कदाचित् यह ज्ञान मनुष्य को मिल भी जाय तो भी वह इन प्रलोभनों से जल्दी ही नहीं छूट पाता। इसके लिये उसे संयम के अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है। संयमी व्यक्ति ही आत्मोन्नति की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

मान लीजिये आप थोड़ी देर के लिये इन्द्रियों का सुख प्राप्त कर ही लेते हैं तो क्या इससे लक्ष्यपूर्ति में कुछ मदद मिल सकती है ? क्या शक्ति के अपव्यय से निराशा, उत्तेजना और असन्तोष पैदा नहीं होता ? इन्द्रियों के सुख कभी मनुष्य को तृप्त नहीं कर पाये हैं। इसलिये उधर से मुख मोड़ने में ही मनुष्य का परम कल्याण है। वासनाओं की तृप्ति के लिये जिस तरह अभ्यास पड़ जाता है, उसी तरह आत्म-संयम की प्रवृत्ति को प्रखर बनाया जा सकता है। अपने उद्यम, पुरुषार्थ, साहस, संलग्नता विवेक आदि से उच्च आध्यात्मिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं किन्तु इन्द्रिय-लोलुपता को सर्वप्रथम दमन करना होगा। इसके बिना कोई तपश्चर्या चाहे वह आध्यात्मिक हो या सांसारिक उन्नति सम्बन्धी कभी भी फलदायक नहीं होगी। संयम ही सफलता का मूल-मंत्र है।

प्रायः लोगों को शिकायत रहती है कि क्या करें हम से तो संयम होता ही नहीं। अधिकांश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तियों का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि लोगों की सङ्कल्पशक्ति इतनी कमजोर होती है कि वे किसी उच्च विचार पर देर तक स्थिर नहीं रह पाते। एफ० डब्ल्यू० राबर्टसन ने लिखा है कि "चरित्र बल दो शक्तियों पर अवलम्बित है। दृढ़ संङ्कल्प और आत्म-दमन। सशक्त भावों के साथ-साथ उन पर दृढ़ अधिकार होना भी सच्चरित्रता के आवश्यक अङ्ग हैं।

आत्मा हमें सुपथ पर ले जाती है पर उसकी बात अनसुनी कर देने की मनुष्य में बहुत बड़ी कमजोरी है। उसकी तलाश तात्कालिक सुखों की ही होती है। दूरगामी परिणामों के प्रति स्थिरता न होने के कारण ही सारा जीवन विश्रृंखलित होता है। आत्म-संयम की वृत्ति देखने में कठोर, रूखी, नीरस भले ही प्रतीत होती हो पर कालान्तर पर जब शक्ति का प्रवाह हमारे अन्दर फूट पड़ता है तो सारा जीवन उल्लास और प्रसन्नता से परिपूर्ण हो जाता है।

किसी भी प्रकार हो, हमें जीवन लक्ष्य में उच्च-भावना से मन को एकाग्र करके मनुष्य जीवन को सार्थक बनाने का प्रयत्न करना चाहिये। इसके लिये अनेकों मार्ग धर्म-प्रणेताओं ने निर्धारित किये हैं। अपनी शक्ति, योग्यता के अनुसार कोई भी रास्ता चुन सकते हैं। किन्तु उस पर पूर्ण एकाग्रता से चलना पड़ेगा। सारी शक्तियों को केन्द्रित करके जब शर-सन्धान किया जाता है, तभी लक्ष्यपूर्ति होती है। शक्ति संचय का मार्ग संयम है। संयमित जीवन से ही सफलता के सारे रहस्य खुलते हैं। इसी से आत्म-जय की आकांक्षा पूर्ण होती है।

जिह्वा के संयम से स्वास्थ्य की सिद्धि

मनुष्य की स्वास्थ्य रक्षा में जिह्वा का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। किन्तु बहुत कम लोग इस ओर ध्यान देते हैं। जिह्वा को असंयत तथा अस्वच्छ रखने वाले उसकी सहायता से वंचित रहकर शीघ्र ही आरोग्य की हानि कर लेते हैं।

खाद्य पेय पदार्थों को सेवन करने के लिये जब मुख में डाला जाता है, तब सबसे पहले जिह्वा ही उसके अच्छे, खराब, ताजी, बासी, रुचिकर, अरुचिकर, तिक्त, कटु आदि होने की सूचना देती है। वह अनेक आयोग्य पदार्थों को अस्वीकार करके शरीर, स्वास्थ्य की रक्षा करती है।

जिह्वा में कुछ ऐसी ग्रन्थियाँ होती हैं, जो राल नाम एक तरल तत्व उत्पन्न करके खाद्य पदार्थ में मिलाती हैं। यह तत्त्व खाद्य को न केवल तरल बनाकर चबाने अथवा निगलने में ही सहायक होता है, अपितु भोजन के साथ पेट में जाकर उसे जीर्ण करने में पेट की भी पाचन क्रिया में सहायक होता है। अक्सर अनुभव किया जा सकता है कि जब किसी अयोग्य अथवा अरुचिकर ऐसे पदार्थ को खाने का प्रयत्न किया जाता है जिसे जिह्वा स्वीकार नहीं करती तो वह पदार्थ जल्दी चबाते या निगलते नहीं बनता। इसका कारण यही है कि जिह्वा की अस्वीकृति के कारण उक्त ग्रन्थियाँ असहयोग करके राल को छोड़ना बन्द कर देती हैं, जिससे अवांछनीय पदार्थ न तरल होकर शीघ्र निगलने योग्य हो पाता है और न पेट में शीघ्र पचता है। इसलिये स्वास्थ्य के लिये जरूरी है कि जिह्वा का उचित आदर-सम्मान किया जाये।

अयोग्य भोजन अथवा बार-बार खाते-पीते रहना जिह्वा का असंयम है। एक तो अपने स्वभाव के विरुद्ध उसे अरुचिकर पदार्थों का सम्पर्क पाने से उसमें विषण्णता आती है, जो उसकी शक्तियों को क्षीण करती है, जिससे वह कालान्तर में अच्छे-खराब, योग्य-अयोग्य भोजन की सूचना देना छोड़ देती है और इस प्रकार अनेक अवांछनीय पदार्थ पेट में जाकर स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते हैं। बार-बार खाते-पीते रहने से जिह्वा को अनावश्यक एवं अतिरिक्त श्रम करते रहना पड़ता है। उसकी राल ग्रन्थियाँ शिथिल होकर शुष्क रहने लगती हैं, जिससे भोजन के साथ पाचक रस पेट में नहीं जा पाता, जिसका परिणाम अजीर्ण के रूप में भोगना पड़ता है। जिस प्रकार हाथ-पाँव आदि किसी भी इन्द्रिय में अनावश्यक अथवा अधिक श्रम लेने से पूरे शरीर के स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता है, उसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रकार जिह्वा से भी अनावश्यक श्रम लेने से शारीरिक स्वास्थ्य को क्षति पहुँचती है।

अधिक तिक्त, तीव्र अथवा रसातिरेक वाले पदार्थ सेवन करने से जिह्वा में एक छटपटाहट पैदा होती है और उसकी राल ग्रन्थियाँ घबराकर एकदम राल-रस का स्रोत खोल देती हैं, जिससे शीघ्र ही उनकी वह निधि समाप्त हो जाती है और उनमें छूँछापन आ जाता है। साथ ही जहाँ राल भोजन को पचाने में सहायक होती है, वहाँ उसका अधिक मात्रा में स्राव होना पाचन-क्रिया पर विपरीत प्रभाव डालता है, जो कि समग्र शारीरिक स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है। इसलिये जरूरी है कि रसना को सहसा उत्तेजित कर देने की कारणभूत तीव्रताओं तथा स्वादातिरेकाताओं से बचाये रखा जाये।

बार-बार खाने-पीने के कारण मुँह हर समय जूठा और जिह्वा गन्दी बनी रहती है। इसीलिये जूठा मुँह रहने का निषेध शास्त्रों में किया गया है। जूठे मुँह रहने से मुख का अवशिष्ट उच्छिष्ट हर समय बन्द रहने के कारण शीघ्र ही सड़ने लगता है, जिससे न केवल मुँह से दुर्गन्ध ही आने लगती है बल्कि मुहाँसे तथा छालों आदि के अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। इतना ही नहीं मुख के रोगों के विषैले तत्त्व तथा कीटाणु हर समय राल के साथ पेट में जाते हैं, जिससे पेट तो खराब होता ही है, राल के रास्ते की कंठ आदि की नलियों में भी विकार पैदा हो जाते हैं। ऐसी रुग्ण स्थिति में आरोग्य की आशा किस प्रकार की जा सकती है ?

आरोग्य शास्त्र में जिह्वा की सफाई पर बहुत जोर दिया गया है। शरीर के अन्य अवयव आँख, नाक, कान, पाँव आदि तो अपने विषैले तत्व पसीना, पानी, नाक, थूक आदि के रूप में कुछ न कुछ निकालते रहते हैं, किन्तु जिह्वा को ऐसी कोई सुविधा प्राप्त नहीं होती। इसलिये उसका साफ किया जाना बहुत जरूरी है। साफ किया जाना ही क्यों, हर समय साफ रखना जरूरी है। अब जो आदमी बार-बार खाता है, पान, तम्बाकू या बीड़ी, सिगरेट आदि का सेवन करता रहता है, वह भला दिन में कितनी बार जीभ धोकर उसे साफ रख सकता है। इसलिये जिह्वा को हर समय साफ रखने के लिये बीड़ी, सिगरेट, पान, तम्बाकू आदि का प्रयोग और बार-बार खाने-पीने की आदत छोड़ना भी आवश्यक है। ऐसा करना स्वास्थ्य की दिशा में एक निश्चित पग उठाना ही होगा।

इसके अतिरिक्त जिह्वा का एक और नियन्त्रण बहुत ही महत्वपूर्ण है। वह है—वाणी का नियन्त्रण। कटु, कठोर, गन्दे अथवा अप्रिय शब्द बोलने से न केवल सुनने वालों को ही कष्ट देते हैं, बल्कि अपने मानसिक संस्थान पर भी आघात करते हैं। कटु-कठोर शब्दों के पीछे उत्तेजना तथा क्रोध का आवेग रहा करता है, जो मनुष्य की जीवनी शक्ति के लिये शोषक शिशिर का काम करता है। मधुर, शिष्ट और प्रिय बोलने से सुनने वाले को सुख मिलता है और अपना हृदय भी शीतल होता है। समाज में अजातशत्रुता की वृद्धि होती है। जो लोग कटु, कुटिल, कठोर अथवा अप्रिय बोलकर अपने शत्रु पैदा कर लेते हैं, वे चिन्ता के रूप में अपने स्वास्थ्य को घुन लगा लेते हैं। इसलिये आवश्यक है कि स्वास्थ्य रक्षा के लिये मधुर एवं मनोहर सम्भाषण किया जाय।

कम बोलना तो स्वास्थ्य के लिये साक्षात् संजीवनी ही है। इसीलिये शास्त्रों में मौन को बहुत महत्त्व दिया गया है। रोगी के शीघ्र स्वस्थ होने में उसका विवशतापूर्ण मौन तथा चिकित्सकों का यह निर्देश कि रोगी को छेड़ा न जाये बहुत सहायक होता है। जो लोग मौन भाव से चुपचाप अपना कार्य करते रहते हैं, वे अधिक काम कर लेते हैं। इसका कारण यही होता है कि मौन उनके जीवन तत्त्व को नष्ट नहीं होने देता। मौन अथवा अल्प-सम्भाषण का नियम निबाहने वालों के मन-मस्तिष्क सक्षम तथा शरीर स्वस्थ रहा करता है।

बोलने, बात करने आदि वाणी प्रधान प्रक्रियाओं में सबसे अधिक प्राणवायु का व्यय होता है। जितनी थकान दिन भर काम करने में नहीं आती उससे कहीं अधिक थकान एक घंटे लगातार बात करने में आ जाती है। यही कारण है कि वाणीप्रधान, अध्यापक, प्रवचन, भाषण, प्रचार तथा वकालत आदि पेशा करने वालों का स्वास्थ्य प्रायः सन्तोषप्रद नहीं रहता। अधिक बोलना अथवा अधिक जोर से बोलना स्वास्थ्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के लिये बहुत खतरनाक है। जोर-जोर से आलाप भर कर गाने वाले, चीख-चीख कर भाषण देने वाले अथवा उत्तेजित होकर चिल्ला उठने वाले लोग अपने स्वास्थ्य को शीघ्र ही चौपट कर लेते हैं। थोड़ी देर बोलने के बाद ही शरीर में शिथिलता और मस्तिष्क में पीड़ा हो जाती है और तब उसको दूर करने के लिये घन्टों तक मौन रहकर आराम की आवश्यकता होती है। अधिक वाचालता अथवा आवेगपूर्ण वार्तालाप से बचकर अपने स्वास्थ्य की रक्षा करना प्रत्येक बुद्धिमान् के लिये वाञ्छित है।

इस प्रकार अनेक दृष्टिकोण से देखा जा सकता है कि जिह्वा का संयम तथा सफाई मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये बहुत आवश्यक है। इसके विपरीत आचरण करने वाले की ठीक से स्वस्थ रहने की आशा नहीं रखनी चाहिये।

काम-वासना में सर्वनाश

काम-शक्ति, जीवन-शक्ति का एक चिन्ह है, किन्तु उसका निर्धारित अवसर पर ही प्रयोग करना चाहिये। प्राकृतिक नियम यह है कि जब मादा को गर्भ धारण करने की तीव्र इच्छा हो तो नर के पास गमन करे। यही काम तृप्ति की मर्यादा है। किन्तु आजकल तो जिह्वा के चटोरेपन और इन्द्रियों की लिप्सा को तृप्त करना मनुष्यों का जीवनोद्देश्य बन गया है। अमर्यादित कामोत्तेजना एक प्रकार की प्रत्यक्ष अग्नि है। कामुकता के भाव उदय होते ही शरीर की गर्मी बढ़ जाती है। स्वाँस गरम आने लगती है। त्वचा का तापमान बढ़ जाता है। रक्त का वेग तीव्र हो जाता है। इसी गर्मी के दाह से कुछ धातुएँ पिघलने और कुछ जलने लगती हैं। शरीर के कुछ तत्व पिघलकर मूत्र के साथ-साथ स्रावित होने लगते है देखा जाता है कि कामुक व्यक्तियों के पेशाब का रङ्ग पीला है, क्योंकि उसमें पित्त, क्षार, शर्करा आदि शरीरोपयोगी वस्तुएँ मिल जाती हैं। कभी-कभी वह अधिक चिकना, गाढ़ा, सफेदी लिये और लसदार होता है, उसमें चर्बी, अलब्यूमिन, हड्डियों का सार भाग आदि मिल जाता है। जब अधिक गरम पेशाब आता है तो उसमें कई बार फास्फोरस की लोह तत्व जैसी अमूल्य वस्तुएँ मिलती हैं। इस तरह कामाग्नि से शरीर से रस पिघल-पिघल कर नीचे बहते रहते हैं और देह खोखली होती जाती है। त्वचा, स्नायु, तन्तु पेशियाँ और अस्थि पिंजर उस अग्नि से जलने लगते हैं और वे मामूली रोगों से बचने की भी शक्ति को खो बैठते हैं।

उष्णता के कारण पकी हुई चमड़ी खुरदरी, काली और सूखी निस्तेज हो जाती है। निकट से देखने पर ऐसा शरीर बिलकुल रूखा और मुर्दापन लिये हुए देखा जा सकता है। लकवा, गठिया, कम्प आदि वात सम्बन्धी रोग अक्सर अति मैथुन से होते हैं, यह अग्नि मस्तिष्क के लिये तो सबसे अधिक घातक है। स्मरण शक्ति और निश्चयात्मक शक्ति का लोप होने लगता है। ऐसे खण्डहर मस्तिष्क में हीन विचारों के चमगीदड़ आकर इकट्ठे होने लगते हैं। यह हीन विचार उसे उद्विग्न कर देते हैं और कभी-कभी तो घर से भागकर भिखारी बन जाना, पागलपन, मद्य सेवन एवम् आत्म-हत्या जैसी प्रवृत्तियों तक ले पहुँचते हैं। कामुकता का निश्चित परिणाम आसक्ति है। निर्बलता या कमजोरी साथ में अपना एक बड़ा कुटुम्ब लेकर आती है। उसके यह बाल-बच्चे शरीर के जिस कोने में जगह पाते हैं, उसी में डेरा डाल लेते हैं। सिर में दर्द, पैरों में भड़कन, आँखों के तले अँधेरा, भूख न लगना, उदासीनता, निराशा, मुँह कड़ुआ रहना, दस्त साफ न आना, कफ गिरना, दाँतों का दर्द, खुश्की, जलन, निद्रा की कमी, यह सब रोग कमजोरी के बाल-बच्चे हैं। यह अपनी माता के साथ रहते हैं। कोई दवा दारू इन्हें नहीं हटा सकती।

केवल स्त्री-संभोग ही काम-वासना नहीं है। यदि कोई व्यक्ति मैथुन की मर्यादा का ही थोड़ा उल्लंघन करे तो उतनी विशेष हानि नहीं होती है। शरीरशास्त्रियों ने मैथुन को आठ प्रकार का बताया है। इसमें चिन्तन से लेकर स्पर्श तक की सभी क्रियाएँ शामिल हैं। कामुकता के विचार करना बिलकुल मैथुन जैसी वस्तु है। काम-केलि सम्बन्धी पुस्तकें, उपन्यास, नाटक, नाच, सिनेमा, चित्र आदि देखने से यह अग्नि ठीक उसी प्रकार भड़क उठती है, जैसी मैथुन के समय और शरीर के अन्दर सभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

क्रियायें उसी रूप में होने लगती हैं। वासना सम्बन्धी विचार कामुकता को प्रदीप्त कर देते हैं। काम का एक नाम मनसिज' भी है, यह मन से उत्पन्न होता है। मन में इस प्रकार के विचार आये कि रक्त में वीर्य बनने का मैथुन शुरू हुआ। साधारणतः वीर्य रक्त में मिला रहता है। परन्तु जब विचारों का मंथन शुरू होता है, तो दही में से घी की तरह रक्त में से वीर्य निकल आता है। वह छोटी-सी थैली में जमा होता है। विचारों के कारण मंथन होकर जब वीर्य उस थैली में जमा होता है तो इन्द्रियों में उत्तेजना होने लगती है और वह वीर्यपात के लिए विवश करती हैं। फलस्वरूप वह विचार और भी अधिक भड़कते हैं एवं विनाश की ओर सरपट दौड़ा ले जाते हैं।

कामुकता का विचार एक प्रकार का अदृश्य मैथुन है। जो आदमी जितनी देर ऐसे विचारों में तल्लीन रहता है, हम कह सकते हैं कि वह व्यक्ति उतने समय तक मैथुन में तल्लीन रहा। इतने समय तक स्त्री सम्भोग करते रहने का जो परिणाम होता करीब-करीब वही परिणाम स्त्री-चिन्तन करने वाले को भोगना पड़ता है। डाक्टरों का कहना है, नपुंसकता अत्यधिक मैथुन का परिणाम है, फिर चाहे वह मैथुन स्त्री के साथ किया गया हो या विचारों के साथ। वे कहते हैं कि दोनों प्रकार से एक ही बात होती है। वीर्यवाहिनी नाड़ियों को दोनों ही सूरतों में समान उत्तेजना बर्दाश्त करनी पड़ती है। जिस बिजली के बल्ब को लगातार बहुत समय तक जलाया जायेगा, तो उसके भीतर के तार थोड़े ही समय में जलकर खराब हो जायेंगे।

प्रत्यक्ष मैथुन से जितना वीर्यपात होता है, उसकी अपेक्षा मानसिक मैथुन से अनेक गुना अधिक होता है। सूखी खाज, पकने वाली खुजली, दाद, फुन्सियाँ, मुहाँसे, झाँई, बगलगन्ध, दुर्गन्धयुक्त पसीना, इन्द्रिय के ऊपर जमी हुई सफेदी इन सब मार्गों से वीर्य निकलता देखा जाता है। अप्रत्यक्ष मैथुन से सूक्ष्म नाड़ी तन्तुओं में उत्तेजना होती है और वह जहाँ-तहाँ वीर्य बना कर अपने निकट-छिद्रों से उसको बाहर कर देते हैं। गुप्तेन्द्रिय के आस-पास के तन्तु वीर्य बनाने के विशेष अभ्यस्त होते हैं, इसलिए दाद, खाज, खुजली आदि रोग जघांओं के आस-पास अधिक देखे जाते हैं। मस्तिष्क का वीर्य जब नीचे की ओर खिसकता है, तो गालों की कोमल त्वचा में फूट निकलता है और मुहाँसे के रूप में प्रकट होता है। कभी-कभी बगलों से तीव्र दुर्गन्ध के साथ वीर्य निकलता है और सफेद सूखे तारों के रूप में देखा जाता है। सन्धि स्थानों के छिद्र अधिक सुकोमल होने के कारण वहाँ से अधिक सुगम होता है, वैसे तो वह शरीर के किसी भी भाग में फूट निकल सकता है। कोई मनुष्य बहुत सफाई से रहते हैं, फिर भी उनके कपड़ों में जुँए अधिक पड़ते हैं, ऐसे व्यक्तियों के स्वेद में वीर्य कणों की अधिकता मिलेगी। इस अति वीर्यपात से न केवल अपना ही अहित होता है, वरन् अन्य मनुष्यों को भी हानि पहुँचती है। जो वीर्य शरीर से पृथक् होकर बाहर आया वह स्नान करने या वस्त्र धाने पर पानी में मिल जाता है और अपनी प्रबल उत्पादन शक्ति के कारण उस जल में से बड़े-बड़े उप-विष कीट पैदा करता है, जो अपने पूर्व सम्बन्धित स्थान मनुष्य शरीर—पर आक्रमण करके उसको तरह-तरह के रोगों में फँसाने का प्रयत्न करते हैं। इस मानसिक मैथुन और अप्रत्यक्ष वीर्यपात से अनेक महा बीमारियाँ फैलती हैं और संसार के अनेक मनुष्यों की हत्या हो जाती है।

उपर्युक्त पंक्तियों से पाठक अच्छी तरह समझ गये होंगे कि मानसिक मैथुन कितना भयङ्कर है और उसके द्वारा कितनी हानि होती है। हम नहीं समझते कि जब इन्द्रिय एक बार भोग करके बहुत देर के लिए संतुष्ट हो जाती हैं और दिन-रात में बहुत ही कम क्षणों के लिये उसमें मामूली-सी उत्तेजना होती है, फिर भी क्यों लोग कामुकता सम्बन्धी विचारों में दिन रात डूबे रहते हैं। भोजन करके जिह्वा तृप्त हो जाती है, परन्तु कोई व्यक्ति पेट में अनिच्छा होने पर भी यदि भोजन सम्बन्धी कल्पना में ही लगा रहे, तो उसे हम क्या कहेंगे ?'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निश्चय ही हमें मानसिक व्यभिचार से बचने के लिए आठ प्रकार के मैथुनों से दूर रहना चाहिए। बिना अनिवार्य आवश्यकता के शारीरिक ब्रह्मचर्य भी खण्डित नहीं करना चाहिये, जितना अधिक हो सके संयमपूर्वक रहें, परन्तु मानसिक ब्रह्मचर्य का तो विशेष रूप से पालन करना चाहिए। इसके लिए दृष्टि-शोधन सबसे आवश्यक है। संसार की समस्त स्त्रियों में यदि हम माता, बहिन या पुत्री की दृष्टि रखें तो आसानी से संयमित रह सकते हैं। स्त्रियों से दूर रहने पर शायद शारीरिक ब्रह्मचर्य तो रखा जा सकता है, परन्तु ऐसा हठपूर्वक निरोध लाभ की अपेक्षा हानि अधिक पहुँचाता है। एकांत स्थान में रहने पर मानसिक उद्वेग और अधिक बढ़ सकते हैं, इसलिए तुम्हें चाहिए कि अपनी दृष्टि का शोधन करो। स्त्रियों को देखो तो उन्हें उनकी आयु के अनुसार माता, बहिन या पुत्री समझो। अपनी सगी माता, बहिन या पुत्री का पूर्ण चित्र अन्य स्त्रियों के स्वरूप में देखो। यदि उनके गुप्त अङ्गों का स्मरण आवे तो भी अपनी माता आदि के अंगों से उनकी समता करो। इस प्रकार मानसिक दुराचार को बहुत ही आसानी से रोक सकोगे।

उन स्त्रियों के साथ अकेले न बैठो चाहे वे रिश्ते में कोई लगती हों, घुस-पुस बातें न करो जो कुछ कहना हो स्पष्ट और उच्च स्वर से कहो। अपनी दृष्टि नीचे रक्खो। लक्ष्मण अपनी भावज, लोक प्रसिद्ध सुन्दरी सीता के साथ एकान्त वन में चौदह वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्यपूर्वक रहे, उनके मन में कभी बुरे विचार नहीं आये, क्योंकि चरणों से ऊपर उन्होंने कभी दृष्टि ही नहीं उठाई थी। रावण के सीता को चुरा ले जाने पर जो आभूषण मार्ग में पड़े मिले, उन्हें देखकर लक्ष्मण ने कहा—इन कुण्डल आदि को मैं नहीं जानता, नूपुर (बिछुओं) को ही पहिचानता हूँ, क्योंकि चरण-वन्दन के समय केवल उनके पावों को ही मैं देखता था। जो व्यक्ति अपनी दृष्टि का संशोधन कर डाले, वह मानसिक व्यभिचार से बचकर शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को अक्षुण्ण रख सकता है।

कभी-कभी तीव्र कामेच्छा होती है और वह मनुष्य को बलात् पतन की ओर खींचती है। ऐसे समय उस काम शक्ति को मेधा शक्ति (बुद्धि) के रूप में परिवर्तित कर लेना चाहिए। जब तीव्र कामेच्छा हो रही हो, तो खड़े हो जाओ और टहलने लगो। मन ही मन गायत्री मन्त्र का जप करो और अपने मन में किसी पूज्य गुरुजन का ध्यान करके उनके निकट उपस्थित होने की कल्पना करो, मानो आप उन पूज्य महानुभाव के समक्ष उपस्थित होकर उनसे किसी गूढ़ अध्यात्म विषय पर बातचीत कर रहे हो। एक बालब्रह्मचारी महानुभाव अपना अनुभव बताते हुए कहते हैं कि जब मुझे काम वासना सताती है तो देह की नश्वरता का अनुभव करता हूँ। मानो मेरा शरीर मरा हुआ पड़ा है, उसे छूने और देखने में भी घृणा होती है। वे कहते हैं कि एक बार मैंने एक अनाथ मनुष्य का मृत शरीर पड़ा हुआ देखा था उसमें कीड़े कुलबुला रहे थे और तीव्र दुर्गन्ध आ रही थी। अपने शरीर का भी जब मैं वैसा ही रूप सोचता हूँ तो क्षण भर में वासना शान्त हो जाती है। एक अभ्यासी महानुभाव उत्तेजना के समय चित्त लेट जाते हैं और शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ देते हैं। वे भावना करते हैं कि नसों में उत्तेजित होने वाली समस्त काम शक्ति को खींच कर मैं मस्तिष्क में धारण कर रहा हूँ और वह शुद्ध बुद्धि के रूप में परिवर्तित हो रही है। कुछ देर उस भावना को करने से उन्हें शान्ति मिल जाती है।

शास्त्र कहता है कि **"मरणं विन्दु पातेन जीवनं विन्दु धारणं"** हे मनुष्यो ! ब्रह्मचर्य का पालन ही जीवन है, स्वास्थ्य है, सुख है, सौन्दर्य है। और वीर्य को नष्ट करना साक्षात् मृत्यु-मुख में प्रवेश करना है। तुम्हें अपने लिये जिस वस्तु की आवश्यकता है चुन लो, चुनने में तुम पूर्ण स्वतन्त्र हो।

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नतः"

यह अथर्व वेद का सूक्त है, जिसमें मन्त्रदृष्टा ने बताया है कि ब्रह्मचर्य की साधना से विद्वान लोग मृत्यु को जीत सकते हैं। इसी प्रकार युग-पुरुष भगवान् कृष्ण ने भी कहा है—**यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्य चरन्ति।** अर्थात्—यदि परमात्मा को प्राप्त करना चाहते हो, तो ब्रह्मचर्य का पालन किया करो।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उपर्युक्त दो सूक्तों से दो शिक्षायें मिलती हैं। (१) पहली यह कि ब्रह्मचर्य से मनुष्य के आयुर्बल मिलता है, अकाल मृत्यु नहीं होती, इच्छानुकूल मृत्यु होती है। (२) ब्रह्मचर्य, अर्थात्, ब्रह्म की, सत्य की, शोध में चर्या अर्थात् तत्सम्बन्धी आचरण। यह दोनों ही बातें ऐसी हैं, जिनकी सत्यता को भारतीय संस्कृति के प्रादुर्भाव काल से अब तक लोग मानते आये हैं। देश, काल और परिस्थिति के अनुकूल ईश्वर प्राप्ति की साधना में अन्तर आ सकता है किन्तु ब्रह्मचर्य किसी न किसी स्थिति में प्रत्येक विधि के साथ आवश्यक कहा गया है।

यह बातें ज्ञान और विज्ञान की ठहरीं। किन्तु व्यावहारिक जीवन और सांसारिक कार्यक्रमों में जिस शक्ति और स्वास्थ्य, मेधा-बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है, उसके लिये भी ब्रह्मचर्य उतना ही आवश्यक है जितना पहली दो स्थितियों में। गृहस्थ जीवन में जिस सुख की कल्पना की जाती है, उसका श्रेय बहुत कुछ ब्रह्मचर्य-व्रत को ही कह सकते हैं। मनुष्य विचारशील प्राणी है, उसे अपना आगा-पीछा, हित-अहित सोचकर चलने की क्षमता प्राप्त है। मनुष्य जीवन के सुख प्राप्त करने के लिए जीवन को सुव्यवस्थित न रखें तो सुख की कितनी ही कामना करें, दुःख ही भोगना पड़ता है। शारीरिक उत्तेजनाओं से उत्तेजित होकर तथा मानसिक निर्बलताओं से प्रेरित होकर बहुमूल्य जीवनी शक्तियों को यों ही बर्बाद कर देना मनुष्य की घोर अज्ञानता का चिन्ह है। वह जीवन शुष्क, नीरस अन्धकारमय, उच्छिष्ट अपवित्र मृततुल्य है, जिसमें मनुष्य ने शरीर सुख की क्षणिक तृप्ति के लिए हाड़-माँस के पुतले से चिपट-चिपट कर अपनी जीवन स्वत्व बर्बाद कर दिया जाता है। थोड़े ही दिन में जब शरीर शिथिल पड़ जाता है, इन्द्रियाँ जबाव देने लगती हैं तब होश आता है, किन्तु अकाल-मृत्यु को दरवाजे पर बुलाकर पछताने से होता भी क्या है ? अतः आवश्यक है कि हम मन्त्र द्रष्टा ऋषि की वाणी को हृदयङ्गम करें और अधिक से अधिक ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन किया करें।

मनुष्य को तभी बुद्धिमान कह सकते हैं, जब वह सांसारिक पदार्थों एवं घटनाओं का अध्ययन करके अपनी मानसिक उत्तेजनाओं का समाधान कर लिया करें। प्रतिदिन अनेकों ऐसे लोगों को देखते हैं, जिनके शरीर सूखे, निर्बल और शक्तिहीन दिखाई देते हैं। दूसरी ओर कुछ हट्टे-कट्टे स्वस्थ और बलिष्ठ व्यक्ति भी दिखाई देते हैं। सम्भव है कुछ स्वस्थ पुरुषों को खान-पान की अच्छी सुविधायें रहीं हों किन्तु यदि आचरण की गहराई में जाकर देखें तो यही मालूम पड़ेगा कि दुर्बल व्यक्तियों ने असंयम किया है। शरीर की विद्युत-शक्ति, प्राण-शक्ति का अनावश्यक दुरुपयोग किया है। इसी कारण वे अप्रिय, दुःखी, रोगी एवं अप्रसन्न दिखाई देते हैं। यह बात प्रायः हर व्यक्ति जानता और अनुभव करता है पर चतुर वे हैं, जो इन विचारों का लाभ अपने व्यावहारिक जीवन में प्राप्त करते हैं।

"क्षणिक रस के लिये मैं शक्ति-हीन क्यों बनूँ ? जिस वीर्य में सन्तानोत्पादन की शक्ति भरी पड़ी है, उसे क्यों नष्ट करूँ ? जीवन को आल्हादित, उल्लसित एवं चमकदार रखने वाले द्रव्य का पतन क्या अच्छी बात है ? परमात्मा की इस शक्ति को विनष्ट करना सचमुच गैर जिम्मेदारी है, अपराध है, मैं इस अपराध को नहीं करूँगा।" इस तरह के विचारों को प्रतिदिन ध्यान में लाना चाहिये। मानसिक विग्रह की स्थिति में इन पर बार-बार और गहराई से विचार करना चाहिये। वीर्य रक्षा करने वाले मनुष्य ही इस संसार के भोग भोगते हैं।

संसार के किसी भी बाह्य पदार्थ को अपने सुख का कारण न मानना मनुष्य के सर्वोत्कृष्ट ज्ञान का परिचायक है। सुख विचार की वस्तु है, भावना से प्राप्त होता है। स्वस्थ भावनायें और बलिष्ठ विचारों से आमोद उत्पन्न होता है पर विचारों की सक्रियता और भावनाओं को मस्ती तो ब्रह्मचर्य से ही प्राप्त होती है। शक्ति ही सुख का मूल है, यह समझ कर अपनी शारीरिक शक्ति के अपव्यय को राकने में ही चतुरता है। बाह्य पदार्थों वाले को सुख का आधार बनाकर रहना मनुष्य की बन्धन-दशा तथा अज्ञान की अब्रह्मचारिणी स्थिति है, इसमें मनुष्य का पतन ही सम्भव है।

कामुकता प्रायः अशुभ-चिन्तन से, अश्लील दृश्यों के अवलोकन या बार-बार मनन करने से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आती है। आचरण का बीज है विचार। विचारों को यदि सत्य की ओर या रचनात्मक प्रवृत्तियों में लगाये रहें और उन्हीं में सुख अनुभव करें तो ब्रह्मचर्य धारण की एक बहुत बड़ी कठिनाई हल हो जाती है। गाँधी जी कहा करते थे कि "आलसी मनुष्य कभी भी ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकता। वीर्य का संग्रह करने वालों में एक अमोघ शक्ति पैदा होती है। उसका उपयोग अपने शरीर और मन को निरन्तर कार्यरत रखने में ही करना चाहिए, अतः प्रत्येक मनुष्य को कोई कार्य क्षेत्र निर्धारित कर लेना चाहिए जिससे विषय-वासना की ओर भटकने के लिए मन को रञ्चमात्र भी समय न मिले।"

जिसका मन किसी वस्तु या व्यक्ति में आसक्त हो जाता है, उसके न रहने या न मिलने पर दुःख अनुभव करता है। उसका आश्रित, परावलम्बी बन जाता है। तो यही स्थिति अब्रह्मचर्य का कारण बन जाती है। अतः अपने आत्मा के स्वरूप को सदैव ध्यान में रखकर आत्म-तृप्ति की अवस्था में जीवनक्रम चलाना ही चाहिये, तभी ब्रह्मचर्य की नैष्टिक स्थिति प्राप्त की जा सकती है।

स्त्री-पुरुष के शरीरों की भिन्नता और स्त्री सौन्दर्य के प्रति आकर्षण से मनुष्य को विचार-उत्तेजना आती है। प्रेरित और प्रभावित होकर अक्सर लोग वासना के शिकार हो जाते हैं। पर यदि भली प्रकार चिन्तन करें तो यह मालूम पड़ता है कि शरीर की विविधता या आवरण में भी पौरुष या आत्मा ही विद्यमान है। अविनश्वर आत्मा के कल्याण के लिये शरीर के प्रति आकर्षण मानवोचित नहीं है। यह सोचना चाहिए कि इस शरीर में हाड़, माँस, मल-मूत्र आदि गन्दी वस्तुयें भरी पड़ी हैं। रुपहली चमक के पीछे अपनी आत्मा के कल्याण को विस्मृत नहीं किया जा सकता। दो क्षण के इन्द्रिय सुख के लिये जीवन के बहुमूल्य हित पर कुठाराघात नहीं किया जा सकता। वह करना चाहिये जिससे आत्म-ज्ञान बढ़े। मोह और काम के भाव 'आत्म-हित' को बेच डालना कभी विवेकपूर्ण नहीं कहा जा सकता।

विषय-सुखों में भटकने वाला मनुष्य का स्वेच्छाचारी और अहङ्कारी मन होता है। मनोनिग्रह की समस्या, ब्रह्मचर्य-पालन की प्रमुख समस्या है। इसके लिये ऊँचा आदर्श सामने रखना और उसके लिये संयमी जीवन का आचरण करना मनोनिग्रह का सर्वोत्तम उपाय है। किन्तु यह उपाय उन्हें ही लाभ दे सकता है, जो कुछ विचारशील है और जिन्होंने मनुष्य-जीवन को नाशवान समझकर तुच्छ स्वार्थों को ठुकरा देने का साहस पैदा किया है।

सामान्य व्यक्तियों के लिए मन को वशवर्ती बनाने के लिये आहार शुद्धि अधिक ध्यान देना चाहिये। मन वस्तुतः आहार की ही सूक्ष्मतम अवस्था का नाम है। अतः जैसा लोगों का आहार होता है वैसे ही उनका मन भी और तदनुरूप उनके आचरण भी होते हैं। प्रत्येक मनुष्य को अपने आहार पर काबू रखना चाहिये। भोजन केवल शरीर रक्षा, प्रसाद और औषधि रूप में ही ग्रहण किया जाना चाहिये। अधिक कड़ुवे, तीखे, बासी-बुसे, मिर्च मसालेदार, चटपटे भोजन की उपयोगिता स्वास्थ्य और आरोग्य की दृष्टि से भी नहीं है। आध्यात्मिक दृष्टि से तो ऐसे भोजन को कुछ महत्व नहीं है। मादक पदार्थ, खुले बाजारू खाद्य-पदार्थों में केवल रोग के कीटाणु ही नहीं फैल जाते वरन् उनमें आने-जाने वाले लोगों के दूषित संस्कार भी प्रवेश कर जाते हैं।

ब्रह्मचर्य मनुष्य जीवन के सभी लौकिक व पारमार्थिक सुखों का साधन है। हमें अपने जीवन को ब्रह्मचर्यमय रखकर शक्तिमान, कान्तिमान्, मेधावान् तथा विचारवान् बनने का सदैव प्रयत्न करते रहना चाहिये। जिससे इस मूल मन्त्र को समझ लिया, उसके जीवन में सुखों की कोई कमी न होनी चाहिये।

क्रोध की भयंकरता

डाक्टर अरोली और केनन ने अनेक परीक्षणों के बाद यह घोषित किया है कि क्रोध के कारण अनिवार्यतः उत्पन्न होने वाली रक्त की विषैली शर्करा हाजमा बिगाड़ने के लिए सबसे अधिक भयानक है। आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी के स्वास्थ्य निरीक्षक डा० हेमनवर्ग ने अपनी रिपोर्ट में उल्लेख किया है कि इस वर्ष में परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने वाले छात्रों में अधिकांश चिड़चिड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मिजाज के थे। पागलखानों की रिपोर्ट बताती है कि क्रोध से उत्पन्न होने वाले मस्तिष्क रोगों ने अनेकों को पागल बना दिया। डाक्टर जे० एस्टर का कथन है कि पन्द्रह मिनट क्रोध करने में शरीर की इतनी शक्ति खर्च हो जाती है कि जितनी कि साढ़े नौ घंटे परिश्रम किया जा सकता है। बाइबिल कहती है कि क्रोध को लेकर सोना अपनी बगल में जहरीले साँप को लेकर सोना है। सचमुच क्रोध की भयंकरता सब दृष्टियों से बहुत अधिक है।

इस महा-व्याधि का शरीर और मन पर जो दूषित असर होता है, वह जीवन को पूरी तरह असफल बना देता है, अभ्रान्ति, आशंका आवेश उसे घेरे रहते हैं। पास पड़ौसियों की दृष्टि में घृणा का पात्र बन जाता है, गृह-कलह छिड़ा रहता है। प्रसिद्ध दार्शनिक सोना कहते हैं कि क्रोध शराब की तरह मनुष्य को विचारशून्य, दुर्बल एवं लकवे की तरहे शक्तिहीन कर देता है। दुर्भाग्य की तरह यह जिसके पीछे पड़ता है, उसका सर्वनाश करके ही छोड़ता है। डाक्टर पूरनचन्द्र खत्री का कथन है कि—क्रोध का मानसिक रोग किसी शारीरिक रोग से कम नहीं है। दमा, यकृत-वृद्धि, गठिया आदि रोग जिस प्रकार आदमी को घुला-घुला कर मार डालते हैं, उसी प्रकार क्रोध का कार्य होता है। कुछ ही दिनों में क्रोधी के शरीर में कई प्रकार के विष उत्पन्न हो जाते हैं, जिनकी तीक्ष्णता से भीतरी अवयव गलने लगते हैं।

न्यूयार्क के वैज्ञानिकों ने परीक्षा करने के लिए गुस्से में भरे हुए मनुष्य कुछ बूँद खून लेकर पिचकारी द्वारा खरगोश के शरीर में पहुँचाया नतीजा यह हुआ कि बाईस मिनट बाद खरगोश आदमियों को काटने दौड़ने लगा। पैंतीस मिनट पर उसने अपने को काटना शुरू कर दिया और एक घन्टे के अन्दर पैर पटक-पटक कर मर गया। क्रोध के कारण उत्पन्न होने वाली विषैली शर्करा खून बहुत अशुद्ध कर देती है। अशुद्धता के कारण चेहरा लाल और सारा शरीर पीला पड़ जाता है। पाचन शक्ति बिगड़ जाती है। नसें खिंचती हैं एवं गर्मी, खुश्की का प्रकोप रहने लगता है। सिर का भारीपन, आँखों तले अन्धेरा, कमर में दर्द, पेशाब का पीलापन, क्रोधजन्य उपद्रव है। अन्य अनेक प्रकार की व्याधियाँ उसके पीछे पड़ जाती हैं। एक अच्छी होती है, तो दूसरी उठ खड़ी होती है और दिन-दिन क्षीण होकर मनुष्य अल्पकाल में ही काल के गाल में चला जाता है।

क्रोध एक भयंकर विषधर है, जिसने अपनी आस्तीन में इस साँप को पाल रखा है, उसका ईश्वर ही रक्षक है। एक प्राचीन नीतिकार का कथन है कि—"जिसने क्रोध की अग्नि अपने हृदय में प्रज्ज्वलित कर रखी है, उसे चिता से क्या प्रयोजन ?" अर्थात् वह तो बिना चिता के के ही जल जायेगा, ऐसी महाव्याधि से दूर रहना ही कल्याणकारी है। जिन्हें क्रोध की बीमारी नहीं है, उन्हें पहले ही सावधान होकर इससे दूर रहना चाहिए और जो इसके चुंगल में फँस चुके हैं, उन्हें पीछा छुड़ाने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए।

क्रोध की जड़ अज्ञान है। आदमी जब अपनी और दूसरों की स्थिति के बारे में गलत धारणा कर लेता है, तब उसे कुछ का कुछ दिखाई पड़ता है। बेटे ने आज्ञा नहीं मानी, पिता को क्रोध आ गया क्योंकि पिता समझता है कि बेटा मेरी संपत्ति है, मेरी जायदाद है, मेरा दास है उसे आज्ञा माननी ही चाहिए, लेकिन क्रिया इससे जब उल्टी होती है तो गुस्सा आता है। स्त्री ने आज बैगन का साग न बनाकर दाल बना ली। आपको गुस्सा आ रहा है कि उसने ऐसा क्यों किया ? मानो आप समझते हैं कि हर काम उसे आपकी आज्ञा से ही करना चाहिए।

अपने को मालिक और पूर्ण ज्ञानी न मानने के अतिरिक्त क्रोध की शान्ति के कुछ और उपाय भी हैं। प्रतिज्ञा कर लीजिये कि 'अपने दुश्मन क्रोध को पास न फटकने दूँगा। जब आवेगा तभी उसका प्रतिकार करूँगा।' हो सके तो इन शब्दों को लिखकर किसी ऐसे स्थान पर टाँग लीजिए, जहाँ दिन भर निगाह पड़ती रहे। जब क्रोध आवे, तभी अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण करना चाहिए और दण्ड स्वरूप शरीर में एक दो कड़ी चिकोटी काट लेनी चाहिए एवं कुछ समय के लिए चुप्पी साध लेनी चाहिए। क्रोध के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय ठण्डे पानी का एक गिलास पीना आयुर्वेदीय चिकित्सा है। इससे मस्तिष्क और शरीर की बढ़ी हुई गर्मी शान्त हो जाती है। एक विद्वान का मत है कि जिस स्थान पर क्रोध आवे, वहाँ से उठकर कहीं चले जाना या किसी और काम में लगना अच्छा है। इससे मन की दिशा बदल जाती है और चित्त का झुकाव दूसरी ओर हो जाता है। एक योगाभ्यासी सज्जन बताते हैं कि क्रोध आते ही गायत्री मन्त्र का जप करने लगना अनुभूति और परीक्षित प्रयोग है। एक डाक्टर ने लिखा है क्रोध आने पर तुरन्त ही पेशाब को जाना चाहिए। इससे शरीर की अनावश्यक गर्मी का बहुत-सा भाग पेशाब के साथ निकल जाता है। पाठक इन उपायों का प्रयोग अपने स्वास्थ्य नाशक शत्रु क्रोध को भगाने के लिए कर सकते हैं।

लोभ से रोगों का जमाव

निरन्तर सञ्चय करने के, धन जोड़ने के विचारों का प्रवाह चलने के कारण सुप्त मन पर वैसा ही प्रभाव पड़ता है और वह 'संचय की नीति' को अपना लेता है। फलस्वरूप शरीर में जमा करने की क्रिया अधिक और त्यागने की कम होने लगती है। पेट पर इसका असर तुरन्त पड़ता है। दस्त साफ होने में रुकावट पड़ने लगती है। पेट भरा रहता है, उसमें मल इकट्ठा होता रहता है। शौच के समय आँतों की माँस पेशियाँ अपने संचालक (सुप्त मन) का आदेश पालन करती हैं, वे त्याग में बड़ी कंजूसी करती हैं, फलस्वरूप जो मल अत्यधिक मात्रा में है, वही निकलता है, बाकी पेट में ज्यों का त्यों पड़ा रहता है और सड़-सड़ कर विषों की उत्पत्ति करता रहता है। मनुष्य सौ में से ९६ फीसदी कब्ज के—कोष्ठबद्धता के शिकार मिलेंगे। उन्हें हमेशा शिकायत रहेगी कि हमें दस्त साफ नहीं होता। यह सभी जानते हैं कि कब्ज अनेक रोगों की जननी है। पेट का विष रक्त में सम्मिलित होकर असंख्य रोगों का घर बन जाता है। सड़ा हुआ मल पेट में दूषित वायु पैदा करता है। हृदय की अधिक धड़कन, सिर का दर्द, निद्रा की कमी तथा गठिया रोग, अक्सर इसी प्रकार के दूषित विकार से होते हैं। त्वचा के रोमकूप 'संकोच नीति' को अपनाकर पसीना अच्छी तरह नहीं निकालते और 'संकोच नीति' के कारण ही रक्त मिले हुए विषैले पदार्थ दूर नहीं होते जैसे हिन्दुस्तानियों के बढ़े हुए अतिथि सत्कार ने सात समुद्र पार से विदेशियों को अपने ऊपर शासन के लिए बुला लिया, उसी प्रकार यह जोड़ने की इच्छा शरीर में अनेक प्रकार की शारीरिक और मानसिक बीमारियों को आवभगत के साथ अपने भीतर जगह देती रहती है। लोभी व्यक्ति चाहे कितना ही बहुमूल्य भोजन करे या दवाओं का सेवन करे कदापि स्वस्थ न रह सकेगा।

दूसरी एक और बात सिद्ध हो चुकी है कि लोभी व्यक्तियों के या तो सन्तान होती ही नहीं या होती है तो मर जाती है। यद्यपि कई बार शारीरिक अन्य कारणों से भी सन्तान नहीं होती परन्तु अधिकांश उदाहरण ऐसे ही मिलेंगे, जिनमें लोभ के कारण सन्तान का अभाव होता है। हमारी कोई भी इच्छा तब पूर्ण होती है, जब अन्तःकरण उस बात को चाहता है। सन्तान के सम्बन्ध में भी वही बात है। मन जब सन्तान की इच्छा करता है तो उसको सन्तान अवश्य होती है। धनवान लोग बाहरी मन से करते हैं। वे सन्तान के लिए धन नहीं चाहते, वरन् धन की रक्षा के लिए सन्तान रूपी चौकीदार नियुक्त करना चाहते हैं, ताकि उनके मरने के बाद भी उनका धन सुरक्षित रहे। ऐसे व्यक्तियों को अगर सन्तान हो भी तो वे उसके लिए शिक्षा-दीक्षा में उदार-हृदय से धन व्यय नहीं करते। प्राचीन काल में ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं। ऋषियों ने जब देखा कि मनोविकार के कारण सन्तान नहीं होती, तो उन्होंने उस भार को हटाने के लिए सन्तान के इच्छुकों को त्याग, तप यज्ञ दान आदि कर्मों में लगाया, तब उन्हें सन्तान प्राप्त हुई। दिलीप का गौ चराना, दशरथ का यज्ञ करना आदि अनेक ऐसे उदाहरण पाये जाते हैं। शास्त्रों में पुत्रेष्टि-यज्ञ नामक एक स्वतन्त्र यज्ञ ही है। इन सबका मनोवैज्ञानिक अर्थ उस व्यक्ति को लोभ से हटाकर त्याग की ओर प्रवृत्त करता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लोभ में एक प्रकार का गोप्य भाव है। लोभी मनुष्य अपने धन को, रखने के स्थान को, धन कमाने की विधि को गुप्त रखने का प्रयत्न करता है। उसे हर क्षण यही चिन्ता लगी रहती है, कहीं मेरी यह बातें प्रकट न हो जाँय। मनुष्य में काम-वासना, प्रकृति के अन्य समस्त जीव-जन्तुओं से अधिक क्यों है ? इसका कारण है दुराव। अन्य जीव-जन्तु काम-केलि को छिपाने की जरूरत नहीं समझते, इसलिये उन्हें उससे अस्वाभाविक आकर्षण नहीं होता। जंगली जातियों के स्त्री-पुरुष अर्द्धनग्न या पूर्ण नग्न रहते हैं, उनमें हमारे सभ्य समाज की जितनी कामवासना नहीं रहती। दुराव से हर प्रवृत्ति बढ़ती है। इसी प्रकार धन सम्बन्धी गोप्य भावनाओं से इसकी रक्षा का और नष्ट होने का भय बड़े उग्र रूप से बढ़ता है। लोभी जीवन भय और चिन्ता से भरा रहता है और यह दोनों बातें आयु को कम करने वाली एवं स्वास्थ्य नष्ट करने वाली होती हैं।

लालच की भावना का शरीर पर घातक असर हुए बिना नहीं रह सकता। इसलिए दान या उदारता को उसके निवारण का उपाय बताया गया है। हिन्दू धर्मशास्त्रों के अनुसार पञ्च महायज्ञ करना आवश्यक है। गीता में भगवान कहते हैं—'जो दूसरों को दिये बिना खाता है, वह चोर हैं। अपने लिए ही पकाने वाला पाप खाता है। लोभी पुरुष न तो शरीर को उचित भोजन दे सकता है और न मन को, पेट को जैसे-तैसे अन्न से भरता है और मन को स्वार्थ एवं चिन्ता से ही लादे रहता है। जब उन्हें सात्विक आहार नहीं मिलता और राजसी एवं तामसी भार लदा रहता है तो वे व्यथित होकर रोगी रहने लगते हैं।

दूसरों से उदारता का व्यवहार करो। अपनी जरूरतों में से कुछ बचा कर दूसरों को दो तो आप देखेंगे कि वे दो पैसा अनेक गुने होकर अनेक साथी लेकर लौट रहे हैं। देने के बाद जो हलकापन और सन्तोष प्राप्त होता है, वह हीरे की अँगूठी पहिनकर भी प्राप्त नहीं हो सकता, इससे देने की आदत सीखें। यदि आपको कोई रोग है तो आज से ही देना आरम्भ कर दीजिये। भोजन करने बैठो तो पास में उड़ती हुई चिड़ियों को रोटी के छोटे-छोटे टुकड़े डाल दो। कुत्ता बैठा हो तो उसे दुतकारो नहीं एक टुकड़ा उसकी तरफ भी फेंक दो। थोड़ा-सा आटा और चीनी मिल जाय तो पुड़िया बाँधकर जेब में रख लो, जब कहीं चींटियों का बिल दीख पड़े तो उस पर थोड़ी-सी डाल दो। गर्मी में पेड़ के ऊपर एक खुले मुँह का पानी का पात्र टांग दो, जिसमें चिड़ियाँ पानी पी लिया करें। बाजार में घूमने जाओ तो पान-सिगरेट में खर्च होने वाला पैसा बचाओ, उसे किसी अन्धे अपाहिज को दे दो। फालतू कपड़ा हो किसी शीत से ठिठुरते हुए व्यक्ति को दे दें। जैसी अपनी स्थिति हो वैसा ही दो, पर दो जरुर। देने से बड़ी शान्ति मिलेगी। लेने वाले के हृदय में से उठी हुई आशीर्वादात्मक लहरें आपके मानस-तन्तुओं पर टकरायेंगी और वैसा ही पोषण करेंगी जैसा धन्वन्तरि का इलाज करता। जब आप उदार हृदय से त्याग भावना अपनाते हैं तो अप्रत्यक्ष रूप से अपने रोगों को भी त्याग देते हो। एक बार एक लड़का जीर्ण ज्वर से ग्रस्त था, वह रोज डाक्टर के पास दवा मोल लेने जाता। एक दिन उसने रास्ते में एक गरीब स्त्री को भूख से तड़पते देखा, लड़के को बड़ी दया आई और उसने दवा के सारे पैसे उस स्त्री को दे दिए और बिना लिए ही वापिस लौट आया। उस रोज वह संतोष और प्रसन्नता के विचारों में डूबा रहा, फलस्वरूप उसका कई महीने का रोग उसी दिन चला गया।

तुम कृपणता और अति संचय का लोभ छोड़कर त्याग और उदारता के भावों को अपने हृदय में स्थान दोगे तो निश्चय ही आपके स्वास्थ्य में असाधारण उन्नति होगी।

भय का भूत

जितने आदमी बीमारी से नहीं मरते, उससे अधिक डर के मारे मर जाते हैं। कहते हैं कि यमराज ने एक बार प्लेग को आज्ञा दी कि जाओ दस हजार आदमियों को मार लाओ। वह आज्ञा का पालन करने के लिए चल दी और एक स्थान पर उसने नियत संख्या में आदमी मारे। अपना काम खतम करके जब वह वापिस पहुँची तो उसके साथ बड़ी भीड़ थी। गिने गये तो मृतक पचास हजार निकले। यम ने नाराज होकर पूछा—जब मैंने तुझे दस हजार मनुष्य मारकर लाने को कहा था, तो पचास हजार क्यों मार लाई ? प्लेग ने गिड़गिड़ाते हुए कहा—भगवान् ! मैंने तो दस हजार से एक भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक नहीं मारा। यह जो अधिक संख्या में हैं, डर के मारे आप मर गये हैं।

रोग के पैदा होने और बढ़ने में अधिकांश भय ही कारण होता है। वास्तव में डरने की कुछ भी बात नहीं है। यह तो शरीर की स्वाभाविक दैहिक क्रिया है हमारे रक्त कोष और विषैले पदार्थों को मार-मार कर शरीर में से बाहर निकालते रहते हैं। पसीना साँस, मलमूत्र आदि द्वारा हर घड़ी सफाई होती रहती है। यदि कभी शरीर में अधिक मात्रा में दूषित पदार्थ इकट्ठे हो जाते हैं तो प्राकृतिक शक्ति उन्हें प्रबल वेग से युद्ध करके निकालना चाहती है। बीमारी हमारी भलाई के लिए आती है बुराई के लिए नहीं, इसलिए उससे बिलकुल न डरना चाहिए, वरन् धैर्यपूर्वक उस सफाई के काम को होने देना चाहिए।

जब हम हमारी मृत्यु या अन्य किसी आशंका से डरते हैं, तो मरीज पर उसका घातक असर पड़ता है। भय की अवस्था में हमारे शरीर के अन्दर की प्रक्रियाओं में बाधा पड़ जाती है, इन्द्रियों का काम रुक-सा जाता है। यह रक्त शिराओं के प्रवाह बीज-कोषों के कार्य और उदर की क्रियाओं पर अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रहता। भय की अवस्था में हृदय की गति तीव्र हो जाती है, वह जोरों के साथ धड़कने लगता है, रक्त दबाब बढ़ जाता है और मांस पेशियों में साधारण दशा से अधिक रक्त का प्रवेश हो जाता है, लार बनाने वाली झिल्लियाँ अपना कार्य बन्द कर देती हैं, पाचन क्रिया रुक जाती है, यकृत के जरिये मांस पेशियों से शकर निकलने लगती है। संक्षेप में आप कह सकते हैं कि भय की अवस्था में शरीर के अन्तःपुर की वही दिशा हो जाती है, जो भूकम्प आदि दैवी विपत्तियों के आने के समय नगर निवासियों की हुआ करती है। यही भय जब किसी में स्थायी रूप से समा जाता है, तो उसका असर स्वाँस द्वारा पाचन क्रिया और रक्त वाहिनी शिराओं पर पड़ता है। आजकल लोगों को रक्तचाप से आमतौर पर पीड़ित होते देखा जाता है, इसका मुख्य कारण दुश्चिन्ताएँ होती हैं, जो भय का दूसरा स्वरूप हैं। कुछ लोगों पर इसका प्रभाव अजीर्ण के रूप में पड़ता है, स्नायु दौर्बल्य का एक मुख्य कारण भय ही है। इसी तरह कुछ लोगों को पांडु रोग तथा पथरी से पीड़ित होने का मूल कारण उनका मानसिक भय हुआ करता है।

एक प्रसिद्ध डाक्टर ने अपने अनुभव से बताया है कि ७५ प्रतिशत ऐसे व्यक्ति डाक्टरों के पास दवा लेने के लिये जाते हैं, जिन्हें कोई वास्तविक रोग नहीं होता है। यह भी देखा गया है कि ये निरोग होते हुए भी अपने को बीमार समझने लगते हैं और सचमुच अपनी इस भयानक धारणा के कारण बीमार पड़ जाते हैं। मनुष्य का मस्तिष्क सबसे अधिक बलवान और शक्तिशाली होता है, उसमें यदि भय की भावनाएँ प्रवेश कर जावें, तो शरीर को नष्ट होने में देर मत समझिये।

कितने ही भय काल्पनिक होते हैं, हम यों ही कल्पना करके भय का भूत खड़ा करते हैं, अधिकांश लोग गरीबी से डरते हैं। जो लोग अमीर हैं, उन्हें भय रहता है कि कहीं गरीब न हो जाऊँ, गरीब आदमी डरते हैं कि अब दरिद्रता हमारा पीछा न छोड़ेगी। स्वस्थ आदमी डरता है कि कहीं मैं बीमार न पड़ जाऊँ बीमार डरता है कि कहीं मैं अपाहिज न हो जाऊँ या मर न जाऊँ। बुढ़ापे और मृत्यु का चिन्तन करके लोग अकारण दुःखी होते रहते हैं। प्रेम में निराशा का, सुख दुःख का, काम असफलता का, परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाने का भय लोग करते रहते हैं और भावी आशंका जिसके आने की बहुत ही कम सम्भावना थी, चिन्तन कर-करके अपने पास बुलाते हैं। आलोचना का भय भी ऐसा ही है। कोई हमारे लिए क्या कहेगा ऐसे विचार पैरों में बेड़ी डाल देते हैं और आगे नहीं बढ़ने देते।

भय के अन्धेरे में, अज्ञान में और सुस्ती में हैं। जब आगे कोई भय हो तुरन्त साहस से काम लें और कुछ काम करने लग जाओ। जरा सोचिए तो मनुष्य जन्म से ही निर्भय है। छोटा बच्चा आँधी तूफान, सांप अन्धेरा आदि बातों से नहीं डरता। बड़े होने पर अन्य लोगों से भय की बातें सुनकर डरना सीखता है। इसी प्रकार वयस्क व्यक्ति दूसरों से सुन-सुन कर अपने भय को पक्का करता है। सच्चा वीर पुरुष किसी से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिर यौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य ६.१६

नहीं डरता, वह डर को डराता है। वह भय के द्वारा दुःख बुलाने का मानसिक जप नहीं करता। झूँठा आदमी औरों से डरता है। जो सत्यनिष्ठ हैं, वह किसी से क्यों डरेगा ? परमात्मा में विश्वास न होने से विपत्तियों का संपत्ति के नष्ट होने तथा जरा-मृत्यु का भय रहता है। जिसे भगवान पर भरोसा है। जिसने भय की व्याधि से छुटकारा पा लिया, उसे निरोगता प्राप्त करने में भी देर नहीं लगती।

निराशा और चिन्ता

शरीर को घुला डालने वाले रोगों में निराशा और चिन्ता से बढ़कर कोई रोग आज तक देखने में नहीं आया। क्षय रोग का कारण छूत नहीं है, वरन् उसका असली हेतु चिन्ता या निराशा है। अमेरिका में डाक्टरों की एक कमेटी ने अच्छी तरह अन्वेषण करके इस बात को जाना है कि असली रोगबीज बाहर से नहीं आता वरन् अन्दर से पैदा होता है। किसी व्यक्ति के मन में जब अपनी असमर्थता या हीनता के भाव आते हैं तो वह समझता है, मैं तुच्छ हूँ, अमुक आपत्ति को टाल न सकूँगा, मेरी कोई सहायता न करेगा, इतना भार कैसे उठाऊँगा, इस कार्य में सफलता न मिलेगी, अमुक कार्य पूरा न हुआ, तो बड़ी विपत्ति आवेगी, मेरे भाग्य में दुःख ही बदा है, ग्रहों के फेर ने मुझे जकड़ रक्खा है। इस तरह के विचारों का घातक प्रभाव शरीर की 'प्रतिरोध-शक्ति' पर होता है, जो हर प्रकार के शारीरिक और मानसिक कष्टों को दूर करने की आवश्यकता अनुभव करती है और उस आवश्यकता के अनुसार सुधार के उपाय का आविष्कार करती है। हीनता के भावों का सीधा आक्रमण प्रतिरोध शक्ति पर होता है, वे धीरे-धीरे इस शक्ति को इतना निर्बल बना देते हैं कि मनुष्य दीन हो जाता है और थोड़ी आपत्ति आने पर कातर स्वर से जाने लगता है। जिस घर का कोई संरक्षक न हो, उसमें सेंध लगाने में चोरों को बड़ी आसानी होती। प्रतिरोधक शक्ति के अभाव में अनेक प्रकार की शारीरिक और मानसिक विपत्तियाँ देह के मर्म स्थानों में डेरा डालकर बैठने लगती हैं और अपने स्वभाव के अनुसार उसे गलाना आरम्भ कर देती हैं। ज्वर आदि का कोई छोटा-मोटा बहाना मिलते ही वे उग्र रूप धारण कर लेती हैं, और मनुष्य की प्राणघातक बन जाती हैं। दमा नासूर, रक्तपित्त अर्बुद, श्लीपद, अन्त्रवृद्धि जैसे घातक रोगों जड़ में उदासीनता की भावनायें पाई गई हैं, काम वासना का लोप इन्द्रिय की शिथिलता और नपुंसकता इनका बीज कारण केवल अप्राकृतिक व अति मैथुन ही नहीं है, हीनता के भाव भी इसका एक बड़ा भारी कारण है।

देखा गया है कि चिन्ता के कारण एक जवान आदमी कुछ ही समय में बुड्ढा हो जाता है, उसकी कमर झुक जाती है और बाल सफेद पड़ जाते हैं। चेहरे की झुर्रियाँ स्पष्ट ही निराशा का साइनबोर्ड हैं। सिर पर हाथ लगाकर बैठना, लम्बी, साँस छोड़ना, होठ लटकाये रहना, माथे पर सिकुड़न, भौहों में ठेड़ापन, आँखों की कान में कनपटियों के पास दो-तीन धारियाँ पड़ना, स्वर में कराह, यह सब लक्षण चिन्तित व्यक्तियों में देखे जाते हैं। ये अपने जीवन के छकड़े को जैसे-तैसे खींचते हैं। आशा और उत्साह के अभाव में वह ज्यों-त्यों करके ढकेलने वाला छकड़ा अधिक दूर नहीं चल सकता। पूरी आयु का उपभोग करने की उसमें क्षमता नहीं रह जाती, फलस्वरूप उनकी आगे की उम्र में आधी कमर जरूर हो जाती है। एक व्यक्ति जो तीस वर्ष की उम्र में निराश या चिन्तित रहने लगा है, यदि वह साधारण तीस वर्ष और जीता तो अब पन्द्रह वर्ष से अधिक न जी सकेगा। किसी रोग का छोटा-मोटा आक्रमण हो गया, तब तो और भी जल्दी मरेगा। असंख्य रोगियों के अनुभव से हमने यह जाना है कि वे लोग जल्दी मरते हैं, जो मरना चाहते हैं। जो रोगी हाय मरा रट लगाते हैं, वे मृत्यु का आह्वान करते हैं और दयालु मृत्यु भी उनकी मनोकामना पूर्ण कर देती है।

स्विटजरलैंड के डाक्टर ब्रेनो अपनी अनुभव-पुस्तिका में लिखते हैं, कि एक मरणासन्न रोगी मेरे अस्पताल में लाया गया, जब मैं उसे देखने पहुँचा, तो रोगी ने मुस्करा कर मेरा अभिवादन किया और कहा—"डाक्टर ! आप निराश न हों, मेरी मृत्यु अभी बहुत दूर है। आप धैर्यपूर्वक चिकित्सा करें। मैं मर नहीं सकता।" इस असाध्य रोगी के ऐसे वचन सुनकर मेरी हिम्मत बँध गई और विशेष दिलचस्पी के साथ इलाज किया। ईश्वर की कृपा से तीन सप्ताह में वह रोगी चंगा हो गया, जिसे प्रायः एक दर्जन डाक्टर असाध्य बताकर मौत का फतवा दे चुके थे। एक दार्शनिक का कथन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है—निराशा जीती बाजी को हरा देती है और चिन्ता जीवित मनुष्य को गर्त में पहुँचा देती है। जो व्यक्ति इन दोनों में ग्रस्त हो, उसका तो ईश्वर ही रक्षक है।

सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी कन्हाईलाल दत्त को जब मृत्यु दण्ड सुनाया गया तो फाँसी की कोठरियों में रहने के दिनों में उनका वजन ५½ पौण्ड बढ़ गया था। काकोरी षडयन्त्र के कैदी श्री रामप्रसाद बिस्मिल फाँसी लगने से एक घण्टा पूर्व अपना दैनिक व्यायाम कर रहे थे। फाँसी घर के चौकीदार ने आश्चर्यचकित होकर पूछा—आप तो एक घण्टा बाद मरने वाले हैं फिर व्यायाम का क्या लाभ ? श्री बिस्मिल ने हँसते हुए कहा—जब मौत नियत समय पर अपना काम नहीं छोड़ेगी तो मैं ही क्यों लापरवाही बरतूँ और समय के दुरुपयोग का अपराधी बनूँ।" अयोवा के युद्ध में एक आयरिश सिपाही शेरो थेडरी बुरी तरह घायल हुआ। गोलियाँ उसके दाहिने फेफड़े में पीछे से धुँसी और फेफड़ा, आमाशय, जिगर, पित्तकोश चीरती हुई आँतों में तेरह दुहरे छेद बनाकर पेट में पड़ी रह गईं। खून बहुत निकल चुका था, जख्म बहुत थे, गोलियों और छर्रों से पेट भरा पड़ा था। डाक्टर निराश थे उसे आपरेशन रूम में ले जाया जा रहा था। थेडरी ने डाक्टर का कन्धा पकड़ा और धीरे से कहा—डाक्टर परेशान होने की जरा भी जरूरत नहीं है। जब तक मेरी छाती में बिना छेद दिल मौजूद है, तब तक मरने की कोई बात नहीं। मैं मर नहीं सकता। आपरेशन के बाद में जरूर अच्छा हो जाऊँगा। सचमुच उसने अपने विश्वास को सही सिद्ध कर दिखा दिया। वह मरा नहीं इतने बड़े आपरेशन के बाद भी अच्छा हो गया। उसी अस्पताल में एक और अनेकों गोलियों से छिदा दूसरा सैनिक भर्ती हुआ तो उसने अपने पड़ौसी की स्थिति को समझने के बाद हँसते हुये कहा—जब मेरा साथी इतने घावों के बाद बच सकता है तो मेरे मरने का सवाल ही नहीं उठता।

विश्व के चतुर्थ राष्ट्रीय केन्सर सम्मेलन की रिपोर्ट में पता चलता है कि ६६ अस्पतालों से २१२३६२ फेफड़े के केन्सर के रोगियों के आपरेशन के बाद स्त्रियाँ तो १०० में से ६२ अच्छी हो गईं पर पुरुष केवल ३० प्रतिशत ही बच सके। डाक्टरों का कहना है कि स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक चिन्तित रहते हैं और इसी कारण वे रोग निरोधक जीवनी शक्ति से वंचित हो जाते हैं। भारत के मानसिक रोगों के अस्पतालों के अधीक्षकों का एक सम्मेलन पिछले दिनों आगरा में हुआ था। इसमें बताया गया कि भारत में इस समय पागलों की संख्या ८५०००० है। सन् १९५४ के बाद यह संख्या तेजी से बढ़ी है। अखिल भारतीय मानसिक चिकित्सा संस्थान के सर्वेक्षण से प्रकट हुआ है कि—"ग्रामों की अपेक्षा शहरों में मानसिक रोगी अधिक हैं और इसका प्रमुख कारण शहरी जीवन की परेशानियाँ हैं। लोग आर्थिक एवं पारिवारिक चिन्ताओं में अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठते हैं और पागलपन से सम्बन्धित रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। पागलों में ८७ प्रतिशत पुरुष स्त्रियों की अपेक्षा अधिक चिन्ताग्रस्त रहते हैं।

चिन्ता और निराशा के कुविचारों को तिलांजलि देकर यदि आशा, उत्साह और साहस से काम लें, तो इन मनोविकारों के कारण जीवन को प्रत्येक क्षेत्र में सफल होने से बचाया जा सकता है। स्वास्थ्य की रक्षा बहुत सीमा तक इसी आधार पर हो सकती है और हम उन रोगों से छुटकारा प्राप्त कर सकते हैं, जिनके कारण शारीरिक नहीं वरन् मानसिक होता है। डाक्टरों को ऐसे बीमारों की चिकित्सा में सफलता नहीं मिलती, जो मनोविकारों के कारण रोगग्रस्त हुए हैं। ऐसे लोगों को निरोग बनाने के लिए उनके मनोविकारों का हटाया जाना ही एक मात्र उपाय होता है।

इन्द्रियों का सदुपयोग करना सीखें

आत्म-कल्याण के मार्ग में इन्द्रियों की प्रबलता को प्रमुख शत्रु माना जाता है। इन्द्रियों से प्राप्त होने वाले सुखों के प्रति राग और द्वेष मिलकर मनुष्य को दिग्भ्रान्त करते रहते हैं। यही कारण है कि बाह्य-जीवन की नश्वरता को स्वीकार करते हुए भी वह आत्मा के उद्धार की बात तक नहीं सोच पाता है। शास्त्रों में इस विषय में अधिक जोर दिया गया है कि मनुष्य शरीर रहते हुए अपने स्वरूप का ज्ञान कर लेना चाहिए अन्यथा पुनः युग-युगान्तरों तक अनेकों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

घृणित योनियों में विचरण करना पड़ता है तब कहीं दुबारा मानव-शरीर प्राप्त करने का संयोग मिलता है। इस दुर्लभ संयोग को यों ही बर्बाद कर देना बुद्धिमानी की बात नहीं है।

अग्नि के तेजस्वी स्वरूप को देखने के लिये ऊपर की सारी राख हटानी पड़ती है। अन्धकार फैल रहा हो तो किसी वस्तु का साफ-साफ स्वरूप नहीं दिखाई पड़ता। उसी प्रकार अन्तःकरण के मल, विक्षेप बने रहें तो आत्म-ज्ञान प्राप्त करना सम्भव न होगा। मानसिक चञ्चलता और आन्तरिक मलिनता का उदय इन्द्रियों के असंयम से होता है। इसलिये गीताकार ने लिखा है—

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ।
तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ।।

अर्थात्—मनुष्य को चाहिये कि इन्द्रियों के अर्थ व उनमें सन्निहित जो राग द्वेष हैं, उन दोनों के वश में नहीं होते क्योंकि आत्मकल्याण के मार्ग में विघ्न करने वाले ये दोनों ही प्रबल शत्रु हैं।

जिन इन्द्रियों को आत्म-विश्वास की रुकावट मानते हैं यथार्थ हमारे आत्म-कल्याण का कारण भी वही हैं। शत्रु के रूप में तो वे अपने बहिर्मुखी स्वभाव के कारण परिलक्षित होती हैं। जब तक इनका उपयोग बाह्य-जीवन के सुखोपभोग में करते हैं, तब तक यह शत्रु हैं किन्तु जैसे ही इन्हें आत्म-ज्ञान व आत्मविकास की ओर मोड़ देते हैं तो इनके सत्परिणाम भी दिखाई पड़ने लगते हैं। परेशानी तभी तक रहती है, जब तक ये अपने अर्थों में पूर्ण स्वच्छन्द होती हैं। सदुपयोग करने लगें तो इन्हीं से महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। आवश्यकता सिर्फ इतनी है कि इनकी स्वतन्त्रता विचरण की बहिर्मुखी प्रवृत्ति पर अंकुश बनाये रहें।

किसी घोड़े को बेलगाम छोड़ दें तो वह अपने सवार को खड्डे में गिराकर ही रहेगा। सवार की सुरक्षा सदैव इस बात पर निर्भर रहती है कि वह घोड़े के नियन्त्रण को ढीला न करे। इससे जिस दिशा में जितनी दूर जाना चाहेंगे, वही घोड़ा सुरक्षा-पूर्वक आपको पहुँचा देगा। जिह्वा-इन्द्रिय को ही लीजिये। भाँति-भाँति के स्वाद युक्त व्यञ्जनों की उसे सदैव लालसा बनी रहती है। चटोरपन की बहिर्मुखी प्रवृत्ति के कारण वह स्वास्थ्य को बर्बाद करती है। जिह्वा का उपयोग वस्तुतः इसलिये है कि उससे खाद्य या अखाद्य की पहिचान करते हैं। अधिक कड़ुवा खा लेने पर जीभ छटपटाने लगती है, यह उसकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति है कि यह अखाद्य है, उदरस्थ कर जाने का दुष्परिणाम तो बाद में मिलेगा। पाचन संस्थान को खराबी से होने वाले दुष्परिणामों से बचाने के लिये ही जीभ की तड़फड़ाहट उठी थी किन्तु इसका लाभ तभी है जब हम खाद्य और अखाद्य के भेद को स्वीकार करें, उस पर नियन्त्रण करें।

आँखों का कार्य है सौन्दर्य-दर्शन। आत्मा के उद्गम परमात्मा के सौन्दर्य को अन्यतम कहा जाता है। उस आन्तरिक सौन्दर्य के साक्षात्कार की लालसा स्वाभाविक है। हर किसी को सुन्दर वस्तुयें देखने की इच्छा बनी रहती है। किन्तु अधिकांश होता यह है कि लोग बाह्य रूप रङ्ग, चमक-दमक को ही सौन्दर्य मानते हैं। बात यहीं तक रहती तब भी गनीमत थी किन्तु स्वार्थपूर्ण और वासनात्मक दृष्टिकोण के द्वारा लोग आन्तरिक सौन्दर्य पर पर्दा डाल देते हैं। विराट् का सौन्दर्य इतना अभूतपूर्व और आल्हादमय है कि एक बार उसकी अनुभूति कर पायें तो आँखें सदैव उसे पाने के लिये ही तरसती रहेंगी। इसी दृष्टि से इनकी उपयोगिता भी है।

इस संसार में जो कुछ भी हो रहा है वह सब विधिवत् वैज्ञानिक तथ्य पर सन्निहित है। इस विज्ञान को समझने के लिए इन्द्रियों के विषय-विकारों से दूर रहना परमावश्यक है। इन्द्रियों में आसक्त हुआ व्यक्ति कभी अध्यात्म-विज्ञान की ओर उन्मुख नहीं हो सकता। उसकी सारी चेष्टायें इन्हीं कुत्सित, घृणित अदूरदर्शी, क्षणिक, सुखोपभोग के आस-पास ही चक्कर लगाया करती हैं। फलतः विराट् के साथ आत्मीयता स्थापित करने की कभी भावना तक नहीं बन पाती। तुलसीदासजी ने मानस में लिखा है—

इन्द्रिय द्वार झरोखा ना, तहँ-तहँ सुर बैठि करि थाना।
आवत देखहिं विषय बयारी, ते हठि देहिं कपाट उघारी।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब सो प्रभंजन उर गृह जाई, तवहिं दीप विज्ञान बुझाई।

इन्द्रिय सुरन्ह ज्ञान सौहाई, विषय भोग पर प्रीति सदाई

अर्थात्—अनियन्त्रित इन्द्रियाँ बलात् विषयों की ओर खींच ले जाती हैं। ज्ञान-विज्ञान की बात यों ही रखी रह जाती है।

विषयों में राग और द्वेषों में स्वच्छन्द विचरण करती हुई इन्द्रियों को विचार व विवेक द्वारा ही नियन्त्रण में रखा जा सकता है। भोग से कभी तृप्ति नहीं होती, इससे मनुष्य अपनी जीवन-लक्ष्य से भटककर दुःख क्लेश तथा त्रासदायक परिस्थितियों में जा फँसता है। इस विचार को गहराई तक अपने अन्तःकरण में प्रवेश कर लेने से और इस पर निरन्तर चिन्तन मनन करते रहने से भोग के दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम दिखाई दे जाते हैं। धीरे-धीरे इनसे घृणा उत्पन्न होने लगती है।

इतना होने से भी यह नहीं कहा जा सकता कि इन्द्रियाँ आपके वश में आ गईं। जब कभी अनुकूल परिस्थिति बन जाती है तो इनमें प्रबल उत्तेजना उठे बिना नहीं रह पाती। ऐसी अवस्था में सारी विचार-शक्ति लड़खड़ा जाती है और एक आवेश के साथ लोग बुरे कर्मों की ओर बलात् खिंचे चले जाते हैं। यह परिस्थिति विचारों की क्षीण शक्ति के कारण ही उपस्थित होती है, इसलिए अपने प्रत्येक विचार को एक सङ्कल्प का रूप दे देना चाहिये। बड़ी सूक्ष्मता और चतुराई से यह देखते रहना चाहिये कि इन्द्रियाँ कहीं अपनी इच्छा से तो हमें नहीं घसीट रहीं हैं। इन्द्रियों का स्वभाव जानकर, उन्हें सही मार्ग पर ले जायें। इसका सबसे सरल उपाय यह है कि अपना अधिकांश समय परमात्मा के मनन, चिन्तन में लगाये रखें। जितनी देर आपका मन आन्तरिक विचारों के क्षेत्र में डूबा रहेगा उतनी देर इन्द्रिय-विषय भी बिल्कुल नहीं उठेंगे। यदि ऐसी स्थिति आती है तो उन्हें बहलाकर फिर से सद्-चिन्तन में लगा देना चाहिये। इसके मन का सङ्कल्पवान् होना आवश्यक है। इसी से इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखा जा सकता है।

अपनी आन्तरिक निर्मलता बनाये रखने से इन्द्रियाँ अपने आप संयमित होने लगती हैं। इस व्यवस्था का आधार सदावरण है। द्वेष, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध आदि से ही अन्तःकरण मलिन व अपवित्र बनता है। अपनी भावनाओं में प्रेम, स्नेह, आत्मीयता, सौजन्य और सहानुभूति के बाहुल्य से ही आन्तरिक श्रेष्ठता स्थिर रहती है, जब तक ऐसी स्थिति बनी रहती है, तब तक दूषित विकार उत्पन्न नहीं होते और इन्द्रियाँ नियन्त्रित बनी रहती हैं।

इन्द्रियों को आत्मा का शत्रु नहीं सेवक मानना चाहिये। परमात्मा ने इन्हें इसलिये प्रदान किया है कि इनकी सहायता से सृष्टि सञ्चालन की आवश्यकता पूरी हो और सुख मिले। निःसन्देह इन्द्रियाँ बड़ी उपयोगी हैं। इनसे जीवात्मा का उत्कर्ष होता है और आनन्द की प्राप्ति होती है। ये आत्मा के हित व कल्याण में बाधक नहीं वरन् साधन स्वरूप हैं। इनका सदुपयोग किया जाय तो मनुष्य जीवन का मधुर रस चखता हुआ अपना जीवन-लक्ष्य पूरा कर सकता है।

सच तो यह है कि किसी भी इन्द्रिय का उपयोग करना पाप नहीं है। ये अन्तःकरण की विभिन्न क्षुधाओं पिपासाओं को तृप्त करने का उत्तम माध्यम है। ज्ञानेन्द्रियों की क्षुधा उचित रीति से तृप्त नहीं की जाती तो आन्तरिक क्षेत्र का सम्पूर्ण सन्तुलन ही बिगड़ जाता है। मानसिक गड़बड़ी पैदा होती है। बुरा तो इनका अनुचित उपयोग है। अस्वाभाविक इच्छा पूर्ति के लिये अनियन्त्रित भोग-वासना के कारण आदमी पतित बनता है। अमर्यादित और स्वेच्छाचारी इन्द्रियाँ जीवन-लक्ष्य से गिरती हैं इसलिये इन्द्रिय भोगों की सर्वत्र निन्दा की गई है। उचित रीति से भोगी गई इन्द्रियाँ दुःख का कारण नहीं होतीं। स्वाभाविक रीति से इन्द्रियों का सदुपयोग बुरा नहीं होता। हमारे शत्रु के रूप में अनियन्त्रित भोग-वासना होती है। इससे ही बचने का सदैव प्रयत्न करना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कब्ज से कैसे बचें

प्रकृति ने मनुष्य को स्वस्थ रखकर सांसारिक जीवन व्यतीत करने के लिये बनाया है। उसने उसके समस्त अङ्गों का निर्माण ऐसी चतुराई के साथ किया है कि वे परस्पर सहयोगपूर्वक जीवन के विकास के लिये आवश्यक समस्त कार्यों की बड़ी अच्छी तरह पूर्ति कर सकते हैं। शरीर के विभिन्न यन्त्रों और संस्थानों में इतनी कार्यक्षमता है कि यदि मनुष्य उनका उपयोग बुद्धिमानी के साथ करें तो कभी विकार उत्पन्न होकर कष्ट उठाने की स्थिति नहीं आ सकती। वे जहाँ एक तरफ अपनी शक्ति को बढ़ाने तथा उसके द्वारा विविध कार्यों को सम्पन्न करने में समर्थ हैं, उसी प्रकार दूसरी ओर अपनी सफाई करने, प्रतिदिन बिखरने वाले कूड़े-करकट को शरीर से बाहर निकालते रहने की व्यवस्था भी रखते हैं। यदि हम उनका सदुपयोग करें तो कोई कारण नहीं कि हमको रोगी बनकर तरह-तरह के कष्ट सहना और अपने कर्तव्य-कर्म पालन में अक्षम होना पड़े।

पर मनुष्य अपनी लापरवाही अथवा वासनाओं में आसक्त हो जाने से इस परमात्मा की अपूर्व कारीगरी में दोष और विकार उत्पन्न कर देता है। वह नियमित और शास्त्र-सम्मत मार्ग को छोड़कर इन्द्रियों के वशीभूत हो कुमार्ग पर चलने लग जाता है। विद्वानों ने जिह्वा (रसेन्द्रिय) और शिश्न (भोगेन्द्रिय) को अति प्रबल बतलाया है। जो व्यक्ति इनका गुलाम बनकर पेटूपन और कामुकता की आदतों से ग्रस्त हो जाता है, उसको जल्दी या देर में अवश्य ही दुर्बल, रोगी और असमर्थ होकर कष्टमय जीवन व्यतीत करना पड़ता है। खाने-पीने की गड़-बड़ी से अधिकांश मनुष्यों की पाचन-क्रिया बिगड़ जाती है और उसके फलस्वरूप उनके स्वास्थ्य में तरह-तरह की त्रुटियाँ और विकार उत्पन्न होने लगते हैं। अमेरिका के सुप्रसिद्ध स्वास्थ्य विज्ञानदाता और प्राकृतिक चिकित्सा के महान् प्रचारक **डा० बर्नर मैकफेडन** का कहना है कि "आज-कल सौ में से एक व्यक्ति भी कठिनता से ऐसा मिलता है, जिसकी पाचन-क्रिया पूर्णतः ठीक हो और इस कारण जिसे कोई बीमारी न हो।"

पाचन-क्रिया बिगड़ने के कारण

पाचन-क्रिया के खराब होने का सबसे प्रथम कारण तो यह है कि आजकल मनुष्य का जीवन अत्यन्त व्यस्ततापूर्ण हो गया है। बड़े शहरों के निवासी तो हर समय इस तरह भाग-दौड़ करते रहते हैं कि उनका सदा समय का अभाव ही अनुभव हुआ करता है। अनेक अल्प साधन वालों की आर्थिक परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं कि अपना अधिकांश समय उन्हें नौकरी या मजदूरी के काम को पूरा करने में लगाना पड़ता है और उनको वास्तव में फुर्सत बहुत कम मिलती है। साधन-सम्पन्न लोगों को अनेक ऐसे व्यसन लगे होते हैं, जिनमें उनका बहुत समय निकल जाता है। गाना-बजाना, सिनेमा, ताश, शतरंज, धूम्रपान, व्यभिचार आदि बीसियों ऐसी दुष्प्रवृत्तियाँ हैं, जिनमें फँसकर मनुष्य उनका गुलाम हो जाता है और फिर उसका ज्यादा समय और साधन उन्हीं में लगने लगते हैं।

ऐसे लोगों में से अधिकांश अपना भोजन भी शांतचित्त और नियम के साथ नहीं कर पाते। वे प्रायः जल्दी-जल्दी में भोजन का आधा-तिहाई चबाकर पेट भरकर चलते बनते हैं। कहाँ तो स्वास्थ्य-विज्ञान के ज्ञाताओं ने कहा है कि प्रत्येक ग्रास को ३२ बार चबाकर ऐसा तरल करलो, जिससे वह पानी की तरह गले में चला जाय और उसको पचाने में अमाशय को किसी प्रकार की कठिनाई न हो और कहाँ वे १०-५ बार मुँह चलाकर ही ग्रास को निगल लेते हैं और बहुत तो बार-बार पानी पीकर उसे नीचे उतारते रहते हैं। ऐसी हालत में दाँतों का काम आमाशय को करना पड़ता है। अर्थात् उस भोजन को गलाकर धीरे-धीरे उसके बड़े टुकड़ों को पीसकर छोटा करना पड़ता है, तब उन पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाचक रसों का इतना असर पड़ सकता है कि रस और रक्त बनने योग्य हो सकें।

दूसरा दोष—स्वाद की प्रवृत्ति का दूषित बना लेना। प्रकृति नें प्रत्येक अच्छे खाद्य-पदार्थ में सब प्रकार के रसों का ऐसा सन्तुलन रखा है कि उसे रुचिपूर्वक चबा-चबा कर खाया जाय तो खूब स्वादिष्ट लगता ही है। पर मनुष्य तरह-तरह की तेज स्वाद की चीजें खाकर अपनी अस्वादन शक्ति को इतना विकृत कर लेते हैं कि उनको हलके और सूक्ष्म स्वाभाविक स्वादों का अनुभव ही नहीं होता। जब तक वे अपने भोजन में ढेरों नमक, मिर्च, खटाई, चीनी आदि का समावेश न करें, तब तक उनको भोजन में किसी प्रकार का स्वाद ही नहीं आता। ऐसे व्यक्ति साग-दाल में ऊपर से एक-एक चम्मच मिर्च-खटाई आदि मिला लेते हैं। दूध, शर्बत चाय आदि में दूनी चीनी डाल लेते हैं, तब उनको ठीक स्वाद आता है। इसका परिणाम यह होता है मसालों या चीनी की अधिकता से खाद्य-पदार्थ दुष्पाच्य हो जाता है और उसके असर से कुछ समय में पाचन शक्ति, ऐसी निर्बल हो जाती है कि वह भोजन को ठीक तरह से रस और रक्त रूप में नहीं बदल सकती और शरीर अस्वस्थ होने लग जाता है। भोजन को पचाने वाली आँतें और मलाशय आधे भोजन से भर जाते हैं और उनसे विषैले तत्व उत्पन्न होकर कब्ज पैदा कर देते हैं, जिससे शरीर को उचित पोषण मिल सकना भी असम्भव हो जाता है।

तीसरा कारण परिश्रमशीलता का अभाव है। प्रकृति ने मनुष्य का शरीर हर तरह का काम-काज और श्रम करने योग्य बनाया है। उसके श्वांस यन्त्र की रचना भी इस प्रकार की गई है कि यदि वह खुले स्थान में खूब परिश्रम करके भरपूर श्वांस-प्रश्वांस ले तो उसके भीतर का दूषित तत्व बाहर निकलकर रक्त की शुद्धि हो जाती है। शुद्ध रक्त ही स्वास्थ्य का मुख्य आधार है। पर आजकल क्या गरीब और क्या अमीर सबकी परिस्थितियाँ ऐसी बन गई हैं कि उनको प्रायः उचित शारीरिक श्रम से वंचित रहना पड़ता है। मजदूर लोग कारखानों के बन्द स्थानों में जहाँ इन्जिनों का धुआँ तथा मशीनों की गर्द वायुमण्डल को दूषित करती रहती है, ८-१० घण्टे तक भीतर रहकर साँस लेते रहते हैं। दफ्तरों में क्लर्क ८-१० घण्टे कुर्सी पर बैठे हुए केवल कलम चलाने का 'परिश्रम' करते रहते हैं। अमीर लोग तरह-तरह के व्यसनों में फँस अधिकांशतः गद्दों पर पड़े रहते हैं या रात को बारह-एक बजे तक जागकर मनोविनोद करते रहते हैं और फिर दिन के नौ बजे सोकर उठते हैं। इस प्रकार के विपरीत रहन-सहन का प्रभाव पाचन-शक्ति पर बहुत बुरा पड़ता है और कोष्ठबद्धता एक भयङ्कर रोग का रूप धारण कर लेती है, जिससे प्रायः अन्त समय तक पीछा नहीं छूटता।

कब्ज के कारण मलाशय की दुर्दशा

इस प्रकार जो लोग अप्राकृतिक और अस्वाभाविक रहन-सहन से अपनी आदतों को बिगाड़ लेते हैं, उनकी भोजन पचाने वाली छोटी और बड़ी आँतों की भीतरी दशा बहुत बुरी हो जाती है। यद्यपि ऊपर से उनका स्वास्थ्य मामूली ठीक-सा जान पड़ता है, वे नित्य अच्छी तरह खाते और शौच भी जाते रहते हैं, पर वास्तव में उनका मलाशय गन्दे और सड़े मल से भरा रहता है, जिसमें तरह-तरह के कीटाणु और हानिकारक गैसें उत्पन्न होकर जीवन की आधार रक्तधारा को दूषित करती रहती हैं।

यही विषाक्त तत्व समय-समय पर मात्रा में अधिक हो जाने पर विभिन्न शारीरिक कष्टों और बीमारियों के रूप में प्रकट होता रहता है। जी का मिचलाना, मुँह का स्वाद खराब रहना, सिर का भारीपन, किसी भी अङ्ग में दर्द पैदा हो जाना आदि पचासों छोटी-बड़ी शारीरिक शिकायतें इस मलाशय की खराबी के कारण ही पैदा होती रहती हैं। पर अधिकांश लोग उनके मूल कारण की तरफ ध्यान न देकर, उनका स्थानीय उपचार करके काम चलाते रहते हैं और अपने को साधारणतः स्वस्थ्य ही समझा करते हैं। पर डाक्टरों ने ऐसे लोगों की मृत्यु के उपरान्त उनके मलाशय की जाँच करके देखा है कि उसमें वर्षों का पुराना मल सूखकर पत्थर जैसा कड़ा पड़ गया था और उसके भीतर कई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार के कृमियों ने अपने घर बना लिये थे। कई व्यक्तियों पर इस प्रकार की जाँच से यह मालूम हुआ कि मुश्किल से आठ आदमियों में से एक का मलाशय साफ रहता है, अन्यथा अधिकांश व्यक्ति अपने पेट में सदैव चार-पाँच सेर दूषित मल का बोझा लिये ही सर्वत्र घूमा-फिरा करते हैं और जीवन के कार्यों का जैसे-तैसे निर्वाह किया करते हैं।

एक अमरीकन डाक्टर के कथनानुसार—"ऐसे लोग पाँच फीट लम्बे मल से भरे थैले को लेकर चलते-फिरते और सोते हैं। इन लोगों को साधारण रीति से नित्य शौच हो जाता है और इससे वे समझ लेते हैं कि हमारा पेट साफ है। पर वास्तविक बात यह होती है कि मलाशय पूरा भर जाने से उसके नीचे के भाग का थोड़ा-सा मल निकल जाता है और उसकी जगह ऊपर का मल नीचे खिसक आता है, पर मलाशय सदैव भरा रहता है।"

कब्ज से भयङ्कर रोगों की उत्पत्ति—

जिन लोगों को पाचन-क्रिया का ज्ञान नहीं है अथवा जो जीभ के स्वाद के वशीभूत हो भोजन के पचने न पचने का ध्यान छोड़कर लगातार कुछ न कुछ खाया ही करते हैं, उनकी पाचन-क्रिया अवश्य ही खराब हो जाती है। उनके आमाशय की वही हालत होती है—जैसे किसी पतीली में पावभर दाल या चावल पकने को रखा जाय और जब बीस मिनट बाद वह आधा पक जाय, तब उसमें पाव भर कच्ची दाल या चावल फिर डाल दिया जाय। इस प्रकार पकाने पर वह भोजन कभी ठीक नहीं बन सकता। उसका आधा भाग अधिक पका और आधा कुछ कच्चा रह जायेगा, जो स्वाद और रङ्ग-रूप का निगाह से अधिक बदस्वाद और हानिकारक होगा। इसी प्रकार आमाशय में, खाने से एक घण्टा बाद, जबकि पहला भोजन आधा पचा हो थोड़ा-बहुत नया खाना पहुँचा दिया जाय तो वह अवश्य ही गड़बड़ी पैदा करेगा। ऐसे आधे कच्चे-पक्के भोजन का रस कभी उत्तम नहीं निकल सकता। उसका मल भी अस्वाभाविक हो जाने से यथासमय सहज में बाहर निकल जाने के बजाय आँवयुक्त बनकर आतों में चिपकता रहेगा और सड़कर रक्त को दूषित बनाता रहेगा।

जब इस प्रकार मल का अंश मिला हुआ रक्त हृदय में पहुँचता है, तो उसे साफ करने में आवश्यकता से अधिक परिश्रम करना पड़ता है, जिससे उसका धड़कना बढ़ जाता है। यही धड़कन आगे चलकर कलेजे का दर्द—हृदय की कमजोरी का रूप धारण कर लेती है। इसी से सर का दर्द, खून का पीला पड़कर पीलिया हो जाना आदि रोग पैदा हो जाते हैं। यदि यह मल बहुत अधिक देर तक बड़ी आँत में रुकता है तो उसमें सड़न पैदा होकर 'ट्यूबर क्लोसिस' नामक कीटाणु पैदा हो जाते हैं, जो क्षय रोग के जनक माने जाते हैं। ये कीटाणु रक्त में मिलकर जब फेफड़े में पहुँचते हैं तो आरम्भ में तो ऑक्सीजन वायु लगने से वे मर जाते हैं, पर जब वही खराबी बहुत समय तक जलती रहती है और कीटाणुओं की संख्या बढ़ जाती है तो वे फेफड़े के ऐसे हिस्से में चिपक जाते हैं, जहाँ वायु बहुत कम पहुँचती है या नहीं पहुँचती। तब वे उस अंश को सड़कार नष्ट कर डालते है। यही तपेदिक के भयंकर रोग का मूल कारण है।

कब्ज का होना दिमाग के लिये भी बड़ा हानिकारक है। शरीर का संचालनकर्ता दिमाग ही है, जो अनगिनत ज्ञान-तन्तुओं के द्वारा हजारों प्रकार की शारीरिक क्रियाओं को सम्पन्न करता है। पर दिमाग को भी शुद्ध रक्त से ही पोषण मिलता है और इसी से वह कार्यक्षम बना रहता है। पर मलाशय द्वारा दूषित रक्त दिमाग में पहुँचता है तो उस पर भी कुप्रभाव पड़ता है और उसकी शक्ति कम होने लगती है। यही दिमागी कमजोरी आगे चलकर स्मरण शक्ति के ह्रास, मूर्छा, पागलपन आदि के रूप में परिणित होने लगती है, जिससे मनुष्य का जीवन एक प्रकार से बेकार हो जाता है।

बवासीर और मूत्राशय का कष्ट

बवासीर का रोग आजकल बहुत फैला हुआ है और इसमें लोगों का स्वास्थ्य प्रायः बहुत कमजोर पड़ जाता है। इसका मुख्य कारण आहार सम्बन्धी बदपरहेजी ही होता है। जब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आँतों में अधिक मल स्थायी रूप से जमा रहने लगता है तो उसके भार से माँसपेशियाँ बढ़ जाती हैं और उनमें रक्त भर जाता है। इससे गुदा के बाहर का माँस फूलकर सख्त पड़ जाता है, जिसे मस्सा कहने लगते हैं। टट्टी जाते समय इन मस्सों में प्रायः बहुत दर्द हुआ करता है। जब इन मस्सों पर भीतर से सख्त मल निकलने के कारण अधिक दबाव पड़ता है तब ये मस्से फटकर खूनी बबासीर बन जाते हैं। लोगों का विश्वास है कि एक बार बबासीर हो जाने पर वह फिर कभी जड़ से अच्छा नहीं होता। वास्तव में विलायती और देशी दवाइयों से बबासीर ही क्या अधिकांश रोग कुछ समय के लिये दब ही जाते हैं, अनुकूल परिस्थिति पाने पर फिर से उभर आते हैं। इसलिये बबासीर को दूर करने का कारगर उपाय आहार-विहार को ठीक करके कब्ज मिटाना ही है। इसमें बबासीर धीरे-धीरे स्वयं ठीक हो जाता है।

मूत्र सम्बन्धी रोगों का भी एक बड़ा कारण कब्ज ही होता है। शारीरिक मलों को बाहर निकालने में मूत्र-संस्थान का भी महत्व कम नहीं है। एक सामान्य व्यक्ति को चौबीस घण्टे में लगभग डेढ़ सेर मूत्र निकलता है, जिसमें यूरिक ऐसिड और अन्य क्षारों का परिमाण लगभग आधी छटाँक होता है। यदि ये पदार्थ शरीर से बाहर न निकलें तो स्वास्थ्य को भयङ्कर क्षति पहुँचा सकते हैं। इन विजातीय दूषित द्रव्यों को बाहर निकालने के लिये हमारे गुर्दे निरन्तर कार्य करते रहते हैं। अगर उनमें कोई खराबी आ जाय अथवा किसी विकार के कारण अपना काम ठीकतौर से न कर सकें तो तरह-तरह की बीमारियों का पैदा हो जाना सुनिश्चित है।

कब्ज का कुप्रभाव मूत्राशय पर भी पड़ता है, क्योंकि वह मलाशय के बिल्कुल निकट होता है और जब कब्ज के कारण मल शरीर के भीतर रुका रहता है तो उसका कुछ अंश गुर्दों द्वारा भी सोख लिया जाता है। गुर्दों के पास दूषित क्षारों को जल में घोलकर बाहर निकालने का काम पहले ही बहुत काफी रहता है, जब यह मलांश भी उसमें पहुँच जाता है तो उनमें खराबी पैदा होने लगती है और दूषित तत्वों का कुछ भाग भीतर ही रुककर मूत्र सम्बन्धी रोग उत्पन्न करने लगता है। ये रोग प्रायः मधुमेह आदि के रूप में प्रकट होते हैं और अनेक बार वे कठोर रूप धारण करके 'पथरी' भी बन जाते हैं। जिसके कारण मूत्र निकलना ही बन्द हो जाता है और रोगी को अकथनीय कष्ट सहन करना पड़ता है।

पेशाब में सम्मिलित 'यूरिक एसिड' शरीर शास्त्र-वेत्ताओं के मतानुसार स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक पदार्थ हैं और उससे असमय में ही वृद्धावस्था की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जब यूरिक एसिड रक्त के साथ मिलकर शरीर में फैल जाता है तो उससे नाड़ियों में कड़ापन पैदा होने लगता है और संधि स्थानों में मैल जमकर गाँठों तक जोड़ों में दर्द होने लगता है, जो आगे चलकर गठिया की बीमारी के रूप में परिवर्जित हो जाता है।

चर्म-रोग भी पेट में दूषित मल इकट्ठा हो जाने की निशानी है। फोड़ा-फुन्सी आदि का मूल कारण मलाशय में ही होता है। जब पूरा मल गुदा-मार्ग से बाहर नहीं निकल सकता तो अन्य इन्द्रियाँ उसे बाहर निकलने का प्रयत्न करने लगती हैं। इनमें हमारी त्वचा का स्थान प्रमुख है क्योंकि वह पसीने के रूप में बहुत अधिक दूषित तत्वों को बाहर निकालती है। पसीने द्वारा शरीर पर जो मैल जमता है, वह उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। जब त्वचा को अपना नियमित कार्य करने के अतिरिक्त मलाशय की गन्दगी का भी कुछ भाग निकालना पड़ता है तो उसका कार्यभार बढ़ जाता है और कुछ समय बाद मल का कुछ अंश भीतर रुक जाने से फुन्सियों और खुजली आदि के उपद्रव होने लगते हैं। ऐसे ही लोगों के पसीने में प्रायः बुरी गन्ध भी आने लगती है। लोग इनसे छुटकारा पाने के लिए मल्हम, वैसलीन, पौडर, साबुन आदि का सहारा लेते हैं, पर इनसे खराबी का मूल कारण दूर नहीं हो सकता और चर्मरोग किसी न किसी रूप में कष्ट देते ही रहते हैं। उनको मिटाने का असली उपाय पेट को हलका करना और आमाशय की सफाई ही होता है। जब उपवास, फलाहार और एनीमा द्वारा पाचन और मल-संस्थान की शुद्धि हो जाती है तो फोड़े-फुन्सी प्रायः बिना कुछ मल्हम आदि लगाये स्वयम् ही सूखकर ठीक हो जाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार इसमें कुछ भी सन्देह नहीं रह जाता कि प्रायः सभी शारीरिक रोगों का एक बड़ा कारण कब्ज की शिकायत है। वैसे अपने अन्य दोषों के कारण भी अनेक रोग और कष्ट पैदा होते हैं, पर कब्ज से उनके बढ़ने में सहायता मिलती है और उनके मिटाने में आवश्यकता से बहुत समय लग जाता है यदि पेट साफ रहे और मलाशय अपना काम ठीक ढंग से करता रहे तो रक्त भी अपेक्षाकृत शुद्ध रहेगा और उस हालत में कोई भी आकस्मिक रोग जो बाहरी कारणों से पैदा होता है शीघ्र मिट जायेगा।

कब्ज को पैदा ही न होने दें—

बीमारियों को दूर करके स्वास्थ्य को ठीक बनाये रखने का मुख्य उपाय भोजन में इस प्रकार सावधानी रखना है, जिससे वह ठीक ढङ्ग से पचता रहे और उसका मल-भाग शीघ्र ही शरीर से बाहर निकल जाय। हमारे यहाँ जन-साधारण की यह मान्यता हो गई है, जो व्यक्ति घी, दूध, गेहूँ, चावल, मैदा, सूजी, मसाले आदि कीमती पदार्थों का जितना अधिक प्रयोग करेगा वह उतना ही अधिक स्वस्थ तथा शक्तिशाली रहेगा। इस भ्रम में पड़कर लोग अपने बच्चों को छोटी अवस्था से ही अधिक खाने की प्रेरणा देते रहते हैं और जहाँ तक सम्भव होता है अपनी सामर्थ्यानुसार उनके लिए घी, दूध, मेवा, मिठाई आदि जुटाते रहते हैं। पर इसका परिणाम प्रायः विपरीत ही होता है। अधिक कीमती और 'पौष्टिक' पदार्थ खाने वाले व्यक्ति और उनके लड़के-बच्चे गरीबों की अपेक्षा बीमारियों के शिकार अधिक होते हैं और उनको अपनी आय का एक अंश डाक्टरों और वैद्यों को नियमित रूप से देना ही पड़ता है।

आहारशास्त्रियों का कहना है कि मानव-शरीर को स्वस्थ और सशक्त रखने के लिए घी-दूध अथवा माँस, मछली अण्डा आदि जैसे पदार्थों की इतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी कि प्राकृतिक क्षार और विटामिन (जीवन-तत्त्व) वाले ताजा और शुद्ध अन्न और फल आदि की। मेवा, मिठाई, पकवान आदि से हमको केवल श्वेतसार, प्रोटीन, चिकनाई आदि से प्राप्त हो सकती है, पर इनको पचाकर शुद्ध रस और रक्त बनाने का काम तो क्षारों से ही होता है और विटामिन्स से ही उसमें ताजगी और स्फूर्ति आ सकती है। बहुत-से लोग क्षार का अर्थ नमक, मिर्च, मसाले आदि से समझते हैं और सब प्रकार के भोजनों में इनका खूब प्रयोग करते हैं, पर ये ऊपर क्षार-पदार्थ उन क्षारों का काम भी पूरा नहीं कर सकते जो विभिन्न खाद्य-पदार्थों में प्राकृतिक रूप से पाये जाते हैं। ये ऊपर से मिलाये गये क्षार-पदार्थ तो और अधिक देर से पचते हैं और यदि उनकी मात्रा बहुत अधिक होती है तो आमाशय की पाचन-क्रिया को बिगाड़कर तरह-तरह के रोगों का सूत्रपात करते हैं।

सच तो यह है कि पेट को खराब करके कब्ज पैदा करने का सबसे पहला कारण ऐसा अनुपयुक्त आहार करना ही है, जो आमाशय में पहुँचकर समय पर ठीक तरह से न पच सके। शीघ्र पचने वाले पदार्थों में सबसे पहला स्थान ताजा शाक, तरकारी, फल और कच्चे दूध का है। गेहूँ, चावल दाल आदि भी यदि प्राकृतिक रूप में कम से कम परिवर्तन करके काम में लाये जायें तो शरीर-निर्माण में उपयोगी सिद्ध होते हैं। पर जो लोग गेहूँ को खूब बारीक पीसकर उसका सब चोकर अलग कर देते हैं अथवा जो चावल को सुन्दर दीखने के लिये मशीन द्वारा खूब सफेद और पालिशदार बना देते हैं, दाल का छिलका बिल्कुल निकाल देते हैं, वे उनका पूरा लाभ नहीं उठा पाते। वे अपनी जीभ को तृप्त करते हैं और पेट को भी भर लेते हैं पर ऐसा भोजन देर से पचता है और उससे जो रस और रक्त बनता है, वह क्षारों और विटामिन के अभाव से घटिया दर्जे का होता है। साथ ही छिलका और चोकर आदि को बिल्कुल निकाल देने से उसका मल भी दूर से निकलने वाला होता है। ये बातें कब्ज पैदा करने वाली और उसे बढ़ाने वाली होती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चूरन-चटनी आदि की हानिकारक प्रवृत्ति

बहुत-से लोगों का यह भी ख्याल होता है कि भोजन कैसा भी किया जाय हाजमे के चूर्ण-चटनी, गोलियों आदि का सेवन करके उसे पचाया जा सकता है। अनेक व्यक्तियों को इन चीजों की ऐसी सनक होती है कि पाचक चूर्ण और गन्धक वटी, हींगवटी आदि गोलियों के डिब्बे भरकर घर में रखते हैं और खाने के पश्चात् दोनों समय उनका सेवन करते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि उनकी स्वाभाविक पाचन-शक्ति दिन पर दिन क्षीण और निकम्मी पड़ती जाती है और वे इन दवाओं के सहारे ही जीवन-निर्वाह करने वाले बन जाते हैं। फिर ऐसी स्थिति अधिक समय तक कायम नहीं रह सकती। कुछ समय बाद ये चूरन, चटनी, फंकी आदि भी आदत में पड़ जाने से प्रभावहीन हो जाते हैं। तब उनको कई प्रकार के उदर रोग घेर लेते हैं और व्याधिग्रस्त दशा में कष्ट सहन करते हुये ही जीवन बीतता है।

जुलाब की खराबी—

जो लोग कब्ज को दूर करने के लिये तीव्र या सौम्य जुलाब का प्रयोग करते हैं, वे तो एक दृष्टि से अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारते हैं। जुलाब में जो औषधियाँ पड़ती हैं, वे प्रायः आमाशय में विकार उत्पन्न करने वाली होती हैं। बहुत-सी जुलाव की औषधियों में तो जमालगोटा जैसा पदार्थ डाला जाता है, जिसके गणना प्रत्यक्ष विषों में की जाती है। ये औषधियाँ आमाशय के लिये सर्वथा विजातीय होती हैं और वह उनको जल्दी से जल्दी बाहर निकालना चाहता है। इसलिए यकृत आदि से बहुत अधिक मात्रा में पाच रसों का स्राव होने लगता है। उन रसों के साथ कुछ मल भी बाहर निकल जाता है। इसी को देखकर अनजान मनुष्य समझते हैं कि जुलाब ने ठीक असर किया और अब हमारा पेट साफ हो गया।

पर इसका परिणाम आगे चलकर बड़ा हानिकारक निकलता है। जुलाब का असर १०-५ दिन ही रहता है। उसके बाद पाचक रसों की कमी हो जाने से कोष्ठबद्धता पहले की अपेक्षा भी अधिक बढ़ जाती है। तब रोगी को पहले से भी तेज जुलाब देना पड़ता है। इस प्रकार दिन पर दिन पाचन-शक्ति कमजोर पड़ती जाती है और अन्त में ऐसी हालत हो जाती है कि आमाशय बिल्कुल कमजोर हो जाता है और फिर जुलाब की चाहे कैसी भी तेज दवा क्यों न ली जाये उसका कोई असर नहीं होता और दायमी कब्ज से मरने के बाद ही पीछा छूटता है।

रहन-सहन के अन्य कई दोष भी कब्ज पैदा करने और बढ़ाने में योग देते हैं। उदाहरण के लिए जो लोग उचित शारीरिक परिश्रम या व्यायाम आदि कुछ भी नहीं करते और दिन भर कुर्सी पर बैठ-बैठे कलम चलाते रहते हैं या गद्दे तकियों पर पड़े हराम की जिन्दगी बिताया करते हैं, उनको अनपच का रोग होना स्वाभाविक ही होता है। बिना किसी प्रकार का परिश्रम किए सभी अङ्ग निर्बल और कार्य-क्षमता से रहित होते जाते हैं। वही दशा आमाशय की भी होती है। उसकी पाचन-शक्ति घटती चली जाती है। अधिक विषय करने या रात्रि में सदा बहुत अधिक जागने से भी पाचन-क्रिया में खराबी होती है और उसका परिणाम भी कब्ज ही होता है।

प्रकृति से सहायता लीजिये—

इस अवांछनीय स्थिति से बचने का सबसे सरल तरीका यही है कि आप कृत्रिम और अस्वाभाविक जीवन-प्रणाली को त्याग कर यथासम्भव प्रकृति की ओर लौटिये हमारा कथन यह नहीं कि आप अन्न का त्यागकर दीजिये और केवल फल ही खाइये या कच्चा अन्न ही खाइए अथवा तरकारियों का छिलका मत निकालिये और उनको उबालकर बिना नमक मसाले के खाइये। यथार्थ में ये बातें भी लाभदायक हैं और लाखों व्यक्ति इनका पालन करके अपने बिगड़े हुए स्वास्थ्य का कायाकल्प कर चुके हैं, तो भी हम हर एक सामान्य पाठक को ऐसी कठोर साधना की सलाह कदापि नहीं देते। हमारा कहना इतना ही है कि यदि आप चटोरपन की आदत को त्याग कर सादा और सुपाच्य आहार ग्रहण करें, भूख लगने पर ही खावें और पेट को कभी-कभी विश्राम दिया करें तो आप बिना चूरन-चटनी और जुलाब के कब्ज, मन्दाग्नि अजीर्ण आदि जैसी पेट सम्बन्धी शिकायतों से छुटकारा पा सकते हैं। वैद्य और डाक्टरों के यहाँ हाजिरी देते रहने और अपना समय तथा पैसा व्यर्थ में बर्बाद करने की अपेक्षा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह कहीं अच्छा है कि आप बीमारी के कारणों को ही दूर करें और स्वास्थ्य में कोई ऐसी खराबी न आने दें, जिससे निर्बलता और रोग पैदा होने का कोई खतरा हो।

अब तक जो गलतियाँ हो चुकी हैं और उनके कारण यदि कोष्ठबद्धता, मन्दाग्नि, अनपच आदि खराबियाँ पैदा हो चुकी हैं तो उनके लिये भी दवाइयों से काम न चलेगा। दवाइयाँ तो जैसा हम ऊपर स्पष्ट कर चुके हैं, हालत को और बिगाड़ने वाली हैं। उनसे पाचन-शक्ति बढ़ने की आशा करना सर्वथा भूल है। पाचन-शक्ति तो संयमित आहार-विहार की आदत को पुनः दृढ़तापूर्वक ग्रहण करने से ही ठीक हो सकती है। इसमें समय अवश्य लगेगा और अपनी बिगड़ी हुई आदतों को भी छोड़ना और बदलना पड़ेगा, पर इसमें जो सुधार होगा वह स्थायी होगा और धीरे-धीरे आप पुनः स्वस्थ और सुखी जीवन का अनुभव करने में समर्थ हो सकेंगे।

कब्ज मिटाने का स्वाभाविक उपाय 'एनिमा'—

इस बीच में यदि कोष्ठबद्धता और आमाशय की खराबी से तकलीफ होती है या स्वास्थ्य को हानि पहुँचती जान पड़ती है तो चूर्ण और जुलाब के बजाय आप 'एनिमा' का प्रयोग कीजिये। यह कोष्ठबद्धता को मिटाकार दूषित मल को बाहर निकालने का सबसे सरल, निरापद और बिना खर्च की तरकीब है। यह ऐसा ही उपाय है जैसे मकान की जमीन के भीतर बहने वाली नाली कीचड़, राख आदि से भर जाने पर उसे पानी डालकर साफ कर देना। 'एनिमा' में सिवाय नल या कुएँ के साफ पानी के और किसी चीज को स्तैमाल करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। जब बड़ी आँत (कोलन) मल से भरी जान पड़े और मल के सख्त होकर जम जाने या गाँठें बन जाने के कारण दस्त रुका हुआ हो तो 'एनिमा' के बर्तन में मामूली ठण्ड या गुनगुना पानी भरकर गुदा मार्ग से भीतर पहुँचा देना चाहिए। इससे पाँच-सात मिनट के भीतर ही सब मल नर्म होकर और घुलकर सहज में ही बाहर निकल जाता है। जिन लोगों को कब्ज पुराना हो और मलाशय में बहुत पुराना मल सूखकर चिपक गया हो, उनकी लगातार १०-२० दिन तक 'एनिमा लेकर उसकी सफाई करनी पड़ती है। इससे सब गन्दगी बाहर निकल जाती है और अनेक रोगों की जड़ ही कट जाती है। (एनिमा की पूरी विधि—हमारी कब्ज कैसे दूर हो ?' नामक बड़ी पुस्तक में देखनी चाहिये।)

'एनिमा' की उपयोगिता में किसी प्रकार का सन्देह नहीं—

बहुत-से अनजा व्यक्ति 'एनिमा' के विषय में बड़ा सन्देह प्रकट किया करते हैं और उसके विषय में दूसरे लोगों को बिना सिर-पैर की बातें कहकर बहकाया करते हैं। वे कहते हैं कि 'एनिमा' की आदत पड़ जाने पर फिर जन्म भर उसी से काम चलाना पड़ेगा, अपने आप दस्त होना बन्द हो जायेगा अथवा 'एनिमा' का पानी अगर भीतर ही रह गया तो उससे बड़ी हानि होगी। ये सब बातें अज्ञान की ही परिचायक हैं। हम जोर देकर कह सकते हैं कि 'एनिमा' के प्रयोग में इस तरह का कोई खतरा तनिक भी नहीं है और बड़ी उम्र के व्यक्ति ही नहीं छः महीने के बच्चे को भी 'एनिमा' बिना किसी प्रकार के भय के दी जा सकती है। इतना अन्तर अवश्य होगा कि जहाँ बड़ी आयु वाले के लिये एक बार में सेर-दो-सेर पानी दिया जायेगा वहाँ छोटे बच्चे के लिए एक छटांक से पाव भर तक पानी ही अवस्था के अनुसार देना पड़ेगा। 'एनिमा' का पानी मल-मार्ग में कुछ इन्च तक जाने के सिवाय और कहीं नहीं जा सकता और न एक बूँद भी कहीं रुका रह सकता है। वह जहाँ तक भीतर पहुँचता है, वहाँ तक के मल को लेकर तुरन्त ही बाहर निकल आता है। आरम्भ में तो इस पानी को एक मिनट भी भीतर रोक सकना कठिन जान पड़ता है। पानी के भीतर पहुँचते ही शौच की हाजत जान पड़ती है और वह अपने आप बाहर आ जाता है। जब कुछ दिन अभ्यास हो जाता है, तभी उसे कोशिश करके दस-पाँच मिनट तक भीतर रोकना सम्भव होता है, जिससे कड़ा मल उससे अच्छी तरह नर्म होकर पूरी तरह बाहर निकल सके।

यह समझना कि 'एनिमा' कोई नई चीज है और उसका प्रयोग डाक्टरों ने ही चलाया है, केवल एक भ्रम है। 'एनिमा' को भारतीय आयुर्वेद-शास्त्र में, 'वस्ति-कर्म' कहते हैं और इसका वर्णन विस्तार के साथ वैद्यक के सबसे पुराने ग्रन्थ 'चरक-सहिता' में दिया गया है। उसके दसवें अध्याय में महर्षि अत्रि शिष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अग्निवेश को वास्ति-कर्म का उपदेश देते हुये कहते हैं—

सिद्धान्त वस्तीनाँ शस्तानां तेषु-तेषु रोगेषु श्रृण्वाग्निवेश गदतः सिद्धिं सिद्धिप्रदां भिषजां। बल दोष काल प्रकृतीः प्रविभज्य योजितः सम्यक। स्वैः स्वैरौषध वर्गे स्वान् स्थान रोगान्नि अच्छति।

आवपतर्पण योग सर्वेषां निरत्य त्वाच्च।।

"हे अग्निवेश ! अब तू विभिन्न रोगों में उपयोगी और प्रत्यक्ष फल दिखलाने वाली वस्ति-क्रिया की विधि को श्रवण कर। यह वस्ति समस्त रोगों को जीतकर चिकित्सक को सफलता प्रदान करने वाली है। रोगी और औषधि के बल, दोष, काल और रोग प्रचार पर भली प्रकार विचार करके सर्वत्र उपयोगी औषधि द्वारा वस्ति-प्रयोग करने से अब सब प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं। शीघ्र लाभ पहुँचाने वाली, सूखकर और शोधक होने से वस्ति-क्रिया के समान और कोई उपाय नहीं है। यह सब दोषों को मिटाने वाली और हानिरहित, विधि है।"

एक अन्य प्राचीन आयुर्वेद के ही ग्रन्थ में लिखा है—

वस्ति वाते च पित्ते च कफे रक्ते च शस्पते।

संसर्गे सन्निपाते च वस्तीरवहितः सदाः।।

"वायु, पित्त, कफ के समस्त रोगों तथा द्वन्द्वज रोगों और सन्निपात आदि सब प्रकार की व्याधियों में वस्ति-कर्म श्रेष्ठ है।"

कहा जाता है कि प्राचीन युग में चिकित्सा के ज्ञाता किसी ऋषि ने एक दिन किसी पक्षी को नदी किनारे अपने लम्बी चोंच द्वारा अपनी गुदा में पानी भरते और रुके मल को बाहर निकालते देखा। उन्होंने इस विधि का प्रयोग कोष्ठबद्धता से पीड़ित मनुष्यों पर भी किया और उनके पुराने रोगों को शीघ्र ही दूर कर दिया। उस समय बकरे या बैल के अण्डकोश के थैलीनुमा चमड़े में जल भरकर गुदा के भीतर पहुँचाते थे। इस चमड़े का नाम 'वस्ति' होने से इस विधि का नाम 'वस्तिकर्म' ही पड़ गया।

डाक्टरों ने अभी सौ-डेढ़-सौ वर्ष से ही 'एनिमा' का प्रयोग किया है। इसके बाद प्रचारकों में एक डा० विल्सन भी थे। उन्होंने अपने 'न्यूहाईजीन' नामक ग्रन्थ में लिखा है कि—"इस समय 'एनिमा' के द्वारा मैं रोगियों को जितने अधिक परिमाण में आरोग्य कर रहा हूँ उतना कुछ वर्ष पहले नहीं कर सकता था, जबकि मैं इस विधि से अपरिचित था।" डा० फारेस ने कहा था कि—"मैंने 'एनिमा' की विधि की महीनों और बरसों परीक्षा की है और मेरा अनुभव है कि उसे स्वास्थ्य शक्ति की निरन्तर वृद्धि होती है।" "शोधन-विद्या" नाम उर्दू पुस्तक के लेखक वैद्यराज सीतारामजी मेहता ने लिखा है कि—"कितनी ही बार रात के समय मझे बीमारों का इलाज करने का अवसर आया है, जिनको जोर का बुखार था और जिससे वे बेहोश-से हो रहे थे। जाँच करने से जान पड़ा कि उनकी आँत में मल भरा पड़ा है। यह निदान हो जाने पर उसी समय 'एनिमा' देने को कहा तो रोगी के सम्बन्धी तथा सेवा-सश्रुषा करने वाले लोगों ने कहा कि रात का समय है और रोगी कमजोर है, इसलिए 'एनिमा' सुबह ही दी जाय तो ठीक रहेगा। मैंने कहा कि केवल उठने-बैठने की तकलीफ के कारण रोगी के पेट में हानिकारक मल को बारह घण्टे तक रोके रखना हर्गिज ठीक न होगा। जब वस्तिकर्म करके पेट से निकाल दिया गया तो सब सगे सम्बन्धी नाक पर कपड़ा रखकर दूर हटने लगे। यह देखकर मैंने कहा कि यह वही मल है, जिसे तुम बीमार के पेट में १२ घण्टे तक रोके रहने को कहते थे। इस बात पर विचार करो कि केवल दस-पाँच मिनट उठने-बैठने की तकलीफ के कारण क्या इस विषाक्त मल का भीतर पड़े रहना कोई अच्छी बात होगी ?"

सन्तुलित आहार की उपयोगिता—

एक प्रसिद्ध कहावत है रोग का इलाज करके उसे ठीक करने की अपेक्षा उसको पहले से ही न होने देना बहुत उत्तम है। इस सिद्धांत के अनुसार हमको अपना आहार सदैव सन्तुलित और नियमित रखना चाहिए, जिससे आमाशय और मूसलाधार के कार्य में अव्यवस्था उत्पन्न न हो। इसके लिये भोजन की किस्म और मात्रा का सदैव ध्यान रखना चाहिये। हमें यह अच्छी रह समझ लेना चाहिये कि भोजन के पदार्थों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को जितना अधिक पकाया, भुना, तला जायेगा, तरह-तरह के मसालों का प्रयोग करके, उनको 'स्वादिष्ट' बनाने की चेष्टा की जायेगी, उतना ही वे पचने की दृष्टि से अनुपयुक्त बनते जायेंगे। प्रकृति ने प्रत्येक खाद्य-पदार्थ को ऐसे रूप में उत्पन्न किया है कि उसमें जितना कम परिवर्तन किया जायेगा उतना ही वह सुपाच्य और शक्तिप्रदायक होगा। प्रत्येक साग, तरकारी, फल ताजा अवस्था में जीवन तत्व जिस प्रकार ओत-प्रोत होता है वैसा तेज आग पर खूब काफी घी या तेल में पकाने या मिर्चमसाला मिलाकर बनाने पर कदापि नहीं रहता।

कितने ही व्यक्ति तो, जिन्होंने अपनी जिह्वा ने स्वाद को बिगाड़ लिया है। साग-तरकारियों को इतना अधिक भूनते और तलते हैं कि वे एक प्रकार से 'कोयला' ही बन जाते हैं। अनेक लोग करेला, आँवला, बथुआ, मेथी, मूल आदि के स्वाभाविक कड़वेपन, कसैलेपन या खारेपन को इतना नापसन्द करते हैं कि वे पहले ऐसी सब चीजों को उबालकर उनका पानी निचोड़कर तब काम में लाते हैं। भला उनसे कोई पूछे कि जब तुमने इन पदार्थों में पाये जाने वाले समस्त उपयोगी क्षारों और विटामिनों को उबालकर और निचोड़कर नाली में फेंक दिया, तब उसमें छूँछ के सिवाय शेष क्या रहा ? ऐसे लोग वास्तव में साग-तरकारी नहीं खाते वरन् छूँछ को घी मसालों द्वारा चटपटा बनाकर अपनी जिह्वा की तृप्ति करते हैं। जीभ के चटोरेपन के आगे उनको पेट में खराबी पैदा होने का ख्याल नहीं। वे यह नहीं सोचते कि ऐसा भोजन कैसा सारहीन और दुष्पाच्य हो जाता है और उसके पचाने में पेट को कितना अधिक अनावश्यक परिश्रम करना पड़ता है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि इस प्रकार का अस्वाभाविक रूप से पकाया भोजन अवश्य ही पाचन-क्रिया को खराब करके कब्ज पैदा करता है और उससे जो रस और रक्त बनता है, वह स्वास्थ्य को गिराने वाला होता है।

भोजन का परिमाण अधिक न हो—

हमारे देश के लोगों में यह धारणा बहुत अधिक पायी जाती है कि जितना अधिक भोजन किया जायेगा उतना ही वह ताकत देगा, शरीर को पुष्ट बनायेगा ! माँ-बाप अक्सर अपने बच्चों को अधिक खिलाने की चेष्टा करते रहते हैं और बड़े-बूढ़े लोग कहा करते हैं "अच्छी तरह खूब खाओ, पेट में जायेगा तो गुण ही करेगा।" ऐसे लोगों को यह नहीं मालूम कि जो भोजन पेट की पाचन-शक्ति से अधिक होता है, वह पोषक के बजाय शोषक सिद्ध होता है। उचित परिमाण से अधिक खाया हुआ अमृत भी विष का काम करता है।

आश्चर्य की बात यह है कि एक तरफ तो हम उन ऋषि-मुनियों की महिमा का गान करते रहते हैं, जो लम्बे समय तक निराहार या अल्पाहार पर रहकर तपस्यायें करते थे और इसके फलस्वरूप सैकड़ों वर्षों का दीर्घजीवन प्राप्त करते थे और दूसरी तरफ हम स्वयं भरे पेट भी तरह-तरह की मिठाइयाँ, नमकीन, चाट इत्यादि खाने को लालायित रहते हैं। अमीर कहलाने वाले तो अपनी शान ही इसी में समझते हैं कि उनके भोजन के थाल में दस-बीस तरह की तरकारियाँ, रायते, अचार, मुरब्बे, चटनी आदि हों। रईसों के घरके नौकर और गृहिणियाँ सुबह उठते ही इसी की तैयारी करने लगते हैं कि आज मालिक के लिए कौन-कौन से भोजन पदार्थ तैयार किये जायें ? ऐसे लोग स्वाद के फेरे में पड़कर और खाद्य-पदार्थों को अनेक किस्में होने के कारण प्रायः अधिक खा जाते हैं और बाद में चूरन-चटनी या सोड़ा, फ्रूट-साल्ट आदि द्वारा उसे पचाने की कोशिश किया करते हैं। साधारण श्रेणी के लोग भी बड़े लोगों का उदाहरण देखकर एक बार में २-४ तरह के साग-दाल बनाने की चेष्टा करते हैं और मिर्च-मसालों के जोर से आवश्यकता से अधिक खा जाते हैं। इस प्रकार अति-भोजन स्वास्थ्य के लिये हमेशा हानिकारक होता है और कब्ज को बढ़ाकर तरह-तरह के उदर रोगों का कारण बनता है। इस प्रकार के आचरण की निन्दा हमारे प्राचीन वैद्यों ने स्पष्ट शब्दों में की है। आयुर्वेद प्रसिद्ध ग्रन्थ 'माधव निदान' में कहा गया है—

अनात्मवन्तः पशुवद्भुजते येऽप्रभाषत।
रोगनीकस्य ते मूलमजीर्ण प्राप्नुयन्तिहि।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"जो व्यक्ति पशुओं की भाँति मनमाना भोजन करते हैं, वे रोगों की सेना के मुखिया 'अजीर्ण' के पंजे में फँस जाते हैं।"

इसमें शक नहीं कि जो लोग अपनी पाचनशक्ति और शारीरिक बल, बल का विचार किये बिना लालचवश अधिक आहार करते हैं, वे पशुओं से भी अधिक अज्ञानी हैं। पशु तो अपना स्वाभाविक भोजन घास-पात स्वाभाविक रूप में ही करते हैं और आवश्यकता से अधिक कभी नहीं खाते। इसलिये उनको बीमार पड़ते भी कभी नहीं देखा जाता। वे यदि कभी बीमार भी पड़ते हैं तो मनुष्य की संगति में आकर ही, जो अपनी तरह घोड़ों को भी जलेबी और कुत्तों को बिस्कुट-डबलरोटी खिलाकर उनकी पाचन-क्रिया को खराब करता है।

आहार की उचित मात्रा

वर्तमान समय में खाद्य-वैज्ञानिकों ने विभिन्न पेशों के करने वाले व्यक्तियों की जाँच-पड़ताल करके ऐसी तालिकायें बनाई हैं जिनसे शारीरिक आवश्यकताओं की उचित रूप में पूर्ति हो सकती है। उन्होंने बतलाया कि हमारे भोजन में ४ तत्व मुख्य होते हैं—(१) प्रोटीन, (२) चिकनाई (स्नेह) (३) कार्बोज (श्वेतसार), (४) लवण (क्षार)। इसके अनुसार बहुत कम शारीरिक परिश्रम करने वाले लोगों के लिये २४ घण्टे में चारों पदार्थों की ३७।। तोला मात्रा पर्याप्त होती है। साधारण परिश्रम करने वाले ५७।। तोला और कठिन परिश्रम करने वाले ७२ तोला तक ले सकते हैं। यह भी बतलाया है कि समस्त खाद्य-सामग्री का २३वाँ भाग लवण (क्षार), उससे दुगना चिकनाई और चौगुना प्रोटीन का परिमाण रहे। कार्बोज क्षार से १६ गुना होना चाहिए।

ये तालिकायें जानकार लोगों के लिये कुछ उपयोगी हो सकती हैं और वे इनके आधार पर अपने लिये कुछ अनुमान लगा सकते हैं। अन्यथा नित्य प्रति के भोजन की व्यवस्था कोई तराजू से तोलकर नहीं करता, न कर सकता है। उसके लिये तो मनुष्य को अपने पेट और पाचनशक्ति का ही ध्यान रखना पड़ेगा।

इस सम्बन्ध में वैद्यक के 'भाव प्रकाश' ग्रन्थ का यह सिद्धान्त व्यावहारिक हो सकता है—

कुक्षेर्भागद्वयं भोज्यै स्तृतीये वारि पूरियेत।
वायो संचारणार्थाय चतुर्थमेव शेषयेत।।

इसका आशय यही है कि मनुष्य को कभी ठूँस-ठूँस कर भोजन नहीं करना चाहिये, वरन् आमाशय के आधे भाग को खाद्य-सामग्री से भरे, एक चौथाई को जल से और शेष चाथाई को वायु के संचार के लिये खाली रहने दें।

मैदा, मशीन का चावल, मिठाइयाँ

आजकल हमारे जीवन में कृत्रिमता या दिखावटीपन बहुत अधिक घुसता जा रहा है, जिसका कुप्रभाव स्वास्थ्य के लिये बड़ा हानिकारक होता है। अधिकांश व्यक्ति बिना गुणों की ओर ध्यान दिये ऐसा ही चीजों को ज्यादा पसन्द करते हैं, जो देखने में चटकीली जान पड़ती हों। उदाहरण के लिए आजकल लाल गेहूँ आटे की बजाय सफेद गेहूँ के बारीक आटे या मैदा को ही ज्यादा बढ़िया समझा जाता है, यद्यपि इनका उपयोग आँतों के लिये बहुत अनिष्टकारक होता है। मैदा तो ऐसा पदार्थ है, जिसे यदि अधिक समय तक लगातार व्यवहार में लाया जाय तो बीमार हो जाना सुनिश्चित है। साधारण आटे में जो चोकर होता है, उसमें फास्फोरस, चूना, सोड़ा आदि ऐसे तत्व होते हैं जिनकी शरीर-निर्माण के लिये अत्यन्त आवश्यकता होती है और जिनके अभाव से अनेक प्रकार की त्रुटियाँ उत्पन्न होने लगती हैं। इसी प्रकार चावल के ऊपर जो एक लाल रंग का पर्त होता है, वही उसको पौष्टिक बनाता है पर चमक-दमक के शौकीन उसे नापसन्द करते हैं इसलिये कारखानों में चावल को मशीनों द्वारा ऐसा घिसा जाता है और कभी-कभी उस पर पालिश भी कर दी जाती है, जिससे वह बिल्कुल सफेद और चमकदार दिखाई पड़े। यह चावल निस्सार और बहुत अधिक कब्ज पैदा करने वाला हो जाता है। मिठाइयों को खूबसूरत बनाने के लिये उनमें तरह-तरह के हानिकारक रङ्ग दिये जाते हैं। एक तो मैदा और नकली घी के कारण वे वैसे ही हाजमे की दृष्टि से बिल्कुल निकृष्ट होती हैं, फिर सर्वथा विजातीय द्रव्य रङ्ग और सेन्ट को मिला देने से वह सचमुच विषरूप ही बन जाती है। ऐसी चीजों को शौक से अधिकाधिक काम में लाने से स्वास्थ्य चौपट हो जाय तो क्या आश्चर्य है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभिष पदार्थों का कुपरिणाम

यों तो माँस, मछली, अण्डा आदि पदार्थों को धार्मिक और मानवता के सिद्धांतानुसार बुरा बता जाता है, पर स्वास्थ्य की दृष्टि से भी ये बहुत नुकसान पहुँचाने वाली चीजें हैं। विद्वानों ने सदा से ही प्रतिपादित किया है कि मनुष्य का स्वाभाविक भोजन वनस्पति, फल अन्न आदि है। माँस मनुष्य के आमाशय के सर्वथा प्रतिकूल है और पाचन-शक्ति को बहुत खराब करता है। योरोप और अमरीका के लोग यद्यपि वनस्पति भोजन के अभाव से माँस मछली का प्रयोग करते हैं पर वहाँ के वैज्ञानिकों ने इसे कभी मानव-स्वास्थ्य के लिये लाभकारी नहीं बतलाया और अब वहाँ के लाखों व्यक्ति निरामिष आहार करने वाले बन भी गये हैं। इनमें 'यूरिक एसिड' की अधिकता होती है, जो स्वास्थ्य को बहुत शीघ्र गिराकर मनुष्य को बुड्ढा बना देता है। माँसाहार के फल से सिर दर्द, अनिद्रा, श्वाँस, अजीर्ण, मूत्र-रोग, पथरी, गठिया आदि के अनेक प्रकार के रोगी की वृद्धि होती है। आयुर्वेद में भी माँस को गुरु-भोजन लिखा है, जो पाचन संस्थान को बहुत हानि पहुँचाता है।

मन्दाग्नि का कारण और बचने के उपाय

जैसा हम बतला चुके हैं स्वास्थ्य में खराबी पैदा होने का मुख्य कारण कब्ज है और कब्ज भोजन के ठीक तरह न पचने से पैदा होता है अपचन के कई सामयिक कारण हो सकते हैं पर मुख्य स्थायी कारण मन्दाग्नि ही है। जब कोई मनुष्य बहुत समय तक अनुपयुक्त अथवा अधिक आहार करता है अथवा कुसमय में भोजन करता है, तो उसकी पाचन शक्ति क्रमशः निर्बल पड़ती जाती है और वह मन्दाग्नि के रोग से ग्रसित हो जाता है। जब बिना ठीक तरह भूख लगे अभ्यास या परिस्थितिवश अधिक परिमाण में भोजन किया जाता रहता है तो उसमें आमाशय का कार्यभार बढ़ जाता है और भोजन का अधूरा परिपाक करके ही, उसे आँतों में भेज देता है। उस भोजन से आर्तो में जो रस निकलता है, वह कच्चा होता है और उसमें शीघ्र सड़ान उत्पन्न होकर आँव की उत्पत्ति हो जाती है। यह आँव या श्लेष्मा पाचक रसों को और भी कमजोर कर देता है और मन्दाग्नि का रोग अपनी जड़ जमा लेता है।

इस सबका सार यही है कि हमारा अनुचित आहार-विहार ही पाचन क्रिया को दूषित बनाने का मुख्य कारण होता है। इस दोष को दूर करने का सर्व प्रथम उपाय यही है कि पूरी तरह भूख लगने पर ही भोजन किया जाय। इस पर कदाचित् आप कहने लगें कि भूख लगने पर तो भोजन किया ही जाता है। पर आपने इस समस्या पर अच्छी तरह विचार नहीं किया है। आजकल अमीर, गरीब, मध्यम श्रेणी वाले आदि सभी एक प्रकार से बिना भूख लगे ही खाते हैं। उनके लिये भोजन घंटी का काम भूख लगना नहीं करती वरन् दफ्तर, दुकान या किसी अन्य प्रकार की नौकरी पर जाने समय आ जाने पर उन्हें खा लेना ही पड़ता है यों नित्य के अभ्यास वश उनको कुछ भूख जैसी मालूम होने लगती है, पर अनेकबार जब किसी सामयिक कारण अथवा वातावरण के प्रभाव से उनको नौकरी पर जाने के समय तक भूख नहीं लगती तब भी गैर हाजिरी के भय से भोजन कर ही लेते हैं। होना तो यह चाहिये था कि ऐसे अवसर पर एक समय का भोजन त्याग देते, जिससे आमाशय का भार कम होकर शम को बहुत अच्छी तरह भूख लग आती। पर चूँकि लोगों की ऐसी धारणा बन गई है कि यदि हम भोजन न करेंगे तो कमजोरी आ जायेगी, इसलिए वे प्रकृति द्वारा दी गई चेतावनी को भी अनसुनी कर रहे हैं। इस प्रकार संयोगवश आधे दिन का उपवास हो जाये तो उससे कोई हानि नहीं हो सकती। जो व्यक्ति प्रतिदिन दो या तीन बार अच्छी तरह भोजन करते रहते हैं, वे यदि दस-पाँच दिन एक या दोनों बार का भोजन न करें तो इससे पेट को कुछ समय की छुट्टी मिल जायेगी और दूसरे दिन वह अपना काम अधिक उत्तमता से कर सकेगा।

हमको जो भूख लगा करती है, वह हमेशा "सच्ची भूख" नहीं होती। कितने ही व्यक्ति तो अनपच या पेट होने पर चूरन आदि फाँककर भूख लगाने का प्रयत्न किया करते हैं। जो लोग मदिरा, ताड़ी, भंग आदि उत्तेजक और नशीले पदार्थों का प्रयोग करते हैं, उनको इनके कारण झूँठी भूख मालूम पड़ने लगती है। अधिक मिठाई खाने से भी पेट में एक तरह का खमीर-सा पैदा हो जाता है। पर वह नकली भूख होती है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और थोड़ा-सा पानी पी लेने से ही शान्त हो जाती है। स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से हमको सच्ची और झूँठी भूख के अन्तर को अवश्य समझ लेना चाहिये। सच्ची भूख बेचैन करने वाली या कष्ट जान पड़ने वाली नहीं होती। पर झूँठी भूख प्रायः आमाशय में अम्लरस एकत्रित तो जाने से लगा करता है और उसमें मनुष्य बेचैनी अनुभव करता है। उस समय वह चाहता है कि किसी प्रकार पेट में कुछ डालकर उसे शान्त किया जाय। सच्ची भूख के लक्षण "चरक संहिता" में इस प्रकार बतलायें हैं—

प्रस्टष्टे विण्मूत्रे हृदि सुविमले दोषे स्वपथगे।
विशुद्धे चोद्गार क्षुदुपगमने आतेऽनुसरति।।
तथाऽनावुद्रिक्ते विशाद करणे देहेच सुलघौ।
प्रयुज्जीता हारं विधि नियमतः कालः सहमति।।

अर्थात्—"पहली बार के भोजन के उपरान्त जब मल-मूत्र का उत्सर्ग हो जाय, मन प्रसन्न हो, वात-पित्त-कफ की स्थिति यथोचित हो, शुद्ध डकार आवे, अधो वायु निकल जाय, जठराग्नि प्रदीप्तित हो, देह हल्की हो, सब इन्द्रियाँ स्वस्थ प्रतीत हों, तब नियम तथा काल का ध्यान रखते हुये भोजन करना उचित है।"

इस प्रकार भारत के सर्व प्रथम आयुर्वेदाचार्य ने यह आदेश दिया है कि पहली बार के भोजन के ठीक परिणाम होकर आमाशय में से निकल जाने और दुबारा भोजन के लिये स्वाभाविक भूख लग आने पर ही भोजन करना उचित है। उस समय मनुष्य जो साधारण रोटी, दाल, शाक आदि खायेगा, वह भी शरीर में लगेगा और स्वास्थ्य की उन्नति करेगा। इसके विपरीत बिना ठीक भूख लगे घी, दूध, मेवा, मिठाई, फल आदि खाते रहने पर भी कोई लाभ नहीं होता और ऐसा व्यक्ति प्रायः किसी न किसी रोग के चंगुल में फँसा रहता है क्योंकि इस प्रकार अनियमित आहार का कुप्रभाव आमाशय पर पड़ता है और मन्दाग्नि की शिकायत आरम्भ हो जाती है।

कब्ज के अन्य कारण

यद्यपि कब्ज का मुख्य कारण भोजन का असंतुलित और अनियमित होना है, पर और भी ऐसे बहुत कारण हैं, जिनमें कब्ज पैदा होता है या बढ़ता है। उन कारणों को नीचे संक्षिप्त रूप में लिखा जाता है—

(१) गरिष्ठ चीजों का अधिक उपयोग, जैसे मिठाई, बिस्कुट मैदा और चीनी के पदार्थ आदि।

(२) गलत मेल के (विषम) पदार्थों को एक साथ मिलाकर, खाना जिससे वे पेट में शीघ्र ही सड़ने लगते हैं।

(३) भूख न लगने पर ही अभ्यासवश या आग्रह के कारण भोजन कर लेना।

(४) भोजन को ठीक चबाने में असावधानी करना। इससे भोजन के लार ठीक ढङ्ग से नहीं मिल पाती और उसके पचने में कठिनाई होती है।

(५) जल का बहुत कम पीना या केवल चाय, शर्बत आदि के रूप में ही उसका प्रयोग करना। याद रखना चाहिये कि भोजन के पचने और शरीर की सफाई आदि के लिये शरीर को कम से कम दो-ढाई सेर स्वच्छ जल के पीने की आवश्यकता रहती है।

(६) पाचक और दस्तावर दवाइयों का सदैव व्यवहार करते रहना।

(७) शारीरिक श्रम और व्यायाम का अभाव। जो लोग खा-पीकर अधिकतर पड़े ही रहते हैं, वे मन्दाग्नि और फलस्वरूप कब्ज के भी शिकार होते हैं।

(८) पूरा विश्राम न करना, रात को अधिक जगना, बहुत थकावट की दिशा में भोजन करना भी कब्ज का कारण होता है।

(९) भोजन का कोई नियत समय न होना समय-कुसमय चाहे जब भोजन कर लेने से भी पाचन-संस्थान में खराबी पैदा होती है और वह आहार को ठीक पचा नहीं पाता।

स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन के इच्छुकों का कर्तव्य है कि इस प्रकार की हानिकारक प्रवृत्तियों से बचकर स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों का सदैव पालन करते रहें, जिससे पाचन-संस्थान उत्तम रूप में सक्रिय बना रहे और शरीर को उचित पोषण पहुँचाता रहे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम दुर्बल नहीं—शक्तिशाली बनें

दुर्बलता के पाप से बचिये

संसार में अनेकों दुष्कर्मों को पाप की संज्ञा दी जाती है। चोरी करना, हत्या, दुराचार झूँठ बोलना, धोखा देना, विश्वासघात करना, किसी को पीड़ा नुकसान पहुँचाना आदि पाप कर्म कहे जाते हैं। लेकिन एक और भी बड़ा पाप होता है, वह है कमजोर होना। दुर्बलता अपने आप में एक बहुत बड़ा पाप है। दुर्बलता चाहे शारीरिक हो, मानसिक हो या सामाजिक, सभी प्रकार की मनुष्य के लिये अभिशाप है क्योंकि दुर्बलता से अन्य पापों को प्रोत्साहन मिलता है। कमजोर आदमी ही पाप में जल्दी प्रवृत्त होता है।

कमजोरी का मोटा अर्थ शारीरिक दुर्बलता से ही लिया जाता है और यही अधिक हानिकारक है। स्वर्गीय लोकमान्य तिलक ने कहा था—"शरीर को रोगी और दुर्बल रखने के समान दूसरा कोई पाप नहीं है" क्योंकि शरीर के दुर्बल होने पर मनुष्य का मस्तिष्क भी दुर्बल हो जाता है और दुर्बल मस्तिष्क बुराइयों के द्वारा जल्दी ही घसीट लिया जाता है। दुर्बल व्यक्ति ही संसार में बुराइयों को प्रोत्साहन देते हैं। दुःखों की जड़ दुर्बलता ही है। **मिल्टन** ने कहा है—"कमजोर होना ही दुःखी होना है।" **स्वामी विवेकानन्द** ने कहा है—"कमजोरी कभी न हटने वाला बोझ और यन्त्रणा है, दुर्बलता का नाम ही मृत्यु है।" हमारे बहुत-से दुःखों का कारण यह दुर्बलता ही है।

संसार में अत्याचार पीड़ा, बुराइयों की खुराक दुर्बलता है। मिल्टन ने कहा है—"सारी दुर्जनता दुर्बलता की ही देन है।" विचार कीजिये, जिसमें कोई शक्ति नहीं है, जिसमें साहस नहीं, वह अपने या अपने पड़ौसी पर होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध कैसे अवाज उठा सकेगा ? अत्याचार सहन करना, उसे समाज में होते देखना भी कम पाप नहीं है। इससे दूसरों को जुल्म करने का प्रोत्साहन मिलता है।

इस संघर्ष प्रधान संसार में ससम्मान जीवित रहने का हक उन्हीं को है, जो शक्तिमान् हैं। कहावत है—दुनियाँ में कमजोरों को जीने का हक नहीं है।' जो दुर्बल हैं, कमजोर हैं, उन्हें यह संसार अधिक दिन जीवित नहीं रहने देता। प्रकृति भी उनसे जीने का हक छीन लेती है।

संसार कर्मभूमि है और शक्तिमान् ही कुछ कर सकता है। दुर्बल—क्षीणकाय व्यक्ति यहाँ क्या कर सकता है ? वह तो उल्टा दूसरों पर भार बनकर रहता है। इस तरह का परावलम्बी, पराधीन जीवन अपने आप में एक अभिशाप है। जो व्यक्ति, जो समाज दुर्बल होता है, उसे दूसरों के अत्याचार सहन करने पड़ते हैं, गुलामी का जीवन बिताना पड़ता है। अपनी स्वाधीनता की रक्षा वे ही लोग कर सकते हैं, जो शक्तिशाली होते हैं। इसीलिये स्वतन्त्रता की बात कहने से पहले स्वामी विवेकानन्द ने भारतीयों को शक्तिशाली बनने के लिये—शक्ति की उपासना के लिये कहा था। उन्होंने बड़े ही मार्मिक शब्दों में भारतीयों की कमजोरी के बारे में कहा था—"हमारे शास्त्र कितने ही बड़े क्यों न हों, हमारे पूर्वज कितने ही महान् क्यों न हों, लेकिन में आपसे स्पष्ट भाषा में कह देना चाहता हूँ कि हम बड़े दुर्बल हैं। प्रथमतः हम शरीर से दुर्बल हैं फिर मस्तिष्क से। हम एक साथ मिल नहीं सकते। एक-दूसरे से प्रेम नहीं करते। हम तीन मनुष्य एकत्र हो एक-दूसरे से घृणा करते हैं, ईर्ष्या करते हैं, लड़ते-झगड़ते हैं। हम बड़ी-बड़ी बातें करते हैं, सोचते-विचारते हैं, लेकिन करते कुछ नहीं।"

लौकिक जीवन की भाँति ही आध्यात्मिक क्षेत्र में भी कमजोर व्यक्ति आगे नहीं बढ़ सकता। शास्त्रकार ने कहा है—"नायमात्मा बलहीनेन लभ्य" बलहीन व्यक्ति आत्मवान् नहीं बन सकता। महर्षि रमण से एक बार उनके एक अनन्य भक्त तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति ने ब्रह्म-दीक्षा के लिये कहा। लेकिन वे सज्जन रुग्ण थे। महर्षि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने कहा—"छिद्रयुक्त घड़े में पानी नहीं ठहर सकता।" तात्पर्य था रुग्ण शरीर आध्यात्मिक-दीक्षा के लिये अयोग्य होता है।

खेद है लोग अपनी शारीरिक, मानसिक, सांसारिक शक्तियों को न बढ़ाकर प्रयत्न में ही अध्यात्मवादी बन जाना चाहते हैं। कैसी बिडम्बना है? इस भूल को बताते हुए स्वामी विवेकानन्द ने कहा था—"सर्वप्रथम आपको बलवान् बनना होगा, धर्म पीछे आयेगा। तुम सभी भाँति बलवान् बनो, यही मेरा उपदेश है तुम्हारे लिये। गीता-पाठ, नाम-जप करने की अपेक्षा तुम फुटबाल खेलने से स्वर्ग के अधिक समीप पहुँचोगे। बलवान् शरीर, मजबूत पुट्ठों से तुम गीता को अधिक समझ सकोगे। शरीर में ताजा रक्त होने से तुम श्रीकृष्ण की महती प्रतिभा तेजस्विता को अच्छी तरह समझ सकोगे। जिसका शरीर और मन रुग्ण है, दुर्बल है, वह आध्यात्मिक तेजस्विता को कैसे धारण कर सकेगा ? कठोर साधनायें वह कैसे कर सकेगा ? और तो और कमजोर को तो दैव भी सहायता नहीं करता। नीतिकार ने कहा है—'देवोऽपि दुर्बल घातकः' कमजोर को तो देवता भी मारता है।

हमारे जीवन के अधिकांश क्लेश, दुःख अशान्ति, पीड़ा, असफलताओं का मुख्य कारण हमारी दुर्बलता ही होती है, जबकि हम इनके लिये दूसरों को कोसा करते हैं, भाग्य को दोष देते हैं। यह दुर्बलता की खास पहचान है। कमजोर व्यक्ति ही शिकायतें अधिक करता है काम कम। दुर्बलता ही अन्याय और अन्यायी को आकर्षित करती है। जहाँ शक्ति होती है, वहाँ ये तत्व ठहर भी नहीं सकते।

मुख्यतया दुर्बलता तीन प्रकार की होती है—शारीरिक जिसके बारे में ऊपर लिखा जा चुका है। किसी भी तरह का रोग, शारीरिक असमर्थता पहली दुर्बलता है। फिर मानसिक दुर्बलता का नम्बर आता है। स्वतन्त्र विचार, क्षमता का अभाव, ईर्ष्या-द्वेष सङ्कीर्णता, स्वार्थपरता आदि मानसिक कमजोरी के अन्तर्गत आते हैं। ऐसी स्थिति में लोग सदैव किसी भी तथ्य के अशुभ पहलू पर ही अधिक ध्यान देते हैं। आलोचना, शिकायत, दुर्भावनायें कमजोर मनःस्थिति में ही उपजती हैं। दुर्बल मनोभूमि का व्यक्ति सुख-सुविधापूर्ण जीवन में भी दुःखी और परेशान रहता है। अकारण ही भयभीत रहता है। ऐसे लोग कोई रचनात्मक, लाभप्रद कार्य नहीं कर पाते, उनकी शक्तियाँ सदैव रोने-झीकने में ही खर्च हो जाती हैं। उन्हें संसार नारकीय यातनाओं का आगार जान पड़ता है।

मनुष्य की तीसरी दुर्बलता समाजगत होती है। इसमें भी दो मार्ग हैं—पहला सामूहिकता का अभाव। दूसरा जीवन-निर्वाह के साधनों में परावलम्बन। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के साथ रहकर ही वह उन्नति, आत्मरक्षा कर सकता है। इसलिये समाज का शक्तिशाली होना आवश्यक है और सङ्गठन में ही समाज की शक्ति निर्भर करती है। जो मानव समुदाय सङ्गठित न होगा, वह कमजोर होता जायेगा और यह कमजोरी उसके लिये पराधीनता, शोषण, अन्याय, उत्पीड़न आदि को सरलता से आमन्त्रित कर लेती है। हम सङ्गठित नहीं थे, इसलिये हम विदेशियों ने आक्रमण किया, तरह-तरह के अत्याचार, अन्याय किये, सदियों हमें गुलामी के दिन बिताने पड़े। जब हम सङ्गठित होकर खड़े हो गये तो इन समस्त जन्जीरों को हमने जादू की तरह तोड़ फेंका। शक्तिशाली अंग्रेज शासन को भारत छोड़ना पड़ा।

जीवन-निर्वाह के साधनों में मुख्य आर्थिक कमजोरी भी खास कर आज के अर्थ-प्रधान युग में महत्वपूर्ण है। आर्थिक दृष्टि से हीन मनुष्य भली प्रकार जीवन बिता सके, अपने उत्तरदायित्व और कर्तव्यों का वहन कर सके यह असम्भव है। भौतिक दृष्टि से भी मनुष्य को सम्पन्न होना आवश्यक है। अच्छी-अच्छी प्रतिभायें, पहलवानों जैसे शरीर, स्वस्थ मन की आर्थिक समस्याओं में उलझ कर, चिन्ता में पड़कर रुग्ण हो जाते हैं।

अपनी शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक कमजोरियों को दूर करने का पूरा-पूरा प्रयत्न कीजिये। स्मरण रखिये दुर्बलता ही मृत्यु का दूसरा नाम है। शक्तिशाली बनिये, शक्ति ही जीवन का पर्याय है। अपने शरीर को, मन को शक्तिशाली बनाइये। जीवन-निर्वाह के साधन, उपकरण, पदार्थों में आत्मनिर्भर बनिये। भौतिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्पत्तियाँ बढ़ाइये। इस तरह का सर्वांगपूर्ण शक्ति सम्पूर्ण जीवन ही सच्चे अर्थों में जीवन है।

हम शक्तिशाली भी तो बनें

जीवन और संसार की सतत् क्रियाशीलता, कर्म की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ, सृष्टि का समस्त कार्य-व्यापार 'शक्ति' के संस्पर्श से ही सञ्चालित हैं। शक्ति के बिना संसार और जीवन की कल्पना तक भी नहीं की जा सकती। दूसरे शब्दों में शक्ति ही जीवन है। शक्ति का अभाव ही मृत्यु है। शक्ति का स्पर्श पाकर जड़-तत्त्व भी महत्तवपूर्ण बन जाते हैं। निर्जीव कोयला अग्नि का तेजोमय रूप धारण कर लेता है। ग्रह-नक्षत्र सब अपनी-अपनी जगह पर आकाश में अधर लटकते हुए भी शक्ति के कारण ही स्थिर हैं। यदि शक्ति का असंतुलन पैदा हो जाये तो एक-दूसरे से टकरा जायें। समस्त ब्रह्माण्ड ही नष्ट-भ्रष्ट हो जाय। शक्ति का सहारा लेकर जड़-वस्तुएँ गतिशील बन जाती हैं। चेतन-शक्ति के कारण पञ्च-तत्त्व का बना मानव शरीर-यन्त्र क्या-क्या गजब के काम कर दिखाता है। बिजली की शक्ति से लौह, ताँबे के बने पंखे, मोटर, रेल, बल्ब आदि कितने महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करते हैं ? शक्ति असम्भव को भी सम्भव कर देती है।

सामान्य से सामान्य प्रतिभा भी शक्ति का संस्पर्श प्राप्त करके असाधारण बन जाती है। प्रकृति के प्रत्येक स्पन्दन में, संसार के प्रत्येक कार्य-व्यापार में, मानव-जीवन के हर एक स्वर में, शक्ति के बोल सुनाई पड़ते हैं। वृक्षों की हरियाली, उनका फूलना-फलना, वर्षा का होना, मेघों का गर्जना, बिजली का चमकना, झरनों का कल-कल नाद, पक्षियों का कलरव, मनुष्य का प्रत्येक कार्य शक्ति का ही परिणाम है। शक्ति के अभाव में प्रकृति निर्मित मानव शरीर यन्त्र भी बेकार हो जाता है।

मानव-जीवन में शक्ति एक नैतिक सदुगुण है जिसे प्राप्त किया जा सकता है, बढ़ाया जा सकता है और उसके द्वारा महत्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन भी किया जा सकता है। इसी तरह शक्ति नष्ट भी हो जाती है। वैसे शक्ति का कोई स्थूल रूप तो है नहीं जो उसे पकड़कर संग्रह कर लिया जाय। मूल-भूत शक्तियाँ सूक्ष्म ही होती हैं, जिन्हें न देखा जा सकता है, न पकड़ा जा सकता है। विद्युत देखी नहीं जा सकती, किन्तु बल्ब, पंखे एवं अन्य उपकरणों में उसका सक्रिय स्वरूप देखा जा सकता है। अभिव्यक्ति के माध्यम से कर्म के रूप में ही शक्ति का अस्तित्व प्रकाश में आया है। जहाँ गति है, कर्मशीलता है, वहीं शक्ति का निवास है। मृत शरीर में कोई स्पन्दन नहीं होता, अतः वहाँ पर शक्ति नहीं है।

शक्ति का स्रोत गतिशीलता, कर्म में से ही फूटकर निकालता है। अकर्मण्यता, जड़ता से शक्ति के स्रोत अवरुद्ध हो जाते हैं, मन्द पड़ जाते हैं और एक दिन पूर्णतः बन्द भी हो जाते हैं किन्तु कर्मरत मनुष्य नित्य नयी शक्ति प्राप्त करता जाता है। उसके शक्ति स्रोत अजस्र रूप से प्रवाहित होते रहते हैं। वह अपने बहुत-से काम पूरे कर चुकता है, तब तक अकर्मण्य व्यक्ति अपनी कठिनाइयों की चर्चा करता हुआ पड़ा रहता है और कुछ नहीं कर पाता अकर्मण्य के सोकर उठने से पूर्व ही कर्मवीर बहुत कुछ कर लेता है। उसकी शक्तियाँ अजस्र धारा की तरह नित्य-निरन्तर बहती रहती हैं। बेकार पड़ी रहने वाली भूमि बंजर और अनुपजाऊ हो जाती है। इसके विपरीत समय पर फसल उपजाते रहने पर वह उर्वर, उपजाऊ बनी रहती है। काम में आते रहने वाली मशीन काफी समय तक सक्षम बनी रहती है, जबकि बेकार पड़ी रहने वाली कुछ ही समय में जंग आदि लगकर अनुपयोगी बन जाती हैं।

कर्मशीलता कर्म साधना ही शक्ति सम्वर्द्धन का प्रमुख आधार है। कर्म कैसा भी क्यों न हो अन्ततः वह कर्म है। सैनिक, व्यापारी, लेखक, उपदेशक, श्रमिक, मजदूर सभी अपने-अपने स्थान पर कर्मशील हैं। किसी कार्य को दृढ़ लगन, निष्ठा, सचाई के साथ-साथ दिल खोलकर करना 'कर्म-साधना' है, जिससे शक्तियों के स्रोत खुलते जाते हैं। ये शक्तिस्रोत ही जीवन में सिद्धियाँ बन जाती हैं। ये सिद्धि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सफलता के वरदान प्राप्त कराती हैं। मनुष्य को समर्थ, शक्तिमान् बनाती हैं।

अपने कार्यों की सक्रियता का उद्देश्य केन्द्र यदि अपनी व्यक्तिगत बातों तक सीमित रहेगा तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्तियाँ भी सीमित और मर्यादित रहेंगी। व्यापक उद्देश्य विशाल दृष्टिकोण के साथ ही मनुष्य की शक्तियाँ भी व्यापक, सार्वभौम और समर्थ बन जाती हैं। उनका प्रवाह अजस्र और अनन्त बन जाता है। समष्टि के लिये जन-जन हिताय कार्य करने वाले महापुरुषों में गजब की शक्तियाँ होती हैं, वे महान् कार्यों का सम्पादन करते हैं। चूँकि इन महापुरुषों के कार्यक्रमों का उद्देश्य अनेकों का हित साधन करना होता है अतः अदृश्य रूप से उन सब की शक्ति घनीभूत होकर काम करती है। यही कारण है कि महापुरुषों का काम एक व्यक्ति का न होकर अनेकों का हो जाता है। उनके एक इशारे पर जन-समूह उमड़ पड़ता है। मनुष्य के कार्य, उसकी भावनाओं, विचारों का जितना व्यापक आधार होगा, उतनी ही क्षमतायें, शक्तियाँ भी व्यापक बनेंगी। उनके लिये असम्भव नाम का कोई शब्द नहीं रह जाता। प्रकृति भी अपने नियमों का व्यतिरेक कर उन्हें रास्ता देती है।

शक्तियों का सृजनात्मक, पारमार्थिक, रचनात्मक, लक्ष्यपूर्ति के कार्यक्रमों में लगा देना ही काफी नहीं होता, उन्हें नियन्त्रित और सुरक्षित रखना भी आवश्यक है, जिससे उनका दुरुपयोग और अपव्यय न हो। मोटर को गन्तव्य स्थान की दिशा में गति दे देना ही काफी नहीं होता। मार्ग के घुमाव, उतार-चढ़ाव, दुर्घटनाजन्य परिस्थितियों से बचाने आदि के लिये उस पर ड्राईवर का पूरा-पूरा नियन्त्रण होना आवश्यक है। इसके लिये उसका हाथ सदैव स्टेरिंग व्हील पर, पैर ब्रेकों पर और निगाह मार्ग पर लगी रहती है। इसमें वह थोड़ी भी भूल-चूक कर दे अथवा अपना नियन्त्रण खो बैठे तो ऐसी हालत में भयङ्कर दुर्घटना घटित होकर ड्राइवर और गाड़ी का भविष्य विनाश के रूप में ही परिणत होगा। ठीक इसी प्रकार प्रत्येक कार्य, प्रत्येक दिशा में लगी हुई शक्ति के नियन्त्रण और सुरक्षा का सदैव ध्यान रखना आवश्यक है।

शोर मचाना, जल्दबाजी करना, साधारण-सी बात को असाधारण महत्त्व देकर उसमें अन्धाधुन्ध लग पड़ना, बेतरतीव उल्टा-सीधा काम करना अपनी शक्ति का अपव्यय और व्यर्थ नष्ट करना ही है। इस तरह के व्यक्ति अपनी शक्ति-क्षमताओं को जल्दी ही नष्ट करके खोखले हो जाते हैं। फिर उनमें जीवन पर आगे कदम रखने की सामर्थ्य भी नहीं रहती और पराजय, असफलता का जीवन बिताते हैं। जो सिपाही अपनी तैयारी करते हुए मौके पर पहुँचने तक में ही थककर चूर हो गया हो वह क्या लड़ेगा ?

शान्ति, तत्परता, व्यवस्था, धैर्य के साथ ही शक्तियाँ अपना काम ठीक-ठीक करती हैं। हड़बड़ाहट, भाग-दौड़, उछल-कूद, जल्दबाजी से काम तो खराब होते ही हैं, साथ शक्तियाँ भी व्यर्थ नष्ट होती हैं। इन्जिन में जो भाप काम करती है, उसे आगे बढ़ाती है, उसका शोर कभी नहीं सुना जाता। व्यर्थ में निकलने वाली भाप अधिक शोर करती है। अपने शक्ति भण्डार को अक्षुण्ण, अजस्र, समर्थ बनाये रखने के लिये उसका दुरुपयोग रोकना चाहिये।

संसार को चलाने वाली सार्वभौमिक शक्ति सर्वत्र अपना काम कर रही है, किन्तु उसकी आवाज कहीं सुनाई नहीं देती। जिस शक्ति की प्रेरणा से वर्षा होती है, सृजन और विनाश का चक्र चलता है, वृक्ष फलते-फूलते हैं, जिस शक्ति से एक छोटा-सा बीज भूमि के कठोर पर्त को तोड़कर अंकुरित होता है, विशाल वृक्ष बनता है, उसे कहीं देखा-सुना नहीं जाता। गम्भीरता, प्रशान्त भाव से बहने वाली नदी गहरी होती है। उथले पानी में सदैव आवाज होती रहती है। इसी तरह शक्ति का निवास भी धीर, वीर, गम्भीर, प्रशान्त, महामना व्यक्तियों में ही अधिक होता है। ओछे, छिछले स्वभाव के सङ्कीर्णमना व्यक्ति ही अशक्त, निर्बल, सामर्थ्यहीन पाये जाते हैं। जिसका हृदय जितना बड़ा होगा, उसमें उतनी ही बड़ी शक्तियों का निवास होगा। अनुशासित, अनुभवी, ज्ञानवृद्ध, सबल मन वाले व्यक्तियों में शक्ति का निवास होता है। उनके प्रत्येक कार्य सुनियोजित, सन्तुलित, विवेकपूर्ण, सही-सही परिणाम पैदा करने वाले होते हैं। उसमें ही दूरदर्शिता, नियन्त्रण, सुरक्षा की गारन्टी होती है। ऐसे व्यक्ति विरोधी वातावरण को भी अनुकूलता में परिणत कर लक्ष्य प्राप्त कर ही लेते हैं।

शक्ति की उपलब्धि के लिये, क्षमताओं के विकास के लिये सधे हुए, काबू किये हुए मन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मानुशासित जीवन, उदार दृष्टिकोण, विशाल हृदय, विवेक बुद्धि की आवश्यकता है। इससे मनुष्य को वह सामर्थ्य प्राप्त होती है, जिससे प्रबल विरोध भी टकराकर स्वयमेव चूर-चूर हो जाते हैं। आत्म-संयम, मनोजय, मनोनिग्रह ही शक्ति प्राप्त की साधना है।

शक्ति एक सामर्थ्य है जिससे दुनियाँ और जीवन की उपलब्धियाँ प्राप्त की जाती हैं। शक्ति का उपयोग शुभ कार्यों में करके सत्परिणाम भी। प्राप्त किए जा सकते हैं और दुरुपयोग करके दुष्परिणाम् भी। इन दोनों में अतिरिक्त एक इस तरह के व्यक्ति भी होते हैं जो अपनी अशक्ति दुर्बलता या शिथिलता के कारण न कुछ अच्छा करते हैं न बुरा करते हैं। इससे कोई लाभ तो उन्हें नहीं होता फिर भी जन साधारण इन्हें भले मान लेता है। किन्तु शक्तिशाली तो वस्तुतः वही है, जो सामर्थ्य शक्ति रखते हुए भी दूसरों को हानि न पहुँचाकर लाभ पहुँचाते हैं और अपनी शक्तियों को सत्कर्मों, शुभ कार्यों में ही लगाते हैं। नैतिकता की रक्षा के लिये शुभ की स्थापना, न्याय का व्यवहार, सत्कर्मों के आयोजन के लिये शक्ति को लगाना ही शक्ति सम्पन्न का आधार होना ही चाहिये।

शक्ति का स्त्रोत हमारे अन्दर है

आज जैसी भी कुछ हमारी स्थिति है, वह सब हमारी मानसिक स्थिति का परिणाम है। मन कर्ता है। संसार की सम्पूर्ण बाह्य रचना की शक्ति और आधार मन है। हमारा आहार, रहन-सहन, चाल-चलन व्यवहार-विहार, शिक्षा-समुन्नति यह सारी बातें हमारी मानसिक दशा के अनुरूप ही होती हैं। जैसा कुछ चिन्तन करते हैं, विचार करते हैं वैसे ही क्रिया-कलाप भी होते हैं और तदनुसार वैसे ही अच्छे-बुरे कर्म भी बन पड़ते हैं। सुख और दुःख बन्धन और मुक्ति चूँकि इन्हीं कर्मों का परिणाम है इसलिये हमारे उद्धार और पतन का कारण भी हमारा मन ही है।

असफलता का दुर्भाग्य केवल मनोबल की कमी का ही परिणाम है। यत्न करते हुए थोड़ी-सी परेशानी ही प्रयत्न से विचलित कर देने के लिये काफी होती है। थोड़ा-सा शारीरिक दवाव, धन, हानि, व्यापार में घाटा शिक्षा में अनुत्तीर्णता जैसी निराशाजनक घटनायें आईं कि प्रत्यक्ष छोड़ बैठे। यह घटिया मनोबल का लक्षण है कि मनुष्य अल्प श्रम से अधिक परिणाम प्राप्त करना चाहे। इच्छाओं का आकार-प्रकार जितना बड़ा है उतने ही बड़े प्रयत्नों की अपेक्षा की जाती है यदि उतने प्रयत्न न किये जा सके तो सफलता संदिग्ध ही बनी रहेगी।

विद्यार्थी परीक्षा उत्तीर्ण करने की दृष्टि से अध्ययन करते हैं। फीस के लिये पैसे जुटाते हैं, समय लगाते हैं सभी शारीरिक सुख त्यागकर अध्ययन में लगे रहते हैं। कदाचित् परीक्षा में ऐसा कोई विद्यार्थी फेल ही हो जाय तो यह नहीं समझना चाहिये कि अपना श्रम, धन और समय व्यर्थ चला गया। परीक्षा में उत्तीर्ण होने का प्रमाण-पत्र नहीं मिला यह बात महत्त्वपूर्ण नहीं है। मन के महत्व का प्रश्न है। महत्त्व इस बात का है कि उस शिक्षा से बौद्धिक बल बढ़ा, विचार शक्ति आई और अनेक उलझनों को सुलझाने की महत्त्वपूर्ण सामर्थ्य प्राप्त हुई या नहीं, प्रमाण-पत्र इन्हीं बातों की गारन्टी का ही नाम तो है, जो यदि न भी मिले तो यह नहीं समझना चाहिये कि हमारा प्रयत्न निष्फल चला गया।

परिस्थितियाँ यदि प्रतिकूल हैं तो भी साधनों का उपयोग करते रहना चाहिये। थोड़ी-सी पूँजी से बढ़कर उच्च स्तर के व्यापार तक पहुँचा जा सकता है, किन्तु मानसिक शक्ति अपने साथ बनी रहनी चाहिये। कार्य करते समय ऊबें नहीं और उत्तेजित भी न हों। यह समझ लें कि हमें तो लक्ष्य तक पहुँचना है। जितनी बार गिरो, उतनी बार उठो। एक बार गिरने से उसका कारण मालूम पड़ जायेगा तो दुबारा उधर से सावधान हो जायेगे। यह स्थिति निरन्तर चलती रहे तो अनेक बाधाओं के रहते हुए भी अपने लिये उन्नति का मार्ग निकाला जा सकता है। हार मन के हारने से होती है। मन यदि बलवान् होता है तो इच्छापूर्ति को भी अधिक सुनिश्चित ही क्यों न समझना चाहिये।

आज यदि स्थिति ठीक नहीं है तो भविष्य में भी वह ऐसी ही बनी रहेगी, ऐसा कमजोर बनाने वाला विचार अपने मस्तिष्क से निकाल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दें। श्रेष्ठता अन्दर सुप्तावस्था में पड़ी हुई है। इसमें संशय नहीं कि हम हर आवश्यकता अपने आप पूरी कर सकते हैं पर इसके लिए सतत् अभ्यास की आवश्यकता है अपना उद्योग बन्द न करें। अकर्मण्यता और आलस्य का अधीरता और प्रयत्नहीनता का साथ छोड़कर "यत्नदेवो भव" की उपासना प्रारम्भ कर दोगे तो पुरुषार्थ का देवता ही अपने लिये अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर देगा। काम करने में शिथिलता न व्यक्त करें। ढिलाई न करें। चिन्तित न हों। आत्म-विश्वास न खोओ। धैर्य के साथ 'यत्न' देव का आश्रय पकड़े रहें तो तो यह निश्चय है कि आज की यह दीन-हीन अवस्था कल भी सम्पन्नता अवस्था में बदलकर रहेगी।

ऊँचे से ऊँची इमारत की नींव भी नीचे ही रखी होती है। ऊँचे-उठने का शुभारम्भ निचली पृष्ठभूमि से किया जाता है। निर्धन धनकुबेर होते हैं। पहलवान कोई माँ के पेट से बनकर नहीं आता। उसके लिये तो विधिवत् उपासना करनी पड़ती है।

यह ठीक है कि आज अपनी दशा अच्छी नहीं, कोई विशेष गुण भी दिखाई नहीं देता फिर भी निराशा का कोई कारण नहीं। एक शक्ति अभी भी अपने पास है और वह अन्त तक पास रहेगी। वह है मन। मन की शक्ति को सम्पदान करने का तरीका जानने का प्रयत्न करें। छोटे-छोटे कामों में मनोयोग का प्रयोग किया करें। एक दिन मनोबल इतना बढ़ जायेगा जब ऊँचा से ऊँचा कार्य करने में भी हिचक नहीं होगी और उत्साहपूर्वक, दृढ़तापूर्वक सफलता की मन्जिलें पार करते हुए आगे बढ़ सकें। श्रेष्ठतायें अन्दर छिपी पड़ी हैं, उनका समर्थन और अभिवर्धन करें, दूसरों की ओर देखें वे किस तरह आगे बढ़े हैं। दूसरों से उदाहरण लें कि उन्होंने कैसे सफलतायें पाई हैं। बिना हाथ पाँव डुलाये किसी के भाग देवता ने साथ नहीं दिया। चुपचाप बैठे रहेंगे तो उन्नति का अवसर पास से गुजरकर चला जायेगा, आपको केवल हाथ मसलकर रह ज़ाना पड़ेगा।

आत्म-संयम करें, इससे बिखरा हुआ मानसिक संस्थान जगेगा। निश्चेष्ट मनुष्य इसलिये होता है कि उनकी शक्तियाँ इधर-उधर बिखरी हुई होती हैं। मामूली-सी शक्ति से कोई काम भी नहीं बनता। बिखरी हुई सूर्य की किरणें सारे शरीर पर असंख्य मात्रा में गिरती हैं तो भी उनसे कुछ विशेष हलचल उत्पन्न नहीं होती पर यदि एक डेढ़ इञ्च जगह की किरणों को आतिशी शीशे से एक जगह पर एकत्रित कर दिया जाय तो इससे दावानल का रूप धारण कर एकता की क्षमता से सम्पन्न आग पैदा हो जायेगी। हम अपनी शक्तियों को इधर-उधर के बेकार के कार्यों में खर्च करते रहते हैं, जिससे जीवन में कोई विशेषता नहीं बन पाती। आत्म संयम से बिखरी हुई शक्तियाँ एक स्थान पर एकत्रित होकर अभीष्ट परिणाम के लिये उपर्युक्त वातावरण तैयार करती हैं। मन की सूक्ष्म से सूक्ष्म शक्तियों का जागरण आत्म-सयंम के द्वारा ही होता है।

किसी समय भारतवर्ष ने मन की शक्तियों का सम्पादन करके अनेकों आश्चर्यजनक शक्तियाँ और सिद्धियाँ प्राप्त की थीं। एकाग्रता के अभ्यास द्वारा यह सम्भावनायें अब भी जागृत की जा सकती हैं। इसके लिये अपने आपको गति देने की आवश्यकता है। जी-तोड़ परिश्रम करने की आवश्यकता है। प्रयत्न-पर-प्रयत्न करने की जरूरत है। हमारे भीतर जो सिद्धियाँ बिखरी हुई पड़ी हैं उन्हें कार्य-क्षेत्र में लगाने भर की देर है, बस हमारी यह विषम परिस्थितियाँ अधिक दिनों तक ठहरने वाली नहीं हैं।

उन्नति के लिये चाहे कितने ही व्यक्ति सहानुभूति व्यक्त क्यों न करें पर यह निर्विवाद है कि हमारा इससे कुछ काम न चलेगा। हमें अपनी स्थिति स्वयं सुधारनी होगी। स्वयं कठिनाइयों से लड़कर नया निर्माण करना पड़ेगा। विश्रृंखलत शक्तियों को जुटाकर आगे बढ़ने का कार्यक्रम बनाना पड़ेगा। यह बात यदि समझ में आ जाये तो सफलता की आधी मञ्जिल तय करली, ऐसा समझना चाहिये। शेष आधे के लिये मनोबल जुटाकर यत्नपूर्वक आगे बढ़िये आपका सौभाग्य आपके मङ्गल-मिलन के लिये प्रतीक्षा कर रहा है। स्वागत के लिये आगे खड़ा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्तियों का अपव्यय रोका जाय

शक्तियों के अपव्यय को रोकने से उनका संग्रह होता है और वह संचय बढ़ते-बढ़ते कुछ ही समय में समृद्धि का रूप धारण कर लेता है। उन्नतिशील लोगों के कार्य-क्षेत्र भिन्न भले ही रहे हों पर तरीका सभी ने एक ही अपनाया है—अपनी क्षमता को दुरुपयोग से बचाकर सदुपयोग में लगाना। उस मन्त्र की साधना को जो कोई भी कर सकेगा, उसे सिद्धियाँ मिले बिना रहेंगी नहीं। लक्ष्य भौतिक हो चाहे आध्यात्मिक तरीका यही अपनाना पड़ता है, जिन्हें भौतिक प्रगति अभीष्ट है, वे अपनी भौतिक क्षमताओं का अपव्यय रोककर उस कार्य में संलग्न करते हैं, जिससे लाभ होने की आशा हो। इसी प्रकार आध्यात्मिक लक्ष्य वाले व्यक्ति निरन्तर यह ध्यान रखते हैं कि अनेकों सामर्थ्य का प्रतिकूल दिशा में तनिक भी प्रयोग हो रहा हो तो उसे रोककर अभीष्ट मार्ग पर लगाये जाने में पूरी-पूरी सावधानी बरती जाय।

संसार के प्रगतिशील देशों ने जो भौतिक प्रगति की है, उसमें किसी देवता का वरदान नहीं वरन् उसकी यह सतर्कता ही प्रधान कारण बनी हुई है कि अपनी सामर्थ्य का उचित उपयोग किया जाय। इन सतर्कताओं से समय का सदुपयोग, धन का सदुपयोग, वाणी का सदुपयोग, विचारों का सदुपयोग, व्यवहार का सदुपयोग, इन्द्रियों का सदुयोग, भावनाओं का सदुपयोग आदि का जिनने जितना ध्यान रखा है, उन्हें उतनी ही मात्रा में प्रगति के पथ पर बढ़ चलने में, सफलता प्राप्त कर सकने में सुविधा हुई है।

समय को ही लीजिए वह मनुष्य की सबसे बड़ी सम्पत्ति है। समय का उपयोग जिस दिशा में भी किया जाय, उसी में आशातीत प्रगति होने लगती है। हम भारतवासी अपने समय में से एक चौथाई का भी सदुपयोग मुश्किल से कर पाते हैं, शेष तीन चौथाई आलस्य प्रमाद, मटरगस्ती और फूहड़ ढंग से काम करने में बर्बाद होता रहता है। लोग समझते हैं यह है कि हम सारे दिन काम में लगे रहते हैं हमें कसरत नहीं मिलती, पर जब यह जाँचा जाता है कि उनने इतने व्यस्त रहकर भी कितना काम कर लिया तो परिणाम बहुत ही स्वल्प और निराशाजनक दीखता है। व्यवस्था, कार्य-विभाजन, नियमितता के आधार पर पूरी दिलचस्पी एवं मनोयोग के साथ जो कार्य किये जाते हैं, वे थोड़े समय में अधिक मात्रा में एवं उत्तम स्तर के बन पड़ते हैं। पर जो भार ढोने की तरह अधूरे मन से, अस्त-व्यस्त क्रम के साथ किये जाते हैं, उनमें सारा दिन गुजार देने पर भी प्रतिफल बहुत ही स्वल्प और घटिया स्तर का सामने आता है।

आमतौर से आजीविकोपार्जन में आठ घण्टे लगते हैं। आठ घण्टे सोने आराम के लिये निकाल दें तो शेष आठ घण्टे ऐसे बच जाते हैं, जिनकी बर्बादी रोककर यदि उन्हें व्यवस्थित कर लिया जाय तो एक नया जीवन किसी भी उन्नति के लिये मिल सकता है। आठ-घण्टे के परिश्रम में आमतौर से रोजी-रोटी की इतनी बड़ी समस्या जिस पर जीवन का सारा दारोमदार निर्भर रहता है हल हो सकती है तो सोने के बाद बचे हुए आठ घण्टे में किसी भी दिशा में आशाजनक प्रगति की जा सकती है। संसार में सभी उन्नतिशील लोगों ने इस बचे हुए समय को शिक्षा, स्वास्थ्य, उपासना, परमार्थ कला आदि की साधना में उपयोग किया है और इतना लाभ उठाया है, जितना सामान्य व्यक्ति पूरे समय उसी कार्य में लगे रहने पर उठा सकते हैं।

समय का मूल्य और महत्व ठीक तरह न समझने के कारण हम उसका सदुपयोग नहीं कर पाते। घड़ी तो कितने ही व्यक्ति बाँधे फिरते हैं पर एक-एक मिनट का कार्य-विभाजन और सदुपयोग करने वाले लोग उनमें से बहुत ही कम होते हैं। घड़ी का वास्तविक लाभ वहीं उठाता है, जो अपने एक-एक क्षण का सदुपयोग करने की व्यवस्था ठीक रखने के लिये घण्टे मिनटों पर ध्यान रखे रहता है। आलस्य और प्रमाद ही हमारे दारिद्रय और पतन का प्रमुख कारण है। जब तक उन्हें न छोड़ा जायेगा, श्रमशीलता, फुर्ती, नियमितता, समय की पाबन्दी अपने काम में पूरी दिलचस्पी रखने की आदत हम न डालेंगे, तब तक इसी हीन दिशा में पड़ा रहना पड़ेगा। व्यवस्थित पुरुषार्थ ही भौतिक जीवन की समस्त सफलताओं का प्रधान कारण है। देवता का अनुष्ठान करने से लोग तुच्छ परिस्थितियों से ऊँचे उठकर महानता का गौरव प्राप्त करने से समर्थ हुए हैं। हमें अपने समाज और देश को सुखी, सम्पन्न और समृद्ध बनाना हो तो इन सद्गुणों को जन-जीवन में प्रवेश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कराना पड़ेगा। धन, सम्पत्ति, आमदनी या सुख-साधन किसी अन्य प्रकार से बढ़ जाने पर भी समय को गँवाते रहने वाले प्रमादी लोग दीन-दरिद्री ही बने रहेंगे। उनकी बढ़ी हुई आमदनी निरर्थक अपव्यय में ही नष्ट होती रहेगी।

समय के सदुपयोग की भाँति ही धन का सदुपयोग अपना महत्व रखता है। धन कमाना कितने ही लोग जानते हैं, पर उसे खर्च करना किन्हीं विरलों को ही आता है। जो पैसा स्वास्थ्य संवर्धन के उपयुक्त सात्त्विक आहार-विहार की व्यवस्था में मानसिक विकास के लिये ज्ञान संवर्धन में, परिवार को प्रगतिशील बनाने के साधन जुटाने में, लोकहित के परमार्थकारी सत्कर्मों में खर्च किया जाना चाहिए, वह नशेबाजी, सिनेमा, शौकीनी, यारबासी, फैशनबाजी एवं विलासिता के ठाठ-बाट जमा करने जैसी निकम्मी बातों में बर्बाद होता रहता है। उपयोगी कार्य रुक जाते हैं और निरर्थक बेहूदगियाँ सारा पैसा खा जाती हैं। अधिक तंगी, कर्जदारी के कष्ट से हमारा सारा समाज कराह रहा है। इसका प्रधान कारण एक ही है—खर्च का क्रम आमदनी के अनुरूप सन्तुलित न रखना। गरीब और कम आमदनी वाले व्यक्ति भी जब तथाकथित 'स्टेन्डर्ड' बनाने के फेर में न पड़कर अपनी औकात और हैसियत के अनुसार केवल उपयोगिता के लिये ही खर्च करने की नीति बना लेते हैं और अपव्यय की मूर्खता करना छोड़ देते हैं तो सीमित साधनों से भी, उन्हें व्यवस्थित जीवन का आनन्द मिलने लगता है

आर्थिक उन्नति के जितने भी महत्वपूर्ण उपाय हो सकते हैं, उनमें सबसे प्रभावशाली यह है कि हर व्यक्ति पैसे का महत्त्व समझे और उसे केवल सदुद्देश्य के लिये, सद्व्यय करने की नीति का कठोरतापूर्वक पालन करने लगे। बेकार कामों में होने वाली धन की बर्बादी के लिये रोका जा सके और उसे जीवन विकास के कार्यों में विवेकपूर्वक प्रयुक्त किया जा सके तो वर्तमान आमदनी से भी हमें विकसित जीवन का लाभ-मिल सकता है। यदि हमें अपने समाज को धनी बनाना हो तो कृषि उद्योग शिल्प, वाणिज्य आदि का संवर्धन करने के साथ ही यह और भी नितान्त आवश्यक है कि हर व्यक्ति के स्वभाव में मितव्ययिता और धन के सदुपयोग की बात गहराई तक बैठा दी जाय।

वाणी का सदुपयोग करना हम सीख जायें तो प्रिय, हित और मित ही बोला करें। दूसरों की प्रसन्नता और हिम्मत बढ़ाने वाली आदर, विनय और मधुरता से भरी हुई वाणी सबको मधु से भी अधिक मधुर लगती है। उसे सुनने के लिये हर किसी के कान प्यासे रहते हैं। जिससे दूसरों का हित साधन होता हो ऐसी सन्मार्ग की प्रेरणा देने वाली उपयोगी बातें करने के लिये ही वाणी का उपयोग किया जाया करे तो वह कितनी सार्थक बन सकती है ? कोयल औरँ कौवे की वाणी का अन्तर उसका प्रतिफल जानते हुए भी हमारे स्वभाव कटुभाषण ही समाया रहता है। निन्दा, चुगली, व्यग, उपहास, कठोरता, कर्कशता, अहङ्कार, शेखी जैसी बुराइयों से भरी हुई दूसरों का दिल दुःखाने वाली वाणी ही अक्सर हम लोग बोला करते हैं, कतरनी की तरह लबड़-लबड़ बेकार में जीभ चलाते रहने वाले बातूनी लोग अपना और दूसरों का समय बर्बाद करते हैं और बात का बतंगड़ बनाने के लिये कुछ न कुछ ऐसे प्रसंग उठाते हैं, जिससे दुर्भावनाएँ बढ़ चलें। खरी बात कहने' के नाम पर तीर-सी चुभने वाली कटु भाषा बोलने वाले असभ्य लोग अन्ततः अपने चारों ओर शत्रुता का वातावरण बना लेते हैं। वाणी का सदुपयोग यदि सीख लिया जाय तो चारों ओर प्रेम की धारा बहने लगे और सहयोग एवं सद्भाव का स्वर्गीय वातावरण इस धरती पर सदैव फैला-फैला दीख पड़ने लगे। क्लेश, कलह और द्वेष, दुर्भाग्य वाणी के दुरुपयोग से बढ़ते हैं। सुसंस्कृत अभिभाषण का सद्गुण यदि व्यापक रूप से अपनाया जा सके तो सत्युग जैसी स्नेह-सौजन्य से भरी परिस्थितियाँ आज भी चारों ओर परिलक्षित हो सकती हैं।

इन्द्रियों के दुरुपयोग के कारण ही हमारा शरीर खोखला होता है। शाक-पात खाकर भी मनुष्य सौ वर्ष जी सकता है। पर जीभ का चटोरपन, कामेन्द्रिय की विषय-वासना तथा अन्य इन्द्रियों का अपनी-अपनी मर्यादाओं का व्यतिक्रम करना अस्वस्थता एवं दुर्बलता का कारण बन जाता है। आम शिकायत है कि लोगों का स्वास्थ्य दिन-दिन गिरता चला जाता है और विविध विधि रोगों का आक्रमण तीव्रता के साथ बढ़ता जाता है। इनके कारण और निवारण ढूँढ़ने के लिये प्रयोगशालाओं में बड़े-बड़े अन्वेषण होते रहते हैं। इससे कुछ भी प्रयोजन सिद्ध होने वाली नहीं है। जिह्वा, इन्द्रिय और कामेन्द्रिय पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंकुश लगाये बिना, आहार और विहार में सात्विकता एवं संयम का समावेश किये बिना जीवनी शक्ति का क्षरण रोका न जा सकेगा। असंयम ही हमारे स्वास्थ्य का प्रधान शत्रु है, उसे परास्त किये बिना शारीरिक सुख की आशा दुराशा मात्र ही बनी रहेगी।

शिष्टाचार, नागरिकता की मर्यादाओं का पालन एवं कर्तव्य परायणता का नियन्त्रण स्वीकार न करे उछृंखलता की प्रवृत्ति बुरी तरह बढ़ती चली जा रही है। वासनाओं और तृष्णाओं में ग्रसित मनुष्य अनैतिक एवं उद्धत गतिविधियाँ अपनाते हैं और अपराधों की बढ़ोत्तरी होती जाती है। आवेशों पर नियन्त्रण न रहने से लोग छोटे-छोटे कारणों को लेकर आपे से बाहर हो जाते है और न करने लायक उद्धत कृत्य कर डालते हैं। छुरेबाजी, हत्याएँ, आत्महत्याएँ, मुकदमेबाजी, पार्टीबन्दी, षडयन्त्र आदि की दुर्घटनाओं के पीछे मनुष्य की गलत ढंग से सोचने की आदत ही प्रधान कारण रही होती है। यदि लोग गम्भीरतापूर्वक सोचने, दूसरों की परिस्थिति समझने और उलझनों को शान्तिपूर्ण ढंग से सुलझाने का प्रयत्न करें, सहिष्णुता, सहनशीलता एवं सद्भावना से काम लें तो पेचीदा दीखने वाली उलझनें भी सहज ही सुलझ जाया करें और भिन्नता के बीच एकता बनाये रहने का रास्ता निकल आया करे।

विचारों का असंयम मानव-जाति के लिये एक भयङ्कर अभिशाप एवं दुर्भाग्य बना हुआ है। हम मानवोचित उत्कृष्ट आदर्शवादी विचारधारा का परित्याग कर पशुओं एवं पिशाचों के ढङ्ग से सोचते हैं। आकांक्षाओं का स्तर बहुत ही निकृष्ट रहता है। साहस के अभाव में चिन्ता, भय, निराशा, शोक, क्षोभ से चित्त निरन्तर उद्विग्न बना रहता है। कलह और संघर्षों का, द्वेष और दुर्भावनाओं का विस्तार विचारधारा का स्तर अधोगामी होने के कारण ही होता है। यदि लोग ऊँचे ढङ्ग से सोचें, अपने मानवीय गौरव का स्मरण रखें और मनुष्यता की प्रतिष्ठा एवं मर्यादा के अनुरूप सोचें तो निकृष्ट गतिविधियाँ अपनाने का अवसर ही न आवे। कुकर्मों की सृष्टि कुविचारों से ही होती है। दीनता-दरिद्रता और पतन के लिये निकृष्ट कोटि की विचारधारा ही उत्तरदायी है। यदि विचारशक्ति का संयम और सदुपयोग कर हम ध्यान देने लगें तो नर को नारायण और जीव को ब्रह्म के रूप में परिणत होते हुए तनिक भी देर न लगे।

जीवन अविकसित एवम् निम्न स्तर का बना इसलिये पड़ा रहता है कि हम अपनी शक्तियों के महत्व को पहिचानते नहीं, उनको कुमार्ग से हटाने और सन्मार्ग पर लगाने का प्रयत्न नहीं करते। यह उपेक्षा जब तक बनी रहेगी, तब तक बाह्य साधनों के द्वारा सुखी बनने के लिये किये गये प्रयत्न निष्फल ही जाते रहेंगे। मनुष्य अपने भीतर उतनी प्रचण्ड शक्ति और सामर्थ्य भरा बैठा है कि उसके सदुपयोग का सङ्कल्प एवं साहस कर लेने से प्रगति का प्रत्येक द्वार खुल सकता है और मनुष्य ऊँचे से ऊँचे यहाँ तक कि परमात्मा की समीपता प्राप्त करने तक की स्थिति उपलब्ध कर सकता है।

हम संयमी बनें—शक्ति का अपव्यय न करें

शक्ति के इस अपव्यय को रोकने का नाम ही 'संयम' है। किसी वस्तु को प्राप्त करना निस्संदेह कठिन व महत्वपूर्ण बात है, किन्तु संग्रहीत वस्तु को सुरक्षित बनाये रखना उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। संग्रह और त्याग की दोनों क्रियायें साथ-साथ चलती रहें तो कहीं भी शक्ति एकत्रित न होगी। शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक दृष्टि से शक्तिमान बनने का एक ही तरीका है कि इनकी क्रिया शक्ति का दुरुपयोग न हो, तभी मनोवांछित ध्येय सिद्धि या सफलता मिल सकती है।

नियन्त्रित जीवन का आधार संयम है। इससे समस्त शक्तियाँ केन्द्रीभूत होती हैं, इन्हें जिधर ही लगा दो, उधर ही चमत्कारिक परिणाम उपलब्ध किये जा सकते हैं। संयम से शक्ति स्वास्थ्य, मन की पवित्रता, बुद्धि की सूक्ष्मता और भावना की सुन्दरता जागृत होती है। इसके लिये अपने जीवन में दृढ़ इच्छा-शील व जीवन-चर्या पर पर्याप्त ध्यान देना पड़ता है। आइये अब यह विचार करें कि हमें यह सावधानी कहाँ-कहाँ रखनी है। किन-किन अवस्थाओं में किस प्रकार संयम की उपयोगिता है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-निर्माण के तीन क्षेत्र हैं—शरीर, मन और समाज। सुव्यस्थित जीवन जीने के लिये स्वस्थ शरीर स्वच्छ मन और सभ्य समाज की रचना अनिवार्य है। शरीर दुर्बल और रोग-ग्रस्त है तो कोई सुखी न रहेगा। मन अपवित्र है तो द्वेष, दुर्भावना व कलह का ही वातावरण बना रहेगा। हमारे समाज में कुरीतियाँ और अनाचार फैल रहे हैं तो हम उनसे अछूते बचे रहेंगे। ऐसी कोई सुविधा इस संसार में नहीं है। इन तीनों अवस्थाओं के नियन्त्रण को ही ऋषियों ने मन, वचन और कर्म का संयम कहा है।

यह सत्य है कि संसार के सभी पदार्थ भोग के लिये हैं, किन्तु इसकी भी एक सीमा और मर्यादा होती है। आहार शरीर को शक्ति प्रदान करता है किन्तु चाहे भूख न हो, जो मिले खाते जाइये तो अपच का होना स्वाभाविक है। पेट की शक्ति के अनुरूप आहार की एक सीमा निर्धारित कर दी गई है, उतने में रहें तो यह आहार अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। इससे स्वास्थ्य आरोग्य स्थिर रहेगा, किन्तु जहाँ मर्यादा का उल्लंघन हुआ कि रोग-शोक के लक्षण दिखाई देने लगेंगे। इसलिये स्वास्थ्य-विद्या के आचार्यों ने आहार ग्रहण करने के तरीकों पर अधिक संयम व सावधानी रखने को कहा है।

शरीर-विज्ञान और आचार-शास्त्र के नियमों से भी यही बात पुष्ट होती है। ऐहलौकिक और पारलौकिक सुख-सफलताओं का आधार—स्वस्थ शरीर है। किन्तु नवयुवक और नव-युवतियों में यह भाव पाया जाता है कि 'संयम' कोई असाधारण और असम्भव वस्तु है इस सम्बन्ध में वे काम-वासना की प्रबलता का उदाहरण भी देते हैं। कई तो इसे शरीर-हित के लिये हानिकर भी बताते हैं, किन्तु डा० ई० मेरियर के शब्दों से यह सन्देह दूर हो जाता है। उन्होंने लिखा है—"पूर्ण संयम अनिष्टकारी होता है, यह धारणा भ्रान्त और काल्पनिक होती है। इसका घोर प्रतिवाद होना आवश्यक है। इस भ्रान्त धारणा से बालकों का ही नहीं, अभिभावकों का भी अहित हो सकता है।" इन्द्रिय संयम की आवश्यकता पर जोर डालते हुए गीताकार ने लिखा है—

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे राग द्वेषौ व्यवस्थितौ।
तयोनं वशमागच्छेतौ हास्य परिपन्थिनौ।।

अर्थात्—मनुष्य को चाहिये कि इन्द्रिय के अर्थ में अर्थात् सभी इन्द्रियों के भोगों में स्थिति जो राग-द्वेष हैं, उन दोनों के वश में नहीं होवे, क्योंकि ये दोनों ही कल्याणकारी मार्ग हैं, विघ्न पैदा करने वाले शत्रु हैं।

अनियन्त्रित काम-वासना के दुष्परिणाम सर्वविदित हैं। असंयम से आलस्य और प्रमाद उत्पन्न होता है। शरीर में विकृति व अनेकों रोगों में ग्रस्त हो जाने की आशङ्का बढ़ जाती है, जो कई पीढ़ियों तक चलती रहती है। ऐसी-ऐसी भूल करना आप पर घोर अत्याचार करना है। नाड़ी-दौर्बल्य के रोगियों की संख्या उन लोगों में अधिक पायी जाती है, जो अत्यधिक विषयी होते हैं, जिनके खान-पान और रहन-सहन में कोई आचार-विचार नहीं होता। पीछे यह बीमारी परम्परागत बँध जाती है, जो कई पीढ़ियों तक दुःख देती है।

इसके विपरीत जिनके आचरण संयमित होते हैं, उनमें, शक्ति होती है। संयम से सूक्ष्म दृष्टि विकसित होती है। डा० मौनटे गाजा फ्रान्स ने लिखा है—"चारित्रिक पवित्रता से शरीर में उत्पन्न हुए किसी रोग का मुझे ज्ञान नहीं है। समस्त व्यक्ति और विशेषकर नव-युवक व नव-युवतियाँ संयम से तत्काल उत्पन्न होने वाले लाभों से लाभान्वित हो सकते हैं। ब्रह्मचर्य से स्मृति शान्त और ताजा बनी रहती है। इच्छा-शक्ति में स्फूर्ति, शरीर में बल और मस्तिष्क में सुदृढ़ विचार बने रहते हैं। इनके कारण समस्त शरीर में सौन्दर्य और आकर्षण परिलक्षित होने लगता है।

जिह्वा और कामेन्द्रिय की उत्तेजना को यदि साध लें तो स्वास्थ्य रक्षा की प्रक्रिया बड़ी आसानी से पूरी की जा सकती है। भोजन भूख मिटाने या शक्ति प्राप्त करने के लिये करते हैं, जीभ के स्वाद के लिये नहीं। भोगी व्यक्तियों की रुचि स्वादयुक्त व्यञ्जनों में बनी रहती है, किन्तु संयमशील व्यक्ति का आहार केवल जीवन धारण किये रहने के लिये होता है, जिसमें स्वाद, चटपटे मसालों विविध व्यञ्जनों की राई-रत्तीभर भी गुञ्जायश नहीं होती। शराब, माँस और दूसरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मादक द्रव्यों का सेवन हानिकारक होता है। ये पदार्थ व्यक्ति की विवेकबुद्धि को समाप्त कर देते हैं।

जो सदैव ईर्ष्या-द्वेष, परछिद्रान्वेषण के विचारों में डूबे रहते हैं, वे अकारण ही अपनी मानसिक शक्तियों का अपव्यय करते रहते हैं, उन्हें न तो किसी प्रकार का भौतिक सुख मिलता है, न आध्यात्मिक लाभ। सामाजिक कलह अव्यवस्था का कारण भी ऐसे ही लोग होते हैं, जिनके विचार संयमित नहीं होते।

शारीरिक और मानसिक शक्तियों का नियन्त्रण कर लें तो सामाजिक नियन्त्रण की बात अपने आप पूरी हो जाती है। इन दोनों का मिश्रित रूप ही समाज की व्यवस्था का कारण बनता है। व्यक्ति से ही समाज बनता है। जिस समाज के व्यक्तियों में भले विचार होंगे, वहाँ शान्ति व सुव्यवस्था अवश्य होगी। अनियन्त्रित व स्वेच्छाचारी मनुष्य ही स्थान-स्थान पर कलह व कटुता उत्पन्न करते हैं। इसलिये जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नियन्त्रण की आवश्यकता है, इसी से शक्ति-सन्तुलन व सुव्यवस्था बनी रह सकती है। इस पुण्य प्रक्रिया का प्रारम्भ आत्म-संयम से ही करना होगा। पीछे इसके लाभों को देखते हुए दूसरे भी चल पड़ेंगे, पर पहले तो यह पग स्वयं बढ़ाना पड़ेगा।

जीवन संग्राम में पुरुषार्थ की आवश्यकता

यह संसार और मानव-जीवन संघर्षमय है। संघर्ष ही इनका स्वभाव है। जीवन भर मनुष्य को कुछ न कुछ करना ही पड़ता है। बिना संघर्ष के जीवन पथ पर एक कदम भी आगे बढ़ना सम्भव नहीं होता। गति का अभाव ही मृत्यु है। जो जीवन में विशेष सफलतायें अर्जित करना चाहते हैं, उन्हें तो और भी अधिक संघर्ष करना पड़ता है। कोई व्यक्ति चाहे कि मैं संघर्षशून्य जीवन बिता लूँ तो यह असम्भव है। इस संसार की बनावट ही कुछ ऐसी है, जहाँ संघर्षहीन व्यक्ति का एक ही रास्ता है विनाश और पतन का क्योंकि यहाँ संघर्ष से बचकर भागने से एक ओर तो जीवन-निर्वाह की गति का ही क्षय होने लगता है दूसरे बुराइयों की विरोधी शक्तियों को प्रोत्साहन मिलता है जो मनुष्य को शान्त और चुपचाप नहीं बैठने देतीं। इसलिये मनुष्य के सामने सम्मान सहित जीवित रहने का एक ही मार्ग है– संघर्ष का मुकाबला किया जाय पूरी शक्ति, साहस और दृढ़ता से। इस तरह के सजीव प्रयत्न को पुरुषार्थ कहते हैं। पुरुषार्थ ही जीवन का मूलमन्त्र है। यही मनुष्य का सच्चा सहायक है—

अभिमानवतो मनस्विनः प्रियमुच्चैः पदमारुक्षतः।
विनिपातनिवर्त्तनक्षमं मतमालम्बनमात्म पौरुषम्।।

"उन्नति के पद को प्राप्त करने के इच्छुक, सम्मानयुक्त धीर पुरुष आपत्ति निवारण करने में समर्थ अपने पुरुषार्थ का आश्रय लेना ही उचित मानते हैं। पुरुषार्थ ही शूरवीरों का सच्चा सहायक होता है।"

पुरुषार्थी सफलता के लिये किसी के सहारे या भाग्य-कृपा की प्रतीक्षा नहीं करता। वह कहता है—

कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः।
गोविद् भूयासमश्वजिद् धनंजयो हिरण्यजित्।।

"दाहिने हाथ में अपना पुरुषार्थ लिये हूँ और बाँये हाथ में सफलता। प्रभु कृपा से अपने परिश्रम से गोधन, अश्वधन, स्वर्ण आदि का विजेता मैं स्वयं ही होऊँ।"

जिसमें पूरी शक्ति से काम करने की दृढ़ लगन है, उसके मार्ग में चाहे कितना प्रबल विरोध का प्रवाह आये, वह उसकी गति को अवरुद्ध नहीं कर सकता। पीछे नहीं हटा सकता। आप आगे बढ़ने का प्रयत्न जितनी दृढ़ता के साथ करेंगे, सफलता उतनी ही आपके समीप आती जायेगी। पुरुषार्थ सब अभावों की पूर्ति करता है, इसलिये कहा है—"उद्योग नास्ति दारिद्रयम्" पुरुषार्थ करने पर दरिद्रता नहीं रहती। महर्षि वेदव्यास ने कहा है—

तथा स्वर्गश्च भोगश्च निष्ठाया च मनीषिता।
सर्वं पुरुषकारेण कृतेनेहोपलभ्यते।।

"पुरुषार्थी को स्वर्ग, भोग, धन में निष्ठा, बुद्धिमता इन सबकी उपलब्धि होती है।"

आप में योग्यता की कितनी ही कमी हो यदि आप में वह शक्ति है, जो किसी भी निर्दिष्ट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लक्ष्य से हटाना नहीं जानती, जो कार्य आपने शुरू किया है उसे छोड़ना नहीं जानती तो आप एक दिन सफलता की मंजिल तक पहुँच ही जायेंगे। इसके विपरीत काफी योग्यता रखते हुए भी शिथिल प्रयत्न, अधूरे मन से काम में लगने वाले, असफल हों तो इसमें किसी का क्या दोष ?

कई लोग बड़े-बड़े काम करना चाहते हैं। बड़ी-बड़ी योजनायें बनाते हैं, भविष्य का महान् नक्शा खींचते हैं, किन्तु उसके लिये उतना प्रयत्न नहीं करना चाहते। जितनी शक्ति और प्रयत्न की आवश्यकता होती है उतना नहीं लगाते। फलस्वरूप उन्हें पूर्ण सफलता भी प्राप्त नहीं होती।

अर्थो वा मित्रवर्गो वा ऐश्वर्य वा कुलान्वितम्।
श्रीश्चापि दुर्लभा भोक्तुं तथैवाकृतकर्मभिः।।

स्मरण रहे जितना हम पुरुषार्थ करेंगे उतनी ही सफलता के हम भागीदार होंगे। जितना गुड़ डाला जाता है उतना मिठास बढ़ता जाता है। सिंह जब अपने शिकार पर झपटता है तो पहले धनुष की तरह पीछे की ओर तनता है और फिर सम्पूर्ण वेग में उछल जाता है। हम किसी भी काम में जितना जोर मारेंगे उतनी ही हमारी गति तीव्र होगी। जो लोग अपने काम में पूरी शक्ति का उपयोग नहीं करते, पूर्ण पुरुषार्थ नहीं करते, वे प्रायः असफल ही होते हैं।

कई बार लोग उपयुक्त अवसर तथा बाहरी सहायता की ताक में बैठे रहते हैं। लेकिन ऐसे लोगों के लिये न तो उपयुक्त अवसर ही आताहै और न किसी की सहायता ही मिलती है। जो अपनी शक्ति का उपयोग नहीं करता, स्वयं पुरुषार्थ नहीं करता, उसकी सहायता कौन करेगा ? न इस तरह की मनोवृत्ति से सफलता ही मिलती है। सफलता तो प्रयत्नशील व्यक्तियों को ही मिलती है। नीतिकार ने कहा है—

उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।

उद्यम अर्थात् पुरुषार्थ से ही सम्पूर्ण कार्य सफल होते हैं, मनोरथों से नहीं। किसी काम के बारे में कल्पना कर लेना ही पर्याप्त नहीं होता उसके लिये पूरी मेहनत करनी पड़ती है। ऐसे लोग जो अपने भाग्य या अवसर की प्रतीक्षा में बैठे रहते हैं, वे असफलता की तैयारी और अपनी शक्तियों को कुण्ठित कर देने के सिवा कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाते। यदि अपवाद स्वरूप किसी को कुछ सफलता प्राप्त हो भी जाय तो वह टिकाऊ नहीं होती और यह भी निश्चित है, जिन्हें स्वयं कुछ करने का विश्वास नहीं, उन्हें सहायता के कितने ही अवसर आयें, वे उनसे लाभ नहीं उठा सकते। सफलता प्राप्त करने वाले दूसरे ही होते हैं, जो अपने साहस और पुरुषार्थ का सहारा लेकर चलते हैं। वे किसी का मुँह नहीं ताकते, भाग्य की कृपा या अवसर की प्रतीक्षा में नहीं बैठते। जो काम हाथ में लेते हैं, उसे प्राणपण से पूरा करने में जुट जाते हैं। चाहे कितनी ही बाधायें उनके मार्ग में आयें वे आगे बढ़ती ही जाते हैं। बहानेबाजी आलसियों का अवलम्बन है। जो काम करने से जी चुराते हैं, वे भाग्य और अवसर तथा किसी के सहारे की आशा लगाये बैठे रहते हैं।

पुरुषार्थ ही जीवन है। इसका अभाव ही मृत्यु है। पुरुषार्थहीन व्यक्ति जीवित रहते हुए भी मरे के ही समान होता है—

विपदोऽभिभवन्त्यविक्रमं रहयत्यापदुपेतमायतिः।
नियता लघुतो निरायतेरगरीयान्न पदं नृपश्रियः।।

"पुरुषार्थहीन व्यक्ति को विपत्तियाँ आक्रान्त कर लेती हैं और विपत्तियों से ग्रस्त होने पर उसकी भावी उन्नति रुक जाती है, जिससे उसका गौरव नष्ट हो जाता है। गौरव नष्ट होने पर राज्यश्री के लिये कोई स्थान नहीं रह जाता जिसका वह आश्रय ले सके।"

वस्तुतः विपत्तियों से घिरे हुए आश्रयहीन साथ ही पुरुषार्थहीन व्यक्तियों के लिये जीते हुए भी मरण का सा दुःख सहना पड़ता है।

अक्सर लोग गलत चिन्तन और अकर्मण्यता के कारण भाग्य के भरोसे बैठे रहते हैं, उसकी मनौतियाँ करते रहते हैं, किन्तु भाग्य की अपने कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। न भाग्य मनुष्य को परवश पशु की तरह ही हाँकता है। हमारा पूर्व पुरुषार्थ ही आज का भाग्य बनकर आता है और आज का पुरुषार्थ भाग्य रेखायें खींचता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

श्वांस सही तरीके से लीजिये

हमारा शरीर पंच-तत्वों से मिलकर बना है। साधारण दृष्टि से देखने पर मिट्टी, जल, वायु आदि तत्व सर्वथा जड़ पदार्थ प्रतीत होते हैं, पर इन्हीं के विधिपूर्वक मिला दिए जाने से मानव-देह जैसे अद्‌भुत क्रियाशील और क्षमतायुक्त यन्त्र का निर्माण हो जाता है। सामान्य रीति से देखने पर हमें लाखों मन मिट्टी के ढेर चारों तरफ पड़े दिखलाई देते हैं, जल की अनन्त राशि भी कुएँ, तालाब, नदी, समुद्र आदि में भरी हुई है, वायु रात-दिन हमारे इर्द-गिर्द छोटे से छोटे स्थान में भी व्याप्त रहती ही है। बाह्य रूप में हमको इनमें कोई ऐसी विशेषता या शक्ति नहीं दिखलाई पड़ती, जिससे यह अनुमान किया जा सके कि हमारा यह महान शक्तियों से सम्पन्न, अस्थि, माँस, रक्त, नाड़ियाँ, स्नायु, पाचन-संस्थान, श्वासं-यन्त्र, मस्तिष्क आदि से युक्त शरीर इन तुच्छ से मालूम देने वाले पदार्थों के संयोग से निर्मित हुआ होगा। पर वास्तविकता यही है कि मानव-शरीर ही नहीं हाथी जैसे विशाल प्राणी से लेकर चींटी तक की देह रचना पंचतत्वों के संयोग से हुई है और जब तक वह जीवित रहते हैं, तब तक इन्हीं तत्वों से पोषण और शक्ति प्राप्त होती रहती है।

प्राण-तत्व की विद्यमानता—

इसमें कोई सन्देह नहीं कि भौतिक पदार्थों के मुख्य उपादान के ये पाँचों तत्व जड़ माने गये हैं। धर्मशास्त्र वालों ने ही नहीं दार्शनिक और वैज्ञानिकों ने भी विश्व रचना के कार्य में जड़ और चेतन के विभाजन को स्वीकार किया है। पर जड़ होते हुए भी इनके अणु-अणु में एक ऐसी शक्ति समाई रहती है, जो अवसर आने पर सृष्टि रचना की रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा परिवर्तित होकर क्रियाशीलता के रूप में प्रदर्शित होने लग जाती है। इस शक्ति के प्रताप से मिट्टी के शून्य मैदानों और खेतों में वर्षा-जल का संयोग होते ही जीवनदायिनी वनस्पतियों, फूलों और फलों का आभिर्भाव हो जाता है। जीवन की उत्पत्ति वृद्धि और उसके संचालन में भी इसी शक्ति का सर्वाधिक महत्व माना जाता है। अगर यह शक्ति न होती तो पंच-तत्वों के होते हुए भी सब कुछ मुर्दा जीवनशून्य पड़ा रहता। यह शक्ति 'प्राण' के नाम से प्रसिद्ध है और संसार को जड़ से चेतन बनाने में मुख्य साधन रूप है।

यह 'प्राण' एक विश्वव्यापी तत्व है, जो प्रत्येक पदार्थ और प्राणी में पाया जाता है। अन्तर इतना ही है कि जड़ पदार्थों में वह सुप्त अथवा निष्क्रिय रूप में उपस्थित रहता है और चैतन्य अथवा क्रियाशील प्राणियों में चलने-फिरने, खाने-पीने सोने-जागने आदि के रूप में दिखलाई देता है। बहुत-से लोग प्राण और जीवन को एक ही समझते हैं। अनपढ़ तथा अज्ञानी व्यक्ति ही ऐसी भ्रमपूर्ण मान्यता नहीं रखते वरन् भौतिकवाद के अनुयायी विज्ञानवेत्ता भी अपनी खोज और जानकारी में प्राण-तत्व तक ही सीमित रह जाते हैं। पर भारतीय तत्ववेत्ताओं ने इस क्षेत्र में यहाँ तक की प्रगति की है कि वे जान गये हैं कि जीव परमात्मा का अंश है, जिसका कभी नाश नहीं हो सकता। इसके विपरीत 'प्राण' एक संसार-संचालिका शक्ति है, जो सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक रहती है, पर प्रलयकार में जिसका लोप हो जाता है। इस तथ्य का स्पष्टीकरण हुए एक विद्वान ने लिखा है—

"प्राण एक ऐसा नाम है जिससे हमको उस सर्वव्यापक तत्व का बोध होता है, जो आकर्षण शक्ति, बिजली, ग्रहों की गति और छोटे-बड़े समस्त प्राणियों की क्रियाशीलता में विभिन्न रूपों में प्रकट हुआ करता है। वह बल और शक्ति के समस्त रूपों का मूल कहा जा सकता है। यह प्रधान तत्व प्रत्येक द्रव्य (भौतिक पदार्थ) में है, पर तो भी यह द्रव्य नहीं है। यह वायु में है पर न तो वायु है और न उसका कोई अवयव। यह उस भोजन में जिसे हम खाते हैं, पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसकी गणना भोजन में पाये जाने वाले पोषक तत्वों में नहीं की जा सकती। यह पानी में है, पर उन रासायनिक तत्वों में इसकी गिनती नहीं की जा सकती, जिनसे पानी बना है। यह सूर्य प्रकाश में है पर इसे न तो उसका ताप कह सकते हैं और न किरण। यह इन सब चीजों की मूलशक्ति या गुण है।

"मनुष्य इस प्राण शक्ति को वायु, जल, सूर्य, प्रकाश, भोजन आदि से ग्रहण करके अपने देह-यन्त्र में काम लाने में समर्थ है। पर इस कथन का यह अर्थ न समझना चाहिए कि इन पदार्थों में प्राण इसलिए हैं कि मनुष्य उसका उपयोग करे। प्राण तो इन पदार्थों में प्राकृतिक नियम के अनुसार हैं, मनुष्य उसको काम में लाने की योग्यता अथवा सामर्थ रखता है, यह गौण बात है। यह शक्ति संसार में सदैव बनी रहेगी चाहे मनुष्य रहे या न रहे। जानवर और पौधे भी हवा पानी के साथ इस शक्ति को खींचते हैं। यदि हवा में प्राण न रहता तो हवा के सर्वत्र भरे रहने पर भी वे मुर्दा रहते हैं। प्राणियों की देह ऑक्सीजन के साथ इसे ग्रहण करती है पर वह ऑक्सीजन नहीं है। प्राण वायु मंडल में है और अन्यत्र भी है। वह ऐसे स्थानों में भी है, जहाँ वायु का अस्तित्व भी नहीं है। वायु का ऑक्सीजन तत्व प्राणियों के जीवन को कायम रखने में विशेष योग देता है। परन्तु प्राण जीवन के विकास में एक पृथक् ही कार्य करता है।

प्राणशक्ति की प्राप्ति—

यों तो संसार के प्रत्येक पदार्थ में चाहे यह किन्हीं तत्वों के न्यूनाधिक परिणाम से क्यों न बना हो, प्राण का अस्तित्व अनिवार्य रूप से रहता है, पर वायु के तरल और अपेक्षाकृत सूक्ष्म तत्व होने के कारण उससे हम प्राण को सुगमतापूर्वक पृथक् करके शरीर में ग्रहण कर सकते हैं। यही कारण है कि प्राचीन समय से हमारे ऋषि, मुनियों ने 'प्राणायाम' की कठिन और सरल अनेक विधियाँ प्रचलित की थीं और यह नियम बनाया था कि प्रत्येक व्यक्ति संध्या-वन्दन के साथ अधिक नही तो दस-पाँच प्राणायाम अवश्य कर लें। इतना ही नहीं उन्होंने मनुष्य से होने वाले छोटे-मोटे पापों का प्रायश्चित भी प्राणायाम के रूप में ही रखा था।

यह पूछा जा सकता है कि प्रत्येक मनुष्य स्वाभाविक रूप से साँस लेता ही रहता है, फिर उसके लिए विशेष रूप से उपदेश देने अथवा प्रयत्न करने की क्या आवश्यकता है ? इस समबन्ध में स्वामी विवेकानन्द के अमेरिकन शिष्य योगी रामचारक ने अपनी 'श्वांसविज्ञान' नामक पुस्तक में एक बड़ी उपयोगी और सरलता से समझने लायक बात लिखी है। उन्होंने बतलाया है कि प्राणशक्ति को शरीर के भीतर ग्रहण करने और उससे लाभ उठाने के लिए उसे तालयुक्त रूप में अथवा नियमित गति के साथ ग्रहण करना आवश्यक है। अपने कथन की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा है—

"विश्व के समस्त पदार्थ स्फुरण या कम्प (विवरेशन) की स्थिति में रहते हैं। छोटे से छोटे परमाणु से लेकर बड़े से बड़े सूर्य तक भी स्फुरण की दशा में है। प्रकृति में कोई भी वस्तु स्थिर नहीं है। यदि एक परमाणु भी कम्परहित हो जाय तो सारी सृष्टि नष्ट हो सकती है। अनवरत् स्फुरण से ही विश्व का कार्य संचालन हो रहा है। द्रव्य के ऊपर शक्ति का प्रभाव पड़ता है, जिससे अगणित रूप और असंख्यों भेद उत्पन्न होते हैं। परन्तु यह भेद और रूप नित्य नहीं है, परन्तु इनका मूल जो एक महान् सत्य है, वह अपरिवर्तनीय और नित्य अवश्य है।

"मानव शरीर के परमाणुओं में भी अनवरत् स्फुरण होता रहता है। सदैव अनन्त परिवर्तन हुआ करते हैं। जिन परमाणुओं से यह शरीर बना है, उनमें थोड़े ही दिनों में परिवर्तन हो जाता है। आज जिन परमाणुओं से हमारी देह बनी है, कुछ महीनों या वर्षों बाद उनमें से शायद एक भी शेष नहीं रहेगा। बस स्फुरण लगातार स्फुरण, परिवर्तन लगातार परिवर्तन यह ब्रह्माण्ड और पिण्ड दोनों का नियम है।"

"वे सब स्फुरण एक तालयुक्त गति-से होते हैं। यह लाल समस्त विश्व में व्याप्त है। ग्रहों के सूर्य के गिर्द घूमने, समुद्र में ज्वार और भाटा आने, हृदय के धड़कने—सब में तालयुक्त गति का नियम पाया जाता है। हमारा शरीर भी ताल के नियम का वशवर्ती है। श्वांसविज्ञान का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तत्व अधिकांश में प्रकृति के इसी विषय पर आधारित है। यदि हम श्वांस-प्रश्वांस की गति में तालयुक्त स्थिति रख सकें तो अपेक्षाकृत अधिक प्राण-तत्व आकर्षित कर सकते हैं और असाधारण लाभ उठा सकते हैं।"

यदि विचार किया जाय तो हम प्राण या जीवनी-शक्ति के समुद्र में पड़े हुए हैं और प्राकृतिक नियमों के अनुसार चलकर इस महासमुद्र में से कितना भी प्राण ग्रहण कर सकते हैं। तालयुक्त क्रिया में बहुत अधिक शक्ति होती है और उससे बड़े-बड़े कार्य सहज में सिद्ध हो सकते हैं। वर्तमान समय में अधिकांश मनुष्य ने अपना जीवन ऐसा व्यस्त, कृत्रिम और प्रकृति विरुद्ध बना रखा है कि वे इस ताल-युक्त गति से विचलित हो जाते हैं और इसके फलस्वरूप तरह-तरह की असुविधाओं, आधि-व्याधि को भोगते रहते हैं।

इसी तालयुक्त श्वांस-प्रश्वांस की स्वाभाविक क्रिया के अभ्यास को 'प्राणायाम' कहते हैं। सच पूछा जाय तो जैसा अनेक लोगों का ख्याल है प्राणायाम के लिए श्वाँस को बहुत लम्बा खींचना अथवा देर तक भीतर रोके रखना अति लाभदायक नहीं है। प्राभावशाली विधि यही है कि हमारी सांस लगातार एक ही गति से—तालयुक्त चलती रहे। श्वांस-विज्ञान के ज्ञाताओं ने निश्चय किया है कि प्रत्येक मनुष्य २४ घण्टे में २१ हजार ६०० बार श्वांस लेता है। इस हिसाब से हम एक घण्टे में ६०० और एक मिनट में १५ बार श्वांस लेते हैं और निकालते हैं। पर काम-काज की व्यस्तता और तरह-तरह के मानसिक आवेशों के कारण इसकी गति चाहे जब बढ़ जाती है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में बतलाया है कि "मैथुन के समय श्वांस की गति सबसे अधिक बढ़ती है, अतः जो मैथुन में आसक्त रहते हैं, वे अपनी आयु को घटा लेते हैं।"

'प्राणायाम' करने की सबसे सरल विधि—

इस प्रकार श्वांस-प्रश्वांस की गति को तालयुक्त अथवा नियमित करना ही वास्तव में 'प्राणायाम' का लक्ष्य है। जो लोग आधुनिक सभ्यता से दूर बहुत छोटे गाँवों या जंगलों में रहते हैं और अनावश्यक आवेशों से बचे रहकर प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते रहते हैं, उनकी श्वांस प्रायः नियमित रूप से ही चला करती है और इससे वे अधिकांश में स्वस्थ भी रहते हैं। पर बड़े शहरों के निवासियों को प्रायः भाग-दौड़ की जिन्दगी बितानी पड़ती है और तरह-तरह के आवेशों के अवसर भी अक्सर आते रहते हैं इसलिए उनकी श्वांस-गति में अन्तर पड़ता रहता है। ऐसे लोग यदि दिन प्रतिदिन एकाध घण्टा आसन पर सीधे बैठकर माला के द्वारा अथवा गिनती गिनकर श्वांस-प्रश्वांस की गति को नियमित करने का अभ्यास करें तो श्वांस लेने की अनियमितता घट जायेगी और इसका सुपरिणाम उनके शरीर और स्वास्थ्य पर पड़ने लगेगा।

हठयोग के आचार्यों ने इसी श्वांस-प्रश्वांस को अनेक प्रकार से" खींचने-रोकने तथा बाहर निकालने की विधियाँ ढूँढ़कर ६० प्रकार के 'प्राणायामों' का एक विशाल ढाँचा तैयार कर दिया है। इन सबकी बारीकियों का समझना और उनको पूरा कर सकना सर्वसाधारण का काम नहीं है। यह सम्भव है कि उन विधियों में से अनेक भिन्न-भिन्न रोगों को मिटाने वाली तथा शारीरिक त्रुटियों की पूर्ति करने वाली हों, पर हम आधुनिक समाज में रहकर सामान्य जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्तियों के लिए इनकी सलाह नहीं दे सकते। उनके लिए वे एक तामाशे की तरह ही सिद्ध होंगी और यह भी असम्भव नहीं कि उनका उलटा-सीधा प्रयोग करके—विधि में किसी तरह की गलती करके छोटी या बड़ी हानि उठानी पड़े। इसीलिए यह कहावत प्रसिद्ध हो गई है कि "देखा-देखी साधै योग, छाजै काया बाढ़ै रोग।"

निस्सन्देह 'योग' एक महान् विज्ञान है और उससे असाधारण शक्तियाँ प्राप्त की जा सकती हैं पर वह उन्हीं के लिए सम्भव है, जो सांसारिक व्यवहार को त्यागकर किसी एकान्त स्थान में रहकर इसी कर्य के लिए जीवन को अर्पण कर दें। जो सामान्य लोगों के सामने इसकी लम्बी-चौड़ी चर्चा करते हैं अथवा जो लोग इधर-उधर की बातें सुनकर 'योगी' बनने की कल्पना करने लगते हैं, वे गलती करते हैं और उन्हें उसका हानिकारक परिणाम भी सहन करना पड़ता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम श्वांस-विज्ञान की शिक्षा को एक सामाजिक मनुष्य के लिए वहीं तक उपयोगी समझते हैं कि वह अपना नित्य-नैमित्तिक कार्य करते हुए थोड़ी देर के लिए एक प्रकार का 'श्वांस-व्यायाम' कर लें, जिससे श्वांस-यन्त्र की सफाई हो जाय और नियमित साँस लेने का अभ्यास स्थिर बना रहे। इसके लिए प्रातःकाल या सुविधा के किसी अन्य नियत समय पर सुखासन पर बैठकर एक घण्टा या आधा घण्टा 'ओउम' 'सोहं' या कोई अन्य जप माला लेकर करता रहे और उसके साथ इस बात का ध्यान रखे कि श्वांस एक नियमित गति से चलती रहे। कुछ विद्वानों के मतानुसार इसके लिए 'सोहं' का जप अधिक उपयुक्त है, क्योंकि साँस को भीतर खींचने में स्वभावतः 'सों-सों का-सा शब्द होता है और बाहर निकालने में हं हं की-सी ध्वनि होती जान पड़ती है। इसलिए यदि साँस खींचते समय 'सो' और बाहर निकालते समय 'हं' की भावना रखी जाय तो यह 'सोहं' के अजपा जाप का रूप ग्रहण कर लेता है। लगातार इस नियम के पालन से कुछ समय बाद जप के समय को छोड़कर अन्य समय भी यह भावना न्यूनाधिक परिणाम में बनी रहती है जिसका सुफल शरीर और मन को प्राप्त होना स्वाभाविक ही है।

श्वांस-व्यायाम के अन्य प्रयोग—

भारतीय योगशास्त्र में प्राणायाम की जो विधियाँ बतलाई गई हैं, वे समय के परिवर्तन के कारण बहुत बड़ी या कठिन साधना बन गई है। जिस समय पातंजल योग-सूत्रों की रचना हुई, उस समय से देशकाल में जमीन आसमान का अन्तर पड़ गया है। उस समय देश की जनसंख्या शायद दस-पाँच करोड़ होगी, जो आज अस्सी करोड़ पर जा पहुँची है। उस समय वन और जंगलों की बहुलता थी, जिससे वायु में प्राणवायु' (ऑक्सीजन) अधिक मात्रा में पाया जाता था और सामान्य व्यक्तियों को भी बिना प्रयास मिला करता था। उस समय आहार की प्रत्येक वस्तु शुद्ध मिलती थी और खान-पान तथा रहन-सहन की विधियाँ अत्यन्त सरल तथा प्रकृति के अनुकूल थीं। इसलिए लोगों में इतनी क्षमता थी कि वे प्राणायाम आदि क्रियाओं को सहज ही कर सकते थे और प्राण-तत्व को जो सब पदार्थों में पर्याप्त मात्रा में पाया जाता था, इच्छित मात्रा में आकर्षित कर सकते थे।

पर वर्तमान स्थिति इससे सर्वथा विपरीत हो गई है। आबादी के बेहद बढ़ जाने से वन-जंगल प्रायः सभी कट चुके हैं और बड़े-बड़े नगरों तथा कस्बों में जनसंख्या इतनी घनी बसी रहती है कि श्वांस के लिए शुद्ध वायु मिल सकना भी एक समस्या बन गया है। खाने-पीने की प्रत्येक चीज कृत्रिम, मिलावटी या स्वतत्व रहित मिलती है, जिसमें प्राणतत्व अत्यन्त न्यून पाया जाता है। ऐसी दशा में प्राणायाम का अभ्यास करने पर भी वायु-मण्डल के समीपस्थ वातावरण से यथेष्ट 'प्राण' प्राप्त कर सकना सम्भव नहीं होता। इसलिए यहाँ पर हम प्राचीन प्राणायाम-विधियों के बजाय श्वांस-व्यायाम के कुछ ऐसे अभ्यास देते हैं, जिनको आसानी से बिना किसी खतरे के किया जा सकता है और शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत लाभ उठाया जा सकता है।

प्राणाकर्षण के अभ्यास—

जिन लोगों ने पहले कभी प्राणायाम के लिए प्रयत्न न किया हो, उनके लिए सबसे सरल विधि यह है कि प्रातःकाल शौच स्नान आदि नित्य-कर्मों से निवृत्त होकर सुखासन पर ध्यान की अवस्था में नेत्र बन्द करके बैठ जायें और सब प्रकार के विचारों को त्यागकर यह कल्पना करें कि हम प्राणों के महासमुद्र के बीच बैठे हैं। श्वेत बादलों के रूप में प्राणतत्व हमारे चारों ओर सर्वत्र व्याप्त हैं और समुद्र की लहरों की तरह उफन रहा है।

अब नाक के दोनों नथुनों से अपनी स्वाभाविक गति से साँस भीतर खींचिये और यह भावना करते जाइये कि प्राण-प्रवाह हमारे आस-पास उपस्थित है, वह साँस के द्वारा भीतर जा रहा है और अगंप्रत्यंग में व्याप्त हो रहा है। साँस को सुविधापूर्वक थोड़ी देर तक रोके रहिये और उसके पश्चात् धीरे-धीरे बाहर निकाल दीजिये। जैसा हम अन्यत्र बतला आये हैं, श्वांस को बहुत लम्बी-खींचने या ज्यादा देर तक रोकने की चेष्टा कभी नहीं करनी चाहिये। इस समस्त क्रिया को इस प्रकार करना चाहिए कि वह स्वाभाविक जान पड़े तथा शरीर और मन पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसी प्रकार का भार न मालूम हो। जो लोग ज्यादा रोकने की कोशिश करते हैं, उनकी श्वांस बाद में बहुत जल्दी बाहर निकल जाती है। यह स्थिति अलाभकर है। साँस के निकलने में उतना समय अवश्य लगाना चाहिये, जितना भीतर खींचने में लगाया गया था।

यह क्रिया पाँच-सात दफे उतनी ही करनी चाहिए, जिससे कोई थकावट या भार प्रतीत न हो। अभ्यास होते-होते अगर पन्द्रह-बीस बार तक बढ़ जाय तो ठीक ही है। इसमें पन्द्रह मिनिट से आधा घण्टा तक का समय लगाना पर्याप्त होता है। इतनी देर प्रतिदिन नियमित रूप से प्राणाकर्षण क्रिया कर लेने से स्वास्थ्य पर अद्‌भुत प्रभाव पड़ता है और अपने भीतर एक नवीन शक्ति का अनुभव होने लगता है।

'नाड़ी-शोधन' का अभ्यास—

इस अभ्यास को करते समय आसन पर बैठकर पहले दाँया नथुना अंगुली से बन्द करके श्वाँस खींचा जाय। श्वाँस इतनी हो कि वह केवल फेफड़े तक ही नहीं रह जाय वरन् उससे पेट भी कुछ फूल जाय। फिर उसको बिना रोके धीरे-धीरे बाहर निकाल दिया जाय। ऐसा तीन बार करके फिर बाँये नथुने को बन्द करके दाँये से इसी प्रकार तीन बार श्वांस खींची और निकाली जाय। अन्त में दोनों नथुनों से एक साथ एक बार खींचकर मुख से बाहर निकाल दी जाय। इस क्रिया में बिना किसी प्रकार का भार अनुभव किये सुविधापूर्वक जितना हो सके अधिक श्वांस भीतर ले जानी चाहिये, जिससे वह नाड़ियों को अधिक परिमाण में प्रभावित कर सके और उसके भीतर जमा मलांश पिघलकर साँस के साथ बाहर निकल जाय। इस अभ्यास के नियमित रूप से करने से शरीर का भारीपन मिटकर भीतरी भाग के शुद्ध और हलका होने का अनुभव होने लगता है। इससे नाड़ियों की सफाई होकर रक्त का दौरा अधिक आसानी से होने लगता है और स्वास्थ्य में सुधार के चिन्ह प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ने लगते हैं।

यह अभ्यास आसन पर बैठकर ही नहीं वरन् टहलते अथवा लेटे हुए भी किया जा सकता है। अधिक परिमाण में श्वाँस को भीतर खींचकर उसी गति से बाहर निकालने से शोधन-क्रिया में सहायता मिलती है। इसमें भी तालयुक्त गति का भाव रखा जाय। अर्थात् श्वाँस को भीतर खींचने और निकालने का समय प्रत्येक बार में समान रखने की चेष्टा की जाय, जिससे धीरे-धीरे एक संगीत की-सी भावना पैदा होने लगे। इस उपाय से मन के भीतर एक तन्मयता का भाव उत्पन्न हो जाता है और इस प्रकार साधारण श्वाँस लेने की अपेक्षा बहुत अधिक लाभ होने लगता है। यदि आरम्भ में अपने आप श्वाँस खींचने और निकालने में एकरूपता न आ सके तो गिनती गिनते हुए पाँच-छः तक श्वाँस खींचना और उतनी ही देर तक निकालना चाहिए। धीरे-धीरे यह समय आठ दस संख्या तक बढ़ाया जा सकता है। यह गिनती सामान्य गति से ध्यान द्वारा ही गिननी चाहिए, मुँह से बोलने की आवश्यकता नहीं। इस प्रयोग से श्वाँस के खीचने और निकालने का समय सहज में बराबर हो सकता है।

प्राणायाम से आध्यात्मिक उन्नति—

ऊपर 'श्वाँस-अभ्यास' की जो विधियाँ बतलाई गई हैं, उनका उद्देश्य मुख्यतः शरीर को निर्मल स्वच्छ और स्वस्थ बनाना है, जिससे हमारा अन्नमय शरीर सुदृढ़, सशक्त और कार्यक्षम बना रहे। पर शरीर और मन का अविच्छिन्न सम्बन्ध है, एक का प्रभाव दूसरे पर अवश्य पड़ता है। जिस प्रकार अनेक शारीरिक रोग मानसिक चिन्ता, कुण्ठा और दुर्भावनाओं से उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार शरीर के अस्वस्थ, पीड़ित कष्ट से ग्रसित बने रहने का कुप्रभाव मन पर पड़ता है और उस अवस्था में उसके द्वारा श्रेष्ठ और शुभचिन्तन हो सकना कठिन हो जाता है। इसलिए जब हम उत्तम आरोग्य की अवस्था में रहते हैं, शरीर में शक्ति का अनुभव करते हैं तो उस समय हमारा मन भी उत्साह, उल्लासपूर्ण और सुखी रहता है। उसी दशा में हम उसके द्वारा धार्मिक, आध्यात्मिक, पारलौकिक विषयों का भली प्रकार चिन्तन कर सकते हैं और इस दृष्टि से किसी प्रकार की महत्वपूर्ण प्रगति करने में समर्थ हो सकते हैं।

जैसा अनेक पाठक जानते होंगे यह मानव शरीर जो आँखों से दिखलाई पड़ता है 'स्थूल-शरीर' या 'अन्नमय शरीर' कहा जाता है। यद्यपि सामान्य मनुष्य इसी को सब कुछ समझते हैं, जीवन और मरण का आधार भी इसी को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानते हैं, पर वास्तविक बात ऐसी नहीं है। यह शरीर जड़ पदार्थ है और जब तक इसे भीतर रहने वाले 'सूक्ष्म शरीर' का सहयोग नहीं मिलता तब तक यह कुछ भी करने में समर्थ नहीं होता। इस सूक्ष्म शरीर में ही प्राणों का अवस्थान रहता है, इसलिए उसे प्राणमय शरीर भी कहते हैं। यह प्राणमय शरीर मस्तिष्क के द्वारा समस्त शारीरिक अंगों का संचालन करता है, समस्त ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों का नियन्त्रण भी इसी के द्वारा होता है। जब तक यह यथास्थान और सक्रिय रहता है तभी तक 'अन्नमय शरीर' भी कार्यक्षम और जीवित रहता है इसकी स्थिति में व्यक्रिम आ जाने से या निष्क्रिय हो जाने पर हमारा भौतिक देह भी क्रिया-शून्य हो जाती है और तब उसकी गिनती मृत अथवा जड़ पदार्थों में होने लगती है। इसी दृष्टि से सामान्य बोल-चाल की भाषा में मृत व्यक्ति के शव को 'मिट्टी' कहा जाता है।

'प्राण का स्वरूप और शरीर में उसका स्थान'—

आध्यात्म-विज्ञान के अनुसार मनुष्य का अन्नमय शरीर दो प्रकार के जीवाणुओं से मिलकर बनता है और इसलिए उसमें प्राण भी दो प्रकार का रहता है—एक स्त्री-प्राण और दूसरा पुरुष-प्राण। स्त्री-प्राण को बाँये अंग में और पुरुष-प्राण को दाहिने अंग में अवस्थित बतलाया जाता है। धर्म-ग्रन्थों में भगवान् के दो भाग होकर नर और नारी की उत्पत्ति की कल्पना का आधार यह दो प्रकार के प्राणों का एक देह में पाया जाना ही है। पश्चिमीय धर्मों में भी 'आदम' के दो हिस्से करके नारी के आविर्भाव की कथा प्रसिद्ध है। इसका सारांश यही है कि मानव-जीवन का संचालक प्राण-तत्व दो विभिन्न धाराओं में, जिनको 'योगशास्त्र' में इडा और पिंगला की गति तथा 'स्वर-शास्त्र' में चन्द्र-स्वर और सूर्य स्वर कहा गया है, विभक्त है। जिस तरह बिजली की गरम और ठण्डी, पोजेटिव' और 'नेगेटिव' धाराओं के संयोग से क्रियाशीलता उत्पन्न होती है, उसी प्रकार मानव देह स्थिति इन दो प्रकार का प्राणाधाराओं का सम्मिलन ही मनुष्य की कार्यक्षमता को विकसित करता और बढ़ता है।

बाँये और दायें अंग में अवस्थित ये दोनों प्रकार के प्राण सदैव सम्मिलित होकर कार्य करते हुए भी श्वाँस-अभ्यासियों द्वारा पृथक्-पृथक् पहिचाने जा सकते हैं और इसी के आधार पर बाँये और दाँये नथुने से लिए जाने वाले श्वाँस का पृथक्-पृथक् प्रभाव वर्णित किया गया है। जब तक शरीर में इन दोनों का विधिपूर्वक सम्मिलन स्थिर रहता है, तभी तक जीवन भी प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ता है, इसका संतुलन बिगड़ जाने से प्राणतत्व जड़ रूप हो जाता है और उस अवस्था में शरीर को 'मृत' घोषित कर दिया जाता है क्योंकि जैसा ऊपर कहा जा चुका है, वैसे तो प्राण-तत्व सर्वव्यापी हैं, विश्व का बड़े से बड़ा पिण्ड और छोटे से छोटा अणु भी उससे खाली नहीं है, पर उसमें चैतन्ययुक्त क्रियाशीलता विशेष अवस्थाओं में ही दृष्टिगोचर होती है। मानव देह और मस्तिष्क के निर्माण में प्रकृति ने अपनी पूर्ण योग्यता खर्च कर दी है और इसलिए उसे ऐसी क्षमता प्राप्त हो सकी है, जिससे वह प्राणशक्ति का बहुत अधिक उपयोग करके महान् तत्वों का अन्वेषण और अत्यन्त जटिल कार्यों का सम्पादन कर सकने में समर्थ हो गया है।

वर्तमान समय में 'प्राण-शक्ति' की प्रेरणा से मनुष्य ने जो रेल तार, वायुयान, रेडियो, टेलीविजन आदि आविष्कार किये हैं, वे ही मानव-मस्तिष्क की उत्कृष्टता के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। फिर हमारे 'योगशास्त्र के अनुसार तो प्राणमय शरीर में ऐसी-ऐसी शक्तियाँ निहित हैं, जिनको जागृत करके उपयोग में लाया जाए तो मनुष्य उन कामों को भी करके दिखा सकता है, जो अभी तक असम्भव माने जाते हैं। चाहे योगशास्त्र में वर्णित आठों सिद्धियों की बातें सामान्यतः अतिरंजित मानी जायें, पर इसमें सन्देह नहीं कि अभी तक जो अद्भुत समझे जाने वाले कार्य वैज्ञानिक आविष्कारकों ने किए हैं, प्राणशक्ति के पूर्णज्ञाता और अभ्यासी उससे कहीं बढ़कर चमत्कार दिखला सकते हैं। यद्यपि इस समय इस विद्या का प्रायः लोप हो चुका है और भौतिकता की लहर के कारण सुयोग्य व्यक्तियों ने इस तरफ ध्यान देना बन्द कर दिया है, तो भी उसके जो कुछ बचे-खुचे अवशेष पाये जाते हैं, उनके अद्भुत कार्यों को देखकर भी भौतिक विज्ञान वालों को निरुत्तर हो जाना पड़ता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'योगशास्त्र' के अनुसार मानव देह के पृष्ठवश के भीतर 'सुषुम्ना' नाम्नी एक अत्यन्त सूक्ष्म नाड़ी का अवस्थान है, जिसका मुख्य कार्य प्राण को प्रवाहित करना और उसकी गति को शारीरिक आवश्यकताओं के अनुसार नियमित करना है। पृष्ठवंश की दोनों बगलों में बहुत-से सूक्ष्म छिद्र हैं, जिनमें होकर सुषुम्ना की शाखायें बाहर निकली हैं और फिर उनकी प्रशाखायें समस्त देह में फैली हुई हैं। पृष्ठवंश के ऊपरी भाग में सुषुम्ना विस्तृत रूप में फैली हुयी है जिसको 'सहस्रार' अथवा 'ब्रह्माण्ड' कहते हैं। भौतिक विज्ञान के अनुसार यही मस्तिष्क या दिमाग कहा जाता है। इस 'हस्रार' से अनगिनती तन्तु निकलकर समस्त इन्द्रियों तथा शारीरिक अङ्गों तक फैले हुए हैं। ये समस्त अंगों को विविधि प्रकार की क्रियाओं के आदेश देते रहते हैं और साथ ही बाहर से प्राणतत्व को आकर्षित करके प्राणमय शरीर को पुष्ट भी करते हैं।

इस प्रकार मानव देह में सर्वत्र फैली हुई सुषुम्ना की उपमा 'योगशास्त्र' में ऐक ऐसे अश्वत्थ वृक्ष से दी गई है, जिसकी जड़ ऊपर की तरफ मस्तिष्क में है और जिसकी शाखा, प्रशाखायें, पत्ते नीचे की ओर पैरों के अँगूठों तक विस्तृत हैं। इसी सुषुम्ना से दाँये और बायें जो प्रधान जड़ें निकली हैं, उन्हीं को इडा और पिंगला कहा जाता है और वे ही दोनों ओर के अंगों में प्राण प्रवाह को स्थिर रखने में सहायक होती हैं। सुषुम्ना की मूल नाड़ियाँ से ही अन्य नाड़ियाँ निकलकर हृदय, आमाशय, यकृत, फेफड़ा आदि प्रधान अंगों तक फैली हैं और उनको कार्यक्षम बनाये रखती हैं। सुषुम्ना' की कार्य प्रणाली किस प्रकार 'प्राणमय-शरीर को पुष्ट और क्रियाशील बनाती है इसके लिये निम्न उद्धरण इस जटिल विषय को स्पष्टतापूर्वक समझने में सहायक होगा।

"पृथ्वी के ऊपर स्थित जल राशि या वर्षा का पानी जिस प्रकार जमीन के भीतर जाकर फिर सोतों के रूप में प्रकट होता है अथवा जैसे वृक्ष की जड़ द्वारा सोखा हुआ रस वृक्ष के ऊपरी भाग में खींचा जाता है और वह पत्र, पुष्प फल के रूप में परिणति हो जाता है, उसी प्रकार ज्ञानेन्द्रियों तक फैली हुई शाखाओं द्वारा 'सुषुम्ना' जो प्राणतत्व बाहर से आकर्षित करती है वह पहले तो प्राणमय शरीर में पहुँचकर उसे पुष्ट बनाता है और फिर वहाँ से लौटकर कर्मेन्द्रियों द्वारा प्रकट होकर बाहर निकल जाता है। बाह्यप्राण का प्राणमय शरीर द्वारा आकर्षण और फिर कर्मेन्द्रियों के मार्ग से उसका बाहर चला जाना ही प्राण की अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी गति अथवा 'प्राण-प्रवाह' कहा जाता है।

यद्यपि मुख-मण्डल में ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के आस-पास रहने से प्राण की अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी गति एक ही जान पड़ती है, पर वास्तव में ऐसा नहीं होता। अन्तर्मुखी प्रवाह पहले सुषम्ना में जाता है और वहाँ से अपनी निर्दिष्ट नाड़ी द्वारा उसका बाहर निकल सकना सम्भव होता है। शरीर में एक भी ऐसी नाड़ी नहीं है, जो अकेली प्राणों को दोनों प्रकार का प्रवाह कर सकती हो। प्रत्येक नाड़ी दोनों में से एक विशेष प्रवाह के लिए निर्दिष्ट होती है। इन नाड़ियों में से अधिकांश बाल से भी सूक्ष्म होती है और इस कारण एक ही स्थान पर परस्पर मिली हुई अभिन्न जान पड़ती हैं तो भी प्रत्येक अपना काम स्वतन्त्र रूप से करती रहती हैं।"

हमारी सभी शारीरिक महत्वपूर्ण क्रियाएँ इसी 'बहिर्गत-प्राण' द्वारा सम्पन्न होती है। बाहर से जो प्राण ग्रहण किया जाता है, उसका सार भाग तो 'प्राणमय शरीर' में रक्षित रहता है और शेष भाग बाहर निकाल दिया जाता है। इस निकाले हुये प्राण को इडा और पिंगला नाड़िया उपयोगी बनाकर अन्नमय शरीर की विविध क्रियाओं को सम्पन्न कराती हैं। इस प्रकार जिस-जिस क्रिया में जो प्राण काम में लाया जाता है, उसका वैसा ही नाम रख दिया गया है। 'योगशास्त्र' में प्राण, अपान, सामान, उदान, व्यान, नाग, कृकर, धनंजय, कुर्म्म और देवदत्त के नाम से जिन दस प्रकार के 'प्राण-वायु' का वर्णन किया गया है, वे इसी बहिर्गत' प्राण के विविध रूप होते हैं। इन्हीं के द्वारा मलाशय से मल-त्याग, गुर्दों से मूत्र निकालना, मुख, आमाशय चर्म आदि से लार पित्त, पसीना, निकलना, हाथ, पाँव, कटि, जिह्वा, नेत्र आदि अंगों का प्रसारण और आकर्षण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राग-द्वेष व्यंजक शब्दों का मुख से उच्चारण आदि सभी क्रियाएँ साधित होती रहती हैं।

श्वांस व्यायाम का आध्यात्मिक प्रभाव—

इतना ही नहीं यही प्राण' हमारी मानसिक वृत्तियों पर भी प्रभाव डालता है और हमारे स्वभाव को भली या बुरी दिशा में मोड़ता है। कितने ही लोगों को सन्देह होता है कि कोई शारीरिक क्रिया मानसिक और आध्यात्मिक विषयों को कैसे प्रभावित कर सकती है ? हमारे यहाँ तो स्पष्ट कहा गया है—"जैसा खाये अन्न, वैसा बने मन।" भौतिक पदार्थों और क्रियाओं का मानसिक क्षेत्र पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। फिर प्राणतत्व तो शरीर का संचालनकर्ता है, उसके उत्कृष्ट या निकृष्ट होने का प्रभाव मन, बुद्धि और आत्मा पर न पड़े यह असम्भव है।

'प्राणायाम' या श्वांस अभ्यास का प्रभाव मानसिक स्थिति पर कैसे पड़ता है ? इसका वैज्ञानिक दृष्टि से भी विचार किया गया है। योगशास्त्र के अनुसार शरीर के अन्दर कितनी ही ग्रन्थियाँ और चक्र हैं, जो मानसिक और आध्यात्मिक विकास में निमित्त रूप होते हैं। हठयोग के आचार्यों ने तो केवल चक्रों की साधना करके कुण्डलिनी तक शक्ति को मस्तक पहुँचा देने से मुक्ति का होना निश्चित बतलाया है। अब वैज्ञानिकों ने भी शरीर में महत्वपूर्ण ग्रन्थियों का होना और शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों के पोषण करने वाले रसों का निकलना मान लिया है। इन ग्रन्थियों को अंग्रेजी में 'एण्डोक्राइन ग्लेण्डस' कहते हैं। इन दिनों योरोप, अमेरिका, में ऐसे वैज्ञानिकों का दल पैदा हुआ है, जो इन "ग्लैण्ड्स" का विशेष रूप से अध्ययन किया करते हैं और उन्होंने 'एण्डोक्रोनोलौजी' नाम से विज्ञान की नवीन शाखा का उद्भव किया है। इन लोगों की मान्यता है कि 'एण्डोक्राइन ग्लैंडस' केवल शरीर पर ही असर नहीं डालती वरन् मनुष्य की मानसिक वृत्तियों को भी बहुत अधिक में प्रभावित करती है। उनका कहना है कि भविष्य हम इन 'एण्डोक्राइन-ग्लैण्डस' का इलाज करके दुष्ट लोगों को पूर्ण सज्जन बना देंगे। अन्य वैज्ञानिक अभी इस मान्यता से पूरी तरह सहमत नहीं हुए हैं तो भी वे इससे इन्कार नहीं करते कि इन ग्रन्थियों का प्रभाव वास्तविक रूप में मानसिक स्थिति पर पड़ता है।

भारतीय योग-विज्ञान के प्रचारक कुवलयानन्द की सम्मति है कि शरीर-स्थिति कुछ खास ग्रन्थियाँ (ज्ञान-तन्तुओं के केन्द्र) मनुष्य की मन:स्थिति पर काफी प्रभाव डालते हैं। इन ज्ञानतन्तु-केन्द्रों को अभ्यास द्वारा बहुत अधिक कार्यक्षम बनाया जा सकता है और उनमें असाधारण शक्ति का अनुभव किया जा सकता है। 'प्राणायाम' अथवा श्वांस-व्यायाम के अभ्यास द्वारा भी इन केन्द्रों को बहुत अंशों में प्रभावित किया जा सकता है और पर्याप्त आध्यात्मिक उन्नति की जा सकती है।

श्वांस-व्यायाम करते समय मेरुदण्ड पर काफी दबाब पड़ता है, जिससे वह नीचे से लेकर सब के ऊपर के अंश तक खूब तन जाता है। इसमें समस्त स्नायुविक-प्रणाली को बल मिलता है और वह विकसित होती है। इससे छाती और पेट में स्थित रस-ग्रन्थियों पर भी बड़ा हितकर प्रभाव पड़ता है और समस्त शरीर की स्नायुविक प्रणाली की उन्नति होती है।

हमको यह भी अनुभव होता है कि प्राणायाम के अभ्यास से मेरुदण्ड में स्थिति ज्ञान प्रवाहिनी नाड़ियों और मस्तिष्क के रिक्त कोषों पर भी ऐसा हितकर दबाब पड़ता है, जिससे समस्त स्नायुविक प्रणाली विशेष रूप से सशक्त और विकसित बनती है। इस आन्तरिक और बाह्य शक्ति-वर्धन से मनुष्य की चेतना अन्तर्मुखी होने लगती है और उसको प्रज्ञा अज्ञात प्रदेशों में प्रवेश करने लगती है। इस प्रकार से एक बढ़कर एक सूक्ष्म-जगतों का उससे ज्ञान प्राप्त होने लगता है। यहाँ तक कि हमारी व्यक्तिगत चेतना विश्वव्यापी समष्टि चेतना से ऐक्य-भाव का अनुभव करने लगती है।

श्वांस प्रणाली के सुधार से होने वाले विविध लाभ

जब हम नियमित श्वांस-व्यायाम द्वारा फेफड़ों की उन्नति कर लेते हैं और नाक द्वारा खींची हुई ऑक्सीजन मिश्रित शुद्ध समस्त फेफड़े में भरकर मलांश दग्ध करके बाहर निकाल देती है, तो स्वास्थ्य पर उसका सुप्रभाव स्पष्ट दिखलाई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पड़ने लगता है। इस प्रकार अभ्यास करने वाला व्यक्ति सर्दी, जुकाम, खाँसी जैसे फेफड़े रोगों की तरफ से तो आरम्भ में ही निर्भय हो जाता है। धीरे-धीरे फेफड़ों की शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि क्षय अथवा तपेदिक जैसे घातक रोगों को आशङ्का भी पूर्णत: निर्मूल हो जाती है। जापान की डा. शेराबुज का अनुभव इस सम्बन्ध में बड़ा प्रेरणाप्रद है। वे बचपन में ही फेफड़ों की कमजोरी तथा क्षयरोग के आक्रान्त हो गये थे और बड़े-बड़े डाक्टरों ने उनके दो-तीन साल में मृत्युमुख में चले जाने की घोषणा कर दी थी। पर उसी समय उन्होंने किसी भाषण में श्वांस-व्यायाम के सम्बन्ध में सुना और तदनुसार वे उसका अभ्यास करने लग गये। इस तरह सही साँस लेने के प्रभाव से उनके फेफड़ों का सुधार होने लग गया और दो-तीन वर्ष में तो वे इतने स्वस्थ हो गये कि उनकी मृत्यु की 'भविष्यवाणी' करने वाले डाक्टर आश्चर्यचकित रह गये। इसके पश्चात् डा. शेराबुज बहुत दीर्घ आयु तक जीवित रहे और उन्होंने जापान में 'प्राणायाम' का बहुत प्रचार किया।

इस परिवर्तन का कारण यही है कि अधूरी साँस लेने से वह फेफड़ों के सब भागों में नहीं पहुँचती, इससे उनके बहुसंख्यक वायु-कोष्ठ खाली अथवा दबे-दबे रह जाते हैं। ऐसे निष्क्रिय भाग अवसर मिलते ही शरीर में उत्पन्न होने वाले रोगाणुओं के अड्डे बन जाते हैं। यदि हम पूरी और गहरी साँस लेने का अभ्यास करें तो प्राणप्रद वायु उन सभी कोष्ठों में पहुँचकर रोगाणुओं को नष्ट करके फिर से स्वस्थ स्थिति उत्पन्न कर सकती है। इसकी व्याख्या करते हुए एक स्वास्थ-विज्ञान ज्ञाता ने लिखा है—

"क्षयी रोग वाले मनुष्य प्राय: सब संकीर्ण छाती के होते हैं। इसका क्या अर्थ है ? उसका अर्थ केवल यही है कि ये मनुष्य अनुचित रीति से साँस लेने की आदत में पड़ गये थे और इसलिए इनकी छाती न तो विकसित हो सकी और न फैल सकी। जो मनुष्य पूरी साँस का अभ्यास रखता है, उसकी पूरी चौड़ी छाती होती है। संकीर्ण छाती वाला मनुष्य भी यदि इस रीति से साँस लेने का अभ्यास करेगा तो उसकी छाती भी विकसित होकर स्वाभाविक विस्तार की पहुँच जायेगी। ऐसे मनुष्य यदि अपने जीवन का आदर करते हैं तो उनको अपने छाती के खोखले (पंजर) को विकसित करना चाहिए। जब कभी आपको मालूम हो कि आप सर्दी खा गये हैं, जुकाम होने की संभावना है तो खूब जोर से पूरी तरह सांस का अभ्यास करके जुकाम को रोक सकते हैं। यदि बहुत सर्दी खा गये हों तो कुछ मिनट तक खूब अच्छी तरह पूरी साँस लीजिए, जिससे आपका शरीर तमतमा जायेगा। बहुत से जुकाम पूरी साँस और 'अधूरे-भोजन' (अर्द्ध-उपवास) द्वारा अच्छे किये जा सकते हैं।"

मनुष्य के जीवन का आधार रक्त बतलाया गया है, वह जितना ही शुद्ध और सशक्त होगा उतना ही बाह्य कुप्रभावों का मुकाबला करके स्वास्थ्य को स्थिर रख सकेगा। पर रक्त की शुद्धता 'ऑक्सीजन' पर निर्भर है। वायु में मिश्रित आक्सीजन ही वह तत्व है, जो रक्त में मिली गन्दगी को जलाकर उसे जीवनदायक बनाती है। पर यदि ठीक साँस न लेने के कारण रक्त अस्वच्छ ही रह गया तो वह उस गन्दगी को समस्त शरीर में और विशेषत: सन्धि और मर्म-स्थानों में इकट्टी कर देगा, जिससे तरह-तरह के रोगों के उत्पन्न होने और सामान्य दबे हुए दोषों के उभड़ने की पूरी सम्भावना हो जायेगी। इससे पाचन-क्रिया पर भी बहुत बुरा असर पड़ता है क्योंकि भोजन के पचने में भी ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है। पर जब रक्त में स्वयं ही इस तत्व की कमी होगी तो पाचन-यन्त्र भी निर्बल पड़ जायेंगे और वे भोजन को कम पचाकर शरीर को जीवनी शक्ति प्रदान करने में अक्षम सिद्ध होंगे।

अधूरी साँस का हानिकारक प्रभाव शरीर के नाड़ी-जाल पर भी पड़ता है, जिसके द्वारा समस्त शारीरिक क्रियाएँ और मानसिक शक्तियाँ काम किया करती हैं। इस सम्बन्ध में उपर्युक्त लेखक का कथन है कि "मस्तिष्क, मेरुदण्ड नाड़ी-केन्द्र और स्वयं नाड़ियाँ भी जब रुधिर द्वारा अपूर्ण पोषण पाती हैं, तब वे शक्ति की धाराओं को उत्पन्न करने और प्रवाहित करने का अयोग्य औजार बन जाती हैं और यदि प्रबल ऑक्सीजन फेफड़ों द्वारा ग्रहण न किया जायेगा तो वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अवश्य अपुष्ट रह जायेंगी। इस विषय का एक और भी पहलू यह है कि यदि उचित साँस न ली जायेगी तो नाड़ियों की शक्ति धारायें, बल्कि यों कहिये कि स्वयं वह शक्तियाँ, जिनसे कि धारायें उत्पन्न होती हैं क्षीण हो जाती हैं और वे अपनी-अपनी क्रियाओं को ठीक ढंग से कर सकने में असमर्थ होने लग जाती हैं।

इसके विपरीत जब हम पूरी साँस लेते हैं तो हमारा 'डायाफ्राम' (छाती और पेट को अलग करने वाली चद्दरनुमा झिल्ली) तनता और सिकुड़ता है। इस क्रिया से आमाशय और आस-पास के अन्य भीतरी अंगों पर हलका दबाव पड़ता है और उनकी मालिश की-सी क्रिया सम्पन्न होती है, जिससे वह सतेज और अधिक क्रियाशील हो उठते हैं। प्रत्येक गहरी सांस भीतरी अंगों की इस कसरत में सहायता पहुँचाती है और इससे वे अपने पाचन तथा मल त्याग के कार्यों में अधिक सक्षम बनते हैं। यह क्रियाएँ ही शरीर को उत्तम पोषण पहुँचाने तथा स्वच्छ और दोष रहित बनाने का मूल आधार है। जिस व्यक्ति को खाया हुआ भोजन ठीक तरह हजम होगा और जिसका मलाशय शुद्ध दशा में रहेगा, उसे किसी प्रकार का रोग होने की बहुत ही कम सम्भावना रहेगी। इसके विपरीत जो लोग अधूरी साँस लेगें, उनका 'डायफ्राम' तनने तथा सिकुड़ने की क्रिया न कर सकेगा और परिणामस्वरूप ये भीतरी अंग और जीवन-रस उत्पन्न करने वाली बड़ी ग्रन्थियाँ आदि निस्तेज और ढीलेपन से कार्य करने वाली बनी रहेंगी।

अधिकांश व्यक्ति व्यायाम का तात्पर्य दण्ड, बैठक, डम्बल, मुग्दर या 'ड्रल' जैसी बाहरी शारीरिक अंगों पर जोर डालने वाली कसरतों को ही समझते हैं। इससे माँसपेशियाँ सुदृढ़ और सुडौल बनती हैं और अधिक श्रम का काम करने में समर्थ होती हैं। यह अभ्यास अवश्य ही स्वास्थ्यवर्धक और लाभदायक है, पर प्रत्येक सामान्य स्थिति का व्यक्ति नित्य प्रति इतना अधिक व्यायाम करने का अवसर नहीं पाता, जिससे बाहरी के साथ भीतरी अंगों का भी उचित व्यायाम हो जाय। इसलिए सामान्य जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्तियों के लिए, जिनका अधिकांश समय अपने जीवन-निर्वाह के बौद्धिक या हलके श्रम का कार्य करने में व्यतीत होता है, भीतरी अंगों को स्वाभाविक स्थिति में रखने के निमित्त श्वांस-व्यायाम या प्राणायाम जैसी क्रिया दस-बीस मिनट कर लेना हितकारी है। यह निश्चित है कि शरीर के जिस किसी अंग का नियमित व्यायाम नहीं होगा, वह धीरे-धीरे निर्बल और बेकाम होता जायेगा और इसका हानिकारक प्रभाव सम्पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्य पर पड़ेगा। इस दृष्टि से पूरी और गहरी साँस लेने का अभ्यास करना और ऐसी आदत डालना कि वह हमारे रहन-सहन का एक स्वाभाविक अंग (अभ्यास) बन जाय, स्वास्थ्य वृद्धि की दृष्टि से अनिवार्य है।

श्वांस-व्यायाम के दो अभ्यास—

योगशास्त्र में वर्णित 'प्राणायाम' यद्यपि बहुत प्रभावशाली और लाभदायक क्रिया है, पर साधारण व्यक्ति उसके करने में प्रायः ऐसी भूलें असावधानी कर जाते हैं, जिससे उसका वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं होता। ऐसे लोगों को प्रायः किसी सुयोग्य शिक्षक से प्राणायाम की शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा तो मिलती नहीं, वे प्रायः इधर-उधर से सुनकर और पुस्तकों में पढ़कर ही इसमें संलग्न हो जाते हैं। आरम्भिक उत्साह में वे प्रायः श्वांस की अधिक से अधिक भीतर रोकने पर जोर देते हैं और इतना अधिक अभ्यास करने की कोशिश करते हैं, जिससे थकावट या क्लान्ति आ जाती है। यह अवस्था 'स्वास्थ्य सुधार' के विपरीत है। बाहरी या भीतरी कसरत सदैव उतनी ही हितकारी होती है, जिससे शरीर में स्फूर्ति और मन में प्रसन्नता बनी रहे। इस दृष्टि से श्वांस-अभ्यास की ये दो विधियाँ सर्वोपयोगी सिद्ध होंगी—

(१) सीधे खड़े होकर पूरी साँस खींचो और उसे रोके रखकर दोनों हाथों को उठाकर सामने की तरफ फैलाओ। तब दोनों मुट्ठियों को बाँधकर तथा माँसपेशियों को कड़ा करते हुए हाथों को कन्धों की तरफ खींचो। कन्धों के पास आते-आते मुट्ठियाँ इतनी कड़ी बँध जायें कि उनमें कँप-कँपी की गति आ जाय। तब माँसपेशियाँ को वैसा खड़े रखते हुए ही मुट्ठियों को धीरे से आगे ले जाओ और फिर तेजी से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कन्धों के पास लाओ। इस प्रकार कई बार किया जाय। यह क्रिया एक मिनट से भी कम समय में सात-आठ बार की जा सकती है इसके पश्चात् मुँह की राह से जोर से हवा निकाल दीजिये। ऐसा ही चार-पाँच बार कीजिए।

(२) पूरी साँस खींचकर हवा को कुछ सेकिन्ड तक भीतर रोको। इसके बाद ओठो को सीटी बजाने की सी दशा में करो और ओठों के छेद में होकर थोड़ी हवा जोर से बाहर फेंको। क्षण भर हवा को रोके रहो और फिर थोड़ी हवा उसी प्रकार निकालो। इसी तरह कई बार करके सब हवा बाहर निकाल दो। यह ध्यान रखना चाहिए कि ओठों को सीटी बजाने के-से-रूप में करते समय गाल न फूलें और हवा को जोर लगाकर निकाला जाय।

इन दोनों अभ्यासों में से प्रथम क्रिया शरीर के नाड़ी समूह को उत्तजित करने और शक्ति देने वाली है। नाड़ियों की शक्ति और कार्यशीलता से ही समस्त शरीर में रक्त का उचित संघालन होता है और सब अङ्गों को पोषण मिलता है। दूसरी क्रिया श्वांस यन्त्र को साफ करने वाली कही जाती है। यह किसी भी श्वांस-व्यायाम के बाद करनी चाहिए। जिससे ताजगी आ जाय। इस प्रथम क्रिया के बाद दूसरी क्रिया अवश्य करनी चाहिए। इस प्रकार ये दोनों क्रियायें अभ्यास और सुविधानुसार चार-पाँच से आठ-दस बार तक करने से एक समय का पूरा व्यायाम हो गया समझ लेना चाहिए।

यौगिक प्राणायाम की विधि—

यहाँ तक हमने श्वांस-प्रश्वांस के उन नियमों पर विचार किया है, जिससे उसे वायुमंडल से सही और स्वाभाविक तरीके से ग्रहण करके शरीर तथा मन को पूर्ण स्वस्थ रखा जा सके। पर भारतीय योगियों ने प्राणायाम की जो विधि बतलाई थी, उसमें साँस को एक विशेष नियम के अनुसार भीतर खींचने रोकने और बाहर निकालने का हिसाब रखा गया है। हमारे देश के अधिकांश शिक्षित और अशिक्षित व्यक्ति उसी को "प्राणायाम" के नाम से पुकारते हैं और उसके तीन मुख्य अंगों—(१) पूरक (२) कुम्भक और (३) रेचक का नाम भी जानते हैं। पर इन विधियों का ठीक अर्थ और स्वरूप थोड़े ही लोग समझते हैं, अन्यथा लोग छोटी-मोटी पुस्तकों या मूड़-मुड़ाये बाबा लोगों की उल्टी-सीधी बातें सुनकर ही इस विषय में कुछ स्पष्ट धारणा बना लेते हैं और उसका थोड़ा-सा अभ्यास करके जब कोई लाभ नहीं देखते तो निराश होकर उसे त्याग देते हैं। कुछ ना समझ और जल्दबाज लोग उल्टा-सीधा अभ्यास करके अपनी कुछ हानि भी कर लेते हैं।

"पातंजलि योगसूत्र" में चार प्रकार के प्राणायाम बतलाये गये हैं, जिनमें श्वांस को रोकने की विधि में कुछ-कुछ अन्तर रहता है। उदाहरणार्थ श्वांस को बाहर निकालने के पश्चात् कुछ देर तक वायु को भीतर जाने से जो रोका जाता है, उसे "बाह्य कुम्भक" कहते हैं। जब श्वांस को भीतर खींचकर रोका जाता है, उसे "अभ्यन्तर कुम्भक" कहते हैं। तीसरे और चौथे प्रकार के प्राणायामों को "केवल कुम्भक" कहते हैं। इसका अर्थ है कि श्वांस के आवागमन को कुछ समय तक बिना किसी चेष्टा के स्वमेव रुकी अवस्था में रहने दिया जाय। तीसरी और चौथी विधि में यह अन्तर है कि तीसरी में श्वांस-प्रश्वांस का रोकना एकाएक किया जाता है और चौथी में कईबार श्वांस को लेने और निकालने के पश्चात् "केवल कुम्भक" किया जाता है।

प्राणायाम की प्रत्येक विधि एक मिली-जुली क्रिया है, जिसके तीन अंग पूरक (श्वांस भीतर खींचना) कुम्भक (भीतर रोके रहना) और रेचक बाहर निकालना) होते हैं। इनको नापने की जो विधियों प्राचीन योग सम्बन्धी ग्रन्थों में मिलती है, उनसे प्रतीत होता है कि उनके रचयिताओं की दृष्टि में उपर्युक्त तीनों क्रियाओं को नियत समय का पालन करना बहुत महत्वपूर्ण था। यह तो सभी जानते हैं कि उस समय किसी के पास घड़ी नहीं होती थी और न घण्टा मिनट को जानने का अन्य कोई साधन था। इसलिये किसी शारीरिक क्रिया के करने में जितना समय लगता है, उसी का आधार लेकर वे समय का विभाजन करते थे। इस प्रकार के विभागों का नाम "मात्रा" रखा गया था। इसकी कुछ विधियाँ इस प्रकार बतलाई जाती थी—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१) आँख का पलक झपकने में जितना समय लगता है।

(२) एक छोटे स्वर के उच्चारण में जितना समय लगता है।

(३) अपने घुटने का छूने और साथ ही एक ताली बजाने में जितना समय लगता है।

(४) एक स्वाभाविक श्वांस-प्रश्वांस में जितना समय लगता है।

(५) ॐ का उच्चारण करने में जितना समय लगता है।

इनमें से जो विधि जिसकी समझ में आ सके, वह उसी के काम ले सकता है अथवा आजकल घड़ी का भी उपयोग किया जा सकता है, जिससे मिनिट और सैकिण्डों का हिसाब भी ठीक-ठाक मालूम पड़ता रहता है। इन समय सूचक मात्राओं के अनुसार प्रत्येक क्रिया का क्या अनुपात रहना चाहिए ? इस विषय में भी कई सम्मतियाँ सुनने में आती हैं। कुछ लोग १ : ४ : २ का अनुपात बतलाते हैं। अर्थात् यदि साँस को १५ सैकिण्ड तक खींचा जाय तो ६० सैकिण्ड तक रोका जाना और ३० सैकिण्ड तक निकाला जाना चाहिये। अन्य लोग १ : २ : २ का अनुपात ठीक समझते हैं और कुछ की सम्मति में पूरक, कुम्भक और रेचक तीनों बराबर समय तक किये जाने चाहिये। हमारे विचार से आरम्भ में ही वायु को भीतर अधिक रोकने की चेष्टा करना ठीक नहीं। इसलिये आरम्भिक अभ्यास वालों के लिये १५ सैकिण्ड सांस को भीतर खींचना ३० सैकिण्ड या आधी मिनट रोके रहना और ३० सेकिण्ड तक बाहर निकालना पर्याप्त है। फिर जैसे अभ्यास और अनुभव होता जाय उसी के अनुसार समय को धीरे-धीरे बढ़ाया जा सकता है। पर इस बात का सदा ध्यान रखा जाय कि श्वांस को बलपूर्वक भीतर रोकने की चेष्टा कभी न की जाय।

श्वांस व्यायाम के प्रचार की आवश्यकता—

अब श्वांस व्यायाम की आवश्यकता और उपयोगिता संसार के समस्त देशों में मान ली गई है और स्कूल के विद्यार्थियों को शारीरिक व्यायाम कराते समय सही साँस लेने के नियमों का भी ध्यान रखने को कहा जाता है। स्कूलों में इसे शारीरिक क्रिया में किया जाता है, पर मानसिक शक्ति वृद्धि का लाभ भी इससे विद्यार्थियों को मिलता ही है। इसलिए योरोप के अनेक देशों में श्वांस-व्यायाम शिक्षा को अनिवार्य बना दिया गया है और उस पर बहुत जोर दिया जाता है। अमरीका के प्राकृतिक चिकित्सकों ने भी प्रचार में बहुत सहयोग दिया है और अब वहाँ कितनी संस्थायें निजीतौर पर सर्वसाधारण को उसकी शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा प्रदान करती हैं। अब भारतवर्ष के अनेक स्कूलों में भी योग और विज्ञान की विधियों के अनुकूल श्वांस व्यायाम का प्रचार करने की चेष्टा की जा रही है और कुछ शिक्षक उसकी शिक्षा प्राप्त करके उसका प्रचार बढ़ाने का उद्योग कर रहे हैं। वास्तव में श्वांस लेने के सही तरीके का अभ्यास बाल्यावस्था से ही कराया जाना चाहिए, जिससे उसकी आदत पड़ जाय और बिना किसी कठिनाई के उसे स्वभावतः किया जा सके। बड़ी आयु में जब अन्य प्रकार का अभ्यास जमकर बैठ जाता है तो उसे बदलकर नये ढंग को आदत में ला सकना कठिन होता है। सही सांस लेने का नियम यद्यपि बहुत सरल है और जो लोग प्राकृतिक वातावरण में रहते हैं, वे उसका पालन भी करते हैं। पर जो लोग परिस्थितिवश उससे हट गये हैं और गलत तरीके से साँस लेकर अपने स्वास्थ्य की हानि करते रहते हैं, उनको इस सम्बन्ध में अवश्य सावधान और सचेत हो जाना चाहिए। उनको अवश्य ही 'प्राणायाम' की किसी सरल विधि का अभ्यास नियमित रूप से करके 'श्वांस-संस्थान' को सशक्त बनाना चाहिये। उत्तम स्वास्थ्य ही सुखी जीवन का मूल है और उसे प्राप्त करने के लिए सही तरीके से साँस लेना भी आवश्यक है।

आरोग्य वर्धक स्वर विज्ञान

भगवान ने मनुष्य-जन्म के समय से ही देह के साथ एक ऐसा आश्चर्यजनक अपूर्व उपाच रच दिया है, जिसे जान लेने पर प्रायः किसी भी सांसारिक विषय में असफलता का दुःख नहीं हो सकता। चूँकि अधिकांश मनुष्य इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपाय को नहीं जानते और न उससे लाभ उठाने का प्रयत्न करते हैं। इसी कारण अनेक कार्यों में उनको सफलता प्राप्त नहीं होती, इस विषय का विवेचन शास्त्र में किया गया है, उसे स्वरोदय शास्त्र कहते हैं। स्वर-शास्त्र प्रत्यक्ष फल देने वाला है। मुझे पद-पद पर इसका आश्चर्यजनक फल देखकर आश्चर्यचकित होना पड़ा है।

जीव के जन्म से मृत्यु के अन्तिम क्षण तक निरन्तर श्वांस-प्रश्वांस क्रिया होती रहती है और यह श्वांस नासिका के दोनों छेदों से एक ही समय एक साथ समान रूप से नहीं चला करता, कभी बाँये और कभी दाहिने पुट से चलता है। कभी-कभी एकाध घड़ी तक दोनों छेदों से समान भाव से भी श्वांस प्रवाहित होती है। बाँये नासापुट के श्वांस को "इड़ा" में चलना, दाहिनी ओर से चलने वाले श्वांस को पिंगला' में चलना चाहिए और दोनों पुट से समान भाव से चलने पर उसे सुषुम्ना में चलना कहते हैं। एक नासापुट को दबाकर दूसरे के द्वारा श्वांस को बाहर निकालने में साफ मालूम हो जाता है कि एक नासिका से सरलतापूर्वक श्वांस-प्रवाह चल रहा है और दूसरा नासापुट प्रायः बन्द है अर्थात् अन्य नासापुट के समान सरलता से श्वांस बाहर नहीं निकलता। जिस नासिका से सरलतापूर्वक श्वांस बाहर निकलता हो, उस समय उसी नासिका का श्वास कहना चाहिए। क्रमशः अभ्यास होने पर बहुत आसानी से मालूम हो जाता है कि किस नासिका से श्वांस प्रवाहित हो रही है ? यदि मनुष्य का स्वास्थ्य स्वाभाविक दशा में हो और रहन-सहन प्रकृति के अनुकूल हो तो प्रतिदिन प्रातः काल सूर्योदय के समय से ढाई-ढाई घड़ी के हिसाब से एक-एक नासापुट के क्रमानुसार श्वांस चलता है। इस प्रकार रात-दिन में बारह बार बायीं और बारह बार दाहिनी नासिका से श्वांस चलती है। इस श्वांस-प्रश्वांस का क्या प्रभाव होता है ? इस सम्बन्ध में शास्त्र में कहा गया है—

वहेत्तावद् घटी मध्ये पञ्चत्वानि निर्दिशेत

(स्वरशास्त्र)

प्रतिदिन रात-दिन साठ घड़ियों में ढाई-ढाई घड़ी के हिसाब से स्वर परिवर्तन होने से क्रमशः पंचतत्वों का उदय होता है। इस श्वांस-प्रश्वांस की गति को समझकर कार्य करने पर शरीर स्वस्थ रहता है और मनुष्य दीर्घजीवी होता है। फलस्वरूप समस्त सांसारिक कार्यों में सफलता मिलने के कारण सुखपूर्वक संसार-यात्रा पूरी होती है।

वाम नासिका का श्वांस फल

जिस समय इड़ा नाड़ी अर्थात् बांयी नासिका से श्वांस चलता हो उस समय स्थिर कर्मों को करना चाहिए, जैसे—अलंकार धारण, दूर की यात्रा, आश्रम में प्रवेश, मकान बनाना, द्रव्यादि धारण ग्रहण करना, तालाब, कुआँ जलाशय आदि की प्रतिष्ठा करना। बांयी नाक से श्वांस चलने के समय शुभ करने पर उन सब कार्यों में सिद्धि मिलती है।

दक्षिण नासिका का श्वांस फल

जिस समय पिंगला नाड़ी अर्थात् दाहिनी नाक से श्वांस चलता हो उस समय कठिन कर्म करने चाहिए, जैसे कठिन क्रूर विद्या का अध्ययन और अध्यापन, नौकादि आरोहण, तन्त्र साधना, बैरी को दण्ड, शस्त्राभ्यास, गमन, पशु विक्रय, ईंट, पथर, काठ तथा रत्नादि का घिसना और छीलना, संगीत अभ्यास, यन्त्र-तन्त्र बनाना, हाथी घोड़ा तथा रथ आदि की सवारी सीखना, व्यायाम, षट्कर्म साधन, भूतादि साधन, औषधि सेवन लिपि-लेखन, दान, क्रय-विक्रय, युद्ध, भोग, राजदर्शन आदि।

सुषुम्ना का श्वास फल

दोनों नाकों से श्वास चलने के समय किसी प्रकार शुभ या अशुभ कार्य नहीं करना चाहिए। उस समय कोई भी काम करने से वह निष्फल होगा। उस समय योगाभ्यास तथा ध्यान धारणादि द्वारा केवल भगवान को स्मरण करना उचित है। सुषम्ना नाड़ी से श्वांस चलने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय किसी को भी शाप या वर प्रदान करने पर वह सफल होता है।

इस प्रकार उचित स्वर में कार्य करने से मनुष्य अनेक प्रकार के लाभ उठा सकता है। इसका सबसे बड़ा उपयोग रोगोत्पत्ति का पहले से ही ज्ञान हो जाना और उसका सहज में निवारण कर सकना है। उदाहरण के लिये शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को यदि सबेरे नींद टूटने पर सूर्योदय के समय पहले यदि दाहिनी नाक से श्वांस चलना प्रारम्भ हो तो उस दिन से पूर्णिमा तक के बीच में गर्मी के कारण कोई पीड़ा होगी। इसी प्रकार कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा के दिन सूर्योदय के समय पहले यदि बायीं नाक से श्वांस चलना आरम्भ हो तो उस दिन से अमावस्या तक के अन्दर कफ या सर्दी के कारण कोई पीड़ा होगी।

दो पखवारों तक इसी प्रकार विपरीत ढंग से सूर्योदय के समय निश्वास चलता रहे तो किसी आत्मीय स्वजन को भारी बीमारी होगी अथवा मृत्यु होगी और किसी प्रकार की विपत्ति आयेगी। तीन पखवारों से अधिक लगातार ऐसी ही गड़बड़ी होने पर निश्चय ही अपनी मृत्यु हो जायेगी।

बिना औषधि रोग निवारण

अनियमित क्रिया के कारण जिस प्रकार हमारी देह में तरह-तरह के रोग पैदा होते हैं, उसी तरह औषधि बिना ही, भीतरी क्रियाओं द्वारा नीरोग उपाय भगवान ने बना दिया है। इन स्वर-शास्त्रोक्त उपायों को काम में लाने से न तो बहुत दिन तक रोग की यन्त्रणा सहन करनी पड़ती है, न अर्थ व्यय होता है और न दवाइयों से अपना पेट भरना पड़ता है। साथ ही जब इस प्रकार योग विद्या के इस कौशल से एक बार रोग जाता रहता है, तो दुबारा उसके आक्रमण की सम्भावना नहीं रहती। ज्वर का आक्रमण होने पर जिस नासिका से श्वांस चलता हो, उसे बन्द करके दूसरी नासिका से श्वांस लेना चाहिए। जब तक ज्वर न उतरे और शरीर स्वस्थ न रहे, तब तक लगातार दूसरे ही नासापुट से श्वांस लेते रहना चाहिए। ऐसा करने से दस-पन्द्रह दिन में उतरने वाला ज्वर पाँच दिन में ही उतर जायेगा और कष्ट भी कम उठाना पड़ेगा। ज्वरकाल में मन ही मन में चाँदी के समान श्वेत वर्ण का ध्यान करने से और शीघ्र लाभ होता है। इसी प्रकार और भी कई तरह के ज्वर, सिरदर्द, अजीर्ण, दन्तरोग, स्नायुविक पीड़ा, दमा, नेत्ररोग भी योग सम्बन्धी साधारण विधियों से ठीक हो जाते हैं।

स्वर विज्ञान का प्रयोग इसी प्रकार के अनेक महत्वपूर्ण कार्यों में किया जा सकता है। यात्रा को सफल बनाना, गर्भाधान द्वारा सौभाग्यशाली सन्तान प्राप्त करना, शत्रु वशीकरण, अग्नि को बुझाना, चिर यौवन प्राप्त करना आदि अनेक कार्यों में इससे उल्लेखनीय सहायता मिल सकती है। स्वर विज्ञान की जानकारी कठिन नहीं है, पर सफलता प्राप्त करने के लिये इच्छानुसार स्वर को कम या ज्यादा समय तक चलाने का अभ्यास करना पड़ता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

व्यायाम—हमारी एक अनिवार्य आवश्यकता

कोई देश जिस आधार पर अपनी आन्तरिक शान्ति और बाहरी सुरक्षा बनाये रह सकता है, वह उसकी समर्थता ही है। राष्ट्रों के जीवन की तरह एक व्यक्ति की शान्ति और सुरक्षा के लिये भी सामर्थ्य अविच्छिन्न तत्व है, उसके अभाव में सुख और सन्तोष का जीवन नहीं जिया जा सकता।

यह समर्थता अन्न, वस्त्र, उद्योग, खनिज, विज्ञान, यातायात, सेना, शस्त्र, शासन, नेतृत्व आदि भौतिक समृद्धि के राष्ट्रीय स्वरूप में और नागरिकों में धन-जन-साधन सम्पन्नता के रूप में तो होनी ही चाहिए, पर साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिये कि हमारा उद्देश्य इतने मात्र से पूरा न होगा। वास्तविक समर्थता मनोबल के रूप में होती है और उसके बिना प्रचुर साधन-सम्पन्न होते हुए भी कोई राष्ट्र या व्यक्ति दुर्बल ही बना रहता है। चरित्र और मनोबल को हम एक साथ ही जोड़ देते हैं, क्योंकि बिना उच्च चरित्र के मनोबल और बिना प्रखर मनोबल के उच्च चरित्र हो ही नहीं सकता। चरित्र और मनोबल की सम्मिलित शक्ति ही वह वास्तविक समर्थता उत्पन्न करती है, जिससे व्यक्ति या राष्ट्र अजेय बनते हैं।

मन समर्थ तब हो सकता है जब शरीर में भी प्रचुर सामर्थ्य भरी पड़ी हो। उसी प्रकार शारीरिक दृष्टि से बलवान व्यक्ति ही अपने चरित्र और नैतिक तत्वों की रक्षा कर सकते हैं। इससे प्रकट होता है कि मनोबल और आत्मबल या चरित्र बल दोनों के लिये अन्य आवश्यकताओं से भी अधिक स्वास्थ्य अनिवार्य है। स्वस्थ विचार और स्वस्थ आचरण वही कर सकता है, जिसका शरीर भी स्वस्थ हो। दुर्बल और क्षीण-काय व्यक्ति तो अपने अस्तित्व की भी भली प्रकार रक्षा नहीं कर सकता, आदर्श और सिद्धान्त की रक्षा करना तो उसके लिये अपंग का पर्वत पर चढ़ने के समान ही कठिन समझना चाहिये।

इसलिये व्यक्ति और राष्ट्र की समग्र समर्थता के लिये स्वास्थ्य एक अविच्छिन्न तत्व है, जिसकी किसी देश, समाज और काल में उपेक्षा नहीं की जा सकती। स्वास्थ्य न रहेगा तो न साहस रहेगा न और कुछ। शौर्य, उत्साह, पराक्रम, पुरुषार्थ निरालस्यता, आत्म-विश्वास दृढ़ता इत्यादि गुणों का आविर्भाव स्वस्थ व्यक्तियों में ही सम्भव है। कमजोर शरीर तो कायरता, कापुरुषता आलस्य, आत्म-हीनता, पराजय और परवशता का ही जन्मदाता होता है।

मानव जीवन एक संघर्ष या संग्राम है। जन्म-समय से ही हमको अनेक कठिनाइयों और अवांछनीय परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है और जब हम वयस्क हो जाते हैं तो अनेक प्रकार की सामाजिक, आर्थिक और प्राकृतिक बाधाओं का निराकरण करते हुए जीवन क्षेत्र में अग्रसर होना पड़ता है। इसके लिये शक्ति और साहस का होना अनिवार्य है। ऐसे तो रोते-झींकते, गिरते-पड़ते अनेक लोग जीवन के दिन पूरे कर लेते हैं पर न उसका कोई महत्व समझा जा सकता और न उसे मानव जन्म की सार्थकता कहा जा सकता है। हमारे जीवन का लक्ष्य तो अपना तथा समाज का हित साधन करते हुए धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति माना गया है, पर वह ऐसी शक्ति रहित और परावलम्बी स्थिति में रहने से कहाँ चरितार्थ किया जा सकता है ?

जीवनी शक्ति का आधार है शरीर का भली प्रकार स्वस्थ और सशक्त रहना और समस्त अंगों का अपना-अपना कार्य सही तौर पर करते रहना। ऐसा होने से ही हमारा शरीर शक्तिशाली रहकर जीवन संग्राम की विविध आवश्यकताओं तथा कर्तव्यों का पालन कर सकता है। स्वास्थ्य के सुदृढ़ रहने से ही सब प्रकार के कार्यों को ठीक तरह से कर सकने की क्षमता उत्पन्न होती है, मन प्रसन्न और उत्साहयुक्त रहता है, विचारों में संतुलन और स्थिरता रहती है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुद्धि नये-नये तथा महत्वपूर्ण क्षेत्रों की ओर अग्रसर होती है। इस दृष्टि से विचार करने पर यह निश्चय हो जाता है कि स्वास्थ्य ही हमारे जीवन की सबसे बड़ी पूँजी है और उसी के द्वारा हम जीवन में किसी प्रकार की उल्लेखनीय सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

पर इस प्रकार का उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त कर सकना और उसे सुरक्षित रख सकना आज कल थोड़े से ही लोगों के लिये संभव जान पड़ता है। बहुत से लोग तो सुदृढ़-स्वास्थ्य के रहस्य को जानते ही नहीं। वे समझते हैं कि दूध, घी आदि पौष्टिक पदार्थों के अधिक परिमाण में खाने से, समय-समय पर शक्तिवर्धक औषधियों (टानिक) आदि का सेवन करते रहने से, शारीरिक शक्ति बढ़ सकती है। पर जब हम इस मार्ग पर चलने वाले सेठों, बड़े व्यवसाइयों, उच्च सरकारी अफसरों के स्वास्थ्य पर दृष्टि डालते हैं तो उनको प्रायः किसी न किसी शारीरिक व्याधि में ग्रस्त और डाक्टरों के यहाँ प्रायः आते-जाते देखते हैं। इसका एक कारण तो शारीरिक श्रम के सभी कार्यों से दूर रहकर केवल दिमागी काम करते रहना और दूसरा कारण स्वच्छ हवा और खुले हुए वातावरण की अपेक्षा बड़े नगरों के बीच बन्द कमरों में बिजली की रोशनी और पंखे के सहारे दिन भर काम करते रहना है। ये दोनों ही त्रुटियाँ स्वास्थ्य को निर्बल और दूषित बनाने वाली हैं।

प्राचीन काल में स्थिति इससे भिन्न थी। उस समय मशीनों का जरा भी प्रचार नहीं हुआ था और लिखने-पढ़ने सम्बन्धी कामों की आवश्यकता भी बहुत कम पड़ती थी। इसलिये छोटे-बड़े सभी को अपना-अपना काम स्वयं परिश्रम करके अपने हाथों से ही करना पड़ता था। दूसरे उस समय कल-कारखानों का अभाव होने से ही बहुत बड़े शहरों का अस्तित्व भी न था। इसलिये अधिकांश लोगों को ज्यादातर खुले वातावरण में रहने का अवसर सहज ही मिल जाता था। बस्ती के भीतर शौचालय नाम मात्र को ही होते थे इसलिये सभी छोटे-बड़े नित्य कर्मों से निवृत्त होने नगर और कस्बों के बाहर ही जाते थे। इससे उनका टहलना और स्वच्छ वायु का सेवन भी हो जाता था। इस प्रकार के रहन-सहन से उनका स्वास्थ्य स्वभावतः ही ठीक बना रहता था।

वर्तमान आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों को देखते हुए यह तो संभव नहीं जान पड़ता कि शहरों के वातावरण को बहुत अधिक बदला जा सके अथवा लोगों के जीवन-निर्वाह के पेशों में कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन किया जा सके। पर हम अपने खान-पान में उचित बदलाव करके और अपनी परिस्थिति के अनुसार किसी प्रकार का व्यायाम करके अपने स्वास्थ्य की उन्नति अवश्य कर सकते हैं। यह बात हम आरम्भ में ही समझा देना चाहते हैं कि व्यायाम से हमारा आशय डण्ड, बैठक, कुश्ती, मुग्दर आदि भारी व्यायामों से नहीं है। यह तो विशेष रूप से पहलवानों और फौजी लोगों के उपयुक्त है। सामान्य लोगों को तो ऐसे ही व्यायाम करने चाहिये, जिससे रक्त शुद्ध होकर उसका शरीर में आना-जाना उत्तम प्रकार से होने लगे और पाचन संस्थान के यंत्र अपना काम ठीक प्रकार से करते हुए आहार को उपयोगी रस और रक्त के रूप में परिवर्तित कर सकें। ऐसा व्यायाम बस्ती के बाहर किसी खुले स्थान में या घर के ही किसी ऐसे स्थान में करना चाहिये, जहाँ की वायु अपेक्षाकृत शुद्ध और ताजा हो।

इन दोनों बातों के साथ अपनी मानसिक अवस्था को ठीक दशा में रखना आवश्यक है। विचारों की शक्ति अकथनीय है और यदि हम अपने मनो-भावों को शुद्ध, परिष्कृत तथा आदर्श बनाने की चेष्टा करें तो स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य की बहुत कुछ उन्नति कर सकते हैं। विशेष रूप से व्यायाम करते समय यह भावना भी करते रहना चाहिये कि इन क्रियाओं को करने से हमारे भीतर शक्ति की वृद्धि हो रही है। इससे हमारी दुर्बलता और त्रुटियाँ दूर होकर स्वास्थ्य की उन्नति हो रही है। हमको यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि स्वास्थ्य का आधार पौष्टिक भोजन और अन्य बाहरी साधनों पर ही निर्भर नहीं है वरन् हमारे रहन-सहन आचार-विचार और सद्वृत्तियों पर भी आधारित है। इसलिये हमको अपनी जीवन-चर्या सदैव सरल, सादा और प्रकृति के अनुकूल रखनी चाहिए और अन्तःकरण से भी कलुषित विचारों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को दूर रखना चाहिये। इतने पर भी किसी भूलचूक या अनिवार्य परिस्थितियों के कारण कोई खराबी पैदा हो जाय तो उसे सरल व्यायाम अथवा टहलना आदि जैसे स्वाभाविक उपायों से दूर कर लेना चाहिए।

बहुत-से लोग रोग और निर्बलता को भाग्य का दोष बतलाया करते हैं, पर यह एक बड़ी भूल है, स्वस्थ और अस्वस्थ रहना मनुष्य के अपने ही हाथ की बात है। जन्म लेते समय अधिकांश मनुष्य एक से ही होते हैं, छोटेपन में तीन-चार साल की आयु तक बच्चे के स्वास्थ्य की देख-रेख अवश्य उसके माँ-बाप का कर्तव्य होता है, तो भी उस समय तक कुछ मामलों को छोड़कर, अधिकांश की दशा में बढ़त अधिक अन्तर नहीं होता। पर उसके बाद जैसे-जैसे आयु बढ़ती जाती है बच्चा कुछ समझने-बूझने लगकर अपनी रुचि के अनुसार कार्य करने में स्वतन्त्र होने लगता है, वैसे-वैसे ही उनकी स्थिति में अन्तर पड़ने लगता है। कुछ व्यक्ति बीस-पच्चीस वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते सांसारिक कर्तव्यों को पूरा करने में असमर्थ, स्थायी मरीज और सम्बन्धियों के लिये भार स्वरूप बन जाते हैं, जबकि अन्य नवजीवन की उमंगों को लेकर बड़े-बड़े कामों के मनसूबे बाँधने लगते हैं और कुछ न कुछ उल्लेखनीय सफलता प्राप्त करके दिखा देते हैं।

इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों की स्थिति में जो महान् अन्तर पड़ जाता है, उसका मुख्य कारण उनका रहन-सहन, आचार-विचार, नियमितता-अनियमितता आदि बातें ही होती हैं। जो व्यक्ति संयम-नियम का जीवन व्यतीत करते हैं, आरोग्यता के नियमों का पालन करते हैं, खान-पान में सावधानी करते हैं, वे निरोगी और दीर्घजीवी होकर मानव-जन्म का सच्चा सुख प्राप्त करते हैं। इसके विपरीत जो आलस, प्रमाद या उच्छृखंलता के वशीभूत होकर मनमाने ढंग से रहते हैं, जिह्वा और इन्द्रिय का दुरुपयोग करते हैं, स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन करते रहते हैं, वे प्रायः तन-मन को भ्रष्ट करके रोग और दोष के चंगुल में फँसकर आप ही जीवन को नष्ट करने के कारण बनते हैं।

वास्तव में आज कल लोगों में स्वास्थ्य के सम्बन्ध में बहुत-से भ्रम फैले हुए हैं। बहुत-से व्यक्ति तो इसका सम्बन्ध गरीबी-अमीरी से लगाते हैं। वे समझते हैं जिनके पास काफी धन होता है, जिनको खाने के लिये खूब घी-दूध मेवा आदि मिलते हैं, वे खूब हृष्ट-पुष्ट और मजबूत होते हैं। कुछ लोगों का ख्याल है कि जिनके माँ-बाप शक्तिशाली होते हैं, वे ही अधिक स्वस्थ और हट्ठे-कट्टे होते हैं। ऐसे भी लोगों की कमी नहीं है जो इसे भगवान् और भाग्य के हाथ की बात समझते हैं और रोगों को दुर्भाग्य का कारण समझकर ग्रहों और देवी-देवता की पूजा करके स्वास्थ्य लाभ की चेष्टा करते रहते हैं।

शारीरिक श्रम का महत्व

यदि हम वास्तव में उत्तम स्वास्थ्य के अभिलाषी हैं और सांसारिक कर्तव्यों का अच्छी तरह पालन करके मानव-जन्म को सार्थक बनाना चाहते हैं, तो सबसे पहली आवश्यकता यह है कि इस प्रकार के भ्रमों को त्यागकर संयम-नियम के पालन और शारीरिक श्रम के सिद्धांत को समझें और अपनी जीवन-चर्या उसी के अनुकूल रखें। तन्दुरुस्त और निरोगी रहने का सबसे सरल नुस्खा सादा भोजन और पूरा शारीरिक श्रम करना है। इससे हम जो कुछ खायेंगे वह ठीक तरह हजम होकर शरीर में लगेगा, उससे शुद्ध रस और रक्त बनेगा, जो जीवन का सच्चा आधार है। जो व्यक्ति इन दो बातों का ध्यान रखेगा और दुर्व्यसनों से बचा रहेगा वह कैसी भी गरीबी की हालत में क्यों न रहे स्वस्थ रहकर सुख और सन्तोष की जिन्दगी बसर कर सकता है।

पर वर्तमान समय में जीवन-यापन की ये स्वाभाविक परिस्थितियाँ बहुसंख्यक लोगों के लिये अप्राप्त हो गई हैं। विशेषतः नगर निवासियों को प्रायः विपरीत वातावरण में रहना पड़ता है और सरकारी अथवा गैर-सरकारी नौकर बनकर इस तरह की 'ड्यूटी' बजानी पड़ती है, जिसमें स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का पालन करना कठिन हो जाता है। विशेषतः जिन लोगों को भोजन करते ही दफ्तरों, कारखानों या स्कूलों आदि के लिये भागना पड़ता है और वहाँ आठ-दस घण्टे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक ही जगह बैठे-बैठे केवल लिखने-पढ़ने या कोई ऐसा ही अन्य अल्प श्रम का काम करना पड़ता है, उनको स्वास्थ्य की दृष्टि से अवश्य घाटे में रहना पड़ेगा। इस प्रकार लगातार बैठे रहकर काम करने का कुप्रभाव पाचन-क्रिया पर पड़ता है और खाया हुआ भोजन ठीक तरह हजम नहीं हो पाता, जिससे रस-रक्त भी दूषित बनते हैं। यही अस्वस्थता की जड़ है। ऐसे व्यक्ति यदि अपने रहन-सहन में विशेष सावधान न रहेंगे और स्वास्थ्य सम्बन्धी त्रुटि का सुधार करने के लिए किसी प्रकार के शारीरिक श्रम, व्यायाम आदि का आश्रय न लेंगें तो उनको अवश्य कुछ ही समय बाद रोगी और निर्बल होना पड़ेगा।

व्यायाम की आवश्यकता

हमारे देश में तथा विदेशों में भी प्राचीन काल से शारीरिक निर्बलता पर काबू पाने का मुख्य उपाय व्यायाम ही माना जाता है। पौष्टिक खाद्य पदार्थ भी तभी कुछ लाभदायक सिद्ध होते हैं, जब उनके साथ उसी अनुपात से व्यायाम भी किया जाता है। एक समय था जब यह शिक्षा का मुख्य अङ्ग माना जाता था। यूनान के सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ-दार्शनिक प्लेटो ने अपने देश की शिक्षा-प्रणाली में केवल तीन विषयों का समावेश किया था—१. जिमनास्टिक (व्यायाम), २. गणित, ३. दर्शन। भारतवर्ष में भी कुश्ती लड़ना तथा लाठी और तलवार चलाना शिक्षा का प्रमुख अङ्ग माना जाता था। लिखने-पढ़ने की शिक्षा इनके सामने गौण समझी जाती थी। कारण यही था कि उस समय सबसे प्रथम कर्तव्य आत्म-रक्षा और देश-रक्षा को ही माना जाता था। क्षत्रिय वर्ण का तो एकमात्र कर्तव्य यही था कि हर तरह की शक्ति सम्पादन करें, पर अन्य जातियों के लोग भी किसी न किसी रूप में कम या अधिक व्यायाम अवश्य करते थे, क्योंकि किसी भी समय आक्रमण हो जाने और अंशाति फैल जाने की सम्भावना बनी ही रहती थी।

पर अब शासन व्यवस्था का रूप बहुत कुछ बदल जाने से नित्यप्रति आक्रमण या गृहयुद्धों की परिस्थितियाँ मिट गई हैं, इससे लोगों में से कुश्ती-व्यायाम आदि की भावना भी बहुत कुछ कम हो गई है। अनेक धन-सम्पन्न व्यक्ति तो जिनकी निर्वाह में सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु रुपया ही है, इस प्रकार के व्यायाम आदि को छोटे दर्जे के लोगों का काम समझने लगे हैं। हम भी यह मानते हैं कि अब प्राचीन ढंग के अखाड़ों में जाकर व्यायाम करना सर्व साधारण के लिये अधिकांश में अव्यावहारिक हो गया है, तो भी इससे व्यायाम का महत्त्व कम नहीं हो सकता। विशेषकर जो लोग लगातार बैठकर या एक स्थान पर खड़े होकर ही काम करते रहते हैं, उनके लिये तो व्यायाम एक अनिवार्य आवश्यकता है।

यहाँ एक बात जान लेना आवश्यक है कि दण्ड, बैठक, मुग्दर जैसे कठिन श्रम वाले व्यायाम यद्यपि हमारे देश के प्राचीन और प्रसिद्ध व्यायाम हैं, पर इस समय वे एक विशेष श्रेणी के लिए ही सीमाबद्ध हो गये हैं, जिसके सदस्य लड़ने-भिड़ने या कुश्ती लड़ने आदि कार्यों में नियमित रूप से भाग लेते हैं। इस प्रकार के व्यायामों में प्रायः अधिक समय लगाना पड़ता हैं भारी भोजन करना पड़ता है और काफी विश्राम भी करना पड़ता है। ये सब बातें सामान्य जीवन व्यतीत करने वालों के लिए असंभव हैं। आजकल जीवन-निर्वाह और परिवार-पालन की जिम्मेदारियाँ ही इतनी बढ़ गई हैं कि लोग अन्य कामों में अधिक समय या ध्यान नहीं दे सकते।

इस दृष्टि से विचार करने पर जनसाधारण के लिए वही व्यायाम उपयोगी हो सकता है, जो किसी भी सुविधा के स्थान में आधा घण्टा या १५ मिनट में ही पूरा हो सके और जिससे शरीर के सभी अङ्ग-प्रत्यङ्गों पर इतना जोर पड़ जाय कि वे चैतन्य होकर अपना काम मुस्तैदी से कर सकें। यों तो टहलना, वन-भ्रमण, तैरना आदि बड़े लाभदायक और स्वाभाविक व्यायाम हैं, जिनमें किसी प्रकार की हानि का अन्देशा नहीं रहता और चित्त भी प्रसन्न होता है। पर इनमें समय अधिक लग जाता है। जो व्यक्ति आठ-दस घण्टे नौकरी या व्यापार में और तीन-चार घण्टे घर की व्यवस्था और देख-रेख में खर्च करता है, उससे फिर यह आशा करनी ठीक नहीं कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह किसी व्यायाम में दो घण्टे खर्च कर सकेगा। हाँ, बड़ी आयु के लोग भी घर-गृहस्थी के भार से छुटकारा पा चुके हैं अथवा जो पेन्शनयाफ्ता बन चुके हैं टहलने का लाभ अवश्य उठा सकते हैं। उनके लिये यह सर्वोत्तम व्यायाम है क्योंकि यह एक पूर्णतया स्वाभाविक तथा प्राकृतिक प्रक्रिया है।

जो व्यायाम पहलवान बनने के बजाय केवल स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से किये जाते हैं, उनकी मुख्य विशेषता यह मानी गई है कि उनका प्रभाव हमारे उन भीतरी अङ्गों पर पड़े जिनसे हमारा जीवन संचालन होता है। इनमें खास तौर से स्नायु-संस्थान, श्वांस-यंत्र, पाचन-यंत्र, मल-निष्कासन संस्थान की गिनती की जाती है। इन्हीं अंगों के द्वारा हम जो कुछ खाते-पीते हैं, उनको शुद्ध रस-रक्त के रूप में परिणित करके मलांश और अन्य विकारी पदार्थों को बाहर निकाल दिया जाता है। जिस व्यायाम से ये कार्य ठीक ढंग से पूरे होने में सहायता मिले वही सबसे अधिक उपयोगी समझा जा सकता है। केवल शरीर को बहुत मोटा-ताजा बना लेना या हाथ-पैरों के पुट्ठों (मसिल्स) को बहुत कड़ा बना लेना आदर्श व्यायाम का लक्षण नहीं हो सकता। ऐसा व्यायाम तो एकांगी होता है और उसके द्वारा हाथ-पैरों की कठोरता और मजबूती बढ़ने पर भी भीतरी अङ्गों में दोष और रोग पैदा हो सकते हैं। यही कारण है कि बड़े-बड़े पहलवान तरह-तरह के रोगों से ग्रसित रहते हैं, वृद्धावस्था में उनको प्रायः गठिया या जोड़ों का दर्द आदि की शिकायत हो जाती है और हैजा, प्लेग आदि छूत रोगों का भी उन पर शीघ्र प्रभाव पड़ता है।

इसलिये स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से किया जाने वाला व्यायाम ऐसा होना चाहिये, जिससे शरीर के अङ्गों पर अनावश्यक दबाव न पड़े वरन् शारीरिक क्रियाओं का संचालन करने वाले भीतरी अङ्गों और नस-नाड़ियों की शुद्धि हो, शरीर के विभिन्न जोड़ों की संचालन शक्ति ठीक बनी रहे और मल-निष्कासन का कार्य उचित रूप से होता रहे। केवल एक अङ्ग पर ज्यादा भार डालने वाले व्यायाम इस उद्देश्य को पूरा नहीं कर पाते। 'मसिल्स' के लिए आजकल जिन फुटबाल, हाकी, क्रिकेट आदि खेलों का प्रचार बढ़ रहा है, उनमें खूब तेजी से दौड़ना पड़ता है जिससे साँस जोर से चलने लगती है। इससे फेफड़ों के अन्दर प्राण वायु (ऑक्सीजन) कुछ अधिक मात्रा में जाती है और उससे रक्त की सफाई होती है। पर दूसरी और शरीर के कितने ही अङ्गों पर बहुत अधिक दबाब पड़ने से कोषाणुओं (सेल्स) की टूट-फूट बहुत अधिक होती है, जिससे विकारी-तत्त्व बढ़ जाता है। इसके कारण बाद में अधिक थकावट का अनुभव होने लगता है और कभी ग्लानि का भाव भी पैदा हो जाता है। इस प्रकार लाभ के साथ ही हानि होने से ऐसे व्यायाम स्वास्थ्य की रक्षा करने वाले नहीं माने जा सकते।

व्यायाम की विज्ञानानुकूल पद्धति

इन बातों पर विचार करके आधुनिक शरीरशास्त्रविदों ने 'ड्रिल' (कवायद) और शरीर के विभिन्न अगों को तानने तथा ढीला करने के व्यायामों का प्रचार किया है। हमारे यहाँ इसी उद्देश्य से 'आसनों' का अभ्यास बतलाया गया था। इन सबमें भीतरी अङ्गों पर प्रभाव डालने तथा रक्तवाहिनी नाड़ियों तथा स्नायुओं को, प्रसारण और संकोचन के सिद्धांत के आधार पर, कार्यक्षम दशा में रखने की चेष्टा की जाती है। इससे उन शरीरिक ग्रन्थियों (ग्लैण्डस्) पर भी प्रभाव पड़ता है, जो कई प्रकार के जीवन-रस निकालती हैं। आधुनिक विज्ञान की खोजों ने इन ग्रन्थियों का महत्व बढ़ा दिया है और सिद्ध कर दिया है कि इनके निष्क्रिय या सुस्त पड़ जाने से बड़े-बड़े रोग पैदा हो जाते हैं। उदाहरण के लिये गले के भीतर रहने वाली 'थाइराइड ग्लैण्ड' के रस से वृद्धावस्था देर से आती है और आमाशय के नीचे रहने वाली 'क्लोम' के रस से मूत्राशय ठीक दशा में रहता है। इन बड़ी ग्रन्थियों के अतिरिक्त हमारे शरीर में 'डक्टलेस ग्लैण्ड' नाम की छोटी-छोटी गिल्टियाँ भी बहुत बड़ी संख्या में पायी जाती हैं, जिनसे रक्त का संचालन ठीक तरह होता रहता है। यदि वे अपना काम ठीक तरह न करें तो रक्त दूषित होकर बीसियों तरह के रोग पैदा हो सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी प्रकार की अनेक ग्रन्थियाँ शरीर के भीतर हैं जिन पर अङ्गों के तानने और ढीला करने के व्यायामों का प्रभाव पड़ता है और उनसे स्वास्थ्य-रक्षा में बहुत अधिक सहायता मिलती है।

वैज्ञानिक-व्यायाम-प्रणाली की दूसरी विशेषता यह होती है कि वह जिस प्रकार ग्रहण करने (ऐसीमिलेशन) का ध्यान रखती है उतना ही जोर निष्कासन (ऐलीमिनेशन) पर भी देती है। हमारे यहाँ के पुराने ढङ्ग के पहलवानों में प्रायः यह दोष देखा जाता है कि वे खाने का तो बहुत अधिक ध्यान रखते हैं, सेरों आटा, घी, बादाम आदि प्रतिदिन खा जाते हैं पर मल-निष्कासन की प्रक्रिया का उनको कोई ज्ञान नहीं होता। शायद यही कारण है कि पहलवानों को बवासीर का रोग प्रायः हो जाता है। पर अङ्गों के प्रसारण और संकोचन के व्यायाम में ग्रहण करने वाले अङ्गों के समान ही मल-निष्कासन के संस्थानों को भी शक्तिशाली बनाया जाता है, जिससे वे सब प्रकार के मलों को शीघ्र ही बाहर फेंक कर शरीर को शुद्ध रखें। शरीर के शुद्ध रखने में ही सच्ची स्वास्थ्य रक्षा का रहस्य निहित है। इसके बिना अन्धाधुन्ध व्यायाम करते जाने पर और खूब खाते रहने से तो शरीर मल से भरा एक भारी भरकम थैला जैसा बन जाता है, जिसे वैज्ञानिक दृष्टि से स्वस्थ के बजाय अस्वस्थ ही कहा जायेगा।

व्यायाम का अर्थ पहलवानों द्वारा अपनाये जाने वाले कठोर दंड-बैठक जैसी प्रक्रिया ही नहीं है। उसमें नर-नारी, बाल-वृद्ध यहाँ तक कि रोगियों द्वारा अपनाये जाने योग्य तरीके भी हैं। वे हलके होते हुए भी अंगों को सक्षम रखने के अतिरिक्त उत्साह एवं मनोबल बढ़ाने का भी काम देते हैं। आसन प्राणायाम की अपनी महत्ता है। उनके कारण वे अवयव ही लाभान्वित होते हैं, जिन्हें प्रायः समुचित श्रम नहीं करना पड़ता। आम आदमी बैठे ठाले रहने की स्थिति में उथली साँस लेता है। फेफड़ों में एक छोटे अंश को ही इससे श्रम करना पड़ता है और शेष निठल्ला पड़ा रहता है। उस भाग में क्षय आदि के रोग कीटाणु घुस पड़ते हैं और अपना घर मजबूत करते-करते फेफड़े सम्बन्धी कितने ही रोग खड़े कर देते हैं। यदि गहरी सांस लेने के लिये प्राणायाम की विद्या अपनाई जाती रहे तो सीना मजबूत रहेगा और क्षय, दमा, खाँसी आदि रोगों की संभावना न रहेगी, इसी प्रकार आसनों के अभ्यास से उन अवयवों का परिश्रम हो जाता है, जिनका करते समय अक्सर नहीं होता। बच्चों के लिए दौड़ना, कमजोरों के लिए तेज चाल से हाथ हिलाते हुए गहरी सांस लेते हुए टहलना भी काम चलाऊ व्यायाम है। बुड्ढों के लिए अंग संचालन भी उपयुक्त रहता है। हाथों की, कमर की, गरदन की, पेट को फैलाना और सिकोड़ना अङ्ग संचालन है। इसे वयोवृद्ध भी अच्छी तरह कर सकते हैं। बीमार लोग चारपाई पर पड़े-पड़े ही अङ्ग संचालन करते रह सकते हैं और लोट-पोट करते रहने का लाभ भी उठा सकते हैं।

व्यायाम और स्वास्थ्य का सम्बन्ध

शरीर बलवान् हो इसके लिये आहार आदि के साथ श्रम भी आवश्यक है। कुछ लोग श्रम की उपेक्षा करते हैं और यह मानते हैं कि शारीरिक श्रम निम्न वर्ग के मजदूर और किसानों का कार्य है, पर यह उनकी भूल है। श्रम वर्ग-विभाजन का आधार नहीं वरन् समृद्धि का देवता है। वह जहाँ रहता है, वहाँ अभाव, आलस्य और अकारण बैर-भावनाओं को कठिनता से ही स्थान मिलता है। इसलिये वह एक व्यक्ति नहीं समूचे राष्ट्र की परम आवश्यक वस्तु है। श्रम का सम्मान एक प्रकार से देवत्व ही मानना चाहिए। श्रम इस धरती का प्रत्यक्ष फलदायी देवता ही है।

श्रमजीवियों के अतिरिक्त भी सभी मनुष्यों के जीवन में श्रम का प्रमुख स्थान है, पर उसे व्यायाम के रूप में ग्रहण करना चाहिए। व्यायाम और श्रम में एक भौतिक अन्तर है। श्रम केवल शारीरिक श्रम और क्रियाशीलता को कहते हैं, पर व्यायाम में स्वास्थ्य सम्वर्धन की एक विशेष भावना भी संयुक्त हो जाती है। इसलिए वह श्रम की श्रेणी से ऊपर उठ जाती है। श्रम के साथ स्वास्थ्य सम्वर्धन की भावनाओं का सम्मिश्रण हो जाता है तो स्वास्थ्य की प्रगति अधिक तीव्रगति से होने लगती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यायाम की परिभाषा

व्यायाम केवल शारीरिक श्रम नहीं वरन् यह मन और शरीर का सम्मिलित श्रम है। दोनों का सम्मिश्रण हो जाने से नई स्फूर्ति, नई प्रेरणा, नया बल और मनोबल की अभिवृद्धि होती है। श्रम वह है, जिससे शरीर में थकावट और भारीपन आता है, पर व्यायाम शरीर में फुर्ती, अंगों में विकास और सौन्दर्य भरने के लिए होता है। व्यायाम में श्रम होता है पर थकावट नहीं। व्यायाम से उत्साह, उल्लास स्फूर्ति और आत्मचेतना का अभिवर्धन होता है। इससे स्वास्थ्य मिलता है, जीवन यात्रा सुलभ और रास्ते की कठिनाइयाँ दूर होती हैं। व्यायाम एक प्रकार का सुखद श्रम है, जिससे संगठन, एकता, अनुशासन, ब्रह्मचर्य की भावनायें जागृत होती हैं और कामुकता की प्रवृत्ति दूर होती है।

किसान और मजदूर दिन भर परिश्रम करते हैं पर उनका स्वास्थ्य और मनोबल बिलकुल सामान्य श्रेणी का होता है। कुली स्टेशन पर दिन भर सामान ढोते हैं पर उनका न तो शरीर सुडौल हो पाता है और न ही उसमें पर्याप्त आरोग्य के लक्षण जान पड़ते हैं। किसान, कुली और मजदूर श्रम करते हैं व्यायाम नहीं। श्रम में एक प्रकार का मानसिक दबाव होता है, पर व्यायाम में स्वच्छन्दता सुरुचि और उत्साह की भावना जुड़ी रहती है, इसलिए वह अधिक फलदायी होती है।

विद्यालय की पढ़ाई बन्द होने पर जो विद्यार्थी नियमित रूप से हाकी क्रिकेट, फुटबाल, दौड़, कूद, कबड्डी, तैरना, उछलना आदि विविध मनोरंजक क्रीड़ायें करते हैं, श्रम की दृष्टि से उनका भी अङ्ग-अङ्ग मसल जाता है पर जब वे खेलकर हटते हैं तो उनके चेहरे खिले हुए, मन प्रसन्न, शरीर हल्का होता है। श्रमिकों की तरह उनमें बोझ और अनुत्साह नहीं होता। पहलवान एक-एक हजार दण्ड-बैठक मारते हैं। ऊपर से मुग्दर भाजते हैं, कुश्ती लड़ते हैं। एक-दूसरे के शरीर में मालिश करते हैं। २-३ घन्टे में उनकी नस-नस कड़क जाती है। देह पसीना-पसीना हो जाती है पर वे मिट्टी झाड़कर अखाड़े के बाहर आते हैं तो उनके चेहरे पर मुस्कराहट होती है, उनका शरीर फड़कता रहता है, हलचल बनी रहती है और सारे शरीर में जीवन-तत्व बिखरा हुआ जान पड़ता है। श्रम यहाँ भी किसानों और मजदूरों से कम नहीं हुआ, पर स्वास्थ्य और मनोरंजन की भावना युक्त होने के कारण वह श्रम भी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का उत्पादक बन जाता है। कोरे श्रम जैसी, थका देने वाली बात व्यायाम में नहीं होती इसलिए व्यायाम अधिक फलदायक होता है।

व्यायाम एक विज्ञान

व्यायाम से यह आवश्यक नहीं कि शरीर भारी हो जाये, पर उससे शरीर हलका अवश्य होता है। शरीर में हलकापन बढ़ता है तो उससे स्फूर्ति बढ़ेगी और काम करने की शक्ति भी अवश्य बढ़ेगी। अर्थात् हृदय, फुफ्फुस, आँतें धमनियाँ और माँसपेशियाँ आदि सभी अवयव नियमित और सुचारु रूप से अपना-अपना काम करने लगेंगे। शरीर में यदि अनावश्यक चर्बी जम जाती है तो वह भी गल जाती है, जिससे मोटापन दूर होकर हलकापन आता है। व्यायाम का सर्वोत्तम लाभ श्वांस-प्रश्वांस द्वारा शरीर के भीतर प्रविष्ट प्राणप्रद वायु का होता है, जिससे शरीर की जीवनी-शक्ति आसाधारण रूप से बढ़ जाती है। प्राण या जीवनी-शक्ति के संचार से ही एक व्यायामी में सहनशीलता, संयम,दृढ़ता, निर्भयता, साहस और आत्मविश्वास आदि मानसिक गुणों का विकास होता है। व्यायाम से शारीरिक क्रियाशीलता तो बढ़ती ही है। फलस्वरूप निष्क्रिय पड़े अंग-प्रत्यङ्गों में शक्ति का संचार होता और चेतनता आती ही है वरन् उससे मानसिक उत्तेजना भी होती है। ये ही कारण व्यायाम को श्रम से विलग कर देते हैं और उसकी महत्ता को भी बढ़ा देते हैं।

सबके लिए आवश्यक

इन तथ्यों को देखकर कहा जा सकता है कि व्यायाम पहलवानों या केवल स्वास्थ्य संवर्धन की इच्छा रखने वालों के लिये ही नहीं, वरन् छोटे-छोटे बच्चों से लेकर प्रत्येक वर्ग के प्रत्येक मनुष्य, बुड्ढों और स्त्रियों को भी करना चाहिए। इससे मानसिक अवसाद हट जाता है और ताजगी आती है। स्त्री, बच्चों तथा वृद्ध व्यक्तियों को भी उनकी शारीरिक स्थिति के अनुसार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यायाम की व्यवस्था होनी चाहिये और इसे एक सामाजिक उत्तरदायित्व मानकर उसका नियमित रूप से पालन करना चाहिए। सिद्धान्त यह है कि स्त्री हो या पुरुष, बालक हो अथवा वृद्ध, किसान हो अथवा क्लर्क, चपरासी हो या तहसीलदार, उचित व्यायाम के बिना अच्छी तन्दुरस्ती और अच्छा मनोबल प्राप्त नहीं हो सकता। वर्ग और स्थिति के अनुसार भिन्नता सम्भव है, पर व्यायाम की आदत प्रत्येक नागरिक में होनी चाहिए।

विद्यार्थियों के लिए दौड़ना, उछलना, विविध खेल, हाकी, फुटबाल, क्रिकेट, तैरना, पेड़ों पर चढ़ना आदि व्यायाम हैं। गृहस्थ नवयुवकों और कामकाजी आदमियों के लिए बागवानी, टहलना, डण्ड, मुग्दर, घुड़सवारी, दौड़ना, स्प्रिंग बढ़ाना आदि खेल खेलने चाहिए। स्त्रियाँ साधारण घरेलू काम-काज के अतिरिक्त चक्की पीसना, दही बिलोना, पानी खींचना, धान कूटना आदि के अतिरिक्त घरों में खेले जाने वाले छोटे-मोटे खेल खेल सकती हैं। बच्चों में तो उछल-कूद की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है पर जिन बच्चों में ऐसी बात न दिखाई दे, उसे एक संस्कार जन्य या प्राकृतिक दोष मानकर उनमें मनोवैज्ञानिक ढङ्ग से हिम्मत और बढ़ावा देकर खेलने की रुचि पैदा करनी चाहिए। जो बच्चे खाने और पढ़ने के अतिरिक्त समय खेलने में ही व्यस्त रहते हैं, उनके शरीर और मिजाज प्रायः अपने आप स्वस्थ और परिमार्जित होते रहते हैं। इसके लिए उनकी बहुत कम देख-रेख रखने की जरूरत पड़ती है। इससे यह सिद्ध होता है कि व्यायाम मनुष्य-जीवन का स्वाभाविक और अविच्छन्न तत्व है। स्वास्थ्य और मनोभावों के सन्तुलन के लिए व्यायाम का समुचित स्थान प्रत्येक मनुष्य के जीवन में रहना चाहिये।

व्यायाम के विभिन्न पहलू

स्वास्थ्य विशेष डा० एम० गुलर ने एक स्थान पर लिखा है—वैज्ञानिक परीक्षा द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि माँस-पेशियों की झिल्ली व शरीर की नसों में एक प्रकार का पीलापन लिये मैल जमा होता रहता है। इस मैल का अधिकांश पृथ्वी तत्व से सम्बन्ध रखता है। उम्र के अनुपात से यह मैल बढ़ता है और शरीर की मशीनरी को बर्बाद कर देता है। इस मैल के जमने से नसें व नलिकाएँ मोटी होकर आकार में सिकुड़ जाती हैं। शरीर के मुख्य अंगों और मुख्यतया मस्तिष्क का रक्त संचार अपूर्ण व धीमा हो जाता है, इससे दिमागी कामों में रुकावट आती है। स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती है। विचार अस्थिर रहते हैं। भ्रम, चिन्ता, चिड़-चिड़ापन व कामुकता आदि विकार उत्पन्न हो जाते हैं। हृदय शून्य सरीखा हो जाता है। सद्भावनायें समाप्त हो जाती हैं। शरीर और मस्तिष्क की इस विकृति का कारण नियमित व्यायाम की व्यवस्था न होना है। व्यायाम द्वारा इस मल को साफ रखकर ही शारीरिक और मानसिक सुडौलता और शतायु जीवन प्राप्त किया जा सकता है।"

डाक्टर लिली के० इन्वेस ने अपनी पुस्तक में इस मल का विश्लेषण इस प्रकार किया है—"व्यायाम न करने से शरीर की नसों, पेशियों व अन्य भागों में कचरा, मैल व खड़िया मिट्टी सरीखा पदार्थ जम जाता है, जिसमें लाइमफास्फेट, मग्नेशिया आदि पदार्थ भी होते हैं मनुष्य-जीवन के लिये वह पदार्थ विष तुल्य होते हैं।

व्यायाम और स्वास्थ्य

शरीर में इस विजातीय द्रव्य की मात्रा बढ़ने से माँस-पेशियाँ, गिल्टियों व सभी अंगों को पोषण मिलना बन्द हो जाता है, जिससे वे जीर्ण होकर मुर्झा जाते हैं और शरीर में निर्जीवता व निर्बलता बढ़ने लगती है। व्यायाम करने से यह विकार दूर होता है, शरीर हृष्टपुष्ट बनता है और इससे प्रत्येक अङ्ग प्रभावित होता है। अन्तड़ियों पर गहरा प्रभाव पड़ता है, जिससे वे अपना कार्य तेजी से करने लगती हैं इससे भोजन शीघ्र पच जाता है। पेट के कब्ज, सड़न आदि रोग नष्ट हो जाते हैं, वीर्य की रक्षा व ब्रह्मचर्य का पालन होता है। इससे चेहरे पर कान्ति, शरीर में बल, मानसिक व बौद्धिक शक्ति का विकास होता है।

व्यायाम करने से पूरा शरीर हिलता-डुलता और अङ्ग-प्रत्यङ्ग पर जोर पड़ता है। इससे जमा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुआ मल और कचरा पिघलकर श्वाँस, मूत्र, थूक और पसीने द्वारा बाहर निकल जाता है। खून में मिले हुए विकार को फुफ्फुस जला डालते हैं और वह साँस के द्वारा बाहर निकल जाता है। इससे फेफड़ों को बल मिलता है। रक्त स्वच्छ होता है। शरीर में चुस्ती आती है और लगनशीलता प्रखर बनी रहती है। कमर का दर्द, आँतों के रोग, प्रमेह, स्वप्नदोष दूर होते हैं और आखों की ज्योति बढ़ती है।

भिन्न-भिन्न प्रकार के लाभ प्राप्त करने के लिए स्थिति, अवस्था और सुविधानुसार लोग व्यायाम का चुनाव कर सकें, इसके लिये स्वास्थ्य शास्त्रियों ने अपनी-अपनी तरह के अनेक व्यायाम निर्धारित किये हैं। इनकी आन्तरिक क्रिया एक जैसी होते हुए भी प्रभाव भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं और उनसे मिलने वाली शारीरिक स्वस्थता व मानसिक प्रसन्नता भी कई तरह की होती है, पर व्यायाम प्रायः हर दृष्टि से लाभदायक ही होते हैं।

दण्ड-बैठक-कुश्ती—कहावत है—"दण्ड-बैठक-कुश्ती, रोग रहे न सुस्ती।" शरीर को मांसल, सुडौल और कसदार बनाने में यह तीनों व्यायाम बड़ा महत्व रखते हैं। भारतवर्ष में प्राचीन काल से इनका प्रचलन रहा है। कुश्ती में तो भारतवर्ष विश्व में सर्वोपरि रहा है। कुश्ती के दाव-पेचों की बड़ी बारीकी से खोज हुई है। इनसे जहाँ पकड़-धकड़ कर बाहर निकलने, छूटने पटकने में शरीर की नस-नस का व्यायाम हो जाता है, वहाँ बुद्धि की सूझ-बूझ और मनोरंजन भी काफी होता है। कुश्ती हमारे यहाँ न केवल लड़ने वालों में अपितु दर्शकों के लिये स्वास्थ्य एवं उत्साहवर्द्धक मानी गई है। इसका लोगों पर सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है, लोग स्वस्थ रहने की प्रेरणा ग्रहण करते हैं। इसलिये हमारे यहाँ अखाड़े व दङ्गलों का आज भी प्रचलन चला आ रहा है।

यह प्रयास गाँव-गाँव चलने चाहिये, पर जहाँ सामूहिक व्यवस्था न बन पड़े, वहाँ भी लोग को व्यक्तिगत रूप से डण्ड-बैठक लगानी चाहिये। यह सीधी व सरल कसरतें हैं। इनमें सीना चौड़ा होता, भुजदण्डों की माँस-पेशियों और जांघे सुडौल बनती हैं, पैरों में शक्ति आती है, आमाशय पुष्ट होता है कमर मजबूत होती है तमाम नसों पर बराबर जोर पड़ता है, जिससे सब अपना काम ठीक करने लगती हैं। कुश्ती मिट्टी में करने से शरीर का विष भी दूर होता है। इन कसरतों में श्वांस-प्रश्वांस की तीव्रता का लाभ अन्य कसरतों के समान ही होता है।

डम्बल और मुग्दर

मुग्दर भाँजना भारतवर्ष की प्राचीन कसरत रही है। मुठभेड़ की लड़ाई और तलवार चलाने के लिये कलाई और बाजुओं की शक्ति आवश्यक होती है, यह मुग्दर भाँजने से आती है। इससे भुजाएँ माँसल व ठीक बनी रहती हैं, सीना चौड़ा होता है इन्द्रियाँ खुल जाती हैं, शरीर से फुरती जागृत होती है, बल और पुरुषार्थ बढ़ता है। डम्बल विदेशों की व्यायाम प्रणाली है। डम्बल भी मुग्दरों की तरह उनसे कुछ हलके होते हैं अतः इन्हें कम ताकत के लोग भी कर सकते हैं। इससे कलाई और पंजे की ताकत विशेष बढ़ती है। स्प्रिंग खींचकर छाती और हाथों को चौड़ाई में बढ़ना, रबड़ की गोलाकार डोर को फैलाना यह कसरतें भी इसी के अन्तर्गत हैं। स्कूलों व सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा इसका प्रयोग हो सकता है, क्योंकि यह तमाम कसरतें कीमती पड़ती हैं। विद्यालयों में स्वास्थ्य और मनोरंजन की दृष्टि से लेजियम का भी बड़ा महत्व है, उसके अनेक प्रकार खोजे गये हैं। ताल, धुन और कसरत इन तीनों से लेजियम में आनन्द भी बहुत आता है। कम उम्र की बच्चियों को भी लेजियम भाँजना चाहिये।

शस्त्र शिक्षा

गुण्डों तथा अवांछनीय तत्वों से आत्म-रक्षा के लिये छोटे-छोटे अस्त्रों का चलाना सीखना चाहिये। व्यायाम का उद्देश्य रखकर लाठी चलाना, भाला फेंकना, तलवार भाँजना, छुरी चलाना, तीर की निशानेबाजी सीखना स्थानीय सुरक्षा की दृष्टि से भी उपयुक्त होता है। जहाँ स्वस्थ और साहसी प्रकृति के लोग रहते हैं बुराइयाँ भी कम बढ़ती हैं। अवांछनीय तत्व शक्ति एवं प्रतिरोध के अभाव में पनपते हैं। इनका सामना करने के लिये शस्त्र, स्वास्थ्य, साहस, और सङ्गठन यह चारों अनिवार्य हैं। इन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्यक्रमों के अन्तर्गत होमगार्ड का प्रशिक्षण प्राप्त करना, बन्दूक चलाने आदि का भी प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए। विद्यालयों में लड़के-लड़कियों को एन० सी० सी०, अम्बुलेंस प्रशिक्षण का अभ्यास करना चाहिये।

लाठी चलाना

लाठी चलाने की कला का विकास हमारे देश की अनेक कलाओं में से एक है। डम्बल, मुग्दर की अपेक्षा यह सरल और कम खर्च में मिल जाती है, जबकि लाठी चलाने से शारीरिक लाभ मुग्दर भाँजने की तरह ही होते हैं। मुग्दर का अभ्यास कोई स्वस्थ-समर्थ व्यक्ति ही करते हैं, पर लाठी से व्यायाम की आवश्यकता और अभ्यास हलके डीलडौल के भी कर सकते हैं। इससे साहसिकता की वृद्धि होती है। कई बार जंगली जानवरों अथवा कुत्तों का सामना करना पड़ जाता है, उस समय लाठी बहुत साथ देती है। घरों में चोर, डकैत घुस आते हैं तो उनका सामना करने के लिये अस्त्र बहुत जरूरी हैं। बन्दूक या रिवाल्वर सबके लिये उपलब्ध नहीं, हो भी तो उसे चलाने और मनमाना प्रयोग में भी प्रतिबन्ध लगा हुआ है, पर लाठी में ऐसी कोई बात भी नहीं है।

लाठी चलाने का अभ्यास हो तो डकैतों का ग्रामीण लोग अच्छी तरह मुकाबला कर सकते हैं। लाठी चलाने वाले प्रायः हर गाँव में मिल जाते हैं, इसके लिये शिक्षक की परेशानी भी नहीं रहती। दाहिने, बायें, आगे-पीछे और सिर के बचाव के लिये लाठी विशेष प्रकार से घुमाते हैं, जिससे अभ्यास काल में तो खूब अच्छा शारीरिक व्यायाम हो जाता है और यदि कोई मुठभेड़ हो जाय तो अच्छे लाठी-चालकों के पास जाने की किसी की हिम्मत नहीं पड़ती। गाँव में लठैतों का लोग इसलिये सम्मान भी करते हैं, क्योंकि उनमें साहस की भावना अधिक तीव्र होती हैं। लाठी चलाना, शस्त्र-शिक्षा की पहली श्रेणी है, इसका प्रशिक्षण अवश्य प्रारम्भ करना चाहिये। व्यायाम की कलाओं में यह अधिक लाभप्रद है।

फिजिकल ट्रेनिंग और सैन्डो के व्यायाम

अनुशासन शिक्षा के लिये पी० टी० का बड़ा महत्त्व है। एक साथ विभिन्न शारीरिक क्रियाओं की तालबद्ध कसरतों से क्रमबद्धता, सामूहिकता और संगठन की भावना पैदा होती है। ऐसी कसरतों में गर्दन को दायें-बायें मोड़ना, हाथों को आगे-पीछे, ऊपर नीचे घुमाना, कमर से ऊपर के हिस्से को मोड़ना पाँव और टखने की कसरत, एक साथ हाथ-पाँव और कमर की कसरतें आदि सम्मिलित हैं। इन कसरतों से शरीर में आकुंचन-प्रकुंचन क्रिया होती है, जिससे शरीर को बल मिलता है। जोड़ों की गिल्टियाँ खुल जाती हैं और उनमें मजबूती आती है। शरीर सुडौल और सन्तुलित रहता है और सारे शरीर का व्यायाम हो जाता है।

इसी प्रकार व्यायाम विशेषज्ञ सैन्डो की निकाली हुई चार महत्वपूर्ण कलायें हैं, जो श्वाँस-प्रश्वाँस क्रिया पर आधारित होने से काफी लाभदायक हैं। यह पी० टी० की तरह की ही होती हैं, पर उनमें हाथ, कलाई, कमर और पैरों को मोड़ने और उनकी कसरत पूरी करने तक साँस रोके रहने और बाद में छोड़ने की प्राणायाम क्रिया भी सम्मिलित होती है। इनमें क्रम से हलकी साँस खींचना, रोकना, बाहर निकालना तथा व्यायाम करना यह चार बातें सम्मिलित होती हैं। इससे व्यायाम और प्राणायाम का एक साथ लाभ मिलता है।

आसन और प्राणायाम

योगशास्त्र में आसन और प्राणायामों का विशद् वर्णन मिलता है और उनसे महत्वपूर्ण लाभ बताये गये हैं। कुछ आसन और प्राणायाम तात्कालिक शक्ति प्रदान करने वाले भी होते हैं पर चूँकि यह कठिन और जटिल विद्या है इसलिये योग्य मार्ग दर्शक के संरक्षण में ही इन्हें सीखा और किया जा सकता है। कुछ सर्व-सुलभ आसन और प्राणायाम भी होते हैं, उनका अभ्यास अकेले और सामूहिक रूप से किया जाय तो उससे स्वास्थ्य अच्छा रखने में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहयोग मिलता है और व्यायाम की आवश्यकता भी पूरी होती है।

योगी लोग बताते हैं कि शरीर में अनेक मर्मस्थल होते हैं, इसका महत्व इसलिये ही नहीं होता कि वे कोमल होते हैं वरन् इनमें बड़ी विलक्षण शक्तियाँ विद्यमान होती हैं, जिनका शरीर, स्वास्थ्य और मनोदिशा पर बड़ा अनुकूल प्रभाव पड़ता है, प्रकृति द्वारा अत्यधिक सुरक्षित रहने से साधारण व्यायाम उन्हें प्रभावित नहीं कर पाते। उन स्थानों का महत्वपूर्ण व्यायाम आसनों द्वारा सम्भव है और इनके लिये अनेक प्रकार के आसनों का अनुसंधान हुआ है, इनका वर्णन यहाँ संभव नहीं।

आसनों द्वारा जो लाभ मर्मों की शक्ति जागृत कर प्राप्त किया जाता है। प्राणायाम द्वारा वैसा ही लाभ प्राणत्व का आकर्षण कर प्राप्त किया जाता है। इससे फेफड़े शरीरस्थ महत्वपूर्ण चक्रों, उपचक्रों और ग्रन्थियों का व्यायाम होता है। इससे छाती चौड़ी होती है, फेफड़े मजबूत होते हैं, वजन बढ़ता है, शुद्ध रक्त संचार से हृदय की दुर्बलता दूर होती है। शिरायें सतेज होती हैं, शरीर तथा मस्तिष्क की कमजोरी दूर रहती है। दीर्घ-जीवन और प्राणबल मिलता है। तेजस्विता, प्रसन्नता, गम्भीरता, ओजस, निरालस्यता आदि गुणों की अभिवृद्धि होती है। आसनों की तरह प्राणायामों का अभ्यास भी कुशल संरक्षक की देख-रेख में ही किया जाना चाहिए।

आसन सर्वाङ्गपूर्ण व्यायाम

भारतीय तत्वदर्शी ऋषि-मुनियों ने गहन साधना तथा चिंतन, मनन के आधार पर अष्टांगिक योग साधना का पथ प्रशस्त किया। इसका एक अङ्ग आसन है। मानव जीवन के महत्तम उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्वास्थ्य एक अनिवार्य शर्त है। स्वास्थ्य के प्रति जो दृष्टिकोण जनसाधारण के मस्तिष्क में है, वह एकांगी है। स्वास्थ्य से तात्पर्य केवल शारीरिक स्वास्थ्य से लेना अपूर्ण है। शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक तीनों प्रकार से स्वस्थ मनुष्य ही मानव जीवन सार्थक कर सकता है।

कुछ व्यक्ति शरीर से स्वस्थ-सबल तथा मोटे-ताजे होते हुए भी मानसिक तथा आत्मिक स्वास्थ्य के अभाव में जीवनोद्देश्य में असफल होते देखे जाते हैं। शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य दोनों होते हुए किसी की आत्मा सोती रहे, विवेक न जागे तो वह इन सुविधाओं का गलत उपयोग करता है। उसकी क्षमता गलत दिशा में प्रयुक्त होने लगती है, जिसके परिणामस्वरूप वह स्वयं भी दुःखी होता है तथा समाज में दुःख फैलाता है एक या दो प्रकार का स्वास्थ्य होना एकांगी व लंगड़ा होता है वैसे ही उसके परिणाम भी होते हैं।

स्वस्थ रहना पहला सुख है। जो व्यक्ति अपने शरीर, मन तथा आत्मा को निरन्तर स्वस्थ तथा सबल बनाता जाता है। अपने निकट सुख सृजन करता है, वह सुख भौतिक साधनों में ढूँढ़ता नहीं फिरता तथा मृगतृष्णा की तरह जीवन भर भौतिक उपार्जन के पीछे प्यासे हिरण की तरह भागता नहीं फिरता, वरन् वह नित्य सुख प्राप्त कर लेता है। ऐसे व्यक्ति के पीछे सुख भागा करते हैं। जिधर वह जाता है सुख उसके पीछे-पीछे चलता हैं। ऐसे व्यक्ति ही सही माने में मनुष्य कहलाने के अधिकारी होते हैं।

जैसे सामान्य मनुष्य के जीवित रहने के लिए भोजन अनिवार्य है, नींद अनिवार्य है, नित्यकर्म उपासनादि अनिवार्य है, उसी प्रकार शारीरिक मानसिक तथा आत्मिक शक्ति को क्रियाशील बनाये रखने की लिये व्यायाम अनिवार्य है। व्यायाम की कई विधियाँ प्रचलित हैं, उनमें से अधिकांश एकांगी है। डण्ड, बैठक, कुश्ती से शारीरिक पुष्टि तथा बल वृद्धि तो होती है किन्तु मानसिक तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य में कोई वृद्धि नहीं होती। पहलवान प्रायः मन्द बुद्धि होते देखे गये हैं तथा दीर्घजीवी भी नहीं होते। खेलों से मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य बढ़ता है किन्तु ये खर्चीले तथा अन्य व्यक्तियों के सहयोग पर निर्भर होते हैं। अन्य शारीरिक व्यायाम प्रायः पूर्ण व्यायाम नहीं होते।

आसन पूर्णतः वैज्ञानिक तथा पूर्ण व्यायाम है। इसे पाश्चात्य विद्वानों ने भी स्वीकार किया है तथा सराहना की है। आज के युग में मनुष्य का जीवन इतना जटिल हो गया है कि व्यायामों के लिये खेल तथा अन्य साधन अपनाने के लिये सामान्य जनों के पास समय नहीं है। एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़े नगर में सामान्य जनों के पास समय नहीं है। एक बड़े नगर में सामान्य आय वाले व्यक्ति को आजीविका तथा पारिवारिक दायित्वों को निबाहने के लिए रात-दिन लगे रहना पड़ता है। ऐसे लोगों के लिए इस प्रकार के व्यायाम कर पाना कठिन है। इसके अतिरिक्त महिलाओं की आधी दुनियाँ भी इस प्रकार के व्यायाम के लिये समय भी बड़ी कठिनाई से निकाल पाती है। वृद्धों के लिये भी ये उपयुक्त नहीं हो सकते। आसन के लिये तो कोई सामग्री चाहिये न अन्य व्यक्तियों का सहयोग चाहिये। यह पूर्ण व्यायाम हर कोई हर अवस्था में नित्य कर सकता है।

यौगिक आसन यदि केवल १५ मिनट के लिये ही किये जायँ तथा नियमित रूप से किये जायें तो आश्चर्यजनक लाभ प्रदान करते हैं।

आसन केवल व्यायाम ही नहीं एक पूरी संस्कृति है। इससे पूर्ण लाभ उठाने के लिये आहार-विहार सात्विक होना चाहिए। सुपाच्य, सरस तथा प्राकृतिक रूप में लिया गया आहार इसमें सहायक होता है।

आसन करते समय शरीर पर कम से कम वस्त्र होने चाहिये नित्य-क्रम शौचादि से निवृत्त होकर आसन करें। भोजन कम से कम तीन घण्टे बाद करें। खाली पेट सुबह सूर्योदय के पहले आसन करना ठीक रहता है।

आसन वृद्ध स्त्रियों के लिए भी उपयुक्त है। जो महिलाएँ इन्हें नियमित रूप से करती हैं, उन्हें अपूर्व लाभ होता है। शारीरिक व्याधियाँ समाप्त हो जाती हैं। रोग नहीं घेरते। आयु के दृष्टिकोण से शरीर व स्वास्थ्य में शीघ्र गिरावट नहीं आती। यह विद्या इतनी वैज्ञानिक तथा सर्व सुलभ है कि इससे असहमत होना सम्भव नहीं।

आसन करते समय मन ही मन इष्ट मन्त्र का जप किया जाता रहे तो यह विशुद्ध योग साधना हो जाती है। इसके साथ ही साथ प्राणायाम का संयोग करके और अधिक लाभ पाया जा सकता है। प्राणायाम तथा आसन वैसे अलग-अलग अङ्ग हैं फिर भी एक-दूसरे से इनका घनिष्ठ सम्बन्ध है। ऋषि-मुनियों की वर्षों की तप साधना का लाभ हम स्वयं न उठायें तथा अपनी इस संस्कृति का प्रचार विदेशों में न कर सकें तो हम अभागे ही कहलायेंगे। यह किसी अपरिपक्व मस्तिष्क की उपज नहीं है। इसके पीछे जाने कितने महामानवों का योग रहा है। इनमें बहुत-से आसन उन महापुरुषों के नाम पर हैं जैसे मत्सेन्द्रासन।

उपरोक्त आसन के अतिरिक्त अन्य कई आसन हैं, जिनमें प्रमुख मयूरासन, हलासन, भुजंगासन, शलभासन, कुक्कुटासन, मत्स्यासन, सर्वांगासन, पश्चिमोत्तानासन, अर्ध मत्स्येद्रासन, मत्स्येन्द्रासन, त्रिकोणासन, सिद्धासन आदि हैं। इनमें से प्रत्येक का अपना-अपना महत्व है। ये सब विभिन्न अङ्गों के रोग निवारण, पुष्टि तथा बलवर्धन के साथ-साथ उनसे सम्बन्धित चक्रों के जागरण में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

योगासनों का वैज्ञानिक पहलू

योग मुख्यतया जीव चेतना को ब्रह्म चेतना के साथ जोड़ देने वाली भावनात्मक एवं विचारणात्मक पद्धति है। उसमें दार्शनिकता प्रधान है तथा हलचल कम। योगी अपनी हलचलों को समेटते और शरीर की शिथिलता मन की शान्ति एकाग्रता की स्थिति में ले जाने का प्रयत्न करते हैं। इससे अन्तर्जगत की थकान दूर होती है और ध्यान-धारणा के सहारे समाधि स्तर की विश्रान्ति प्राप्त करने के उपरान्त वह स्थिति बन जाती है, जिसमें नव जीवन का नये सिरे से निर्धारण सम्भव है। ब्रह्म विद्या का तत्व-दर्शन मन और चिन्तन परक है। उपनिषद् में योग का प्रतिपादन इसी रूप में हुआ है।

योग का भौतिक पक्ष वह, जिसमें शारीरिक हलचलों पर ध्यान दिया गया है और उनके सहारे स्वास्थ्य रक्षा के लिये प्रयत्न किया गया है। इस प्रतिपादन का तर्क यह है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन रहता है। इसलिए मन को सुसंस्कृत बनाने से पूर्व शरीर को स्वस्थ बनाने की आवश्यकता है।

तर्कों का यह सिलसिला व्यर्थ है। शरीर प्रथम या मन—इस वाद-विवाद में पड़े बिना भी यह माना जा सकता है कि स्वास्थ्य की अपनी उपयोगिता है और प्रधान या गौण ठहराने के झंझट में पड़े बिना भी इसे महत्वपूर्ण समझा जाय। इसके लिए जो साधन उपयोगी हो सकते हैं, उन्हें काम में लाया जाय।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

योग साधना के शरीर के पक्ष में आसन, प्राणायाम, बन्ध, मुद्रा, जैसी, क्रियापरक विधियों का समावेश है। हठयोग के अन्तर्गत नैति, धोति, वस्ति न्यौली, वज्रौली कपालभांति आदि जिन शोधन कृत्यों का विधि-विधान है, उन्हें भी इस स्तर का माना जा सकता है। व्रत, उपवास एवं तितिक्षा उपचार भी लगभग इसी श्रेणी के हैं। इनका उद्देश्य शरीर को निरोग समर्थ बनाना है। फिर भी जिन सिद्धान्तों, उपायों का इस प्रकार के क्रिया-कृत्य में उपयोग किया जाता है, उनका परोक्ष रूप से चेतना को परिष्कृत करने में भी कुछ उपयोग रहता ही है। स्वास्थ्य सुधार का लाभ भी कम महत्व का नहीं है। उसके लिए जो उपचार काम में लाये जाते हैं, उन्हें योगविद्या के भौतिक पक्ष की पूर्ति करने वाला माना और अपनाया जा सकता है।

विज्ञान क्षेत्र में शरीर को ही प्रधानता मिली है इसलिये योग के सम्बन्ध में उसका वही पक्ष आकर्षक लगा है, जो स्वास्थ्य संवर्द्धन के लिए प्रयुक्त होता है। इसलिए विदेशों में आसन, प्राणायाम को ही योग माना गया है। बहुत हुआ तो मानसिक एकाग्रता को भी इसमें सम्मिलित किया जाता है।

आसनों के सम्बन्ध में जो शोध देश और विदेश में चला है, उसमें वे अंग संचालन की सामान्य व्यायाम प्रक्रिया न रहकर उससे अधिक बढ़े-चढ़े सिद्ध हो रहे हैं। स्पष्ट है कि जिसे प्रयोगशाला स्वीकार करती है, उन्हें अन्य लोग भी अपनाने लगते हैं। लगता है कि जिन आसन अभ्यासों को उपहासास्पद ठहराया जाता था अगले दिनों तथाकथित लोगों को भी उनकी उपयोगिता देखते हुए आकर्षित होना पड़ेगा।

रूस के व्यायाम चिकित्सकों के प्रोफेसर एम० सारकी सौव सैराजिनी ने "मैन मस्ट बी हेल्दी" नामक पुस्तक लिखी है। वे वहाँ अपने विषय के मर्मज्ञ एवं विशेषज्ञ समझे जाते हैं। अपनी उक्त पुस्तक में उन्होंने स्वस्थ रहने के लिए यौगिक श्वसन का परामर्श दिया है।

सेण्ट्रल क्लीनिक हॉस्पीटल, मास्को के बाल-रोग विशेषज्ञ एवं सर्जन डॉ० अनातोली मैड वैस्टकाई रोगी बालकों को सरल एवं साधारण योगासनों का नुस्खा बताते हैं और इस कार्य में वह विशेष सफलता प्राप्त करते हैं।

रूस के ही कॉन्सटेनिटन बुटको नामक हृदय रोग विशेषज्ञ चिकित्सक ने सैकड़ों विभिन्न प्रकार के बीमारों को यौगिक क्रियाओं द्वारा ठीक करने में आशातीत सफलता प्राप्त की उन्होंने दमा से पीड़ित व्यक्तियों को औषधियाँ देने के बजाय यौगिक श्वसन की क्रिया का अभ्यास कराया। परिणाम स्वरूप उनके शरीर में प्रवेश करने वाली ऑक्सीजन व कार्बनडाइऑक्साइड के बीच रहने वाला असन्तुलन दूर हो गया और दमा के रोगियों को बहुत लाभ हुआ। दमा के अतिरिक्त वह यौगिक क्रियाओं के द्वारा मिर्गी उच्च रक्तचाप एवं हृदय रोग जैसी भयानक बीमारियों का सफल उपचार करते हैं।

वर्तमान समय में विश्व में करोड़ों की संख्या में मधुमेह के रोगी हैं। 'मेडीकल साइन्स' के द्वारा अभी तक इसका कोई सुनिश्चित उपचार ज्ञात नहीं हो सका है। ४०० ई० पू० सुश्रूत ने इन बीमारियों के रोगियों के मूत्र में मिठास की उपस्थित बताई थी। ईसा की १७वीं शताब्दी में वैस्ट बिली, शे मधुमेह से पीड़ित रोगी के मूत्र में शक्कर की उपस्थिति का परीक्षण करके दिखाया। मधुमेह के रोगी समस्त अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ प्रभावित होती हैं। प्रारम्भ में रक्त में ग्लूकोज की मात्रा कम एवं पैंक्रियाज से स्रवित इन्सुलिन की मात्रा में कमी पाई जाती है।

सेण्ट्रल कॉन्सिल फॉर रिसर्च इन इण्डियन इन्डिजिनस मेडीसन एण्ड हौम्योपैथी, द्वारा आयोजित प्रथम वैज्ञानिक सम्मेलन में डॉ० धर्मवीर, नारायण, वरन्दानी और स्वामी आनन्द ने मधुमेह की चिकित्सा में 'योग' का योगदान सम्बन्धी कुछ प्रयोगों का निष्कर्ष प्रस्तुत किया।

"यौगिक ट्रीटमेंट रिसर्च सेन्टर" नामक संस्था में विभिन्न आयु वर्ग के २८३ मधुमेह के रोगियों पर तीन महीने के लिए प्रयोग किया गया। रोगियों को संतुलित भोजन के रूप में ६८ ग्राम वसीय पदार्थ, ४०० ग्राम कार्बोहाइड्रेट्स, १०० ग्राम प्रोटीन और कुल २६०० कैलोरी नियमित ढंग से प्रदान किए। समय-समय उनका भार, मूत्र परीक्षण, खून में शुगर ग्लूकोज की जाँच

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा हृदय का ई० सी० जी० द्वारा परीक्षण किया गया।

रोगियों को प्रतिदिन प्रातः सांय दो बार सर्वाङ्गासन, हलासन, मयूरासन, पादहस्तासन, उत्तानपादासन, शीर्षासन, जानुसिरासन, पवनमुक्तासन, शवासन आदि सरल आसन एवं कुछ अन्यान्य यौगिक क्रियायें कराई जांती रहीं। साथ ही उनकी दिनचर्या नियमित क्रम से रखी तथा प्रार्थना, भजन-पूजन, ध्यान-साधना आदि का भी समावेश रखा गया।

तीन महीने के परीक्षण के बाद देखा गया तो ज्ञात हुआ कि ५२ प्रतिशत रोगी लाभान्वित हुए, उनमें से अधिकांश पूर्ण स्वस्थ हो गये। इस अवधि में भी जिन्हें बहुत अल्प लाभ पहुँचा या ठीक नहीं हुए वे या तो जन्म से रुग्ण थे अथवा लम्बी अवधि से बीमार रहे थे।

"योग लाइफ' के १९७७ के अङ्क में डॉ० लक्ष्मीकान्तन का "योग एण्ड दी हार्ट" नामक लेख छपा था। डॉ० लक्ष्मीकान्तन "मेडीकल कॉलेज" मद्रास के प्रोफेसर हैं। उन्होंने गर्वनमेण्ट जनरल हॉस्पीटल में विभिन्न हृदय रोगियों पर आसनों का प्रभाव देखने के लिए प्रयोग किए। उन्होंने ऐसे उच्च रक्तचाप वाले रोगियों के ऊपर प्रयोग किए जिन्हें "मैडीकल-चिकित्सा" से कोई विशेष फायदा नहीं हुआ। प्रोफेसर लक्ष्मीकान्तन जी ने दो प्रकार के योगासनों का अभ्यास रखा (१) जिनके रक्तचाप अधिक उच्च थे और हृदय कमजोर थे उनको केवल (शवासन में ही पैरों के नीचे नरम तकिया लगाना) का अभ्यास कराया इनको करने से रोगियों को काफी आराम मिला। (२) जिनके हृदय मजबूत थे उनके उपरोक्त अभ्यास के साथ हलासन, सर्वाङ्गासन और विपरीत करणी मुद्रा का अभ्यास कराया।

आसनों के अभ्यास के उपरान्त रोगियों को अधिक स्फूर्ति एवं शक्ति का अनुभव हुआ और उन्हें पहले की अपेक्षा अधिक अच्छी गहरी नींद आने लगी।

इसी प्रकार के परिणाम डॉ० के० के० दांते ने भी शवासन के प्रभाव से हृदय रोग के रोगियों पर पाये हैं।

पटना के डॉ० श्री निवास एवं अमेरिका के डॉ० बेनसन ने प्रयोगों के आधार पर देखा कि हृदय रोगों पर ध्यान का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है।

आसन व्यायाम पूर्णतः वैज्ञानिक व्यायाम पद्धति है। इसमें माँसपेशियों में खिंचाव एवं फैलाव होने से रक्त प्रवाह की गति में कुछ तीव्रता आती है, जबकि अन्य व्यायाम जैसे दंड-बैठक आदि से दवाब पड़ता है, जिसमें पेशियां कठोर हो जाती हैं। आसनों से पेशियों में लचीलापन आता है। शरीर स्फूर्ति की अनुभूति होती है।

शीर्षासन को आसनों में सबसे उत्तम कहा जाता है। इस पर वैज्ञानिक प्रयोग परीक्षण किये जा रहे हैं। सर्वप्रथम पोलैण्ड के 'थर्ड क्लीनिक ऑफ मेडीसन' के डायरेक्टर एलेक्जाण्डो विच (जूलियन) ने शीर्षासन के द्वारा शरीर के अवयवों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन वैज्ञानिक ढङ्ग से किया। उन्होंने शारीरिक एवं मानसिक रूप से सन्तुलित स्वास्थ्य वाले व्यक्ति पर शीर्षासन के प्रभाव को देखने के लिए एक्सरे एवं ई० सी० जी० आदि उपकरणों की सहायता ली।

प्रोफेसर जूलियन ने उस व्यक्ति को खाली पेट की स्थिति में ३०-४० मिनट शीर्षासन कराके शवासन में विश्राम कराया। आसन के पूर्व एवं बाद में परीक्षणों में निम्न निष्कर्ष निकाले।

शीर्षासन से रक्त के जमाने वाले पदार्थ सीरम, जो रक्त में पाया जाता है, उसकी मात्रा में सन्तुलन आने लगता है। उन्होंने शीर्षासन के अभ्यास से हृदय रोग के दौरे रोके जा सकने की सम्भावना व्यक्त की है।

रक्त में श्वेत कणों की वृद्धि पायी गई है, जिससे शरीर की जीवनी शक्ति एवं रोग-निरोधक क्षमता में वृद्धि पायी गई।

शीर्षासन की स्थिति में ऐक्सरे द्वारा देखे जाने पर वक्षस्थल फैला हुआ पाया एवं हृदय पूरी तरह दबावरहित देखा गया।

फेफड़ों को पर्याप्त स्थान मिलता है। फेफड़ों में ऑक्सीजन की ३३ प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी तथा श्वांस की दर एवं मात्रा में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कमी पाई गयी। श्वांस की मात्रा प्रति मिनट ८ लीटर के स्थान पर ३ लीटर हो गयी परन्तु फेफड़ों की उसको 'कन्ज्यूम' करने की क्षमता बढ़ गयी। निष्कासित दूषित वायु में ऑक्सीजन की मात्रा में १० प्रतिशत कमी हो गयी।

भुजंगासन पर अनुसंधान जून १९७८ चेकोस्लोविया में हुआ। "फर्स्ट कान्फ्रेंस ऑन दि एप्लिकेशन ऑफ योग इन रिहेविलएशन थेरॉपी" में इस आसन पर विशेष प्रयोग किए गये। प्रयोगकर्त्ताओं ने पाया है इस आधार पर मानसिक तनाव को नियमित करने में सहायता मिलती है।

शोनावाना (महाराष्ट्र) में चलने वाले प्रयोग में सर्वांगासन मयूरासन को सामान्य स्वास्थ्य सम्वर्द्धन और दुर्बलता ग्रसित रोगियों के लिए अन्य आसनों की तुलना में अधिक उपयोगी पाया गया।

देश-विदेश में आसन उपचार के सम्बन्ध में चल रहे अनुसंधान यह बताते हैं कि उन्हें सरल व्यायामों की तरह प्रयुक्त करते हुए कई ऐसे रहस्यम लाभ उठाये जा सकते हैं, जो ऐसी ही अंग संचालन की अन्य साधारण क्रिया-पद्धतियों के माध्यम से सम्भव नहीं है।

इन यौगिक व्यायामों का विशेष महत्व इस कारण से है कि उनका आधार कृत्रिम नहीं है वरन् प्राचीन काल के मनीषियों ने उनका आविष्कार प्रकृति का निरीक्षण करके ही किया है। योग-ग्रन्थों में कहा गया है कि "जीव जगत में जितनी योनियाँ (श्रेणियाँ) हैं, उतनी ही संख्या आसनों की है।" इनका आविष्कार करने वाले ऋषि मुनि सब प्रकार के जीव, जन्तु वनस्पति आदि के कार्यकलापों का निरीक्षण अपनी सूक्ष्म दृष्टि से करते रहते थे। उन्होंने अनुभव किया कि ये जीव-जन्तु बिना किसी विशेष साधन या सामग्री के जीवनयापन करते हुये केवल प्रकृति की सहायता से सब प्रकार स्वस्थ, सशक्त और कार्यक्षम बने रहते हैं, जबकि मनुष्य प्रकृति से दूर हट जाने के कारण तरह-तरह की आधि-व्याधियों में ग्रसित रहता है। इसलिये उन्होंने विभिन्न पशु-पक्षियों के बैठने तथा शारीरिक अंगों को खींचने तथा ढीले करने के ढंग से ऐसी विधियाँ खोजकर निकालीं, जिनसे विभिन्न अंगों का व्यायाम और विश्राम का उद्देश्य पूरा हो सके और उन पर किसी प्रकार का कुप्रभाव न पड़कर उनकी क्रिया-शक्ति की वृद्धि हो सके।

आसनों की पाँच श्रेणियाँ

इस प्रकार जिन योगासनों का प्रचार प्राचीन काल में किया गया था, वे मुख्यतः पाँच श्रेणियों में बाँटे जा सकते हैं। (१) वे आसन जो विभिन्न प्रकार के प्राणियों के रहन-सहन और उठने-बैठने के ढंग के आधार पर निकाले गये हैं, जैसे—भुजंग, शलभ, मयूर, बक, कुक्कुट, मकर, उष्ट्र, हंस, काक, मत्स्य, कर्म, कूर्म, सिंह, वृश्चिक आदि। (२) कुछ आसन विशेष पदार्थों की आकृति से मिलते-जुलते होने के कारण उनके नाम से प्रसिद्ध हो गये हैं, जैसे हल, धनुष चक्र, वज्र, शिला, नौका आदि। (३) कई प्रकार की वनस्पतियों और वृक्षों के अनुकरण पर भी कुछ आसनों का आविष्कार किया गया है, जैसे पद्मासन, लतासन, ताड़ासन, वृक्षासन आदि। (४) जो आसन शरीर के विशेष अंगों को पुष्ट बनाने या नीरोग करने के उद्देश्य से प्रचलित किये गये हैं, उनका नामकरण उन अंगों के नाम पर ही कर दिया गया है, जैसे सर्वाङ्गासन, शीर्षासन, गर्भासन, एकपाद-ग्रीवासन, हस्त-पादासन आदि। (५) कुछ आसन व्यक्ति विशेष के नाम पर भी प्रसिद्ध हो गये हैं, जैसे मत्स्येन्द्रासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, महावीरासन, ध्रुवासन आदि।

आसनों का प्राकृतिक स्वरूप

पशु-पक्षियों के रहन-सहन का यदि हम साधारण रूप से निरीक्षण करें और उनकी खास-खास क्रियाओं को ध्यान से देखें तो इसप्रकार के आसनों का मूल आधार समझ में आ सकता है। उदाहरणार्थ कुत्ता जब सुस्त पड़ा रहता है तो ताजगी और स्फूर्ति प्राप्त करने के लिये प्रायः एक बार आगे के पैरों पर और दूसरी बार पिछले पैरों पर जोर डालकर अपने बदन को खूब जोर से आगे और पीछे की तरफ खींचता है। इससे उसके शिथिल स्नायु उत्तेजित होकर सक्रिय बन जाते हैं और रक्त का संचार बढ़ जाता है। इसी तरह अन्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पशु-पक्षी भी समय-समय पर अपने स्नायुओं पर तनाव डालकर स्फूर्ति प्राप्त किया करते हैं।

बिल्ली जब सोकर उठती है तो अपने पैरों को कुछ नजदीक लाकर उनकी नसों को तानती है, जिससे उसकी पीठ का मध्य-भाग उँचा उठ जाता है। ऐसा करने से उसकी सुस्ती दूर होकर वह चैतन्य हो जाती है और फुर्ती से अपना काम करने लगती है।

इसी प्रकार बन्दर, हिरन, सिंह, रीछ आदि पशु समय-समय पर ऐसी क्रियाएँ और चेष्टायें करते रहते हैं, जिससे उनका शरीर पूर्णतः सक्रिय रहता है और चर्बी नहीं बढ़ने पाती। बन्दर जब एक मकान से दूसरे मकान पर कूदता है या सिंह जब अपने शिकार पर झपटता है तो देखा जाता है कि वे झपटने की विपरीत दिशा में अपने स्नायुओं और पेशियों को खींचते हैं। जितनी लम्बी छलाँग लगानी होती है उतना ही पीछे की ओर जोर डालते हैं। फिर कूदने की चेष्टा में एक दम पेशियों को ढीला छोड़कर आगे की तरफ दबाब डाल देते हैं। जिस प्रकार वाण छोड़ने के लिये धनुष की डोरी को पीछे की ओर जोर से खींचा जाता है तो वही डोरी छोड़ने पर उतने ही जोर का दबाब आगे की तरफ डालती है और वाण को दूर तक फेंक देती है। इसी प्रकार पीछे की तरफ खिंची हुई माँस-पेशियाँ और नसें समस्त शरीर को आगे की तरफ फेंक देती हैं।

इसी प्रकार प्राचीन अन्वेषकों ने सर्प, मत्स्य, मयूर, ऊँट आदि की गतिविधियों का निरीक्षण किया और उनकी विशेषताओं पर ध्यान देकर कई लाभदायक आसनों को खोज निकाला। उदाहरण के लिए कहा जाता है मोर का पाचन-संस्थान बड़ा प्रबल होता है और वह साँप तथा अन्य कठोर वस्तुओं को सहज में पचा डालता है। इस आधार पर मयूरासन की कल्पना करके मनुष्य के पाचन संस्थान, छाती और भुजाओं की उन्नति की विधि निकाली गई। साँपों के विषय में किम्बदन्ती है कि उनका वीर्य सिर में एकत्रित होकर, वहाँ एक प्रकार की चमक उत्पन्न कर देता है। इस आधार पर भुजंगासन का आविष्कर किया गया, जिससे जठाराग्नि का उद्दीपन होकर वीर्य-वृद्धि में काफी सहायता मिलती है।

शरीर-तत्वविदों ने एक ओर ऐसी खोज की जिससे आसनों की वैज्ञानिकता सिद्ध होती है। जीव-जगत की विभिन्न योनियों को पार करने के बाद अन्त में प्रकृति ने मानव-शरीर की रचना की है। जैसे किसी यात्रा की मंजिल तय करने वाले की अनुभूति में केवल मंजिल का ही ध्यान नहीं रहता वरन् सम्पूर्ण मार्ग के प्रधान दृश्यों की प्रतिच्छाया भी सूक्ष्म रूप से उसकी अनुभूति में स्थिर रहती है, उसी प्रकार मानव-गर्भ में प्रत्येक योनि की मुख्य विशेषतायें भी सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहती हैं। गर्भावस्था में मनुष्य की जो सबसे प्रथम आकृति होती है और फिर क्रमशः परिवर्तन होते हुये जिस प्रकार उसका रूपान्तर होता जाता है, उसका निरीक्षण करने वाले वैज्ञानिकों का कथन है कि गर्भस्थ भ्रूण के ये विभिन्न रूप कीड़ा, मछली, मेंढक बन्दर आदि अनेक प्राणियों की तरह दिखलाई पड़ा करते हैं। इसी सिद्धान्त के आधार पर योगियों में यह मान्यता हो गई है कि जिस प्रकार जगत में चौरासी लाख योनियाँ हैं, उसी प्रकार आसनों की संख्या भी उतनी ही हो सकती है। उपयोगिता और लाभ की दृष्टि से योगियों ने उनमें से चौरासी आसन अपने अभ्यास के लिये छाँट लिये हैं। पर सर्व साधारण के लिये इन चौरासी आसनों का भी उपयोग नहीं है। इनमें से कई आसन तो विशेष कष्टसाध्य होने से साधारण लोगों के अनुपयुक्त हैं और कुछ लम्बे समय तक ध्यान करने के लिये उपयोगी हैं। इसलिये हमने इस पुस्तक में उन बीस-पच्चीस आसनों का ही परिचय दिया है, जो स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से उपयोगी हैं और बाहरी तथा भीतरी शारीरिक अंगों पर हितकारी प्रभाव डालते हैं।

आसनों की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वे जीव-जगत की स्वाभाविक प्रक्रियाएँ तथा चेष्टाएँ हैं। कृत्रिम व्यायामों की तरह उनमें कोई ऐसी बात नहीं जो एक अंग को लाभ पहुँचाने के साथ दूसरे अंग को किसी प्रकार की हानि पहुँचा सकें। जिस प्रकार दण्ड, बैठक, मुग्दर आदि भारी व्यायामों को अधिक करने से माँस-पेशियों का आकार बढ़ जाता है, उनमें अधिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिमाण में रक्त एकत्रित हो जाता है, रक्त की अधिकता होने से मज्जातन्तु फट जाते हैं और स्नायु तथा माँस पेशियाँ थोड़े ही समय में कड़ी पड़कर निष्क्रिय हो जाती है। इसके फलस्वरूप अनेक प्रकार की शारीरिक त्रुटियाँ उत्पन्न हो जाती हैं और स्वास्थ्य की स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है।

इसके विपरीत आसनों का तथा अंग-संचालन का व्यायाम ऐसा होता है जैसे कि एक नवजात शिशु हाथ-पैरों को स्वभावतः ही चलाता और फैंकता रहता है, जिससे उसकी जीवनी-शक्ति बढ़ती है और शरीर का विकास होता रहता है। इससे विदित होता है कि शारीरिक व्यायाम एक प्रकार की प्राकृतिक आदश्यकता है और इसका स्वाभाविक रूप स्नायुओं तथा माँस पेशियों में खिंचाव उत्पन्न करना तथा शिथिलीकरण ही है। इससे उन पर अनावश्यक दबाव न पड़कर उनकी क्रियाशक्ति बढ़ती है। इससे शरीर के विभिन्न अङ्ग पर्याप्त समय तक अपना कार्य उचित रूप से करते रहने में समर्थ होते हैं और मनुष्य के स्वास्थ्य-युक्त दीर्घ-जीवन प्राप्त होता है।

स्वास्थ्य सुधार की दृष्टि से चार प्रकार के आसन

स्वास्थ्य का सुधार और वृद्धि के उद्देश्य से जो आसन किये जाने चाहिये, उनको चार मुख्य भागों में बाँटा जा सकता है—(१) खिंचाव के आसन, (२) प्राणायाम के आसन, (३) बल और शक्ति बढ़ाने वाले, (४) स्नायु-संचालन के आसन। जैसा हम पहले लिख चुके हैं स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से स्नायुओं और नसों का बड़ा महत्व है। उनके शुद्ध रहने से ही हमारे शरीर में रक्त अभिसरण ठीक तरह से हो सकता है। इससे सब अङ्गों को आवश्यक पोषण मिलता है और अशुद्ध पदार्थ बहाकर शरीर से बाहर निकाल दिये जाते हैं। रोग का मूल कारण किसी गलत अभ्यास या हानिकारक आदत के द्वारा रक्त-वाहिनी नसों को मलयुक्त और कड़ा बना देना ही है। जिस प्रकार हमारे घर की या शहर की नालियों में कूड़ा-कर्कट इकट्ठा हो जाने से पानी का बहाव कठिनाई से होने लगता है और उसे जगह-जगह गन्दगी और बदबू बढ़ने लगती है, ठीक वही हालत हमारी नसों की होती है। दूषित खान-पान या विपरीत आहार-विहार के कारण जब ये नसें मल या विजातीय पदार्थ से भर जाती हैं, तो उनमें रक्त का संचार कम या रुक-रुककर होने लगता है। यही स्थिति शरीर को निर्बल बनाने और तरह-तरह के रोगों का बीज-वपन करने की होती है। इसके कारण नसों में जहाँ कहीं गन्दगी ज्यादा बढ़ जाती है, वहीं पर वह किसी न किसी रोग के रूप में प्रकट हो जाती है।

इस स्थित का सुधार करने के लिये खान-पान तथा आहार-विहार को सुधारना, दूषित आदतों के छोड़ना तो आवश्यक है ही पर साथ ही नसों में मल इकट्ठा होकर जो दोष पैदा हो गया है, उनके लिए भी कोई उपाय करना आवश्यक है। इसका सबसे उत्तम और स्वाभाविक तरीका आसन-व्यायाम है। कोई औषधि इस कार्य को सिद्ध नहीं कर सकती। यदि इसके लिए किसी तीव्र औषधि का प्रयोग किया जायेगा तो उससे उल्टी हानि ही उठानी पड़ेगी। क्योंकि इस प्रकार कृत्रिम रीति से रक्त की गति को तीव्र करके सफाई की चेष्टा करने से दिल कमजोर होगा और स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। पर आसनों द्वारा स्नायुओं में खिंचाव उत्पन्न करके फिर उनको अन्य आसन द्वारा शिथिल करने से वे स्वयं ही अपनी सफाई आप करने लगती हैं। इस प्रकार उनकी स्थिति-स्थापक-शक्ति—फैलने और सिकुड़ने का गुण बढ़ने लगता है और वे सक्रिय होकर जगह-जगह चिपटे या रुके हुए मल को स्वयं ही बाहर की तरफ फैंकने लगती हैं।

जो आसन अथवा अङ्ग अथवा अङ्ग-सञ्चालन के व्यायाम प्राणायाम के साथ अथवा साँस को नियमित रूप से भीतर खींचते और बाहर निकालते हुए किये जाते हैं। उनको मुख्य उद्देश्य भी रक्त की सफाई के कार्य में सहायता देना ही होता है। इस उपाय से रक्त वाहिनी नसों द्वारा जो गन्दगी फेफड़े में लाई जाती है। वह साँस के द्वारा बाहर निकाली जाती है। स्वास्थ्याभिलाषी मनुष्यों को सदैव ताजा वायु में साँस लेने का उपदेश दिया जाता है, उसका आशय यही है कि हमारे भीतर से जो साँस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाहर निकलती है, वह शरीर में उत्पन्न होने वाली गन्दगी से युक्त हो जाती है। इसलिये यदि हम ऐसे बन्द स्थान में साँस लेंगे, जहाँ हमारी और अन्य व्यक्तियों के भीतर से निकली हुई साँस ठीक तरह से बाहर नहीं निकल सकती और ताजी वायु लगातार भीतर नहीं आती तो उससे वही गन्दगी मिली हुई वायु हमारे भीतर जायेगी और उससे आन्तरिक सफाई का काम बहुत कम अंशों में पूरा हो सकेगा। पर जब हम किसी खुले हुए या शुद्ध वायु के आवागमन वाले स्थान में बैठकर या खड़े होकर आसन या अङ्ग-सञ्चालन-व्यायाम करते हैं और साथ ही नियमित रूप से गहरी सांस खींचते और निकालते हैं तो स्नायुओं के खिंचाव से रक्त संचरण की गति बढ़कर दूषित तत्व फेंफड़े में आते हैं और वहाँ प्राणप्रद, वायु (ऑक्सीजन) के द्वारा उनकी सफाई होकर, उन्हें श्वाँस द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। इस प्रकार प्राणायामयुक्त रक्त को शुद्ध करने में बहुत सहायक होते हैं।

बलवर्धक या शक्ति-प्रदायक आसन और व्यायाम वे हैं, जिनसे माँस पेशियों पर खिंचाव और दबाब पड़ता है और वे पुष्ट होती हैं। शारीरिक अङ्गों को पुष्ट बनाना आवश्यक है, जिससे वे ताकत के कार्यों को करने में समर्थ हो सकें। पर जैसा हम बतला चुके हैं यह कार्य भारी व्यायाम द्वारा न करके स्वाभाविक अङ्ग-संचालन द्वारा ही किया जाना चाहिये। इसके लिए खड़े होकर किये जाने वाले आसन, जैसे सूर्य नमस्कार, 'एक हस्तपादासन' आदि विशेष रूप से उपयोगी होते हैं। इससे स्नायु और माँस पेशियाँ आदि सुदृढ़ बनते हैं और उनकी प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है।

कुछ लोग अन्य दृष्टि से भी आसनों के विभाग करते हैं। जैसे (१) खड़े होकर करने के आसन, (२) बैठकर करने के आसन (३) भूमि पर लेटकर करने के आसन, (४) उल्टा खड़ा होकर अर्थात् सिर नीचे और पांव ऊपर करने के आसन। इनमें से लेटकर और सिर नीचे की तरफ करने वाले आसन उन व्यक्तियों के लिये विशेष लाभदायक होते हैं, जिनका दिल कमजोर होता है। अन्य लोगों के लिये सभी तरह के आसन स्वास्थ्यवर्धक और शक्तिप्रदायक होते हैं। जिन लोगों का स्वास्थ्य मजबूत है उनको आसन-व्यायाम पर्याप्त समय तक करना चाहिए, जिससे पसीना आ जाय। योगशास्त्र में कहा गया है कि आसन के पश्चात् जो पसीना निकले उसे बदन में ही मल लेने से विशेष लाभ होता है। इसके पश्चात् आवश्यकता जान पड़े तो घण्टा, आध-घण्टा ठहरकर स्नान भी किया जा सकता है, जिससे सब मैल दूर हो जायेगा। यदि सुविधा हो तो स्नान किसी नदी या तालाब में तैरकर किया जाय ऐसा स्नान विशेष स्वास्थ्यप्रद और लाभजनक सिद्ध होता है।

आसन-व्यायाम के सम्बन्ध में विशेष सूचनाएँ

(१) यदि सम्भव हो तो आसनों का अभ्यास आठ-दस वर्ष की अवस्था से कराने की व्यवस्था करनी चाहिये। जिन बालकों का स्वास्थ्य मजबूत है, उनको तो इससे भी कम उम्र में अभ्यास कराया जा सकता है। पर जिन आसनों में ऐड़ी को अण्डकोषों और गुप्त-स्थान के बीच में लगाया जाता है, उनको सोलह-अठारह वर्ष के पूर्व नहीं करना चाहिए। इस प्रकार के आसनों में सिद्धासन मुख्य है। यह ध्यानात्मक आसन है, इसलिये आसन-व्यायाम करने वालों को इनकी विशेष आवश्यकता भी नहीं होती।

(२) जो लोग ज्यादा कमजोर, अशक्त या बुड्ढे हों, उन्हें प्रायः लेटकर किये जाने वाले आसन ही करने चाहिये। यदि स्वास्थ्य साधारणतः ठीक हों तो अपनी रुचि और सुविधानुसार अन्य प्रकार के आसन भी किये जा सकते हैं तो भी अधिक उम्र वाले व्यक्तियों को अपनी क्षमता का सदैव ध्यान रखना चाहिये। ऐसा न करने से व्यायाम लाभप्रद सिद्ध नहीं हो सकता। बीमारी की अवस्था में लौटकर किये जाने वाले आसन ही करने चाहिये।

(३) प्राणायाम के साथ किया जाने वाला आसन-व्यायाम विशेष लाभदायक होता है क्योंकि उसके भीतरी अंगों का सञ्चालन होता रहता है और उनका प्रभाव स्नायु-मण्डल पर विशेष रूप से पड़ता है। इस प्रकार का व्यायाम क्रमशः ही बढ़ाना चाहिए क्योंकि श्वाँस को बलपूर्वक रोकने से हानि होने की सम्भावना रहती है। जिन लोगों को दिल धड़कन की शिकायत हो या हृदय में किसी प्रकार का दोष हो उन्हें प्राणायाम सहित आसन नहीं करना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(४) आसन-व्यायाम स्त्रियों के लिये भी बहुत उपयोगी हैं। स्त्रियों को प्रायः घर के भीतर रहना पड़ता है, शिक्षित स्त्रियों को भी घर से बाहर जीवन व्यतीत करने का अवसर कम ही मिलता है। इसलिये उनके लिये आसन या अङ्ग संचालन का व्यायाम विशेष आवश्यक है, जिससे उनका स्वास्थ्य स्थिर रह सकता है। पर जिन आसनों में गुदा और अण्डकोषों के बीच एड़ी लगाई जाती है, वे उन्हें नहीं करने चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से प्रजनन अंगों पर कुप्रभाव पड़ने की सम्भावना रहती है। गर्भावस्था में कठिन व्यायाम बिल्कुल न किया जाय पर उस अवस्था में हलका व्यायाम करना बहुत लाभदायक होता है और इससे प्रसव के समय कुछ भी कठिनाई नहीं जान पड़ती। पर इस अवधि में ब्रह्मचर्यपालन का अधिक ध्यान रखना चाहिए और खान-पान में स्वास्थ्य रक्षा के नियमों का पालन करना चाहिये। मासिक-धर्म की अवस्था में भी स्त्रियों को आसन-व्यायाम वर्जित है।

(५) यद्यपि योगशास्त्र में शीर्षासन की बहुत महिमा बतलाई गई है और उसे अनेक रोगों में हितकारी बताया गया है तो भी जिन लोगों की नाक में अधिक कफ भरा होता हो, श्वाँस लेने में अधिक परिश्रम पड़ता हो, हृदय की कोई बीमारी हो या आँख, कान, आदि की कोई बीमारी हो उन्हें शीर्षासन नहीं करना चाहिये अथवा इस सम्बन्ध में किसी विशेषज्ञ से सलाह लेकर निर्णय करना चाहिए। अनेक लोग शीर्षासन की विधि ठीक नहीं कर पाते और इससे उनके मस्तिष्क को हानि पहुँच सकती है। अतः इस सम्बन्ध में विशेष सावधानी रखना आवश्यक है।

(६) जो लोग आसन-व्यायाम से पूरा लाभ उठाना चाहें, उन्हें किसी विशेषज्ञ से अथवा किसी अच्छी पुस्तक से यह जानकारी प्राप्त कर लेनी आवश्यक है कि किस आसन के बाद कौन-सा आसन किया जाय ? यों मनमाने ढंग से चाहे जो आसन करते रहने से अधिक लाभ नहीं हो सकता और कभी-कभी हानि की सम्भावना भी रहती है। जैसे विशष परिश्रम वाले आसनों के पश्चात् विश्रामदायक आसन का अभ्यास करना उचित कहा गया है। किस आसन के बाद कौन-सा आसन विशेष लाभदायक होता है ? इसका वर्णन आवश्यक होने पर उन आसनों की विधि के साथ किया जायेगा।

(७) आसन-व्यायाम के साथ दण्ड-बैठक जैसे भारी व्यायामों के करने का विधान नहीं है। आसनों के बाद अधिक परिश्रम का कार्य करने से निर्बलता बढ़ने की सम्भावना रहती है। यदि शरीर को विशेष मजबूत सुगठित बनाने के लिये विशेष परिश्रम वाले व्यायाम करने की इच्छा हो तो आसनों तथा व्यायाम के अभ्यास का समय पृथक्-पृथक् रखना चाहिये। जैसे सुबह आसन किये जायें और शाम को अन्य कसरतें की जायें।

(८) आसन-व्यायाम करने वाले को तमाखू, बीड़ी, भङ्ग, अफीम, चाय, काफी, शराब आदि जैसे दुर्व्यसनों से सर्वथा बचना चाहिये। इन नशों के कारण मनुष्य का हृदय कमजोर हो जाता है और फिर उसके लिये परिश्रम के आसन करना हानिकर होता है। जिन लोगों को पूर्वाभ्यास अथवा पिता-माता के दुर्व्यसनी होने के कारण हृदय की कमजोरी की शिकायत हो गई हो उनको यथासम्भव लेटकर किये जाने वाले आसनों का अभ्यास करना चाहिये। उनके करने से हृदय को विश्राम मिलता है और अन्य शारीरिक अङ्गों को अधिक लाभ होता है। इसके साथ सब प्रकार के नशों और दुर्व्यसनों का त्याग कर देना भी आवश्यक है।

(९) आसन व्यायाम तथा सभी तरह के व्यायामों के साथ ब्रह्मचर्य का पालन का ध्यान रखना जरूरी है। वीर्य रक्षा शरीर की पौष्टिकता तथा दृढ़ता के लिये परम आवश्यक है और महत्व की बात है। इसलिये सदैव इस सम्बन्ध में संयम रखना स्वास्थ्याभिलाषी का कर्तव्य है।

(१०) खान-पान की शुद्धता तथा पवित्रता का ध्यान रखना भी बहुत जरूरी है। माँस आदि तामसी पदार्थों का व्यवहार करने वाले लोगों के लिये आसनों का अभ्यास करना और उससे लाभ उठाना कठिन होता है। इसलिये आसन प्रेमी को शुद्ध, हल्का और स्वल्प आहार करना चाहिये। दूध और घी का सामान्य प्रयोग करना आवश्यक है, पर इन पदार्थों को भी अधिक परिमाण में ग्रहण करना ठीक नहीं। सबसे मुख्य बात यह है कि हम जो कुछ खायें वह पूरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह हज्म होकर शरीर में लग जाये और पेट में भारीपन का अनुभव न हो। भोजन की सात्विकता का ध्यान रखने से आसनों के अभ्यास में शीघ्र सफलता मिलती है।

(११) विचारों की शुद्धता भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। जो लोग विषय भोग, कामुकता, अश्लीलता के भाव मन में लाते रहते हैं या इस प्रकार की बातचीत या मनोरंजन करते रहते हैं, वे कभी उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त नहीं कर सकते। गन्दे या हीन विचार रखना स्वयं ही एक बड़ी बीमारी है। किसी भी उत्तम क्रिया का लाभ तब तक प्राप्त नहीं हो सकता जब तक कि उसमें आन्तरिक भावना का भी योग न हो।

(१२) अनेक बार अधिक समय तक आसन-व्यायाम करने पर भी कोई विशेष शारीरिक लाभ नहीं जान पड़ता । ऐसी दशा में अभ्यासी को साधारण और मन्द-गति से आसन करने के बजाय शीघ्रतापूर्वक तीव्रगति से करना चाहिये। वास्तव में सभी प्रकार के व्यायामों में फुर्ती और मुस्तैदी का गुण होना एक आवश्यक बात। जो व्यायाम ढीलेपन से किया जायेगा उससे कोई लाभ कठिन ही है। वैसे योग-शास्त्र में आसन का लक्षण यही कहा गया है कि साधक को लगातार निश्चल होकर एक ही अवस्था में बैठे रहना चाहिये। पर वह बात ध्यानात्मक आसनों के लिये है और योगाभ्यासियों के लिये ही उसका पालन करना आवश्यक है। इसके विपरीत जो लोग स्वास्थ्य प्राप्ति की दृष्टि से आसनों का अभ्यास करते हैं, उनको कोई एक आसन लगातार देर तक करने के बजाय आसन को जल्दी-जल्दी खोलकर बार-बार करना चाहिये। इस प्रकार बार-बार आसन की आवृत्ति करने से वह व्यायाम का रूप धारण कर लेता है।

(१३) नियमितता और समय का ध्यान रखना एक बड़ी उपयोगी और लाभदायक प्रवृत्ति है। जो व्यक्ति इस प्रकार के व्यायाम को महत्वपूर्ण समझकर उसे नियत समय पर बिना नागा के करता रहेगा, वह उसका वास्तविक लाभ उठा सकेगा। चाहे जब, कभी कम और कभी अधिक, मनमाने ढङ्ग से व्यायाम कर लेने से उसका लाभ बहुत कम हो जाता है। इसलिये जहाँ तक सम्भव हो प्रत्येक स्वास्थ्य-वर्धक व्यायाम एक योजनाबद्ध ढङ्ग से लगातार प्रतिदिन ठीक समय पर करते रहने की व्यवस्था बनानी चाहिये।

(१४) इन सब नियमों का पालन करने के साथ दृढ़ इच्छाशक्ति पूर्ण-विश्वास और आन्तरिक-श्रद्धा की भावना रखना भी आवश्यक है। किसी प्रकार का दबाब या विवशता का अनुभव करते हुये व्यायाम करना उसके लाभों को बहुत घटा देता है। इसलिये व्यायाम करते समय मन में प्रसन्नता तथा उत्साह का भाव रखना तथा यह भावना रखना कि उसके द्वारा हमारी शारीरिक और मानसिक उन्नति हो तो रही है साधारण व्यायाम के लाभ बहुत बढ़ा देता है।

स्वास्थ्य-रक्षा के उपयोगी आसन

जैसा हम बतला चुके हैं आसन कई प्रकार से किये जाते हैं, जिनमें खड़े होकर, बैठकर, लेटकर और उल्टे होकर—ये चार श्रेणियाँ हैं। अभ्यास करने वाले को जिस अभ्यास की पूर्ति करनी हो उसी के अनुकूल आसनों का चुनाव करना चाहिये। उदाहरण के लिये जो लोग शारीरिक और स्वास्थ्य की वृद्धि करना चाहें उनके लिये एक प्रकार के आसन हितकारी रहते हैं, जो किसी विशेष शारीरिक त्रुटियों या बीमारी को मिटाना चाहें उनके लिये दूसरी प्रकार के आसन उपयोगी सिद्ध होंगे और जो वृद्धावस्था में उत्पन्न होने वाली निर्बलता तथा अङ्गों के विकार से बचना चाहें, उनके लिये तीसरी प्रकार के आसन सहायक हो सकेंगे। इस अगले भाग में इन तीनों प्रकर के आसनों का विधि और लाभों सहित वर्णन करेंगे जिनमें से पाठक अपनी आवश्यकतानुसार एक या अधिक प्रकार के आसनों का निर्वाचन कर सकते हैं।

जिन लोगों की शारीरिक अवस्था सामान्य रूप से ठीक है, जिनमें अभी विशेष निर्बलता उत्पन्न नहीं हुई है, उनके लिये खड़े होकर किये जाने वाले आसन अधिक उपयुक्त होंगे। इनको आसनों के बजाय व्यायाम कहना ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि इनमें शरीर की माँस-पेशियों तथा स्नायुओं पर तनाव डालकर उनकी शक्ति को बढ़ाना ही मुख्य उद्देश्य होता है। हम जिस प्रकार अपना दैनिक जीवन व्यतीत करते हैं उसके फलस्वरूप शारीरिक अङ्गों में कुछ विजातीय द्रव्य उत्पन्न होता है। हमारी रक्त-संचार प्रणाली इस दूषित तत्व को बहाकर शरीर के बाहर निकालने की व्यवस्था करती है। पर तो भी आयु वृद्धि के साथ उसका कुछ अंश शारीरिक जोड़ों के स्थान पर रुककर इकट्ठा होने लगता है। यही एकत्रित मल समयानुसार तरह-तरह की त्रुटियों और व्याधियों को उत्पन्न करता है। आसन व्यायामों द्वारा उन जोड़ों (सन्धि स्थानों) को उचित रीति से संचालन हो सकता है, जिससे उस मल के वहाँ से हटाकर बाहर निकलने में सहायता मिलती है। इससे शरीर शुद्ध और निर्मल होकर व्याधियों का भय जाता रहता है और स्वास्थ्य के स्थिर रहने में बहुत सहायता मिलती है।

(१) पाद-हस्तासन

मानव शरीर में प्राथमिक आवश्यकता के, सबसे कार्यशील अङ्ग पाचन-संस्थान तथा मल निष्कासन यन्त्र हैं। यदि ये दोनों अपना काम ठीक ढंग से पूरा करते रहें तो शरीर के अन्य अंगों को उचित पोषण मिलता रहेगा और वे अपना काम उचित रीति से कर सकने में समर्थ हो सकेंगे। 'पाद-हस्तासन' इन दोनों अंगों को ठीक व्यायाम कराके कार्यक्षम बनाये रखने का बड़ा उत्तम साधन है। यह एक ऐसा सरल व्यायाम है, जो बालक से बूढ़े तक सबके लिये समान रूप से उपयोगी है। इसलिये इसे सामान्य रूप से स्कूलों में विद्यार्थियों से कराया जाता है और फौज में सिपाही भी इसे करते हैं। यद्यपि वहाँ 'आसन' के बजाय इसके नाम भिन्न-भिन्न हैं और विधि में भी थोड़ा-सा अन्तर कर दिया जाता है, पर उसका आधार यह 'पाद-हस्तासन' ही होता है।

इस आसन का अभ्यास करने के लिये पहले तनकर सीधा खड़े हो जाइये और दोनों हाथों को भी ऊपर की तरफ पूरी ऊँचाई पर तान लीजिये। तब हाथों को धीरे-धीरे नीचे की तरफ झुकाकर जमीन की तरफ ले जाइये और दोनों पैरों के अँगूठे को पकड़ लीजिये। इस समय खास ध्यान यह रखा जाय कि दोनों पैर बिल्कुल तने रहें और घुटने जरा भी न मुड़ने न पावें। इसके पश्चात् सिर को भी हाथों के बीच में होकर घुटनों की तरफ झुकाया जाय यहाँ तक कि नाक घुटनों से छू जाय।

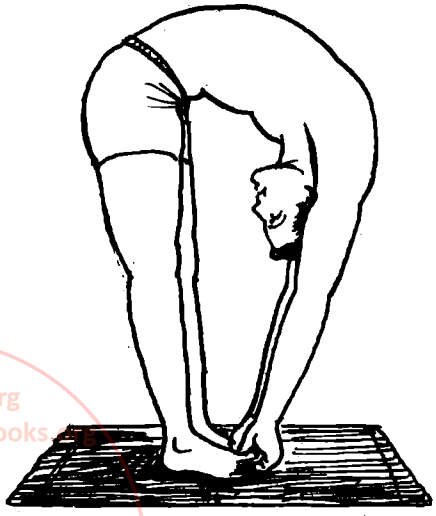

पादहस्तासन

यह आसन इस आसन की पूर्ण अवस्था है। यह आवश्यक नहीं कि आप पहले ही दिन पैरों के अँगूठे को पकड़ लें और सर को घुटनों से भी लगा लें। ये सब अभ्यास क्रमशः ही करने चाहिये। आरम्भ में हाथों की उँगलियाँ पैरों के अँगूठों के पास न पहुँच सकें तो जहाँ तक पहुँच सकें वहीं तक ले जाइये और प्रतिदिन उसे अधिक नीचे ले जाने का प्रयत्न करते रहिये। दस-बीस दिन कोशिश करते रहने पर आप अँगूठों को पकड़ने लग जायेंगे। इसके बाद माथे को घुटनों से लगाने का प्रयत्न कीजिये। इसमें भी एक-दो महीने का समय लग सकता है। नई उम्र के लड़के जिनके अङ्ग अभी लचकदार हैं, इसे एक-दो सप्ताह में ही करने लग जायेंगे। पर प्रौढ़ और वृद्ध अवस्था वालों को यदि इसमें कई महीने लग जायें तो भी कोई आश्चर्य नहीं। साथ जिन वृद्ध लोगों ने आरम्भिक अवस्था में कभी व्यायाम नहीं किया है अथवा जिन प्रौढ़ लोगों का शरीर विशेष मोटा-ताजा है, उनको पैर के अँगूठे पकड़ने में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सफलता न मिले तो कोई हर्ज की बात नहीं। मुख्य तात्पर्य यही है कि उपर्युक्त क्रियाओं को करने की यथासम्भव कोशिश करनी चाहिये। उससे जितना आप कर सकेंगे उतना लाभ मिल ही जायेगा। इस आसन को करते समय पेट को जितना अधिक भीतर की तरफ खींचा जायेगा उतनी ही इसमें सुविधा रहेगी।

इस आसन से पैर, पीठ, कमर के स्नायुओं पर खूब खिंचाव पड़ता है और आमाशय तथा मल को निकालने वाली बड़ी आँत पर भी पर्याप्त दबाव पड़ता है। इससे इन अंगों के विकार दूर होकर ये शुद्ध और सशक्त बनते हैं। अजीर्ण, कब्ज और पेट की अन्य अनेक खराबियों के लिये यह आसन अत्यन्त लाभदायक हैं। इससे जठराग्नि प्रदीप्त होकर भोजन के पचने में सहायता मिलती है और शरीर को उपयुक्त परिमाण में रस और रक्त की प्राप्ति होकर स्वास्थ्य स्थिर रहता है।

(२) हस्तपादांगुष्ठासन

सीधे खड़े होकर सिर, गर्दन, पीठ और पैरों को बिल्कुल एक सीध में रखिये। छाती

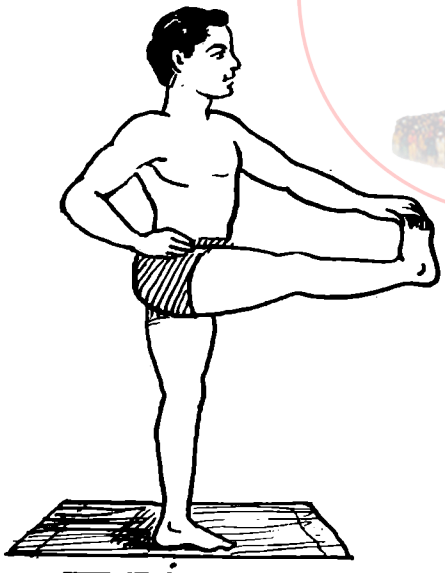

हस्तपादांगुष्ठासन

सामने की तरफ तनी हुई रहे। अब एक पाँव को धीरे-धीरे इतना ऊपर उठाइये कि वह कमर के साथ समकोण बनाने लगे। दूसरा पैर बिल्कुल सीधा रहे। अब दूसरी तरफ के हाथ से इस उठे हुए पैर के अँगूठे को पकड़िए, पर पैर जरा भी झुके नहीं। इस स्थिति में आधी या एक मिनिट रहकर फिर सिर को झुकाइये और यह प्रयत्न कीजिए कि मस्तक या नाक घुटने से छू जाय। यह जरूरी नहीं कि यह कार्य एक-दो दिन में ही हो जाय, पर धीरे-धीरे प्रयत्न किया जाता रहे तो एक-दो महीने में सफलता मिल सकती है। मस्तक को झुकाते समय पेट को भीतर की तरफ खींचना चाहिए, जिससे झुकने में आसानी रहेगी।

जिन लोगों का शरीर कमजोर हो या अधिक मुटाई के कारण इस आसन में कठिनाई का अनुभव करें, उनको चाहिये कि आरम्भ में दीवार का सहारा लेकर खड़े हों और आवश्यकता समझें तो पैर के नीचे किसी कुर्सी या तिपाई का सहारा लगा लें। यदि अधिक अवस्था हो जाने के कारण इस प्रकार खड़े होने में कठिनाई जान पड़ती हो तो लेटकर भी व्यायाम किया जा सकता है। उस समय पीठ जमीन पर लगी रहेगी और पाँव को धीरे-धीरे उठाकर सीधा कर लिया जायेगा। इस प्रकार अभ्यास करने में अधिक जोर नहीं पड़ता। किसी भी कारणवश निर्बल हुये लोगों के लिए इस प्रकार लेटकर आसन करना ही अधिक हितकर सिद्ध होगा। अभ्यास करते समय पहले एक पाँव को फिर दूसरे को क्रमशः उठाना चाहिए।

यह आसन कुछ कठिन है, इसिलए इसका समय बहुत धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए। आरम्भ में यदि चौथाई मिनिट भी खड़े रहा जाय तो कोई बुराई नहीं। धीरे-धीरे शक्ति और अभ्यास के अनुसार दो-तीन मिनिट तक खड़े रहने का अभ्यास बढ़ाया जा सकता है। इस आसन से जाँघ, कमर, पीठ, गला आदि के स्नायुओं पर खिंचाव पड़ता है, जिससे इन सब अंगों को लाभ पहुँचता है। कमर के दर्द तथा तोंद निकलने में इस आसन से शीघ्र ही फायदा नजर आता है।

(३) पश्चिमोत्तानासन

यह पाद-हस्तासन से मिलता-जुलता है। अन्तर इतना ही है कि वह खड़े होकर किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है और यह जमीन पर बैठकर। पहले पैरों को सीधा फैलाकर बिल्कुल जमीन से मिलाकर रखा जाय, अर्थात् घुटने उठे या मुड़े न रहें। फिर झुककर दोनों हाथों से दोनों पैरों के अँगूठे पकड़ लिए जायें। जिन लोगों को पेट ज्यादा निकला होता है अथवा किसी कारणवश जिनकी रीढ़ की हड्डी में लोच नहीं होती उनको अँगूठे पकड़ने में कठिनाई जान पड़ती है। पर धीरे-धीरे अभ्यास करने से प्रत्येक मनुष्य इसमें सफल हो सकता है। जब अँगूठे ठीक पकड़ लिए जायें तब कुछ साँस निकालकर मस्तक को घुटनों की तरफ झुकाया जाय और यह प्रयत्न किया जाय कि नाक घुटनों से छू जाय। इस क्रिया में सबसे अधिक ध्यान इसी बात का रखना चाहिए कि घुटने और पैर बिल्कुल सीधे रहकर जमीन से लगे रहें। अगर घुटने थोड़ा भी मुड़कर ऊपर उठ गए तो इस आसन का तान' या नसों का तनाव अधूरा रह जायेगा।

पश्चिमोत्तानासन

इसलिए इसकी सरल विधि यही है कि अँगूठे पकड़ने और नाक को घुटनों तक पहुँचाने में शीघ्रता न की जाय, वरन, अपनी शक्ति और शारीरिक स्थिति के अनुसार जहाँ तक पहुँचा जाय उतने से ही अभ्यास करता रहे और धीरे-धीरे दो-चार महीना, जितना भी समय लगे, उतने में ही आसन को पूरा किया जाय। फिर भी अवस्था अधिक हो जाने और हड्डियों का लोच घट जाने से अगर नाक घुटने से न लग सके तो उसकी भी चिन्ता न करें। इस प्रकार अभ्यासों में स्वाभाविकता का ध्यान रखना आवश्यक है। नसों और हड्डियों पर अधिक जोर डालने से लाभ के बजाय हानि भी हो सकती है। इसलिए अपने शरीर की स्थिति के अनुसार जितना हो सके उतने का ही अभ्यास करते रहना ही पर्याप्त है और उससे उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है। जो लोग पेट के निकल आने के कारण इसमें कठिनाई अनुभव करते हों उनको निराश होने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि इस आसन के अभ्यास से पेट स्वाभाविक स्थिति में आता जायेगा और कुछ महीनों में स्वयमेव सफलता मिल जायेगी।

शारीरिक स्थिति को सुधारने की दृष्टि से इस आसन को एक बार में चौथाई या आधा मिनिट करना ही काफी है। हाँ, एक बार छोड़ कर बार-बार अँगूठा पकड़ने से इसे तीन-चार मिनिट तक किया जा सकता है।

इस आसन से पीठ और पेडू की हड्डियों तथा नसों पर पूरा तनाव पड़ता है, जिससे उनमें रक्त का संचार उत्तम रीति से होने लगता है और उनकी त्रुटियाँ दूर होकर स्वास्थ्य की उन्नति होती है। पेट सम्बन्धी शिकायतों को दूर करने में इस आसन का खास महत्व है। अग्निमान्द्य, बदहजमी, अपच आदि की खराबी में इससे बहुत लाभ जान पड़ता है और कोष्ठबद्धता मिटकर शौच साफ आने लगता है। पर जल्दबाजी और अधिकता करने से कब्ज बढ़ भी सकता है।

(४) भुजंगासन

पहले आसन पर पेट के बल सीधा लेट जाय जिससे पैर, पेट, छाती और मस्तक जमीन से छूते रहें। आरम्भ में समस्त शरीर को ढीला करके जमीन से पूरी तरह मिला देने की कोशिश करनी चाहिए। उस समय पैरों के तलवे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यथा सम्भव सीधे रहें, अर्थात् पैरों की उँगलियों की नोंक जमीन को छूती रहें। दोनों हाथ कोहनी पर से मोड़कर सीने के पास लगे रहें।

इसके पश्चात् क्रमशः शरीर की पेशियों को संकोच करके सिर और छाती को ऊपर उठाने की चेष्टा की जाय। आरम्भ में इस कार्य में दोनों हाथों से भी सहारा लिया जा सकता है, पर धीरे-धीरे यह प्रयत्न करना चाहिए कि हाथों पर यथा सम्भव जोर कम डाला जाय और पीठ की माँस-पेशियों का संकोच करके, उनकी शक्ति से ही ऊपर शरीर को ताना जाय। शरीर को ऊपर उठाते हुये नाभि को जमीन से दो-डेढ़ इंच ऊँचा उठा लिया जाता है। उस समय सारे धड़ का भार पेडू के ऊपर ही आ जाता है। इस समय रीढ़ की हड्डी कमर के पास धनुषाकार हो जाती है, सिर साँप के फन की तरह बाहर निकला और उठा होता है तथा पैरों के तलबे ऊपर की ओर रहते हैं। इस आसन के लाभों का वर्णन करते हुए एक अनुभवी ने लिखा है—

इस आसन से दोनों ओर आगे-पीछे पेट, और रीढ़ के मोड़ से धड़ की सारी पेशियों का एक बार व्यायाम और एक बार शिथिलीकरण हो जाता है। शरीर के इस भाग में आमतौर से रक्त संचार कम रहता है। पर इस आसन से पेट और पीठ की सारी पेशियों और नसों को ताजे खून की प्राप्ति काफी मात्रा में हो जाती है। इस आसन का सबसे ज्यादा खराब दबाव रीढ़ की हड्डियों और स्नायुओं पर पड़ता है। पीठ का दर्द या थकावट तो सिर्फ एक बार भुजङ्गासन करते ही दूर हो जाती है। रीढ़ की हरेक हड्डी तथा वहाँ की स्नायुओं के इकत्तीस जोड़ पूरा व्यायाम और साथ ही पूरा आराम पा जाते हैं। पीठ या पेट की कोई हड्डी यदि कुछ हटी हो तो इस आसन से ठिकाने पर आ जाती है।

"पेट की दोनों नाड़ियों (जिनसे नौली चलती है) के पूरे व्यायाम होने के कारण भुजङ्गासन द्वारा सुषुम्ना नाड़ी की गति-प्रणाली में काफी वृद्धि हो जाती है। सुषुम्ना नाड़ी की स्थिति ऐसी है कि यों उसको रक्त-संचार ही नहीं मिलता। इस नाड़ी के चेतन हो जाने से अनेक महत्वपूर्ण शारीरिक लाभ प्राप्त होते हैं। भोजन के बाद जिन लोगों को आलस्य धर दबाता है, उनका सबसे अच्छा इलाज भी भुजङ्गासन ही है। स्त्रियों के लिये यह आसन विशेष रूप से लाभदायक है। जो शिकायतें आमतौर से स्त्रियों के 'गुप्त रोगों' के नाम से प्रसिद्ध हैं, उनका अचूक इलाज भुजंगासन है।

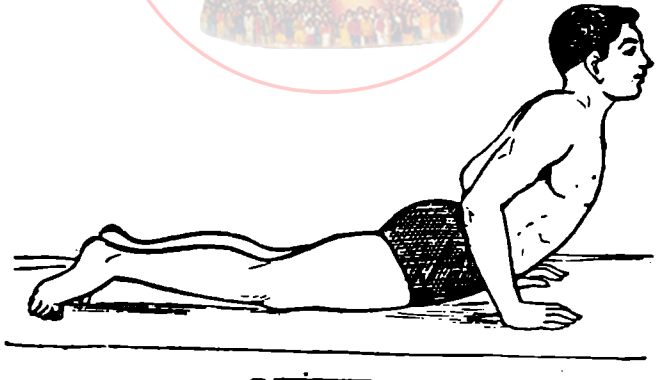

भुजंगासन

इस आसन का अभ्यास भी धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिये। सर को ऊपर की तरफ उठाते और रीढ़ की हड्डी को मोड़ते हुए जब इस आसन की पूरी स्थिति प्राप्त हो जाय, तब उसमें ५ या १० सेकिण्ड ठहरना काफी है। एक बार ज्यादा देर तक ठहरने के बजाय ५-५ सेकिण्ड ठहरकर कई बार आसन को करना अधिक उपयोगी है। सिर को ऊपर की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरफ तानते समय साँस भरते रहें और नीचे लाते समय निकालते चले जायें। जब तक पूर्ण अवस्था में ५ या १० सेकिण्ड ठहरे रहें, तब तक साँस रोकी जाय अर्थात् कुम्भक की अवस्था रखें।

(५) शलभासन

इस आसन को भुजंगासन का उल्टा कहा जाता है। आशय यह है कि जहाँ भुजंगासन में शरीर के अगले भाग का व्यायाम होता है, वहाँ शलभासन में शरीर के पिछले भाग को तान कर उठाया जाता है, जिससे छाती और पेट के भीतरी अंगों का विशेष रूप से लाभ पहुँचता है। इसमें गहरी साँस खींचने का नियम होने से फेंफड़ों और दिल का व्यायाम हो जाता है और पेट पर दबाब पड़ने से पाचन-संस्थान की शक्ति भी बढ़ती है। इससे पेट की अँतड़ियों पर भी प्रभाव पड़ता है, जिससे कब्ज दूर होने में सहायता मिलती है।

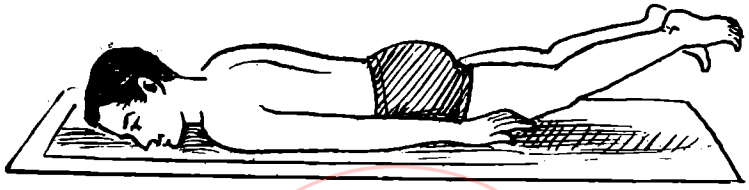

शलभासन

'शलभ' का अर्थ टिड्डी या बड़ा पतङ्गा होता है। इस आसन में मनुष्य की आकृति लगभग वैसी हो हो जाने से इसका नाम 'शलाभासन' पड़ गया है। इसके लिए आसन पर पेट के बल सीधे लेटकर सिर से लेकर पेडू तक के भाग को तो जमीन से सटा हुआ रखना चाहिए और पैरों की सीधे रखते हुए ऊपर की ओर तानकर उठाना चाहिए।

आसन के लिए लेटते समय दोनों हाथों को बगल में सीधा रखा जाता है और मुट्ठी कसकर बाँध ली जाती है, क्योंकि पैर जब ऊपर की और उठाये जाते हैं तो उनका अधिक भार हाथों की कलाइयों पर भी पड़ता है। इसलिये दोनों हथेलियों को उलटकर रखा जाता है। जिससे उनके द्वारा जोर लगाकर पैरों को ऊपर उठाया जा सके। दूसरा अंग जिस पर जोर पड़ता है वह छाती है। पैरों को तानते समय वहाँ की पेशियों को भी कड़ा करके जोर लगाया जाता है। पैरों को धीरे-धीरे उठा सकना सम्भव नहीं होता। इसलिए गहरी साँस भरके और बदन को कड़ा करके, शीघ्रतापूर्वक पैरों को जहाँ तक सम्भव हो ऊपर की ओर ताना जाता है और जब तक इस अवस्था में रहा जाय तब तक साँस को रोके रहना होता है।

इस आसन में शरीर पर काफी दबाब पड़ता है और छाती की पेशियों को कड़ा करके पैरों को तानना होता है, इसलिये जिन लोगों के दिल, फेंफड़े कमजोर हों या दिल धड़कने की बीमारी हो उनको इस आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

(६) धनुषासन

इस आसन में भुजंगासन तथा शलभासन दोनों की विशेषताओं का सम्मिलन किया गया है। सामने की तरफ धड़ को और पीछे की तरफ पैरों को मोड़कर पीठ के ऊपर दोनों पैरों को दानों हाथों से पकड़कर सारे शारीर को तान दिया जाता है। उस समय केवल पेडू का ही थोड़ा-सा भाग और पेट जमीन से लगा रहता है और शरीर का समस्त भार उसी पर रहता है। इस आसन में शरीर की आकृति खिंचे हुये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धनुष की-सी हो जाने से ही इसका ऐसा नाम पड़ा है।

धनुषासन के लिये पहले पेट के बल आसन पर लेट जाइये। दोनों पैर सटे रहें। तब घुटनों को मोड़कर पिंडलियों को जाँघों पर लाइये और दोनों हाथों से दोनों टखनों को पकड़ लीजिए। तब हाथों और पैरों को खींचने की चेष्टा करते हुए सिर तथा पैरों को जहाँ तक बन सके तानिये। इस समय साँस भी भर लेनी चाहिए। ५ या १० सेकिण्ड इस तनी हुई अवस्था में रहकर फिर साँस को निकालते हुए तनाव को कम कीजिए और पूर्ववत् अवस्था पर आ जाइए।

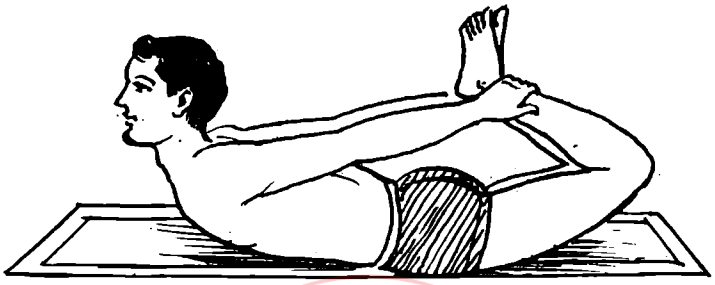

धनुषासन

इस आसन की क्रियायें शीघ्रतापूर्वक करनी होती हैं, इसलिए इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि किसी अंग में झटका न लग जाय। साथ जिस समय हाथ और पैरों को परस्पर खींचकर छाती और जाँघों को ऊपर की ओर उठाने की कोशिश की जाती है, तब शरीर का संतुलन बिगड़कर किसी तरफ लुढ़क पड़ने की संभावना हो जाती है। इसलिए इन दोनों बातों से बचने की सावधानी रखकर ही आसन का अभ्यास करना चाहिए।

जो लाभ भुजंग और शलभ आसनों में बतलाए गए हैं, वे सब इस आसन में कुछ कम मात्रा में मिलते हैं। पर पेडू की पेशियों का व्यायाम इसमें बहुत अच्छा हो जाता है, जिससे पाचन-शक्ति और मल विसर्जन शक्ति की वृद्धि होती है। साथ ही भीतरी भागों में रक्त का संचार होने से वहाँ के अनेक दोष दूर हो जाते हैं।

(७) सर्वाङ्गासन

आसन-विज्ञान में शीर्षासन' का महत्व बहुत अधिक बतलाया गया है और कितने ही लेखकों ने उसे सब प्रकार की व्याधियों को मिटाने की अपूर्व विधि बतलायी है। पर अन्य लोग यह भी कहते हैं कि शीर्षासन सबके लिए उपयोगी नहीं, अनेक बार उससे स्वास्थ्य में भयङ्कर व्यतिक्रम होता देखा जाता है। कुछ भी हो यह आसन बड़ी आयु के लोगों के लिए कठिन अवश्य है। इसलिए हम इस पुस्तक में उसका विशेष वर्णन न देकर 'सर्वाङ्गासन' की विधि देते हैं, जिसको एक विद्वान ने 'शीर्षासन का छोटा भाई' कहा है।

'सर्वाङ्गासन' एक प्रकार विशुद्ध व्यायाम की तरह है। सारे शरीर को धीरे-धीरे ऊपर की तरफ तानने से सभी अंगों की शक्ति प्राप्त होती है और रीढ़ की हड्डी का उत्तम व्यायाम हो जाता है। इस आसन की पूर्ण अवस्था में कण्ठ के भीतर रहने वाली "थ्वाइराइड ग्लैण्ड" (कण्ठ मणि) पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है और उसके द्वारा समस्त शरीर के स्वास्थ्य की उन्नति होती है। इसी दृष्टि से सम्भवतः इसका नाम सर्वाङ्गासन रखा गया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्वाङ्गासन के लिए पहले एक कम्बल बिछाकर पीठ के बल सीधा लेट जाइये। दोनों हाथ बगल में रहें और सारा शरीर ढीला छोड़ दिया जाय। फिर साँस भरकर दोनों पैरों को धीरे-धीरे इतना उठाया जाय कि जमीन से एड़ियाँ लगभग एक फुट ऊँची हो जायें। उस अवस्था में चार-पाँच सैकिण्ड रुककर साँस को निकालकर फिर भर लीजिए और पैरों को फिर धीरे-धीरे उठाते जाइये, जिससे अन्त में वे कमर के ऊपर बिल्कुल सीधे-समकोण की अवस्था में आ जायें। इस अवस्था में भी कुछ सैकिण्ड रुककर टाँगों को फिर कुछ सिर की तरफ झुकाइये और तब दोनों हाथों से पीठ को कुछ सहारा देकर छाती तक के धड़ को ऊपर की तरफ तान दीजिये। इसमें धीरे-धीरे इस बात का प्रयत्न किया जाता है कि ठोड़ी छाती से छूने लगे। ऐसा होने से ही थ्वाइराइड गिल्टी पर दबाव पड़कर उसका व्यायाम होता है। योग-शास्त्र की भाषा में इसको जालन्धर बंध कहते हैं। पर व्यायाम की दृष्टि रखने वाले को इसके लिए कोई विशेष प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं, शरीर को ऊपर तानते हुए स्वाभाविक रीति से जितना दबाव पड़ जाय उतना ही ठीक है।

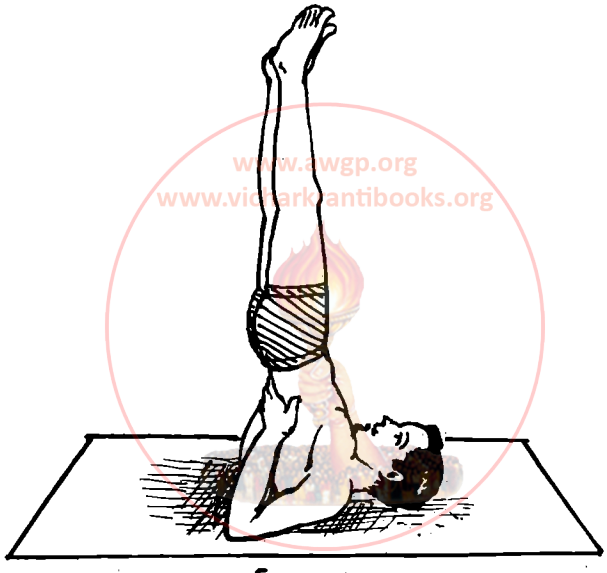

सर्वाङ्गासन

कुछ लोगों का मत है कि सर्वाङ्गासन करते समय पीठ को हाथों से सहारा नहीं देना चाहिए वरन् हाथों को पूर्ववत् जमीन पर फैलाये हुये पीठ की पेशियों के आधार पर ही शरीर को तानना चाहिये। जिन लोगों का शरीर काफी सशक्त और स्वस्थ हो वे थोड़ी देर इस अवस्था का भी अभ्यास कर सकते हैं। पर सबके लिये इसकी आवश्यकता नहीं क्योंकि हाथों का सहारा न रहने से शरीर को बिल्कुल सीधा रखना और उसका हिलना-डुलना न होना कठिन होता है।

सर्वाङ्गासन की पूर्ण स्थिति आ जाने पर आरम्भ में उसमें आधा या एक मिनिट रहना ही पर्याप्त है। फिर जिस क्रम से पैरों और पीठ को ऊपर की तरफ ताना गया था, उसी क्रम से उनको नीचे की तरफ लाकर सीधे लेटने की अवस्था में ले आना चाहिये। जब अभ्यास बढ़ता जाय तो चार-पाँच मिनिट तक आसन को पूर्ण अवस्था में स्थिर रहना चाहिये। वैसे जो लोग केवल सर्वाङ्गसन का ही व्यायाम करते हैं, वे लगभग आधा घण्टा तक उसी स्थिति में बने रहते हैं और उसके बाद आधा घण्टा तक शवासन में पड़े रहकर विश्राम करते हैं। पर हम सब लोगों से इतना समय लगा सकने की आशा नहीं कर सकते। इसलिये साधारण स्थिति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में पाँच मिनिट तक इस आसन को करना पर्याप्त होता है।

स्वास्थ्य सम्बन्धी अन्य लाभों के साथ इस आसन से वीर्य के शुद्ध और स्वस्थ होने में बहुत सहायता मिलती है। जिनको इस प्रकार की कोई वीर्य सम्बन्धी शिकायत हो, वे सर्वाङ्गासन का अभ्यास करके बिना किसी औषधि के पूर्णतया नीरोग हो सकते हैं और दाम्पत्य-जीवन का सन्तोषजनक रीति से निर्वाह करने की स्वाभाविक शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। ये सब गुण थ्वाइराइड का व्यायाम होने और उसके रस के ठीक परिमाण में निकलने से ही उत्पन्न हो जाते हैं। इस दृष्टि से सर्वाङ्गासन बड़ा उपयोगी माना गया है।

(८) हलासन—

शारीरिक व्यायाम और स्वास्थ्य की उन्नति की दृष्टि से हलासन का स्थान बहुत ऊँचा है। इसकी क्रिया बहुत कुछ आधुनिक 'जिमनास्टिक' से मिलाती हुई है और इसके अभ्यास से भीतरी अङ्गों का व्यायाम होने के साथ बदन में इतना लोच आ जाता है कि वृद्धावस्था का प्रभाव बहुत समय तक दिखाई नहीं पड़ता। एक दृष्टि से हलासन को सर्वाङ्गासन का बढ़ा हुआ रूप भी कह सकते हैं। इसकी पहली तीन-चार अवस्थायें सर्वाङ्गासन के समान ही होती हैं। अन्तर इतना ही होता है कि शरीर को ऊपर की तरफ सीधा खड़ाकर देने के बजाय पीछे की तरफ मोड़ दिया जाता है और पैरों को सिर के पास ही जमीन से लगा देते हैं। यह क्रिया बहुत कुछ वैसी ही होती है जैसी बालकों के कला खाने के समय दिखाई पड़ती है।

पहले आसन बिछाकर पीठ के बल बिल्कुल सीधे लेट जाइये। दोनों हाथ बगल में सीधे पड़े रहें। हाथों को जैसे का तैसा रखत हुए सर्वाङ्गासन की तरह दोनों पैरों को मिले हुये रखकर थोड़ा-थोड़ा करके ऊपर उठाइये और बीच में कुछ सेकिण्ड रुककर साँस को निकालते और भरते चलिये। जब पाँव कमर के मध्य के साथ समकोण बनाने लगें अर्थात् दोनों टाँगें ऊपर की तरफ बिल्कुल सीधी हो जाँय, तब पुनः साँस लेकर टाँगों को सर की तरफ झुकाते जाइये यहाँ तक कि पैर सिर के पास ही जमीन से लग जायें। यह हलासन की प्रथम अवस्था हो जाती है। पर इसका अभ्यास भी धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिये। जिनका पेट मोटा होगा या रीढ़ की हड्डी कड़ी पड़ गई होगी वे जमीन पर शीघ्र पैर नहीं लगा सकेंगे। अगर जबर्दस्ती लगाने की कोशिश की जायेगी तो किसी हड्डी में खराबी आ जाने की सम्भावना रहेगी। इसलिये जितनी शक्ति हो और जैसी शरीर की अवस्था हो उसी के अनुसार पैरों को प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा अधिक, झुकाने की चेष्टा करनी चाहिये और अगर पैरों के ठीक तरह लगने में एक-दो महीने भी लग जायें तो इसमें कोई हानि नहीं समझनी चाहिये।

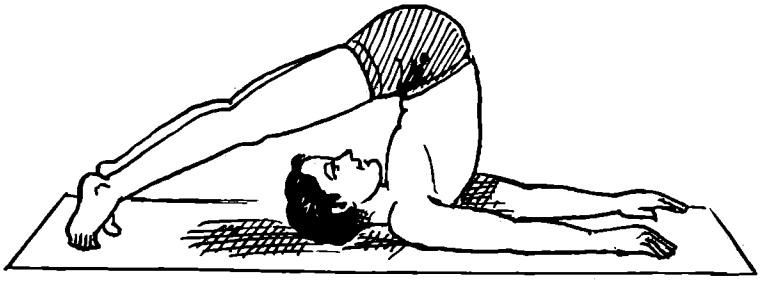

हलासन

जमीन से पैर के अँगूठों के छू जाने के बाद जहाँ तक सम्भव हो कमर को ऊँचा उठाते हुये पैर के पंजों को सिर से दूर हटाने का प्रयत्न करना चाहिये। इससे ठोड़ी छाती के पास आती जाती है और 'थाइराइड' गिल्टी पर दबाव पड़ता जाता है। इस प्रकार सर्वाङ्गासन द्वारा जिस प्रकार शरीर का नवीनीकरण होता है वैसा ही हलासन द्वारा भी होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह प्रक्रिया पढ़ने में बहुत लम्बी जान पड़ती है, पर इस सबमें एक मिनिट से अधिक समय नहीं लगता। पैरों का उठाना आरम्भ करने और तीन-चार बार चार-चार, पाँच-पाँच सेकिण्ड ठहरने में आधी मिनिट समय लगेगा और आधी मिनिट पैर के अँगूठों को जमीन से लगाये रहा जाय। इसके बाद पुनः पैरों का जमीन पर लाकर फिर से आसन आरम्भ किया जाय। इस प्रकार पाँच मिनिट में पाँच बार आसन करने से अच्छा व्यायाम हो जाता है। यह पाँच मिनिट का व्यायाम भी पहले ही दिन नहीं करना चाहिये। ठहर-ठहर कर धीरे-धीरे ही अभ्यास बढ़ाना चाहिए, जिससे शरीर में किसी प्रकार की क्लान्ति प्रतीत न हो वरन् उत्साह तथा प्रसन्नता का भाव बना रहे।

हलासन से पीठ और पेट का बड़ा अच्छा व्यायाम हो जाता है। इसमें रीढ़ की हड्डी सब आसनों की अपेक्षा अधिक झुकती है, जिससे युवावस्था का अनुभव होने लगता है। साथ ही आमाशय और पाचन संस्थान के सब अंगों पर भी पूरा प्रभाव पड़ता है और आहार के परिपाक करने की शक्ति बढ़ने लगती है। जिन लोगों के यकृत और तिल्ली बीमारी के कारण बढ़ गये हों, उनको इस आसन से आराम हो जाता है। पर यह तभी हो सकता है, जब रोग आरम्भ होने के बाद शीघ्र ही इस उपाय को किया जाय। जिन लोगों के यकृत और तिल्ली काफी बढ़ गये हैं, उनको तो हलासन का निषेध है। ऐसे लोगों को भुजंगासन और शलभासन जैसे व्यायामों से पेट की अवस्था को सुधारना होगा। अनेक अभ्यासी हलासन के अन्त में दोनों हाथों के पंजों को गस्सा-सा बनाकर माथे के नीचे लगा लेते हैं और छाती को भी ऊपर की तरफ तान देते हैं। पर रीढ़ की हड्डी पर इतना अधिक जोर बाल्यावस्था और युवावस्था में ही डाला जा सकता है। अधेड़ आयु वालों के लिये ऊपर बतलाई विधि ही पर्याप्त है।

(६) अर्ध-मत्स्येन्द्रासन

बैठकर किये जाने वाले प्रसिद्ध आसन जैसे पद्मासन और सिद्धासन अधिकांश में ध्यानात्मक होते हैं। पर कई व्यायात्मक आसन भी बैठकर किये जाते हैं, जिनकी विधि यहाँ दी जाती है।

बैठकर किये जाने वाले आसनों में अर्ध-मत्स्येन्द्रासन विशेष रूप से लाभ-जनक हैं कहा जाता है कि सुप्रसिद्ध हठयोगी मत्स्येन्द्रनाथ प्रायः इसी आसन पर बैठा करते थे और इसी कारण इसका यह नाम पड़ गया है।

अर्धमत्स्येन्द्रासन

पहले आसन के ऊपर दोनों पैरों को फैलाकर कमर को सीधा रखते हुये बैठिये। बाँये पैर के घुटने को मोड़कर उसकी एड़ी को गुदा के नीचे दबाकर बैठिये या उसे चूतड़ से सटाकर बैठिये। फिर दाहिने पैर के घुटने को इतना ऊपर की तरफ उठाइये कि उसका पञ्जा बाँये पैर के घुटने से छू जाय। इस अवस्था में बाँये हाथ दाहिने पैर के घुटने के पास ले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाकर उसी पैर के अँगूठे को पकड़िये और दाहिने हाथ को पीठ के पीछे की तरफ ले जाते हुये सर को दाहिनी ओर मोड़कर ठोड़ी से दाहिने कन्धे को छूने का प्रयत्न कीजिये। यही इस आसन की पूर्णावस्था है। यह आसन अधिक कठिन न होते हुये भी रीढ़ की हड्डी के व्यायाम के लिये बहुत लाभदायक है। पश्चिमोत्तासन और हलासन में तो रीढ़ केवल आगे और पीछे की तरफ मुड़ती है। पर स्वास्थ्य की दृष्टि से उसका अगल-बगल मोड़ना भी आवश्यक है। यह कार्य इस आसन से होता है। इसके लिये एक बार बाँये पैर को नीचे रखकर ठोड़ी को दाँये कन्धे से लगाना चाहिए और दूसरी बार दाँये पैर को नीचे रखकर, बाँये हाथ से बाँये पैर के अँगूठे को पकड़कर ठोड़ी बाँयें कन्धे से लगाना चाहिये। इस प्रकार अभ्यास करने से रीढ़ की हड्डी दाँये और बाँये दोनों तरफ मुड़ने लगती है। इससे कमर, पीठ और जोड़ों के दर्द में बहुत शीघ्र ही लाभ होता है। इसकी पूर्णावस्था में पाँच-दस सेकिण्ड ठहरना ही पर्याप्त है। प्रतिदिन ५,६ बार करने से ठीक लाभ हो सकता है।

(१०) वज्रासन

दोनों पैर फैलाकर आसन पर बैठ जाइये। पहले बाँये पैर को मोड़िये और बाँये हाथ की सहायता से उसके पंजे और एड़ी को बाँयें चूतड़ से दबा दीजिये। फिर इसी प्रकार दाँयें पैर को मोड़कर उसके पंजे को दाहिने चूतड़ से दबाकर बैठ जाइये। दोनों कुछ तिरछे करके आपस में मिला लिये जायें। इस प्रकार दोनों पैरों के पंजों पर ही समस्त शरीर का बोझा पड़ जाता है। यह व्यायाम जननेन्द्रिय की निर्बलता और दोषों को दूर करने के लिये लाभदायक माना गया है। इसके द्वारा उक्त अंगों में रक्त का संचार बढ़कर शक्ति प्राप्त होती है। बहुत से योगाभ्यास करने वाले इस आसन का ध्यानात्मक रूप में प्रयोग करके पर्याप्त समय तक इसी पर बैठे रहते हैं, पर व्यायाम की दृष्टि से अभ्यास करने वालों को एक बार में आधी या चौथाई मिनिट तक ठहरकर आठ-दस बार आसन कर लेना ठीक रहता है। इसमें पैरों के तलवे अधिकांश में ऊपर की ओर हो जाते हैं और उन दोनों को मिलकर ही उन पर बैठा जाता है।

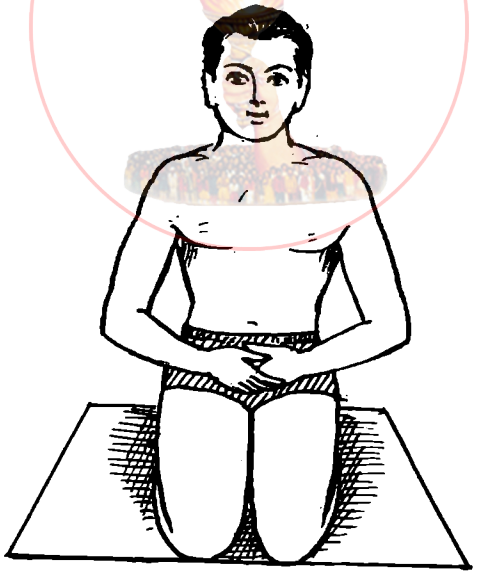

बज्रासन

(११) वकासन

यह आसन विशेष रूप से हाथों का व्यायाम करने के लिए है। पैरों को तो सामान्यतः चलने-फिरने में काम लायक व्यायाम हो जाता है, पर जो लोग व्यापार, व्यवसाय या पढ़ने-लिखने का कार्य करते हैं, उनके हाथ प्रायः निर्बल रह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

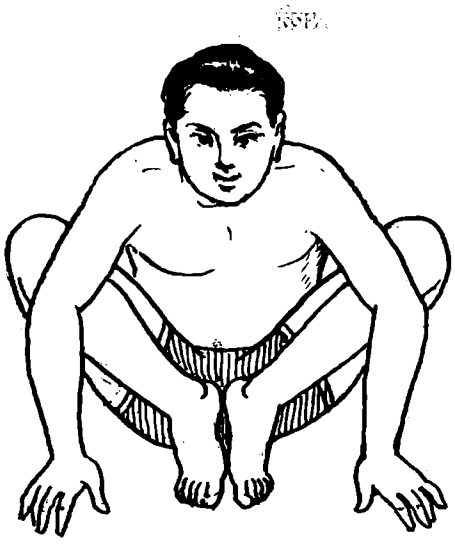

बकासन

जाते हैं। इसलिये अन्य व्यायामों के साथ हाथों को मजबूत बनाने वाला कोई आसन भी अवश्य करना चाहिये।

इसके लिये पहले आसन पर उकडू बैठकर दोनों हाथों की हथेलियों को जमीन पर जमा कर सारे शरीर को उन्हीं के बल से ऊपर की ओर उठाना चाहिये। दोनों पैरों के पंजे भी आपस में मिले रहने चाहिये। यह आसन हाथों को घुटनों के बाहर या भीतर रखकर दोनों प्रकार से किया जा सकता है। हाथों की शक्ति बढ़ने के साथ ही पेट के भीतरी भागों पर भी इसका लाभदायक प्रभाव पड़ता है।

(१२) गोमुखासन

इस आसन के लिये उसी प्रकार दोनों घुटने मोड़कर बैठा जाता है जैसा कि वज्रासन में बतलाया गया। दोनों पंजे जमीन से सटे रहें और उन पर बैठकर शरीर बिल्कुल सीधा ऊपर की ओर तना रहे। शरीर का अधिकांश भार एड़ियों पर रहना चाहिये। तब बाँया हाथ ऊपर की ओर उठाकर पीठ की ओर मोड़कर पीछे की तरफ ले जायें और दाहिने हाथ को नीचे की तरफ बगल से ऊपर ले जोकर बाँये हाथ की तर्जनी अँगुली पकड़ने की चेष्टा की जाय। जिसका शरीर अधिक मोटा न होगा, वे सहज ही अँगुली पकड़ सकते हैं। पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि अँगुली पकड़ते समय सस्त शरीर पूर्ववत् सीधा और जैसी की तैसी अवस्था में रहे, किसी तरफ जरा भी झुकना या मुड़ना न चाहिये। दूसरी बार दाहिने हाथ को ऊपर उठाकर पीठ के पीछे ले जायें और बाँयें हाथ से उसकी अँगुली को पकड़े। इस प्रकार अदल-बदल कर अभ्यास करने से छाती और हाथों को विशेष लाभ होता है और जननेन्द्रिय वाला अंग भी मजबूत हो जाता है।

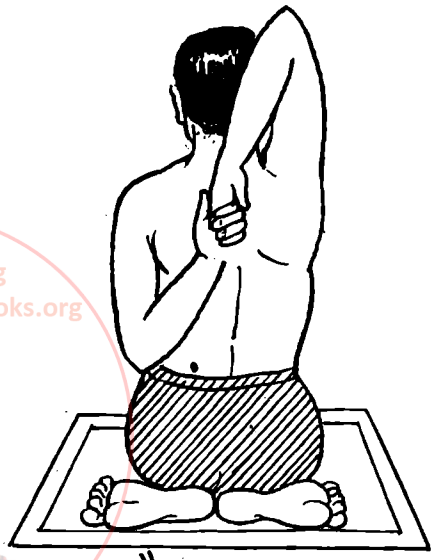

गौमुखासन

(१३) चक्रासन

यह एक ऐसा मनोरंजक व्यायाम है, जिससे सहज ही में सब अङ्गों में स्फूर्ति आती है और शरीर हलका तथा कसा हुआ बनता है। अनेक तो इसे खड़े होकर पीछे की तरफ झुकते हुये जमीन से हाथ लगा देने की विधि करते हैं, पर बड़ी उम्र के व्यक्ति के लिये उस तरह करना कठिन है। उनके लिये सरल विधि यह है कि एक कम्बल बिछाकर सीधे लेट जाइये। हाथों को भी सिर के ऊपर सीधे फैलाकर जमीन पर रखिये। फिर हाथ और पैरों के पंजों के बल पर कमर को ऊपर की तरफ को उठाइये। एक दिन में अधिक न उठा जाय तो भी लगातार प्रयत्न करने से थोड़े समय में कमर काफी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊँची होकर शरीर कमान की तरह गोल होने लग जाता है। इस अभ्यास द्वारा पेट, पीठ, कमर के अंगों को बहुत फायदा पहुँचता है। मनुष्य की रीढ़ की हड्डी जो प्रायः आगे की ओर झुकी करती है, वह इस आसन द्वारा उलटी झुकने से उसकी स्थिति स्वाभाविक बन जाती है।

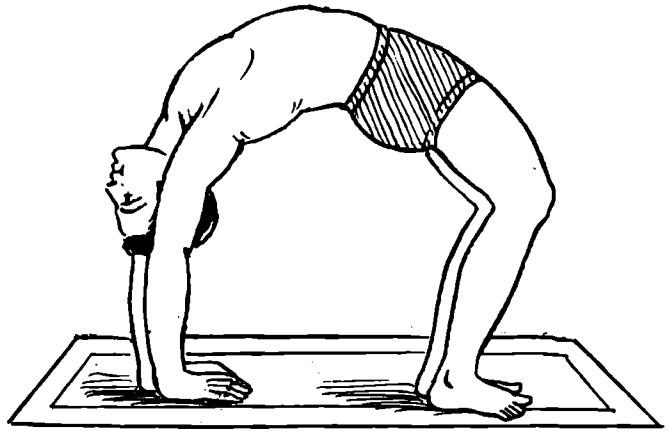

चक्रासन

(१४) आकर्ण धनुषासन

दोनों पैरों को फैलाकर आसन पर बैठ जाइये। दाँये पैर को बिल्कुल सीधा और जमीन से मिला हुआ रखकर दाँये हाथ से उसका अँगूठा पकड़ लीजिये जैसे पश्चिमोत्तासन आसन में पकड़ा जाता है। तत्पश्चात् बाँये पाँव का अँगूठा बाँये हाथ से खींचकर बाँये कान के पास तक लाने का प्रयत्न कीजिये। दूसरी बार बाँये पैर को सीधा रखकर और उसके अँगूठे को बाँये हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ द्वारा दाँये पैर का अँगूठा दाँये कान के पास खींचकर लाइये। इस प्रकर का अभ्यास करने में मनुष्य की वही स्थिति हो जाती है जैसे—जोर से धनुष को खींचने में होती है। इसीसे इसका नाम आकर्ण धनुषासन रखा गया है। इस आसन से हाथ, पैर, घुटना, जाँघ आदि अङ्गों का अच्छा व्यायाम हो जाता है और इनके जोड़ों को चलने-फिरने का अवसर मिलता है।

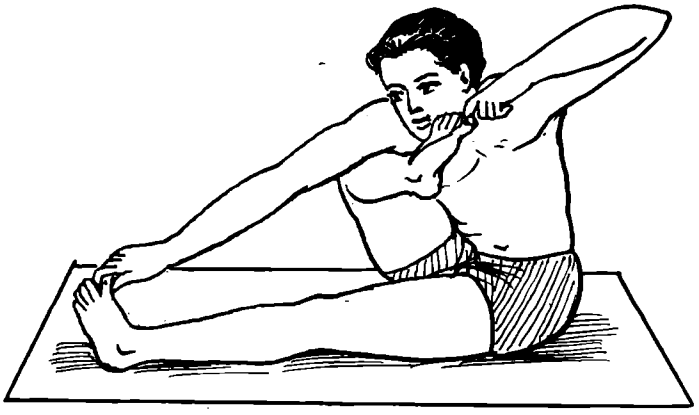

आकर्ण धनुषासन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१५) गरुड़ासन

सीधे खड़े होकर बाँये पैर को दाहिने में बेल की तरह लपेट लीजिये। फिर दोनों हाथों को भी इस तरह लपेटिये, जिससे पैर और हाथों के स्नायुओं पर काफी खिंचाव पड़े। इस

गरुणासन

प्रकार लपेटने से जब दोनों हथेलियाँ मिल जाती हैं तो उनकी आकृति गरुड़ की चोंच के समान हो जाती है। जो पैर लपेटा जाता है, उसके अँगूठे को जमीन पर लगाने से पैर के स्नायु खिंचते हैं, जिससे उनकी त्रुटियाँ दूर होती हैं। इस आसन को बार-बार पैर बदलकर करना चाहिये। जब पैर लपेट लिये जायें तो यथासम्भव नीचे की तरफ पैरों को झुकाकर ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि लपेटे हुये पैर का पंजा जमीन से छू जाय। गुरुड़ासन से घुटने के दर्द, पैर के दर्द, हाथ के दर्द में लाभ होता है। इससे इन सब अंगों के स्नायु खिंचकर उनकी उन्नति होती है। अण्डकोश की वृद्धि में भी इस आसन का अभ्यास करने से लाभ प्राप्त होता देखा गया है।

(१६) शवासन या दण्डासन

जब अन्य प्रकार के आसनों के करने से शरीर को काफी परिश्रम करना पड़े तो अन्त में सब अंगों को विश्राम देने के लिए शवासन करना चाहिये। इसके लिये जमीन पर चारों हाथ-पैरों को फैलाकर और सब शरीर को ढीला करके ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि किसी अंग में जरा भी तनाव न रहे। जिस प्रकार छोटा बच्चा अपने अंगों का पूर्ण रूप से शिथिल करके बिस्तर पर पड़ा रहता है, वही क्रिया शवासन में की जानी चाहिए। शवासन में हाथ व पैर खूब फैला दिये जाते हैं और दण्डासन में उनको मिलाकर रखा जाता है। पर दोनों का उद्देश्य शरीर का पूर्णरूप से शिथिलीकरण ही है। इस अवसर पर साँस को भी ऐसे स्वाभाविक तरीके से लेना चाहिए, जिससे जरा भी शब्द न हो और वह धीरे-धीरे बिना प्रयास के चलती रहे। साथ ही मन की सब वृत्तियों को भी समेटकर सब प्रकार का सोचना-विचारना बन्द कर देना चाहिये। इस प्रकार दस-पन्द्रह मिनिट शरीर और मन को पूर्ण विश्राम देने से सब थकावट जाती रहती है और एक अपूर्व ताजगी का अनुभव होने लगता है।

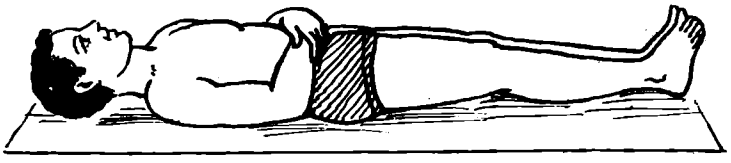

शवासन या दण्डासन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आसन-व्यायाम के सामान्य नियम

आसन व्यायाम मनुष्य के लिए एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। इसमें न किसी बाहरी वस्तु की आवश्यकता पड़ती है न कोई कृत्रिम यंत्र आदि का सहारा लिया जाता है। यह तो केवल अपने विभिन्न अंगों का विभिन्न दिशाओं में संचालन, तानना और ढीला करना मात्र है। इसलिये इसके नियम भी कोई विशेष नहीं हैं। यथासम्भव प्राकृतिक ढङ्ग से अपना आहार-विहार रखना ही यथेष्ट रहता है। हाँ, जिन लोगों का रहन-सहन परिस्थितिवश विकृत हो गया है अथवा जो कृत्रिम जीवन के विशेष अभ्यस्त हो गये हैं, उनको अपने रहन-सहन में थोड़ा परिवर्तन अवश्य करना चाहिए।

(१) आसन व्यायाम के लिये सर्वोत्तम समय प्रातःकाल का है। गर्मी में तो सूर्योदय के पूर्व यदि इसे कर लिया जाय तो ठीक रहता है। जाड़े में भी सात-आठ बजे तक कर लेना चाहिए। यदि शाम को भी करना चाहें तो दोनों बार थोड़ा-थोड़ा समय बाँटकर कर लेना भी लाभदायक होता है।

(२) व्यायाम आरम्भ करने से पूर्व शौच और स्नान से निवृत्त हो लेना आवश्यक है। आमाशय और मलाशय का साफ और हल्का रहना इस व्यायाम में विशेष रूप से आवश्यक है, क्योंकि इसमें भीतरी अंगों को ही सशक्त तथा निर्दोष बनाने की विशेष रूप से चेष्टा की जाती है। इसलिए आरम्भ में पेट में किसी प्रकार की गड़बड़ी या कब्ज आदि हो तो उसे साधारण उपायों से ठीक कर लेना चाहिए। पर औषधि द्वारा कब्ज को मिटाने का प्रयत्न ठीक नहीं। भोजन के हेर-फेर या एनीमा के प्रयोग से पेट साफ रखना उचित है। नियमित रूप से स्नान करना भी आवश्यक है, क्योंकि इससे रक्त का संचरण ठीक हो जाता है और उसका भी आसन व्यायाम में विशेष ध्यान रखना होता है। गर्मी या बरसात में तो ठण्डे पानी से स्नान किया ही जाता है, जाड़ों में भी यदि सामर्थ्य न हो और गर्म पानी लेना पड़े तो वह कम-से-कम गर्म हो इसका ध्यान रखा जाय। गर्म पानी से अवयवों में ढीलापन आता है और ठण्डे से वे मजबूत बनते हैं, यही समझने की बात है। फिर अपने विशेष अवस्था और परिस्थिति का ध्यान तो सर्वप्रथम रखना आवश्यक ही है।

(३) किसी भी आसन के अभ्यास में शीघ्रता या हठ नहीं करना चाहिए। आरम्भ में अधिक व्यायाम पर जोर देने की बजाय या पूर्ण स्थिति को प्रथम दिन ही प्राप्त करने के बजाय ज्यादा ध्यान इस बात पर दिया जाय कि आसन-विधि को ठीक-ठाक समझकर नियमानुसार किया जाय। जिस प्रकार पढ़ने में पहले अक्षर-ज्ञान और शब्द-निर्माण के नियमों को काफी समय तक सीखकर तब विविध विषयों की पुस्तकों का अध्ययन करते हैं, उसी प्रकार आरम्भ में पूरा व्यायाम करने की अपेक्षा आसनों की ठीक-ठीक विधि को समझकर, उसे यथातथ्य सीखने पर ही ध्यान दिया जाय। इसलिये आरम्भ में प्रत्येक क्रिया बहुत थोड़ी देर, दस-पाँच सेकिण्ड ही करनी उचित है। फिर जब विधि का ज्ञान हो जायेगा तो स्वयं ही अभ्यास बढ़ता चला जायेगा।

(४) व्यायाम में कभी अति नहीं करनी चाहिये। जो लोग बहुत जल्दी लाभ उठाने के लिए एक साथ तरह-तरह के व्यायाम अधिक मात्रा में करने लगते हैं, वे प्रायः फायदा की जगह नुकसान उठाते हैं और उनका उत्साह शीघ्र ही ठण्डा पड़ जाता है। इसलिये जब आसन व्यायाम किया जाय उन दिनों अन्य व्यायाम, प्राणायाम अथवा दूसरे विशेष परिश्रम के काम नहीं करने चाहिए। अपनी शक्ति और ध्यान को एक विषय में केन्द्रित करने से ही विशेष सफलता प्राप्त हो सकती है।

(५) भोजन के सादा और पौष्टिक होने का ध्यान रखना आवश्यक है। मिर्च, खटाई, अधिक मसालेयुक्त अथवा अधिक कृत्रिम भोजन करना सदैव हानिकारक होता है। आसन-व्यायाम के साथ भोजन जितना सादा और प्राकृतिक होगा उतना ही सुफल प्राप्त होगा। हाँ दूध-घी का व्यवहार कुछ बढ़ाया जा सकता है, क्योंकि इससे अंगों में चिकनाई आती है और व्यायाम की गर्मी भी शान्त होती है।

(६) जो लोग गृहस्थ-जीवन में रहकर इस व्यायाम को करें, उन्हें ब्रह्मचर्य के नियमों का भी पालन करना चाहिये। इसका आशय दाम्पत्य-सम्बन्धों को सर्वथा त्याग देना नहीं है, पर उसमें अधिकता भी न हो इसका ध्यान रखना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए। धर्म-शास्त्र और चिकित्सा-शास्त्र में इस सम्बन्ध में जो नियम बतलाये हैं, उनके अनुसार एक महीने में दो-चार बार से अधिक विषय-सेवन अनुचित माना गया है। जिन लोगों को कोई वीर्य सम्बन्धी बीमारी या निर्बलता हो उन्हें इस सम्बन्ध में अधिक सावधान रहना चाहिए। आसन-व्यायाम से वीर्य शुद्ध होकर फिर से पुरुषत्व शक्ति प्राप्त हो जाती है, पर इसके लिए कुछ समय विषय-सेवन से बचकर वीर्य-रक्षा करना आवश्यक है।

(७) खुले और पवित्र वातावरण में रहना विशेष महत्वपूर्ण है। जो लोग शहरों के बीच में बन्द कमरे के भीतर व्यायाम करेंगे उन्हें नाम मात्र का ही लाभ भी मिलेगा। आसन व्यायाम वाले को अधिक से अधिक समय शुद्ध वायु में रहने का प्रयत्न करना चाहिए और अपना निवासस्थान यदि किसी तंग और भीड़-भाड़ के मोहल्ले में हो तो व्यायाम के लिए किसी अन्य खुले हवादार स्थान या बगीचा आदि की व्यवस्था करनी चाहिए। कपड़े ऐसे न पहिने जायें, जिनसे शरीर में हवा लगने में बाधा पड़े। इसके सिवाय कुछ समय तक कपड़े बिल्कुल उतारकर शरीर को सूर्य की धूप लगने देना भी स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

आसन-व्यायाम प्रत्येक आयु के स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध के लिये हितकारी है। इसका उद्देश्य पहलवानों की तरह शरीर को बहुत मोटा ताजा या कठोर बनाना नहीं है, क्योंकि वह तो एक अस्वाभाविक अवस्था है, जो साधारण जीवन निर्वाह करने वाले व्यक्तियों के लिये किसी दृष्टि से उचित नहीं की जा सकती। इसके बजाय आसन-व्यायाम से शरीर के उन भीतरी अंगों की शुद्धि होती है, उनकी त्रुटियाँ मिटकर शक्ति की वृद्धि होती है, जो जीवन को स्थिर रखने के मुख्य आधार हैं। इसलिये आसन व्यायाम वाला चाहे देखने में दुबला-पतला जान पड़े, पर उसके शरीर में पर्याप्त दृढ़ता होती है और सहन-शक्ति भी बढ़ी-चढ़ी होती है। हाँ, इतना आवश्यक है कि व्यायाम को समझदारी के साथ और विधिपूर्वक किया जाय। खेल-तमाशे या कौतूहल की तरह इस व्यायाम को करने से कोई लाभ नहीं, क्योंकि यह केवल शारीरिक ही नहीं एक मानसिक प्रक्रिया भी है। जिस प्रकार हम डण्ड, बैठक आदि हाथ-पैरों का व्यायाम प्रत्यक्ष रूप से कर सकते हैं, वैसा यह नहीं है। हमारी भीतरी अंग हमको दिखाई नहीं देते, न हम उनको हाथों से पकड़कर या छूकर जान सकते हैं। उन पर प्रभाव डालने का उपाय तो मानसिक-भावना और संकल्प की शक्ति ही है। इसलिये बाहरी अंगों का व्यायाम जिस प्रकार अनाचारी, दुराचारी, भ्रष्ट खान-पान वाले भी करके कुछ लाभ उठा सकते हैं, वैसी बात आसन-व्यायाम में नहीं है। इसमें विचारों तथा मन की शुद्धता, पवित्रता, श्रद्धा, विश्वास आदि की आवश्यकता होती है। दूसरे शब्दों में कहें तो जिसको धार्मिक-जीवन कहते हैं, उसका अनुसरण करना आवश्यक होता है। जो इन बातों का ध्यान रखकर नियमित रूप से आसन व्यायाम का थोड़ा भी अभ्यास करते रहेंगे, वे सहज ही सब प्रकार के रोग, दोष और शारीरिक कष्टों से बचकर सुखी जीवन व्यतीत कर सकेंगे इसमें सन्देह नहीं।

वृद्धावस्था के व्यायाम

श्री सेनफोर्ड बैनेट अमरीका के निवासी थे, जिनका देहान्त कुछ वर्ष पहले लगभग सौ वर्ष की आयु में हुआ था। वे एक धनवान पिता के पुत्र थे। पर पिता के रोगी होने के कारण और अमीरों की तरह बिना परिश्रम का जीवन बिताने के कारण वे भी बहुत जल्दी निर्बल और वृद्ध होने लग गये। पचास वर्ष की आयु में ही उनके सर के बाल सफेद होने लग गये थे, गाल पिचक गये थे और समस्त शरीर में झुर्रिया पड़ गई थीं। उनके पिता भी इसी प्रकार फेंफड़ों की निर्बलता तथा मन्दाग्नि आदि रोगों के शिकार होकर ४२ वर्ष की उम्र में ही मर गये। वे डाक्टरी इलाज में विश्वास रखने वाले थे और जन्म भर दवायें खाते रहे थे। सैनफोर्ड भी उन्हीं के पद-चिन्हों पर चल रहे थे और डाक्टरों की हाजिरी देते हुए ही पचास वर्ष की आयु तक पहुँचे थे। पर जब उनका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया और जान पड़ने लगा कि वे भी अब दो-चार वर्ष में अपने पिता की तरह परलोक के पथिक बनने वाले हैं, तो उनके हृदय में एक प्रकार के असन्तोष और अतृप्ति का भाव जागृत हो गया और उन्होंने किसी आन्तरिक शक्ति की प्रेरणा से निश्चय किया कि कुछ भी होवे अपने स्वास्थ्य को अवश्य ही सुधारेंगे और भगवान ने मनुष्य को जो पूर्ण आयु दी है उसका उपभोग करेंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस निश्चय को करके उन्होंने सबसे पहले दवाओं और डाक्टरों को सदा के लिए नमस्कार किया। अपनी आत्मकथा में उन्होंने लिखा है कि "यद्यपि आज औषधि-विज्ञान चरम सीमा पर पहुँच गया है और गाँव-गाँव गली-गली में डाक्टरों की दुकानें व अस्पताल खुल रहे हैं फिर भी मैं तो दृढ़तापूर्वक यही कहूँगा कि ये दवाएँ, चीर-फाड़ और इन्जेक्शन का इलाज अत्यन्त घृणित, हानिकर और सर्वथा अनावश्यक है और मानव-जाति का नाश कर रहा है। मैं ५२ वर्ष की अवस्था में सब तरह से बूढ़ा हो गया और फिर स्वयं ही उद्योग करके ७२ वर्ष की अवस्था में पुनः जवान बन गया, तो इसका एक मात्र कारण यही हुआ कि मैंने औषधि सेवन बिल्कुल त्याग कर प्राकृतिक जीवन और स्वाभाविक व्यायाम का आश्रय लिया। अपने अनुभव से मैं इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि दवाओं के जरिए आरोग्य प्राप्त कर सकना असंभव है और दुनियाँ की किसी दवा के प्रयोग से आयु बढ़ाने की आशा करना मूर्खता है।"

सैनफोर्ड जन्मकाल से ही कमजोर पैदा हुये थे और अपने पिता के उत्तराधिकार स्वरूप उनको तरह-तरह की बीमारियाँ भी छोटी अवस्था में ही लग गई थीं। उनके पिता को क्षय रोग हो गया था और उन्हीं के संस्कारों से सैनफोर्ड को भी प्रायः खाँसी और निमोनिया के आक्रमण सहन करने पड़े। साथ ही वे मन्दाग्नि के भी मरीज थे। तीस वर्ष तक हर तरह की डाक्टरी दवाओं का प्रयोग करके भी वे कभी सच्ची भूख और भोजन के स्वादिष्ट लगने का आनन्द प्राप्त न कर सके। वे बड़े व्यवसाइयों की तरह या तो अपने व्यवसाय सम्बन्धी कार्यों में लगे रहते थे या नर्म गद्दों पर पड़े आराम करते रहते थे। किसी प्रकार का व्यायाम करने की शिक्षा उनको कभी किसी डाक्टर ने न दी। इसी का परिणाम हुआ कि अधेड़ अवस्था में ही उनका शरीर सब तरह से जीर्ण-शीर्ण हो गया, सब इन्द्रियाँ निर्बल पड़ गईं उनकी गिनती बूढ़ों में की जाने लगी।

जब हालत बहुत खराब हो गई और डाक्टरों की सब बातें खोखली सिद्ध हुईं तो सैनफोर्ड ने अपना इलाज स्वयं करने का निश्चय किया और डाक्टरी दवाओं को तिलांजलि देकर प्राकृतिक साधनों का आश्रय ग्रहण किया। उन्होंने समझ लिया कि स्वास्थ्य का आधार शुद्ध वायु, सूर्य का प्रकाश, सादा-सुपाच्य भोजन, व्यायाम, सफाई और शरीर तथा मन की पवित्रता ही है। अगर मनुष्य दृढ़तापूर्वक इन साधनों का उचित रूप से प्रयोग करें तो बुढ़ापे में भी अपना कायाकल्प कर सकता है।

सैनफोर्ड ने अपने व्यायामों को २६ प्रकार के अंग-संचालन में विभक्त किया है और यह हिदायत की है कि वृद्ध लोगों को किसी प्रकार की अधिक श्रम वाली कसरतें न करके बहुत ही सौम्य व्यायाम करना चाहिए, जिससे समस्त शरीर की विभिन्न पेशियों का संचालन हो जाय। धीरे-धीरे माँस-पेशियाँ पुनः विकसित होने लगेंगी और बुढ़ापे के चिन्ह बहुत कुछ कम पड़ जायेंगे। यद्यपि देखने में ये व्यायाम बहुत साधारण जान पड़ते हैं पर उन्हीं के द्वारा सैनफोर्ड ने बीस वर्ष के भीतर अपना कायाकल्प कर लिया और उनकी ७२ वर्ष की आयु का फोटो ५२ वर्ष की आयु के फोटो के मुकाबले में एक ३०-३५ वर्ष के युवक का सा दिखाई पड़ता है। इससे हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, कि यदि इन व्यायामों को नियम से श्रद्धापूर्वक किया जाय तो कुछ वर्षों में इनका आश्चर्यजनक परिणाम अवश्य दिखाई पड़ेगा। इन व्यायामों को क्रमशः बढ़ाना चाहिए, जैसे पहले सप्ताह में केवल एक-एक बार करें, दूसरे सप्ताह में दो-दो बार। इसी प्रकार प्रति सप्ताह बढ़ाते हुए आठ-दस बार तक कर सकते हैं। इस प्रकार आधे घण्टे में दो-ढाई सौ अङ्ग-संचलान कर लेने से एक वृद्ध पुरुष पर्याप्त व्यायाम हो जाता है। व्यायामों की विधि नीचे दी जाती है—

(१) पेट का व्यायाम

बिस्तर पर या पृथ्वी पर कम्बल आदि बिछाकर सीधे लेट जाइये। बाँये पैर को सीधा ही रखकर दाँये पैर को घुटने पर मोड़िये और उसे पेट की तरफ लाइये, जिससे नीचे का भाग दबे। फिर दाँये पैर को सीधा करके बाँये पैर को मोड़िये और उससे बाँयी ओर के पेट को दबाइये। इस प्रकार अपनी शक्ति और आवश्यकतानुसार ५ या १० दफे किया जा सकता है। इससे पेडू और मलाशय के स्नायु संचालित होकर कब्ज दूर होगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२) कमर के स्नायुओं का व्यायाम

पीठ के बल लेटे हुए दाहिने हाथ से बाँये भुजदण्ड को ओर बाँये हाथ से दाहिने भुजदण्ड को पकड़ें। फिर कमर की तरफ के शरीर को एक बार बाँयी और दूसरी बार दाँयी ओर यथाशक्ति घुमावें। इस प्रकार करने से कमर और पेडू के स्नायु चलते हैं और उनमें रक्त का संचार बढ़-कर दृढ़ता आती है। आरम्भ में एक बार ही करें फिर धीरे-धीरे बढ़ाते हुए ५-१० दफे तक करने लगें। अधिक करने की आवश्यकता नहीं।

(३) पेंट के स्नायुओं का व्यायाम

पीठ के बल लेटे हुए सिर को ऊँचा उठावें और फिर नीचे की तरफ ले जायें। इस प्रकार सर को उठाने से पेट के स्नायु तन जाते हैं और नीचे से ढीले पड़ जाते हैं। बार-बार संचालन होने से उनकी शक्ति बढ़ती है और इसका लाभदायक प्रभाव पाचन-शक्ति पर पड़ता है। इसके साथ ही पेट के नीचे के दाहिने भाग को धीरे-धीरे दस दफे थप-थपाना भी चाहिए।

(४) कन्धों का व्यायाम

पीठ के बल लेटे हुए दोनों हाथों से एक-दूसरे की कोहनियों को मजबूती से पकड़ लें। फिर एक बार दाँये कन्धे को ऊपर की ओर उठावें और फिर नीचे ले जायँ। पुनः बाँये कन्धे को ऊपर उठावें और नीचे ले जायें। इस प्रकार बार-बार करने से कन्धों के स्नायु मजबूत होते हैं।

(५) हाथों का व्यायाम

लेटे हुए दोनों हाथों को कन्धे की सीध में फैलाकर एक बार दाहिने हाथ की मुटठी बाँधकर उसे कोहनी पर इतना मोड़िए कि मुट्ठी छाती के पास आ जाय, पर उसको छुये नहीं। फिर उसे नीचे से ले जाकर दूसरी बार हाथ को इसी प्रकार मुट्ठी बाँधकर छाती के पास तक मोड़कर लाइए। इस प्रकार कई बार करने से कोहनी से नीचे के भाग का व्यायाम होता है।

(६) गर्दन के व्यायाम

पीठ के बल सीधे लेटे हुए सिर को जितना उठा सकें उतना ऊपर की ओर उठायें और फिर नीचे ले जायें। इतना ध्यान रहे कि सिर उठाते समय पीठ और कन्धे अपनी जगह बिना हिले हुए जमे रहें केवल सर ही ऊपर उठे। इससे गर्दन के पिछले भाग के स्नायुओं पर काफी जोर पड़ता है और वे मजबूत बनते हैं।

(७) गर्दन और पीठ की पेशियों के व्यायाम

पीठ के बल लेटे हुए दोनों हाथों की उँगलियाँ को एक-दूसरे में फँसाकर अंजलि-सी बनावें और उसे सिर के नीचे रखकर हाथों के जोर से सिर को थोड़ा ऊपर उठावें और फिर नीचे ले जायें। इस प्रकार कई बार करने से गर्दन की कमजोरी मिटकर वह मोटी और मजबूत होती है और पीठ के ऊपरी भाग की पेशियों में भी दृढ़ता आती है।

(८) गले के स्नायुओं का व्यायाम

तकिया को पसिलयों के नीचे रखें। फिर पीठ के बल उस पर लेटकर गर्दन को ऊपर की तरफ उठाकर सिर को छाती पर जितना मोड़ सकें उतना मोड़िये, फिर जितना दूर हटा सकते हों उतना दूर हटाइए। इस प्रकार अभ्यास करने से गर्दन की माँस पेशियाँ काफी मजबूत बनती हैं और वहाँ की खाल जो ढीली पड़ गई हो, वह फिर से तन जाती है। धीरे-धीरे बढ़ाकर पाँच-सात या दस बार तक करें।

(९) हाथ की पेशियों का व्यायाम

पीठ के बल लेटकर दोनों हाथों को बगल में सीधा फैला लें। फिर दोनों हाथों की मुट्ठी जोर से बाँधकर उनको कोहनी पर से मोड़ लीजिये। अब बाँए हाथ को उसी दशा में नीचे रहने देकर दाहिने हाथ को ऊपर की तरफ खड़ा कर दें। फिर उसको नीचे की ओर लाकर बाँए हाथ को खड़ा करें। इस प्रकार ५-१० बार व्यायाम करने से हाथों की सब पेशियों की शक्ति बढ़ती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१०) भुजदण्ड की पेशियों का व्यायाम

पीठ के बल लेटे हुए दाहिने हाथ को लम्बाई में ही फैलाकर मुट्ठी बाँधिए। फिर बाएँ हाथ से दाँए भुजदण्ड को मजबूती के साथ पकड़कर दाहिने हाथ की कोहनी को मोड़िए और बँधी हुई मुट्ठी को धीरे-धीरे कन्धे के पास तक लाइए। इसके बाद दाँए हाथ को सीधा करके बाँये हाथ की मुट्ठी बाँधिए और दाँए हाथ से बाँये भुजदण्ड को पकड़कर बाँधी मुट्ठी को कन्धे तक लाइए। इस प्रकार से भुजदण्डों की पेशियों का बड़ा अच्छा व्यायाम हो जाता है और वे क्रमशः मोटी होकर सुदृढ़ हो जाती हैं।

(११) यकृत (लिवर) का व्यायाम

हमारे पेट में दाहिनी ओर पसलियों के नीचे एक बड़ी माँस ग्रन्थि होती है, जिसका वजन दो सेर तक होता है। इसे पित्ताशय भी कहते हैं। भोजन को पचाने और उसका रस बनाने का कार्य इससे निकलने वाले पित्त से ही होता है। इस दृष्टि से स्वास्थ्य रक्षा के लिए लिवर का ठीक दशा में सक्रिय बना रहना अत्यावश्यक है। बिस्तर पर लेटे हुए ही दोनों पैरों को सिकोड़कर घुटनों को ऊँचा करें, जिससे दोनों पैरों के तलुए बिस्तर पर टिक जायें। फिर यकृत को उँगलियों से दवाएँ और उसके ऊपर की पसली को धीरे-धीरे उँगलियों से ठोकें। इस प्रकार कई बार करने से यकृत जागृत होता है और अपना काम तेजी से करने लगता है।

(१२) ठोड़ी की पेशी का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटकर ठोड़ी को दाहिने हाथ के अँगूठे से दबायें और इसी हालत में सिर की पीछे की ओर ले जायें। अँगूठे से दबाए रहने के कारण ठोड़ी की पेशी का व्यायाम हो जायेगा। फिर बाँयी करवट लेकर बाएँ हाथ के अँगूठे से ठोड़ी को दबाकर व्यायाम करें।

(१३) गर्दन की बगल की पेशियों का व्यायाम

बिस्तर पर लेटे हुए दाहिनी करवट हो जायें और शरीर को ज्यों का त्यों पड़े रहने देकर केवल गर्दन को जहाँ तक हो सके सीधा करें और मुँह को ऊपर की ओर उठायें। फिर बाँयी करवट लेकर उस तरफ भी ऐसा ही व्यायाम करें। इससे गर्दन की अगल-बगल की दोनों पेशियाँ सुदृढ़ होती हैं।

(१४) शरीर की समस्त छोटी-बड़ी पेशियों का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटकर दोनों हाथों से एक-दूसरे की कुहनी को मजबूती से पकड़े। सिर को थोड़ा पीछे की तरफ झुकाकर समस्त शरीर को कड़ा करके तानने की चेष्टा करें। दो-चार सैकिण्ड बाद शरीर के ढीला कर दें। फिर बाँयी करवट होकर शरीर को कड़ा करके सब पेशियों पर खिंचाव पैदा करें और शरीर को ढीला कर दें। ऐसा करने से समस्त छोटी पेशियों का एक साथ व्यायाम हो जाता है। इस व्यायाम को अन्य व्यायामों से कम करना चाहिये। अर्थात् जिस प्रकार अन्य व्यायामों को एक बार से बढ़कार दस बार तक करने की विधि बताई गई है तो इस व्यायाम को एक से पाँच बार तक ही बढ़ाना चाहिये।

(१५) बगल और कमर की पेशियों का व्यायाम

बाँयी करवट लेटकर दोनों हाथों से एक-दूसरे के भुजदण्डों को मजबूती से पकड़ लें। फिर उसी प्रकार लेटे हुए गर्दन और बाँयी ओर की पसलियों को जितना हो सके ऊपर उठाइये। फिर यथास्थान होकर दाहिनी करवट लेकर इसी प्रकार व्यायाम करें। इससे बगल और कमर की पेशियों पर पर्याप्त जोर पड़ जाता है। इस व्यायाम के भी पाँच बार से अधिक न बढ़ावें।

(१६) कन्धों की पेशियों का व्यायाम

पीठ के बल सीधे लेटे हुये भुजदण्डों को दोनों हाथों से पकड़ें। एक बार दाहिना कन्धा और भुजा यथाशक्ति ऊपर की ओर उठायें और दूसरी बार बाँया कन्धा और भुजा ऊपर उठायें। इस प्रकार का व्यायाम एक बार से बढ़ाते हुए दस बार तक करें। इससे कन्धों की अगली और पिछली दोनों पेशियाँ मजबूत होती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१७) कूल्हे व कमर का व्यायाम

दाहिनी करवट लेकर बायें पैर को घुटने के बल मोड़ें और सामने बिस्तर पर टेक दें। फिर दाँये हाथ को कुहनी के बल मोड़ें और उसे छाती के बाँयी तरफ गर्दन और मुख के पीछे जितना ले जा सकें, झुकाकर ले जायें। दूसरी बार बाँयी करवट लेकर दाँये हाथ से इसी तरह का व्यायाम करें।

(१८) कलाई का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटे हुये बाँये हाथ से दाहिनी हाथ की कलाई को दबायें और उसी हालत में दाहिनी कलाई को ऊपर उठाने पर जोर लगावें। फिर बाँयी करवट लेकर दाहिने हाथ से बाँयी कलाई का दबाकर इसी तरह व्यायाम करें। इससे दोनों कलाइयाँ मजबूत होती हैं।

(१९) भुजाओं और हाथों के पंजों का व्यायाम

दाँयी करवट लेटकर दाहिने पंजे से बाँये भुजदण्ड को मजबूती से पकड़ो और उसी हालत में उसे ऊपर उठाने का प्रयत्न करो। फिर बाँयी करवट लेकर बाँये हाथ से दाहिनी भुजा को पकड़ो और पूर्ववत् ऊपर उठाने के लिये जोर लगाओ। ऐसा करने से दोनों भुज-दण्डों के पंजों की शक्ति बढ़ती है।

(२०) पीठ की पेशियों का व्यायाम

बिस्तर पर लेटे हुये दाहिनी करवट हो जायें। तब बाँयें पैर को थोड़ा झुकाकर उसके घुटने को बाँये हाथ से पकड़ लें और फिर तानने का प्रयत्न करें। इससे पीठ और पैर की पेशियों पर जोर पड़ेगा। फिर बाँयी करवट होकर इसी प्रकार दाहिने घुटने को दायें हाथ से पकड़कर व्यायाम करें। एक से बढ़ाकर दस बार तक करने का अभ्यास करें।

(२१) हाथ की संधियों का व्यायाम

बाँयी करवट लेटे हुये दाहिना हाथ लम्बाई में फैलावें और उसकी मुट्ठी मजबूती से बाँधकर उसको ऊपर-नीचे की तरफ मोड़ें। फिर इसी तरह दाँयी करवट लेकर बाँये हाथ की मुट्ठी बाँध कर उसका व्यायाम करें। इससे हाथ की पेशियाँ और संधियाँ कार्यक्षम बनी रहेंगी।

(२२) कलाई का दूसरा व्यायाम

दाहिनी करवट लेटकर दाहिने हाथ से बाँयी कलाई को पकड़कर दबाये रखें। फिर बाँयी कलाई का जोर लगाकर ऊपर उठाने का प्रयत्न करें। इसी प्रकार बाँयी करवट लेकर बाँये हाथ से दाँयी कलाई को दबायें और फिर ऊपर उठाने का प्रयत्न करें। इस व्यायाम से दोनों कलाइयाँ मजबूत होती है।

(२३) पैर की पेशियों का व्यायाम

पीठ के बल सीधे लेटे हुये दोनों पैर सीधे फैलादें। फिर दाहिना पैर उठाकर उसका तलवा बाँये पैर की उंगलियों पर रख उन्हें पीछे की ओर दबायें। इसी प्रकार पैर से दाहिने पन्जे की उँगलियों को पीछे की ओर ठेलें। इससे पिंडली की पेशियों में मजबूती आती है।

(२४) यकृत का दूसरा व्यायाम

यकृत (जिगर) का एक व्यायाम न. ११ में बतलाया जा चुका है। पर यह एक ऐसा महत्वपूर्ण भीतरी अङ्ग है कि जिसके बारे में हमको बहुत थोड़ा ज्ञान होता है और जिसकी खराबी से हमारे स्वास्थ्य पर प्रायः हानिकारक प्रभाव पड़ा करता है। यकृत हमारे भोजन को पचाने और खून को शुद्ध करने का मुख्य साधन है। इसलिए यदि वह अपना काम ठीक ढङ्ग से न करेगा तो स्वास्थ्य कभी ठीक नहीं रह सकता। जिन लोगों का स्वास्थ्य बिना किसी खास बीमारी के निर्बल रहता है और रंग पीला-सा होता जाता है उनको डाक्टर प्रायः लिवर (यकृत) की खराबी बताया करते हैं और तरह-तरह की पशुओं के अंगों से बनी अशुद्ध दवाइयाँ देते रहते हैं। पर इस तरह कोई स्थायी लाभ नहीं हो सकता। यकृत को ठीक करने का उपाय अन्य अंगों की तरह उसका व्यायाम करना ही है। इसके लिए मलना, थपथपाना तथा धीरे-धीरे ठोकना चाहिये। यह स्मरण रखें कि यकृत बहुत मजबूत और चारों ओर से खूब बँधा हुआ अंग है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसे दबाने या मलने से किसी प्रकार की हानि की संभावना नहीं है। इसके व्यायाम के लिए बाँयी करवट लेट जाएँ, जिससे यकृत (जो दाहिनी तरफ पसलियों और कमर की त्रिकोण हड्डी के बीच में रहता है।) सामने की ओर झुक जायेगा। तब दाहिने हाथ की मुटठी बाँध कर धीरे-धीरे उसे ठोकिए। इस प्रकार दस-बीस बार ठोकने से वह चैतन्य हो जायेगा और अपना कार्य में प्रगतिशील बनेगा।

(२५) यकृत का तीसरा व्यायाम

दाहिनी करवट लेटकर सिर को जरा पीछे की तरफ झुकाइये और घुटनों को कुछ मोड़ लीजिए। इससे पेट कुछ ढीला होगा और यकृत सामने की तरफ आयेगा। तब उसे बाएँ हाथ से मलिये और दबाइए इस प्रकार कुछ समय तक करते रहने से यकृत कार्य शक्ति बढ़ेगी।

(२६) पैर की पिंडली और कन्धों की पेशियों का व्यायाम

दाहिनी करवट लेटकर दोनों हाथों की उँगलियों को एक-दूसरे में अटका कर अंजली-सी बना लें और उसे बायें पैर के घुटने के नीचे ले जाकर उसे ऊपर की ओर यथाशक्ति खींचे। इसी प्रकार बाँयी करवट लेकर दाहिने पैर को खींचें। इस व्यायाम से पैरों की पेशियों तथा कन्धों की पेशियों का अच्छा व्यायाम हो जाता है। धीरे-धीरे बढ़ाकर १० बार तक करें।

ये व्यायाम यद्यपि देंखने में बिल्कुल साधारण लगते हैं, पर बड़ी उम्र के लोगों के लिए, अर्थात् ५०-६० की आयु वालों के लिए सर्वोत्तम व्यायाम हैं। जो लोग आरम्भ से ही सीधा-सादा और प्रकृति के अनुकूल जीवन बिता रहे हैं और शारीरिक श्रम के नियम का भी पालन करते आये हैं, उनकी शारीरिक दशा तो ६० वर्ष के ऊपर भी पर्याप्त सन्तोषजनक रहती है। पर जिन लोगों ने आरम्भ से ही आरामतलबी का जीवन बिताया है और जो खान-पान तथा आहार-विहार में शौकीन बनकर रहे हैं, वे ५० वर्ष में ही बूढ़े दिखाई देने लग जाते हैं और उनकी शारीरिक शक्तियाँ जबाव देने लग जाती हैं। ऐसे व्यक्ति यदि अपनी हालत में सुधार करना चाहें और असामयिक बुढ़ापे को रोकने की इच्छा रखते हों तो उनको इस प्रकार के सरल व्यायामों से ही लाभ पहुँच सकता है। ऐसे लोग न तो अधिक परिश्रम के व्यायाम कर सकते हैं और न नियमपूर्वक व्यायाम के लिए बाहर जा सकते हैं। उनके लिए श्री सैनफोर्ड बेनेट के उपर्युक्त २६ व्यायाम जो सुबह जगने पर बिस्तर में लेटे हुए ही २५-३० मिनिट में किए जा सकते हैं, बहुत हितकारी हो सकते हैं।

ये व्यायाम ऐसे सरल हैं कि बिल्कुल कमजोर व्यक्ति भी इनको कर सकते हैं। इनका उद्देश्य यही है कि शरीर के प्रत्येक अंग और उसकी पेशियों को अच्छी तरह हरकत दे दी जाय। इस प्रकार उनके तानने और ढीला करने से रक्त का संचार बढ़ जाता है और दूषित तत्व बाहर निकलकर पौष्टिक तत्व प्राप्त होने लगते हैं। पर इसमें इतनी शर्त अवश्य है कि मनुष्य अपनी मानसिक स्थिति को ठीक रखे और आहार-विहार को ठीक कर ले। अगर उसका खान-पान और जीवनचर्या पूर्ववत् दूषित बनी रही, तब तो इनका करना व्यर्थ ही सिद्ध होगा। हाँ यदि वह अपनी पुरानी गलतियों को समझकर सुधार करने का दृढ़ निश्चय करले और हानिकारक रहन-सहन की आदतों को बदलकर स्वाभाविक जीवन के नियमों पर चलने लगे तो, इन सरल व्यायामों से ही एक-दो वर्ष में आश्चर्यजनक परिणाम दिखाई पड़ सकते हैं। श्री बेनेट इनके प्रभाव से ही सर्वथा निर्बल और रोगी अवस्था से उन्नति करके इतने शक्तिशाली बन गये थे कि ७१ वर्ष की आयु में उन्होंने आठ मिनिट में एक मील की दौड़ लगाई। यह निश्चय है कि अगर तीस वर्ष का युवक भी इतनी तेजी से दोड़ेगा तो वह हाँफने लग जायेगा, पर श्री बेनेट दौड़ने के पश्चात् न तो हाँफने लगे न किसी प्रकार की थकावट उन्होंने अनुभव की।

इस प्रकार कायाकल्प होने में सबसे मुख्य बात मानसिक परिवर्तन की है। जो व्यक्ति अपने दोषों को समझकर उनको त्यागने और नये ढंग के जीवन-क्रम को अपनाने का निश्चय कर लेगा, उसकी सफलता निश्चित ही समझनी चाहिए। इन व्यायामों को करते समय उनको प्रत्येक अंग पर अपनी शक्ति के अनुसार पूरा तनाव डालना चाहिये और मन में यह भावना करते रहना चाहिये कि उनका दूषित अंश निकलकर वहाँ शुद्ध और ताजा रक्त का संचार हो रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य नमस्कार के व्यायाम

वर्तमान समय में जिस प्रकार शहरी जीवन की वृद्धि हो रही है और नगरों की आबादी अत्यधिक बढ़ जाने के कारण लोगों को सुविधाजनक मकानों का अभाव हो रहा है, उसका कुप्रभाव उनके स्वास्थ्य पर पड़ रहा है। जिन मकानों में धूप नहीं आती अथवा जो लोग काम-काज के कारण सुबह से शाम तक वस्त्र पहिने हुए दुकानों या दफ्तरों के भीतर ही बैठे रहते हैं, वे धूप के अमूल्य लाभों से वंचित रह जाते हैं। जैसा हम सभी जानते हैं। हमारी पृथ्वी पर सूर्य ही मुख्य जीवन-प्रदायक तत्व है और उसके प्रकाश तथा उष्णता से ही जीवधारियों को उत्तम स्वास्थ्य तथा निरोग जीवन की प्राप्ति होती है। योग-शास्त्र के कथनानुसार मानव शरीर के मध्य में नाभि के पास 'सूर्य-चक्र' नाम की एक ग्रन्थि रहती है, जिसके प्रभाव से हमारा पाचन संस्थान, यकृत, प्लीहा आदि अङ्ग स्वस्थ दशा में बने रहते हैं और अपना कार्य ठीक ढंग से करके जीवनी शक्ति की वृद्धि करते हैं।

पर जो लोग परिस्थितिवश अथवा अज्ञान के कारण सूर्य की धूप से वंचित रहते हैं, अपने बदन को दिनभर में दस-बीस मिनिट भी सूर्य की धूप का सेवन करने का अवसर नहीं देते, उनका सूर्य-चक्र निष्क्रिय हो जाता है और फलस्वरूप पाचन क्रिया मन्द होकर स्वास्थ्य में खराबी उत्पन्न हो जाती है। योगशास्त्र में सूर्यचक्र को जागृत करने के लिए 'सूर्यभेदन प्राणायाम' की विधि बतलाई है, जिसके अभ्यास से स्वास्थ्य में चमत्कारी परिवर्तन हो जाता है। पर प्राणायाम करने वाले को आहार-विहार तथा ब्रह्मचर्य के कठिन नियमों का पालन करना आवश्यक होता है, जो अधिकांश लोगों से नहीं बन पड़ता। ऐसे व्यक्तियों के लिए सूर्य नमस्कार व्यायाम की पद्धति निकाली गई है, जो किसी भी समय १५-२० मिनिट में कर लिया जाता है और जिससे सब अंगों का साधारण व्यायाम होकर सूर्य की धूप के लाभ भी प्राप्त हो जाते हैं।

यों तो यह व्यायाम सुविधानुसार किसी भी समय किया जा सकता है, पर अन्य समय की अपेक्षा प्रातःकाल की धूप अधिक जीवनतत्व प्रदायक मानी जाती है। इसलिये सूर्य नमस्कार का व्यायाम अपनी सुविधा और ऋतु के अनुसार ६ से ६ बजे तक कर लेना हितकारी होता है। इसके लिये पुरुषों को व्यायाम करते समय केवल एक लँगोटी पहिने रहना चाहिये और स्त्रियाँ तथा लड़कियों को भी अपनी स्थिति और स्थान के अनुसार जहाँ तक हो सके कम-से-कम वस्त्र बदन पर रखना चाहिए। इसका उद्देश्य यही है कि जहाँ तक सम्भव हो सूर्य की धूप शरीर के अधिक-से-अधिक खुले हुए भागों पर पड़े। सूर्य की धूप से शरीर के अनेक विकार दूर होते हैं, चर्म की सक्रियता बढ़ती है और रक्त के संचालन पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।

इस व्यायाम-पद्धति का प्रचार गत कुछ वर्षों से महाराष्ट्र प्रान्त में विशेष रूप से किया गया था और वहाँ के एक श्रीमान व्यक्ति ने इस सम्बन्ध में अनेक पुस्तिकायें और साहित्य प्रकाशित कराया था। अब इस सम्बन्ध में अनेक सज्जन काम कर रहे हैं और उन्होंने इसकी विधियों में अपने अनुभव के अनुसार थोड़े-थोड़े परिवर्तन भी कर लिये हैं। पर सबका मूल उद्देश्य यही है कि प्रातःकाल की धूप में वस्त्र रहित खड़े होकर शरीर के सब अंगों का भली प्रकार संचालन कर लिया जाय। इसकी मूल विधि में दस व्यायाम बतालाये गए हैं जो इस प्रकार हैं—

(१) सीधे तनकर खड़े हो जाओ। शरीर कहीं पर ढीला या झुका न रहे। इस प्रकार सिर उठाकर तथा सीना तानकर खड़े होने का, व्यायाम और योग की दृष्टि से, बहुत महत्व है। गीता में भी आसन का अभ्यास करते समय 'समंकाय शिरोग्रीवं' स्थिति में रहने का उपदेश दिया है। इस प्रकार सीधा तनकर खड़े होने से रीढ़ की हड्डी और उसके आस-पास के स्नायुओं पर विशेष लाभदायक प्रभाव पड़ता है। तब प्रसन्न मन से नेत्र बन्द कर सूर्य को नमस्कार करें और मन में यह विचार करें कि सूर्य-भगवान, जो अखण्ड शक्ति के भण्डार हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी आरोग्य प्रदायिनी किरणों द्वारा हमारे शरीरों के विकारों को दूर करके नव-जीवन प्रदान कर रहे हैं।

नमस्कारासन(१)

(२) बदन को खूब कड़ा रखते हुए कमर को झुकाओ और पैरों के घुटनों को बिल्कुल सीधा रखते हुए हाथों के दोनों पंजों को जमीन से लगाने का प्रयत्न करो। साथ मस्तक को दोनों हाथों के बीच में होकर इतना झुकाओ कि नाक घुटनों से लग जाय। यह स्थिति एक दिन में प्राप्त नहीं हो सकती। इसलिए घुटनों को सीधा रखते हुए हाथ और मस्तक जितना झुक सके उतना झुकाओ। धीर-धीरे अभ्यास बढ़ जाने से ये दोनों क्रियायें ठीक होने लग जायेंगी।

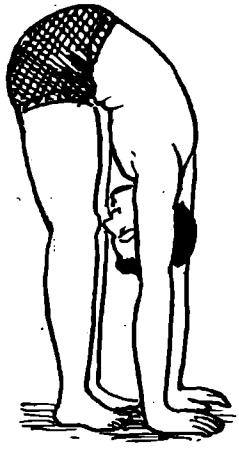

हस्तपादासन(२)

(३) फिर पूर्ववत् खड़े होकर पैर और हाथों को जमीन पर लगाइये जैसा कि दण्ड करते समय करते हैं। फिर उसी दशा में रहकर दाहिने पैर को उठाकर दाहिने हाथ के पास लाइये, जिससे पैर की उँगलियाँ दाहिने हाथ की कलाई को छूने लगें। तब इस पैर को जितना हो सके आगे की ओर खींचने की कोशिश करो। यह ध्यान रहे कि इस बीच में बाँया पैर और उसकी उँगलियाँ बराबर पहली हालत में जहाँ की तहाँ बनी रहें। इसके पश्चात् दाँये पैर को पीछे ले जाकर सीधा कर लें और बाँये पैर को उठाकर बाँये हाथ के पास लाइये और पूर्ववत् व्यायाम कीजिए। इस प्रकार व्यायाम करने से पैरों और हाथों की पेशियों की शक्ति बढ़ती है।

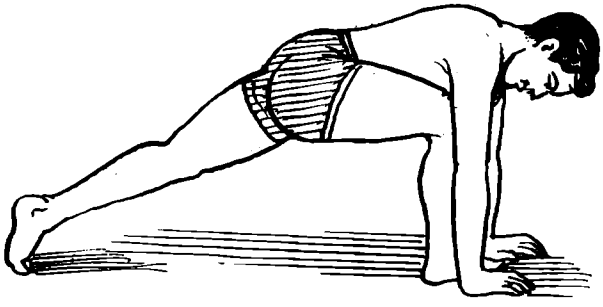

एकपादप्रसरणासन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(४) चौथे व्यायाम में दोनों पैरों को बराबर फैलाये हुए, दोनों पैरों की उँगलियाँ तथा दोनों हाथों के पंजों को जमीन पर रखे हुए दण्ड की आकृति में हो जायें।

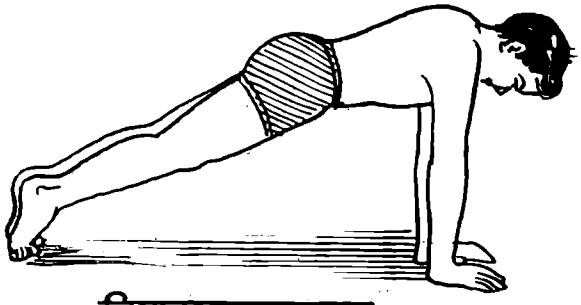

द्विपादप्रसरणासन

(५) पाँचवें व्यायाम की दशा में हाथों के बल जमीन की तरफ इतना झुको जिससे घुटने, छाती और सिर पृथ्वी से छू जायें। इसको अष्टाङ्ग प्रणिपातासन कहते हैं क्योंकि इसमें दो पैरों के पंजे, दो घुटने, दो हाथों की हथेलियाँ, छाती और सिर—शरीर के ये आठ भाग पृथ्वी को छूते हैं। पेट जमीन से न छुये इसका ध्यान रखना पड़ता है। यदि पेट और कमर का भाग भी जमीन से छू जायेगा तो व्यायाम का पूरा लाभ न होगा।

अष्टांगप्रणिपातासन

(६) पाँचवीं स्थिति में से ही हाथों के जोर से छाती को ऊपर उठाओ और सिर को जहाँ तक बन सके ऊपर की ओर तान दो इससे छाती भी खूब आगे निकल आयेगी। यह स्थिति भुजङ्गासन की होती है।

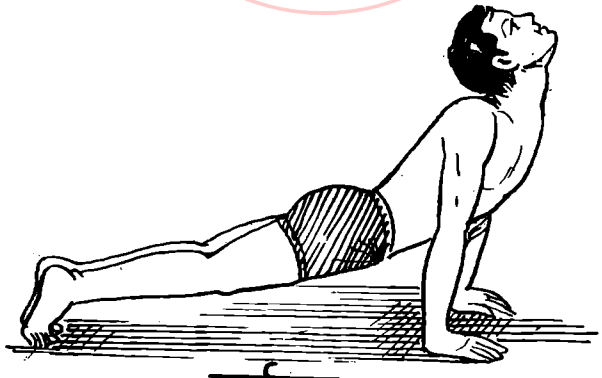

सर्पासन

इन छः व्यायामों के बाद नं. ४, ३, २, १, के व्यायामों को पुनः उल्टे क्रम से करना चाहिए जिससे मनुष्य पुनः उसी स्थिति में पहुँच जाता है, जहाँ से आरम्भ किया था। इस प्रकार ४ प्रकार के व्यायाम दो-दो बार और नं. ५ व ६ का एक-एक बार करने से दस व्यायाम हो जाते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं, जो मिलकर एक 'सूर्य भेदन व्यायाम' कहा जाता है। जिन लोगों ने इसका पूरा अभ्यास किया है, उसके कथनानुसार यह व्यायाम जितने तेजी से किया जायेगा उतना ही अधिक लाभ होगा। कुछ लोग तो दस व्यायामों में ६ सेकिण्ड ही लगाते हैं। अगर हम इस समय को दस या पन्द्रह सेकिण्ड भी माने लें तो एक मिनिट में चार-छः 'सूर्य-भेदन व्यायाम' किये जा सकते हैं। पर यह ध्यान रखना चाहिए कि यह हिसाब अच्छे शक्तिशाली और नीरोग व्यक्तियों के लिए है। जो किसी कारणवश कमजोर या रोगी हो उनको अपनी स्थिति के अनुसार धीरे-धीरे ही व्यायामों की संख्या बढ़ानी चाहिए। आरम्भ में पाँच व्यायाम भी पर्याप्त हैं। धीरे-धीरे उनकी संख्या दस या बीस तक बढ़ाई जानी चाहिये।

इस व्यायाम से शरीर के सब अंगों पर पर्याप्त जोर पड़ जाता है और उनकी शक्ति बढ़ती है। खासकर न. २ के व्यायाम से पेट के अंगों पर दबाव पड़कर पाचन-क्रिया ठीक होती है और नं. ६ के व्यायाम से रीढ़ की हड्डी भीतर की तरफ झुकती है, जिससे शरीर-स्थित चक्र जागृत होकर सब अंगों को उचित पोषण पहुँचाने लगते हैं। पाठकों को यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि आरोग्य रक्षा की दृष्टि से रीढ़ की हड्डी का सीधा और नीरोग रहना बहुत आवश्यक है, जिन लोगों की पीठ गलत अभ्यास के कारण झुकी रहती है, उनका स्वास्थ्य कभी ठीक नहीं रह सकता।

लाठी व्यायाम

हमारे देश में लाठी रखने का प्रचार बहुत है और ग्रामीण लोगों के लिये तो वह एक साथी की तरह ही काम देती है। यद्यपि लाठी का मुख्य उद्देश्य किसी प्रकार के आक्रमण से अपनी रक्षा करना ही समझा जाता है और इसी विचार से अनेक लोग लाठी चलाना सीखते हैं, पर लाठी व्यायाम इससे एक स्वतन्त्र चीज है। यह व्यायाम अन्य प्रकार के अनेक व्यायामों से अधिक रुचिकर और मनोरंजक होता है, इससे शरीर में फुर्ती आती है और विभिन्न अंगों का व्यायाम भी हो जाता है। वैसे तो लाठी चलाने की अनेक विधियाँ हैं पर व्यायाम की दृष्टि से पाँच-छः तरह के हाथ चलाना पर्याप्त होता है।

(१) लाठी को लेकर मुस्तैदी के साथ खड़े हो जाओ। लाठी कान से अधिक ऊँची न होनी चाहिए और बहुत भारी लाठी लेना भी अनावश्यक है। उसे ऊपर के सिरे से एक वालिश्त की निचाई पर दाहिने हाथ से पकड़ो और बाँया हाथ उससे एक वालिश्त नीचे रखो। बाँया पैर आगे रहे और दाँया उससे थोड़ा पीछे की तरफ, इस प्रकार रखा जाय कि मानो किसी पर आक्रमण करने के लिये तैयार हो। फिर शीघ्रतापूर्वक दोनों हाथों से लाठी को पकड़े हुये दाहिने कूल्हे के पास ले आओ और बाँये हाथ से उसे इस प्रकार उठाये रहो, जिससे वह समकोण बनाती जान पड़े। इसको लाठी व्यायाम की तैयारी की स्थिति कह सकते हैं।

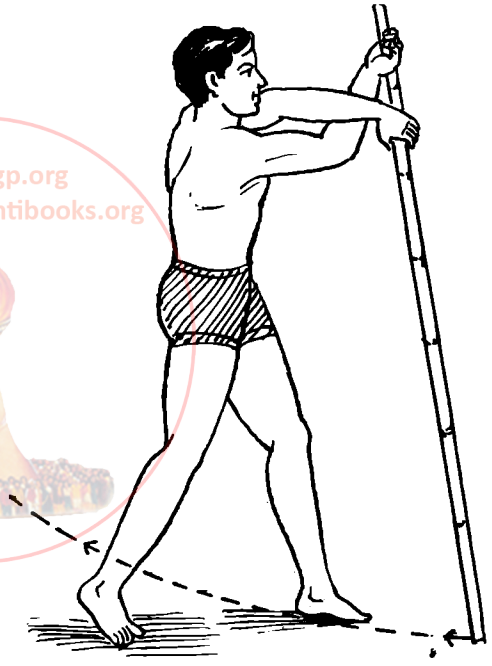

लाठी-व्यायाम–१

(२) जब इस प्रकार लाठी चलाने को तैयार हो जाओ तो उसे बाँई ओर से पीठ को पार करते हुये इस तरह आगे ले जाओ कि उसका नीचे वाला सिरा पैर से १४-१६ इञ्च के फासले पर आ जाय। फिर उसे उलटा लौटा ले जाओ और इस प्रकार पकड़े रहो, जिससे दाहिने हाथ की मुट्ठी दाहिने कान को छूती रहे। इस हालत में लाठी का ऊपरी सिरा मस्तक से कुछ ऊँचा रहेगा और बाँया हाथ कोहनी पर झुका हुआ होगा। इसको बाँयी ओर से आगे का चक्कर कहा जायेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

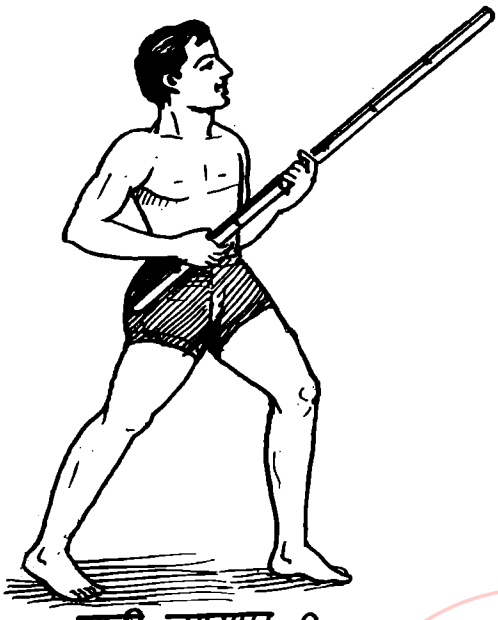

लाठी व्यायाम-२

(३) फिर तैयारी की दशा में खड़े होकर बाँये हाथ की कलाई को दाहिने हाथ की कलाई पर रखते हुये लाठी को पकड़ो। लाठी का नीचे का सिरा बाँये पैर के सामने कुछ दूरी पर जमीन पर टिका हो। अब बाँये हाथ पर जोर देकर लाठी को शीघ्रतापूर्वक दाहिनी ओर से पीठ की तरफ ले जाकर तैयारी की दशा पर आ जाओ। इसको दाँयी ओर से आगे का चक्कर कहते हैं।

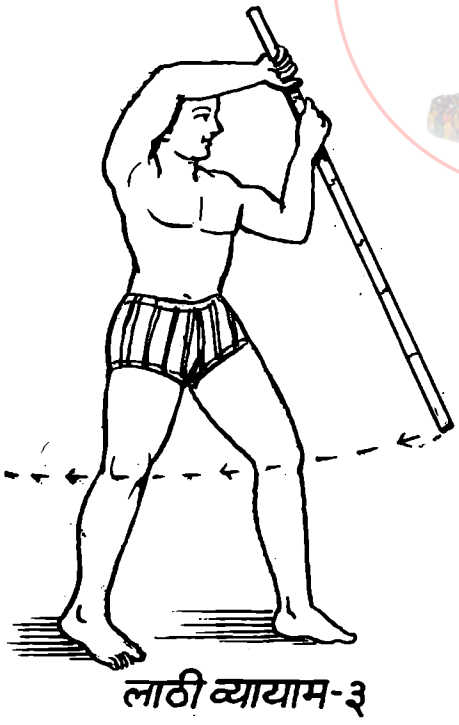

लाठी व्यायाम-३

(४) तैयारी की दशा में खड़े होकर लाठी इस प्रकार ऊपर उठाकर ले जाओ कि वह कन्धों की सीध में आ जाय। दाहिने हाथ की मुट्ठी को जिस जगह है, वहीं रखे रहने देकर बाँये हाथ से लाठी को पीठ की तरफ नीचे ले जाओ और बाँये पैर से जितना हो सके आगे लाओ। इसी तरह बार-बार पीठ के पीछे से आगे की तरक घुमाओ। इसको बाँये हाथ से पीछे का चक्कर कहते हैं।

(५) जिस प्रकार बाँयी तरफ लाठी घुमाई जाती है, उसी प्रकार तैयारी की दशा में खड़े होकर दोनों हाथों से पकड़े हुये लाठी को दाहिनी ओर से घुमाओ। इसमें भी दाहिने हाथ की मुट्ठी जहाँ की तहाँ रहती है और लाठी को बाँये हाथ के जोर से ही घुमाया जाता है। इस प्रकार लाठी को आगे और पीछे की तरफ बाँयी और दाँयी ओर घुमाने के चार व्यायाम हो जाते हैं।

इस तरह लाठी को कई प्रकार से घुमाया जा सकता है, जिसकी विधि मनुष्य स्वयं भी सोचकर निकाल सकता है। लड़ने के लिये लाठी चलाने की शिक्षा में तो आगे-पीछे हटने में कई प्रकार के पैतरों का ध्यान रखना पड़ता है, पर लाठी व्यायाम में वैसी कोई बात नहीं है। लाठी वजन में हलकी भी होती है इसलिये उसे दस-पाँच मिनिट घुमाते रहना कोई मुश्किल बात नहीं है। इससे हाथों और बगल की पसलियों का व्यायाम तो होता ही है, साथ ही एक प्रकार का साहस का भाव भी उत्पन्न होता है। लाठी को मजबूती से पकड़कर चारों तरफ देर तक घुमाने से यह भाव पैदा होता है कि हम पर एकाएक कोई आक्रमण नहीं कर सकता और आवश्यकता होने पर हम अपनी कुछ रक्षा कर सकते हैं। यह एक प्रकार का मर्दानगी का व्यायाम है। अगर कोई इसे ग्रामीण अथवा अनपढ़ लोगों का काम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समझता है तो यह उसकी भूल है। यदि हम डम्ब्रल, चेस्ट-डेवलपर अथवा मुगदर फेरने के व्यायाम को ठीक बतलाते हैं, तो लाठी घुमाने के व्यायाम में भी कोई दोष नहीं कहा जा सकता। इसके विपरीत लाठी-व्यायाम हलका और शरीर को फुर्तीला बनाने वाला है। अगर दो-चार मित्र किसी खुले मैदान में खड़े होकर इसका अभ्यास करें तो यह एक मनोरंजक खेल भी सिद्ध हो सकता है।

मुगदर-व्यायाम

यह एक बहुत प्राचीन व्यायाम है, जिसका प्रचार अब अनेक शिक्षा संस्थाओं तथा आधुनिक व्यायामशालाओं में भी हो गया है। इनमें अन्तर यही है कि जहाँ पहले बीस-तीस सेर या मन भर वजन की मुगदरों की जोड़ी फिराई जाती थी वहाँ अब चार-पाँच सेर वजन के मुगदर ही घुमाना पर्याप्त समझा जाता है। इस व्यायाम से शरीर शक्तिशाली बनता है।

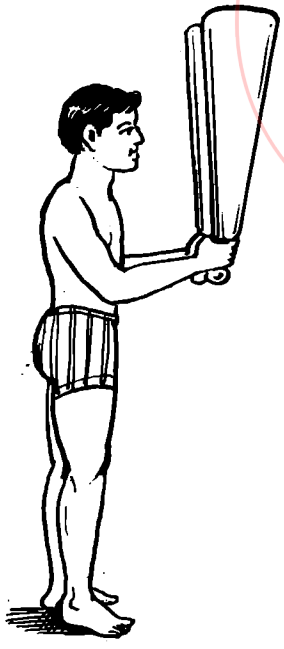

मुगदर-व्यायाम

स्त्रियों के व्यायाम

स्वास्थ्य रक्षा तथा जीवन के उचित विकास के लिये शारीरिक परिश्रम और साधारण व्यायाम प्रत्येक प्राणी के लिये आवश्यक है। अगर हम प्राकृतिक वातावरण में रहें और अपना जीवन निर्वाह सम्बन्धी कार्य स्वाभाविक ढंग से करते रहें तो पुरुष हो या स्त्री किसी को व्यायाम के विषय में विशेष रूप से समझाने या कहने की आवश्यकता ही न पड़े। प्रकृति ने अपना विधान ही ऐसा बनाया है कि प्रत्येक प्राणी को अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये अपने विविध अङ्गों से इतना काम लेना पड़ता है, जिससे उनका उचित परिश्रम हो जाता है। प्राचीन काल में जब तक आधुनिक यान्त्रिक-सभ्यता का आविर्भाव नहीं हुआ था, थोड़े से अपवाद स्वरूप व्यक्तियों को छोड़कर निन्यानवें प्रतिशत से भी अधिक लोगों को अपने कार्य प्रायः हाथ-पैरों की सहायता से खुले स्थानों में इतनी देर तक करने पड़ते थे कि उसमें ही पूरा परिश्रम हो जाता था और व्यायाम का प्रश्न ही नहीं उठता था।

प्राचीन काल की स्त्रियाँ भी परिश्रम में पुरुषों की अपेक्षा किसी प्रकार कम न थीं। जिन लेखकों ने संसार की विभिन्न जातियों के सामाजिक जीवन और उसमें स्त्रियों की स्थिति के विषय में खोज करके लिखा है, उनके मतानुसार तो संसार की अधिकांश स्त्रियाँ, पुरुषों की अपेक्षा अधिक शारीरिक श्रम करती आई हैं और इससे उनका स्वास्थ्य तथा शक्ति किसी प्रकार पुरुष से कम नहीं रहे हैं। एक विदेशी लेखिका मिसेज ऐलीसन ने लिखा है कि कोलम्बिया (अमरीका) के आदिम निवासियों में स्त्रियाँ शिकार करने में उतनी ही निपुण होती हैं जिस प्रकार कि पुरुष। तसमानियाँ की स्त्रियाँ ऊँचे-ऊँचे पेड़ों पर जितनी शीघ्रता से चढ़ जाती हैं, उसका मुकाबला वहाँ के पुरुष नहीं कर सकते। काँगों की स्त्रियाँ उतना बोझा ढो सकती हैं, जितना कोई बलिष्ठ पुरुष नहीं ढो सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

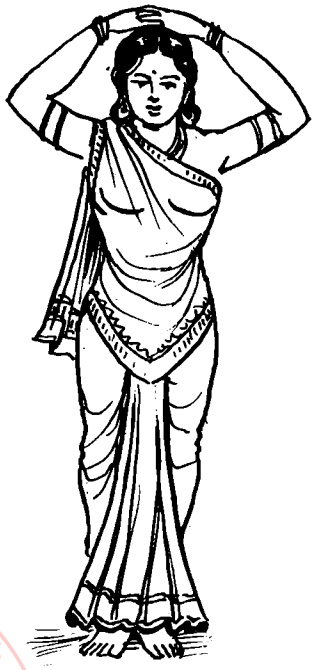

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

भारतवर्ष की स्त्रियाँ भी स्वास्थ्य की दृष्टि से किसी प्रकार कम नहीं थीं। खेती के कार्य में पूरा सहयोग देने के सिवाय उनको नियमित रूप से चक्की चलाना, अनाज कूटना, पानी भरकर लाना, दूध को बिलोकर घी निकालना, चर्खा कातना आदि इतने कार्य करने पड़ते थे कि उन्हीं में उनके सब अङ्गों का काफी परिश्रम हो जाता था और किसी अतिरिक्त व्यायाम की आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। यही कारण था कि किसी प्रकार के संघर्ष की आवश्यकता पड़ जाने पर वे उससे भी पश्चात्पद नहीं होती थीं और अपनी रक्षा स्वयं करने में समर्थ होती थीं। जिन भारतीय योद्धाओं की यश-गाथा हम प्राचीन ग्रन्थों में पढ़ते है और जिनने बड़े दुर्घर्ष विदेशी आक्रमणकारियों को मार-मार कर अपने देश से खदेड़ दिया था, वे सब ऐसी शक्तिशाली स्त्रियों की सन्तान ही थे। अब भी जो स्त्रियाँ दूरवर्ती ग्रामों में रहकर प्राकृतिक जीवन बिताती हैं वे बल और साहस में किसी प्रकार कम नहीं होती और खेतों अथवा जङ्गल में किसी आक्रमणकारी वन-पशु के मिल जाने पर उसे मार देती या भगा देती हैं।

पर कुछ समय से नगर निवासी स्त्रियों की दशा इसके विपरीत हो गई है। इसका एक बड़ा कारण तो पर्दा है। उत्तर भारत के अधिकांश स्थानों में सभ्य-समाज की समझी जाने वाली स्त्रियाँ प्रायः कम या ज्यादा परिणाम में पर्दे के नियम का पालन करती हैं और कुछ विशेष अवसरों को छोड़कर प्रायः घर से बाहर नहीं निकलतीं। समय के परिवर्तन के फलस्वरूप अब उनके चक्की पीसने, पानी भरकर लाने, चर्खा चलाने, दूध बिलोने के कार्य भी समाप्त हो गये हैं। इसलिये वे या तो घर वालों के लिये दो बार रोटी बनाकर खिला देती हैं या आस-पास की स्त्रियों के पास बैठकर दुनियाँ की झूठी-सच्ची बुराई-भलाई की निरर्थक चर्चा करती रहती हैं। इस प्रकार अधिकांश नागरिक स्त्रियों का जीवन बहुत कुछ निकम्मा और उद्योग-विहीन हो गया है। अधिक सम्पन्न समझे जाने वाले घरों की स्त्रियाँ तो, जिनके यहाँ एक-दो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नौकर या नौकरानी मौजूद हैं, भोजन बनाने या झाड़ने बुहारने के साधारण काम भी अपने हाथ से नहीं करतीं और उनका अधिकांश समय निकम्मी गपशप या पलंग पर लेटे हुए आराम करने में ही व्यतीत होता है।

ऐसी परिस्थिति में यदि हमारे यहाँ की स्त्रियाँ निर्बल, निस्तेज और तरह-तरह की शारीरिक बीमारियों की शिकार बनी रहें तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? राष्ट्रीय स्वास्थ्य का निरीक्षण करने वाले सरकारी अधिकारियों के कथनानुसार यहाँ की ८०-९० प्रतिशत स्त्रियाँ किसी न किसी जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोग में ग्रसित रहती हैं। केवल एक प्रदर रोग को ही लें तो नगर निवासी स्त्रियों में सौ में से दस भी शायद उससे मुक्त निकलें और ग्रामीण स्त्रियों में भी लगभग आधी संख्या इस रोग से पीड़ित निकलेगी। उससे शारीरिक निर्बलता उत्पन्न होकर अन्य कितने ही रोगों की जड़ जम जाती है।

स्त्रियाँ कौन-सा व्यायाम करें ? यह प्रश्न बड़ा महत्वपूर्ण और गम्भीर है। यों साधारण रूप से व्यायाम के लिए कह देना, उसकी प्रशंसा कर देना और बात है और उनके लिए लाभकारी और वास्तव में उपयोगी विधियों का निर्णय कर सकना सर्वथा भिन्न है। हमारे यहाँ तो व्यायाम का साधारण अभिप्रायः डण्ड-बैठक आदि करना और उनके द्वारा हाथ-पैरों को मजबूत और गठीला बनाना समझा जाता है। ऐसा व्यायाम सामान्य पुरुषों के लिए भी बहुत लाभदायक नहीं होता, फिर स्त्रियों के लिए तो उसका जिक्र करना बुद्धिहीनता ही होगी। स्त्रियों के अंगों का कोमल होना, उनमें स्वाभाविक लचक रहना भी आवश्यक है। जिस व्यायाम से ये गुण नष्ट होते हैं, वह स्त्रियों के लिए उल्टा हानिकारक ही सिद्ध होगा। अन्य कार्यों के साथ स्त्रियों का एक मुख्य जीवन-कार्य प्रजनन का भी है। वे ही जाति के अस्तित्व को स्थिर रखने वाली होती हैं। यदि किसी स्त्री को ऐसा कार्य करना पड़ता है अथवा इस प्रकार का व्यायाम करती है, जिससे उसका शरीर कड़ा पड़ जाता है, तो उसे सन्तानोत्पादन में अवश्य ही बहुत अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा।

वास्तव में व्यायाम का यह उद्देश्य है भी नहीं कि उससे मनुष्य के अङ्ग कठोर या कड़े पड़ जायें और उनकी लचक कम हो जाय। शरीर में लचक का बना रहना स्वास्थ्य का एक निश्चित लक्षण है और लचक का कम होना वृद्धावस्था का चिन्ह है। शरीर की माँसपेशियों का बहुत भारी गाँठ-गठीला हो जाना पेशेवर पहलवानों के लिए भले ही अच्छा माना जाय, पर सामान्य जीवन बिताने वाले किसी स्त्री-पुरुष के लिए वह उपयोगी नहीं कहा जा सकता। हम किसी भी प्रकार का व्यायाम करें, उससे इस बात का ध्यान रखना अत्यावश्यक है कि हमारे अंगों में अधिक कड़ापन उत्पन्न न हो जाय और उनकी लचक जीवन के अन्तिम समय तक बनी रहे।

इस दृष्टि से स्त्रियों के सर्वोत्तम व्यायाम तो चक्की चलाना, अनाज कूटना, दूध बिलोना जैसे गृहकार्य ही समझे जा सकते हैं। इनमें स्त्रियों को जितना परिश्रम करना पड़ता है, उतना उनके स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से पर्याप्त है। पर जो स्त्रियाँ वर्तमान परिस्थिति में इस प्रकार का कार्य नहीं कर सकतीं अथवा जिन बड़े नगरों में इस प्रकार के साधन ही सहज में नहीं मिल सकते, उनके लिए टहलने का व्यायाम अधिक उपयोगी है। अगर प्रातःकाल शहर के बाहर दो-तीन मील तेजी से चला जाय तो उसका स्वास्थ्य पर चमत्कारी प्रभाव पड़ता है और कई प्रकार की साधारण बीमारियाँ अपने आप से दूर हो जाती हैं। बहुत-सी स्त्रियाँ मन्दिर जाने, कथा-वार्ता सुनने के लिए या स्नान आदि के लिए कुछ देर नित्य चल-फिर लेती हैं, पर भीड़भाड़ के स्थानों में चलने-फिरने से टहलने का लाभ मिलना संभव नहीं होता। उसके लिए प्रातःकाल के समय खुले मैदान का वातावरण ही उपयुक्त होता है। उस समय यदि आधा घण्टा भी तेजी के साथ चल लिया जाय तो वह शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के बहुत लाभदायक होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

टहलने के सिवाय छोटी और बड़ी आयु की कन्यायें तथा नवयुवतियाँ कुछ खेलों की तरह के व्यायाम भी कर सकती हैं। जिस प्रकार अनेक छोटी लड़कियाँ रस्सी घुमाती हुई उसके आर-पार कूदती रहती हैं, वह मनोविनोद के साथ एक अच्छा व्यायाम होता है। स्कूली ड्रिल की तरह हाथ-पैरों को फैलाने और ऊपर, नीचे तानने का व्यायाम भी शरीर के भीतरी-बाहरी अंगों में चैतन्यता तथा ताजगी ला देता है। ऐसा व्यायाम किसी भी खुले कमरे में दस-पन्द्रह मिनट तक प्रतिदिन करना स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से उपयोगी होता है। साधारण आसन स्त्रियों के लिए उपयोगी हैं, उनसे शरीर के भीतरी अंगों की उन्नति होती है और स्वास्थ्य की जड़ें मजबूत हो जाती हैं। पर आसन करने से पहले इस सम्बन्ध में किसी अनुभवी व्यक्ति से सलाह ले लेनी आवश्यक है। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि मासिक-धर्म के समय और गर्भावस्था में किसी प्रकार का विशेष व्यायाम न किया जाय। उस अवस्था में केवल टहलना ही स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से उत्तम व्यायाम है।

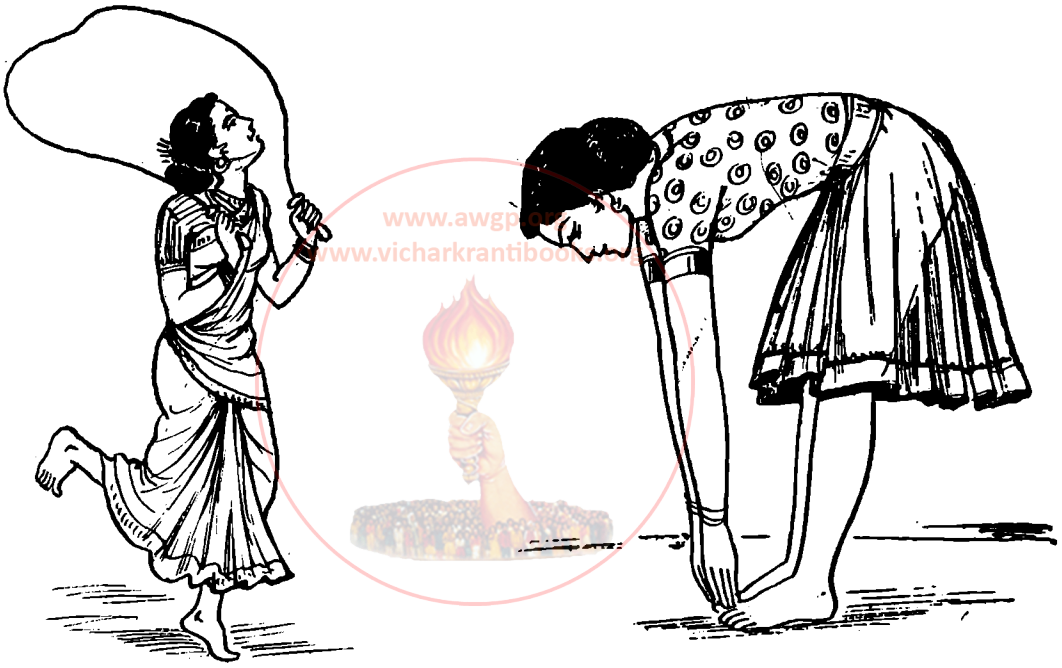

कहने का तात्पर्य यही है कि स्त्रियों को अपने स्वास्थ्य की रक्षा के सम्बन्ध में पूर्णतः सावधान रहना चाहिए और जहाँ तक संभव हो हर तरह के घरेलू कार्य अपने हाथ से करके और घूमना-फिरना करके आरोग्य अवस्था प्राप्त करनी चाहिए। पर उनके लिए पुरुषोचित भारी व्यायामों की सलाह नहीं दी जा सकती, क्योंकि उसमें उनके प्रजनन अंगों पर, जो अत्यन्त कोमल होते हैं, विपरीत प्रभाव पड़ने की संभावना रहती है। फिर प्रतिमास कई दिन तक उनको मासिक धर्म की अवस्था में रहना पड़ता है, जबकि उन अंगों की स्थिति और भी कोमल हो जाती है और इस कारण उस समय उनके लिए तीन-चार दिन तक कुछ भी गृहकार्य न करके अलग बैठे रहने का नियम बनाया गया है। यह अत्यन्त हितकारी नियम है और आजकल इसका उल्लंघन करने के कारण भी अनेक स्त्री-रोगों की उत्पत्ति हो जाती है। इन सब बातों पर विचार करके स्त्रियों को स्वाभाविक श्रम के कार्य तथा टहलना, आसन आदि सरल व्यायाम द्वारा ही अपने स्वास्थ्य को उत्तम बनाये रखने का ध्यान रखना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राशि-चक्र के अनुकूल व्यायाम

यद्यपि व्यायाम का उद्देश्य विभिन्न अंगों को गति देकर रक्ताभिसरण ठीक स्थिति में रखना और शरीर की समस्त माँस-पेशियों को कार्यक्षम बनाए रखना ही है, तो भी एक ही तरह का व्यायाम सदैव समान रूप से गुणकारी नहीं हो सकता। एक विद्वान के कथनानुसार सूर्य से जो प्राणशक्ति पृथ्वी पर आती है और जिसको ग्रहण करके हम अपनी जीवनी शक्ति के भंडार की पूर्ति करके स्वस्थ बने रहने सकते हैं, वह वर्ष के बारह महीनों में भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रभाव रखती है। जैसा पाठक जानते हैं सौर-वर्ष बारह राशियों के हिसाब से १२ भागों में बँटा है और प्रत्येक राशि का गुण तथा प्रभाव एक-दूसरे की अपेक्षा कुछ भिन्नता रखता है। इस सिद्धान्त के आधार पर प्राचीन समय के अनुभवी लोगों ने यह पता लगाया है कि किस राशि या सौर मास का सूर्य-प्रकाश मानव शरीर के किस अंग को अधिक प्रभावित करता है अथवा किस अंग की तरफ विशेष रूप से आकर्षित होता है। यदि उस महीने में उस अंग के व्यायाम पर विशेष ध्यान दिया जाय तो सूर्य के प्राणतत्व का पूर्ण लाभ उठाया जा सकता है और स्वास्थ्य की उन्नति की जा सकती है।

(१) इस विधि के अनुसार जो व्यायाम किया जाता है, उसमें सबसे प्रथम सौर चैत्र मास (मीन राशि) की गणना की जाती है, जिसका सम्बन्ध सिर और मुख से है। इन अंगों के व्यायाम के लिए एड़ियाँ मिलाकर तथा पंजों को कुछ फैलाकर तनकर खड़े हो जाइए। फिर दोनों हाथों को कन्धों की सीध में तान लीजिए और मुट्ठियों को इस प्रकार कसकर बाँध लीजिए कि जिससे हाथ की माँसपेशियाँ खूब तन जायें तत्पपश्चात् श्वाँस भरते हुए दोनों हाथ सिर के ऊपर इस तरह ले आइए कि दोनों मुट्ठियाँ मिल जाएँ। फिर श्वाँस को बाहर निकालते हुए और माँसपेशियों को ढीला करके पूर्व स्थिति पर ले आइए। इस प्रकार पाँच से दस मिनिट तक व्यायाम करने से सिर और मुख का रक्ताभिसरण सतेज हो उठेगा और वहाँ स्नायुओं में चैतन्यता तथा शक्ति उत्पन्न होगी। व्यायाम करते समय इस तथ्य को मन में चित्रित भी करते रहना चाहिए, क्योंकि मन की शक्ति से ही शरीर के विभिन्न अंग और कोषाणु अपना कार्य ठीक ढंग से करने में समर्थ होते हैं। इस व्यायाम में शरीर के अंगों पर जोर डालना उतना महत्व नहीं रखता जितना कि (१) माँस-पेशियों को तानना और ढीला करना अर्थात् प्रसरण और आंकुचन, (२) दीर्घ श्वाँस का लेना जो छाती और पेट को ऊँचा उठा दे, (३) मनःशक्ति को व्यायाम के लाभों को प्राप्त करने में प्रयुक्त करना। इस प्रकार तीनों बातों को सामञ्जस्य करके जो व्यायाम किया जायेगा वह दस मिनट में ही शारीरिक स्वास्थ्य की इतनी उन्नति कर सकता है जितनी अन्धाधुन्ध किए जाने वाले घण्टे भर के भारी व्यायाम भी नहीं कर सकते।

(२) दूसरी राशि मेष (वैशाख) में सूर्य का प्रभाव गर्दन के लिए अधिक हितकारी होता है। इसके लिए हाथों को पहले व्यायाम की तरह कन्धों की सीध में फैलाकर और मुट्ठी बाँधकर मांसपेशियों को तानते हुए सिर के ऊपर ले जाने के बजाय सामने की तरफ लाइए, जिससे छाती की सीध में फैलाकर और मुट्ठी बाँधकर मांसपेशियों को तानते हुए सिर के ऊपर ले जाने के बजाय सामने की तरफ लाइए जिससे वे छाती की सीध आ जाएँ। श्वाँस लेने तथा मन द्वारा गर्दन के भाग में नवीन प्राणशक्ति के भरने और वहाँ के प्रत्येक कोषाणु के सशक्त बनने की भावना भी करनी चाहिए।

(३) वृष (ज्येष्ठ) की तीसरी राशि का सम्बन्ध छाती (फेंफड़ों) कन्धों तथा भुजाओं से विशेष रूप से माना गया है। इसके लिए दोनों हाथों को पूर्ववत् फैलाकर और तानकर कोहनी पर से मोड़िये और बराबर झुकाते हुए मुट्ठियों को कन्धों से मिला दीजिए। मुट्ठियों को कन्धों की तरफ लाते हुए श्वाँस भरा जाय और वापस ले जाते हुये निकाला जाय।

इस व्यायाम को तीन-चार मिनट तक करके फिर शरीर को ताने हुये एक हाथ को नीचे स्वाभाविक अवस्था में लटका रहने दीजिये और दूसरे को कन्धे की सीध में तानकर मुट्ठी बाँधकर श्वाँस भरते हुये कोहनी पर इतना मोड़िये कि कोहनी तक का भाग लम्ब की तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खड़ा हो जाय। इस प्रकार पाँच-सात बार करके इस हाथ को नीचे लटका लीजिये और दूसरे हाथ से इसी प्रकार व्यायाम कीजिये। इससे भुजायें सशक्त होंगी और फेंफड़ों की शक्ति बढ़ेगी।

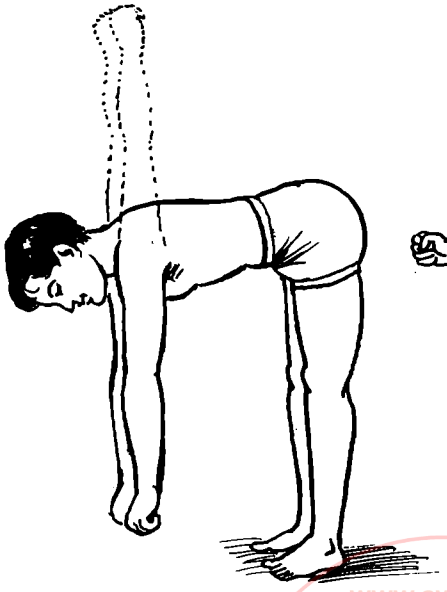

आमाशय और छाती का व्यायाम

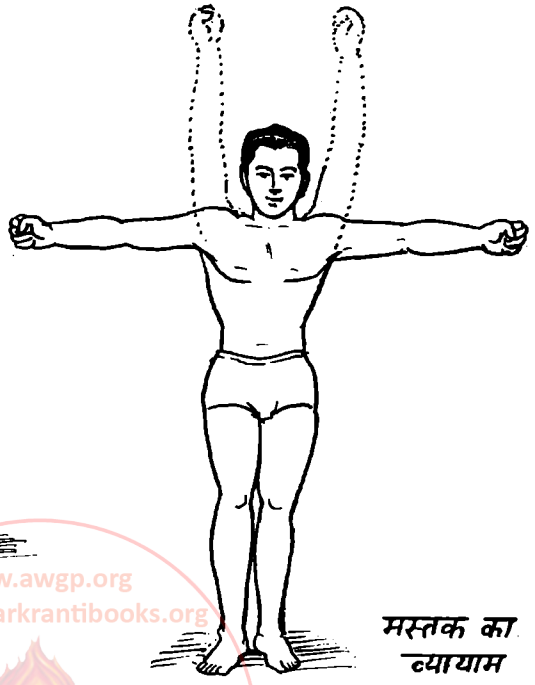

मस्तक का व्यायाम

(४) मिथुन राशि (अषाढ़) का सम्बन्ध आमाशय और पेट के अन्य पाचन सम्बन्धी यन्त्रों से है। इसके लिए सीधे खड़े होकर कमर को इतना झुकाइये कि दोनों हथेलियाँ पैरों के पंजों के पास पहुँच जायँ और धड़ तथा टाँगों के बीच समकोण-सा बन जाय। अब कमर की स्थिति को ज्यों का त्यों रखते हुये दोनों हाथों को ऊपर की ओर ले जाओ, जिससे पीठ के ऊपर पहुँचकर दोनों की मुट्ठियाँ मिल जायें। फिर ढीला करके उन्हें नीचे ले आइये। इसी प्रकार पाँच-सात मिनिट तक व्यायाम करने से पेट के सब अंगों का व्यायाम हो जाता है और छाती को भी लाभ पहुँचता है। हाथों को ऊपर ले जाते हुए श्वाँस खींचने और नीचे लाते हुये बाहर निकालने का ध्यान रखना आवश्यक है। मानसिक ध्यान द्वारा इन अंगों की स्वास्थ्य वृद्धि होने की भावना भी करते रहिये।

(५) कर्क राशि (श्रावण) में हृदय, पीठ और रीढ़ की हड्डी को स्वस्थ बनाने वाला व्यायाम करना चाहिये। इसके लिए सीधे खड़े होकर कमर से ऊपर के भागों को दाँयी और बाँयी ओर जहाँ तक बन सके झुकाइये। इस व्यायाम को दस-बारह बार करके भूमि पर चित लेट जाइये और श्वाँस को पेट तथा छाती में पूरी तरह भरिये और बाहर निकालिये।

(६) सिंह राशि (भाद्रपद) का प्रभाव पेट के निचले भाग तथा अन्ताड़ियों पर विशेष रूप से पड़ता है। इसके लिये सीधे खड़े होकर मुट्ठी कसकर बाँध लेना चाहिये तथा पैरों को तनी स्थिति में रखना चाहिये। तब श्वांस को भरकर भीतर रोकते हुये पेट को भीतर की तरफ पिचकावे और फुलाये। इस प्रकार बार-बार करने से पाचक यन्त्रों तथा मल निकालने वाले अंगों पर लाभदायक प्रभाव पड़ता है। एक बार साँस भरकर ५-७ दफे पेट को पिचकाना और फुलाना चाहिये। फिर साँस को बाहर निकालकर शरीर को ढीला कर दे। दो-चार क्षण बाद फिर उसी प्रकार हाथ-पैरों को तानकर श्वाँस भरकर व्यायाम करना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(७) कन्या राशि (आश्विन) में गुर्दों और कमर के लिए निम्न व्यायाम करें। सीधा खड़ा होकर हाथों को सर के ऊपर तान लीजिये साथ ही श्वाँस भी भर लीजिये। फिर दोनों हाथों और कमर को झुकाते हुये दोनों हाथों से पैरों के अँगूठों को छूने का प्रयत्न कीजिये और श्वाँस को बाहर निकाल दीजिये और फिर सीधे खड़े होकर दुबारा व्यायाम कीजिये।

(८) तुला राशि (कार्तिक) का प्रभाव प्रजनन अंगों पर अधिक पड़ता है। इसके लिए सीधे खड़े होकर मुट्ठी कसकर दाहिने पैर को दो इंच उठाइये पर घुटना जरा भी न मुड़ने पाये। फिर उसे वहाँ तक बन पड़े बाँये पैर की ओर ले जाइए और वहाँ से चक्राकार घुमाते हुये जहाँ तक ले जा सके दाँयी ओर ले जाइये। इस बीच में न धड़ जरा भी हिले और न बाँया पैर अपनी जगह से जरा भी हटे। दाहिने पैर के बाद बाँये पैर को इसी प्रकार ऊँचा उठाकर चक्राकार घुमाया जाय। इस प्रकार बार-बार व्यायाम करने और इस बीच में गहरी श्वाँस खींचते रहने से प्रजनन अंगों की उन्नति होती है।

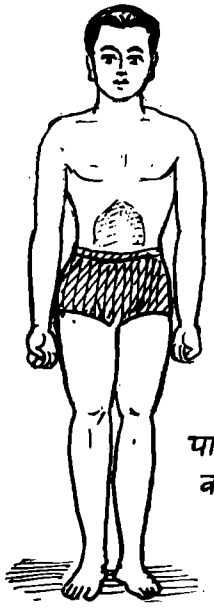

पाचन संस्थान का व्यायाम

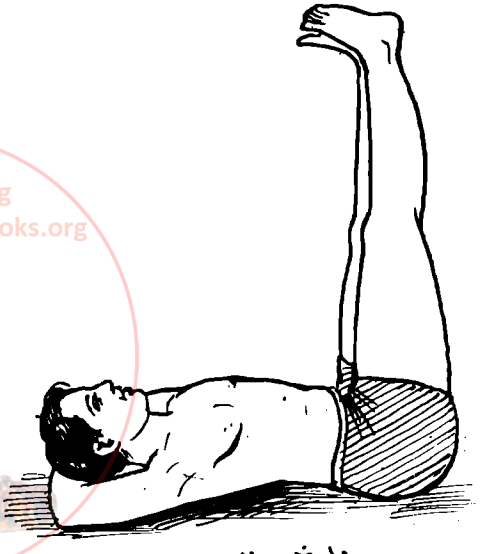

कमर और जाँघों का व्यायाम

(९) वृश्चिक राशि (मार्गशीर्ष) में कूल्हों और जाँघों का व्यायाम करना चाहिए। इसके लिए जमीन पर पैर फैलाकर लेट जाइये और हाथों को एक-दूसरे में फँसाकर छाती पर रख लीजिये। तब गहरा श्वाँस लेते हुए और पैरों को बिल्कुल सीधा तथा तना हुआ रखते हुए सिर को १८-२० इंच उठाइये। इस प्रकार सात-आठ बार करके फिर हाथों को तकिये की तरह मस्तक के नीचे रख लीजिये और सिर को ज्यों का त्यों रहने देकर पैरों को जोर लगाकर ऊपर की तरफ इतना उठाइये कि कमर के साथ समकोण बन जाय।

(१०) धन राशि (पौष) में घुटने और टाँगों को स्वस्थ बनाने के लिये सीधे तनकर खड़े होकर हाथ-पैरों को खूब तान लीजिये। अब कूल्हों को कसकर टाँग की माँसपेशियों को इस प्रकार अपनी तरफ खींचिये कि पैर भूमि से दो-तीन इंच उठ जायें। फिर दाहिनी पैर को जमीन पर रखकर वही व्यायाम बाँये पैर से करिये। पैर उठाते समय श्वाँस भरिये तथा वापस रखते समय निकाल दीजिये।

(११) मकर राशि (माघ) में पैरों के टखनों (गिट्टों) और पंजों को मजबूत बनाने के लिये बदन तानकर और मुट्ठी कसकर खड़े हो जाइये। फिर पैरों की एड़ियों को उचकाकर पंजों और अँगूठों के बल होकर घुटनों को मोड़ते हुये आधी दूर बैठने का प्रयत्न कीजिए। इस समय सारा शरीर पंजों और अँगूठों पर ही तुला रहेगा। शरीर को नीचे लाते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय श्वाँस भीतर खींचिये और ऊपर उठाते समय बाहर निकाल दीजिये।

(१२) कुम्भ (फाल्गुन) में पैरों को स्वस्थ और मजबूत बनाने के लिये अपने शरीर को डण्ड करने की तरह जमीन पर इस प्रकार फैलाइये कि हाथ की हथेलियों और पैरों के अँगूठों के सिवा शरीर का कोई भाग जमीन को छूता न हो। तब कोहनी को मोड़ते हुए बदन को इतना नीचे की तरफ लाइये कि ठोड़ी जमीन को छू जाय, पर घुटने और पेट आदि जमीन से अलग रहें। इस प्रकार का व्यायाम कई बार कीजिए। शरीर को नीचे ले जाते समय श्वाँस खींचिये और उठाते समय बाहर निकाल दीजिये।

कुछ सर्वोपयोगी सरल व्यायाम की विधि

स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से जो व्यायाम सब प्रकार के मनुष्यों के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकता है, उसका मुख्य आधार शारीरिक अंगों को तानने तथा ढीला करने (प्रसारण और संकोचन) की प्रणाली पर ही है। इससे शरीर की समस्त नाड़ियों और पुट्ठों को हिलने-डुलने का अवसर मिलता है और उसकी सक्रियता बढ़ जाती है। इससे शरीर के रक्ताभिसरण पर प्रभाव पड़ता है, जिससे समस्त शरीर का निर्माण ठीक ढंग से होने लगता है, दूषित तत्व बाहर निकलने में सहायता प्राप्त होती है और भीतरी अंगों में अनावश्यक कड़ापन-जड़ता नहीं आने पाती।

साधारण दृष्टि से इन व्यायामों में कोई विशेषता देखने में नहीं आती। बहुत-से व्यक्ति सोचते हैं कि केवल हाथों को ऊपर उठाने, फैलाने, सीधा तान देने आदि से शक्ति की वृद्धि कहाँ हो सकती है ? पर यदि इन्हीं व्यायामों को विश्वासपूर्वक, इच्छा-शक्ति का उपयोग करते हुए किया जाय तो इनसे स्वास्थ्य-रक्षा ही नहीं की जा सकती वरन् अद्‌भुत शक्ति भी प्राप्त की जा सकती है। योरोप का प्रसिद्ध पहलवान सैण्डो बाल्यावस्था में बहुत ही निर्बल तथा नाजुक था और प्रायः ऐसा बीमार हो जाता था कि उसके बचने की आशा नहीं रहती थी। दस वर्ष की आयु में वह अपने पिता के साथ इटली गया और वहाँ उसने प्राचीन समय के कलाकारों की बनाई सुगठित अंगों की मूर्तियाँ देखीं। उनको देखकर उनके चित्त पर बड़ा प्रभाव पड़ा और उसने विचार किया कि वह भी अपने शरीर को ऐसा ही शक्तिशाली और दर्शनीय बनाने की कोशिश करेगा। पर तब तक वह बहुत कमजोर और नाजुक था और कोई कठोर व्यायाम नहीं कर सकता था। अतः उसने इसी शारीरिक अंगों को तानने और ढीला करने की व्यायाम-प्रणाली का आश्रय लिया और क्रमशः उन्नति करता हुआ एक दिन संसार का प्रसिद्ध शक्तिशाली व्यक्ति बन गया।

उसका कहना था कि मेरी व्यायाम-प्रणाली में विशेष महत्व इच्छा-शक्ति (विल पावर) के प्रयोग का ही है। व्यायाम से जितना लाभ होता है, इच्छा-शक्ति उसे दुगुना कर देती है। जो लोग किसी कारणवश इच्छा-शक्ति को ऐसी प्रबल न बना सकें, उनके लिये यह विधि निकाली गई थी कि वे व्यायाम करते समय एक बड़ा-सा शीशा सामने रखलें और उसमें अंग-प्रत्यगों का उतार-चढ़ाव देखते जायें। इससे उनके मन पर अङ्गों के पुष्ट और शक्तिशाली होने का प्रभाव अवश्य पड़ेगा और इच्छा-शक्ति स्वयमेव काम करने लग जायेगी।

व्यायाम करते समय वातावरण का स्वच्छ होना भी आवश्यक है। इसलिये यह व्यायाम किसी खिड़कियों वाले हवादार और प्रकाश-युक्त कमरे में या खुली छत पर अथवा किसी खुले भूमिखण्ड पर करना उचित है। किसी भी व्यायाम के समय साँस लेने का बड़ा महत्व होता है, क्योंकि उस समय गहरी साँस लेने और निकालने से ही फेफड़ों पर उनके द्वारा हृदय, आमाशय आदि पर आरोग्य-प्रदायक प्रभाव पड़ता है। इसलिये व्यायाम करने के स्थान के आस-पास की वायु यदि गन्दी हुई तो वह कभी भी लाभ नहीं पहुँचा सकती। व्यायाम करते समय जिसको जैसी सुविधा हो उसी तरह शुद्ध वायु में साँस लेने की व्यवस्था अवश्य करनी चाहिये।

नीचे व्यायाम की जो विधियाँ दी जा रही हैं, वे बहुत स्पष्ट और सरल हैं। उनमें से कई के चित्र भी दिये गये हैं, जिनसे व्यायाम करते समय की स्थिति (पोजीशन) का ठीक ज्ञान हो सकता है। अभ्यास करने वाले यदि उनको ध्यानपूर्वक समझकर करेंगे तो अवश्य उल्लिखित लाभ उठा सकेंगे। व्यायाम करते समय अंगों को तानने, उनमें दृढ़ता लाने, मानसिक शक्ति, एकाग्रता का ध्यान जितना ही अधिक रखा जायेगा उतना ही लाभ दिखलाई पड़ेगा। पर ये बातें एक साथ नहीं आ जातीं। इसलिये आरम्भ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

में अपनी शक्ति और सामर्थ्यानुसार जितना बन पड़े, श्रद्धा और विश्वास रखते हुए करते जाना चाहिये। क्रमशः अभ्यास होते जाने पर ठीक-ठीक प्रणाली का विकास होता चला जायेगा और पूरा लाभ भी मिलने लगेगा।

खड़े होकर किये जाने वाले व्यायाम

(१) तनकर सीधे खड़े होकर दोनों हाथ कंधे की सीध में फैला दीजिये और दोनों मुट्ठियाँ कसकर बाँध लीजिये। कोहनियों पर मोड़ते हुए दोनों मुट्ठियों को यहाँ तक खींचो कि वे कन्धे के ऊपर सीध में आ जायें। फिर उनको धीरे-धीरे पहली स्थिति पर ले जाइये। इस प्रकार ५-६ बार खूब जोर लगाते हुए करने से काफी व्यायाम हो जाता है। (देखो चित्र न. १)

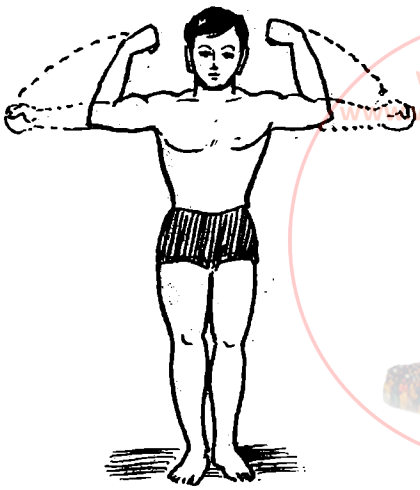

चित्र-१

(२) दोनों हाथों को कंधों की सीध में खूब तानिये। हथेली और कोहनी का भीतरी भाग ऊपर की तरफ रहे। फिर जोर से मुट्ठी बाँध कर दाहिना हाथ नीचे जाँघ के पास तक ले जाओ। तत्पश्चात् उसे उठाकर फिर कन्धे की सीध में कर लो और उसी समय बाँये हाथ को नीचे लाओ। इस व्यायाम में इस बात को ठीक समझ लेना चाहिए कि जब दाहिना हाथ नीचे आयेगा, तब बाँया ऊपर की तरफ उठेगा और जब बाँया नीचे आयेगा, तब दाहिना ऊपर की ओर उठेगा। साँस धीरे-धीरे स्वाभाविक गति से चलती रहे। (देखिये चित्र नं. २)

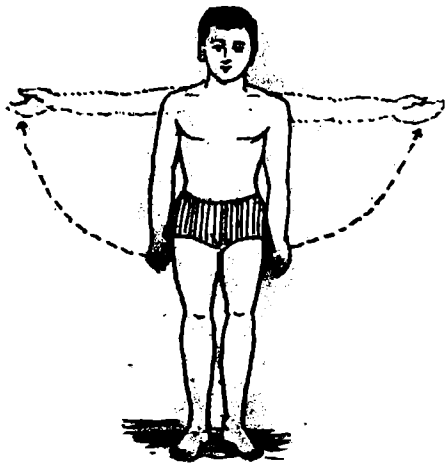

चित्र-२

(३) सीधे खड़े होकर दोनों हाथों को छाती की सीध में खूब तान दीजिये। फिर साँस को रोकते हुए उनको बहुत धीरे-धीरे नीचे जाँघों के पास तक लाइये। एक क्षण के बाद फिर सीधे कीजिये। इस प्रकार से ५ से ८ बार तक कीजिये। हाथों को ऊपर-नीचे लाते समय वे बराबर तने रहें। (देखिये चित्र नं. ३)

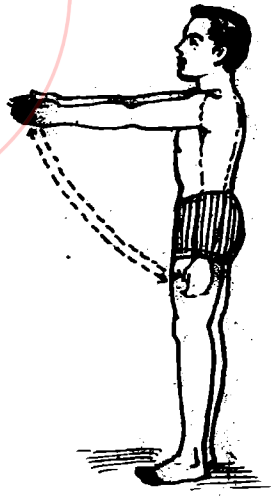

चित्र-३

(४) दोनों हाथों को खूब जोर से छाती के सामने की तरफ फैला दीजिये। फिर दाहिने हाथ को खूब जोर लगाकर खींचते हुए धीरे-धीरे नीचे लाइये और बाँये को ऊपर रखिये। इसके बाद दाहिने हाथ को ऊपर ले जाइये और बाँये हाथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को नीचे लाइये। इसी प्रकार दोनों हाथों को खूब तानकर फैलाते हुए एक के बाद दूसरे को ऊपर-नीचे लाते जायें। पाँच-सात बार ऐसा करने से पूरा व्यायाम हो जायेगा। (देखिये चित्र नं. ४)

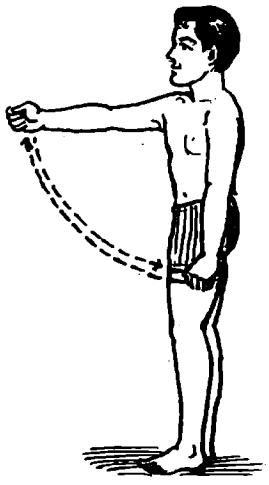

चित्र-४

(५) दोनों हाथों को खूब जोर लगाते हुए ऊपर की तरफ तान दीजिये। दाहिने हाथ को नीचे लाइये और बाँये को वैसे ही रहने दीजिये। फिर दाहिने को ऊपर ले जाते हुए बाँये को नीचे की तरफ लाइये इसी प्रकार ५ से ८ बार तक कीजिये। (देखिये चित्र नं ५)

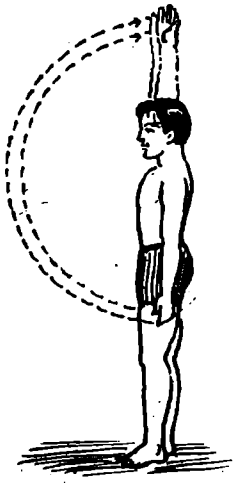

चित्र-५

(६) खूब तनकर सीधे खड़े होकर कमर से नीचे के भाग को ज्यों का त्यों रखते हुए ऊपरी भाग को चित्र के अनुसार क्रमशः दाहिनी और बाँयी ओर जितना बन सके झुकाइये और मोड़िये। इससे कमर और पसलियों की शक्ति बढ़ती है। (देखिये चित्र नं. ६)

चित्र-६

(७) भूमि पर बैठकर दोनों पैर सीधे फैलाकर खूब तान दीजिये। फिर दोनों हाथों को सिर के अगल-बगल में सीधे तानकर सिर को घुटनों की तरफ झुकाते हुए पैरों के अँगूठे पकड़ने का प्रयत्न कीजिये। यह अभ्यास धीरे-धीरे बढ़ना चाहिये। आरम्भ में हाथों को पैरों के अँगूठों के जितना पास तक जा सकें उतना ही ले जायें। धीरे-धीरे बढ़ाते हुए एक-दो महीने में वे उनको छू सकेंगे। बड़ी उम्र के व्यक्ति जिनकी हड्डियों और नसों का लोच कम पड़ गया है, शायद अँगूठे न छू सकें तो कोई हर्ज नहीं। जहाँ तक सम्भव हो उतनी ही दूर हाथों को ले जायें। इससे पेट के भीतरी अगों का व्यायाम होता है और कोष्ठबद्धता मिटती है। (देखिये चित्र नं. ७)

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

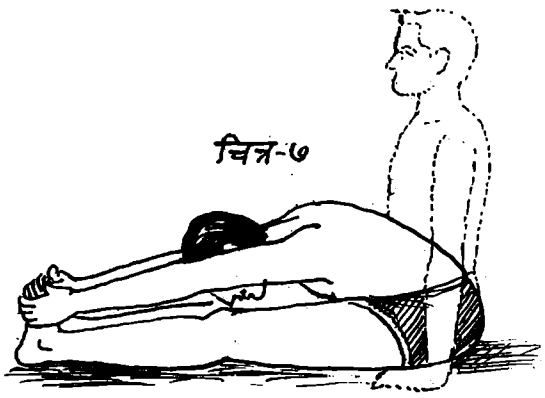

चित्र-७

बिस्तर के व्यायाम

इन कसरतों के प्रचारक अमेरिका के श्री सैनफोर्ड बेनर थे, जिन्होंने इनके द्वारा स्वयं अपना ही काया-कल्प किया था। उन्होंने अपनी पुस्तक में निजी वंश का वर्णन करते हुए लिखा है कि—उनके सभी पूर्वज ४० से ५० वर्ष की आयु के बीच मर गये थे। उनके पिता भी जन्म भर डाक्टरों की दवाइयाँ का सेवन करते हुए ४२ वर्ष की आयु प्राप्त कर सके। सैनफोर्ड उन्हीं के पद-चिन्हों पर चल रहे थे और ५० वर्ष की आयु में वे ऐसे बूढ़े हो गये कि जो कोई उनको देखता यही अनुमान करता कि वे भी दो-चार वर्ष से अधिक के मेहमान नहीं हैं। पर इसी समय स्वास्थ्य सम्बन्धी साहित्य का अध्ययन करने से उनके हृदय में यह प्रेरणा हुई कि इस प्रकार की अकाल मृत्यु एक प्रकार की मूढ़ता और कायरता है। उनको अस्वस्थता का अवरोध करना चाहिये और भगवान् ने मनुष्य को जो पूर्ण आयु दी है, उसका उपभोग करना चाहिये।

इस प्रकार का आंतरिक निश्चय कर उन्होंने डाक्टरों और दवाइयों को सदा के लिये नमस्कार किया और प्राकृतिक-जीवन तथा स्वाभाविक व्यायाम के प्रयोग करने लगे। शीघ्र ही उनकी दशा में परिवर्तन होने लगा और ७२ वर्ष की आयु में पूर्ण स्वस्थ और एक युवक के समान शक्तिशाली बन गये। इसके पश्चात् वे लगभग सौ वर्ष की आयु तक जीवित रहे।

सैनफोर्ड की व्यायाम पद्धति में २६ प्रकार के अंग-संचालन के प्रयोग बतलाये गये हैं। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में यह हिदायत कर दी है कि वृद्ध लोगों को किसी प्रकार की विशेष परिश्रम वाली कसरतें न करके बहुत ही हल्का—सौम्य व्यायाम करना चाहिये, जिससे शरीर की समस्त पेशियों का संचालन हो जाय। इस प्रकार माँसपेशियाँ धीरे-धीरे सशक्त होने लगेंगी और वृद्धावस्था के चिन्ह बहुत कुछ कम पड़ जायेंगे। चाहे देखने में ये बहुत साधारण जान पड़ते हैं तो भी यदि आप इनका अभ्यास श्रद्धापूर्वक लगातार कुछ महीने तक करते रहेंगे तो इनका हितकारी परिणाम स्वयमेव प्रकट होने लगेगा, इनको धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिये, जैसे पहले सप्ताह में सब व्यायामों को एक-एक बार करें, दूसरे में दो-दो बार तीसरे में तीन-तीन बार। इस प्रकार प्रति सप्ताह बढ़ते हुए दो-तीन महीने में आठ-दस बार तक करने लग जायँ। इतने व्यायाम में आधा घण्टा लग सकता है। अगर आप निद्रा से जगने के बाद बिस्तर पर लेटे-लेटे ही इस प्रकार कुल मिलाकर दो-ढाई सौ अंग-संचालन कर लें तो आपका स्वास्थ्य अवश्य स्थिर रह सकेगा।

(१) पेट का व्यायाम—बिस्तर पर या पृथ्वी पर कम्बल आदि बिछाकर सीधे लेट जाइये। बाँये पैर को सीधा रखकर दाहिने पैर को मोड़िये और उसे पेट की तरफ इतना लाइये जिससे उस पर कुछ दबाव जान पड़े। फिर दाँये पैर को सीधा करके बाँये पैर को मोड़िये जिससे पेट का बाँया भाग दबे। इस प्रकार शक्ति के अनुसार ५ से १० बार करना चाहिए। इससे पेडू और मलाशय के स्नायु संचालित होकर कब्ज दूर होगा। (देखिये चित्र नं. ८)

चित्र ८

(२) पहले व्यायाम की तरह लेटकर दोनों पैरों को सीधा फैला दें। फिर उनको मोड़कर पेट और यथाशक्ति दबाव डालें। सुविधा जान पड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो दोनों हाथों को पकड़कर नीचे की ओर दबायें। इससे पैरों और पेट को शक्ति मिलती है। (देखिये चित्र नं. ६)

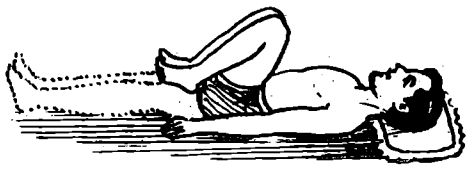

चित्र ६

(३) सीधे लेटकर बाँये पैर को ऊपर की तरफ सीधा तानिये और उसके अँगूठे को दाहिने हाथ से पकड़कर खींचिये। फिर उसे सीधा करके दाहिने पैर को सीधा तानिये और उनके अँगूठे को बाँये हाथ से पकड़कर खींचिये। इस प्रकार बारी-बारी से कीजिये। इससे कमर और आमाशय की शक्ति भी बढ़ती है। (देखिये चित्र नं १०)

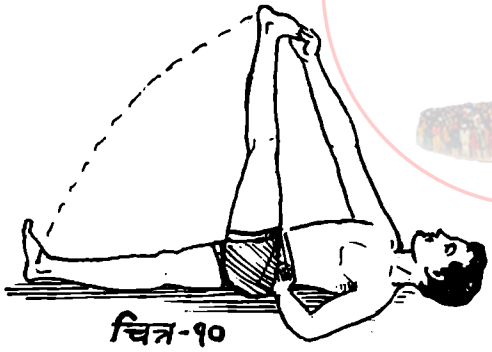

चित्र-१०

(४) सीधे लेटकर दोनों हाथों को गर्दन के ऊपर की तरफ सीधा कर दीजिये। बाँये और दाहिने दोनों पैरों को एक-एक करके ऊपर उठाइये और फिर नीचे ले जाइये। यह ध्यान रहे कि जब बाँया पैर ऊपर उठे तब दाँया नीचे आवे और जब दाँया ऊपर उठे तो बाँया नीचे आवे। इससे पैरों को शक्ति मिलती है। (देखो चित्र नं. ११)

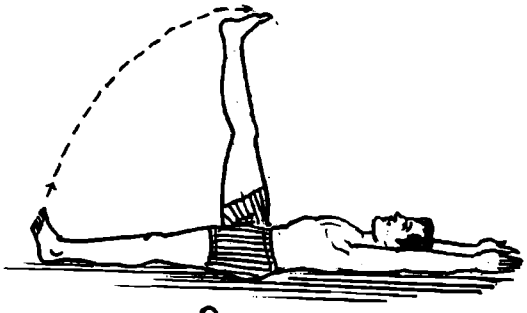

चित्र-११

(५) सीधे लेटकर दोनों पैरों को इतना ऊपर की ओर तानिये कि कमर का कुछ भाग भी उठने लग जाय। हाथ छाती की बगल मे सीधे जमीन से लगे रहें। (देखिये चित्र नं. १२)

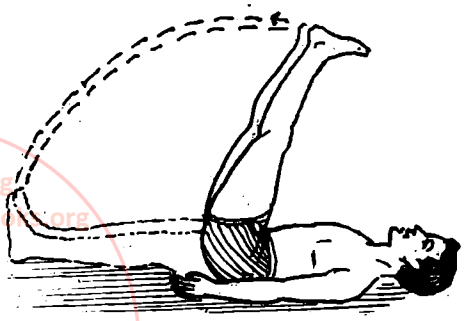

चित्र-१२

(६) हाथों का व्यायाम—सीधे लेटकर दोनों हाथों को सीधा जमीन पर तानिये। फिर एक-एक हाथ को कोहनी पर मोड़ते हुए छाती के पास ले जाइये। ध्यान रखें जब एक हाथ ऊपर उठे तो पहला नीचे की ओर लाया जाय। हाथों को यथासम्भव बहुत धीरे-धीरे खूब जोर लगाते हुए ऊपर और नीचे ले जायें। (देखिये चित्र नं. १३)

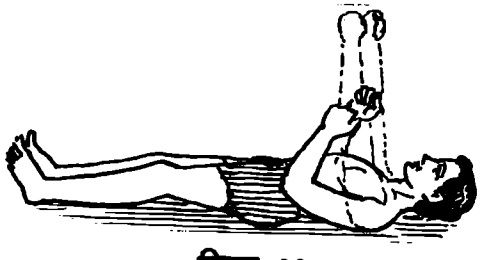

चित्र-१३

(७) पहले ही की तरह सीधा लेटकर दोनों हाथों को शरीर के बगल में रखने के बजाय छाती के ऊपर की तरफ तानिये और फिर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुट्ठी बाँधकर खूब जोर लगाते हुए नीचे की तरफ छाती तक लाइये। (देखिये चित्र नं. १४)

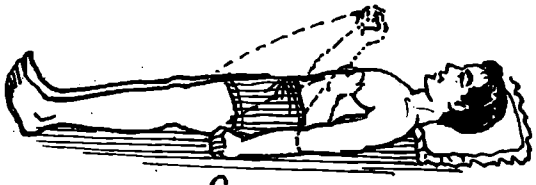

चित्र-१४

(८) चित्त लेटकर गर्दन को धीरे-धीरे ऊँचा करिये। शेष बदन ज्यों का त्यों जमीन से लगा रहे। फिर गर्दन को पीछे ती तरफ तथा दाहिनी, बाँयी तरफ जोर लगाते हुए मोड़िये (देखिये चित्र नं. १५) इससे गर्दन की माँसपेशियाँ मजबूत होती हैं, गले की नर्सों को भी शक्ति मिलती है।

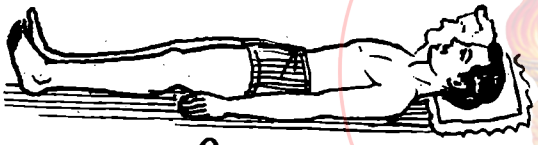

चित्र-१५

(९) कन्धों का व्यायाम—पीठ के बल सीधे लेटकर बाँये हाथ से दाहिने भुजदण्ड को और दाँये हाथ से बाँये भुजदण्ड को पकड़ें। एक बार दाहिना कन्धा और भुजा जोर लगाते हुए यथाशक्ति ऊपर की ओर उठावें। दूसरी बार इसी तरह बाँये कन्धे और भुजा को ऊपर उठावें।

(१०) कूल्हे व कमर का व्यायाम—दाहिनी करवट से लेटकर बाँये पैर को घुटने के बल मोड़ें और सामने बिस्तर पर टेक दें। फिर दाँये हाथ को कुहनी के बल मोड़ें और उसे छाती के बाँयी तरफ गर्दन और मुख के पीछे जितना ले जा सकें, झुकाकर ले जायें। दूसरी बार करवट लेकर दाँये हाथ से इसी प्रकार का व्यायाम करें।

(११) पीठ की पेशियों का व्यायाम—बिस्तर पर लेटे हुए दाहिनी करवट हो जायें। तब बायें पैर को थोड़ा झुकाकर उसके घुटने को बाँये हाथ से पकड़ लें और फिर सीधा तानने का प्रयत्न करें। इससे पीठ और पैर की पेशियों पर जोर पड़ेगा। फिर बाँयी करवट लेटकर इसी प्रकार दाहिने घुटने को दाँये हाथ से पकड़कर व्यायाम करें। इसे एक बार से बढ़ाकर आठ-दस बार तक किया जा सकता है।

(१२) यकृत (लिवर) का व्यायाम—हमारी पाचन-क्रिया के लिए दाहिनी ओर की पसलियों के नीचे यकृत (पित्ताशय) एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अवयव है। इसमें निष्क्रियता आ जाने से स्वास्थ्य तुरन्त गिरने लग जाता है और शारीरिक क्षीणता स्पष्ट दिखलाई देने लगती है। व्यायाम द्वारा इसे चैतन्य करने के लिए बिस्तर पर लेटे हुए ही दोनों पैरों को सिकोड़कर घुटनों को इतना ऊँचा करें कि दोनों पैरों के तलुए बिस्तर पर टिक जायें। फिर यकृत को उँगलियों से दबायें और धीरे-धीरे ठोकते भी रहें। इस प्रकार दस-बीस बार करने से यकृत जागृत होता है और उसकी सक्रियता बढ़ जाती है।

इन सब व्यायामों में मुख्य बात शारीरिक अंगों को यथाशक्ति पूरा तानने और मानसिक रूप से उनमें शक्ति-संचार होने की भावना भी है। यों मरे मन से हाथ-पैरों को सीधा करना और ऊपर उठाना, नीचे लाना कोई महत्त्व नहीं रखता। इन व्यायामों को अपनी शारीरिक स्थिति और आयु के अनुसार पूरे उत्साह और विश्वास के साथ करना चाहिये। दूसरी आवश्यक बात यह है कि कृत्रिम जीवन की आदतों और रहन-सहन को छोड़कर प्राकृतिक जीवन के नियमों पर चलने की लगातार कोशिश की जाय। अगर इन व्यायामों के आरम्भ करने पर भी मनुष्य का खाना, पीना, सोना, साँस लेना पूर्ववत् दोषयुक्त ही बना रहा तो लाभ भी नाममात्र का ही होगा। इनकी विशेषता यही है कि इनको काफी वृद्ध अथवा निर्बल व्यक्ति भी सुबह बिस्तर पर लेटे हुए ही २५-३० मिनट के भीतर ही कर सकते हैं। इस प्रकार उनके लिये ये सबसे सरल और साथ ही भारी व्यायामों से कहीं अधिक लाभदायक सिद्ध होंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

टहलने का व्यायाम

वर्तमान समय में आवागमन के यन्त्रों और वाहनों की अधिकता होने से मनुष्य चलना भूलने लग गये हैं। इस प्रकार मोटर पर ही चढ़कर घूमते रहना। चाहे अनुभवहीन लोगों को अमीरी का लक्षण मान पड़ता हो पर वास्तव में वह बड़े अभाग्य की बात है। चलने की कमी से मनुष्य में जैसी शारीरिक और मानसिक हीनता पैदा होती है, उसका अनुमान लगा सकना मुश्किल है।

नियमपूर्वक तेजी के साथ तीन-चार मील नित्य टहल लेने से मनुष्य की जीवनी-शक्ति और सहन-शक्ति बहुत बढ़ जाती है। इससे शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की उन्नति होती है। घूमने से समस्त शरीर में अच्छी तरह रक्त संचार होने लगता है। यह रक्त के दूषित अंश को साफ करके, उसके स्थान में नवीन और शुद्ध रक्त लाने में बड़ी सहायता पहुँचाता है। शुद्ध रक्त ही स्वास्थ्य की उत्तमता का मुख्य आधार है।

पैदल चलने से दिमाग की शक्ति बड़ी शीघ्रता से बढ़ती है। इससे मनुष्य की मानसिक दृष्टि स्वच्छ और तीव्र बन जाती है। अगर मनुष्य चार-पाँच बजे उठकर दो घण्टे घूम ले तो उसकी शारीरिक दशा में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो जायेगा। इस व्यायाम में सबसे बड़ी खूबी यह है कि यह हर जगह और प्रत्येक स्थिति में किया जा सकता है। यह ऐसा अमूल्य साधन है, जिससे बड़ी-बड़ी पुरानी बीमारियाँ, जिनके लिए डाक्टर जवाब दे चुके हों, सहज में दूर हो सकती हैं। इसे ऐसे निर्बल लोग भी कर सकते हैं, जो किसी बीमारी या अनुचित रहन-सहन से असमर्थ हो चुके हैं। अगर वे आरम्भ में सिर्फ चौथाई मील चल सकें तो भी कोई बात नहीं। नियमपूर्वक अभ्यास करने से वे दो-चार महीने में चार-छः मील घूमने की शक्ति प्राप्त कर लेंगे।

टहलने का व्यायाम करने में विशेष ध्यान शीघ्रतापूर्वक चलने और गहरी साँस लेने पर रखना चाहिए। घण्टे में चार मील की गति सन्तोषजनक मानी जा सकती है। कुछ लोग इससे भी तेजी से चलते हैं। तेज चलने से प्रायः दोनों हाथ भी जोर से आगे-पीछे हिलने लगते हैं, जिससे टाँगों के साथ उनका भी व्यायाम हो जाता है। एक शरीर शास्त्री का कथन है—"जो प्रतिदिन ५ मील चलता है वह कभी अस्वस्थ नहीं रह सकता।" इस कथन में सच्चाई है। टहलने से हाथ-पाँव तथा आमाशय का अच्छा व्यायाम हो जाता है। इससे व्यक्तियों को तो कम से कम दो-तीन मील प्रतिदिन टहलना चाहिए। वृद्ध व्यक्तियों के लिए भी टहलना एक अच्छा व्यायाम है।

नियमपूर्वक प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व टहलने के लिए निकलना चाहिए। सरपट चाल से चलें। न बिलकुल धीमा चले न पूरी दौड़ करे, स्वस्थ चित्त रखें और आस-पास की हरी वस्तुओं को देखता हुआ प्रसन्नता अनुभव करे। ओस की बूँदों से भीगी हरी घास पर तेजी से टहलना व्यायाम का एक सरल, अच्छा और लाभदायक तरीका है। इससे मस्तिष्क की शक्ति और शीतलता प्राप्त होती है। टहलते समय पाँवों के साथ हाथों को भी आगे-पीछे तेजी से जाना चाहिए और नाक से श्वाँस लेनी चाहिए। गन्दे, दुर्गन्धित व ऊबड़-खाबड़ स्थानों में नहीं टहलना चाहिए। हरे-भरे, फूलों वाले साफ-सुथरे रास्ते ही इसके लिए उपयुक्त होते हैं। मोटरें जिन पर चलती हों उन सड़कों पर टहलने की अपेक्षा जंगल की ओर जाने वाली पगडन्डियों में टहलना अधिक लाभदायक होता है। जहाँ तक हो नंगे पाँवों से ही टहलना चाहिए पर यदि ऐसा सम्भव न हो तो हलके जूते पहनने चाहिए।

टहलना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है

स्वास्थ्य-रक्षा के लिए जितना सन्तुलित आहार जल, वायु, सूर्यताप, निद्रा विज्ञान आदि की आवश्यकता होती है। व्यायाम की उससे कम नहीं। यह सर्वमान्य एवं निरापद तथ्य है कि यदि मनुष्य परिश्रम न करे तो उसके सम्पूर्ण शारीरिक अवयव अपनी शक्ति खोने लगते हैं। लोहे को किसी जगह यों ही पर रहने दें तो उसमें जङ्ग लग जाती है, उसकी सारी शक्ति व मजबूती समाप्त हो जाती है ऐसे ही अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अङ्ग-प्रत्यङ्गों को हिलाते-डुलाते क्रियाशील न बनाये रहें तो इस शरीर से भी जङ्ग लग जाने जैसी बुराई उत्पन्न होने का खतरा रहता है। इससे स्वास्थ्य का गिर जाना, रोगी हो जाना भी स्वाभाविक ही है।

शरीर को व्यायाम की, कसरत की आवश्यकता है, यह ठीक है किन्तु ऐसे व्यायाम जो शारीरिक दृष्टि से कड़े पड़ते हों या जिनमें रुचि का अभाव हो लोगों को अधिक दिन तक अच्छे नहीं लगते। इनके लिए महँगे आहार की भी व्यवस्था करनी पड़ती है जो हर किसी के लिये सुलभ भी नहीं। इन्हें कोई उत्साह में आकर शुरू भले ही कर दे किन्तु अधिक दिनों तक इन नियमों का पालन नहीं कर सकता। क्योंकि यह आर्थिक, रुचि व समय की दृष्टि से महँगे पड़ते हैं।

अङ्ग-प्रत्यङ्गों को स्वाभाविक रूप में सशक्त रखने वाली कसरत 'टहलना' है। यह सरलतम व्यायाम है। यह सर्व-साधारण के लिए सुलभ व उपयोगी है। शारीरिक दृष्टि से दुर्बल व्यक्ति, स्त्री, बच्चे, बुड्ढे सभी अपनी-अपनी अवस्था के अनुकूल इससे लाभ उठा सकते हैं। इसमें किसी की भी हानि की सम्भावना नहीं है।

घूमना जितना स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हो सकता है उतना ही रुचिकर भी होता है। इससे मानसिक प्रसन्नता व शारीरिक स्वास्थ्य की दोहरी प्रतिक्रिया पूरी होती है। इसलिए संसार के सभी स्वास्थ्य विशेषज्ञों तथा महापुरुषों ने इसे सर्वोत्तम व्यायाम माना है और सभी ने इसका दैनिक जीवन में प्रयोग किया है। उन लोगों के लिए जिन्हें प्रतिदिन दफ्तरों में बैठकर काम करना होता है, घूमना अत्यन्त आवश्यक है। दिनभर दुकानों में बैठने वालों, बुद्धिजीवी व्यक्तियों के लिये भी यह उतना ही उपयोगी है। इससे कुदरती तौर पर सम्पूर्ण शरीर का व्यायाम होता है।

कुश्ती लड़ना, दण्ड-बैठक लगाना, डंबल मुगदर भाँजना आदि व्यायाम हैं तो उपयोगी किन्तु इनसे शरीर के कुछ खास-खास स्थानों की माँसपेशियों का ही व्यायाम होता है। इससे ये स्थान तो सुडौल बन जाते हैं किन्तु दूसरे ऐसे स्थान जहाँ इन व्यायामों से हलचल उत्पन्न नहीं होती शिथिल बने रहते हैं और एक बार जैसे ही इन्हें छोड़ा कि जिस तेजी से शरीर का विकास हुआ था उसी गति से शरीर का पतन हो जाता है। फिर ऐसे व्यायामों में मौसम की प्रतिकूलता का भी हानिकारक प्रभाव पड़ता है। किन्तु टहलने से सम्पूर्ण शरीर की स्वाभाविक तौर पर कसरत होने से रक्त का सञ्चार धीरे-धीरे बढ़ता है, जिससे हल्की-हल्की मालिश जैसे क्रिया सम्पूर्ण अंगों-प्रत्यंगों में उत्पन्न होती है और सम्पूर्ण अवयव पर्याप्त उष्मा प्राप्त कर लेते हैं। अप्राकृतिक व्यायामों से एक ओर जो शारीरिक अपव्यय होता था, उससे शरीर बचा रहता है। यही कारण है कि दूसरे व्यायामों के बाद सम्पूर्ण शरीर शिथिल पड़ जाता है लोग थकावट महसूस करने लगते हैं, किन्तु आप कुछ दूर टहलकर आइये आपको बिलकुल भी थकावट मालूम नहीं पड़ेगी।

टहलने से सारे शरीर की सजीवता बनी रहती है। फेंफड़े व हृदय की शक्ति बढ़ती है। भोजन पचता है और शरीर की सफाई में लगे हुए अवयव तेजी से अपना काम पूरा करते हैं। इनका सीधा दबाव हड्डियों व माँसपेशियों पर पड़ता है, जिससे वे मजबूत बनती हैं और शरीर में विद्युत-शक्ति का सञ्चार होने लगता है, जिससे त्वचा में स्निग्धता आती है, आभा झलकने लगती है। गालों पर लाली और चेहरे की चमक बढ़ती है। यह सब खून की शुद्धता के कारण होता है।

दिन भर के थके हुए शरीर को गति प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रतिदिन नियमित रूप से कुछ दूर घूम आया करें। नियमित वायुसेवन और टहलने से दीर्घजीवन का लाभ मिलता है। इससे मानसिक स्फूर्ति बढ़ती है। जो अंग कार्य की अधिकता से मुरझा गये थे या शिथिल पड़ गये थे दुबारा प्रफुल्लित व उत्साहित होकर कार्य करने लगते हैं। इन परिस्थितियों में स्वास्थ्य का बना रहना, बीमारियों से बचा रहना प्रायः निश्चित ही मानना चाहिए।

नियमित रूप से टहलने से जिनके शरीर दुर्बल होते हैं, उन्हें स्वास्थ्य लाभ मिलता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिनका शरीर अधिक मोटा हो जाता है, वे सुडौल बनते हैं। इस दृष्टि से तो टहलने को ही सर्वांगपूर्ण व्यायाम मानना पड़ता है। श्वांस-प्रश्वांस की दोनों प्रकार की क्रियाएँ उद्दीप्त होती हैं। जिससे व्यायाम और प्राणायाम के दोनों ही उद्देश्य पूरे हो जाते हैं। व्यायाम का अर्थ है प्रत्येक अंग को क्रियाशील रखना और प्राणायाम का तात्पर्य है प्राकृतिक विद्युत-शक्ति या प्राण-शक्ति को धारण करना। इस प्रकार शरीर और प्राण दोनों की पुष्टि होने से इन सभी दृष्टियों से उपयुक्त है। श्वांस-प्रश्वांस में तेजी आने से शरीर की अनावश्यक वसा जल भुनकर समाप्त हो जाती है, जिससे कब्ज, अग्निमन्दता में शीघ्रता से लाभ होता है। तेजी से गहरी साँस लेते हुए टहलना कब्ज की अचूक औषधि है। दुःस्वप्नों की निवृत्ति, भरपूर नींद आना इसी कारण से होता है। वीर्य सम्बन्धी रोगों में प्रातःकाल का घूमना अतीव लाभदायक होता है। सर्दी के दिनों में जब ओस गिरती है तो नंगे पाँव हरी दूब पर टहलने से आँखों की ज्योति बढ़ती है, मस्तिष्क ताजा रहता है और सारे शरीर को कुदरती विद्युत बड़ी सुगमता से मिल जाती है। इससे शारीरिक सौन्दर्य बढ़ता है, ओठों व गालों पर लाली आती है और आलस्य दूर हो जाता है।

अपने लिये सुविधा का समय निकालकर प्रतिदिन टहलना सभी के लिये लाभदायक होता है किन्तु आरोग्य लाभ के विशेष इच्छुक व्यक्तियों को प्रातःकाल का घूमना अच्छा होता है। दिनभर का अस्त-व्यस्त वातावरण, धूल आदि के कण आधी रात तक जमीन में बैठ जाते हैं, जिससे प्रातःकालीन स्वच्छ वायु का अमूल्य लाभ मिलता है। इससे मानसिक प्रसन्नता भी बढ़ती है, जिससे स्वास्थ्य-विकास तेजी से होता है। एक साथ स्वच्छ वायु, परिपुष्ट व्यायाम और मानसिक प्रफुल्लता का प्रभाव पड़ने से शरीर का रोगमुक्त बनना स्वाभाविक है।

भोजन करने के उपरान्त टहलने से रक्त सम्वहन में तेजी आती है और पाचन-क्रिया में सहायता मिलती है। सायंकाल आहार लेने के बाद घूमने से आहार की उष्णता का स्वतः शमन हो जाता है, जिससे रात में बुरे स्वप्न नहीं आते और भरपूर नींद आ जाती है। इसका प्रभाव दूसरे दिन शरीर की चैतन्यता पर पड़ता है। जब आप सोकर उठते हैं तो शरीर बिलकुल हलका, स्वस्थ व प्रसन्न होता है। पर अधिक रात गये घूमने से स्नायुविक शिथिलता उत्पन्न होती है साथ ही अशुभ विचार उत्पन्न होते हैं इसलिए यह क्रिया ठीक समय के अन्दर ही पूरी कर लेनी चाहिये।

टहलने के नियम सामान्य हैं। जहाँ तक सम्भव है सभी अपनी शारीरिक स्थिति के अनुरूप यह क्रिया करते हैं किन्तु जो अधिक दुर्बल या कमजोर शरीर के नहीं है, उन्हें तेजी से कमर सीधी रखकर टहलना चाहिए। हाथ स्वाभाविक तौर पर हिलते रहें। इस क्रिया में तेजी हो और उन्हें सामने छाती तक ले जायें। आगे-पीछे हाथ ले जाने की क्रिया घड़ी के पेण्डुलम के समान एक-सी हो। आपकी छाती खुली रहे और साँसें भी गहरी लें—ताकि फुफ्फुसों में प्राणवायु का अभिगमन तेजी से होता रहे। टहलते समय यह ध्यान रहे कि न तो आपकी चाल इतनी तेज हो कि थोड़ी ही दूर चलकर थक जायें, न इतनी धीमी हो कि शारीरिक अङ्ग-प्रत्यङ्गों की कसरत भी न हो पाये। एक घण्टे में चार मील की रफ्तार तक प्रायः हर स्वस्थ व्यक्ति को चलना चाहिये।

टहलने का सीधा प्रभाव पेट के अवयवों पर पड़ता है और यह क्रिया हाथों के आगे पीछे ले जाने से पूरी होती है। इसी से चलने की गति भी कम ज्यादा होती है इसलिए हाथों की इस क्रिया पर ध्यान देना आवश्यक है। हाथ आपके शरीर के साथ लगे रहें और पूरी तेजी से आगे-पीछे जाते रहें तो पेट के सभी भागों का व्यायाम उनकी आवश्यकता के अनुरूप होता है और यकृत की भी हल्की मालिश हो जाती है।

घूमने का स्थान तथा वहाँ के प्राकृतिक सुषमा और सौन्दर्य का भी उतना ही प्रभाव होता है। इसलिये आप जिस रास्ते का घूमने हेतु चुनाव करें वह ऐसा हो जहाँ आप सुविधापूर्वक भ्रमण कर सकें। अधिक मोटर ठेले चलने वाली सड़कें इसके लिए अधिक उपयोग नहीं कही जा सकतीं। उनका उपयोगी प्रातःकाल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब ट्रैफिक मन्द पड़ जाता है, तभी करें तो ठीक अन्यथा हानि की सम्भावना रहती है। इसलिए किसी ग्रामीण क्षेत्र का चुनाव करें तो अच्छा है। घूमने के मार्ग को बदलते रहा करें तो इससे रुचि बढ़ती है। अनेक दृश्य देखने को मिलते हैं और अपने उद्देश्य के प्रति उत्सुकता भी बनी रहती है। घूमते समय अधिक बात करना अच्छा नहीं होता यदि सम्भव हो सके तो अकेले ही टहलने के लिए निकलें पर कदाचित यह सम्भव न हो तो टहलते समय अधिक से अधिक चुप रहना चाहिये।

किसी जलाशय के नम वातावरण में, फूलों वाले वनों, उपवनों में घूमना स्वास्थ्य के लिये हितकर होता है। पर यह ध्यान रखें कि यह स्थान विषम न हो। ऊँचे-नीचे स्थानों में अँधेरे में घूमना अच्छा नहीं। अपवित्र स्थानों की ओर जाने से मस्तिष्क पर दूषित प्रभाव पड़ता है। इसलिये ऐसे स्थानों से बचना चाहिए। जिन स्थानों में पशु-वध आदि दुष्कर्म होते हों तथा गन्दगी का बाहुल्य हो ऐसे अपवित्र स्थानों की ओर भूलकर भी नहीं जाना चाहिए। इसी प्रकार जहाँ बाल, हड्डियाँ, पत्थर, काँटे, कूड़ा-कचरा आदि जमा हों ऐसे स्थानों में घूमने न जाना ही उचित है। इन स्थानों के सूक्ष्म संस्कार अपनी मानसिक स्थिति पर कुप्रभाव छोड़ते हैं।

ऋतु का प्रभाव शरीर पर पड़ता रहे इसलिये शरीर में बहुत मोटे या चुस्त कपड़े पहनकर घूमने नहीं निकलना चाहिए। इससे शरीर की अपनी क्रियाशीलता में भी रुकावट पड़ती है और बाह्य वातावरण के सीधे प्रभाव से भी वञ्चित रह जाते हैं। घूम कर आयें तो एकदम कोई भारी वस्तु न खाना चाहिए।

टहलने से लौटने के बाद यदि पसीना आ जाए तो इसे बन्द कमरे में रगड़कर किसी मोटे वस्त्र से सुखालें और थोड़ी देर के बाद स्नान करलें। पूर्ण स्वस्थ व्यक्ति यदि चाहें तो दोनों ऋतुओं में स्नान कर सकते हैं किन्तु जिनके शरीर इस योग्य नहीं, उन्हें स्नान नहीं करना चाहिए क्योंकि उन्हें शीत लग जाने का भय होता है।

इन सभी नियमों का पालन करते समय अपनी स्थिति के अनुरूप ही चुनाव करना चाहिए। यह विषय इतना सरल है कि किन्हीं लम्बे-चौड़े उपकरणों की या ऊँचे ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती। सामान्य नियमों का पालन हर कोई अपनी स्थिति के अनुकूल कर सकता है।

इसमें सन्देह नहीं है कि स्वास्थ्य रक्षा के लिए टहलना अत्यन्त आवश्यक सरल व सर्वोपयोगी सुलभ व्यायाम है। इससे शरीर की शुद्धि होती है, प्राण-शक्ति बढ़ती है। तेज और ओज प्राप्त करने का सरल साधन है। व्यायाम और प्राणायाम की उभय क्रियाओं का समावेश सचमुच ऐसा है, जो शरीर को शुद्ध करता है तो सदाचरण की शुद्धि भी जागृत करता है। इससे शरीर स्वस्थ बनता है और मन स्वच्छ। इतना सीधा सरल अन्य व्यायाम नहीं, इसलिए हममें से प्रत्येक को प्रतिदिन कुछ न कुछ घूमने-टहलने का स्वभाव बनाना चाहिए।

प्रभातकालीन जलवायु में सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों का—वायु दृष्टि से ऑक्सीजन का बाहुल्य रहता है। रात्रि का अन्त और दिन का आरम्भ एक ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है, जिसका सम्पर्क पौष्टिक भोजन से भी अधिक स्वास्थ्यवर्धक सिद्ध होता है।

यों श्रम की दृष्टि से टहलने में बहुत जोर नहीं पड़ता और व्यायाम की आवश्यकता उससे भली प्रकार पूरी हो सकेगी यह समझ में नहीं आता। तो भी हमें यह मानकर चलना चाहिए कि उठक-पटक वाली क्रियाओं का अपना महत्व कुछ भी हो—क्रमबद्ध, गतिबद्ध और व्यवस्थित क्रम से देर तक चलने वाली टहलने की क्रिया शरीर के अंङ्ग-प्रत्यङ्गों में से प्रत्येक को समान रूप से इतना प्रभावित करती है, जितना कि कड़े और कष्टसाध्य व्यायाम नहीं कर सकते।

सबसे बड़ी बात है टहलने के साथ जुड़ी हुई आरोग्य सम्वर्धक प्रयास की मान्यता। लुहार दिन भर हथौड़ा चलाता है, फिर भी थोड़ी देर व्यायाम करने वाले की तरह पुष्ट नहीं हो पाता। इसका एकमात्र कारण यह है कि पहलवानी सीखने वाले व्यायामशालाओं में इसी भावना से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भरे रहते हैं कि इस क्रिया के माध्यम से हम स्वास्थ्य संवर्धन कर रहे हैं। प्रयास और भावना का सम्मिश्रण पहलवान की शारीरिक पुष्टि के रूप में सामने आता है, जबकि लुहार अधिक श्रम करने पर भी उतना लाभ नहीं उठा पाता। पोस्टमैन हर दिन डाक बाँटने के लिए मीलों घूमता है, पर टहलने वाले का एक घण्टे का प्रयास ही उसका स्वास्थ्य सुधार देता है। इसका कारण टहलते समय आरोग्य वृद्धि की भावना के संकल्प का जुड़ा रहना है। टहलना दूसरों के साथ गपशप करते हुए बेसिलसिले चलने से लाभदायक नहीं होता। यह तो एक लकीर पीटने वाली सैर हुई। स्वास्थ्य संवर्धन के लिए टहला जाय तो उसमें शरीर को एक व्यवस्थित क्रम से और मन को आरोग्य संचय की मान्यता से भरा हुआ रखना चाहिए। प्रातःकाल टहलने की आदत को अपनी दिनचर्या में स्थान देने से कितने ही अशक्त और रुग्ण व्यक्ति अपने खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने एवं समुन्नत बनाने में सफल हुए हैं।

गाँधी जी ने अपना टहलने का क्रम व्यस्त से व्यस्त परिस्थितियों में भी जारी रखने का प्रयत्न किया। संसार के श्रेष्ठतम व्यक्ति उनसे मिलने आते थे और अति महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करते थे तो भी उन्होंने समय का व्यतिक्रम कभी नहीं होने दिया। नियत समय और नियत सीमा के भीतर ही वे चर्चा प्रसंगों को भली प्रकार पूरा कर लेते थे। टहलना यों एक साधारण बात समझी जाती है, पर गाँधी जी उसे दिनचर्या की नियमितता और स्वास्थ्य की उपयोगिता के साथ जोड़ते थे और जहाँ तक सम्भव होता, उसे अव्यवस्थित नहीं होने देते थे। यों सामान्यता वे प्रार्थना से पूर्व टहलने जाते थे, पर यदि वह समय किसी आवश्यक काम में निकल गया तो फिर प्रार्थना के बाद जाते थे। दो मील सबेरे और दो मील शाम को टहलना उनकी नियमित दिनचर्या का अंग था। जिन्हें आवश्यक चर्चा करनी होती थी, उन्हें वे अपने साथ टहलने में ले जाते थे।

कई बार ऐसे प्रसंग आते थे कि रात बीत जाती थी अथवा प्रातःकाल से ही किसी विशेष कार्य में जुटना पड़ता था, ऐसी दशा में रात गये अथवा सबेरा होने से पूर्व ही टहल लेते थे ताकि उस विशेष प्रसंग में अड़चन भी उत्पन्न न हो और टहलने की नियमित दिनचर्या में व्यवधान भी न पड़े। पानी बरसता तो वे उतने समय अपने बरामदे में टहलकर उस आवश्यकता को पूरा करते। एक दिन किसी ने पूछा—कभी-कभी तो आपका टहलना छूट भी जाता होगा ?' उन्होंने हँसते हुए उत्तर दिया—मैं जिस दिन घूमना बन्द कर दूँगा उस दिन जीता कैसे रह सकूँगा ?" बापू बहुत तेज चाल से टहलने निकलते थे, कोई तन्दुरस्त आदमी ही उनका साथ कर सकता था।

महापंडित थोरो टहलने को अपने जीवन की प्रमुख आवश्यकता मानते थे और उस नियमितता में कभी बाधा नहीं पड़ने देते थे। उन्होंने टहलने की उपयोगिता के सम्बन्ध में एक लेख भी लिखा था—जिसमें उस जमाने के लोगों ने बहुत प्रेरणा ग्रहण की। थोरो के मित्र एमर्सन जन्म से ही दुर्बल थे। उन्हें थोरो ने टहलने के लिए प्रोत्साहित किया। फलतः वे स्वास्थ्य सुधार में आशाजनक सफलता प्राप्त कर सके। डिकिन्स ने अति महत्वपूर्ण विचारों का सृजन घूमने के समय ही किया। वे प्रातः जलपान करके घर से निकलते थे और प्रायः २० मील घूमकर तीसरे प्रहर वापिस आते थे। जो विचार उठते उन्हें डायरी में लिखते रहते और फिर रात को निश्चिन्ततापूर्वक उन्हें लिपिबद्ध करते। वे कहते थे जो कुछ मैंने किया या पाया है, वह टहलने रूपी कल्पवृक्ष के ही अनुदान हैं।

जर्मनी के एक पर्यटन प्रेमी कुर्लपीटर नामक व्यक्ति ने अपने जीवन का अधिकांश समय पैदल घूमने में खर्च किया। यह शौक उन्हें १४ वर्ष की आयु में लगा और ६४ वर्ष की उम्र तक पूरे ५० वर्ष अनवरत् रूप से चलता रहा। इस अवधि में उनने प्रायः पूरा योरोप घूम डाला और शहर, देहात सभी कुछ देखा। वे कहते थे कि संसार इतना सुन्दर है कि उसे जितना देखता हूँ उतना ही अधिक देखने की लालसा और अधिक तीव्र होती है। वे अपने गुजारे के लिए कुछ दैनिक व्यवहार की चीजें बनाते-बेचते रहते थे और उसी से अपना खर्च चला लेते थे। देखे गये दृश्यों एवं घटनाक्रमों का विवरण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्होंने ऐसी सूक्ष्म दृष्टि के साथ वर्णन किया है कि पाठकों को एक सारगर्भित उपन्यास एवं पर्यटन का आनन्द आता है। उनकी यात्रा पुस्तकें जर्मनी ही नहीं योरोप भर में लोकप्रिय बनी हैं।

प्रो० टिण्डॉल ने कितने प्रकार के कष्टों का सामना किया था। जब वे बहुत क्षुब्ध होते तो टहलने निकल जाते थे। उन्होंने कितनी ही महत्वपूर्ण खोजें भी की हैं। उनकी मूल प्रेरणा उन्हें टहलने के समय ही मिली। प्रयोगशाला में तो उन्हें केवल प्रत्यक्ष रूप दिया और परखा जाता रहा। कार्लाइल ८० वर्ष की आयु के जब हो गये तो भी ५ मील तो वे टहल ही लेते थे। टालस्टाय एक बार तीन दिन की पदयात्रा पर निकले तो उनने उस धुन में १३० मील का सफर पूरा कर लिया।

अंग्रेजी के मान्य साहित्यकार सेम्युअल जानसन टहलने के बड़े शौकीन हैं। जब मौसम अनुकूल और मूड अच्छा हो तो वे तीस मील का सफर पूरा करके घर आते हैं। उपन्यास लेखक स्कोट और कोषकार चार्ल्सलेम्ब दोनों ही लंगड़े थे, पर उन्होंने टहलना कभी भी नहीं छोड़ा। ख्याति प्राप्त मनीषियों में विथोविन टर्नर, कोलरिंग, विलियम कर्लिन, ब्रायन्ट ऐसे नाम हैं, जो अपनी सफलताओं का श्रेय टहलने की उपयोगी आदत के साथ जोड़ते रहते थे।

स्वास्थ्य विज्ञानी बरबर मैकफेडन ने लिखा है—कोई व्यक्ति सामान्य शारीरिक श्रम अथवा विशिष्ट प्रकार का व्यायाम भले ही करता हो, पर उसे प्रतिदिन कम से कम दो घण्टा रोज नित्य ही टहलना चाहिए। उससे कम में शारीरिक श्रम की स्वाभाविक भूख बुझ नहीं सकती। दूसरे व्यायामों के साथ टहलने की तुलना नहीं करनी चाहिए, उसकी अपनी उपयोगिता है और अपनी विशेषता है, जो नित्य टहलने की आदत नहीं डालेगा वह स्वस्थ नहीं रह सकेगा।

बेतुके ढंग से चलते रहने से काम नहीं चलेगा। टहलना एक कला है। एक नियमित प्रवाह, सरलता, क्रमबद्धता, तेजी, उत्साह और सर्तकता का सम्मिश्रण उसमें होना चाहिए और यह अनुभूति रहनी चाहिए कि विश्व-व्यापी महाप्राण में—महासागर में से उपयोगी तत्व अधिग्रहण करने के लिए हम किसी साहसिक शोध यात्रा पर निकले हैं।

टहलने में सारा बदन सीधा रहना चाहिए। कंधे पीछे दबे हुए, सीना उभरा हुआ, शिर थोड़ा पीछे को निगाह एकदम सामने। शरीर को इतना कड़ा नहीं करना चाहिए कि तनाव बढ़े। चुस्ती रहनी चाहिए, पर साथ ही सरल स्वाभाविक मुलायमी भी माँसपेशियों की बनी रहनी चाहिए। कमर से लेकर सिर तक का हिस्सा कुछ आगे की ओर तिरछापन लिए होना चाहिए जैसा कि अक्सर दौड़ते वक्त रखना पड़ता है।

मुँह बन्द रखा जाय। साँस नाक से ही लेनी चाहिए। गहरी साँस लेने का अभ्यास करना चाहिए ताकि स्वच्छ वायु का प्रवेश शरीर में अधिकाधिक गहराई तक हो सके। अधूरी साँस से तो पूरे फेफड़ों को भी सक्रियता का लाभ नहीं मिलता। इसलिए उथली साँस लेने की आदत सामान्य समय में भी छोड़नी चाहिए। विशेषतया टहलने के समय तो इस बात का अधिक ध्यान ही रखना चाहिए कि गहराई तक पूरी साँस खींची जाय और पूरी ही बाहर निकाली जाय। यों जब भी टहला जा सके तभी अच्छा है, पर अधिक उपयुक्त समय वह है, जो सूर्योदय से पहले ही आरम्भ कर दिया जाय और थोड़ा सूर्य निकलने तक पूरा कर लिया जाय। प्रातःकाल की वायु जितनी शुद्ध शीतल और सौम्य होती है उतनी और किसी समय की नहीं। यदि जल्दी सोया जाय तो जल्दी उठा भी जा सकता है और नित्यकर्म से निवृत्त होकर घर से चल दिया जा सकता है, ऐसी दशा में सूर्योदय तक यह सुखद प्रयास पूरा भी हो सकता है।

टहलते समय शरीर पर कपड़े कम एवं हलके रखने चाहिए ताकि न केवल साँस के द्वारा ही स्वच्छ वायु प्राप्त हो वरन् रोमकूपों की समस्त त्वचा को भी उस उत्तम प्राप्त वायु का स्फूर्तिदायक स्पर्श प्राप्त होता रहे। घण्टे में तीन से चार मील तक की चाल पर्याप्त है। बीमार, कमजोर, बूढ़े, बालक या तो मोटे आदमी की बात अलग है। वे धीरे-धीरे चलें तो भी हर्ज नहीं। महिलाएँ जिन्हें चलने का अभ्यास नहीं है, वे भी धीमी चाल से चल सकती हैं, पर उनका क्रम भी करीने का ही होना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाली दिमाग टहलना

जो कड़ी मेहनत नहीं कर सकता या दबाव डालने वाले व्यायाम करना जिनके बलबूते की बात नहीं है उनके लिए प्रातःकाल का टहलना ऐसा उपक्रम है, जिसमें मनोरंजन भी होता है और व्यायाम में भी थकान आती है वह भी नहीं होती। सबेरे की हवा शुद्ध होती है। खुले मैदान में थोड़ी तेज चाल से टहलने निकल पड़ा जाय तो समझना चाहिए कि एक बहुत अच्छी आदत डाल ली। आदत पड़ जाने पर वह अपने आप होने लगता है। इससे शरीर और मन दोनों को ही लाभ होता है। स्त्री, बच्चे को भी साथ लेकर चला जाय तो इससे पूरे परिवार की सेवा होती है सभी प्रसन्न रहते हैं।

इसके अतिरिक्त टहलना कितने ही शारीरिक, मानसिक रोगों का इलाज भी है। पेट में कब्ज हो, सिर में भारीपन हो, तबियत खराब हो रही हो, मितली आ रही हो तो चारपाई पर पड़ने की अपेक्षा यह अच्छा है कि एक गिलास पानी पीकर धीमी चाल से टहलने निकला जाय। इसका प्रभाव परिणाम जादू जैसा होगा। तवियत खुल जायेगी और मालूम पड़ेगा कि कोई अच्छी दवा खाली।

कई बार किसी से लड़ाई-झगड़ा हो जाने से गुस्सा बढ़ जाता है। सामने वाले से लड़ने-झगड़ने का मन करता है। बात बढ़ जाती है तो छोटी बात बड़ी हो जाती है। ऐसी परिस्थितियों में चुपचाप निकल पड़ा जाय और दो-तीन मील टहलकर आया जाय तो अपना गुस्सा तो घट जायेगा। साथ ही यह भी दिखाई देगा कि घर में जितने लोगों में गरमा-गरमी हो रही थी वह भी ठण्डी हो, गई। गुस्से का कायदा यह है कि जबाब पर जवाब देते चला जाय तो बात बढ़ेगी। एक पक्ष सामने से हट जाय या चुप हो जाय तो दूसरों के विचार करने का मौका मिलेगा और गुस्सा बिना किसी के समझाये-बुझाये भी अपने आप ठंडा हो जायेगा।

कोई उलझी हुई समस्या सुलझाने में न आ रही हो, मन परेशान हो रहा हो, दो में से किस काम को किया जाय किसे न किया जाय ऐसी उलझी गुत्थी को सुलझाने का सरल तरीका यह है कि दिमाग खाली करके कुछ देर टहलने निकल जाया जाय। गुत्थी का हल अपने आप निकल आयेगा।

कई बार स्मरण शक्ति साथ छोड़ देती है और यह भूल जाते हैं कि अमुक वस्तु कहीं रखी थी अमुक आदमी से क्या कहा था ? ऐसी उलझनों में दिमाग पर जितना जोर डाला जाता है बात उतनी ही और उलझती जाती है। ऐसे अवसर पर स्मरण शक्ति ताजा करने की बढ़िया दवा एक ही है कि दिमाग खाली करके कहीं छाया वाले स्थान में टहलने निकल जाया जाय या हरे पेड़ों की छाया में बाँयी करवट लेट जाया जाय। जो भूल गये वह स्वतः याद आ जायेगा।

व्यापार धंधे में कई बार ऐसी उलझनें सामने आती हैं कि क्या कदम उठाया जाय, क्या न उठाया जाय ? क्या करने से लाभ होगा क्या करने से नुकसान, ऐसे अवसर पर किसी यार दोस्त की सलाह लेने को भी मन नहीं करता। तब धीरे-धीरे टहलने के लिए निकल जाना और मस्तिष्क पूरी तरह खाली कर देना एक ऐसा शकुन विचार है, जो अक्सर सही सलाह देता है।

खाली दिमाग किसी ज्योतिषी से बढ़कर सही सलाह देने वाला है। हाथ देखने वाले और कुण्डली शकुन विचार करने वाले ज्योतिषी का कथन गलत हो सकता है किन्तु बिलकुल शान्त चित्त होकर विचारों से मन को पूरी तरह खाली करके टहलने चल पड़ना ऐसा अवसर है कि उसमें जो सलाह मिलेगी अस्सी प्रतिशत सही होगी।

भ्रमण और स्वास्थ्य

बगदाद का एक सरदार सिर-दर्द के कारण बड़ी बुरी तरह पेरशान था। उसे हमेशा सिर दर्द बना रहता था और इस कारण वह अपना सामान्य काम-काज भी ठीक तरह नहीं कर पाता था। सिर दर्द के कारण उसे अपना सारा दिन बिस्तर पर छटपटाते हुए बिताना पड़ता था। ऐसी बात भी नहीं कि रोग का कोई इलाज न कराया हो। कोई वैद्य हकीमों से इलाज कराया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर कोई दवा कारगर नहीं हो सकी। कोई दवा अपना थोड़ा-बहुत प्रभाव बताती, कुछ समय के लिए सिर-दर्द कम भी होता परन्तु फिर रोग जहाँ का तहाँ।

किसी सरदार को अरब के प्रख्यात फकीर अल्ला मा इशा के बारे में बताया कि कठिन से कठिन रोगों का इलाज बड़ी आसानी से कर देते हैं और आज तक जिन रोगियों का भी उन्होंने इलाज किया उनमें से कोई भी दुबारा उस रोग से आक्रान्त नहीं हुआ। सरदार ने अपने कुछ गुमाश्तों को बदिया सवारी लेकर फकीर के पास भेजा कि वे फकीर को यहीं लिवा लायें। साथ ही यह भी कहला दिया कि आपकी दवा से सरदार स्वस्थ हो गये तो आपको भारी इनाम दिया जायेगा। यही नहीं प्रारम्भिक भेंट के रूप में धन अग्रिम भी भेज दिया।

बताये गये पते पर पहुँचकर गुमाश्तों ने देखा कि वहाँ एक फकीर ऊँट चरा रहा था। उस फकीर से गुमाश्तों ने सन्त अल्लामा का पता पूछा तो फकीर ने कहा मैं ही अल्लामा हूँ।

इतना बड़ा सन्त और चिकित्सक ऊँट चराता होगा यह बात गुमाश्तों की समझ में नहीं आयी। उन्होंने और लोगों से भी पूछा तो उनका संशय दूर हुआ किया ही संत अल्लामा है। अल्लामा इशा से उन्होंने अपने सरदार का संदेश और उनके रोग का विवरण बताया तो सन्त ने कहा—"मैं किसी मरीज के घर नहीं जाता। उन्हें ही यहाँ लाना पड़ता है और जहाँ तक तुम्हारे सरदार का प्रश्न है उनसे कहना कि वह पैदल ही चलकर यहाँ आयें।

दूत निराश होकर लौट गये। सरदार से उन्होंने शब्दशः सन्त की बात कह दी। पहले तो सरदार भी हताश हुआ, पर कोई चारा न देखकर पैदल चलकर फकीर के पास पहुँचने का निश्चय किया। कई हफ्तों तक चलते रह कर सरदार ने इतनी दूर की मंजिल तय की तथा अल्लामा के पास पहुँचा।

अल्लामा ने मरीज को भली प्रकार देखा परखा और उसे कुछ पुड़ियायें देते हुए कहा कि इसकी सौ खुराक दवा है। इनका प्रयोग करने पर मर्ज अच्छा हो जायेगा। दवा के प्रयोग की विधि यह बताई गयी कि जब माथे पर पसीना आवें तब एक पुड़िया खोलकर सिर पर मल लिया जाय और हाँ आप जिस प्रकार पैदल चल कर आये हैं उसी प्रकार पैदल चलते हुए वापस लौटें।

निर्देश के अनुसार सरदार को पैदल ही वापस लौटना पड़ा। सिर पर पसीना निकले इसका एक ही उपाय था कि तेज चाल से यात्रा की जाय। उसने वही किया और करीब तीन सप्ताह में वापस बगदाद पहुँच गया। वह तब तक तेज कदमों से चलता ही रहता, जब तक कि सिर पर पसीना निकल न आये और जब पसीना निकल आता तो वह दवा की पुड़िया खोलकर उसे अपने माथे पर मल लेता।

घर लौटने तक सरदार का सिर दर्द पूरी तरह अच्छा हो गया। बची हुई दवा का क्या किया जाय ? इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के लिए सरदार ने अपने गुमाश्ते को वह दवा देकर अल्लामा के पास पहुँचाया ।

गुमाश्ता अल्लामा के पास पहुँचा और बोला—हमारे सरदार अब पूर्ण तरह ठीक हो गये हैं। आपने कहा कि इस दवा का प्रयोग रास्ते में तभी करना जब सिर पर पसीना आये। सरदार पहुँच गये हैं और ठींक भी हो गये हैं। अब इस दवा का क्या किया जाय ? अल्लामा ने हँसते हुये कहा—"यह दवा तो मामूली मिट्टी भर थी। इसे भले ही फेंक दो। असली इलाज तो लम्बा सफर करना और उसी तरह वापस लौटना था।" फिर कुछ देर रुकने के बाद फकीर ने कहा—पैदल चलने के आदत छोड़ देने से ही लोग मरीज बनते हैं और बीमार पड़ते हैं। यदि अपने शरीर और मन को निरोग रखना है तो मेरी ही तरह पैदल चलने की आदत डालना चाहिए और मुझे देखो मैं पैदल घूमता हुआ धर्म, ईमान का प्रचार भी करता हूँ और स्वस्थ भी रहता हूँ।

पैदल भी चलिये

"जिस व्यक्ति ने पैदल चलने के लिए अपने को राजी कर लिया, समझ लो उसने सार्वजनिक स्वास्थ्य की रक्षा के लिए आरोग्य केन्द्र स्थापित करने की अपेक्षा महत्वपूर्ण कार्य कर लिया है।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जर्मन चिकित्सक संघ के अध्यक्ष प्रो. अर्नेस्ट फ्रोमम के इस महत्वपूर्ण कथन से पाश्चात्य जगत की प्रकृति की ओर लौटने की प्रवृत्ति की एक झलक मिलती है। हमारे देशवासियों का दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि हम पाश्चात्य सभ्यता व उन असगंत—अव्यावहारिक बातों को बन्दरी के मरे बच्चे की तरह गले लिपटाए हैं किन्तु अनुकरणीय तथ्यों के प्रति उदासीन ही रहे हैं। पाश्चात्य देशों में पैदल चलने का रिवाज बढ़ रहा है और हमारे यहाँ प्रवृत्ति घट रही है।

यह निर्विवाद सत्य है कि टहलने—पैदल चलने जैसी सर्वोपयोगी सर्व सुलभ व्यायाम और कोई नहीं है। मनुष्य शरीर की रचना शैली का भी यही तकाजा है कि मनुष्य मानसिक श्रम की अपेक्षा शारीरिक श्रम अधिक करे। मस्तिष्क हमारे सम्पूर्ण शरीर का पञ्चमांश भी नहीं है। जबकि आज के समय की विडम्बना यह है कि मनुष्य हर काम के लिए कलों पर निर्भर रहकर शारीरिक व मानसिक श्रम में सन्तुलन नहीं रख पा रहा है। यह असन्तुलन स्वास्थ्य-हानि के रूप में सामने आ रहा है। इस सन्तुलन को पैदल चलने की प्रवृत्ति अपनाकर बहुत कुछ मिटाया जा सकता है।

पैदल चलने, टहलने के समर्थन में सभी चिकित्साविद एकमत हैं। स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी पुस्तकें उसके माहात्म्य से भरी पड़ी हैं। किन्तु हम लोग श्रम का महत्व स्वीकारते हुए भी श्रम को सम्मान का चिह्न नहीं मानते। 'जो कम काम न करे वह बड़ा आदमी' की हीन वृत्ति ने हमें स्वास्थ्य सुख से वञ्चित करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी है।

हमारे देश में लोगों को अपने पैरों पर भरोसा कम है और वाहनों पर अधिक रहने लगा है। बड़े-बड़े नगरों में घण्टों बस स्टैण्ड पर खड़े रहना गँवारा हो जाता है किन्तु थोड़ी देर पैदल चलकर घर पहुँचना भला नही लगता। क्यों पैरों को कष्ट दिया जाय ? किन्तु उन्हें क्या पता कि पैदल चलना स्वास्थ्य का प्रमुख आधार है, जिसे पाश्चात्य जगत ने सहज रूप में स्वीकार किया है। वहाँ पैदल चलने वालों के संघ हैं, भ्रमण संस्थाएँ हैं। लोग सामूहिक रूप से भ्रमण करने में रुचि लेते हैं। हजारों किलोमीटर लम्बी सड़कों का निर्माण इस प्रयोजन में किया गया है।

एक सज्जन हैं जार्ज वान ओपेन—जर्मनी के शीर्षस्थ धनपतियों सें से एक—स्वयं कार निर्माता हैं और लोगों को पैदल चलने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। उन्होंने १९६३ से अपना यह नियम बना लिया है कि जो भी अस्वस्थ—दुर्बल व्यक्ति उन्हें दिखाई पड़ता है, उसे वे पैदल भ्रमण का परामर्श देते हैं। उन्होंने पैदल चलने वालों की एक संस्था की भी स्थापना की है। वे पैदल चलने वालों को एक डायरी देते हैं, जिसमें वह ईमानदारी से अपने पैदल चलने का व उस प्रवृत्ति के द्वारा होने वाले लाभ का दैनन्दिन विवरण अंकित करते हैं। थोड़े ही समय में पैदल चलने के कारण उनकी प्राण शक्ति व स्वास्थ्य में अपूर्व वृद्धि होने लगती है तो वे अन्य लोगों को भी इस परिवर्तन का रहस्य बताते हैं। धीरे-धीरे पैदल चलने वालों की संख्या बढ़ने लगी और अब तक यह ३,२५,००० हो गयी।

इसका श्रेय निश्चित ही श्री ओपेन को है। भ्रमणकर्ताओं की डायरी के आधार पर कई चिकित्सक भी कई रोगियों को पर्चियों पर दवा लिखने की बजाय उन्हें स्वास्थ्य लाभ के लिए पैदल चलने का परामर्श देने लगे हैं।

योरोपीय देशों में पिछले दस वर्षों में पैदल चलने की प्रवृत्ति बड़ी तीव्र गति से पनपी है यह शौक इतना अधिक बढ़ गया है कि इस सम्बन्ध में कई महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं। स्विट्जर लैण्ड सरकार ने पैदल चलने की प्रवृत्ति को पोषित करने वाली भ्रमण-संस्थाओं को राजकीय अनुदान दिये हैं। नगर की भीड़-भाड़ से दूर भ्रमण मार्ग बनाये हैं, जिन तक पहुँचने के लिए रेलमार्गों से उन स्थानों को जोड़ा गया है। इसके लिए दूरभाष सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं, जो भ्रमण कार्यक्रमों की सूचनाएँ भ्रमणार्थियों तक पहुँचाती हैं।

पश्चिमी जर्मनी में तो पैदल चलना एक परम्परा ही बन गया है। बालक, युवा, स्त्री, वृद्ध सभी इसमें रुचिपूर्वक भाग लेते हैं। वहाँ पैदल चलने वालों के ४६ क्लब हैं। ३५००,००० व्यक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इनके नियमित सदस्य हैं। इन भ्रमणार्थियों के लिये साफ-सुथरी कोलाहल व वाहनों के लिए प्रतिबन्धित १२,००,००० किलोमीटर लम्बी सड़कें हैं जिन पर पथ प्रदर्शक सूचना पट भी लगे हुए हैं। छोटे से नगर लक्जेम्बर्ग में भी १०० मीटर लम्बी ऐसी सड़क है।

यह प्रवृत्ति राष्ट्रीय परिधि में ही बँधकर नहीं रह गयी है। पैदल भ्रमणार्थियों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय भ्रमण मार्गों का निर्माण भी हुआ है। 'आर डेनीज इफेल रोड' फ्रास, बेल्जेम्बर्ग व जर्मनी में होकर गुजरती है। ट्राइज रोड फ्रांस जर्मनी स्विट्जरलैण्ड में होकर जाती है। ऐसी ही एक अन्य सड़क भी है, जिसका नाम 'तूर दयू मो ब्लो' है। इन सड़कों पर भ्रमण करने वालों के लिए एक देश से दूसरे देश में जाना प्रतिबन्धित नहीं है।

हमारे देश में यान्त्रिक सभ्यता के पाँव अभी उतने नहीं पसरे हैं, जितने इन देशों में। किन्तु श्रम को अप्रतिष्ठा की दृष्टि से देखने की वृत्ति हमारे देशवासियों में उन लोगों से कई गुना अधिक ही है। वहाँ के लोग श्रम चाहे वह कैसा ही क्यों न हो, को अपनी प्रतिष्ठा—गर्व की वस्तु मानते हैं। हमारे यहाँ ऐसा नहीं। हम अपना बिस्तर, पेटी, सूटकेस, उठाना, अपने जूते स्वयं ठीक करना, अपने कपड़े आप धोना अपने बड़प्पन की तौहीन मानते हैं। अतः वहाँ पैदल चलने का रिवाज वाहनों के आधिक्य व यान्त्रिक सभ्यता से परित्राण पाने के उद्देश्य से किया गया हो तो भी हमें अपनी इस मिथ्या वृत्ति से परित्राण पाने के लिये पैदल चलने की प्रवृत्ति को अपनाना ही चाहिए।

यह आवश्यक नहीं कि हमारे यहाँ भी वैसी ही सड़कें बनेंगी तभी भ्रमण की वृत्ति अपनाऐंगे। उन लोगों की इस तरह शौक के अन्तर्गत मानेंगे। वरन् हम भ्रमण को—पैदल चलने को—अपने पाँवों पर चलने की प्रवृत्ति को अपनी अनिवार्यता—अपनी आर्थिक बचत व स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से अपनायेंगे। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए भारत में तीर्थ यात्रा एवं परिक्रमा की पुण्य परम्पराओं को धर्म का एक अंग माना गया था। इसमें न केवल शारीरिक वरन् देश की स्थिति से परिचित रहने और परस्पर एक-दूसरे को सीखने-सिखाने का सम्बन्ध सूत्र भी जुड़ा हुआ था।

खेल-कूद

व्यायाम की दृष्टि से खेल-कूद सबसे सरल होते हैं। इनसे बढ़िया मनोरंजन होता है, खेलने वालों को प्रसन्नता, उल्लास, उत्साह और प्रफुल्लता प्राप्त होती है, देखने वालों का भी सात्विक मनोरंजन होता है और उनमें उत्साह, साहस एवं मानसिक गुणों की वृद्धि होती है। बुद्धि विकसित होती है तथा अनेक दाँव-घात मालूम होते हैं। ऐसे खेलों में हाकी फुटबाल, क्रिकेट, बैडमिन्टन आदि अँग्रेजी खेल लिये जा सकते हैं। भाग-दौड़, तत्परता, फुर्ती सबकी आवश्यकता इन खेलों में होती है। यह तमाम चीजें व्यायाम ही हैं, इन खेलों से शारीरिक गठन और शक्ति प्राप्त होती है। यह खेल कुछ महँगे भी पड़ते हैं जिसमें टेनिस, पिंगपौंग, पोलो रगबी आदि तो केवल धनी व्यक्ति ही खेल सकते हैं पर फुटबाल, हाकी और क्रिकेट की सामूहिक व्यवस्था की जाय तो उससे अधिक दबाव वाली पेरशानी कम हो सकती है।

खेलों में अपने भारतीय खेल सबसे अच्छे हैं। दौड़, तीन टाँग की दौड़, झंडी की दौड़ गणित की दौड़, ऊँची कूद, लम्बी कूद यह सब सस्ते खेल हैं, इनसे मानसिक प्रसन्नता भी खूब मिलती है और शरीर का व्यायाम भी अच्छा हो जाता है।

पेड़ों पर चढ़ने वाला 'गुलहर' खेल भी हमारे यहाँ विख्यात है और प्रायः हर प्रान्त में खेला जाता है। जहाँ ऊँचे और मजबूत पेड़ हों, वहाँ गुलहर खेलना भी व्यायाम की आवश्यकता पूरी करता है। नदी तालाबों में तैराकी और तैरकर खेले जाने वाले खेल भी उपयोगी होते हैं। छाती के स्वास्थ्य के लिए यह दोनों खेल बड़े उपयुक्त हैं पर इसमें छोटे बच्चों को ही सम्मिलित नहीं करना चाहिए।

तेल मालिश कीजिये

कृश शरीर को पुष्ट, स्वस्थ और सुडौल बनाने के लिये तेल मालिश बड़ा सुन्दर व्यायाम हैं। महात्मा गाँधी जी वृद्धावस्था तक नियमित रूप से तेल मालिश करते रहे। आचार्य विनोवा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भावे मालिश को बड़ा महत्व देते हैं। डाक्टरों और वैज्ञानिकों ने भी इसकी बड़ी उपयोगिता सिद्ध की है। कहीं-कहीं भी तेल मालिश अभी भी चिकित्सा का एक अंग ही बनी हुई है। विश्व स्वास्थ्य परिषद् के प्रधान डा० रिचकान ने अपनी एक रिपोर्ट में लिखा है चिकित्सा शास्त्र का इतिहास बताता है कि पाश्चात्य सभ्यता के पूर्व भी भारत के निवासी तेल मालिश के लाभ को जानते थे। 'आयुर्वेद' में भी इसका उल्लेख हुआ है। महर्षि वाग्भट्ट ने लिखा है—कृशायां वृहणायां स्थूलानां कर्शनायक। वद्धविट्क कृमिघ्नं च संस्कारात्सर्व दोषंजित्। अर्थात्—तेल मालिश कृश को पुष्ट और स्थूल को सामान्य अवस्था में लाने के लिये बड़ी उपयोगी औषधि है। तेल से मल निकलता है, कीटाणु नष्ट होते हैं और शरीर से रोगों को दूर करने की शक्ति आती है।"

छोटे बच्चों के लिए तो तेल मालिश अमृत तुल्य है, पर इससे छोटे बड़े, बुड्ढे और स्त्रियाँ सभी लाभ उठा सकती हैं। प्रसूता स्त्रियों की कुछ दिन तक मालिश होना आवश्यक भी है। इससे स्वास्थ्य के साथ सौन्दर्य भी बढ़ता है और अनावश्यक चर्बी नहीं जमा होने पाती।

अगं-प्रत्यंग के शोधन, दीर्घ-जीवन विकास के लिए तेल मालिश एक उत्तम व्यायाम है। नियमित रूप से मालिश करने से शरीर का वजन बढ़ता है और शिथिलता दूर होती है। प्रातःकाल मालिश करने के बाद शरीर में सूर्य-किरणें लेने से शरीर को प्राकृतिक विटामिन प्राप्त होते हैं, शक्ति आती है और हड्डियाँ मजबूत होती हैं। रक्त के जीवाणु सशक्त होकर सारे शरीर का दौरा करते हैं और अन-अपेक्षित तत्वों, गन्दगी और रोग के कीटाणुओं को मार भगाते हैं। आँत, जिगर, फेफड़े, दिल आदि की पुष्टि के लिये, स्नायुविक विकार दूर करने, शरीर को उष्णता प्रदान करने के लिये, कोष्ठबद्धता दूर करने के लिये, माँस पेशियों को सबल बनाने के लिये तेल मालिश हर वर्ग, हर उम्र के व्यक्ति के लिये उत्तम और सरल उपाय है।

गायन, वादन और नृत्य

संगीत भी एक मनोरंजक व्यायाम ही है। इंग्लैण्ड के डाक्टर मीड व न्यूयार्क के डा० एडवर्ड पोडोलास्को ने लिखा है—गाने से शरीर के भीतर एक विशेष प्रकार का कम्पन्न उत्पन्न होता है, जिससे रक्त का वेग बढ़ जाता है और शरीर के भीतर चिपके हुए विषैले पदार्थ छूट जाते हैं और निसर्ग मार्ग—अर्थात् मल-मूत्र और पसीने आदि के रूप में बाहर निकल जाते हैं।

प्रसिद्ध अमरीकी डाक्टर एस० जे० फ्रेदरी ने लिखा है कि—संगीत के प्रभाव से उत्पन्न मानिसक सन्तुलन मनुष्य को दीर्घ-जीवी बनाता है। "यूमा इंडियनों में डाक्टर जब रोगी को देखने जाता है तो वह गाना गाता है। चौथे गाने पर रोगी के स्वास्थ्य में परिवर्तन होने लगता है डाक्टरों का इस सम्बन्ध में एक मत है, कि गाने से फेफड़े, आँतों और कण्ठ आदि के अवयवों का सुखद व्यायाम होता है, जिससे गाने वालों को जुकाम, बदहजमी, यकृत विकार व पीलिया आदि रोग नहीं होते। संगीत के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की विविधतायें देखने को मिलती हैं। भारतवर्ष में तो इस कला का सबसे अधिक विकास हुआ है। प्रार्थना, भजन, कीर्तन आदि का सम्बन्ध शारीरिक और विशेषकर मानसिक व्यायाम से ही है।

वादन तो स्पष्टतया व्यायाम है ही। इसमें हाथ, गर्दन आदि हिलते-डुलते हैं। मृदंग और ढोलक के वादन से तो कमर के ऊपर के सम्पूर्ण हिस्से का भरपूर व्यायाम हो जाता है और पसीना फूट पड़ता है। सारंगी, सरोद वीणा, हारमोनियम, सितार, बैन्जो आदि वाद्यों से हाथ की उँगलियों की कसरत होती है और मानसिक प्रसन्नता मिलती है। सामूहिक रूप से गायन और वाद्य सम्मिलित अभ्यास से स्वास्थ्य और मानसिक प्रसन्नता का वातावरण विनिर्मित होता है। सायंकाल भोजन के उपरान्त एक घण्टे तक गायन और वाद्य को नियमित अभ्यास बड़ा लाभदायक होता है।

गायन और वाद्य के साथ नृत्य का भी सम्बन्ध है। यह भी एक प्रकार का प्रभावोत्पादक व्यायाम है। हमारे समस्त शरीर में जितनी भी माँस-पेशियाँ हैं, उन सबके सामूहिक व्यायाम के लिये नृत्य पूर्णतया उपयुक्त है। इससे आहार का पाचन और शरीर का सम्वर्द्धन भी ठीक प्रकार से होता है। भूख ठीक लगती है श्वांस-संस्थान पर भी नृत्य का प्रभाव पड़ता है, इससे रक्त की शुद्धि होती है। शरीर के अन्य भागों में हाथ-पैर, उदर, वक्ष, नेत्र, ग्रीवा आदि का व्यायाम होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ घरेलू व्यायाम

पाश्चात्य देशों में स्त्रियाँ खेल और कसरतों में बिना प्रतिबन्ध भाग लेती हैं, पर हमारे देश में सामाजिक संकीर्णता की मनोवृत्ति के कारण उन पर कड़े नियन्त्रण लगाये हैं फलस्वरूप उनका अधिकांश जीवन घर की चहार दीवारी में ही बीतता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए उनके व्यायाम की समुचित व्यवस्था तो होनी ही चाहिए।

स्त्रियाँ चाहें तो तीसरे पहर सामूहिक रूप से घरों में कोई छोटे-मोटे खेल-खेल सकती हैं। गायन, वादन और नृत्य का अभ्यास कर सकती हैं। सुविधानुसार आसन, प्राणायाम और पी० टी० की कसरतें भी कर सकती हैं। पुरुषों को इसके लिये उन्हें पर्याप्त अवसर प्रदान करना चाहिए। पर जहाँ पर यह सब व्यवस्था न बन पड़े कुयें से पानी खींचने, मट्ठा बिलौने और कृषि बागवानी द्वारा स्त्रियों को अपने व्यायाम की व्यवस्था कर लेनी चाहिए। जिन स्त्रियों को हाथ-पैर कमर तथा आमाशय में जोर डालने वाले कार्य करने पड़ते हैं, उनके प्रसव कष्ट पूर्ण नहीं होते। उनकी मानसिक स्थिति का पारिवारिक वातावरण और बच्चों के स्वास्थ्य से भी सम्बन्ध है अतः स्त्रियों के व्यायाम की उपेक्षा बिलकुल नहीं करनी चाहिए।

चक्की पीसना

स्त्रियों के लिए व्यायाम की आवश्यकता बहुत अधिक है क्योंकि उनका रहना अधिकांश घरों के भीतर हो होता है, जिससे उन्हें पर्याप्त खुली हवा और धूप आदि नहीं मिल पाती। श्वाँस-प्रश्वाँस तथा माँस-पेशियों के समुचित व्यायाम के लिये उन्हें चक्की चलाना सबसे अधिक अनुकूल पड़ता है। स्त्रियाँ बार-बार बाँये और दाँये हाथों से चक्कियाँ पीसती हैं तो उनकी हाथ, छाती दोनों कोखें पेट तथा अन्तड़ियों का भरपूर व्यायाम हो जाता है। चक्की चलाने से लाभ का सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि उन स्त्रियों को जिन्हें नियमित रूप से चक्की चलाने का अवसर मिलता है। प्रसव पीड़ा बहुत ही कम होती है, जबकि शहरों की अधिकांश स्त्रियों के प्रसव आपरेशन के बाद ही होते हैं।

घरेलू चक्की का पिसा हुआ आटा स्वास्थ्य की दृष्टि से सब घर वालों के लिये भी लाभदायक रहता है। उसमें विटामिन तथा जीवन तत्व अधिक पाये जाते हैं, जबकि मशीन से पिसा हुआ आटा अपनी सारी पौष्टिक क्षमता और पोषण शक्ति खो देता है। इन लाभों को देखते हुए स्त्रियों को चक्की पीसना चाहिये। जिन्हें साधारण चक्कियाँ चलाना कठिन जान पड़ता हो, उन्हें खादी तथा ग्रामोद्योग विभाग द्वारा प्रसारित बाल-बैरिंग वाली चक्कियाँ मँगा लेनी चाहिए। यह अपेक्षाकृत हलकी होती हैं और इनमें आवश्यकतानुसार आटे को भी मोटा या पतला किया जा सकता है। चक्की चलाने का कार्य भारतीय स्त्रियाँ बहुत प्राचीन काल से करती आ रही हैं और चूँकि वह एक लाभदायक और सब सर्वसुलभ व्यायाम है अतः यह परम्परा आगे भी चलती रहनी चाहिये।

स्वास्थ्य-समर्थता के प्रसारात्मक आयोजनों—व्यायामों के विभिन्न पहलू हैं। अपनी रुचि, सुविधा, स्थिति और अवस्था के हिसाब से एक व्यक्ति और सामूहिक रूप से लोग स्वास्थ्य सम्वर्द्धन और क्लान्ति निवारण के लिये उनका अभ्यास कर सकते हैं, पर राष्ट्र की सम्मिलित समर्थता का प्रश्न इतने मात्र से हल न होगा। उसके लिये विस्तृत प्रयत्न और प्रसारात्मक आयोजन की पूर्ति करनी होगी।

हमारी युग-निर्माण योजना का प्रथम खण्ड "स्वस्थ शरीर" की रचना है। इसका मूलभूत उद्देश्य देशों में सौ दो सौ पहलवान बना देना अथवा हजारों आदमियों को स्वस्थ बना देना मात्र नहीं है यह तो उनका आंशिक रूप है। वस्तुतः इस प्रथम चरण का मूल उद्देश्य समूचे राष्ट्र, की शक्ति और स्वास्थ्य समर्थता का विकास करना है। जिस प्रकार गाँव-गाँव यज्ञ, पूजा-पाठ, रामायण-परायण और गीता कथाओं के आयोजन चल रहे हैं, उसी प्रकार व्यापक की भी राष्ट्रीय स्तर पर पूर्ति करने के लिए व्यायापक आन्दोलन उठाना पड़ेगा। इसके लिये भी वैसे ही आयोजन तैयार करने होंगे और उनका प्रचार-प्रसार भी करना होगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गाँव-गाँव व्यायामशाला

राष्ट्र निर्माण के आवश्यक तत्वों पर विचार करते हुए महामना मदनमोहन मालवीयजी एक महत्वपूर्ण योजना प्रस्तुत करते हुए कहा करते थे--

ग्राम्ये-ग्राम्ये सभाकार्या ग्राम्ये-ग्राम्ये कथाशुभा।
पाठशाला मल्लशाला च प्रति पर्वे महोत्सवः।।

अर्थात्—प्रत्येक गाँव में लोग अपना संगठन सभा-समितियों द्वारा करें, प्रत्येक गाँव में प्रेरक कथायें हुआ करें। पाठशाला और व्यायामशाला की भी व्यवस्था हो और प्रत्येक पर्व त्यौहार पर महोत्सव मनाये जाया करें।

मल्लशाला की स्थापना भी मालवीयजी के रचनात्मक कार्यक्रमों में था। यह कार्य अब युग-निर्माण शाखाओं और सदस्यों द्वारा पूरा किया जाना चाहिए। जिस तरह लोग मन्दिरों और पाठशालाओं के लिए धन, जमीन और अन्यान्य सुविधायें प्रदान करते हैं, उसी तरह व्यायामशालाओं की भी स्थापना का प्रबन्ध होना चाहिये।

नेतृत्व करें

इसके लिये प्रभावशील व्यक्तियों को चाहिये कि वे गाँव के नव-युवकों का एक मंडल तैयार करें और उन्हें व्यायाम करने व स्वास्थ्य सुधारने की प्रेरणा दिया करें। समर्थ गुरु रामदास ने महाराष्ट्र में ३००० अखाड़े एवं महावीर मन्दिर स्थापित किये थे, जिनमें भारी संख्या में मराठे कुश्ती के दाँव-पेच सीखते थे, शरीर बनाते थे और साथ ही शिवाजी की सेनाओं की प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से सहायता भी किया करते थे। अखाड़ा की परम्परा वहाँ आज़ भी प्रचलित है। अन्य प्रदेशों में किसी न किसी रूप में छुट-पुट अखाड़े चलाये जाते हैं पर उनमें व्यवस्था कम और अस्त-व्यस्तता अधिक जान पड़ती है। राष्ट्रीय नव-निर्माण की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अब हमें व्यायामशालाओं की स्थापना का जोरदार अभियान प्रत्येक गाँव में चलाना चाहिये।

यह मानकर चलना है कि "युग-निर्माण योजना" के प्रवर्त्तक पू० आचार्य जी समर्थ गुरु रामदास हैं और युग-निर्माण योजना के कार्यकर्त्ता शिवाज़ी। इन सदस्यों से प्रत्येक गाँव में कम से कम एक अखाड़ा के हिसाब से सारे देश के ५६७१६ अखाड़े, और प्रत्येक शहर में कम से कम ५ अखाड़ों के हिसाब २६६० शहरों में १३४५० अखाड़े, कुल ५८०६१६ अखाड़ों की माँग की जा रही है। प्रत्येक अखाड़े में कम से कम १५ पहलवान आयें तो कुछ ही समय में ८७०६२८५ व्यक्ति की एक मजबूत स्वस्थ सेना तैयार हो सकती है। इसका राष्ट्रीय स्वास्थ्य पर जो मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ेगा उसका तो अनुमान करना भी कठिन है।

बगीचियाँ बनायें

इसके लिये जिस रूप में—स्वेच्छा, दान या पञ्चायत द्वारा जमीन मिले उसकी एक बगीची की शक्ल में तैयार किया जा सकता है। चारों तरफ नागफनी की झाड़ से घेरकर किनारे-किनारे फूल-पौधे लगा दिये जायें और बीच में एक अखाड़ा बना लिया जाय। बगीची में अलग-अलग लोग ईंटें रखकर अपने-अपने लिये डण्ड-बैठक लगाने की जगह बना लें। डम्बल और मुग्दर की व्यवस्था रहे और उन लोगों को प्रशिक्षण दिया जाय। अच्छी कुश्ती के ज्ञाताओं को बुलाया जाय और उनसे कुश्ती के दाँव-पेच, मुग्दर की कलायें सीखी जायें।

जीर्णोद्धार

जहाँ पर ऐसा स्थान सुलभ न हो सके, वहाँ खुले स्थानों का ही उपयोग करना चाहिये। जगंलों में बिना फसल वाले खेतों को गोड़कर वहाँ अभ्यास किया जाय। जहाँ पहले से अखाड़े रहे हों पर अब टूटे-फूटे पड़े हों, उनको सामूहिक रूप में श्रमदान कर सुधार लेना चाहिये। दीवारें हों तो उनकी मरम्मत कर ली जाये और छप्पर आदि डालकर उनको बरसात से बचाने की व्यवस्था कर ली जाय। थोड़ा खुला स्थान भी रहे, जहाँ कुश्ती के अलावा लोग कसरत भी कर सकें। अखाड़ों में लाने के लिये लोगों के घर-घर जाकर उनको प्रोत्साहित करना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य, पुस्तकालय और प्रवचन

व्यायामशालाओं में एक छोटी-सी कोठरी का प्रबन्ध हो तो वहाँ ऐसी पुस्तकों को इकट्ठा कर एक छोटा-सा पुस्तकालय बनाया जाय, जिनमें व्यायाम सम्बन्धी विचार प्रेरक और प्रशिक्षण देने की बातें लिखीं हों। जिन्हें पढ़कर लोग व्यायाम और खेल-कूद की प्रेरणा प्राप्त करें। लोगों को प्रयत्नपूर्वक वह पुस्तकें पढ़ाई जायें। समय-समय पर छोटे-छोटे व्यायाम सम्बन्धी परिपत्र छपवाकर लोगों को वितरित किये जायें।

पुस्तकालय के अतिरिक्त कभी-कभी प्रवचनों की व्यवस्था रहे, जिनमें व्यायाम की आवश्यकता और जन स्वास्थ्य की बुनियादी बातों जैसे संयम ब्रह्मचर्य आहार आदि की भी बातें लोगों को बताई जायें। आसन दिखाने और सिखाने वाले व्यक्तियों को आमन्त्रित कर उनका प्रदर्शन किया जाये। ऐसे शिविर भी चलाये जा सकते हैं जिनमें प्रदर्शन, प्रशिक्षण और प्रवचन इन तीनों की सम्मिलित व्यवस्था हो। शस्त्र शिक्षण के शिविर अलग से भी चलाये जा सकते हैं और उनका प्रदर्शन साथ-साथ या अलग किया जा सकता है।

साधनों के लिये सामूहिक चन्दा

इन कार्यों के लिए कुछ धन की आवश्यकता होगी। कुछ लोग इसके लिए स्वेच्छा से सहयोग दे सकते हैं।

इसके अतिरिक्त थोड़ा-थोड़ा एक मुश्त या मासिक, सामूहिक चन्दा भी किया जा सकता है इस चन्दे का उपयोग केवल स्वास्थ्य और व्यायाम सम्बन्धी आयोजनों में किया जाये। व्यायामशाला संचालक के पास उसका पूरा हिसाब रहे, जिसे समय-समय पर सदस्यों को बता और समझाया भी जाता रहे।

खेल-कूद-दल

देश में एक बार व्यायामशालाओं का जाल बिछाने की आवश्यकता है पर व्यायाम की विशद् आवश्यकता इतने से ही पूरी न होगी। व्यायामशालाओं में थोड़े व्यक्तियों की व्यवस्था हो सकती है इसलिए खेल-कूद की भी अधिक से अधिक व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके लिए विद्यालयों में तो खेल-कूद का प्रसार है ही, पर वहाँ तो केवल विद्यार्थी वर्ग की व्यवस्था हो पाती है। उतने ही नवयुवक ग्रामीण और कामकाजी भी होते हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे लोगों को भी खेल-कूद की आवश्यकता होती है। इसके लिए भी व्यायामशालाओं के समानान्तर क्रीड़ा-केन्द्र और विभिन्न प्रकार के क्रीड़ा दल तैयार किये जायें। जन, धन और साधन उपलब्ध कर सकें वे लोग तो गाँवों में भी शहरों की तरह ही फुटबाल, बाली-बाल, क्रिकेट आदि दौड़-धूप कर खेले जाने वाले खेलों की व्यवस्था करें। पर जहाँ साधन उपलब्ध नहीं वहाँ कबड्डी दल, तैराकी दल, पी० टी०, लेजिम-दल तथा लाठी चलाना एवम् शस्त्र-प्रशिक्षण दल आदि तैयार किये जायें और उनके नामकरण साहसी शूरवीर योद्धाओं के नाम पर किये जायें। क्रीड़-स्थलों की सामूहिक व्यवस्था भी हो सकती है। इसके लिए गाँवों में बड़े क्रीड़ा केन्द्र भी स्थापित कराये जा सकते हैं जिनमें बच्चों की खेलबाड़ी, झूला चढ़ना, सरकना तथा जमनास्टिक आदि की व्यवस्था रहे। यों तो गाँवों में जमीन का अभाव नहीं रहता। अनेकों खलिहान ही खाली पड़े रहते हैं, पर जहाँ वे उपलब्ध न हो सकें, वहाँ दूर खेतों में जाकर भी खेल खेले जा सकते हैं।

वार्षिकोत्सव

खेल की सामूहिक सत्प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देने के लिए यह आवश्यक है क्रि उनके वार्षिकोत्सव मनाया जाया करें। एक सप्ताह या न्यूनाधिक दिनों में ऐसे उत्सव सम्पन्न किये जा सकते हैं, इनमें विभिन्न खेल-कूदों का प्रदर्शन हो और स्वास्थ्य तथा व्यायाम आदि के सम्बन्ध में भाषण और प्रवचन हों। उनकी कमियों और आवश्यकताओं पर विचार-विमर्श हो। अगले वर्ष के कार्यक्रमों को निर्धारित किया जाय और उनके लिये साधन-व्यवस्था की चर्चा और प्रयत्न भी किये जायें। अन्त में एक वर्ष की प्रगति से लोगों को अवगत कराया जाय और लोगों को इनके लिए प्रेरणा व प्रोत्साहन दिया जाय। प्रसाद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वितरण और यज्ञ आदि धार्मिक आयोजनों का भी प्रबन्ध किया जा सकता है।

प्रतियोगिताएँ

समय-समय पर कई-कई गाँवों की क्षेत्रीय प्रतियोगिताएँ रखी जायँ, जिनमें रेली की शक्ल में विभिन्न प्रकार के क्रीड़ा-दल सम्मिलित हों। इनका संचालन स्कूलों के टूर्नामेन्टों की तरह हो। जिस गाँव में प्रतियोगिता हो वहाँ के प्रतिनिधि मुखिया बनें और वे विभिन्न खेल-कूदों का प्रतियोगिता क्रम तैयार करें। साथ ही बाहर से आई हुई टीमों के लिये निवास तथा सुविधाओं की व्यवस्था भी वे अपना कर्तव्य समझें। इस तरह एक-दो दिन तक प्रतियोगिताएँ चलें और उनमें विजयी व्यक्तियों या दलों को पुरस्कार तक बाँटे जायँ और उनका एक सार्वजनिक समारोह में नागरिक अभिनन्दन किया जाये। इनाम के लिए एक गाँव या प्रतियोगिता में भाग लेने वाले सभी गावों में चन्दा इकट्ठा किया जा सकता है और उनसे बनियान, मोजे, तोलिये, फाउन्टेनपेन, पुस्तकें आदि खरीदकर इनाम के रूप में विजेताओं को बाँटे जाएँ।

दंगल

दंगल का प्रचलन हमारे देश की प्राचीन परम्परा है। पहले गाँव-गाँव दंगल होते थे। वर्षा ऋतु में तो अभी भी हजारों गाँवों में दंगलों का आयोजन होता है।

व्यायाम आन्दोलन को व्यापक बनाया जाय

व्यायाम एक समूचा शास्त्र है। इसमें शारीरिक श्रम के अतिरिक्त उत्साह बढ़ाने का भी अवसर मिलता है और मनोरंजन भी होता है। हर स्थिति का—हर स्तर का व्यक्ति अपने लायक व्यायाम चुन सकता है। इसके लिए जानकारों से सलाह ली जा सकती है। सबेरे स्वच्छ हवा में टहलने जाना तो सभी के लिये उपयोगी है। उसमें सीना तना रहना चाहिए। सांस गहरी लें और हाथों को ड्रिल की तरह आगे-पीछे करते रहें।

जन साधारण की समर्थता बढ़ाने के लिए व्यायाम का चस्का हर किसी को लगाया जाना चाहिए और उसे एक संगठित आन्दोलन के रूप में सेवा भावी लोगों द्वारा चलाया जाना चाहिए। इसके लिए सब सदस्यों को एकत्रित होने के लिए एक उपर्युक्त स्थान चुना जाना चाहिए, जिसे व्यायामशाला नाम दिया जाय। अखाड़े पुराने समय के गाँव-गाँव होते हैं। वे पेड़ों की सघन छाया में ऐसी जगह हो सकते हैं, जहाँ सूर्य की प्रातःकालीन धूप भी आती रहे। चारों कोनों पर खम्बे खड़े कर ऊपर से दूसरी छत बना दी जाय तो यह व्यायामशाला सर्दी-गर्मी वर्षा तीनों ऋतुओं में समान रूप से उपयोगी रह सकती है। वैसे जहाँ साधन न हों, खुले स्थानों में भी अखाड़े बनाये जा सकते हैं।

कुछ समय पहले तक गाँव-गाँव अखाड़े थे। नवयुवक उनमें दण्ड बैटक आदि के लिए जाते थे। कुश्तियाँ होती रहती थीं और उस्ताद लोग इसके अतिरिक्त नाल का पत्थर उठाने, गदका फरी (ढाल तलवार का स्थानापन्न चमड़े का उपयोग) आदि का अभ्यास कराते थे। हाई जम्प, लाँग जम्प, (पैतरा छलाँग) आदि की प्रतियोगितायें होती रहती थीं और कबड्डी के खेल शरद के मौसम में गई रात तक चलते रहते थे। कोई अभागा गाँव ही ऐसा बचता होगा, जहाँ पर उस्ताद लोग नव युवकों को उत्साहित करके अखाड़े में नियमित रूप से आने के लिए प्रोत्साहित न करते रहे हों। समय पर दंगल होते रहते थे। जीतने वालों को इनाम बँटते थे। हनुमान चालीसा का सामूहिक पाठ होता था। जब तक वह प्रचलन रहा, हर गाँव में सशक्त पहलवानों का बाहुल्य बना रहा। ऐसे गाँवों में चोर उचक्कों की हिम्मत नहीं पड़ती थी। वे कहीं घात लगाते तो उनकी हड्डी पसली टूट जाती थी। थोड़े नौजवानों के पीछे समूचे गाँव का मनोबल बढ़ा रहता था।

समर्थ गुरु रामदास ने शिवाजी को प्रोत्साहित करके स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए अग्रिम मोर्चे पर खड़ा किया तो उस बड़े कार्य की पृष्ठ पोषण करने की जिम्मेदारी उठाई। समर्थ गुरु रामदास ने अपने प्रभाव क्षेत्र के हर गाँव में हनुमान मन्दिर बनवाये। मन्दिर शब्द के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कारण धार्मिक लोगों का भी रुझान उस ओर खिंचा। इन सभी हनुमान मन्दिरों के साथ व्यायामशाला और सत्संग योजनायें अनिवार्य रूप से जोड़ रखी गईं। फलतः सभी प्रकार के लोग उनमें आने लगे। जिनका उत्साह व्यायाम में लग सका। उन्हें उनमें जुटाया। बड़े-बूढ़े नर-नारी सत्संग कथा सुनने आते। इस प्रकार शरीर बल बढ़ाने और मनोबल प्रखर करने की दोनों ही उपलब्धियाँ उन गाँवों के निवासियों को नियमित रूप से मिलती। इस स्थापना के माध्यम से शिवाजी को सैनिक, हथियार तथा रसद मिलने का सुयोग हस्तगत होता रहा और स्वतन्त्रता संग्राम की जड़ें दिन-दिन अधिक गहरी होती गईं।

इस उपयोगी प्रयास की सफलता को देखकर मराठों ने, पेशवाओं ने भी अपने-अपने प्रभाव क्षेत्रों में व्यायामशाला आन्दोलन को बढ़ावा दिया। यह प्रयास शासकीय प्रभाव के अन्तर्गत पनपा और उसने गाँव-गाँव योद्धा विनिर्मित किये। उत्साही प्रयत्नशील व्यक्ति कहीं भी सच्चे मन से इस आन्दोलन का श्रीगणेश करे तो उसको आशाजनक सफलता मिलना संभव है। बड़ौदा नरेश ने उन दिनों प्रो० मणिक राव के नेतृत्व में अनेकों व्यायामशालाओं की स्थापना कराई थी। झाँसी के अन्ना जी ने अपनी साधारण स्थिति में भी इस आन्दोलन को असाधारण रूप से व्यापक बनाया। उनकी स्थिति लक्ष्मी व्यायामशाला आज व्यायाम कालेज की भूमिका निभा रही है। अन्ना जी एक मध्यवर्ती सरकारी कर्मचारी थे। नौकरी छोड़कर इसी प्रयास में जुट गये और अनेकों व्यायामशालाओं की स्थापना तथा प्रगति उनके संरक्षण में होती रही।

भारत ग्राम प्रधान देश है। इसे शारीरिक और मानसिक दृष्टि से समर्थ बनाना हो तो व्यायामशाला आन्दोलन उसी क्षेत्र में चलाने की ओर ध्यान देना होगा। आवश्यकता मनस्वी कर्मठ अग्रगामियों की है। इस देश में स्वतन्त्रता आन्दोलन, भूदान, आन्दोलन, स्काउटिंग आदि समय-समय पर चलते और प्रगति के उच्च शिखर तक पहुँचे हैं। इन दिनों इस प्रकार के प्रयासों की जनमानस में प्यास है अगर कुछ लोग आगे बढ़ चलें तो उसकी सफलता सुनिश्चित ही समझी जानी चाहिए। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सफल प्रयोग ने यह सिद्ध करके दिखा दिया कि कोई नेतृत्व सम्भालने वाला हो तो प्रगतिशील प्रयासों में भाग लेने के लिए जनता में कम उत्साह नहीं है। कठोर परिश्रम करने वालों एवं न करने वालों के लिए व्यायाम समान रूप से आवश्यक है।

इन दिनों बड़ों के पीछे लगने की आदत का बाहुल्य है। शहरों में क्रिकेट टीमों का जोर है। रेडियो, टेलीविजन पर उन्हीं का यशगान होता है। ओलम्पिक एशियाड जैसे प्रयत्नों में ढेरों पैसा खर्च होता है। बड़ों के रोटरी क्लब, लायन्स क्लब आदि प्रधान नगरों में खुले हैं। गावों में भी यों ग्राम पंचायतें हैं, सरकारी स्कूल हैं पर इस दिशा में नहीं के बराबर ही उन लोगों ने ध्यान दिया है। आवश्यकता बड़े और व्यापक रूप से इस आन्दोलन को चलाने की है। इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि अपने समय की प्रतिभायें मात्र एम० एल० ए०, एम० पी० बनने में रुचि लेते हैं और बड़प्पन का मूल्यांकन उन कुर्सियों पर बैठने में ही करते हैं। पुरानी पीढ़ी की ओर दृष्टिपात करके देखें तो अमृतलाल ठक्कर, रविशंकर महाराज, बाबा राघव दास, गोस्वामी गणेश दत्त, के० लक्षणय्या, बाबा साहेब आप्टे बिनोवा, हीरालाल शास्त्री जैसे अनेकों प्रतिभाशाली लोकचेतना के क्षेत्र में कमाल करने वाले व्यक्तित्वों की तस्वीर आँखों के सामने घूम जाती है। खादी आन्दोलन जमाने में भी पं० जवाहर लाल, डा० राजेन्द्र प्रसाद, लाल बहादुर शास्त्री सरीखे काम करते रहे हैं। आज व्यायाम आन्दोलन की कितनी आवश्यकता है, यह समझना और समझाना किसी भी विचारशील के लिए कठिन नहीं होना चाहिए।

एक शताब्दी से भी कम समय हुआ कि चाय वालों ने मुफ्त में कुल्हड़ पिलाकर एक पैसे का चाय पैकेट बेचना आरम्भ किया था। वह आन्दोलन आज इस सीमा तक पहुँचा कि घरों में सबसे पहले चाय का चूल्हा जलता है और दुकानों पर खरीददारों की भीड़ लाइन लगाये खड़ी रहती है। आन्दोलनकारियों का उद्देश्य ऊँचा हो और लगन गहरी हो तो कोई विशेष कारण नहीं कि उसे सफलता न मिले।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खेल-कूदों के अनेकानेक तरीके देश-विदेशों में चल रहे हैं, उनमें ढेरों ऐसे हैं, जो देहाती वातावरण में फिट बैठते हैं। आवश्यकता नहीं कि योरोपीय बड़े लोग जिन खेलों को अपनाते हैं और सरकारें परस्पर नकल करके उसी के लिए पैसा पानी की तरह बहाती हैं, उन्हीं को देहातों में भी लाया जाय। भारतीय देहातों की अपनी संस्कृति और अपनी परम्परा है। व्यायाम और खेलों के क्षेत्र में भी फिर क्यों न हम अपनेपन को पुनर्जीवित करें।

यदि सही ढंग से व्यायामशालायें चलाई जायें और उनके साथ स्वास्थ्य रक्षा के सभी आवश्यक प्रसंग जोड़ दिये जायें तो उनकी लोकप्रियता में किसी प्रकार की कमी न रहेगी। हमारे अनेकों कार्यक्रम आये दिन जन्मते और अगले महीने मर जाते हैं। इसका एक ही कारण है कि संचालक लोग किसी बहाने सरकारी ग्रान्ट पाते हैं और उसे ऐसे ही खुर्द-बुर्द कर देने का ताना-बाना बुनते रहते हैं। जनता के साथ घनिष्ठता नहीं जमाते और उन लोगों में नहीं घुलते, जो इनमें सक्रिय रूप से भागीदार बनने जैसी चेतना रखते हैं। उन पर भी असर उनका पड़ता है, जो किसी मिशन के प्रति समर्पित होते हैं, जिन्हें अपनी नेतागीरी बनानी है, जो अनुदानों को इधर-उधर करते रहने की कला में सिद्धहस्त हैं, उनकी वास्तविकता देर तक छिपी नहीं रहती। फलतः वे भी ऐसे ही उथले प्रयासों के रूप में अपना प्रत्युत्तर देते हैं।

व्यायाम आन्दोलन को मात्र खेल-कूद का मनोरंजन न माना जाय वरन् उसके पीछे उत्साह, साहस, शौर्य, पराक्रम, संयम, ब्रह्मचर्य स्थापन और उत्साहहीनता के विरुद्ध संघर्ष जैसे अनेक तथ्यों को जुड़ा हुआ समझा जाय। प्रकारान्तर से यह चरित्र निर्माण का आन्दोलन है क्योंकि शारीरिक क्रिया-कलापों के साथ-साथ उसमें बौद्धिक चिन्तन भी जोड़कर रखना होगा।

अपने आन्दोलनों में एक भारी कमी यह है कि वे राजनैतिक प्रवाहों के साथ बहकर उनके माध्यम से स्वास्थ्य-साधन की बात सोचने लगते हैं। यदि इन जाल-जंजालों से इसे बचाकर रखा जाय और शारीरिक ही नहीं, मानसिक एवं चारित्रिक निर्माण का स्वच्छ आन्दोलन तक सीमित रखा जाय तो सर्वसाधारण की श्रद्धा सूत्रधारों के प्रति बराबर बनी रहेगी और वैसा ही सहयोग मिलता रहेगा जैसा कि मिलना चाहिए।

"गरीबी हटाओ' की तरह "दुर्बलता भगाओ'' का नारा भी कम आकर्षक नहीं है। इसकी यह विशेषता भी है कि कार्यक्रम अपनाते ही हाथों हाथ उसका सत्परिणाम देखने को मिलेगा। जिस प्रकार मैले कपड़े पर साबुन और पानी लगाते ही वह स्वच्छ दीखने लगता है, उसी प्रकार बौद्धिक समेत व्यायाम आन्दोलन चलाया जाय और उसमें हर स्तर के छोटे-बड़े व्यक्ति की उनकी स्थिति एवं आवश्यकता के अनुरूप प्रशिक्षण दिया जाय तो वह मात्र पहलवान नौजवानों का ही नहीं सर्व साधारण के लिए समान रूप से लाभदायक प्रयास बन जायेगा। इसकी पाठ्य विधि सम्मिलित होने वालों के स्तर को देखते हुए बनायी जा सकती है।

शहरी और अमीरों के लड़कों के खेल-कूद सरकारी अनुदानों के प्रश्रय में चल रहे हैं। उनकी समीक्षा किये बिना हम देहातों के लिए, गरीबों के लिए, सर्वसाधारण के लिए व्यायाम प्रयास आरम्भ करने के लिए जुटना चाहिए ताकि हमारी पुरातन व्यायाम परम्परा कम से कम देहातों में तो बनी ही रहे। यहाँ स्मरण रखने योग्य एक ही बात है कि न केवल शारीरिक वरन् मानसिक एवम् चारित्रिक समर्थता उत्पन्न करने वाले तथ्य भी इस प्रयास के साथ अनिवार्यतः जुड़े रहने चाहिए।

प्रगति का प्रथम सोपान—स्वास्थ्य संवर्धन

स्वस्थ शरीर एवं स्वस्थ मन दोनों का एक-दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध है। दोनों के सही रहने पर दुर्बलता और रुग्णता से पीछा छूटता है और मनुष्य कोई कहने लायक पुरुषार्थ कर सकने में समर्थ होता है। इस दृष्टि से जो गई-गुजरी स्थिति में रहेगा, वह अपने तथा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरों के लिए भार बनकर रहेगा। असमर्थ व्यक्ति दूसरों के सहारे अपनी नाव चलाता है या पिछड़ेपन से ग्रसित रहकर किसी प्रकार दिन काटता है। ऐसों से देश, धर्म, समाज, संस्कृति के लिए पुण्यपरमार्थ के लिए कुछ कर सकने की आशा नहीं की जा सकती। आत्मरक्षा, स्वावलम्बन, पराक्रम, प्रगति से लेकर परमार्थ साधनों तक में से एक भी उद्देश्य स्वस्थ शरीर रखे बिना बनता नहीं। दुर्बल और रुग्ण शरीर के विचार भी निषेधात्मक, पतोन्मुख रहते हैं, ऐसा व्यक्ति न केवल स्वयं दुखः पाता है, वरन् दूसरों को भी दुःख देता है। समाज-व्यवस्था की दृष्टि से पिछड़ापन एक अभिशाप है, भले ही वह शारीरिक-मानसिक-आर्थिक किसी भी स्तर का क्यों न हो ?

लोक हित की दृष्टि से जन-साधारण को बलिष्ठ, निरोग बनाने के लिए परमार्थ परायणों को—सृजन शिल्पियों को निरन्तर प्रयत्न करने चाहिए। यह प्रयास समय-समय पर अन्याय महामानवों ने भी किए हैं। समर्थ गुरु रामदास ने महाराष्ट्र के हर गाँव में महावीर मन्दिर स्थापित किये थे और उनके साथ शरीरों को बलिष्ठ बनाने वाली व्यायामशालाओं को, मन को प्रखर बनाने वाली कथा परम्पराओं को समान महत्व दिया था। यही कारण रहा कि शिवाजी को उस क्षेत्र से सैनिकों, शस्त्रों और साधनों की प्रचुर उपलब्धि हो सकी और स्वतन्त्रता संग्राम का शुभारम्भ सफल सम्भव हो सका।

गुरु गोविन्दसिंह के एक हाथ में माला—दूसरे हाथ में भाला रखने की नीति ने प्रत्येक शिष्य (सिक्ख) को बलिष्ठ और सशस्त्र रहने का प्रावधान बताया था। प्राचीनकाल में भी—'अग्रतः चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः।" की परम्परा थी। परशुराम, विश्वामित्र द्रोणाचार्य आदि ऋषियों ने इस स्तर की प्रखरता स्वयं कमाई और दूसरों को सिखाई थी। योगसाधनाओं में शारीरिक समर्थता के लिए आसन और मन को प्रखर बनाने के लिए प्राणायामों का अष्टांग योग चतुर्थांश निर्धारित किया है।

रोगी चिकित्सा एक तात्कालिक आवश्यकता है। इस दृष्टि से चिकित्सा उपचार का अपना महत्व है। अस्पतालों चिकित्सकों की इस हेतु आवश्यकता है ही, पर बात इतने भर से कहाँ बनती है ? जाना गहराई तक पड़ेगा और निवारण उस मूलभूत कारण का करना पड़ेगा, जिससे लोग दुर्बल होते, रोगी बनते और अकाल मृत्यु के मुँह में जा घुसते हैं। आहार-विहार के असंयम के कारण ही शरीरबल और मनोबल क्षीण होता चला जाता है और अन्ततः चिकत्सा की आवश्यकता पड़ती है। होना यह चाहिए कि चिकित्सा उपचार से भी अधिक स्वास्थ्य सम्वर्धन को महत्व दिया जाय और उस क्षेत्र में बरती जाने वाली उपेक्षा एवं आवांछनीयता को दूर किया जाय। इसके बिना न दुर्बलता घटेगी, न रुग्णता मिटेगी।

स्वास्थ्यशालाओं की आवश्यकता पाठशालाओं से किसी भी प्रकार कम नहीं है। बुद्धि को प्रखर बनाने के लिए जिस प्रकार शिक्षा की आवश्यकता समझी जाती है और उसके लिए हर किसी की इच्छा अपने को—अपनों को अधिकाधिक शिक्षावान सुयोग्य बनाने की रहती है। ठीक उतनी ही उपयोगिता स्वास्थ्यशाला में प्रवेश पाने की भी समझी जानी चाहिए। ज्ञान वर्धन से भी पहली आवश्यकता स्वास्थ्य सम्वर्धन की समझी जाय, यही उचित उपयुक्त है।

इसे दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है कि पाठशालाओं की ओर जितना ध्यान दिया जाता है, उतना आरोग्यशालाओं की ओर नहीं। कुछ ध्यान दिया भी गया है, तो औषधियों, दवाखानों और चिकित्सकों को बढ़ाने मात्र का प्रयत्न चला है। यह नहीं सोचा गया कि आरोग्य के मूलभूत नियमों का इसी प्रकार व्यतिक्रम चलता रहा तो उभरने वाली दुर्बलता टॉनिकों के सहारे दूर न की जा सकेगी। उभरती हुई रुग्णता पर इन्जेक्शनों के बलबूते काबू न पाया जा सकेगा। जड़ सींचनी चाहिए। पत्तों पर छिड़काव करने से क्या बनेगा ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थापना आरोग्य मन्दिरों की भी होनी चाहिए। विद्यामन्दिरों और उपासना देवालयों से कम महत्व उन्हें भी नहीं मिलना चाहिए। प्राचीन काल में यह प्रबन्ध हर गाँव में था। भले ही पाठशाला न हो व्यायामशाला अवश्य होती थी, अखाड़े बने होते थे। उस्तादों की तूती बोलती थी। जो लड़का उसमें नहीं पहुँचता था बचकाना या मनचला, आलसी विलासी समझा जाता था। साथी उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखते थे। यही कारण था कि पहलवानी की प्रतिस्पर्धा ठनी रहती थी। त्यौहारों पर जगह-जगह दंगल नियोजित होते थे। उनमें कुश्ती ही नहीं, क्षेत्रीय परम्परा के अनुरूप अनेकों प्रकार की बल प्रदर्शन प्रतियोगितायें भी होती थीं। कुश्ती और लाठी, गदा, तलवार आदि चलाने की शिक्षा पर उन दिनों अधिक जोर दिया गया, जिन दिनों कि शासकों की आक्रामकता और लूट-खसोटने बेतहाशा-सिर उठाया था। सामान्यतया लड़ने-लड़ाने को कम, बलिष्ठ बनाने की आवश्यकता को ही अधिक महत्व दिया जाता था। आज वह शौक सिमटता-उठता जा रहा है। टूर्नामेन्ट, एशियाड, ओलम्पिक आदि बड़े लोगों के शुगल भारी खर्चीले होते हुए भी चलते रहते हैं। पर जन-जीवन से उनका कोई सीधा सम्बन्ध नहीं। गाँव-गाँव खेल-कूदों, व्यायामों, प्रतियोगिताओं के सहारे सर्वसाधारण की स्वास्थ्य रक्षा प्रवृत्तियों को बढ़ाया जा सकता है। इस दिशा में दूसरे लोग उपेक्षा बरतते रहें पर हमें तो प्रसुप्त और उपेक्षित सत्प्रवृत्तियों को नये सिर से उभारना है। प्रज्ञा अभियान के व्यायाम आन्दोलन को न केवल शारीरिक श्रम अभ्यास के रूप में वरन् स्वास्थ्य रक्षा के सभी पक्षों को सम्मिलित रखते हुए आगे बढ़ाना है। शरीर संरचना की जानकारी, प्राथमिक चिकित्सा, परिचर्या आहार-विहार सम्बन्धी सभी आवश्यक जानकारियाँ, खेलकूद, आसन, प्राणायाम, शस्त्र-संचालन आदि सभी आवश्यक विषयों में सम्मिलित रखकर ही एक समग्र स्वास्थ्य आन्दोलन का स्वरूप बनता है। प्रज्ञा संस्थानों को अपने संरक्षण में इसी ढाँचे को खड़ा करना चाहिए। शिक्षा और स्वास्थ्य को समान महत्व देते हुए इन दोनों ही रचनात्मक कार्यक्रमों को अपने हाथ में लेना चाहिए। जहाँ भी छोटे-बड़े प्रज्ञा संस्थान बने हैं, वहाँ अनिवार्य रूप से और जहाँ वैसा कुछ नहीं बन सका है, वहाँ प्रज्ञा परिजनों द्वारा यह प्रक्रिया निजी रूप में कार्यान्वित की जानी चाहिए। कोई सार्वजनिक स्वरूप न बन पड़े तो कम से कम इतना तो होना चाहिए कि हर घर-परिवार में उपरोक्त दोनों ही रचनात्मक कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया जाय। परिवार भी एक छोटा-सा समुदाय है। उस क्षेत्र में इन दोनों प्रयोगों के लिए गुजांयश रहती है। नियमित अध्ययन न बन पड़े तो स्वाध्याय सत्संग की कोई न कोई परिपाटी रात्रि के अवकाश काल में चल सकती है। अतः नित्य कर्म से निवृत्ति होने के समय ही पन्द्रह मिनट से लेकर आधे घण्टे तक का एक कार्यक्रम सरल व्यायाम के रूप में आसन-प्राणायाम का भी रखा जा सकता है। जिन्हें बाहर मैदान में सामूहिक रूप में कुछ करने की सुविधा नहीं है, उनके लिए आँगन या छत पर भी इस प्रयोग में कोई कठिनाई नहीं हो सकती। अड़चन मात्र एक ही है कि जिस प्रक्रिया का पूर्व अभ्यास नहीं है, उसे नये सिरे से किस प्रकार आरम्भ किया जाय ? इसमें थोड़े से साहस और उत्साह की आवश्यकता आरम्भ में तो पड़ेगी पर जहाँ एक सप्ताह यह ढर्रा चल पड़ा, समझना चाहिए कि वहाँ एक अत्यन्त उपयोगी परम्परा का प्रयत्न आरम्भ हो गया और उसके दूरगामी परिणाम निकट भविष्य में दृष्टिगोचर होने लगेंगे।

प्राचीन काल में आहार-विहार का संयम सभी बरतते थे। आवश्यकता व्यायाम द्वारा बलिष्ठ बनने की अधिक रहती थी। इसलिए उन दिनों की आरोग्यशालाओं का नाम व्यायामशाला ही रहता था कार्य पद्धति भी उतने ही उपक्रम तक सीमित रहती थी। आहर, ब्रह्मचर्य आदि का तो व्यायामप्रेमी स्वयं ही ध्यान रखे रहते थे। आज उन प्रयासों को नये सिरे से जमाने एवं बढ़ाने की आवश्यकता है। उनमें पुरातन काल जैसी व्यायाम पद्धतियों की जो प्रमुखता रहे ही, पर बढ़ना एक कदम और आगे पड़ेगा। आहार-विहार के क्षेत्र में जो विकृतियाँ घुस पड़ी हैं निराकरण उन्मूलन उनका भी करना पड़ेगा। अन्यथा असंयमजन्य खोखले मन के रहते व्यायाम करने की किसी में इच्छा न उठेगी, शक्ति ही न बचेगी। थकान और तनाव से जर्जर शरीरों को अपनी लाश ढोना ही भारी पड़ता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फिर व्यायाम की इच्छा और हिम्मत किसके सहारे जगे ?

प्रज्ञा अभियान के अन्तर्गत जहाँ अन्तःकरण परिष्कार के लिए उपासना का, व्यक्तित्व के निखार के लिए जीवन-साधना का और समाज में स्नेह सहयोग की आराधना परम्परा का प्रचलन किया जा रहा है, वहाँ एक चौथाई काम आरोग्यशालाओं की स्थापना का भी किया जाय। जिस प्रकार प्रौढ़ शिक्षा के लिए सर्वत्र रात्रि पाठशालाओं का प्रयत्न किया जा रहा है, उसी प्रकार व्यायामशालाओं की स्थापना पर भी पूरा-पूरा ध्यान दिया जाय। इसके लिये आवश्यक उत्साह उभारने, साधन जुटाने एवं प्रचलन बढ़ाने में भी कुछ उठा न रखा जाय। उनका नाम पिछली परम्परा के अनुरूप "व्यायामशाला" ही रखा जाय तो हर्ज नहीं। ध्यान इतना ही रहना चाहिए कि व्यायाम की प्रधानता रहने पर भी इन स्थापनाओं का उद्देश्य आहार-विहार का समग्र परिष्कार है। अब एकांगी व्यायाम ही पर्याप्त नहीं है, उससे पूर्व सर्वसाधारण के स्वभाव में संव्याप्त आरोग्य की जड़ें काटते रहने वाली कुचेष्टाओं के दुष्परिणामों से भी जन-जन को अवगत कराना पड़ेगा। संयम शिक्षा को नींव पर ही पुष्टाई की व्यायाम प्रक्रिया को गतिशील बनाया जा सकेगा।

बढ़ते हुए चटोरेपन रसोईघर को एक प्रकार से आरोग्य अनाचार का घर बना दिया है। तलने, भूनने, मसाले की भरमार रहने की प्रक्रिया को इन दिनों पाक विद्या का गुण माना जाता है। अनाज, दाल, शाक, फल, सभी के छिलके उतार फैंके जाते हैं। हल्की आँच पर उबालने भर से तो कहीं काम नहीं चलता। फलतः कोयले स्तर का आहार उदरस्थ करना पड़ता है, स्वादिष्टता के नाम पर अभक्ष्य को आवश्यकता से अधिक मात्रा में ग्रहण किया जाता है। फलतः अपच के साथ-साथ दुर्बलता और रुग्णता की जड़ें गहरी होती जाती हैं। आवश्यकता चौका-क्रान्ति की है, जिसमें अंकुरित अन्न, छिलकों को न फैंकना, भाप से पकाना, शाकों—ऋतु फलों—सलादों का उपयोग जैसी अनेकों बातें सिखाई और प्रचलन में लाई जानी चाहिए यदि आहार सम्बन्धी भ्रान्तियों का निवारण हो सके और बहुसंख्य जनता उपलब्ध आहार को सही रूप में ग्रहण करने का तत्वदर्शन हृदयंगम करले तो स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी आधा प्रयोजन तो पूरा हो ही जाता है। अन्यान्य राष्ट्रों में नागरिकों के स्वास्थ्य के इस पक्ष पर बड़ी गहराई से बालक स्तर से ही ध्यान रखा जाता है। यही कारण है कि उनकी जीवनी शक्ति हमारे राष्ट्र के औसत नागरिक की तुलना में कहीं बेहतर है।

कसे हुए भारी कपड़ों की भरमार, सौन्दर्य प्रसाधन, आभूषण जैसे सज्जा उपकरण आरोग्य की दृष्टि से कितने अहितकर हैं ? यह पाठ हमें नये सिरे से पढ़ना होगा। गन्दगी सहन करने की कुरुचि को स्वभाव का अंग नहीं बने रहने देना चाहिए। गाँवों के गली-कूँचों और पड़ौस के खेतों के मलमूत्र, कूड़े-कचरे को उस प्रकार सड़ने नहीं देना चाहिए, जैसा कि सर्वत्र इन दिनों दृष्टिगोचर होता है। घरों की नालियाँ गलियारे को जिस प्रकार गंदा करती हैं और रोग कीटाणुओं को किस प्रकार बढ़ाती हैं, इस शिक्षण का शुभारम्भ इस प्रकार करना होगा मानो हम आदिम काल से आगे बढ़कर सभ्यता के युग में प्रवेश कर रहे हों।

बाल-विवाह, ब्रह्मचर्य का अभाव, अनावश्यक प्रजनन, पर्दा प्रथा, दिनचर्या का अनिश्चय जैसे कारण भी उतने ही कष्टकाकर हैं, जितने कि गरीबी के कारण अन्न वस्त्रों में कमी पड़ना। मकानों की बनावट में धूप, हवा के लिए स्थान का न रहना सीलन और घुटन का कारण बनता है और स्वास्थ्य की बरबादी में किसी अन्य विपत्ति से कम नहीं रहता। ऐसी अनेकों बातें हैं, जो आरोग्य रक्षा के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई हैं विशेषतया पिछड़े समुदायों को स्त्री बच्चों को उन आवांछनीय प्रचलनों से उबारना ही होगा, जिससे वे स्वास्थ्य को धीरे-धीरे गँवाते और अपने तथा अन्यान्यों के लिए भार भूत बनते चले जा रहे हैं।

उपरोक्त प्रशिक्षण और प्रचलनों के अतिरिक्त आरोग्यशालाओं, व्यायामशालाओं में दृश्यमान प्रत्यक्ष कार्यक्रम—खेलकूदों, व्यायामों को भी हाथ में लेना चाहिए, उसके सहारे प्रत्यक्ष वातावरण बनता और आँखों को कुछ ऐसा लगता है कि मानो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य सम्वर्धन के लिए कुछ प्रकट प्रत्यक्ष किया जा रहा है। इसके लिए नव स्थापित आरोग्यशाला की विविधि कार्यपद्धति रहनी चाहिए और उस समय उत्तरदायित्व को वहन करना चाहिए।

नाम चाहे आरोग्यशाला रहे या व्यायामशाला, उनका एक कार्य होना चाहिए—स्वास्थ्य संरक्षण की समग्र शिक्षा, जिसमें अहार-विहार के क्षेत्र में घुसी विकृतियों का निराकरण और प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने के प्रचलन के निमित्त प्रशिक्षण चले। इसकी कक्षाएँ लगनी चाहिए। सत्र नियोजित होने चाहिए तथा प्रचार तन्त्र के अन्यान्य साधनों का उपयोग होना चाहिए। पुरस्कार प्रतियोगिताएँ चलनी चाहिए। ऐसा साहित्य भी सर्वसाधारण को सुलभ कराया जाना चाहिये।

दूसरा कार्य है व्यायामों व खेल-कूदों का प्रचलन। इन दिनों दण्ड, बैठक, कुश्ती उतनी उपयुक्त नहीं पड़ती जितनी एन० सी० सी० स्तर की कवायदें। उनमें सर्वसाधारण के सहन करने योग्य अंग संचालन भी हो जाता है साथ ही सैनिक अनुशासन जैसा अभ्यास भी बनता है। उस दृष्टि से प्रज्ञा अभियान ने कितने ही योगासनों और प्राणायामों का नया निर्धारण किया है। यह सरल होते हुए भी शरीर के प्रत्येक अंग अवयव को बलिष्ठ बनाने की दृष्टि से असाधारण रूप से उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त और भी कितने ही खेल-कूद हो सकते हैं, जिनमें प्रतिस्पर्धाजन्य कौशल उभरता है। टीम स्प्रिट पनपती है, साथ ही मनोरंजक श्रम साधन भी बन पड़ता है। स्काउटिंग में भी ऐसी कितनी ही व्यायाम पद्धतियाँ सम्मिलित हैं ? कई संस्थाओं के स्वयं सेवक दल अपनी-अपनी व्यायाम पद्धतियाँ विकसित करते हैं, उनमें से जो भी उपयुक्त हों, उन्हें अपनाया जा सकता है।

उपरोक्त व्यायामों का नियमित प्रशिक्षण एवं अभ्यास क्रम चलना चाहिए। उनकी प्रतियोगिताएँ नियोजित होनी चाहिए ताकि प्रतिस्पर्धा के लिए तैयारी चलती रहे। इन दिनों व्यायाम आन्दोलन बड़े लोगों के हाथ में खिसकता जा रहा है। राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय खेलों को देखने-बढ़ाने की ओर सबका ध्यान है। यह भुला दिया गया है कि हर गाँव में एक व्यायामशाला होनी चाहिए और उनकी प्रतिस्पर्धाओं के लिए स्थानीय क्षेत्रीय आयोजनों की धूम रहनी चाहिए। देहातों में बिखरे भारत के स्वास्थ्य संरक्षण सम्वर्द्धन की समस्या का समाधान तभी हो सकता है, जब पाठशालाओं की तरह व्यायामशालाओं की स्थापना पर भी विचारशीलों का ध्यान मुड़े और कुछ कहने लायक कारगर कदम उठें।

आरोग्यशालाओं का तीसरा कदम है चिकित्सा उपचार। इसके लिए फर्स्टएड जैसी शिक्षाओं का अधिकाधिक प्रचलन होना चाहिए। रोगी परिचर्या धात्री विद्या का परिचय प्रत्येक वयस्क नर-नारी को होना चाहिए। प्राकृतिक चिकित्सा का निर्धारण ऐसा है, जिसे अपनाकर मिट्टी-पानी आदि के सहारे रोगमुक्त बना जा सकता है। आसपास उगने वाली जड़ी-बूटियों के गुणों का सामान्य ज्ञान हो तो उनके सहारे भी सामान्य रोगों से छुटकारा पाने के लिए अपना इलाज आप कर लेने जैसा अभ्यास रह सकता है। इसके लिए जड़ी-बूटी खेत और औषधि उद्यान लगाने के लिए नये सिरे से उत्साह उत्पन्न किया जा सकता है।

प्रज्ञा अभियान का स्वास्थ्य संरक्षण कार्यक्रम

प्रज्ञा अभियान की स्वास्थ्य सम्वर्धन योजना के अन्तर्गत अगले दिनों आहार-विहार का संयम श्रम सन्तुलन, प्राथमिक चिकित्सा, परिचर्या आदि अवलम्बन अपनाने के लिए सर्वसाधारण को प्रोत्साहित किया जाना है साथ ही व्यायाम की अनिवार्यता पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया जाना है। इसके सहारे बलिष्ठता एवं साहसिकता सम्पन्न करने के लिए उत्साह बढ़ता है। सामूहिक व्यवस्था होने पर कर्त्ताओं से लेकर दर्शकों तक का रुझान इस ओर मुड़ता है। समर्थ गुरु रामदास ने अपने प्रभाव क्षेत्र में सर्वत्र व्यायामशालाएँ स्थापित की थीं। महामना मालवीय जी इस सन्दर्भ में विशेष रूप से इच्छुक थे। इस योजना को प्रज्ञा अभियान के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तर्गत इन दिनों विशेष रूप से कार्यान्वित किया जा रहा है।

व्यायाम आन्दोलन में योग व्यायाम को अस्त्र शृंखला से अधिक सरल एवं सर्वोपयोगी माना गया है, इसे बाल, वृद्ध नर, नारी सभी प्रसन्नतापूर्वक कर सकते हैं इसमें सभी प्रमुख अंगों को व्यायाम सन्तुलित रूप से होता है। फलतः उनकी दुर्बलता, अशक्तता जकड़ने का सहज ही सुधार परिवर्तन होता है। इनमें से प्रत्येक क्रिया ऐसी है, जिसके साथ प्राणायाम स्तर की गहरी श्वाँस-प्रश्वाँस प्रक्रिया का भी समावेश है। प्राणायाम मस्तिष्क के और आसन शरीर के आरोग्य का संरक्षण अभिवर्धन करते हैं। योग साधना में इन दोनों का बड़ा महत्व है। प्रज्ञा व्यायाम में अनेक योग आसनों के उपयोगी अंशों का समावेश किया गया है साथ ही स्काउटिंग में प्रयुक्त होने वाली कवायदों का भी इसमें सम्मिश्रण है। इस आधार पर उसे ऐसी प्रक्रिया कह सकते हैं, जिसे एक शब्द में सर्वोपयोगी कहा जा सके।

योग व्यायाम की मुद्राएँ चित्र सहित समझाई गयी हैं। पन्द्रह निर्देशों (काशन) में व्यायाम की एक शृंखला पूरी होती है। चित्रों के साथ शब्दों में निर्देश संख्या छपी है। जहाँ दो निर्देशों में समान मुद्राएँ बनती हैं, वहाँ एक ही चित्र में दो निर्देश क्रमांक डाल दिए गए हैं। इसी क्रम से व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूप से यह व्यायाम किया जना चाहिए।

सामूहिक व्यायाम के लिए एकत्रित व्यक्तियों को स्थान की लम्बाई-चौड़ाई देखते हुए पंक्तियों में खड़ा करना चाहिए। इसके लिए ड्रिल कवायदों के ढंग से खड़े होने, घूमने नम्बर बोलने, पंक्ति बनाने, चलने आदि का भी अभ्यास एन० सी० सी० या स्काउटिंग के ढंग से कराया जा सकता है। यह ध्यान रहे कि दो व्यक्तियों के बीच में इतना अन्तर रहे कि व्यायाम करने में हाथ-पैर परस्पर टकरा न जायें। इसके लिए आधा दाँये अथवा आधा बाँयें मोड़कर पी० टी० कराने का सामान्य नियम अपनाया जाने योग्य है। व्यायाम के समय लड़के-लड़कियों के कपड़े शरीर पर उसके अनुरूप ही हों। काशन बोलने के स्थान पर सीटी बजाकर भी सामूहिक अभ्यास कराया जा सकता है। व्यायाम प्रारम्भ करने से पूर्व प्रशिक्षार्थियों को सावधान की मुद्रा में खड़े करके एक-एक नम्बर बोलकर पूरा व्यायाम कराया जाये।

(१) धीरे-धीरे श्वाँस खींचना प्रारम्भ करें—दाहिने हाथ को दाहिने बाजू, बाँयें को बाँयें बाजू से एक साथ ले जाते हुए दोनों पैर पंजों के बल खड़े होते हुये ऊपर की ओर खींचे। गर्दन व मुँह का आकाश की ओर खींचें। यह चारों क्रियायें एक साथ होनी चाहिये। यह समूचा व्यायाम 'ताड़ासन की तरह सम्पन्न होगा (चित्र नं. १) की तरह सहज स्थिति में जितनी देरी में यह क्रिया सम्भव होकर लेने के बाद अगली क्रिया के लिये अगला नम्बर बोला जाय।

चित्र नं० १

(२) श्वाँस-छोड़ते हुये सामने की ओर झुकना हाथों को 'पाद हस्तासन' की तरह (देखिये चित्र नं. २) सामने की ओर से ले जाते हुए दोनों हाथों से दोनों पैरों का स्पर्श करें—सिर को पैर के दोनों घुटनों से स्पर्श करने का प्रयास करें इसे सामान्य रूप से जितना कर सकें उतना ही करें क्रमशः अभ्यास से यही स्थिति बनने लगती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

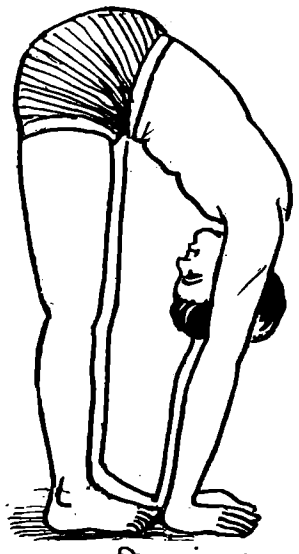

चित्र नं० २

(३) हस्त पादासन की स्थिति में सीधे जुड़े दोनों पैरों को घुटनों से मोड़ें, दोनों पंजे पीछे की ओर ले जाकर उन पर वज्रासन की तरह बैठ जायें दोनों हाथ दोनों घुटनों पर कमर से मेरुदण्ड तक सीधे श्वांस सामान्य (देखिये चित्र नं० ३) यह एक प्रकार से पूर्व व्यायाम की आराम देह या विश्राम की अवस्था है।

चित्र नं० ३

(४) घुटनों पर रखे दोनों हाथ पीछे की तरफ ले जायें। हाथ के पंजे पैरों की एड़ियों पर रखें। अब धीरे-धीरे श्वांस खींचते हुए उष्ट्रासन की तरह सीने को फुलाते हुये आगे की ओर खींच दें। गर्दन भी आसमान की ओर खींचें। इससे पेट, पेडू, गर्दन, भुजाओं सब का एक साथ व्यायाम हो जाता है। (चित्र नें ४)

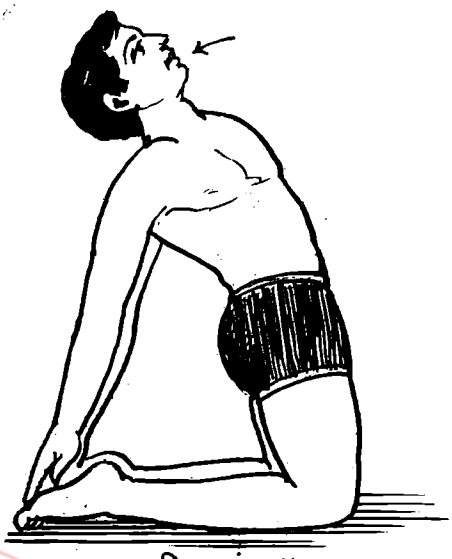

चित्र नं० ४

(५) अब श्वांस छोड़ते हुये पहले की तरह पंजों पर बैठने की स्थिति में आयें साथ ही दोनों हाथ पीछे पीठ की ओर ले जायें व दायें हाथ की उँगलियाँ बायें हाथ के पोरों में फँसाकर धीरे-धीरे दोनों हाथ ऊपर की ओर खींचे और मस्तक पृथ्वी से स्पर्श कराने का प्रयास करें। (चित्र नं. ५)

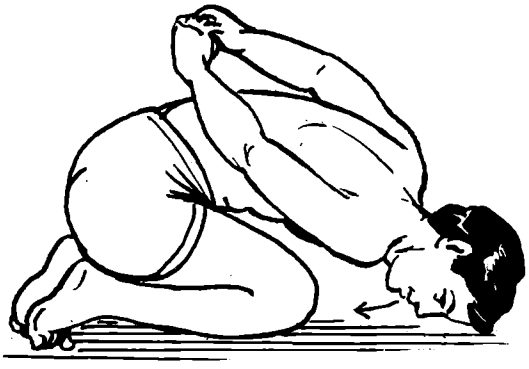

चित्र नं० ५

(६) अब धीरे-धीरे सिर व हाथ उठायें तथा श्वांस खींचते हुए हाथ-सीधे ऊपर ले जायें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बैठक में कोई परिवर्तन नहीं केवल आँखें ऊपर करें और हाथों के पंजे देखने का प्रयत्न करें (चित्र नं. ६) यह अर्द्ध ताड़ासन की स्थिति है।

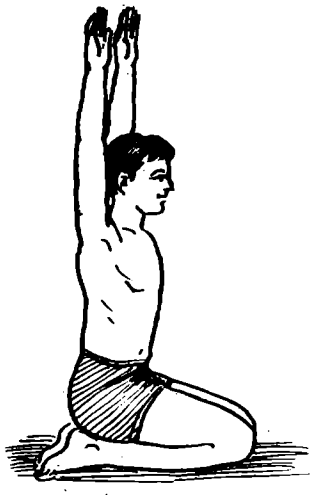

चित्र नं० ६

(७) श्वांस छोड़ते हुए कमर झुककर मस्तक धरती से लगायें। दोनों हाथ लम्बे करके जितने आगे ले जा सकें ले जाकर धरती से सटा दें। शशांक आसन की तरह (चित्र नं० ७)

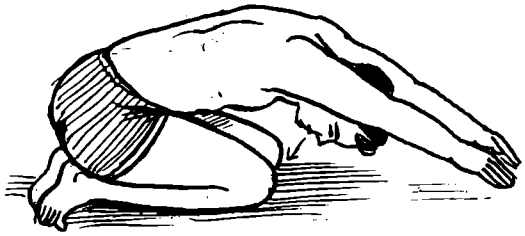

चित्र नं० ७

(८) सात की मुद्रा को खोले ८ की तरह हाथों को सीधा और पैरों को पीछे ले जाकर श्वांस खींचते हुए सीने को गर्दन को ऊपर की ओर तानें। यह क्रिया भुजंगासन से मिलती-जुलती होगी।

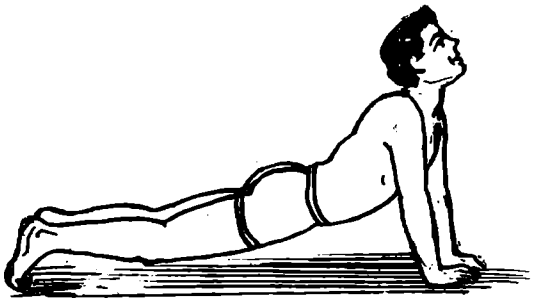

चित्र नं० ८

(९) नम्बर आठ की दण्ड मुद्रा में कोई परिवर्तन नहीं केवल गर्दन पूरी तरह बायीं ओर मोड़ने की क्रिया सम्पन्न की जायेगी।

(१०) नौ की तरह गर्दन पूरी तरह दाहिनी ओर मोड़ी जायेगी। इसके बाद व्यायाम जहाँ से प्रारम्भ किया गया था, उसी स्थिति में लौटने की क्रियायें प्रारम्भ होती हैं। उसमें नया कुछ नहीं करना, ग्यारहवीं मुद्रा-मुद्रा सात की तरह बारहवीं छठी मुद्रा की तरह। मुद्रा तेरह मुद्रा दो की तरह और मुद्रा चौदह मुद्रा एक की तरह होगी। अन्तिम पन्द्रहवें क्रमांक में पहले वाली सावधान स्थिति में पहुँचने पर एक योग व्यायाम पूरा हो जाता है। काशन बोलते हुए यह प्रारम्भ एक बार के अभ्यास से होगा। पीछे क्रमशः संख्या बढ़ाई जाती रहेगी। एक साथ एक गति से ड्रिल के अनुशासन का पूरी तरह पालन करायां जाये जो उस अनुशासन में फिट न बैठते हों वे व्यक्तिगत अभ्यास करें। सामूहिक समस्वरता नष्ट न करें।

उपरोक्त व्यायाम शृंखला का प्रचलन प्रज्ञा संस्थानों के चलाने वाले विद्यालयों से आरम्भ किया जा रहा है। पर इस प्रक्रिया को इसी सीमा तक सीमित नहीं रहने देना चाहिए। गली मुहल्लों में बच्चों बड़ी महिलाओं के छोटे-छोटे प्रशिक्षण क्रम बनाने चाहिए। प्रायः एक सप्ताह के अभ्यास में शिक्षार्थी उस प्रक्रिया को भली प्रकार सीख जाते हैं और फिर स्वयं ही बिना भूल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किये करने लगते हैं। घर परिवार के सभी छोटे बड़ों को इनका अभ्यास कराया जाय। नियत समय पर, नियत स्थान पर एकत्रित होकर, उन्हें करने कराने का क्रम चले तो उससे दर्शकों तक में उत्साह उत्पन्न होता है और नये लोग उसमें सम्मिलित होते चले जाते हैं। एक व्यायाम अध्यापक एक ही दिन में समय अदल-बदल कर विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण क्रम चलाता रह सकता है। अपने-अपने हिस्से के क्षेत्र बाँटकर यदि प्रज्ञा परिजन इस बिस्तार के लिए कटिबद्ध हों तो उसे अपनाने में उत्साह प्रकट करते हुए अनेकानेक लोग देखे जा सकते हैं।

उभरते उत्साह को अन्यान्य खेल-कूदों ड्रिल कवायदों प्रतिस्पर्धाओं में विकसित करना चाहिए। जहाँ सम्भव हो लाठी चलाने की शिक्षा देकर आत्मरक्षा और साहसिकता का भाव उत्पन्न करना चाहिए। बड़े और खर्चीले टूर्नामेण्ट एवं खेल समारोह होते रहते हैं। हमें गाँव-गाँव छोटे रूप में व्यायामशाला की स्थापना करते हुए उसे समग्र स्वास्थ्य रक्षा प्रशिक्षण का ज्ञान एवं अभ्यास करा सकने जितने स्तर तक विकसित करना चाहिए।

प्रज्ञा अभियान का मूल उद्देश्य सत्प्रवृत्ति संवर्धन एवं लोक मानस का परिष्कार है। इस प्रयोजन के लिये लोकसेवियों को ही नहीं, सामान्य जन समुदाय को भी अपनी प्रखरता सम्पादन की साधना करनी होगी। साधना, उपासना की बात बाद में आती है। पहले अपना शरीर व मन मजबूत बना लिया जाय तो दुष्प्रवृत्तियों से जूझना, समाज परिकर में रहते हुए हर अवांछनीयता से मोर्चा ले सकना संभव है। योग व्यायाम द्वारा शरीर स्वास्थ्य संवर्धन तथा प्राणायाम के माध्यम से मेधावर्धन का शिक्षण क्रम तो केन्द्र में चलता ही है, लाठी, स्काउट, ड्रिल, कैम्प, फायर, जिम्नाशियम के जब सुलभ प्रयोग प्रज्ञा संस्थानों में चलते रह सकते हैं। ब्रह्मदण्ड के म,ध्यम से ड्रिल—आत्मरक्षा भी एक ऐसा माध्यम है जो जूडो-कराटे का विकल्प बन सकता है। उत्साह उभरने लगे तो क्रमशः व्यायामशाला की सुनियाजित व्यवस्था करनी चाहिए एवं वहाँ नियमित अभ्यास क्रम चलते रहना चाहिए। बच्चे, किशोर, बड़े-बूढ़े सबके लिए सुगम योग व्यायाम तो कम-से-कम वहाँ किया ही जा सकता है। धीरे-धीरे अभ्यास बनने पर बड़े स्तर के प्रयोग हाथ में लिए जा सकते हैं। जीवनी शक्ति बढ़ाने के लिए इससे श्रेष्ठ उपक्रम कोई नहीं हो सकता।

एशियाड, ओलम्पिक में छोटे-छोटे देशों के खिलाड़ी गजब की फूर्ती दिखाते देखे जाते हैं। हमारे यहाँ यह खदान-टकसालं अब मृत प्राय-सी है। इसे फिर जीवन्त करना होगा, तभी स्वस्थ्य-सभ्य नागरिकों से भरा-पूरा समाज बन पड़ेगा, जिसकी कि हम सब धरती पर स्वर्ग के रूप में कल्पना करते आए हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शारीरिक स्वच्छता पर पूरा ध्यान रखें

निरन्तर स्वस्थ और निरोग रहने के लिये हर प्रकार से साफ-सुथरा रहना बहुत आवश्यक है। गन्दगी वह चाहे बाहर की हो अथवा भीतर की आरोग्य के लिये नितान्त हानिकारक है। रोग के कीटाणु गन्दगी में ही पैदा होते, पलते और पनपते हैं। स्वच्छता एक दैवी गुण है। इससे स्वास्थ्य, उत्साह, शक्ति, उल्लास और प्रसन्नता के साथ सौन्दर्य और आकर्षण की उपलब्धि होती है। व्यक्तित्व उज्ज्वल और प्रभावशाली बनता है। इसके विपरीत गन्दगी अस्वास्थ्य, मलीनता और जुगुप्सा का कारण होती है।

गन्दगी से ढके अच्छे-अच्छे व्यक्तित्व प्रभावहीन होकर निःसार बन जाते हैं। आचार्यों ने स्वच्छता को जीवन और मलीनता को मृत्यु का पर्याय बतलाता है। स्वच्छता में लक्ष्मी और मलीनता में दारिद्रय का निवास रहता है। स्वच्छता मनुष्य का प्रथम और आधारिक कर्त्तव्य है। जिसने पूरी तरह शुद्ध और स्वच्छ रहना सीख लिया, उसने मानो एक बड़ी उपलब्धि करली।

स्वच्छता के क्रम में सबसे पहला स्थान शरीर का है। जिसका शरीर हर प्रकार से शुद्ध और साफ रहता है, उसका मन प्रसन्न और आत्मा सतेज रहती है। उसकी बुद्धि प्रखर और स्मृति तीव्र हो जाती है। अच्छे धुले और चमकीले कपड़े पहने रहने से ही कोई स्वच्छ नहीं हो जाता। गन्दे शरीर पर अच्छे और साफ कपड़े भी अशोभनीय लगते हैं। कोई मलमल अथवा रेशम का साफ-सुथरा कुरता या कमीज पहने हो और उसके गले में पसीने और मैल की काली-काली रेखायें बनी हों, हाथ-पैरों पर मैल की पर्त जमी हों, बालों में धूल और कानों के आस-पास गर्द इकट्ठी हो तो उस पर उस सुन्दर और साफ कुरते कमीज की क्या शोभा ?

दाँतों में मैल जमा हों, आँखों में कीचड़ भरी हो, मुख से गन्दी हवा और शरीर से पसीने की गन्ध निकल रही हो तो ऐसी व्यक्ति को, साफ-सुथरे वस्त्र पहने होने पर भी आस-पास बिठाने में संकोच करेंगे। सुन्दर-से-सुन्दर वेश-भूषा और व्यक्तित्व भी शारीरिक गन्दगी के कारण घृणास्पद बन जाते हैं। गन्दे आदमी को समाज में कोई पसन्द नहीं करता, फिर चाहे वह विद्वान्, धनवान् अथवा कलाकार ही क्यों न हो ? समाज में घृणा और अवमानना से बचने के लिये मनुष्य को हर प्रकार से साफ-सुथरा रहना चाहिये।

शारीरिक शुद्धता एवं स्वच्छता के लिये स्नान का बहुत महत्त्व है। स्नान शारीरिक स्वच्छता का सबसे उपयोगी और सरल तरीका है। इसलिये मनुष्य को नित्यनियम से स्नान करते रहना चाहिये। तथापि जो स्नान विधिपूर्वक ठीक से नहीं किया जाता, उससे उसका प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। खूब मलमल कर विमल स्नान करना ही स्नान करने के उद्देश्य को पूरा करता है। यों तो अधिकांश लोग नित्य नियम से स्नान करते हैं। यहाँ तक कि स्नान किये बिना पानी तक नहीं पीते, किन्तु क्या वे स्नान का उद्देश्य पूरा करते हैं ? ऐसे लोग शीघ्रता से उल्टा-सीधा दो-चार लोटा पानी सिर पर डालकर छुट्टी पाते हैं। बहुधा देखा जाता है कि उनके कूल्हे, कमर और हाथ-पाँव के टखने और एड़ियाँ बिना भीगी रह जाती हैं। इस प्रकार का सूक्ष्म स्नान, स्नान का कोई प्रयोजन पूरा नहीं करता।

स्नान करने का अर्थ है शरीर का अंग-प्रत्यंग ठीक तरह से धोकर साफ करना। ऐसा विमल स्नान पानी के स्पर्श मात्र से पूरी नहीं होता। उसके लिये या तो कोई जलाशय हो अथवा किसी बड़े बर्तन में ढेर-सा पानी लेकर बैठा जाये और स्नान किया जाय। अंगों पर पानी डालकर उन्हें अलग-अलग खूब रगड़कर साफ किया जाये। नहाते समय यदि अंग प्रक्षालन के लिये यदि एक तौलिया भी काम में लाया जाये तो अच्छा रहेगा। हाथ से रगड़ने से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर का मैल उस तरह साफ न होगा, जिस तरह तौलिया की सहायता से रगड़कर नहाने से। यदि नित्य न सही तो कम-से-कम सप्ताह में दो-तीन बार साबुन तो लगाया ही जाना चाहिये। साबुन के स्थान पर दही, मट्ठा और मिट्टी का भी प्रयोग बतलाया गया है, शरीर को एक बार भिगोकर उस पर साबुन लगाकर पहले खूब मलना चाहिये। उंगलियों, गाइयों, जोड़ों और पार्श्वों को साबुन के साथ रगड़कर साफ कर लेना चाहिये और तब पानी डाल-डाल कर साबुन का झाग और उसके साथ मिला मैल धो डालना चाहिये।

इस प्रकार खूब अच्छी तरह मल-मल कर नहाने के बाद शरीर का अंग-प्रत्यंग अच्छी तरह किसी सूखे कपड़े अथवा निचोड़े हुये तौलिया से पोंछ डालना चाहिये। यह क्रम केवल गरमी या बरसात में ही नही जाड़ों की ऋतु में भी पूरी तरह चलाना चाहिये। इस प्रकार परिश्रम और पूर्णरूपेण किया हुआ जाड़ों का स्नान गरमी अथवा बरसात के स्नान की अपेक्षा अधिक आनन्द एवं लाभदायक होता है। स्नान के बाद गन्दे कपड़े कभी नहीं पहनना चाहिये। जहाँ तक हो सारे कपड़े दूसरे-तीसरे दिन धोते रहना चाहिये और नीचे पहने जाने वाले, बनियान और लंगोट आदि तो नित्य प्रति ही धोने चाहिये। नहाने के बाद बिना धोये अण्डरवियर तो कदापि नहीं पहनना चाहिये। इस प्रकार जब आप खूब अच्छी तरह से पूरा स्नान कर स्वच्छ कपड़े पहनेंगे, तब आपको एक अपूर्व उल्लास और आनन्द की अनुभूति होगी। मन प्रसन्न और आत्मा पर पवित्रता की प्रतिक्रिया होगी।

ऋषियों ने आवश्यकता के अनुसार स्नान के छः प्रकार बतलाये हैं—

'नित्यं नैमित्तिकं काम्यं क्रियांगं मलकर्षणम्।
क्रिया स्नानं तथा षष्ठं षोढा स्नानं प्रकीर्तितम्।।

नित्य, नैमित्तिक, काम्य किसी धर्मक्रिया का अंग स्वरूप, मैल को हटाने वाला और क्रिया स्वरूप। स्नान के यह छः प्रकार कहे गये हैं।

प्रतिदिन प्रातःकाल शौचादि के पश्चात् और भजन-पूजन से पूर्व किया जाने वाला स्नान 'नित्य' कहलाता है। मुर्दा, चाण्डाल, गन्दगी आदि के संसर्ग के कारण किया जाने वाला स्नान "नैमित्तिक" होता है। पुण्य आदि नक्षत्रों में कामनापूर्वक किया जाने वाला स्नान "काम्य"। देवोपासना या पितृ-श्राद्ध आदि के अवसर पर किया जाने वाला स्नान "क्रियांग"। शरीर की स्वच्छता के लिये किया जाने वाला स्नान "मलकर्षण" और किसी सरिता अथवा तीर्थ आदि में सविधि स्नान करना क्रिया स्नान" कहा जाता है।

यद्यपि इन छहों प्रकार के स्नानों में स्वास्थ्यदायक नियमों का समावेश किया गया है तथापि पाँचवाँ 'मलाकर्षण' स्नान ही वह स्नान है, जो शारीरिक स्वच्छता के लिये अपेक्षित है और जिसकी विधि ऊपर बताई गई है। अन्य प्रकार के स्नानों में स्वच्छता से अधिक पवित्रता का दृष्टिकोण। साथ ही विज्ञजनों ने स्नान के पानी के विषय में भी व्यवस्था दी है। सबसे प्रथम महत्त्व गंगा का है, तत्पश्चात् क्रम से नदी, झरना तालाब और कुएँ के पानी से स्नान करना अधिक लाभदायक बतलाया गया है। इसी बात को चिकित्सा-वैज्ञानिकों ने इस प्रकार एक वाक्य में ही कह दिया है कि बन्द अथवा ठहरे जल की अपेक्षा खुले और बहते जल में स्नान करना अधिक लाभदायक है। इसका मुख्य कारण यह है कि जो विद्युत शक्ति उन्मुक्त जल में जाग्रत रहती है, वह बन्द अथवा बँधे जल में नहीं रहती। अब इनमें से जो भी सुविधा जिसे हो उसका उपयोग करना चाहिये। किन्तु हर दशा में स्नान खूब अच्छी तरह रगड़-रगड़ कर ही करना चाहिये।

सांगोपांग स्नान सभी अंगों का एक साथ मार्जन करने की विधि है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे अंग हैं, जिनकी सफाई नित्य ही पृथक् रूप से करनी चाहिये। यह अंग हैं, दाँत, मुँह, नाक और आँख। एक तो स्नान करते समय इनको ठीक से पृथक् रूप से साफ नहीं किया जा सकता, दूसरे इनकी सफाई ऊपर से सम्भव भी नहीं।

दाँतों की सफाई के लिये केवल उंगली से रगड़ना भर ही पर्याप्त नहीं है। यद्यपि अनेक लोग मंजन और टूथपेस्ट आदि का प्रयोग किया करते हैं, तब भी दाँतों की सफाई के लिये दातौन का उपयोग सबसे उत्तम है। अपने यहाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नीम की दातौन सबसे अच्छी और उपयोगी बतलाई गई है। यह मिल भी आसानी से जाती है और इसमें कीटनाशक तत्व भी विद्यमान् रहता है। दातौन को दाँतों से चबाकर उसके सिरे पर ब्रुश जैसा बना लिया जाता है। इससे दाँतों का व्यायाम भी होता है और उससे रगड़ कर दाँत का हर हिस्सा अच्छी प्रकार साफ किया जा सकता है। साथ ही उसका रस दाँतों और मसूड़ों में लगकर उनको कीटाणु और रोग रहित बना रहता है। नीम के अतिरिक्त अन्य प्रकार के पेड़ों के दातौन भी उपयोगी बतलाये गये हैं। विष्णु स्मृति में दातौन सम्बन्धी पूरा विधान देते हुये इस प्रकार लिखा है।

"न मधुरम्, नाम्लम्, नोर्द्ध्वशुष्कं, न शुशिरम्। न प्रतिगंधि, न पिच्छिलम्, न दक्षिणाभि, मुखम्। अद्यच्योदंमुखः प्राङ्मुखोवा। वटासनार्क, खदिरकरंज, वदर सर्ज्ज निम्बारि मेदापा मार्ग मलती ककुभ बिल्वा नामन्यतमम्। कषाय तिक्तं कटुकञ्च।"

दातौन, मधु, अम्ल, ऊपर से सूखी, मुरझाई दुर्गन्ध युक्त और पनीली न होनी चाहिये। दक्षिण की ओर मुँह करके दातौन न करें, उत्तर या पूर्व की ओर करें। बड़ आसन, आम (मदार), खदिर (खैर), करंज, बेर सर्ज, नीम, अरिमेद, अपमार्ग, मालती, ककुभ और बेल के वृक्ष की दातौनों में से कोई एक करनी चाहिये। दातौन कसैली, तिक्त या कटु स्वाद वाली होनी चाहिये।"

दातौन के विषय में नारादादि ऋषियों का निर्देश है कि वह आठ अंगुल लम्बी और छिलका सहित ही लेनी चाहिये। मंजनों और टुथपेस्टों की अपेक्षा दातौन का व्यय नगण्य ही है। फिर आजकल बाजार में बिकने वाले मंजन आदिक अधिक विश्वास भी नहीं होते। जहाँ नित्य-ताजा दातौन न मिल सके, वहाँ दातौनों को पानी में भिगोकर रक्खा और काम में लाया जा सकता है।

जीभ को उंगली से साफ किया जा सकता है। साथ ही दातौन को बीच से फाड़कर उसकी जीभी भी की जा सकती है। अच्छा तो यही है कि दोनों समय के भोजन के बाद दातौन करना चाहिये नहीं तो प्रातःकाल शौच से निवृत्त होकर तो इसे नियमित रूप से करें ही। मुँह को पूरी तरह से साफ रखने के लिये बार-बार न तो कोई चीज खानी चहिये और जब-जब खाई जये तो मुख को खूब धो डालना और कुल्ला कर डालना चाहिये।

नासा रन्ध्रों की सफाई, सिनक और पानी चढ़ाकर और उंगली डालकर खूब अच्छी तरह की जानी चाहिये। श्वाँस के साथ उसमें बहुत-सा गर्द-गुबार जाकर जमा हो जाता है, जिससे उसमें बहुत तरह की गन्दगी जमा हो जाती है। नाक की सफाई नित्य प्रति बहुत आवश्यक है। नाक का सबन्ध फेफड़ों से है। यह श्वाँस लेने के एक मात्र साधन भी हैं। यदि इनमें गन्दगी रह गई तो वह श्वाँस के साथ अन्दर जाकर विविध व्याधियाँ पैदा कर सकती हैं।

शरीर में आँखों के महत्त्व से कौन इनकार कर सकता है ? साथ ही यह सबसे कोमल अवयव होता है। इनकी सफाई भी विधिपूर्वक की जानी चाहिये। एक साधारण विधान तो कुल्ला करते और मुख धोते समय इनको हल्के-हल्के रगड़कर साफ करने का है ही। किन्तु इतने मात्र से ही इनकी पूरी सफाई नहीं हो जाती। इनका यथाविधि प्रक्षालन किया जाना चाहिये। हाथ में लेकर बार-बार पानी के छींटे मारकर तो इनका प्राक्षालन होता ही है, किन्तु यह अपर्याप्त है। किसी चौड़े बर्तन में साफ पानी भरकर उसमें आँखों को डुबाकर बार-बार खोलना, मूदना चाहिये। इस प्रकार आँखों का पर्याप्त और समुचित प्रक्षालन हो जायेगा। इस काम के लिये पानी जितना शुद्ध और स्वाभाविक रूप से शीतल होगा, उतना ही लाभ होगा।

शरीर को स्वस्थ और स्वच्छ रखने के लिये जो व्यक्ति इन कतिपय नियमों का नियमित रूप से पालन किया करता है, वह न केवल आरोग्य का सुख ही पाता है दीर्घजीवी भी होता है। स्वच्छता सिद्ध करने के लिये शारीरिक स्वच्छता का प्रथम क्रम है। जो मनुष्य पूरी तरह से शरीर स्वच्छ रख सकता है, वह आगे चलकर आन्तरिक स्वच्छता में भी सफल हो सकता है। शारीरिक स्वच्छता को शारीरिक का तप माना गया है। इसका भौतिक लाभ है सो तो है ही, आध्यात्मिक लाभ भी कम नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता। शारीरिक स्वच्छता में प्रमाद करना पाशविक वृत्ति का परिचय देना है। इसलिये मनुष्य को न तो इसमें प्रमाद करना चाहिये और न इस ओर उदासीन ही होना चाहिये।

अपने लिये उपयुक्त वातावरण चुनें या विनिर्मित करें

आवश्यक नहीं कि मनुष्य जहाँ जन्मे वहीं मरे भी। सुविधाओं और आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये अनेकों को अपने क्षेत्र छोड़ने पड़ते हैं। धन उपार्जन या सुविधा-साधनों पर ध्यान केन्द्रित करके हमें ऐसे क्षेत्रों में रहने के लिये आकर्षित नहीं होना चाहिये, जहाँ की जलवायु उपयुक्त नहीं है। कारण कि जलवायु का प्रभाव स्वास्थ्य पर तो पड़ता ही है, स्वभाव से भी उसका गहरा सम्बन्ध रहता है। शीतलता गर्मी की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। यदि अवसर मिले तो अपने निवास के लिये ऐसे क्षेत्र का चयन करना चाहिये, जिसमें हरियाली, शान्ति एवं शीतलता हो। ठंडे क्षेत्र प्राकृतिक न हों तो छोटे देहातों में प्रयत्नपूर्वक वैसी स्थिति पैदा की जा सकती है।

वातावरण का मानव स्वास्थ्य एवं स्वभाव पर पड़ने वाले प्रभाव का मूर्धन्य विज्ञानियों ने गहन अध्ययन किया है और पाया है कि ठण्डे क्षेत्रों में प्रकृति के साहचर्य में रहने वाले व्यक्ति अपेक्षाकृत अधिक श्रमशील, सहनशील, बहादुर तथा आत्मनिर्भर होते हैं। उनकी सृजनात्मक क्षमता बढ़ी-चढ़ी होती है। इसके विपरीत गर्म जलवायु में निवासरत व्यक्तियों का स्वास्थ्य दुर्बल एवं उत्साह शिथिल होता है। सुविधा-साधनों की अधिकता रहते हुये भी ऐसे क्षेत्रों के बच्चे निरुत्साही तथा स्वभाव से चिड़चिड़े देखे गये हैं। कनाडा के ठण्डी जलवायु में निवास करने वाले उत्कू एस्किमों के सम्बध में उनका कहना है कि वातावरण के प्रभाव के कारण उनके बच्चे ६ वर्ष की उम्र से ही संवेदनाशील बन जाते हैं। उनकी प्रसन्नता-प्रफुल्लता सहिष्णुता देखते ही बनती है। अभिभावक या माता-पिता शान्त स्वभाव के होते हैं, जिसका अनुकूल प्रभाव बच्चों पर भी पड़े बिना नहीं रहता।

केन्या की गूजी जातियाँ अधिकतर अपना समय घर के बाहर गरमी वाले क्षेत्रों में व्यतीत करती हैं। उनमें भावनात्मक एकात्मकता एवं रचनात्मक प्रवृत्ति का प्रायः अभाव पाया जाता है। अनुसंधानकर्त्ता विशेषज्ञों का कहना है कि गरमी के कारण वे सदैव तनाव एवं आवेश से ग्रस्त रहते हैं और लड़ते-झगड़ते रहते हैं। पुलिस आँकड़े भी बताते हैं कि ठण्डे क्षेत्रों की अपेक्षा गरमी वाले क्षेत्रों में अपराध अधिक होते हैं। मनोविज्ञानी भी जलवायु को मनुष्य की शारीरिक-मानसिक शक्ति को उत्तेजित करने में सहायक मानते हैं। उनके अनुसार जिन योरोपीय देशों ने अपने देश के शीतलता वाले क्षेत्रों में व्यावसायिक एवं औद्योगिक इकाइयाँ खड़ी कीं और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न बने, वहाँ भी वातावरण में काफी गरमी बढ़ जाने के फलस्वरूप जन मानस में अपराधी वृत्ति बढ़ी है।

स्वास्थ्य विज्ञानियों के अनुसार वर्षा के दिनों में जब कभी आकाश में इन्द्र धनुष दिखाई देता है तो सूर्य की किरणें भिन्न-भिन्न रंगों को पार करती हुई दृष्टिगोचर होती हैं। मानव मस्तिष्क पर उनका गहरा प्रभाव पड़ता है। शरीर में हार्मोन रसायनों की वृद्धि होती है और उत्साह उमड़ता है।

अभी तक हमने केवल जलवायु के प्रभाव का अध्ययन जीव विज्ञान के आधार पर किया है और माना है कि गरमी वाले क्षेत्रों में पसीना निकालकर तथा शीत प्रधान क्षेत्रों में कँपकँपी सहते हुये असाधारण वातावरण को सह सकते हैं। इन्हीं उतार-चढ़ावों की प्रतिक्रिया को झेलने के लिये असीम सुविधा साधन भी जुटा लिये गये हैं। फिर भी उक्त वातावरण के अनुसार हमारा स्वभाव एवं व्यवहार वैसा ही बन जाता है। कभी-कभी तो वातावरण परिवर्तन का दुर्बलों पर विशेष एवं बलिष्ठों पर कम प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कई बार यह प्रतिकूलता शारीरिक और मानसिक दृष्टि से बहुत कष्टकारक होती है। अमेरिकी वैज्ञानिक विशेषज्ञों ने इसका उपाय बताते हुये कहा है कि हर मौसम में प्रातःकाल ठंडे पानी से स्नान करने की आदत यदि डाली जा सके तो इससे इतनी सहनशक्ति पैदा हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाती है कि जलवायु परिवर्तन के विपरीत प्रभाव से आसानी से बचा जा सकता है।

यदि किसी का आजीविका उपार्जन हेतु कार्य क्षेत्र घने शहरों, आग उगलते कारखानों, शोरगुल, घिचपिच या सड़न भरा है, तब तो उसे बदलना ही चाहिये। काम करने के लिये कुछ घण्टे ऐसे गरम क्षेत्र में रहना पड़े तो भी प्रयत्न करना चाहिये कि रात्रि बिताने के लिये, बच्चों को खेलने के लिये हरा-भरा, पानी की बहुलता वाला ग्रामीण क्षेत्र ही चुना जाय। भले ही उसमें आने-जाने की कठिनाई ही क्यों न उठानी पड़े। जिनका कारोबार शीतल क्षेत्र में है, उन्हें तो भाग्यवान ही कहना चाहिये।

सर्दी से डरिये नहीं, वह हमारा मित्र है

प्रकृति के सभी मौसम अपने-अपने स्थान पर महत्त्व रखते हैं किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि सर्दी या ठण्ड जीवधारियों के लिये विशेष आवश्यक है। बाह्य दृष्टि से देखें तो लोग ठण्ड के खिलाफ दिखाई देते हैं किन्तु यह केवल बहम ही है। वे सर्दी को प्राण घातक समझ कर उससे बचने का यत्न करते हैं, चारों ओर से बन्द अंधेरे कमरों में रहते हैं, हाथ, मुँह, कान इत्यादि खूब ढक लेते हैं पाँवों में मौजे और मोटे जूते डाट लेते हैं, घूमने से डरते हैं, समझते हैं कि सर्दी लगी कि सिर दर्द, निमेनिया, खाँसी जुकाम हो जायेगा। सर्दी के लिये ऐसी भ्रमात्मक धारणायें बेबुनियाद हैं। उन्हें मनोजगत् से निकाल देना चाहिये।

प्रकृति चाहती है कि मानव शरीर सर्दी, गर्मी, बरसात का पानी—सभी को सहने का आदी बने। ठण्डी हवा से मनुष्य का शरीर तरोताजा बनता है। जाड़ों की प्रातःकालीन मंद समीर मानव शरीर के लिये संजीवनी बूटी सदृश है। शरीर को उससे दूर रखना मानों उसे निर्जीव बनाना है। जाड़ों की इस हवा से शरीर का रंग निखर आता है। कमजोर फेंफड़े सबल हो उठते हैं। काम में जी लगता है। गर्मी में मनुष्य को जो आलस्य की केंचुल घेरे रहती है, वह उतर जाती है और मनुष्य स्फूर्ति से भरापूरा हो जाता है। वह इस सर्दी के प्रताप से दुगुना-तिगुना काम अच्छी तरह कर सकता है। बड़े-बड़े लेखक तथा ग्रन्थकारों ने जाड़ों के प्रभाव में अपनी अनमोल कृतियों की रचना की है। उनका कहना है कि जाड़ों के प्रभात में कल्पनायें अधिक आती हैं, सूर्य एक विचित्र आभा से भर जाता है, मन में नव प्रेरणा जाग्रत होती है और प्रकृति हमें लिखने के लिये दावत देती है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से सर्दी सबसे उत्तम मौसम है। जाड़ों में व्यायाम करने में जितना आनन्द आता है, उतना शायद कभी नहीं आता, थकान जल्दी नहीं होता। सर्दी से शरीर की रग-रग मजबूत होती है, बल और जीवन मिलता है। जठराग्नि प्रबल होती है और पुराने रोग तक थोड़ी-सी देखभाल से आसानी से चले जाते हैं। ठण्ड के दिनों में मनुष्य की पाचनशक्तियाँ बढ़ जाती हैं। वह खूब कसरत कर अच्छी तरह भोजन पचा सकता है। गर्मियों में जो घृणित बीमारियाँ हो जाती हैं—हैजा, बदहजमी, जी मिचलाना, सिरदर्द, पेट में भारीपन—इस मौसम में बिल्कुल नहीं देखे जाते। अक्सर लोग ताकत की दवाइयों से शक्तिवर्द्धन करने का प्रयत्न करते देखे जाते हैं। यदि सर्दियों में घी, मक्खन, दूध, सब्जियाँ अच्छी मात्रा में लें और कसरत करें तो खूब मजबूत और बलशाली बन सकते हैं। स्वास्थ्य-शक्ति तो प्रकृति में यत्र-तत्र बिखरी पड़ी है। सर्दियों में उसका वर्ष भर के लिये संचय किया जा सकता है।

सर्दियों में मनुष्य बुरी तरह अपने आपको कपड़ों से लाद लेते हैं। शरीर को पर्याप्त हवा नहीं लगने देते। यह सर्वथा अनुचित है। शरीर पूरी तरह खुला हुआ रखा जाये और शरीर को सर्दी सहन करने की आदत डाली जाय। प्रकृति के विरुद्ध आहार-विहार से अनेक घृणित रोग उत्पन्न हो जाते हैं। सर्दी की धूप का रासायनिक महत्त्व है। उसमें अनेक विटामिन प्रस्तुत हैं। धूप-स्नान बच्चे, वृद्ध और युवकों के लिये समान रूप से उपयोगी हैं। अतः प्रातःकाल की असह्य सर्दी को छोड़कर शेष समय में हमें चाहिये कि भारी जूते और मोटे कपड़े फेंककर पतले और हल्के वस्त्र पहिनें। ईश्वर करे, सर्दी का भय लोगों के हृदय में से निकल जाय और वे उसकी महत्ता को समझें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन के लिये सर्दी भी उपयोगी है

जब-जब शरीर में गर्मी बढ़ती है तब-तब देखा जाता है कि शरीर का पोषण होना बन्द हो जाता है और जीवनी शक्ति घटने लगती है। गर्मी की वृद्धि शरीर के अन्दर बढ़े हुये विष का सूचक है। विष की वृद्धि का कारण अप्राकृतिक जीवन है। जीवन के साथ खान-पान, आहार-विहार का सम्बन्ध है। आज का मानव खान-पान और आहार-विहार की स्वाभाविकता को छोड़ता जा रहा है और उसी अस्वाभाविकता के कारण शरीर में गर्मी की वृद्धि होती है। अस्वाभाविकता में पोषित होने के कारण बढ़ी हुई गर्मी को सहन करने की शक्ति शरीर में रह नहीं जाती, ऐसी अवस्था में या तो अनेकों रोगों का सामना करना पड़ता है या मृत्यु की तैयारी करनी पड़ती है।

जीवन का आरम्भ यदि स्वाभाविकता से हुआ हो, शरीर का प्रत्येक ऋतु के साथ स्वाभाविक सम्पर्क हो, न अधिक गर्मी से उसमें तपन को स्थान मिले और न अधिक सरदी से शीत को—समशीतोष्ण की अवस्था में यदि जीवन का निर्माण हो तो फिर न शोक होगा न रोग और फिर मृत्यु की वेदना भी उसे नहीं सहनी पड़ेगी।

अस्वाभाविक जीवन की विस्तृत व्याख्या की तो आवश्यकता नहीं है, पर बिना सामान्य चर्चा किये उसकी वास्तविकता भी न समझी जा सकेगी।

ठंड के दिनों में शरीर को कपड़ों से ढक कर रखने की आदत का सम्बन्ध स्वाभाविक जीवन से नहीं है। बरफ का उपयोग या खुसकी टट्टियाँ का उपयोग भी स्वाभाविक जीवन में नहीं गिना जा सकता। भोजन का सम्बन्ध जीवन रक्षण से है न कि स्वाद से। स्वाद का आश्रय लेने पर ऐसी अनेकों चीजों का प्रयोग करना पड़ता है, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से शरीर को हानि पहुँचाती हैं और मन की शान्ति को भी खो देती हैं, इनमें से मसालों का नाम सर्वोपरि लिया जा सकता है। चाय, काफी और कोको भी उसमें गिने जा सकते हैं। ये सारी की सारी चीजें शरीर में अनावश्यक गर्मी की वृद्धि करती हैं, जिसका परिणाम या तो आमाशय को भोगना पड़ता है या हृदय और मस्तिष्क को। वात-तन्तुओं पर तो इनका बड़ा घातक असर होते देखा गया है। आमाशय, हृदय, मस्तिष्क और वाततन्तु यह सब मिलाकर ही तो मनुष्य को एक गतिवान मशीन बनाते हैं। मशीन के एक भी पुरजे में विकार आ जाय या अपने काम में शिथिल पड़ जाय तो सारा शरीर बेकार हो जाता है।

विकारी और शिथिल यन्त्र को ठीक करने के लिये उसकी बढ़ी हुई ऊष्मा कम करने की आवश्यकता होती है और सरदी ही ऐसा उपयुक्त तत्व है, जो कि मानव के जीवन और यन्त्रों को सन्तुलित एवं कार्यकारी बनाता है। गर्मी में शीतोपचार द्वारा मनुष्य फिर से स्वाभाविक स्थिति प्राप्त कर सकता है। गरमी कम हो जाने के कारण रोगी भारी शान्ति प्राप्त करता है शरीर विकार शून्य हो जाता है।

यह बतलाने की तो आवश्यकता है ही नहीं कि बढ़ी हुई गर्मी शरीर में बढ़े हुये मल या विष के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। सरदी इस मल को बाहर निकालती है इसलिये शीतोपचार द्वारा बेचैनी का दूर होना स्वाभाविक है।

बीमारी की हालत में पथ्य और संयम की परवाह किये बिना बीमार औषधियों का सेवन करना आरम्भ कर देता है। औषधियाँ रोग को तो दूर नहीं करतीं लेकिन रोग के प्रभाव से शारीरिक यन्त्रों को मूर्च्छित कर देती हैं, जिससे रोग का ज्ञान नहीं होता पर शरीर भीतर ही भीतर खोखला होता जाता है, जीवनी शक्ति क्रमशः घटती जाती है और तब कभी भी एक साथ विस्फोट हो जाने की सम्भावना रहती है। इसलिये औषधि उपचार को छोड़कर प्राकृतिक उपचार की ओर ध्यान देने की अत्यन्त आवश्यकता है। प्राकृतिक उपचार न सिर्फ रोग को दूर करना है बल्कि शरीर में रोग का प्रवेश ही न हो इसके लिये भी उसे उपयुक्त बना देता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राकृतिक उपचारों में मिट्टी और पानी के उपचार प्रमुख हैं। ये दोनों ही शीतोपचार कहलाते हैं। इन उपचारों की एक मात्र मंशा मनुष्य को प्राकृतिक बनाने की है। प्रकृति ने जो- जो चींज मनुष्य को दी हैं मनुष्य उसको विकृत बनाये बिना ही उपयोग करे और उसका रस ले। विकृत बनाकर उपयोग करने पर तो वह विकारों को निमन्त्रण देता ही है।

लेकिन बीमार के लिये सरदी अहितकारी है ऐसा समझने वालों की संख्या अधिक है। आमतौर से सभी यह जानते हैं कि शीतकाल मनुष्य की पाचन शक्ति को बढ़ा देता है। जिस प्रकार पाचन शक्ति के लिये शीतकाल जीवन देता है, उसी प्रकार शीतोपचार मानव जीवन के लिये शान्तिदाता है।

मिट्टी और पानी की तरह हवा भी मनुष्य को प्रकृति की देन है। जो रोगी खुली हवा का उपयोग करते हैं, वे जानते हैं कि उन्हें कितनी आसानी से शान्ति मिल जाती है ? क्योंकि हवा भी श्वांस-प्रश्वांस द्वारा शरीर गत मल को बाहर निकालकर रोग को दूर कर देती है। पानी की भीगी चादरें उढ़ाकर अनेक लोगों के बुखार को दूर किया गया है, मिट्टी की पट्टी लगाकर अनेकों की बेचैनी भगाई गई है। ये सब क्या है ? सभी प्राकृतिक उपचार, सभी अन्दर की अनावश्यक गर्मी के शत्रु।

शरीर में सहने की शक्ति महान् है, जैसी इसकी आदत डाल दी जायेगी, पड़ जायेगी। अस्वाभाविक आदत पड़ जाने से जीवन भी अस्वाभाविक हो जाता है और ऐसे लोग प्रायः रोग के घर बने रहते हैं इसलिये रोग से बचने का उपाय ही है स्वाभाविक जीवन बिताना।

स्वाभाविकता की पहचान यही है कि जिसके बिना भी जीवन बना रह सकता है, उस वस्तु का उपयोग न हो, स्वाद के लिये कोई वस्तु न खाई जाये और दिखावे के लिये कुछ न पहना जाये। जिन्दा रहने और जीवनी शक्ति को बनाये रखने की ही दृष्टि से जीवन के प्रत्येक व्यवहार को करना चाहिये। जैसे-जैसे मानव इस पर अमल करता जायेगा, वैसे-वैसे ही उसका जीवन स्वाभाविक और प्रकृति के अनुकूल बनता जायेगा। उसकी सहन शक्ति बढ़ती जायेगी। मन में शान्ति रहेगी और सरदी के साथ प्रेम करना आरम्भ हो जायेगा। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सरदी उसे हर हालत में उपयोगी दिखाई देगी।

गर्मियों में स्वस्थ कैसे रहें ?

गर्मियों में पूर्ण स्वस्थ रहना सतर्कता, संयम एवं सुनिश्चित दिनचर्या पर निर्भर है। जहाँ सर्दी मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये उपयोगी है, वहाँ गर्मी में मनुष्य की प्राणशक्ति का ह्रास होता है, भूख कम लगती है, पाचनक्रिया मन्द पड़ जाती है, प्यास अधिक लगती है और कार्य करने को मन नहीं करता। गर्म मुल्कों के निवासी आलसी होते हैं। इसी प्रकार गर्मी आलस्य उत्पन्न करती है। पूर्ण स्वस्थ व्यक्तियों को भी अपना स्वास्थ्य और कार्यशक्ति बनाये रखने के लिये विशेष प्रयत्न करना चाहिये। यह मौसम बीमारियों को निमन्त्रण देने वाला है।

अपनी दिनचर्या निश्चित कर लीजिये। किस समय आपको शय्या त्याग करनी है ? किस तथा कितने समय तक विश्राम, दैनिक, कार्य, मनोरंजन, स्नान करना है ? मित्रों से मिलने जाने का क्या समय है ? प्रायः देखा जाता है कि सुनिश्चित योजना बनाकर चलने वाले व्यक्ति, गर्मियों में भी उतना ही कार्य कर लेते हैं, जितना सर्दियों में कर पाते हैं।

कार्यशक्ति का भण्डार शक्ति है। शक्ति आपके भोजन, पाचन तथ रक्त की शुद्धता पर निर्भर है। गर्मी का प्रभाव पेट पर सीधा पड़ता है। भूख कम हो जाती है, प्यास अधिक प्रतीत होती है। अतः यह ध्यान रखिये कि पाचन यन्त्र कैसा कार्य कर रहा है ? आप निरन्तर आठ-आठ घण्टे परिश्रम पर तो चिपके नहीं रहते ? कहीं आप मिठाई, पकवान, पूड़ियाँ, चाट-पकौड़ी के कुचक्र में तो नहीं पड़ गये हैं ? आंतों में विकार गरिष्ठ भोजन तथा अधिक खाने से उत्पन्न होता है।

अग्राह्य और असंतुलित भोजन, चाय, सिगरेट, पान इत्यादि, कब्ज उत्पन्न करते हैं। अधिक मिर्च मसालों, चाय, तम्बाकू तथा बाजार के बने सुस्वादु पदार्थों से पाचन-क्रिया ठीक नहीं हो पाती। खट्टी डकारें, भारी तबियत, सिर दर्द,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपच, आलस्य हैजा इत्यादि का कारण गलत आहार है। अतः गर्मियों में अपने भोजन के विषय में सावधान रहें। हल्का, गर्म भोजन, चपाती, दाल, फल हरी सब्जी, सलाद इत्यादि लिया करें। तम्बाकू, चाय, मिर्च मसाले, बाजार की मिठाइयाँ, गले-सड़े फल, बासी भोजन, मांस इत्यादि राजसी आहार त्याग दें। सब्जियों तथा फलों का खूब प्रयोग करें।

गर्मी में जल का बड़ा महत्त्व है। अधिक गर्मी के कारण शरीर को अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। कुछ तो जल गुर्दों के द्वारा तथा कुछ पसीने के रूप में बाहर निकल जाता है। जो व्यक्ति गर्मी में कम जल का प्रयोग करते हैं, उन्हें कब्ज की शिकायत रहती है। सारहीन मल पदार्थ वृहत् आँत में पहुँचकर शुष्क हो जाता है। परिणाम-स्वरूप बड़ी आंत को अपना कार्य सुचारु रूप से संचालन करने के लिये यथेष्ट जल नहीं मिल पाता। अतः पर्याप्त जल लिया करें। शौच जाने से पूर्व एक गिलास शीतल जल पीने से कोष्ठबद्धता दूर होती है। यदि कब्ज जीर्ण हो गया हो, तो गुनगुने जल में एनीमा लेना उत्तम है। रक्त को स्वस्थ सक्रिय और नियन्त्रित रखने के लिये दिन में ढाई सेर से साढ़े तीन सेर तक जल प्रत्येक मनुष्य को पीना चाहिये।

गर्मी का त्वचा के ऊपर बुरा प्रभाव पड़ता है। खुश्क हवा और गर्मी के कारण त्वचा की स्वाभाविक स्निग्धता और चमक विलुप्त हो जाती है और हाथ, मुँह, होठ इत्यादि सूख जाते हैं। रंग काला पड़ जाता है। फोड़ा-फुन्सी त्वचा का सौन्दर्य नष्ट कर देते हैं। पसीना न पोंछने के कारण त्वचा के छिद्र बन्द हो जाते हैं। अतः पानी पर्याप्त पिएँ। छाछ, दही, मक्खन, दूध का खूब प्रयोग करें, तो त्वचा की चिकनाहट एवं रंग निखर आता है। रात्रि में मुँह धोकर मक्खन, कोल्ड क्रीम या वैसलीन चुपड़ लेने से लाभ होता है। माथे या गर्दन पर यदि बारीक लाल-लाल दाने निकल आयें, तो कब्ज का इलाज करें और सफेद चन्दन घिसकर इन पर मला करें।

गर्मियों में स्नान का बड़ा महत्त्व है। थोड़ी-सी कसरत कर स्नान करें। नदी या ताल में तैरकर स्नान करने से व्यायाम और मनोरंजन दोनों ही प्राप्त हो जाते हैं। स्नान के पश्चात् खुरदरे तौलिये से शरीर को रगड़ने से शारीरिक शक्ति और नव-स्फूर्ति प्राप्त होती है। त्वचा के रन्ध्र साफ हो जाते हैं। स्नान के लिये प्रातः या सायं का समय उत्तम माना गया है। भोजन के बाद तुरन्त स्नान न करें।

वह समय जब ब्रह्म-मुहूर्त होता है, प्राणशक्ति प्रदान करने वाला है। अतः सुबह चार-पाँच बजे टहलने, कसरत करने या भागने दौड़ने के लिये रखिये। सायंकाल भी टहलकर आप अपनी शक्ति सौन्दर्य बनाये रख सकते हैं। संसार के प्रायः सभी दीर्घजीवी मनुष्य तपस्वी सूर्योदय से पूर्व उठकर घूमने-फिरने के आदी रहे हैं। भेषज्य-सार में लिखा है—"ब्राह्म-मुहूर्त में उठने वाला सौन्दर्य, लक्ष्मी, स्वास्थ्य, आयु आदि वस्तुओं को प्राप्त करता है। शरीर कमल-सा सुन्दर हो जाता है।"

वर्षा की ऋतु-चर्या व बरती जाने वाली सावधानियाँ

वर्षा अपने साथ, हर्ष, उमंग और वर्ष की सुखद सम्भावनायें तो लाती ही है, पर साथ ही स्वास्थ्य गड़बड़ाने की व घर की वस्तुओं के खराब होने की परेशानियाँ भी साथ लाती हैं, नीचे कुछ उपयोगी जानकारियाँ दी जा रही हैं, जो घर-गृहस्थी और पारिवारिक स्वास्थ्य, सुव्यवस्था के लिये महत्त्वपूर्ण हैं।

हमारे देश में मद्रास के कुछ भाग को छोड़कर गर्मी के मौसम में ही वर्षा आरम्भ हो जाती है। इस मौसम में वर्षा आरम्भ होने के साथ ही सीलन छा जाती है ओर सूर्य की धूप उतनी तेज नहीं लगती, सो लोग समझने लगते हैं कि गर्मी बीत गई है किन्तु वस्तुतः ऐसा नहीं होता। जब वर्षा की उमस होती है, तब हवा बिल्कुल बन्द हो जाती है और शरीर से पसीना बहाने वाली तथा अत्यन्त कष्टदायक गर्मी पड़ती है, किन्तु जब वर्षा हो जाती है, तो सब तरफ सीलन हो जाती है। फलस्वरूप वायु दूषित हो जाती है। वातावरण की अनियमितता के कारण गीलेपन और सील भरी हवा के कारण शरीर में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अग्नि मन्द हो जाती है। ऐसी स्थिति में गरिष्ठ भोजन करना शरीर के लिये अत्यन्त कष्टदायी सिद्ध होता है।

वर्षा ऋतु में मलेरिया, जुकाम, सर्दी, खाँसी आदि के प्रकोपों से बचने के लिये कभी-कभी उपवास, नीबू की शिकन्जी, जलाहार, फलाहार, रसाहार या एनीमा द्वारा पेट की सफाई अवश्य करते रहना चाहिये। स्फूर्तिदायक व्यायाम तथा तेल मालिश भी करते रहना इस ऋतु में विशेष लाभप्रद होगा।

शारीरिक श्रम उतना ही करें जितना आसानी से हो सके। अधिक परिश्रम से स्वास्थ्य को हानि होती है। प्रातःकाल स्नान करके तौलिये से शरीर को रगड़कर स्वच्छ कर लेने से मन हल्का हो जाता है, शरीर प्रफुल्लित रहता है। धूप में घूमना, वर्षा में भीगना, नदी-तालाब के किनारे सोना, सीली जगह में रहना, नदी-तालाब का गन्दा पानी पीना, नंगे पाँव गीली जगह में घूमना स्वास्थ्य के लिये हानिप्रद होता है। इनसे सदैव बचना चाहिये।

जहाँ तक हो सके दिन में सोने की आदत से बचना चाहिये। इससे कफ की वृद्धि होती है और शरीर के नैसर्गिक स्रोतों का अवरोध होता है। चिकित्साशास्त्रियों के अनुसार वर्षा ऋतु के प्रभाव से शरीर की अग्नि मन्द हो जाती है ग्रीष्म ऋतु में शुष्क अन्न तथा जल के प्रयोग से शरीर में वात एकत्रित हो जाता है। इन दिनों के अनमेल प्रभाव के फलस्वरूप हमारी पाचन शक्ति कमजोर हो जाती है, जिससे कई रोगों अपच, वमन, हैजा, अतिसार बरसाती फोड़े आदि का आक्रमण आसानी से हो जाता है।

ऐसी स्थिति में इन संचित विकारों को निकालने में नीबू का प्रयोग विशेष हितकारी माना गया है। नीबू के अतिरिक्त अन्य मौसमी फल जो वर्षा ऋतु द्वारा हमें प्राप्त होते हैं, सभी के प्रयोग से भी शरीर को बल, शक्ति, कान्ति तथा सौन्दर्य प्राप्त होता है। किन्तु इन सब में नीबू का स्थान सर्वोपरि है। ऐसे रोगों को दूर करने में नीबू अमृत तुल्य सिद्ध होता है, परन्तु नीबू का सेवन अन्न के साथ करने से भोजन अम्लकारक हो जाता है। अतः नीबू का प्रयोग पानी या सब्जी में मिलाकर किया जा सकता है।

वर्षा ऋतु में कड़ुआ, खट्टा, गर्म और पाचन शक्ति बढ़ाने वाला भोजन ही करना चाहिये। पतले, रूखे तथा चिकनाई वाले पदार्थों का सेवन कम कर देना चाहिये या बिल्कुल त्याग देना चाहिये। इस मौसम में शाक-सब्जी व फल बादलों की उमस के कारण पित्त और जलन पैदा करते हैं। अतः गरिष्ठ तरकारियों को बिल्कुल छोड़ देना ही उपयुक्त रहेगा।

वर्षा के दिनों में चैन से रहने के लिये मीठा वात प्रकोपक आहार त्याग कर अन्न के साथ मधु का सेवन प्रारम्भ कर देना चाहिये। फल, नमक, घी, गेहूँ, जौ, पुराना चावल, दाल आदि का सेवन उत्तम रहता है। परवल, सहजना, तोरई आदि हरी सब्जियाँ भी खाई जा सकती हैं।

ऋतु के अनुसार ही अपनी दिनचर्या बना लेने से रोगों का आक्रमण होना सम्भव नहीं होता। अतः वर्षा ऋतु में रोगों से बचने के लिये इसके प्रारम्भ होते ही अपनी दिनचर्या में संशोधन कर लेना चाहिये। इस प्रकार अन्य मौसमों में भी ऋतुनुकूल ही भोजन करने से शरीर निरोग रह सकता है।

बरसात के दिनों में सभी तरफ स्वच्छता रखना अनिवार्य है। घर की नालियों व मोरियों को प्रतिदिन फिनाइल से धोना चाहिये। फर्श का पोंछा लगाने वाले पानी में भी फिनायल घोल देनी चाहिये। ऐसा करने से विषैले कीड़े-मकोड़े पैदा न हो सकेंगे।

घर के आस-पास के गड्ढों को मिट्टी से भरवा देना चाहिये। यदि बड़े पोखर हों तो नगरपालिका को शिकायत पत्र लिखकर भरवाने का इन्तजाम करवाना चाहिये ताकि मच्छरों द्वारा फैलाने वाली बीमारियाँ, मलेरिया, हैजा आदि के आक्रमण से बच सकें। यदि मच्छर हो भी जाये तो मच्छर दानी का प्रयोग करें तथा कमरे में कभी-कभी नीम के पत्तों का धुआँ भी कर दें, जिससे मच्छर भाग जायें।

सभी प्रकार के कपड़ों, बिस्तरों, दालों व अनाजों को कभी-कभी धूप निकलने पर धूप अवश्य दिखा दें ताकि उनकी सीलन व गंध निकल जाये। विशेषतौर पर छाते, बरसातियाँ, चमड़े के जूते, पर्स आदि चीजों को बार-बार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

धूप में सुखा देना चाहिये क्योंकि उनमें फफूँद जल्दी लगती है। पुस्तकों, फाइलों व अन्य कागजात आदि को बरसात के बाद या कभी-कभी बीच में भी धूप लगा देनी चाहिये अन्यथा इनमें दीमक लगने का डर रहता है।

मलेरिया ज्वर से बचाव के लिये नीबू की शिकंजी लाभकारी हैं तथा अधिक भीग जाने पर तुलसी के पत्तों व कालीमिर्च की चाय इस मौसम में बहुत ही उपयोगी है। बरसात के मौसम में अधिकांश कमरों में सीलन की बू आने लगती है। यदि दोनों समय सुगन्धित धूप जला दी जाय तो सीलन की बू तो दूर होगी ही साथ ही अन्य छोटे-मोटे कीड़ों से भी बचाव होगा।

बाजार में बिकने वाली आइसक्रीम, खुले-कटे फल जिन पर मक्खियाँ भिनभिनाती हों तथा बिना ढकी चीजें न खाने के लिये बच्चों को समझाना चाहिये।

चावलों को धूप में नहीं सुखाया जाता। उनको कीड़ों से बचाने के लिये उनमें नमक के छोटे-छोटे ढेले मिला देना चाहिये। इसी प्रकार नमक को सीलन से बचाने के लिये उसमें कुछ चावल के दाने मिला देने चाहिये।

अन्य मसाले तथा अचार, चटनियाँ, पापड़, बड़ियाँ आदि में कीड़ा न लगे इसके लिये इन्हें धूप में सुखाना चाहिये। लकड़ी के बक्सों को भी धूप दिखा देना चाहिये।

खाने-पीने की चीजों का मक्खियों से बचाव करने के लिये रसोईघर में जाली के किवाड़ लगा दें तथा जाली वाली अलमारी में रखें। बाहर रखना हो तो उन्हें जालियों से ढाँप दें।

जहाँ तक सम्भव हो पानी को उबाल कर, ठण्डा कर छानकर पियें, क्योंकि बरसात के कारण जमीन की सभी गन्दगी घुल-घुलकर कुओं तालाबों में जाती है। वैसा ही पानी पीने से हैजा फैलने का भय रहता है। यदि आस-पास में हैजा फैलने की शिकायत हो, तब तो अवश्य ही पानी उबालकर पीना चाहिये।

बजते हुये रेडियो को खोलकर उसके पीछे की ओर मरम्मत न करें या अन्दर के किन्हीं कलपुर्जों से छेड़खानी न करें, क्योंकि जब रेडियो चल रहा होता है तो उसके अन्दरूनी भागों में बिजली का प्रवाह दौड़ता रहता है। इसको सदैव ध्यान में रखना चाहिये। पानी के भीगे हाथों से बिजली के बटन व स्विच को न छेड़ें। सदैव हाथ पोंछकर ऐसी खतरनाक वस्तुओं से अटकें। बिजली के तारों को कभी भूलकर भी कमरे के फर्श, दरी, गलीचों और चाँदनी पर न फैलायें, क्योंकि जब तारों की ऊपरी तह हट जाती है, तो उनके उल्टे-सीधे जुड़ जाने पर सदैव झटका आने का खतरा रहता है। बरसात से भीग जाने पर या नहाते ही ऐसी दशा में बिजली की अँगीठी, रेडियो, स्विच, बिजली के पंखे आदि को नहीं छूना चाहिये। ऐसी दशा में कभी अचानक झटका लग सकता है। गृहपयोगी बिजली के जोड़ों पर अधिक भार न पड़ने दें। एक ही स्विच में ट्रिपल या अधिक उपयोग में आने वाले प्लगों को जोड़ने से प्रायः बिजली के धक्के लगने की घटनायें होती रहती हैं।

बरसात के दिनों में यदा-कदा प्रचण्ड तूफान तथा भयंकर आँधी आते हैं। तेज वर्षा हो जाने पर कई स्थानों के बिजली के खम्भे टूटकर गिर जाते हैं या तिरछे हो जाते हैं। खम्भों का नीचे आ जाना प्रायः बच्चों के लिये एक तमाशा हो जाता है। वे तारों से खेलने के लिये उनके पास जाकर छेड़खानी करने लग जाते हैं। यह बहुत ही खतरनाक हो जाता है। कभी-कभी इस बात को बच्चों के दिमाग में अच्छी तरह बैठा देना चाहिये कि बाजार या स्कूल से आते-जाते वक्त ऐसे खम्भों से दूर रहें। खम्भों को हाथ लगाना मृत्यु को निमन्त्रण देना ही है।

आपके आसपास या अन्यत्र कहीं भी जब भी आप ऐसा देखें, तुरन्त पुलिश, स्टेशन, पंचायत के प्रधान या बिजली घर को शीघ्र ही सूचित कर देना चाहिये ताकि अनजान-लोगों को हानि न पहुँचे।

दीवारों पर लगे हुये पॉकेटों में प्लग के अतिरिक्त कोई अन्य चीज न लगायें। बिजली के सरकारी व निजी तारों पर कभी भी गीले कपड़े न सुखायें और न सुखाने दें। प्रायः महिलायें ऐसे तारों को खाली देखती हैं और कपड़े सुखा देती हैं, यह ठीक नहीं है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गीले मौसम में बिजली की सभी लाइनें चैक कर लेनी चाहिये। कटे हुये नंगे तारों को हटवा देना चाहिये। कटा तथा नंगा तार बिजली के किसी भी कार्य में प्रयोग में न लायें।

आकाश में बिजली की गड़गड़ाहट होते समय तालाब अथवा नदी के अन्दर नहा रहे हो तो तुरन्त ही बाहर आ जाना चाहिये। ऐसे समय में किसी पेड़ का आश्रय भी नहीं लेना चाहिये। बिजली गिरने से वृक्ष गिर पड़ते हैं और लोग नीचे दबकर मर जाते हैं।

वर्षा ऋतु के दिनों में इन सब सावधानियों तथा सतर्कताओं का ध्यान रखा जाय तो वह ऋतु धरती की ही तरह हमारे स्वास्थ्य और व्यक्तित्व को तथा घर और परिवार को भी हरियाली से भर सकती है।

सरदी और जुकाम की चिकित्सा

सरदी जब मनुष्य को लगती है तो वह एक प्रकार की पूर्व सूचना होती है। यदि किसी को सरदी का कुछ असर हो जाये तो उसको तुरन्त यह सोचना चाहिये कि उसके शरीर में कुछ न कुछ गड़बड़ी है, उसके शरीर में कुछ न कुछ विजातीय द्रव्य एकत्र हो गये हैं। इस सिलसिले में यदि हमको इस बात का ज्ञान हो जाये कि शरीर में यह विजातीय द्रव्य कैसे एकत्र होते हैं तो हम सरदी, जुकाम या किसी प्रकार की शिकायत का कारण तुरन्त समझ जायेंगे। शरीर में विषैले विजातीय पदार्थों के बहुत से कारण हैं, जिनमें कुछ प्रमुख यहाँ दिये जाते हैं।

(१) अनावश्यक रूप से अधिक भोजन करना।

(२) अनियमित विटामिन आदि हीन पदार्थ खाना।

(३) व्यायाम का अभाव।

(४) शरीर से गन्दगी दूर करने वाले अवयवों से ठीक रूप से काम न लेना।

(५) शुद्ध वायु का न मिलना एवं दीर्घश्वांस न लेना।

इन सब पर विचार करने से ज्ञात होगा कि एक-दूसरे से कितना अधिक सम्बन्धित है, यदि एक पर भी ध्यान नहीं जायेगा तो परिणाम शरीर के लिये कितना भयावह और घातक होगा।

ऊपर संक्षेप में यह बतलाया जा चुका है किस प्रकार शीत का प्रारम्भ होता है, जब सरदी का आरम्भ हो जाता है तो शरीर से अनावश्यक मल निकलने लगता है। यदि यह मल रुक जाये तो शरीर की दशा अत्यन्त खराब हो जाने की सम्भावना रहती है। किन्तु हम लोगों में एक दोष यह है कि जब शीत के कारण हमारे शरीर से अनावश्यक मल निकलने लगता है, तब भी हम सतर्क नहीं होते और उसको निकालने के बजाय शरीर में संचित होने देते हैं। इसके बाद ही जुकाम होता है और मल के निकलने का एक मार्ग मिल जाता है। अतः हमें यह ज्ञात हो गया कि सरदी और जुकाम दोनों का एक ही कारण है और यदि हम अनावश्यक मल को बहिष्कृत कर दें, तो सर्दी और जुकाम दोनों को अच्छा कर सकते हैं। देखने-सुनने में तो यह तरीका बड़ा सुगम सा जान पड़ता है किन्तु यह जान लेना चाहिये कि जब तक जुकाम का दूर करने के लिये दृढ़ निश्चय न कर लिया जायेगा, तब तक सरदी बनी रहेगी इसके लिये अपनी रहन-सहन, खान-पान, तौर-तरीके में परिवर्तन करना पड़ेगा। जो इसके लिये तैयार नहीं होगा यह सदा सरदी जुकाम से आक्रान्त रहेगा। जब तक ये परिवर्तन न होंगे, तब तक लाभ होने की कोई आशा नहीं और यदि इस दिशा में समुचित प्रयत्न न किया जायेगा तो आगे चलकर बहरेपन के भी लक्षण शुरू होने लगते हैं। अतः इस मामले में विशेष सतर्क रहने की आवश्यकता है।

अब हम यहाँ इन सब बातों पर विचार करेंगे। ऊपर जो कारण इन दोषों के बतलाये गये हैं, उनमें पहले दो को ही लीजिये ? कितने लोग इस बात को नहीं जानते कि हमें भोजन जीवित रहने के लिये करना चाहिये। वे तो केवल स्वादेन्द्रिय को तृप्त करने के लिये भोजन करते हैं। उनको इस बात का तनिक भी पता नहीं कि हमारे आचार हमारे आहार के ही अनुसार बनते हैं। जैसा हमारा आहार रहेगा वैसे ही हम बनेंगे। इसलिये यह बहुत बुरा है कि अनावश्यक रूप में पेट को स्वादेन्द्रिय तृप्त की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने के लिये भरा जाये। यह बात जान लेनी चाहिये कि शरीर के लिये अल्प चीजों की ही आवश्यकता हुआ करती है। शरीर को पुष्ट करने के लिये प्रोटीन, स्टार्च, मेद, चीनी, लवण एवं विटामिन को प्रायः न्यूनता देखी जाती है। इनकी प्राप्ति अधिकतर ताजे फलों, तरकारियों और सलाद से होती है। एक साधारण औसत दरजे के अच्छे भोजन में प्रोटीन, स्टार्च, मेद और चीनी कम से कम मात्रा में रहते हैं और शाक, तरकारियाँ और फल अधिक रहते हैं।

इसके अनन्तर व्यायाम का नम्बर आता है। यदि हम थोड़ा अधिक भी खा लें किन्तु नियमित रूप से प्रतिदिन व्यायाम करते जायें तो फिर भी ठीक है। लेकिन एक तो खाने-पीने में ही हम असंयम दिखाते हैं और दूसरे व्यायाम भी नहीं करते और यही बुराई का घर है। शरीर में से विजातीय द्रव्य निकालने में व्यायाम बहुत सहायता करते हैं। जिनको किसी व्यायाम की आदत न हो वे टहलने से आरम्भ करें। कम से कम तीन मील प्रति दिन टहलने से ठीक रहता है। टहलने के समय यह बात ध्यान रखनी चाहिये कि हम व्यायाम कर रहे हैं। खूब लम्बी-लम्बी साँस लें।

अन्त में हम वायु की शुद्धता और अंशतः प्राणायाम पर आते हैं। शुद्ध वायु तो प्राण रक्षा के लिये आवश्यक है ही इसको कौन नहीं स्वीकार करेगा ? किन्तु साथ ही साथ प्राणायाम की आवश्यकता भी कम नहीं है। प्राणायाम का अभ्यास धीरे-धीरे प्रातःकाल करना चाहिये। इससे फेंफड़े, हृदय आदि को अपूर्व शक्ति प्राप्त होती है। इस प्रकार भी लम्बी-लम्बी साँस लिया करें। कुछ ही दिनों में आदत पड़ जायेगी अभ्यास से क्या नहीं सम्भव है ?

यदि इस प्रकार संयमित दिनचर्या और आहार-विहार बने रहें तो प्रथम तो सर्दी-जुकाम जैसी स्थिति पैदा ही नहीं होगी, यदि हुई तो तुरन्त ठीक भी हो जायेगी।

ज्वर आये तो हड़बड़ायें नहीं

ज्वर आते ही घबराना या हड़बड़ा जाना गलत है। प्रकृति एक बारगी पूरी शक्ति लगाकर शरीर में घुसे हुये विजातीय द्रव्य को बाहर फेंकने का प्रयत्न करती है। स्वस्थ जीवाणु विकृत कीटाणुओं को मार भगाने के लिये धीमा नहीं तीव्र संघर्ष खड़ा करते हैं। संघर्ष में जो गर्मी पैदा होती है वही ज्वर है। यह समस्त शरीर पर छाया होता है। इसका अर्थ है समूचे कुरुक्षेत्र में महाभारत छिड़ गया।

ज्वर में बढ़ने वाले ताप के संघर्षशील जीवनी शक्ति की क्षमता एवं कार्यविधि बढ़ती है। स्थानीय रोगों में भी ऐसा होता है। सिर दर्द में सिर गरम हो जाता है और पेट दर्द में पेट। जब फोड़ा निकलता है तो वह स्थान अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक उष्ण पाया जाता है, यह प्रकृति के डाक्टर के द्वारा किया हुआ सशक्त उपचार है। जिनके शरीर में जीवनी शक्ति कम होती है, उन्हें तेज बुखार नहीं आता। टी. वी. के मरीजों को हल्का बुखार रहता है।

लगातार तेज बुखार रहना इस बात का चिन्ह है कि प्रकृति ने विषाक्तता को पूरे जोश के साथ खदेड़ना आरम्भ किया है। यह अपने पक्ष में है, हितकर भी। समयानुसार यह संघर्ष शत्रुओं के परास्त होने पर अपने आप कम हो जाता है। उतावली में तापमान गिराने वाली दवायें नहीं लेनी चाहिये।

गर्मी बढ़ जाने से पसीने या स्वेद द्वारा पानी की मात्रा अधिक निकलती है। इस सफाई में योगदान देने के लिये अच्छा उपचार यह है कि पानी की मात्रा अधिक लेते रहा जाये। जब तक भूख न लगे, तब तक कुछ भी न खाया जाये। सबसे बड़ी बात है कि तेजी का मनोबल बनाये रखा जाय और ज्वर की उलझन की शान्ति पूरी-पूरी पूरा होने दिया जाय।

प्राचीन ग्रीकवासी रोगों को शरीर में तरल पदार्थों में असन्तुलन का परिणाम मानते थे। उनका यह विश्वास था कि ज्वर से रोगी के शरीर में विकृत तरल पदार्थ पकते हैं तथा शरीर को अन्यान्य रोगों से बचाव उत्पन्न होता है। लगभग दो हजार वर्ष तक यह ज्वरोपचार के नाम से जाना जाता रहा तथा इससे सिफलिश टी. बी. एवं मेनिया रोगों को सफलता पूर्वक उपचार किया जा सका।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

१७वीं सदी के मध्य में 'एस्प्रीन' का आविष्कार हुआ इससे ज्वर को शीघ्रातिशीघ्र शान्त करना सम्भव हो गया। ज्वर के दौरान आंशिक कष्टों को न झेलने तथा जल्दी रोग शैय्या से मुक्त होने के उतावलेपन ने एस्प्रीन के प्रयोग का विस्तार कर दिया। ज्वर का अनुभव मात्र होते ही लोग इसका तुरन्त उपयोग करने लगे।

वर्तमान में पुनः अनेकानेक चिकित्साविदों ने अनेक अध्ययन के आधार पर सामान्य ज्वर को अपना समय पूरा करने देने का सुझाव प्रगट किया है। उनकी यह मान्यता बनी है कि यह ज्वर काल को कम कर देती है, एन्टी बायोटिक की क्रियाशीलता को बढ़ाता है तथा संक्रमण के प्रभावों को कम करता है। प्रयोगात्मक रूप में ज्वरोपचार का उपयोग कैन्सर उपचार हेतु भी किया जाता रहा है। संक्रमण से प्रभावित मछली, छिपकली, खरगोश तथा कुत्तों के ऊपर किये गये प्रयोग से यह पाया गया कि जिनके शरीर के तापमान में वृद्धि हुई वे अपने जीवन को कायम रखने में अपेक्षाकृत अधिक हुये।

मिशिगन विश्व विद्यालय के डा० मैथ्यू जे० क्लूजर ने कहा कि व्यक्ति को ज्वर के समय अत्यधिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है। प्रत्येक १० सेन्टीग्रेड तापमान की वृद्धि से शरीर की चयापचय दर में लगभग १० प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है तथा हृदय गति, श्वसन एवं समस्त चयापचय प्रक्रिया में तीव्रता आती है। परन्तु इस खर्चीली प्रक्रिया को भी उन्होंने मानव जीवन के लिये अत्यन्त लाभकारी बताया।

खोज से यह ज्ञात हुआ है कि ज्वर की उत्पत्ति के लिये अनेकों तत्व उत्तरदायी हैं। इनमें से प्रमुख हैं वाइरस, जीवाणु, कवक जीव विष एलर्जन तथा कुछेक औषध। जब शरीर का इम्यून सिस्टम इन बाह्य आगन्तुकों का पता लगा लेता है, तो एक प्रकार का श्वेत रक्त कण अर्थात् मोनोसाइट को क्रियाशील बनाकर इनका सफाया करता है। वस्तुतः ये क्रियाशील मानोसाइट जिन्हें अब मैक्रोफेज के नाम से पुकारा जाता है, इन्डीजेनस पाइरोजेन (इ. पी. नामक हारमोन को स्रवित करते हैं, जो रक्त प्रवाह से यात्रा करते हुये मस्तिष्क संस्थान तक पहुँचाता है। वहाँ यह हाइपोथैलमस क्षेत्र से क्रिया सम्पादित करता है, जिससे शरीर का तापमान बढ़ता है। यह वृद्धि नव परिवर्तन के लिये ही होती है।

मस्तिष्क क्षेत्र में क्रिया करने के साथ-साथ इ० पी० रक्त में लोहा व जस्ता के स्तर को कम करता है। डा० क्लूजर के अध्ययन से यह तथ्य प्रगट हुआ है कि ज्वर के कारण शरीर में लोहे की वृद्धि होती है, जिनकी जीवाणुओं को आवश्यकता होती है, परन्तु ज्वर की वृद्धि तथा लोहा की मात्रा द्वारा दोनों की एक साथ प्रतिक्रिया से उनकी वृद्धि अवरुद्ध हो जाता है।

येल विश्व विद्यालय में भी अध्ययनोपरान्त यह पाया गया कि इन्डोजेनस पाइरोजेन की क्रिया से शरीर में संक्रमण का प्रभाव समाप्त होता है। डा० बोडेक डा० हेरी ए० वर्निस डा० इलिशा अट्किन्स तथा उनके अन्यान्य सहयोगियों ने यह प्रमाणित किया है कि ज्वर के प्रभाव से शरीर में संक्रमण के विरुद्ध सुरक्षा तन्त्र स्थापित होता है रोग निरोधक क्षमता से उत्प्रेरित होकर बाह्य आगन्तुकों पर आक्रमण कर देता है तथा एन्टीबॉडीज को जागृत करता है।

शीत वाइरस से पीड़ित कुछ व्यक्तियों के ऊपर अध्ययन करके देखा गया है, जिन्हें एस्प्रीन प्रदान किया गया था, वे अपने नाक व गला से 'प्लेस्बो' द्वारा उपचारित वर्ग की तुलना में अधिक वाइरस को निकालते रहे। इससे अन्य लोगों के संक्रमित होने की अधिक सम्भावना व्यक्त की गई।

इस प्रकार ज्वर की प्राकृतिक उपचार के रूप में माना जा सकता है। परन्तु यह प्रत्येक रोगी के लिये प्रत्येक काम में लाभकारी नहीं होता। विशेषज्ञों के अनुसार हृदयरोग से पीड़ित तथा नवजात शिशु दीर्घ ज्वर अवधि से अत्यन्त दुष्प्रभावित होते हैं साथ ही अत्यधिक उच्च ज्वर लाभ के स्थान पर हानि ही पहुँचाया है। ऐसी स्थिति में तो ज्वर नियन्त्रण का प्रयास सराहनीय है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अपच से इस तरह बचा जाय

यों तो किसी रोग की उत्पत्ति के पीछे जलवायु, भौगोलिक स्थिति तथा बाह्य वातावरण की प्रतिकूलता का भी हाथ रहता है किन्तु इसका मुख्य कारण पेट की गन्दगी ही होती है। यदि पेट साफ रहे और मलाशय अपना काम ठीक ढंग से करता रहे तो रक्त के साथ शरीर के सारे तत्व अधिकाधिक मात्रा में शुद्ध बनें। स्वास्थ्य इतना प्रबल रहे कि रोग के बाहरी कारण कामयाब ही न हों। शरीर के भीतर रोगों के बनने और पलने का तो प्रश्न ही न पैदा हो।

जिन लोगों की पाचन क्रिया ठीक नहीं रहती बराबर कब्ज अथवा कोष्ठबद्धता की स्थिति बनी रहती है, उनका स्वस्थ रहना सम्भव नहीं वे शरीर सम्बन्धी किसी न किसी परेशानी में फँसे ही रहेंगे। जो लोग अप्राकृतिक अथवा अस्वाभाविक आहार-विहार से अपनी पाचन क्रिया बिगाड़ लेते हैं, उनकी भीतरी दशा बड़ी खराब रहती है। वे बाहर से भले ही हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ दिखाई दें और क्यों न वे खाते-पीते और नियमित रूप से शौच जाते रहें, पर वास्तव में उनका मलाशय गन्दे और सड़े, मल से भरा रहता है, जिससे तरह-तरह के कीटाणु और हानिकारक गैसें उत्पन्न होकर जीवन की आधार रक्त-धारा को दूषित करती रहती हैं। डाक्टरों के मतानुसार ऐसे लोग पाँच फिट लम्बे मल से भरे थेले को लेकर चलते-फिरते और सोते हैं।

जिसके पेट में इतना मल भरा रहे, स्वाभाविक है कि उसके शरीर में विषाक्त-तत्व बनते और इकट्ठे होते रहें और जिनका परिणाम विविध रोगों के रूप में सामने आता रहे। साधारणतौर पर जिन लोगों का जी मालिश किया करता है, मुँह का स्वाद खराब रहता है, शिर में भारीपन रहता है, अंगों में दर्द और भूख की शिकायत रहती है, उनकी परेशानी का मुख्य कारण पेट की गन्दगी ही होती हैं। अधिकाश लोग मूल कारण की ओर ध्यान न देकर ऊपरी इलाज करते और डॉक्टरों के पास भागते-दौड़ते रहते हैं और दवाओं से लक्षणों के दब जाने को ही स्वास्थ्य लाभ मान बैठते हैं।

इस प्रकार कब्ज के आधार, पर मनुष्य को बढ़े-चढ़े भयानक रोग तक लग सकते हैं। खाँसी, जुकाम, मन्दाग्नि, कोष्ठबद्धता, पेचिश, आँव, फोड़ा-फुन्सी दाद, खुजली आदि तो इससे उत्पन्न साधारण रोग हैं, जो आये दिन लोगों को बने रहते हैं। मल के विष से जब आँतें कमजोर और पाचन प्रणाली बिल्कुल खराब हो जाती है तो स्थायी पेचिश हो जाती है, जो आगे चलकर संग्रहणी जैसे असाध्य रोग में बदल जाती हैं। कब्ज शरीर के छोटे-बड़े सभी रोगों का मूल कारण माना गया है। स्वस्थ रहने के लिये इससे हर प्रकार बचे रहने का प्रयत्न करना चाहिये।

कब्ज अधिकतर उन्हीं लोगों को रहता है, जो खानपान के मामले में लुतरे और असंयमी होते हैं। स्वाद के लोलूप लोग बहुधा अपना पेट खराब कर लेते हैं। प्रकृति ने प्रत्येक खाद्य-पदार्थ में सब प्रकार के रसों का उचित सन्तुलन रखा है। किसी वस्तु में ऊपर से किसी रस को मिलाने की आवश्यकता नहीं रहती। लेकिन स्वाद लोलुप लोग हर चीज में न जाने कितना नमक, मिर्च, मसाला, खटाई अथवा शक्कर चीनी आदि मिला लेते हैं। छौंक-बघार से हर पदार्थ का प्राकृतिक स्वाद तथा पोषक तत्व नष्ट कर डालते हैं। ऐसे निस्सार भोजन को खाने से पेट शत-प्रतिशत खराब हो जाता है। पाचन प्रणाली मसालों तथा रसों के प्रभाव से बुरी तरह उत्तेजित होकर हताश-सी हो जाती है और धीरे-धीरे पाचन शक्ति खो बैठती है। प्रकृति ने हर वस्तु में पहले से ही आवश्यक रसों तथा तत्वों का विधान कर रखा होता है, उनमें ऊपर से मिर्च मसाले आदि मिलने की आवश्यकता ही नहीं होती। पदार्थों को यदि शुद्ध सात्विक रूप में खूब चबा-चबाकर खाया जाय तो वे अपना पूरा रस तथा स्वाद प्रकट करते हैं। अधैर्यपूर्वक उल्टा सीधा चबाकर पेट में उतार देने से उनमें, कोई स्वाद अनुभव नहीं होता। इसलिये उसे सुस्वादु बनाने के लिये अबोध लोग जो कि स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों से अनभिज्ञ होते हैं, उनमें ऊपर से मिर्च मसाले अथवा शक्कर चीनी मिला लिया करते हैं। यह चीजें पेट के लिये विजातीय हैं अधिक प्रयोग करने से पेट का खराब हो जाना लाजिमी है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरी गलती भोजन सम्बन्धी हड़-बड़ी भी है। लोग निश्चिन्त पूर्वक यदि भोजन को खूब चबा-चबाकर खायें तो उनका पेट कभी खराब न हो। किया यह जाता है कि भोजन का ग्रास मुँह में डाला और दो-चार बार उसे दाँतों से उल्टा-सीधा कुचला और गले के नीचे उतार दिया। इस तरह अधकचरा भोजन पेट में जाकर ठीक से नहीं पचता और कब्ज पैदा कर देता है। दाँतों का काम आँतों को करना होता है, जिससे वे शीघ्र ही कमजोर होकर अपना अपेक्षित काम भी ठीक से नहीं कर पाती। नियम है कि ग्रास को कम-से-कम बत्तीस बार इस प्रकार चबाना चाहिये कि वह मुख का लार रस मिलकर बिल्कुल द्रव जैसा बन जाये। ऐसा खूब चबाया तथा लार मिला भोजन तब पेट में जाता है तो आँतों को केवल अपना पचाने वाला काम ही करना होता। भोजन को पीसने का काम नहीं करना होगा।

बार-बार खाना भी पेट के साथ दुश्मनी करना है। एक बार के खाने और दूसरे बार के खाने में यदि पूरा भोजन किया गया है तो कम से कम छः-सात घण्टे का अन्तर होना चाहिये। इतने समय में ही पेट पहले भोजन को ठीक-ठीक पचाकर दूसरे भोजन के लिये स्थान रिक्त कर देता है। किन्तु लोग करते यह हैं कि घन्टे-घन्टे आध-आध घन्टे बाद कुछ न कुछ खाते रहते हैं आहार अथवा स्वल्पाहार करते रहते हैं, इससे पेट की ठीक वही दशा हो जाती है—जैसे किसी पतीली में पाव भर दाल या चावल पकने को रखा जाय और जब बीस मिनट बाद वह आधा पक जाय तब उसमें पाव भर कच्ची दाल या चावल फिर डाल दिया जाये। इस प्रकार पकने पर वह भोजन कभी ठीक नहीं बन सकता। उसका आधा भाग कुछ अधिक पका और आधा भाग कुछ कच्चा रह जायेगा, जो स्वाद तथा गुण दोनों दृष्टि से नीरस तथा हानिकारक होगा। ठीक इसी प्रकार अभी थोड़ी देर पहले जो खाया था, वह आधा ही पच पाया कि उसमें उतना ही और कच्चा भोजन डाल दिया। ऐसा अधकचरा भोजन पेट में अवश्य विकार पैदा करेगा। न तो उससे पोषक तत्व एवं रसों का निर्माण होगा और अस्वाभाविक होने के कारण मल भी पूरी तरह से बाहर न निकलेगा, जिससे वह आँव युक्त होकर आंतों में चिपक जायेगा और कब्ज का विकार पैदा कर देगा।

उसी प्रकार आवश्यकता से अधिक तथा गरिष्ठ, अखाद्य एवं विषम भोजन का परिणाम भी कब्ज ही होता है। भोजन की मात्रा इतनी ही रखनी चाहिये कि जिससे आवश्यकता भर पानी पीने पर भी न तो अफरा अथवा आलस्य मालूम हो और न श्वांस पर दबाव पड़े। मैदे से बनी तली, भुनी अथवा जली चीजें माँस, अण्डा, मछली आदि अखाद्य पदार्थ सेवन करने से भी कष्ट रहने लगता है। बहुत-सी चीजें एक साथ खाने से भोजन में विषमता उत्पन्न हो जाती है। ठण्डी, गर्म तथा तर व खुश्क चीजें एक साथ नहीं खाना चाहिये। इनका एक-दूसरे से विरोधी प्रभाव पेट में विकार उत्पन्न कर देता है। भोजन सम, सरल तथा अधिक से अधिक प्रकृति सम्मत ही होना चाहिये।

अश्रम एवं आलस्य भी अपच और अपच से कब्ज उत्पन्न कर देता है। कोई भी भोजन फिर चाहे वह युक्त ही क्यों न हो बिना श्रम के कदापि नहीं पच सकता। जो श्रम करता है भोजन का अधिकार उसे ही है, ऐसा प्रकृति का नियम है। इसके विरुद्ध चलने वाले को वह भोजन हानिकारक बन जाता है। जिनके पास श्रमपूर्ण कार्य न हो वे लोग भोजन को आत्मसात् करने के लिये किसी न किसी प्रकार का व्यायाम करते रहें तभी उनका किया हुआ भोजन ठीक से पच सकता है अन्यथा वह मल तथा कब्ज का विकार पैदा करेगा ही।

इस प्रकार स्पष्ट है कि कब्ज ही सारे रोगों की जड़ है और इसकी उत्पत्ति अयुक्ताहार विहार से ही होती है। इसलिये कब्ज से बचने और सदा स्वस्थ रहने के लिये मनुष्य को आमतौर से उचित समय पर उचित मात्रा में उचित तथा प्रकृति सम्मत आहार करना और उसे पचाने तथा आत्मसात् करने के लिये आवश्यक श्रम अथवा नियमित व्यायाम करते ही रहना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुविधा सम्पन्न होने पर भी थकानग्रस्त क्यों ?

लोग समझते हैं कि थकान अधिक काम करने से आती है अथवा कम पौष्टिक भोजन मिलने से। यह दो बातें भी ठीक हो सकती हैं पर यह नहीं समझना चाहिये कि शक्ति की कमी—शिथिलता—थकान और उदासी के यही दो कारण हैं।

अनेक साधन सम्पन्न व्यक्ति—अमीर—अफसर या ऐसी स्थिति में होते हैं, जिनके पास काम भी उतना नहीं होता और अच्छी खुराक प्राप्त करने में भी कोई असुविधा नहीं होती। फिर भी वे बुरी तरह थके रहते हैं। अपने अन्दर जीवनी शक्ति अथवा क्रिया शक्ति की कमी अनुभव करते हैं और जो करना चाहते हैं—कर सकते हैं—उसमें अपने को असमर्थ अनुभव करते हैं।

दूसरी ओर सामान्य स्तर के अथवा गरीब लोग—गई गुजरी स्थिति में रहने के कारण सुविधा सम्पन्न जीवन नहीं जी पाते। गुजारे के लिये कठोर काम करने पड़ते हैं। अधिक समय तक भी और अधिक दबाव डालने वाले भी। साथ ही गरीबी के कारण उन्हें बहुमूल्य पौष्टिक खाद्य पदार्थ भी नहीं मिल पाते। इतने पर भी वे बिना थके हँसी-खुशी का जीवन जीते हैं—तरो-ताजा रहते हैं और अपनी स्फूर्ति में कमी पड़ती नहीं देखते।

इससे स्पष्ट है कि काम की अधिकता या खुराक के स्तर की कमी ही थकान का मात्र कारण नहीं है वरन् कुछ दूसरी बातें भी हैं, जो आराम और पुष्टि की प्रचुरता रहते हुये भी थकान उत्पन्न करती हैं और दुर्बलता बनाये रहती हैं।

अमेरिका इन दिनों संसार का सबसे अधिक साधन सम्पन्न देश है। वहाँ के लोग जो कमाते हैं उसे खर्च करने और हँसी-खुशी का जीवन जीने के आदी हैं। ऐश आराम के साधन वहाँ बहुत हैं। सवारी के लिये कार, वातानुकूलित कमरे, शरीर का श्रम घटाने के लिये कारखाने में तथा घर में हर प्रयोजन के लिये बिजली से चलने वाले यन्त्रों की वहाँ भरमार है। श्रम और समय को बचाने के लिये आर्थिक उन्नति और वैज्ञानिक प्रगति का पूरा-पूरा उपयोग किया जाता है। आहार की भी वहाँ क्या कमी है ? विटामिन मिनरल, प्रोटीन और दूसरे पौष्टिक तत्वों को भोजन में मिलाने का वहाँ आम रिवाज है। फलों के रस की बोतलें लोग पानी की तरह पीते रहते हैं। थकान से बचने और स्फूर्ति बनाये रहने पर ही विलासी जीवन जिया जा सकता है सो इसके लिये प्रख्यात दोनों कारणों पर वहाँ बहुत ध्यान दिया जाता है। श्रम सुविधा और खाद्य पौष्टिकता में कोई कुछ कमी नहीं रहने देता।

फिर भी वहाँ बुरा हाल है। डाक्टरों के पास आधे मरीज 'थकान' रोग का इलाज कराने वाले होते हैं। इसके लिये प्रख्यात दवा "एम्फेटैमीन स्टीमुलैन्टस्" प्रयोग की जाती है। यह औषधि स्वल्प मात्रा में ली जाती है तो भी डाक्टरों के परिषद ने चिकित्सा प्रयोजन में हर साल काम ली जाने वाली इस दवा की मात्रा साढ़े तीन हजार टन घोषित की है। एक टन—सत्ताईस मन के बराबर होता है। हिन्दुस्तानी हिसाब से यह ३५००×२७ = ९४५०० मन अर्थात् लगभग १२६०००० किलो हुई। उस औषधि के निर्माताओं की रिपोर्ट अलग है। उत्पादकों और विक्रेताओं का हिसाब देखने से प्रतीत होता है कि डाक्टरों के परामर्श से इसका जितना सेवन होता है, उसकी अपेक्षा तीन गुनी मात्रा लोग खुद ही बिना किसी की सलाह से अपने अनुभव के आधार पर स्वयं ही खरीदते खाते रहते हैं। इस प्रकार इसकी असली खपत चार गुनी मानी जानी चाहिये।

खुली धूप, ताजी हवा और अंग संचालन के आवश्यक शारीरिक परिश्रम का अभाव साधन सम्पन्न लोगों की थकान का मुख्य कारण है। इसके लिये बाहर से बहुत आकर्षक लगने वाले दफ्तर वास्तव में बहुत ही खतरनाक है। वातानुकूलित करने—जरा-सी गर्मी में पंखों की तेज चाल—कूलर—खश के पर्दे, बर्फ मिला खाना—जाड़े में हीटर—गरम—चाय—ऊनी कपड़ों का कसाव देखने में बड़े आदमी होने का चिन्ह लगाते हैं और तात्कालिक सुविधा भी देते हैं पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इनका परिणाम अन्ततः बहुत बुरा होता है। त्वचा अपनी सहन शक्ति खो बैठती है। अवयवों में प्रतिकूलता से लड़ने की क्षमता घट जाती है। फलस्वरूप ऋतु प्रभाव को सहन न कर पाने से आये दिन जुकाम-खाँसी—लू लगना—ताप—सिर दर्द—अनिद्रा—अपच जैसी शिकायतें सामने खड़ी रहती हैं। सूर्य की किरणें और स्वच्छ हवा में जो प्रचुर परिमाण में जीवन तत्व भरे पड़े हैं, उनसे वञ्चित रहा जाय तो उसकी पूर्ति 'विटामिन, मिनरल और प्रोटीन' भरे खाद्य पदार्थों की प्रचुर मात्रा भी नहीं कर सकती। साधन सम्पन्न लोग ही तात्कालिक सुविधा देखते हैं और दूरगामी क्षति को भूल जाते हैं। फलतः वह आरामतलवी का रवैया बहुत भारी पड़ता है और थकान तथा उससे उत्पन्न अनेक विग्रहों का सामना करना पड़ता है।

म्युनिख (जर्मनी) की वावेरियन ऐकेडैमी ऑफ लेबर एण्ड सोशल येडीशन' संस्था की शोधों का निष्कर्ष यह है कि—कठोर शारीरिक श्रम करने वाले मजदूरों की अपेक्षा दफ्तरों की 'बाबूगीरी' स्वास्थ्य की दृष्टि से अधिक खतरनाक है।

स्वास्थ्य परीक्षण—तुलनात्मक अध्ययन, आँकड़ों के निष्कर्ष और शरीर रचना तथ्यों को सामने रखकर शोध कार्य करने वाली इस संस्था के प्रमुख अधिकारी श्री एरिफ हाफमैन का कथन है कि कुर्सियों पर बैठे रहकर दिन गुजारना अन्य दृष्टियों से उपयोगी हो सकता है पर स्वास्थ्य की दृष्टि से सर्वथा हानिकारक है। इससे माँसपेशियों के ऊतकों एवं रक्त वाहिनियों को मिली हुई स्थिति में रहना पड़ता है। वे समुचित श्रम के अभाव में शिथिल होती चली जाती हैं फलतः उनमें थकान और दर्द की शिकायत उत्पन्न होती है। रक्त के नये उभार में उठती उम्र में यह हानि उतनी अधिक प्रतीत नहीं होती पर जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है वैसे वैसे आन्तरिक थकान के लक्षण बाहर प्रकट होने लगते हैं और उन्हें कई बुरी बीमारियों के रूप में देखा जा सकता है—कमर का दर्द (लेवैगो) कूल्हे का दर्द (साइटिका), गर्दन मुड़ने में, कंधा उचकाने में दर्द, शिरा स्फीति (वेरी कोजवेन्स) बवासीर, स्थायी कब्ज, आँतों के जख्म, दमा जैसी बीमारियों के मूल में माँस पेशियों और रक्त वाहिनियों की निर्बलता ही होती है, जो अंग सञ्चालन, खुली धूप और स्वच्छ हवा के अभाव में पैदा होती है। इन उभारों को पूर्व रूप की थकान समझा जा सकता है।

बिजली की तेज रोशनी में लगातार रहना आँखों पर ही नहीं आन्तरिक अवयवों पर भी परोक्ष रूप से बुरा प्रभाव डालता है। आँखें एक सीमा तक ही प्रकाश की मात्रा को ग्रहण करने के हिसाब से बनी हैं। प्रकृति ने रात्रि के अन्धकार की आँखों को सुविधा के हिसाब से ही बनाया है। प्रातः सायं भी मन्द प्रकाश रहता है। उसमें तेजी सिर्फ मध्यान्ह काल को ही आती है। सो ही लोग उससे टोप, छाया, छाता, मकान आदि के सहारे बचाव कर लेते हैं। आँखें सिर्फ देखने के ही काम नहीं आतीं, वे प्रकाश की अति प्रबल शक्ति को भी उचित मात्रा में शरीर में भेजने की अनुचित मात्र के रोकने का काम करती है। यह तभी सम्भव है जब उन पर प्रकाश का उचित दबाव रहे। पर यदि दिन-रात उन्हें तेज रोशनी में काम करना पड़े तो देखने की शक्ति में विकार उत्पन्न होना तो छोटी बात है। बड़ी हानि यह है कि प्रकाश की अनुचित मात्रा देह में भीतर जाकर ऐसी दुर्बलता पैदा करती है, जिससे थकान ही नहीं कई अन्य प्रकार की तत्सम्बन्धित बीमारियाँ भी पैदा होती हैं।

कोलाहल और वायुदूषण जीवनी शक्ति घटाने के दो और भी प्रबल कारण हैं, जो घनी आबादी में रहने के कारण सामान्य संयमी, सन्तुलित जीवन जीने वालों पर भी अपना बुरा प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहते। सड़कों पर दौड़ने वाले द्रुतगामी वाहन, रेलें, कारखानों की मशीनें, वार्तालाप, लाउडस्पीकर इन सबसे मिलकर बड़े नगरों में कोलाहल का भयावह अम्बार आकाश में छाया रहता है। कान से प्रत्यक्ष सुनाई पड़ना ही आवश्यक नहीं, रेडियो सक्रियता की तरह खुले कान से या खुली आँख से अनुभव में न आने पर भी यह कोलाहल उत्तेजित ध्वनि कम्पनों के रूप में घुमड़ता है और मस्तिष्क के अन्तः तन्तुओं से टकराकर उन्हें उत्तेजित किये रहता है। यह अदृश्य उत्तेजना कई घण्टों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शारीरिक श्रम करने के बराबर शक्ति खा जाती है और उसका बुरा प्रभाव शरीर से भी अधिक मस्तिष्क पर पड़ता है। कहना न होगा कि उत्तेजित और उद्विग्न मस्तिष्क मानसिक स्वास्थ्य को ही नहीं शारीरिक स्वास्थ्य को भी नष्ट करने का एक बहुत बड़ा कारण है। यह शारीरिक व मानसिक क्षति जो मोटे तौर पर 'थकान' के रूप में दीखती है, बड़े नगरों में कोलाहल पूर्ण वातावरण के कारण भी उत्पन्न होती है।

कोलाहल के अतिरिक्त दूसरा शहरी अभिशाप है—वायु दूषण—घुटन। इन दिनों औद्योगिक विकास के लिये लगे हुये बड़े-बड़े कारखाने वायुमण्डल को बुरी तरह विषाक्त करते हैं। उनसे उड़ता हुआ धुआँ तो आँखों से भी देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त अदृश्य विषाक्त गैसें इतनी अधिक निकलती हैं, जो धुयें से भी अधिक खतरनाक और अधिक मात्रा में होती हैं। मोटरें और रेलें शोर ही नहीं करतीं उनमें जो तेल, कोयला जलता है, वह वायुमण्डल के प्राणप्रद तत्वों को नष्ट और उसे विष से भर देने में विघातक सिद्ध होता है। वायु दूषण की घुटन आरम्भ में नाक और फेफड़ों को अनुभव होती है। पीछे अभ्यास में आ जाने पर उन्हें भी वह वातावरण अखरता नहीं। पर इससे क्या ? प्रकृति की सूक्ष्म सम्वेदन शक्ति तो यथावत काम करेगी ही—उसे तो मजबूर नहीं किया जा सकता। कोलाहल और घुटन उत्पन्न तो मनुष्य कर सकता है पर उसके दुष्परिणामों से बचने में सर्वथा असहाय, असमर्थ है। इसका दण्ड यदि उसे 'थकान' के रूप में भुगतना पड़े तो उसे अप्रत्याशित नहीं समझना चाहिये।

बोस्टन की 'मनोविज्ञान शोध संस्था' के अधिकारी श्री एफ० एन० ऐलन का कथन है कि ओछापन, संकीर्णता, खुदगर्जी और असामाजिक स्वभाव के लोग अपनी ही उधेड़ बुन में लगे रहते हैं। दूसरों के दुःख दर्द में हिस्सा नहीं बटाते—औरों की खुशी में सम्मिलित नहीं होते। अपने अभाव और दूसरे के दुर्व्यवहार का ही हिसाब लगाते रहते हैं। फलस्वरूप उनका मानसिक संस्थान अवसाद-ग्रस्त हो जाता है। उस स्थिति को चिकित्साशास्त्री 'डिप्रेशन' कहते हैं। थकान के कारण डिप्रेशन तो कठोर शारीरिक श्रम करने वालों को हो सकता है पर सरल और सुविधा की स्थिति रहने पर भी थकान आती है, उसका बहुत बड़ा कारण मानसिक अवसाद-डिप्रेशन है। इन दिनों मनुष्य ओछा—स्वार्थी और संकीर्ण एवं असामाजिक होता जाता है। उसकी हँसी-खुशी का दायरा बहुत छोटा हो गया है। फलस्वरूप वह अपने आपको एकाकी, असहाय, दुःखी, निराश एवं उद्विग्न अनुभव करता है। इसे उदात्त आध्यात्मिक दृष्टिकोण का—सामाजिकता का—अभाव ही कहना चाहिये। यह मानसिक रुग्णता मनुष्य को नशा पीने—अपराध करने—या आत्म-हत्या जैसे क्रूर कर्म करने के लिये प्रेरित करती है। ऐसे ही लोग नशा पीकर कुछ समय के लिये अपने आन्तरिक अवसाद से राहत पाने का रास्ता खोजते हैं। थकान तो उन पर छाई ही रहती है।

इस थकानजन्य विभीषिका से बचने के लिये सरल उपाय नहीं मिल सकता। दवादारू इस सम्बन्ध में कोई स्थाई हल नहीं दे सकती। शहरों की चकाचौंध भरी तथाकथित सभ्यता के आकर्षणों से मुँह मोड़कर हमें देहाती और सरल जीवन पद्धति अपनाने के लिये प्रकृति की ओर पीछे लौटना चाहिये। बाबूगीरी, अमीरी, साहबी के ऐयाशी, शान-शौकत के भ्रम जंजाल में फँसकर अपनी मानसिक शान्ति और शारीरिक स्फूर्ति का बलिदान करने से इनकार कर देना चाहिये। बुद्धिमानी इसमें है कि मानसिक शान्ति और शारीरिक स्फूर्ति को लेकर हर्षोल्लास भरा—सरल और शान्त—निरोग और लम्बा जीवन जिया जाये। सामाजिक और उदात्त दृष्टिकोण और नैतिक एवम् लोकोपयोगी क्रिया-कलाप अपनाया जाये।

चिनगारी की तरह चुपके-चुपके सब कुछ जला डालने वाली थकान की बीमारी को छोटा न समझा जाये। उससे पिण्ड छुड़ाने के लिये दवादारू की मृग तृष्णा में न भटका जाय वरन् जीवनयापन के क्रिया-कलाप में आमूलचूल परिवर्तन किया जाये। सुविधापूर्ण स्थिति में रहने वाले के लिये इसी में बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थकावट को हावी न होने दें

लाखों लोगों को थकावट होने की शिकायत रहती है। प्रायः अधूरे मन से कार्य करने पर यह होती है। इससे कुछ लोगों को सुबह उठते ही थकावट जगती है, कुछ को हड्डियों या सिर में दर्द होता है, कुछ को नींद नहीं आती और कुछ लोग अपना कार्य ठीक से नहीं कर पाते। यह काल्पनिक कष्ट है और मन में विभिन्न प्रकार के विचारों के आते रहने से होता है।

सही थकावट मानसिक या शारीरिक अधिक कार्य करने से होती है। अधिक व्यायाम या बीमारी से भी यह होती है। रक्ताल्पता या थायरायड स्राव की कमी से भी होती है। यह इलाज से ठीक होती है और विश्राम से कम होती है। पुरानी थकावट की शिकायतें पीढ़ी दर पीढ़ी चलती है। इससे मनुष्य कारुणिक होता है और उसका मन किसी कार्य में नहीं लगता। अधिकांश लोगों को यह शिकायत होती है। ये मनोरंजन और विश्राम करते हैं परन्तु इससे इनमें ताजगी नहीं आती है।

शारीरिक कष्ट इन्हें कुछ भी नहीं रहता। ये धनी एवं सुखी परिवार वाले होते हुए भी हमेशा दुःखी रहते हैं। अनेक लोगों को अपना व्यवसाय बढ़ाने पर पुरानी थकावट से राहत मिलती है। व्यस्तता बढ़ाने पर भी यह दूर हो जाती है। निठल्ला मन ही नाना प्रकार की चिन्ताओं और थकावटों से भरा रहता है और मनुष्य को अस्त-व्यस्त बनाता है। अनेक लोग छल-कपट एवं स्वार्थ के कारण इससे ग्रस्त होते हैं। जिस कार्य या मनोरंजन में आपकी रुचि न हो, उसे न करें। अरुचिकर कार्यों से मन में अधिक उचाट आती है और थकावट होने लगती है। अपनी रुचि के अनुसार ही पढ़े, लिखें, खेलें, कार्य करें एवं मनोरंजन करें।

परिस्थितियों का सामना करें। इससे थकावट दूर होगी। किसी कार्य या विषय के ज्ञाता हों, तब भी उससे सम्बन्धित पुस्तकें पढ़ें और ज्ञान बढ़ावें। क्रमिक थकावट दूर करने के लिए अग्र तरीके अपनायें—

(१) पूर्ण शारीरिक जाँच करावें। इससे अपनी शंका दूर करने में मदद मिलेगी और आपको रोग न होने का विश्वास।

(२) अपने दैनिक कार्य की प्रातः काल समीक्षा करें। जिन कार्यों में आपकी रुचि हो, उन्हें पहले पूर्ण करें। जिनमें रुचि न हो, उनके कारण ढूँढें। कुछ नई बातें सीखने की जरूरत हो, तो उन्हें सीखें। याद रखें कि मृत्युपर्यन्त मनुष्य सीखने में समर्थ है।

(३) अकेलापन त्यागें, दूसरों के साथ अधिक रहें। कुछ कार्य या मनोरंजन में हमेशा व्यस्त रहें।

(४) प्रतिदिन का कार्यक्रम ऐसा रखें ताकि बीच-बीच में मनोरंजन होता रहे। दिन भर काम करते हों तो शाम को मनोरंजन करें। पूर्वानुमान आनन्ददायक होता है।

(५) विश्राम से थकावट दूर होने की बात गलत है और इसे भूल जावें। जब तक कोई बीमारी न हो, तब तक अधिक विश्राम न करें।

(६) दूसरे लोगों में रुचि बढ़ावें। इससे अपना गम भूल जावेंगे। यह उत्साही जीवन के लिये अत्यावश्यक है।

पोषण कम मिलने और शारीरिक मानसिक दबाव अधिक रहने से भी थकान बढ़ती है। ऐसी दशा में आहार-विहार में परिवर्तन करना चाहिये। दिनचर्या में विश्राम और मनोरंजन की मात्रा बढ़ानी चाहिये।

एक ही प्रकार का काम लम्बे समय तक करते रहने से भी मस्तिष्क थकता है और ऊब आती है। इसलिये थोड़ी-थोड़ी देर बाद उन्हें-बदलते रहने से भी मानसिक प्रवाह में उलट-पुलट होती है और मनोरञ्जन का सहज उपाय निकल आता है। काम रुचिकर हाना चाहिये अथवा जिम्मे आये काम में रस उत्पन्न किया जाना चाहिये। उसको बेगार भुगतने की तरह नहीं वरन् महत्त्वपूर्ण समझकर, प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर करना चाहिये और सफलता पर अपने आपको स्वयं शाबासी देनी चाहिये। थकान मिटाने के यह सुगम उपाय हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अचानक आ धमकने वाला अन्धापन

विश्व स्वास्थ्य संगठन के सर्वेक्षणकर्त्ता चिकित्सा विज्ञानियों ने अपने प्रतिवेदन में कहा है कि इन दिनों अंधत्व बढ़ता जा रहा है। यदि इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया तो शताब्दी के अन्त तक विश्व में ८० करोड़ व्यक्ति अंधता से ग्रसित हो जायेंगे। आँकड़े प्रस्तुत करते हुये उसने बताया है कि इस समय ३० से ४० करोड़ लोग अंधे हैं। इसमें से ८० प्रतिशत तो विकसित देशों में ही हैं। अकेले भारत में अन्धता से ग्रसित लोगों की संख्या १.१० करोड़ है। इसमें से ५५ प्रतिशत लोगों की आँखों की रोशनी मोतियाबिन्द के कारण चली गयी है। प्रतिवर्ष १० लाख से अधिक व्यक्ति अतिरिक्त रूप से अंधत्व की श्रेणी में आ जाते हैं। इस तथ्य की पुष्टि मदुरै स्थित अरविंद नेत्र चिकित्सा संस्थान के मूर्धन्य वैज्ञानिक डा० जी० वेंकटास्वामी ने भी की है।

विशेषज्ञों के अनुसार, अंधता बढ़ने के सम्बन्ध में जहाँ कुपोषण कारण है, वहाँ आखों के रख-रखाव के सम्बन्ध में बरती जाने वाली असावधानी भी कम घातक नहीं है। देखा गया है कि लोग सभी अंग अवयवों की स्वच्छता के सम्बन्ध में बरती जाने वाली सफाई की ओर कम ही ध्यान देते हैं और तब तक उसकी चिन्ता नहीं करते जब तक कि कोई प्रत्यक्ष विग्रह सामने खड़ा न हो जाये।

हाथों को सर्वाधिक काम करना पड़ता है। किसान, मजदूर सभी के हाथ गन्दगी से सने रहते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें गरदन से ऊपर जब कभी किसी कारणवश स्पर्श करना पड़े, तब हाथों को अच्छी तरह साबुन या स्वच्छ मिट्टी से भली प्रकार साफ कर लें। इसी तरह जिन्हें खाद, पानी में हाथ दिये रहना पड़ता है, उन्हें विशेष सावधानी बरतनी चाहिये अन्यथा हाथ में लिपटे हुये विषैले जीवाणु पेट में तो पहुँचते ही हैं, आँख से स्पर्श हो जाने पर नेत्र रोग भी पैदा करते हैं।

आँख, कान, नाक के छिद्र वस्तुतः ऐसे हैं, जो कोमल भी बहुत हैं और उनमें गन्दगी के साथ चुपके रहने वाले विषाणुओं का प्रवेश भी शीघ्र हो जाता है। प्रकृति उन्हें सीमा तक ही बाहर निकल पाती है। उनसे निपटने के लिये मनुष्य स्वयं कुछ प्रयत्न करता नहीं। इसलिये उन्हें निर्बाध रूप से अपनी गतिविधियाँ चलाते रहने का अवसर मिलता रहता है। थोड़ा-थोड़ा करके शक्ति क्षीण करते रहने के अतिरिक्त उन्हें यह अवसर मिल जाता है कि जहाँ वे जम गये हैं, उसके बाहरी ही नहीं भीतरी भाग को क्षीण करने लगें। उनमें से कोई-कोई अवयव ऐसे होते हैं, जिनकी क्षीणता दृष्टिगोचर नहीं होती। किन्तु कुछ ऐसे भी होते हैं, जिन पर पड़ा हुआ दूषित प्रभाव तुरन्त ही परिलक्षित होता है।

आँखों को खराब करने में पोषक तत्वों की कमी के अतिरिक्त दो और भी कारण हैं—एक धुआँ और दूसरा धूल। पुरुषों को धूल से वास्ता पड़ता है और स्त्रियाँ लकड़ी से खाना बनाते समय चूल्हे के निकट सम्पर्क रखती हैं। यह दोनों परिस्थितियाँ भी ऐसी हैं, जिन्हें आँखों के लिये घातक कहा जा सकता है।

अपने देश में काजल, सुरमा आँखों में लगाने का प्रचलन है। एक ही अँगुली से कईयों को काजल लगा देने या एक ही सलाई से बिना सफाई किये कइयों की आँखों में प्रयोग करना ऐसा ही है, जिससे एक की छूत दूसरे की आँखों में जा सकती है और एक की बीमारी कइयों को ग्रसित कर सकती है। जिस प्रकार हाथों के बिना साफ किये भोजन करने लगा जाये तो पेट में कृमि-कीटक पहुँच सकते हैं और वहाँ अपना स्थायी आवास बनाकर स्वास्थ्य संकट खड़ा करते रह सकते हैं, उसी प्रकार की स्थिति आँखों की है। इस असावधानी से बचा ही जाना चाहिये।

पानी के उपयोग में भी यह ध्यान रखा जाना चाहिये कि वह मैला, गंदला या कीटाणु युक्त तो नहीं है। उससे मुँह हाथ धोते समय यदि वह गंदगी आँखों में चली जाती है, तो उसका बुरा प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। यह असावधानियाँ देखने में छोटी हैं, पर उनका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिफल जब आँखों में अन्धता उत्पन्न करने वाले रोगों के रूप में सामने आता है, तब पता चलता है कि छोटी-सी चिनगारी ने कितना बड़ा अग्निकाण्ड खड़ा कर दिया ?

रात को देर तक जगना और तेज प्रकाश में काम करना भी कम घातक नहीं है। गर्मी की दोपहरियों में कड़ी धूप की चमक भी आँखों को वैसा ही नुकसान पहुँचाती है। लगातार एक ही जगह आँखें जमाये रहने वाले काम भी आँखों पर बुरा असर डालते हैं। आँखों को हिलने-डुलने और इधर-उधर देखने का भी अवसर मिलना चाहिये। नेत्रों की सुरक्षा के लिये छोटी-छोटी बातें भी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती हैं। इनकी उपेक्षा करने पर ही अन्धता के संकट का सामना करना पड़ता है।

नेत्र-रक्षा के उपाय

(१) गैस, बिजली, लैम्प आदि की तेज रोशनी के सामने बहुत देर तक पढ़ने, लिखने में प्रायः पीड़ा, हृदय और नाड़ियों में दुर्बलता या रक्त विकार आदि उपद्रव हो जाते हैं। इसलिये तेज रोशनी में कभी नहीं लिखना-पढ़ना चाहिये।

(२) लेटकर, सोते हुये या ओंगते हुये शरीर में अधिक उत्तेजना अथवा थकावट होने पर लिखने-पढ़ने का काम नहीं करना चाहिये।

(३) घोड़ा, रेल, मोटर, हवाई जहाज, पैर गाड़ी आदि बहुत तेज चलने वाली सवारियों में बैठकर और भोजन करने के बाद तत्काल पढ़ने- लिखने से नेत्रों को बहुत हानि पहुँचती है इसलिये उक्त समय में लिखना-पढ़ना बन्द रखना चाहिये।

(४) बहुत बारीक अक्षरों की छपी या लिखी हुई पुस्तक को बहुत देर तक नहीं पढ़ना चाहिये। ऐसी पुस्तक अधिक देर तक पढ़ने से नेत्रों में पीड़ा होती है, नेत्रों में पानी भर आता है, पढ़ते-पढ़ते कभी लाइन छूट जाती है या कभी और लाइनों पर अचानक दृष्टि जा पड़ती है और चकाचौंध लगने लगती है। बार-बार नाटक, वायस्कोप आदि खेल तमाशों को देखने के लिये रात्रि में जागना ठीक नहीं है। यदि कदाचित नाटक, वायस्कोप आदि में जाना हो तो तक हो स्टेज से दूर और तिरछा होकर बैठें, उसके बिल्कुल सामने कभी न बैठें।

(५) मैले-कुचैले रूमाल या कपड़े से अथवा मैले हाथों से आँखों को कभी नहीं मलना चाहिये।

(६) पढ़ते समय किताब को बिल्कुल आँखों से लगाकर या बहुत दूर रखकर नहीं पढ़ना चाहिये। ऐसा करने से आँखों पर बहुत जोर पड़ता है। अतएव किताब साधारणतः आँखों से बीस अँगुल दूर रखनी चाहिये। इस तरह एकाग्रचित्त होकर आध घन्टे तक पढ़ने से भी नेत्रों में थकावट नहीं मालूम होती और न नेत्रों में जल ही आता है।

(७) पढ़ने अथवा लिखने के समय जड़ भरत के समान बिल्कुल जम कर न बैठें, बीच-बीच में थोड़ा-थोड़ा आराम लेकर लिखने-पढ़ने का काम करें।

(८) तेज धूप में बैठकर लिखना-पढ़ना नहीं चाहिये और पढ़ते समय सूर्य की किरणें अथवा लैम्प की रोशनी आँखों के ऊपर नहीं पड़नी चाहिये।

(९) यदि दाहिनी आँख में कोई चीज गिर गई हो तो बाईं आँख में कुछ गिर जाने पर दाहिनी आँख को धीरे-धीरे मलनी चाहिये और पलक को उलटकर साफ कपड़े के द्वारा अँगुली से उस चीज को कोने की तरफ धीरे-धीरे सरकाकर होशियारी के साथ निकाल देना चाहिये।

(१०) आँखों के दुःखने पर या अन्य किसी प्रकार की पड़ा होने पर किसी अनाड़ी चिकित्सक की अथवा पास-पड़ोस के किसी आदमी की बताई हुई या विज्ञापनबाजों की "चक्षुरोगी की औषधि" कभी भूलकर भी नहीं डालनी चाहिये। प्रत्येक मनुष्य को यह स्मरण रखना चाहिये कि हीरे आदि रत्नों की अपेक्षा नेत्ररत्न अधिक मूल्यवान हैं। इसलिये जिस किसी व्यक्ति के कहने से अनाप-सनाप कोई चीज आँख में डालकर इस अमूल्य रत्न को नहीं खो बैठना चाहिये। अर्थात् बिना सोचे-समझे या किसी सुयोग्य चिकित्सक की सम्मति के बिना कभी कोई औषधि आँखों में नहीं डालनी चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चश्मा कब लगाना चाहिये

(१) जब तुम दिन में २० हाथ दूर के आदमी को एक बार देखकर नहीं पहचान सकते हो अथवा ऊँची दीवारों पर या दुकानों पर लगे हुये साइन बोर्डों को चलते हुये आसानी से नहीं पढ़ सकते हो या जब प्रकाश के सामने बारम्बार आँखें जाती हों और चकाचौंध लगती हो तब चश्मा लगाना चाहिये।

(२) जब किसी वस्तु को २-३ मिनट तक टकटकी बाँधकर देखने से आँखों में जल भर आता हो, नेत्र भारी हो जाते हों और शिथिल पड़ जाते हों तो चश्मा लगाना ठीक है।

(३) जब आँखों के भीतर या कोयों में मन्द-मन्द पीड़ा हो अथवा सिर में दर्द रहता हो और उसका कोई कारण विदित न होता हो—और अनेक प्रकार के सुगन्धित तेल, चन्दन, कपूर आदि देशी और अंग्रेजी औषधियों का व्यवहार करने पर भी कुछ लाभ न होता हो तो चश्मा लगाने की आवश्यकता है।

(४) स्कूलों या ऑफिसों में काम करते-करते जब कि आँखें थककर डगमगाने लगें और मलने पर भी मिची जाती हों तब उनको थोड़ी देर के लिये आराम देना चाहिये।

(५) जबकि खूब कड़ी धूप पड़ती हो, नेत्र उसको सहन नहीं कर सकते हों और माथे पर हाथ रखकर या कपड़ा डालकर चलना पड़ता हो तो चश्मा लगाने की जरूरत है।

(६) जब किसी समय पढ़ते-पढ़ते किताब के अक्षर बिल्कुल भ्रमात्मक मालूम हों अर्थात् सब लाइनें लिपी हुई सी दीखें और लिखते समय अक्षर आपस में मिल जायें तब चश्मा लगाना लाभदायक है।

(७) आँखों में परबल होने के कारण या स्वभाव से ही जो लोग हर वस्तु को बिल्कुल आँखों पर रखकर देखते हैं, उनको अथवा जो बहुत बारीक, सिलाई या कढ़ाई आदि का काम करते हैं और जिनको अधिक प्रकाश (बिजली आदि की रोशनी) में काम करना पड़ता है उनके लिये चश्मा लगाना हितकर है।

(८) जब आँखें किसी कारण से या बिना कारण ही लाल हो जायें, उनमें जलन हो, दर्द हो, पानी निकलता हो, धुँधला-धुँधला दीखता हो, पलकें और भौओं में कम्प हो और अंधेरा ही अच्छा मालूम होता हो तो चश्मा लगाना चाहिये।

उक्त कारणों में से यदि किसी स्त्री और पुरुष के कोई कारण विद्यमान हों तो उसको शीघ्र ही चश्मा लेने का प्रयत्न करना चाहिये। जैसे बिना कारण चश्मा लगाने से हानि होती है, वैसे ही कारणों के विद्यमान होने पर चश्मा न लगाने से भी नेत्रों को हानि होती है।

नेत्रों का स्वास्थ्य

(१) नेत्रों की स्वस्थता पूर्णरूप से तभी रह सकता है जब कि शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा हो। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये कि सदैव पौष्टिक पदार्थों का भोजन करे, नियम से परिश्रम, विश्राम और शयन करे, संयतेन्द्रिय होकर रहे, मल-मूत्रादि वेग को न रोकें और उनके स्थानों को अच्छे प्रकार से साफ रक्खें, इन नियमों का पालन करने से नेत्र स्वस्थ रहते हैं। नेत्रों में कोई विकार उत्पन्न होने पर शरीर में भी कोई न कोई गड़बड़ अवश्य हो जाती है, इसलिये नेत्रों को स्वस्थ रखने वाले मनुष्य को पहले शारीरिक स्वास्थ्य ठीक रखना चाहिये। शरीर के आरोग्य, दीर्घजीवी और कर्मण्य रहने पर नेत्रों का स्वास्थ्य भी सुरक्षित रह सकेगा, जैसे बिल्कुल पड़े रहने से या कभी विश्राम न करने से शरीर कुछ दिनों में ही अस्वस्थ हो जाता है, नेत्रों के सम्बन्ध में भी बिल्कुल यही बात जाननी चाहिये। नियमानुसार खान-पान, स्नान, काम-काज, विश्राम आदि करने पर भी नेत्रों की विकृति दूर न हो तो योग्य चिकित्सक से चिकित्सा करानी चाहिये।

(२) एक चौड़े मुँह वाली और कुछ गहरी बाल्टी टप, नाँद और किसी बर्तन में ठण्डा पानी भरकर उसमें रोज सुबह के वक्त २०-५० बार नाक बन्द करके सारे मुँह को गोते लगावें और नेत्रों को खूब अच्छी तरह मलकर धोवें। इसको चक्षुस्नान कहते हैं। इसके सिवा नेत्रों में दुर्बलता और कोई सामान्य विकार हो तो एक बर्तन में पानी भरकर और सैंधे नमक की दो-चार कंकड़ी डालकर उस पानी से नेत्रों को धोवें। इसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अतिरिक्त गंगा, यमुना आदि नदियों में सिर से स्नान नेत्रों के स्वास्थ्य के लिये बहुत अच्छा है।

(३) नेत्रों को शीतल और स्वस्थ रखने के लिये भोजन के साथ गाय का घी या मक्खन बादाम का तेल अथवा घर का बना सेंट रहित आमले का तेल आदि शीतल और स्निग्ध चीजें खानी चाहिये तथा नारियल, बादाम, आमले, तिल तथा सरसों का तेल सिर पर और कनपटियों पर मलना चाहिये। इससे नेत्रों की ज्योति स्थिर रहती है, नेत्रों की और मस्तिष्क की थकावट दूर होती है।

(४) प्रायः कोष्ठबद्धता, परिपाक शक्ति की हीनता और स्निग्ध आहार का न मिलना इत्यादि कारणों से नेत्ररोग उत्पन्न होते हैं। ऐसी अवस्था में अन्त्रधोतिक्रिया (Colanflu Shing) करने से बहुत लाभ होता है।

सिफलिस, गनोरिया आदि इन्द्रिय सम्बन्धी रोगों के कारण प्रायः (नेत्रों के पलकों में फुंसियाँ निकल आती हैं, रोये पड़ जाते हैं, नेत्रों के पहले और दूसरे पर्दे में अथवा नेत्रों के डेलों में दाह होती है, फोड़े निकल आते हैं, नेत्रों की नाड़ी और पेशियों में शिथिलता, अन्धता आदि नाना प्रकार के यन्त्रणादायक और कृच्छसाध्य नेत्र रोग उत्पन्न हो जाते हैं। एसी अवस्था में किसी सुयोग्य चिकित्सक के द्वारा चिकित्सा कराने के साथ-साथ मूल कारण को भी विनाश करने का प्रयत्न करना चाहिये। इस बात का चिकित्सक को भी विशेष ध्यान रखना चाहिये कि मूल कारण के नष्ट हुये बिना कारणान्तर का नाश नहीं होता।

(५) गैस, बिजली, मोटर आदि की तेज रोशनी नेत्रों के लिये बहुत ही हानिकर है। इनकी अपेक्षा सरसों का तेल, तिल का तेल या दुर्ये का तेल, नीम का तेल आदि देशी तेलों की रोशनी नेत्रों के लिये सबसे अच्छी होती है। मिट्टी के तेल की रोशनी सफर में जाने-आने या आंधी, मेह के समय अथवा नाटक आदि खेल-तमाशों में अच्छा काम देती है, किन्तु पढ़ने-लिखने के काम करने पर नेत्रों को हानि पहुँचाती है। आजकल प्रकाश और वर्ण की वैज्ञानिक ढंग से परीक्षा करने वाले वैज्ञानिकों ने यह स्थिर किया है कि लाल और हल्दी के समान पीले वर्णकी मिश्रित कान्ति के बीच की शक्ति का प्रकाश नेत्रों के लिये सबसे हितकर और स्वास्थ्यप्रद है।

(६) दो-तीन चुटकी बोरिक एसिड को शुद्ध पानी में मिलाकर उससे अथवा त्रिफला या नीम के जल से रोज दो बार आँखों को धोवें या रुई के फोये को पानी में भिगो-भिगो कर पलकों के ऊपर फिरावें। इससे नेत्रों में से पानी निकलना, जाला, फूला, लाली आदि नेत्रों के छोटे-छोटे विकार दूर हो जाते हैं। गुलाब जल और शहद भी नेत्रों के उपद्रवों को शान्ति करने के लिये विशेष उपयोगी हैं।

(७) नेत्रों से अधिक काम लेने के बाद दो चार बार उन पर शुद्ध शीतल जल के छपके मारकर खूब धोना चाहिये। यदि नेत्रों में पीलापन हो तो देशी तेल के दीपक के ऊपर पारी हुई स्याही दो बार आँखों में डालनी चाहिये। यदि बालकों की आँखों में से दिन-रात बिना किसी कारण के पानी निकलता हो तो ठण्डे पानी में गेरू को घिसकर उसका पलकों के ऊपर लेप करे। साधारणतः आँखों के दुखने पर त्रिफले के पानी से नेत्रों को धोवें, गुलाबजल में गुलाबी फिटकरी का बारीक चूर्ण मिलाकर उसकी ५-६ बूँदें दिन में तीन बार आँखों में डालें और रसौत, हरड़, फिटकरी, हल्दी, दारू हल्दी अथवा लालचन्दन इनमें से किसी औषधि को या सब को एकत्र घिसकर पलकों पर लेप करने से शीघ्र आराम होता।

(८) यदि नेत्रों की ज्योति बढ़ानी हो और नेत्रों को तीक्ष्ण आकर्षण शक्ति से सम्पन्न करना हो तो प्रतिदिन निम्नलिखित नेत्ररक्षा सम्बन्धी व्यायामें करनी चाहिये।

प्रातःकाल सोकर उठते ही एक मेज या पलंग के ऊपर उत्तर को मुँह करके चित्त लेट जायें अथवा पैर फैलाकर बैठ जायें, फिर दो-तीन हाथ दूर पर आँखों के सामने रक्खी हुई किसी छोटी चीज की दीवार पर लगे हुये पैसे की बराबर काले दाग को या और किसी वस्तु को टकटकी बाँधकर पाँच मिनट तक देखें। इसी प्रकार सायंकाल के समय कोई गज भर के फासले पर एक मोमबत्ती जलाकर रक्खे और उसकी ओर ५ मिनट तक निगाह बाँधकर देखें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसा करने पर पहले दिन तो एक-दो मिनट के बाद ही पलक झपक जाते हैं, आँखें लपलपाने लगती हैं और पानी निकलने लगता है, किन्तु नित्य थोड़ा अभ्यास करते रहने से कोई तीन महीने के भीतर आध घण्टे तक बिना पलक दृष्टि स्थिर रह सकती है और अधिक अभ्यास करने से इससे भी ज्यादा देर तक दृष्टिशक्ति बढ़ सकती है।

(६) जमीन पर चित्त लेटकर एक बार मकान की कड़ियों की ओर देखें और फिर बिना मुँह फेरे ही एक बार दाहिनी ओर और एक बार बाईं ओर को खूब जोर से घूरें, इस तरह ३० सेकेण्ड तक करें। फिर घर के ऊपर नीचे के कोना की ओर चारों तरफ को टकटकी बाँधकर देखें। इसके बाद नेत्रों को कुछ देर तक खोलें, मीचें और चारों और को जल्दी-जल्दी दृष्टि दौड़ाता हुआ देखें। यह क्रिया दिन में एक बार चार-पाँच मिनिट तक रोज करनी चाहिये। इसके सिवा हाथ के अँगूठे या अँगुली से धीरे-धीरे नेत्रों के पलकों को सहलाना चाहिये।

इन क्रियाओं के अतिरिक्त यदि हम अध्ययन के कुछ सिद्धान्त समझ लें और उनको प्रयोग में लावें तो लिखने-पढ़ने की प्रत्येक परेशानी जाती रहेंगी, ऐनक की आवश्यकता नहीं रहेगी और जीवन भर नेत्र स्वस्थ बने रहेंगे। मोतियाबिन्द की बीमारी नहीं सतावेगी।

१. पुस्तक की पोजीशन—पढ़ते समय पुस्तक नेत्रों से निचाई पर रहे. नेत्रों के बिल्कुल सामने नहीं।

२. पढ़ने वाले की पोजीशन—कुर्सी या जमीन पर आराम से बैठें। हाथ से सर या ठोड़ी को न टेकें। सिर को स्वतन्त्र रखें और पढ़ते समय सर को हल्के-हल्के हिलाते रहें। लेटकर पढ़ते समय सर को ऊँचा रक्खें। करवट होकर न पढ़ें।

३. नेत्रों की पोजीशन—पढ़ते समय ऊपर के पलक नेत्रों पर पड़े रहने चाहिये। आँखें ज्यादा खोलकर न पढ़ें। पढ़ते समय धीमे-धीमे पलक झपकते रहना चाहिये।

४. धूप में पढ़ना—शरद् ऋतु में प्रायः लोग धूप में बैठकर पढ़ा करते हैं। ऐसी दशा में पुस्तक की इस प्रकार रखना चाहिये कि धूप किताब पर न पड़े, भले ही चेहरे पर पड़ती रहे। यदि पुस्तक पर धूप पड़ेगी तो चमक के कारण आँखों पर जोर पड़ेगा। प्रायः ऐसा लोगों ने अनुभव किया भी होगा।

५. कितने प्रकाश में पढ़ना चाहिये—रोशनी इस प्रकार की हो कि उसमें चमक न हो। बिजली की तेज रोशनी जो सीधे पुस्तक पर पड़ती है हानिप्रद है, चिराग, मोमबत्ती, टेबिल लैम्प, मिट्टी के तेल या बिजली का दूधिया बल्ब पढ़ने के काम के लिये लाभप्रद है, यदि मामूली बल्ब से ही पढ़ना हो तो रोशनी को इस प्रकार लगाना चाहिए कि उसकी सीधी एवं प्रखर किरणें कागज पर न पड़ें।

६. पलक झपकना आवश्यक है—हल्के-हल्के पलक झपकने से नेत्रों को आराम मिलता है। प्रत्येक पंक्ति को पढ़ने में एक-दो बार पलक झपक लेने चाहिये। परन्तु ठीक पलक झपककर पढ़ना, जानना चाहिये। ठीक पलक झपकते समय ऊपर के पलक जरा-जरा चलते रहते हैं। नीचे के पलक को नहीं छूते। बहुत प्रकार की—नेत्र पीड़ा केवल ठीक पलक झपकने से ही जाती रहती है।

७. सूर्य-चक्षु व्यायाम—प्रतिदिन दस मिनट सूर्य की ओर नेत्र बन्द करके बैठना चाहिये एवं अपने बदन को धीरे-धीरे सर्प के फन की भाँति हिलाते रहना चाहिये। फिर साये में आकर शीतल-जल से चक्षु-प्रक्षालन करना चाहिये। रोज सूर्य व्यायाम करने से नेत्र-स्वस्थ बने रहते हैं एवं दृष्टि तीव्र होने लगती है।

८. बारीक अथवा सूक्ष्म अक्षर पढ़ना—सामान्य रूप से सोचा जाता है कि महीन अक्षर पढ़ने से नेत्र कमजोर हो जाते हैं, परन्तु यह धारणा गलत है। यदि प्रतिदिन अत्यन्त सूक्ष्म अक्षर पढ़े जायें तो दृष्टि ठीक बनी रहेगी। बुढ़ापे में भी ऐनक की आवश्यकता न पड़ेगी। बारीक अक्षर पढ़ते रहने से नेत्र-पीड़ा जाती रहती है।

९. नेत्र ज्योति बढ़ाना—उसके लिये त्राटक अथवा पामिंग अति उत्तम उपचार हैं। सूर्य-व्यायामोपरान्त आँखों पर हाथ ढकें, आँखें अन्दर बन्द रहें पर ऐसा करने में यह बात

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सदैव ध्यान में रहे कि हाथों का दबाव आँखों पर न पड़े। पाँच मिनट तक आँखों को हाथों से ढके रखना चाहिये और किसी काली या श्वेत वस्तु का ध्यान करना चाहिये। इस प्रक्रिया को पामिंग कहते हैं। फिर हाथों को हटाकर हलके से आँखों को खोलना चाहिये तथा पलक को झपकना चाहिये एवं सर को हल्के-हल्के दाँयें बायें हिलाना चाहिये और दृष्टि को पुस्तक की श्वेत लाइनों पर घुमाना चाहिये। सफेद लाइन उसको कहते हैं, जो दो लिखी हुई लाइनों के बीच में होती हैं। इस प्रकार बिना पढ़ने के प्रयास किये आठ-दस पृष्ठ समाप्त किया जाना चाहिये। पुस्तक को उल्टी रखने से यह क्रिया अच्छी होती है क्योंकि पढ़ने की कोशिश कम हो जाती है। दो-तीन दिन पश्चात् महसूस किया जाना चाहिये कि श्वेत पंक्तियों पर दृष्टि घुमाते समय ऊपर के अक्षर और शब्द अपेक्षाकृत काले मालूम होते हैं।

दैनिक अभ्यास—सूर्य व्यायाम एवं पामिंग करके पलकें झपककर सर को जरा-जरा हिलाकर दृष्टिपट पढ़ने का अभ्यास करना चाहिये। दृष्टिपट इतनी दूरी पर रखा जाना चाहिये जहाँ से खूब स्पष्ट दिखता हो। तदन्तर फासला शनैः-शनैः कम किया जाना चाहिये।

इस प्रकार किये गये अभ्यासों में अनेक रोगियों की दृष्टि तेज हो गई है और ऐनक छूट गई है।

मन्द दृष्टि वाले ऐनक रोगियों को पूर्व उल्लिखित अभ्यासों के अलावा यह भी दृष्टिगत रखना समीचीन है कि वे खाने में गरम मसालों का प्रयोग न करें। फल, आँवला एवं हरे साग-सब्जियों का प्रयोग ज्यादा लाभप्रद होगा। जहाँ तक बन पड़े आलू का प्रयोग कम किया जाये। साधारण सिनेमा-गृहों में फिल्में न देखी जायँ। शीत-ताप नियन्त्रित सिनेमागृहों में भी बहुत आगे से फिल्में न देखी जायँ और देखी भी जायँ तो टेक्नीकलर फिल्में देखी जायँ।

दाँत हमारी सुरुचि और सतर्कता के परिचायक

मानवी सौन्दर्य का दाँतों से घना सम्बन्ध है। हँसते-मुस्कराते मुख का सम्पुट खुलकर जब दाँतों की पंक्ति खुलती है तो लगता है कि किसी की आन्तरिक सुषमा कमल पुष्प की तरह खिल पड़ी हो।

वार्तालाप में एक-दूसरे को आँखें देखने से भी अधिक ध्यान दाँत देखने पर केन्द्रित किये रहते हैं। वाणी का स्रोत जिह्वा है पर जिह्वा का आवरण तो दाँतों की पंक्ति ही आच्छादित किये हुये है, ऐसी दशा में यदि सम्पर्क में आने वालों का ध्यान दाँतों पर अधिक रहे तो यह स्वाभाविक ही है।

दाँतों की बनावट कैसी है यह तो प्रकृति की कृपा पर निर्भर है, पर मनुष्य यदि अपनी सतर्कता और स्वच्छता की आदत विकसित कर सके तो दाँतों की स्वच्छता और सुदृढ़ता बनी रह सकती है और वे प्रभावोत्पादक भूमिका सम्पादित करते रह सकते हैं। दाँतों को देखकर किसी की सुरुचि और कुरुचि का पता लगाया जा सकता है। सुरुचि ही सौन्दर्य का चिन्ह है। हर किसी के दाँत इस सम्बन्ध में बिना पूछे ही उसकी प्रकृति का विज्ञापन करते रहते हैं। इन बातों को ध्यान में रखने वाला व्यक्ति दाँतों की स्वच्छता पर ध्यान देना चाहेगा।

दाँतों का दर्द, मसूड़ों का फूलना, कीड़ा लगना, असमय में ही हिलना और उखड़ना, मैल जमना जैसे संकट इसलिये उत्पन्न होते हैं कि लोग दाँतों के प्रति उपेक्षा भाव बरतते हैं। यदि आवश्यक सावधानी रखी जाय तो वे देर तक मजबूत बने रहेंगे और पाचन क्रिया गड़बड़ा जाने से लेकर मुख की दुर्गन्ध और चेहरे की कुरूपता जैसी दुःखद दुर्घटनाओं का सामना न करना पड़ेगा।

दाँतों को एक निर्जीव अंग समझा जाता है, पर बात वैसी है नहीं। उनकी संरचना शरीर के अन्य अंगों के समान ही है और समग्र स्वास्थ्य का प्रभाव जिस तरह सभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंगों पर पड़ता है। बीमारी की दशा में हर अंग के क्रिया-कलाप में बाधा पड़ती है, उसी प्रकार का असर दाँतों पर भी होता है। जिनका स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ होगा, पेट खराब रहेगा, रक्त में विषाक्तता भरी होगी उनके दाँत विकृतियों से प्रभावित हुये बिना नहीं रहेंगे।

दाँत बाहर से देखने या छूने से ऐसे लगते हैं मानो ये किसी धातु या लकड़ी, पत्थर के बनाकर मुँह में कील की तरह ठोक दिये गये हों, पर थोड़ी गहराई के साथ उनकी संरचना को देखा जाय कि उनके भीतर भी अन्य अस्थियों की तरह ही मज्जा और नाड़ी तन्तु विद्यमान हैं और मसूड़ों में होकर वहाँ भी रक्त पहुँचता है। बाहर की परत को भोजन चबाने की दृष्टि से प्रकृति ने अधिक सम्वेदनशील नहीं बनाया है, पर इसका अर्थ यह नहीं है कि उनमें जीवन नहीं है और उन्हें सुदृढ़ रखने के लिये सामान्य स्वास्थ्य पर ध्यान रखने की आवश्यकता नहीं है। यदि स्वास्थ्य गिरता चला जाय तो दाँतों की जड़ें कमजोर होंगी और उनकी चमक, सुन्दरता, मजबूती सभी पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। इसलिये यदि दाँतों को पायरिया, खोखलापन, दर्द, असमय उखड़ना, हिलना आदि बीमारियों से ग्रसित न बनना हो तो समग्र स्वास्थ्य पर ध्यान रखना होगा। विशेषतया भोजन के रूप में क्या लिया जा रहा है, उसमें सावधानी बरतनी पड़ेगी। अवांछनीय आहार का दाँतों पर भी दुष्प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता।

दाँतों की सुदृढ़ता की दृष्टि से हमारे भोजन में कैलशियम-विटामिन सी और विटामिन डी की अनिवार्यता रहती है। इस आवश्यकता को दवादारू से पूरा नहीं किया जा सकता, वरन् भोजन में इन तत्वों को मिला होना चाहिये ताकि चबाते समय उनका प्रभाव दाँतों पर पड़े, साथ ही आहार के पचने के उपरान्त उन्हें रक्त द्वारा अपना आवश्यक पदार्थ उपलब्ध हो सकें।

गाजर, मूली, टमाटर, नीबू, चुकन्दर, सन्तरा, अंगूर, ककड़ी, खीरा, चोकर सहित आटा जैसी चीजों में कैल्शियम की आवश्यक मात्रा रहती है। (खट्टे फलों में विटामिन सी और दूध, शहद आदि से विटामिन ए मिल सकता है। आहार का अच्छी तरह चबाया जाना न केवल पाचन की दृष्टि से वरन् दाँतों के व्यायाम की दृष्टि से भी आवश्यक है। जो लोग ऐसे ही जल्दी-जल्दी ग्रास निगलते रहते हैं, उन्हें पाचन की ही नहीं, दाँतों की खराबी की भी शिकायत रहती है। दाँत और आँत के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि आँते खराब होंगी तो दाँतों की भी खैर नहीं। दाँत अपना काम ठीक तरह न करें या पायरिया जैसे रोगों से ग्रसित हो जायें तो फिर आँतों का पाचन कार्य ठीक तरह नहीं हो सकेगा।

पान, तम्बाकू, जैसी निरर्थक हानिकारक चीजें मुँह में भरे रहना, सिगरेटों के धुयें से मुख की स्राव ग्रन्थियों को जलाते रहना दाँतों को जल्दी हिलाने और उखाड़ने की जानबूझ कर की गई तैयारी है।

मसूड़ों के दर्द के पीछे कभी-कभी तो स्थानीय विकृति भी होती है, पर बहुत करके पेट की खराबी से उत्पन्न विषैली गैसें भी उसका मूल कारण होती हैं देखा गया है कि जुलाब दे देने पर बढ़ा हुआ दाँत का दर्द सहज ही घट जाता है।

भोजन करने के बाद यदि कुल्ला न किया जाय तो खाद्य-पदार्थों के छोटे-छोटे कण दाँतों की झिरी या जड़ों में अटके रह जाते हैं और वे सड़कर "लैक्टिक" एसिड' पैदा करते हैं। इस तेजाब से दाँतों का गलना आरम्भ हो जाता है। खोखले पड़ना, हिलना, कीड़ा लगना और जरा से आघात पर या ठण्डा गर्म खाने पर वे दर्द करने लगते हैं। इसलिये दाँतों की सफाई के सम्बन्ध में यह भी ध्यान रखना चाहिये कि केवल सबेरे एक बार ब्रुस कर लेना काफी नहीं वरन् भोजन के तुरन्त बाद अच्छी तरह कुल्ला करने की आदत डालनी चाहिये और रात को सोने से पूर्व उनकी सफाई जरूर कर लेनी चाहिये ताकि रात में अन्न के कण चुपचाप सड़ते रहकर दाँतों के लिये संकट उत्पन्न करते रहने का बढ़िया अवसर प्राप्त न कर लें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दाँतों की सुरक्षा का समुचित ध्यान रखें

'अमेरिकन मेडिकल एसोसियेशन जनरल' पत्रिका में दन्तरोग विशेषज्ञ डा. जे. ए. सिनक्लेयर का एक लेख छपा है, जिसमें उन्होंने बढ़ते हुये दन्त रोगों पर चिन्ता व्यक्त करते हुये कहा है कि इसका मूल कारण हमारे भोजनों में विटामिन ए तथा सी की कमी रहना और अधिक गर्म तथा ठण्डे पेय पदार्थों का सेवन करना है।

भारतीय दन्त परिषद् के अध्यक्ष कर्नल एन. एल. बेरी ने परिषद् के ३०वें अधिवेशन में भाषण करते हुये कहा था कि भारत में दाँतों की उपेक्षा शरीर के अन्य सब अंगों की उपेक्षा से कहीं अधिक बरती जाती है। यदि यही क्रम चलता रहा तो अगले सौ वर्षों में लोगों के दाँत २० वर्ष की उम्र में ही उखड़ जाया करेंगे और यह देश पोपलों का देश बन जायेगा।

बढ़ते हुये पायरिया मर्ज के कई कारण हैं। पहला यह है कि लोग अपने भोजन को अच्छी तरह चबाकर नहीं खाते। जल्दी-पल्दी में ऐसे ही थोड़ा कुचलकर गले के नीचे उतार लेते हैं। ऐसी चीजें खाते हैं, जो पतली होती हैं और बिना चबाये ही पेट में उतर जाती है। इससे दाँतों का काम आँतों को करना पड़ता है। उधर मसूड़े तथा दाँत बिना परिश्रम किये निचेष्ट पड़े रहते हैं। उन्हें समुचित परिश्रम करने का अवसर नहीं मिलता। फलतः वे दुर्बल होते चले जाते हैं और पायरिया ग्रसित होते चले जाते हैं।

दाँतों की सफाई पर समुचित ध्यान न देने से भी उनकी जड़ों में अथवा दरारों में अन्न के कण जमा रहने लगते हैं और वे सड़कर अपनी विषाक्तता से मसूड़ों को गलाने लग जाते हैं। इस सड़न से कई प्रकार के दन्त रोग उत्पन्न होते हैं।

बहुत लोग ब्रुस तो करते हैं, पर यह नहीं जानते कि उसे कैसे करना चाहिये ? जोर लगाकर घिसने से बर्तनों की तरह उनकी अधिक सफाई होगी और अधिक चमक आवेगी ऐसा सोचकर मसूड़ों पर दबाव डालने वाला ब्रुस घिसते हैं। मसूड़े और दाँतों की जहाँ मिलावट है वहाँ नीचे से ऊपर की और घिसने से पकड़ कमजोर हो जाती है और उस खोखली हुई जगह में आहार भरने लगता है। ब्रुस हल्के हाथ से यदि अगल-बगल करना हो, नीचे ऊपर करना हो तो वह जड़ से आरम्भ करके ऊपर दाँत के शीर्ष की ओर करना चाहिये न कि दाँत के शीर्ष भाग से आरम्भ करके मसूड़ों की तरफ को। उल्टी घिसावट मसूड़ों की पकड़ कमजोर करती है और पायरिया के लिये पथ प्रशस्त होता है। ब्रुस को करने के बाद उसे गर्म पानी से धोना चाहिये। इसी प्रकार आरम्भ करने से पहले भी उसे नमक मिले गरम पानी से धो लेना चाहिये।

यह मान्यता कोरा अन्ध-विश्वास है कि गरम भोजन लाभदायक है और ठण्डा हो जाने पर हानि होती है। वस्तुतः ऐसी कोई बात नहीं। ठण्डे अथवा गरम भोजन में किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं है। दोनों ही स्थितियों में उसके गुण एक जैसे रहते हैं।

सच तो यह है कि गरमा-गरम भोजन ही अधिक अनुपयुक्त है। उससे दाँत कमजोर होते हैं। यह सर्वविदित है कि मुँह के तापमान से अधिक नीचे या अधिक ऊँचे ताप वाले भोजन का दाँतों पर तथा रस प्रवाहिनी ग्रन्थियों पर बुरा असर पड़ता है। जिन्हें गरमागरम चाय, काफी, पीने की अथवा बर्फ जैसे ठण्डे शरबत आइसक्रीम आदि पदार्थ खाने की आदत होती है, वे अपने दाँत बहुत जल्दी गँवा बैठते हैं। यही बात उन पर भी लागू होती है, जो गरम भोजन करने के आदी हैं।

भोजन में आवश्यक खनिज और लवण न रहेंगे तो उस अपूर्ण भोजन से न केवल दाँतों की वरन् पूरे शरीर में पोषण की कमी रह जायेगी। जो भी हम खाते हैं, वह पहले मुँह में जाता है और दाँतों के संपर्क में आता है। दाँत चक्की की तरह उसे पीसते हैं और इस योग्य बारीक बनाते हैं कि पेट में जाकर वहाँ के रसों में घुलकर पाचन योग्य बन सकें। इस चबाने की प्रक्रिया में जीभ तथा गलफड़ों की ग्रन्थियों से निकलने वाले रस भी बहुत सहायता करते हैं। चबाने के साथ इन रसों का सम्मिश्रण होते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चलने से उसकी लेई जैसी बन जाती है। इन मुँह-रसों में पाचन के उपयोगी तत्व रहते हैं जिनके सम्मिश्रण से इतना कार्य हो चुकता है कि आमाशय को उस आहार को पचाने में सुविधा रहे।

देर तक और धीरे-धीरे चबाकर ग्रास को पेट में उतारने से पेट का आधा काम हल्का हो जाता है। दाँतों का काम आँतों को नहीं करना पड़ता। यदि जल्दी-पल्दी भोजन को गले से नीचे उतार लिया जाय तो उस अधकुचले आहार को कुचलने का काम भी आमाशय अथवा आँतों को करना पड़ेगा। मुँह की लार का पूरा सम्मिश्रण न हो पाने से उतने रस पेट को स्रवित करने पड़ेंगे। स्पष्ट है कि इससे उनका कार्य भार बढ़ेगा। पाचन की प्रक्रिया अधूरी रहेगी और उसमें देर लगेगी। अधिक परिश्रम करने से पेट थककर कमजोर होने लगेगा और कब्ज रहने लगेगी।

मुँह में पहुँचने के बाद वस्तुयें सबसे पहले दाँतों के ही सम्पर्क में आती है और वे अपना भला-बुरा प्रभाव दाँतों पर भी छोड़ती हैं। अधिक गरम या अधिक ठण्डी वस्तुयें दाँतों की जड़ों को प्रभावित करती हैं और मसूड़े कमजोर एवं रुग्ण होकर पायरिया जैसे रोगों के शिकार हो जाते हैं। कुछ चीजें ऐसी भी होती हैं, जो सीधे दाँतों पर हमला बोलती हैं जैसे चीनी। चीनी को पचाने के लिये कैल्शियम की विशेष जरूरत पड़ती है। वह उसे समीप ही दाँतों में दिखाई पड़ती है अस्तु उन्हीं में से कुरेदने लग जाती है। चीनी दाँतों को गलाती है और उनकी मजबूती तथा सुन्दरता को नष्ट करती है। मुँह में यदि कुछ देर चीनी भरे रहें तो दाँतों में दर्द होने लगता है। छोटे बच्चे इसे नहीं समझते। नई उम्र में दाँत इतने मजबूत होते हैं कि उन पर चीनी का असर तुरन्त दिखाई नहीं पड़ता, पर बड़ी उम्र में वह असर स्पष्ट दिखाई देने लगता है।. दाँतों में कीड़े लगना, उनका खोखला हो जाना प्रायः अधिक चीनी खाने का ही दुष्परिणाम है। लैमनचूस की गोलियाँ चूँसते रहना दाँतों को कमजोर बनाने का एक बुरा तरीका है।

मधुमेह—कारण और निवारण

असन्तुलित आहार-विहार ही वह खदान है, जहाँ अनेकानेक नाम लक्षणों वाले रोग उत्पन्न होते हैं। विधाता ने शरीर का निर्माण जिन तत्वों से किया है कि इतने समर्थ हैं कि स्वास्थ्य को क्षति पहुँचाने वाले बाहरी आक्रमणों का भली प्रकार सामना कर सकें। इस प्रकार मनुष्य अपनी गलतियों का दोष भाग्य को—गृह-नक्षत्रों को देकर मन बहला लेता है, उसी प्रकार बाहर के रोग कीटाणुओं के आक्रमण की बात कहकर अपनी निर्दोषता सिद्ध करता है पर वस्तुतः वैसी बात है नहीं। यदि हम अपने रक्त को दुर्बल न करें तो उसमें रहने वाले सुरक्षा सैनिक—श्वेत कण किन्हीं भी भयंकर से भयंकर रोग कीटों को शरीर में प्रवेश करते हुये मार-पीट कर बाहर खदेड़ दे सकते हैं।

वस्तुतः हमारी आन्तरिक दुर्बलतायें ही रोगों की जननी हैं। चिन्तन को विकृत करके हम मानसिक रोगों को बुलाते हैं और आहार-विहार को भ्रष्ट करके स्वाभाविक शरीर यात्रा को अवरुद्ध करते हैं और बीमारियों को आमन्त्रित करते हैं।

इन दिनों शारीरिक और मानसिक उच्छृंखलता चरम सीमा पर है। प्रकृति को पग-पग पर चुनौती देना सभ्यता का अंग बन गया है। कृत्रिमता और विलासिता स्वभाव का अंग होती जाती है। इसका फल कुछ ऐसे रोगों के रूप में सामने आ रहा है कि दिन-दिन अधिक व्यापक होते जाते हैं। इन्हें सभ्यता के रोग कहा जा सकता है। हृदय रोग, अनिद्रा, अपच मधुमेह, रक्तचाप यह पाँच रोग ऐसे हैं, जिन्होंने एक चौथाई लोगो को अपने चंगुल में ग्रस लिया है और वे क्रमशः अपना कार्य क्षेत्र विस्तृत करते चले जा रहे हैं।

इन पंक्तियों में मधुमेह की चर्चा की जा रही है। शरीर में शर्करा की मात्रा बढ़ जाने से पेशाब में रक्त का अनुपात बढ़ जाता है। यह बढ़ोत्तरी कितने ही प्रकार के दुःखदायी लक्षण उत्पन्न करती है। बार-बार जल्दी-जल्दी पेशाब जाने से सामान्य कार्यों में विक्षेप उत्पन्न होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रात में बार-बार नींद टूटती है। फलस्वरूप थकान छाई रहती है। रक्तचाप बढ़ने लगता है। सभी जानते हैं कि बढ़ा हुआ ब्लड प्रेसर कितनी थकान और बेचैनी उत्पन्न करता है। सिर में चक्कर आने लगते हैं और लकवा हो जाने का, हार्ट अटैक होने का डर हर समय बना रहता है। कहीं छोटा-सा जख्म हो जाय तो मुद्दतों में अच्छा होता है। कभी-कभी तो वह अच्छा होने के स्थान पर बढ़ता ही जाता है और ऐसा गलाब बन जाता है कि जान लेकर ही हटता है। आपरेशन करना तो डाक्टरों के लिये कठिन हो जाता है क्योंकि मधुमेह के रोगी के घाव भरना टेड़ी खीर होता है।

हम जो कुछ खाते हैं उस आहार में से अधिकतर भाग मुख और आमाशय से निकलने वाले रसों के सम्मिश्रण से शर्करा के रूप में बदला जाता है। इस शर्करा में से जितनी मात्रा शरीर के लिये आवश्यक है, उतनी सोख ली जाती है और शेष को मल-मूत्र, स्वेद, सांस आदि के मल-विसर्जन मार्गों से बाहर कर दिया जाता है। इस शर्करा नियन्त्रण का कार्य एक विशेष रसायन द्वारा सम्पन्न होता है जिसे 'इन्सुलिन' कहते हैं।

पाचन ग्रन्थि

पेनक्रियाज—किसे अग्न्याशय भी कहते हैं, इन्सुलिन का उत्पादन उद्गम है। इस उत्पादन में गड़बड़ी होने के कारण शर्करा पर से नियन्त्रण उठ जाता है और वह पेशाब एवं रक्त में सम्मिलित होकर अनेक प्रकार के उपद्रव खड़े करती है। अवयवों की दृढ़ता को नष्ट कर उन्हें लिवलिबा—लुचलुचा बना देने की विकृति इस बढ़ी हुई शर्करा के कारण ही उत्पन्न होती है।

जीवन संचार के महत्त्वपूर्ण अंग इस बढ़ी हुई शर्करा के कारण अपनी स्वाभाविक क्षमता खोते चले जाते हैं फलतः कई प्रकार के चित्र-विचित्र रोग सामने आते हैं। गुर्दे, आँखें और नाड़ियाँ इस विषमता से विशेषतः प्रभावित होते हैं। आँखों की ज्योति घटती जाती है—नाड़ियों में अकड़न और इठन रहती है—गुर्दे गलते हैं और पेशाब में न केवल मिठास वरन् चिकनाई, गाड़ापन तथा खटाई बढ़ने से बदबू भी आने लगती है। सिर दर्द, चक्कर आना, रक्तचाप भी क्रमशः बढ़ते जाते हैं। रक्त ऐसा अशक्त हो जाता है कि कहीं घाव या फुन्सी हो जाय तो उसे अच्छा करने के लिये जिस भीतरी रासायनिक क्षमता की आवश्यकता होती है, उसे जुटाना भी सम्भव नहीं होता। फलतः छोटे-छोटे जख्म अच्छे होने में लम्बा समय ले जाते हैं कभी-कभी तो वे बढ़ते-बढ़ते जीवन संकट तक उत्पन्न कर देते हैं। गुब्बारे में एक छेद होने से जिस प्रकार उसके अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो जाता है वैसे ही छोटे-छोटे जख्म भी मधुमेह के रोगी के लिये संकट उत्पन्न कर देते हैं।

जिन कोशिकाओं से इन्सुलिन का उत्पादन होता है, वे पेनक्रियाज (अग्न्याशय) के एक बहुत छोटे भाग में रहती है। इसे उस संस्थान का एक प्रतिशत भाग कह सकते हैं। फिर भी उत्पादन इतनी बड़ी मात्रा में होता है कि प्रस्तुत इन्सुलिन से पूरे आहार की शर्करा पर नियन्त्रण किया जा सके। हमारी आन्तरिक व्यवस्थायें भी कैसी विलक्षण हैं ?

कई बार मधुमेह वंश परम्परा के साथ भी चलता है। इसलिये इस रोग से पीड़ितों को सन्तानोत्पादन से बचना चाहिये ताकि भावी पीढ़ी को इस अभिशाप से ग्रसित जीवन न जीना पड़े। आहार का सन्तुलन बनाये रहने से मोटापा बढ़ने से रोका जा सकता है। कहना न होगा कि मेद वृद्धि भी मधुमेह का एक बड़ा कारण है। हल्के व्यायाम और शारीरिक हलचलों को बनाये रखने वाली दिनचर्या का ध्यान रखा जाये तो इस रोग की सम्भावना बहुत घट जायेगी। कुर्सी पर बैठे रहने वाले—चारपाई तोड़ने वाले आरामतलब लोग अक्सर इस व्यथा का शिकार बनते हैं। रोगी होने पर तो इस भूल को सुधारना ही चाहिये। कठिन परिश्रम के योग्य तो उनका शरीर नहीं रहता पर टहलना और शारीरिक हरकतें करते हुये थकान उत्पन्न करने तक श्रमशील बनने की चेष्टा तो उन्हें करनी ही चाहिये।

सामान्यतया आमाशय में पचा हुआ श्वेत सार रक्त के साथ यकृत में पहुँचता है। वहाँ शर्करा की अधिक मात्रा ग्लाइकोजन में बदल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाती है। रक्त में जितनी शर्करा की आवश्यकता है उतनी तो उसमें रहती है शेष बाहर निकाल दी जाती है। मधुमेह के रोगियों की स्थिति में एक गड़बड़ी तो यह होती है कि पाचन ग्रन्थियों द्वारा निकलने वाले 'इन्सुलीन' की कमी पड़ जाने से भोजन में रहने वाले श्वेतसार एवं शकर स्तर के पदार्थों का पाचन एवं अभिशोषण ठीक प्रकार नहीं हो पाता। दूसरी ओर यकृत में जमा रहने वाला ग्लाइकोजन घटने के कारण ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। इस गड़बड़ी के कारण रक्त में शकर की मात्रा बढ़ जाती है। उसे निकालने के लिये गुर्दों को अत्यधिक कार्य करना पड़ता है। वे बढ़ी हुई शकर को मूत्र मार्ग से बाहर निकालने में जुटे रहते हैं और जितना सम्भव है उतना उसे बाहर निकालते रहते हैं। जो अंश नहीं निकल पाता वह रक्त में मिला रह जाता है। मूत्र में शकर की अधिकता की स्थिति को डाक्टरी भाषा में ग्लोडक्को यूरिया कहते हैं।

मधुमेह धीरे-धीरे बढ़ता है। आरम्भ में मूत्र की मात्रा बढ़ने और उसके जल्दी-जल्दी आने के लक्षण प्रकट होते हैं। शरीर का वजन घटने लगता है। आँखों की ज्योति कम होना, थकान, कमजोरी, प्यास की अधिकता, चमड़ी का ढीला होना तथा रूखी रहना, मूत्रेन्द्रिय में खुजलाहट, शरीर में सनसनाहट जैसी और भी कई विकृतियाँ उत्पन्न होती जाती हैं।

सामान्यतया हमारे रक्त में ०.०८ से लेकर ०.१२ प्रतिशत तक शर्करा रहती है। यदि वह मात्रा बढ़कर ०.२५ तक पहुँच जाय तो ईससे जिगर, गुर्दे तथा क्लीम ग्रन्थियों को भारी हानि पहुँचती है।

जिन पदार्थों में श्वेतसार की मात्रा न्यून है और जो मधुमेह के रोगियों के लिये उपयुक्त आहार हो सकते हैं, उनकी गणना करते हुये ड० वरनर मैकफेडन ने अपनी प्रख्यात पुस्तक 'हेल्थ होम' लाईब्रेरी में एक तालिका दी है। जिसमें १ से ५ प्रतिशत 'न्यूनतम' श्वेतसार वाले पदार्थों में पत्तेदार शाक, सरसों की पत्ती, मेथी, पात गोभी, फूल गोभी, लौकी, खीरा, ककड़ी, मूली, टमाटर, नीबू, जामुन, मीठा नीबू, छाछ प्रधान हैं। इससे कुछ अधिक मात्रा में अर्थात् ५ से १० प्रतिशत तक श्वेतसार वाले पदार्थों में तोरई चुकन्दर, गाजर, शलजम, परबल, भिण्डी, प्याज, लोबिया, सेम, खरबूजा, तरबूज, नारंगी जैसे प्रधान फल आते हैं। इससे आगे १० से १५ प्रतिशत श्वेतसार वाले पदार्थों में हरी मटर, हरा चना, अमरूद, सेव, अंगूर, नाशपाती आदि की गणना है। सूखे अनाजों में श्वेतसार कहीं अधिक रहता है इसलिये वे मधुमेह के रोगी के लिये उपयुक्त नहीं पड़ते।

ऐसे रोगियों को पियामिन ,नियासिन, रिवोल्फेविन और विटामिन बी. १२ जैसे तत्वों की अधिकता वाले खाद्य पदार्थ लेने चाहिये। यह चीजें गाजर, शलजम, चुकन्दर, हाथीचक, पनीर और पत्तीदार हरे शाकों से मिल सकते हैं। चूने की भी ऐसे रोगियों के शरीर में कमी पड़ती है इसके लिये केला लेना चाहिये।

मधुमेह के रोगी को प्यास अधिक लगती है फलतः पेशाब भी अधिक होता है। अतः पेशाब के साथ विटामिन बी और विटामिन सी की बड़ी मात्रा निकल जाती है। अस्तु उन्हें इन तत्वों की पूर्ति कर सकने वाले आहार को भी प्रमुखता देनी चाहिये।

मशीन का साफ किया चावल, मिल का पिसा आटा और दानेदार चीनी यह तीनों ही चीजें ऐसे अखाद्य हैं, जिनसे मधुमेह उत्पन्न हो सकता है और बढ़ सकता है। अस्तु हाथ के कुटे चावल, घर की चक्की के पिसे चोकर समेत आटे को ही प्रधानता देनी चाहिये। चीनी से गुड़ अच्छा है पर जब मधुमेह का प्रकोप हो चले तब तो गुड़ भी बेकार है। मिठाई के बिना किसी तरह काम न चले तो सैकरीन ली जा सकती है पर है तो वह भी कोलतार से बनी होने के कारण हानिकारक ही।

आयुर्वेद के मतानुसार जामुन बेल और करेला का उपयोग मधुमेह के लिये लाभदायक माना गया है। यह सब शरीरशास्त्रियों द्वारा बताया गया विवेचन एवं उपचार है। अध्यात्म उपचार यह है कि अपने भोजन को तुरन्त परिवर्तित किया जाये। शाकाहार, फलाहार और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छाछ को प्रधानता दी जाय। श्वेतसार युक्त पदार्थों से बचा जाय। भूख से कम खाया जाय। शारीरिक श्रम की न्यूनाधिकता को सन्तुलित किया जाय। विश्राम पूरा लिया जाये। इन्द्रिय संयम बरता जाय और मस्तिष्क को चिन्ताओं के तनावों से मनोविकारों से मुक्त रखकर हंसता-हंसाता, हल्का- फुलका जीवन जिया जाये। आशा और उत्साह को बनाये रखें, प्रकृति के अनुकूल जीवनयापन करें तो हर रोग से छुटकारा पाया जा सकता है। इन उपायों के साथ शरीरशास्त्रियों द्वारा बताये उपचार भी किये जायें और आवश्यक सतर्कता बरती जाय तो रोग मुक्ति और भी सरल हो जाती हैं।

हृदय रोगों में बढ़ोत्तरी क्यों ?

हृदय के बढ़ते हुये रोग और उनके कारण बढ़ती हुई मृत्युओं की संख्या को देखकर आश्चर्य होता है कि इतने मजबूत अवयव का इतनी जल्दी बीमार होना और फेल होना क्यों कर होता है ?

एक मिनट में ७२ बार और एक दिन में एक लाख बार धड़कने वाले हृदय की बनावट ऐसी है कि उसे आसानी से खराब नहीं होना चाहिये, पर देखा जाता है कि छोटी उम्र के लड़के भी इस मर्ज के शिकार होने लगे हैं। एक-दो बार के दौर में ही दम तोड़ देते हैं।

कारण तलाश करने पर खान-पान की गड़बड़ी के उपरान्त मन पर पड़े रहने वाले बोझ इसके कारण हैं। चिकनाई और मसाले अधिक मात्रा में खाने के कारण मात्र पेट ही खराब नहीं होता, रक्त वाहिनी नाड़ियों में भी बेकार कचरा जमा होने लगता है एवं रक्त गाढ़ा हो जाने से रूकावट पड़ने लगती है। मसाले उत्तेजना बढ़ाते हैं। धड़कन का अनुपात बढ़ जाता है।

इसके अतिरिक्त दूसरा बड़ा कारण मानसिक बोझ है। घर-परिवार के कलह-असंतोष देखने-सुनने में साधारण बात मालूम पड़ती है, किन्तु खिन्न असंतुष्ट व्यक्ति सामान्य जीवन को इतना बोझिल बना लेता है कि उससे मस्तिष्क और हृदय दोनों ही तनाव अनुभव करते हैं। मस्तिष्क का तनाव हृदय पर ही दबाव डालता है और उसकी साधारण चाल असाधारण बन जाती है। चिन्ता, क्रोध, उद्वेग से भारी रहने वाला मन अपनी साधारण चाल में बहुत अन्तर कर देता है।

मनुष्य की जीवनी शक्ति का हृदय से गहरा सम्बन्ध है। उद्विग्न रहने वाले व्यक्ति की जीवनी शक्ति घट जाती है। ऐसी दशा में थोड़ा-सा अतिरिक्त परिश्रम बहुत भारी पड़ता है। शरीर का परिश्रम सीमा से बाहर होने पर शरीर जितना दबाव डालता है, उसकी तुलना में मानसिक शक्ति घटाने वाला तनाव कहीं अधिक पड़ता है। ऐसे ही कारण जीवनी शक्ति घटाते हैं और मानसिक उद्विग्नता के चिन्ह प्रकट होने लगते हैं। इन्हीं चिन्हों में हृदय की धड़कन बढ़ जाना, लो ब्लड प्रेशर इत्यादि भी सम्मिलित हैं।

कई व्यक्ति मनोबल सम्पन्न होते हैं। घरेलू कलह और व्यापारिक नफा-नुकसान का विशेष ध्यान नहीं देते। मित्रों के साथ विश्वासघात की घटनायें हो जायँ तो भी उन्हें किसी प्रकार सहन कर लेते हैं, पर भावुक प्रकृति के लोगों के लिये थोड़ा-सा भी मानसिक झटका भारी पड़ता है। ऐसी दशा में हृदय सम्बन्धी छोटी-बड़ी बीमारियाँ खड़ी हो जाती हैं और सही उपचार न हो पाने से छोटी बात बढ़कर बड़ी हो जाती और जल्दी-जल्दी हृदय के दौरे आने लगते हैं।

जीवनी शक्ति का अधिक व्यय करने से क्षणिक इन्द्रियलोलुपता की तो तृप्ति होती है, पर अतिवाद बरतने से जीवनी शक्ति का भण्डार घटने लगता है। यह कारण भी ऐसा है जिससे हृदय सम्बन्धी रोग उठकर खड़े होते हैं। उपचार में उपेक्षा बरतने से रोग बढ़ने लगता है। धड़कन बढ़ने से रक्तचाप, मधुमेह जैसी बीमारियाँ चल पड़ती हैं।

जब ऐसी आशंका दृष्टिगोचर होने लगे तो स्वभाव में हँसने-हँसाने की आदत बढ़ानी चाहिये। चिन्ताओं से छुटकारा पाना चाहिये। इतनी मस्ती लानी चाहिये कि घर बाहर कितने ही कलह-झंझट बने रहें, पर उनका अपने ऊपर कोई भी असर न पड़े। भोजन सात्विक रखा जाय और भूख से कम खाया जाय—ऐसे उपाय बरतने से हृदय सम्बन्धी रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कैन्सर—प्रकृति विरोधी आचरण का दुष्परिणाम

कैन्सर को अत्यन्त महारोग के रूप में गिना जाता है। कुष्ठ, क्षय आदि भी हैं तो जीवन की नींव हिला देने वाले ही पर कैन्सर जितनी जलन और किसी रोग में नहीं होती। रोगी को जितना कष्ट इस व्यथा में सहना पड़ता है उतना शायद ही अन्य किसी रोग में सहना पड़ता हो।

कैन्सर का निदान करते हुये उसके स्थान एवं लक्षणों के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है और नाम दिया जाता है पर वस्तुतः उसका एक ही कारण और एक ही स्वरूप है। प्रकृति विरोधी आचरण करते रहने को जीवनी शक्ति एक सीमा तक ही सहन करती है। सहन शक्ति की भी कोई सीमा है। जब निरन्तर विपरीत आचरण किया जाता है तो आन्तरिक विद्रोह उठ खड़ा होता है और वह जहाँ भी अवसर पाता है वहीं फूट पड़ता है। सामयिक कारण कुछ भी हो वस्तुतः कैन्सर की पृष्ठभूमि बहुत समय पूर्व धीरे-धीरे बनती चली जाती है और जब विषाक्तता की मात्रा शरीर में बहुत अधिक बढ़ जाती है, तब उस सड़न में से कभी भी कहीं भी ऐसा विस्फोट उभर सकता है, जिसे कैन्सर कहा जा सके।

आहार-विहार की अनियमितता, अव्यवस्था एवं प्रकृति विरोधी रहन-सहन मनुष्य की बुद्धिमत्ता का चिन्ह नहीं है। शरीर की संरचना के अनुरूप यदि गतिविधियाँ रखी जायेंगी तो इससे प्रकृति को जीता तो नहीं जा सकेगा मात्र विद्रोही बनाया जा सकेगा। मनमानी करने में हम स्वतन्त्र नहीं हैं कि जीवन के निर्धारित क्रम का निरन्तर उल्लंघन करते हुये भी आरोग्य को अक्षुण्ण बनाये रखा जा सके। सताये जाने पर चींटी भी काटने पर उतारू हो जाती है फिर प्रकृति सर्पिणी से छेड़खानी करते रहने वाले भी कैसे चैन से बैठ सकते हैं ?

चिकित्सक हर बीमारी के लिये अमुक विषाणुओं को उत्तरदायी बताते हैं और उन्हें मारने के लिये कृमिनाशक दवाओं से लेकर रेडियो किरणों तक जो भी उपाय सूझता है, करते हैं। तात्कालिक उपचार की दृष्टि से यह उचित भी है पर काम इतने में ही नहीं चल सकता। रुग्ण होने पर उपचार कराने की अपेक्षा यही अधिक उपयुक्त है कि हम अपने रहन-सहन एवं आहार-विहार को ऐसा बनाये, जिससे प्रकृति के ऐसी चुनौती न दी जाती जो अन्तः विद्रोह का विस्फोट कैन्सर जैसे महारोग के रूप में प्रस्तुत कर दें।

मिनीसोटा विश्वविद्यालय के कैन्सर डिवेक्शन सेन्टर ने लगभग सौ प्रकार की आकृति प्रकृति का पता लगाया है पर उनके मूल में जीवनी शक्ति के प्रति कोशिकाओं के विद्रोहात्मक उग्र आवेश को ही पाया है।

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के डा० जे० एफ० वाटकिन्स और डा० एल० चेन ने कैंसर निवारक औषधियों का निर्माण किया है पर साथ ही वे यह कहते हैं शरीरगत अन्तः विद्रोह को दबाने के लिये निवारक प्रयोग ही काफी नहीं। रचनात्मक प्रयत्न यह भी होना चाहिये कि इस विद्रोह के मूल कारणों का निराकरण और निवारण भी किया जाय।

अमेरिकन कैन्सर सोसाइटी ने ५० वर्ष की आयु से लेकर ७० वर्ष तक की आयु के १८७७८३ तम्बाकू पीने वाले व्यक्तियों की स्वास्थ्य सम्बन्धी जाँच की। यह कार्य तीन वर्ष आठ महीने में पूरा हुआ। इसी प्रकार इतनी ही आयु के इतने ही लोगों की जाँच उनकी भी की गई, जो तम्बाकू नहीं पीते थे। पता चला कि पीने वालों की संख्या ७३१६ और न पीने वालों की ४६५१ थी। अर्थात् न पीने वालों की तुलना में पीने वालों का अनुपात ५५ प्रतिशत मृत्यु दर अधिक था।

तम्बाकू पीने वाले मृतकों में लगभग आधे तो साधारण मौत से मरे पर आधे को नासूर, कैन्सर, दमा जैसे रोगों से ग्रसित होकर मरना पड़ा।

स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को कैन्सर अधिक होता है क्योंकि वे ही तम्बाकू एवं शराब अधिक पीते हैं। निकोटिन, कार्बन मोनो ऑक्साइड,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोलतार सरीखे भयंकर विष तमाखू में घुले रहते हैं।

पान और तम्बाकू दोनों ही पूरी विपत्ति है। इनसे मुँह का कैन्सर होता है। पान के साथ खाया जाने वाला चूना भी कम हानिकारक नहीं है।

मुँह के कैन्सर में भारत सबसे आगे है और भारत ने बम्बई में अपना कीर्तिमान स्थापित किया है। संसार में सबसे अधिक मुँह के कैन्सर से ग्रसित कहाँ है ? यदि इसकी प्रतियोगिता की जाय तो इसमें बम्बई को विश्व विजयी की चैम्पियनशिप मिल सकती है।

खाँसी, बलगम, मुँह से रक्त आना, सांस फूलना, सीने में पीड़ा, फेफड़े के कैन्सर का पूर्व रूप है। फेफड़े का यह बढ़ता हुआ फोड़ा रोगी की स्थिति क्रमशः दयनीय बनाता जाता है और बहुत करके उसकी जान लेकर ही पीछा छोड़ता है।

शरीर के किसी भाग की कोशिकाओं का जीवन सत्ता के विरुद्ध विद्रोह खड़ा कर देना, यही है कैन्सर का मूल स्वरूप। मानवता के प्रति विद्रोह खड़ा करने की प्रतिक्रिया युद्ध के रूप में परिणत होती है और शरीर के भीतर उग्र विद्रोह खड़ा हो जाना प्राण घातक कैन्सर के रूप में सामने आता है। कैन्सर का प्रत्यक्ष कारण नशेबाजी विकरण आदि जो भी हो पर उसकी पृष्ठभूमि बनती तभी है, जब शरीर की जीवनी शक्ति बाह्य आक्रमणों का प्रतिरोध करने की अपनी स्वाभाविक क्षमता गँवा बैठती है।

कैन्सर की विद्रोही कोशिकायें अपने पूर्वजों की सामान्य परिपाटी को परित्याग कर ऐसा रास्ता अपनाती हैं, जिससे शरीर को लाभ नहीं हानि ही होती है। इन विद्रोही कोशिकाओं की आकृति अपने पूर्वजों से भिन्न होती है। वे आस पास के तन्तुओं पर आक्रमण करती है और उन्हें तोड़-फोड़ कर बर्बाद कर देती हैं। वे अपने निर्धारित क्षेत्र तक सीमित नहीं रहतीं वरन् जहाँ भी अवसर मिलता है जा धमकती हैं और जहाँ भी पैर जमे नहीं ध्वंस विघटन आरम्भ कर देती हैं। सामान्यतया शरीर की समस्त कोशिकायें सहयोग की नीति अपनाती हैं और एक-दूसरे को अपना सहकार देकर समान सुव्यवस्था में एक-दूसरे का हाथ बटाती हैं। पर कैन्सर कोशिकाओं की नीति दूसरी ही होती है। उन्हें तोड़-फोड़ के अतिरिक्त और कुछ सूझता सुहाता ही नहीं। पुरानी परम्परायें ही नहीं पुरानी आयु के लोगों से भी इन कोशिकाओं को चिढ़ है। कैन्सर का आक्रमण अधिकतर ५० वर्ष से अधिक आयु वालों को ही ज्यादा होता है। इससे कम उम्र वाले अपेक्षाकृत इस रोग से कम ही ग्रसित होते हैं।

किसी एक स्थान पर लगातार आघात होते रहने से कैन्सर का खतरा उत्पन्न हो जाता है। काश्मीर के श्रमिक छाती पर सिगड़ी लटकाये रहते हैं। सिगड़ी सीने पर जहाँ बार-बार टकराती है, वह स्थान कभी-कभी तो कठोर निर्जीव हो जाता है और कभी वहाँ कैन्सर पनपने लगता है। कामुक व्यक्ति अति कोमल जननेन्द्रिय की संरचना का ध्यान ही रखें तो वहाँ कठोर अवांछनीय परिणाम में पहुँचते रहते हैं और उसका परिणाम पूरे या अधूरे कैन्सर के रूप में सामने आता है। आजकल अधिकांश भारतीय महिलाओं को अगणित यौन रोगों का शिकार पाया जाता है। उसका कारण उनके पतियों द्वारा बरती जाने वाली मूर्खता और निर्दयता को ही ठहराया जा सकता है। कई बार कैन्सर के बीजाणु पैतृक परम्परा बन जाते हैं। नेपोलियन बोनापार्ट के पिता, बाबा, भाई और तीन बहिन पेट के कैन्सर का कष्ट भोगते हुये मृत्यु के मुख में गये थे। जिनके शरीर में कैन्सर जैसे रोगों के बीजाणु हों उन्हें सन्तानोत्पादन नहीं करना चाहिये। यदि प्रमादवश वे ऐसा करते हैं तो इसका अर्थ यही होगा कि उन्हें अपनी सन्तानों को भी उसी रोग की व्यथा में पड़कर मरने देने में कोई आपत्ति नहीं है।

नारी के जननेन्द्रिय स्राव बहुत ही कोमल होते हैं और अपेक्षा करते हैं कि उनका उपयोग बहुत ही संवेदना एवं कोमलता के साथ किया जाय। इन स्राव ग्रन्थियों पर यदि अवांछनीय दबाव पड़ेगा तो वे स्वाभाविक स्राव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो यौवन रक्षा के लिये प्रयुक्त होते थे, विद्रोही होकर इस्ट्रोजन एवं हाइड्रोकार्बन्स उत्पन्न करने लगेंगे और गर्भाशय का एक विशिष्ट सूत्र सम्बन्ध उरोजों से भी है। यौन व्यतिक्रम से जननेन्द्रिय से उत्पन्न होने वाली विकृति स्तनों पर धावा बोल देती है और जब नवजात बालक दूध पीते हैं, तब वहाँ आने वाले उभार के साथ-साथ कैन्सर के दबे हुये कण भी उभर पड़ते हैं। यों नाड़ियों में दूध रुक जाने या चोट आदि के कारण भी स्तनों में अवरोध उत्पन्न होने से कैन्सर उत्पन्न हो सकता है।

चमड़ी को यदि सूर्य किरणों के सम्पर्क से पृथक् रखा जाय तो फिर यकायक कड़ी धूप और गर्मी भी हानि पहुँचाती है। दक्षिण अफ्रीका में बसने वाले गोरे सूर्य की अल्ट्रा वायलेट किरणों से प्रभावित होकर चमड़ी के कैन्सर से ग्रसित होते हैं जबकि वहाँ के आदिवासियों पर ऐसा कुछ प्रभाव नहीं होता। एक्सरेज का अधिक सम्पर्क भी रक्त कैन्सर-ल्यूकीमिया—की लपेट में ले सकता है। रेडियो विकिरण के वातावरण में रहने से हड्डियाँ रेडिया और मीजोथोरियम अपने भीतर संग्रह कर लेती है फिर कैन्सर की सम्भावना बढ़ जाती है।

जापान के यामागीवा और इचीकावी नामक दो विशेषज्ञों ने खरगोशों के कान पर कुछ समय तक लगातार कोलतार पोतते रहकर कैन्सर उत्पन्न किया। ब्रूनों ब्लारू तथा ड्रेफस भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि शरीर की स्वाभाविक प्रकृति से विपरीत प्रकार की स्थिति में जिन अवयवों को रहना पड़ेगा, वहाँ कैन्सर रूपी विद्रोह खड़ा हो सकता है। शरीर की बुद्धि संगत साज-संभाल रखने के स्थान पर यदि उसे तोड़ने-फोड़ने की खिलवाड़ का अभ्यास डाला जाय तो कैन्सर जैसे महारोग सहज ही उत्पन्न किये जा सकते हैं।

कैन्सर अंग्रेजी में केंकड़े का पर्यायवाचक है। जल तटों पर पाया जाने वाला केंकड़ा अपने बेढंगे पंजों सहित जिस विलक्षण आकृति का होता है और जिस प्रकार अपने पंजे गहराई तक जमाकर मजबूत पकड़ बना लेता है, उसी प्रकार की क्रिया-प्रक्रिया कैन्सर की होती है।

कैन्सर शोधी वैज्ञानिक वान वेकमेन ने इस महारोग के दो विभाग किये हैं। एक अन्तर्जनित दूसरे बाह्य प्रेरित। अन्तर्जनित वह है जो कि जीवनी शक्ति के दुर्बल होते जाने और मल विकृतियों के बढ़ते जाने से किसी स्थान पर विद्रोह प्रक्रिया उभर पड़ने के कारण उत्पन्न होते हैं। बाह्य प्रेरित वे जो संसार में उमड़ने-घुमड़ने वाले विषाणुओं के आक्रमण से उत्पन्न होते हैं। विकरण से उत्पन्न विषैले वातावरण अथवा नशेबाजी के फलस्वरूप—अथवा किसी व्रण के विषाक्त हो जाने से जो कैन्सर होते हैं, उन्हें बाह्य प्रेरित कहते हैं। गैस, धुआँ, धूलि, कालिख, कार्बन से भरे वातावरण वाले कारखाने में काम करने वाले श्रमिक प्रायः इस विपत्ति से ग्रसित हो जाते हैं। मोटरों का धुआँ भी इस सन्दर्भ में अपनी अच्छी खासी भूमिका प्रस्तुत करता है। यह सामूहिक रूप से प्रकृति परम्परा के विरुद्ध बगावत करना हुआ। व्यक्तिगत रूप से स्वाभाविकता को चुनौती दी जाय या सामूहिक रूप से, परिणाम एक ही होगा। सिंहनी को, सर्पिणी को कोई अकेला छेड़े या मिलजुल कर कई छेड़ें, इससें अन्तर नहीं पड़ता। छेड़ने वालों को प्रत्याक्रमण और प्रतिरोध का सामना करना ही पड़ेगा। बाह्य प्रेरित कैन्सर की परिस्थितियों को रोकना हर मनुष्य का कर्त्तव्य है। उसे पालन करने में यदि जन साधारण को रुचि हो तो चंद लोग ऐसे अनाचरण कर सकेंगे, जिससे सार्वजनिक स्वास्थ्य को नष्ट करके कैन्सर जैसे महारोगों की बाढ़ आये।

कैन्सर की जाँच के लिये उसका एक छोटा टुकड़ा काटकर वयस्पी माइक्रोस्कोप से देखा तथा रासायनिक घोलों के सहारे जाँचा जाता है। आपरेशन द्वारा उसे निकाल बाहर करने का प्रयत्न किया जाता है। डीप एक्सरे द्वारा उसे जलाने का प्रयत्न करते हैं। रेडियम आइस्टोपों का भी प्रयोग होता है। औषधियाँ भी कई चली हैं, इन उपचारों से कुछ तो लाभ होता ही है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तात्कालिक उपचार के लिये चिकित्सक अपनी भूमिका प्रस्तुत करते हैं सो ठीक है, पर काम इतने से ही न चलेगा। बात तभी बनेगी जब प्रकृति विरोधी आचरण करने के लिये जन साधारण को समझाया मनाया जा सके। यदि हम सरल, सौम्य एवं सात्विक जीवनचर्या अपनायें तो शरीर में विद्रोह उत्पन्न ही न होगा और कैन्सर जैसी विभीषिका का कोई कारण ही शेष न रह जायेगा।

कैन्सर की जड़ों में आधुनिक सभ्यता की खाद

तम्बाकू भी कैन्सर का एक कारण ि सकता है परन्तु केवल तम्बाकू के कारण ही कैन्सर होता हो, ऐसी बात नहीं है। पिछले दिनों टेक्सास (अमेरिका) के हूस्टन नगर में इंटरनेशनल यूनियन अगेंस्ट कैन्सर की अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस में कैंसर के कारणों पर विस्तार से चर्चा की गई। इस कांग्रेस में विश्व के ७० देशों से लगभग ७००० चिकित्सक और वैज्ञानिक एकत्रित हुये थे। इन वैज्ञानिकों और चिकित्सकों ने अपने जो शोध-पत्र प्रस्तुत किये उसके अनुसार कैन्सर को आधुनिक सभ्यता की अभिनव देन सिद्ध किया गया था।

संसार के विभिन्न देशों द्वारा किये जाने वाले आणविक विस्फोटों से जो रेडियोधर्मिता फैलती है, उसे कैन्सर का एक प्रमुख कारण बताया गया है। इसके अतिरिक्त डिब्बेबन्द भोजन, मशीनों द्वारा तैयार किया गया घी, तेल तथा अन्य खाद्य पदार्थ भी कैन्सर को उत्पन्न करने वाले कारण बताये गये थे। रेडियोधर्मिता के अलावा प्रौद्योगिकी और मशीनीकरण के विकास के फलस्वरूप वातावरण में जो प्रदूषण फैलता है, उसे भी कैन्सर के लिये जिम्मेदार ठहराया गया है। अमेरिका के डॉ० स्टर्न ग्लास का कथन था कि रेडियोधर्मिता और वायु प्रदूषण के मिश्रित प्रभाव के परिणामस्वरूप पिछले दिनों फेंफड़े के कैन्सर में असाधारण वृद्धि हुई है। सन् १९४५ के बाद वायुमण्डल में अणु परीक्षणों के आरम्भ होने के तीन से पाँच वर्ष बाद ही कैन्सर की दर में तेजी से वृद्धि हुई है।

यह रोग शरीर के किसी भी भाग में हो सकता है और जब वह देहनगरी में प्रवेश करता है तो इतनी चोरी-चुपके से कि अभी भी अपनी प्रारम्भिक स्थिति में आधुनिकतम यन्त्रों और लाख प्रयासों के बावजूद भी उसे पकड़ पाना सम्भव नहीं है। फलस्वरूप जब तक इसके लक्षण समझ में आते हैं, तब तक रोग शरीर में अपनी जड़े इतनी गहरी जमा लेता है कि उसे उखाड़ फेंकना मुश्किल ही नहीं लगभग असम्भव हो जाता है।

यह जानने से पूर्व कि कैंसर किस तेजी से बढ़ रहा है, यह जान लेना आवश्यक होगा कि कैंसर है क्या ? मनुष्य शरीर यों बाहरी दृष्टि से तो कई अंगों का मिला-जुला रूप दिखाई देता है। हाथ, पैर, नाक, आँख, मुँह, पेट, छाती, गर्दन आदि अंग अवयवों के संयोग को शरीर कहा जाता है। इसके अन्तः प्रदेश में यकृत, प्लीहा, फेफड़े, हृदय, गुर्दे आदि अंग होते हैं। मनुष्य के ये सभी बाहरी और भीतरी अंग छोटी-छोटी कोशिकाओं से बने होते हैं। मांस-पेशियों, ग्रन्थियों, रक्तवाहिनियों आदि में कई लम्बे-लम्बे तन्तु होते हैं। ये तन्तु भी कोशिकाओं से ही बनते हैं परन्तु ये भी इतने सूक्ष्म होते हैं कि इन्हें केवल सूक्ष्मदर्शी यन्त्र द्वारा ही देखा ज सकता है। इनकी सूक्ष्मता का अनुमान इस उदाहरण से लगाया जा सकता है कि एक सुई की नोंक जितना स्थान घेरती है, उतने स्थान ि ७००-८०० कोशिकायें आसानी से समा सकती हैं।

प्रत्येक कोशिका का एक निश्चित आकार, निश्चित स्वरूप और निश्चित कार्य होता है। इनमें से कुछ कोशिकायें अपना आकार बदलती रहती हैं। कुछ नष्ट होती रहती हैं और उनका स्थान नई कोशिकायें लेती रहती हैं। वृद्धावस्था में पहुँचने पर कोशिकाओं के बदलने अथवा नया बनने का क्रम रुक जाता है। चिकित्सा विज्ञानियों का कहना है कि कोशिकाओं के बनने, बदलने और नया रूप ग्रहण करने में जब किसी प्रकार की गड़बड़ी आती है तो कैंसर रोग उत्पन्न होता है। कैंसर से कोशिकाओं के बढ़ने का क्रम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असाधारण रूप से बढ़ जाता है। यह असाधारण वृद्धि क्यों होती है और किस प्रकार होती है, इस सम्बन्ध में वैज्ञानिकों में मतभेद हैं लेकिन अधिकांश वैज्ञानिक इसके लिये एक विशेष प्रकार के 'वायरस' को जिम्मेदार मानते हैं। यह वायरस किसी भी स्रोत से मनुष्य शरीर में घुसपैठ कर जाते हैं और कोशिकाओं को उत्तेजित करते हैं। कोशिकायें बार-बार इस क्रम से गुजरने पर अंग विशेष में इकट्ठी होने लगती हैं और अपनी आस-पास की कोशिकाओं को भी बिगाड़ती हैं।

जिस भाग या अंग में ये उत्तेजित कोशिकायें इकट्ठी होती हैं, उस भाग का आधार धीरे-धीरे सख्त पड़ता जाता है और वहाँ एक ऐसी गाँठ बन जाती है, जिसमें दर्द नहीं होता कुछ समय बाद यह गाँठ फूट जाती है, जिससे जख्म या फोड़ा हो जाता है और उसमें से खून तथा मवाद आदि निकलने लगता है। गाँठ में समाई हुई कैंसर की कोशिकायें दूसरी सामान्य कोशिकाओं के पोषक तत्व सोखकर स्वयं बढ़ती हैं। इससे दूसरी कोशिकायें मरने लगती हैं। जैसे-जैसे यह रोग बढ़ता है वैसे-वैसे बढ़ी हुई कोशिकाओं के समूह से छोटे-छोटे टुकड़े मूल गाँठ से कटकर अलग हो जाते हैं और रक्त संचार के माध्यम से शरीर के दूसरे भागों में पहुँच जाते हैं। इन भागों में पहुँचकर वे नये सिरे से बढ़ने लगती हैं। इस प्रकार कि कैंसर प्रायः फेफड़ों, यकृत, हड्डियों अथवा स्राव ग्रन्थियों में होता है। इन अंगों में होने वाले कैंसर की सबसे बड़ी विशेषता या भयंकरता यह होती है कि कैंसरग्रस्त कोशिकायें चुपचाप शरीर में अपने अड्डे जमाती रहती हैं और महीनों या बरसों तक शरीर में छिप-छिपकर बढ़ते रहने के उपरान्त भी अपना पता नहीं लगने देतीं। लक्षण तब प्रकट होते हैं, जब रोग नियन्त्रण से बाहर जा पहुँचता है और फिर असह्य वेदना सहते हुये मृत्यु के दाँतों में निर्ममतापूर्वक चबाये जाने देने के अलावा कोई चारा नहीं रह जाता।

कुल मिलाकर कैंसर का पता तब चलता है, जब वह शरीर में अपनी पूरी मोर्चाबन्दी कर लेता है। उस स्थिति में उपचार प्रायः कम ही सफल होते हैं। सफल होते भी हैं तो इस सीमा तक कि रोगी का जीवन वर्ष-दो वर्ष बढ़ जाता है। इसके लिये काम में लाई जाने वाली उपचार पद्धति रेडियो थेरेपी कहलाती है। रेडियो थेरेपी एक ऐसी चिकित्सा प्रणाली है, जिसमें कैंसर वाली कोशिकाओं का नाश करने के लिये 'क्ष' किरणों या रेडियो किरणों तथा अन्य रेडियो सक्रिय चीजों का उपयोग किया जाता है। इन किरणों का पता लगाने के बाद वैज्ञानिकों न यह अनुभव किया कि 'क्ष' किरणें तथा रेडियम की बीटा और गामा किरणें जब जीवित प्राणियों पर पड़ती हैं, तो जिन स्थानों को वे पार करती हैं, वहाँ की कोशिकायें नष्ट होने लगती हैं। इस अनुभव के आधार पर ही रेडियो चिकित्सा प्रणाली खोजी गई है।

जब रोगी के अंग को रेडियेशन के सामने रखा जाता है तो कुछ समय बाद उत्तेजित कोशिकाओं में परिवर्तन होने लगता है। सर्वप्रथम कोशकाओं का विभाजन रुकता है, लेकिन कुछ समय बाद यह विभाजन पुनः शुरू हो जाता है। यदि इस चिकित्सा पद्धति का यथेष्ट उपयोग किया जाय तो एक सप्ताह के भीतर ही उत्तेजित कोशिकायें काबू में आने लगती हैं, कैंसर की कोशिकाओं का आकार बढ़ने लगता है तथा बाद में वे विनष्ट हो जाती हैं। विगत कई वर्षों में कई लोगों पर इस चिकित्सा प्रणाली का उपयोग किया गया है, पर अधिकांश मामलों में यह पाया गया है कि इससे रोगी की आयु दो-चार वर्ष में बढ़ अवश्य जाती है, वह अपने को स्वस्थ भी अनुभव करने लगता है तथा सामान्य जीवन भी जीने लगता है किन्तु कालान्तर में रोग फिर उभर आता है। अर्थात् इस चिकित्सा से रोग के जड़-मूल से कट जाने का कोई भरोसा नहीं किया जा सकता।

इसका मुख्य कारण आणविक प्रयोगों के कारण विश्व भर में फैल जाने वाला विकिरण बताया जाता है, जो शरीर की कोशिकाओं को उत्तेजित करता है। और भी कई कारण हैं जो आधुनिक सभ्यता के उत्पादन कहे जा सकते हैं। इस यान्त्रिक सभ्यता के साथ-साथ यह प्राणघातक रोग कितना फैल जायेगा और इसके कितने नये-नये रूप सामने आयेंगे, कुछ नहीं कहा जा सकता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य के सम्बन्ध में शरीर विज्ञानियों के मन्तव्य

रसायन शास्त्र की शोध पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले डाक्टर लुई पोलिंग ने केलिफोर्निया विश्वविद्यालय में एक भाषण देते हुये कहा था—"मनुष्य के निरोधक और विधायक जीवाणु अपनी क्षति और आवश्यकता की पूर्ति स्वयं करते रहते हैं। यदि मनुष्य व्यसन और असंयम से बचते हुये प्राकृतिक जीवन जिये तो निस्सन्देह लम्बी और निरोग जिन्दगी जी सकता है। तब न उसे रोगी बनना पड़ेगा न चिकित्सा की जरूरत रहेगी।"

कर्निल युनिवर्सिटी ऑफ अमेरिका में दीर्घ जीवन सम्बन्धी प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि यदि व्यक्ति अपने आहार की मात्रा घटा दे और सीधा सादा सुपाच्य भोजन करे तथा संयमित दिनचर्या के साथ हँसी-खुशी की जिन्दगी बिताये तो वह बिना अधिक प्रयत्न के लम्बा और निरोग जीवन जी सकता है

एकेडेमी ऑफ मेडीसन के वैज्ञानिकों का एक संयुक्त वक्तव्य कुछ दिन पूर्व न्यूयार्क टाइम्स में छपा था, जिसमें कहा गया था कि—कम भोजन से नहीं वरन् अधिकांश लोग अधिक भोजन के कारण बीमार पड़ते हैं। उत्तेजक पदार्थों का सेवन अस्वस्थता का सबसे बड़ा कारण है। यदि लोग सादा और सरल जीवन बितायें तो उन्हें तीन चौथाई बीमारियों से स्वयमेव छुटकारा मिल जाये। साठ वर्ष से अधिक आयु के लोगों को बुढ़ापे के कारण जिन शारीरिक कष्टों से पीड़ित रहना पड़ता है, उसका कारण वृद्धावस्था नहीं वरन् पिछले दिनों का अनियमित एवं अव्यवस्थित जीवन ही मुख्य कारण होता है। स्विटजरलैण्ड के प्रसिद्ध डा. कोरेञ्जेस्की का कथन है ढलती आयु का कष्टकर होना युवावस्था के असंयम का परिणाम है अन्यथा पके हुये फल की तरह वृद्धावस्था अधिक मधुर और सरस होनी चाहिये। आक्सफोर्ड और डबलिन में स्वास्थ्य के रहस्य बताते हुये भी उन्होंने यही कहा—आवेशग्रस्त अशान्त मनोभूमि और उत्तेजक आहार ही हमारी आयु घटते जाने का एकमात्र कारण है।

लन्दन टाइम्स के मतानुसार उस देश में पुरानी खाँसी, फेफड़े का कैन्सर, हृदय रोग और मस्तिष्कीय तनाव की बीमारियाँ बहुत तेजी से बढ़ रही हैं, इसका कारण पौष्टिक पदार्थों का अभाव नहीं वरन् कृत्रिम जीवन और दवाओं की बढ़ती हुई निर्भरता ही पाया गया है।

अमेरिका की फिशर साइन्टिफिक कम्पनी द्वारा प्रकाशित 'लेबोरेटरी' पत्रिका के लेख में विस्तार से यह बताया गया है कि बीमारों के शरीर में हानिकारक कीटाणु मात्र एक प्रतिशत होते हैं। उन्हें ही सब कुछ मानकर ९९ प्रतिशत स्वस्थ कीठाणुओं का लाभ लेने से इन मारक दवाओं के कारण अधिक वंचित हो जाना कहाँ की बुद्धिमानी है ?

विश्व विख्यात सुप्रसिद्ध चिकित्सा विज्ञानी डाक्टर जोशिया ओलफील्ड ने अपने ग्रन्थ दुःख दर्द पर चिकित्सा और विजय (हैलिंग एण्ड कान्कउ ऑफ पेन) में लिखा है—एलोपैथिक पद्धति की अपेक्षा पुरानी चिकित्सा पद्धतियों का दृष्टिकोण तथा आधार अधिक स्पष्ट है। आधुनिक चिकित्सा पद्धति से रोगों के लक्षण दबते, बदलते, पुराने होते और असाध्य बनते जाते हैं। इससे मात्र नई शोधों, नई दवाओं और नये सिद्धान्तों के गढ़ने में माथापच्ची करने मात्र का द्वार खुलता है। रोग निरोध के नाम पर रक्त में नकली बीमारी पैदा कर दी जाती है, जिसे देखकर असली बीमारी के चले जाने का धोखा भर हो जाये।

अनेक रोगों के अनेक रोग कीटाणु पृथक्-पृथक् होते हैं और उनके निवारण के लिये पृथक्-पृथक् दवायें होनी चाहिये। आज के चिकित्साशास्त्री मानकर चलते हैं पर यदि गहराई से शोध की जाये तो पता चलेगा कि अपच एक ही रोग है और उसी की विकृतियाँ प्रकारान्तर से भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार के रोग कीटाणुओं के रूप में दिखाई देती तथा बदलती रहती हैं जीवाणु विशेषज्ञ डॉक्टर जे. ई. मेकडोनाफ ने बताया है—रोगों का मूल स्रोत आँतों में है। बिना पचा और विकृत आहार वहाँ पड़ा सड़ता रहता है और उस सड़न से उत्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुये कृमि अनेक प्रकार के रंग-रूप-आकार-प्रकार बदलते रहते हैं। वस्तुतः वे सब एक ही पेड़ के पृथक् दीखने वाले पत्ते मात्र हैं।

इन रोग कीटाणुओं से कैसे बचा जाय यह किसी की समझ में नहीं आता। आपरेशन करने वाले डाक्टरों तक के शरीर में यह कीटाणु होते हैं और उनकी साँस आदि से वे हवा में उड़ते रहते हैं। ऐसी दशा में आपरेशन के समय वे उड़कर रोगी को लग सकते हैं। अमेरिका के 'टाइम' पत्रिका में बोस्टन शहर के 'विगन हास्पीटल' की शोध का परिणाम प्रकाशित हुआ हैं, जिसमें बताया गया है कि एक पेट के आपरेशन के समय कमरे को पूर्ण कीटाणुरहित कर दिया गया था, पर थोड़ी ही देर में वहाँ असंख्य खतरनाक कीटाणु उड़ते पाये गये। तलाश करने पर मालूम हुआ कि वे असिस्टेण्ट सर्जन की साँस से निकल रहे थे। यह तो तब हुआ जब कि मुँह पर आपरेशन के समय लगाया जाने वाला नकाब नाक और मुँह पर भली प्रकार बाँधे हुये थे।

फिलडेल्फिया के डाक्टर रावर्ट वाइज का कथन है कि रोगियों की तरह डाक्टरों और नर्सों में भी रोग कीटाणु पाये जाते हैं, और उनसे भी रोगियों को छूत लग सकती है जो इलाज करने का जिम्मा सिर पर उठाये हुये हैं। पर उनका कथन है कि कई बार तो यह कीटाणुओं का अनुपात मरीजों से भी ज्यादा उन चिकित्सकों में होता है।

डेली रिकार्ड में एक समाचार छपा है—जिसमें लन्दन के विशेषज्ञ डाक्टर एवरी जोन्स द्वारा ब्रिटिश मेडीकल एसोशियशन नारविच में दिये गये एक भाषण की चर्चा है—डाक्टर जोन्स ने बताया कि अस्पतालों में सफाई का उचित प्रबन्ध न होने से लोगों में बीमारियों के कीटाणुओं का आपसी परिवर्तन होता है और बीमारियाँ फैलती हैं।

रोग कीटाणुओं को बाघ या अजगर मानकर चलने से और उनके पीछे बन्दूक लिये फिरने से काम न चलेगा। वे इतने अधिक हैं कि उनसे बचाव कर सकना सम्भव नहीं। सम्भव यही है कि हम अपने रक्त को शुद्ध और जीवनी शक्ति को इतनी समर्थ बनायें, जिससे कोई हानिकारक जीवाणु शरीर में प्रवेश पाने पर जीवित ही न रह सके। सामान्य स्वास्थ्य और समर्थता की वृद्धि के लिये उपयुक्त जीवन-क्रम अपनाने के स्थान पर तीक्ष्ण औषधियों के सेवन का और चीर-फाड़ का जो फैशन चल पड़ा है। उससे जन साधारण का हित नहीं हो रहा है और स्वास्थ्य की समस्या सुलझ नहीं रही है। लोगों की औषधि श्रद्धा को देखते हुये डाक्टर लोग अति उत्साह से काम लेने लगे हैं और मानव शरीर जैसे बहुमूल्य माध्यम के प्रति उतनी सावधानी नहीं बरत रहे हैं जितनी बरती जानी चाहिये। अन्धाधुन्ध चिकित्सा का परिणाम और भी अधिक भयानक हो रहा है और कई बार तो लोग यहाँ तक सोचने लगते हैं कि इस इलाज की अपेक्षा यदि बिना इलाज कराये रहते तो आदिवसियों की तरह अपेक्षाकृत कम समय, कम खर्च और कम कष्ट में अच्छे हो जाते।

मेडीकल सोसाइटी ऑफ इण्डिविजुअल साइकोलोजी के एक अधिवेशन में 'प्लेस ऑफ साइकोलोजी' इन मेडीकल पैरिकुलम शीर्षक अपना लेख सुनाते हुये कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सर वाल्टर लेम्डन ब्राडन ने बताया कि—"अपने निष्कर्ष के अनुसार मैं पूरी ईमानदारी के साथ कह सकता हूँ कि हम डाक्टर लोग जनता के लिये सबसे अधिक खतरनाक हैं जो काल्पनिक आधारों पर ऐसी चिकित्सा करने लग पड़ते हैं जो अन्ततः रोगी के लिये लाभदायक नहीं हानिकारक ही सिद्ध होती है। इसीसे मिलता-जुलता समर्थन मेडिकल वर्ल्ड पत्रिका में "पारटिंग ऑफ दी वे' शीर्षक में छपा है। वेल्स यूनिवर्सिटी के मेटीरिया मेडिका के प्रोफेसर डाक्टर डब्ल्यू स्टीवन्स ने भी वर्तमान अपूर्ण चिकित्सा पद्धति और उसके अनाड़ी चिकित्सकों की ऐसी ही खबर ली है और रोष भरी खरी खोटी सुनाई है।

गाई हास्पिटल के चिकित्साधिकारी ने अपने कटु अनुभवों का निष्कर्ष बताते हुये लिखा है—"रोगियों में से ६७ प्रतिशत का निदान गलत होता है और उनकी चिकित्सा ऐसे ही अनुमान के आधार पर चलती रहती है। मरे हुये रोगियों का शवच्छेद करने से जो पता चलता है, उससे विदित होता है कि कितने ही ऐसे हैं, जिनके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोग तथा कारण को ठीक तरह समझा ही नहीं जा सका और वे बेचारे गलत इलाज के शिकार बन गये।

लन्दन के सन्डे पिक्टोरियल में 'दुरी से मुखी' शीर्षक से संसार प्रसिद्ध सर्जन के दुःख पूर्ण अनुभव छपे हैं कि उसने नासमझी में कितने गलत आपरेशन किये और उनसे कितनों को कितनी हानि उठानी पड़ी ?

अमेरिका की चिकित्सा पत्रिका 'जनरल ऑफ अमेरिकन आष्टियोपैथिक एसोसियेशन' में छपे एक विवरण में कह गया है कि—सर्जनों के द्वारा बेकार या रुग्ण समझकर काटकर निकाल दिये गये अंगों में से २० हजार के टुकड़ों को विशेषज्ञों द्वारा जाँचा गया तो पता चला कि इनमें से अधिकांश अंग निरोग थे और उन्हें काटने की जरूरत नहीं थी।

'अमेरिकन कालेज ऑफ सर्जन' के डायरेक्टर डा. पाल हाली का कथन है कि आजकल जितने आपरेशन होते हैं, उनमें से अधिकांश अकुशल डाक्टरों द्वारा अनुमान मात्र के आधार पर किये हुये होते हैं। इससे रोगियों के हित की अपेक्षा अहित ही अधिक होता है।

'लासेन्ट' पत्रिका में एक बार मरने वाले डाक्टरों की आयु के सम्बन्ध में एक शोध का निष्कर्ष लम्बी तालिका के रूप में छपा है, उससे पता चलता है कि डॉक्टरों की औसत उम्र पचास से भी नीचे रह जाती है, जबकि अन्य धन्धे करने वाले लोग इससे कहीं अधिक जीवित रहते हैं। जो स्वयं अपना इलाज नहीं कर पा रहे, जिनकी चिकित्सा पद्धति एवं दवायें स्वयं के लिये उपयोगी सिद्ध न हो सकीं वे भला दूसरों का क्या लाभ कर सकेंगे ? इस तथ्य के देखते हुये यही उचित है कि हम दवाओं के अन्ध भक्त न बनें और डाक्टरों की केवल आवश्यक सहायता ही उपलब्ध करें।

दवा से रोग दबते भर हैं—जाते नहीं

शरीर की मूल प्रकृति बीमार होने की नहीं है। सृष्टि के असंख्य प्राणियों को अपने-अपने ढंग के शरीर मिले हैं, वे निर्धारित आयु तक बिना किसी व्यथा बीमारी के जीवित रहते हैं। मृत्यु, दुर्घटना आदि तो अपने हाथ की बात नहीं, पर बीमारी का उत्पादन अपना निजी है, उसे अपनी रीति-नीति बदलकर आसानी से रोका जा सकता है। स्वास्थ्य सुरक्षा की सर्वविदित नीति यह है कि प्रकृति के अनुरूप अपना आहार-विहार, रहन-सहन, बनाये रखा जाय जैसा कि सृष्टि के सभी प्राणी बनाये रखते और चैन से जीते हैं। इन्द्रियों का संयम बरता जाय, दिनचर्या ठीक रखी जाय, श्रम और आराम का सन्तुलन रहे, मस्तिष्क को उत्तेजनाओं से बचाये रखा जाये, स्वच्छता का ध्यान बना रहे तो इन मोटे नियमों का पालन भर करने से रोगों से बहुत हद तक छुटकारा मिल सकता है। स्व उपार्जित बीमारियों का ही बाहुल्य रहता है—बाहर से तो बहुत कम आती हैं। मौसम का प्रभाव, वंशगत विकार, छूत, दुर्घटना आदि कारणों से भी अप्रत्याशित रोग हो सकते हैं, पर उनका अनुपात बहुत स्वल्प रहता है। उन्हें अपवाद भर समझा जा सकता है। मूल उत्पत्ति तो अपनी ही उच्छृंखलता से होती है। अव्यवस्थित और विकृत आदतों का शिकार होकर ही मनुष्य बीमार पड़ता है। आमतौर से औषधि उपचार ही रोग निवारण के लिये प्रयुक्त होता है, पर ध्यान रखने योग्य बात यह है कि उसमें लाभ की मात्रा से कम हानि की मात्रा नहीं है।

मारक औषधियाँ घातक अस्त्र की तरह हैं, जिनमें मारकाट मचाने की क्षमता तो है, पर इतनी बुद्धि नहीं है कि कुश्ती लड़ रहे दो पहलवानों में से एक को बचाने दूसरे को गिराने की भूमिका निभा सकें, उनके लिये मित्र शत्रु का अन्तर करना सम्भव नहीं। आग लगती है तो उपयोगी, अनुपयोगी दोनों को ही जलाती है। शरीर में रोग कीटाणु किसी एक जगह इकट्ठे नहीं बैठे रहते, जहाँ हमला करके उन्हें मार गिराया जा सके, स्वस्थ रक्त कण उन विषाणुओं से गुत्थम-गुत्था करने में जुटे होते हैं। ऐसा कोई उपाय अभी तक नहीं ढूँढ़ा जा सका जो मात्र विषाणुओं को तो मारे पर स्वस्थ संरक्षकों को बचा ले। औषधियाँ पाचन तन्त्र में होकर रक्त में पहुँचती हैं अथवा सुई लगाकर सीधी रक्त में प्रवेश कराई जाती हैं। हर हालत में रक्त में भी ऐसी विषाक्तता का समावेश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करना पड़ता है, जो रोग कीटाणुओं का संहार कर सके। स्पष्ट है कि इस मरण अनुष्ठान का प्रभाव आक्रमण और संरक्षक दोनों ही पक्षों पर समान रूप से पड़ता है। दोनों की ही हानि समान रूप से होती है। ऐसी दशा में शत्रु नाश के सौभाग्य के साथ-साथ मित्र नाश को क्षति भी उठानी पड़ती है। संरक्षण तत्व घट जाने से शरीर की निरोधक सामर्थ्य घट जाती है। फिर पुराने शत्रुओं को उभरने और नये को घुस पड़ने के लिये खाली मैदान हाथ लगता है और वे फिर अधिक निश्चिन्ततापूर्वक अपनी विनाश लीला रचते रहते हैं, या इतना अवश्य होता है कि स्वस्थ कण विजातीय तत्वों को मार भगाने का जो प्रबल प्रयत्न करते थे और जिसकी अनुभूति तीव्र रोगों के रूप में होती थी वह नहीं होती। निरोध से असमर्थ शरीर रोगों के आक्रमण का मन्द प्रतिरोध करता है, अस्तु जीर्ण रोगी ऐसे ही कुसमुसाते रहते हैं, जोर से रोते-चिल्लाते नहीं। किन्तु इससे क्या, जीवनी शक्ति घट जाने से क्रियाशीलता तो नाम-मात्र को ही रह जाती है। थका-हारा, क्षत-विक्षत शरीर किसी प्रकार मरण के दिन पूरे करता है उसमें पुरुषार्थ की क्षमता ही नहीं रहती है। ऐसे लोग पूरे जिन्दगी भी नहीं जी पाते, उन्हें अकाल मृत्यु से मरना पड़ता है।

पूरी या अधूरी तरह संज्ञा शून्य करने वाली दवाओं के नाम रूप बढ़ते जाते हैं। इसके लिये अनेकों रसायन ढूँढ़े लिये गये हैं। जब अकेली अफीम ही इस कार्य को पूरा नहीं करती, उसकी अनेकों सहेलियाँ मैदान में आ गई हैं, जो उसका हाथ बटातीं और बोझ हल्का करती हैं। 'एस्प्रीन' प्रसिद्ध दवा है जो सिरदर्द को राहत पहुँचाती है। अफीम के सत्व की सुइयाँ लगाकर अभी भी वेदना की अनुभूति को रोक दिया जाता है। निद्रा लाने वाले रसायन भी लगभग यही करते हैं। इस उपचार से रोगी का चिल्लाना तो दूर हो जाता है, पर रोग की विनाशलीला में कोई अन्तर नहीं पड़ता। पीड़ा में जहाँ कष्ट होता है, वहाँ एक लाभ भी हैं कि उससे निवारक संघर्ष तीव्र होता है और रोग की निवृत्ति में भारी सहायता मिलती है। कष्ट की अनुभूति घट जाने से उस मोर्चे पर युद्ध सैनिक भेजने और विकृति को परास्त करने की चिन्ता से मस्तिष्क को छट्टी मिल जाती है। फलतः रोगों को अपनी जड़ जमाने का अधिक अच्छा अवसर मिल जाता है। इस प्रकार शामक औषधियों से वेदना निग्रह में जितनी राहत मिलती है, उतनी ही यह कठिनाई भी बढ़ती है कि प्रकृति का निरोधक संघर्ष शिथिल पड़ जाने से बीमारियाँ अपना अड्डा जमाकर बैठ जाने में सफल हो जाती हैं।

आपत्तिकालीन सुरक्षा के लिये औषधि ली जा सकती है। उन्हें न छूने जैसा दुराग्रह करने की आवश्यकता नहीं है। ध्यान रखने की बात इतनी ही है, मूल समस्या स्वास्थ्य रक्षा के नियमोपनियमों का पालन करने की है। उस ओर ध्यान न दिया गया तो औषधि उपचार का लाभ जादू का तमाशा देखने जैसी खिलवाड़ बनकर ही रह जायेगा। मूल समस्या का चिरस्थायी समाधान उतने भर से हो नहीं सकेगा। प्रकृति का अनुसरण करने और आहार-विहार के नियमों का कठारतापूर्वक पालन करने से ही निरोग जीवन जी सकना सम्भव हो सकता है।

स्वास्थ्य सम्वर्धन के लिये टानिकों का—पौष्टिक आहारों का आसरा तकने से काम नहीं चलेगा। यदि उनके सहारे बलिष्ठता सम्भव रही होती तो साधन सम्पन्न लोगों में से एक भी कमजोर दिखाई न पड़ता, वे पैसा खर्च करके प्रचुर परिणाम में पुष्टाई खरीद लिया करते। तब संसार में एक भी धनवान व्यक्ति दुर्बल दिखाई न पड़ता। इसी प्रकार यदि औषधि उपचार से रोग निवृत्ति सम्भव रही होती तो कम से कम चिकित्सा व्यवसायी और औषधि निर्माता तो बीमार नहीं ही दिखाई पड़ते। वे दूसरों की तो उपेक्षा भी कर सकते थे, पर अपनी एवं अपने स्वजनों की रुग्णता क्यों सहन करते। अपने लिये तो अच्छी औषधियाँ बना ही सकते थे और निदान उपचार के सहारे अपने घर से तो बीमारियों को निकाल बाहर कर ही सकते थे, पर ऐसा होता कहाँ है ? सच तो यह है कि चिकित्सकों के घरों में बीमारियाँ सामान्य लोगों की तुलना में कम नहीं कुछ अधिक मात्रा में ही घुसी रहती हैं। दूसरे लोगों को औषधियों पर जितना अविश्वास होता है, डाक्टरों के घरों में उससे कम नहीं अधिक ही अविश्वास पाया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है। सामान्य लोग तो औषधियों के स्वाद एवं पैसा खर्च होने के कारण भी उन्हें खाने से आना-कानी करते होंगे, पर चिकित्सकों के घर वाले जानते हैं कि मुद्दतों से जेब खाली करते रहने वाले और आये दिन दवाखाने पर खड़े रहने वाले रोगी जब इन औषधियों से कुछ राहत नहीं पा सके तो हमें ही उनसे क्या कुछ मिलने वाला है। इस अविश्वास के कारण ही उन घरों में दवा-दारू खाने के सम्बन्ध में उपेक्षा बरती जाती रहती है।

यदि बीमारियाँ समचमुच ही कष्टकारक लगती हों—उनके कारण होने वाली आर्थिक तथा दूसरे प्रकार की हानियाँ अखरती हों और उनसे पीछा छुड़ाना यदि वास्तविक रूप से अभीष्ट हो तो कारण और निवारण पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता होगी और यह देखना होगा कि अस्वस्थता के विष वृक्ष की जड़ें कहाँ हैं ? पत्ते तोड़ने से नहीं जड़ काटने से ही स्थायी निराकरण सम्भव हो सकेगा।

इलिच का कथन है—तथाकथित गुणकारी औषधियों का एक हानिकारक पक्ष भी है। जिसे प्रकट नहीं किया जाता और गुण ही गुण गाये जाते रहते हैं। दोष अपना काम करते हैं। जहाँ गुण पक्ष से यत्किंचित लाभ होता है, वहाँ उसके विषाक्त प्रभाव से होने वाली हानि उतनी बड़ी होती है कि तुलना करने पर औषधि सेवन का लाभ कम और घाटा अधिक रहता है। बहु प्रचलित 'पेन्सिलीन' के साथ एनर्जी उत्पन्न करने वाले तत्वों पर भी ध्यान दिया जा सके तो उसे प्रयोग करने से पूर्व सौ बार विचार करने और हर कदम फूँक-फूँक कर धरने की आवश्यकता पड़ेगी, कुछ समय पूर्व वेदनाहीन प्रसव के लिये थियेल्डोपाइट नामक औषधि ने विश्वव्यापी ख्याति कुछ ही समय में प्राप्त कर ली थी। किन्तु जब उसके प्रभाव से विकलांग बच्चे उत्पन्न होने की बाढ़ आई तो उसके निर्माण एवं प्रयोग पर कानूनी प्रतिबन्ध लगाये गये। इसी प्रकार एक अन्य औषधि क्लोरम फेनिकोल का भी निषिद्ध घोषित किया गया था। सौन्दर्य प्रसाधनों में प्रयुक्त होने वाली 'हैक्सा क्लोरो फैन' के कारण उत्पन्न होने वाली हानियाँ सामने आईं तो सुन्दरता और कोमलता के नाम पर प्रयुक्त होने वाली इस दवा पर रोक लगाई गई।

रोग मारने वाली दवाओं की बाजार में भरमार है। इनके गुणगान तो बहुत किये जाते हैं, पर यह नहीं बताया जाता कि इनके कारण शरीर की प्रकृति प्रदत्त रोग निरोधक शक्ति घटती है और विषाणुओं में मारक औषधि पचाने की क्षमता उत्पन्न हो जाती है। डी. डी. टी. का प्रमाण सामने है। आरम्भ में तो उसके प्रयोग से मच्छर मरते थे। किन्तु जो बच रहे उनने ऐसी पीढ़ियाँ उत्पन्न कर लीं जिन पर डी. डी. टी. का असर नहीं होता और वे उसे खुराक की तरह पचाते हैं। मलेरिया के फिर वापिस लौटने पर सर्वत्र यह चिन्ता संव्याप्त है कि कहीं चेचक भी फिर से वापिस न लौट पड़े। इसी प्रकार अन्य मारक औषधियों के अन्धाधुन्ध प्रचलन की समीक्षा करते हुये 'न्यू साइन्टिस्ट' पत्रिका के एक लेख में आशंका प्रकट की गई है कि कहीं ऐसा न हो कि बीमारियों से लड़ने वाले उपचारों का तरकस ही खाली हो जाये और आज की उत्साहवर्धक मारक औषधियाँ भविष्य में निरर्थक सिद्ध होने लगें।

रोग का होना यह प्रकट करता है कि शरीर में विजातीय द्रव्य भर गया है और उसके विरुद्ध जीवनी शक्ति ने खुली लड़ाई आरम्भ कर दी है, साथ ही यह भी जानकारी मिलती है कि आहार-विहार में घुस पड़ी विकृतियाँ शरीर के ढाँचे की तोड़-फोड़ कर रही हैं। इस स्थिति के निराकरण के ऐसे सौम्य उपाय होने चाहिये, जिससे जीवनी शक्ति बढ़े और विषाणुओं को मिलने वाला परिपोषण बन्द हो जाये। इसके लिये संचित मल के निष्कासन एवं अवयवों को विश्राम देने वाले उपाय अपनाये जाने चाहिये। उस ओर उपेक्षा रखी जाये और रोग के ऊपरी लक्षण कष्ट को दबाया जाये तो इससे कुछ स्थायी समाधान न निकलेगा। बाढ़ का पानी मेंढ़ के एक रास्ते से न सही दूसरे रास्ते बह निकलेगा। एक बीमारी अच्छे होते-होते दूसरी नई व्याधियाँ उठ खड़ी होती हैं, इससे प्रकट होता है कि मात्र ऊपर से ही लीपा पोती हुई है, विभीषिका का अस्तित्व अपने स्थान पर यथावत् मौजूद है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोगों की उत्पत्ति कई कारणों की मिली-जुली प्रतिक्रिया है। वर्तमान रोगों में से अधिकांश को साइको सोमेटिक—आधि-व्याधि का सम्मिश्रण कह सकते हैं, उनमें शारीरिक और मानसिक दोनों ही विकृतियाँ जुड़ी रहती हैं। उनमें सामाजिक एवं आर्थिक दबाव भी सम्मिलित रहते हैं। परिवार की उलझनों और समस्याओं पर सोचने की शैली भी आन्तरिक सन्तुलन को बिगाड़ती है और उस गड़बड़ी का परिणाम कई प्रकार की चित्र-विचित्र बीमारियों में दृष्टिगोचर होता है। प्राचीन काल के रोग निर्धारण, निदान विज्ञान में—बीमारियों के जो लक्षण बताये गये हैं, अब उनसे भिन्न प्रकार के रोग दृष्टिगोचर होते हैं। डाक्टर इन्हें कई रोगों का सम्मिश्रण कहकर अपना समाधान कर लेते हैं। किन्तु वास्तविकता यह होती है कि, शारीरिक विकृतियों के साथ-साथ मानसिक पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक परिस्थितियों में विषमतायें घुस पड़ने के कारण उन्हें सप्रविकृति सन्निपात' नाम दिया जा सकता है। उन विचित्र रोगों का इलाज मात्र औषधियों से नहीं हो सकता वरन् उसके लिये मानसिक सहानुभूति, आशा, उत्साह, विश्वास, साहस आदि उभारने से लेकर अन्यान्य समस्याओं के स्थायी अथवा कामचलाऊ समाधान खोजने होंगे। आज जिस प्रकार मलमूत्र रक्त आदि के परीक्षणों को महत्त्व दिया जाता है, उसी प्रकार रोग की मनःस्थिति एवं परिस्थिति जानने और उसका बहुमुखी समाधान खोजने की आवश्यकता पड़ेगी। यह समाधान जिस हद तक सम्भव हो सकेंगे, रोगी की व्यथा उसी अनुपात से हल्की होती चली जायेगी।

दवा खाइये किन्तु सावधानी के साथ

निस्सन्देह औषधियाँ रोग निवारण के लिये बनाई जाती हैं। कुछ समय पूर्व जिन रोगों को दुस्साध्य समझा गया, उन्हें अब नई-नई आविष्कृत औषधियों द्वारा सरलता से भगाया जा रहा है। दुर्बल व्यक्तियों को डाक्टर लोग प्रायः टानिक, विटामिन की गोलियाँ सेवन का परामर्श देते हैं। अनिद्रा के लिये स्लीपिंग पिल्स, सर्दी-जुकाम फ्लु के लिये ए० पी० सी० (एस्प्रीन, पैरिफिन, कॉफिन) तथा रक्त विकार के लिए सल्फा दवायें देते हैं।

किन्तु कई बार असावधानी के कारण ये औषधियाँ विष बन जाती हैं। एक अमरीकन विशेषज्ञ डा. गॉसलिन ने लोगों को औषधियों के दुरुपयोग जनित परिणाम के हृदय द्रावक उदाहरण देकर सावधान किया है—शूल निवारक औषधि अधिक मात्रा में खाने पर रक्तस्राव होता है और रक्तन्यूनता का रोग आरम्भ हो जाता है। कॉफी (coffee) के साथ एक्फीटैमीन खाने से अनिद्रा और मानसिक असन्तुलन हो जाता है। नींद की गोलियाँ निरन्तर सेवन करने पर व्यक्ति इनका इतना अभ्यस्त हो जाता है कि इनके बिना नींद नहीं आती। यही कारण है कि यूरोप के सभ्य देशों में तथा अमेरिका में भी इन गोलियों की खपत आश्चर्यजनक रूप से बढ़ रही है।

शारीरिक संरचना की दृष्टि से हर व्यक्ति की ग्रहणशीलता क्षमता एवं सम्वेदनशीलता अपने-अपने ढंग की होती है। यदि 'अ' को पेचिश के लिये एन्ट्रोक्वीनल की २ गोलियाँ ठीक कर देती हैं तो यह आवश्यक नहीं कि पेचिश के हर रोगी को इसी दवा की इतनी ही मात्रा लाभप्रद होगी। आजकल जन साधारण सामान्य सी जानकारी प्राप्त कर लेने पर स्वयमेव अपने उपचार के लिये कोई अनुपयुक्त दवा अनिश्चित मात्रा में खाकर अनजाने में ही खतरा मोल ले बैठता है।

"शरीर की कार्यविधि में मौलिक परिवर्तन ला सकने की क्षमता पर ही किसी औषधि का चमत्कारी गुण आश्रित है" डा. डेविडसन की यह बात बिल्कुल सही है। इसीलिये औषधि द्वारा तुरन्त-लाभ की आशा तभी की जा सकती है यदि उसमें तन्दुरुस्ती बढ़ाने की क्षमता हो।

सामान्यतः प्रत्येक औषधि हमारे रक्त में मिल जाती है फिर कोशिकाओं में रासायनिक क्रिया उत्पन्न करती है और अपना प्रभाव दिखाती है। इसलिये ऊतक द्रव्य में औषधि की उपयुक्त मात्रा एकत्रित होना और कोशिकाओं पर इसका प्रभाव पड़ना परमावश्यक है। तभी औषधि गुणकारी सिद्ध हो सकती है अन्यथा नहीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर में प्रविष्ट की गई सबकी सब दवा अन्दर नहीं रहती वरन् यकृत और वृक्क इसे बाहर निकालते रहते हैं। दवा का अधिकांश भाग गुर्दे उत्सर्जित करते हैं और कुछ उड़नशील दवायें फेफड़े-ब्रौंकियल एवं जहर की ग्लैंडस् द्वारा निष्कासित की जाती है।

सामान्य प्रकार की औषधि को बार-बार खाना पड़ता है ताकि उसका प्रभाव अविरल रखा जा सके। किन्तु घातक विष संखिया आदि एक बार खाने से अपना भयंकर प्रभाव दिखाता है क्योंकि अन्य दवाइयों की भाँति इसका उत्सर्जन किसी भी अंग द्वारा सम्भव नहीं है।

औषधियों के प्रभाव क्रिया की पृष्ठभूमि से अधिकांश व्यक्ति अपरिचित हैं। कितनी अवधि तक किस मात्रा में कौन-सी दवा किस रोग में सेवन करनी चाहिये ? यह जन साधारण के वश की बात नहीं। फिर भी लोग औषधियों के विज्ञापन पढ़कर स्वयं ही अपना उपचार करने लग जाते हैं। परिणामस्वरूप उन्हें निराशा हाथ लगती है। कभी-कभी घातक परिणाम भी निकलते हैं। निरन्तर किसी औषधि का प्रयोग करने से हमारा यकृत उन्हें निष्क्रिय बना देता है और वे बिल्कुल निरर्थक सिद्ध होती हैं।

आजकल कई औषधियाँ ऐसी हैं जिनकी बड़ी चर्चा है जैसे—"सल्फा' दवायें, पैन्सीलीन, एस्पिरीन इत्यादि। उनकी रोग निरोधकता एवं उपयोगिता का ढोल जिस प्रकार पीटा गया था अब उस ढोल के पोल खुलने लगे हैं। 'सल्फा' से सिरदर्द, ढीलापन, भूख न लगना और त्वचा का नीलापन आदि रोग होने लगे हैं। बाद में इसके कारण 'गुर्दे की दुर्बलता' पाई गई है। इसी प्रकार पैन्सिलीन से स्नायु मण्डल अव्यवस्थित हो जाता है जिससे पित्ती उछलना, श्वांस रोग और सन्निपात आदि रोग उद्भव होते हैं।

सभ्य देश इसके दुष्परिणामों से सचेत होने लगे हैं तथा इसकी खपत पर चिन्तित होकर प्रयोग निषेद्ध का दावा कर रहे हैं।

ए. पी. सी. और एस्प्रो जैसी सामान्य औषधियाँ भी खाली पेट सेवन करने पर आमाशय की श्लेष्मिक झिल्ली को क्षतिग्रस्त करके रक्तस्राव का कारण बनते अनुभूत हुई हैं। इससे रोगियों को उत्तेजना और अनिद्रा की शिकायत भी हुई है। फिर भी लोग इसकी परवाह किये बिना इनका अन्धाधुन्ध सेवन किये जा रहे हैं। बच्चों और बूढ़ों को टॉनिक देने की एक परम्परा-सी चल पड़ी है। डा. ओल्सन ने इसका जोरदार विरोध किया है कि ये टॉनिक स्वास्थ्य के लिये हितकर नहीं बल्कि दुर्बलतावर्द्धन के लिये हितकर है। इसी प्रकार आजकल विटामिन की गोलियाँ उदरस्थ करने की होड़ भी चली है। इनसे जितनी स्वास्थ्य-क्षति हो रही है, उस ओर सभी आँखें मूँदे हैं। विज्ञापन का ढोल पीटकर आज ऐसी घातक औषधियों को—कारगर दवा, अचूक औषध और रामबाण कहकर बेचा जा रहा है और जन स्वास्थ्य से भयावह ठिठोली की जा रही है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि नकली टॉनिक एवं विटामिनों के स्थान पर ताजा फल, सब्जियों, दूध और अनाज को महत्त्व दिया जाये। टॉनिक और विटामिनों से शारीरिक तत्वों की न्यूनता पूरी नहीं की जा सकती इसके लिये हमें सन्तुलित भोजन एवं व्यायाम की ओर ध्यान देना पड़ेगा।

जहाँ तक रोग-निवारण के लिये औषधि सेवन का प्रश्न है तो बात स्पष्ट है कि सुविज्ञ चिकित्सक से ही परामर्श लेना चाहिये कि अमुक रोग के लिये कौन-सी औषधि, किस परिमाण में कब तक ली जाये ? स्वस्थ होने के शीघ्र बाद अनावश्यक रूप से दवायें न ली जायें।

एण्टी-बायोटिक्स उपचार की घातक प्रतिक्रिया

एलोपैथी ग्रीक भाषा का संयुक्त शब्द है। एलीसे अर्थात् दूसरा—पाथोस अर्थात् (दुःख)। एलोपैथी वह विज्ञान है जो एक दुःख दूर करके दूसरा दुःख पैदा कर दे। इस अर्थ का समर्थन-वेक्टर के शब्दकोष ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी, अमेरिकन इंसस्ट्रेड मेडिकल डिक्शनरी—द्वारा किया गया है। लन्दन से प्रकाशित स्टेड मैन्समेडिकल डिक्शनरी में इसी तरह की व्याख्या की गई है। सबों ने इसी अर्थ का समर्थन किया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फ्रान्स के डा. ई. वाल्टेयर ने एलोपैथी के सबसे तेज विष-सबसे अच्छी दवा के सिद्धान्त पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है। डा. डब्लू. एच. झाइट ने ऐलोपैथी के मूलभूत सिद्धान्तों को अपूर्ण और सम्भावनाओं के आधार पर स्थापित किया गया बताया है। 'व्हीलिंग एक्ड कानवेस्ट आफसेन' के लेखक डा. जे. फील्ड ने लिखा है वर्तमान चिकित्सा अभी प्रयोग मात्र है। इसमें वैज्ञानिक अन्ध-विश्वास जैसे तथ्य भरे पड़े हैं।

एलोपैथी में सर्जरी और शरीर शास्त्र पर आश्चर्यजनक प्रगति एवं महत्त्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त की गई है। तुरन्त लाभ करने वाली दवाइयाँ भी हैं परन्तु इसके साथ ही साथ इसकी आधार भूत नीति ऐसी है जो रोगी को प्रारम्भिक लाभ पहुँचाकर अन्ततः घाटा ही प्रदान करती है।

रोग के भय से शरीर में बीमारी की स्थिति स्वतः उत्पन्न कर ली जाती है। क्षय, हैजा, चेचक आदि से बचाव के लिये सुरक्षा टीके लगवाकर बीमारी को इम्यूनिटी के रूप में उत्पन्न किया जाता है। रोग निवारण हेतु एण्टी बायोटिक्स दवायें प्रयोग होती हैं। एण्टी का अर्थ है विरुद्ध। बायोसिस का अर्थ है—जीवन। ग्रीक लेटिन के इस संयुक्त शब्द का अर्थ है—'जीवन घातक'।

इस प्रकार निरोधक औषधियों के बाद में होने वाले दुष्परिणामों को देखते हुये विज्ञ समाज में उनके प्रयोग के सम्बन्ध में असमंजस व्यक्त किया जाने लगा है। 'स्ट्रेप्टो माइसिन' के अधिक व दीर्घकालीन प्रयोग से शीत पित्त, रक्त में एसनोफिल की वृद्धि, ज्वर तथा रक्तचापहीनता कतिपय रोगियों में प्रतिक्रिया स्वरूप सम्भव है। किसी-किसी रोगी में रक्त-निष्कासन भी होने लगता है। स्ट्रेप्टोमाइसिन का मुख्य दुष्परिणाम अष्टम करोड़ नाड़ियों पर पड़ता है। जिसके फलस्वरूप श्रवणशक्ति पर प्रभाव पड़ता है तथा चक्कर भी आने लगता है। इससे उत्पन्न चक्कर शीघ्र ठीक नहीं होते। यह रोग लगभग २, ३ वर्ष में कहीं ठीक हो पाता है तथा रोगी की श्रवण शक्ति सदा के लिये च्युत हो जाती है।

मधुमेह की एलोपैथिक दवा 'इन्सुलिन' के अधिक प्रयोग होने पर रक्त की शर्करा सामान्य से भी अधिक क्षीण हो जाती है। तब रोगी को बेचैनी, कमजोरी, प्राण संकट का अनुमान होने लगता है। आँखों के आगे अन्धेरा, ज्ञानशून्यता तथा मूर्छा भी आ जाती है और मृत्यु भी हो सकती है।

क्षय रोग में प्रयुक्त 'थियोसेमी कार्बेजोन' का दुष्परिणाम पाचन संस्थान पर पड़ता है। रोगी के आमाशय में क्षोभ के लक्षण, जी मिचलाना, क्षुधानाश, वमन आदि के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। कभी-कभी रक्ताल्पता नेत्रकला शोथ विस्फौट, श्वेतकण ह्रास, यकृत विकृति आदि दुष्परिणाम भी उत्पन्न हो जाते हैं।

टेट्रासाइक्लिन, टेरामाइसिन, एक्रोमाइसिन, सूवामाइसिन के अधिक व अनुपयुक्त प्रयोग से जी मिचलाना, वमन अथवा पतले दस्त आदि रोग उत्पन्न हो सकते हैं। एक अंग्रेजी पत्रिका लेख में लिखा था कि इस दवा के अविवेक पूर्ण प्रयोग से जीभ पर बाल तक उग आये हैं। इसके प्रयोग से विटामिन बनाने वाले जीवाणु नष्ट होने लगते हैं और विटामिन 'बी' काम्प्लेक्स की शीघ्रता से कमी हो जाती है।

विषम ज्वर में प्रयुक्त 'पेल्यूड्रीन' के प्रयोग से अतिसार, शीत-पित्त, कमजोरी, क्षुधानाश, निद्रानाश, अन्त्रस्थ कृमि और वमन आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

एट्रोपिन सल्फेट के प्रयोग हृदय को बल प्रदान करने, उसकी अनियमित गति को दूर करने, तीव्र उदर पीड़ा का शमन करने तथा एलोपैथिक दवाओं यथा मार्फिया एकोनिट आदि के विषाक्त प्रभाव को दूर करने के लिये किया जाता है किन्तु वास्तव में यह दवा स्वयं विषाक्त प्रभाव से युक्त है। बच्चों में इसे सहन करने की शक्ति होती है तथा वृद्ध इसे सहन नहीं कर सकते। कुछ लोग उचित मात्रा भी नहीं प्रयोग कर पाते और उनका चेहरा लाल, गले व मुंह का सूखना, त्वचा पर लाल चकत्ते पड़ना, पेशाब का न बनना, गले और मुँह का सूखना, पुतली फैलना और आँखों का धुंधला होना आदि विषाक्त प्रभाव पड़ते हैं। अमेविक पेचिश में प्रयुक्त 'इमेटिन हाइड्रोक्लोराइड' के प्रयोग से हृदय के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

पेनसिलीन के बड़े भयंकर उपद्रव देखे गये हैं। 'एनाफीलेक्टिक शॉक' के आरम्भ में हाथ-पैरों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में चुन-चुनाहट, छींक आना, मुँह में अजीब-सा स्वाद आदि प्रभाव दिखाई पड़ते हैं तथा इसके साथ वक्ष या उदर में पीड़ा अथव कसावट महसूस होती है तथा रोगी को वमन या उत्क्लेश होता है। इसकी प्रतिक्रिया के विकराल रूप नीलिमा, श्वाँस कष्ट, मुँह में झाग का निष्कासन, गले में गट्ठा-सा मालूम पड़ना, रकत-संचार का अवसाद अर्थात् उसमें कमी आ जाती है। परिणामस्वरूप नाड़ी कमजोर हो जाती है। तुरन्त चिकित्सा न होने पर रोगी को मूर्छा और बाद में उसकी मृत्यु हो जाती है।

विशुद्ध पेनसिलीन के स्थान पर प्रोकेन पेनसिलीन का प्रयोग होता है। यह दुष्परिणाम प्रोकेन के कारण उत्पन्न होता है। प्रोकेन बहुत अल्प मात्रा में प्रयुक्त होती है किन्तु बहुत-से रोगियों को अल्प मात्रा में प्रोकेन सहन नहीं होता। इसकी प्रतिक्रिया में रोगी की उत्तेजना के कारण भय उत्पन्न होता है तथा हाथ-पैरों में ऐंठन होने लगती है।

बिना चिकित्सकों की सलाह से विटामिनों का प्रयोग भी निरापद नहीं है। विटामिन बी की अधिकता से रोगी में कभी-कभी घबराहट, शिथिलता, बेचैनी और चिड़चिड़ापन आदि रोगों का प्रादुर्भाव होता है। कभी-कभी 'निकोटीनिक एसिड' के प्रयोग से हाथ-पैरों में झुनझुनी तथा त्वचा में तमतमाहट सी पैदा होती है। विटामिन 'डी' के लम्बी अवधि के प्रयोग से धमनी काठिन्य हो जाता है।

ब्रिटेन में कुछ दिन पूर्व डेविड बुल द्वारा लिखित एक पुस्तक प्रकाशित हुई है—"तीसरे विश्व में प्लेगनाशक दवा और गरीबी"। इस पुस्तक में प्लेग निरोधक दवाइयों के कारण अच्छे-भले १० हजार आदमियों को मात्र सुरक्षा के लालच में मौत के मुँह में जाना पड़ा है। उनने उसमें ब्रिटेन में विनिर्मित और गरीब देशों के लिये निर्यातित ११ अन्य दवाओं का उल्लेख किया है जिनके कारण ३ लाख ७० हजार लोगों को अपने प्राण गंवाने पड़े। लेखक का कथन है कि उनका उत्पादन एवं निर्यात अविलम्ब बन्द होना चाहिये।

एन्टीबायोटिक्स उपचार से एक नया संकट और देखने में आया है कि इन औषधियों के प्रतिरोधी तत्व भी उसी वातावरण में पनपने लगते हैं जहाँ इनका प्रयोग होता है। अस्पताल में इन तत्वों की मात्रा अन्यत्र की अपेक्षा अधिक देखी गई है। यह तत्व न केवल औषधियों को निरर्थक बनाते हैं वरन् सामान्य शरीर की स्वाभाविक निरोध शक्ति पर भी आक्रमण करके उसे समाप्त करते हैं और उससे भी बड़ी हानि पहुँचाते हैं जो यह प्रतिरोधक औषधियाँ पहुँचाती हैं।

इस सन्दर्भ से वर्ल्ड हैल्थ आर्गेनाइजेशन ने एक प्रतिवेदन में प्रकट किया है कि "जिन अस्पतालों में एन्टीबायोटिक्स औषधियों का अधिक प्रयोग होता है, वहाँ के वातावरण में इन दवाओं के प्रतिरोधी ऐसे जीवाणु उत्पन्न होते हैं जो किसी के मारे नहीं मरते।

एण्टीबायोटिक्स औषधियाँ जहाँ विषाणुओं को मारती हैं, वहाँ जीवनी शक्ति का अतुलनीय ह्रास भी करती हैं। इसके कारण सामान्य रोग से छुटकारा पा लेने पर भी रोगी भीतर ही भीतर इतना दुर्बल हो जाता है कि उसमें रोग प्रतिरोध की प्राकृतिक क्षमता एक प्रकार से समाप्त ही हो जाती है। उन प्रभावों या अन्य छोटे-मोटे कारणों से आये दिन बीमार पड़ता रहता है। इस प्रकार उसका आयुष्य भी बहुत घट जाता है।

चिकित्सा का स्वरूप और उद्देश्य रोगी की जीवनी शक्ति बढ़ाने वाले उपाय उपचारों का प्रयोग में लाना होना चाहिये। यदि पोषण बढ़ेगा तो उसका सहज प्रतिफल रोग निवारण के रूप में होगा ही। इसके विपरीत यदि मारक विधा अपनाई गई है तो रोग के मरने न मरने में तो सन्देह भी रहेगा किन्तु जीवन के संरक्षक तत्व निश्चित रूप से मरेंगे, इस प्रकार रोगी घाटे में रहा या नफे में कुछ नहीं कहा जा सकता। यह मारक प्रक्रिया यदि न अपनाई गई होती और रोगी को अपने भाग्य पर छोड़कर प्रकृति को अपना काम करने देने का अवसर दिया गया होता तो रोगी उस स्थिति की तुलना में अधिक नफे में रहता, जिसमें वह बिना इलाज के ही काम चलाता। सृष्टि के अगणित प्राणी बिना अस्पतालों और चिकित्सकों की सहायता के निर्वाह करते हैं और रोगी होने पर प्रकृति की उस उपचार पद्धति के सहारे अच्छे हो जाते हैं जो हर जीवधारी के शरीर में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अत्यन्त समर्थतापूर्वक जुड़ी हुई हैं। इस जीवाणु का नाम "स्यूडोमोनास एरुजिनस" है। इसके पनपने का अभी आरम्भिक चरण है। यदि उसने मलेरिया मच्छरों जैसी वंश वृद्धि करली और जड़ जमाली तो मनुष्य समुदाय के लिये अकल्पित स्वास्थ्य संकट का सामना करना पड़ सकता है। ऐसी दशा में वर्तमान एन्टीबायोटिक्स प्रयोग लाभ के स्थान पर उल्टे संकट उत्पादनकर्ता सिद्ध हो सकते हैं।

उपरोक्त आशंका को देखते हुये माइक्रोबायोलाजिस्ट सामान्य रोगियों को यह सलाह देने लगे हैं कि अस्पताल में भर्ती तभी हो, जब इसके बिना किसी प्रकार काम न चलता हो। सामान्यतया घरों पर स्वच्छ वतावरण बनाकर उपयुक्त आहार-विहार और परिचर्या के साथ रहने और हानि रहित जड़ी-बुटियों का उपचार करने से रुग्ण व्यक्ति बिना जोखिम का उपचार कर सकते हैं। भले ही उस प्रक्रिया में थोड़ा समय ही क्यों न लग जाये।

कीटनाशी रसायनों की बढ़ती विभीषिका

कीटनाशक उपायों में अब तक एक ही कारगर उपाय सोचा जा सका है कि विषैले रासायनिक घोल छिड़ककर जहाँ भी ये कीड़े हों वहाँ ही उन्हें मार डाला जाये। डी. डी. टी. जैसी औषधियों का प्रयोग इसी दृष्टि से अति उत्साहपूर्वक हुआ है, पर उससे भी कुछ हल निकला नहीं। एक तो इन कीड़ों की बढ़वार इतनी व्यापक होती है कि उन्हें मारने के लिये लगभग इतने ही मूल्य की दवायें चाहिये, जितना कि फसल का मूल्य होता है। उन्हें हर कोई न तो खरीद सकता है और न ही उसका प्रयोग जानता है। अवांछनीय मात्रा में असावधानी से उनका प्रयोग किया जाय तो पौधों के नष्ट होने और उनके फल, बीज खाने वालों में विषाक्तता बढ़ जाने का खतरा स्पष्ट रहता है।

इन दवाओं के मन्द उपयोग का भी जो दुष्परिणाम सामने आया है, उसने विचारशील वर्ग को चिन्ता में डाल दिया है। कीटनाशक औषधियों का प्रभाव पौधों पर ही नहीं, अन्न, शाक, फल आदि पर भी रहता है और वे पेट में पहुँचकर स्वास्थ्य संकट उत्पन्न करते हैं। गोदामों में अन्न को सुरक्षित रखने के लिये जो रसायन छिड़के जाते हैं, वे घूम फिर कर खाने वालों के पेट में पहुँचते हैं और कालान्तर में विघातक परिणाम उत्पन्न करते हैं। छिड़काव से प्रभावित घास-भूसा खाने वाले पशुओं का दूध, घी, भी अखाद्य बनने लगता है। इस प्रकार कीटनाशक रासायनिक उपचार कीड़ों को मारने में भले ही सफल रहें, पर साथ-साथ मनुष्यों पर भी अपना कुप्रभाव जरूर डालते हैं।

कीटनाशक दवाईयाँ जहाँ मनुष्य समुदाय के लिये हानिकारक हैं, वहीं प्रकृति में पाये जाने वाले उपयोगी कीट, पक्षी एवं पशु जो प्राकृतिक सन्तुलन के लिये मित्र के समान कार्य करते हैं, उनका भी सफाया कर देती हैं। मलेरिया के मच्छरों से बचने के लिये हवाई जहाजों से डी. डी. टी. का विस्तृत क्षेत्र में छिड़काव किया जाता है। ये रासायनिक तत्व मधुमक्खी के लिये खतरनाक सिद्ध होते हैं। ये विषैले पदार्थ शीत रक्त वाले जन्तुओं एवं मछलियों और इनको खाने वाले गर्म रक्त वाले जीव-जन्तुओं को जहरीला बना देते हैं।

अधिकांश कीट मनुष्य के लिये उपयोगी, अहानिकर एवं सहयोगी हैं। प्रकृति में पाये जाने वाले समस्त कीटों में से मात्र एक प्रतिशत कीट ही हानिकारक हैं। अमेरिका के कृषि विभाग के अनुसार २३५ प्रकार के कीटों में मात्र एक प्रतिशत हानिकर हैं। इन कीटों के बिना न हमें मधु मिलेगा, न प्राकृतिक कपड़े, न चमड़ा और न ही मन को प्रफुल्लित करने वाले पुष्प। मधुमक्खी, तितली, पतंगा, रेशम के कीड़े और अनेकों जन्तु वनस्पतियों और फलदार वृक्षों से पराग-रस सोखने और मधुगण इकट्ठा करने में सहायक हैं। यदि इनमें से केवल मधुमक्खी पृथ्वी पर न हो तो यहाँ के एक लाख प्रकार के फूल-पौधों का अस्तित्व ही मिट जायेगा। ये उपयेगी कीट परागकणों के संवहन का कार्य भी करते हैं, जिसके कारण नये पौधे विकसित होते हैं। पिछले दिनों न्यूजीलैण्ड में कीटनाशक दवाओं के उपयोग से भौरों की संख्या घटने लगी थी अतः लाल बनमेथी (क्लोवर) के अस्तित्व की समस्या उत्पन्न हो गई। इन्हें विकसित करने के लिये भौरों को बाहर से मँगाने पर ही इनके विकास में पूरी सफलता मिली।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी तरह कीटनाशक दवाओं के प्रभाव से अमेरिका के खेतों में हानिकारक कीड़ों को समाप्त करने के साथ पराग संवाहक कीट भी समाप्त हो गये, फलस्वरूप इनके बिना सभी फलोद्यान एवं पुष्प वाटिकाओं का विनाश आरम्भ हो गया। पौधों ने अपना उत्पादन बन्द कर दिया।

कीटनाशकों का प्रभाव उपयोगी पक्षियों पर भी पड़ता है। कैलीफोर्निया में सोन चिड़िया (लेडी बर्ड) और शृंगी की कमी आस्ट्रेलिया से पूरा करने पर हानिकर कीटों के बचाव से वहाँ का नीबू उद्योग फलने-फूलने लगा। इसी प्रकार कैलीफोर्निया में सेनफ्रान्सिस्को से १४० प्रकार के भृंग लाये गये तब कहीं जाकर संतरा, नीबू एवं मुसम्मी के बागों में उत्पादन बढ़ा।

कुछ पक्षी बीज और अनाज खाते हैं, तो कुछ कीड़ों को खाकर जिन्दा रहते हैं। अपने तीन बच्चों के साथ टीम की एक जोड़ी गरमी के दिनों में लगभग ७६ पौण्ड इल्लियाँ खाती है। यदि उन्हें कीटनाशक द्वारा खत्म किया गया तो हानिकर कीड़ों का उत्पादन तेजी से बढ़ेगा। एक कोयल भी दिन में ८०० इल्लियाँ खाती है।

मेसिक्कों में मेढ़कों को चमड़े के लिये कीटनाशक से बड़े पैमाने पर मारने पर झींगुरों की संख्या बहुत अधिक बढ़ गई थी क्योंकि मेढ़क झींगुरों को खाता है। एक रात में ३००० झींगुरों के शिशु कीट पैदा होने लगे। सुबह उन्हें बेलची से इकट्ठे करके ट्रक में ले जाने की स्थिति पैदा हो गई। सेवाग्राम में इन कीटनाशी दवाओं के फुहारने से जाड़े के दिनों में भी साँप निकलने लगे और मरने लगे। इससे चूहों की संख्या में एकाएक वृद्धि हो गई।

रेकल कार्सन ने अपनी पुस्तक 'साइलेन्ट स्प्रिंग' में अमेरिकी जनता की शारीरिक स्थिति की चर्चा करते हुये लिखा है कि यहाँ हर मनुष्य के शरीर में डी. डी. टी. एवं आर्गेनों क्लोरीन समूह के विषैले रसायनों की मात्रा बढ़ती ही जा रही है। अभी यह परिमाण पन्द्रह लाख के पीछे १८ भाग है, पर यह क्रमशः बढ़ता ही जायेगा और फिर विविध विधि स्वास्थ्य संकट उत्पन्न करेगा। कीटनाशक दवायें बनाने वाले कारखानों के कर्मचारियों में तो यह मात्रा ६६६ भाग तक पहुँच गई है। ब्रिटेन के स्वास्थ्य विज्ञानियों का कहना है कि कीटनाशक रासायनिक प्रभाव से मानवी आहार को किस प्रकार बचाया जाये ? यह चिन्ता एक देश की नहीं, वरन् समस्त विश्व की समस्या है।

यहाँ एक और भी विचित्र समस्या है कि यह कीड़े जल्दी ही विषाक्त घोलों से अपनी रक्षा कर सकने योग्य क्षमता अपने में विकसित कर लेते हैं और नई पीढ़ियाँ ऐसी ढीठ उत्पन्न होने लगती हैं, जिन पर इन रसायनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जैसे कई सालों तक डी. डी. टी. का छिड़काव करने के बाद भी हिमालय क्षेत्र में खटमल हद से ज्यादा पनप गये। उनका आकार कम से कम तिगुना तो हुआ ही साथ ही ये खूब काले ओर चमकदार भी हो गये। उनके बाबा-दादी कभी नहीं पहचानेंगे कि ये हमारी संतान हैं। वे इन छिड़कावों को अँगूठा दिखाते हुये अपना विनाश कार्य प्रसन्नतापूर्वक करते रहते हैं।

आज कीड़ों से खाद्य पदार्थों का बचाव करने के लिये डी० डी० टी० मेलिथियॉन, क्लोरेडेन, डेलड्रिन, एनाड्रिन सरीखी औषधियों का प्रचलन बढ़ रहा है। खेतों में भी कृमिनाशक घोल छिड़के जा रहे हैं। इनसे तात्कालिक समाधान मिलता है, पर दूरगामी परिणामों की उपेक्षा करते रहें तो फिर जिस मानव प्राणी के लिये यह खाद्य बढ़ाने और सुरक्षित रखे जाने का प्रयत्न हो रहा है, वह इस योग्य ही न रह जायेगा कि कुछ खा-पचा सके। ऐसी स्थिति में आज की सफलता को असफलता से कम दुर्भाग्यपूर्ण न माना जायेगा।

उचित यही है कि हम जोश के साथ होश को भी बरकरार रखें और अधिक से अधिक उत्पादन के लालच में इतने अधिक व्यग्र न हो जायें कि उत्पादन का मूल आधार ही हाथ से निकल जाये। विष प्रयोग के तात्कालिक चमत्कारी प्रभाव की जादुई बाल-क्रीड़ा में उलझे रहने से काम न चलेगा। हमें फसल के पौधों में और मानवीय शरीरों में उस जीवनी शक्ति का अभिवर्धन करना पड़ेगा, जिसके कारण कीटकों को न आक्रमण करने की हिम्मत पड़े और न बढ़ने तथा विकसित होने की।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सदुद्देश्य के साथ सतर्कता भी आवश्यक है

सदुद्देश्य सामने रखकर काम किया जाय सो ठीक है, पर उतने से ही काम नहीं चलता। सूक्ष्मदर्शी दृष्टि से यह भी सतर्कतापूर्वक देखा जाना चाहिये कि इस प्रयास का कोई अन्धेरा—हानिकारक पक्ष तो नहीं है। एकाकी आवेश में सदुद्देश्य भी कई बार वैसा ही घातक होता है जैसा कि राजा के प्यारे पालतू बन्दर द्वारा उसके सोते समय रखवाली में मक्खी उड़ाने के लिये तलवार चलाकर घायल कर देने की कथा में बताया गया है। जल-शोधन की दिशा में इन दिनों किये जाने वाले रासायनिक प्रयास ऐसे ही अदूरदर्शितापूर्ण सिद्ध हो रहे हैं भले ही उन्हें आरम्भ करने वालों का कितना ही सदुद्देश्य क्यों न रहा हो ?

ओहियो अनुसन्धान परिषद ने फ्लोराइड मिश्रित जल की खामियों को जन-साधारण के सामने प्रस्तुत किया था और अपने शोध निष्कर्षों को डेलीमेल—सण्डे डिस्पैच आदि पत्रों में छपाया था। जिसमें उसे प्रयुक्त न करने का परामर्श दिया गया था।

अमेरिका की कितनी ही स्वास्थ्य संस्थाओं का एक संयुक्त विरोध सरकार के तथा जनता के सामने प्रस्तुत किया गया था, जिसे उस संयुक्त मोर्चे के अध्यक्ष जे. मकफारलेन फोर्ब्स ने "स्काट्स मैन' आदि पत्रों में विस्तारपूर्वक छपाया था। इस विरोध पत्र में फ्लोराइड मिश्रित जल की खामियाँ गिनाई गईं थी और कहा गया था कि उससे शोधन के नाम पर विषाक्तता का समावेश होता है।

न्यूवर्ग में फ्लोराइड सहित और किंग्स्टन में उससे रहित पानी देकर उसके परिणामों की जाँच की गई। उसका विवरण "पेनग्विन साइन्स न्यूज" पत्रिका में छपा। जिसमें बताया गया कि इस रासायनिक जल से दाँतों की खराबियों और जोड़ों के दर्द की शिकायत उत्पन्न होती है।

वर्ल्ड हैल्थ आर्गेनाइजेशन के जिनेवा कार्यालय से प्रकाशित एक बुलेटिन में फ्लोरीन युक्त पानी के सम्बन्ध में कई ख्यातिनामा स्वास्थ्य विशेषज्ञों के लेख छपे हैं, जिनमें प्रायः सभी ने इस रासायनिक सम्मिश्रण का विरोध किया है। पक्ष समर्थन में तो केवल एक ही लेख है फ्लोरिडा विश्व-विद्यालय के रसायन प्रमुख ए. पी. ब्लैक का।

जल-शोधन के लिये नगरपालिकायें अक्सर पानी में फ्लोरीन मिलाती हैं। पानी में घोला हुआ यह सोडियम फ्लोराइड एक तीव्र रसायन है, जो जल में पाये जाने वाले स्वाभाविक कैल्शियम फ्लोराइड की तुलना में ८५ गुना अधिक तीक्ष्ण है। शोधन के लिये प्रयुक्त किया गया यह रसायन एक मंद विष के रूप में पीने वालों के शरीर में प्रवेश करता और जमता चला जाता है। आरम्भ में तो उसकी उतनी हानि प्रतीत नहीं होती, पर तीस-चालीस वर्ष बाद उसके दुष्परिणाम कई मन्द और तीव्र रोगों के रूप में फूटने लगते हैं। इस तथ्य को समझते हुये स्वीडन, फ्रांस, पश्चिम जर्मनी, आस्ट्रेलिया, स्विटजरलैण्ड आदि ने इस सम्मिश्रण को बन्द कर दिया है। अमेरिका के ५८० नगरों में भी इसे बन्द कर दिया गया है।

वैज्ञानिक सफलतायें भी अन्य सफलताओं की तरह तब दुर्भाग्यपूर्ण बन जाती हैं, जब वे अत्युत्साह एवम् अहंकार उत्पन्न करती हैं। कुछेक सफलताओं के कारण अपनी सर्वांगपूर्ण बुद्धिमत्ता का अभियान किया जाने लगता है और यह भुला दिया जाता है कि कुछ काम की कुछ सीमा तक मिली सफलता का अर्थ यह नहीं है कि अपना हर चिन्तन और हर प्रयास सही या सफल ही होगा। सफलता के लिये क्रिया ही काफी नहीं—सतर्कता भी आवश्यक है। भूल न होने पाये इस पक्ष को ध्यान में रखकर फूँक-फूँककर कदम बढ़ाने की नीति यदि छोड़ दी जाय और जल्दीबाजी में कुछ भी कर गुजरा जाय तो ऐसे ही दुष्परिणाम सामने आ सकते हैं जैसे कि जल शोधन सम्बन्धी प्रयास की त्रुटि के सन्दर्भ में सामने आ रहे हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य का आधार, आहार नहीं मस्तिष्क

सामान्यतः समझा जाता है कि शरीर का पोषण और विकास पेट में पहुँचने वाले आहार से होता है। पेट में आहार पहुँचता है और वहाँ उसका पाचन होकर रस, रक्त आदि का निर्माण होता है। जो शरीर के विभिन्न अंग अवयवों में पहुँचकर उन्हें शक्ति प्रदान करते हैं। उस शक्ति से विभिन्न अंग अवयव काम करने योग्य ऊर्जा प्राप्त करते हैं। इसीलिये स्वच्छ, पौष्टिक और सन्तुलित भोजन की आवश्यकता एक स्वर से बताई, समझाई व स्वीकार की जाती है।

शरीर स्वस्थ रहे इसके लिये निश्चित ही पौष्टिक भोजन का होना आवश्यक है किन्तु उससे भी अधिक है मानसिक स्थिति का सन्तुलित और शुचितर होना। भोजन से शक्ति मिलती है और शक्ति से स्वास्थ्य, किन्तु भोजन को पचाने में जो शक्ति खर्च होती है वह कहाँ से आती है ? भोजन को पचाने की शक्ति ही नहीं शरीर के अन्यान्य अंग अवयवों को भी समुचित ढंग से सक्रिय और सुव्यवस्थित रखने के लिये आवश्यक शक्ति का स्रोत भी मस्तिष्क यदि अशान्त है तो कितना ही अच्छा और पौष्टिक भोजन क्यों न किया जाये ? इससे कोई विशेष लाभ नहीं होता। इसके विपरीत जब मानसिक स्थिति शान्त और सन्तुलित हो तो रूखा-सूखा भोजन खाकर भी स्वस्थ रहा जा सकता है। आदिवासियों और जंगलों में कन्दमूल खाकर अपना जीवन व्यतीत करने वाले लोगों को कहाँ सन्तुलित और पौष्टिक भोजन मिल पाता है ? फिर भी वे शहरी और सम्पन्न व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ देखे जा सकते हैं। इसका कुल कारण इतना ही है कि वे शहरी लोगों को अपेक्षा कम अशान्त और उद्वेलित मनःस्थिति का शिकार बनते हैं।

यदि भोजन से ही शक्ति मिलने की बात में कुछ वजन होता, तो प्रश्न उठता है कि काम के बाद आराम की आवश्यकता क्यों पड़ती है। जैसे ही थकान चढ़ती वैसे ही कुछ खा-पीकर काम चला लिया जाता। किन्तु सोना हर स्थिति में आवश्यक और उपयोगी होता है, क्योंकि इससे मस्तिष्क को आराम मिलता है। रात भर सोने के बाद सुबह जागने पर प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको इतना तरोताजा अनुभव करता है कि वह पूर्ववत् श्रम कर सके और कठोर दिनचर्या का पालन कर सके।

मस्तिष्क को दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक वह जिसमें मन और बुद्धि काम करती है। सोचने, विचारने तथा समझने की क्षमता इसी भाग में रहती है दूसरा भाग वह है, जिसमें आदतें संग्रहित रहती हैं और वहाँ से शरीर के क्रिया-कलापों का निर्धारण किया जाता है। शरीर की नाड़ियों में रक्त बहता है, हृदय धड़कता है, फेंफड़े श्वांस-प्रश्वांस प्रक्रिया सम्पन्न करते हैं, माँसपेशियाँ सिकुड़तीं और फैलती हैं, पलकें झपकती, खुलती हैं, सोने-जागने का, खाने-पीने और मलमूत्र त्यागने का क्रम अपने ढर्रे पर अपने आप स्वसंचालित ढंग से चलता रहता है। यह सब अनायास ही नहीं होता। इसके पीछे निरन्तर सक्रिय मन की वह शक्ति काम करती रहती है, जिसे अचेतन मस्तिष्क कहते हैं। शरीर के यन्त्र अवयव अपना-अपना काम करते रहने योग्य कलपुर्जों से बने हैं, पर उनमें अपने आप संचालित रहने की क्षमता नहीं होती। यह शक्ति उन्हें मस्तिष्क के इसी अचेतन भाग से मिलती रहती है।

मस्तिष्कीय क्रिया-कलाप छोटी-छोटी कोशिकाओं के माध्यम से चलता रहता है। इन्हें नर्वसेल्स या तन्त्रिका कोशिकायें कहते हैं। उनकी संख्या लगभग दस अरब होती है। इन्हें आपस में जोड़ने वाले नर्व फाइबर (तन्त्रिका तन्तु) और उनके इन्सुलेशन खोपड़ी के भीतर खचाखच भरे रहते हैं। एक तन्त्रिका कोशा का व्यास एक इन्च के हजारवें भाग से भी कम होता है और उसका वजन एक औंस के साठ अरबवें भाग के करीब होता है। तन्त्रिका तन्तुओं से होकर जो विद्युत धारा दौड़ती है, वही ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से आवश्यक सूचनायें उस केन्द्र तक पहुँचाते है। तन्त्रिका कोशाणु एक सफेद धागे युक्त तन्तु होता है, यह तन्तु अन्यान्य न्यूट्रानों से जुड़ा रहता है। इस प्रकार पूरा मस्तिष्क इन परस्पर जुड़े हुये धागों का एक बुना हुआ तन्तु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाल है। इन्हीं सूत्रों से वे परस्पर सम्बन्ध रहते हैं और अपने कार्यों तथा उत्तरदायित्वों का परस्पर मिल-जुलकर निर्वाह करते हैं।

चाहे हम सो रहे हैं अथवा जग रहे हों, हर समय लगभग १४०० ग्राम भारी मस्तिष्क, मेरुदण्ड एवं लगभग दस अरब तन्त्रिकाओं द्वारा देह की समस्त क्रियाओं का नियन्त्रण एवं संचालन होता रहता है। अस्तु यह नहीं समझना चाहिये कि भोजन से शक्ति प्राप्त होती है। शक्ति का उद्‌गम केन्द्र तो मस्तिष्क है, जो पूरे शरीर में अपना एक जाल बिछाये हुये है और उस जाल के माध्यम से शरीर को नियन्त्रित करता है। मस्तिष्क से निकलकर नासिका, कान, नेत्र, मुँह और त्वचा तक पहुँचने वाली तन्त्रिकायें उन्हें सक्रिय रहने के लिये शक्ति ही प्रदान नहीं करतीं बल्कि उन्हें आदेश और निर्देश भी प्रदान करती हैं। यदि किसी भी अंग से इनका सम्बन्ध विच्छेद हो जाये तो वह अंग पाचन संस्थान से पर्याप्त रस रक्त मिलते रहने के उपरान्त भी कार्य करने में सक्षम नहीं रह जाता।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि मस्तिष्क ही देखता है आँखें नहीं, मस्तिष्क ही सुनता है, कान नहीं और मस्तिष्क ही स्पर्श आदि का अनुभव करता है, त्वचा नहीं। संक्षेप में यदि मस्तिष्क का शरीर में महत्त्व की दृष्टि से कोई स्थान निर्धारित करना हो तो उसे शरीर राज्य का सम्राट कहा जा सकता है तथा वही कर्ता-भर्ता और भोक्ता भी क्योंकि उसके बिना शरीर का कोई भी क्रिया-कलाप सम्पन्न होना सम्भव ही नहीं है।

जीवशास्त्रियों ने अपने प्रयोगों और अनुसन्धानों से जो निष्कर्ष निकाले हैं, वे और भी विस्मय विमुग्धकारक हैं। डा. जेम्स फील्ड ने अपने दीर्घकाल के प्रयोगों और अन्वेषणों के आधार पर यह सिद्ध किया है कि यदि हम बिना भूख के, थके हुये मस्तिष्क के समय भोजन करते हैं तो उस भोजन से शरीर को शक्ति मिलने के स्थान पर विपरीत प्रभाव ही होता है क्योंकि तब थका हुआ मस्तिष्क पाचन संस्थान को सुसंचालित रखने की स्थिति में नहीं रहता। इसके अलावा उन्होंने यह निष्कर्ष भी प्रतिपादित किया कि रोगी लम्बे समय तक बिना भोजन के रह सकता है क्योंकि मस्तिष्क को भोजन की आवश्यकता नहीं होती। उसका पोषण आहार से कम विचारों से अधिक होता है। यदि अच्छे विचार मस्तिष्क में आते रहें तो मानसिक सन्तुलन बना रहता है और वह मन संस्थान अधिक कुशलता के साथ कार्य करता रह सकता है।

भूख के कारण रोग उत्पन्न होने की सम्भावना को नकारते हुये डा. जेम्स फील्ड ने कहा है कि 'भूख के कारण रोगों का सामना करना पड़ता है, यह सोचना गलत है। सही बात तो यह है कि अधिकांश रोग भोजन के कारण ही होते हैं क्योंकि तब मस्तिष्क की शक्ति अन्य क्रियाओं के साथ भोजन को पचाने में जितना योगदान दे सकती है उतना नहीं दे पाती। अतः यह तथ्य भलीभाँति समझ लेना चाहिये कि शरीर में शक्ति का स्रोत भोजन नहीं मस्तिष्क है और शक्ति सम्पन्न, स्वस्थ तथा पुष्ट शरीर के लिये भोजन से अधिक मानसिक स्थिति का सन्तुलित होना अधिक आवश्यक है।

यहाँ भोजन की व्यर्थता नही बताई जा रही। कहा इतना भर जा रहा है कि आहार से शक्ति नहीं मिलती वह तो बेचारा मस्तिष्क के निर्देशों के अनुसार शरीर में होने वाली टूट-फूट के लिये मरम्मत का सरंजाम भर है। शक्ति स्वास्थ्य और सौन्दर्य का उद्‌गम केन्द्र तो मस्तिष्क है और वह तभी ठीक ढंग से कार्य करता रह सकता है, जबकि शान्त, अनुद्विग्न और आवेशरहित जीवन व्यतीत करते हुये मनःस्थिति को सन्तुलित रखा जाये।

अकाल मृत्यु के मुँह में हमी घुस पड़ते हैं

जीव विज्ञानियों के अनुसार मृत्यु एक प्रकार की अत्यधिक गहरी थकान अथवा इतनी प्रगाढ़ निद्रा है, जिसमें गिरने के बाद फिर जागृत हो सकना सम्भव नहीं हो पाता। यदि इस थकान को दूर करने जितने समय तक सुरक्षित विश्राम की व्यवस्था बन जाये और जागने की अवधि तक शरीर के जीवाणुओं को मरने, सड़ने या सूखने से बचाया जा सके तो मृत्यु के बाद फिर कुछ समय बाद जी उठना सम्भव हो सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चेतना मरती नहीं थक जाती है। बुढ़ापे के कारण नाड़ी संस्थान की लचक घट जाती है। कोशिकाओं का नवीनीकरण क्रम शिथिल हो जाता है। शरीर यन्त्र उन्हीं कारणों से कठोर एवं शिथिल होता चला जाता है। जीवनी शक्ति का इसी क्रम से ह्रास होता है और धीरे-धीरे बढ़ती हुई जराजीर्ण अवस्था मृत्यु के समीप तक जा पहुँचती है। इस कठोरता एवं शिथिलता की गति जितनी मन्द होगी उतने ही अधिक समय तक जीवित एवं सक्रिय रहा जा सकेगा। थकान धीरे-धीरे पैदा हो, दीर्घजीवन का प्रधान सूत्र यहीं है। प्रगाढ़ विश्राम की सुविधा बीच-बीच में इस प्रकार मिलती रहे कि पिछले दिनों की क्षति को पूरा किया जा सके तो फिर यह सम्भव हो जायेगा कि बहुत लम्बे समय तक जीवन बना रहे। हर रात को सोने और हर सुबह उठने का क्रम एक मध्यावधि मरण एवं पुनर्जीवन ही तो है। उसी सामान्य क्रम को विशेष उपचार से दीर्घकालीन बनाया जा सके तो कोशिकाओं पर छाई हुई थकान से उत्पन्न जरठता का निवारण हो सकता है और बूढ़े का फिर से जवान बन सकना शक्य बन सकता है।

जीने फिनोल ने अपनी पुस्तक दि फिलोसोफी ऑफ लोंग लाइफ' में लिखा है—"मृत्यु की दिशा में आधी यात्रा हम स्वाभाविक रीति से करते हैं और आधी अस्वाभाविक रीति से। स्वाभाविक वह है जिसमें एक नियत क्रम से वृद्धावस्था आती है और परिपक्व आयु भोगकर शरीर मृत्यु की गोद में चला जाता है, अस्वाभाविक वह जिसमें मनुष्य छोटी-मोटी बीमारियों के समय—बढ़ती आयु का लेखा-जोखा रखते हुये—अपनी आयु के मरने वालों की लिस्ट बनाकर यह सोचता रहता है कि अब मृत्यु का समय नजदीक आ गया। यह मान्यता यों महत्त्वहीन मालूम पड़ती है, पर सच्चाई यह है कि वह अन्तःमन में एक सुनिश्चित संकल्प बनकर बैठ जाती है और मृत्यु को जल्दी ही कहीं से पकड़कर ले आती है। संकल्पों से परिस्थितियों का उत्पादन एक सुनिश्चित सत्य है। अतएव समय से पूर्व अस्वाभाविक मृत्यु के मुख में चला जाना भी एक यथार्थता ही है।

वैज्ञानिक विश्लेषण के अनुसार मनुष्य एक अग्निपिण्ड की तरह—जलते हुये दीपक की तरह है। आग ऑक्सीजन खाती है और कार्बन डाइक्साइड गैस उगलती है। बिल्कुल यही क्रम मनुष्य का भी है। उसकी श्वांस-प्रश्वांस क्रिया इसी क्रिया को सम्पन्न करती है। हमारा शरीर—जीवन की एक दिव्य अग्नि की तरह ही ज्वलन्त है। इस भट्टी में यदि उपयुक्त ईंधन पड़ता रहे और उन कारणों से बचा जा सके जो उसे ठण्डी कर देते हैं तो फिर मरने में आमतौर से जो उतावली हो जाती है वह न हो और देर तक जीवित रह सकना सम्भव हो जाय।

देर तक जीवित रह सकने के महत्त्वपूर्ण आधार जिन्दगी के साथ जुड़े हुये हैं, यदि उन्हें ठीक तरह सम्भाले, सँजोये रखा जा सके। उद्धत आचरण और उच्छृंखल विचारों से बचा जा सके तो न केवल देर तक वरन् सुखपूर्वक जीवित रहने का आनन्द बिना किसी अड़चन के लिया जा सकता है। मौत के समीप लाने वाले कारण यों समय-समय पर सामने आते रहते हैं, पर वे ऐसे नहीं हैं, जिन्हें निरस्त न किया जा सके। हम भीतर से हारते हैं तो बाहर से भी पराजय ही आ घेरती है। भीतर से थकते हैं तो चारों ओर से निराशा और असफलता की घटायें घिरती चली आती हैं।

सिकन्दर ने एक स्वप्न देखा—कोई अप्सरा उसके सामने अति उल्लासपूर्वक नृत्य कर रही है। वह उठा और उसी समय स्वप्न विचारक को बुलाया और इस दृश्य का परिणाम पूछा। उसने बताया कि निकट भविष्य में कोई अति महत्त्वपूर्ण सफलता आपके हाथ लगने वाली है। सिकन्दर के उत्साह का ठिकाना न रहा। उसने दूसरे ही दिन उस देश पर चढ़ाई कर दी जिसके लिये वह योजनायें बना रहा था। बहुत ही शानदार विजय हाथ लगी। टाथर नगर पर उसका झण्डा फहराने लगा।

स्वप्न में देखी गई अप्सरा का कोई अस्तित्व था या नहीं यह ठीक से नहीं कहा जा सकता, पर उसे जो साहसिक उमंग की उपलब्धि हुई, उसे हजार अप्सराओं से अधिक कहा जा सकता है। वैसा आन्तरिक उल्लास जिसे भी मिलेगा वह सिकन्दर जैसी ही सफलतायें प्राप्त करता चला जायेगा, यह असंदिग्ध है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

असमय मरण और कुछ नहीं हमारी निरन्तर की भूलों का ही दुष्परिणाम है। यदि सतर्कता बरती जाय तो हम शताब्दियों तक जी सकते हैं और अन्तिम साँस तक हँसते-खेलते उल्लासपूर्ण मनःस्थिति में रह सकते हैं। ध्यान यदि आन्तरिक सन्तुलन का रखा जा सके तो बाहरी क्रियाकलाप में रहने वाली अवांछनीय भूलें सहज ही घटती और मिटती चली जायेंगी।

बुढ़ापा आयु के आधार पर नहीं विचारों के आधार पर आता है। यदि ऐसा न होता तो तीस वर्ष के लोग बूढ़े और सत्तर वर्ष के जवान क्यों दिखाई पड़ते ?

वैज्ञानिक जेक्त लूटो ने कितने ही प्राणियों का शारीरिक तापमान गिराकर उसकी प्रतिक्रिया का अध्ययन किया है और पाया है कि इससे इनका जीवनकाल आश्चर्य रूप से बढ़ गया। उनका कथन है कि यदि मनुष्य का स्वाभाविक तापमान ६८.६ से घटाकर आधा अर्थात् ४६.३ किया जा सके तो आयु २० गुनी बढ़ सकती है। ७० वर्ष जीने योग्य शरीर को १४०० वर्ष जिन्दा रखा जा सकता है।

मानवी जीवकोशों की सुदृढ़ता को परखते हुये कोलम्बिया विश्वविद्यालय के डा. एच. एस. सिक्स ने कहा है यदि स्नायु उत्तेजना और रासायनिक विकृतियों से शरीर की रक्षा की जा सके तो मनुष्य की संरचना उसे ८०० वर्ष तक जीवित रहने का अवसर दे सकती है।

कालगैट विश्व-विद्यालय के मनोविज्ञान विभाग ने अपने परीक्षणों से यह निष्कर्ष निकाला है कि शारीरिक श्रम की तुलना में नीरस मानसिक श्रम से कहीं अधिक थकान आती है।

खाद्य पदार्थों में पाई जाने वाली ऊष्मा जिसे 'कैलोरी' कहते हैं। यदि कम मात्रा में मिले तो थकान आवेगी। यह मान्यता भी अभी पूर्णतया निरस्त नहीं हुई है। पिछली शताब्दी के यह निष्कर्ष अभी भी दुहराये जाते हैं कि भोजन में ऊष्मा की मात्रा समुचित हो तो थकान से बचा जा सकता है।

यह माना जाता है कि १५० पौण्ड वजन का कोई व्यक्ति सोते समय ६५ कैलोरी प्रति घण्टा खर्च करता है। लेटे रहने में ७७, पढ़ने में १००, टाइप करने जैसे कामों में १४५ चलने-फिरने में २०० और कड़ा परिश्रम करने में ३०० कैलोरी प्रति घण्टा के हिसाब से खर्च होती है।

डा. वाल्डविन के अनुसार मनुष्य शरीर का तापमान तो ६८.६ डिग्री रहता है, पर उसे अनुकूल ६८ डिग्री तापमान का वातावरण ही पड़ता है। इससे अधिक ठण्डक या गर्मी होने पर उसकी कैलोरी शक्ति अधिक मात्रा में खर्च हाने लगती है और थकान जल्दी चढ़ती है। डा. डीनाल्ड ए. लेयर्ड के अनुसार कोलाहल भरे वातावरण में रहने वाले मनुष्य को २० प्रतिशत थकान उस शोरगुल के कारण ही चढ़ती रहती है।

मेयोक्लीनिक के डा. केन्द्रिल ने कहा है कि चिड़चिड़ापन मनुष्य की थकान का सर्वविदित चिन्ह है। लेहीक्लीनिक के डा. एलेन का मत भी यही है—वे कहते हैं चिड़चिड़ा मनुष्य दया का पात्र हैं क्योंकि वस्तुतः वह गहरी थकान का मरीज होता है। उस पर क्रोध करने या बदला लेने से तो इस मरीज का और भी अहित होगा।

विज्ञानी पैट्रिक गेडेस ने अवांछनीय प्रजनन और अत्यधिक कामुकता को जल्दी बूढ़े होने और जल्दी मरने का कारण बताते हुये कहा है—"आमतौर से यह कहा जाता रहा है कि मनुष्य का मरना निश्चित है इसलिये जाति नाश को बचाने के लिये उसे बच्चे पैदा करने चाहिये। यह दलील मृत्यु का डर दिखाकर बच्चे पैदा करने का उत्साह पैदा करती है, पर सच बात उलटी है। आदमी इसलिये मरता है, कि वह जल्दी और अधिक बच्चे पैदा करता है। वह जितनी दिलचस्पी बच्चे पैदा करने में लेगा उतनी ही जल्दी मरेगा। मौत से डरकर बच्चे पैदा करने की अपेक्षा यह अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण है कि कम बच्चे पैदा करें और अधिक जियें।"

मौत का सबसे बड़ा आकर्षण कामोपभोग है जो तत्काल जितना मधुर लगता है, उतना ही अधिक वह जीवन शक्ति को समाप्त करने का आधार बनता है। कितने अबोध युवक नर-नारी अपने आपको बेतरह निचोड़ने में पिल पड़ते हैं। वासना की गर्मी उनकी जीवनी शक्ति को निरन्तर जलाती चली जाती है। सन्तानोत्पादन से

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्त्रियाँ अपना स्वास्थ्य खो बैठती हैं और पिता को बच्चों के भरण-पोषण में अपना आपा बेतरह घुला देना पड़ते है। इस दुहरी विपत्ति को मोल लेने में युवा दम्पत्ति कितने अधिक उत्साही देखे जाते हैं, इससे प्रतीत होता है कि उन्हें जीवन और मरण के अन्तर का कुछ भी ज्ञान नहीं है।

एपिक्टेट्स कहते थे—रोग से स्वास्थ्य प्रबल है और मौत से जिन्दगी बलवान है। संसार बड़ा है, पर मनुष्य उससे भी बड़ा है। मनुष्य से भी क्या कोई बलिष्ठ हो सकता है इसका उत्तर एक ही है—"हाँ—उसका आत्मी भी इतनी बड़ी है, जिसकी सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती।"

मिस्र के पिरामिडों में गढ़ी हुई ममियों की बगल में कुछ उपदेश सूत्रों सहित शिलालेख रखे हुये पाये गये हैं, जिन पर लिखा था—"शरीर की बजाय वातावरण को सुन्दर बनाओ। काया की नहीं आत्मा की रक्षा करो। रोगी का इलाज उतना जरूरी नहीं जितना उसे यह समझाना कि निरोग केसे रहा जा सकता है ? मन को स्वच्छ रखो तो सौन्दर्य में कभी कमी नहीं पड़ेगी।"

सूक्ष्मदर्शी महा पण्डित वट्रेण्डरसेल ने चेतावनी दी है कि इस वैज्ञानिक युग में अब हमारे सामने एक ही मार्ग शेष है कि प्रकृति की ओर वापिस लौटें। शहरों से भाग कर गाँवों में अपना सिर छिपायें। भड़कीली विडम्बनाओं से बचें और सादगी की हल्की-फुलकी रीति-नीति अपनायें। यदि जीना है तो उसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं।

थकान शारीरिक श्रम से भी होती है और अपौष्टिक आहार से भी आती है, पर ये दोनों ही कारण कम महत्त्व के हैं। उनसे उतना हर्ज नहीं होता जितना मानसिक तनाव और अप्राकृतिक रहन-सहन अपनाने से। यदि भीतर से हल्का-फुल्का रहा जा सके तो स्नायु संस्थान को उत्तेजित करने वाले बाह्य कारण कुछ अधिक हानि न पहुँचा सकेंगे।

थकान के बारे में पिछले दिनों इतना ही समझा जाता रहा है कि कठिन और लगातार शारीरिक श्रम करने से थकान आती है। पर अब उसकी जड़ मानसिक स्थिति में खोजी गई है। डा. स्ट्रेट फोर्ड का कथन है कि जब तक आशाओं, योजनाओं और उत्तरदायित्वों की प्रेरणा छाई रहती है, तब तक उत्साह भी बना रहता है और बल भी। पर जब वे बोझ सिर से उतर जाते हैं तो आदमी बुरी तरह थक जाता है और निठल्ला मस्तिष्क थकान से चूर-चूर होकर जराजीर्ण होता चला जाता है।

जापान के महाकवि योननागोची की एक कविता है—हे प्रभु, तू और कुछ दण्ड भले ही देना, पर थकान मत देना। मुझे भय है कि यह कुलटा मेरा और तेरा वियोग करा देगी।

दुराचरण से जन्मी महामारी महाविनाश लायेगी ?

इकालॉजी का एक सर्वमान्य सिद्धान्त है कि जैसी क्रिया होती है, वैसा ही उसका प्रतिफल भी होता है। प्रकृति के सामान्य क्रम में तनिक भी व्यतिरेक आने पर उसकी विक्षुब्ध प्रतिक्रिया तुरन्त देखने को मिलती है। मानवी काया भी इन नियमों से बँधी हुई है। आहार-विहार के क्रम में जहाँ त्रुटि होती है, तुरन्त उसकी प्रतिक्रिया रुग्ण काया के रूप में सामने आती है। असंयम से अनेकों रोग जन्म लेते हैं एवं अचिन्त्य चिन्तन से तनाव, मनः दौर्बल्य, अवसाद, आवेश जैसे मनोविकारों की उत्पत्ति होती है। जब भी सामान्य क्रिया-कलापों में अति का समावेश हो जाता है, उसका फल काया एवं मन एक साथ भुगतते हैं।

प्रस्तुत विवेचन आज की सन्धि बेला में और भी महत्त्व रखता है, क्योंकि मानव जाति इन दिनों विभीषिकाओं की गहन तमिस्रा से घिरी हुई है। दैवी आपदायें, महामारियाँ एवं अभाव की परिस्थितियों ने दुष्कर्मों में निरत मानव समुदाय पर गत तीन-चार वर्षों में जिस प्रकार हण्टर बरसाये हैं, उससे प्रतीत होता है कि प्रकृति की व्यवस्था क्रम में बिगाड़ नियन्ता को किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं है। इन सबके बावजूद अदूरदर्शिता का चोला ओढ़े मानव समुदाय परिस्थितियों से अनभिज्ञ बना हुआ है। संयम अब मात्र कहने-पढ़ने भर का प्रसंग बन गया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। व्यवहार में उसका प्रतिपालन अनिवार्य नहीं माना जा रहा। यौन उच्छृंखलता अपनी चरम सीमा पर है। इस जबरन छीनी गयी स्वतन्त्रता ने इतना विकृत रूप ले लिया है कि स्वयं विधाता भी इसे देखकर शर्म से अपना मुँह छिपा लें। प्रारम्भ में पाश्चात्य जगत तक सीमित यौन स्वातन्त्र्य अब छूत की तरह सारे विश्व में फैल गया है। इसकी प्रतिक्रिया जो सामने आयी है, वह रोंगटे खड़े कर देने वाली है।

आज से लगभग साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व जन्मे भविष्यवक्ता नोस्ट्रोडेमस ने अपनी पुस्तक में एक अजीबोगरीब पूर्वानुमान लिपिबद्ध कर दिया था, जिसे इस सदी में अनूदित किये जाने पर मनीषी वर्ग हतप्रभ होकर रह गया। ज्ञातव्य है कि इस भविष्य वक्ता के कोई भी कथन कभी झूठे नहीं निकले। समय की कसौटी पर उनकी सभी भविष्यवाणियाँ सही उतरीं। इस विचित्र भविष्यवाणी में यह कहा गया था कि बीसवीं सदी के अन्तिम दो दशकों में मनुष्य के दुराचरण के कारण एक ऐसी महामारी जन्म लेगी, जो असमय काल के ग्रास में अनेकों व्यक्तियों को खींच ले जायेगी। इस व्याधि से लोगों की प्रतिरोधी सामर्थ्य नष्ट हो जायेगी व क्षीण शक्ति वाले ये मनुष्य अल्पावधि में ही वेदना सहते हुये मृत्यु के मुख में चले जायेंगे। उनका कथन था कि अमर्यादित काम सेवन एवं विकृत यौनाचार ही इसका मूल कारण होगा।

स्वास्थ्य विज्ञानियों का मत है कि गत तीन वर्ष में ऐसी व्याधि जन्म ले चुकी है एवं वह बड़ी तेजी से सारे विश्व में फैल रही है। मात्र ६ माह की अवधि में कष्ट भरा जीवन जीकर रोगी मृत्यु को प्राप्त होने लगे हैं। प्रारम्भ में तो यह बीमारी चिकित्सकों की समझ में भी नहीं आई, नामकरण क्या किया जाता ? अन्ततः निदान परीक्षण के बाद प्रतिरोधी संस्थान पर इसका प्रभाव देखते हुये इसे नाम दिया गया— ए. आय. डी. एस. अर्थात् "एक्वायर्ड इम्यूनाडिफिशिएन्सी सिन्ड्रोम"। इसका शब्दार्थ हुआ ऐसी ग्रहण की गयी व्याधि जिसमें जीवनी शक्ति सहसा कम होती चली जाती है व रोगी इसके अभाव में संक्रमण का शिकार हो मौत की गोद में चले जाते हैं। जिस तेजी से भयावह रूप में यह रोग पहले विकसित देशों में अब सारे विश्व में फैला है, उसने चिकित्सकों एवं साधारणजन समुदाय को चिन्तित, भयभीत कर दिया है। रोग का निदान होने पर भी चिकित्सा की व्यवस्था न होने अथवा उनके कारण न होने की विवशता ने परिस्थितियों को और भी विषम बना दिया है। किसी समय प्लेग जैसी महामारी ने जो भययुक्त परिस्थितियाँ खड़ी की थीं, लगभग वैसी ही आज है। आने वाले एक दो वर्षों में इसके और भी विकराल रूप में प्रकट होने की सम्भावना है।

उन्मुक्त यौनाचार के समर्थक कामू के चिन्तन के पक्षधर पाश्चात्य जगत के बहुसंख्यक व्यक्ति अब यह अनुभव करते हैं कि स्थिति उनके बस में नहीं रही। आधुनिक तकनीकी के क्षेत्र में प्रगति करने वाले इन राष्ट्रों की यह गति क्यों कम हुई, कैसे नासमझी इन पर हो गयी, इसका कारण ढूँढ़ना हो तो हमें इस शताब्दी के प्रारम्भ में प्रतिपादन करने वाले कुछ पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों एवं स्वास्थ्य विज्ञानियों के तर्कों पर दृष्टि डालनी होगी। पूर्वार्त्त मनोविज्ञान एवं दर्शन के सीमित-संयत यौन सम्पर्क से सर्वथा विपरीत उक्ति व्यक्त करने वाले इन मनीषियों ने काम प्रवृत्ति पर अंकुश को एक कृत्रिम बलपूर्वक किया गया निरोध बताया व कहा कि सारी कुण्ठाओं, तनाव तथा मनोविकारों से मुक्ति पाने के लिये उन्मुक्त यौनाचार की छूट मिलनी चाहिये। अन्धे को क्या चाहिये, बस दो आँखें। काम प्रवृत्ति बड़ी बलवती होती है। क्षणिक आनन्द जब मनःरोगों से 'मुक्ति' की गारण्टी देता हो तो फिर प्रतिबन्ध किस बात का ? नियन्त्रण क्यों ? यही कारण है कि न्यूड क्लबों, मसाज थैरेपिस्टों के रूप में यौन-पिपासा शान्त करने हेतु सर्वसाधारण को एक मान्यता प्राप्त मार्ग मिल गया।

अतिवाद हर दृष्टि से हानिकारक है। यौनाचार पर यह विशेष रूप से लागू होता है क्योंकि इससे जीवनी शक्ति का अपव्यय तो होता ही है, अनेक प्रकार के शारीरिक रोग एवं मनोविकार जन्म लेने लगते हैं। नयी उम्र के किशोरावस्था में पहुँचे बालक जब यौन स्वातन्त्र्य अथवा परिपक्व होने के पूर्व विवाह के कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब इस स्थिति का सामना करते हैं तो जानकारी के अभाव में दुरुपयोग होने के कारण क्रमशः क्षीण होते चले जाते हैं व एक विकसित व्यक्तित्व बनने के पूर्व ही टूट जाते हैं।

काम-तृप्ति को परम लक्ष्य व सम्भोग से समाधि जैसे नारे लगाने वाले एक धर्म गुरु अपनी मैथुन-क्रान्ति के कारण हमारे अपने देश में बदनाम भले हुये हों, बाहर जहाँ यौनमुक्त वातावरण है, उन्हें खूब ख्याति मिली है। लेकिन अब अपनी ही उत्पन्न की गयी सृष्टि को उन्हें समझाना पड़ रहा है कि इस यौनाचार के दुष्परिणाम ए. आय. डी. एस. जैसे घातक रोगों के रूप में सामने आयेंगे व समाधि तो नहीं, इस दुनिया से वेदना भरी मुक्ति चढ़ती आयु में ही दिला देंगे। पता नहीं, कितने समझदार व्यक्ति उनकी इस बात को अब उतनी ही अक्लमन्दी से अपनी गिरह में बाँधेंगे, जितनी कि उन्होंने यौन मुक्त जीवन वाली बात बाँधी थी। फिर भी यह एक सत्य है, निर्विवाद तथ्य है एवं आँकड़ों से भरी एक दर्दनाक तस्वीर है, जो अमेरिका से लेकर जापान, आस्ट्रेलिया तक के नागरिकों की आँखों के समक्ष घूम रही है। यह नोस्ट्राडेमस के तीन शताब्दी पूर्व के कथन को प्रमाणित भी कर रही है। संस्कृति विनाश की इस बेला में मानव समुदाय तो नहीं चेता, चिकित्सकों ने इस रोग की भयंकरता को जनमानस के समक्ष रखना आरम्भ कर दिया है।

यह रोग मूलतः समलिंगी यौन सम्बन्धों से फैला है। प्रथम व द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद इस काम विकृति ने अमेरिका व यूरोप में बड़ी तेजी से विस्तार किया। अरब की खाड़ी के देशों में किशोरावस्था के लड़के शेखों के हरमों में सैकड़ों की संख्या में अभी भी देखे जा सकते हैं। एकाकी नीरस जीवन बिताने वाले, मनोविकारग्रस्त युवकों में यह मनोवृत्ति अधिक पायी जाती है। पुरुषों व स्त्रियों दोनों में ही यह पायी जाती है। जहाँ यौन तृप्ति ही लक्ष्य हो वहाँ स्त्री हो या पुरुष कोई अन्तर नहीं पड़ता, ऐसी उनकी मान्यता है। अमेरिका में तो दो पुरुषों ने परस्पर विवाह कर उसे फेडरल डिस्ट्रिक्ट कोर्ट से वैध भी स्वीकार करा लिया। वियतनाम युद्ध जहाँ अमेरिकी सैनिकों को कई वर्षों तक विषम परिस्थितियों में रहना पड़ा, यह विकृत यौनाचार खूब फैला। तब तो किसी ने इस सम्बन्ध में कल्पना भी नहीं की थी कि इसके क्या परिणाम होंगे ? किन्तु प्रकृति की पाठशाला में अनुशासनहीनता के लिये दण्ड की पर्याप्त व्यवस्था है। जिस अप्राकृतिक कृत्य में मानव निरत हुआ, उसकी परिणति एक ऐसे रोग के रूप में उभरकर आयी, जिसके उभरने व मृत्यु को प्राप्त होने के बीच मात्र ५-६ महीने की वेदना युक्त अवधि थी। अमेरिकन एसोसियेशन फॉर एडवान्समेन्ट ऑफ साइन्स ने एक सर्वेक्षण कर १९८३ में यह पाया कि यह कैन्सर से भी अधिक घातक रोग है, जिसे यदि प्रारम्भिक स्थिति में पहचान भी लिया जाये तो उपचार सम्भव नहीं है। इस रोग में "सेल्युलर इम्युनिटी" का ह्रास होता चला जाता है व शरीर से प्रतिरोधी संस्थान सम्बन्धी जीवकोष चुक जाते हैं। प्रतिरक्षा के अभाव में शरीर संक्रमण व कभी- कभी न ठीक हो सकने वाले लसिका ग्रन्थियों के कैन्सर, कैपोसी सारकोमा जैसे रोगों का शिकार हो जाता है। ६ माह से कम में ही व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

सबसे अधिक भयावह पक्ष यह है कि कोई आवश्यक नहीं कि रोग फैलने के लिये यौन सम्पर्क ही जरूरी हो। यह रोगी का रक्त अन्य किसी व्यक्ति को दिये जाने पर अथवा प्रयुक्त इन्जेक्शनरी सुई कहीं और उपयोग में लाई जाने पर भी एक से दूसरे तक पहुँच सकता है। मादक औषधियों का सेवन करने वाले बहुसंख्य व्यक्ति इसके रोगी हो सकते हैं व रक्त बेचने में भी वे अग्रणी होते हैं। रोग फैलाने व एक महाद्वीप व राष्ट्र से दूसरे में रोग को पहुँचाने में सहायक सिद्ध होते हैं। यही कारण है कि मात्र २ वर्ष की अल्पावधि में इसके लगभग सभी बड़े विकसित व विकासशील राष्ट्रों में प्रकट होने की रिपोर्टें मिली हैं।

यह समझा जाना चाहिये कि अप्राकृतिक जीवन क्रम विधाता को किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं। यौनाचार पर प्रतिबन्ध नहीं, लेकिन एक मर्यादा है। जब भी इसका उल्लंघन होगा, दण्ड हाथो-हाथो मिलेगा। अभी तक गनोरिया, सिफिलिस जैसे रोग भी व्यभिचार जैसे कृत्यों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कारण आगे थे किन्तु इस नयी व्याधि ने इन सबसे बाजी मार ली है। जितनी शीघ्रता से यह फैलता है उससे अकाल मृत्यु तो अल्पायु में होती ही है, अन्य सम्पर्क वाले व्यक्ति भी अछूते नहीं रहते।

अध्यात्म दर्शन मर्यादित संयमित जीवन जीने का आदेश देता है। इस विज्ञान सम्मत विधा के सारे सिद्धान्त क्रिया की प्रतिक्रिया के इकोलॉजी के नियम पर आधारित है। विभीषिकायें मनुष्य की स्वयं की न्यौत दी गयी विपदायें हैं। उनका स्वरूप चाहे परिस्थिति की असन्तुलन के रूप में हो अथवा काया व मन के रोगी होने के रूप में, वे बारम्बार यही चेतावनी देती हैं कि अच्छा हो ! मनुष्य समय रहते सम्भल जाये। नहीं तो हृश्रन वही होना है जो नोस्ट्रोडेमस ने पहले ही लिखकर रखा है कि "महामारी जो यौनाचार से जन्मेगी मनुष्यों के शरीरों को गला-गलाकर रातों-रात नष्ट कर देगी।" मनुष्य की समझदारी पर भरोसा किया जा सके तो विश्वास रखनी चाहिये कि ऐसा समय नहीं आयेगा।

रोग-शोकों की उत्पत्ति का कारण 'प्रज्ञापराध'

मनुष्य के विषय में जब भी विचार किया जाता है, उसकी स्थूल-काया-बाह्य संरचना पर ही मुख्यतः ध्यान केन्द्रित होता है। जड़वादी दार्शनिक, प्रत्यक्षवादी वैज्ञानिक काया के साथ-साथ मन की सत्ता का, अस्तित्व भी स्वीकारते हैं। यही स्थिति चिकित्सा विज्ञानियों की भी है। वे यह तो मानते हैं कि मानसिक विकार एवं भ्रान्तियाँ रोगोत्पत्ति में एक प्रमुख कारण है, पर वे भी प्रधानता शारीरिक लक्षणों-उनकी बाह्य प्रतिक्रियाओं पर देते चले आये हैं। एनॉटामी एवं फिजियोलॉजी विज्ञान इन दो से परे किसी भी सत्ता से अस्तित्व को नकारते हुये चिकित्सा हेतु मनःविश्लेषण, तनाव शामक औषधियों एवं एक शारीरिक लक्षणों के तात्कालिक उपचारक्रमों को ही प्रधानता देता है।

आयुर्वेद का इतिहास बहुत पुराना है। वर्तमान प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों का विकास तो अभी-अभी गत कुछ शताब्दियों में हुआ है। परन्तु भारतीय आयुर्वेद विज्ञान रोग की जड़ के निदान का वर्णन कर उपचार हेतु दैनन्दिन के जीवनक्रम में उपलब्ध होने वाली जड़ी-बूटियों तथा रसायन आदि की व्यवस्था करता आया है। इस विज्ञान में रोगोत्पत्ति निदान व चिकित्सा हेतु समग्र मानव और उसके आन्तरिक जीवन पर विचार किया जाता है। जिस 'साइको सोमेटिक' रोग को पाश्चात्य वैज्ञानिक मनोरोगों की शारीरिक प्रक्रिया बताकर आज वर्णन करते हैं, उसकी व्याख्या सूत्रात्मक शैली में 'प्रज्ञापराध' के रूप में आयुर्वेद में पहले ही कर दी गयी है।

चरक संहिता के अनुसार—

धीधृतिस्मृतिविभ्रष्ट-कर्म यत् कुरुतेऽशुभम्।
प्रज्ञापराधं तं विद्यात् सर्वदोष प्रकोपनम्।।

अर्थात्—"बुद्धि, धैर्य और स्मृति से भ्रष्ट होकर मनुष्य जो अशुभ कर्म करता है, उसे प्रज्ञापराध जानना चाहिये, उससे सर्वदोष प्रकुपित होते हैं।"

किसी भी चिकित्सा विज्ञान में पूर्व जन्म के अशुभ कर्मों एवं उनकी इस जन्म में रोगों के रूप में परिणति का वर्णन इस प्रकार न हुआ होगा जैसा कि महर्षि चरक ने किया है।

निर्दिष्टं दैवशब्देन कर्मयत् पौर्वदेहिकम्।
हेतुस्तदपि कालेन रोगाणामुपलक्ष्यते।।

अर्थात्—"पूर्व जन्म का कर्म भी, जिसे दैव कहते हैं, कालान्तर में रोगों का हेतु देखा जाता है।"

प्रत्यक्ष्यवादी वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर ये प्रतिपादन प्रयोगशाला में सिद्ध भले न किये जा सकें, पर इनकी दैनन्दिन जीवन-व्यापार में लीला सर्वत्र दृष्टिगोचर होती रहती है। 'प्रज्ञा' को आयुर्वेद ने परम पवित्र एवं अमूल्य निधि बताया है जो मानव को सृष्टा का वरदान है। जो इसे जितना प्रखर परिष्कृत बनाये रखता है, वह न केवल अपने आपको व्यक्तित्व सम्पन्न बनाता है अपितु अपने स्वस्थ जीवन का पथ भी प्रशस्त करता है। प्रज्ञा उसे कहते हैं, जो दुर्भाव-द्वेषों से मुक्त हो—भावना प्रधान बुद्धि हो—जिसमें आदर्शवादी निष्ठाओं का जीवन में समावेश हो एवं कृत्रिमता रहित हो।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस शब्द को आधार बनाकर स्वस्थ-अस्वस्थ मानसिकता एवं तदनुसार रोगों का निर्धारण कितना सूझबूझ कर किया गया है, यह आज की व्याधियों की अनेकानेक थ्योरीज़ एवं 'रोगोत्पत्ति' पर किये गये प्रतिपादनों को पढ़कर पता चलता है। 'कीटाणुवाद', जो आज एलोपैथी चिकित्सा पद्धति का मूल आधार है, को भी चरक ने अस्वीकार नहीं किया है। अन्तर बस इतना ही है कि इसे पूर्व जन्म के पाप कर्म का फलोदय इस जन्म में उस प्रज्ञापराध की जीवनी शक्ति के ह्रास में परिणति तथा प्रतिक्रिया रूप में जीवाणु वर्ग का शरीर में प्रवेश बताते हैं। अल्टरनेटिव मेडीसिन के समर्थक अब आधुनिक विश्व में बढ़ते जा रहे हैं। वे भी जीवाणु के आक्रमण को अनास्था-असन्तुलन की फलश्रुति मानते हैं। यह अनास्था ही शास्त्रों में 'प्रज्ञापराध' के रूप में वर्णित की गयी है।

प्रज्ञापराध का कारण है—विवेक से च्युत होना। काम, क्रोध, लोभ इत्यादि के वश में होकर मनुष्य जब स्वयं पर संयम खो बैठता है तब उसे उचित-अनुचित का भान नहीं रहता। वह अनायास ही ऐसा अपराध कर बैठता है, जो काया के स्वस्थ जीवनक्रम को असन्तुलित कर देता है। असंयम चाहे वह मानसिक हो अथवा रसेन्द्रियों-कामेन्द्रियों के माध्यम से शारीरिक, समय की अनियमितता हो अथवा अर्थ एवं वाणी का असंयम—इसकी परिणति होती है असन्तुलित चित्रवृत्ति में। यही अपनी बाह्य अभिव्यक्ति शारीरिक रोगों के लक्षणों के रूप में करती है। विडम्बना यह है कि उपचार इन लक्षणों का किया जाता है न कि उस जड़ का जो गहरे में बैठी रहती है एवं उपयुक्त परिस्थितियाँ पाकर फूटती रहती हैं। गरुड़ पुराण में उल्लेख आता है—

"चित्तायतं धातुवश्यं शरीरं
चित्ते नष्टे धातुवोयन्ति नाशम्।
तस्माच्चित्तं सर्वदा रक्षणीयं
स्वस्थे चित्ते धातवः सम्भवन्ति।।"

अर्थात्—"मानवी काया चित्तायत्त है और धातुओं के वश में है। चित्त के नाश से धातुयें नष्ट होती हैं, इसलिये सर्वदा चित्त की रक्षा करनी चाहिये। यदि चित्त स्वस्थ है तो धातुयें पुष्ट होती हैं और पुष्ट धातुओं का अर्थ है स्वस्थ नीरोग काया।"

चरक के अनुसार प्रज्ञापराध का वास्तविक रूप इस प्रकार है—

"संग्रहेण चातियेगवर्जं कर्म वाङ्मनः शरीर महित मनुपदिष्टं वर्तव्य मिथ्या रोगं विद्यात्। इति त्रिविध विकल्पं त्रिविधमेव कर्म प्रज्ञापराध इति व्यवस्थेत्।"

अर्थात्—"मन, वचन और शरीर के लिये अहितकर और शास्त्र निषिद्ध अतियोग, अयोग और मिथ्यायोग इन त्रिविध विकल्प रूप कर्मों को प्रज्ञापराध कहते हैं।"

आयुर्वेद का यह कथन कि वेगों (ड्राइव या मोटिव) को अनुचित रूप से रोकने या बलपूर्वक प्रवृत्त करने से रोगोत्पत्ति होती है—वैज्ञानिक शोध का विषय है। मलमूत्र-वीर्य-वायु का प्राकृतिक प्रवाह न तो एकाएक रोकना चाहिये, न ही उन्हें बलपूर्वक क्षरित होने देना चाहिये क्योंकि फिर ये ही अतन्तः रोगों का कारण बनते हैं।

इन अपराधों के अतिरिक्त वाणी के अपराधों को भी प्रज्ञापराधों में गिना गया है और उन्हें रोगों का कारण माना गया है। वाणी का सदुपयोग और दुरुपयोग ही आनन्द व उद्वेग का स्वास्थ्य एवं अस्वस्थता का कारण बनता है, ऐसा शास्त्रों का मत है। वाणी के संयम को वाङ्मय तप बताया गया है, जो स्वास्थ्य का सहज साधन है। इसी आधार पर बताया जाता है कि रोगी से कहे गये प्रेम-सहानुभूति से युक्त चिकित्सक के वचन रोगी का आधा रोग दूर कर देते हैं। संयत, मिष्ट और सत्य वचन युक्त मृदु वाणी-व्यवहार एक सुसंस्कृत और स्वस्थ व्यक्ति के लक्षण हैं।

प्रज्ञापराध व्यक्ति तक सीमित नहीं है। इसकी प्रतिक्रियायें समाज के हर घटक पर होती हैं और सामाजिक स्वास्थ्य पर इसका प्रभाव पड़ता है। दुष्कर्मों का बढ़ना—उनसे सूक्ष्म वातावरण का प्रदूषित होना तथा उसकी परिणति प्रकृति पर दुष्प्रभाव के रूप में होना एक तथ्य है। इसी व्यापक सामाजिक प्रज्ञापराध को 'धर्म ग्लानि' के नाम से सम्बोधित किया जाता रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तुतः स्वस्थ जीवन का आधार है—अध्यात्म सिद्धान्तों का जीवन के हर क्षण-हर गतिविधि में व्यापक समावेश। दवाओं से स्वास्थ्य नहीं खरीदा जा सकता। ७५० करोड़ रुपयों की वार्षिक खरीद करने वाले ६८ करोड़ की जनसंख्या वाले भारतवर्ष की नीति-निर्माताओं को नागरिकों का स्वास्थ्य सुधारने मात्र के लिये ही नहीं, राष्ट्रीय अर्थनीति को आमूलचूल रूप से बदलने व राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ाने के लिये भी इस ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिये।

प्रज्ञापराध और कुछ नहीं, प्रकारान्तर से आस्था संकट है—अनास्था रूपी दैत्य का दुष्प्रभाव ही है। यही व्यष्टिगत व समष्टिगत रोगों का मूल कारण है। राष्ट्र के समग्र स्वास्थ्य हेतु इसके निवारण हेतु अध्यात्म सिद्धान्तों का, उत्कृष्टता की पक्षधर मान्यताओं का जन स्तर पर व्यापक प्रचार-प्रसार अति आवश्यक है।

आस्थाएँ विकृत होने से रोग, शोक बढ़ते हैं

रोग, कष्ट तो शरीर को देते हैं, पर वे उपजते मन में हैं। असंयम शारीरिक नहीं मानसिक रोग है। शरीर तो हर हालत में मन का बफादार नौकर ही बना रहेगा। सत्कर्म और दुष्कर्मों का दोष तो शरीर को ही दिया जाता है और दण्ड भी उसी को भुगतना पड़ता है, पर वस्तुतः बात कुछ और भी है। मन के कुसंस्कारी और अचिन्त्य चिन्तन का अभ्यासी हो जाने के कारण उसकी दिशा धारा उस ओर बहने लगती है, जो नैतिकता एवं प्रकृति व्यवस्था के प्रतिकूल होती है। शरीर तो औजार, उपकरण मात्र है। उसे वाहन की संज्ञा ठीक ही दी गई है। मन भली दिशा में चले या बुरी में शरीर को अपने स्वामी का उसका पालन करना पड़ेगा, वह बफादार नौकर की तरह है। साथ ही उसमें सोचने, तर्क करने या अवज्ञा करने जैसी सामर्थ्य नहीं है, ऐसी दशा में स्वामी का आज्ञानुवर्ती होकर ही उसे रहना पड़ता है। भली-बुरी क्रियायें तो शरीर ही करता है, पर उसको प्रेरणा—आज्ञा देने की जिम्मेदारी पूर्णतया मन की है। मन का असंयम ही आहार-विहार में अव्यवस्था उत्पन्न करता है। प्रकृति के प्रतिरोध की चेष्टा में असफल रहने का परिणाम ही रोग है। रोग अपने आप नहीं आते। वे आमन्त्रित किये हुये अतिथि भर होते हैं। असंयमी मन ही दौड़-दौड़ कर उनके पास जाता है और आग्रहपूर्वक उन्हें बुलाकर घर लाता है। आते हैं तो अपनी प्रकृति के अनुरूप उपहार अनुदान देते ही हैं। भले ही वह प्रसाद हमें बुरा लगे या भला। यही है रोगों की उत्पत्ति एवं सक्रियता का तत्व ज्ञान।

औषधियों से लेकर प्राकृतिक चिकित्सा तक के सभी उपचार प्रायः रुग्ण अंग को राहत देने वाले उपाय बरतते हैं। उनसे सामयिक रूप से कष्ट निवृत्ति में सहायता भी मिलती है, पर ये एक जादू भर हुआ। अधिक से अधिक तात्कालिक समाधान कह सकते हैं। इसमें रोग निवृत्ति का ऐसा कोई मार्ग नहीं है, जिसमें बार-बार नये-नये रूप बनाकर उठते रहने वाले इन भूतों का स्थायी निराकरण हो सके, जो आये दिन वेष बदल-बदल कर सामने आते और आँख-मिचौनी खेलते रहते हैं। एक रोग अच्छा नहीं हो पाता कि उसकी जाति बिरादरी का कोई दूसरा उपद्रव फिर आ धमकता है। एक की विदाई पूरी तरह नहीं हो पाती कि नयों के आगमन का नगाड़ा बजने लगता है।

रोग उपचार के चिकित्सा प्रावधान में दो उपाय बरते जाते हैं—एक यह कि विषाणुओं को मारने के लिये तेज निरोधक औषधियाँ दी जायँ, जिससे आक्रमणकारियों की संख्या तथा शक्ति क्षीण हो। दूसरा यह कि कष्ट की अनुभूति कराने वाले तन्त्र को शिथिल कर दिया जाये। इन उपायों से तात्कालिक समाधान तो होता है—राहत भी मिलती है, पर ऐसा कुछ नहीं होता, जिससे रोगी को उस घातक व्यथा से पूरी तरह छुट्टी मिल सके।

जो हो—औषधि उपचार को कितना ही आवश्यक क्यों न समझा जाय, इतना तो मानना ही पड़ेगा कि वे सर्वथा हानि रहित नहीं हैं। विषाणुओं की तरह—विजातीय द्रव्य की तरह वे भी अपने दाँत, पंजे चलाती हैं और जीवनी शक्ति के लिये वे भी हानिकारक ही सिद्ध होती हैं। मूल बात यह है कि क्या उस उपचार से रोगों से आत्यंतिक निवृत्ति मिलती है या मिल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकती है। उत्तर 'न' में ही मिलता है। रोग उत्पादन के मूल कारण बने रहने पर वे उपजते ही रहेंगे। इस उत्पादन को रोके बिना सामयिक रोकथाम से कोई बड़ा प्रयोजन पूरा नहीं हो सकता।

रक्त विकृत होने पर फोड़े-फुन्सी, दाद, खाज, दर्द, सूजन, गाँठ आदि कुछ न कुछ उपद्रव खड़े होते ही रहेंगे। एक रोग का इलाज करने पर दूसरा उठ खड़ा होगा। निवृत्ति तो तभी मिलेगी जब शोधन की बात बने। मच्छर तब मरेंगे जब गन्दगी दूर हो। गन्दगी के रहते उन्हें मारते रहने से कोई लाभ नहीं। नई उत्पत्ति उस प्रयास को व्यर्थ बना देगी जो मच्छरों को मारने के लिये किया गया था। पत्ते सूखते हों तो उन पर छिड़काव करने का कोई लाभ नहीं, सिंचाई जड़ की की जानी चाहिये। रोगों के ऊपरी स्वरूप को मिटाने के लिये की जाने वाली भागदौड़ का इतना ही लाभ है कि विग्रह को किसी प्रकार चुप कर दिया जाय। भीतर का द्वेष और क्रोध आज नहीं तो कल फिर उभरेगा और नये रूप में विग्रह उत्पन्न करेगा। समस्या के समाधान के लिये गहराई में उतरना होगा।

यह हजार बार समझा जाना चाहिये कि शरीर को बीमारियाँ बुलाने से लेकर दुष्कर्म करने तक में दोषी नहीं माना जा सकता। वह जड़ तत्वों का बना होने से अपनी समझ से कुछ नहीं कर सकता। तलवार में काटने की शक्ति तो होती है, पर वह अपनी इच्छा से किसी को नहीं काटती। प्रयोगकर्त्ता के इशारे पर ही उसे चलना पड़ता है। ठीक इसी प्रकार शरीर भी स्वेच्छापूर्वक न भले आचरण करता है न बुरे। वह किसी के निर्देश का पालन करता है और वह निर्देशकर्त्ता निश्चित रूप से मन है। उसी बाजीगर की उँगलियाँ बेचारी कठपुतली को भला-बुरा नाच नाचने के लिये विवश करती हैं। दर्शक की आँखों से बाजीगर छिपा रहता है इसलिये वे भ्रमवश कठपुतली के नाच में रस ले सकते हैं, पर किसी विवेकशील को उस उछल-कूद के लिये बाजीगर की उँगलियों को ही कारण मानना और श्रेय देना पड़ेगा। शरीर की स्वस्थता और रुग्णता का मूल कारण मानसिक स्थिति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मन के संकेतों पर शरीर असंयम बरतता है। असंयम का प्रकृति दण्ड रोगों के रूप में सामने आता है। शरीर की भली-बुरी परिस्थितियों के लिये—कुछ अपवादों को छोड़कर मन को ही उत्तरदायी ठहराया जायेगा।

सामयिक राहत को ही यदि रोगोपचार माना जाय तो प्रचलित चिकित्सा पद्धति पर सन्तोष किया जा सकता है। यदि अस्वस्थता का आत्यन्तिक समाधान अभीष्ट हो तो कुछ आगे चलना होगा और उस उद्गम केन्द्र की मूल स्थिति में सुधार करना होगा जिससे कि बाढ़ का पानी निकलता है। मेंड़ बाँधने से काम न चलेगा। उफनता नाला एक जगह से रोकने पर दूसरे स्थान से फूट निकलेगा, असंयम की मनःस्थिति शरीर से प्रकृति की अवज्ञा करती रहेगी और उसका दण्ड बेचारा शरीर रोगों के रूप में भुगतता रहेगा। थोड़ा गहरा विचार करें तो रोगों की व्यथा भी शरीर के माध्यम से मन को ही सहनी पड़ती है। संवेदनाओं का केन्द्र रहने के कारण अन्ततः मन ही शरीर की पीड़ा और दुर्गति के लिये कष्ट सहन करता है। मस्तिष्क सुन्न कर देने पर शरीर में घाव रहने पर भी उस बेचारे को कोई कष्ट नहीं होता, इसलिये देखा जाय तो मन ही कुकर्म करता और वही दण्ड भुगतता है।

रोगों से पूर्ण छुटकारा पाने के लिये मन को स्वास्थ्य का कारण भूत आधार मानकर चलना होगा और चिकित्सा के लिये उसी पर छाई रुग्णता को दूर करने का उपाय करना होगा। जब तक इस तथ्य को स्वीकार न किया जायेगा तब तक आरोग्य लाभ की आकांक्षा मृगतृष्णा ही बनी रहेगी।

रोगों के दो वर्ग हैं एक आधि दूसरा व्याधि। व्याधि शारीरिक रोगों को और 'आधि' मानसिक रोगों को कहते हैं। ज्वर, खाँसी, दमा, दर्द, अपच, मधुमेह, रक्तचाप आदि को शारीरिक रोग गिना जाता है और उन्माद, सनक, मूर्खता, विस्मृति, विसंगतियाँ, उलझनों आदि की मानसिक रोगों में गणना होती है। मस्तिष्कीय रोगों की चिकित्सा पागल खाने के डाक्टर करते हैं और मनः चिकित्सक पूछताछ करके अन्तरंग में जमी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुंठाओं को उगलवाने और सत्परामर्श देने के उपायों का सहारा लेते हैं। शरीर विज्ञानी औषधि उपचार शल्य कर्म आदि के द्वारा करते हैं। इनमें आंशिक सफलता भी मिलती है, पर प्रयत्न फिर भी अधूरा ही रह जाता है और वैसा लाभ नहीं मिलता जैसा अभीष्ट है। इस अधूरेपन को दूर करने के लिये मन की उस गहराई तक जाना होगा, जहाँ से कि शरीर और मन को प्रभावित करने वाले प्रवाहों को उभारने और काम करने की प्रेरणा मिलती है। कुएँ में जो पानी भरा दीखता है, वह उसकी तली में जल फेंकने वाले स्रोतों से आता है। इसी प्रकार मस्तिष्कीय अस्त-व्यस्ततायें चेतना की मूल प्रवृत्ति के मर्मस्थल में से उभरती हैं। इस परत को आस्था केन्द्र कहते हैं। मनुष्य के गहन अन्तराल में कुछ आस्थायें जैसी होती हैं व्यक्तित्व का मूल स्रोत उन्हीं में सन्निहित रहता है। इच्छायें स्वतन्त्र नहीं हैं। वे इसी आस्था केन्द्र से उद्‌भूत होती हैं। इच्छाओं से विचारणायें और विचारणाओं से क्रियायें होने की बात तो सभी जानते हैं, पर यह बहुत कम को विदित है कि इच्छायें भी मौलिक नहीं हैं। वे चेतना के उस गहरे परत में से उदित होती हैं, जिन्हें मान्यतायें एवं आस्थायें कहा जाता है।

आस्थाओं के दो वर्ग हैं—एक नैतिक दूसरी अनैतिक—एक दैवी दूसरी आसुरी—एक उत्कृष्ट, दूसरी निकृष्ट—एक मानवी दूसरी पाशविक—एक सात्विक दूसरी तामसिक। दोनों की अपनी-अपनी विशेषतायें हैं और अपनी-अपनी प्रतिक्रियायें। नैतिक आस्थायें उन मान्यताओं को अपनाती हैं, जिन्हें उत्कृष्ट एवं आदर्शवादी कहते हैं। पवित्रता, संयम, उदारता, सज्जनता नीति, निष्ठा, सामूहिकता जैसे सद्‌गुण इसी वर्ग के हैं। इन्हें देवत्व कहा जाता है और जिनमें इनकी मात्रा जिस अनुपात से बढ़ती है, उन्हें उतने ही अंश में सन्त, ऋषि या देवता कहा जाता है। बोल-चाल के शब्दों में उन्हीं को सज्जन, आदर्शवादी, लोकसेवी आदि नामों से पुकारते हैं। दूसरे वर्ग में उनकी गणना है जिन्हें अनैतिक, असज्जन कह सकते हैं। इनके अन्तराल में स्वार्थान्धता, की पशुप्रवृत्ति और दुष्टता की पैशाचिकता छाई रहती है। छल, अभिमान, उत्पीड़न, अपहरण ईर्ष्या, द्वेष जैसे दुर्गणों की असुरता स्वभाव का अंग बन जाती हैं और मस्तिष्क तथा शरीर का रुझान उसी दिशा में गतिशील रहता है। वासना, तृष्णा और अहंता की पूर्ति के लिये उनकी लिप्सा निरन्तर ललकती रहती है। लोभ और मोह के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं। जिनमें राग होता है उनके लिये पक्षपात की अति करने और जिनसे द्वेष होता है, उन्हें मिटा डालने के प्रति सर्प जैसी विनाश लीला रचने से कम में चैन ही नहीं पड़ता। न्याय, औचित्य, विवेक की छाया भी दिखाई नहीं पड़ती। ऐसे लोग असुर एवं नर-पिशाच कहलाते हैं। देव और दैत्यों के बीच का एक मध्य वर्गी समन्वित पक्ष भी हैं, जिन्हें मनुष्य कहते हैं। यह मानवी सत्ता ही है, जिसमें कहीं दैवी और कहीं आसुरी तत्वों की बहुलता दीख पड़ती है। देव और असुर कोई व्यक्ति विशेष नहीं होते। इन्हें आस्थाओं का स्तर एवं प्रवाह ही कह सकते हैं। दोनों में से जिसमें, जिसका, जितना बाहुल्य होता है वह उतने ही अंशों में देव या असुर कहा जाता है। इन वर्गों की आकृति देखकर नहीं प्रकृति पर दृष्टिपात करके ही पहचाना जा सकता है।

पौराणिक प्रतिपादन है कि देवता स्वर्ग में उर्ध्वलोक में रहते हैं और दानव भूमि से नीचे पाताल में—पतितावस्था में रहते हैं। देवताओं का स्वर्गलोक आकाश में ऊँचाई पर है। इन्हें उत्कृष्टता और निकृष्टता का लोक कह सकते हैं। लोकों का वर्णन किया गया तो इस प्रकार है मानो वे कोई देश क्षेत्र हों। पर वस्तुतः वे मनोभूमियाँ भर हैं और उन्हें दृष्टिकोण भी कहा जा सकता है। स्वर्ग में सुख सम्पदायें भरी पड़ी हैं और नरक में यातनायें ही यातनायें हैं। यह यातनायें मरने के बाद ही मिलती हों ऐसी बात नहीं है। उनका अनुभव ही जीवन में इसी शरीर में भी किया जाता है। शारीरिक व्याधियाँ और मानसिक आधियों को इसी रूप में लिया जा सकता है।

यों कोई भी रोगी सहज दया का पात्र होता है। कष्ट पीड़ित के प्रति मानवी करुणा का उभरना स्वाभाविक है। उचित भी है और आवश्यक भी। दुःखी के प्रति सहानुभूति और सेवा सहायता की वृत्ति रहना मानवी गरिमा के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुरूप है। इसलिये रोगी को अपराधी समझकर उसके प्रति घृणा उपेक्षा बरतने की तनिक भी आवश्यकता नहीं है। उसके कष्ट निवारण में तो करुणा भरा उदार सहकार ही अपेक्षित है यहाँ तो चर्चा उन तथ्यों के विश्लेषण की हो रही है, जिनके कारण मानव जीवन का सौभाग्य दुर्भाग्य में बदलता है और सुख शान्ति के स्थान पर शोक सन्ताप सहन करना पड़ता है।

अन्तःकरण की आस्थायें ही हैं जो मनुष्य की ऊपर उठने एवं नीचे गिरने की प्रेरणा देती हैं। उसी की प्रतिक्रिया व्यक्तित्व को समुन्नत एवं पतित बनाकर रख देती हैं। इसी आन्तरिक उत्थान-पतन के आधार पर मनुष्य स्वर्गीय एवं नारकीय दृष्टिकोण विनिर्मित करता है और तदनुसार अनेक प्रकार के शारीरिक, मानसिक कष्टों को सहन करना पड़ता है। इतना ही नहीं जीवन के अन्य क्षेत्र भी ऐसी विषम परिस्थितियों से भर जाते हैं, जिनमें रहने वाला अपने को पग-पग पर असफल, उपेक्षित, तिरस्कृत, दरिद्र एवं दुर्भाग्यग्रस्त अनुभव करता है। ऐसे लोग नीरस, खिन्न, विपन्न, उद्विग्न एवं भार भूत जीवनयापन करते हुये किसी तरह साँसों का बोझ वहन करते हैं।

जहाँ तक शारीरिक और मानसिक रोगों का सम्बन्ध है, उनकी गहरी जड़ें अन्तःकरण की उस गहरे परत में घुसी होती हैं, जिन्हें आस्था कहा जाता है। यदि आस्थायें अनैतिक स्तर की बन गई होंगी तो मनुष्य न प्रकृति के नियमों की परवाह करेगा और न नीति, धर्म, कर्त्तव्य एवं आदर्श की। ऐसी दशा में गति-विधियाँ अवांछनीय होती चली जायेंगी, उनमें निकृष्टता एवं उच्छृंखलता का बाहुल्य रहेगा। विश्व विधान में किसी को भी उच्छृंखलता बरतने की छूट नहीं है। मनुष्य को भी नहीं। आस्थायें गँवाने वाला असंयमी बनता है और उस उद्धत आचरण का प्रतिफल ही शारीरिक, मानसिक रोगों के रूप में सामने आता है। अन्याय क्षेत्रों में आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक, आन्तरिक अनेकानेक हानियाँ एवं कठिनाइयाँ उठानी पड़ती हैं सो अलग। आस्थाओं के उद्गम केंद्र को व्यवस्थित परिष्कृत करने से कम में न शारीरिक रोगों से छुटकारा मिल सकता है न मानसिक उद्विग्न असन्तुलन से। आस्थायें ही हैं जो परिष्कृत होने पर हमें शारीरिक आरोग्य, मानसिक उल्लास और आन्तरिक सन्तोष से भरा पूरा सुख शान्तिमय जीवन प्रदान करती हैं।

आस्थायें परिष्कृत हों

डा. व्हिक्टर ई. फ्रैन्कल अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त मनःचिकित्सक हैं। ये वियेना विश्वविद्यालय में चिकित्सा विभाग में मानसिक रोगों के प्राध्यापक हैं। मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में विशेष अध्ययन, लम्बे अनुभव एवं रोगियों पर किये गये शोध कार्य के उपरान्त उन्होंने जो महत्त्वपूर्ण तथ्य बताये, वे ध्यान देने योग्य हैं। अपनी प्रख्यात पुस्तक 'दी डाक्टर एण्ड दी सोल' में वे लिखते हैं कि "रोगी की दवा देने एवं रोगों के निवारण के असंख्यों प्रकार की दवाओं के निर्माण की अपेक्षा आवश्यकता इस बात की है कि जीवन के आध्यात्मिक मूल्यों को समझा जाये—महत्त्व एवं लक्ष्य को बताया जाय—आदर्शों एवं सिद्धान्तों की उपयोगिता से अवगत कराया जाय। रोगी का स्थायी इलाज कर सकना तभी सम्भव है।"

वे आगे लिखते हैं कि "अनास्था की विकृतियों के निवारण में मनोवैज्ञानिकों की पहुँच नहीं है। इसके लिये आस्था सम्पन्न, आध्यात्मिकता के साकार स्वरूप, धर्म को जीवन में धारण करने वाले पुरोहितों की आवश्यकता है। अन्तः मर्मस्थल तक पहुँचकर अनास्था की जड़ें उखाड़ सकना तो आस्थावान चिकित्सकों द्वारा ही सम्भव है।"

पश्चिमी जगत का उदाहरण देते हुये फिर कहते हैं कि "यहाँ का मनुष्य ऐसी बहुत-सी समस्याओं को जो उसे धार्मिक पुरोहित के समक्ष रखनी चाहिये, न रखकर डाक्टर के पास रखता है। फलस्वरूप डाक्टर अन्तः के मूल कारणों से अनभिज्ञ होने के कारण निदान नहीं कर पाता। शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक स्तर पर दिया गया समाधान उपयोगी नहीं सिद्ध हो पाता।" चिकित्सकों एवं मनोवैज्ञानिकों के समक्ष इस प्रकार अब आस्था का एक नवीन आयाम आ खड़ा हुआ है, जिसका निदान इनके पास नहीं है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आस्था की विकृतियों का निष्कासन एवं आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति निष्ठा उत्पन्न कर सकना शरीरशास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों द्वारा नहीं आत्मिक क्षेत्र में पहुँचा हुआ व्यक्ति ही कर सकता है। डा. फ्रेंकल के अनुसार "श्रेष्ठताओं, आदर्शों एवं सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा न होना ही वस्तुतः सभी समस्याओं एवं विविध प्रकार के मनोविक्षोभों का कारण है। इसके लिये आवश्यकता इसकी है कि मानव जीवन के महत्त्व एवं उसके लक्ष्य से मनुष्य को अवगत कराया जाये।"

डा० फ्रेन्कल का कहना है कि "आज मनोवैज्ञानिक चिकित्सा प्रणाली में जीवन मूल्यों से सम्बन्धित प्रश्नों का कोई स्थान नहीं है, क्योंकि इन प्रश्नों को भी वह मनःक्षेत्र में समाहित मानता है। इस प्रकार मानसिक चिकित्सक आध्यात्मिक मूल्यों की उपेक्षा करके महत्त्वपूर्ण आधार को छोड़ बैठता है।"

जिस सीमा तक मनोवैज्ञानिक इलाज सफल होते हैं, उनके कारण भी आध्यात्मिक तत्व ही होते हैं। मनोचिकित्सक रोगी के मन की दबी परतों को उधेड़ता, विश्लेषण करता, तत्पश्चात् निदान बतलाता है ? ये निदान वस्तुतः आध्यात्मिक सिद्धान्तों पर ही अवलम्बित होते हैं। उनको निकाल दिया जाये तो मानसिक चिकित्सा प्रणाली सफल नहीं हो सकेगी। इस दृष्टि से डा. फ्रेन्कल ने मनःचिकित्सकों को न केवल चिकित्सा प्रणाली वरन् अपने जीवन क्षेत्र में भी आध्यात्मिक सिद्धान्तों को अपनाने की प्रेरणा दी है। समुचित एवं स्थायी निदान वहीं चिकित्सक कर सकता है, जिसने जीवन के महत्त्व एवं उद्देश्य को समझ लिया हो ? चिकित्सक को मन ही नहीं आत्मा को केन्द्र बिन्दु मानकर चिकित्सा आरम्भ करनी चाहिये।

आज मनुष्यों में अधिकांश की चिन्तन प्रणाली निषेधात्मक है। मनोविकारों का बाहुल्य उनके चिन्तन में देखा जा सकता है। फलस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति अर्धविक्षिप्त बना किसी प्रकार अपने जीवन के दिन पूरे कर रहा है। मानसिक व्याधियों की इतनी बहुलता पहले कभी नहीं देखी गई थी। निस्सन्देह असन्तुलित मनःस्थिति समस्त आधि-व्याधियों की जननी है।

विकारों से युक्त मन अनेकों प्रकार की मानसिक बीमारियों को जन्म देता है। इसका उल्लेख न भी किया जाये, तो भी मन का प्रभाव शारीरिक स्वास्थ्य पर क्या पड़ता है ? इसका अध्ययन किया जाय तो आश्चर्यजनक परिणाम सामने आयेंगे।

इस सन्दर्भ में 'जर्मन' के कुछ वैज्ञानिकों के शोध का उल्लेख करना उपयुक्त होगा। उन्होंने संसार के प्रमुख व्यवसायियों एवं महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के मृत्यु के कारणों का पता लगाया। जो परिणाम सामने आये वे चौका देने वाले हैं। आँकड़ों के अनुसार उन प्रमुख व्यक्तियों में अधिकांश की मृत्यु स्नायु-रोगों के कारण हुई। मानसिक तनाव के कारण—'वेगस नर्व' की क्रियाशीलता बढ़ जाने से हृदय की गति कम हो जाती है। 'वेगस नर्व' पैरासिम्पैथेटिक सिस्टम का एक भाग है, जो हृदय की गति को प्रभावित करती है।

उक्त वैज्ञानिकों के अनुसार क्रोधित अवस्था में शरीर में गुर्दे के ऊपर अवस्थित 'एड्रीनल' ग्रन्थि से एड्रीनेलीन नामक अन्तःस्राव होता है, जो हृदय की गति को सिम्पैथेटिक प्रक्रिया को बढ़ा देता है। गति अधिक बढ़ जाने से मृत्यु तक हो सकती है। मानसिक उद्वेगों का शारीरिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव पड़ता है। किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार एक महत्त्वपूर्ण तथ्य और भी प्रकट हुआ कि तनाव की स्थिति में काम करने वाले तथा घृणा, भय, क्रोध आदि मानसिक आवेगों के मध्य रहने वाले लोग नाड़ी—मण्डलीय, अजीर्ण, पेट की एसिडिटी आदि रोगों से ग्रस्त होते हैं। तनाव से 'इरीटेवल कोलन सिन्ड्रोम' एवं इसोफोजियलस्पेज्म' नामक रोग उत्पन्न होते हैं। पाश्चात्य देशों में तनाव की स्थिति अधिक है, इस कारण बड़ी आँत की बीमारी जिसे 'अल्सरेटिव कोलाइटाएज' कहते हैं, बढ़ती जा रही है। इसमें रोगी को रक्त से युक्त दस्त बारम्बार होने लगते हैं। "प्रोक्टेल्जिया फ्यूगैक्स" नामक रोग भी मानसिक उद्वेगों के कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्पन्न होता है। गुदा में जोरों का दर्द होना इसका प्रमुख लक्षण है।

न केवल मानसिक बीमारियों वरन् अधिकांश शारीरिक रोगों का कारण मन की विकृतियाँ हैं। शरीर के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़े होने तथा नियन्त्रण करने के कारण मन की विचारणा उसमें से उठने वाले क्रोध, ईर्ष्या के आवेगों का प्रभाव शरीर के विभिन्न संस्थानों पर पड़ता है। फलस्वरूप शरीर के सूक्ष्म संस्थान, जिन पर शारीरिक स्वास्थ्य निर्भर रहता है, सही प्रकार से कार्य नहीं कर पाते। संसार में बढ़ते हुये अनेक प्रकार के रोग इस बात के प्रमाण हैं कि मानसिक दृष्टि से मनुष्य अब असन्तुलित होता जा रहा है।

इस दयनीय स्थिति से मानव जाति को उबारने के लिये उन उपचारों को ही अपनाना होगा जो मन को शान्ति प्रदान करते हों, सन्तुलित रखते हों। शारीरिक रोगों के निवारण के लिये अस्थायी किये जाने वाले निदानों की अपेक्षा उन आधारों को ढूँढ़ना होगा, जो स्थायी समाधान प्रस्तुत करते हों। यह उपचार प्रणाली शारीरिक स्तर पर नहीं, मानसिक स्तर पर ही विकसित करनी होगी।

शारीरिक स्वास्थ्य का केन्द्रबिन्दु मन की उपेक्षा से ही असन्तुलन की स्थिति में पहुँचता है। होना यह चाहिये था कि मानसिक शोधन एवं मन के विकास के लिये चिकित्सा जगत में प्रयत्न चलते, जबकि इसकी अवहेलना हुई। शरीर स्तर पर ही वैज्ञानिक शोध की प्रक्रिया चलती रही। उसे सँवारने, स्वस्थ रखने के सारे सरंजाम खड़े किये गये। इस प्रक्रिया में भूल यह हुई कि स्वास्थ्य एवं विकास की जड़ें सींचने के सन्दर्भ में मन की जड़ें सींचने की उपेक्षा हुई। पत्तों (शरीर) को सींचने, निरोग रखने का प्रयास हुआ। फलस्वरूप असफलता हाथ लगी। इन प्रयत्नों में जितने रोगों के उपचार हुये, उनसे कई गुना अधिक नये रोग उठ खड़े हुये।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रायड के अनुसार, "मनुष्य को शारीरिक समस्याओं का बोध रहता है, जबकि उनका केन्द्रबिन्दु मन है। यदि किसी प्रकार उसे बोध करा दिया जाय कि समस्याओं, विकारों की जड़ मन में है न कि तन में और मन से यह भ्रान्ति निकाल दी जाये कि वस्तुतः कोई समस्या नहीं है, तो शारीरिक समस्याओं, रोगों आदि से अपने आप छुटकारा पाया जा सकता है।"

मनोविज्ञान का क्षेत्र जैसे-जैसे बढ़ता जा रहा है, इस तथ्य को स्वीकार किया जा रहा है कि मानसिक स्वास्थ्य शरीर का सन्तुलन बना रह सकता है। आज के मूर्धन्य चिकित्सक भी इस बात को स्वीकार कर रहे हैं कि रोगों में ८० प्रतिशत मनोदैहिक हैं। फलस्वरूप रोगों से मुक्ति पाने का जो आवेश चिकित्सा जगत में दवाओं के माध्यम से चला था, वह कम होता रहा है। चिकित्सक अब वह प्रणाली ढूँढ़ने में तत्पर हैं, जो मन को स्वस्थ एवं सन्तुलित रखती है।

अमेरिका के 'केन्सास' नगर में 'मेन्निन्जर फाउण्डेशन' नामक संस्था है। उक्त संस्था के संचालक डा. इल्मरेग्रीन अपनी पत्नी सहित पिछले १७ वर्षों से ऐसी उपचार पद्धति को ढूँढ़ने में संलग्न हैं, जो रोगी के मन को सुदृढ़, स्वस्थ बनाती हो। उन्होंने अपने "बायोफिड बैंक' सम्बन्धित शोध में प्रायः सुप्त आरोनामिक नर्वस सिस्टम के कार्यों में 'बायोफिड बैक' मशीन के प्रयोग से चेतन पर नियन्त्रण प्राप्त करने की विधि खोज निकाली। अब तो यह विधि बड़े पैमाने पर पाश्चात्य जगत में प्रयुक्त की जा रही है।

गिरते हुये स्वास्थ्य की समस्या औषधि उपचार से काबू में नहीं आ रही है। बढ़ते हुये मानसिक रोगों के लिए अनिद्रा और तनाव पर नियन्त्रण करने के प्रयास में मनःशास्त्री सफल नहीं हो पा रहे हैं। सच्ची स्वास्थ्य रक्षा का एक ही उपाय है कि अनास्था के निबिड़ दलदल में फँसी हुई मनुष्यता को उठाया जाय और उसे स्नेह, सदाचार, सहयोग की रीति-नीति अपनाने के लिये सहमत किया जाये। आरोग्य और सन्तोष इसी आधार के अवलम्बन में सम्भव हो सकेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विश्वास एवं आशंका पर आधारित चिकित्सा मनोविज्ञान

बीमारियाँ भी आती ही हैं और उनका उपचार भी करना होता है। यह एक ढर्रा है, जिसे इच्छा अनिच्छा से सभी को घुमाना पड़ता है। पर कई व्यक्ति इस सम्बन्ध में अतिशय चिन्ता करते हैं या सतर्कता बरतते हैं। सतर्कता बरतना बुरी बात नहीं है, पर उसे चिन्ता परेशानी की स्थिति तक पहुँचा देना गलत है।

बीमारी बढ़ने पर उसके साथ क्या-क्या उलझन खड़ी हो सकती है ? उस बढ़ोत्तरी के क्या-क्या दुष्परिणाम हो सकते हैं ? मामूली इलाज काम न आया तो बढ़िया इलाज के लिये कहाँ जाना पड़ सकता है और कितना खर्च लग सकता है ? उतने साधन जुटाने पर कर्ज लेना या सामान बेचना पड़ सकता है। इतने पर भी रोग काबू में न आया तो मरने का अवसर भी आ सकता है। मरने के बाद हम कहाँ होंगे ? और अशांत कहाँ भटकेंगे ? इस प्रकार की चिन्तायें छोटी बीमारी होने पर और उसे बढ़ा सकती हैं और मानसिक परेशानी के कारण हल्का-फुल्का रोग भी खतरनाक हो सकता है। उसकी चिकित्सा में जो लाभ हो सकता था उस पर प्रश्नचिन्ह लग सकता है। चिन्ता उतना बिगाड़ कर देती है, जितना कि चिकित्सा लाभ नहीं पहुँचा पाती।

लेकिन रचनात्मक चिन्तन वाला सोचता है कि कौन सर्वथा निरोग है ? हर किसी को कुछ न कुछ खटपट लगी रहती है। इतने बड़े शरीर में राई-रत्ती बीमारी भी किसी कोने पर पड़ी रहे तो उनसे क्या बनता बिगड़ता है ? मौत का तो समय निश्चित है। उससे पहले कोई नहीं मर सकता। मौत भी नहीं उठा सकती। क्या चिकित्सकों का इतना अध्ययन हमारी कुछ सहायता नहीं कर सकता ? क्या जड़ी-बूटियों से लेकर रसायनों और प्रतिरोधकों में इतनी सामर्थ्य नहीं है कि वह अपने इस रोग की जड़ें काट सकें ? निश्चय ही दुनियाँ में अन्धकार से अधिक प्रकाश है। रुग्णता की तुलना में स्वस्थता का समर्थन करने वाले तत्व अधिक हैं।

जाँच पड़ताल की बड़ी-बड़ी मशीनें देखकर कई रोगियों को बड़ा भय लगता है। आप्रेशन की छुरी-कैंची देखकर उन्हें पसीना छूटता है। समझते हैं यह सारा सरंजाम उन्हें मारने-काटने के लिये है। यह मृत्यु के संदेशवाहक हैं एवं डाक्टर साक्षात् यमराज हैं। यह तो जान लेकर ही हटेंगे। ऐसे डरपोक और अविश्वासी रोगी अच्छे होने में बहुत समय लेते हैं। उनकी भयभीत और शंका शंकित मनोदशा उनकी जीवनी शक्ति पर प्रहार करती तथा दुर्बल बनाती है। इस कारण उपचार भी आंशिक प्रभाव ही दिखा पाता है।

जिन्हें डाक्टर परोपकार की प्रतिमा प्रतीत होते हैं, एवं नर्सें स्नेह सौजन्य की प्रतिमायें, उन्हें औषधियाँ संजीवनी बूटी जैसी लगती हैं और अस्पताल का उद्देश्य ही रोगियों की व्यथा हरना-अनुभव होता है। वे उस वातावरण में अपने लिये हर प्रकार की सुरक्षा देखते हैं। सोचते हैं यहाँ की विशिष्टता अपना कष्ट दूर करके ही छुट्टी प्रदान करेगी। चिकित्सक की हर क्रिया में उन्हें आशा की झलक दीखती है। फिर आत्म विश्वास का भी तो कुछ मूल्य है। इसकी तुलना में अपने आप को धैर्य बँधाना, प्रोत्साहित करना और उज्ज्वल भविष्य का आश्वासन देना अधिक सरल है।

यह नहीं कहा जा रहा है कि रोग का इलाज ही न किया जाये और उसे उपेक्षा में पड़े रहने दिया जाय। इस सीमा तक निश्चिंत रहना भी अहितकर है। जिस प्रकार मैले कपड़े को साफ करने के लिये साबुन की, आँगन को बुहारने के लिये बुहारी की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार शरीर में कही कोई क्षति दीखने पर उसकी भी पूर्ति की जानी चाहिये।

इतने पर भी बात कहीं बढ़ा-चढ़ा कर सोचने की आवश्यकता नहीं है। बीमारी को हल्के मन से लेना, उसकी चिन्ता करने की अपेक्षा हल्का-फुल्का उपाय ढूँढ़ निकालना पर्याप्त है, कारण कि प्रकृति हमारा सबसे बड़ा डाक्टर है। शारीरिक संरचना में ऐसे तत्व प्रचुर परिमाण में विद्यमान हैं, जो अनवरत् रूप से क्षतियों की पूर्ति करते और आवश्यकताओं के अनुरूप सरंजाम जुटाते रहते हैं। मौत की भयावहता में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संदेह नहीं। बीमारी के साथ जुड़े हुये कष्टों से भी इन्कार नहीं किया जा सकता, किन्तु सर्वोपरि तथ्य यह है कि जीवन बहुत बलवान है। वह भरपूर आयुष्य तक जीने के लिये संकल्पपूर्वक कटिबद्ध है। उसे प्रोत्साहन और सहयोग भर देते रहा जाय तो इतने भर से बहुत बड़ा काम सध सकता है। बीमारियाँ सावधान करने आती हैं कि असंयम का रास्ता छोड़ा जाय और प्रकृति अनुशासन में बँधा रहा जाये। जो इसे स्वीकार कर लेते हैं, बीमारियाँ उन्हें छोड़कर चली जाती हैं।

केलीफोर्निया विश्व-विद्यालय के प्रो. रिचार्ड एस. लैजेरस ने अनेक रोगियों की मनोदशा और चिकित्सा के परिणामों का पर्यवेक्षण किया। उनने पाया कि एक जैसी बीमारी और एक जैसे इलाज के चलते रहने से भी वही रोगी अधिक तेजी से रोगमुक्त हुये जो निश्चिन्त रहते थे और विश्वास करते थे कि उन्हें अच्छे होकर ही लौटना है। जिन्हें रोग की भयंकरता और चिकित्सकों की उपेक्षा दीखती थी, वे दूने समय में एवं धीरे-धीरे अच्छे हुये। कुछ तो उनमें से भी मर गये।

पचास वर्ष से अधिक आयु वालों में रक्तचाप या हृदय रोग के लक्षण दृष्टिगोचर होने पर यह कहा जा सकता है कि उनकी शारीरिक मशीन घिस जाने पर भी काम का दबाव यथावत् बना रहने से ऐसा होता है। किन्तु उनके लिये क्या कहा जाये जो अभी किशोर या तरुण हैं, किन्तु हृदय सम्बन्धी रोगों के शिकार हो गये। धड़कन बढ़ना, थकान, मधुमेह, अनिद्रा, दमा एवं अपच जैसे रोगों ने उनके अंदर घर बना लिया और उन सबका संयुक्त प्रभाव उनके शरीर रूपी यन्त्र को अव्यवस्थित होने के रूप में सामने आया। ऐसे लोगों के आहार एवं दिनचर्या में सर्वसाधारण की अपेक्षा इतना अन्तर नहीं होता, जिससे उनमें उस प्रकोप का कारण ढूँढ़ा जाय।

देखा यह गया है कि मनोविकार मस्तिष्क से उपजकर अपना प्रभाव सारे शरीर पर डालते हैं और धीरे-धीरे खोखले बनते जाने वाले शरीर में क्रमशः हृदय रोग एवं अन्य जीर्ण रोग विकसित होने लगते हैं। इनमें किन्हीं को वह पैतृक विरासत में मिले हुये भी हो सकते हैं। किन्तु अधिकांश में दुर्व्यसन और अचिन्त्य चिन्तन इसका निमित्त कारण होते हैं। नशेबाजी की लत भी इसका बड़ा कारण है। इसके अतिरिक्त कामुक उत्तेजना का सिर पर सवार रहना ऐसा निमित्त कारण है, जिसके आधार पर समस्त स्नायु संस्थान आवेशग्रस्त होता है और उससे नाड़ियों का माँसपेशियों का आकुंचन-प्रकुंचन अस्तव्यस्त होता है। स्थिति मानसिक तनाव बढ़ने से लेकर हृदय की धड़कन अव्यवस्थित हो जाने के रूप में सामने आती है। यह व्याधि ऐसी है कि सीमा से अधिक बढ़ जाने पर पक्षाघात, हृदयाघात जैसे संकट खड़े हो सकते हैं। जीवन से हाथ धोना पड़ सकता है।

औषधियाँ रोकथाम करती हैं। उनसे उफान को ठण्डा किया जा सकता है, पर जब चूल्हे में आग भड़क रही हो तब ऊपर रखे दूध में दुबारा उफान न आवेगा, यह नहीं कहा जा सकता। मानसिक आवेश बढ़े-चढ़े रहने पर किसी भी संकट की स्थिति उत्पन्न कर सकते हैं। उनके लगातार बने रहने पर स्थिति ऐसी बन जाती है, जिसे अपंगता कहा जा सके।

इन दिनों अच्छे आहार का सुयोग क्रमशः बढ़ता जाता है। चिकित्सा की सुविधायें भी बढ़ रही हैं, पर साथ ही हृदयाघात जैसे आकस्मिक दौरों से होने वाली मृत्यु संख्या भी बढ़ रही है। जो मरते नहीं, वे इस स्थिति में पहुँच जाते हैं कि कोई महत्त्वपूर्ण पराक्रम कर सकने में असमर्थ बनकर रहें। यह सब आशंकाग्रस्त मनः स्थिति का दुष्परिणाम है। आधुनिकता के सभी अनुदान मुबारक, पर कीमत इतनी महँगी न हो कि जर्जर काय एवं टूटी मनःस्थिति ही हाथ लगे।

तनाव दूर करने के लिये शिथिलीकरण साधिये

तनाव के दो कारण होते हैं—एक शारीरिक, दूसरा मानसिक। अधिक काम करने से, विश्राम न लेने से, नशे पीने या शीत ताप की अधिकता जैसे शरीर पर अतिरिक्त बोझ डालने वाले कारण से शरीर संस्थान उत्तेजित हो उठता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और प्यास, थकान, सिरदर्द, बेचैनी, नींद न आना, दाह जैसे लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

मानसिक कारणों में क्रोध, आवेश, उत्तेजना मुख्य हैं। चिन्ता, भय, शोक, उदासी, कुढ़न, ईर्ष्या आदि कारणों से भी तनाव बढ़ जाता है। कपटी, षडयन्त्रकारी और आतंकवादी व्यक्ति अपनी उद्धत गतिविधियों के कारण मन को बुरी तरह उत्तेजित कर देते हैं और तनाव बढ़ जाता है। यह मानसिक विकृतियाँ रक्त में अम्लता बढ़ाती हैं, पाचन क्रिया बिगाड़ती हैं और शरीर को रुग्ण बना देती हैं।

मानसिक उद्वेगों के कारण मांसपेशियों और नाड़ी संस्थान के मिलन केन्द्रों पर 'एसिटिल कोलेन' नामक पदार्थ बनने लगता है। यह अन्य पदार्थों के साथ मिलकर कार्बन औरकोगल का निर्माण करता है। इसी स्थिति में लैक्टिक अम्ल भी बनने लगता है, जिससे शरीर की मुलायमी चली जाती है और कड़ापन बढ़ने लगता है। यह कड़क रक्त प्रवाह और पेशी सञ्चालन में अवरोध उत्पन्न करती है। यहीं से कई प्रकार के रोग होना शुरु हो जाता है।

कैल्शियम और मैग्निशियम फॉस्फोरस की—कमी से जो शारीरिक 'तनाव' उत्पन्न होता है उसकी पूर्ति दही, दूध, पनीर, विटामिन डी०, पालक, चुकन्दर, गेहूँ, खजूर जैसे पदार्थ लेकर पूरी कर ली जाती है। इसी प्रकार आहार-विहार की गड़बड़ी का सुधार एवं थकान की विश्राम से ठीक किया जा सकता है। कठिनाई उस तनाव को दूर करने में आती है, जो मनोविकारों के कारण उत्पन्न होता है। यदि सोचने का ढंग सुधारा न जाय, प्रसन्न और भारमुक्त रहने का स्वभाव न बनाया जाय तो फिर 'तनाव' कष्ट से छुटकारा पाना कठिन है। इस कष्ट से स्थायी मुक्ति तभी मिल सकती है, जब अपने चिन्तन और स्वभाव में सज्जनता एवं शालीनता की मात्रा बढ़ाकर चित्त को हल्का और उल्लसित रखा जाये।

मानसिक तनाव दूर करने के लिये यह आवश्यक है कि सरल, निर्मल और निष्कपट जीवन जिया जाये। असन्तोष और उद्वेग से बचा जाय। महत्त्वाकांक्षायें उतनी रखी जायें जो आज की स्थिति में सम्भव हों। अक्सर लोग ऐसी कल्पनायें और आकांक्षायें गढ़ते रहते हैं, जो साधन सम्पन्न स्थिति में ही सम्भव हैं। अभी से उनके लिये ललचाते रहने पर अकारण असन्तोष और उद्वेग उत्पन्न होता है और मानसिक तनाव बढ़ता है। उन्नति की योजनायें तो बनानी चाहिये और शान्तिपूर्वक उस मार्ग पर भी चलना चाहिये पर उनकी पूर्ति के लिये आतुर नहीं होना चाहिये विशेषतया तब, जबकि उस स्तर की सफलता प्राप्त करने के साधन अपने पास नहीं हैं। सन्तोष और पुरुषार्थ के समन्वय का नाम ही कर्मयोग है। ऐसा मानसिक सन्तुलन, गीता में 'स्थित प्रज्ञ' स्थिति कही गई है। मानसिक तनाव से बचते हुये अधिक सफलता प्राप्त करने का यही उचित तरीका भी है।

क्रोध, आवेश, ईर्ष्या, द्वेष, निराशा, चिन्ता, भय का वास्तविक कारण बहुत स्वल्प होता है। यह मनोविकार कल्पना शक्ति की अव्यवस्था और दृष्टिकोण उलझा हुआ होने के कारण ही उत्पन्न होते हैं। इन्हें अपनाकर मनुष्य अपनी विवेक बुद्धि खो बैठता है। किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर उलटे-पुलटे काम करता है; फलस्वरूप स्थिति और भी बिगड़ जाती है। ऐसे ही कारणों को लेकर आमतौर से लोग उद्विग्न रहते हैं और मानसिक तनाव से घिरे रहकर अपने स्वास्थ्य को अपार हानि पहुँचाते हैं। इस मनःस्थिति को साहसपूर्वक सुधारना—स्वास्थ्य संरक्षण की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है।

तनाव कम करने के उपचारों में सबसे सरल और उपयोगी 'शिथिलीकरण' प्रक्रिया है। कुछ समय के लिये शरीर को, मन को अधिकाधिक निःचेष्ट बना देने से थकान में बड़ी कमी आती है। प्रकृति यह कार्य रात्रि को सोने का अवसर देकर सम्पन्न करती है। योगी लोग समाधि में वही कार्य करते हैं—वे शरीर ही नहीं मन को भी चेष्टारहित बना देते हैं। काया-कल्प की योग प्रक्रिया में भी यही होता है—केलेक्शेशन—शिथिलीकरण का उपयोग करके कितने ही प्राणी अपने क्षरण की पूर्ति करते हैं और आगे के लिये अधिक काम करने की क्षमता संग्रह कर लेते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शीत ऋतु में रीछ, साँप आदि कितने ही प्राणी चुपचाप इस तरह पड़ जाते हैं कि करवट बदलने की भी यदाकदा ही आवश्यकता पड़ती है। इस विश्रांति से शरीर की क्षति बची रहती है, फलतः बिना भोजन के भी काम चला लेते हैं। निराहार रहने के कारण जो दुर्बलता आनी चाहिये वह भी नहीं आती वरन् भोजन करते रहने के दिनों की अपेक्षा और भी अधिक स्फूर्तिवान होकर उठते हैं। लंघन के रोगी जब अच्छे होते हैं तो उनकी भूख बढ़ जाती है और शरीर की क्षतिपूर्ति जल्दी ही हो जाती है। प्रसव के उपरान्त जच्चा को भी शिशुजन्म की थकान को दूर करने के लिये नई चेतना प्राप्त होती है। पर यह होता तभी है, जब उसे इस बीच समुचित विश्राम मिल जाये। कुत्ते, बिल्ली आदि कई जानवर शरीर को पूरी तरह शिथिल करके पड़ जाते हैं और उतने से ही नींद की आवश्यकता पूरी कर लेते हैं।

नींद और शिथिलीकरण में यह अन्तर है कि नींद में करवटें बदलने जैसा और स्वप्न देखने जैसा श्रम तो चलता ही रहता है। शिथिलीकरण में मनोयोगपूर्वक उसे भी बन्द कर दिया जाता है। शरीर और मन दोनों को ही पूरी तरह निःचेष्ट होकर कुछ समय के लिये विश्राम की स्थिति में पड़ा रहना ही शिथिलीकरण है। इनसे तनाव घटाने और नई स्फूर्ति प्राप्त करने में बड़ी सहायता मिलती है।

योग साधना में इसे 'शव आसन' कहते हैं। बौद्ध सम्प्रदाय में यह क्रिया "अनापान स्मृति" के नाम से प्रख्यात है।

आराम कुर्सी, पलंग, गद्दी, दीवार के सहारे जहाँ भी सुविधा हो यह आसान किया जा सकता है। चित्त पीठ के बल लेट जाइये। हाथ-पैर सीधे रखिये। शरीर ढीला छोड़िये। इतना ढीला—इतना ढीला मानो उसमें से प्राण ही निकल गया हो, सर्वथा निर्जीव स्थिति हो गई हो। इस भावना को अंग-प्रत्यंगों में उतारने में कुछ समय लगता है। आरम्भ में मन कम ही ढीला छोड़ता है और अवयव भी अपना तनाव कम ही शिथिल करते हैं। पर प्रबल इच्छा शक्ति—मस्तिष्क के समर्थ निर्देश और भावना को श्रद्धा में परिणत करने की चेष्टा के संयुक्त प्रयत्न कुछ समय में सफल होने लगते हैं और शरीर सचमुच इतना ढीला लगने लगता है मानो वह पूर्णतया अशक्त हो गया हो। हिलने-डुलने तक की क्षमता खो बैठा हो। पैर के अंगूठे से लेकर सिर की चोटी तक मन को यह निरीक्षण एवं अनुभव करने देना चाहिये कि समस्त मांस पेशियाँ और रक्त वाहिनियाँ अपना काम बन्द करके पूर्ण विश्राम का आनन्द ले रही हैं और सर्वथा शिथिल पड़ी हैं।

शरीर के बाद मन का नम्बर आता है। जब देह में पूर्णतया शिथिलता अनुभव होने लगे तो उसी प्रकार का विश्राम मन को देना चाहिये। मस्तिष्क मानो नींद में चला गया हो, गहरी निद्रा की मनःस्थिति बन गई हो। चित्त—जागृति और स्वप्न की स्थिति से आगे बढ़कर सुषुप्ति और तुर्या स्थिति में पड़ा हुआ पूर्ण शान्ति-विश्रान्ति का अनुभव कर रहा हो। न कोई चिन्ता न इच्छा न आकर्षण। पूर्ण निश्चिन्तता और निर्द्वन्दता की स्थिति। विचारों से सर्वथा रहित मन।

शिथिलीकरण का प्रयोग किसी भी थके हुये—क्षतिग्रस्त रोगी को अपनी जीवनी शक्ति पुनः अर्जित करने में बहुत सहायक सिद्ध होता है। मनःशास्त्री डाक्टर विलियम ब्राउन ने द्वितीय महायुद्ध में मानसिक रुग्णता ग्रस्त अनेकों सैनिकों को इस उपचार से अपनी खोई हुई मानसिक क्षमता पुनः प्राप्त करने में सफल बनाया था। उनने मानसोपचार की दृष्टि से इसे बहुत ही सफल साधन बताया है।

सार्थक चिकित्सा हेतु सकारात्मक चिन्तन

"जो जैसा सोचता है और करता है वह वैसा ही बन जाता है" वाली चिरपुरातन उक्ति को अब तक केवल दार्शनिक एवं साहित्यिक दृष्टि से ही सुना-समझा जाता रहा है। किन्तु अब इसके वैज्ञानिक-प्रमाण भी उपलब्ध होने लगे हैं। विश्व के मूर्धन्य चिकित्साशास्त्री अब एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते जा रहे हैं कि मानवी मस्तिष्क से उत्पन्न होने वाली विद्युत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्पूर्ण शरीर का कार्य संचालित करती रहती है। अवचेतन/ मस्तिष्क से संबन्धित असंख्यों तार शरीर के प्रत्येक घटक तक पहुँचते, इसकी सुव्यवस्था बनाये रखते, आवश्यक निर्देश देते और समग्र स्वास्थ्य संवर्धन का सत्प्रयोजन सतत् पूरा करते हैं।

वर्ष १९७८ में अमेरिका के महान् वैज्ञानिक कार्ल सिमोंटोन ने "गैटिंग वैल अगेन" नामक एक पुस्तक लिखी थी, जिसने समूचे संसार के शरीर विज्ञानी और चिकित्सा विज्ञानियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया और इस तथ्य पर पुनर्विचार करने के लिये विवश कर दिया है कि व्यक्ति के मनोविकार ही तो हैं, जो व्यक्तित्व को गिराते और स्वास्थ्य को चौपट करके रख देते हैं। उनका कहना है कि जिस प्रकार औषधियों का प्रभाव शरीर के विभिन्न अंग-अवयवों पर पड़ता है, उसी प्रकार इच्छा-शक्ति अर्थात् संकल्प भी शरीर के ढाँचे को, स्वास्थ्य को, पूरी तरह प्रभावित करके छोड़ते हैं।

सिमोंटोन ने आगे बताया कि व्यक्ति की इच्छा-शक्ति के अनुरूप ही उसकी कायिक संरचना का निर्माण होता है। यह शक्ति-सामर्थ्य चिन्तन में उगती फूलती-फलती और शरीर में कई तरह के रासायनिक स्राव उत्पन्न करती है, जो मानवी स्वास्थ्य के हर पक्ष को प्रभावित करते हैं। उनकी दृष्टि में रोगों की उत्पत्ति और उनसे मुक्ति भी इसी की घट-बढ़ सामर्थ्य पर निर्भर करती है। रोगियों के चिन्तन में यदि 'पॉजिटिव थिंकिंग' यानी सकारात्मक सोच का प्रादुर्भाव किया जा सके तो बड़े ही चमत्कारी सत्परिणाम उत्पन्न होते हैं। उनकी इस 'सोच चिकित्सा' से दर्जनों गंभीरतम तक कैंसर के रोगियों का उपचार सफल कर दिखाया है। यही कारण है कि अमेरिका के उल्लास शहर में अवस्थित "कैंसर कॉसिलिंग एण्ड रिसर्च सेंटर" की स्थापना में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। जिसमें रोगियों को धार्मिक, नैतिक और सामाजिक उपदेश सुनने और तदनुरूप जीवनचर्या बिताने के लिये अभिप्रेरित एवं अनुप्राणित किया जाता है। सिमोंटोन की सहधर्मिणी स्टेयेफनी भी एक विश्वप्रसिद्ध मनोचिकित्सक थीं। दोनों के सहयोग सहकार के आधार पर ही इस संस्थान ने चिकित्सा के क्षेत्र में एक नयी क्रान्ति ला दी है।

कार्ल सिमोंटोन का अभिमत है कि रोग निवारण के लिये शारीरिक उपचार की औपचारिकता भर निबाहना ही पर्याप्त नहीं है। शरीर के साथ मन का उपचार भी अति आवश्यक है। चूँकि इससे शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक तीनों ही तरह के उपचार सम्भव हैं इसलिये इसे 'समग्र चिकित्सा' के नाम से निरूपित किया है। उनने अपनी पुस्तक में इस तथ्य को उजागर किया है कि जिन रोगियों को चिकित्सकों ने एक वर्ष के अन्दर ही दम तोड़ने के लिये कहा था वे बीस वर्ष से भी अधिक बड़े उत्साह-उमंग के साथ जीये। उनने स्पष्ट किया है कि इच्छा-शक्ति की पवित्रता एवं प्रखरता के कारण विचारणा और परिकल्पनायें शरीर की जैविक रासायनिक प्रक्रियाओं को सक्रिय बनाती और इन सक्रिय उद्दीपनों के माध्यम से ही 'मस्तिष्क संदेश' कोशिकाओं तक जा पहुँचते हैं। इस प्रकार समूचे कायिक ढाँचे को सुदृढ़ चिकित्सकीय गुणवत्ता प्रदान करने की प्रक्रिया स्वतः संचालित हो उठती है।

यद्यपि अमेरिकन मेडीकल साइंस के चिकित्सा विज्ञानियों ने सिमोटोन जैसे 'समग्रधर्मी चिकित्सक' के प्रति अविश्वास प्रकट किया है और इसे चिकित्सा सिद्धान्त के विपरीत बताया है। उनका कहना है कि यदि यह चिकित्सा पद्धति लोकप्रिय बनती चली गयी तो चिकित्सा जगत की पारम्परिक मान्यताओं को गहरा आघात पहुँचेगा। फिर भी इस चिकित्सा पद्धति का प्रचार-प्रसार दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। डाक्टरों के रंग-बिरंगे साइनबोर्डों को देखा जाये तो प्रतीत होता है कि साइको न्यूरो इम्यूनोलाजी (पी. एन. आइ.) बिहेवियर थैरेपी और न्यूरो इम्यूनो मोड्यूलेशन जैसी मनःचिकित्सा विधाओं का प्रचलन ही अब द्रुतगति से हो रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महान् चिकित्सा विज्ञानी सिमोंटोन के मतानुसार इच्छा-शक्ति की सामर्थ्य के अनुरूप ही व्यक्ति के चिन्तन में विवेकशीलता और संयमशीलता का अभ्युदय हो उठता है। ऐसी स्थिति में मस्तिष्क रसायन न केवल प्रतिरक्षा तन्त्र का ही नियन्त्रण करते हैं वरन् उस तन्त्र को अनुप्राणित कर सकने की क्षमता भी रखते हैं। इन रासायनिक संदेशों का मूलभूत प्रयोजन समूची काया को जीवाणु, विषाणु और संक्रामकता के बारे में सूचित करने का है। इन प्रतिरक्षा कोशिकाओं का सीधा सम्पर्क सूत्र मस्तिष्क के भाव-संवेदना वाले केन्द्र से स्थापित हो जाता है। रोगी का मानसिक संतुलन बढ़ता-उत्साह-उमंग का प्रादुर्भाव होता और आरोग्य लाभ मिलने लगता है। सिमोंटोन की इस नयी अवधारणा को "स्वायत्त चेतना प्रतिरक्षा तन्त्र' के नाम से जाना गया है। चेतना का सहज स्वाभाविक गुण स्नेह-सद्भाव और संयम का होता है। ईर्ष्या, द्वेष और असंयम बरतने पर तो मस्तिष्क पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता और एक विशिष्ट प्रकार के हारमोन्स का स्राव होने लगता है, जो रोगों की उत्पत्ति का कारण बन जाता है।

सन् १९७३ में नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हैल्थ, अमेरिका के सुप्रसिद्ध न्यूरोफार्मोकलोजिस्ट डा. केडेंसपर्ट ने लम्बे समय तक प्रयोग परीक्षण के उपरान्त एक ही निष्कर्ष निकाला है कि व्यक्ति की भाव-संवेदनायें कुंठित होने के कारण कुछ ऐसे "न्यूरोपेप्टाइड्स" का शरीर में निर्माण होना आरम्भ हो जाता है, जिनसे मानसिक सन्तुलन गड़बड़ाता और विविधविधि रोगों की उत्पत्ति का कारण बनता है। पर्ट का कहना है कि व्यक्ति की संकल्पशीलता से चिन्तन को विधेयात्मक दशा मिलती और उक्त हारमोन्स के स्रवण पर काबू पाया जा सकता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये मानसिक स्तर की स्वस्थता अति आवश्यक है। मनः संस्थान को नीरोग रखने के लिये उनने संवेग, .अहं और तर्क जैसे तीन घटकों को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना है। इच्छा-शक्ति के द्वारा इन पर नियन्त्रण करके प्रतिरक्षा चेतना तन्त्र को आवश्यकतानुसार सक्रिय और शिथिल बना सकना सरल भी है और सम्भव भी। अत्याधुंनिक विज्ञान की भाषा में इस स्वायत्त प्रतिरक्षा चेतन तन्त्र को दिव्य बोध अर्थात् छटी इन्द्रिय के नाम से भी सम्बोधित किया जाने लगा है। इसे सुविकसित एवं सुव्यस्थित स्तर का बना लेने पर ही समग्र स्वास्थ्य संवर्धन का सत्प्रयोजन पूरा हो सकता है।

चिकित्सा विज्ञान की इस नवीनतम खोज को लोकोपयोगी बनाने के लिये जरूरी है कि जनमानस के भावनात्मक परिष्कार का उपक्रम बिठाया जाये। जिससे लोगों का प्रसुप्त संकल्प बल उभरे, मनोबल बढ़े और आरोग्यवर्धक परिस्थितियाँ विनिर्मित होती जायँ। स्वस्थ समुन्नत जीवनी शक्ति सम्पन्न पीढ़ी ही नवयुग के महामानव तैयार करेगी।

रोग निवारण के मानसिक प्रयोग

मानसिक उपचारों द्वारा जो विचित्र चमत्कार प्राप्त होते हैं, उनका अनुभव पाठकों को निम्न स्वर्ण-सूत्रों से उपलब्ध होगा। ये सूत्र बड़े-बड़े अनुभवी मानस चिकित्सकों के जीवन के निचोड़ हैं। इनमें गहरा अनुभव एवं अनुसंधान निहित है। पाठकों से हमारा अनुरोध है कि वे इन प्रयोगों को स्वयं कर देखें।

अमृतधारा ध्यान

रोगी को प्रतिदिन सायं-प्रातः एकान्त स्थल अथवा किसी शान्त स्थल, मन्दिर इत्यादि में बैठकर एक घण्टे तक अपने इष्टदेव का या जिस पर उसका विशेष प्रेम, श्रद्धा व विश्वास हो, उसका ध्यान नियत समय पर करना चाहिये। ध्यान के समय ऐसा देखने का प्रयत्न करें कि इष्टदेव स्वर्ण के कमंडल से अमृत की वर्षा हमारे मस्तिष्क पर कर रहे हैं, जिसकी धारा उदर में प्रवेश कर रही है जिसकी प्रत्येक बूँद सम्पूर्ण रोगों को समूल नष्ट कर रही है तथा शरीर में अतुलबल, स्वास्थ्य व उत्साह प्रदान कर रही है। इस अमृतधारा ध्यान से कुछ ही सप्ताहों में पुराने रोगों से छुटकारा मिल जायेगा।

सिरदर्द मिटाने के प्रयोग

शान्त होकर अपनी मानसिक प्रवृत्तियों को पैरों पर एकाग्र करो। पैरों का ही ध्यान करो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और इच्छा करो कि पैरों की तरफ ऊपर से नीचे की ओर रक्त संचार हो रहा है। इच्छा से रक्त की मस्तक में अधिकता मिटाकर नीचे की ओर उसका संचार होगा। इससे सिरदर्द मिट जाता है। सिरदर्द मिटाने के लिये दूसरा प्रयोग कपाल के मध्य में ध्यान एकाग्र करने का है। अब अच्छा करो कि मस्तक की सारी शक्ति उसी मध्य बिन्दु में आ रही है। वह शक्ति तुम्हारी आज्ञानुसार कार्य कर रही है। रोग के द्रव्य हट रहे हैं। सरदर्द कम हो रहा है। प्रसन्नता एवं आनन्द आत्मा से प्रकाशित होने लगा है। इस ध्यान में मग्न होते ही सिरदर्द काफूर हो जायेगा।

पाचन शक्ति सुधार

हमारे शरीर के जठर भाग में रक्त संचालन बराबर न होने से पाचन शक्ति विकृत हो जाती है। इसके लिये अपना मन पाचन क्रिया पर लगाओ और ध्यान करो कि जठर भाग में रक्त संचालन ठीक हो रहा है। हमें थोड़ी-थोड़ी क्षुधा लगने लगी है। पाचन शक्ति तेजी से कार्य कर रही है। ऐसी साधना से विद्युत का सा प्रभाव पड़ेगा।

ठंड से बच सकते हैं

जाड़े के दिनों में जब ठंड लगती हो, सहन न हो सकती हो तो अपने शरीर के सब अंगों में रक्त गति बढ़ाने का प्रयत्न करो। मन को उत्तेजित करो। ध्यानकर प्रबल इच्छा करो कि सम्पूर्ण शरीर में रक्त तीव्र गति से संचरित हो रहा है। नस-नस में तेजी से रक्त दौड़ रहा है। गर्मी आ रही है। चारों ओर गर्मी भरी पड़ी है।

घबराहट से मुक्ति

जब अशान्ति, घबराहट या थकान मालूम हो तो दस-बीस मिनट पूर्ण शान्त रहो। अपने मन के अन्तर्भाग में पूर्ण शान्ति स्थापित होने की इच्छा करो। शरीर के प्रत्येक भाग में शान्ति का ध्यान करो। मुझमें क्रमशः भक्ति प्रेम और शान्ति का स्रोत खुल गया है। मेरे पवित्र हृदय में तो शान्ति की सरिता का प्रवाह बड़े वेग से बहने लगा है। मेरे शान्त और पवित्र हृदय को क्लेश एवं कष्ट कैसे स्पर्श हो सकता है ? मैं पूर्ण तृप्त हो गया हूँ। मेरे हृदय में अब कोई प्रचंड द्वन्द्व ऊधम नहीं मचा सकता। ऐसी भावना में ध्यान स्थिर करने से शरीर की घबराहट मिटकर ताजगी आती है। मन की अशान्ति दूर होकर एकाग्रता प्राप्त हो जाती है।

जैसे चाहो वैसे बनो

जब तुम अपने को जैसा प्रफुल्ल चाहते हो, वैसा न मालूम करते हो, तो अपने मन को बार-बार सूचना देते रहो कि तुम जैसा चाहते हो, वैसा ही अनुभव भी कर रहे हो। जब कभी समय मिले इसी प्रकार की सूचना से मन को हरा-भरा उत्साहित रक्खो। ऐसा करने से प्रकृति तुमको इतनी सहायता देगी कि तुम्हारे शरीर में से सब सुस्ती दूर हो जायेगी। प्रकृति नित्य ही मनुष्य शरीर को नवीन और प्रफुल्ल बनाये रखने का प्रयत्न करती है। उत्तम सूचना से प्रकृति को इस काम में सहायता मिलती है।

जब तुम अपने आपको हारा थका कुछ हीन से मालूम पड़ते तो अपनी कल्पना के अनुसार अपने का सर्वोत्कृष्ट, समृद्धशील, सुन्दर और भव्य होने का चित्र अपने मानस जगत में खींचो। ऐसा करने से तुम अपने मन में अधिक उत्तमता, योग्यता और नीरोगता उत्पन्न करते हो। मन को परिपूर्ण और संतुष्ट करने पर तुमको अपना सब कुछ प्रिय और योग्य प्रतीत होता है।

सुन्दर कल्पना के चित्र

जब तुम्हें आसपास का वातावरण बुरा मालूम हो तो अपनी कल्पना में एक प्रशान्त चित्र खींचकर मन को उसी का ध्यान करने दो। इससे शीघ्र ही मन शान्त और सुखी हो जायेगा। जब तुम्हें ऐसा प्रतीत हो कि तुम्हारा शरीर कमजोर हो रहा है या थक गया है तो तुम तुरन्त मन में बलवान् इच्छा को जागृत करो कि "तुम बलवान हो, शक्ति के अवतार हो ! कार्यक्षम हो।" इस इच्छा को इस प्रकार करो कि शरीर के रोम-रोम में, नस-नस में बल स्फूर्ति का संचार होते हुये जान पड़े। ऐसा करने से तुम घंटों बिना किसी उचाट के काम करते रहोगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब तुमको अपनी प्रकृति ठीक न जान पड़े तो कम भोजन करो और अधिक निद्रा लो। ऐसे समय अपने शरीर में जो नीरोगमय और बलवान् तत्व है, उसका ही ध्यान करके मन को शान्त रक्खो। सबसे महत्त्वपूर्ण तत्व तो यह है कि हमारा आरोग्य तब ठीक नहीं रह सकता और सुधर सकता जब तक हम अपने मन को सुन्दर विचार, उच्च भावना और आरोग्यमय सूचनाओं से निरोग रक्खें। शरीर का आरोग्य हमारे मन पर ही निर्भर है—यह कदापि न भूलिये।

सुख की नींद कैसे सोयें ?

प्रकृति की उन वृत्तियों में जो मनुष्यों के जानने के योग्य हैं, निद्रा ऐसी सहज और सरल वृत्ति होनी चाहिये, जिसके लिये किसी शिक्षा या सलाह की आवश्यकता न हो। बच्चे को निद्रा के लिये सिखाना नहीं पड़ता। वह समय पर सो ही जाता है। युवा मनुष्य की भी, यदि वह प्रकृति के पथ पर रहता, तो यही स्वाभाविक दशा होती। परन्तु वह तो ऐसे कृत्रिम घिरावों से घिर गया है कि इसके लिये प्राकृतिक जीवन जीना असम्भव-सा हो गया है।

प्रकृति के विरुद्ध मूर्खता की आदतों में मनुष्य के सोने और जागने की आदतें अत्यन्त बुरी हो गई हैं। वह उन घड़ियों को जिन्हें प्रकृति ने शान्ति के साथ सोने के लिये दिया है। व्यर्थ की गपशप और सिनेमा आदि के आमोद-प्रमोद में व्यर्थ खो देता है और उन अमूल्य घड़ियों-पहरों में सोता रहता है, जिन्हें प्रकृति ने उसे आत्मचिन्तन, ध्यान-धारणा एवं शक्ति-ग्रहण करने के लिये दिये थे। उत्तम से उत्तम निद्रा का समय रात्रि के ६ से ३ बजे तक का हुआ करता है और ३ से ६ बजे तक का समय ध्यान, जप आत्म-चिन्तन, स्वाध्याय आदि के लिये श्रेयस्कर है। पर हम इसके सर्वथा विरुद्ध आचरण करते हैं। हम दोनों समय का दुरुपयोग करते हैं। जब गहरी निद्रा का समय रहता है, तब खोते रहते हैं। फिर हमारा शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य क्यों न बिगड़े ?

नींद की दशा में प्रकृति शरीर के मरम्मत का कार्य करती है और यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसके लिये उसे उचित अवसर दिया जाये। सोने के विषय में कोई कड़े नियम नहीं हैं क्योंकि भिन्न-भिन्न मनुष्यों की भिन्न-भिन्न परिस्थितियाँ हुआ करती हैं पर सर्व साधारण नियम यह होना चाहिये कि हम रात्रि में ६ बजे के पहले सो जायें और ५ बजे के पहले जाग उठें। साधारण रीति से प्रकृति स्वस्थ मनुष्य के लिये ८ घण्टे नींद चाहती है।

सोने का कमरा हवादार हो। अधिकांश खिड़कियाँ खुली रखिये ताकि ताजी हवा कमरे में प्रवेश करती रहे। यदि ठंड महसूस होती हो तो इसी भाँति ओढ़ लीजिये कि जिसमें सुखपूर्वक निद्रा आ सके। पर बहुत अधिक ओढ़नों के नीचे दब न जाइये। जैसा कि बहुतेरे लोग किया करते हैं। यह अधिकतर आदत के कारण होता है। आप भारी-भारी रजाईयों और कम्बलों की अपेक्षा हलके ओढ़नों से भी अच्छी तरह काम चला सकते हैं।

सोते समय कम से कम कपड़ों का उपयोग कीजिये। जिन कपड़ों को आप दिन में पहने थे, उन्हीं को पहनें हुये रात को मत सोइये। ऐसा करना स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। सिर के नीचे अधिक ऊँचे तकिये का व्यवहार मत कीजिये। एक हल्की-सी छोटी तकिया काफी है। सोते समय शरीर की प्रत्येक माँसपेशी को—प्रत्येक अंग-प्रत्यंग को ढीलाकर दीजिये और प्रत्येक नाड़ी में से तनाव खींच लीजिये और ज्योंहीं ओढ़ना ओढ़िये, सब तनावों और खिंचावों को हटाकर निष्क्रिय होकर पड़े रहिये। अब आँखें मूँदकर गहरी सांस लेना आरम्भ कीजिये और मन से सोच-विचार एवं चिन्ताओं को बिल्कुल भगा दीजिये। लेटने के बाद दिन के कार्यों का भी चिन्तन या स्मरण मत कीजिये। इसकी बजाय नाम जप या ईश्वर-स्मरण करना अच्छा है। यदि आप इस नियम के अनुसार चलेंगे तो छोटे लोगों के समान झट सो जायेंगे। सोते हुये बालको को गौर से देखिये कि वह सोते समय कैसे सो जाता है और उसी का अनुकरण कीजिये। जब आप सोने जायें तो बालक हो जाइये और बचपन की सवेदनाओं को धारण कर लीजिये फिर आप भी बच्चे ही की भाँति सहजता से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सो जाया करेंगे। इतना ही उपदेश एक सुन्दर जिल्द वाली किताब में छापने योग्य है।

उन मनुष्यों के लिये जो नींद न आने के कारण दुःखी रहा करते हैं, वे यदि विचारपूर्वक ठीक समय पर सोने, चिन्ता और विचारों से रहित प्राकृतिक जीवन की पद्धति का अनुकरण करें तो वे बिना किसी प्रयास के सुख की नींद सो सकेंगे। यहाँ उन लोगों के लिये कुछ और प्राकृतिक नियम बता देना चाहते हैं, जिससे उन्हें नींद आने में और अधिक सफलता मिल सकेगी।

सोने से पहले पैरों को और पंजों को ठंडे पानी से धो डालने से भी अच्छी नींद आती है। पाँवों को धो लेने के बाद उन पर मन को एकाग्र करने से भी अच्छा लाभ होता है। ऐसा करने से इसका प्रवाह पाँवों की ओर बढ़ने लगता है और मस्तिष्क को विश्राम मिल जाता है। एक बात और ध्यान में रखिये नींद बुलाने की कोशिश कभी मत कीजिये। सोने की इच्छा रखने वाले के लिये यह अत्यन्त बुरी बात है। क्योंकि इससे अक्सर उलटा ही असर होता है इससे बेहतर तरीका यह है कि आप ऐसी मानसिक स्थिति धारण कर लीजिये कि चाहे नींद आये या न आये हमारा सारा शरीर और मन सब प्रकार के तनाव से मुक्त होकर बिल्कुल शिथिल हो गये हैं। अपने को थका हुआ बच्चा कल्पना कर लीजिये कि ऊँघते हुये विश्राम कर रहे हैं। न तो पूरा सो ही गये हैं और न पूरा जागते ही हैं। बस ऐसा ही कीजिये। बहुत देर तक चिन्ता मत करते रहिये कि अब भी नींद नहीं आई। केवल वर्तमान क्षण में सन्तुष्ट होकर निश्चित हो जाइये और निष्क्रियता का आनन्द लूटिये।

निश्चिन्त और निर्विचार होकर सब अंगों को तो शिथिल करने से आपको अवश्य गहरी नींद आ जायेगी और इच्छानुसार आप समय पर प्रातः ५ बजे जग जायेंगे। नींद खुलते ही आँखें धोकर और मुँह पर पानी फेरकर बिस्तर पर ही चुपचाप शरीर को ढीला करके सुखासन में बैठ जाइये और अपने मन को बाहरी चीजों और विचारों से हटा लीजिये। फिर आँख मूँदकर अपनी आत्मा पर ध्यान लगाओ। ऐसा ख्याल करो कि तुम शरीर से बिल्कुल अलग हो और इसे बिना अपने व्यक्तित्व क्षीण किये किसी भी समय निस्संकोच छोड़े रूकते हो। ऐसा करने पर तुम्हें एक अलौकिक आनन्द शांति एवं संतोष का अनुभव होगा। ध्यान को पार्थिव शरीर से हटाकर ऊँचे 'अहं' में जो से असली तुम हो जाओगे। अपने चारों ओर जो विस्तृत सृष्टि है, करोड़ों सूर्य अपनी पृथ्वी के समान ग्रहों से घिरे हुये हैं उनका ध्यान करो देश और काल के विस्तार की ओर मन की भावना फैलाओ। अपने जीवन को इस सारी सृष्टियों में बैठा दुःखी देखें और तब इस ब्रह्माण्ड विस्तार और अपनी स्थिति पर विचार करोकि हमारा जीवन कैसा क्षणभंगुर एवं महासागर में एक जलबिन्दु के समान अत्यल्प है। फिर अपने विचार में ही एकबारगी ऊपर उठें और समझो कि यद्यपि तुम उस महाशक्ति का एक कण हो फिर भी तुम उस समय जीवन का एक अंग और एक परमात्मा की एक किरण हो जो चराचर में सर्वत्र व्याप्त है। सोचो तुम अमर नित्य और अविनाशी हो। उस सम्पूर्ण का एक आवश्यक अंग हो तो जिसके बिना सम्पूर्ण रह ही नहीं सकता। सम्पूर्ण की बनावट को पूरा करने वाला अंग तुम्हीं हो। ऐसा अनुभव करो कि तुम महत् जीवन के सभी अंगों से लगाव रखते हैं। सम्पूर्ण जीवन तुममें स्फुरण कर रहा है। महत् जीवन का सारा महासागर हृदय को आलोकित कर रहा है और तुम उसमें आनन्द से हिलारें ले रहे हो।

इस प्रकार की भावना के दैवी वातावरण में कुछ देर तक विचरण करने के बाद धीरे-धीरे अपने पार्थिव जीवन में उतरो। अब तुम्हें अनुभव होगा कि तुम्हारा मन और शरीर बिल्कुल ताजा और शक्तिशाली हो गया है। तुम्हारा मन शांत और एक अलौकिक आनन्द से भर गया है। तुमने मानस के ऊपरी लोकों में भ्रमण करने का परम लाभ प्राप्त किया है और तुममें एक नई स्फूर्ति और नये जीवन का संचार हो गया है।

इसके बाद थोड़ी देर नाम स्मरण मन्त्र-जप और अच्छे ग्रन्थों का स्वाध्याय कीजिये। लगभग ५.३० बजे पान कीजिये और बाद में शौच

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुखमार्जन आदि क्रियाओं से निवृत्त होकर अपने दैनदिन कार्य में लग जाइये।

यदि आपको भोजन के बाद दोपहरी में भी आलस या निद्रा की आवश्यकता महसूस हो तो शिथिलीकरण द्वारा शीघ्र निद्रा का आनन्द ले सकते हैं। शिथिलीकरण से न केवल आपको गहरी नींद आ जायेगी वरन् नींद खुलते ही आपके शरीर में ताजगी का भी अनुभव होगा।

कभी-कभी नींद लेने के बाद यह अनुभव नहीं होता कि हम तरोताजा और स्वस्थ हो गये हैं। आजकल तो ऐसा अनुभव अधिकांश लोगों को होने लगा है—इसका एकमात्र कारण है ठीक प्रकार से नींद का न आना। स्मरणीय है कि प्रगाढ़ और गहरी नींद ही मनुष्य को तरोताजा बनाती है। जब बिस्तर पर ही करवटें बदलते रात बितानी पड़े, बार-बार आँख खुल जाय और जब कुछ नींद आये तब बुरे-बुरे या तरह-तरह के सपने आते रहें तो समझना चाहिये कि हम अनिद्रा के विकार से ग्रस्त हैं।

शरीर की स्वाभाविक प्रक्रिया में जब कोई बाधा आती है, तभी अनिद्रा की शिकायत पैदा होती है और ऐसे लोग निस्सन्देह अस्वस्थ कहे जाते हैं। अनिद्रा का रोग मनुष्य ही नहीं अन्य प्राणियों के लिये भी खतरनाक स्थिति पैदा कर देता है। पेरिस के एक विश्वविद्यालय में इस सम्बन्ध में प्रयोग किये गये। परीक्षण का विषय था अनिद्रा का शरीर पर प्रभाव। वहाँ कुछ कुत्तों को भरपेट भोजन और अन्य सभी आवश्यक वस्तुयें दी गयीं। परन्तु उन्हें सोने नहीं दिया गया। कुत्ता एक ऐसा प्राणी है जिसके लिये बहुत थोड़ी निद्रा भी पर्याप्त होती है परन्तु वह भी सुलभ न होने देने के कारण उनके स्वास्थ्य पर बड़ा प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। वे अधिक भौंकने लगे, कई तो पागल भी हो गये और कुछ मर भी गये। अत्यल्प समय तक सोने वाले प्राणी की यह दशा हुई। फिर अनिद्रा के रोगी मनुष्य की जिसे स्वस्थ दशा में ६ से ८ घण्टे तक की नींद चाहिये क्या स्थिति होती होगी ?

भरपूर नींद न ले पाने के कारण कई लोग शिरशूल, जृभां आदि के शिकार हो जाते हैं। लगातार कई रात्रियों तक ठीक से नींद न आने के कारण बौद्धिक शक्तियाँ कुण्ठित हो जाती हैं। मनोबल भी छटने लगता है। निद्रा भाव से पीड़ित व्यक्ति का स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। वह थोड़ा भी कष्ट और असुविधा सह नहीं पाता। उसका मानसिक सन्तुलन भी बिगड़ जाता है। नित्य व्यवहार में भी वह अकारण बिगड़ता रहता है। बौद्धिक शक्ति को विभिन्न कार्यों में प्रयुक्त करने की क्षमता कुंठित हो जाती है। यहाँ तक कि उनकी स्मरण शक्ति भी काफी कमजोर हो जाती है। वे अपने सामने खड़े व्यक्ति को पहचानने तथा उसका नाम याद रखने में असमर्थ हो जाते हैं।

अनिद्रा-ठीक से नींद न आना—स्वास्थ्य के लिये कितना हानिकारक है। आजकल यह रोग तो बड़ी तेजी से फैलता जा रहा है। शहरों में रहने वाले, उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर कार्य करने वाले, धनवान और प्रतिष्ठित व्यक्ति खासतौर से इस बीमारी के शिकार होते हैं। अनिद्राग्रस्त लोगों की बढ़ती संख्या का अनुमान बाजार में बिकने वाली स्लीपिंग पिल्स और नींद की दवाइयों की खपत से लगाया जा सकता है। हल्का नशा देकर मूर्छित कर देने वाली इन दवाईयों का प्रयोग दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। अनिद्रा से छुटकारा पाने के लिये इनका सेवन करने वाले लोग एक भयंकर लापरवाही या गलती करते हैं।

नींद की गोलियाँ खाकर आत्महत्या करने वाले या भूल से अधिक खाकर मरने वालों की नितप्रति घटने वाली घटनायें सिद्ध करती है। नींद लाने वाली दवाईयाँ विषैली मादक वस्तुओं का सम्मिश्रण मात्र होती हैं। श्रेणी विभाग की दृष्टि से ये गोलियाँ कई प्रकार की होती हैं, जिनमें हल्के मादक पदार्थों से लेकर विषभरी नशीली वस्तुयें भी शामिल होती हैं। कोई भी नशीली चीज शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिये किसी भी प्रकार लाभदायक नहीं हो सकती। स्वास्थ्य पर उनका विपरीत प्रभाव ही पड़ता है। जो उन्हें इन औषधियों का आदी बनाते हुये शरीर और मन को भीतर ही भीतर से खोखला करता चलता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नींद लाने वाली दवाइयाँ खाने से व्यक्ति स्वाभाविक रूप से सो जाता हो ऐसी बात नहीं है। वस्तुतः इन औषधियों के सेवन से मस्तिष्क के कुछ महत्त्वपूर्ण स्नायु शिथिल और कुण्ठित हो जाते हैं और यह शिथिलता गोलियों का असर रहने तक बनी रहती है। औषधियों का उपयोग कर मस्तिष्क को शिथिल कर देने से नींद का वह लाभ नहीं मिलता जो उसके प्राकृतिक रूप से प्राप्त होता है क्योंकि ऐसी नींद, नींद नहीं मूर्छा या गनूदगी ही होती है। औषधि नित निद्रा से जागने पर व्यक्ति वह चंगापन अनुभव नहीं करता।

कुछ विशेष वर्ग की नींद लाने वाली दवायें मस्तिष्क पर दबाव डालकर निद्रा की स्थिति में पहुँचा देती है ? परन्तु याद रखना चाहिये नींद कोई क्रिया या दबाव से उत्पन्न करने जैसी स्थिति नहीं है। वह तो दबाव को दूर करने, थकान मिटाने और तनाव हटाने का प्राकृतिक उपादान है। जो किन्हीं भी कृत्रिम उपायों से प्राप्त नहीं किया जा सकता। वरन् उसके मूल स्वरूप को ही खोजना तथा लाना पड़ता है।

इसके लिये उन कारणें को जानना जरूरी है, जो मनुष्य को स्वभावगत नींद आने में बाधा डालते हैं। वय, शरीर की स्थिति और व्यवसाय भेद से अलग-अलग व्यक्तियों को अलग-अलग समय तक सोना जरूरी है। अपनी स्थिति के अनुरूप स्वस्थ व्यक्ति उतने समय तक सो लेने के बाद ही स्वयं को तरोताजा अनुभव करने लगता है। इसलिये अनिद्रा के सम्बन्ध में यह विचार तो त्याग ही देना चाहिये कि अमुक डॉक्टर या विद्वान ने इतनी नींद तो हर व्यक्ति के लिये आवश्यक ही बताई है। इस प्राकृतिक नियम से अनभिज्ञ होने के कारण अनेकों बार निद्रा रोग का भ्रम भी हो जाया करता है।

शारीरिक अंगों में पीड़ा अत्यधिक श्रम या थकान, चिन्ता, उत्तेजना, आवेश आदि कई सामयिक कारण होते हैं, जिनके कारण सोने की चेष्टा करने पर भी नींद नहीं आती। अच्छी नींद के लिये इन कारणों को दूर करना आवश्यक है।

यह नहीं सोचना चाहिये कि नींद लाने के लिये दवाइयाँ अभी तो ले लें, बाद में उसकी आदत न पड़ने देंगे। होना तो यह चाहिये कि उन कारणों का पता लगाया जाय। किसी रोग के कारण नींद न आ रही हो तो उसका इलाज करवाया जाये। अधिक परिश्रम या थकान के कारण भी कभी-कभी नींद नहीं आती है, ऐसी स्थिति में थकावट दूर करने के लिये स्नान करना चाहिये। बदन की मालिश करवाना भी थकान दूर करने का एक अचूक उपाय है।

अजीर्ण से भी रात को देर तक नींद नहीं आती है, हाँ आलस्य अवश्य आते रहते हैं। इसलिये भोजन के सम्बन्ध में नियमित रहना चाहिये। सोने के समय से ढाई-तीन घण्टे पूर्व खाना खा लेना अच्छा रहता है।

अनिद्रा रोग का जन्म मानसिक कारणों से अधिक होता है। हर समय चिन्तित रहने वाले व्यक्तियों को प्रायः नींद नहीं आती है। इसके कुछ सामान्य से कारण होते हैं, जो व्यक्ति को चिन्तित बना देते हैं। चिन्ता नींद को हर लेती है इसका उदाहरण हम परीक्षा के दिनों में या शादी ब्याह के अवसर पर देख सकते हैं। परीक्षार्थी और ब्याह वाले घर के जिम्मेदार सदस्यों को उन घड़ियों में कभी सुख की नींद नहीं आती। इसी प्रकार की कई चिन्तायें होती हैं, जो हमें सोने नहीं देतीं। कर्ज चुकाने से लेकर, बेटी के ब्याह की चिन्ता या और भी कई समस्याओं चिन्ताओं से घिरे रहने वाला व्यक्ति अनिद्राग्रस्त हो जाता है। ऐसे लोगों को अपनी समस्याओं के सम्बन्ध में चिन्तित होने की अपेक्षा निश्चिन्त रहकर उनका समाधान खोजना चाहिये। वस्तुतः यही ढंग चिन्ताओं और परेशानियों से मुक्त होने का है। उन्हें विश्वास करना चाहिये कि ऐसी कोई समस्या नहीं है, जिसका कोई समाधान न हो।

उत्तेजित होते रहने तथा आवेशग्रस्त होने का स्वभाव भी प्रायः अनिद्रा रोग को जन्म देता है। इन विकारों से मुक्त होने का प्रयास करना चाहिये न कि इनके विष के साथ-साथ नींद की गोलियों और औषधियों का विष भी शरीर में भरना चाहिये। सुख की नींद के लिये मनोभूमि का स्वच्छ होना नितान्त आवश्यक है।

अनिद्रा के कारण चाहे जो भी हों, उन्हें दूर करने का प्रयास ही स्वाभाविक नींद ला

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता है। स्मरण रहे आज तक ऐसी कोई भी दवा या औषधि का निर्माण नहीं हुआ है जो मनुष्य को स्वाभाविक और प्राकृतिक नींद सुला सके। इन दवाइयों का प्रयोग करने से पूर्व कुछ प्राकृतिक उपचार विधियाँ काम में लाई जायँ तो वे अधिक कारगर सिद्ध होंगी। व्यायाम, श्रम, बौद्धिक कार्य तथा हँसी-इन सब बातों का ध्यान रखा जाये तो कोई कारण नहीं कि आदमी सुख की नींद न सो सके।

जब कभी थकान, अधिक श्रम या आलस्य वश नींद नहीं आ रही हो तो गर्म पानी में स्नान, रात्रि में गर्म दूध घृत या फल का रसपान और थोड़ा बहुत टहलना लाभदायक रहता है। इन साधनों का प्रयोग करने पर अपना बिस्तर बेहद आरामदेह लगेगा और तुरन्त नींद आ जायेगी।

अन्य कारणों से नींद न आने के लिये मनोचिकित्सकों ने एक विशेष प्रकार के शिथिलीकरण का अभ्यास निर्धारित किया जिससे सेल्फ—हाइपनोसिस कहा जाता है। इस अभ्यास में बिस्तर पर लेटकर एड़ी से सिर तक की मांसपेशियों को ढीला और चुस्त किया जाता है। इस प्रकार बिस्तर पर ही पूरे शरीर का व्यायाम हो जाता है। फिर शरीर के शिथिल होने, हल्केपन का क्रमशः चिन्तन और ध्यानानुभूति का अभ्यास करते हैं। सांस धीमी और गहरी तथा बन्द पलकों से निद्रा के लिय आत्म संकेत दिये जाते हैं। कुछ ही सेकण्डों में इस प्रयोग का अपना प्रभाव होने लगता है और नींद आ जाती है। इस अभ्यास ने कई एक व्यक्तियों को लाभ पहुँचाया है।

सेल्फ-हाइपोनसिस का अभ्यास कर वर्षों पुराने अनिद्रा के रोगी बिना स्लीपिंग पल्स सेवन किये सुख चैन की नींद सोने लगे हैं।

अनिद्रा को दूर करने के लिये किसी भी कृत्रिम उपाय का अवलम्बन न लेकर प्रकृति का सहारा ही लेना चाहिये, तभी वे लोग जो नींद न आने की शिकायत करते हैं इस विकार से छुटकारा पा सकते हैं।

अनिद्रा का एक सरल उपचार

अधिक थकान में नींद नहीं आती। आती है, तो जल्दी-जल्दी उचट जाती है। नींद पूरी न होने में और भी अधिक थकान आती है। सब लोग गहरी नींद सोते हैं पर एक आदमी जागता है या उनींदी स्थिति में करवटें बदलता रहता है, तो उसे खीज आती है। किसी प्रकार रात काट भी ली जाये तो दूसरे दिन-सबेरे कुछ काम नहीं बनता। शरीर हारा, थका, टूटा, पिटा जैसा रहता है। काम किसी प्रकार किया भी जाय तो मन नहीं लगता। बेमन से काम किया जाये, तो वह या तो ठीक तरह पूरा नहीं हो पाता या रात के जागने वाली क्षति को और अधिक बढ़ा देता है। दूसरे दिन और अधिक थकान आती है। काम का दबाव बढ़ जाने की बजह से पिछली रात की थकान को और नया वजन पड़ने में वह दूनी हो जाती है। इस प्रकार हर अगली रात की निद्रा की आपूर्ति और काम को दबाव दोनों मिलने पर थकान का अनुपात क्रमशः बढ़ता ही जाता है। अन्ततः वह बढ़ते-बढ़ते रक्तचाप, मधुमेह, हृदय की धड़कन आदि के रूप में बढ़ता जाता है। फल यह होता है कि अकाल में ही मृत्यु की तैयारी करनी पड़ती है।

मात्र शारीरिक श्रम की अधिकता का प्रश्न हो, तो वह गरम पानी की बाल्टी में पैर डुबोये रहने, मालिश कर लेने आदि के छुटपुट प्रयोगों से ठीक हो जाती है। जिस दिन ज्यादा काम करना पड़ा, उसी दिन शरीर में बेचैनी रहती है और आगे चलकर वह स्वयमेव ठीक हो जाती है। स्थिति सँभल जाती है, किन्तु यदि मानसिक श्रम अधिक करना पड़ा है, तो बात बिल्कुल दूसरी होती है। उसमें मानसिक तन्तु उत्तेजित हो जाते हैं। जब तक वे शान्त न हों, तब तक गहरी नींद दुर्लभ ही बनी रहती है।

पढ़ने-लिखने का अधिक काम करना पड़े, और उसकी थकान का मन पर भार रहे, तो वह स्वाभाविक है, किन्तु इसके अतिरिक्त भी दूसरी बात है, जो मस्तिष्क को थकाने में दुहरा भार लादती है वह है—चिन्ताजन्य उत्तेजना। चिन्ता को चिता के समान हाड़-माँस को जला देने वाली बताया गया है। पर बात अकेली चिन्ता तक सीमित नहीं है। उसकी सखी-सहेलियाँ दूसरी भी हैं। निराशा, भय, आशंका, क्रोध, आवेश, ईर्ष्या, प्रतिशोध आदि और भी इसी बिरादरी के कितने ही मनोविकार दूसरे भी हैं। कामुक-चिन्तन अपने आप में विलक्षण है। वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हानि-अपमान से भी अधिक उत्तेजक है। कामुक विचार जब मन पर सवार होते हैं, उनकी एक श्रृंखला बँध जाती है। चकरी की तरह मन देर तक उसी कुचक्र में उमड़ता-घुमड़ता रहता है।

कुविचार मन पर चढ़ते आते हैं। सद्विचार उन्हें निरस्त करने को आगे बढ़ते हैं तो अन्तर्द्वन्द्व खड़ा हो जाता है। जिस प्रकार दो साँड़ों के लड़ने से हरे-भरे खेत का कचूमर निकल जाता है, उसी प्रकार अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति में मानसिक शान्ति का दिवाला निकल जाता है। यह स्थिति अधिक काम करने से आने वाली थकान की अपेक्षा कहीं अधिक कष्टकारक है। लगातार यह मानसिक स्थिति चलते रहने से सनकें बढ़ जाती हैं और अर्ध विक्षिप्तता का दौर बढ़ने लगता है। इस स्थिति में नींद का न आना और अधिक असह्य हो जाता है। कोई और उपाय न देखकर लोग नींद की गोलियाँ लेते हैं। उससे झपकियाँ तो आने लगती हैं, पर गहरी नींद का अभाव ही बना रहता है। उनसे आधी-अधूरी आवश्यकता ही पूरी होती है। पीछे लत पड़ जाने पर उन नींद की गोलियों की मात्रा बढ़ानी पड़ती है। वे एक प्रकार से आदत में सम्मिलित हो जाती हैं। यही बात अन्य नशों के सम्बन्ध में है। जिनका मस्तिष्क उद्विग्न रहता है, वे प्रायः शराब स्तर की चीजें लेने लगते हैं। उनसे यत्किंचित राहत मिलने का एक ही कारण है, कि नशे के कारण विचारों की श्रृंखला छिन्न-भिन्न हो जाती है और वह प्रधान बाधा टल जाती है, जिसके कारण नींद न आने की स्थिति में बेकार के विचार मस्तिष्क को पकड़ लेते हैं और हटाये नहीं हटते। नशे की स्थिति में विचार गड़बड़ा जाते हैं। एक प्रकार का चिन्तन स्थिर नहीं रह पाता। ऐसी दशा में नींद आने का आधा-अधूरा संयोग तो बन ही जाता है।

नींद, शरीर की एक भूख है। जिस प्रकार भोजन न मिलने पर शरीर क्षीण होने लगता है, वैसी ही स्थिति तब होती है, जब नींद की पूर्ति नहीं है पाती।

अच्छी नींद आने का उचित और स्थायी उपाय तो यह है कि पेट और दिमाग को हलका रखा जाये, भूख से कम खाया जाये और सन्तोषी हल्का-फुल्का जीवन जिया जाये। मनोविकारों से उतना ही डरा और बचा जाये जितना कि शारीरिक रोगों का बचाव एवं उपचार किया जाता है। रात को निश्चिन्त होकर सोया जाये। सोते समय यह मानकर चला जाये कि हमारे लिये दुनियाँ समाप्त हो गयी और दुनियाँ के लिये हम समाप्त हो गये। जो इस प्रकार मन को समझाने, दबाने में सफल हो जाते हैं, उन्हें अनिद्राजन्य कष्ट इतने अधिक नहीं सताते कि नींद की गोली या शराब, भाँग, अफीम जैसा कुछ लेने की आवश्यकता पड़े।

विचारों की श्रृंखला काटने की कला यदि हस्तगत हो सके, तो आधी समस्या हल हो सकती है। इसके लिये विशेष प्रकार के विचार ध्यान रूप में बिस्तर पर पड़े-पड़े करते रहने से काम चल जाता है।

एक उपाय है—श्वाँस—प्रश्वाँस पर ध्यान केन्द्रित करना। साँस भीतर घुसे और बाहर निकले तब उसी पर ध्यान जमाया जाये। एक ध्यान जम जाने से दूसरे प्रकार के विचार हट जायेंगे।

गिनती गिनना शुरू किया जाये एक से लेकर सौ तक। पर चित्त हलका रहे। ध्यान मात्र गिनती पर ही केन्द्रित किया जाय और सब कुछ भुला दिया जाये।

तीसरा यह है कि अपने को तितली माना जाये। समस्त संसार को एक फूलों से भरा हुआ उद्यान। तितली अनेकों फूलों पर दौड़ती रहती है। जब थक जाती है, तो एक अधिक अच्छे फूल पर सुस्ताने लगती है। वही स्थिति अपनी भी मान ली जाये।

चौथा ध्यान यह है कि आकाश में छितरे हुये तारों को विश्राम के लिये बिछी हुई सुन्दर चट्टानें माना जाये और उन पर बैठते-बैठते अनन्त नील आकाश में उड़ जाया जाये। उड़ने में सर्वव्यापी आकाश ही कल्पना में रहे।

पाँचवाँ—सर्वत्र जलराशि ही भरी हुई है। प्रलय जैसी स्थिति उत्पन्न हो गयी है कोई घर पेड़ प्राणी, शेष नहीं रहा। अकेले ही उस असीम जल के ऊपर बालक रूप में कमल के पत्ते पर पड़े हुये हवा के साथ लहरों पर तैरते चले जा रहे हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी प्रकार के अन्य कल्पना चित्र भी गढ़े जा सकते हैं। उनका स्वरूप एक ही हो कि हम एकाकी हैं। विचार करने के लिये कोई व्यक्ति या समस्या शेष नहीं रही। ऐसी दशा में मन की कल्पनाओं में उलझने का अवसर न मिलेगा। चिन्तायें या समस्यायें किसी कारोबार या व्यक्ति, समुदाय के साथ गुँथने में उत्पन्न होती हैं, जब यही मान लिया गया कि हम तो एकाकी हैं, तो यह मान्यता इतनी समर्थ होती है कि मन के हाथ में भाग-दौड़ करने के सारे क्षेत्र छीन लेती है। एकाकी स्थिति में निश्चिन्तता आती है और जो विचार-श्रृंखला नींद में बाधा डालती थी, वह टूट जाती है। इस प्रकार कठिनाई उत्पन्न करने वाला एक बड़ा भार सिर पर से उतर जाता है।

नशे या नींद की गोलियाँ लेने से भी यही बात होती है कि एक दिशा में चलने वाले विचार छितरा जाते हैं और चिन्तन-तन्तुओं पर से भार उतर जाता है। इस कार्य को हम चाहें तो अपनी संकल्प शक्ति के सहारे भी कर सकते हैं।

प्रयास आरम्भ करने में एक-दो दिन कठिनाई पड़े, तो निराश नहीं होना चाहिये। कुछ दिन के अभ्यास से आदत पड़ जाती है और इनमें से जो कल्पना रुचिकर लगे, उन्हें अपनाते ही निद्रा आने लगती है।

स्फूर्ति लाये, ऐसी निद्रा ही सार्थक

प्रकृति ने दिन को काम करने के लिये और रात को विश्राम करने के लिये बनाया है। श्रम और विश्राम परस्पर पूरक हैं। दोनों के बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध हैं, पर कितने लोग हैं जो दिन में अपना काम निपटा लेते हैं और रात में गहरी नींद सो पाते हैं। रात्रि का भी अधिकांश समय खाने, खेलने, मनोरंजन अथवा क्लबों में निकल जाता है। इसके अतिरिक्त उनींदी अवस्था में सपने दीखते रहते हैं और तरह-तरह की चिन्तायें उसी समय ठालीपन देखकर सिर पर आ सवार होती हैं। फलतः बिस्तर पर पड़े-पड़े जितना समय सोने में व्यतीत होता है, उसका भी अधिकांश भाग एक प्रकार से बेचैनी में ही गुजरता है। ऐसी स्थिति में शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य का गड़ाबड़ा जाना और कार्यक्षमता का घट जाना स्वाभाविक है।

भारतीय दर्शन में नींद को चैतन्य की एक अवस्था माना गया और श्रम के पश्चात् विश्राम को दैनिक जीवन की एक अनिवार्य आवश्यकता माना गया है। इसकी पूर्ति न होने पर शरीर पर थकान लदी रहती है और मन तुनक मिजाज बन जाता है। ऐसी मनःस्थिति में वह जो भी कार्य हाथ में लेगा, सक्रियता एवं निर्णायक क्षमता के अभाव में सफलता तक पहुँचने की स्थिति संदिग्ध ही बनी रहेगी। अतः नियत समय पर विश्राम हर किसी के लिये आवश्यक है। उससे थकान और सुस्ती दूर होती है और नये सिरे से काम करने योग्य शक्ति अर्जित होती है। रात को गहरी नींद सोकर जब उठते और काम पर लगते हैं तो प्रतीत होता है कि किसी ने शक्ति और स्फूर्ति का भण्डार भीतर भर दिया है। मध्याह्न तक पूरे उत्साह से काम होता है और उस संचय में कमी पड़ने पर थकान आने लगती है तथा काम की गति धीमी पड़ जाती है। उत्साह भी कम पड़ जाता है। अतः लगातार श्रम करने के सिद्धान्त को हानिकारक माना गया है।

अनुसंधानकर्त्ता वैज्ञानिकों ने पालियों में काम करने वाले श्रमिकों को आठ घण्टे से अधिक काम करने की इजाजत नहीं दी है क्योंकि इससे उत्पादन पर प्रतिकूल असर पड़ सकता है। दुर्घटनायें हो सकती हैं। पिछले दिनों विश्व में घटित कई दुर्घटनाओं का कारण शोधकर्ताओं ने वैज्ञानिकों या कर्मचारियों द्वारा अपने मस्तिष्क को विश्राम न देने के कारण उत्पन्न हुई बताया है। रूस में चेरनोविल, अमेरिका में चैलेंजर, रैन्कोसीको, ओक हारवर, थ्री माइल आइसलैण्ड जैसी परमाणु दुर्घटनाओं का अध्ययन करने वाले सैन डियागो स्थित स्क्रिप्स क्लीनिक एण्ड रिसर्च फाउण्डेशन के अध्यक्ष डॉ. मेरिल मिटलर ने अपने सहयोगियों के साथ जो निष्कर्ष निकाले हैं, वह आश्चर्यचकित करने वाले हैं। उनका कहना है कि मानव शरीर एक सीमा तक ही श्रमरत रह सकता है। उसके बाद अधिक देर तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

काम करते रहने पर मस्तिष्क सुस्त पड़ने लगता है और उस पर तन्द्रा का आवेग चढ़ दौड़ता है। झपकियाँ आने लगती हैं। उनके अनुसार उक्त दुर्घटनायें इसी की परिणति हैं।

देर तक सोते रहने वालों पर भी यही तथ्य लागू होता है। ऐसे लोगों को जहाँ श्रम, समय एवं उपार्जन से वंचित रहना पड़ता है वहीं स्वास्थ्य संकट का भी सामना करना पड़ता है। आलस्यवश देर तक सोते रहने से शरीर के अंग-अवयवों में जंग लग जाती है। शरीर लोथड़े जैसा और मस्तिष्क गोबर जैसा बन जाता है। उसकी प्रखरता समाप्त हो जाती है। जार्ज वाशिंगटन यूनिवर्सिटी के मूर्धन्य मनोविज्ञानी डॉ. फ्रेड ए. मास ने इस सन्दर्भ में गहन खोजें की हैं। उनका निष्कर्ष है कि अधिक निद्रा मादक द्रव्यों की तरह शरीर और मन दोनों के लिये घातक है। अतः छः घण्टे से अधिक वयस्क व्यक्ति को नहीं सोना चाहिये। इतनी अवधि की निद्रा ही व्यक्ति को चुस्त और तंदुरुस्त बनाये रखने के लिये पर्याप्त है। निद्रा और जागरण-श्रम और विश्राम का सन्तुलन ही उपार्जन का प्रगति का आधार बनते हैं।

श्रमजीवियों एवं कर्मचारियों को मध्यान्ह का एक घण्टा विश्राम के लिये मिलता है। शक्ति एवं स्फूर्ति प्रतिपादन के लिये आवश्यक भी है कि हमसें से प्रत्येक को श्रम के बीच-बीच में विश्राम के छोटे-छोटे पुट लगाते रहना चाहिये। अनवरत् श्रम करने पर मनुष्य अधिक श्रम नहीं कर पाता, वरन् अपेक्षाकृत न्यूनता ही पड़ती है। किन्तु कार्य-दिवस के मध्य में कुछ मिनटों की झपकी ले ली जाय तो उस उपलब्ध शक्ति भण्डार से बाकी काम को सरलतापूर्वक निपटाया जा सकता है। यह निष्कर्ष है म्युनिख स्थित मनोविज्ञान संस्थान के अनुसंधानकर्त्ता का, जिन्होंने पता लगाया कि ६ से ५ बजे के मध्य मस्तिष्क को विश्राम की आवश्यकता अनुभव होती है। उसके अनुसार विश्राम की अपेक्षा स्वल्पकाल की हल्की नींद से व्यक्ति अधिक ताजगी प्राप्त कर लेता है और अपने काम को अधिक दक्षता से पूरा करता है।

न्यूयार्क स्थित अलबर्ट आइन्सटीन कॉलेज ऑफ मेडीसिन के न्यूरोलॉजी विभाग के अध्यक्ष डॉ. इलियट वीट्जमैन ने भी अपनी लम्बी अवधि के अनुसंधान के पश्चात् निष्कर्ष निकाला है कि दिन में एक झपकी ले लेने वाला व्यक्ति बहुत ही चुस्त-दुरुस्त रहता है। उस पर दबाव एवं तनाव की स्थिति हावी नहीं होने पाती। अन्यान्यों की अपेक्षा वह अपना कार्य दक्षतापूर्वक करता है। शक्ति संचय का यह सर्व सुलभ उपाय है।

दफ्तर में या कारखाने में किसी को चारपाई बिछाकर पूरी नींद लेने का अवसर तो नहीं मिल सकता, पर एक ऐसी विधि अपनाई जा सकती है जिसमें समय तो कम ही लगे, एकान्त भी न खोजना पड़े। कहीं अन्यत्र जाना भी न पड़े और बिना विज्ञापन किये विश्राम का उद्देश्य भी पूरा होता रहे। इस योग क्रिया को शवासन मुद्रा कहते हैं। शरीर और मस्तिष्क का तनाव दूर करने एवं नवीन स्फूर्ति पाने के लिये यह प्रयोग बहुत ही कारगर सिद्ध होता है।

प्रसिद्ध मानस विज्ञानी स्टीफन रोज ने अपनी पुस्तक 'दि कान्सस ब्रेन' में विस्तारपूर्वक यह समझाने का प्रयत्न किया है कि दिनचर्या में छोटे-छोटे विश्रामों की श्रृंखला जोड़ देने से कितना अधिक लाभ होता है। यह प्रयोग आराम कुर्सी पर बैठकर या जमीन पर लेटकर किया जा सकता है। जहाँ यह दोनों सुविधायें नहीं हैं, वहाँ दो दीवारों के संयोग से बने कोने में बैठकर भी यह कृत्रिम झपकी ली जा सकती है। इसमें लम्बा समय लगाने की जरूरत नहीं है। पाँच से दस मिनट तक के यह विश्राम खण्ड हो सकते हैं।

शरीर और मस्तिष्क को पूरी तरह ढीला या खाली कर देने भर का यह प्रयोग है, जो अभ्यास करते रहने पर थोड़े समय में ही अपना चमत्कारी प्रभाव दिखाने लगता है। इसमें बैठे हुये अथवा लेटी मुद्रा में यह भावना की जा सकती है कि हम गहरी नींद में चले गये। शरीर निर्जीव जैसा हो गया और मस्तिष्क सुषुप्त स्थिति में जा पहुँचा। सर्वत्र नीरवता का सुखद मौसम-माहौल भरा पड़ा है। उसमें अपना एकाकी शरीर स्वेच्छापूर्वक तैर रहा है। इस भाव कल्पना के सुदृढ़ होते ही ऐसा लगने लगता है मानो गहरी नींद में प्रवेश करने जैसी ताजगी मिल गयी। इससे मिली स्फूर्ति से घण्टों काम लिया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शोधकर्मी विशेषज्ञों का कहना है कि नींद अपनी आवश्यक मात्रा निद्रा के आरम्भिक दो-तीन घंटों के भीतर ही ले लेती है। विशेष परिस्थितियों में तो ५-१० मिनट के अन्दर भी उस आवश्यकता की पूर्ति की जा सकती है, पर लम्बे समय तक इस ढर्रे को नहीं चलाया जा सकता। इससे गम्भीर समस्या उत्पन्न होने का खतरा बढ़ जाता है। एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुये वे कहते हैं कि द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान कितने ही सैनिकों को दिन-रात कई-कई घण्टे जागरण की स्थिति में बिताने पड़े थे, पर बीच-बीच में पाँच-पाँच मिनट के लिये भी यदि उन्हें "रेम-स्लीप" मिल जाती, तो उनकी बेचैनी समाप्त हो जाती और वे ताजगी अनुभव करते प्रतीत होते। इससे स्पष्ट है कि "रेम-स्लीप" से नींद की अधिकांश खुराक पूरी हो जाती है। अनुसंधान के दौरान इसी तथ्य की पुष्टि मनोविज्ञानियों ने भी की है। उनका कहना है कि "रेम" स्तर की थोड़ी नींद से भी बिगड़ते मानसिक संतुलन को सँभाला जा सकता है। अध्ययनों के दौरान उन्होंने पाया कि नवजात शिशुओं में "रेम" स्तर की निद्रा का प्रतिशत ६० के आस-पास होता है। उनने यह भी देखा है कि जैसे-जैसे आयु बढ़ती जाती है, इस श्रेणी की नींद में तदनुरूप गिरावट आने लगती है। आयु ३० वर्ष तक पहुँचते-पहुँचते यह ३५ प्रतिशत रह जाती है। ५० वर्ष के करीब उम्र होने तक यह घटकर २० प्रतिशत रह जाती है। आगे की आयु में "रेम" तेजी से घटता है। ६० वर्ष के लोग १०-१५ प्रतिशत "रेम" नींद लेते हैं"। शोधकर्त्ताओं का कहना है कि "रेम" यदि ५ प्रतिशत से भी कम रह जाये, तो बुढ़ापे से सम्बन्धित मनःकायिक अनेक उलझनें पैदा होने लगती हैं।

किन्तु यह तो बुढ़ापे की बात है जो स्वाभाविक ही है। अस्वाभाविकता तो तब पैदा होती है, जब जवान लोग भी बिस्तर पर पड़े-पड़े अधिक नींद लेने और आराम फरमाने के फेर में अपना स्वास्थ्य गँवाते देखे जाते हैं। इसीलिये "अति" को वर्जनाओं में गिना गया है और उससे बचने की सलाह दी गई है।

निद्रा अनिवार्य भी, उपयोगी भी

निद्रा मनुष्य के लिये आवश्यक और उपयोगी प्रक्रिया है। इसका न होना अथवा इससे वंचित कर देना व्यक्ति को विक्षुब्ध जैसी स्थिति में ला खड़ा करता है। सूक्ष्म सूचनाओं का महत्त्वपूर्ण आधार यही है। सामान्य मनुष्य के लिये सूक्ष्म जगत से संपर्क इसी स्थिति में बन पड़ता है। यही शारीरिक-मानसिक थकान मिटाने का सर्वसुलभ साधन है।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार निद्रा में सचेतन भाग अचेतन की स्थिति में सिर्फ इसलिये नहीं जाता कि उससे थके अंगों को आराम मिले, वरन् उस स्थिति में अंतरिक्ष में प्रवाहमान विद्युत-धाराओं में से उपयोगी अंश संगृहीत-संपादित करने का अवसर भी मिले, प्रयोजन यह भी होता है। एरियल और एण्टिना विद्युत चुम्बकीय तरंगों को पकड़ता है। निद्रा अवस्था में हमारा अचेतन मस्तिष्क उसी स्थिति का बन जाता है और आकाश से इतनी विद्युत खुराक प्राप्त कर लेता है, जिससे शारीरिक और मानसिक क्रियाकलापों का संचालन ठीक प्रकार सम्भव हो सके। निद्रा की पूर्ति न होने पर शारीरिक और मानसिक स्थिति में जो गड़बड़ी उत्पन्न होती है, उसे मनोविज्ञान के अनुसार "चेतनात्मक बुभुक्षा" कहते हैं। आवश्यक विद्युतीय खुराक न मिल पाने के कारण ही यह दशा पैदा होती है। इसके बने रहने पर मनुष्य विक्षिप्तों या अर्ध-विक्षिप्तों जैसा व्यवहार करने लगता है। पागलपन का एक कारण अनिद्रा भी है। अनिद्रा में इस विद्युतीय आहार की कमी पड़ती है।

लम्बी अनिद्रा के कारण उक्त विद्युत की आपूर्ति में जब अवरोध उत्पन्न होता है, तो न सिर्फ शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य गड़बड़ाता है, अपितु इस शक्ति का भी ह्रास होने लगता है, जो अतीन्द्रिय अनुभूति का महत्त्वपूर्ण आधार है। स्वस्थ व्यक्ति में जैसे-जैसे यह ऊर्जा बढ़ती है, इन्द्रियातीत सामर्थ्य की सम्भावना भी तदनुरूप बलवती होती जाती है। योगी-यती इसी विद्युत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को बढ़ाकर ऐसी क्षमतायें अर्जित कर लेते हैं, जिन्हें जनसामान्य ऋद्धि-सिद्धि के नाम से जानते हैं। निद्रा संवर्धन और क्षमता-अभिवर्धन में इसका कितना बड़ा हाथ है, इसे प्राणायाम का कोई भी अभ्यासी सहज ही अनुभव कर सकता है। देखा गया है कि अभ्यास ज्यों-ज्यों बढ़ता है, बुद्धि तीक्ष्ण होती और गहरी निद्रा आती है। गहन निद्रा का एक गुण शारीरिक हलकापन भी है और दूसरा भविष्य सम्बन्धी स्वप्न का दिग्दर्शन भी।

यों निद्रा सम्बन्धी सामान्य सोच यह है कि रात्रि में हम जितना समय सोते हैं, उतना खोते हैं, पर यह अवधारणा अब गलत साबित होती जा रही है। वैज्ञानिक शोध अब यह सिद्ध करने की स्थिति में आ गई है, कि हमारा सोया हुआ समय भी उपयोगिता की दृष्टि से उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना जागरण का। अपितु यह कहा जाये कि उससे भी अधिक, तो कदाचित् कोई अत्युक्ति न होगी। सीखने-समझने के कितने ही ऐसे कार्य इस दशा में भी सम्पन्न किये जा सकते हैं, जैसे जाग्रतावस्था में। मनोवैज्ञानिकों के इस कथन के पीछे सत्य अब सूर्य की तरह झाँकने और यह प्रमाणित करने लगा है कि नींद अब निरर्थक समयक्षेप जैसी प्रक्रिया न होकर ज्ञान सम्पादन की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। ऐसा ही समाचार पूर्व सोवियत संघ के "नोवोत्सी न्यूज एजेन्सी" ने अब से कुछ वर्ष पूर्व वहाँ के अखबारों में छापा, तो लोग आश्चर्यचकित रह गये। शरीरशास्त्रियों ने इसे शेखचिल्लियों जैसी कल्पना बताया तो रूस के अनेक मनोविज्ञानियों ने उन मनःशास्त्रियों का उपहास उड़ाया, जिनने इस प्रकार का दावा किया था, पर कई दिन पश्चात् जब वहाँ से परिणाम प्राप्त हाने शुरू हुये तो उनका संदेह जाता रहा। यहाँ तक कि उनने स्वयं भी वहाँ जाकर परीक्षण का सूक्ष्म निरीक्षण किया और किसी प्रकार के संशय की गुंजायश न रहने पर सन्तोष व्यक्त किया।

इस अनुसन्धान के शुरूआत की भी अत्यन्त रोचक घटना है। हुआ यों कि कुछ वर्ष पूर्व मूर्धन्य मनःशास्त्री इगोर इवानोविच अपने साथी मनोवैज्ञानिकों के साथ नींद और स्वप्न की प्रक्रियाओं पर विचार कर रहे थे कि अचानक उनके दिमाग में स्वप्न की वह प्रक्रिया कौंधी, जिसके माध्यम से यदा-कदा स्वप्न द्रष्टा को सही सूचना प्राप्त हो जाती है। बस, फिर क्या था, उनके मस्तिष्क में इस संदर्भ में उधेड़ बुन आरम्भ हो गयी। वे और उनके सहयोगी इस बात पर गंभीरतापूर्वक विचार करने लगे कि जब स्वप्नावस्था में दिमाग सत्य संदेश प्राप्त कर सकने में सक्षम है, तो क्या निद्रावस्था में उसे सूक्ष्म शिक्षण सम्प्रेषित कर प्रशिक्षित नहीं किया जा सकता ?

इन्हीं सम्भावनाओं के बीच इस विलक्षण अन्वेषण कार्य का जन्म हुआ और मास्को के निकट दूबना नामक स्थान पर तत्संबन्धी एक अनुसंधानशाला स्थापित की गई। परीक्षण आरम्भ करने से पूर्व मनोवैज्ञानिकों ने कुछ प्रतिमान बनायें जिसके आधार पर प्रयोगार्थियों का चयन किया जाना था, पर इसका सबसे महत्त्वपूर्ण आधार गहरी नींद था। प्रयोग में उन्हीं व्यक्तियों को सम्मिलित किया गया, जिन्हें गहरी निद्रा आती थी। जो शेष प्रतिमानों के पूरे होने पर भी, गहरी नींद का अनुबन्ध पूरे नहीं करते थे, उन्हें इसमें शामिल नहीं किया गया। दूसरी ओर जिन्हें गहरी निद्रा तो आती थी, पर जो शेष शर्तों की पूर्ति नहीं कर पाये, उन्हें भी इसके अयोग्य घोषित किया गया। कुल मिलाकर परीक्षण के अनुकूल उन्हें ही ठहराया गया, जो निर्धारित सभी शर्तों की पूर्ति करते थे।

प्रयोग आरम्भ किया गया। इसमें सूक्ष्म ध्वनि-तरंगों के माध्यम से प्रयोगार्थियों को नींद के दौरान अंग्रेजी एवं अन्य भाषाशास्त्र के टेप रिकार्ड सुनाये गये और जागने पर तद्विषयक अनेक प्रश्न पूछे गये, जिसके कुछ ने सही और कुछ ने गलत जवाब दिये। सही उत्तर न दे सकने के कारणों का स्पष्टीकरण करते हुये मनःशास्त्रियों का कहना था कि सम्भवतः इसका कारण मस्तिष्कीय अनुकूलनता (एडाप्टेशन) का अभाव था। जिस मस्तिष्क ने जितनी जल्दी स्वयं को प्रशिक्षण के योग्य ढाल लिया, उसने उतनी जल्दी सूचनाओं और संदेशों को ग्रहण करना आरम्भ कर दिया, पर इसकी कमी सूक्ष्म संकेतों को ग्रहण करने में बाधा उत्पन्न करती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, ऐसा मनोवेत्ताओं का अभिमत था। दूसरी ओर यह दृढ़ विश्वास भी था कि जैसे-जैसे मस्तिष्क की अनुकूलनता विकसित होती, जायेगी, वैसे-वैसे उसकी ग्रहणशीलता में भी उत्तरोत्तर विकास होता चला जायेगा। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि इस प्रक्रिया द्वारा लोग सोते में भी सारगर्भित जानकारी अर्जित कर, उस समय का अतिरिक्त उपयोग कर सकेंगे, जिसे बोल-चाल की भाषा में, "सोना अर्थात् खोना" जैसे सम्बोधनों से अभिहित किया जाता है।

इसका परिणाम चाहे जो हो, इस तथ्य से सर्वथा इन्कार नहीं किया जा सकता कि जब हम सोते होते हैं, तब भी प्रकारान्तर से जागते रहते हैं। अन्तर सिर्फ इतना होता है कि इसमें चेतना का एक स्वल्प अंश अचेतन स्थिति में चला जाता है, पर उसका अधिकांश भाग अपना कार्य यथावत् करता रहता है। हृदय का धड़कना, साँस का चलना, रक्त का दौड़ना उस अवस्था में भी ज्यों-का त्यों जारी रहता है। ऐसी दशा में बाहरी शिक्षण किसी प्रकार अन्तस्चेतना में उतर जाय, तो इसे आश्चर्यजनक तो कहा जा सकता है, पर असम्भव नहीं। यह प्रक्रिया योगी स्तर के उन लोगों में स्पष्ट देखी जाती है, जिनकी चेतना तनिक परिष्कृत हो गई हो। फिर वह सोते हों अथवा जागते, उनकी व्यष्टि चेतना समष्टि चेतना से इस प्रकार गुँथ जाती है कि अदृश्य के गर्भ में जो भी घटना पकती, पनपती रहती है, उसकी महत्त्वपूर्ण जानकारी जागते एवं सोते हुये में समान रूप से प्रत्यक्ष मूर्तिमान होने लगती है। महापुरुषों के स्वप्न प्रायः इसी स्तर के होते हैं। उनमें सामान्यजनों जैसे औंधे-सीधे दृश्यों का जाल-जंजाल नहीं होता, वरन् उसमें सोद्देश्य सूचनाओं का सारगर्भित समावेश होता है।

संक्षेप में नींद एक साथ अनेक प्रयोजन पूरे करती है। वह शरीर और मस्तिष्क की क्लान्ति मिटाकर, उन्हें नई स्फूर्ति से ओत-प्रोत करती और उस ऊर्जा की भरपाई करती है, जिसका कि कार्य के क्षणों में क्षरण होता रहता है। इसे अनिवार्य भी माना जा सकता है एवं जो इसके सम्बन्ध में सामान्यतया भ्रान्तियाँ संव्याप्त हैं, उन्हें पूर्णतः निर्मूल भी अब किया जा सकता है।

बुढ़ापे की अनिद्रा : बड़ी जान लेवा

छोटे बच्चों को गहरी और लम्बी नींद आती है, पर बड़े होने पर उसकी अवधि घटती जाती है। विकास की दर कम हो जाने से उतनी आवश्यकता भी नहीं रहती। रात को और दोपहर के विश्राम में ८-१० घण्टे सोने से किशोरों का काम चल जाता है। प्रौढ़ों को कुल मिलाकर आठ घण्टे भी पर्याप्त होते हैं। अधेड़ होते-होते नींद की पर्याप्ताता सात घण्टे तक सीमित हो जाती है।

वृद्धावस्था में नींद घटने के कई कारण हैं। सर्वप्रथम यह है कि शरीर को साधे रहने वाली अरबों-खरबों कोशिकाओं में से जितनी टूटती हैं, उतनी नई नहीं बनतीं। इस कारण क्षीणता की मात्रा बढ़ती जाती है। मांसपेशियाँ सूखने लगती हैं, खाल ढीली पड़ जाती है और झुर्रियाँ झूलने लगती हैं। अन्य भीतरी-बाहरी अवयव भी शिथिलता ले आते हैं, इसलिये भोजन पचने और रक्त संचार में भी बाधा पड़ती है। यह दोनों कार्य उतनी अच्छी तरह नहीं होते जैसे युवावस्था में हुआ करते थे। यह शिथिलता शरीर में पोषण उतना नहीं होने देती, जितना कि क्षरण होता है। आमदनी कम और खर्च अधिक रहने से उसका प्रभाव दिवालियापन के लक्षण धारण करने लगता है। इन्हीं में से एक है—वृद्धावस्था। उसके आगमन पर बाल पकते हैं, दाँत टूटते हैं, कमर झुकती है, साथ ही नींद भी कम हो जाती है। शरीर में श्रम करने की शक्ति भी नहीं रहती और वैसा करने की इच्छा भी नहीं रहती।

अन्य अवयवों की अपेक्षा मस्तिष्क को पोषण कम मिलता है, चिन्तन की शृंखला गड़बड़ाती है। चिड़चिड़ापन जल्दी-जल्दी आता है। इसके अतिरिक्त स्मृतियों में भुलक्कड़पन का सिलसिला बढ़ता है। प्रियजनों के नाम तक विस्मृत हो जाते हैं और घटनाओं की रूपरेखा स्मृति पटल से हटने लगती है। इन सबसे नींद का न आना या कम आना अधिक कष्टकर होता है क्योंकि मानसिक विश्राम कम मिलता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और दबाव अधिक पड़ता है। नौकरी, खेती, व्यवसाय आदि से छुट्टी मिल जाने पर भी अतीत के उन सुहावने दिनों की याद आती रहती है, जो कभी घटना के रूप में अवश्य थे, पर अब उन्हें स्मृति भर के रूप में संजोये रखा जा सकता है। वे अब किसी प्रकार वापिस नहीं लौट सकते। इससे लगता है कोई बहुमूल्य चीज खो गई हो और उसकी रह-रहकर याद सताती हो। यह स्थिति आमतौर से नींद में बाधक होती है। दिन तो लोगों के साथ बात-चीत करते, मिलते-जुलते बीत जाता है, पर रात सूनी और एकाकी होती है। उसमें भूतकालीन स्मृतियों के घटाटोप चढ़ आते हैं और वह नींद आने में रुकावट डालते हैं।

वर्तमान भी असंतोषजनक रहता है। कभी सब कुछ अपने जिम्मे था। बिना पूछे पत्ता भी नहीं हिलता था, मालिक का अनुग्रह पाने के लिये सभी सम्मान करते और बफादारी दिखाते थे, पर अब वैसी स्थिति नहीं रही। शरीर ने साथ छोड़ा तो मालिकी भी छिन गई और किसी प्रकार उपेक्षापूर्वक सहन किये जाने जैसी स्थिति में बँधकर रहने लगे। इस अन्तर की विवेचना-समीक्षा करने के लिये भी रात का एकान्त ही उपयुक्त अवसर होता है।

भविष्य और भी डरावना होता है। मृत्यु आँखों के सामने नाचती रहती है। जीव कहाँ जायेगा, किस स्थिति में रहेगा ? प्रियजन पराये हो जायेंगे, उनका दर्शन तक सम्भव न रहेगा। कमाई हुई दौलत न जाने किसके हाथ पड़ेगी और जिसे इतनी मेहनत से कमाया गया है, उसका न जाने क्या सदुपयोग-दुरुपयोग होगा ? यह चिन्तायें चढ़ी रहती हैं। इन सबसे बढ़कर मौत का भय सताता है। अपने सम आयु साथियों में से जब बहुत-से पहले ही चले गये तो अब अपने जाने में ही कितनी देरी हो सकती है ? मृत्युदण्ड की भाँति ही मौत के दिन का स्मरण भी कई प्रकार कष्टकारक होता है। यह और भी बुरा लगता है कि सम्बन्धी परिजन उन्हें निरर्थक स्तर का मौत-का शिकार मानकर चल रहे हैं। उनकी इस विपत्ति को हल्का करने तक में कोई साझेदार नहीं है। सभी ने रूखापन अपना लिया है। सम्मान देना तो दूर कोई उनसे परामर्श तक नहीं लेता। जो कभी कुलपति रहा हो, जिसकी महत्ता और गरिमा सदा सम्मानास्पद रही हो, वह यदि अपने को उपेक्षित, तिरस्कृत अनुभव करे, तो उसे असन्तुष्ट रहना और तद्विषयक विचार चल पड़ने से नींद न आने या कम आने की अड़चन खड़ी हो जाना स्वाभाविक है। अनिद्रा से थकान दूनी बढ़ती है। अगले कल भी नींद न आई तो सिर पर कितना भारीपन चढ़ेगा ? इसकी चिन्ता समय से पहले ही सिर पर चढ़ने लगती है। यह सब बातें मिलकर वृद्धावस्था में कम नींद आने का निमित्त कारण बनती हैं।

होना यह चाहिये कि संसार के परिवर्तन चक्र को समझा जाय और जो बीत गया उसको एक प्रकार से भूत मानकर उपेक्षा के गर्त में डाल दिया जाय। पिछले जीवन की न तो स्मृति संजोनी चाहिये न उसके छिन जाने की चिन्ता ही करनी चाहिये। वर्तमान को सन्तोषपूर्वक बिताने का एक ही तरीका है कि परिस्थितियों से समझौता कर लिया जाय। जेल में जो बन्दी परिस्थितियों से समझौता कर लेते हैं, वे अलमस्त बने रहते हैं, पर जिन्हें मानसिक परेशानी बहुत सताती है, उनके लिये समय काटना कठिन पड़ता है। मृत्यु के सम्बन्ध में गीता की उस मान्यता को मन में अनेक बार दुहराना चाहिये, जिसमें आत्मा को अमर माना गया है और शरीर बदलने को कपड़ा बदलने जैसी उपमा दी गई है। मृत्यु के बाद सद्गति की ही कल्पना करनी चाहिये। दुष्कृत्यों के लिये भगवान से क्षमा माँगते हुये पिछले सत्कर्मों का पुण्य फल परलोक को मंगलमय बना सकेगा, इसकी मान्यता को मन में मजबूती के साथ बिठाना चाहिये। इससे मन हल्का होता है और चिन्तायें घटती हैं।

नींद न आने का एक बड़ा कारण है कि एक ही दिशा धारा में विचारों का प्रवाह बहने देना। होना यह चाहिये कि विचारों को एक स्थान पर जमने देने की अपेक्षा उन्हें बखेरते रहना चाहिये। बालकों जैसा स्वभाव बनाकर चंचल प्रवृत्ति के हँसते-खेलते समय बिताने की अपनी भी आदत डालनी चाहिये। निषेधात्मक विचारों को अन्य उपयोगी विचारों से काटना चाहिये। नींद की गोली लेने की अपेक्षा यह विचार परिवर्तन का अभ्यास जल्दी नींद बुलाने में सहायक होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर को पूरी तरह ढीला छोड़ने की साधना शवासन या शिथिलासन कहलाती है। इसे दिन में कई-कई बार करने का अभ्यास करते रहने से रात के समय यह परिपक्व उपचार का काम देती है।

एक उपाय यह भी है कि पिछली घटनाओं को उलटी गति से स्मरण किया जाय। दिन में लेटना हो, तो सायंकाल से लेकर प्रभात की ओर स्मृतियों को लौटाना चाहिये। जीवनक्रम में इस क्रम से बुढ़ापा, प्रौढ़ता, नव यौवन, किशोर, शैशव और अन्त में भ्रूण की निश्चित स्थिति तक जा पहुँचने की बात ऐसी सरल है, जिसके सहारे खोई नींद को फिर प्राप्त किया जा सकता है।

हास्य एक सर्वश्रेष्ठ पर सर्वसुलभ टॉनिक

फूल जब खिलते हैं तो उनका सौन्दर्य देखते ही बनता है। तितलियाँ, भौंरे उनके इर्द-गिर्द मंड़राने लगते हैं। उनका सौरभ एवं आकर्षण हर निकट से गुजरने वाले के मन में गुदगुदी पैदा करता है। थोड़ी देर ठहरने गंध का पान करने नेत्रों को परितृप्त करने के लिये मन ललचाता है। चिड़ियाँ हर घड़ी फुदकती रहती हैं। उनकी चहचहाहट में एक अद्‌भुत उत्साह का दर्शन होता है। कूकती हुई कोयल का मादक स्वर कानों को परितृप्त करता है। हिरन जब कुलाचें मारता दौड़ता है तो उसे देखकर कितनों ही के मन में उत्साह का संचार होने लगता है। उसकी उन्मुक्त निर्द्वन्द्व दौड़ से ऐसा प्रतीत होता है जैसे प्रकृति ने सारी खुशियाँ उसकी ही झोली में भर दी हों। मयूर नाचता है तो लगता है कि समूची प्रकृति ही उसके साथ थिरक उठेगी। वनराज सिंह की दहाड़ तो कभी-कभी सचमुच ही उसके किसी राज्य का बादशाह होने का भ्रम करा देती है। भालू के बेडौल शरीर का स्वच्छन्द नृत्य आज के आधुनिकतम नृत्यों को भी मात देता है। इस उन्मुक्तता-सहजता का दर्शन मनुष्य के उन कृत्रिम नृत्यों में कहाँ हो पाता है ? प्रकृति ने इन मनुष्येत्तर जीवों को जो नगण्य विशेषतायें प्रदान की हैं, उन्हें लेकर वे मस्त रहते तथा अपने जीवन का भरपूर आनन्द उठाते हैं। अपनी प्रकृति प्रदत्त सहजता को वे जीवन पर्यन्त बनाये रहते—अलमस्त जीवन जीते हैं।

यह सहजता मनुष्य के जीवन काल के आरम्भ में बाल्यावस्था में प्रकट होती तो है पर आयु बढ़ने के साथ-साथ कम होने लगती है। विरले व्यक्तियों को छोड़कर अधिकांश में तो प्रौढ़ावस्था में पहुँचते-पहुँचते उसका अवसान-सा हो जाता है। बच्चे की किलकारियाँ बाल सुलभ चेष्टाएँ ही किसी का ध्यान आकृष्ट करती हैं। यह बाल सुलभता न हो तो बच्चों के प्रति आकर्षण समाप्त हो जाये। आज की भौतिक सभ्यता से दूर पर्वतों, वनों, हिमाच्छादित देशों में रहने वाली कुछ जातियाँ ऐसी हैं, जिनकी मस्ती को देखकर उसे पाने की कीमत पर समस्त भौतिक सम्पदा न्यौछावर करने का जी करता है। एस्किमो, लॉप, जैसी जातियाँ सफल, सरल जीवन का बेमिसाल उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। आधुनिक सभ्यता की अनेकानेक आधि-व्याधियों से वे सर्वथा अछूती हैं। दीर्घायुष्य, बलिष्ठता, समस्वरता, शान्ति एवं सन्तोष की दृष्टि से वे संसार के सभी प्रगतिशील समुदायों से आगे हैं। अपवादों के रूप में थोड़े-से ऐसे व्यक्ति भी होते हैं, जो अपनी सहज प्रसन्नता को सदा बनाये रखते हैं, किसी भी कीमत पर नहीं गँवाते। अन्यथा अधिकांश की स्थिति तो शमशान में जलते पिशाचों सी होती है, जो स्वयं जलते तथा अपने प्रभाव क्षेत्र के लोगों को भी जलाते रहते हैं।

यह एक विडम्बना ही है कि बुद्धिमान होते हुये भी अधिकांश व्यक्ति यह नहीं समझते कि प्रसन्न रहना प्रकृति प्रदत्त एक ऐसा वरदान है, जो स्वास्थ्य सौन्दर्य, आरोग्य तथा मानसिक सन्तुलन जैसी उपलब्धियों का जनक है। गिरता हुआ स्वास्थ्य, बढ़ती हुई शारीरिक, मानसिक बीमारियों का एक सबसे प्रमुख कारण यह है कि मनुष्य ने अपनी सहज प्रसन्नता को गँवा दिया है। ऐसा लगता है कि उसके चेहरे की मुस्कान कोई छीन ले गया हो। प्रकृति प्रदत्त इस अमूल्य सम्पदा के चले जाने से ही अधिकांश मनुष्यों का जीवन अनेकानेक समस्याओं से ग्रस्त होता चला जा रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर विज्ञानियों तथा मनःशास्त्रियों ने हँसने को एक स्वस्थ और प्रभावशाली व्यायाम माना है जो शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य तथा आरोग्य सम्वर्धन में विशेष रूप से सहायक है। उनका कहना है कि एक औसत हँसी से डायफ्राम, छाती, पेट, फेंफड़े तथा यकृत का व्यायाम हो जाता है। उबाऊ श्रम में इस आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पाती। हँसी एक शरीर शोधक प्रक्रिया भी है, जिससे श्वसन तन्त्र में विद्यमान विजातीय तत्वों का निष्कासन होता है। रक्त संचार एवं हृदय गति बढ़ जाती है। यदि हँसी उन्मुक्त तथा लोट-पोट प्रकृति की हो तो उससे चेहरे, भुजा तथा पैरों को विशेष राहत मिलती है। शिथिलीकरण की स्थिति इन अंगों में हँसने के उपरान्त आ जाती है। विशेषज्ञों ने एक महत्त्वपूर्ण किन्तु आश्चर्यजनक तथ्य का रहस्योद्घाटन किया है कि विनोदी प्रकृति के लोगों को डिप्रेशन, सिरदर्द, पीठदर्द, तनाव नीरसता जैसे मनो-शारीरिक विकार व्यतिक्रम ग्रस्त करते नहीं देखे जाते।

'साइंस डायजेस्ट' (जून ८१) में प्रकाशित एक लेख में शरीरशास्त्र विशारदों के शोध निष्कर्ष का वर्णन है, जिसमें यह कहा गया है कि हँसी मस्तिष्क को एक विशेष प्रकार का हारमोन कैंटेकोल अमीन्स स्रावित करने के लिये उद्दीप्त करती है। इस ग्रुप के मुख्य हारमोन हैं—एपिनेफ्रीन, नॉरएपिनेफ्रीन तथा डोपेमीन आदि। ये हारमोन ब्रेन को एजोरफिन्स स्रावित करने के लिये उत्तेजित करते हैं, जो दर्द तथा क्रॉनिक एलर्जी को कम करते हैं। स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी के मेडिकल स्कूल के मनोविज्ञानी प्रो. विलियम फॉम का कहना है—"हँसी के अभाव में मनुष्य के गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त होने की सम्भावना बढ़ जाती है। हँसी से शरीर अंगों तथा मन मस्तिष्क का व्यायाम, मनोविनोद की आवश्यकता पूरी हो जाती है। इससे एण्डोक्राइन तन्त्र भली प्रकार क्रियाशील रहता है, जो रोगों के उन्मूलन में अग्रणी भूमिका निभाता है।

'सेटरडोरिव्यू' पत्रिका के सम्पादक तथा मनःशास्त्री नॉरमन कंजन ने तो लॉफिंग पैथी नामक एक स्वतन्त्र उपचार पद्धति का विकास किया है। उनका प्रमुख सिद्धान्त है कि "स्वास्थ्य संवर्धन के लिये दिन में कम से कम दस बार खुलकर हँसो। वे मरीजों का हर तरह से स्वस्थ मनोरंजन करते हैं। ऐसी पुस्तकों का उनके पास विशाल संग्रह भी है, जो देश-विदेश से मँगायी गयी हैं तथा हास्य विनोद प्रधान हैं। मरीजों को वे इन पुस्तकों को पढ़ने के लिये देते हैं तथा सदा मस्त रहने का परामर्श देते हैं।

इस पैथी के विकास की प्रेरणा उन्हें आपबीती एक घटना से मिली। वह रीढ़ की हड्डी में दर्द से बुरी तरह पीड़ित रहते थे। चिकित्सकों के उपचारों का दर्द के ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। एक दिन एक एडवोकेट मित्र उनके पास आये जिनके चेहरे से अद्भुत मस्ती टपक रही थी। थोड़ी देर तक वे अपनी विनोदी बातों से उन्हें हँसाते रहे और चलते समय एक पर्ची पर यह लिखकर चलते बने कि बीमारी से छुटकारा पाना हो तो सर्व प्रथम खिलखिलाकर हँसने का अभ्यास डालें। "सचमुच उस परामर्श के प्रयोग का जादू जैसा असर हुआ और पुराना वह कष्टकारक दर्द जाने कहाँ गायब हो गया ? उनके लिये गहरी नींद एक स्वप्न था पर तब से उन्हें नित्य गाढ़ी नींद आने लगी।

नारमन ने यह प्रयोग अपने अन्य मित्रों के ऊपर भी किया जिसमें उन्हें भारी सफलता मिली। जिस अस्पताल में नारमन ने वर्षों उपचार कराया था, वहाँ के चिकित्सकों को यह बातें मालूम हुईं। सच्चाई को उन्होंने प्रयोगों की कसौटी पर कसने पर सही पाया। इस अस्पताल में कैटाटोनिक सिजोफ्रेनिया से ग्रस्त कितने ही रोगियों का उपचार हास्य चिकित्सा द्वारा किया गया है। इस कार्य के लिये हॉस्पिटल के अधिकारियों ने एक विनोदी मसखरे को नियुक्त किया जो एक निर्धारित समय तक अपनी बातों से रोगियों को हँसाया करता था।

पश्चिमी देशों में लाफ आफ्टर लाफ दि हिलिंग पावर्स ऑफ ह्यूमर पुस्तकों को विशेष ख्याति मिली है। इसके लेखक हैं—वर्जिनिया यूनिवर्सिटी के डा. रैमण्ड ए. मूडी। उनका कहना है—हँसी एक अच्छी और सर्वोत्तम प्रकृति प्रदत्त औषधि है। उन्होंने एक कैन्सर के रोगी के ट्यूमर तक को हास्य उपचार द्वारा समाप्त करने में सफलता पायी है। कितने ही अमरीकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य संस्थानों में हास्य चिकित्सा के अलग विभाग रोगोपचार के लिये खोले गये हैं।

मिसौरी के एक कारागार में कैदियों के सुधार के लिये एक दिन का विशिष्ट हास्य कार्यक्रम आयोजित किया जाता है, जिसमें हर कैदी का भाग लेना तथा खुले मन से हँसना अनिवार्य होता है। उस दिन कैदियों से काम नहीं लिया जाता तथा मनोविनोद करने की पूरी छूट रहती है।

लॉस एन्जिल्स के एक अस्पताल में रोगियों की अन्य दवाओं के साथ पन्द्रह मिनट की हँसी की एक खुराक नित्य दी जाती है। इसके लिये वेतन भोगी हास्य विशेषज्ञ अस्पताल द्वारा नियुक्त किये गये हैं, जिनके जिम्मे एकमात्र कार्य रोगियों को हँसाना हलका करना भर होता है।

प्रायः नौकरी से सेवानिवृत्त व्यक्ति जीवन से हताश निराश देखे जाते हैं। अधिकांश को देखकर ऐसा लगता है जैसे वे जीवन से भी जल्दी ही रिटायर हो गये हों। पश्चिम में तो ऐसी मानसिकता अब और भी बढ़ती जा रही है। कैलीफोर्निया में सेवानिवृत्त व्यक्तियों ने इस रोग का उपचार ढूँढ़ निकाला है। प्रतिदिन एक निश्चित स्थान पर निश्चित समय के लिये सभी वृद्ध मिलते हैं। हास्य, व्यंग, कविताओं, कार्टूनों गीत, संगीत, हास्य फिल्मों के माध्यम से वे भरपूर मनोविनोद करते हैं। एक मनःचिकित्सक ने उन सभी की परीक्षा करने के उपरान्त घोषणा की है कि "ऐसा प्रतीत होता है जैसे उनकी आयु थम गयी हो। उनके जीवन में उसाह उमंग फिर नये सिरे से उमड़ आये हों।

दार्शनिक सुकरात कहा करते थे—"यदि हास्य का अस्तित्व न होता तो आज चारों ओर मनुष्य के शरीर के रूप में भूत-पिशाच डोलते नजर आते। दूसरे प्राणी तो उदर पोषण मात्र से जीवित रह सकते हैं पर मनुष्य की स्थिति सर्वथा भिन्न है। उसकी मानसिक तुष्टि एवं पुष्टि के लियें विनोद आवश्यक है। जिसकी सहज एवं सुलभ आवश्यकता उन्मुक्त हँसी से पूरी हो सकती है।"

महात्मा गाँधी कहते थे कि मैं बिना भोजन के रह सकता हूँ पर बिना हँसे जीवित नहीं रह सकता। जो गाँधी जी के निकट रहते थे, उन्होंने उल्लेख किया है कि गम्भीर से गम्भीर अवसरों अथवा प्रसंगों पर भी गाँधी जी अपनी विनोदी प्रकृति को नहीं छोड़ते थे। स्वयं हँसते तथा दूसरों को भी हँसाते रहते थे।

हर महामानव के पन्ने हम उलटें तो ज्ञात होगा कि वे जीवन भर गम्भीर से गम्भीर निर्णय लेते रहे पर व्यवहारिक स्तर पर विनोदी उन्मुक्त हल्का-फुल्का जीवन जीते हुये हँसी-खुशी के साथ धरा से गये। सचमुच ही जीवन को सरस सफल बनाना है तो मनुष्य को प्रकृति प्रदत्त सहज प्रसन्नता की मनोवृत्ति को किसी भी कीमत पर नहीं गँवाना चाहिये। हँसती-हँसाती जिन्दगी जीने का अभ्यास विकार-व्याधि से मुक्त जीवन जीने के लिये करना ही चाहिये। जब दूसरे प्राणी प्रतिकूल परिस्थितियों में सन्तुष्ट रह सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य प्रचुर सुविधाओं में रहते हुये तथा विशिष्ट क्षमताओं का स्वामी होते हुये भी सदा रुआसा बना—उद्विग्नता भरा जीवन जीये और प्रकृति प्रदत्त सहज प्रसन्नता से वंचित रहे।

हँसना बनाम स्वास्थ्य सुधारना

मनुष्य की सहज प्रवृत्ति हँसने की है, रोने की नहीं। चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञों का अभिमत है कि व्यक्ति को स्वस्थ रखने के लिये औषधियों की अपेक्षा हँसना-हँसाना अधिक उपयुक्त बैठता है। मुरझाया हुआ चेहरा सदैव निराशाजन्य जीवन के रहस्य को प्रदर्शित करता है। शरीर का प्रत्येक अंग अवयव मनुष्य की मधुर मुस्कान से ही प्रभावित होता है। जितनी देर में इंजैक्शन अपना प्रभाव शरीर पर छोड़ता है, उससे कहीं अधिक जल्दी हँसने का होता है।

हँसने वाले व्यक्ति के स्नायु-तन्त्र में तनाव नहीं रहता, मांसपेशियों और ऊतकों को प्रसरण का मौका मिलता है, जिससे पूरे शरीर के अंगों में नयी स्फूर्ति आती है। अतः हँसने को रामबाण औषधि कहा जाये तो इसमें अतिशयोक्ति नहीं होगी। गले और गर्दन वाली ग्रन्थियों को तो और भी अधिक ताजगी का अनुभव होने लगता है, जिससे उनकी गतिशीलता में आमूल-चूल अभिवृद्धि होती देखी गयी हैं। फेंफड़ों को पर्याप्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मात्रा में हवा मिलने के फलस्वरूप रक्त संचरण की क्रिया को बल तो मिलता ही है साथ ही साथ हृदय की गति भी भली प्रकार सुसंचालित रहती है।

अमेरिका के सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री डा. जेम्स वाल्श फोर्ड हैम के अनुसार हँसने का सीधा प्रभाव सर्वप्रथम हृदय पर ही पड़ता है क्योंकि उदर एवं छाती को विभक्त करने वाला डायफ्राम नामक आवरण ऊपर नीचे आता जाता रहता है और हृदय के दायें भाग पर इसका घर्षण होता है, जिससे हृदय की कार्य क्षमता भी बढ़ने लगती है। यही नहीं उन्होंने यह भी दावा किया है कि हँसती-हँसाती हल्की-फुल्की जिन्दगी जीने वाले को प्रायः अस्पताल का मुँह नहीं देखना पड़ता। इससे स्नायुपिण्ड, लीवर, जठर तथा आँतों का व्यायाम पूरी तरह होने लगता है। अतः हँसना जीवन जीने की श्रेष्ठतम कला है।

डा० एडवर्ड पौडो लस्की के अनुसार पाचन सम्बन्धी गड़बड़ी को दूर करने का उपयुक्त उपाय मुक्त कण्ठ से हँसना ही है। हँसने से चिन्ता नहीं रहती। इसलिये रक्तचाप की गति सामान्य रहती है और हृदय की गति पर भी कोई कुप्रभाव नहीं पड़ता है। हँसी के आगे चिन्ता, उदासी व अवसाद तो मस्तिष्क में टिक नहीं सकते।

"परेशानियों के निवारण का परीक्षित उपाय है—मधुर मुस्कुराहट। चिरकाल से चली आ रही कष्ट को हँसकर टाल जाइये" वाली कहावत आज के वैज्ञानिकों के लिये अनुसंधान का विषय बन गयी है।

कैलिफोर्निया विश्व विद्यालय के मनोविज्ञानवेत्ता डा. एकमैन का कहना है कि व्यक्ति की आन्तरिक प्रसन्नता का रहस्य उसके चेहरे की मांसपेशियाँ बताती हैं। चेहरे की मांसपेशियों की मैकेनिज्म का सीधा सम्बन्ध स्वचालित नाड़ी मंडल से होता है। यही नाड़ी मंडल व्यक्ति के हृदय की धड़कन की गति को श्वसन तथा अन्य प्रकार की स्वचालित क्रियाओं को काबू में रखता है और यह अवयव सहज ही रुग्ण नहीं होते।

मुस्कराहट वास्तव में एक छूत के रोग के समान है। किसी माङ्गलिक अवसर पर जब कोई व्यक्ति किसी दूसरे को हँसते-मुस्कराते देखता है तो वह स्वयं भी उस स्थिति में जा पहुँचता है। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली में मनोरोगों से छुटकारा पाने के लिये मुस्कुराहट भरी जिन्दगी जीने की विधि-व्यवस्था को ही मनःचिकित्सक अपना रहे हैं। न्यूयार्क टाइम्स में प्रकाशित वैज्ञानिकों की रिपोर्ट से पता चला है कि अब अन्तरंग की भावनाओं के प्रमापन हेतु सशक्त यन्त्रों की अपेक्षा मुस्कान के अभ्यास पर जोर दिया जा रहा है।

मनोवैज्ञानिक आसन—मुस्कान

शक्ति और स्वास्थ्य संवर्धन में आसन और व्यायाम दोनों ही लाभदायक हैं। परन्तु दोनों के प्रभाव और प्रतिक्रिया पद्धति में एक अन्तर है, वह यह कि आसन शरीर के गुप्त मर्मों पर भी अपना प्रभाव डालते हैं। सामान्य व्यायाम और कसरत, खेलों में शरीर के आन्तरिक मल विकार तो दूर हो जाते हैं लेकिन कुछ मुख्य और मर्म की शरीर ग्रन्थियों, सूक्ष्म भागों तक उनका प्रभाव नहीं पहुँच पाता इसलिये मल वहाँ बने ही रहते हैं। आसन उन सूक्ष्म भागों तक भी पहुँच जाते हैं और वहाँ इकट्ठे हुये मल विकारों का निष्कासन कर देते हैं।

प्रचलित विभिन्न आसन मल निष्कासन के लिये तो प्रसिद्ध और प्रभावकारी हैं ही परन्तु इनमें भी शिथिलासन एक इस प्रकार का आसन है, जो शरीर को तुरन्त ताजगी और प्रफुल्लता से भर देता है। शरीर की ताजगी का प्रभाव निश्चित रूप से मन पर पड़ता है। इसमें थोड़ा बहुत विलम्ब होना स्वाभाविक है परन्तु एक ऐसी प्रक्रिया भी है, जिससे पूरे मन को निर्भार हल्का-फुल्का और स्वच्छ स्वस्थ बनाया जा सकता है। यह प्रक्रिया मनुष्य को प्रकृति की ओर से वरदान रूप में मिली है और जाने-अनजाने सभी कोई इससे गुजरते हैं। लेकिन उसके प्रभाव और परिणामों से अनभिज्ञ रहने के कारण उसके महत्त्व को कुछ समझ नहीं पाते परिणामस्वरूप न तो उस पर उतनी गम्भीरता से विचार किया जाता है और न ही उसे अपना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वभाव में रचाने-पचाने के लिये कोई ध्यान दिया जाता है।

इस प्रक्रिया का नाम है—मुस्कान। मुस्कराहट एक ऐसा मनोवैज्ञानिक आसन है जिससे मन के तार-तार झंकृत हो जाते हैं और वहाँ विद्यमान, ईर्ष्या, द्वेष कुटिलता, दुर्भाव और तनाव रूपी विष जलबल कर भस्म हो जाता है। इसीलिये एक पाश्चात्य चिकित्सक ने लिखा है—"मुस्कान अन्दर ही अन्दर एक ऐसा स्निग्ध वातावरण विनिर्मित करती है, जिसकी शीतलता हमें संसार के प्रकोप तथा दूषित वातावरण से बचाती है।" मुस्काराहट की सामर्थ्य के सम्बन्ध में यह उक्ति तथ्यों पर आधारित है।

देखा जा सकता है कि चिन्ता, शोक और आवेग का आक्रमण होने पर मुख मण्डल की स्निग्ध प्रफुल्लता खो जाती है। चिन्ताग्रस्त स्थिति में मुँह पर मायूसी के बादल छाने लगते हैं। यह दशा बता देती है कि अन्दर क्या चल रहा है ? इसका जन्म मानवीय बुद्धि और हृदय के विकारग्रस्त, कुण्ठित तथा विवादमय मलों की उपज है। ऐसे चित्त में वर्तमान परिस्थितियों के प्रति आत्म समर्पण-पराजय की तैयारी ही रहती है। चिन्तित व्यक्ति न तो उन परिस्थितियों से संघर्ष करने का साहस कर पाता है और न अपनी इस कमजोरी को दूर करने का निश्चय। चिन्ता-चिन्ता और चिन्ता एक साथ मिलकर उसकी चिता सजाती है और ऐसी दशा में कहीं मुस्कान का फूल खिल उठे तो निश्चित है कि उसकी सुगन्ध चिन्ता की जड़ को मिटा देता है। विपन्न परिस्थितियों में मुस्कराता मुख मण्डल इस बात का प्रतीक है कि व्यक्ति जीवनीशक्ति अभी चुक नहीं गयी है और वह अपनी इस शक्ति के बल पर आपदा-विपदाओं से लड़ने के लिये कमर कसे तैयार है। मुस्कराता व्यक्तित्व अविजित और निश्चिन्त चेतना का प्रमाण है।

शोक-हानि, क्षति, मरण और आशा के विपरीत परिणामों से जन्य पराजित मनःस्थिति से ही उत्पन्न दशा है। ऐसी मनःस्थिति में भी मुस्करा पाना कठिन है। ये शत्रु विकार व्यक्तित्व की रीढ़ को इस प्रकार तोड़ देते और उसे अवसाद ग्रस्त मनःस्थिति में ला पटकते हैं कि सारा संसार ही उसे चिढ़ाता और शोक सागर में डुबाता लगता है। ऐसी दशा में मुस्कराने का आदी व्यक्ति अपने जन्मसिद्ध अधिकार प्रफुल्लता का वातावरण निर्मित कर सकता है। शोक निश्चय ही इस बात का प्रतीक है कि होने वाली क्षति मिलने वाली उपलब्धियों की तुलना में मन पर हावी हो गयी है और हावी तभी होती है जब कि उन्हें वहाँ से निमन्त्रण मिला हो। निमन्त्रण अर्थात् मन के स्वभाव से ही शोक-प्रियता। मानसिक प्रफुल्लता तो हर घड़ी, हर क्षण मुस्कराहट के रूप में व्यक्त होती रहती है इसलिये ऐसे चित्त के स्वामी के मुख मंडल पर मुस्कान का कल्लोल स्वाभाविक है और जहाँ मनोदशा-प्रफुल्लता की धारा वेगवान व्यक्ति से कल्लोल करती हुई बह रही हो, वहाँ शोक की चट्टानें भी टूटकर उस प्रवाह के साथ बह जाती हैं।

मनोजगत् को दग्ध करने वाली ऐसी ही एक विकृति का नाम है—आवेग। गम्भीर और मुँह चढ़ाकर रहने वाले व्यक्तियों से उनके मित्र और घनिष्ठ सम्पर्क में रहने वाले मित्र भी सम्हलकर व्यवहार करते हैं क्योंकि कहना मुश्किल है कौनसी बात उन्हें कब खला जाये ? हास-परिहास और हंसी-खुशी से टूटा हुआ उनका नाता उनका मन मस्तिष्क पर बोझिल भार बना रहता है। ऐसे व्यक्तियों को जरा-जरा सी बात पर खिन्न और रुष्ट होते देखा जा सकता है। परिणामस्वरूप आवेश और आवेग उन्हें सर्वाधिक विदग्ध भी करते रहते हैं।

जिन व्यक्ति से यह भी पूछा जाये कि क्या हाल-चाल है और उसकी मानसिक स्थिति तनावग्रस्त हो, स्वभाव अनावश्यक रूप से गम्भीर हो तो आपको क्या सम्बन्ध के उल्टे जवाब के सिवा उनसे क्या सही प्रत्युत्तर मिलेगा। सहज भाव में पूछा गया कुशल क्षेम भी उन्हें तो अपने ऊपर किया गया व्यंग लगेगा और यह असहज मनोदशा का ही परिणाम है। आवेग और घातक विकार इसी मोर्चे पर अपना पहला आक्रमण करते हैं।

असहज मनस्थिति के व्यक्ति ही जरा-जरा सी बातों को लेकर ईर्ष्या और बैर को पालते रहते हैं। इसके विपरीत यदि उनके मन में प्रफुल्लता और मुस्कान रूपी मधुर और सुगन्धित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बयार बहा करे, तो न केवल सभी प्रकार की चिन्ता और सभी प्रकार के शोकों से मुक्त हो जाये वरन् उन परिस्थितियों से जूझने के लिये अपने सैकड़ों सहयोगी मित्र भी तैयार करने में सफल हो जाये।

मुस्कराहट के अस्त्र से आवेगों के होने वाले आक्रमण का मुकाबला आसानी से किया जा सकता है। एक छोटा-सा प्रयोग करके यह अनुभव किया जा सकता है। दुकानदार हो तो ग्राहकों की शिकायत पर यदि वह अनुचित है तो जरा मुस्कराकर बात कीजिये वह ग्राहक सदा के लिये मित्र हो जायेगा। अधिकारी यदि किसी गलतफहमी या दूसरों के भड़काने पर झिड़क रहा हो तो उसका समाधान मुस्कराकर कीजिये, वह आपका मित्र बन जायेगा। यद्यपि इन सभी बातों का जवाब उन्हीं की भाषा में भी दिया जा सकता है परन्तु उसी भाषा में भले ही आपका पक्ष सच्चा और ठोस हो फिर भी उन व्यक्तियों की दृष्टि में आप अहंकारी और शत्रु की तरह हो जायेंगे। रोज-रोज की मीन मेख निरन्त मन को आवेगग्रस्त बनाये रखेगी सो अलग। इस प्रकार देखा जा सकता है कि एक अकेली मुस्कान कितने संकटों से बचा जाती है। देर से घर लौट रहे हैं, कार्यालय में किसी कारणवश काम निबटाने में देरी हो गयी और पत्नी घर पर इसका कारण पूछ रही है तो यह कहकर पत्नी का मन और न दुखायें कि तुम लोगों का भरण-पोषण करने के लिये मुझे दूसरों की गुलामी करनी पड़ती है इसलिये देर हो गयी वरन् जरा इस भाव को मुस्कराते हुये व्यक्त करके तो देखें कि नौकरी के काम में यदा-कदा विलम्ब होना भी स्वभाविक ही है। इतना सुनकर पत्नी के हृदय में प्रेम और स्नेह का एक सागर उमड़ उठेगा यह निश्चित है। और आवेगग्रस्त होने से खून जलेगा सो अलग।

मुस्कराहट पूर्ण व्यवहार और स्वभाव किस प्रकार मन को निर्भार और तरोताजा रखता है यह अब कहना न होगा ? इसके विपरीत यह जीवन में में रस भी घोलता है और उसे मधुर भी बनाता है।

बाहरी वातावरण मानसिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में ही बनता है और मन स्वस्थ सजग तथा तरोताजा हो तो प्रकृति भी अपने ही साथ मुस्कराती है और मुस्कान रूपी शिथिलासन से इस उपलब्धि का निरन्तर अर्जन करते रहा जा सकता है। हँसी-मुस्कुराहट के इन लाभों से अवगत होने के पश्चात् यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि स्वभाव को प्रफुल्ल किस प्रकार बनाया जाय।

वस्तुतः प्रफुल्ल रहना, हंसते-मुस्कराते रहना तक एक कला है और इस कला में वे लोग ही पारंगत हो सकते हैं, जो जीवन का उज्ज्वल पक्ष देखने के आदी हों या इस आदत को अपने स्वभाव का अंग बना लें। जेम्स एल्वर्ट ने सदा मुस्कराते रहने की कला का मर्म विश्लेषण करते हुये एक स्थान पर लिखा है "अगर तुम्हें दो बादल दिखायी पड़ें एक काला और एक उजला तो काले से निगाह हटाकर उजलों को देखते रहो और तुम सदैव मुस्कराओ।"

केवल वही दर्शनीय नहीं है जो अन्धकारमय और तमसाच्छन्न है। जीवन में विफलतायें, अनपेक्षित घटनायें और अकल्पित परिस्थितियाँ भी आती हैं। आना चाहिये भी अन्यथा जीवन की एकरसता ऊबा देने वाली सिद्ध होगी। जीभ को चखने के लिये एक ही एक स्वाद मिलें तो लाख भूख लगती रहे परन्तु एक स्थिति ऐसी अवश्य आ जायेगी, जब भूख सहना स्वीकार्य लगेगा परन्तु उस रस को चखने का जी न होगा। विभिन्नता प्रकृति का सिद्धान्त है परिवर्तन जीवन चक्र। जहाँ सब कुछ एक समान और ठहरा हुआ-सा हो, उसे चाहे जो कहा जाय जीवन्त और सचेत तो नहीं ही कहा जा सकता। जीवन के उज्ज्वल पक्ष की ओर इस दृष्टिकोण से ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है और फिर कोई असम्भव न होगा कि मुस्कराते हुये जिया न जा सके।

प्रफुल्लता के अर्जन हेतु मनोवैज्ञानिक एक वरणीय सलाह देते हैं। इस सलाह के अनुसार प्रयोग में एक दर्पण के सम्मुख बैठना होता है। दर्पण के सामने बैठकर अपनी छवि को निहारते हुये किसी हास प्रसंग का जो अपनी स्मृति में दबा पड़ा हो स्मरण करना पड़ता है। उस स्मृति के उभरकर आते ही चेहरे पर एक मुस्कान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खिल उठेगी। दर्पण में खिला हुआ मुख मण्डल देखकर आंतरिक आह्लाद की एक धारा उस समय फूट पड़ती है, जब प्रयोगकर्त्ता यह विचार करता है कि—"मैं इस मुस्कान के माध्यम से अपने आन्तरिक मन को एक स्वस्थ संकेत दे रहा हूँ। इस संकेत का विद्युतीय प्रभाव मेरे रोम-रोम को रोमांचित कर रहा है। मरे अवयव स्वस्थ होते जा रहे हैं और चेहरे की कान्ति प्रखर। अब मैं चिन्ता, शोक और आवेगों के आक्रमण के सम्मुख आत्मसमर्पण नहीं करूँगा वरन् उनका हँसते-खेलते सामना करूँगा।"

यह प्रयोग साधक के स्वभाव में एक प्रफुल्ल परिवर्तन लाता है और उसके मन को निर्भर, स्वस्थ, ताजा और उत्साहपूर्ण बनाने में सहायक सिद्ध होता है। एक विद्वान ने हंसी और मुस्कान के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुये लिखा है कि हंसी और मुस्कान ऐसी मिठास है, जो जीवन में घुल जाये तो जीवन रस नयी शक्ति सबलता और सामर्थ्य से सतेज हो उठती है। इस मधु का सेवन करने वाला व्यक्ति न कभी उदास होता है न निराश। न कहीं रुकता है और न ठिठकता। परिस्थितियों से गेंद की तरह खेलता हुआ सदा-सर्वदा आगे बढ़ता ही रहता है।

यह सच है कि संसार हंसते रहने वालों का साथी है। जो खुश और प्रसन्न है उसके दुःख दर्द में भी हजारों लोग भागीदार बनकर सम्मिलित होते हैं और उसे हल्का बनाते हैं किन्तु जो खिन्न और उदास होते हैं, उनकी हंसी-खुशी में भी कोई शरीक नहीं होता क्योंकि ऐसे लोग इन अवसरों पर भी अपने स्वभाव के अनुसार रोने का कोई बहाना खोज निकालते हैं। अन्ततः यह मानना ही पड़ेगा कि हँसी और मुस्कान मानव को ताजगी और स्फूर्ति से भर देने वाला एक प्रकृत्ति प्रदत्त वरदान है। जहाँ तक हो सके, उससे लाभ उठाने का प्रयत्न करना ही चाहिये।

सौन्दर्य का सच्चा स्वरूप

कुरूपता इस विश्व में किसी को भी प्रिय नहीं है। सुन्दर व्यक्ति की ओर ही नहीं, वस्तुओं को ओर भी लोग खिंचे चले जाते हैं। प्रातःकाल बगीचे में जब फूल खिले हुये होते हैं तो वे इतने सुन्दर लगते हैं कि आँखें फेरने का जी भी नहीं करता। प्रकृति जहाँ सुरभित, पुष्पित और पल्लवित होती है, झरने झरते हैं, पक्षी कूँकते हैं, वहाँ का दृश्य देखकर आत्म-विभोर हो उठते हैं। सौन्दर्य आत्मा की चिर-पिपासा है। सौन्दर्य में ही जीव को आनन्द मिलता है। सुन्दर बनने की अभिलाषा भी आध्यात्मिक है। इसलिये इसे प्राप्त करना मनुष्य का प्रकृति प्रदत्त स्वभाव ही है।

सौन्दर्य की परिभाषा करते हुये प्रसिद्ध कवि कीट्स ने लिखा है—"सौन्दर्य ही सत्य है और सत्य ही सौन्दर्य है।" इससे यह स्पष्ट है कि सत्यस्वरूप परमात्मा का प्रकाश ही सौन्दर्य के रूप में परिलक्षित होता है। अतः सौन्दर्य की कामना मनुष्य की आत्मिक आवश्यकता है। सौन्दर्य के बिना इस जीवन का महत्त्व भी कुछ नहीं है। सत्य, शिव आर सुन्दर ये सब परमात्मा के ही स्वरूप हैं इसलिये इन्हें प्राप्त करने का प्रयास करना परमात्मा को प्राप्त करने का ही प्रयास हुआ।

भूल यह है कि मनुष्य ने पदार्थ की गढ़न को सौन्दर्य मानकर उसका एक काल्पनिक ढाँचा बनाकर रक्खा है। परमात्मा अनित्य और सर्वकालिक है इसलिये बदलते रहने वाले स्वरूप को सौन्दर्य नहीं मानेंगे। स्वरूप में प्राण की आकर्षक स्थिति का नाम ही सौन्दर्य है। सौन्दर्य सत्य है इसलिये वह भौतिक नहीं हो सकता, अपवित्र नहीं हो सकता। विचारणीय है कि आज जो सौन्दर्य की परिभाषा की जा रही है क्या इसमें भी कुछ सत्यता है।

"आत्मकथा" में महात्मा गाँधी जी ने लिखा है—"वास्तविक सौन्दर्य हृदय की पवित्रता में है। बाह्य बनावट और प्रदर्शन से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह जो रूप की सजावट, वेष विन्यास में विचित्रता का प्रसार बढ़ रहा है यह आन्तरिक सौन्दर्य को छलता है, इससे बचना चाहिये।" डा. क्वार्ल्स का भी मत ऐसा ही है। वे लिखते हैं—"सुन्दरता का सद्गुणों के साथ संयोग होना, हृदय का स्वर्ग है। यदि उसके साथ दुर्गुण हैं तो वह आत्मा के नरक के समान है। मूर्ख लोग सौन्दर्य के बाह्य स्वरूप की पूजा करते हैं इसलिये वे निन्दा के पात्र बनते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आप खुलकर काम कीजिये। बँधे-बँधे से न रहिये, अपने हाथ-पाँवों को थोड़ा इधर-उधर हिलाइये डुलाइये। आपका रक्त संचालन ठीक रहेगा, नाड़ियाँ ठीक काम करेंगी, शरीर साफ रहेगा तो आपके शरीर में प्राण और ओज बना रहेगा। प्राणवान् व्यक्ति काले-कलूटे होने पर भी बड़े मोहक लगते हैं। बाहरी बनावट से थोड़ी देर के लिये भले ही प्रसन्न हो सकें अन्ततः कोई लाभ न निकलेगा। उद्विग्नतायें ही परेशान करती रहेंगी। फारसी कहावत है—"हाजते मश्शता नेस्त रूम दिलारम रा।" अर्थात् सौन्दर्य को सजावट की आवश्यकता नहीं होती। ऐसे ही सौन्दर्य को प्राप्त करने का प्रयास करें तो हम सच्चे सौन्दर्य पारखी माने जायेंगे।

स्वस्थ स्वभाव से सौन्दर्य मिलता है। मानसिक कमजोरियाँ ही कुरूपता का कारण है। भली आदतों का सम्बन्ध मनुष्य की मानसिक शुद्धता से है, मानसिक चेष्टायें सत्कर्मों में आनन्द लेती रहती हैं तो शरीर और मन की शक्तियाँ प्रखर बनी रहती हैं। इससे अपनी सुन्दरता भी अक्षुण्ण रहती है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि शक्तियों का संचय ही सौन्दर्यवान् होने का लक्षण है। दीन-दुर्बल और मानसिक उत्तेजनाओं में घिरे रहने वाले व्यक्तियों की न तो बाहरी सुन्दरता स्थिर रहेगी और न आन्तरिक ही।

सुन्दरता आपकी प्रसन्नता, मुस्कराहट, उत्तम स्वास्थ्य, आशायुक्त निश्चित जीवन, हर्ष और उल्लास में छिपी हुई है। अपने जीवन को मनहूस बनाना, साधनों वस्तुओं के लिये बुरी तरह रोते-रोते झींकते रहना बड़ा बुरा लगता है, ऐसे लोगों के पास किसी भी मनुष्य का बैठने का जी नहीं करता। हँसमुख व्यक्तियों को लोग हर वक्त घेरे रहते हैं क्योंकि उनके जीवन में उल्लास होता है। ऐसे भावों की स्थिरता सुन्दर बनने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। तनावपूर्ण मानसिक स्थिति एक प्रकार का विकार है, जिससे सौन्दर्ययुक्त चेहरों पर भी उदासी छाई रहती है। ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, घृणा, चिन्ता, उत्तेजना आदि से मनुष्य का व्यक्तित्व अनाकर्षक बनता है। इससे मनुष्य का आन्तरिक सौन्दर्य नष्ट होता है। इनसे दूर ही रहना चाहिये।

सौन्दर्य महानता का चिन्ह है। हिन्दुओं के देवी देवताओं के मुख पर एक प्रकार का प्रकाश दर्शाया जाता है इसे "तेजोवलय" कहते हैं। दूसरी संस्कृतियों में भी इसी तरह के मुख मण्डल चित्रित किये जाते हैं। इससे अनुमान होता है कि सौन्दर्य दैवी तत्व है और वह तेज तथा शक्ति के रूप में महापुरुषों में विद्यमान होता है। मन की ओजस्विता, मृदुता और दया भाव से इस सौन्दर्य का आभास होता है। वैसी ही विचारणायें अपनाकर हम भी अपनी तेजस्विता जागृत करें तो सौन्दर्य का संतोष हम भी प्राप्त कर सकते हैं। मनुष्य की गति सुन्दर वस्तुओं से सुन्दर भावनाओं की ओर, सुन्दर मनोभावों से सुन्दर जीवन की ओर होती है। जीवन की सुन्दरता ही पूर्ण सौन्दर्य के दर्शन कराने में समर्थ होती है।

सुन्दर गतिविधियों का तात्पर्य मनुष्य की सरलता से है। उसकी निश्छलता, सरसता, गुण-ग्राहकता और मधुरता पर लोगों का अन्तःकरण बरबस ही आकर्षित हो जाता है। खूबसूरत डाकू के मुख पर जो आतंक का भाव छाया रहता है, उससे लोग भयभीत हो जाते हैं, इस सौन्दर्य को कुटिलता मानकर लोग पास भी नहीं जाते। कामुकता भी इसी तरह सौन्दर्य का महान् दुर्गुण है। आकर्षक व्यक्तित्व तो शील और सद्गुणों के प्रकाश से बनता है। प्रेम में, दया और ईमानदारी में जो सुन्दरता भरी है लोग उसी से प्रभावित होते हैं। नकली चेहरे सजाकर बच्चों का मनोरंजन करने से अधिक लाभ नहीं हो सकता। शील स्वभाव में वह चुम्बकत्व होता है, जो सभी के दिलों को मोह लेता है। भलमनसाहत लोगों को प्रिय लगती है। इन्हें ही सौन्दर्य के उपकरण मान सकते हैं।

प्रेम-भावनाओं का सौन्दर्य बड़ा आकर्षक है। ऋषियों के आश्रमों में प्रेम और आत्मीयता के प्रबल संकल्प गूँजा करते थे। इसी कारण वन्य पशु भी निर्भय होकर वहाँ विचरण करते थे। ऋषियों के बालक स्वच्छन्दतापूर्वक हिंसक पशुओं से खेला करते थे और उनसे मैत्री स्थापित कर लेते थे। आन्तरिक सौन्दर्य की आभा बोलती थी वहाँ, इसी से आकर्षित होकर जीव-जन्तु भी वहाँ रहना अधिक पसन्द किया करते थे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डा. ड्राइडेन का यह कथन नितान्त सत्य है—"जब सौन्दर्य रक्त में उबाल पैदा करता है तब प्रेम मस्तिष्क को बहुत ऊँचा उठा देता है।" सौन्दर्य भेद-भाव की कटुता का बहिष्कार करता है। इसी एक सार्वभौमिक सत्य पर इस संसार की व्यवस्था अनेक युगों से चलती चली आ रही है और जब तक सौन्दर्य का एक भी कण इस धरती पर जीवित रहेगा, यह क्रम निरन्तर इसी तरह चलता रहेगा। सृजन की इस शक्ति को बनाये रखने के लिये प्रेम, दया, सेवा उदारता, सहयोग, करुणा, स्वच्छता आदि दैवी गुणों का अभ्यास बनाये रहना होगा।

सुन्दरता बढ़ाइये पर साथ ही आन्तरिक पवित्रता भी

अनेक आध्यात्मिक गुणों में एक गुण सौन्दर्य और पवित्रता भी है। अपने आप को शुद्ध रखना तथा शृंगार प्रत्येक मनुष्य को प्रिय है। उसी प्रकार शुद्ध, शृंगारयुक्त दूसरे मनुष्य भी बड़े प्रिय लगते हैं चाहे वह किसी अन्य जाति के ही क्यों न हों। गन्दे तथा फूहड़ व्यक्तियों के पास किसी को बैठने का भी जी नहीं करता। अपने प्रियजनों की सन्तुष्टि के लिये या आत्मतुष्टि के लिये ही क्यों न हो सजावट देखकर सभी का मन मुग्ध हो जाता है। शृंगार आत्मा का प्रिय विषय है, पवित्रता उसका प्रकाश है। अतः इन्हें प्राप्त कर उसका सुखी होना स्वाभाविक ही है।

धर्म, जिस प्रकार मनुष्य मात्र की कल्याण और भलाई के व्यापक अर्थ में लिया जाता है, सम्प्रदाय या वर्ग विशेष संकीर्णता उसे अपवित्र करती है। उसी तरह अपना मैला शरीर शुद्ध कर लेना, या केवल स्वच्छ कपड़े पहन लेना ही शुचिता और सौन्दर्य का अर्थ नहीं है। देह को साफ करने का कार्य तो पशु-पक्षी भी कर लेते हैं। सुन्दर शृंगार तो वेश्यायें भी कर लेती हैं। तरह-तरह का वेशविन्यास बनाकर अनैतिक आचरण करने वालों के लिये तो शृंगार ही एक प्रकार का महामन्त्र है, किन्तु यह वास्तविक शृंगार नहीं, आत्मघात है। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार की शुद्धि एवं शृंगार कर लेना विरले प्रेमी सज्जनों को आता है। शृंगार लौकिक कामनाओं का पूरक नहीं, आत्मिक सद्गुणों का परिष्कार है। शुद्धि का अर्थ बाह्य शुद्धि नहीं, आन्तरिक पवित्रता है।

महात्मा सुकरात की सूरत-शक्ल अच्छी नहीं थी पर उन्होंने इसकी शिकायत कभी भी परमेश्वर से नहीं की। वे प्रार्थना किया करते थे 'प्रभो ! आप मुझे भीतर से सुन्दर बना दो।" उनकी आन्तरिक सुन्दरता से ही आकृष्ट होकर बरबस लोग उनकी ओर खिंचे हुये चले आते थे। आत्मा के शृंगार में सचमुच एक ऐसा अमृत निर्झर टपकता है, जिसका मधुपान कर मनुष्य का जीवन आनन्द-विभोर हो जाता है। बाह्य शुद्धि और शृंगार में बहुत थोड़ा आकर्षण होता है किन्तु जिसने अन्तःकरण का तरह-तरह के सद्गुणों के आभूषणों से शृंगार करना सीख लिया उसका जीवन सार्थक हो जाता है। जो भीतर से स्वच्छ होते हैं, उन्हीं का बाह्य प्रकाश भीतर के प्रकाश से चमक कर लोगों के नेत्र और हृदय दोनों को प्रकाशित कर देता है। शरीर और आत्मा दोनों से देवत्व की आभा प्रस्फुटित हो इसके लिये आन्तरिक सौन्दर्य उतना ही आवश्यक है, जितना बाह्य। दोनों के समन्वय से ही मनुष्य का जीवन पूर्ण पवित्र बनता है।

शरीर के प्रत्येक अंग को जल, मिट्टी साबुन आदि के द्वारा शुद्ध रखना मनुष्य की बाह्य पवित्रता है। स्वच्छ और सुन्दर वस्त्र, साधारण आभूषण यह भी बाह्य शृंगार में आते हैं किन्तु आन्तरिक सौन्दर्य के अभाव में यह शृंगार अधूरा है। मन, बुद्धि तथा अहंकार का भी उतना ही परिमार्जन होना चाहिये। नेत्रों में स्वाभाविक पवित्रता हो जिसमें हर स्त्री-पुरुष को माता-पिता सुहृद-सुजन के रूप में देख सकें। नेत्रों से फूटने वाली धूर्तता, कामुकता, अपवित्रता रहते हुये सारी बाह्य सफाई धोखा मात्र ही कही जायेगी। उसी प्रकार शुद्ध और सरल वाणी का प्रयोग हो। जो सुने वह भी उतना ही पवित्र हो जितना कहने वाला। इस तरह बाह्याभ्यान्तरिक पवित्रता से ही मनुष्य के पवित्र जीवन का सूत्रपात होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

संध्या वन्दनादि धार्मिक अनुष्ठानों का प्रथम मन्त्र है—

अपवित्रः पवित्रोवाऽसर्वावस्थांगतोऽपिवा।
यः स्मरेत्पुण्डरी कक्षो सः बाह्याभ्यान्तरः शुचिः।।

अर्थात्—अभी तक मेरी अपवित्र या पवित्र कोई भी अवस्था रही हो अब परमात्मा का स्मरण करने से मैं बाह्य और आन्तरिक दृष्टि से पवित्र हो गया हूँ।"

उपरोक्त सूक्त में दो बातें बताई गई हैं (१) पहली यह कि परमात्मा की उपासना के लिये पवित्रता अनिवार्य है। (२) वह पवित्रता बाह्य भी हो और आन्तरिक भी। अशुद्ध वस्तुओं का त्याग करना और शुद्ध वस्तुओं को धारण करना यह मनुष्य के व्यक्तित्व की कसौटी है इसके बिना वह आध्यात्मिक मार्ग पर एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकता।

इससे आवश्यक हो जाता है कि मनुष्य अपने को बाहर और भीतर दोनों ओर से स्वच्छ और पवित्र रखें। शरीर की, वस्त्रों की, घर की, खान-पान तथा रहन सहन की शुद्धि मन की स्वस्थ अवस्था की द्योतक होती है। पर गन्दगी मन की अस्वस्थता को प्रकट करती है। इससे स्वास्थ्य की खराबी के साथ ही व्यावहारिक जीवन में भी खराबी उत्पन्न होती है। किसी से सम्मान नहीं मिलता, कोई प्रेम नहीं करता, कोई मैत्री भी उन आदमियों से नहीं रखना चाहता जो बाह्य शुद्धि पर ध्यान नहीं देते।

सौन्दर्य-प्रिय व्यक्ति जिस तरह शरीर को शुद्ध रखकर उसका वस्त्राभूषण से श्रृंगार करते हैं, उसी प्रकार अन्तरंग जीवन को भी सद्गुणों सद्भावों, सद्ज्ञान एवं आत्माभिमान से सजाया जाता है। बाहर और भीतर दोनों की शुद्धता पर प्रकाश डालते हुये स्वायंभु मनु ने लिखा है—

अद्भिर्गात्रिणिं शुद्धयन्ति मनः सत्येन शुद्धयति।
विद्या तपोभ्यां भूतात्मा, बुद्धिर्ज्ञानेन शुद्धयति।।

(मनुस्मृति ५।१०६)

अर्थात् जल से शरीर को, सत्य से मन को, विद्या और तपश्चर्या से आत्मा को तथा ज्ञान से बुद्धि को शुद्ध बनाना ही सच्चा बाह्य और अन्तरंग श्रृंगार है।"

मनुष्यों के स्वभाव को मलिन करने वाले राग, ईर्ष्या, अत्याचार, चिकीर्षा द्वेष और असूया ये छः प्रबल बुराइयाँ शास्त्रों में बताई गई हैं, इनको शुद्ध किये बिना अन्तरिक सौन्दर्य के दर्शन नहीं होते। बाह्य पवित्रता के लिये भी उसी तरह स्नान, शौच, वस्त्र, आहार, आवास आदि की शुद्धता चाहिये। पहली आवश्यकतायें आत्मा के लिये है, दूसरी शरीर के लिये। आत्मा और शरीर दोनों जब स्वच्छ, पवित्र और रसयुक्त बनते हैं, तभी वास्तविक श्रृंगार के दर्शन हाते हैं।

सांसारिक भोगों की दृष्टि से बाह्य स्वच्छता पर प्रायः अधिकांश ध्यान देते हैं, किन्तु आध्यात्मिक श्रृंगार के बिना उस स्वच्छता का कोई आनन्द नहीं मिल पाता। मनुष्य का मन बड़ा चंचल होता है। इन्द्रियों के वशीभूत होकर मनुष्य राग-द्वेषादि कुप्रवृत्तियों में फँसकर अनिष्ट करता रहता है। मन की पवित्रता के लिये ईश्वर आराधना, सत्पुरुषों के सत्संग एवं सत्साहित्य के स्वाध्याय की बड़ी आवश्यकता होती है। पवित्र मन में अनेक गुणों का विकास स्वतः होने लगता है। लौकिक वस्तुओं को लेकर अभिमान, मोह, ममता, लोभ, क्रोध आदि द्वेष दुर्विकारों का त्याग ही अन्तर्जीवन की शुद्धि है। इसी प्रकार अपने अन्तःकरण में श्रद्धा, भक्ति, विवेक, सन्तोष, क्षमा, उदारता, विनम्रता, सहिष्णुता एवं अविचल प्रसन्नता का धारण करना ही सुन्दर श्रृंगार है। केवल बाह्य शरीर के श्रृंगार पर ध्यान देना, मनुष्य के स्थूल दृष्टिकोण का परिचायक है। आत्मज्ञान के साधकों तथा श्रेय के उपासकों के लिये आन्तरिक श्रृंगार की महत्ता अधिक है।

बाह्य सौन्दर्य की आवश्यकता आन्तरिक सौन्दर्य के साथ जुड़े रहने में ही है। अन्यथा वह उच्छृंखल बन जायेगा और संसारी मनुष्यों को रिझाने से परतन्त्रता भोगी बनना पड़ेगा। इस स्थिति के कारण ही आज अधिकांश पाप के शिकार हो रहे हैं। यहाँ बाह्य जीवन के श्रृंगार पर आक्षेप करने का कोई उद्देश्य नहीं है पर यह स्पष्ट है कि बाह्य श्रृंगार ही जीवन का उद्देश्य नहीं बन जाना चाहिये।

श्रृंगार और शुद्धि आत्मा के विकास के विषय हैं, इसमें सन्देह नहीं है। किन्तु अपना दृष्टिकोण एकांगी न होना चाहिये। हमें सौन्दर्य के सच्चे स्वरूप को समझने का प्रयत्न करना चाहिये। मनुष्य की बाह्य पवित्रता से आन्तरिक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शुद्धता का महत्त्व कम नहीं है वरन् यह दोनों ही एक-दूसरे की पूरक हैं। मनुष्य का जीवन इन दोनों में उभयनिष्ठ होना चाहिये तभी श्रृंगार की पूर्णता का आनन्द प्राप्त होता है। यह आनन्द मनुष्य को मिल सकता है पर इसके लिये अपनी आत्मा को सद्गुणों एवं सद्भावनाओं से ओत-प्रोत रखने की जरूरत होती है। शुद्ध शरीर, स्वच्छ मन और सद्चित्त वृत्तियों के द्वारा ही यह संयोग प्राप्त किया जा सकता है।

सौन्दर्य की स्वाभाविकता और उसका आधार

संसार में सभी लोग सुन्दर होना और बने रहना चाहते हैं। असुन्दरता अथवा कुरूपता सभी को अप्रिय है। कोई नहीं चाहता कि वह कुरूप हो अथवा कुरूप दिखलाई दे। अपनी इस इच्छा को पूरा करने के लिये लोग तरह-तरह के कृत्रिम साधनों का सहारा लेते हैं। आज संसार में प्रसाधन सामग्री बनाने वाले सैकड़ों कारखाने चल रहे हैं। बाजारों में सैंकड़ों दुकानें प्रसाधन सामग्री बेचती देखी जा सकती हैं। लोग अपनी आयु का एक बड़ा अंश इन प्रसाधनों पर खर्च करते रहते हैं। लेकिन तब भी वे संतोषजनक ढंग से सुन्दर नहीं बन पाते।

इस असफलता का कारण केवल यही है कि जिन साधनों, प्रसाधनों और उपकरणों में सुन्दरता की खोज की जा रही है, वह उनमें होती ही नहीं है। वास्तविक सुन्दरता साधनों की अनुगामिनी नहीं होती, उसका आधार तो कुछ और भी होता है। वास्तविक सौन्दर्य का आधार तो स्वस्थ शरीर, निर्विकार मन और पवित्र आचरण होता है। सुन्दरता की लिप्सा में जो लोग प्रसाधनों का संहारा लेते हैं वे अपने स्वाभाविक शरीर और धन का दुरुपयोग ही किया करते हैं। क्रीम से लिपा और पाउडर से पुता मुख पता नहीं किन लोगों को अच्छा लगता होगा। जब तक कोई व्यक्ति शरीर के आरोग्य, उसकी सुचारु कार्य क्षमता और मन की महानता का प्रमाण नहीं देता, उसका सौन्दर्य नहीं हो पाता।

हाथी-सा शरीर लेकर भी जो मनुष्य कुछ सराहनीय कार्य नहीं कर पाता, अपनी शक्ति प्रकट का सदुपयोग कर किसी का भला नहीं करता तब उसका शरीर कितना ही हृष्ट-पुष्ट और बलवान् क्यों न हो असुन्दर ही माना जायेगा। मन का सौन्दर्य सद्विचारों और वृत्तियों की पवित्रता से प्रकट होता है। मन मलीन होने, वृत्तियाँ आसुरी होने पर किसी का नाक-नक्शा कितना ही मनोहर क्यों न हो, सुन्दर नहीं कहा जा सकता। उसे सुन्दरता का हर पारखी कुरूप ही मानेगा और कहेगा।

सुन्दरता की तरह कुरूपता भी कोई एक तत्व नहीं है। उसके लक्षण असुन्दर मुख, काला रंग अथवा शरीर का दुबला-पतला होना नहीं है। बहुत-से काले रंग और साधारण शरीर वाले बड़े ही सुन्दर और आकर्षक होते हैं। कुरूपता मनुष्य के चारित्रिक कलुष के सिवाय और कुछ नहीं है। इसे एक मानसिक रोग भी माना जा सकता है। जिनका हृदय तरह-तरह की कलुषित भावनाओं, ईर्ष्या, द्वेष और काम, क्रोध से जलता रहता है, उनके मुख पर उसकी काली छाया कुरूपता बनकर छाई रहती है।

ऐसे एक नहीं हजारों लोग संसार में देखे जा सकते हैं, जिनका रंग गोरा चिट्टा और नाक-नक्शा भी अच्छा होता है लेकिन सुन्दरता के स्थान पर कुरूपता ही उनके मुख पर छाई दीखती है। यह और कुछ नहीं उनके मलीन हृदय की छाया ही होती है। शारीरिक स्वास्थ्य का भी सुन्दरता से कम सम्बन्ध नहीं होता। प्रायः देखा जाता है कोई व्यक्ति काफी सुन्दर होते हैं। लेकिन कुछ दिनों में वे ही व्यक्ति यदि किसी रोग से ग्रसित हो जाते हैं तो देखने में बड़े कुरूप और दयनीय लगते हैं। स्थायी अस्वास्थ्य की तो बात छोड़ दीजिये। साधारण अस्वास्थ्य तक मनुष्य को कुरूप बना देता है। जैसे कल तक एक व्यक्ति देखने में सुन्दर और आकर्षक था, किन्तु आज उसे ज्वर आ गया तब भी आकार-प्रकार में कोई अन्तर न आने पर भी उसके मुख की आभा मलीन हो जाती है। वह औरों को ही नहीं अपने को स्वयं कुरूप लगने लगता है। शारीरिक स्वास्थ्य का सुन्दरता से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संयम का जहाँ स्वास्थ्य से सम्बन्ध है, वहाँ सुन्दरता से भी सीधा सम्बन्ध होता है। जो व्यक्ति असंयमी और व्यसनी अथवा विषयी होते हैं, यदि वे स्वस्थ रहे हैं, तो स्वास्थ्य तो क्रमशः गिरता है लेकिन सौन्दर्य जल्दी ही जाता रहता है। असंयमी व्यक्ति जहाँ जवानी में ही कुरूप और आनाकर्षक दीखने लगता है, वहाँ संयमी व्यक्ति वृद्धावस्था में भी सुन्दर और आकर्षक होते रहते हैं। असंयम और व्यसन वासनायें सुन्दरता की स्वाभाविक शत्रु होती हैं।

जो स्वस्थ, संयमी और निष्कलुष मन वाला होता है, वह निश्चय ही सुन्दर दीखता है। फिर चाहे वह रंग से काला और शरीर से साधारण स्वास्थ्य वाला ही क्यों न हो ? पशु-पक्षी और पेड़-पौधे भी जब तक निरोग और प्रसन्न रहते हैं, बड़े सुन्दर लगते हैं। किन्तु इसके विपरीत स्थिति में आते ही अनाकर्षक हो जाते हैं। जिन हिरनों और पक्षियों की सुन्दरता उनकी स्वतन्त्र जंगली स्थिति में छलकती रहती है, पाल या पकड़ लिये जाने पर वह बात नहीं रहती। जंगल के शेर, चीते, भालू आदि जानवर जितने सुन्दर और आकर्षक दीखते हैं, उतने सरकस और चिड़ियाघरों के नहीं। जबकि उन्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं दिया जाता और बड़े प्यार और परवाह से पाले जाते हैं।

इसका कारण यही होता है कि पराधीनता के कारण वे अपनी मौज से खेल-कूद और भाग-दौड़ नहीं सकते। बन्धन के कारण उनका स्वास्थ्य और मन उद्विग्न रहा करता है। इसी अस्वास्थ्य और निषाद की छाया उन पर मँड़राती हुई उनका आकर्षण हरण कर लेती है। कुत्ते, बिल्ली, बकरी, भेड़, यहाँ तक कि गधे और सुअरों आदि पालतू जानवरों के बच्चे तक, जब तक वे अपनी मौज में खेलते और खुश होते हुये स्वस्थ रहा करते हैं, बड़े प्यारे और सुन्दर लगते हैं। किन्तु ज्योंही किन्हीं कारणों से उनकी यह विशेषता नष्ट हो जाती है, लोग उन्हें नापसन्द करने लगते हैं। सुन्दरता का रहस्य उत्तम स्वास्थ्य, निश्चिन्त जीवन, हर्ष और उल्लास में छिपा हुआ है। जो इन गुणों से रहित है, वह कितनी ही सुगढ़ शरीरयष्टि और साफ नाक-नक्शे वाला क्यों न हो, सुन्दर दिखलाई नहीं दे सकता।

एक दम्पत्ति जब वे नये-नये ब्याह कर आते हैं एक-दूसरे को बड़े ही सुन्दर, आकर्षक और प्यारे लगते हैं। किन्तु जब कुछ दिनों बाद उनमें आपस में कलह और कुढ़न रहने लगती है, तब उनका सारा सौन्दर्य और आकर्षण समाप्त हो जाता है। पारस्परिक प्रेम भी कम होने लगता है। ऐसा इसलिये होता है कि वाद-विवाद, कलह, कलेश और आपसी कुढ़न उनके तन-मन को अस्वस्थ कर देती है, उनकी प्रसन्नता को छीन लेती है। इस प्रकार सुन्दरता का आधार समाप्त हो जाने से वह भी समाप्त हो जाती है।

इनसे भिन्न कुछ दम्पत्ति ऐसे भी होते हैं जो आजीवन एक-दूसरे के लिये सौन्दर्य आकर्षण और प्रेम के पात्र बने रहते हैं। बुढ़ापे तक में वे एक-दूसरे को नवीन जैसे लगते हैं। इसका कारण यही होता है कि वे कभी भूलकर भी परस्पर न तो लड़ते-झगड़ते हैं और न कलह क्लेश ही करते हैं। उनका मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य सुरक्षित रहता है। इस प्रकार वे आजीवन सुन्दर और आकर्षक बने रहते हैं।

जो व्यक्ति आकार, प्रकार और रंग-रोगन से अच्छे होते हुये भी अनाकर्षक दीखें तो समझ लेना चाहिये कि वे निश्चय ही अस्वस्थ हैं। यदि उनका शरीर किसी रोग से ग्रसित नहीं है तो अवश्य ही उनका मन, चिन्ता, उद्वेग, उत्तेजना, तनाव, ईर्ष्या-द्वेष आदि किसी न किसी मानसिक व्याधि से ग्रसित है। यदि वे इसको अपने चेतन मन में अनुभव नहीं कर पाते तो भी यह व्याधि उनके मनचेतन में लगी होती है। जब भी कोई व्याधि मन या तन में लगी होगी, मनुष्य की सुन्दरता नष्ट हो जाती है। सुन्दरता का रहस्य स्वस्थ तन और प्रसन्न मन में निवास करता है।

सौन्दर्य वर्धन अथवा उसे उत्पन्न करने के लिये कृत्रिम साधनों पर निर्भर होना पैसे की बरबादी के साथ अपने में एक मिथ्या सन्तोष पाल लेना है। प्रसाधनों से लिपे-पुते और उपकरणों से सजे लोग अपने मन में यह झूँठा संतोष भले रक्खें रहें कि वे सुन्दर दीख रहे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं। वस्तुतः वे दीखते हैं असुन्दर ही। कृत्रिम प्रसाधन वास्तविक सुन्दरता की प्राप्ति नहीं करा सकते। बहुत बार तो वे व्यक्ति की अपनी सुन्दरता भी नष्ट कर देते हैं। ऐसे, बहुत-से स्त्री-पुरुष देखे जा सकते हैं, जो कमोवेश सुन्दर होते हैं, लेकिन सुन्दरता बढ़ाने या फैशन दिखलाने के लिये प्रसाधनों और उपकरणों का प्रयोग करते रहते हैं। इस निरर्थक बात से उनकी अपनी सुन्दरता भी मारी जाती है। जब वे प्रसाधन मुक्त होते हैं तो उसकी अपेक्षा कहीं ज्यादा सुन्दर लगते हैं जबकि वे प्रसाधन भुक्त होते हैं।

अभिनेताओं जैसी साज-सज्जा बनाये रहने से सौन्दर्य में वृद्धि नहीं होती बल्कि गाँठ की सुन्दरता भी कम हो जाती है। बहुत बार देखा जा सकता है कि जो स्त्री-पुरुष सुन्दर होने पर भी और अधिक सुन्दर दीखने के लिये प्रसाधन प्रयोग करते हैं फिर वे उनके बिना भद्दे और कुरूप लगने लगते हैं। पाउडर और क्रीम, लाली और नाखूनी प्रयोग करने वाली स्त्रियाँ जब किसी कारण से उसका उपयोग नहीं कर पातीं तो उनका चेहरा और हाथ-पैर बड़े भद्दे लगने लगते हैं। बात यह होती है कि क्रीम-पाउडर से चेहरे का स्वाभाविक रंग और उसकी स्निग्धता नष्ट हो जाती है। नाखूनों और आँखों का रंग मारा जाता है। वे चितकबरे और विवर्ण हो जाते हैं। किसी कारणवश जब वे क्रीम पाउडर और लाली का प्रयोग नहीं कर पातीं तो उनके वे भाग शेष शरीर से भिन्न तथा मंद रंग वाले होने से असंगति उत्पन्न कर देते हैं और तब उनका चेहरा बड़ा भद्दा, उजड़ा-उजड़ा-सा दीखने लगता है। कृत्रिम प्रसाधनों का प्रयोग लोगों की अपनी सुन्दरता भी नष्ट कर देते हैं। इनका क्रीतदास बन जाना अपने सौन्दर्य और आकर्षण से शत्रुता करना है।

यदि आप चाहते हैं कि आप सुन्दर दीखें और आपका सौन्दर्य स्थायी बने तो कृत्रिम साधनों को छोड़कर प्राकृतिक उपायों पर आ जाइये। परिश्रम अथवा न्याय द्वारा अपने शरीर को हृष्ट-पुष्ट, सुडौल और स्वस्थ बनाइये। सारे विकार और विजातीय तत्व निकालकर फेंक दीजिये। साधारण स्वास्थ्यदायक भोजन करिये। दैनिक चर्या में नियमों का पालन करिये। आपको सौन्दर्य का पहला आधार आरोग्य प्राप्त होगा। संयम और ब्रह्मचर्य व्रत का निर्वाह करिये, विषयों और व्यसनों से अपना पीछा छुड़ाइये। आप में ओज नामक तत्व का उदय होगा, जो स्वयं ही एक सौन्दर्य का प्रकार है।

तन के साथ मन का भी सुधार करिये। काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, चिन्ता, उद्वेग, कलह-क्लेश, क्षेम आदि मानसिक रोगों को निकाल डालिये और उनके स्थान पर प्रसन्नता, प्रसाद, हर्ष, उल्लास तथा निश्चिन्तता की वृत्तियाँ प्रबल बनाइये। संसार की सारी कुरूपताओं से सम्बन्ध तोड़कर, फिर चाहे वे चरित्र सम्बन्धी हों अथवा सम्पर्क सम्बन्धी हों, सुन्दरताओं से सम्पर्क स्थापित करिये। निश्चय ही आप में सौन्दर्य की वृद्धि होगी और यह स्थायी भी बन जायेगा।

सौन्दर्य की परख

सौन्दर्य वस्तुतः सुस्वास्थ्य की अनुकृति है। स्त्री हो या पुरुष, जिसका शरीर निरोग होगा, रक्त की न्यूनता न होगी, व्यायाम से मांसपेशियाँ सुगठित होंगी, वह चेहरे की बनावट साधारण होने पर भी सुन्दर लगेगा। फूल कितने ही किस्म के होते हैं। जब वे खिली हुई स्थिति में होते हैं तो सभी सुन्दर लगते हैं। किसी एक की तुलना दूसरे से नहीं हो सकती है। बनावट में भिन्नता रहने पर भी हर किसी में ताजगी और सुगन्ध सौन्दर्य निखार देती है। मुरझाया हुआ अथवा कुम्हलाया हुआ फूल प्रकृतितः सुन्दर लगने पर भी निस्तेज और कुरूप लगने लगता है। समय पर सभी वृद्ध होते और बीज रूप में परिणत होते हैं। सुन्दरता घटती है तो उपयोगिता बढ़ जाती है। अल्हड़ आयु में प्रेम, उपेक्षा और घृणा के आँधी-तूफान आते रहते हैं। किन्तु कोमलता घट जाने के स्थान पर प्रौढ़ता और परिपक्वता आ जाती है। जो निश्चय होते हैं, वे अटल रहते हैं। यह परिपक्वता अधकचरे सौन्दर्य की अपेक्षा मनोरम भले ही न लगे पर अल्हड़ता युक्त सौन्दर्य में परिपक्वता नहीं होती।

फूलों में कोमलता और सुगन्ध तो अधिक होती है, पर इस वय में उन फलों का उद्भव नहीं होता, जो मीठे भी होते हैं और मूल्यवान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी। सौन्दर्य की अपनी परख भी है, वह कसौटी सहज ही विकसित नहीं होती। किसी को नर्तकी मनभावन लगती है तो किसी को बच्चों का भोलापन। रूप, रंग के पारखी स्थिरमति नहीं होते, क्योंकि उससे भी अधिक आकर्षण जहाँ कहीं दीखता है वे भौंरा और तितली की तरह अपना दृष्टिकोण बदल देते हैं और कुछ क्षण पहले जिसे सर्वोत्तम की उपाधि देते थे, वही तुलनात्मक दृष्टि से अधिक आकर्षक के सामने फीका, नीरस और उपेक्षणीय लगने लगता है। पर जिनके साथ मैत्री, वफादारी एवं जिम्मेदारी के आधार पर चुनी गई है, उनसे ऐसे परिवर्तन की आशंका नहीं रहती।

आँखें रंग रूप की ओर आकर्षित होती हैं और साज-सज्जा के प्रति अपनी पसन्दगी को मान्यता देती हैं। पर जिस आधार पर यह आकर्षण उभरा था, उसके तीनों स्तम्भ अस्थिर हैं। स्वास्थ्य में गड़बड़ी आने या आयु बढ़ने पर चेहरे की चमक चली जाती है। तुलनात्मक दृष्टि से कोई अन्य सुहावना लगने लगे या अपनी ही स्थिति भौंड़ी बन जाय तो दूसरे पक्ष की उपेक्षा होने लगती है। आँखों के सौन्दर्य में यह शर्त है कि वह दोनों ओर से सुहावना लगे। यह पसन्दगी अनेक कारणों से बदल सकती है, व्यवहार में अन्तर आने पर भी। इसलिये सुन्दरता की परख करते समय नख-शिख को ही नहीं, व्यक्तित्व की परिपक्वता और वरिष्ठता को भी देखा जाना चाहिये। ऐसे ही निर्णय चिरस्थायी और फलप्रद होते हैं।

जो सुन्दरता को बहिरंग मात्र से आँकते व भौंरों की भाँति उस पर मँड़राते हैं, उनका भावावेश समय के प्रवाह में बह जाता है। वस्तुतः सौन्दर्य अन्तरात्मा के शाश्वत सच्चिदानन्द स्वरूप की अभिव्यक्ति ही है। जो आत्मा के सौन्दर्य विचारों की उत्कृष्टता को समझता व उनका मूल्यांकन करना जानता है, वही सच्चा सौन्दर्य पारखी है।

सौन्दर्य : कृत्रिम तथा वास्तविक

सुन्दर वस्तु सभी को प्रिय लगती है। सुन्दर कपड़े या खिलौने को छोटे बालक भी लपककर पकड़ते हैं। प्राणियों के सम्बन्ध में भी यही बात है। मोर, हंस, हरी चिड़िया जैसे पक्षियों की हलचलें देखते रहने को मन करता है। वन जीवों में से कोई बड़े सुहावने होते हैं। उन्हें पकड़ा नहीं जा सकता तो देखते रहने के लिये तो जी करता ही है। कुत्ते, बिल्ली के बच्चे तक को गोदी में खिलाने की इच्छा होती है। प्रकृति का सौन्दर्य देख सकने वालों के तो नेत्र ही नहीं अन्तरंग की भाव सम्वेदना तक पुलकित हो उठती है।

मनुष्य की सौन्दर्यप्रियता तो प्रख्यात है। वह दूसरे सुन्दर दीखने वालों के प्रति आकर्षित होता है, उनके सान्निध्य के लिये ललचाता है। उठती आयु की चमक-दमक सभी को आकर्षित करती है। विवाह की चर्चा चलने पर वर-वधू प्रधानतया साथी के बारे में कल्पना यही सँजोये रहते हैं कि वह सुन्दर हो। विशेषतया मनचले लड़कों का तो यही आग्रह रहता है। वे माँ-बाप तक की सलाह नहीं मानते। अपनी आँखों से देखकर अपनी पसन्द की वधू चुनने के लिये अड़े रहते हैं। यदि सुसमपन्न सुयोग्य और कमाऊ हुआ तो हठ उसी की निभती है। भले ही वह स्वयं कुरूप ही क्यों न हो। यही इच्छा विवाह योग्य कन्याओं की भी होती है। भले ही विवशतावश जहाँ अभिभावकों ने कन्यादान किया है, उसी के पीछे-पीछे चल दें।

सौन्दर्य का एक आकर्षण है चुम्बकत्व, जो दूसरों को अपनी ओर खींचता है। इस खिंचाव से प्रेरित होकर कामुकता को भी उत्तेजना मिलती है। निकटता के प्रलोभन में कई आवेशग्रस्त होकर अपना बहुत कुछ गँवा भी बैठते हैं और ठगे जाने पर पीछे पछताते हैं। पतंगे का दीपक पर जल मरना प्रसिद्ध है।

दूसरे सुन्दरों की समीपता ढूँढ़ने की तरह अपने आपको अधिक सुन्दर बनाने के लिये कुछ विवेकवानों को छोड़कर सभी प्रयास करते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चेहरे की बनावट को बदल सकना तो मुश्किल है पर साज-सज्जा के आधार पर शरीर को अधिक आकर्षक अधिक उत्तेजक बनाने के प्रयत्न में संलग्न अधिकांश नर-नारी देखे जाते हैं। कीमती कपड़े, उनके चित्र-विचित्र फैशन इसीलिये बनते और बदलते रहते हैं। उनकी नवीनता, विचित्रता देखकर लोगों का कौतूहल बढ़े और दूसरों की ओर से हटकर नजर उन्हीं पर जमे। जल्दी-जल्दी कपड़े बदलना, उनके फैशनों में फर्क रखना प्रायः इसी कारण होता है। लोग अनेक जोड़ी अनेक रंग-ढंग के कपड़ों से बक्से इसीलिये भरते हैं। वस्त्रों के बाद जेवरों का सिलसिला चल पड़ता है। पुरुषों में तो अँगूठी, घड़ी, बटन जैसे थोड़े से ही जेवर प्रयोग में लाये जाते हैं पर स्त्रियाँ तो इसमें अति कर देती हैं। पूँजी तो लगती ही है। धातु के दबाव से जिस अंग पर धारण किये जाते हैं, उसमें कड़ापन आ जाता है। कई तो अपने नाक, कान को इस बुरी तरह छिन्न-भिन्न कराती और उनमें चित्र-विचित्र जेवर लटकाती हैं कि इन अंगों का प्रकृति प्रदत्त सौन्दर्य सदा-सर्वदा के लिये विदा हो जाता है। चौड़े छेदों को खुला न रखने के लिये उनमें कुछ न कुछ जाल-जंजाल भरे ही रहना पड़ता है।

सौन्दर्य प्रसाधनों का विभाग भी इसी शृंगारिकता के साथ जुड़ा हुआ है। हाथों को रंगने के लिये मेंहदी, पैरों को रंगने के लिये महावर, माँग भरने के लिये सिन्दूर, होंठ रंगने के लिये लाली, नाखून रंगने के लिये पालिश, चेहरे पर लगाने के लिये क्रीम, पाउडर, लिपस्टिक, इत्र-फुलेल आदि का इतना प्रयोग होता है कि किसी सम्पन्न परिवार के सदस्य इन पर इतना खर्च कर देते हैं जितने में कि एक मध्यम वृत्ति वाले कुटुम्ब का चौका खर्च भली प्रकार चल सकता है। इसी शृंगारिकता की एक नई मद और खुली है लज्जा वस्त्रों को यथा सम्भव उघाड़ना, शील का प्रतिनिधित्व करने वाले अंगों का अर्धप्रदर्शन करना, उन्हें उत्तेजक ढंग से उभारना। वक्षस्थलों तथा नितम्बों का प्रदर्शन आज खुलेआम किया जाता है।

इस प्रदर्शन की सार्थकता तभी बनती है, जब दूसरे लोग आँखें फाड़फाड़ कर उसे देखें। मन ही मन आश्चर्यचकित हों और लुभावनी दृष्टि से देखें। कहना न होगा कि यह प्रवृत्ति दुराचार को जन्म देती है। शारीरिक शील यदि अनुबन्धों के बन्धन में बंधा भी रहे तो अनेकों की कुदृष्टि तो उन पर पड़ती ही रहती है। मानसिक व्यभिचार तो इर्द-गिर्द मँड़राता ही रहता है। धन व्यय, सजावट पर ढेरों समय का अपव्यय, साथ ही उत्तेजक अवांछनीय कुदृष्टि का उभार। यह सब मिलकर ऐसी स्थिति का सृजन करते हैं, जो धारणकर्त्ता के व्यक्तित्व पर अंगुली उठाने का अवसर प्रदान करती है। उसे ओछा, बचकाना, अपव्ययी सिद्ध करती है। उसके स्वभाव एवं चरित्र पर प्रश्नचिन्ह लगाती है। इस प्रकार यह सौदा हर दृष्टि से मँहगा पड़ता है। इसे उसी स्तर का समझना चाहिये जैसा कि बारात की सजावट में हजारों रुपया फूँककर बाजार में निकलने वालों का हृदय अपनी ओर आकर्षित करना चाहता है। आये दिन-निकलने वाले इस धमाल को कोई आँख उठाकर भी नहीं देखता। मूर्खता से चिढ़े हुये लोग पीठ फेर लेते हैं और बाजों की कर्कश ध्वनि से बचने के लिये कानों में रुई लगा लेते हैं। शानदार दावतों में भी यही आत्म प्रदर्शन और सस्ती वाहवाही लूटने का भाव रहता है। खाने वाला खा तो जाते हैं पर मन ही मन यही सोचते हैं कि हराम की कमाई बेदर्दी से उड़ाई। ऐसे लोग अपने मन में कुछ भी सोचते हैं पर वस्तुतः उनका यह बचकानापन समझदार वर्ग की लानत ही लेकर वापस लौटता है।

विज्ञजन सदा सादगी को सर्वोत्तम सज्जा मानते रहे हैं। उसमें चार चाँद लगाने के लिये स्वच्छता का पुट हर विधा के साथ जोड़ा जा सकता है। कपड़े स्वच्छ हों, करीने के साथ पहने हुये हों। बालों, दाँतों आदि को व्यवस्थित रखा गया हो तो उस प्रयास में जागरूकता एवं सुव्यवस्था का सुयोग बना दीखता है। स्वाभाविकता, सरलता किसी के वजनदार व्यक्तित्ववान होने का चिन्ह है। श्रेष्ठ जन इतराते नहीं, वे शालीनता अपनाये और सादगी के अपने कलेवर को ढके रहते हैं। इसमें उनकी नम्रता, सज्जनता एवं दूरदर्शी विवेकशीलता का परिचय मिलता है। यह प्रामाणिकता और परिपक्वता का चिन्ह भी है। सादगी की वेष-भूषा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनाने वाले को किसी अतिरिक्त साज-सज्जा की जरूरत नहीं पड़ती। पशु-पक्षी अपने प्राकृतिक स्वरूप में ही सुन्दर लगते हैं। उन्हें चित्र-विचित्र कलेवरों से ढक दिया जाय तो उपहासास्पद ही लगने लगेंगे। मनुष्य को लज्जा ढकने एवं ऋतु प्रभाव को हलका करने के लिये ही मात्र हल्के-फुल्के वस्त्रों की आवश्यकता पड़ती है। साज-सज्जा, श्रृंगारिकता की आवश्यकता है ही नहीं। जो धारण करने के लिये मचलते हैं, वे दूसरों की आँखों में उठते नहीं वरन् गिरते ही हैं।

सामान्य मुखाकृति को असाधारण रूप से सुन्दर दिखाने के लिये मुस्कराते रहने की आदत डाल लेना इतना अधिक प्रभावोत्पादक है कि जिसकी तुलना में ढेरों धन और समय खर्च कराने वाली श्रृंगारिकता तुच्छ ही पड़ती है। बिना अट्टहास लगाये सरल सौम्य मुस्कान अन्तःकरण के सौन्दर्य का प्रदर्शन करती है और किसी अन्य आकर्षण की तुलना में अधिक चुम्बकीय होती है।

इसके अतिरिक्त कुछ और भी विशेषतायें हैं, जो कुरूप व्यक्ति को भी सौन्दर्यवान बनाती हैं। जिसकी आँखों में आशा की उत्साह की स्फूर्ति की चमक दृष्टिगोचर होती है, उसकी प्रतिभा प्रकट होती है। हर अंग में एक नया प्राणसंचार परिलक्षित होता है। यह आन्तरिक सद्गुण हैं। इसे अन्तरात्मा की गहराई से उभरी सुसंस्कारिता भी कह सकते हैं। जिसने अपने स्वभाव एवं दृष्टिकोण को परिष्कृत कर लिया, उसके नेत्रों में चेहरे पर उमंगें लहराती दृष्टिगोचर होंगी। आत्म विश्वासी, अभीष्ट के प्रति आशावान, साहसी व्यक्ति अन्तःक्षेत्र में अतिरिक्त रूप से सुदृढ़ होते हैं। उसकी यह विशेषता सुघड़ता बनकर बाह्य क्षेत्र में थिरकती परिलक्षित होती है। चेहरा कमल पुष्प की तरह खिलता और सुरभि बिखेरता दृष्टिगोचर होता है। इस वास्तविक सौन्दर्य का स्थायी रूप से अवधारण कर सकना मनुष्य के अपने हाथ की बात है। इसमें मात्र अपने को सुसंस्कृत बनाना होता है।

स्वच्छता भी जरूरी है

दैनिक जीवनक्रम में एक ओर जहाँ कई वस्तुओं का उपयोग होता है, वहाँ साथ-साथ उनके अवशेष से कचरा भी उत्पन्न होता है। चूल्हा जलता है, बाद में राख कचरा बन जाती है। वस्तुओं के पैकिंग के रूप में कागज, डिब्बे, बोतल आदि भी भरी हुई वस्तु खर्च हो जाने के बाद कचरा बन जाते है। सूखी हुई वनस्पतियाँ भी कूड़े का रूप धारण करती हैं। हवा में उड़ने वाले धूलिकण, इमारतों, कपड़ों पर मैल की परत जमाते हैं।

गन्दगी को एक स्थान से उठाकर दूसरे स्थान पर पटक देना ही आत्यंतिक समाधान नहीं है। वरन् होना यह चाहिये कि उसे रूपान्तरित करके किसी उपयोगी स्वरूप का बना दिया जाये। जो नितान्त अनुपयोगी है, उन्हें ऐसे स्थानों पर भूमिसात किया जाय जो सर्वथा निरर्थक एवं भविष्य में भी काम आने योग्य न हो। खड्डे को पाटने और भूमि को समतल बनाने के लिये भी उसका उपयोग हो सकता है।

कड़ी वस्तुओं को गलाकर ढाल लेना ही अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण है। लोहे, काँच आदि को भट्टियों में गलाया और दूसरी बार फिर उपयोग में लाने योग्य बनाया जा सकता है। कागज के लिये लुगदी बनाने में भी कई प्रकार की घासें तथा पत्तियाँ काम आ सकती हैं। बुरादे में रसायनें मिलाकर नई लकड़ी बन जाती है। कोयले की राख का सीमेण्ट बनाने में उपयोग हो सकता है। इसी प्रकार ऐसे उपाय खोजे और तन्त्र खड़े किये जाने चाहिये, जो कचरे को खपाने और उसकी उपयोगी स्वरूप में बदलने का काम करते रहें।

इस सन्दर्भ में अधिक चिन्ताजनक प्रसंग मानवी मल मूत्र का है। उसे खपाने, उपयोगी स्वरूप में परिवर्तित करने की दिशा में अभी ध्यान गया तो नहीं, प्रयत्न हुये ही नहीं। फलतः वह जहाँ-तहाँ छितराता-फिरता है और जहाँ ठहरता है वहीं स्वास्थ्य संकट खड़ा करता है। पशुओं का मल-मूत्र खाद के रूप में काम आने लगा है। इससे पूर्व उपले बनाकर उसे ईंधन के रूप में प्रयुक्त किया जाता था। इन कारणों से वह कभी सम्भव नहीं रहा। किन्तु मानवी मल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का कोई उपयोग न किये जाने के कारण वह अभी भी एक समस्या बना हुआ है। इस क्षेत्र में शहर और देहात दोनों ही समान रूप से प्रभावी हैं। शहरों में एक स्थान से उसे हटाकर दूसरे स्थान पर ठेल देने की व्यवस्था है पर देहातों में तो वैसा भी कुछ नहीं है। वह गली-कूँचों में, गाँव के निकट वाले खेतों में बुरी तरह बिखरा रहता है और दुर्गंध फैलने के अतिरिक्त तरह-तरह की बीमारियाँ भी उत्पन्न करता रहता है।

मानवी मल भी प्रायः गोबर जितनी ही मात्रा में उत्पन्न होता है। यदि उसे खाद के रूप में परिणत किया जा सके तो उर्वरता में भारी वृद्धि हो सकती है और रासायनिक खाद उत्पन्न करने पर जो खर्च आता है, उसकी बचत हो सकती है। जापान में मानवी मल को सुनहरा खाद कहते हैं और उसका पूरा-पूरा सदुपयोग करते हैं। यह उसकी राष्ट्रीय सम्पदा है। कृषि उत्पादन के लिये इस बहुमूल्य प्रकृति उपलब्धि का वे सही उपयोग करते और समुचित लाभ उठाते हैं। अपने देश में उसका उपभोग कुछ भी नहीं हो पाता। शहरों का मल-मूत्र समीपवर्ती नदियों में धकेल दिया जाता है और गाँवों की गन्दगी जहाँ-तहाँ पड़ी और सूखती रहती है। जबकि उसका परिपूर्ण उपयोग यहाँ की स्थिति में वहाँ के ढंग से भली प्रकार हो सकता है। वैसा न बन पड़ने की स्थिति में वह मात्र गन्दगी और बीमारी उत्पन्न करने का ही निमित्त कारण बनती है।

अस्वास्थ्यकर परिस्थितियों का सर्वाधिक प्रभाव गन्दी बस्तियों, पिछड़े क्षेत्रों और खुले मैदानी भागों में पड़ता है। ऐसे ही क्षेत्रों में प्रतिवर्ष अनेकों क्षेत्रीय बीमारियाँ तथा महामारियाँ फैलती हैं, जिनसे हजारों लोग बेमौत मरते हैं। इन महामारियों में सर्वव्यापक सर्वत्र पाई जाने वाली—गैस्ट्रो इन टेस्टाइनल ट्रबुल्स हैं। डायरिया, डीसेन्ट्री जैसी बीमारियों से अस्पतालों में रोगियों की भरमार रहती है। देश के छोटे-बड़े सभी अस्पतालों में प्रतिवर्ष ५५ से २० प्रतिशत रोगी पेट की बीमारी से ग्रस्त देखे जा सकते हैं। यह बीमारी परजीवी प्रोटोजोआन्स, बैक्टीरिया, वाइरस तथा फन्गास के कारण जन्मती हैं। मूलतः यह गन्दगी के कारण उत्पन्न होती है। अस्वच्छ पानी पीने, मक्खी-मच्छर वाले स्थानों में रहने, गन्दे एवं खुले हुये बाजारू भोजन, फल, मिठाईयों के खाने से परोपजीवी कीटाणु मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर गड़बड़ी उत्पन्न करते हैं।

इन बीमारियों से बचने का सरलतम और सस्ता उपाय है—सफाई, स्वच्छता। खान-पान में, रहन-सहन में, आस-पास के वातावरण में सफाई का होना अनिवार्य है। बीमारी फैलने की स्थिति में पानी को उबालकर पीना, खाने-पीने की वस्तुओं को ढककर रखना और मक्खी-मच्छरों से बचाना, फल-फूल, साग-सब्जियों को अच्छी तरह साफ स्वच्छ कर इस्तेमाल करना, खटमल, कीड़े, चूहों से खाने-पीने की वस्तुओं को बचाना बहुत जरूरी है।

बड़े पैमाने पर सामुदायिक रोग निरोध के लिये ऐसे सुरक्षात्मक उपाय अपनाये जाने चाहिये, जिससे गन्दगी से उत्पन्न होने वाली बीमारियों से बचा जा सके। सैनिटरी डिस्पोजल शौचालयों की सफाई-स्वच्छता, पीने वाले पानी के स्रोतों को टट्टी-पेशाब से प्रदूषित होने से बचाना, सुनहरी खाद के उपयोग से उत्पन्न हुई साग-सब्जियों, फल-फूल तरकारियों के उपयोग से सुरक्षित रहना अनिवार्य है।

मनुष्य मल की गन्दगी से कई प्रकार के कृमि उत्पन्न होते हैं। वे जिस पदार्थ से उत्पन्न हुये हैं, उसी में निर्वाह करने के आदी होते हैं। इसलिये प्रयत्न यह करते हैं कि किसी प्रकार चिरस्थायी मल भण्डार मनुष्य के पेट में पहुँच कर अड्डा जमा लें और पीढ़ी दर पीढ़ी वहीं निर्वाह करते रहें। यह कृमि अदृश्य होते हैं। उनके अण्डे भी वैसे ही होते हैं, जो खुली आँखों से नहीं दीखते। संख्या भी उनकी बहुत बड़ी होती है। इसलिये वे अपने क्षेत्र में जहाँ-तहाँ जमीन पर फैले रहते हैं। कपड़ों पर चढ़ते हैं और खाद्य पदार्थों पर सवारी गाँठते हैं। इस प्रकार उन्हें कोई न कोई रास्ता ऐसा मिल जाता है कि पेट तक पहुँच सकें। घात वे किसी न किसी प्रकार लगा ही लेते हैं। असावधानी से जहाँ-तहाँ जमीन पर बिखरे हुये खाद्य पदार्थ और कपड़े उनके वाहन बनते हैं। इस प्रकार शरीर के साथ उनका सम्पर्क बन जाता है। दुहरे रास्ते ही नहीं, गुदा मार्ग से भी वे प्रवेश का रास्ता पा लेते हैं। गन्दे पानी से गुदा प्रच्छालन के समय भी यदि वे कीड़े या अण्डे पानी में हुये तो वहाँ चिपक कर भी वे रेंगते हुये गुदा मार्ग से पेट में जा पहुँचते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यह कृमि जब एक बार पेट में प्रबेश पा लेते हैं तो फिर उन्हें हटाना भगाना सहज नहीं होता क्योंकि वे पेट में रहने वाले अम्लों के बीच जन्मने पलने के कारण पेट की उस क्षमता से प्रभावित नहीं होते जो अन्याय स्तर के विजातीय पदार्थों एवं कृमियों को खदेड़कर बाहर निकालती है। पेट में बस जाने पर भी ये जमा मल को ही नहीं खाते वरन् अन्य अवयवों को भी खाते और विषाक्त बनाते रहते हैं। इस प्रकार पेट की कितनी ही बीमारियों से लोग ग्रसित होते और धीमी मृत्यु के शिकार होते रहते हैं। कई बार तो यह कृमि अपना स्तर विकसित करते और केंचुऐ के आकार में गुच्छे के गुच्छे पेट में बढ़ते रहते हैं। जब बाहर मल के साथ निकलते हैं, तब उनकी यथास्थिति का आभास होता है।

सामान्यतया मनुष्य में कृमि रोग पेट के कीड़ों और परोपजीवों से फैलता है। पेट के कीड़े तीन तरह के होते हैं और ये किसी भी आँत में पहुँचकर अलग-अलग लक्षणों वाले रोगों को जन्म देते हैं। इनके नाम हैं— (१) थ्रेडवर्म (२) हुकवर्म (३) राउण्ड वर्म।

थ्रेडवर्म या तन्तु कृमि सूत के धागे जैसा सफेद रंग का होता है। मादा की लम्बाई सवा से डेढ़ सेन्टीमीटर और नर मादा का आधा होता है। जब मादा गर्भवती होती है तो वह रोगी के मलाशय में जाकर असंख्यों अण्डे देती है। इसके अण्डे रोगी के मल में कम होते हैं किन्तु गुदा के चारों ओर त्वचा पर लगे रहते हैं जिसे खुजली होती है। ये अण्डे दो तीन सप्ताह में कृमि के रूप में बदल जाते हैं लेकिन तब तक नहीं जब तक कि फिर मनुष्य के आमाशय में न पहुँच जायें। ये कृमि अधिकांश बच्चों में पाये जाते हैं इससे बच्चों को बेचैनी, खाँसी व पेट में ऐंठन होती है तथा औरतों को इससे प्रदर भी हो सकता है।

हुकवर्म या अंकुश मुख कृमि गोल लम्बा और धागे की तरह पतला होता है। नर ८ से ११ मिलीमीटर और मादा १० से १३ मिलीमीटर लम्बे होते हैं। मुख का सिरा नुकीला तथा उसमें अंकुश की तरह चार दाँत होते हैं, जिन्हें आँत में गड़ाकर खून चूँसते हैं। मादा प्रतिदिन असंख्यों अण्डे देती है। रोगी के एक बार मल त्याग में लगभग ६० लाख अण्डे निकलते हैं या अण्डे गर्म जलवायु में खूब पनपते हैं और लगभग चार-पाँच दिन में लार्वा के रूप में बदल जाते हैं आत्मरक्षा हेतु ऊपर बड़ा कवच धारण किये रहते हैं। नमी के स्थानों पर महीनों तक पड़े रहते हैं। मनुष्य की आँत में पहुँचकर ही प्रौढ़ कृमि बनते हैं। रोगी को बदहजमी, कमजोरी, त्वचा का पीलापन, खून की कमी के लक्षण प्रकट होते हैं। बच्चों का मानसिक व शारीरिक विकास रुक जाता है।

राउण्डवर्म बरसाती केंचुए की तरह मटमैले रंग का होता है। इस कारण से पेट का केंचुआ कहा जाता है। शरीर के दोनों सिरे नुकीले तथा अगले सिरे में दाँत होते हैं। नर की लम्बाई १० से. मी. से २० से. मी. तक तथा मादा १७ से. मी. से २० से मी. तक लम्बी होती है।

मादा कृमि अधिक तथा नर कृमि कम पाये जाते हैं। मादा नित्य असंख्य अण्डे देती है। ये रोगी के मल के साथ बाहर निकलते हैं। अण्डे भूरे रंग के तथा ऊपर बड़ा कवच होता है। दूसरे की आँत में पहुँचने पर इनको प्रौढ़ होने में एक माह समय लगता है। ये कृमि आँतों में पाये जाते हैं, जिससे पेट में बहुत अधिक दर्द तथा बेचैनी होती है। बच्चों के पेट में ऐंठन होती है। इनके अतिरिक्त टेपवर्म या फीताकृमि रोग भी होता है। ये कृमि कई फीट लम्बे होते हैं। ये कृमि ऐसे जानवरों का भुना या कम पका माँस खाने से होते हैं, जिनमें ये रोग रंहा हो। मनुष्य के शरीर में इनका प्रवेश मुँह और त्वचा के रास्ते से होता है। भारत में इस रोग की अधिकता तो नहीं पर फिर भी शहरों में देखने को मिल ही जाता है।

ये सभी कृमि रोगी के मल से ही बाहर निकलते हैं। इसके लिये मल का समुचित विसर्जन किया जाय। स्वच्छ सेप्टिक टैंक—शौचालयों का प्रयोग किया जाय अथवा हैण्ड फ्लश वाटर या सिल-पिट-शौचालय का निर्माण किया जाय। बचाव के लिये इनके अण्डे, खान-पीने की वस्तुओं तक न पहुँच पायें। घरों के आस-पास क्षेत्रों में कुओं, तालाबों, नदियों आदि पेय जल के स्थानों के पास मल त्याग न करें। पैरों से ये पहुँचने न पायें, इसके लिये जूता-चप्पल आदि अवश्य पहनना चाहिये।

सलाद, मूली, कच्ची सब्जियों, फल, गाजर आदि को अच्छी तरह धोकर सेवन किया जाय।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मरते-मरते भी इतना कुछ किया जा सकता है

सत्प्रवृत्तियों में दान को बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। हमारी संस्कृति की कुछ विशिष्टताओं में इस परम्परा को विशेष माना जाता रहा है। प्रायश्चित में दान, पुण्य हेतु दान एवं यज्ञ में दान का ही प्रकारान्तर से उल्लेख है। देश, धर्म एवं मानवता की रक्षा हेतु बलिदान, आत्मदान और सम्पत्तिदान का एक ऐसा अनुकरणीय इतिहास आर्षग्रन्थों में भरा पड़ा है, जिसे पढ़ सुनकर रोमांच हो उठता है और ऐसे पुण्यात्माओं के प्रति सहज श्रद्धा से अवनत हो जाना पड़ता है।

महर्षि दधीचि, मोरध्वज, शिवि, गौतम, मान्धाता, हरिश्चन्द्र, अशोक, भामाशाह, गुरु गोविन्दसिंह, जमनालाल बजाज आदि के उदाहरण इस एक तथ्य के प्रमाण हैं कि वे अपने अन्त की उदारता-दानशीलता की प्रवृत्ति के कारण प्रख्यात बने, चाहे, वह शरीर का हो अथवा अर्थ का। उन्होंने सत्कर्म की उपयोगिता को अपने वैभव, प्रियजनों के जीवन, स्वयं के विलास-विनोद से भी अधिक महत्त्वपूर्ण मानकर उसे अपनाया और इतिहास में अमर हो गये।

इस प्रवृत्ति का एक पक्ष और भी है, जो विज्ञान की बढ़ती प्रगति के साथ पिछले दिनों बड़ा लोकप्रिय हुआ है। जीवित रहते धन, भूमि, शिक्षा, श्रम को समर्पित किये जाने की परम्परा में एक कड़ी और जुड़ी है—मृत शरीर के अवयवों के दान की, इसमें अपनी काया का कोई भी अंग किसी दुःखी रोगी, अपाहिज-घायल की मात्र एक वसीयत लिखकर दान किया जाता है। इसमें धन, वैभव, शिक्षा कुछ भी आड़े नहीं आते क्योंकि काया के अंगों की सम्पदा की दृष्टि से सब एक हैं। अन्तर मात्र उनके कुछ विशिष्ट समूहों में है। ऊतकों व रक्त के सूक्ष्म घटकों का साम्य बैठ जाने पर एक शरीर से निकला अंग जीवित अथवा मृत अवस्था में एक शरीर से निकालकर दूसरे में प्रत्यारोपित किया जा सकता है।

जीवित रहते रक्तदान की परम्परा तो गत शती से ही प्रारम्भ हो गयी थी। मानवी काया के रक्त में ४ प्रकार के रक्त समूह (ब्लड ग्रुप्स) होते हैं। ए, बी, ए, बी, ओ। इसके अतिरिक्त इन्हीं में से प्रत्येक में २ विभाजन और हैं आर० एच० पाजिटिव न नेगेटिव। चिकित्सक एक छोटी-सी तकनीक का सहारा लेकर रोगी व रक्त देने वाले का ब्लड ग्रुप जानकर उसे मैच कर रक्त देकर रोगी को जीवन दे पाने में सफल हो जाते हैं। इसी आधार पर विश्व भर में 'ब्लड बैंकों' की स्थापना भी हुई है। इस दिशा में दूसरा आयाम है, ऐसे अंगों का दान, जिन्हें जोड़े में होने के कारण एक निकालकर दूसरे मरणासन्न रोगी के शरीर में प्रत्यारोपित कर उसे जीवन दिया जा सकता है। शेष एक अंग से 'डोनर' (दानदाता) की जीवनावधि में कोई कमी नहीं आती। यह अपना शेष जीवन बिना किसी कष्ट के पूरा करता है। इन अंगों में प्रमुख हैं—मानव शरीर के गुर्दे। एक के निकाल लेने पर भी दूसरा अपना काम ठीक प्रकार चलाता है। शेष अंगों का प्रत्यारोपण तो अभी प्रायोगिक अवस्था में है। पाश्चात्य देशों के अतिरिक्त भारत में ही कई ऐसे ऑपरेशन गत ३-४ वर्ष में हुये हैं, जिनमें रोगी को एक स्वस्थ गुर्दा मिल जाने से नवीन जीवन मिला।

अंग प्रत्यारोपण विशेषज्ञ डा. एडवर्ड वीटो और बिल्लेहाइ का कहना है कि मानव शरीर के सत्रह अवयव ऐसे हैं, जिन्हें मरणोपरान्त शरीर से पृथक् कर दूसरे शरीर में प्रत्यारोपित किया जा सकना सम्भव है। जीवितों के अंग निकालने में तो 'मेजर आपरेशन' की आवश्यकता होती है एवं यह प्रक्रिया कष्ट साध्य भी है। इससे अच्छा मृत शरीर का और क्या उपयोग हो सकता है कि मृत्यु के पश्चात् वह सत्रह जरूरतमन्दों की आवश्यकता पूरी करे। जीवन भर भले ही वह व्यक्ति वैभव सम्पन्न होते हुये भी मक्खीचूस की तरह रहा हो, मरते-मरते भी अपनी काया से मोह तोड़कर अपने इन अंगों को मानव हित हेतु समर्पित कर सकता है।

पाश्चात्य देशों में वसीयत लिखाने वाले व्यक्ति चिकित्सकों-चिकित्सालयों तक अपनी मृत्यु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की सूचना रिश्तेदारों द्वारा पहुँचाने के लिये निर्देश छोड़ देते हैं। चाहे वह असामयिक दुर्घटना में हुई मृत्यु हो अथवा सहज रूप में घर बैठे, सूचना मिलते ही रोगियों की सूची में लिखे नामों को वरीयता व गम्भीरता के अनुसार निर्धारण कर चिकित्सक समुदाय उन्हें अस्पताल में भर्ती होने की सूचना देता है तथा मृत शरीर को अस्पताल लाये जाने की व्यवस्था बनाता है ताकिं प्रत्यारोपण प्रक्रिया अंगों के विकृत होने के पूर्व ही सम्पादित की जा सके।

इटली के लुई आर्टोनो ने अपनी वसीयत लिखा रखी थी कि मरणोपरांत उसके गुर्दों, नेत्रों आदि सभी अवयवों का उपयोग किसी रोगी को बचाने के लिये कर लिया जाये। आल्पस पर्वत पर एक दुर्गम मोड़ पर कार दुर्घटना में उनका असामयिक मृत्यु हो गई। ऊपर पैट्रोलिंग कर रहे हैलीकाप्टर ने घटना घटित होते देखी तुरन्त निकटस्थ अस्पताल को सूचना दी गयी व उसे मृत स्थिति में ही निकट के अस्पताल में पहुँचा दिया गया। रिश्तेदारों को सूचित किया गया व उसे पहचान लिये जाने पर, उसकी वसीयत से परिचित चिकित्सकों ने तुरन्त इसके रक्त को एक मरणासन्न घायल रोगी हेतु, उसके १ गुर्दे को प्रत्यारोपण हेतु तथा आँख के काले पर्दे "कार्निया" को निकालकर बैंक में जमा कर दिया एवं मृत देह रिश्तेदारों को पूरे सम्मान एवं कृतज्ञत' के साथ सौंप दी। २४ घन्टे के भीतर ही उसके गुर्दे 'रिनल फैल्योर' के एक रोगी का रक्त छानने हेतु क्रियाशील हो गये और आँखों में सफेदी (फूला) वाले एक व्यक्ति को कुछ दिनों में रोशनी देखने योग्य बनाने में, सक्षम कर दिया गया। यह तो मात्र एक उदाहरण है। पाश्चात्य देशों में विशेषकर साउथ अफ्रीका केपटाउन के डा. क्रिश्चियन बर्नार्ड एवं अमेरिका के डा. डोबेकी ने कई मृत शरीरों से हृदय प्रत्यारोपण कर गम्भीर रोगों से ग्रस्त व्यक्तियों की जीवनावधि बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। अभी अक्टूबर १९८१ के प्रथम सप्ताह में तो एक हृदय हजार किलोमीटर हवाई उड़ान से रोगी के पास पहुँचाया गया व आपरेशन द्वारा डा० बर्नार्ड ने उसे प्रत्यारोपित कर दिया।

अंग प्रत्यारोपण की इस प्रक्रिया में अभूतपूर्व योगदान देकर इससे वर्ष एक व्यक्ति चर्चा का विषय बन गया। ५७ वर्षीय अमरीकी नागरिक जौन सैण्डर्स ने मृत्यु शैय्या पर पड़े हुये ही अपने सभी अंगों की जाँच करा ली। उसने जीवित रहते हुये ही चिकित्सकों से यह निर्धारित करा लिया कि एक व्याधि ग्रस्त अवयव को छोड़कर शेष कितने स्वस्थ हैं व उसकी मृत्यु पर, जो अवश्यम्भावी थी, किन-किन रोगियों को लगेंगे। १६ मार्च १९८१ की प्रातः आठ बजे जैसे ही उसकी मृत्यु हुई न्यूयार्क मेमोरियल अस्पताल के डा. जैक ब्लाक व डॉ. जैरी ने कुछ ही क्षणों में उसके हृदय को एक ४२ वर्षीय हृदय रोगी को, जिगर ३६ वर्षीय यकृत कैंसर की मरीज एक महिला को तथा दोनो गुर्दों में से एक-एक 'रिनल फैल्योरा' से ग्रस्त मरण शैय्या पर पड़े एक १९ वर्षीय युवक एवं एक ३७ वर्षीय स्त्री के शरीर में प्रत्यारोपित कर दिया। आँखें को बैंक में जमा कर दिया गया।

यह उदाहरण कितनी प्रेरणा देता है ? जीवित रहते अपना श्राद्ध कर देने, दधीचि की तरह अपने शरीर को समर्पित कर देने की यह प्रक्रिया मानवता के लिये कितनी हितकारी हो सकती है, उसकी अभिव्यक्ति शब्दों में सम्भव नहीं। सारे विश्व में सन् ८१ में ४ अरब ५२ करोड़ व्यक्तियों में से ६ करोड़ अन्धे थे। अकेले भारत में ही १० लाख अंधे थे। अपाहिज, विकलांग तो ऐसे लाखों हैं, जो एक ही अंग के मिल जाने मात्र से अपनी जीवन यात्रा और सफलतापूर्वक आगे बढ़ा सकते हैं।

अन्तः की उदारता फूट पड़े तो सत्साहस के लिये संकल्प भी हो। इस दिशा में जन-मानस को जानकारी दी जाकर उन्हें प्रेरित किया जाना चाहिये। उन्हें बताया जाय कि जीवित रहते उनने समाज से बहुत कुछ लिया। जो भी बन पड़ा, सेवा की। यदि मरण के बाद भी शरीर का उपयोग सम्भव है तो क्यों इस पुण्य से चूका जाय ? यदि अपने एक संकल्प से एक घर के बुझते चिराग जल उठें तो इससे बढ़कर दान परमार्थ पुण्य क्या हो सकता है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सौन्दर्य बढ़ाने के उपाय

सौन्दर्य की अद्भुत शक्ति

सौन्दर्य जीवन की कला है, मानव की सर्वोत्कृष्ट निधि है। यह वह मंजूसा है, जिसमें युग-युग से उसके अनेक मार्मिक स्वप्न, स्निग्ध अनुभूतियाँ तथा चिरन्तन भावनायें केन्द्रीभूत होती रही हैं।

अन्य पशु-पक्षियों, जलचर, नभचर तथा थलचर जगत् में मानव को जो विशेष गुण प्राप्त हुआ है, वह उसकी सौन्दर्यानुभूति ही है। कला के तीन स्वरूप "सत्यं, शिवं, सुन्दरम्" में अधिकतर मनुष्य कला के सुन्दरम् पक्ष से ही विशेषतः प्रभावित हुये हैं। जो वास्तव में सुन्दर है, वही सत्य है, वही शिव है, उसकी साधना से मनुष्य के दैवी गुणों के विकास हो सकता है। सुन्दरम् में सभी समा जाता है। परमेश्वर सौन्दर्य निधि है। जहाँ कहीं आप सौन्दर्य देखते हैं, वहाँ दैवी अंशों का ही प्रकाश विद्यमान है। सौन्दर्य के प्रत्येक कण में आत्मिक सौन्दर्य विद्यमान है। परमेश्वर ने सौन्दर्य का प्रजनन इसीलिय किया है कि हम उससे समस्त सौन्दर्य की निधि परमेश्वर तक पहुँच सकें।

सौन्दर्य वह कविता है जिसका सीधा प्रभाव मानव हृदय पर होता है। यह वह सूक्ष्म प्रतिक्रिया है, जो चुपचाप मनुष्य को वशीभूत करती है। संसार के महान् कवि, जिस सरस अनुभूति से विह्वल हुये तथा मार्मिक काव्य स्रोत प्रवाहित करते रहे हैं, वह सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिये ही है। सौन्दर्य कविता के रूप में प्रवाहित हो उठा। अनगिनत कवियों ने सौन्दर्य का भाँति-भाँति से अवलोकन किया, परखा और जब वह उनके हृदय में न समा सका, तो काव्य के रूप में उद्वेलित हो उठा। मनुष्य की प्रथम मधुर अनुभूतियाँ सौन्दर्य से ही प्रवाहित से ही प्रवाहित होकर वसुधा पर अवतीर्ण हुई।

सौन्दर्य ईश्वर का स्वरूप है

मानव जीवन क्या है ? असुन्दर से सुन्दर की ओर प्रगति, अन्धकार से प्रकाश की ओर, अविद्या से विद्या की ओर, मृत्यु से अमरता की ओर, अमर यात्रा। मनुष्य बदसूरत चीजों से दूर भागता है, वह गन्दगी से बचकर उत्तेजना, पवित्रता, सौन्दर्य की ओर दौड़ता है। अपने जीवन के अज्ञात कोने में हम सभी, किसी न किसी रूप में सौन्दर्य की पूजा कर रहे हैं। जो अपने आपको विरक्त, ज्ञानी, महात्मा कहते हैं, वे आन्तरिक सौन्दर्य की साधना में लीन हैं। सांसारिक पुरुष शारीरिक या भौतिक सौन्दर्य के पीछे मत्त हैं। लोभी रुपये के सौन्दर्य में जीवन लगा रहे हैं, ग्रामीण कर्मपथ के सौन्दर्य उपासक हैं। जिनके पास धन नहीं है, जो प्रतिदिन प्रातःकाल से सायंकाल तक श्रम क्लान्त हैं, वे गरीब मजदूर तुलसीकृत रामायण की एक चौपाई, कोई भजन या गीत उच्चारण कर अपनी सौन्दर्य-पिपासा को शान्त कर रहे हैं। महिलायें स्वभावतः सौन्दर्य की देवी हैं। उनके उठने-बैठने, कार्य करने बोलने-चालने में तो सौन्दर्य निहित है ही, कृत्रिम साधनों से भी वे सौन्दर्य की पूजा कर रही हैं। चेहरे पर आभा लाने के लिये वे सौन्दर्यवर्द्धक क्रीम तथा पाउडर कपोलों को गुलाबी बनाने के लिये सुर्खी, नेत्रों को कंटीले बनाने के लिये काजल एवं अधरों को सुर्ख बनाने के लिये लिपस्टिक प्रयोग में ला रही हैं। संसार के व्यापार इतने उपयोगिता के बल पर नहीं चलते जितने सौन्दर्य के ऊपर आश्रित हैं। वस्त्रों के नवीनतम डिजायन, रंगों के विभिन्न सम्मिश्रण, आभूषणों की कलात्मकता, केश विन्यास, चाँदी, सोने के साथ मुक्ताओं की जगमगाहट और उनके साथ हाव, भाव, नृत्य, संगीत का मणिकांचन सहयोग सभी में मानव की सौन्दर्य भावना तैर रही है। सौन्दर्य संसार का सबसे आकर्षक, शान्तिदायक, विमोहक पदार्थ है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह चाहे शरीर का हो, वाणी या हृदय का सब में अनिवर्चनीय मोहनी शक्ति विद्यमान है।

प्रेम तथा सौन्दर्य

प्रेम तथा सौन्दर्य भिन्न-भिन्न शब्द होते हुये भी यदि अर्थ में पर्यायवाची होते, तो सम्भावना अधिक सार्थक होते। संसार में सौन्दर्य में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें क्षण-क्षण में नवीनता प्रतीत होती है। आकर्षण वृद्धि रहती है। उसके जीवन में रस और क्रियाओं में उत्साह प्रस्तुत रहना है। शरीर में लगाव, ममत्व, सहानुभूति रहती है। प्रेम की परिभाषा ऐसी ही है। वृक्ष, लता, वन, नदी समुद्र का सौन्दर्य हमें जितना प्रिय लगता है, उससे कहीं अधिक मानव शरीर का सौन्दर्य आकर्षक होता है, क्योंकि वह हमारे समीप है तथा सुसंचित रूप में उपलब्ध होता है और हम उसे थोड़े में अधिक ग्रहण कर लेते हैं। मानव शरीर के सौन्दर्य ने संसार के इतिहास में समय-समय पर ऐसे परिवर्तन किये हैं, जिनकी तुलना मूक प्रकृति के सौन्दर्य से उत्पन्न किसी घटना से नहीं की जा सकती।

बाह्य पक्ष से, सौन्दर्य मुख्यतः नेत्रों का विषय है या यों कहना चाहिये कि आँखें सौन्दर्य-निदर्शन के निमित्त ही मानव को प्रदान की गई है। इसी भाव को इमर्सन न निम्न रूप में व्यक्त किया है—

"यदि संत जन पूछें कि सौन्दर्य पृथ्वी तथा आकाश में व्यर्थ क्यों बिखेर दिया गया, तो मेरी प्रिये ! उनसे कहो कि यदि नेत्र देखने के लिये बने हैं तो सौन्दर्य नेत्रों के लिये सृजन किया गया है।"

बाह्य सौन्दर्य

बाह्य सौन्दर्य वह है जिसे देखकर यकायक अनायास ही मन आकर्षित हो जाता है, भले-बुरे का ज्ञान नहीं रहता, स्वतः जिसे देखकर आँखों में बसा लेने की भावना होती है।

जिस सौन्दर्य पर सर्वप्रथम मानव नेत्र मोहित होते हैं, वह शरीर का सौन्दर्य है। शरीर की सुडौलता, मुख की बनावट, अवयवों की मांस पेशियाँ, त्वचा का रंग, स्वास्थ्य इत्यादि वे तत्व हैं, जिनका सबसे पहले उन पर प्रभाव पड़ता है। वास्तविक सौन्दर्य का अर्थ है मुख पर ओज और नेत्रों में तेज, जो केवल उत्तम स्वास्थ्य से ही प्राप्त किया जा सकता है। प्रकृति स्वयं-सौन्दर्य प्रिया है। वह असुन्दरता को पनपने नही देना चाहती। जहाँ कहीं असुन्दरता होती है, वहीं रोग-शोक होता है। प्रकृति में सर्वत्र आनन्द, प्रेम और सौन्दर्य लहलहा रहा है।

स्त्री-पुरुषों में कौन अधिक सुन्दर है ?

सुन्दरता और स्वास्थ्य का घनिष्ठ सम्बन्ध है। अपने सबसे स्वस्थ स्वरूप में प्रायः प्रत्येक जानवर सुन्दर 'प्रतीत होता है। सुन्दरता का अर्थ शरीर के अवयवों का पूर्ण विकसित होना है। पूर्ण विकास पर प्रत्येक जीव आकर्षक प्रतीत होता है। जिसके पास व्यायाम द्वारा विकसित एवं परिपुष्ट शरीर है, उसे संसार के किसी कृत्रिम प्रसाधन की आवश्यकता नहीं है।

संसार में सुन्दर क्या है ? अभाव अर्थात् वह वस्तुयें जो हमारे पास नहीं हैं, हमें सुन्दर प्रतीत होती हैं। जो हम नहीं पा सके हैं, जो हमसे दूर हैं, वही आकर्षक हैं। अभाव, दूरी तथा वस्तु का मनुष्य के सम्पर्क में न होना ही उसे सुन्दरता प्रदान करता है।

पुरुष के पास कुछ ऐसे गुण हैं, जिनका स्त्री में अभाव। इन चीजों में नारियों को पुरुष का सौन्दर्य प्रतीत होता है। इसी प्रकार जो वस्तुयें स्त्री के पास हैं, उनका अभाव पुरुष में रक्खा गया है। स्त्री-पुरुष का यह वैषम्य ही सौन्दर्य का मूल कारण है। पुरुष की रग पट्ठों, ओजस्वी मुद्रा, उमंगों से परिपूर्ण नेत्र, उन्नत ललाट, हृष्ट-पुष्ट शरीर, उभरी हुई छाती, मांस पेशियाँ ऊँचा कद ये ऐसे तत्व हैं, जिनका स्त्री में सर्वथा अभाव रखा गया है। वस्तुतः नारी इन्हीं के प्रति आकर्षित होती है।

दूसरी ओर नारी में कोमल सौन्दर्य को भर दिया गया है। उसे रूप माधुरी, कोमल त्वचा, लावण्यमय मुख मण्डल, सफेद दूध जैसे निर्मल नेत्र, दन्त, नख और मुख दिये गये हैं, लाल कपोल, औष्ठ, जिह्व और मसूड़े प्रदान किये गये हैं, लम्बे केश, पलक तथा अंगुलियाँ, पतली मणिबन्ध पिंडलियाँ, सुगन्धित नासिका, मुख,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बगल, सिर चौड़ी आँखें, छाती, तंग नासिका छिद्र, मुख नाभि तथा कोमल अंग-प्रत्यंग दिये गये हैं। सर्वत्र चरित्र बल, सुशीलता सहृदयता, मृदुलता और कोमलता का विधान है। इनके साथ यदि सुगठित, सुडौल व सुहावन अंग-प्रत्यंग वाली है, तो वह निश्चय ही अपने स्वाभाविक सौन्दर्य से विपरीत लिंग के व्यक्ति को आकर्षित करेगी। अभाव ही सौन्दर्य का मूल कारण है।

आजकल शारीरिक सौन्दर्य की वृद्धि के लिये पुरुष क्रीम, वैसलीन पाउडर तथा स्त्रियाँ लेवेन्डर, अंजन क्रीम, लिपिस्टिक, नेत्र पालिश, लाली, सेंट इत्यादि बाह्य मिथ्या प्रदर्शन की चमकीली, भड़कीली वस्तुओं का प्रयोग करते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के डिजायनों के केश तथा रंगे हुये ओष्ठ व नख पुते हुये चेहरे, दिखावटी वस्त्र या अर्द्ध नग्न शरीर ये सब कृत्रिम प्रसाधन हैं। चमकदार साड़ियों, जम्फरों आभूषणों या अप्राकृतिक सौन्दर्य थोड़ी देर के लिये भ्रम उत्पन्न कर सकता है, किन्तु सुगठित, सुडौल व मर्यादित सौन्दर्य की समानता नहीं कर सकता। चरित्र का सौन्दर्य, मन वाणी तथा आन्तरिक भावनाओं का सौन्दर्य स्थिर सौन्दर्य है। बाह्य सौन्दर्य भ्रमकारी, उन्मादकारी और कामोत्तेजक है। चमक-दमक का नशा यौवन की तरह अस्थिर है।

सुडौल शरीर सौन्दर्य का केन्द्र है

कौन-सा शरीर आकर्षक है ? इस प्रश्न के उत्तर में यही कहा जायेगा कि जिस शरीर के सब अवयव समान रूप से पूर्ण विकसित हुये हैं, कोई हलका या भारी नहीं है, जो न अधिक स्थूल हैं, न कृशता को प्राप्त हैं, जिसमें शक्ति उत्साह तथा प्रसन्नता है, वही आकर्षक शरीर है। स्वास्थ्य बिना सौन्दर्य का अस्तित्व नहीं। स्वास्थ्य साधारण रूप को भी आकर्षक बना देता है। सौन्दर्य की चाह है तो शरीर को स्वस्थ बनाइये, प्रकृति की शरण में रहिये तथा कृत्रिम जीवन, अस्वच्छ वायु से बचते रहिये।

सौन्दर्य का साधन व्यायाम

शरीर की आकृति हमारी प्रथम आवश्यकता है। प्रत्येक अवयव ऐसा हो जैसे ग्रीस के पहलवान या वीर योद्धा होते थे। मांस पेशियां स्पष्ट, अवयवों के खम, टेड़ापन, गोलाई मोटाई, उतार-चढ़ाव सब कुछ उचित परिमाण का न भारी न हल्का। यह नहीं कि पेट आगे को निकला हुआ है, हाथ-पाँव कमजोर हैं, आँखें गड्ढों धँसी हुई हैं, गरदन नीची हैं, रीढ़ झुका हुआ है। इसके विपरीत व्यायाम द्वारा आप अपने अवयवों की शक्ति और मांस पेशियों का पर्याप्त विकास करें, उसमें सुडौलपन समेलपन और मांस लावें। यदि आप अधिक मोटे हैं, तो व्यायाम आपके मोटेपन, बादी या मेद रोगों को दूर कर देगा। यदि आप दुबले-पतले हैं तो व्यायाम से ही आपका वजन बढ़ेगा, शरीर पर मांस आयेगा और सम्पूर्ण शरीर का विकास होकर समता आ जायेगी।

पूर्ण आकर्षक शरीर की गरदन, हाथ, पाँव, हृदय, छाती, पेट तथा पांव सब समतापूर्वक विकसित होते हैं। आप ऐसी कसरतों की योजना बनायें कि शरीर का प्रत्येक अंग काम पा सके। प्रत्येक मांस-पेशी को दिन में काम मिलना चाहिये। जिस मांस पेशी से पर्याप्त काम लिया जाता है, वही सुडौल और सुन्दर बनती है। निकम्मा अवयव दुर्बल होकर कुरूप हो जाता है।

व्यायाम पद्धतियाँ

व्यायाम की दो पद्धतियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं। (१) भारतीय पद्धति तथा विदेशिक पद्धति। भारतीय पद्धति में यौगिक आसन, दण्ड, मुग्दर, बैठक, सूर्य नमस्कार इत्यादि प्रसिद्ध हैं। आधुनिक पाश्चात्य वेत्ताओं में सैन्डो पद्धति और मूलर पद्धति प्रसिद्ध है। सैन्डो पद्धति में हाथ, भुजायें, तथा सीने के ऊपरी पुट्ठों के विकास के लिये जितना ध्यान दिया गया है, उतना पेट तथा कमर के समीपस्थ पुट्ठों के लिये नहीं। मूलर पद्धति में सैन्डो पद्धति को प्रतिवाद किया गया तथा व्यायाम में भरपूर स्थान देकर वायु-स्नान, जल-स्नान, घर्षण स्नान और श्वांस नियमन प्रणाली का समावेश किया। पाश्चात्य व्यायामों में स्प्रिंग डम्बल से सीने और पीठ की मांस-पेशियों का अच्छा विकास होता है। चेस्ट एक्सपेन्डर द्वारा सीना, कन्धे भुजायें और पीठ के स्नायु अच्छे विकसित होते हैं। भारतीय पद्धति में मलखंभ द्वारा सुन्दर, लचीला और स्नायु-युक्त शरीर बनता है। जिमनास्टिक भुजाओं की सुन्दर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गठन, सीने की आकर्षक उभाड़ के लिये आवश्यक है। रिंग के व्यायाम से वक्ष के साथ कन्धों का विकास अच्छा होता है। मल्लयुद्ध अर्थात् कुश्ती भारत में प्राचीन काल से प्रचलित सुन्दर व्यायाम है। इसके द्वारा शरीर का प्रत्येक भाग उचित रूप में विकसित होता है। अखाड़ों में जाने वाले पहलवान दण्ड को विशेष महत्त्व देते हैं। दंड भारतीय पद्धति का एक सम्पूर्ण व्यायाम है। यदि इसके साथ प्राणायाम का भी उपयोग किया जाय तो अतीव सौन्दर्य प्राप्त हो सकता है। दंड, बैठक, मलखंभ, कुश्ती मिलकर सर्वांग शरीर के विकास में सम्पूर्ण व्यायाम पद्धति प्रस्तुत करते हैं।

हमारे यहाँ सूर्य नमस्कार को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है। इससे पेट आँतों के विकार, दिमाग की खराबियाँ, दिल, फेफड़े और रीढ के विकार, जड़मूल से दूर होते हैं और अपच, कब्ज, बवासीर, बहुमूत्र, आमवात, खाँसी, दमा दूर होते हैं। आज इस व्यायाम पद्धति को जो लोकप्रियता मिल रही है, वह इसकी श्रेष्ठता की परिचायक है।

सूर्य नमस्कार—सौन्दर्य का प्राकृतिक साधन

सूर्योदय से पूर्व स्नान करने के पश्चात्, उन्मुक्त वायु में पूर्वाभिमुख होकर एक चौकोर कपड़े के एक किनारे पर खड़े हूजिये। फेफड़ों की समस्त वायु निकाल डालिये और धीरे-धीरे स्वच्छ ताजा वायु के साथ आप प्रकृति का सौन्दर्य अपने शरीर की नस-नस में, मुख, नेत्र, कपोल, चेहरे के सब अंगों में भर रहे हैं। जितनी देर वायु अन्दर रहे रखकर फिर क्रमशः उसे बाहर निकालिये। वायु बाहर निकालते समय मन में यह भावना रखिये—"मैं मन, वाणी, शरीर के समस्त विकार, कुरूपता, गन्दगी को निकाल रहा हूँ। गन्दगी से मेरा कोई सरोकार नहीं। प्रकृति में प्राप्त सौन्दर्य ही मैं खींचता हूँ। सौन्दर्य के सुखद वातावरण में ही निवास करता हूँ मेरे विचार सुन्दर हैं भावनायें पवित्र हैं। मैं ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, में फँसकर मन में कुरूपता नहीं रखता। मैं तो प्रेम, सहानुभूति, मृदुलता, आशा, उत्साह, आत्म भाव रखकर सर्वत्र सौन्दर्य की सृष्टि करता हूँ।" दीर्घ श्वांस प्रश्वांस की क्रिया से तथा "सौन्दर्य की मानसिक भावना से शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार का व्यायाम होता है। ईश्वर के सौन्दर्य स्वरूप का ध्यान कीजिए। ईश्वर सौन्दर्य के केन्द्र हैं। उनका सौन्दर्य ही सर्वत्र व्याप्त हो रहा है। देदीप्यमान सूर्य में इसी सौन्दर्य केन्द्र की सत्ता लाल वर्ण बनकर प्रकृति में और प्रकृति से आप में व्याप्त हो रही है।

सीधे तनकर खड़े हो जाइये, मानों आप सौन्दर्य की समस्त सिद्धियों का स्वागत करने के लिये प्रस्तुत हैं। अपने सामने देखिये सूर्य का ज्योति पुंज मुस्करा रहा है। धीरे-धीरे सांस भरिये, मानों आप प्रकृति से सौन्दर्य और शक्ति भर रहे हैं। सामने को बाहु पसारकर हथेलियाँ मिलाइये। जैसे आपने सौन्दर्य को अपने हाथों में आबद्ध कर लिया। अब दोनों बाहुओं को बल लगाकर अपनी ओर खींचिये। सौन्दर्य जैसे आपने अपनी और खींच लिया। यह लीजिये पहला सूर्य नमस्कार आसन हुआ। इसमें सौन्दर्य और शक्ति का सुन्दर समन्वय भी रहा। इसी प्रकार शनैः-शनैः नीचे झुककर दोनों हाथ पृथ्वी पर लगाइये यहाँ तक कि नासिका दोनों टांगों के मध्य में आ जाय। इस प्रकार हाथों के बल लेटकर दण्ड निकालिये। हाथों को खूब सख्त रखिये। इस प्रकार सब अंगों को पर्याप्त श्रम करने को बाध्य कीजिये। सूर्य नमस्कार का चार्ट खरीदकर उसकी सहायता से नित्य नियमित रूप में सूर्य नमस्कार किया कीजिये।

सौन्दर्य, आरोग्य और स्वास्थ्य चाहने वालों को प्रकाश, वायु तथा जल का उचित उपयोग करना चाहिये। बर्नर मैकफैडन लिखते हैं—"नियमित रूप से यदि पुट्ठों को उपयोग हो, तो वे भी शरीर के अन्य हिस्सों की तरह बल और सौन्दर्य प्राप्त करते हैं तथा उनकी शक्ति में वृद्धि होती है। मस्तिष्क और शरीर का प्रत्येक अंग-प्रत्यंग एक-दूसरे से पूर्ण सम्बद्ध हो जाये, तभी इच्छा शक्ति अपना प्रभाव दिखा सकती है। यह बात सौन्दर्य के लिये आवश्यक है। श्री जे. पी. मूलर ने लिखा है—"आप दुबले हों या मोटे, युवक हों अथवा वृद्ध, मेरी सम्मति है कि आप सूर्य नमस्कार आज ही से प्रारम्भ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर दें। यदि आपका शरीर व्यायाम करने का अभ्यस्त नहीं है तो प्रारम्भ में अधिक मत कीजिये क्रमशः अभिवृद्धि कीजिये। व्यायाम तो दैनिक जीवन की आवश्यक आदत है। इसे प्रति दिन वृद्धि करने में लाभ और सौन्दर्य प्राप्त होता है। जिमनास्टिक आदि व्यायाम, जो सप्ताह में एकाध बार थोड़ी देर के लिये किये जाते हैं, भले ही लाभप्रद हों, परन्तु वे दैनिक व्यायाम का स्थान ग्रहण नहीं कर सकते।" जर्मनी के विज्ञान वेत्ता हंकल साहब लिखते हैं—"सूर्य प्रकाश तथा उष्णता का अधिष्ठाता है। इसका प्रभाव सभी पदार्थों पर ज्ञात या अज्ञान रूप में रहता है। सूर्य की उपासना सौन्दर्य की उपासना में परिणत हो सकती है।"

पाश्चात्य देशों में सूर्य स्नान पद्धति का उत्तरोत्तर प्रचार होता जा रहा है। ढेर के ढेर युवक-युवतियाँ समुद्र के किनारे रेत में लेटकर धूप ग्रहण करते हैं। सूर्य के प्रकाश में खाने की सभी वस्तुयें उत्पन्न होती हैं। यह सौन्दर्य का उत्तेजक तथा रोगों का एक मात्र प्रतिकार है। सूर्य का प्रकाश पौधों के बढ़ने के लिये जितना आवश्यक है, बच्चों के बढ़ने के लिये भी उतना ही आवश्यक है। जैसे पौधों के अंग-प्रत्यंग पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है और वे सुन्दर स्वस्थ बनते हैं, वैसे ही मनुष्य पर उसका प्रकाश पड़ने से सौन्दर्य तथा विटामिन आते हैं। सूर्य स्नान का महत्त्व स्कूलों के प्रोग्रामों में उसी प्रकार होना चाहिये, जिस प्रकार खेल-कूद का है। सूर्य सौन्दर्य का देवता है।

स्त्रियों के लिए व्यायाम

नित्य नियमित रूप से वैज्ञानिक नियमानुसार व्यायाम ही ऐसा तत्व है, जो हमें स्थायी सौन्दर्य प्रदान कर सकता है। यदि हम नियमित रूप से व्यायाम करते रहें, दुनियादारी की चिन्ता, संतान, रुपये पैसे, जमीन जायदाद का मोह त्यागकर शरीर के निर्माण की ओर भी कुछ क्षण दिया करें, तो अन्त तक सुन्दर बने रह सकते हैं।

स्त्री वर्ग को सौन्दर्य के व्यायामों में विशेष सतर्क रहना चाहिये। समय-समय पर खायें, पियें, सैर किया करें, तैरें, बाहर दिल बहलाने के लिये जाया करें, खूब स्नान करें, स्वच्छ वातावरण में रहें, तो बहुत सुन्दर रह सकती है। पिता की अपेक्षा माता के सौन्दर्य और आकृति की छाया बच्चे पर स्थायी रूप से पड़ा करती है।

स्त्रियाँ हल्के व्यायाम करें। टहलना एक ऐसा सुन्दर व्यायाम है, जिससे स्त्रियों के स्वास्थ्य पर जादू जैसा प्रभाव पड़ता है। श्रम-पूर्वक हाथ-पैर नीचे ऊपर ले जाना, श्वांस के स्वाभाविक आरोह, अवरोह, बैठक, नृत्य इत्यादि अच्छे व्यायाम हैं। दीर्घ श्वांस-प्रश्वांस से फेफड़ों का व्यायाम होता है। पूरक और रेचक क्रियाओं से श्वांस प्रणाली निर्दोष बनती है। रक्त में विकार न आने से त्वचा में सौन्दर्य बना रहता है। जिस व्यक्ति के फेफड़े मजबूत हैं, उसका रक्त साफ है। रक्त साफ होने से शरीर में अतिरिक्त सौन्दर्य आता है।

त्वचा का सौन्दर्य दो बातों पर निर्भर है। बाहर से त्वचा पर मैल न जमे तथा अन्दर से रक्त स्वच्छ होता रहे। यदि हम केवल बाहर से त्वचा को धोते ही रहें या उत्तम साबुन, उबटन, क्रीम, वैसलीन, मक्खन या पिस्तों की मिगी मलाई इत्यादि का ही प्रयोग करते रहें, तो यह केवल एक तरफा सफाई हुई। त्वचा की शुद्धि अन्दर के रक्त से आती है। रक्त का अच्छा होना फेफड़ों तथा भोजन पर है। भोजन ऐसा कि कब्ज न हो तथा चिकनाई का तत्व यथेष्ट रहे।

चिकनाई के लिये दूध सर्वश्रेष्ठ तत्व है इसी के साथ मक्खन, दही लस्सी का प्रयोग करें। अच्छा घी भी लाभदायक है। सूखे-मेवे-किशमिश, खजूर, बादाम, छुहारे इत्यादि खूब खाया करें। अन्दर की चिकनाई से त्वचा चिकनी बनी रहती है। कब्ज न होने दें। ताजे फल खूब खायें। रेशेदार तरकारी और साग भोजन में खूब रहें। गोभी, करमकल्ला, भिण्डी, मूली की पत्तों, पालक, मेंथी की तरकारियों का खूब प्रयोग करें। शहद, गुड़ और अमरूद थोड़ा बहुत रोज काम में लिया जाय। जल में नीबू का रस मिश्रित कर पीना गुणकारी है। कब्ज दूर करने के लिये कसरत कर सकते हैं। पेडू को कुछ देर तक रगड़ने से भी यथेष्ट लाभ होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर को सुन्दर बनाने वाले अवयव

सौन्दर्य अन्तर एवं बाह्य की स्वच्छता पर निर्भर है। अन्दर बाहर से आप अपने को जितना ही स्वच्छ निर्मल बनायेंगे उतने ही सुन्दर बनेंगे। जहाँ मल अर्थात् गन्दगी है, वहीं कुरूपता है। गन्दगी का दूसरा मतलब यह है कि आप अपने आपको बदसूरत बनाने का निमन्त्रण दे रहे हैं। जब तक आप शरीर के उन अवयवों की देख-रेख नहीं करते, जिनके द्वारा आन्तरिक मल या कूड़े की सफाई होती है, तब तक स्थायी सौन्दर्य के अधिकारी नहीं हो सकते।

चार प्रधान अवयव

आन्तरिक अवयवों की शुद्धि करने वाले ये अंग हैं—(१) फेंफड़े (२) त्वचा या खाल (३) गुर्दे (४) आँतें। इनमें से प्रत्येक अवयव शरीर को स्वच्छ रखने के हेतु महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहा है। फेफड़े हृदय के रक्त को साफ कर गन्दी वायु बाहर फेंकते हैं। त्वचा पसीने के द्वारा गन्दगी निरन्तर बाहर फेंक रही है। गुर्दे मूत्र मार्ग से असंख्य विष निकाल रहे हैं। आंतें तो दिन में दो बार भीतर पैदा होने वाले मल या कूड़े को बहिर्गत करती हैं। यदि हमारे नौकर निज कार्य में क्षणिक शैथिल्य प्रदर्शित करें और मल निष्कासन में सतर्क न रहें, तो मृत्यु हो सकती है।

आपकी शारीरिक मशीन के ये चारों कीमती पुर्जे हैं। स्मरण रखिये, इन्हें सम्हालकर काम में न लाने से या तनिक-सी असावधानी कर लेने से आयु पर्यन्त रोग शोक भय जीवन व्यतीत करना पड़ता है। इन चारों की सही देखभाल करने से शरीर सौन्दर्य स्वतः निखर उठता है।

(१) फेफड़े

यह महत्त्वपूर्ण अवयव दूषित वायु निरन्तर बाहर फेंकता है। हमारी पहली मूर्खता यह है कि श्वांस पूर्ण नहीं लेते। श्वांस लेने में भी जल्दबाजी करते हैं, फेंफड़े एक बार में पूरी वायु से नहीं भर पाते। इससे फेफड़े तो निर्बल होते हैं, रक्त शुद्धि का भी उचित गति से सम्पन्न नहीं हो पाता। दूसरी मूर्खता गन्दी वायु में रहना है। जब वायु स्वतः ही गन्दी है, तो उसे सफाई करने पर भी यथेष्ट न होगी। तीसरी मूर्खता जुकाम, खांसी इत्यादि कर लेना है। जिनके कारण फेफड़ों को कार्य करने का अवसर प्राप्त नहीं हो पाता।

स्मरण रखिये, रक्त में वायु के जीवन तत्व की भरपूर मात्रा रहना सर्व प्रथम तो रोग को आने से रोकता है, द्वितीय रोग आ जाने पर शीघ्र उसे दूर करता है। गहरी श्वांस लेने का अभ्यास उसी प्रकार आवश्यक है, जिस प्रकार भोजन, जल इत्यादि दिन भर में लगभग ५० बार धीरे-धीरे निकालने का अभ्यास करना अतीव आवश्यक क्रिया है। सौन्दर्य के इच्छुक इसे विस्मृत न करें। इसके अतिरिक्त शारीरिक श्रम, स्वच्छ, ताजी वायु में तेज भागना, टहलना, कूदना, पेड़ों पर चढ़ना, स्त्रियों के निमित्त चक्की चलाना, दूध बिलोना, प्राणायाम, सूर्य नमस्कार उत्तम उपाय है। खुली हवा में गहरी श्वांस खींचना जीवन शक्ति का वर्द्धन है।

(२) त्वचा

इस अंग की सफाई के लिये तो उपाय हैं—

(१) घर्षण स्नान अर्थात् स्नान के पश्चात् शरीर को रगड़ना पहले भीगे कपड़े शरीर को खूब मलें, सूक्ष्म छेदों को साफ करें। फिर खुरदरे तौलिये से रगड़ें। दूसरा उपाय है उपयुक्त प्रकार की मालिश। मालिश का मतलब है कि आप रक्त को मांसपेशियों में तीव्रता से दौड़ा रहे हैं। रक्तवाहक तन्तुओं में रक्त की गति तीव्र हो जाने से हृदय के कार्य में भी सहायता प्राप्त होती है।

एक मालिश विशेषज्ञ ने सत्य ही निर्देश किया है, जीवन क्या है ? गति और गति क्या है ऑक्सीजन की अन्य तत्वों के साथ सम्मिश्रण की एक ज्वलनशील क्रिया जिससे एक या अधिक शैथिल्य जनक पदार्थों की उत्पत्ति होती है। अब यदि ये अवरोधक इकट्ठा होते-होते किसी प्रकार मात्रा में अधिक हो जाते हैं, तो उनसे रासायनिक बाधायें उपस्थित होती हैं, जो शरीर में दर्द, सूजन मांस-पेशियों की गति शून्यता इत्यादि अनेक रोग उत्पन्न करती हैं। मालिश ऐसे पदार्थों के संचय स्थलों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तोड़-फोड़ कर निकालती है और रक्त द्रव के संचार-संस्थान में ढकेलकर उन्हें मल निकालने वाली इन्द्रियों के द्वारा शरीर से बाहर फेंकने में शीघ्रता करती है। मांस-पेशियों में शुद्ध अधिक रक्त पहुँचकर शरीर मर्दन पेशि संस्थान को पोषण करता है विषैले पदार्थों के संचय-स्थलों को बनाने में बाधा डालता है, दौर्बल्य को रोकता है और मांस-पेशियों के कोषों को स्फूर्ति प्रदान करता है, स्थल विशेष में उष्णता आती है। फलस्वरूप चर्बी में ऑक्सीजन मिश्रण की क्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

(३) गुर्दे

गुर्दे मूत्र मार्ग से मल बाहर फेंकते हैं। लोग इस अंग पर सबसे अधिक अत्याचार करते हैं। इसे हस्त मैथुन, व्यभिचार, कुत्सित जीवन व्यतीत कर रोगग्रस्त कर डालते हैं। फिर जीवन पर्यन्त अनेक सुखों से वंचित रहते हैं। इसकी रक्षा का सर्वोत्तम उपाय ब्रह्मचर्य पालन है। इस सूक्ष्म पुर्जे का उपयोग असावधानी से करने वाले अविवेकी मूढ़ की प्रकृति बड़ी दुर्गति करती है। प्रमेह, नपुंसकता, सुजाक, गर्मी इत्यादि सजा देने के अनेक घृणित तरीकों का प्रयोग मनुष्य पर होता है। घृणित रोगों का शिकार होकर वह अन्दर अपना सर्वस्व नष्ट कर बैठता है।

गुर्दों के स्वास्थ्य के लिये यथाशक्ति समागम, व्यभिचार, मानसिक कामुकता से बचना चाहिये। काम वासना के लिये कलात्मक, मार्ग ढूँढ़ निकालिये। चित्रकला, संगीत, विद्या, कविता, साहित्य, शिल्प, नृत्य व्यायाम, बागवानी, पशु-पक्षी पालन, अध्यात्म चिन्तन, समाज सेवा, भक्ति नृत्यादि अनेक ऐसे उपयोगी और मनोरंजक कार्य आपको मिल सकेंगे, जिनके द्वारा काम वासना का स्वस्थ विकास सम्भव है।

इसके अतिरिक्त इस सुकोमल अंग को बाह्य चोट, कसा हुआ लंगोट, साइकिल की सवारी से बचावें, प्रतिदिन यथेष्ट मात्रा में जल तथा अन्य जलीय पदार्थ दूध, लस्सी, छाछ, गन्ने का रस इत्यादि पियें, जिससे मूत्र यथेष्ट मात्रा में आने से अन्दर धुल जाये। गर्मी के मौसम में पानी यथेष्ट लें, जिससे अन्दरूनी धुलाई अच्छी रहे। चाय, कहवा, ताड़ी, शराब आदि से सर्वथा बचे रहें।

(४) आँतें

बड़ी आँत का कार्य भोजन द्वारा अवशिष्ट निकाला और गन्दा मल निष्कासन करनां है। छोटी आँत की अपेक्षा इसमें मोटाई या फैलाव अपेक्षाकृत अधिक होता है। यह लगभग ६ फीट लम्बी पाक नली का अन्तिम भाग है, जो निकम्मे अंश का, विष भरे पदार्थों को बाहर फेंकता है। इस विष भरे मल पदार्थों को यदि उचित समय पर न निकाला जाये, तो ये रक्त को विषैला कर निश्चय ही कुरूपता पैदा करेगी। मल-त्याग एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके प्रति सुन्दरता चाहने वाले को सतत् सतर्क रहना चाहिये। इसके व्यक्ति क्रम से पाचन और अभिशोषण दुर्वह हो जायेगा। उदर की पूर्ण स्वच्छता से अभिप्राय है कि मलाशय तथा वृहद् आँत के नीचे की ओर जाने वाले पूर्ण भाग की, अधोगामी वृहदन्त्र की, पूरी सफाई हो जाये।

आँत की सफाई के लिये कब्ज से रक्षा कीजिये। कब्ज का एक कारण प्रकृति द्वारा सूचना मिलने पर भी शौच के लिये न जाना है। जब कभी सूचना प्राप्त हो, शौच जाना चाहिये। यथेष्ट व्यायाम किया कीजिये तथा गहरा सांस लेने की आदत डालिये। खूब पानी पिया करें। अधिक आहार, मैदा या बहुत बारीक आटा, सफेद चीनी, मांस चाट पकौड़ी, आलू, कचौरी, परांठे, मिठाइयाँ तेल युक्त गरिष्ठ पदार्थ, बिस्कुट इत्यादि न प्रयोग कीजिये। कच्चे फल, साग भाजियाँ, फल मेवे अत्यधिक लाभदायक और सौन्दर्यवर्द्धक पदार्थ हैं। सौन्दर्य के इछुकों को अधिक से अधिक टमाटर और नीबू का प्रयोग करना चाहिये। टमाटर सर्वोत्कृष्ट फल तथा तरकारी दोनों ही हैं। इसमें कब्ज नाशक और रक्त शोधक गुणों की खान है। प्याज टमाटर अदरक इत्यादि की स्वादिष्ट सलाद उदर की सब बीमारियों को दूर कर मनुष्य को सौन्दर्य की वृद्धि करते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आपके नेत्रों का सौन्दर्य

नेत्रों के सौन्दर्य को लेकर कवियों में नाना प्रकार की कल्पनायें प्रस्तुत की हैं, भिन्न-भिन्न रूप से उन्हें समाहत किया है। मनुष्य के समस्त भावों की प्रतिच्छाया आँखों में प्रतिविम्बित होती है। जहाँ भावों को व्यक्त करने में शब्द असमर्थ होते हैं, वहाँ नेत्रों की मूक भाषा भावनाओं को प्रकाश में लाती है।

सुन्दर आँखें यों तो प्रकृति का वरदान हैं किन्तु मनुष्य बहुत कुछ सुधार कर सकता है। आँखों में जो सौन्दर्य झांकता है, उसकी जड़ कहाँ है ? न काजल में, न टेढ़ा तिरछा देखने में, न विभिन्न मुख मुद्राओं में। ये सब कृत्रिम तत्व हैं। उसकी वास्तविक जड़ आपके स्वास्थ्य में है। डाक्टर आपके स्वास्थ्य का अनुमान लगाने के लिये आपकी पलक को उठाकर देखता है। आपके रक्त में जीवणु तत्व कितने हैं ? कहीं रक्ताभाव तो नहीं है ? रक्त का प्रवाह उचित रफ्तार से होता है या नहीं ? स्वास्थ्य एवं रोग का इतिहास जैसे नेत्रों में ही लिखा हो।

आन्तरिक स्वच्छता का ध्यान रखें

आँखों के सौन्दर्य के लिये आपको आन्तरिक स्वच्छता की ओर आपको सर्व प्रथम ध्यान देना होगा। आप जो भोजन करते हैं, उसी से पेट अपना कार्य करता है और उसी के अनुसार रक्त का निर्माण होता है। यदि पेट में भोजन जमता रहे, सड़ जाय और त्याज्य द्रव्य या मल निष्कासन की क्रिया प्राकृतिक रूप में सम्पन्न न हो, तो मल शरीर में संचित होता रहेगा। मलीन आँखों का एक बड़ा कारण है यही जमा हुआ भीतरी मैल। रोग की एक ही चिकित्सा है—भीतरी मैल को दूर करना। भीतरी मैल को दूर करने के लिये प्रकृति ने मल-मूत्र, स्वेद, नाक की सिनक इत्यादि की व्यवस्था की है। आत्मसंशोधन के इस कार्य में हमें प्रकृति की सहायता करनी है।

मनुष्य के सबसे आकर्षक स्वास्थ्य का विकास उस काल में हुआ था, जिसमें फल, विशेषतः ताड़ जाति के पेड़ों के फल, तरकारियाँ, हरे शाक और गिरियाँ हैं। उसके दाँत और पाचक इन्द्रियाँ इस आहार के लिये पूर्ण रूप से उपयुक्त हैं। फल तरकारी और बीज, जो उद्भिज जगत् की सर्वोत्तम एवं उच्चतम उपजें हैं, घनीभूत सूर्यलोक की मधुरतम प्रतिमूर्ति प्राणशक्ति का अतीव सुखाद्य संचय है।

कब्ज सुन्दर नेत्र का प्रथम शत्रु है। कम जल पान करने से नेत्रों का श्वेत भाग पीला हो जाता है। नेत्र मटमैले रहते हैं। यदि सुन्दर नेत्र चाहिये तो, पेट को ठीक रखिये। कब्ज न होने दीजिये, फल तरकारियों की मात्रा में वृद्धि कीजिये तथा दैनिक जीवन में प्यास की अवहेलना न कीजिये। कम से कम तीन सेर जल शरीर में चाहिये। इसके अतिरिक्त शरीर को व्यायाम द्वारा पुष्ट बनाइये। जो व्यक्ति सुस्त और निष्क्रिय जीवन व्यतीत करते हैं, वे शिथिलता के शिकार रहते हैं और गन्दी आंखों के स्वामी होते हैं। सूर्य, वायु एवं शीत प्रकृति के इन तीनों तत्वों का पर्याप्त सेवन किया कीजिये।

पौष्टिक भोजन का प्रभाव नेत्रों को अन्दर से शक्ति प्रदान करता है। अतः अपने भोजन मक्खन, घी, दूध, पनीर, छाछ, मधु इत्यादि पदार्थों की मात्रा में वृद्धि कीजिये। पत्तीदार सब्जियाँ, टमाटर पालक, पातगोभी, मटर कच्चे खाया कीजिये। आटा चोकर समेत ही काम में लिया करें। फलों में कब्जनाशक फल जैसे—नारंगी, नीबू, सेब, टमाटर पपीता, अमरूद, अंगूर, गाजर इत्यादि विशेष गुणकारी है।

नेत्रों को विश्राम दें और रात्रि में अपेक्षाकृत कम पढ़ें। गैस, बिजली की तेज रोशनी के सामने बहुत देर तक पढ़ने-लिखने से नेत्रों का सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। लेटकर सोते हुये या औंघते हुये शरीर में अधिक उत्तेजना और थकावट होने के कारण पढ़ने-लिखने का काम नहीं करना चाहिये। घोड़ा, रेल, मोटर, हवाई जहाज, पैर गाड़ी आदि त्वरित सवारियों में भोजन करने के पश्चात् तत्काल पढ़ने लिखने से नेत्र सौन्दर्य विलुप्त हो जाता है। बहुत बारीक अक्षरों में छपी या लिखी हुई पुस्तक को बहुत देर तक नहीं पढ़ना चाहिये। इससे नेत्रों में पीड़ा होती है, पानी भर आता है या कभी-कभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पंक्तियों के छूट जाने पर चकाचौंध लगती है। बार-बार नाटक या सिनेमा देखने से, रात में देर तक जागने से, नेत्रों को अधिक परिश्रम करना पड़ता है।

नेत्रों की बीमारी में उन्हें विश्राम देने में सतर्क रहें। आँखें दुःखने या कुछ गिर जाने या कोई पीड़ा हो जाने पर अनाड़ी चिकित्सक अथवा पास-पड़ौस के किसी व्यक्ति या विज्ञापन बाजों की दवाइयों से सावधान।

प्रातःकाल सूर्य की रश्मियाँ नेत्रों पर डालने से ये सतेज बनती हैं। उठकर त्रिफले के जल से उन्हें धोना चाहिये। नेत्रों के व्यायाम किया करें। पुतली के यत्र-तत्र घुमाने से, विभिन्न स्थितियों में रखने से नसें लचीली होकर नेत्रों में पुनः चंचलता लौट आती है। दायें-बायें, आगे-पीछे घुमाकर जब आप विश्राम कर चुकें, तो कुछ काल के लिये हथेली की गर्मी उन्हें दीजिये, दूसरी बार पुतलियों को नेत्रों की गोलाई में घुमाइये। एक-दो मिनट बीच में पामिंग का भी क्रम चालू रखिये। नेत्र व्यायाम शान्ति से बैठकर निश्चिन्त अवस्था में शीशे के सन्मुख करना चाहिये।

कपोल और उनका सौन्दर्य

साधारणतः उभरे हुये कपोल स्वास्थ्य के द्योतक हैं। वे मांसल हों, गुलाबी आभा से युक्त कपोल प्राकृतिक सौन्दर्य और स्वास्थ्य के द्योतक होते हैं, कपोलों का उभरा हुआ, सौन्दर्य युक्त रहना, उनकी चमक, गोरापन, आभा, लावण्य पवित्र तथा स्वास्थ्य विचारधारा का द्योतक है। गालों की त्वचा स्निग्ध, स्वच्छ तथा सुकोमल होनी चाहिये।

उत्तम स्वास्थ्य तथा वर्ण का प्रभाव कपोलों पर भी पड़ता है। गोरे रंग पर स्वास्थ्य का बड़ा मनोमुग्धकारी प्रभाव पड़ता है। मुख सेब के समान सुर्खी लिये रहता है। खेद है आजकल के युवक-युवतियाँ इस स्वाभाविक सुर्खी की गुलाबी पाउडर तथा कृत्रिम रंग लगाकर पूर्ण करना चाहती हैं।

सौन्दर्य के शत्रु मुँहासे

कपोलों के सौन्दर्य के लिये सम्पूर्ण शरीर के स्वास्थ्य की देख-रेख करनी चाहिये, क्योंकि सामूहिक रूप से पूर्ण शरीर एवं स्वास्थ्य या दर्पण कपोल है। अस्वस्थ मनुष्य के कपोल काले या मटमैले, भूरे रंग के होते हैं। वीर्यहीन लम्पट के कपोलों पर सूखापन रहता है। तम्बाकू पीने वाले के कपोलों पर से श्री जाती रहती है। मुँहासे वाले कपोल, बुरे, स्वास्थ्य रक्त के विकार, कामोत्तेजना तथा गुप्त गन्दे भाव के द्योतक हैं। तपेदिक या और किसी जीर्ण रोग के रोगी के गाल अन्दर को पिचक जाते हैं। कपोलों का स्वास्थ्य सम्पूर्ण शरीर के स्वास्थ्य पर निर्भर है। कपोलों के सौन्दर्य की रक्षा के लिये (१) ऊपरी त्वचा को स्वच्छ, निर्मल, स्निध तथा मुलायम रखना चाहिये (२) मुँहासे, जो आन्तरिक गन्दगी के प्रतीक हैं, अन्दर की गन्दगी निकालते हैं, उनसे सावधान रहिये। क्रीम, पाउडर इत्यादि जो बाजारू प्रसाधन मिलते हैं, वे केवल ऊपरी झांई को ढक मात्र देते हैं कोई स्थायी लाभ नहीं पहुँचाते। दूर से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि मुँहासे गये, पर उनके तनाव से होने वाली तकलीफ मौजूद रहती है। ध्यान से देखने पर उनकी काली-काली कीलें भी दिखाई दिया करती हैं।

डा. विट्ठलदास मोदी के अनुसार मुँहासों की चिकित्सा अन्दरूनी होनी चाहिये। मुँहासे गन्दगी के द्वार हैं, जिन्हें मुँहासा होता है, उनके शरीर में इतनी गन्दगी संचित हो जाती है कि मल द्वार, मूत्र द्वार, स्वेद के अतिरिक्त इस नये मार्ग से गन्दगी निकलनी प्रारम्भ हो जाती है। कपोल पर शरीर की कोमलतम त्वचा रहती है। इस कोमल स्थान से गन्दगी प्रस्फुटित हो उठती है। यदि हम प्राकृतिक मल मार्गों से संचित गन्दगी निकाल दिया करें तो प्रकृति को इन नये मार्गों का अनुसरण न करना पड़े। अतः मुँहासे से बचने का उपाय यही है कि मलमार्गों को सशक्त, सतर्क सतेज, स्फूर्तिवान बना दिया जाये। उनसे शैथिल्य को दूर करें। कब्ज न रहने दें। पेट अच्छी तरह साफ रहे। इसके लिये भोजन में चोकर, फल, हरी तरकारियाँ, कच्चे सलाद रहें। पसीना निकालने के लिये यथेष्ट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जल का प्रयोग किया जाय, रोमकूपों की खोलने के लिये मालिश की जाय। खूब परिश्रम करें, जिससे रोम कूप खुलकर निज कार्य सतर्कता से सम्पन्न करने लगें। फेफड़ों से खूब गहरी श्वांस-प्रश्वांस लें और अन्दर स्वच्छ हवा लें। कम सोना, मानसिक चिन्ता रहना, काम वासना, भय, क्रोध, ईर्ष्या भी गन्दगी के जनक हैं। यह मानसिक गन्दगी है। काम वासना की उत्तेजना भी मुँहासों का एक कारण है। इस मानसिक कलुषित वृत्ति का स्वस्थ निकास करें। काम वासना का स्वस्थ निकास प्रायः विवाह में हो जाता है। विवाह वासना और सामाजिकता का परस्पर समझौता है। जहाँ यह सम्भव न हो, वहाँ काम शक्ति को किसी उन्नत और स्वस्थ मार्ग में लगा देना चाहिये। खेलकूद, साहित्य अनुशीलन, बागवानी, साहसिक यात्रायें काम वासना के निकास के उन्नत मार्ग हैं।

प्रातःकाल टहलने से प्रातः समीर का प्रभाव कपोलों पर प्रभाव डालता है; अन्य कसरतें शरीर और रक्त को साफ करती हैं तो कपोलों का रंग भी निखरता है। स्वास्थ्य पर टिका हुआ सौन्दर्य ही चिर-सौन्दर्य है। कृत्रिम रंगों पाउडर पर निर्भर रहना अपने आपको धोखा देना है।

भोजन की ओर विशेष ध्यान दीजिये। वह हलका, फल तरकारियों वाला, शीघ्र पाची हो। ताजे स्वादिष्ट फलों के उपयोग से चेहरे का रंग खूब निखरता है। फूल गोभी, अंगूर तथा टमाटर रक्त को साफ करते हैं और रंग निखारते हैं। कागजी नीबू, सन्तरा, जंभीरी, गन्ना इत्यादि रंग को निखारने वाले हैं।

कपोल यदि खुरदरे हों, तो उन पर ठंडी मलाई की मालिश करनी लाभदायक है। ओस की बूँदों की मालिश, ग्लिसरीन या वैसलीन की मालिश भी लाभदायक है। अच्छे उबटन और साबुन का प्रयोग करना चाहिये। चेहरे की चमक के लिये बाहर से क्रीम पोतने के स्थान पर मक्खन और दूध का प्रयोग खूब करना चाहिये। सेमल के कांटे आठ दिन तक दूध में पीसकर उबटन की भाँति लगाना चाहिये। "लैनोलाइट" की हल्की मालिश।

कपोलों को त्वचा को स्वच्छ रखिये। प्रतिदिन रात्रि में सोने से पूर्व कोमलता से धोकर बैसलीन या कोई चिकनाई लगानी चाहिये। अधिक रगड़ना हानिकारक है।

बादाम दो तोले, तीन बूँद इत्र, कपूर का अर्क तीन रत्ती, चन्दन का तेल एक तोला, गुलाब जल तीन पाव सबको लेकर पहिले बादाम को गुलाबजल में पीसकर फलालेन में छान लो। प्रतिदिन रात में इसे मलकर सोने से मुँहासे दूर होते हैं। जायफल दूध में घिसकर लगाने से मुँहासे दूर होते हैं।

सुन्दर दाँत

दांत का सौन्दर्य उनकी स्वच्छता, समता और चमकीलेपन में है। परमेश्वर ने आपको जैसे दांत दिये हैं, उनमें तो आप कुछ नहीं कर सकते, पर उनकी सफाई, सुरक्षा, बीमारी होने पर चिकित्सा तथा दृढ़ता का ध्यान अवश्य रख सकते हैं।

सुन्दर दाँतों से भोजन की पिसाई का कार्य अच्छी तरह होता है और भोजन आधा मुँह में ही पच जाता है। बीमार और लहू या पीप आने वाले दांत कब्ज के कारण बनते हैं। पाचन शक्ति क्षीण होने से स्वास्थ्य और सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। गन्दे दांतों का अर्थ है, बुरा स्वास्थ्य और कुरूपता। दांतों का आँतों से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

वैद्यक शास्त्र में बड़ी सुन्दर बात कही गई है। प्रत्येक सौन्दर्य प्रेमी को गांठ में बांध लेनी चाहिय—"दाँतों को स्वच्छ, साफ सुदृढ़ रोग रहित रखने से मनुष्य मन्दाग्नि, कब्ज, पेचिश, मुख-कंठ तालु, जीभ, मसूड़े और दांतों के भयंकर रोगों से बच सकता है।" दाँतों को साफ न करने से उन पर मैल जम जाता है, मैल से कृमियों की उत्पत्ति होती है। दांतों का मैल पेट में जाकर अजीर्ण, कब्ज, अर्श, मन्दाग्नि, संग्रहणी उत्पन्न करता है। जमे हुये मैल से कंठ तालु और जीभ के रोग उत्पन्न होते हैं। जब वे कीड़े दाँत और डाढ़ में लग जाते हैं, तब उन्हें भद्दा काला और खोखला कर देते हैं। आंतों में लगे हुये कृमि और अन्न के सड़े हुये टुकड़े से दन्त सम्पुट रोग उत्पन्न होता है, मवाद पड़ने पर पायरिया उत्पन्न होता है। ऐसे भयंकर रोगों से दांतों का सत्यानाश हो जाता है। इसलिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुद्धिमान पुरुषों को चाहिये कि वे दांतों की रक्षा सदैव करें।"

सुन्दर दाँतों के लिये नित्य नियमित रूप से मौलसरी, बबूल, नीम, पीलू भाऊ इत्यादि वृक्षों की दाँतुन से काम लें। इसे अपना नियम बनाकर दृढ़ता से पालन करें। बाजार से भी अच्छा दन्तमंजन ले सकते हैं। स्मरण रखिये अधिक गर्म, अति ठंडी या अधिक खारी चीजों से मसूड़ों को नुकसान पहुँचता है। दांतों को हर घड़ी कुरेदते रहना ठीक नहीं। ऐसा करने से दांतों की जड़ें खोखली हो जाती हैं। जापान में रेशम के डोरे से दाँत साफ करने की प्रथा अच्छी है। लोहे की कील, पिन या दाँतों से कुरेदना हानिकर है। सफाई ही सौन्दर्य की कुंजी है।

नासिका और होठ

लम्बी, पतली तथा गोल नथुनों वाली नासिका प्रायः सुन्दर गिनी जाती है। चौड़ी, नीची, पिचकी या मोटी नाक बुरी समझी जाती है। बालकों की नासिका में कुछ परिवर्तन किया जा सकता है किन्तु बड़े होने पर केवल उसे स्वच्छ रक्खा जा सकता है। सोने से पूर्व नाक के नथुनों के ऊपर क्रीम या वैसलीन लगाना चाहिये। यथा सम्भव उसे स्वच्छ रखना चाहिये। पुनः-पुनः नथुनों में उँगली डालना या अन्दर के बाल तोड़ना हानिकर है। नाक के अन्दर के बाल स्वास्थ्य की दृष्टि से हितकारी हैं। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से कुछ ऐसे कृत्रिम साधन भी चल गये हैं, जिनके द्वारा नाक को घटाया या नुकीला भी बनाया जाता है। यदि सम्भव हो तो इनका प्रयोग किया जा सकता है।

होटों का पतला होना सुन्दरता का चिन्ह है। अधिकांश स्वस्थ स्त्री-पुरुषों के होठ स्वाभाविक रीति से लाल रंग के होते हैं किन्तु कृत्रिम प्रसाधनों से उन्हें रंगना उचित नहीं। प्रथम तो हमारी बहिनें उसका ठीक उपयोग नहीं जानती, अधिक गहरा रंग लगा लेती हैं, दूसरे रंग में अस्वास्थ्यकर पदार्थों का मिश्रण रह सकता है। सुन्दर होठ मुलायम होते हैं, उसके लिये रात्रि में वैसलीन का प्रयोग करें। खुश्की से होठों पर पपड़ी जम जाती है। इसका कारण पूर्ण शरीर में स्निग्धता का अभाव है। कम चिकनाई खाने से शुष्कता आती है। अतः दूध, दही, घृत, मक्खन का यथेष्ट प्रयोग कर शरीर में पर्याप्त चिकनाई रखनी चाहिये।

सिग्रेट होटों के सौन्दर्य को बिगाड़ देती है। तम्बाकू का काला धुआँ लगकर वे सदैव के लिये अपनी आभा खो देते हैं। तम्बाकू के विष से सावधान ! पान का प्रयोग भी संयमपूर्वक ही करना चाहिये, क्योंकि जहाँ पान होठ को रंगते हैं, वहाँ दाँतों के ऐनेमल को खराब करता हैं।

नुकीली और उठी हुई नासिका का मुख के सौन्दर्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। नासिका की तुलना शुक की नासिका से की गई है। भारतीय महिलाओं ने नासिका के सौन्दर्य और श्रृंगार की अन्य देशों की महिलाओं की अपेक्षा अधिक ध्यान दिया है। भारत में नाक-कान के आभूषणों को धारण करने का रिवाज चिर-काल से चला आता है। नाक में लौंग, नथ, बुलाक आदि आभूषण विशेष सौन्दर्य के समझे गये हैं।

आजकल शिक्षा के साथ-साथ महिलाओं में नाक छिदाने की प्रथा कम होती जा रही है। वास्तव में आभूषणों के द्वारा केवल थोड़ी-सी टीपटाप आ जाती है। वास्तविक सौन्दर्य-वृद्धि नहीं होती। आभूषणों की अधिकता का अर्थ शरीर की तथा मन की कुरूपता है। उस कुरूपता को ढकने के लिये ही आभूषण अधिक औरतें धारण किया करती हैं।

नासिका के इर्द-गिर्द किसी प्रकार का मल न रहे। अन्दर से नथुने साफ रहें। बाल बाहर को न निकले रहें। पुनः-पुनः नासिका में हाथ की उँगलियाँ डालकर सबके सामने साफ करना बुरा है। साफ, स्वस्थ रक्त के चमकने वाली वीर्य के तेज से उदीप्त नासिका आभूषण सौन्दर्य की अपेक्षा श्रेष्ठ है।

एक विद्वान का कथन है, "लम्बी नाक वाली रमणी दिमागी शक्ति अधिक काम कर सकती है। छोटे नथुने कुरूपता और कायरता के द्योतक हैं। खुला हुआ चौड़ा नथुनों की नाक नाजुक दिमाग की, मोटी नाक बुरे उद्देश्यों की रूपक समझी जाती है। तोते जैसी नाक चपलता दर्शाती है।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हाथ और अंगुलियों का सौन्दर्य

हाथ जब तक पूर्ण पुष्ट न हों तथा अंगुलियाँ जब तक लम्बी न हों, हाथ का सौन्दर्य प्रकट नहीं होता। मांस पेशियों से युक्त हाथ जिसमें खूब खून की लाली हो, त्वचा में चिकनाहट हो या नखों में गुलाबी आभा हो पूर्ण सुन्दर कहे जाते हैं।

पाश्चात्य व्यायाम विशारदों ने हाथ को पुष्ट एवं दृढ़ बनाने के लिये डम्बल का आविष्कार किया है। डम्बल सम्पूर्ण भुजा और विशेषतः अंगुलियों का उत्तम व्यायाम हो जाता है। शक्ति का नियम है कि किसी भी अवयव का खूब उपयोग किया जाय। डम्बल की कसरतों में हाथ, भुजा तथा उँगलियों की कसरतें पूर्ण परिपक्वता प्रदान करती हैं। अतः हाथों को सुन्दर बनाने के लिये डम्बल का व्यायाम काम में लायें। हमारे देश में पंजा लड़ाने की प्रथा बहुत दिनों तक रही है।

स्त्रियों के सौन्दर्य में अंगुलियों का लम्बा, पतला होना नखों को रंगना आवश्यक माना गया है। आजकल नखों का रंगना फैशन में सम्मिलित हो गया है किन्तु एक युग था, जब नख उत्तम स्वास्थ्य, प्राणशक्ति से पूर्ण रक्तवीर्य का ओज रहने से स्वभावतः ही गुलाबी होते थे। जो अरुणिमा प्राकृतिक थी, उसे कृत्रिम रंगों से रंग-कर के लाना स्वयं अपना उपहास करना है। कृत्रिम सौन्दर्य प्रसाधनों में नेल-पौलिश का उपयोग किया जाता है। कुछ स्त्रियाँ इतना अधिक चटकीला रंग उपयोग में लाती हैं कि बड़ा भद्दा-सा प्रतीत होता है। रंग त्वचा के समान हल्का, एकसा और कम लगाया जाय, जिससे वह दूर से स्वाभाविक प्रतीत हो। उंगलियों के लिये अँगूठी का प्रयोग हमारे देश में पुराने काल से प्रचलित है। अजन्ता के पुराने भारतीय चित्रों में गुप्त काल की मूर्तियों को देखने से प्रतीत होता है कि हमारे यहाँ उंगलियों को सजाने की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है। महर्षि पाणिनी तथा कालीदास ने भी अँगूठी को कथानक का एक अंग बनाकर उसकी महत्ता दिखलाई है। यथा सम्भव एक ही अँगूठी धारण करना शोभनीय है।

आज अंगुलियों का सौन्दर्य स्वाभाविक रूप में विकसित करने की आवश्यकता है। हाथ की कसरतें, चक्की पीसना, कुट्टी काटना, डम्बल व्यायाम, पंजा लड़ाना हाथ और उंगलियों को विकसित करने के अच्छे साधन हैं।

सौन्दर्य में केशों का स्थान

पुरुष के लिये छोटे किन्तु स्त्री के लिये लम्बे, मुलायम और स्निग्ध केश सुन्दर समझे गये हैं। पाश्चात्य देश में स्त्रियाँ भी पुरुषों की भांति बाल कटाती हैं। भारतीय दृष्टि से छोटे बाल कुरूपता की दृष्टि से द्योतक है। कृत्रिम प्रसाधनों में सुगन्धित तेलों का प्रयोग किया जाता है, लम्बी काली चोटी बाँधी जाती है क्लिप लगाकर भिन्न-भिन्न प्रकार के जुड़ा या टोपी तैयार की जाती है।

ये कृत्रिम प्रसाधन तभी तक उत्तम हैं, जब तक बाल स्वस्थ और अन्दरूनी तत्व क्रियाशील हों। यदि मनुष्य भोजन न करे, ऊपर से तेल मात्र चुपड़ता रहे या सुगन्धियाँ मलता रहे, तो कदापि सौन्दर्य स्थिर नहीं रह सकता।

जिन कारणों से बाल झड़ते हैं, उन्हें स्मरण रखिये प्रथम भोजन का पौष्टिक न होना है। दूसरा कारण मानसिक चिन्ता, खुश्की, क्लेश, शोक और रोग है। अधिक मानसिक परिश्रम करने से सिर गंजा हो जाता है। कभी-कभी बाजारू तेल भी केशों को हानि पहुँचाते हैं। केशों का सौन्दर्य भी शरीर की स्वच्छता पर निर्भर है।

जिन विटामिनों से शरीर के अन्दर होकर नेत्र और केशों में सौन्दर्य पहुँचाता है, वे ए. बी. सी. और डी. हैं। विटामिन ए. पालक, शलजम की पत्ती, शकरकंद, दूध, मक्खन, पातगोभी, टमाटर और मटर में होती है। विटामिन बी. चौकर, चोकर समेत आटा, सोयाबीन, दूध, मटर कण समेत चावल, भुजिया, किशमिश, ककड़ी, संतरा, पालक, गाजर, अनन्नास में होता है। विटामिन सी. हरीमिर्च, नीबू का रस, संतरे का रस, सरसों का साग, शलजम की पत्ती, मकोय, पपीता, चुकन्दर की पत्ती, गांठ गोभी और टमाटर में होता है। विटामिन डी. ताजा दूध मक्खन प्रातः कालिक धूप में होता है। इन सभी का खूब उपयोग करें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नियमित रूप से सरसों या तिल के तेल से बालों की मालिश की जाय, तो केश वृद्धि निश्चित है। बालों को नियमानुसार कंघी करने, साफ-सुथरे रखने से ये चमकीले बने रहते हैं। गंजेपन की बीमारी एक-दूसरे के पास कंघों से आती है। अतः पृथक्-पृथक् कंघों का प्रयोग करें या सोप पाउडर को गुनगुने जल में मिश्रित कर ओलाइव ऑयल की दो-तीन बूँदे मिलाना चाहिये। उससे सर के बालों को धोकर सुखा लें। फिर तेल से मालिश करें। केश सुन्दर होने पर भी समुचित देख-रेख से उनका सौन्दर्य निखर उठता है।

कोमलता तथा लावण्यता के उत्पादक कुछ उपाय

शरीर का रूखापन दूर करने के लिये निम्नलिखित चीजें बनाकर रख लीजिये—

ग्लिसरीन और गुलाब अर्क सम भाग लेकर दोनों को मिलाकर एक शीशी में भरकर रख लीजिये और आवश्यकतानुसार त्वचा पर मला कीजिये।

बढ़िया साबुन (लक्स, रेक्सोना या गोदरेज) के छोटे-छोटे टुकड़े एक छटांक नीबू के रस में घोलकर रख लीजिये। इसमें इतना ही यूडीकोलीन मिश्रित कीजिये। इसे मलकर सोया कीजिये। सुबह धो डालिये इसकी मालिश उत्तम है।

मोम दस तोले, तिल का तेल और जैतून का तेल ५ तोले गर्म करके मोम डाल दीजिये कि पिघल जाये और शीशी भरकर रख लीजिये। इस बिवाई में भर डालने से बिवाई भर जाती है।

छाया में सुखाई गई बबूल की कोमल पत्तियाँ एक छटांक, कमल गट्टा की मिंगी एक तोला, दोनों को कूट-पीस छानकर चूर्ण बना लें, उक्त चूर्ण के बराबर मिश्री मिलाकर प्रातःकाल ३ मांशा यह औषधि गोदूध के साथ सेवन करनी चाहिये।

दोनों प्रकार की हल्दी, लाल चन्दन, भैंस के दूध के साथ लगाने से रंग खूब गोरा हो जाता है। कड़वे तेल, बेसन और हल्दी का उबटन भी बहुत उत्तम है। तेल कफ एवं वायु के कोष को रोकता है। बेसन शरीर की दुर्गन्ध एवं मैल काटकर त्वचा को नर्म बनाता है।

मसूर की दाल छिलकारहित पीसकर दूध मिलाकर मालिश करने से त्वचा का रंग निखर आता है।

सौन्दर्य के गुप्त रहस्य

मनुष्य में एक महा तत्व है, जिस पर उसके शरीर की समस्त सौन्दर्य-सम्पदा निर्भर है। वह तत्व है—वीर्य। तेजवान व्यक्ति के आकर्षण का रहस्य यह वीर्य तत्व ही है। वीर्य सौन्दर्य की आधारशिला है। रक्त में वीर्य की चमक है, त्वचा में वीर्य की स्निग्धता है, हड्डियों में वीर्य की दृढ़ता है, नेत्रों में वीर्य की चमक है। सर्वत्र वीर्य का ही प्रताप है। इस एक तत्व को साधने से स्थिर सौन्दर्य रहता है। जो व्यक्ति इस सौन्दर्य प्रसाधान को नष्ट करता है, वह घृणित रोगों का शिकार बनकर अकाल मृत्यु को प्राप्त होता है। यदि सौन्दर्य की इच्छा है, तो वीर्य संग्रह के पवित्र कार्य में दत्त चित्त हो जाना चाहिये।

वे उपाय क्या हैं जिनसे वीर्य की रक्षा हो ? काम वासना से मुक्ति। काम वासना भूतल पर सबसे भयंकर शत्रु है। यह मनुष्य के रूप सौन्दर्य, यौवन को आत्मसात् कर लेता है। गन्दी कुरूपता उसे आवृत्त कर लेती है। रक्त में विकार उत्पन्न होता है। विषय भोग के पश्चात् अत्यधिक विषाद उत्पन्न होता है। स्त्री को प्रसन्न करने तथा उसकी आवश्यकतायें और आनन्द सामग्री जुटाने के लिये धन कमाने में बड़ा श्रम करना पड़ता है। वीर्य के अधिक क्षय के कारण गाल पिचक जाते हैं, नेत्र अन्दर धँस जाते हैं, त्वचा खुरदरी हो जाती है, रंग काला पड़ जाता है। जो व्यक्ति व्यभिचार करता है, वह ऐसे घृणित रोगों को खरीदता है, जिनसे उसकी बड़ी दुर्दशा और घृणित मृत्यु होती है। व्यभिचार सर्वनाश करता है। यह जितना लुभावना है, उतना ही दुःखदायी है। अग्नि की तरह यह सुनहरा चमकता है, पर देखो, जरा मूल से तुम्हारे सौन्दर्य को नष्ट कर देने की घातक शक्ति उसमें विद्यमान है। व्यभिचार में वीर्य का क्षय करने से अनेक प्रकार के गुप्त रोग, विषाद,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुर्बलता और जीवन शक्ति का ह्रास, कुरूपता, रंग के कालेपन का सामना करना पड़ता है। इसे विष्ठा समझिये जो दुःख पाप, भय, आशंका, मृत्यु से युक्त है।

सौन्दर्य के उपासकों ! ऐसा उपाय कीजिये जिससे विषय वासना का स्मरण ही न हो। आप अपनी शक्तियों को किसी ऐसे कार्य, अभ्यास या शुद्ध प्रवृत्ति में लीन कर दीजिये कि जिससे मन को गन्दगी की ओर जाने का अवकाश ही प्राप्त न हो। ऐसे शुभ कार्य चुनिये, जिसमें केवल शरीर ही नहीं मन भी दत्त चित्त रहे।

हमारे पुराणों में अत्रि ऋषि और अनुसूया की कथा सौन्दर्य और यौवन का आदर्श उपस्थित करती है। वे विवाहित दम्पत्ति थे, फिर भी ऋषि का सौन्दर्य अपने अध्ययन और सती का जीवन उनकी सील सम्हाल तथा कामकाज में इस प्रकार बीत गया है कि बुढ़ापा आने का उन्हें ज्ञान ही न हुआ। एक बार अत्रि ऋषि अध्ययन में लीन थे कि दिये में तेल समाप्त हो गया। अत्रि ने तेल मंगाने के लिये ऊपर देखा तो थकान से अनुसूया के नेत्र मूँद गये थे। अत्रि अनुसूया की तरफ निहारते रहे। उन्हें वह वृद्धा प्रतीत हुई। तत्पश्चात् उन्होंने निज दाढ़ी की ओर अवलोकन किया। वह उन्हें श्वेत प्रतीत हुई यौवन और कामोद्वेग कब चला गया, इसका अत्रि को भान भी न रहा। उपरोक्त कथन में काव्य की अतिशयोक्ति भले ही हो, किन्तु इसमें वीर्य रक्षा के निमित्त अध्ययन, मनन, उच्च विचाररत जीवन का एक उत्तम आदर्श स्पष्ट किया गया है।

गोरे होने के उपाय

मानव की प्रकृति दत्त सौन्दर्य का ही साधन करना चाहिये। वही सौन्दर्य स्थायी और आकर्षक है। बनावटी सौन्दर्य तो अल्प काल में ही नष्ट हो जाने वाला है। सच्चे सौन्दर्य पारखी वास्तविक सौन्दर्य का ही मूल्य आँकते हैं। कुछ व्यक्ति कृत्रिम सौन्दर्य प्रसाधनों के द्वारा शरीर को आकर्षक बनाया करते हैं। उनकी यहाँ चर्चा की जाती है।

स्त्री शृंगार प्रिय है। आदिकाल से मनुष्य ने स्त्री को सुन्दर बनाने के लिये नाना प्रकार की वस्तुओं, वस्त्रों, आभूषणों तथा सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग किया है। महावर, उबटन, मेहन्दी, रोली, कुंकुम, बिन्दी, सिन्दूर आदि का उपयोग इसी की पूर्ति के निमित्त है।

सर्व प्रथम त्वचा के सौन्दर्य को ही लीजिये। त्वचा को मुलायम रखने के लिये क्रीम, स्नो, लोशन, सुगन्धित तेल, लाइमजूस, ग्लैसरीन, पोमेडलोशन, शैम्पू, ब्रिलियन्टाइल, हेयर लोशन इत्यादि काम में लाये जाते हैं। इन वस्तुओं से त्वचा पर कुछ चिकनाई अवश्य आ जाती है, उनकी सफेदी में अन्दर की बदसूरती ढक जाती है किन्तु स्थायी तौर पर कुछ भी लाभ नहीं होता। त्वचा के आन्तरिक पर्त का सम्बन्ध मनुष्य के रक्त से है। जैसा शुद्ध या अशुद्ध रक्त, वैसा ही खाल कर रंग। वीर्य युक्त व्यक्ति सांवला होकर भी चमकता-दमकता है। फलों, शाक तरकारियों तथा दूध का प्रभाव भी त्वचा पर पड़ता है। दूध के प्रयोग से रंग सफेद होता है। जलवायु का प्रभाव भी त्वचा पर निरन्तर रहा करता है। गर्म मुल्कों के व्यक्ति काले तथा सर्द मुल्क वाले श्वेत रंग होते हैं। अतः सौन्दर्य के इच्छुक को सर्द स्थानों में रहना चाहिये। ठंडे जल से स्नान करना चाहिये। त्वचा की बाहरी स्वच्छता भी अति आवश्यक है। दिन में प्रातः सायं स्वच्छता से त्वचा को धोकर वैसलीन या मलाई मलनी चाहिये। भारत में उबटन लगाने की रीति बड़ी लाभदायक रही है। यदि उनका प्रयोग न हो तो आटे में तेल और हल्दी मिलाकर चेहरे पर मलने और फिर धोने से ऊपरी त्वचा का मल दूर हो जाता है। हाथों को धोने का एक अच्छा रूप यह है कि एक चम्मच भर सहजने की जड़ के बुरादे पर थोड़ा गर्म दूध डालकर उसे हाथों पर मलकर सूख जाने दें और फिर धो डालें। उँगलियों या हथेली के धब्बे दूर करने के लिये कच्चे आलू के टुकड़े मलें।

उबटन का प्रयोग करें

यदि हाथ कड़े और खुरदरे हों तो एक काम करें। भोजन में चिकनाई वाले पदार्थों का प्रयोग बढ़ा दें। मक्खन, घृत, दूध बेल के प्रयोग से स्वाभाविक रूप से चिकनाई आ जावेगी। होट भी न सूखेंगे। जब त्वचा में अन्दरूनी चिकनाई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं होती तो सभी खाल कड़ी हो जाती है। जिन व्यक्तियों के हाथ मोटे काम करने से खुरदरे हो गये हों, उन्हें सायंकाल गर्म जल से हाथ धोकर उबटन लगाना चाहिये। यदि उबटन न हो तो वैसलीन या ग्लिसरीन का प्रयोग भी किया जा सकता है। प्रायः लोग नीबू का अर्क भी हाथों को मुलायम बनाने का कार्य में लाते हैं। यदि शुद्ध बादाम रोगन मिल सके तो उसे ग्लिसरीन में मिलाकर रात्रि में मुँह तथा हाथों पर मालिश करनी चाहिये। शहद भी स्निग्धता लाने वाले पदार्थों में गुणकारी है। थोड़ा-सा जौ का आटा तेल में मिलाकर हाथ मुँह स्वच्छ करना चाहिये।

खेद का विषय है कि हमारे यहाँ के स्त्री पुरुष सौन्दर्य प्रसाधनों में तो रुपया व्यय करते हैं किन्तु स्नानागार की वस्तुओं, साबुन, तौलिया पर रुपया खर्च नहीं करना चाहते। ५० प्रतिशत स्त्रियाँ बिना तौलिये या साधारण से तौलिये से स्नान करती हैं। उनके चेहरे का मैल भी ठीक तरह नहीं स्वच्छ हो पाता। स्नान के उपरान्त यदि शरीर को खुरदरे तौलिये से उत्तमता से रगड़-रगड़ कर स्वच्छ किया जाये, तो त्वचा के रंग में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो जाता है। रगड़ने की क्रिया स्नान में सबसे महत्त्वपूर्ण है। जितना रगड़ेंगे, उतने ही रोमकूप खुल जायेंगे और त्वचा का रंग निखर आयेगा। गर्म जल से शरीर का मैल जल्दी छूटता है। जल में नीबू उबालने और फिर उसे गर्म जल में ही निचोड़कर नीबू मिश्रित जल से स्नान करने से रोम कूप स्वतः ही खुल जाते हैं और रंग गोरा होता है नीबू के रस को मुँह पर मलने से भी यही सफाई होती है।

आजकल साबुन का प्रयोग त्वचा के निखार के लिये बहुत किया जाता है। यथा सम्भव उत्तम साबुन का प्रयोग श्रेयस्कर है। घटिया साबुन, तेज कास्टिक और चूने सज्जी इत्यादि से तैयार होता है। ये त्वचा का ऊपरी पर्त बेकार कर देते हैं। साधारणतः अच्छे साबुन की पहिचान झागों से करनी चाहिये। लक्स रेक्सोना, पीयर्स, फ्रीफेक्ट अच्छे साबुन हैं। यह स्मरण रखिये कि साबुन का झाग त्वचा पर लगा रह कर सूख न जाये, अन्यथा रोम कूप बन्द हो जायेंगे। इसी प्रकार हजामत के समय उत्तम साबुन काम में लें और हजामत के पश्चात् साफ तौलिया भिगोकर रोम कूपों को स्वच्छ रक्खें।

किन्हीं-किन्हीं स्त्री-पुरुषों के पास से बहुत दुर्गन्ध आती है। इसका कारण शरीर से बदबूदार पसीने का निकलना है। कम पानी पीने से त्वचा साफ नहीं हो पाती। पसीना कम निकलता है, पर जो निकलता है वह बदबूदार होता है। इसके लिये यथेष्ट मात्रा में प्रतिदिन तीन सेर परिमाण में जल का प्रयोग करें, प्रातः सायं स्नान करें, शरीर को खूब पोंछें, पसीना रूमाल से पोंछते चलें तो दुर्गन्ध दूर हो जाती है। ६ माशे नाग दबन के सेवन से यह दुर्गन्ध दूर हो जाती है। शरीर की दुर्गन्ध दूर करने में लुई कोहने का कटिस्नान या भाप स्नान अद्भुत चमत्कार प्रकट करता है।

त्वचा को स्वस्थ रखिये

त्वचा के रोगों से सावधान रहिये। इन रोगों का मूल कारण आन्तरिक रक्त विकार है। प्रायः बाहर से जो उपचार किये जाते हैं, उनसे कुछ भी लाभ नहीं होता। अन्दर से खराब खून के कारण बाहर सफेद या काले-काले दाग उभर आते हैं। मुँह पर काले दागों का अर्थ लिवर या जिगर की खराबी का प्रमाण है। सफेद दाग अर्थात् ल्यूकोडरमा भी रक्त विकार के कारण ही उत्पन्न होता है। फोड़ा, फुन्सी, खाज आदि रक्त विकार के ही भाई बेटे हैं। इनके लिये सार्सापला, गर्मी के दिनों में घोंटकर, चिरायता पीने से लाभ होता है। ऐसे लागों को जीर्ण कब्ज की शिकायत रहती है। मल एकत्रित होने से सम्पूर्ण संस्थान दूषित रक्त से भर जाता है। यही बीमारी कभी फुन्सी, तो कभी मुँहासों के रूप में प्रस्फुटित होती है।

मुँहासा क्या है ? शरीर के संचित विकारों को निकालने का एक साधन। खून में जो विकार हैं, जो गर्मी का अधिक अंश है, वह कपोल की कोमल त्वचा को छेदकर बाहर निकल पड़ता है। यही मुँहासा बन जाता है। रक्त शोधक, कब्ज निवारण हरे शाक-तरकारियों विशेषतः टमाटर और पपीते के प्रयोग से मुँहासा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूर होता है। प्राणायाम तथा पेट के अन्य व्यायामों, अधिक जल के प्रयोग से मुँहासे दूर हो जाते हैं।

चेचक से बिगड़े हुये चेहरों के लिये जैतून का तेल काम में लें। चेचक मिट जाने पर रोगी के शरीर पर जैतून के तेल की मालिश करें और गर्म जल में स्नान करावें। धीरे-धीरे चेचक के दाग धीमे पड़ जायेंगे। एक मास पश्चात् वे दूर हो जायेंगे। ये दाग त्वचा के ऊपरी भाग में से नष्ट होते ही, खाल को स्वच्छ छोड़ देते हैं। प्रायः देखा गया है कि नारंगी तथा अनार का छिलका महीन पीसकर मालिश करने से भी ये दाग विलुप्त हो जाते हैं।

त्वचा की सफाई के लिये भीगी चादर के बन्धन का बड़ा महत्त्व माना गया है। महात्मा गाँधी जैसे प्राकृतिक चिकित्सा के प्रेमियों ने इसे त्वचा की बीमारियों को दूर करने के काम में लिया है। बुद्धि सागर वर्मा से इसका प्रयोग इस प्रकार बताया है—

"खुली हवा में एक लम्बी मेज अथवा तख्त पर चादर या हवा के अनुसार न्यूनाधिक कम्बल लटकते हुये बिछा दें। इस पर दो मोटी-मोटी साफ चादरें ठंडे पानी में पूरी तरह भिगोकर लटकती हुई बिछावें। नंगे होकर चादर पर लेट जायें, फिर चादरों और कम्बलों को एक-एक करके दोनों ओर से शरीर पर लिपटवा लें। धूप हो तो मुँह और मस्तक पर भीगा रूमाल लपेट लें। पहले थोड़ी देर, कँपकपी लगेगी, फिर गर्मी प्रतीत होगी। इस स्थिति में ५ मिनट से एक घंटा तक रहा जा सकता है। अन्त में पसीना बह निकलता है। चादर से बाहर निकलने पर पानी से नहाना चाहिये।"

ऊपर लिखा हुआ उपचार खुजली दाद, सेंहुँआ चेचक इत्यादि सभी त्वचा के रोगों के लिये अतीव गुणकारी है।

दूध एक सौन्दर्य प्रसाधन है

त्वचा के सौन्दर्य को निखारने के लिये दूध का प्रयोग अद्भुत चमत्कार रखता है। दूध में स्वतः कुछ ऐसी रासायनिक चीजें हैं, जिनसे त्वचा का मैल छूटता है, सूखापन और खुश्की दूर होती है। प्रायः जाड़ों में कुछ व्यक्तियों के हाथ, गाल तथा नाक के इर्द-गिर्द फट जाता है। खुरदरे काले-काले दाग नजर आने लगते हैं। यदि धारोष्ण दूध को नित्य मुँह धोकर मला जाय तो त्वचा का रूखापन और खुरदरापन विलुप्त हो जाता है। चेहरे की झांई, दाग तथा मुँहासों के दाग भी दूर हो जाते हैं। दूध सौन्दर्य वृद्धि करने वाला उपकरण है। हमारे यहाँ आदि से इसे सुन्दरता बढ़ाने के काम में लाया गया है। इससे मुँह की झाईं दाग दूर होकर स्वाभाविक ताजगी और गुलाबी चमक आ जाती है।

दूध का प्रयोग दोनों रूपों में हो सकता है। सर्व प्रथम भोजन में इसका उपयोग करें। अन्दरूनी गन्दगी को छाँटकर यह कब्ज दूर कर देगा। हड्डियों को सुडौल और लचकदार बनाने में दूध उत्तम है। रात्रि में सोने से पूर्व इसका उपयोग करने से पाचन शक्ति के विकार नष्ट होते हैं। कब्ज दूर होने से रक्त में लालिमा आ जाती है। यदि दूध पीके बिना कुल्ला किये सोया जाये, तो दाँत चमकीले और श्वेत होते देखे गये हैं। बाह्य रूप में त्वचा पर धारोष्ण दूध की पालिश से सौन्दर्य विकसित होता है। यह सौन्दर्य विदेशी क्रीम, पाउडर जैसे पानी से घुलने वाला न होकर स्थायी होता है। त्वचा स्थायी रूप से कोमल और आभा युक्त बनी रहती है।

श्री जितेन्द्र नारायण श्रीवास्तव ने सौन्दर्य वृद्धि के लिये दूध से स्नान करने का प्रतिपादन किया है। आपका मत मय उनकी पुष्टि के यहाँ उद्धृत किया जाता है—श्री जितेन्द्र नारायण लिखते हैं,—"रोम की बेगमें चेहरे की सुन्दरता की अभिवृद्धि के लिये तथा शरीर के रंग को साफ और चमकीला बनाने के हेतु दुग्ध में स्नान करती थीं तथा उसे शरीर पर मलती थीं। रोम की स्त्रियाँ पहले रोटी के टुकड़ों को दुग्ध में भिगो लेतीं थीं, तत्पश्चात् उसे चेहरे पर धीर-धीरे कोमलता से मलतीं। ऐसे करने से उनके शरीर की कान्ति खिले हुये गुलाब-सी हो जाती थी। रोमन साम्राज्ञी दिन में दो बार दुग्ध-स्नान करती थी। इसलिये अधिक अवस्था होने पर भी उसका यौवन और सौन्दर्य काफी दिनों तक पूर्ववत् था।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारे यहाँ भी प्रायः कहा जाता है—"दुधो नहाओ पूतों फलो।" "दूधो नहाओ" से यही अभिप्राय है कि हमारे यहाँ भी सौन्दर्य और समृद्धि की वृद्धि के लिये दूध से स्नान करने की प्रथा भारत में भी प्रचलित रही होगी। हमारे यहाँ दही से नहाने की प्रथा अभी तक प्रचलित है। दही से केश धोने से एक आकर्षक चमक उनमें आ जाती है।

नान ग्लास्टर नामक चिकित्सक का मत है, "जो स्त्री या पुरुष निज सौन्दर्य को स्थायित्व प्रदान करना चाहता है तथा जिसे निज सौन्दर्य के आकर्षण में उत्तरोत्तर अभिवृद्धि करना अभिप्रेत हो, उसे दूध की प्रतिदिन मालिश करना उचित है। दूध से मालिश करने से त्वचा गोरी तथा मखमल के समान कोमल हो जाती है। चेहरे के दाग-धब्बों को दूर करके उसे कमल के अनुरूप लुभावना तथा कोमल बनाने के हेतु गर्म दूध से उत्तम औषधि मेरे विचार से कोई नहीं है। चेहरे की झुर्रियों, शिकनों, खुरदरेपन, मुँहासों तथा झांइयों को दूर करने के निमित्त गर्म दूध एक अद्‌भुत गुणकारी सौन्दर्य-प्रसाधन है। रात्रि को यदि सोने से पूर्व गर्म दूध से मालिश करली जाय, तो प्रातः धोने पर वह ताजा लुभावना और अधिक आकर्षक प्रतीत होगा।"

उपर्युक्त मत उद्‌धृत करने का अभिप्राय यह है कि भारत में ही नहीं, वरन् रोम, अमेरिका, इंगलैण्ड इत्यादिक देशों में भी ऊपरी सौन्दर्य प्रसाधनों के क्षणिक सौन्दर्य से लोग ऊब उठे हैं। सौन्दर्य तो शुद्ध रस, साफ स्वच्छ त्वचा और आन्तरिक निर्विकार स्थिति का फल है। दूध पीजिए, ऊपर मालिश कीजिये, उसमें स्नान कीजिये। सारे मुँहासे, फुन्सियाँ, कालापन और माता के दाग दूर हो जायेंगे।

रंग का कालापन दूर हो सकता है ?

जो व्यक्ति काले रंग के हैं, उनके काले रंग का एक कारण यह है कि वह अधिक गर्मी से झुलस गया है। त्वचा गर्मी के सम्पर्क में जितनी आयेगी, उतनी ही दग्ध हो जायेगी। प्रचण्ड धुएँ, चूल्हे के आगे बैठकर कार्य करने वाली स्त्रियाँ प्रायः अग्नि ताप के कारण रंग को काला कर लेती हैं। इसके विपरीत ठंड का प्रभाव यह होता है कि शरीर का रंग साफ निकल आता है। त्वचा गोरी हो जाती है। सर्दी में रहने वाले योरोपीयन या हमारे यहाँ के पहाड़ी, काश्मीरी जलवायु के कारण स्वतः श्वेत चमड़ी वाले होते हैं।

यदि कालापन सफाई की कमी के कारण है, तो स्वच्छता की ओर ध्यान दें। यदि धूप की प्रचंडता, धुयें या अग्नि के समीप बैठने से है, तो इनसे बचते रहें। स्वच्छ वायु पवित्र वातावरण में रहने से भी त्वचा साफ हो जाती है। प्रातःकालीन ओस के बिन्दु मुख पर मलने से शरीर का कालापन दूर होता है। पर्वतों की सैर, नदियों का स्नान तथा उत्तम स्वास्थ्य से रक्त स्वच्छ होता है और शरीर का कालापन दूर होता है। प्रचंड धूप के कारण काले हुये व्यक्तियों को मोमरोगन का प्रयोग करना चाहिये।

मनोविकारों का रंग पर प्रभाव देखा गया है। क्रोध, घृणा और चिन्ता में रहने से रक्त विकार उत्पन्न होता है। रक्त विकार से कालापन आता है। अतः सौन्दर्य के पुजारियों को पवित्र चिन्तन में मग्न रहना चाहिये। ईर्ष्या की जलन, शोक की ज्वाला, सन्ताप का धुआँ, चिन्ता की चिता, त्वचा में कुरूपता उत्पन्न करती है। मनोविकारों से उद्वेग की उग्रता या कुत्सित चिन्तन से सावधान रहें। प्रसन्न रहने से, मन को पवित्र भावनाओं तथा सद् संकल्पों में लगाये रखने से रक्त में स्वच्छता, स्थिरता और शान्ति उत्पन्न होती है। नस-नाड़ियों में रक्त प्रवाह उचित रीति से होता है, गर्मी की मात्रा पर्याप्त मात्रा में ही रहती है। मांस-पेशियों में चैतन्यता और स्फूर्ति रहती है। जो खुशमिजाज रहते हैं, वे सहज ही सौन्दर्य प्राप्त कर सकते हैं।

श्री बुद्धिसागर वर्मा ने कुरूपता के कुछ कारण इस प्रकार बताये हैं। इनसे सावधान रहें—"बहुत थोड़ा सोना, अत्यधिक सोना, तंग मकानों में सोना, शोक एवं भयातुर रहना, क्रोध, ईर्ष्या मैलापन, निराशा, चिन्ता, मल-मूत्र, छींक, उबकाई, वमन आदि के वेगों को रोकना, बहु मैथुन, विषय वासनाओं का आधिक्य, मद्यपान, चरस, अफीम, सिगरेट आदि का प्रयोग, संयोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विरुद्ध पदार्थों का मिलाकर खाना, मांस भक्षण, सड़ी हुई बासी चीजों को आहार, दुष्ट स्वभाव आदि से सौन्दर्य एवं कान्ति नष्ट हो जाती है।

प्रसन्नचित्त रहना, साधारण शारीरिक परिश्रम, हर्ष धार्मिक स्वाध्याय, मनोहर सुरीले गानों का सुनना एवं स्वयं भी संगीत कला का अभ्यास करना, पवित्राचरण एवं शुद्ध हृदय वाले मित्र मित्राणियों से पवित्र वार्तालाप, हँसमुख और प्रसन्नचित्त सखा-सहेलियों का सहवास आदि जिन बातों से अन्तःकरण प्रसन्न हो शरीर की कान्ति निखारने के लिये अत्यन्त उपयोगी साधन है। यदि इन समस्त उपायों पर समुचित ध्यान दिया जाय, बढ़िया उबटन लगाया जाय, जलवायु आदि का पूर्ण सदुपयोग किया जाय, तो मनुष्य अपनी त्वचा को निस्सन्देह गोरी स्वच्छ बना सकता है।

उबटना विवाह के अवसर पर वधू के मलने का रिवाज कान्तिवर्द्धक है। इससे शरीर से लगा हुआ मैल छूटता है। उबटना बनाने में जो तेल पड़ता है, वह त्वचा को गुलाब-सा कोमल बना देता है।

ब्राह्मी बूटी रंगत को निखारने वाली महौषधि है। दूध में चने भिगोकर खाना एवं अंगूर खाना एक-सा प्रभाव रखते हैं। इनसे कान्ति बढ़ती है। जो, कचनार, करेला, कसेरू परवल लौकी आदि का सेवन भी रंग निखारता है। रात्रि में सोने से पूर्व फलों का प्रयोग या आधा सेर दूध का सेवन, (और यदि मिल सके तो धारोष्ण दूध) स्वास्थ्य और सौन्दर्य दोनों के लिये अतीव उपयोगी है।

आपका यथार्थ सौन्दर्य

ज्यों-ज्यों वृद्धावस्था की छाया यौवन पर पड़ती है, त्यों-त्यों बाह्य सौन्दर्य के उपासक क्लान्त हो उठते हैं। मुरझाते हुये चेहरे, फीके ओठ, अन्दर घुसी हुईं आँखें, झुर्रियाँ देखकर वे विह्वल हो उठते हैं। कपोलों को रंग से रंग कर अधिक दिनों तक आकर्षक नहीं कर सकता काजल दीर्घ काल तक कंटीला नहीं बना सकता। एक अवस्था वह आती है, जब सौन्दर्य-वर्द्धक क्रीम, पाउडर, रंग लिपस्टिक जैसे कृत्रिम उपाय सौन्दर्य वृद्धि नहीं कर सकते।

सौन्दर्य के दो स्वरूप हैं—बाह्य तथा आन्तरिक। बाह्य सौन्दर्य देखने में चाहे कितना ही प्रिय, मोहक या आकर्षक प्रतीत हो। किन्तु वास्तव में स्वतः उसका कोई अस्तित्व नहीं है। वह असत्य एवं क्षणिक है। वह आन्तरिक सौन्दर्य का प्रतिविम्ब मात्र है।

जिस प्रकार रंगबिरंगे खिलौने से बच्चा वास्तविक तथ्य को भूला रहता है, उसी प्रकार कृत्रिम प्रसाधनों के माया मोह में नर-नारी अपने वास्तविक सौन्दर्य को भूले हुये हैं। बाह्य सौन्दर्य तभी तक मनोरम प्रतीत होता है, जब तक उससे हम दूर रहते हैं। समीप आने पर उसका वास्तविक रूप प्रकट होता है और दूर से दिखाई देने वाली सुन्दरता अन्त हो जाती है। दूर से देखने में दुश्चरित्र नारी आकर्षक प्रतीत हो सकती है किन्तु जब उसका वास्तविक सौन्दर्य प्रकट होता है, तो सब कुछ मृगतृष्णावत् प्रतीत होता है। मानों तृषार्त हिरण को जलती धूप में खींचने वाली मारीचिका हो।

स्थायी सौन्दर्य का केन्द्र आपकी आत्मा है। आत्मिक सौन्दर्य ठोस, शाश्वत और चिर-सौन्दर्य का कभी क्षय नहीं होता। इस सौन्दर्य को प्राप्त करने वाला व्यक्ति जितने दिन जीवित रहता है, उतने दिन तो सौन्दर्य का केन्द्र रहता ही है, मृत्यु के पश्चात् भी इसका अन्त नहीं होता। इस सौन्दर्य को प्राप्त महान् आत्मायें आज भी चिर सौन्दर्य की स्वामिनी हैं।

सुकरात, गांधी, ईसा, गौतमबुद्ध, महावीर इत्यादि महान् आत्मायें आत्मिक सौन्दर्य की प्रतिमूर्तियाँ थीं। उनके आन्तरिक सौन्दर्य के सन्मुख बाह्य सौन्दर्य कैसे टिक सकता है ? इनके सौन्दर्य का स्रोत आँख, कपोल, त्वचा में न होकर आत्मा में था। इसका कभी क्षय न हुआ। यौवन में, बुढ़ापे में, मृत्यु के पश्चात् भी वह सौन्दर्य शाश्वत रहा। शरीर का सौन्दर्य नष्ट हो जायेगा। रोग से या क्रोध, शोक, चिन्ता, ईर्ष्या, प्रतिहिंसा का एक विचार उसे कलुषित कर देगा, किन्तु आत्मा का सौन्दर्य सदा-सर्वदा वृद्धि पर रहेगा। असुन्दर शरीर भी उसकी शक्ति से सुन्दर हो उठेगा।

आन्तरिक सौन्दर्य के लिये प्रयत्नशील हूजिये। आपका हृदय, मन, भावनायें, दूसरों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिये इच्छायें, उत्तम भाव, सद् विवेक सुन्दर हों। अर्थात् दूसरों के लिये निंद्य भावनाओं से मुक्त हों। आप किसी का बुरा न चाहें। वैसा कलुषित विचार ही मन में प्रविष्ट होने दें। आन्तरिक सुन्दरता की आभा से उद्‌भासित होकर हम चिर सौन्दर्य प्राप्त कर सकते हैं।

मन की सुन्दरता का मूल स्रोत है उत्कृष्ट, पवित्र और सद् विचार, शुभ्र भावनायें, सद्‌विवेक। विचार तथा मनोभाव सुन्दर होता है। आचरण सुन्दर होने पर बाह्य जगत् से अच्छा सम्पर्क स्थापित होता है। एक विद्वान ने कहा है—

"अपने मन की सुन्दरता दूसरों के मन की सुन्दरता से मेल स्थापित करना चाहती है और जहाँ पर दो मनों का मेल होता है, वहीं पर मूर्त पदार्थ अथवा व्यक्ति, असुन्दर होता हुआ भी सुन्दर बन जाता है। इसलिये मनोविज्ञान के आचार्यों ने सुन्दरता को सापेक्ष न बताकर निरपेक्ष ही बताया है। कोई भी मूर्त पदार्थ हमें तभी तक सुन्दर प्रतीत होता है, जब तक उसमें हमें अपनी आत्मा के दर्शन होते रहते हैं। जब तक हम उसमें अपने ही अन्तर्जगत का प्रतिविम्ब देखते रहते हैं। उस प्रतिविम्ब के विलुप्त होते या धूमिल पड़ते ही उसमें आकर्षण का भी अन्त हो जाता है। स्वतः वह व्यक्ति या पदार्थ हमें आकर्षित नहीं करता, आकर्षित करने वाला या न करने वाला हमारा मन ही होता है और सौन्दर्य की अक्षय निधि भी यहीं निहित रहती है। संक्षेप में सुन्दर-असुन्दर की यही परिभाषा है।"

जिस व्यक्ति को स्थायी सौन्दर्य के इस स्रोत का ज्ञान हो जाता है, वह बाहरी टीपटाप, में नहीं फँसता। आयु, वृद्धि और शरीर के शिथिल होने, सिर पर श्वेत केश प्रकट होने, अथवा दांत टूटने, चेहरे की झुर्रियों से वह विह्वल नहीं होता। वह आत्मा के चिरस्थायी सौन्दर्य की पूजा करता है। इन बाह्य परिवर्तनों से उसे कोई सरोकार नहीं होता।—वह अपने भावों को सुन्दर बनाता है, मनोविकारों को प्रक्षालन करता है। शुभ्र भाव, जिनका प्रवाह अन्दर बहता है, उसके सम्पूर्ण चेहरे पर प्रकट होकर उसे सुन्दर बनाते हैं।

क्या कारण है कि हम महात्मा गांधी के झुर्रियों वाले सूखे चेहरे को सुन्दर कहते हैं ? कविगुरु रवीन्द्रनाथ का मूछ दाढ़ी वाला वृद्ध चेहरा हमें आकर्षित करता है ? टाल्स्टाय के लकड़हारों जैसे चेहरे को घर की दीवार पर सुशोभित करते हैं, न वहाँ पाउडर है, न सुर्खी, न क्रीम, न भरे हुए कपोल या तिरछी आँखें। वहाँ तो चिर सौन्दर्य अर्थात् आत्मिक सौन्दर्य की आभा है। बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा यह आन्तरिक सौन्दर्य निस्सीम, अक्षय और चिरस्थायी है। उसी के पवित्र भावों की छाया महान् पुरुष की मुखाकृति पर प्रकट होती है। इनके कल्याणप्रद कार्य हजारों कृत्रिम सौन्दर्य प्रसाधनों की सीमा को पार कर ऊपर उठते हैं।

चिर सौन्दर्य की जड़ आत्मा को पहचानिये। आत्मिक सौन्दर्य ही वास्तविक है। उसके सामने बाह्य सौन्दर्य तुच्छ एवं नगण्य है। शुभ कार्यों तथा पवित्र भावनाओं द्वारा दैवी जीवन व्यतीत कर हम आत्मिक सौन्दर्य के स्वामी बन सकते हैं।

जिसकी चमड़ी सफेद या चिकनी है, जिसमें अंग मांसल हैं, जिसकी चाल-ढाल आकर्षक है, अक्सर लोग उसे सुन्दर कहते हैं और उसकी ओर ललचाई दृष्टि से देखते हैं पर यह कसौटी बड़ी अपूर्ण है। किसी का शरीर स्वस्थ और सुन्दर हो यह प्रसन्नता की बात है पर आनन्द और सन्तोष की बात यह है कि मनुष्य गुणों, विचारों, भावनाओं, आचरणों तक कार्यों की दृष्टि से उच्चकोटि का हो। जिसका अन्तःकरण सुन्दर है वस्तुतः वही सुन्दर है। प्राणि मात्र के लिये जिसके हृदय में करुणा, ममता, क्षमा और सेवा की भावना भरी हुई है, जिसका चरित्र पुष्प की तरह पवित्र है, जिसका मन दर्पण की तरह स्वच्छ है वास्तव में वही सुन्दर है। आत्मिक सौन्दर्य स्थिर है, शारीरिक चमक अस्थिर। आत्मा का सौन्दर्य सच्चा है, उस पर करोड़ों कामदेवों को निछावर किया जा सकता है। आप अपना आन्तरिक सौन्दर्य बढ़ाने का प्रयत्न करें कुरूप होते हुये देवताओं जैसे सुन्दर बन सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२
(सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्त्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६.ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे—

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org